

મળવાનું ઠેકાણું :

શ્રી અ. ભા. શ્વે સ્થાનકવાસી
જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ
શ્રીન લોજ પાસે, રાજકોટ.

પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧૦૦૦

વીર સંવત : ૨૪૮૩

વિક્રમ સંવત : ૨૦૧૩

ઈસ્વી સ.ન : ૧૯૫૭

મુદ્રક :

મણિલાલ છગનલાલ શાહ
ધી નવપ્રભાત પ્રિન્ટીંગ પ્રેસ
ઘીકાંટા રોડ : : અમદાવાદ

શ્રી-વર્ધમાન-શ્રમાણુ-સંઘના આચાર્યશ્રી

પૂજ્ય આત્મારામજી મહારાજશ્રીએ

આ પે લ

સ મ મ તિ પ ત્ર

*

ઉપરાંત

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ-રચિત

બીજા સૂત્રોની ટીકા માટે તેઓશ્રીના મંતવ્યે

*

તે મ જ

અન્ય મહાત્માઓ, મહાસતીજીઓ, અદ્યતન-પદ્ધતિવાળા કૌલેજના પ્રોફેસરો

તે મ જ

શાસ્ત્રજ્ઞ શ્રાવકોના અભિપ્રાયો

કે. શ્રીન લોજ પાસે
ગરેડીયા કુવારોડ
રાજકોટ : સૌરાષ્ટ્ર

}

શ્રી. અખિલ ભારત શ્વે. સ્થા. જૈન-
શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

जैनागमवेत्ता जैनधर्मदिवाकर उपाध्याय श्री १००८ श्री आत्मारामजी
 महाराज तथा न्याय व्याकरण के ज्ञाता परम पण्डित मुनिश्री १००८
 श्री हेमचन्द्रजी महाराज, इन दोनों महात्माओंका दिया हुआ
 श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रका प्रमाणपत्र निम्न प्रकार है—

सम्मइवत्तं

सिरि-वीरनिव्वाण-संवच्छर २४५८ आसोई
 पुण्णमासी १५ सुक्कारो लुहियाणाओ ।

मए मुणिहेमचंदेण य पंडियरयणमुणिसिरि-घासीलालविणिम्मिया सिरिउवा-
 सगमुत्तस्स अगारधम्मसंजीवणीनामिया वित्ती पंडियमूलचंदवासाओ अज्जोवंतं
 सुया, समीईणं, इयं वित्ती जहाणामं तद्वा गुणेवि धारेइ, सच्चं, अगाराणं तु इमा
 जीवण (संजमजीवण) दाई एव अत्थि । वित्तिकत्तुणा मूलमुत्तस्स भावो उज्जु-
 सेलीओ फुडीकओ, अहय उवासयस्स सामण्णविसेसधम्मो, णयसियवायवाओ,
 कम्मपुरिसट्ठवाओ समणोवासयस्स धम्मदहत्ता य, इच्चाइविसया अस्सि फुडरीइओ
 वण्णिया, जेण कत्तुणो पडिहाए सुट्ठप्पयारेण परिचओ होइ, तह इइहासदिट्ठिओवि
 सिरिसमणस्स भगवओ महावीरस्स समए वट्ठमाण-भरहवासस्स य कत्तुणा विसय-
 प्पयारेण चित्तं चित्तितं, पुणो सक्कवपाढीणं, वट्ठमाणकाले हिन्दीणामियाए भासाए
 भासीणं य परमोवयारो कडो, इमेण कत्तुणो अरिहत्ता दीसइ, कत्तणो एयं कज्जं
 परमप्पसंसणिज्जमत्थि । पत्तेयजणस्स मज्झत्थभावाओ अस्स मुत्तस्स अवलोयणमईव
 लाहप्पयं, अविउ सावयस्स तु (उ) इमं सत्थं सब्बस्समेव अत्थि, अओ कत्तुणो
 अणेगकोडीसो धन्नवाओ अत्थि, जेहिं अच्चंतपरिस्समेण जइजणतोवरि असीमो-
 वयारो कडो, अहय सावयस्स वारस नियमा उ पत्तेयजणस्स पढणिज्जा अत्थि,
 जेसि पढावओ वा गहणाओ आया निव्वाणाहिगारी भवइ, तद्वा भवियव्वयावाओ
 पुरियवारपरकमवाओ य अवम्ममेव दंसणिज्जो, किंहुणा इमीसे वित्तीए पत्तेय-
 विसयम्म फुडसदेहिं वण्णणं कयं, जइ अन्नोवि एवं अम्हाणं पसुत्तप्पाए समाजे विज्जं
 भवेज्जा तथा नाणस्स चरित्तस्स तद्वा संघस्स य खिप्पं उदयो भविस्सई, एवं हं मन्ने॥

भवईओ—

उवज्झाय—जइणमुणि—आयाराम, पंचनईओ,—

सम्मतिपत्र

(भाषान्तर)

श्रीवीरनिर्वाण सं० २४५८ आसोज-

शुक्ला (पूर्णिमा) शुक्रवार लुधियाना

मैंने और पंडितमुनि हेमचन्द्रजीने पण्डितरत्न मुनि श्रीघासीलाल-
जीकी रची हुई उपासकदशांग सूत्रकी गृहस्थधर्मसंजीवनी नामक टीका
पंडित मूलचन्द्रजी व्याससे आद्योपान्त सुनी है। यह वृत्ति यथानाम-
तथागुणवाली-अच्छी बनी है। सच यह गृहस्थोंके तो जीवनदात्री-
संयमरूप जीवनको देनेवाली ही है। टीकाकारने मूलसूत्र के भावको
सरल रीतिसे वर्णन किया है, तथा श्रावकका सामान्य धर्म क्या है ?
और विशेष धर्म क्या है ? इसका खुलासा इस टीकामें अच्छे ढंगसे
बतलाया है। श्याद्वादका स्वरूप कर्म-पुरुषार्थ-वाद और श्रावकको
धर्मके अन्दर दृढता किस प्रकार रखना, इत्यादि विषयोंका निरूपण
इसमें भलीभांति किया है। इससे टीकाकारकी प्रतिभा खूब झलकती
है। ऐतिहासिक दृष्टिसे श्रमण भगवान् महावीर के समय जैनधर्म
किस जाहोजलाली पर था ? और वर्तमान समय जैनधर्म किस
स्थितिमें पहुंचा है ? इस विषयका तो ठीक चित्र ही चित्रित कर दिया
है। फिर संस्कृत जाननेवालों को तथा हिन्दीभाषाके जाननेवालों को
भी पूरा लाभ होगा, क्यों कि टीका संस्कृत है उसकी सरल हिन्दी
कर दी गई है। इसके पढ़ने से कर्ताकी योग्यताका पता लगता है कि
वृत्तिकारने समझानेका कैसा अच्छा प्रयत्न किया है। टीकाकार का
यह कार्य परम प्रशंसनीय है। इस सूत्रको मध्यस्थ भावसे पढ़ने-
वालोंको परम लाभकी प्राप्ति होगी। क्या कहें श्रावकों (गृहस्थों) का
तो यह सूत्र सर्वस्व ही है, अतः टीकाकार को कोटिशः धन्यवाद दिया
जाता है, जिन्होंने अत्यन्त परिश्रमसे जैन-जनताके ऊपर असीम
उपकार किया है। इसमें श्रावकके बारह नियम प्रत्येक पुरुषके पढ़ने
योग्य हैं, जिनके प्रभावसे अथवा यथायोग्य ग्रहण करनेसे आत्मा
मोक्षका अधिकारी होता है। तथा भवितव्यतावाद और पुरुषकार-

पराक्रमवाद हरएकको अवश्य देखना चाहिये। कहां तक कहें इस टीकामें प्रत्येक विषय सम्यक् प्रकारसे बताये गये हैं। हमारी सुप्तप्राय (सोई दुईसी) समाजमें अगर आप जैसे योग्य विद्वान् फिर भी कोई होंगे तो ज्ञान चारित्र तथा श्रीसंघका शीघ्र उदय होगा, ऐसा मैं मानता हूं—

आपका

उपाध्याय जैनमुनि आत्माराम पंजाबी.



इसी प्रकार लाहोरमें विराजते हुए पण्डितवर्य विद्वान् मुनिश्री १००८
श्री भागचन्दजी महाराज तथा पं. मुनिश्री त्रिलोकचन्दजी
महाराजके दिये हुए, श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रके
प्रमाणपत्रका हिन्दी सारांश निम्न प्रकार है—

श्री श्री स्वामी घासीलालजी महाराज कृत श्री उपासकदशाङ्ग
सूत्रकी संस्कृत टीका व भाषाका अवलोकन किया, यह टीका
अतिरमणीय व मनोरञ्जक है, इसे आपने बड़े परिश्रम व पुरुषार्थसे
नैयार किया है सो आप धन्यवादके पात्र हैं। आप जैसे व्यक्तियोंकी
समाजमें पूर्ण आवश्यकता है। आपकी इस लेखिनीसे समाजके विद्वान्
माधुवर्ग पढ़ कर पूर्ण लाभ उठावेंगे, टीकाके पढ़नेसे हमको अत्यानन्द
हुवा, और मनमें ऐसे विचार उत्पन्न हुए कि हमारी समाजमें भी
ऐसे २ सुयोग्य रत्न उत्पन्न होने लगे—यह एक हमारे लिये बड़े
गौरवकी बात है।

वि. सं. १९८९ मा. आश्विन
कृष्णा १३ वार भौम लाहोर.

श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रकी 'अनगारधर्माऽमृतवर्षिणी' टीका पर
जैनदिवाकर साहित्यरत्न जैनागमरत्नाकर परमपूज्य श्रद्धेय
जैनाचार्य श्री आत्मारामजी महाराजका

सम्मतिपत्र

लुधियाना, ता. ४-८-५१

मैंने आचार्यश्री घासीलालजी म. द्वारा निर्मित 'अनगार-धर्माऽमृत-वर्षिणी' टीकावाले श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रका मुनि श्री रत्नचन्द्रजीसे आद्योपान्त श्रवण किया।

यह निःसन्देह कहना पड़ता है कि यह टीका आचार्यश्री घासीलालजी म. ने बड़े परिश्रम से लिखी है। इसमें प्रत्येक शब्दका प्रामाणिक अर्थ और कठिन स्थलों पर सार-पूर्ण विवेचन आदि कई एक विशेषतायें हैं। मूल स्थलों को सरल बनाने में काफी प्रयत्न किया गया है, इससे साधारण तथा असाधारण सभी संस्कृतज्ञ पाठकों को लाभ होगा ऐसा मेरा विचार है।

मैं स्वाध्यायप्रेमी सज्जनों से यह आशा करूंगा कि ये वृत्तिकारके परिश्रम को सफल बना कर शास्त्रमें दी गई अनमोल शिक्षायों से अपने जीवन को शिक्षित करते हुए परमसाध्य मोक्षको प्राप्त करेंगे।

श्रीमान्जी जयवीर

आपकी सेवामें पोष्ट द्वारा पुस्तक भेज रहे हैं और इस पर आचार्यश्रीजी की जो सम्मति है वह इस पत्रके साथ भेज रहे हैं पहुंचने पर समाचार देंगे।

श्री आचार्यश्री आत्मारामजी म. ठाने ६ सुखशान्तिसे विराजते हैं। पूज्य श्री घासीलालजी म. सा. ठाने ४ की हमारी ओरसे वन्दना अर्ज कर सुखशाता पूर्ण।

पूज्य श्री घासीलालजी म. जी का लिखा हुआ (विपाकमूत्र) महाराज-श्रीजी देखना चाहते हैं इसलिये १ कापी आप भेजनेकी कृपा करें, फिर आप को वापिस भेज देंगे। आपके पास नहीं हो तो जहां से मिले वहां से १ कापी जरूर भिजवाने का कष्ट करें, उत्तर जल्द देनेकी कृपा करें। योग्य सेवा लिखते रहें।

लुधियाना ता. ४-८-५१

निवेदक
प्यारेलाल जैन

जैनागमचारिधि-जैनधर्मदिवाकर-उपाध्याय-पण्डित-मुनि
श्री आत्मारामजी महाराज (पंजाब) का आचाराङ्गसूत्रकी
आचारचिन्तामणि टीका पर

सम्मति-पत्र ।

मैंने पूज्य आचार्यवर्य श्री वासीलालजी (महाराज) की बनाई हुई
श्रीमद् आचाराङ्ग सूत्रके प्रथम अध्ययन की आचारचिन्तामणि टीका
सम्पूर्ण उपयोगपूर्वक सुनी ।

यह टीका-न्याय सिद्धान्त से युक्त, व्याकरण के नियम से निबद्ध
है । तथा इसमें प्रसङ्ग २ पर क्रम से अन्य सिद्धान्त का संग्रह भी उचित
रूप से मालूम होता है ।

टीकाकारने अन्य सभी विषय सम्यक् प्रकार से स्पष्ट किये हैं, तथा
प्रौढ विषयों का विशेषरूप से संस्कृत भाषा में स्पष्टतापूर्वक
प्रतिपादन अधिक मनोरंजक है, एतदर्थ आचार्य महोदय धन्यवाद
के पात्र हैं ।

मैं आशा करता हूँ कि-जिज्ञासु महोदय इसका भली-भाँति
पठन द्वारा जैनागम - सिद्धान्तरूप अमृत पी-पी कर मन को
हर्षित करेंगे, और इसके मनन से दक्ष जन चार अनुयोगों का
स्वरूपज्ञान पावेंगे । तथा आचार्यवर्य इसीप्रकार दूसरे भी जैनागमों के
विशद विवेचन द्वारा श्वेताम्बर-स्थानकवासी समाज पर महान उपकार
कर योगस्वी बनेंगे ।

नि. मं. २००२

मगसर मुदि ?

जैनमुनि-उपाध्याय आत्माराम

लुधियाना पंजाब शुभमस्तु



वीकानेग्याला समाजभूषण गान्धर्व मेरुदानजी शेठिआनो अभिप्राय



आप गान्धर्व कार्य कर रहे हैं यह बड़ा उपकारका कार्य है ।
इससे जैनजनता को काफी लाभ पहुंचेगा ।

(ता. २८-३-५६ना पत्रमांथी)

॥ श्रीः ॥

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-जैनाचार्य-पूज्य-श्री आत्मारामजी-
महाराजानां पञ्चनद-(पंजाब)स्थानामनुत्तरोपपातिकसूत्राणा-
मर्थबोधिनीनामटीकायामिदम्-

सम्मतिपत्रम् .

आचार्यवर्यैः श्री घासीलालमुनिभिः सङ्कलिता अनुत्तरोपपातिकसूत्राणामर्थ-
बोधिनीनाम्नी संस्कृतवृत्तिरूपयोगपूर्वकं सकलाऽपि स्वशिष्यमुखेनाऽश्रावि मया, इयं
हि वृत्तिर्मुनिवरस्य वैदुष्यं प्रकटयति । श्रीमद्भिर्मुनिभिः सूत्राणामर्थान् स्पष्टयितुं
यः प्रयत्नो व्यधायि तदर्थमनेकशो धन्यवादानर्हन्ति ते । यथा चेयं वृत्तिः सरला
सुबोधिनी च तथा सारवत्यपि । अस्याः स्वाध्यायेन निर्वाणपदमभीप्सुभिर्निर्वाण-
पदमनुसरद्भिर्ज्ञान-दर्शन-चारित्र्येषु प्रयतमानैर्मुनिभिः श्रावकैश्च ज्ञानदर्शन-चारित्र्याणि
सम्यक् सम्प्राप्याऽन्येऽप्यात्मानस्तत्र प्रवर्तयिष्यन्ते ।

आशासे श्रीमदाशुकविर्मुनिवरो गीर्वाणवाणीजुषां विदुषां मनस्तोषाय जैना-
गमसूत्राणां सारावबोधाय च अन्येषामपि जैनागमानामित्थं सरलाः सुस्पष्टाश्च
वृत्तीर्विधाय तांस्तान् सूत्रग्रन्थान् देवगिरा सुस्पष्टयिष्यति ।

अन्ते च “मुनिवरस्य परिश्रमं सफलयितुं सरलां सुबोधिनीं चेमां
सूत्रवृत्तिं स्वाध्यायेन सनाथयिष्यन्त्यवश्यं सुयोग्या हंसनिभाः पाठकाः ।”
इत्याशास्ते—

विक्रमाब्द २००२
श्रावणकृष्णा प्रतिपदा
लुधियाना. }

उपाध्याय आत्मारामो जैनमुनिः ।

(श्री दशवैकालिकमंत्रका सम्मतिपत्र)

॥ श्री वीरगौतमाय नमः ॥

सम्मतिपत्रम्.

मए पंडियमुणि-हेमचंदेण य पंडिय-सूलचन्दवासवारा पत्ता पंडिय-रयण-मुणि-घासीलालेण विरइया सकय-हिंदी-भाषाहिं जुत्ता सिरि-दसवेयालिय-नाम-सुत्तास्स आगारमणिमंजूसा वित्ती अवलो-इया, इमा मणोहरा अत्थि, एत्थ सद्धानं अइसयजुत्तो अत्थो वणिणओ विउजणाणं पाययजणाण य परमोवयारिया इमा वित्ती दीसइ ! आगारविसए वित्तीकत्तारेण अइसयपुव्वं उल्लेहो कडो, तहा अहिंमाए सरूव जे जहा-तहा न जाणंति तेसिं इमाए वित्तीए परमलाहो भविस्सइ, कत्तुणा पत्तेयविसयाणं फुडरूवेण वण्णणं कडं, तहा मुणिणो अरिहत्ता इमाए वित्तीए अवलोयणाओ अइसय-जुत्ता सिज्झइ ! सकयछाया सुत्तपयाणं पयच्छेओ य सुबोहदायगो अत्थि, पत्तेयजिण्णासुणो इमा वित्ती दट्ठव्वा । अम्हाणं समाजे एरिसविज्ज-मुणिरयणाणं सब्भावो समाजस्स अहोभग्गं अत्थि, किं ? उत्तविज्जमुणिरयणाणं कारणाओ जो अम्हाणं समाजो सुत्तप्पाओ, अम्हकेरं साहिच्चं च लुत्तप्पायं अत्थि तेसिं पुणोवि उदओ भविस्सइ जस्स कारणाओ भवियप्पा मोक्खस्स जोग्गो भवित्ता पुणो निन्वाणं पाविहिइ अओहं आगारमणि-मंजूसाए कत्तुणो पुणो पुणो धन्नवायं देमि— ॥

वि. सं. १९९० फाल्गुन-
शुक्लत्रयोदशी-मङ्गले
(अलवर स्टेट)

इइ-
उवज्झाय-जइण-मुणी, आगारामो
(पंचनईओ)

ऐसेही :—

मध्यभारत सैलाना-निवासी श्रीमान् रतनलालजी डोसी श्रम-
णोपासक जैन लिखते हैं कि :—

श्रीमान् की की हुई टीकावाला उपासकदशांग सेवक के दृष्टि-
गन हुआ, सेवक अभी उसका मनन कर रहा है यह ग्रन्थ सर्वाङ्ग-
सुन्दर एवम् उच्चकोटि का उपकारक है ।

निरयावलिका का सम्मतिपत्र.
आगमवारिधि-सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-जैनाचार्य-पूज्यश्री
आत्मारामजी महाराजकी तरफ का आया हुवा

सम्मतिपत्र

लुधियाना. ता. ११ नवम्बर ४८

श्रीयुत गुलाबचन्द्रजी पानाचन्द्रजी । सादर जयजिनेन्द्र ॥

पत्र आपका मिला ! निरयावलिका विषय पूज्यश्रीजीका स्वास्थ्य ठीक न होने से उनके शिष्य पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराजने सम्मतिपत्र लिख दिया है आपको भेज रहे हैं । कृपया एक कोपी निरयावलिकाकी और भेज दीजिये और कोई योग्य सेवा कार्य लिखते रहें !

भवदीय गुजरमल-बळवंतराय जैन

॥ सम्मतिः ॥

(लेखक :- जैनमुनि पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराज)

सुन्दरबोधिनीटीकया समलंकृतं हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादसहितं च श्रीनिरयावलिकासूत्रं मेधाविनामल्पमेधसां चोपकारकं भविष्यतीति सुदृढं मेऽभिमतम् , संस्कृतटीकेयं सरला सुबोधा सुललिता चात एव अन्वर्थनाम्नी चाप्यस्ति । सुविशदत्वात् सुगमत्वात् प्रत्येकदुर्बोधपद-व्याख्यायुतत्वाच्च टीकैषा संस्कृतसाधारणज्ञानवतामप्युपयोगिनी भाविनीत्यभिप्रेमि । हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादावपि एतद्भाषाविज्ञानां महीयसे लाभाय भवेतामिति सम्यक् संभावयामि ।

जैनाचार्य - जैनधर्मदिवाकर - पूज्यश्री घासीलालजी महाराजानां परिश्रमोऽयं प्रशंसनीयो धन्यवादार्हश्च ते मुनिसत्तमाः । एवमेव श्री-समीरमल्लजी-श्री कन्हैयालालजी मुनिवरेण्ययोर्नियोजनकार्यमपि श्लाघ्यं, तावपि च मुनिवरौ धन्यवादार्हौ स्तः ।

सुन्दरप्रस्तावनाविषयानुक्रमादिना समलंकृते सूत्ररत्नेऽस्मिन् यदि शब्दकोषोऽपि दत्तः स्यात्तर्हि वरतरं स्यात् । यतोऽस्यावश्यकतां सर्वेऽप्यन्वेषकविद्वांसोऽनुभवन्ति ।

पाठकाः सूत्रस्यास्याध्ययनाध्यापनेन लेखकनियोजकमहोदयानां परिश्रमं सफल्यिष्यन्तीत्याशास्महे । इति ।

श्री उपासकदशाङ्ग मन्त्र परत्वे जैन समाजना अग्रगण्य जैनधर्मभूषण
महान् विद्वान् संतोए तेमज विद्वान् श्रावकोए सम्मतिओ समर्पी
छे तेमना नामो नीचे प्रमाणे छे.

- (१) लुधियाना-संवत् १९८९, आश्विन पूर्णिमा का पत्र, श्रुतज्ञान के
मंडार आगमरत्नाकर जैनधर्मदिवाकर श्री १००७ श्री उपाध्याय श्री
आत्मारामजी महाराज, तथा न्यायव्याकरणवेत्ता श्री १००७ तच्छिष्य
श्री मुनि हेमचन्दजी महाराज.
- (२) लाहौर-वि० सं० १९८९ आश्विन वदि १३ का पत्र, पण्डितरत्न श्री
१००८ श्री भागचंदजी महाराज तथा तच्छिष्य पण्डितरत्न श्री १००७
श्री त्रिलोकचंदजी महाराज.
- (३) खिचन-से ता. ९-११-३६ का पत्र, क्रियापात्र स्थविर श्री १००८
श्री भारतरत्न श्री समरथमलजी महाराज.
- (४) वालाचोर-ता. १४-११-३६ का पत्र, परम प्रसिद्ध भारतरत्न श्री
१००८ श्री शतावधानी श्री रतनचंदजी महाराज.
- (५) चम्बई-ता. १६-११-३६ का पत्र, प्रसिद्ध कवीन्द्र श्री १००८ श्री
कवि नानचंदजी महाराज.
- (६) आगरा-ता. १८-१२-३६, जगत् बल्लभ श्री १००८ जैनदिवाकर
श्री चौथमलजी महाराज, गुणवन्त गणीजी श्री १००७ श्री साहित्यप्रेमी
श्री प्यारचन्दजी महाराज.
- (७) हैद्राबाद-(दक्षिण) ता. २५-११-३६ का पत्र, स्थिवरपदभूषित
भाग्यवान् पुरुष श्री ताराचंदजी महाराज तथा प्रसिद्ध वक्ता श्री १००७
श्री सोभागमलजी महाराज.
- (८) जयपुर-ता. २७-११-३६ का पत्र, संप्रदाय के गौरववर्धक शांत-
स्वभावी श्री १००८ श्री पूज्य श्री खूबचन्दजी महाराज.
- (९) अम्बाला-ता. २९-११-३६ का पत्र, परमप्रतापी पंजाबकेशरी श्री
१००८ श्री पूज्य श्री रामजी महाराज.

(१०) सेलाना-ता. २९-११-३६ का पत्र, शास्त्रों के ज्ञाता श्रीमान् रतनलालजी डोसी.

(११) खीचन-ता. ९-११-३६ का पत्र, पंडितरत्न न्यायतीर्थ सुश्रावक श्रीयुत् माधवलालजी.



ता० २५-११-३६

सादर जय जिनेन्द्र

आपका भेजा हुआ उपासकदशांग सूत्र तथा पत्र मिला यहां विराजित प्रवर्तक वयोवृद्ध श्री १००८ श्री ताराचंदजी महाराज पण्डित श्री किशनलालजी महाराज आदि ठाणा १४ सुख शांति में विराजमान हैं आपके वहां विराजित जैनशास्त्राचार्य पूज्यपाद श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज आदि ठाणा नव से हमारी बन्दना अर्ज कर सुख शांति पूछे आपने उपासकदशांग सूत्र के विषय में यहां विराजित मुनिवरों की सम्मती मंगाई उसके विषय में वक्ता श्री सोभागमलजी महाराजने फरमाया है कि वर्तमान में स्थानकवासी समाज में अनेकानेक विद्वान मुनि महाराज मौजूद हैं मगर जैनशास्त्र की वृत्ति रचने का साहस जैसा घासीलालजी महाराज ने किया है वैसा अन्यने किया हो ऐसा नजर नहीं आता दूसरा यह शास्त्र अत्यन्त उपयोगी तो यों हैं संस्कृत प्राकृत हिन्दी और गुजराती भाषा होने से चारों भाषा वाले एक ही पुस्तक से लाभ उठा सकते हैं जैन समाज में ऐसे विद्वानोंका गौरव बढ़े यही शुभ कामना है आशा है कि स्थानकवासी संघ विद्वानों की कदर करना सीखेगा ।

योग्य लिखें शेष शुभ

भवदीय

जमनालाल रामलाल कीमती



आगरा से:—

श्री जैनदिवाकर प्रसिद्धवक्ता जगद्वल्लभ मुनि श्री चोथमलजी महाराज व पंडितरत्न सुव्याख्यानि गणीजी श्री प्यारचन्दजी महाराजने इस पुस्तकको अतीव पसन्द की है ।

श्रीमान् न्यायतीर्थ पण्डित

माधवलालजी खचिन से लिखते हैं कि—

उन पंडितरत्न महाभाग्यवंत पुरुषों के सामने उनकी अगाध-तत्त्वगवेषणा के विषय में मैं नगण्य क्या सम्मति दे सकता हूँ।

परन्तु :—

मेरे दो मित्रों ने जिन्होंने इसको कुछ पढ़ा है बहुत सराहना की वास्तव में ऐसे उत्तम व सबके समझने योग्य ग्रन्थों की बहुत आवश्यकता है और इस समाज का तो ऐसे ग्रन्थ ही गौरव बढ़ा सकते हैं—ये दोनों ग्रन्थ वास्तव में अनुपम हैं ऐसे ग्रन्थरत्नों के सुप्रकाशसे यह समाज अमावास्या के घोर अन्धकार में दीपावली का अनुभव करती हुई महावीर के अमूल्य वचनों का पान करती हुई अपनी उन्नति में अग्रसर होती रहेगी।



ता. २९-११-३६

अम्बाला (पंजाब)

पत्र आपका मिला श्री श्री १००८ पंजाबकेसरी पूज्य श्री काशी-रामजी महाराज की सेवा में पढ़ कर सुना दिया। आपकी भेजी हुई उपामकदशाद्र सूत्र तथा गृहिधर्मकल्पतरु की एक २ प्रति भी प्राप्त हुई। दोनों पुस्तकें अति उपयोगी तथा अत्यधिक परिश्रम से लिखी हुई हैं। ऐसे ग्रन्थरत्नों के प्रकाशित करवानेकी बड़ी आवश्यकता है। इन पुस्तकों से जैन तथा अजैन सबका उपकार हो सकता है। आपका यह पुरुषार्थ सराहनीय है।

आपका

शशिभूषण शास्त्री

अध्यापक जैन हाई स्कूल

अम्बाला शहर

शान्तस्वभावी वैराग्यमूर्ति तत्त्ववारिधि, धैर्यवान श्री जैनाचार्य पूज्यवर श्री श्री १००८ श्री खूबचन्दजी महाराज साहेबने मूत्र श्री उपासकदशाङ्गजी को देखा । आपने फरमाया कि पण्डित मुनि घासीलालजी महाराज ने उपासक-दशाङ्ग मूत्रकी टीका लिखने में बड़ा ही परिश्रम किया है । इस समय इस प्रकार प्रत्येक सूत्रों की संशोधनपूर्वक सरल टीका और शुद्धहिन्दी अनुवाद होने से भगवान निर्ग्रन्थों के प्रवचनों के अपूर्व रस का लाभ मिल सकता है ।



वालाचोर से भारतरत्न शतावधानी पंडित मुनि श्री १००८ श्री रतनचन्दजी महाराज फरमाते हैं कि :—

उत्तरोत्तर जोतां मूल सूत्रनी संस्कृत टीकाओ रचवामां टीकाकारे स्तुत्य प्रयास कयों छे, जे स्थानकवासी समाज माटे मगरूरो लेवा जेवुं छे, वली करांचीना श्री संवे सारा कागळमां अने सारा टाईपमां पुस्तक छपावी प्रगट कर्युं छे जे एक प्रकारनी साहित्य सेवा बजावी छे.



बम्बई शहेरमें विराजमान कवि मुनि श्री नानचन्दजी महाराजने फरमाया है कि पुस्तक सुन्दर है प्रयास अच्छा है ।



खीचन से स्थविर क्रियापात्र मुनि श्री रतनचन्दजी महाराज और पंडित रत्न मुनिश्री समर्थमलजी महाराज श्री फराते हैं कि—विद्वान महात्मा पुरुषोंका प्रयत्न सराहनीय है, जैनागम श्रीमद् उपासकदशाङ्गमूत्र की टीका, एवं उसकी सरल सुबोधनी शुद्ध हिन्दी भाषा बड़ी ही सुन्दरता से लिखी है ।



श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री श्री श्री १००८ जैनधर्म दिवाकर जैनागमरत्नाकर श्रीमज्जै-
नाचार्य श्री पूज्य घासीलालजी महाराज चरणवन्दन स्वीकार हो ।

अपरञ्च समाचार यह है कि आपके भेजे हुए ९ शास्त्र मास्टर
जोमालालजी के द्वारा प्राप्त हुए, एतदर्थ धन्यवाद ! आपश्रीजीने तो ऐसा
कार्य किया है जो कि हजारों वर्षों से किसी भी स्थानकवासी जैनाचार्य
ने नहीं किया ।

आपने स्थानकवासीजैनसमाज के ऊपर जो उपकार किया है वह
कदापि भुलाया नहीं जा सकता और नहीं भुलाया जा सकेगा ।

हम तीनों मुनि भगवान महावीर से अथवा शासनदेव से प्रार्थना
करते हैं कि आपकी इस वज्रमयी लेखनी को उत्तरोत्तर शक्ति प्रदान
करें ता कि आप जैन समाज के ऊपर और भी उपकार करते रहें और
आप चिरञ्जीव हों ।

हम हैं आप के मुनि तीन

मुनि सत्येन्द्रदेव—मुनि लखपतराय—मुनि पद्मसेन



इतवारी बाजार

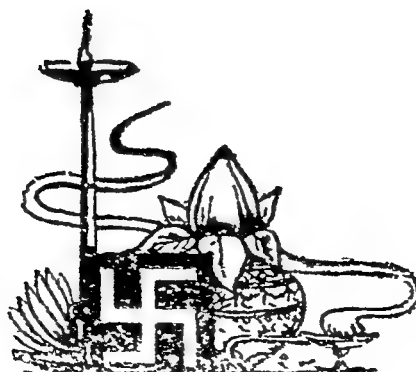
नागपुर ता. १९-१२-५६

प्रखर विद्वान जैनाचार्य मुनिराज श्री घासीलालजी महाराजद्वारा जो आगमोद्धार हुआ और हो रहा है सचमुच महाराजश्री का यह स्तुत्य कार्य है। हमने प्रचारकजी के द्वारा नौ सूत्रों का सेट देखा और कह मारमिक स्थलोंको पढ़ा, पढ़ कर विद्वान मुनिराजश्री की शुद्ध श्रद्धा तथा लेखनीके प्रति हार्दिक प्रसन्नता फूट पड़ी।

वास्तव में मुनिराज श्री जैन समाज पर ही नहीं इतर समाज पर भी महा उपकार कर रहे हैं। ज्ञान किसी एक समाज का नहीं होता वह सभी समाज की अनमोल निधि है जिसे कठिन परिश्रम से तैयार कर जनता के सम्मुख रक्खा जा रहा है जिसका एक एक सेट हर शहर गांव और घर घर में होना आवश्यक है।

साहित्यरत्न

मोहनमुनि सोहनमुनि जैन



શ્રી દશવૈકલિક સૂત્રનું સમ્મતિ પત્ર

શ્રમણ સઘના મહાન આચાર્ય આગમવારિધિ સર્વતન્ત્ર સ્વતંત્ર જૈનાચાર્ય પૂજ્યશ્રી આત્મારામજી મહારાજે આપેલા સમ્મતિપત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ.



મેં તથા પંડિત મુનિ હેમચંદ્રજીએ પંડિત મુલચંદ આસ (નાગૌર મારવાડવાલા) દ્વારા મળેલી પંડિત રત્ન શ્રી ઘાસીલાલજી મુનિ વિરચિત સંસ્કૃત અને હિન્દી ભાષા સહિત શ્રી દશવૈકલિક સૂત્રની આચારમણિમંજૂષા ટીકાનું અવલોકન કર્યું આ ટીકા સુદર બની છે. તેમાં પ્રત્યેક શબ્દનો અર્થ સારી રીતે વિશેષભાવ લઈને સમજાવવામાં આવેલ છે

તેથી વિદ્વાનો અને સાધારણ બુદ્ધિવાળાઓ માટે પરમ ઉપકાર કરવાળી છે ટીકાકારે મુનિના આચાર વિષયનો સારો ઉદ્દેશ કરેલ છે. જે આધુનિક-મતાવલંબી અહિંસાના સ્વરૂપને નથી જાણતા, દયામાં પાપ સમજે છે તેમને માટે ‘અહિંસા શું વસ્તુ છે’ તેનું સારી રીતે પ્રતિપાદન કરેલ છે. વૃત્તિકારે સૂત્રના પ્રત્યેક વિષયને સારી રીતે સમજાવેલ છે આ વૃત્તિના અવલોકનથી વૃત્તિકારની અતિશય યોગ્યતા સિદ્ધ થાય છે

આ વૃત્તિમાં એક બીજી વિશેષતા એ છે કે મૂલસૂત્રની સંસ્કૃત છાયા હોવાથી સૂત્ર, સૂત્રનાં પદ અને પદચ્છેદ સુબોધદાયક બનેલ છે

પ્રત્યેક જ્ઞાસુએ આ ટીકાનું અવલોકન અવશ્ય કરવું જોઈએ. વધારે શું કહેવું અમારી સમાજમાં આવા પ્રકારના વિદ્વાન મુનિ રત્નનું હોવું એ સમાજનું અહોભાગ્ય છે. આવા વિદ્વાન મુનિરત્નોના કારણે સુખપ્રાય—સુતેલો સમાજ અને લુપ્તપ્રાય એટલે લોપ પામેલું સાહિત્ય એ બન્નેનો ફરીથી ઉદય થશે. અમે વૃત્તિકારને વારવાર ધન્યવાદ આપીએ છીએ.

વિક્રમ સવત ૧૯૬૦ શ્રાવણ શુકલ
તેરમ મંગળવાર
(અલવર સ્ટેટ)



ઈઈ

ઉવજાણ્ય જયજી
મુળી આચાર્યશ્રી
પંચનઈઓ

શ્રમણ સંઘના પ્રચારમંત્રી પંબળકેશરી મહારાજ શ્રી પ્રેમચંદ્ર
મહારાજ જેઓશ્રી રાજકોટમાં પધારેલા હતા ત્યારે તેઓના તરફથી શાસ્ત્રોને
માટે મળેલો અભિપ્રાય.

*

શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ તરફથી પૂજ્યપાદ શાસ્ત્રવારિધિ પંડિતરાજ સ્વામીશ્રી
ઘાસીલાલજી મહારાજદ્વારા શાસ્ત્રોદ્ધારનું જે કાર્ય થઈ રહ્યું તે કાર્ય જૈન સમાજ
તેમાં ખાસ કરીને સ્થાનકવાસીજૈનસમાજને માટે મૂળભૂત મૌલિક સંસ્કૃતિની
જડને મજબુત કરવાવાળું છે.

એટલા ખાતર આ કાર્ય અતિ પ્રશંસનીય છે માટે દરેક વ્યક્તિએ તેમાં
યથાશક્તિ લોગ દેવાની ખાસ આવશ્યકતા છે અને તેથી એ લગીરથ કાર્ય જલ્દીથી
જલ્દી સંપૂર્ણપણે પાર પાડી શકાય અને જનતા શ્રુતજ્ઞાનનો લાભ મેળવી શકે.

*

દરીયાપુરી સંપ્રદાયના પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઇશ્વરલાલજી મહારાજ સાહેબના

સૂત્રો સંબંધે વિચારો

નમામિ વીરં ગિરિસારધીરં

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવરશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તથા પંડિતશ્રી કનૈયાલાલજી
મહારાજ આદિ થાણા છની સેવામાં—

અમદાવાદ શાહપુર ઉપાશ્રયથી મુનિ દયાનંદજીના ૧૦૮ પ્રણિપાત.

આપ સર્વે થાણાઓ સુખ સમાધિમાં હશે નિરંતર ધર્મધ્યાન ધર્મારા-
ધનમાં લીન હશે.

સૂત્ર પ્રકાશન કાર્ય ત્વરિત થાય એવી લાવના છે દશવૈકાલિક તથા
આચારાંગ એક એક ભાગ અહીં છે ટીકા ખૂબ સુંદર, સરળ અને પંડિતજનોને
સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે. સાથે સાથે ટીકા વિનાના મુળ અને અર્થ સાથે પ્રકા-
શન થાય તો શ્રાવકગણુ તેનો વિશેષ લાભ લઈ શકે અત્રે પૂજ્ય આચાર્ય ગુરૂદેવને
આંખે મોતીયો ઉતરાવ્યો છે અને સાઈ છે એજ.

આસો શુક ૧૦, મંગળવાર તા. ૨૫-૧૦-૫૫

પુનઃ પુનઃ શાતા ઇચ્છતો,
દયા મુનિના પ્રણિપાત.

*

દરીયાપુરી સંપ્રદાયના પંડિત રત્ન ભાઈચંદજી મહારાજનો અભિપ્રાય શ્રી

રાણપુર તા. ૧૬-૧૨-૧૯૫૫

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવર પંડિત રત્ન પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આદિ મુનિવરોની સેવામાં, આપ સર્વ સુખસમાધીમાં હશે.

સૂત્રપ્રકાશનનું કામ સુદર થઈ રહ્યું છે તે જાણી અત્યંત આનંદ. આપના પ્રકાશિત થયેલાં કેટલાક સૂત્રો જોયાં. સુદર અને સરલ સિદ્ધાંતના ન્યાયને પુષ્ટિ કરતી ટીકા પંડિતરત્નોને સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે સૂત્રપ્રકાશનનું કામ ત્વરિત પૂર્ણ થાય અને લવિ આત્માઓને આત્મકલ્યાણ કરવામાં સાધનભૂત થાય એજ અભ્યર્થના.

લી. પંડિતરત્ન બાળપ્રદ્યયારી
પૂ૦ શ્રી ભાઈચંદ મહારાજની
આજ્ઞાનુસાર શાન્તિમુનીના
પાયવંદન સ્વીકારશે.

✽

તા. ૧૧-૫-૫૬
વીરમગામ

ગચ્છાધિપતિ પૂજ્ય મહારાજ શ્રી જ્ઞાનચંદ્રજી મહારાજના સંપ્રદાયના આત્માર્થી, ક્રિયાપાત્ર, પંડિતરત્ન, મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજનો અભિપ્રાય.

ખીચનથી આવેલ તા ૧૨-૨-૫૬ના પત્રથી ઉદ્દૃત

પૂજ્ય આચાર્ય ઘાસીલાલજી મહારાજના હસ્તક જે સૂત્રોનું લખાણ સુંદર અને સરળ ભાષામાં થાય છે. તે સાહિત્ય, પંડિત મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજ, સમય ઓછો મળવાને કારણે સંપૂર્ણ જોઈ શક્યા નથી. છતાં જેટલું સાહિત્ય જોયું છે, તે બહુ જ સારું અને મનન સાથે લખાયેલું છે, તે લખાણ શાસ્ત્ર-આજ્ઞાને અનુરૂપ લાગે છે આ સાહિત્ય દરેક શ્રદ્ધાળુ જીવોને વાંચવા યોગ્ય છે. આમાં સ્વાનંદવાસી સમાજની શ્રદ્ધા, પ્રરૂપણા અને ફરસણાની દૃઢતા શાસ્ત્રાનુકૂળ છે. આચાર્યશ્રી અપૂર્વ પરિશ્રમ લઈ સમાજ ઉપર મહાન ઉપકાર કરે છે.

લી. કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ માલ
મુ. ખીચન.

લી'બડી સંપ્રદાયના સદાનંદી મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શ્રી વીતરાગદેવે જ્ઞાનપ્રચારને તીર્થંકર-નામ-ગોત્ર બાંધવાનું નિમિત્ત કહેલ છે. જ્ઞાનપ્રચાર કરનાર, કરવામાં સહાય કરનાર, અને તેને અનુમોદન આપનાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મને ક્ષય કરી કેવળ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરી પરમ પદનાં અધિકારી બને છે. શાસ્ત્રજ્ઞ, પરમ શાન્ત અને અપ્રમાદી પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે અવિશ્રાન્તપણે જ્ઞાનની ઉપાસના અને તેની પ્રભાવના અનેક વિકટ પ્રસંગોમાં પણ કરી રહ્યા છે. તે માટે તેઓશ્રી અનેકશઃ ધન્યવાદના અધિકારી છે. વંદનીય છે, તેમની જ્ઞાનપ્રભાવનાની ધગશ ઘણા પ્રમાદિઓને અનુકરણીય છે. જેમ પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે જ્ઞાનપ્રચાર માટે અવિશ્રાન્ત પ્રયત્ન કરે છે. તેમજ-શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના કાર્યવાહકો પણ એમાં સહાય કરીને જે પવિત્ર સેવા કરી રહેલ છે. તે પણ ખરેખર ધન્યવાદના પૂર્ણ અધિકારી છે.

એ સમિતિના કાર્યકરોને મારી એક સુચના છે કે:—

શાસ્ત્રોદ્ધારક પ્રવર પંડિત અપ્રમાદી સંત ઘાસીલાલજી મહારાજ જે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ કરી રહેલ છે. તેમાં સહાય કરવા માટે-પંડિતો વિગેરેના માટે જે ખર્ચો થઈ રહેલ છે. તેને પહોંચી વળવા માટે સાફ સરખું ફંડ જોઈએ. એના માટે મારી એ સુચના છે કે:—શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના મુખ્ય કાર્યવાહકો-જો બની શકે તો પ્રમુખ પોતે અને બીજા જે ત્રણ જણાઓ ગુજરાત, સૌરાષ્ટ્ર, અને કચ્છમાં પ્રવાસ કરી મેમ્બરો બનાવે અને આર્થિક સહાય મેળવે.

જો કે અત્યારની પરિસ્થિતિ વિપમ છે. વ્યાપારીઓ, ધંધાદારીઓને પોતાના વ્યવહાર સાચવવા પણ મુશ્કેલ બન્યા છે. છતાં જો અંભાવિત ગૃહસ્થો પ્રવાસે નીકળે તો જરૂર કાર્ય સફળ કરે એવી મને શ્રદ્ધા છે.

આર્થિક અનુકુળતા થવાથી શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પણ વધુ ચરલતાર્થી થઈ શકે. પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ ન્યાં સુધી આ તરફ વિચરે છે ત્યાં સુધીમા એમની જ્ઞાનશક્તિનો જેટલો લાભ લેવાય તેટલો લઈ લેવો, કદાચ સૌરાષ્ટ્રમાં વધુ વળત રહેવાથી તેમને હવે બહાર પિહરવાની ઈચ્છા થતી હોય તો શાન્તિભાઈ શેઠ જેવાઓ વિનંતી કરી અમદાવાદ પધારવા, અને ત્યાં અનુકુળતા મુજબ જે-ત્રણ વર્ષની સ્થિરતા કરાવીને તેમની પાસે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પૂર્ણ કરાવી લેવું જોઈએ.

ઘોડા વળતમાં જામજોધપુરમાં શાસ્ત્રોદ્ધારકમીટી મળવાની છે. તે વળત ઉપરની સૂચના વિચારાય તો હીક.

કરી શાસ્ત્રોદ્ધારક પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજને એમની આ સેવા અને પરમ કલ્યાણકારક પ્રવૃત્તિને માટે વારંવાર અભિનંદન છે. શાસનનાયક દેવ તેમના શરીરાદિને સશક્ત અને નિર્ધાયુ રાખી સમાજ ધર્મની વધુ ને વધુ સેવા કરી શકે. ॐ અસ્તુ

આતુર્માન સ્થળ, લીંળડી	}	લી
સાં. ૨૦૧૦ શ્રાવણ વદ ૧૩ ગુરુ.		સદાનંદી જૈનમુનિ છોટાલાલજી

શ્રી વર્ધમાન સંપ્રદાયના પૂજ્ય શ્રી પુનમચંદ્રજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શારદાવિશારદ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રીએ જૈન આગમો ઉપર જે સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચેલ છે તે માટે તેઓશ્રી ધન્યવાદને પાત્ર છે તેમણે આગમો ઉપરની સ્વતંત્ર ટીકા રચીને સ્થાનકવાસી જૈન સમાજનું ગૌરવ વધાર્યું છે, આગમો ઉપરની તેમની સંસ્કૃત ટીકા ભાષા અને ભાવની દૃષ્ટિએ ઘણી જ સુંદર છે. સંસ્કૃતરચના માધુર્ય તેમજ અલંકાર વગેરે ગુણોથી સુકૃત છે. વિદ્વાનોએ તેમજ જૈન સમાજના આચાર્યો, ઉપાધ્યાયો વગેરે એ શાસ્ત્રો ઉપર રચેલી આ સંસ્કૃતરચનાની કદર કરવી જોઈએ અને દરેક પ્રકારનો સહકાર આપવો જોઈએ.

આવા મહાન કાર્યમા પંડિતરત્ન પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જે પ્રયત્ન કરી રહ્યા છે તે અલૌકિક છે તેમનું આગમ ઉપરની સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચવાનું ભગીરથકાર્ય શીઘ્ર સફળ થાય એ જ શુભેચ્છા સાથે.

અમદાવાદ તા. ૨૨-૪-૫૬ રવિવાર મહાવીર જયતિ	}	મુનિ પૂર્ણચંદ્રજી
--	---	-------------------

ખંભાત સંપ્રદાયના મહાસતી શારદાબાઈ સ્વામીનો અભિપ્રાય

લખતર તા. ૨૫-૪-૫૬

શ્રીમાન ગ્રેડ શાંતીલાલભાઈ મંજળદાસભાઈ

પ્રમુખ આદેશ અખિલ ભારત ઋવેં સ્થાન જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

મુ. અમદાવાદ

અમો અત્રે દેવગુરૂની કૃપાએ ગુણરૂપ છીએ. વિ. મા આપની સમિતિદ્વારા પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આદેશ જે સૂત્રોનું કાર્ય કરે છે તે પદીના સૂત્રોમાથી ઉપાનિષદશાગસૂત્ર, આચારાગસૂત્ર, અનુત્તરોપપાતિકસૂત્ર

દશવિકાલિકસૂત્ર વિગેરે સૂત્રો જોયાં તે સૂત્રો સંસ્કૃત હિન્દી અને ગુજરાતી ભાષાઓમાં હોવાને કારણે વિદ્વાન અને સામાન્ય જનોને ઘણું જ લાભદાયિક છે. તે વાંચન ઘણું જ સુંદર અને મનોરંજન છે. આ કાર્યમાં પૂજ્ય આચાર્યશ્રી જે અઘાત પુરૂષાર્થે કાર્ય કરે છે તે માટે વારંવાર ધન્યવાદને પાત્ર છે. આ સૂત્રોથી સમાજને ઘણું લાભનું કારણ છે.

હંસ સમાન બુદ્ધિવાળા આત્માઓ સ્વપરના લેહથી નિષ્પાલસ લાવનારો અવલોકન કરશે તો આ સાહિત્ય સ્થાનકવાસી સમાજ માટે અપૂર્વ અને ગૌરવ લેવા જેવું છે. માટે દરેક ભવ્ય આત્માઓને સૂચન કરું છું કે આ સૂત્રો પોત-પોતાના ઘરમાં વસાવાની સુંદર તકને ચુકશો નહિ. કારણ આવા શુદ્ધ પવિત્ર અને સ્વપરંપરાને પુષ્ટીરૂપ સૂત્રો મળવાં બહુ મુશ્કેલ છે. આ કાર્યને આપશ્રી તથા સમિતિના અન્ય કાર્યકરો જે શ્રમ લઈ રહ્યા છે તેમાં મહાન નિર્જરણું કારણ જોવામાં આવે છે તે બદલ ધન્યવાદ. એ જ

લી. શારદાબાઈ સ્વામી
ખંભાત સંપ્રદાય.

*

બરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી મહાસતીજી મોંઘીબાઈ
સ્વામીનો અભિપ્રાય

ધંધુકા તા. ૨૭-૧-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાન્તીલાલ મંગળદાસભાઈ

પ્રમુખ અં ભં શ્વેં સ્થાં જૈનશાસ્ત્ર ઉદ્ધાર સમિતિ

મું રાજકોટ

અત્રે ખીરાજતા ગું ગુંના ભંડાર મહાસતીજી વિદુષી મોંઘીબાઈ સ્વામી તથા હીરાબાઈ સ્વામી આદિઠાણું બંને સુખશાતામાં ખીરાજે છે, આપને સુચન છે કે અપ્રમત્ત અવસ્થામાં રહી નિવૃત્તિ લાવને મેળવી ધર્મધ્યાન કરશો એજ આશા છે.

વિશેષમાં અમને પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના રચેલાં સૂત્રો ભાઈ પોપટ ધનજીભાઈ તરફથી ભેટ તરીકે મળેલાં તે સૂત્રો તમામ આદ્યોપાન્ત વાંચ્યાં મનન કર્યાં અને વિચાર્યાં છે તે સૂત્રો સ્થાનકવાસી સમાજને અને વીતરાગમાર્ગને ખુબ જ ઉન્નત બનાવનાર છે. તેમાં આપણી શ્રદ્ધા એટલી ન્યાયરૂપથી ભરેલી છે તે આપણા સમાજ માટે ગૌરવ લેવા જેવું છે. હંસ સમાન

આત્માઓ જ્ઞાનઝરણાઓથી આત્મરૂપ વાડીને વિકસિત કરશે. ધન્ય છે આપને અને સમિતિના કાર્યકરોને જે સમાજ ઉત્થાન માટે કોઈની પણ પરવા કર્યા વગર જ્ઞાનનું દાન લબ્ય આત્માઓને આપવા નિમિત્તરૂપ થઈ રહ્યા છે. આવા સમર્થ વિદ્વાન પાસેથી સંપૂર્ણ કાર્ય પુરું કરાવશો તેવી આશા છે.

એજ લિ. બરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી
મહાસતીજી મોંઘીબાઈ સ્વામી
ના ફરમાનથી લી ખોડીદાસ ગણેશભાઈ—ધધુકા
સ્થાનકવાસી જૈન સઘના પ્રમુખ

*

અદ્યતન પદ્ધતિને અપનાવનાર વડોદરા કોલેજના એક વિદ્વાન પ્રોફેસરનો અભિપ્રાય

સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જૈનશાસ્ત્રોના સંસ્કૃત ટીકાબદ્ધ, ગુજરાતીમાં અને હિન્દીમાં ભાષાતરો કરવાના ઘણા વિકટ કાર્યમાં વ્યાસ થયેલા છે. શાસ્ત્રો પૈકી જે શાસ્ત્રો પ્રસિદ્ધ થયાં છે તે હું જોઈ શક્યો છું, મુનિશ્રી પોતે સંસ્કૃત, અર્ધભાગધી હિન્દી ભાષાઓના નિષ્ણુત છે, એ એમનો ટુંક પરિચય કરતા સહજ જણાઈ આવે છે શાસ્ત્રોનું સંપાદન કરવામાં તેમને પોતાના, શિષ્ય વર્ગનો અને વિશેષમાં ત્રણ પંડિતોનો સહયોગ મળ્યો છે, તે જોઈ મને આનંદ થયો સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના અગ્રેસરોએ પંડિતોનો સહકાર મેળવી આપી, મુનિશ્રીના કાર્યને સરળ અને શિષ્ટ બનાવ્યું છે. સ્થાનકવાસી સમાજમાં વિદ્વત્તા ઘણી ઓછી છે, તે દિગંબર મૂર્તિપૂજક શ્વેતાંબર વગેરે જૈનદર્શનના પ્રતિનિધિઓના ઘણા અમયથી પરિચયમાં આવતાં હું વિરોધના ભય વગર, કહી શકું. પૂ. મહારાજનો આ પ્રયાસ સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં પ્રથમ છે એવી મારી માન્યતા છે. સંસ્કૃત સ્પષ્ટીકરણો ત્રણ આપવામાં આવ્યા છે, ભાષા શુદ્ધ છે એમ ચોક્કસ કહી શકું છું, ગુજરાતી ભાષાતરો પણ શુદ્ધ અને સરળ થયેલાં છે મને વિશ્વાસ છે કે મહારાજશ્રીના આ સ્તુત્ય પ્રયાસને જૈનસમાજ ઉત્તેજન આપશે અને શાસ્ત્રોના ભાષાતરોને વાચનાલયમાં અને કુટુંબોમાં વસાવી શકાય તે પ્રમાણે વ્યવસ્થા કરશે.

પ્રતાપગજ, વડોદરા

તા. ૨૭-૨-૧૯૫૬

કામદાર કેશવલાલ હિંમતરામ

એમ. એ.

મુંબઈની બે કોલેજોના પ્રોફેસરોનો અભિપ્રાય

મુંબઈ તા. ૩૧-૩-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાંતીલાલ મંગળદાસ

પ્રમુખ : શ્રી અખિલ ભારત શ્વે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ,

રાજકોટ.

પૂજ્યાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે તૈયાર કરેલાં આચારાંગ દશવૈકાલિક, આવશ્યક, ઉપાસકદશાંગ વગેરે સૂત્રો અમે જોયાં. આ સૂત્રો ઉપર સંસ્કૃતમાં ટીકા આપવામાં આવી છે અને સાથે સાથે હિંદી અને ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ આપવામાં આવ્યાં છે. સંસ્કૃતટીકા અને ગુજરાતી તથા હિંદી ભાષાંતરો જોતાં આચાર્યશ્રીના આ ત્રણે ભાષા પરના એકસરખા અસાધારણ પ્રભુત્વની સચોટ અને સુરેખ છાપ પડે છે. આ સૂત્ર ગ્રંથોમાં પાને પાને પ્રગટ થતી આચાર્યશ્રીની અપ્રતિમ વિદ્વત્તા મુગ્ધ કરી દે તેવી છે. ગુજરાતી તથા હિંદીમાં થયેલાં ભાષાંતરમાં ભાષાની શુદ્ધિ અને સરળતા નોંધપાત્ર છે. એથી વિદ્વદ્જન અને સાધારણ માણસ ઉભયને સંતોષ આપે એવી એમની લેખિનીની પ્રતીતિ થાય છે. ૩૨ સૂત્રોમાંથી હજુ ૧૩ સૂત્રો પ્રગટ થયાં છે. બીજાં ૭ સૂત્રો લખાઈને તૈયાર થઈ ગયાં છે. આ બધાંજ સૂત્રો જ્યારે એમને હાથે તૈયાર થઈને પ્રગટ થશે ત્યારે જૈન-સૂત્ર-સાહિત્યમાં અમૂલ્ય સંપત્તિરૂપ ગણાશે એમાં સંશય નથી. આચાર્યશ્રી આ મહાન કાર્યને જૈનસમાજનો વિશેષતઃ સ્થાનકવાસી સમાજનો સંપૂર્ણ સહકાર સાંપડી રહેશે એવી અમે આશા રાખીએ છીએ.

પ્રો. રમણલાલ ચીમનલાલ શાહ

સેન્ટ ઝેવિયર્સ કોલેજ, મુંબઈ.

પ્રો. તારા રમણલાલ શાહ

સોપ્રીયા કોલેજ, મુંબઈ

*

રાજકોટની ધર્મેન્દ્રસિંહજી કોલેજના પ્રોફેસર સાહેબનો અભિપ્રાય

જયમહાલ

જાગનાથ પ્લોટ

રાજકોટ, તા. ૧૮-૪-૫૬

પૂજ્યાચાર્ય પં. મુનિશ્રી ઘાસીલાલ મહારાજ આજે જૈનસમાજ માટે એક એવા કાર્યમાં વ્યાપ્ત થયેલા છે કે જે સમાજ માટે બહુ ઉપયોગી થઈ પડશે. મુનિશ્રીએ તૈયાર કરેલાં આચારાંગ, દશવૈકાલિક, શ્રી વિપાકશ્રુત વિ મેં જોયાં.

આ સૂત્રો જોતાં પહેલી જ નજરે મહારાજશ્રીનો સસ્કૃત, અર્ધભાગધી, હિન્દી તથા ગુજરાતી ભાષાઓ ઉપરનો અસાધારણ કાબુ જણાઈ આવે છે એક પણ ભાષા મહારાજશ્રીથી અજાણી નથી આપણે જાણીએ છીએ કે એ સૂત્રો ઉચ્ચ અને પ્રથમ કોટિના છે તેની વસ્તુ ગંભીર, વ્યાપક અને જીવનને તલસ્પર્શી છે, આટલા ગહન અને સર્વગ્રાહ્ય સૂત્રોનું ભાષાંતર પૂં ધાસીલાલજી મહારાજ જેવા ઉચ્ચ કોટિના મુનિરાજને હાથે થાય છે તે આપણાં અહોભાગ્ય છે યત્રવાદ અને ભૌતિકવાદના આ જમાનામાં જ્યારે ધર્મભાવના ઓસરતી જાય છે એવે વખતે આવા તત્ત્વજ્ઞાન આધ્યાત્મિકતાથી ભરેલાં સૂત્રોનું સરળ ભાષામાં ભાષાંતર દરેક જ્ઞાસુ, મુમુક્ષુ અને આધકને માર્ગદર્શક થઈ પડે તેમ છે. જૈન અને જૈનેતર, વિદ્વાન અને સાધારણ માણસ આધુ અને શ્રાવક દરેકને સમજણ પડે તેવી સ્પષ્ટ, સરળ અને શુદ્ધ ભાષામાં સૂત્રો લખવામાં આવ્યાં છે. મહારાજશ્રીને જ્યારે જોઈએ ત્યારે તેમના આ કાર્યમાં સકળાયેલા જોઈએ છીએ એ ઉપરથી મુનિશ્રીના પરિશ્રમ અને યગશની કલ્પના કરી શકાય તેમ છે તેમનું જીવન સૂત્રોમાં વણાઈ ગયું છે.

મુનિશ્રી આ અસાધારણ કાર્યમાં પોતાના શિષ્યોનો તથા પંડિતોનો સહકાર મળ્યો છે. મને આશા છે કે જો દરેક મુમુક્ષુ આ પુસ્તકોને પોતાના ઘરમાં વસાવશે અને પોતાના જીવનને સાચા સુખને માર્ગે વાળશે તો મહારાજશ્રીએ ઉઠાવેલો શ્રમ સંપૂર્ણપણે સફળ થશે.

પ્રો રસિકલાલ કસ્તુરચંદ ગાંધી
એમ. એ. એલ એલ. ખી.
ધર્મેન્દ્રસિંહજી કેલેજ
રાજકોટ (સૌરાષ્ટ્ર)

*

મુંબઈ અને ઘાટકોપરમાં મળેલી સભાએ લિનાસર કોન્ફરન્સ તથા
આધુ સંમેલનમાં મોકલાવેલ ઠરાવ

હાલ જે વખતે શ્રી. જ્વેતાળર સ્થાનકવાસી જૈન સઘ માટે આગમ સંશોધન અને સ્વતંત્ર ટીકાવાળા શાસ્ત્રોદ્ધારની અતિ આવશ્યકતા છે અને જે મહાનુભાવોએ આ વાત દીર્ઘદૃષ્ટિથી પહેલી પોતાના મગજમાં લઈ તે પાર પાડવા મહેનત લઈ રહ્યા છે તેવા મુનિ મહારાજ પંડિતરત્ન શ્રી ધામીલાલજી મહારાજ કે તેઓને સદી અધિવેશમાં સર્વાનુમતે સાહિત્ય મંત્રી નીમ્યા છે તેઓશ્રીની દેખરેખ નીચે આ ભા. જ્વે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ જે એક મોટી વગવાળી ઇમિટી છે તેની નાગરિક કામ થઈ રહ્યું છે. જેને પ્રધાનાચાર્યશ્રી તથા પ્રચાર મંત્રીશ્રી

તથા અનેક અનુભવી મહાનુભાવોએ પોતાની પસંદગીની મહોર છાપ આ અને છેલ્લામાં છેલ્લા વરોદરા યુનિવર્સિટીના પ્રોફેસર કેશવલાલ કામદાર એ. પોતાનું સવિસ્તર પ્રમાણપત્ર આપ્યું છે તે શાસ્ત્રોદાર કમિટીના કામ સંમેલન તથા કેન્દ્રરન્સ હાર્દિક અભિનંદન આપે છે. અને તેમના કામને જ્યાં અને જે જે જરૂર પડે-પંડિતની અને નાણાંની-પોતાની પાસેના ફંડ અને બહાર જનતા પાસેથી મદદ મળે તેવી ઇચ્છા ધરાવે છે.

આ શાસ્ત્રો અને ટીકાઓને જ્યારે આટલી ઘડી પ્રશંસાપૂર્વક પસંદ મળી છે ત્યારે તે કામને મદદ કરવાની આ કેન્દ્રરન્સ પોતાની ફરજ માને અને જે કોઈ તુટી હોય તે પં. ર. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજની સાનિ જઈ, બતાવીને સુધારવા પ્રયત્ન કરવો. આ કામને ટદલે ચઢાવવા જેવું પણ કામ સત્તા ઉપરના અધિકારીઓના વાણી કે વર્તનથી ન થાય તે પ્રમુખ સાહેબને ભલામણ કરે છે.

(સ્થા. જૈન પત્ર તા. ૮-૫-)

*

સ્વતંત્ર વિચારક અને નિહર લેખક ‘જૈન સિદ્ધાંત’ના તંત્રી
શેઠ નગીનદાસ ગીરધરલાલનો અભિપ્રાય

શ્રી સ્થાનકવાળી શાસ્ત્રોદાર સમિતિ સ્થાપીને પૂ. ઘાસીલાલજી રાજને સૌરાષ્ટ્રમાં બોલાવી તેમની પાસે બત્રીસે સૂત્રો તૈયાર કરવાની હિલ ચાલતી હતી ત્યારે તે બિલચાલ કરનાર શાસ્ત્રજ શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ મારે પત્રવ્યવહાર ચાલેલો ત્યારે શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈએ તેમના શોક પાસે લખેલું કે—

“આપણા સૂત્રોના સૂત્ર પાઠ તપાસી શુદ્ધ કરી સંસ્કૃત તૈયાર કરી મોકલે તેવા સ્થાનકવાળી સંપ્રદાયમાં મુ. ઘાસીલાલજી ન. નિબાય અને કોઈ વિદ્યેય વિદ્વાન બોવામાં આવતા નથી હાંથી તપાસને મળે તે મુ. ઘાસીલાલજીને પસંદ કરેલા છે.”

શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ પોતે વિદ્વાન હતા શાસ્ત્રજ હતા તેમ વિ. પણ હતા. આપણે તેમજ સુનિર્ણય પણ તેમની પાસેથી પ્રેરણા લઈને, આનંદજી પણ હતા તેવા વિદ્વાન શેઠશ્રીની સંદેશ મારાફે જ લખવા

નવાઈ નથી. અને પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજીના બનાવેલાં સૂત્રો જોતાં સૌ કોઈને ખાત્રી થાય તેમ છે કે દામોદરદાસભાઈએ તેમજ સ્થાનકવાસી સમાજે જેવી આશા શ્રી ઘાસીલાલજી મ. પાસેથી રાખેલી તે બરાબર ફળીભૂત થયેલ છે.

શ્રી વર્ધમાન શ્રમણસંઘના આચાર્ય શ્રી આત્મારામજી મહારાજે શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના સૂત્રો માટે ખાસ પ્રશંસા કરી અનુમતિ આપેલ છે તે ઉપરથી જ શ્રી ઘાસીલાલજી મ. ના સૂત્રોની ઉપયોગિતાની ખાત્રી થશે.

આ સૂત્રો વિદ્યાર્થીને, અભ્યાસીને તેમજ સામાન્ય વાંચકને સર્વને એક સરખી રીતે ઉપયોગી થઈ પડે છે. વિદ્યાર્થીને તેમજ અભ્યાસીને 'મૂળ તથા સંસ્કૃત ટીકા વિશેષ કરીને ઉપયોગી થાય તેમ છે. ત્યારે સામાન્ય હિંદી વાંચકને હિંદી અનુવાદ અને ગુજરાતી વાંચકને ગુજરાતી અનુવાદથી આપું સૂત્ર સરળતાથી સમજાય જાય છે.

(કેટલાકનો એવો ભ્રમ છે કે સૂત્રો વાંચવાનું કામ આપણું કામ થઈ, સૂત્રો આપણને સમજાય નહિ. આ ભ્રમ તદ્દન ખોટો છે. ખીજા કોઈપણ શાસ્ત્રીય પુસ્તક કરતાં આ સૂત્રો સામાન્ય વાંચકને પણ ઘણી સરળતાથી સમજાઈ જાય છે. સામાન્ય માણસ પણ સમજી શકે તેટલા માટે જ ભગવાન મહાવીરે તે વખતના લોક ભાષામાં (અર્ધ માગધી ભાષામાં) સૂત્રો બનાવેલાં છે. એટલે સૂત્રો વાંચવા તેમજ સમજવામાં ઘણા સરળ છે.

માટે કોઈપણ વાંચકને એનો ભ્રમ હોય તો તે કાઢી નાંખવો અને ધર્મનું તેમજ ધર્મના સિદ્ધાંતોનું સાચું જ્ઞાન મેળવવા માટે સૂત્રો વાંચવાનું ચૂકવું નહિ. એટલું જ નહિ પણ જરૂરથી પહેલાં સૂત્રો જ વાંચવા.

સ્થાનકવાસીઓમાં આ શ્રી સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિએ જે કાર્ય કર્યું છે અને કરી રહી છે તેવું કોઈ પણ સંસ્થાએ આજ સુધી કર્યું નથી. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના છેલ્લા રિપોર્ટ પ્રમાણે ખીજાં છ સૂત્રો લખાયેલ પડ્યા છે, જે સૂત્રો-અનુયોગદ્વાર અને ઠાણાગ સૂત્રો-લખાય છે તે પણ થોડા વખતમાં તૈયાર થઈ જશે. તે પછી બાકીના સૂત્રો હાથ ધરવામાં આવશે.

તૈયાર સૂત્રો જલ્દી છપાઈ જાય એમ ઇચ્છીએ છીએ અને સ્થા. બંધુઓ સમિતિને ઉત્તેજન અને સહાયતા આપીને તેમના સૂત્રો ધરમા વસાવે એમ ઇચ્છીએ છીએ.

‘જૈન સિદ્ધાન્ત’ પત્ર - મે ૧૯૫૦

શ્રુત ભક્તિ

(પૂં આચાર્ય શ્રી ઇશ્વરલાલજી મંં સાં ની આજ્ઞા અનુસાર લખનાર)

દ. સં. ના જૈન મુનિ શ્રી દયાનંદજી મહારાજ

તાં ૨૩-૬-૫૬ શાહપુર, અમદાવાદ

આજે લગભગ ૨૦ વર્ષથી શ્રદ્ધેય પરમપૂજ્ય, જ્ઞાનદિવાકર પંં મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મંં ચરમ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીરના અનુત્તર, અનુપમ ન્યાય યુક્ત, પૂર્વાપર અવિરોધ, સ્વપર કલ્યાણકારક, ચરમ શીતળ વાણીના ઘોતક એવા શ્રી જિનાગમ પર પ્રકાશ પાડે છે, તેઓશ્રી પ્રાચીન, પૌર્વાત્ય સંસ્કૃતાદિ અનેક ભાષાના પ્રખર પંડિત છે અને જિનવાણીનો પ્રકાશ સંસ્કૃત, ગુજરાતી અને હિંદીમાં મૂળ શબ્દાર્થ, ટીકા, વિસ્તૃત વિવરણ સાથે પ્રકાશમાં લાવે છે એ જૈન સમાજ માટે અતિ ગૌરવ અને આનંદનો વિષય છે.

ભં મહાવીર અત્યારે આપણી પાસે વિદ્યમાન નથી, પરંતુ તેમની વાણી રૂપે અક્ષરદેહ ગણધર મહારાજોએ શ્રુત પરંપરાએ આચવી રાખ્યો શ્રુતપરં-પરાથી સચવાતું જ્ઞાન જ્યારે વિસ્મૃત થવાનો સમય ઉપસ્થિત થવા લાગ્યો ત્યારે શ્રી દેવદિગણિ ક્ષમાશ્રમણે વલ્લીપુર-વળામાં તે આગમોને પુસ્તકો રૂપે આરૂઢ કર્યો. આજે આ સિદ્ધાંતો આપણી પાસે છે. તે અર્ધ માગધી પાલી ભાષામાં છે. અત્યારે આ ભાષા ભગવાનની, દેવોની તથા જનગણની ધર્મભાષા છે. તેને આપણા શ્રમણો અને શ્રમણીઓ તથા મુમુક્ષુ શ્રાવક શ્રાવિકાઓ મુખપાઠ કરે છે; પરંતુ તેનો અર્થ અને ભાવ ઘણા થોડાઓ સમજે છે.

જિનાગમ એ આપણાં શ્રદ્ધેય પવિત્ર ધર્મસૂત્રો છે. એ આપણી આખો છે. તેનો અભ્યાસ કરવો એ આપણી સૌની-જૈન માત્રની ફરજ છે. તેને સત્ય સ્વરૂપે સમજાવવા માટે આપણા સહભાગ્યે જ્ઞાનદિવાકર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે સત્ સંકલ્પ કર્યો છે અને તે લિખિત સૂત્રોને પ્રગટાવી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિદ્વારા જ્ઞાન પરણ વહેતી કરી છે. આવા અનુપમ કાર્યમાં સકળ જૈનોનો સહકાર અવશ્ય હોવો ઘટે અને તેનો વધારેમાં વધારે પ્રચાર થાય તે માટે પ્રયત્નો કરવા ઘટે.

ભં મહાવીરને ગણધર ગૌતમ પૂછે છે કે હે ભગવાન, સૂત્રની આરાધના કરવાથી શું ફળ પ્રાપ્ત થાય છે? ભગવાન તેનો પ્રતિ ઉત્તર આપે છે કે શ્રુતની આરાધનાથી જીવોના અજ્ઞાનનો નાશ થાય છે. અને તેઓ સંસારના કલેશોથી નિવૃત્તિ મેળવે છે. અને સંસાર કલેશોથી નિવૃત્તિ અને અજ્ઞાનનો નાશ થતાં મોક્ષ ફળની પ્રાપ્તિ થાય છે.

આવા જ્ઞાન કાર્યમાં મૂર્તિપૂજક જૈનો, દિગંબરો અને અન્ય ધર્મીઓ હજારો અને લાખો રૂપીયા ખર્ચે છે. હિંદુ ધર્મનાં પવિત્ર મનાતા ગ્રંથ ગીતાના સેંકડો નહિ પણ હજારો ટીકા ગ્રંથો દુનિયાની લગભગ સર્વ ભાષાઓમાં પ્રગટ થયા છે. ઇસાઈ ધર્મના પ્રચારકો તેમના પવિત્ર ધર્મગ્રંથ બાઈબલના પ્રચારાર્થે તેનું જગતની સર્વ

લાપાઓમાં લાપાંતર કરી, તેને પડતર કરતાં પણ ઘણી ઓછી કિંમતે વેચી ધર્મ-સૂત્રોનો પ્રચાર કરે છે. મુસ્લિમ લોકો પણ તેમના પવિત્ર મનાતા ગ્રંથ કુરાનનું અનેક લાપાઓમાં લાપાંતર કરી સમાજમાં પ્રચાર કરે છે આપણે પૈસા પરનો મોહ ઉતારી ભગવાનના સિદ્ધાંતોનો પ્રચાર કરવા માટે તન, મન, ધન સમર્પણ કરવાં જોઈએ અને સૂત્ર પ્રકાશનના કાર્યને વધુ ને વધુ વેગ મળે તે માટે સક્રિય પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. આવા પવિત્ર કાર્યમાં સાપ્રદાયિક મતભેદો સૌએ ભૂલી જવા જોઈએ અને શુદ્ધ આશયથી થતા શુદ્ધ કાર્યને અપનાવી લેવું જોઈએ. સમિતિના નિયમાનુસાર રૂ. ૨૫૧૭ ભરી સમીતીના સભ્ય બનવું જોઈએ ધાર્મિક અનેક ખાતાંઓના મુકાબલે સૂત્ર પ્રકાશનનું - જ્ઞાન પ્રચારનું આ ખાતું સર્વશ્રેષ્ઠ ગણાવું જોઈએ.

આ કાર્યને વેગ આપવાની સાથે સાથે એ આગમો-ભગવાનની એ મહાવાણીનું પાન કરવા પણ આપણે હરહંમેશ તત્પર રહેવું જોઈએ જેથી પરમ શાંતિ અને જીવનસિદ્ધિ મેળવી શકાય. (સ્થા. જૈન તા ૫-૭-૫૬)

*

શ્રી. અ. ભા. જ્વે સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનાં પ્રમુખશ્રી વગેરે. રાણપુર પરમ પવિત્ર સૌરાષ્ટ્રની પુણ્ય ભૂમિ પર જ્યારથી શાંત-શાસ્ત્રવિશારદ અપ્રમાદિ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં પુનિત પગલાં થયા છે ત્યારથી ઘણા લાંબા કાળથી લાગુ પડેલ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનાં પડળ ઉતારવાનો શુભ પ્રયાસ થઈ રહ્યો છે અને જે પ્રવચનની પ્રભાવના તેઓશ્રી કરી રહ્યા છે તે અનંત ઉપકારક કાર્યમાં તમે જે અપૂર્વ સહાય આપી રહ્યા છો તે માટે તમો સર્વને ધન્ય છે અને એ શુભ પ્રવૃત્તિના શુભ પરિણામોનો જનતા લાભ લે છે, મને તો સમન્વય છે કે સાધુજી છઠે ગુણસ્થાનકે હોય છે. પણ પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તો બહુધા સાતમે અપ્રમત્ત ગુણસ્થાનકે જ રહે છે એવા અપ્રમત્ત માત્ર પાચ-સાત સાધુઓ જો સ્થાનકવાસી જૈનસમાજમાં હોય તો સમાજનું શ્રેય થતા જરાએ વાર ન લાગે સમાજ-કાશમાં સ્થા. જૈન સપ્રદાયનો દિવ્ય પ્રભાકર જળહળી નીકળે. ૫ જુ વો દિન ...

શ્રી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિને મારી એક નવ્ર સુચના છે કે-પૂજ્યશ્રીની વૃદ્ધાવસ્થા છે, અને કાર્યપ્રણાલિકા યુવાનોને શરમાવે તેવી છે. તેમને ગામોગામ વિહાર કરવા અને શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરવું તેમાં ઘણી શારીરિક-માનસિક અને વ્યવહારિક મુશ્કેલી વેઠવી પડે છે, તો કોઈ યોગ્ય સ્થળ કે જ્યાના શ્રાવકો ભક્તિ વાળા હોય વાડાનાં રાગના વિષથી અલિપ્ત હોય એવા કોઈ સ્થળે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય પૂર્ણ થાય ત્યાં સુધી સ્થિરતા કરી શકે એના માટે પ્રબંધ કરવો જોઈએ. બીજા કોઈ એવા સ્થળની અનુકુળતા ન મળે તો છેવટ અમદાવાદમાં યોગ્ય સ્થળે રહેવાની સગવડતા કરી અપાય તો વધુ સારું. મહારી આ સુચના પર ધ્યાન આપવા ફરી યાદ આપુ છું ફરીવાર પૂજ્ય આચાર્યશ્રીને અને તેમના સત્કાર્યના સહાયકોને મારા અભિનંદન પાઠવું છું તે સ્વીકારશો. લી. સદાનંદી જૈનસુનિ છોટાલાલજી

રૂા. ૧૦,૦૦૦) આપનાર આદ્ય સુરજીશ્રી,
સમિતિના પ્રમુખ; દાનવીર શેઠશ્રી,



શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસલાઈ
અમદાવાદ

સમિતિના પ્રમુખ અને આદ્ય મુરબીશ્રી શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસનો ટુંક પરિચય

✽

શ્રી શાંતિલાલ મંગળદાસનો જન્મ ઈ. સ. ૧૯૦૧ નાં ઓગસ્ટની ત્રીજી તારીખે તેમનાં મોસાળ ચૌરવડોદરામાં થયો હતો.

વિદ્યાર્થી અવસ્થામાંજ એમનામાં રહેલી તીવ્ર બુદ્ધિ જુદી તરી આવતી હતી. ઈ. સ. ૧૯૧૯ માં અમદાવાદ કેન્દ્રમાંથી મેટ્રીક પાસ થનાર પ્રથમ દસ વિદ્યાર્થીઓમાંના તેઓ એક હતાં. ત્યારબાદ ઈ. સ. ૧૯૨૩માં અર્થશાસ્ત્રનો વિષય લઈ તેઓ B. A. થયા. એ જમાનામાં બહુ થોડાં ધનિક કુટુંબો ઉચ્ચ અભ્યાસમાં રસ લેતા હતા.

ગ્રેજ્યુએટ થયા બાદ તુરંતજ એમના ઉપર ધંધાની જવાબદારી આવી પડી. યુવાન વય, તિવ્ર બુદ્ધિ, વિશાળ વાંચન અને મનને તેમને નવીજ દ્રષ્ટિ આપી હતી અને તેમની સમક્ષ આવતા ઉદ્યોગના અનેક વિકટ સવાલોને તેમણે બહુ કુશળતાથી ઉકેલવા માંડ્યા. ૧૯૪૫ માં એ અમદાવાદ મિલ માલિક મંડળના પ્રમુખ બન્યા. હિંદની તેમજ બાસ કરીને ગુજરાત-સૌરાષ્ટ્રનાં વેપારનાં પ્રાણ પ્રશ્નોનાં તળપદા અભ્યાસે મિલમાલિક મંડળના પ્રમુખ તરીકેની કામગીરીને વધુ દીપાવી.

૧૯૪૮ થી હિંદી વેપારી મહામંડળના તેઓ સભ્ય છે અને ૧૯૫૪-૫૫ અને ૧૯૫૫-૫૬નાં વર્ષ માટેના દેશના આ સૌથી મોટા વેપારી મહામંડળના તેઓ અનુક્રમે ઉપપ્રમુખ અને પ્રમુખ હતા અને તે ગુજરાત-સૌરાષ્ટ્રને ખૂબજ ઉપયોગી નિવડેલી તેમની અસાધારણ શક્તિઓને દેશવ્યાપી ક્ષેત્ર મળ્યું છે.

૧૯૩૮-૩૯માં ઇન્ટરનેશનલ લેબર ઓર્ગેનિઝેશન (I. L. O.)માં ભાગ લેવા ગયેલ ભારતીય પ્રતિનિધિ મંડળના તેઓ સરકાર તરફથી નિયુક્ત થયેલ સલાહકાર હતા. ૧૯૪૬ માં અને ૧૯૪૮માં બુરોલ્સ અને જીનીવા મુકામે ભરાયેલ I. L. O. માં તેઓએ માલિકોના પ્રતિનિધિ તરીકે અગત્યનો ભાગ લીધો હતો.

સામાન્ય નિયમ છે કે શ્રી અને સરસ્વતીને બહુ સંબંધ હોતો નથી. શ્રી શાંતિલાલ અને તેમનું કુટુંબ આમાં અપવાદરૂપ છે. ધનપતિ હોવા છતાં એ સાહિત્ય અને સંસ્કારિતાના પૂજક છે. એમની વિનમ્રતા અને સાદાઈ હંમેશાં

એ જાળવી રહ્યા છે અનેક શિક્ષણ સંસ્થાઓ માટે આજે પણ એ પોતાની અનેકવિધ પ્રવૃત્તિઓમાંથી સમય બચાવી લે છે, એજ તેમનાં વિદ્યાપ્રેમનો સચોટ પુરાવો છે. ઉદ્યોગ તો તેમને વારસામાં જ મળ્યો છે અને એ વારસાને તેમણે શોભાવ્યો છે.

એમની દૃષ્ટિ આજનાં પ્રશ્નોને વૈજ્ઞાનિક રીતે છણવાની તો છે જ પણ આવતી કાલને પણ તેઓ એ જ વૈજ્ઞાનિક અને વ્યવહારિક દૃષ્ટિથી નિહાળતાં હોય છે અને એટલે જ તો એમના સંચાલન તળે ચાલતી ચાર મિલો કાપડ ઉદ્યોગમાં સુદર પ્રતિષ્ઠા જમાવી શકેલ છે. આ ઉપરાંત જુદી જુદી વ્યાપારી પ્રવૃત્તિઓ કરતી ઘણી કંપનીઓમાં તેઓ ડીરેક્ટર તરીકે રહી યોગ્ય માગ-દર્શન અને દોરવણી આપી રહ્યા છે. સૌરાષ્ટ્ર ક્ષાંતેન્સીયલ કોર્પોરેશનનાં તેઓ ડીરેક્ટર છે સૌરાષ્ટ્ર મિલ માલિક મંડળમાં તો તેઓ તેમની સ્થાપના થઈ ત્યારથી ઉઠા રસ દાખવે છે. હજુ હમણાં સુધી સતત પાંચ પાંચ વર્ષ સુધી તેનાં પ્રમુખપદે રહી તેમણે સૌરાષ્ટ્રના આ ઉદ્યોગની કચેલી સેવાઓ ખરેખર અભિનંદનને યોગ્ય છે. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનાં તેઓ પ્રમુખ છે અને તેની પ્રવૃત્તિમાં ઘણા ઉત્સાહથી હંમેશાં મદદ કરી રહ્યા છે આ ઉપરાંત અનેક જૈન ને જૈનેતર સામાજિક સંસ્થાઓને તેઓ સેવાઓ આપી રહ્યા છે.



આદ્ય મુરબીશ્રી ભાણુવડનિવાસી શેઠ હરખચંદ કાલીદાસ વારીયાનું જીવનચરિત્ર

આ સંસ્થાને રૂ. ૬૦૦૦) છ હજાર જેવી રકમનું વાતવાતમાં દાન આપનાર સ્વ૦ શ્રીમાન્ હરખચંદ કાલીદાસ વારીયા ભાણુવડનિવાસીનું ટુંક જીવનચરિત્ર અત્રે આપવા પ્રયાસ કરીએ છીએ. સૂત્રમાં તેઓશ્રીનો ફેટો આપવા માટે તેઓશ્રીની હયાતીમાં વાત થયેલ, પરંતુ તેઓ આ જાતની જાહેરાતથી વિરુદ્ધ હતા. તેમના અવસાન બાદ તેમના સુપુત્રો આગળ પણ ફેટાની માગણી કરી પરંતુ તેઓએ પણ તેમના પૂ૦ પિતાજીના પગલે ચાલી ફેટો આપવામાં નારાજ બતાવી. એટલે તેઓશ્રીનું ટુંક જીવન આપીએ છીએ. આશા છે કે આવા ઉદાર અને વિચારશીલ મહાનુભાવના જીવનમાંથી વાચકોને ઘણું મળી રહેશે.

જન્મસ્થાન—ઘડેચી (ચોખામંડળ) તા. ૨૫-૧૧-૧૮૮૫

પિતાનું નામ—વારીયા કાલીદાસ મેઘજીભાઈ

માતાનું નામ—કેસરબાઈ

અભ્યાસ—ભાણુવડ અને પોરબંદરમાં રહી ફક્ત ગુજરાતી જરૂરત પૂરતું ભણ્યા

પરદેશગમન—માત્ર બાર વર્ષની વયે તેમના કાકા નથુભાઈ મેઘજીને ત્યાં જેલા ખાતે અનુભવ મેળવવા રહ્યા દરમ્યાન જેલા (ખ્રી. સોમાલીલેન્ડ) જીબુટી (ફ્રેન્ચ સોમાલીલેન્ડ) એડન અને ઇથીઓપીઆ તરફ પણ અનુભવ મેળવ્યો.

પ્રથમ ભાગીદારી—ખુલહારમાં શ્રી. કાલીદાસ વેલજીના ભાગમાં ભળ્યા પરંતુ સંવત ૧૯૬૭માં તે હુકાન વીટી લીધી અને લગ્ન માટે સ્વદેશ આવ્યા.

લગ્ન—સંવત ૧૯૬૭ માં તેમનાં લગ્ન બાબુના ગામ ગુંદા સુકામે ખૂબ જ પ્રતિષ્ઠિત કુટુંબ મહેતા સુંદરજી પ્રેમજીના જ્યેષ્ઠ પુત્ર ભોવાન સુંદરજીનાં સુપુત્રી મણીબેન સાથે થયાં.

પરિવાર—અત્યારે તેમના પાંચે પુત્રો શ્રી લાલચંદભાઈ, જયચંદ્રભાઈ, નગિન-દાસભાઈ, વૃજલાલભાઈ અને વલ્લભદાસભાઈ એ પાંચે ભાઈઓ તેઓશ્રીનો બહોળો વ્યવહાર અને વ્યાપાર ધરાબર સુયોગ્ય રીતે સંભાળી રહ્યા છે.

ભાગીદારી—લગ્ન પછી સં. ૧૯૬૮ માં પાછા પરદેશગમન થયું. શરૂમાં વસનજી નથુભાઈ કુ. ના નામથી પેઢી ચાલતી હતી તેમાં તેઓ ભાગમાં ભજ્યા. તેમાં શ્રી વારીયા નથુભાઈ મેઘજી, શ્રી વારીયા નથુભાઈ મુળજી, શ્રી વારીયા હરખચંદ કાલીદાસ, ફ્રાંકરીયા દેવજી જીવાભાઈ તથા શા. વસનજી હીરજીભાઈ એમ પાંચ ભાગીદાર હતા તે પેઢી સવત ૧૯૭૨ માં જુદી થઈ અને શ્રી વસનજી હીરજી કે જે સ્વખર્ચે આગળ વધ્યા હતા તેમણે પોતાની પેઢી શા વસનજી હીરજીના નામથી જુદી કરી અને શા. નથુભાઈ મુળજીના નામથી પેઢી ખોલવામાં વારીયા નથુભાઈ મુળજી જેટલો જ હિસ્સો હરખચંદભાઈનો હતો.

ઉપરની પેઢી—ઉપરોક્ત નામથી એટલે કે શા. નથુભાઈ મુળજીના નામથી જે પેઢી શરૂ થઈ તેના પ્રાણસમા શ્રીયુત હરખચંદભાઈ તેમના જીવનના અંત સુધી રહ્યા હતા. અત્યારે પણ તે નામને શ્રી નથુભાઈ મુળજી તેમજ શ્રી હરખચંદ કાલીદાસના વારસો ઝળહળાવી રહ્યા છે. દૂર દૂરના દેશાવરોમાં એકઠાઈ લગભગ ૪૫ વર્ષ થયાં કામકાજ ચાલે છે તેના સચાલનની દોર શ્રી હરખચંદભાઈના હાથમાં અત સુધી રહી હતી અને તેઓશ્રીના અવસાન પછી પણ તેમના દોરેલા ચીલા ઉપર પેઢીનો વ્યવહાર સરળ રીતે અત્યારે પણ ચાલે છે અત્યારના સુકાનીઓએ પોતાના પૂર્વજ શ્રી નથુભાઈ તથા શ્રી હરખચંદભાઈના અકિત કરેલ માર્ગે પોતાની સફર ચાલુ રાખી છે અને તે સદાયે અવિચળ રહે તેવું આશિર્વાચન કોઈ પણ હિન્દી ઉચાર્યા વિના રહી શકે નહીં તેવી તેની ઉત્તમ છાપ ત્યાં પડી છે અને તે નર્યું સત્ય જ છે.

હિન્દની શાન—વર્ષો થયાં એકઠાઈ ‘ ખીઝનેસ ’ ચાલતું હોવા છતાં એક શાહ સોદાગરની જેમ નથુભાઈ મુળજીની પેઢી ઉત્તરોત્તર કુલતી ફાલતી રહી છે વ્યાપારી આંટ અને ઈજ્જતનો એ નાદર નમુનો આજે પણ એ જ ધીર ગભીરપણે પોતાનું કાર્ય ધપાવ્યે જાય છે. એકધારી લગભગ અડધી સદી થયાં ચાલતી આ પેઢીને રજ માત્ર ડાઘ લાગ્યો નથી તે તો સૌ કોઈ જાણે છે અને શાહ નથુભાઈ મુળજીની પુરાણી પેઢી માટે આજે પ્રત્યેક હિન્દી અભિમાન લઈ શકે છે. તેમા શ્રી નથુભાઈ વારીયાનું ધર્મપ્રધાનપણુ અને શ્રી. હરખચંદભાઈનું દુરદેશીપણુ, કાર્યપ્રણાલીની ઉત્તમતા અને એક-નિષ્ઠા મુખ્ય ગણાય.

વાંચન અને મનન—ઉપરની વાતો તો તેમના વ્યાપારી જીવનની સફળતા અને એક નાનામાં નાની વ્યક્તિ આગળ કઈ રીતે વધી શકે છે તેનો આછો ખ્યાલ આપવા પૂરતી થઈ, ત્યારે તેની બીજી એક ખાસ બાજુ છે અતિ સામાન્ય અભ્યાસ પરંતુ સ્વાનુભવે મેળવેલ જ્ઞાનસિદ્ધિ. જે કાળમાં આણુખેડાયેલા દેશોમાં આવવા જવાનાં સાધનો પણ ન હતાં, એક સુધીની મુસાફરી પછી જેલા બરબરા જવામાં નાના વહાણોથી સફર થતી, જીજીટીથી ઇથોપિયા જવામાં દીરદવા પછી (બગલ) ખચ્ચરો ઉપર અને પગપાળા મુસાફરી થતી. દેશો બધા ખુબ જ જંગલી અવસ્થામાં હતા તેવા યુગમાં હિન્મત હાર્યા વિના આંગળીને વેઢે ગણાય તેટલા હિન્દીઓ વ્યાપારમાં આગળ વધ્યા હતા તે યુગમાં શ્રી હરખચંદલાઈ હતા. ખુબ જ અંધકારમાંથી પ્રકાશ મેળવવાનો હતો. અત્યારે ઇથોપિયાના પાટનગર આડીસ અબાબા જવા માટે Air રસ્તે ૧૦ થી ૧૨ કલાકમાં પહોંચાય છે ત્યારે તે જમાનામાં આગળોટ, વહાણ બડબડપાંચમ જેવી રેલ્વે અને તે પછી ખચ્ચરો ઉપર અને થોડુંક પગપાળા અગર તો ગધેડા ઉપર પણ સફર કરવી પડતી. જુનો જમાનો હતો એટલે હિન્દુ તરિકેનો ધર્મ જાળવવામાં પણ લોકો ચુસ્ત હતા, કોઈનું અડેલું ખવાય નહીં રસોઈ તૈયાર હોય પણ એક સોમાલી કે આરબ અગર ઇથોપિયનનો હાથ અડકી જાય એટલે ખાવાનું તેને આપી દઈ કડાકા કરવા પડે અગર તો પલાળેલા ચણા કે મકાઈ ખાઈને ગુજરો કરવો પડે તેવા જમાનામાં શ્રી હરખચંદલાઈએ ખુબ જ ધંધાક્રિય સફળતા મેળવી હતી તે સામાન્ય વાત તો નથી જ, અને પોતે ખુબ જ ઓછું ભણ્યા હોવા છતાં ભણતર કરતાં ગણતર તેઓમાં ઘણું હતું. સાહિત્ય અને તે પણ ધાર્મિક અને ગુજરાતી શિષ્ટ સાહિત્યનું વાંચન મનન એટલું બધું તેઓએ કરેલું કે પોતાનો અભ્યાસ બહુ જ ઓછો છે એમ તેઓ ખુલાસો કરે ત્યારે જ ખમર પડે, અજાણ્યા માણસને તો તેમનું અગ્રેજી જ્ઞાન પણ સાઈ હશે તેમ લાગતું. વ્યાપારી તાર લખવા ઓછા શબ્દોમાં ઘણું સમજાવી દેવું ઉપરાંત અંગ્રેજી પત્ર વ્યવહારના બહારથી આવતા પત્રો આંટીધુટી સહિત હોય તો પણ યથેચ્છ રીતે સમજી લેવામાં તેઓ એટલા બધા પારંગત થઈ ગયેલા કે જોનારને તેમની શક્તિ ઉપર માન થઈ જતું. અને તેઓ નિખાલસ ભાવથી જ્યારે કહેતા કે હું તો માત્ર ગુજરાતી ચાર પાંચ ચોપડી ભણ્યો છું એમ વાત થતી ત્યારે તે માન અનેકગણું વધી જતું.

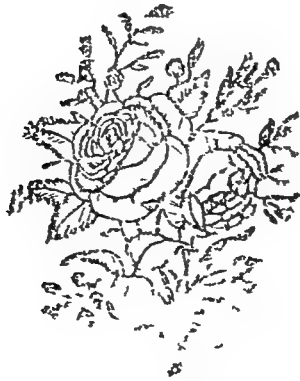
અભ્યાસી—ધાર્મિક ઉડામાં ઉંડું જ્ઞાન તેમણે વાંચનથી મેળવેલું. દેશ પરદેશની વાતો થતી હોય ત્યારે તેમના આગળ પ્રખર અભ્યાસીઓ પણ ઝાંખા પડતા, વર્તમાન પત્રોનો શોખ તેમનો અજોડ હતો. દેશ પરદેશના નાણાકિય વહેવારો અને હુંડિયામણની વાતો સાંભળીએ ત્યારે તેમના જ્ઞાનના અગાધપણની સાંભળનારને અતિ ઉત્તમ છાપ પડતી.

ધાર્મિક—ધાર્મિક અભ્યાસ તેમનો એટલો બધો બહોળો હતો કે તેમના આગળથી રોજ અવનવું બાણવા મળતું દરેક ધર્મનો અભ્યાસ તેમણે જીજ્ઞાસાવૃત્તિથી કર્યો હતો. ધર્મે તેઓ ચુસ્ત સ્થાનકવાસી શ્રવેતાંબરી જૈન હતા છતાં ધર્માધતાનો તેમનામાં અશ પણ ન હતો. માફ એટલું સાફ એમ નહીં પણ સાફ એટલું માફ એમ માનતા તેથી કદાચહી-પણુ તેમનામા જનમ્યુ જ ન હતું જૈન ધર્મના દરેક શ્રીરકા ઉપર તેમને માન હતું. શ્રવેતાંબર મહિરમાર્ગિ ભાઈઓના વરઘોડાઓમાં તેઓ આનદ અને ઉત્સાહથી જતાં, પ્રસંગ આવે ભાઈચારો નભાવવા વ્યવહારપણુનો ઉપયોગ કરી દેરાસરમા ઘી બોલવાનો પ્રસંગ આવે ત્યારે પણ તેઓ ઉત્સાહથી બોલતા. વરઘોડામા પોતાના ઘરની પુત્રવધુઓને કળશ લેવડાવતા તેમને અનેરો આનદ મળતો, જૈન ધર્મના દરેક શ્રીરકાઓની એકતાના તેઓ પ્રખર ચાહક હતા છેલ્લે છેલ્લે સૌરાષ્ટ્રમાં જૈન શ્રવેતાંબર તેરાપથી સાધુઓ આવતા અને એમને સૌરાષ્ટ્રના જૈનો અને જૈન સાધુઓ તેરાપથી સાધુને સ્થાન અને આહારપાણી ન આપવાં તેવો પ્રયાસ જોર શોરથી કરતા તે બાબતને પોતે ગાડપણુ માનતા અને પોતાના ઘર તેરાપથી સાધુઓને માનથી ગોચરી આપતા સમાજથી જરા પણ ડરતા નહીં. ‘વિચારલેદ તો દરેક જગ્યાએ બુદ્ધિવાદી લોકોમા હોય મુખર્પાને વિચારલેદ શાનો ?’ આમ તેઓ કહેતા પરંતુ એવા વિચારલેદોને લઈને સાધુનું અને તે પણ પરદેશી સાધુઓનું અપમાન કરવું તેમા માનવતા કયાં રહી ? જૈનત્વ કયાં રહ્યું ? તેમ તેઓએ જામનગરમા એક વખત કહેલું તે મને બરાબર યાદ છે.

પ્રેમાળ—અસત્ય અગર તો જુઠું દગો આચરનાર તરફ તેમને ઘણો જ રોષ હતો એટલે ઉચ્ચતાથી આવા લોકોની બખર લઈ નાખતા છતાં તેનું દિલ હલાવ્યું તે ઠીક ન કર્યું તેમ માની તે જ વ્યક્તિ સાથે પ્રેમ અને મમત્વથી વાતો કરતા બીજાનું સાફ જોઈ તેઓ ખરેખર રાચતા તેમની આંખમા પ્રેમનું અમૃત ભારે.

ભાર ભર્યું હતું. પોતાને ત્યાં નોકરી કરી ગએલ મુનિમ કે કોઈ પણ વ્યક્તિ કમાણી કરીને ખુબ જ આગળ આવે, સારા અને સંસ્કારી થાય વ્યવહારમાં સવાયા થાય તેને ત્યાં લગ્ન પ્રસંગ હોય અગર તો સારામાં સારાં મકાનો તેણે કર્યાં હોય તેવા પ્રસંગે જવાનું થાય ત્યારે તેમના આનંદનો અવધી થઈ જતો. તે વખતે તેઓની આંખોનું અમૃત જેમણે નજરોનજર જોયું હશે તે તેમને જીવનભર નહીં ભૂલે. આવી એક મહાન્ વિભૂતિના જીવનનો ટુંક સાર જ આપી શકાય. સાંગોપાંગ જીવન તો ક્યાંથી લખાય ?

કાળ—જનમ્યું તે જવાનું જ તે કુદરતનો ક્રમ છે તેને આધીન તો સારા નરસા દરેકને થવું જ પડે. સંવત ૨૦૦૭માં તેઓશ્રી ૬૮ વર્ષનું આયુષ્ય ભોગવી ક્ષણભંગુર દેહને છોડી ગયેલા. પરંતુ તેમની સુવાસ સદાય પ્રસરતી જ રહેવાની. ભાણવડ જેવડા નાનકડા ગામમાં અને આસપાસના ગામોમાં જ્યાં જ્યાં તેઓ ગએલા અગર તો તેમનું કાર્યક્ષેત્ર હતું ત્યાં ત્યાં તેમના અવસાનથી સન્નાટો છાઈ ગયેલો. એમનું મૃત્યુ વીશ વર્ષના કંધોતરનો શોક હોય તેવો શોક સર્વત્ર આપતું ગયેલું. નામ ઠામના લોભ વિના કરેલાં તેમનાં ગુપ્ત દાનો એટલાં બધાં હતાં કે તેમના જવાથી નાના મોટા દરેકને એકસરખી ખોટ લાગતી હતી. છતાં તેઓ જીવતર જીવી ગયા. આવું ધન્ય જીવન અને ધન્ય મૃત્યુ જોઈને આર્તધ્યાન રૌદ્રધ્યાન ધરવું તે કરતાં તેમના જેવા થવાના પ્રયત્નો કરવા. અને તેમના અમર આત્માની શાન્તિ માટે પ્રાર્થના કર્યા સિવાય બીજો માર્ગ જ ક્યાં છે ? ૐ શાન્તિ ! શાન્તિ !! શાન્તિ !!!



આધ મુરખીશ્રી કોઠારી હરગોવીંદલાઈ જે ચંદનો કુંકે પરિચય

*

પુ૦ શ્રી ૧૦૦૮ ઘાસીલાલજી મહારાજ રાજકોટ પધારતા પ્રાત સ્મરણીય સ્તવનાવલી રાજકોટના રહીશ શુદ્ધ શ્રાવક વૃત્તધારી જેચદ અજરામર કોઠારીના સુપુત્ર હરગોવિંદ કાકા તરફથી ૨૦૦૩ માં છપાવવામા આવી અને તે હિંદભરમા બહાર મૂકી તેનો ઉપયોગ હાલ સર્વ જૈન જૈનેતર કરી રહેલ છે. કાકા રાજકોટમા જ નહિ પણ સૌરાષ્ટ્ર, કચ્છ, ગુજરાત, મુંબઈ, દિલ્હી સુધી એક અબેડ ઉત્સાહી પુરૂષ છે. એમનો પ્રભુ અને રાજ ઉપર ઘણો જ સારો પ્રભાવ છે વેસ્ટર્ન ઈન્ડીયા સ્ટેટ એજન્સી અને ગુજરાત સ્ટેટસ મહીકાંઠા, સાબરકાંઠા બનાસકાંઠામા રેસીડેન્સીમા પણ કાકા પ્રત્યે ઘણો જ સારો ભાવ છે. તેઓને ધર્મ પ્રત્યે ઘણી જ સારી ધગશ હોઈ અંગત ખર્ચે પોતાના ઘર આંગણે ધર્મ ધ્યાન માટે પોષધશાળા બધાવી છે તેમજ આજી નદીને કિનારે વિશાળ વ્યાખ્યાન ભુવન હોલ બે માળનો પાંચ હજાર માણસો વ્યાખ્યાન સાલળી શકે તેવો બધાવેલ છે. ઉદાર દિલના સખી માણસ છે. કોઈ પણ ગરીબ ગુન્ડાહીત માણસ દાદ માગવા આવે તો તરત જ બનતા ઉપાયે તેમને મદદ આપવા ચોવીસ કલાક તૈયાર રહે છે કાકાનું કુટુંબ પણ ઘણું જ ધર્મીષ્ઠ છે તેમનાં ધર્મપત્નિ શ્રીમતી અબડ સૌભાગ્યવતી રૂક્મણીબેન વહેવારદક્ષ પ્રેમાળુ અને પૂર્ણ ધર્માત્મા છે સાધુ, સાધ્વી પ્રત્યે તથા દરેક કુટુંબ સજ્જન સ્નેહી અને સ્વધર્મીઓ મહેમાનો સાથે ઘણો જ સારો ઉચિત વહેવાર રાખવામા પૂર્ણ નિષ્પન્ન છે. નિત્ય પોતાની ધર્મ પરાયણતા પ્રત્યે જ વફાદાર રહે છે.

પૂ૦ ઘાસીલાલજી મહારાજ આદી થાણા છ (સમીરમુનિ, કનૈયાલાલ મુનિ દેવમુનિ, તપસ્વી માગીલાલ, મદનલાલજી) મેવાડથી દામનગરના રહીસ દામોદરભાઈના આગ્રહથી પાલનપુર નહીં રોકાતાં તેમણે વિહાર શરૂ કર્યો, અને મોરબી મુકામે તપસ્વી મદનલાલજી અને માંગીલાલજીની ૭૧ ઉપવાસની તપશ્ચર્યા આતુ-માસમા થયેલી જે પ્રસંગે રાજકોટથી હરગોવિંદકાકા કુટુંબ સહિત ગોકળ અષ્ટમીને દીવસે દર્શનાર્થે આવ્યા અને રાજકોટ પધારવાની વિનંતી કરી. અને નવેમ્બર ૧૯૪૬ માં ઘાસીલાલજી મહારાજ રાજકોટ પધાર્યા કાકાના વ્યાખ્યાન ભુવનમાં ખીરાળ્યા બંને તપસ્વીજીએ માસખમણની તપશ્ચર્યા કરી સ્થાનિક રાજકોટ સકલ સંગે ઘણું જ લક્ષિભાવ બતાવ્યો અને રતાગઢ ખેડાના રહીશ જવારલાલજી ઉર્દે ચાદમલજી લડારીની ૨૦૦૨ તા. ૨૭-૧-૪૭ના રોજ દીક્ષા વસતપંચમીને

૩૧. પરપણુ આપનાર આઘ સુરખીશ્રી,



કોઠા રી હરગો વિંદન કરે અંદ
ગરબે

દીવસે હોવાથી સંઘમાં વધારે ઉત્સાહ આનંદ આવ્યો. મહાસુદિ એકમથી પાંચમ સુધી ૬ વરઘોડાઓ જુદે જુદે ઠેકાણેથી ચડ્યા. મહા સુદી ૪ ના દિવસે કાકાને ઘેરથી દીક્ષા ઉત્સવનો વરઘોડો રાજકોટ ઠાકોર સાહેબ પ્રધુમનસિંહજી અને કુ. શ્રી બનેસિંહજીની સંપૂર્ણ મદદથી રાજેશ્રીના ઠાઠને પણ વટાવી જાય તે રીતે સરકારી અને સ્ટેટ બેન્ક પોલીસ ઘોડેસ્વાર ગાડીઘોડા મોટરો તથા હજારો જૈન જૈનેતર માનવમેદની સાથે આખા શહેર સદરના રસ્તા પર ફર્યો હતો. પાંચમના દિવસે તપગચ્છના ચાંદીના રથમાં દીક્ષાર્થીને બેસાડી ૪ ચાર બેલ જોડેલ રથને કાકા પોતે સારથી બની હાંકતા હતા. બંને દીવસે સોના રૂપાનાં કુલ તથા પૈસા દિક્ષીત ઉડાવી રહેલ હતા. ઠેકાણે ઠેકાણે પોલીસો ગોઠવવામાં આવી હતી. આ સરઘસ શહેર સદરમાં ફરી જુળીલી બાગમાં આવ્યું અને દસ હજાર માણુ-સોની હાજરીમાં પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજીની જેનેશ્રાય નીચે દીક્ષાઆપવામાં આવી તે પ્રસંગે શાંતિ જળવાયેલી. આ પ્રસંગે બંને દીવસોએ ફેાટાઓ તથા જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિની કમિટિના ફેાટાઓ લેવામાં આવ્યા. અને ૩૦-૧-૪૭ના દીવસે શાસ્ત્રોદ્ધારની મિટીંગ મળી જેમાં કાકા તરફથી સૂત્રને માટે રૂપીઆ પાંચ હજારની લેટ મળી તે ઉપરાંત પ્રસંગોપાત સૂત્ર માટે જુદી લેટ રોકડી રકમની આપવામાં આવી છે તેમજ જીવહયાના પ્રખર હિમાયતી પૂ. ૧૦૦૮ જેઠમલજી મ. ની નેશ્રાય નીચે તન મન ધનથી જીવહયાનું કાર્ય કરે છે અને જીવહયાનું પત્ર પોતાને ખર્ચે છપાવી પ્રસિદ્ધ કરી હિંદલરમાં તેમજ યુરોપ અમેરીકા આફ્રીકામાં મોકલે છે હાલ પોતે સેવાભાવી કાર્યની પ્રવૃત્તિ કાયમ કર્યા કરે છે.

રાજકોટની ફ્લોર મીલોના ઓનરરી પ્રમુખ : જૈન બોર્ડીંગના ઓનરરી કાર્યકર્તા તથા જીવહયા મંડળના મંત્રી અને S. P. C. A. ના મંત્રી, રાજકોટ શહેરી મંડળના સેક્રેટરી તરીકે ઓનરરી સેવા કરી દરેકને પોતાની સેવાનો સાથ આપવામાં તન મન ધનથી કોઈની પણ સેવા કરવામાં કાયમ તત્પર રહે છે.

આથ મુરખખીશ્રી મહુમ ધારશીલાઈ જીવનલાઈનો કુંકે પરિચય

મરહુમ ધારશીલાઈ જીવનલાઈ શાહ, જેનો ચોઈલ જીનપ્રેસ સાથે આ સૈકાની શરૂઆતથી સંબંધ, પુના સાતે ડીવીઝનના જુદા જુદા સ્થળોના જુનામાં જુના અને અગ્રગણ્ય એજન્ટ તરીકે જાણીતા છે તેનો જન્મ કાઠીયાવાડમાં પીપળીયા ગામમાં થયેલ, માત્ર પ્રાથમિક કેળવણી લઈ, ૧૧ વર્ષની નાની ઉંમરે આગળ વધવાની ધગશ સાથે, માત્ર ખીસ્સામાં ૨ રૂ. જેટલી નજીવી રકમ સાથે વતન છોડ્યું મુંબઈ આવી મનજી નથુલાઈની પેઢીમાં ઓપ્રીસ બોય તરીકે નોકરી લીધી, ત્યાં ઉત્તરોત્તર દરેક કામમાં ખંત રાખી સતોષ આપતાં તેમને પુના મોકલવામાં આવ્યા. પુનાથી કરમાલા આવી ખલા ઉપર તેલ ઉપાડી ફેરી પણ કરી અને ત્યાંના સખ એજન્ટોને એકદમ પ્રમાણીકપણે સખત કામ બતાવી, કરમાલા ગામમાં તેલની સબડીલર-શીપ પ્રાપ્ત કરી ધીરે ધીરે તે જ પ્રમાણે મહેનત ચાલુ રાખતાં ૧૯૩૧માં જ્યારે ખર્માશેલ અને એસ. વી. એ. સી. વચ્ચે ભાવની હરીફાઈ ઉપડી ત્યારે પોતાની સતત સેવા બતાવી ખર્માશેલ પાસેથી ઘડીયાલ બક્ષીસ મેળવી અને તે લાઈનના તમામ કાર્યવાહકોની ચાહના પ્રાપ્ત કરી.

ધીરે ધીરે પોતાની ખંતથી તેવી જ એજન્સીઓ લીપ્ટન કું, સીમેન્ટ કું., આઈ. સી. આઈ વીગેરેની પણ મેળવી પોતાના વ્યાપારની સારી જમાવટ કરી.

સોલાપુર ડીસ્ટ્રીક્ટમાં સારા આબરૂદાર શહેરી તરિકે વગ તેમજ ચાહના મેળવી અને લોકસેવા પણ સાથેસાથ ચાલુ રાખી કરમાલા મ્યુન્ના પ્રેસીડન્ટ થયા સોલાપુર ડીસ્ટ્રીક્ટમાં દેશહિતના અનેક કામોમા તન, મન, ધનથી સારી સેવા બજાવી.

તેનું ખાનગી જીવન પણ બહુ સાદુ હોવાથી બધા તેને ચાહતા અને ધંધામાં સારો લાભ મળ્યો અને તે જ પ્રમાણે સેવાના તથા ધર્માદાના અનેક કાર્યોમાં સારી રકમો વાપરી.

પોતાના કુટુંબના વડા તરીકે પણ કુટુંબીજનો, સગાં, સંબંધીઓને દરેક રીતે માર્ગદર્શન આપી જુદા જુદા ધંધા તેમજ એજન્સીઓ વિગેરે મેળવી સ્થિરતા પ્રાપ્ત કરવામા ઘણો પરિશ્રમ લીધો.

ચાત્રિક ખેતીની પ્રગતીના કાર્યસર વિલાયત જઈ આવ્યા, અમેરીકા જવા પણ ધારણા હતી ત્યાં લંડનમાં ૧૪-૭-૪૯ના રોજ હૃદયબંધ પડી જતાં સ્વર્ગવાસ કર્યો. તેમની પાછળ બહોળું કુટુંબ, ઘણાં સગાં તેમજ સ્નેહીઓ મૂકી ગયેલ છે. જેઓ સર્વને પોતાની મીઠી ચાદગીરી મુકી જીવનનું સાર્થક કરી ગયેલ છે.

ડા. ૫૦૦૧૭ આપનાર આદ્ય સુરજીશ્રી,



(સ્વ.) શેઠ ધારસીભાઈ જીવણભાઈ
સોલાપુર.

॥ आचाराङ्गसूत्रके २, ३, ४ अध्यायनों की विषयानुक्रमणिका ॥

(द्वितीय अध्ययन-प्रथम उद्देश)

विषय	पृष्ठाङ्क
१ प्रथमाध्ययन के साथ द्वितीय अध्ययनका सम्बन्धकथन, द्वितीय अध्ययन के छहों उद्देशों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन ।	१-३
२ द्वितीय अध्ययन के प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र ।	४-५
३ शब्दादि कामगुण ही मूलस्थान अर्थात् मोहनीयादि के आश्रय हैं, उन शब्दादि-कामगुणों से युक्त प्राणी परितापयुक्त बना रहता है, और उसकी उस परिस्थितिमें जो भावना रहती है उसका वर्णन ।	६-२८
४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र ।	२९
५ शब्दादिकामगुणमोहित प्राणी वृद्धावस्थामें मूढताको प्राप्त करता है - इसका वर्णन ।	३०-५६
६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र ।	५७
७ वृद्धावस्था में उस मनुष्य की जो दशा होती है - उसका वर्णन ।	५८-७२
८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र ।	७२-७३
९ मनुष्य की वृद्धावस्थामें जो दुर्दशा होती है उसे विचार कर संयम-पालन में सुहृत्तमात्र भी प्रसाद न करे ।	७४-८६
१० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र ।	८७
११ प्रमादी पुरुषों के कार्य का वर्णन ।	८८-९५
१२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र ।	९६
१३ माता पिता या पुत्र कोई भी इहलोक-सम्बन्धी और परलोक-सम्बन्धी दुःखों से बचाने में समर्थ नहीं हैं ।	९६-९७
१४ सप्तम सूत्रका अवतरण और सप्तम सूत्र ।	९८
१५ असंयत पुरुष उपभोगके लिये धनसंग्रह करता है और उपभोग के समय उसे कासश्वासादि रोग हो जाते हैं, उस समय उसके माता पिता और पुत्र कोई भी रक्षक नहीं होते हैं ।	९९-१००

विषय

पृष्ठाङ्क

- १६ आठवे सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र। १००
- १७ वृद्धावस्थामें कोई रक्षक नहीं होता और बाल्यावस्था भी पराधीन होने के कारण दुःखमय ही है—ऐसा विचार कर युवावस्था को ही संयमपालन का योग्य अवसर समझना चाहिये। १०१-१२२
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र। १२२
- १९ वार्द्धक्य और रोगों से जब तक श्रोत्रादि इन्द्रियों के परिज्ञान नष्ट नहीं हुए हैं, तभी तक चारित्रानुष्ठानमें प्रवृत्त हो जाना चाहिये। १२३-१२७

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

- १ प्रथम उद्देश के साथ द्वितीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन। १२८
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र। १२९-१३०
- ३ संसारकी असारता को जाननेवाला मुनि संयमविषयक अरतिको दूर कर भ्रममात्रमें मुक्त हो जाता है। १३१-१३७
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र। १३८
- ५ जिनाज्ञा से बहिर्भूत साधु मुक्तिभागी नहीं होता। १३९-१४४
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र। १५५
- ७ 'अनगार' कौन कहलाते हैं। १४६-१५४
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र। १५४
- ९ विषयासक्तिवश परितप्त होकर धन की स्पृहासे दण्डसमारम्भ करनेवाला मनुष्य का वर्णन। १५५-१५९
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र। १५९
- ११ संयमी को दण्ड समारम्भ नहीं करना चाहिये। उद्देश समाप्ति। १६०-१६२

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

*

॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्कः

- १ द्वितीय उद्देश के साथ तृतीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन । १६३
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । १६४
- ३ पण्डित को उच्च कुलकी प्राप्ति से हर्ष नहीं करना चाहिये; और न नीच कुलकी प्राप्तिसे क्रोध ही करना चाहिये । १६५-१७०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । १७१
- ५ किसी भी प्राणीका अहित नहीं करना चाहिये । प्राणियों के अहित करनेवालों की दुस्वस्था का वर्णन । १७२-१८६
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । १८६
- ७ उच्चकुलाभिमानी मनुष्य प्राणियोंका अहित करके जन्मान्तर में कोई अन्धता आदि फल पाकर सकलजननिन्दित होता हुआ, और कोई खेत-घर-धनधान्य-स्त्री आदि परिग्रहमें आसक्त हो तप आदिकी निन्दा करता हुआ विपरीत बुद्धिवाला हो जाता है । १८७-१९४
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । १९४
- ९ असंयमियों के कर्त्तव्य का निरूपण । १९५-२०६
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । २०७
- ११ असंयमियों के जीवन स्वरूपका वर्णन । २०७-२१४
- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । २१४-२१५
- १३ असंयमीका अन्यायोपार्जित धन नष्ट हो जाता है, और कुटुम्ब की चिन्ता से व्याकुल वह असंयमी कार्याकार्य को नहीं जानता हुआ विपरीतबुद्धियुक्त हो जाता है । २१५-२२१
- १४ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र । २२१
- १५ 'सुखको चाहनेवाला मूढमति असंयमी मनुष्य दुःखही भोगता है' इस बातको भगवान् महावीर स्वामीने स्वयं प्ररूपित किया है—इस प्रकार सुधर्मा स्वामी का कथन । २२२-२२६
- १६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवाँ सूत्र । २२७

विषय

पृष्ठाङ्क

- १७ पश्यक-तीर्थकर गणधर आदि नरकादि गतिके भागी नहीं होते हैं, बाल-अज्ञानी जीव तो नरक आदि गतिके भागी ही निरन्तर होते रहते हैं—इसका प्रतिपादन और उद्देश-समाप्ति । २२७-२३५

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

*

॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

- १ तृतीय उद्देश के साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । २३६
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । २३७-२३८
- ३ वृद्धावस्था में ही श्वासकासादि रोग होते हैं, ऐसी बात नहीं ! ये तो युवावस्था में भी होते हैं । उस रोगावस्था में उस प्राणी का रक्षक कोई सगा-सम्बन्धी नहीं होता है, और न वही प्राणी उस रोगावस्था से आक्रान्त अपने सगे-सम्बन्धीका रक्षक हो सकता है । २३८-२४०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । २४१
- ५ भोगसाधन धनकी विनाशशीलताका वर्णन । २४१-२४२
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । २४२-२४३
- ७ भोगसाधन धन विनश्वर है; अतः भोगकी स्पृहा और भोगके विचार का भी परित्याग कर देना चाहिये । २४३-२५५
- ८ चौथे सूत्रका अवतरण और चौथा सूत्र । २५६
- ९ 'कामभोग का आसेवन महा भयस्थान है' ऐसा जानकर अन-गार क्या करे ? इसका उपदेश तथा उद्देश-समाप्ति । २५६-२६१

॥ इति चतुर्थोद्देशः ॥

॥ अथ पञ्चमोद्देशः ॥

विषय

२०१क

- १ चतुर्थ उद्देशके साथ पञ्चम उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । २६२-२६४
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । २६४
- ३ गृहस्थ कर्मसमारम्भ जिन हेतुओं से करते हैं, उन हेतुओं का प्रतिपादन । २६५-२६८
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । २६९
- ५ भविष्य में उपभोग के लिये पदार्थों के संग्रहमें प्रवृत्त गृहस्थों के बीच संयमाराधनमें तत्पर अनगार को किस प्रकार रहना चाहिये । २६९-२७२
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । २७३
- ७ साधुको क्रयण, क्रापण और उसके अनुमोदन से रहित होना चाहिये । २७३-२७५
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । २७६
- ९ हननकोटित्रिक और क्रयणकोटित्रिकसे रहित साधुका वर्णन । २७६-२८३
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । २८३
- ११ साधुको एषणीय आहारके सदृश एषणीय वस्त्रपात्रादि भी गृहस्थसे ही याचना चाहिये । २८४
- १२ षष्ठ सूत्रका अवतरण और षष्ठ सूत्र । २८५
- १३ 'मुनिको मात्राज्ञ होना चाहिये' इसका वर्णन । २८५-२९१
- १४ सप्तम सूत्रका अवतरण और सप्तम सूत्र । २९१
- १५ श्रुतचारित्र्य रूप इस मार्गको आर्योंने प्रवेदित किया है । इस मार्ग पर स्थित हो कर जिस प्रकार कर्मसे उपलिप्त न हो वैसा करना चाहिये । २९१-२९२
- १६ अष्टम सूत्रका अवतरण और अष्टम सूत्र । २९२
- १७ हिरण्य-सुवर्णादि तथा शब्दादि काम दुरुल्लब्ध्य हैं । इन कामों को चाहनेवाले पुरुषकी जो दशा होती है उसका वर्णन । २९३-२९९
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । २९९

विषय

पृष्ठाङ्क

- १९ ज्ञाननेत्रयुक्त मुनिका वर्णन । २९९-३०७
- २० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ३०७
- २१ साधुको कामभोगाशासे युक्त नहीं होना चाहिये; क्यों कि कामभोगाशासे युक्त साधु बहुमायी हो कर लोभ और वैर बढ़ानेवाला होता है। वह अपनेको अमर समझता है, इष्ट-विनाश-आदि कारण से वह उच्च स्वर से रुदन करता है । ३०८-३१३
- २२ ग्यारहवां सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ३१३
- २३ बाल-अज्ञानी परतैर्थिक कामभोगस्पृहाकी चिकित्सा कामभोग-सेवनही कहते हैं; इसलिये वे हननादिक क्रियासे युक्त होते हैं। परन्तु अनगार ऐसे नहीं होते हैं। उद्देश-समाप्ति । ३१४-३१८

॥ इति पञ्चमोद्देशः ॥

*

॥ अथ षष्ठोद्देशः ॥

- १ पञ्चम उद्देशके साथ षष्ठ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । ३१९
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ३१९
- ३ पङ्जीवनिकाय के उपघातका उपदेश नहीं देनेवाले अनगार कभी भी पापाचरण नहीं करते । ३२०-३२१
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ३२१
- ५ जो छ जीवनिकायों या छ व्रतों में से किसी एक की विराधना करता है वह छहों की विराधना करता है। सुखार्थी वह वाचाल होता है, और अपने दुःखसे मूढ़ हो वह सुख के बदले दुःख ही पाता है। वह अपने विप्रमादसे अपने व्रतों को विपरीत प्रकार से करता है, अथवा वह अपने संसारको बढ़ाता है, या एकेन्द्रियादिरूप अवस्था को प्राप्त करता है। इसलिये चाहिये कि प्राणियोंको जिनसे दुःख हो ऐसे दुःखजनक कर्मों का आचरण नहीं करे। इस प्रकार के कर्मों के अनाचरण से कर्मोपशान्ति होती है। ३२२-३३१

- विषय
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ३३२
- ७ ममत्वबुद्धि से रहित हो मनुष्य रत्नत्रययुक्त अनगार होता है । ३३२-३३४
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ३३४
- ९ मेधावी मुनि ममत्वबुद्धिको छोड़कर, लोकस्वरूप को जानकर आहारादिमूर्च्छारूप संज्ञा से रहित हो संयमानुष्ठान में पराक्रम करे । ३३४-३३६
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ३३६
- ११ कर्मविदारण करनेमें समर्थ, पुत्रकलत्रादिको त्यागनेवाले वीर चारित्र्यविषयक अरति और शब्दादिविषयक रतिको दूर कर देते हैं; क्योंकि वे अनासक्त होते हैं; अत एव वे शब्दादिविषयों में रागयुक्त नहीं होते । ३३७
- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ३३८
- १३ मुनि इष्टानिष्ट शब्दादि विषयों में रागद्वेष न करता हुआ असंयमजीवन सम्बन्धी प्रमोदको दूर करे, मौन ग्रहणकर कर्मक्षपण करे । सम्यक्त्वदर्शी वीर मुनि प्रान्त और रूक्ष अन्न सेवन करते हैं । प्रान्त-रूक्ष अन्न सेवन करनेवाले मुनि कर्मका विनाश कर ओघन्तर, तीर्ण और मुक्त होते हैं । ऐसे ही मुनि विरत कहलाते हैं । ३३८-३४३
- १४ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ३४३
- १५ दुर्बल मुनि भगवान्की आज्ञाका विराधक हो कर तुच्छता एवं ग्लानिको प्राप्त करता है, और भगवान्की आज्ञाका आराधक सुबल मुनि तुच्छता एवं ग्लानि को नहीं पाते हैं और तीर्थङ्कर गणधर आदि से प्रशंसित होते हैं । यह सुबल मुनि लोकसंयोग से रहित हो मुक्तिगामी होते हैं । ३४३-३४७
- १६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ३४७
- १७ शारीरिक-मानसिक दुःखजनक कर्मों का जहां जिस प्रकार से बन्ध होता है, मोक्ष होता है, और विपाक होता है । उन सबों

विषय

पृष्ठाङ्क

का तीर्थङ्कर गणधर आदिने प्ररूपण किया है। कुशल मुनि बन्ध और मोक्षके उपायों को सर्वदा समझाते हैं। उन बन्ध और मोक्षके उपायों को जान कर भव्य आस्रवद्वारों से दूर रहे। जो मुनि अन्य दर्शनों में श्रद्धान नहीं रखते हैं—जो मुनि अनन्यदर्शी होते हैं—वे अनन्याराम होते हैं और जो अनन्याराम होते हैं वे अनन्यदर्शी होते हैं। कुशल मुनिका उपदेश पुण्यात्मा और तुच्छात्मा दोनों के लिये बराबर होता है। ऐसे मुनिका उपदेश द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके अनुसार ही होता है। ३४८-३५४

१८ नवम सूत्र का अवतरण और नवम सूत्र।

३५५

१९ धर्मोपदेशक श्रोताकी परीक्षा करके धर्मोपदेश करे। ऐसा धर्मोपदेशक ही प्रशंसित होता है। यह मुनि अष्टविधकर्मपाशसे बद्ध जीवों को छुड़ाता है, सभी दिशाओं में सर्वपरिज्ञाचारी होता है और हिंसादि स्थानों से लिप्त नहीं होता है। कर्मों के नाश करने में कुशल, बन्धप्रमोक्षान्वेषी—रत्नत्रय का अन्वेषणशील—वह मुनि न बद्ध है न मुक्त है।

३५६-३६३

२० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।

३६४

२१ तीर्थङ्कर, सामान्य केवली और रत्नत्रययुक्त साधुओं ने जैसा आचरण किया है वैसा ही आचरण दूसरे साधु करें, तीर्थङ्करादिकोंने जिस आचरणको प्रतिषिद्ध माना है उस आचरण से दूर रहें।

३६४-३६६

२२ ग्यारहवें सूत्र का अवतरण और ग्यारहवां सूत्र।

३६७

२३ पञ्चक—तीर्थङ्कर गणधरादिक नरकादिगतिके भागी नहीं होते, बाल-अज्ञानी तो निरन्तर होते रहते हैं। उद्देशसमाप्ति।
द्वितीयाध्ययनसमाप्ति।

३६७

२४ द्वितीय अध्ययन की टीकाका उपसंहार।

३६८

॥ इति द्वितीयाध्ययनम् ॥

॥ अथ तृतीयाध्ययनम् ।

॥ अथ प्रथमोद्देशः ॥

विषय

- १ द्वितीयाध्ययन के साथ तृतीय अध्ययनका सम्बन्धप्रतिपादन,
चारों उद्देशों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन । ३६९-३७०
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ३७१
- ३ अमुनि सर्वदा सोते रहते हैं, और मुनि सर्वदा जागते रहते हैं । ३७१-३८०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ३८०
- ५ दुःखजनक प्राणातिपातादि कर्म अहितके लिये होते हैं; इसलिये
प्राणातिपातादि कर्मों से विरत रहना चाहिये । ३८०-३८४
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ३८४
- ७ जो शब्दादि विषयों में रागद्वेषरहित है—ऐसा ही प्राणी आत्म-
वान्, ज्ञानवान्, व्रतवान्, धर्मवान् और ब्रह्मवान् होता है ।
ऐसा ही प्राणी षड्जीवनिकायस्वरूप लोकाके परिज्ञानसे युक्त
होता है । वही मुनि कहलाता है । वही धर्मचित् और ऋजु है,
एवं वही आवर्त्त और स्रोतके संबन्धको जानता है । ३८५-३८८
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ३८९
- ९ आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धके जाननेवाला मुनि बाह्य और
आभ्यन्तर ग्रन्थिसे रहित, अनुकूल और प्रतिकूल परीपहों को
सहन करनेवाले, संयम विषयक अरति और शब्दादि विषयक
रति की उपेक्षा करनेवाले होते हैं, और वे परिपहों की
परुषता को पीडाकारक नहीं समझते हैं । वे सर्वदा श्रुतचारित्र-
रूप धर्म में जागरूक रहते हैं, दूसरों का अपकार नहीं करना
चाहते हैं । वे वीर अर्थात् कर्मविदारण करने में समर्थ होते हैं ।
इस प्रकारके मुनि दुःख के कारणभूत कर्मोंसे मुक्त हो जाते हैं । ३८९-३९१
- १० पाँचवें सूत्रका अवतरण और पाँचवाँ सूत्र । ३९२
- ११ जरा और मृत्युके वशमें पड़ा हुआ मनुष्य सर्वदा मूढ़ बना
रहता है, इसलिये वह श्रुतचारित्र धर्म को नहीं जानता है । ३९२

विषय

पृष्ठाङ्क

- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ३९२
- १३ आत्मकल्याणार्थी मनुष्य आतुर प्राणियों को देखकर, अप्रमत्त हो, संयमाराधनमें तत्पर रहे—इस प्रकार संयमाराधनमें तत्पर रहनेके लिये शिष्यको आज्ञा देना । ३९३
- १४ सप्तम सूत्र । ३९४
- १५ ' यह संसारपरिभ्रमणरूप दुःख सावधक्रियाके अनुष्ठानसे होता है, ऐसा जानकर आत्मकल्याणके लिये अभ्युद्यत रहो ' इस प्रकार शिष्यके प्रति कथन । मायी और प्रमादी वारंवार नरकादियातनाको प्राप्त करता है । जो पुरुष शब्दादि-विषयोंमें रागद्वेषरहित होता है, माया एवं प्रमाद से दूर रहता है, वारंवार मरणजनित दुःखके आने की आशंकासे भयभीत रहता है; वह श्रुतचारित्र धर्ममें जागरूक हो मरणसे छूट जाता है। ३९४-३९५
- १६ अष्टम सूत्र । ३९५
- १७ संसारी जीवोंके दुःखों के जाननेवाले, कामभोगजनित प्रमादोंसे रहित, पाप कर्मों से निवृत्त वीर पुरुष आत्माके उद्धार करनेमें समर्थ होते हैं । ३९६
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ३९६
- १९ जो शब्दादि विषयों में होनेवाला सावध कर्म के ज्ञाता हैं वे निरवद्य क्रियारूप संयम में होनेवाले दुःखों के सहन की उपयोगिता को भी जाननेवाले हैं, और जो निरवद्यक्रियारूप संयममें दुःखों के सहन की उपयोगिता को जाननेवाले हैं वे शब्दादिविषयोंमें होनेवाले सावध कर्म के भी ज्ञाता हैं । ३९७-३९९
- २० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ३९९
- २१ कर्मरहित मुनिको नारकादि व्यवहार नहीं होता है; क्यों कि उपाधिका जनक कर्म है । ४०१
- २२ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४०२
- २३ कर्मको संसारका कारण जानकर कर्मके कारण प्राणातिपातादि का त्याग करे । ४०२-४०३

- २४ बारहवाँ सूत्र । ४०३
- २५ मुनि कर्मस्वरूपका पर्यालोचन कर सर्वज्ञ-जिन सम्बन्धी उपदेश, या संयमको स्वीकार कर रागद्वेषसे रहित हो वीतराग हो जाते हैं । ४०३
- २६ तेरहवाँ सूत्र । ४०४
- २७ कर्मके कारण रागद्वेषका ज्ञानपूर्वक परित्याग कर, संसारी लोगों को विषयकषायों से व्यामोहित जान कर, तथा विषयाभिलाष-रूप लोकसंज्ञाका वमन कर मतिमान् मुनि संयमाराधनमें तत्पर रहे, संयम ग्रहण कर पश्चात्ताप न करे । उद्देशसमाप्ति । ४०४-४०५

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

- १ प्रथम उद्देश के साथ द्वितीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन, और द्वितीय उद्देशका प्रथम सूत्र । ४०६
- २ प्राणियों के जन्मवृद्धिका विचार करो; सभी प्राणियों को सुखप्रिय होता है और दुःख अप्रिय होता है—इस वस्तु को समझो । इस प्रकार विचार करनेवाला प्राणी अतिविद्य हो कर—‘निर्वाणपद या वहां तक पहुंचानेवाले सम्यग्दर्शन आदि परम हैं’ ऐसा जान कर परमार्थदर्शी बनकर सावध्य कर्म नहीं करता । ४०६-४०९
- ३ द्वितीय सूत्र । ४१०
- ४ इस मनुष्यलोकमें बन्धन के कारणभूत मनुष्यों के साथ के सम्बन्धों को छोड़ो । आरम्भजीवी मनुष्य ऐहिक-पारलौकिक दुःखोंको भोगनेवाले होते हैं । कामभोगों में अभिलाषा रखने-वाले जीव अष्टविध कर्मों का संचय करते रहते हैं और काम-भोगादिजन्य कर्मरजसे संश्लिष्ट हो बारंवार गर्भगामी होते हैं । ४१०-४११
- ५ तृतीय सूत्र । ४११

विषय

पृष्ठाङ्क

- ६ अज्ञ मनुष्य मनोविनोद के निमित्त प्राणियोंका संहार कर आनंद मानता है। बालों-अज्ञों का संग व्यर्थ है। उनके संग से तो द्वेषकी ही वृद्धि होती है। ४११-४१२
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र। ४१३
- ८ बालों के संगसे द्वेष ही बढ़ता है; इस हेतु अतिविद्य-सम्यग्ज्ञानवान् प्राणी परम की, अर्थात्-सिद्धिगति नामक स्थान की अथवा सर्वविरतिरूप चारित्र्य की सत्ता को जान कर, नरक-निगोदादिके विविध दुःखोंके ज्ञानसे युक्त हो, पापानुबन्धी कर्म नहीं करता है, न दूसरों से कराता है, न करनेवाले का अनुमोदन ही करता है। वह धीरे मुनि, अग्र और मूलका विवेक कर के, कर्मों का छेदन कर निष्कर्मदर्शी हो जाता है। ४१३-४१५
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र। ४१६
- १० यह निष्कर्मदर्शी मरणसे मुक्त हो जाता है, केवली होकर दूसरों को भी मुक्त करता है। इहलोकादि भय को देखनेवाला यही मुनि कहलाता है। मुनि परमदर्शी, विविक्तजीवी और उपशान्त आदि हो कर, पण्डितमरणकी आकाङ्क्षा करता हुआ संयमाराधनमें तत्पर रहे। ४१६-४१८
- ११ छठा सूत्र। ४१८
- १२ पापकर्म बहुत प्रकारके कहे गये हैं, उनको दूर करनेके लिये संयममें धृति धरो। संयमपरायण मेधावी मुनि समस्त पाप कर्मोंका क्षपण करता है। ४१८-४१९
- १३ सातवाँ सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र। ४१९-४२०
- १४ अनेक विषयों में आसक्तचित्त संसारी पुरुषों की इच्छाकी पूर्ति नहीं होती। ऐसे पुरुष अन्यवधादिरूप पापकर्मों में ही निरत रहते हैं। ४२०-४२४

- १५ आठवाँ सूत्र । ४२४
- १६ इन अन्यवधादिकों का सेवन करके भरतादि—जैसे कोई २
इन्हें निस्सार समझ कर संयमाराधन में तत्पर हुए हैं । इसलिये
इनको निस्सार समझ कर ज्ञानी इनका सेवन नहीं करे । ४२४-४२५
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ४२५
- १८ देव भी जन्ममरणशील होते हैं; इसलिये उनके सुख को भी
नश्वर समझ कर श्रुतचारित्रधर्मका सेवन करो । ४२६
- १९ दशम सूत्र । ४२७
- २० श्रुतचारित्र धर्म के आराधनमें तत्पर मुनि किसी की हिंसा न करे,
न दूसरों से हिंसा करावे और न हिंसा करनेवाले की अनु-
मोदना ही करे । ४२७
- २१ ग्यारहवाँ सूत्र का अवतरण और ग्यारहवाँ सूत्र । ४२७
- २२ स्त्रियों में अनासक्त, सम्यग्ज्ञानदर्शन चारित्रके आराधन में तत्पर
तथा पाप के कारणभूत कर्मों से निवृत्त मुनि वैषयिक सुख की
जुगुप्सा करे । ४२७-४२८
- २३ बारहवाँ सूत्र । ४२९
- २४ क्रोधादि का नाश करे, लोभ का फल नरक समझे, प्राणियों की
हिंसा से निवृत्त रहे, मोक्ष की अभिलाषा से कर्मों के कारणों को
दूर करे । ४२९-४३०
- २५ तेरहवाँ सूत्र । ४३१
- २६ इस संसारमें समय की प्रतीक्षा न करते हुए तत्काल ही
बाह्याभ्यन्तर ग्रन्थिको जान कर परित्याग करे; स्रोत को जान
कर संयमाचरण करे, इस दुर्लभ नरदेहको पाकर किसी की
भी हिंसा न करे । उद्देशसमाप्ति । ४३१-४३३

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ द्वितीयोद्देशके साथ तृतीयोद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, और प्रथम सूत्र । ४३४
- २ सन्धिको जान कर लोकके क्षायोपशमिक भावलोक के विषयमें प्रमाद करना उचित नहीं है । अथवा—सन्धि को जान कर लोक को—षड्जीवनिकायरूप लोक को—दुःख देना ठीक नहीं है । ४३५
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ४३५
- ४ अपनेको जैसे सुख प्रिय है और दुःख अप्रिय, उसी प्रकार सभी प्राणियों को है । इसलिये किसी भी प्राणी की न स्वयं घात करे, न दूसरों से घात करावे, न घात करनेवाले की अनुमोदना ही करे । ४३५-४३६
- ५ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र । ४३७
- ६ मुनित्व किसे प्राप्त होता है । ४३७-४४०
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ४४०-४४१
- ८ ज्ञानी पुरुष चारित्र्य में कभी भी प्रमाद न करे, जिनप्रवचनोक्त आहारमात्रा से शरीर—यापन करे । ४४१-४४२
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ४४३
- १० मुनि उत्तम, मध्यम एवं अधम इन सभी रूपों में वैराग्ययुक्त होवे । ४४४
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ४४५
- १२ जो मुनि जीवोंकी गति और आगतिको जान कर रागद्वेषसे रहित हो जाता है, वह समस्त जीवलोकमें छेदन, भेदन, दहन और हनन—जन्य दुःखों से रहित हो जाता है । ४४५-४४७
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र ४४८
- १४ मिथ्यादृष्टि जीव भूतकाल और भविष्यत्काल सम्बन्धी अवस्थाओं को नहीं जानते हैं । उन्हें यह नहीं ज्ञात होता कि इसका भूत-काल कैसा था और भविष्यत्काल कैसा होगा ?, कोई २ मिथ्यादृष्टि तो ऐसा कहते हैं कि जैसा इस जीव का अतीतकाल था वैसा ही भविष्यत्काल होगा । ४४८

- १५ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ४४९
- १६ तत्त्वज्ञानी जीव अतीतकालिक और भविष्यत्कालिक पदार्थों का चिन्तन नहीं करते, वे तो वर्तमानकाल के ऊपर ही सावधानता से दृष्टि रखते हैं । इसलिये मुनि विशुद्धाचारी या अतीतानागत कालके संकल्प से रहित हो कर, निरतिचार संयमकी आराधना कर पूर्वोपार्जित सकल कर्मोंका क्षण करे । ४५०-४५१
- १७ नवम सूत्र का अवतरण और नवम सूत्र । ४५१-४५२
- १८ अरति और आनन्दकी असारता का विचार कर, उनके विषय में विचलित न होता हुआ ध्यान मार्गमें विचरण करे, तथा सभी प्रकार के हास्योंका परित्याग कर आलीनगुप्त होते हुए संयमानुष्ठानमें तत्पर रहे । ४५२-४५५
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ४५५
- २० पुरुष अपना मित्र अपने ही है। बाहरमें मित्र खोजना व्यर्थ है। ४५५-४५७
- २१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४५७-४५८
- २२ जो पुरुष कर्मों के दूर करनेकी इच्छावाला है वह कर्मों को दूर करनेवाला है और जो कर्मों को दूर करनेवाला है वह कर्मों के दूर करने की इच्छावाला है । ४५८-४५९
- २३ बारहवें सूत्रका अवतरण और बारहवां सूत्र । ४५९-४६०
- २४ अपनी आत्माको बाह्य पदार्थों से निवृत्त कर, उसे ज्ञानदर्शन-चारित्र्य से युक्त कर पुरुष दुःखसे मुक्त हो जाता है । ४६०-४६१
- २५ तेरहवां सूत्र । ४६१
- २६ सत्यको-अर्थात्-गुरु की साक्षिता से गृहीत श्रुतचारित्र्य धर्म सम्बन्धी ग्रहणी और आसेवनी शिक्षा को, अथवा आगमको विस्मृत न करते हुए तदनुसार आचरण करो । सत्यका अनुसरण करनेवाला मेधावी संसार समुद्रका पारगामी होता है और ज्ञानादियुक्त होने से श्रुतचारित्र्य धर्मको ग्रहण कर वह मुनि मोक्षपददर्शी होता है । ४६२

- २७ चौदहवें सूत्रका अवतरण और चौदहवां सूत्र । ४६३
- २८ रागद्वेष का वशवर्ती जीव क्षणभङ्गुर जीवनके परिवन्दन, मानन और पूजनके लिये प्राणातिपात आदि असत्कर्मों में प्रवृत्ति करते हैं। इस प्रकार वे परिवन्दन, मानन और पूजनके विषय में प्रमादशील हो जाते हैं, प्रमादी हो जन्म जरा मरणरूप दुःखार्णव में अपने को डुबो देते हैं, अथवा—इस प्रकार वे उन परिवन्दनादिकों में आनन्द मानते हैं; परंतु वे परिवन्दनादिक उनके हितके लिये नहीं होते । ४६३-४६४
- २९ पन्द्रहवें सूत्रका अवतरण और पन्द्रहवां सूत्र । ४६४-४६५
- ३० ज्ञानचारित्र्ययुक्त मुनि दुःखमात्रासे स्पृष्ट होकर भी व्याकुल नहीं होता । हे शिष्य ! तुम पूर्वोक्त अर्थ अथवा वक्ष्यमाण अर्थ को अच्छी तरह समझो । रागद्वेषरहित मुनि लोकालोक प्रपञ्च से मुक्त हो जाता है । उद्देशसमाप्ति । ४६५-४६६

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

*

॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

- १ तृतीय उद्देश के साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्ध प्रतिपादन और प्रथम सूत्र । ४६७-४३८
- २ शुभाध्यवसायपूर्वक संयमके आराधनमें तत्पर मुनि क्रोध, मान माया और लोभको दूर करनेवाला होता है; यह बात तीर्थङ्करोंने कही है । तीर्थङ्करों के उपदेशका अनुसरण करनेवाला साधु आदान का—अष्टादश पापस्थानों का, अथवा कपार्यों का—वमन करनेवाला और स्वकृत कर्मों का नाश करनेवाला होता है । ४६८-४७२
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ४७२-४७३
- ४ जो एक को जानता है वह सबको जानता है, जो सबको जानता है वह एकको जानता है । ४७४-४७५
- ५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ४७५

विषय

इ

- ६ प्रमादी को सबसे भय रहता है और अप्रमादी को किसी से भी नहीं ! ४७५-४७७
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ४७७-४७८
- ८ जो एकका उपशम करता है वह बहुतका उपशम करता है,
जो बहुतका उपशम करता है वह एकका उपशम करता है । ४७८-४७९
- ९ पांचवें सूत्रका अवतरण और पांचवां सूत्र । ४७९
- १० धीर मुनि-षड्जीवनिकायलोकके दुःखकारण कर्मोंको जानकर,
पुत्रकलत्रादि तथा हिरण्यसुवर्णादिकी ममता छोड़कर चारित्र्यको
ग्रहण करते हैं और परसे पर जाते हैं, ऐसे मुनि अपने जीवन
की अभिलाषा नहीं रखते हैं । ४८०-४८५
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ४८५
- १२ एकका विवेचन करते हुए दूसरोंका भी विवेचन करता है,
दूसरोंका विवेचन करते हुए एकका भी विवेचन करता है । ४८६-४८७
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ४८७
- १४ मोक्षाभिलाषरूप श्रद्धावाला, जैनागमके अनुसार आचरण करता
हुआ, मेधावी अप्रमत्त संयमी क्षपकश्रेणीको प्राप्त करता है । ४८७-४८८
- १५ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ४८८
- १६ षड्जीवनिकायके स्वरूपको जिनोक्त प्रकारसे जानकर, जिससे
षड्जीवनिकाय लोकको किसी प्रकारका भय न हो उस प्रकारसे
संयमाराधन करे । ४८८-४८९
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ४८९
- १८ शस्त्र परसे पर है और अशस्त्र परसे पर नहीं है । ४८९-४९१
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ४९१
- २० भावशस्त्र परसे पर होता है, अर्थात्-जो क्रोधदर्शी होता है
वह क्रमशः तिर्यग्दर्शी=निगोदभवसम्बन्धी दुःखोंको देखनेवाला
होता है । ४९२-४९४
- २१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४९४

- २२ पूर्वोक्त मेधावी मुनिको चाहिये कि क्रोधसे लेकर मोह तकके भावशस्त्रों का परित्याग कर क्रोधादिकके फलभूत गर्भदुःखादिसे लेकर निगोददुःखपर्यन्त सभी दुःखोंको दूर करे—यह बात भगवान् तीर्थङ्करने कही है । ४९४-४९५
- २३ वारहवें सूत्रका अवतरण और वारहवां सूत्र । ४९५
- २४ क्रोधादिको दूर करनेवाला अपने पूर्वोपार्जित कर्मोंका क्षपण करनेवाला होता है । ४९६
- २५ तेरहवें सूत्रका अवतरण और तेरहवां सूत्र । ४९६
- २६ पश्यकको, अर्थात्—केवलोको उपाधि, अर्थात्—द्रव्योपाधि भावोपाधि, अथवा—कर्मजनित नरकादिभव होता है क्या?; पश्यकको उपाधि नहीं है । उद्देशसमाप्ति । ४९६-४९९

॥ इति तृतीयाध्ययनम् ॥

*

॥ अथ चतुर्थाध्ययनम् ॥

॥ अथ प्रथमोद्देशः ॥

- १ तृतीय अध्ययनके साथ चतुर्थ अध्ययनका सम्बन्धप्रतिपादन । ५००
- २ प्रसङ्गतः सम्यक्तत्वा निरूपण । ५००
- ३ सम्यक्तत्वं शब्दकी सिद्धि, सम्यक्तत्वा लक्षण, सम्यक्तत्वाके लक्षणके विषयमें वादियों की विप्रतिपत्तिका निरसन । ५००-५११
- ४ सम्यक्तत्वा द्वैविध्य और दशविधत्वका सविस्तर विवरण । ५१२-५२८
- ५ सम्यक्तत्वाकी स्थिति । ५२९
- ६ सम्यक्तत्वाके प्रादुर्भावकी व्यवस्था । ५२९-५३०
- ७ सम्यक्तत्वा अन्तरकाल । ५३०
- ८ सम्यक्तत्वा फल । ५३१-५५९
- ९ सम्यक्तत्वाप्राप्तिका क्रम । ५५९-५७२

- १० सम्यक्त्वमोहनीयका स्वरूप । ५७३-५७५
- ११ मिश्रमोहनीय । ५७६
- १२ मिथ्यात्वमोहनीय । ५७६-५८४
- १३ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ५८५
- १४ सभी तीर्थङ्करोंद्वारा प्रतिपादित सम्यक्त्वका निरूपण । ५८५-५८८
- १५ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ५८९
- १६ यह सर्वप्राणातिपातविरमणादिरूप धर्म-शुद्ध, नित्य और शाश्वत है । इस धर्मको भगवान् ने षड्जैवनिकायरूप लोकको दुःख-दावानलके अन्दर जलते हुए देखकर प्ररूपित किया है । भगवान् ने इस धर्मका प्ररूपण उत्थित अनुत्थित आदि सबोंके लिये किया है । ५८९-५९३
- १७ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ५९३
- १८ भगवान् का वचन सत्य ही है, भगवान् ने वस्तुका स्वरूप जिस प्रकार प्रतिपादन किया है वह वस्तु वैसी ही है-इस प्रकारके श्रद्धानलक्षण सम्यक्त्वका प्रतिपादन केवल आर्हतागममें ही कहा गया है; अन्यत्र नहीं ! ५९३-५९४
- १९ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ५९५
- २० उस सम्यक्त्वको प्राप्त कर, धर्मको उपदेश-आदि उपायद्वारा जान कर सम्यक्त्वको प्रशम-संवेगादिद्वारा प्रकाशित करे, सम्यक्त्वका परित्याग न करे । ५९५-५९६
- २१ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ५९७
- २२ ऐहिक और पारलौकिक इष्ट-अनिष्ट शब्दादि विषयोंमें वैराग्य रखे । ५९७
- २३ छठा सूत्र । ५९८
- २४ लोकैषणा न करे । ५९८-५९९
- २५ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ५९९
- २६ जिसको लोकैषणा नहीं है उसको सावध-व्यापारमें प्रवृत्ति कहाँसे

विषय

हो ! अथवा—जिसको यह सम्यक्तत्परिणति नहीं है उसको साव-
धानुष्ठानसे रहित करनेवाली विवेकयुक्त परिणति कहांसे हो ! ५९९-६००

६००

२७ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र ।

२८ इस सम्यक्तत्वको जो मैंने कहा है उसे तीर्थङ्करोंने देखा है,
गणधरोंने सुना है, लघुकर्मा भव्यजीवोंने माना है; ज्ञानावरणीय
के क्षयोपशमसे भव्यजीवोंने जाना है । ६००-६०१

६०१

२९ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र ।

३० जिनवचनमें श्रद्धारूप सम्यक्तत्वके अभावसे मातापिता आदिके
साथ सांसारिक संबन्ध रखता हुआ, मृत्युद्वारा उनसे वियुक्त
होता हुआ, या शब्दादि विषयोंमें आसक्ति करता हुआ मनुष्य
एकेन्द्रियादिक भवों में भटकता रहता है । ६०१

६०२

३१ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र ।

३२ दिन—रात मोक्षप्राप्तिके लिये उद्योगयुक्त और सर्वदा उत्तरोत्तर
प्रवर्द्धमान हेयोपादेयविवेकपरिणामसे युक्त होते हुए तुम प्रमत्तों
को—असंयतोंको आर्हत धर्मसे बहिर्भूत समझो; और पञ्चविध
प्रमादोंसे रहित हो मोक्षप्राप्तिके लिये अविच्छिन्न प्रयत्न करो,
अथवा—अष्टविध कर्मशत्रुओंको जीतनेके लिये प्रराक्रम करो ।
उद्देशसमाप्ति । ६०२-६०४

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

१ प्रथम उद्देशके साथ द्वितीय उद्देशका संबन्ध—प्रतिपादन; प्रथम
सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६०५

२ जो आस्रव—कर्मबन्धके कारण हैं वे परिस्रव—कर्मनिर्जराके कारण
हो जाते हैं, और जो परिस्रव—कर्मनिर्जराके कारण हैं वे आस्रव—

कर्मबन्धके कारण हो जाते हैं। जो अनास्रव-कर्मनिर्जराकारक व्रतविशेष हैं वे अपरिस्रव-कर्मबन्धके कारण हो जाते हैं, जो अपरिस्रव-कर्मबन्धके कारण हैं वे अनास्रव-कर्मनिर्जराकारक व्रतविशेष हो जाते हैं।

६०६-६१५

६१५

३ द्वितीय सूत्र ।

४ 'जो आस्रव हैं वे परिस्रव हैं जो परिस्रव हैं वे आस्रव हैं, जो अनास्रव हैं वे अपरिस्रव हैं जो अपरिस्रव हैं वे अनास्रव हैं'-इन षट्को को जानता हुआ ऐसा कौन मुनि है जो षड्जीवनिकायको बँधते हुए और मुक्त होते हुए जिनागमानुसार जान कर, तथा सभी तीर्थङ्करोंद्वारा भिन्न-भिन्नरूपसे प्रतिबोधित बन्धकारण और निर्जराकारणको जानकर धर्माचरणमें प्रवृत्त न हो !

६१५-६१६

५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र ।

६१६

६ प्रवचनज्ञानसे युक्त मुनि, हेयोपादेयको तथा यथोपदिष्ट धर्म को जाननेवाले संसारियों के लिये उपदेश देते हैं। ज्ञानीका उपदेश सुनकर, अर्त्त अथवा प्रमत्त भी प्रबुद्ध हो जाते हैं। मैंने जो कुछ कहा है और मैं जो कुछ कहता हूँ वह सत्य ही हैं। मैंने यह सब भगवान्से सुनकर ही कहा है। मोक्षाभिलाषीको इसमें सम्यक्तत्व-श्रद्धान रखना चाहिये।

६१६-६२०

७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र ।

६२०-६२१

८ संसारी जीव मृत्युसे नहीं बच सकते। वे धर्मसे बहिर्भूत होनेके कारण इच्छाके अधीन रहते हैं, अति-असंयमी होते हैं, काल-मृत्युसे गृहीत होते हैं, अथवा-आगामी वर्षमें या उसके बाद के वर्षोंमें धर्माचरण करनेके संकल्प करते रहते हैं, और धान्यादि संग्रह करनेमें ही लगे रहते हैं; ऐसे संसारी जीव अनन्तवार एकेन्द्रियादिक भवोंमें जन्म लेते रहते हैं।

६२१-६२४

९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र ।

६२४

१० इस लोकमें कितनेक जीवोंको बारंबार उत्पन्न होनेके कारण

उनसे परिचय हो जाता है, नरकादि स्थानोंमें उत्पन्न हुए वे जीव नरकादि सम्बन्धी दुःखों का अनुभव करते हैं।

६२४-६२५

११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र।

६२५

१२ क्रूरकर्म करनेवाला जीव बहुतकाल तक नरकमें रहता है और क्रूरकर्म नहीं करनेवाला जीव कभी भी नरकमें नहीं जाता है।

६२६

१३ सातवाँ सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र।

६२७

१४ चतुर्दशपूर्वधारी और केवलज्ञानीके कथनमें थोड़ासा भी अन्तर नहीं होता !

६२७-६२८

१५ अष्टम सूत्रका अवतरण और अष्टम सूत्र।

६२८

१६ इस मनुष्यलोकमें कितनेक श्रमण ब्राह्मण—‘सभी प्राणी, सभी भूत, सभी जीव और सभी सत्त्व हनन करनेयोग्य हैं, हनन करने के लिये आज्ञा देनेयोग्य हैं, हनन करनेके लिये ग्रहण करने योग्य हैं और विषशस्त्रादिद्वारा मारने योग्य हैं; इसमें कोई दोष नहीं है’ इस प्रकार कहते हैं। यह सब अनार्यवचन ही है।

६२८-६३१

१७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र।

६३२

१८ सभी प्राणी, सभी भूत-आदि हनन करनेके योग्य हैं, इत्यादि जो कोई श्रमण-ब्राह्मण कहते हैं, उनका यह कथन अनार्यवचन है’ इस प्रकार आर्योंका कथन है।

६३२-६३३

१९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।

६३४

२० ‘सभी प्राणी, सभी भूत आदि हनन करनेयोग्य नहीं हैं—इत्यादि कथन आर्योंका है’—इस प्रकार स्वसिद्धान्तप्रतिपादन।

६३५-६३६

२१ ग्यारहवाँ सूत्रका अवतरण और ग्यारहवाँ सूत्र।

६३६

२२ दुःख जैसे अपने लिये अप्रिय है उसी प्रकार वह सभी प्राणी, भूत-आदिके लिये भी अप्रिय है। अतः किसीको दुःख नहीं देना चाहिये। उद्देशसमाप्ति।

६३६-६३८

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

- १ द्वितीय उद्देशके साथ तृतीय उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६३९
- २ धर्मसे बहिर्भूत लोगोंकी उपेक्षा करो, ऐसे लोगोंकी उपेक्षा करनेवाला मनुष्य ही विद्वान् है । ६३९-६४०
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ६४१
- ४ विद्वान् मनुष्य मनोवाक्कायके सावधव्यापाररूप दण्डके त्यागी होते हैं, अष्टविध कर्मोंके त्यागी होते हैं, उनके शरीर शोभा संस्कार आदिसे रहित होते हैं, अतएव वे सरल होते हैं एवं आरम्भजनित दुःखोंके अभिज्ञ होते हैं । विद्वान्के इस स्वरूपको सम्यक्तत्त्वदर्शी-केवलीने कहा है । ६४१-६४६
- ५ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र । ६४६-६४७
- ६ सम्यक्तत्त्वदर्शी मुनि-सर्वज्ञ, यथावस्थित अर्थको प्रतिबोधित करने-वाले तथा अष्टविध कर्मोंको दूर करनेमें कुशल होते हुए सभी प्रकारसे कर्मोंको जानकर ज्ञ और प्रत्याख्यानरूप दो प्रकारकी परिज्ञाको कहते हैं । ६४७-६४८
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ६४८
- ८ इस मनुष्यलोकमें आर्हत आगमका श्रवण, मनन और समाराधन करनेवाला, हेयोपादेयके विवेकमें निपुण, रागद्वेषरहित मनुष्य आत्माको स्वजन-धन-शरीरादिसे भिन्न समझकर शरीरमें आस्था न रखे । ६४९-६५४
- ९ पञ्चम सूत्र । ६५४
- १० तपस्या-आदिके द्वारा शरीरका शोषण करे, शरीरको जीर्ण बना दे । ६५४
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ६५५
- १२ जैसे अग्नि जीर्णकाष्ठोंको भस्म कर डालती है उसी प्रकार आत्मा के शुभ परिणाम सम्यग्दर्शनादिमें सावधान और शब्दादि

विषय

पृष्ठाङ्क

- विषयोंमें रागरहित मनुष्य ज्ञानावरणीयादि अष्टविध कर्मोंको भस्म कर डालता है । ६५५
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ६५६
- १४ मुनि इस मनुष्यलोकको परिमित आयुवाला जानकर प्रशम गुणकी वृद्धि करके क्रोधादि कषायोंका त्याग करे । ६५६
- १५ आठवां सूत्र । ६५७
- १६ हे मुनि ! क्रोधादिवश त्रिकरण-त्रियोगसे प्राणातिपात करनेसे जो प्राणियोंको दुःख होता है, या क्रोधादिसे प्रज्वलित मनवाले जीवको जो मानसिक दुःख होता है उसको समझो, और क्रोधजनित कर्मविपाकसे भविष्यत्कालमें जो दुःख होता है उसे भी समझो । ऐसे क्रोधी व्यक्ति भविष्यत्कालमें नरकनिगोदादि-भवसंबन्धी दुःखोंको भोगते हैं । दुःखागमके भयसे कांपते हुए जीवोंको तुम दयादृष्टिसे देखो । ६५७-६६१
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ६६१
- १८ जो भगवान् तीर्थङ्करके उपदेशमें श्रद्धायुक्त हैं, और उनके उपदेश को धारण करनेके कारण क्रोधादिकषायरूप अग्निके प्रशान्त हो जानेसे गीतीभूत हो गये हैं, अतएव जो पापकर्मोंके विषयमें निदानरहित हैं, वे ही मोक्षसुखके भागी कहे गये हैं । ६६१-६६४
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ६६४
- २० हे शिष्य ! जिसलिये क्रोधादिकषायोंसे युक्त जीव अनन्त दुःख पाता है, इसलिये तुम आर्हतागम परिशीलन-जनित सम्यग्ज्ञानसे युक्त अतिविद्वान् होकर क्रोधादिकषायजनित सन्तापसे अपनेको वचाओ । उद्देशसमाप्ति । ६६४-६६५

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ तृतीय उद्देशके साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६६६
- २ मातापिता आदिके सम्बन्धको या असंयमको छोड़कर और संयमको प्राप्तकर, शरीरको प्रथम प्रव्रज्याकालमें साधारण तपसे, बादमें प्रकृष्ट तपसे, और अन्तमें पण्डित मरणद्वारा शरीरत्यागकी इच्छासे युक्त हो मासार्द्धमास क्षपणादि तपोंसे पीडित-कृश करे । ६६६-६६७
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ६६८
- ४ उपशमका आश्रयण करके कर्मविदारणमें समर्थ, संयमाराधनमें खेदरहित, जीवनपर्यन्त संयमाराधनमें तत्पर और समिति एवं सम्यग्ज्ञानादि गुणोंसे युक्त हो कर मुनि सर्वदा संयमाराधनमें प्रयत्नयुक्त रहे । ६६८
- ५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ६६८-६६९
- ६ मोक्षगामी वीरोंका यह संयमरूप मार्ग कठिन्तापूर्वक सेवनीय है । ६६९
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ६६९
- ८ अन्तर्ग्रान्त आहारादिसे और अनशनादिसे अपने शरीरके मांस शोणितको सुखाओ । इस स्वशरीरशोषक मोक्षार्थी पुरुषको तीर्थङ्करोंने कर्मविदारण करनेमें समर्थ और श्रद्धेयवचन कहा है । और जो ब्रह्मचर्य महाव्रतमें तत्पर होकर कर्मोपचयका क्षपण करता है वह भी श्रद्धेयवचन है । ६६९-६७०
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ६७०
- १० साधु विषयोंसे अपनी इन्द्रियोंको हटा कर भी ब्रह्मचर्यमें स्थित हो कर भी और श्रद्धेयवचन हो कर भी यदि शब्दादि विषयभोगोंमें आसक्त होता है तो वह बाल अपने कर्मबन्धको काटनेमें समर्थ नहीं होता ! वह बाल मातापिता आदिके सम्बन्धको या असंयम सम्बन्धको नहीं छोड़ पाता ! आत्महितको

नहीं जाननेवाला उस बालको भगवान् तीर्थङ्करके उपदेशरूप प्रवचनका अथवा सम्यक्त्वका लाभ नहीं होता !

६७०-६७५

११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र ।

६७५

१२ जिसको पूर्वकालमें सम्यक्त्व नहीं मिला है और भविष्यत्कालमें भी जिसे सम्यक्त्व नहीं मिलनेवाला है उसे वर्तमानमें सम्यक्त्व कहांसे मिले ?

६७५-६७७

१३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र ।

६७७

१४ जो भोगविलाससे रहित होता है वही जीवाजीवादि पदार्थोंका सम्यग्ज्ञाता तत्त्वज्ञ आरम्भसे उपरत होता है । यह आरम्भसे उपरमण होना ही सम्यक्त्व है । इस आरम्भोपरमणसे जीव घोर दुःखजनक कर्मबन्धको, वधको और दुस्सह शारीरिक परितापको नहीं पाता है । अथवा जिस आरम्भसे जीव घोर दुःखजनक कर्मबन्ध और वधको तथा दुस्सह शारीरिक मानसिक परिताप को पाता है ।

६७७-६८०

१५ आठवें सूत्रका अवतरण आठवां सूत्र ।

६८०

१६ हिरण्यरजत मातापिता आदिका सम्बन्धरूप अथवा प्राणातिपात-रूप बाह्य आस्रवको और विषयाभिलाषरूप आन्तर स्रोतको रोक कर इस लोकमें मनुष्योंके बीच मोक्षाभिलाषी हो सावद्यव्या-पारका परित्याग करे । अथवा इस लोकमें मनुष्योंके बीच बाह्य स्रोतको छिन्न कर निष्कर्मदर्शी हो जावे ।

६८०-६८२

१७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र ।

६८२

१८ ज्ञानावरणीयादिक कर्म अवश्यमेव स्व-स्वफलजनक होते हैं-ऐसा जानकर आर्हतागमजनित सम्यग्ज्ञानवान् मुनि कर्मबन्धके कारण सावद्य व्यापारको छोड़ता है ।

६८२-६८३

१९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र ।

६८३

२० हे गिण्य ! जो कोई कर्मविदारण करनेमें उत्साहयुक्त, समिति-युक्त, स्वहितमें उद्योगयुक्त अथवा-सम्यग्ज्ञानादियुक्त, सर्वदा

संयमाराधनमें सावधान, हेयोपादेयके ऊपर सर्वदा दृष्टि रखने-
वाले, अव्यावाध आनन्दस्वरूप मोक्षके अभिलाषी और कषायों
से निवृत्त होते हुए यथावस्थित लोककी-कर्मलोक अथवा विप-
यलोककी उपेक्षा करते हुए थे, वे चाहे पूर्व-आदि कसी भी
दिशामें रहे हुए हों; सत्य मार्गमें ही स्थित थे ।

६८४-६८७

२१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र ।

६८७

२२ वीर-समित-आदि विशेषणोंसे युक्त उन महापुरुषोंके ज्ञानका
वर्णन हम आगे करेंगे । क्या उनको उपाधि है ? पश्यकको उपाधि
नहीं होती है । उद्देशसमाप्ति ।

६८७-६८८

२३ चतुर्थ उद्देशकी टीकाका उपसंहार ।

६८९-६९०

॥ इति चतुर्थोद्देशः ॥



॥ अथ शुद्धिपत्रम् ॥

अंशुद्धम्	शुद्धम्	पृष्ठम्	पंक्तिः
निखिलजीवभेदेन	निखिलजीवभेदज्ञेन	४	१
— द्यनुभवकर्तृत्वञ्च ।	— द्यनुभावनकर्तृत्वञ्च ।	१४	५
परिचितः पिता पितृव्यादिः ।	परिचितः । अथवा पूर्व— संस्तुतः पितापितृव्यादिः ।	१६	१
मूर्च्छा	मूर्च्छां	१८	४
भे	भे	१९	२६
अहो—	अह—	२०	३
रागाद्याविष्टचेता	रागाद्याविष्टचेताः	२८	९
—पुञ्जमित्यर्थः ।	—पुञ्ज इत्यर्थः ।	३०	८
पकरति	पकरंति	३७	२२
घटं टमिव	घटं पटमिव	४१	४
वार्द्धके	वार्द्धक्ये	४१	२९
फलंबुयारं	कलंबुयारं	४४	२४
—कारणेवयः	—कारणेव यः	४५	४
‘ पायलीकाठ ’ इति भाषा ।	(‘ पायलीकाठ ’—इति भाषा- प्रसिद्धवत् ।)	४७	१
—दिन्द्रियस्वीकारे	—दिन्द्रियत्वस्वीकारे	५०	१
सर्द्धि	सर्द्धि	५७	४
दुःखशत—	दुःखशत—	६४	७
भवति	भवति	७१	१०
उत्त्रासकोऽ—	उत्त्रासयिताऽ—	८७	८
—नर्थकरी	—नर्थकरी	८८	३
उत्त्रासकः	उत्त्रासयिता	८८	८
सर्द्धि	सर्द्धि	९६	३
ते	तं	९६	४
एहिक—	ऐहिक—	१००	७
—दरति भवति	—दरतिर्भवति	१३०	२
नट्ट—	नट्ट—	१३२	५
प्रदातुकाम	प्रदातुकामः	१३५	१

अशुद्धम्	शुद्धम्	पृष्ठम्	पंक्तिः
शब्दादि-	शब्दादि-	१४३	४
सन्तोषादिना	सन्तोषादिना	१५२	१
-समुदाई	समुदाई	१५४	७
-गट्टी	-गट्टी	१५४	८
-विट्ट-	-विट्ट-	१५४	८
कायै-	कायै-	१४४	१६
विरूपरूपैः	विरूपरूपैः	१५७	४
पर्यालोच्च	पर्यालोच्च	१५७	७
-दण्डं	-दण्डं	१५९	१०
जम्बस्वामिन-	जम्बूस्वामिन-	१६०	७
बुद्धा	बुद्ध्वा	१६१	२
परिरक्षेदित्यर्थः ।	परिरक्षेरित्यर्थः ।	१६१	५
स्वसमानार्थमात्मबलादि-	स्वसम्मानार्थमात्म-		
दण्डसमारम्भो	बलादिद्वारा दण्डसमारम्भो	१६४	१
उच्चैर्गोत्रे	उच्चैर्गोत्रे	१६५	१
जानीहि सातम्	जानीहि प्रत्युपेक्ष्य सातम्	१७१	१
परिसंवेदयते	संपरिवेदयते	१७१	९
-ध्वौभौ	ध्वौभौ	१७८	२
परिसंवेदयते	सम्परिवेदयते	१८१	६
सूत्रे उपैतीत्यत्रैकवचन-	सूत्रे उपैतीत्यस्याऽऽवृत्त्या		
मार्षत्वात् ।	वचनविपरिणामेन		
	च यथायोग्यमन्वयः ।	१९४	२
येन यत्र	येन यत्र वा	२२३	२
तस्मिन्=	तस्मिन् स्थाने=	२२६	२
सर्द्धि	सर्द्धि	२३८	२
क्षीणमातया	क्षीयमाणतया	२४१	१६
छन्दश्च	छन्दं च	२४३	८
छन्दः	छन्दं	२४३	१७

अशुद्धम्

तात्पर्यम् । “ बहुं परधरे

शुद्धम्

तात्पर्यम् । तथा—‘गृहस्थो मे=मह्यम् अनशनादिकं न ददाति’ इति हेतोः वीरो न न कुप्येत्=न कोपं कुर्यात् ।

पृष्ठम्

पंक्तिः

“ बहुं परधरे—

२६०

२

, आदानाकोपनम्,

२६१

१

—आदानाकोपनम्,

प्राथेयं

पाथेयं

२६८

२

सर्वामगन्धम्=अशु-

सर्वामगन्धम्=सर्वम् अशु-२७१

८

आदिस्समाणे

अदिस्समाणे

२७३

२

आदिस्समाणे

अदिस्समाणे

२७३

३

आदिश्यमानः

अदिश्यमानः

२७३

५

‘आदिश्यमान’ इति ।

‘अदिश्यमान’ इति

२७३

७

आदिश्यमानः

अदिश्यमानः

२७३

८

द्रव्यक्षेत्रकालभावपेक्षया

द्रव्यक्षेत्रकालभावापेक्षया

२७८

५

—रनेपणीयमपि

रनेपणीयमपि

२८३

४

लद्धुं

लद्धु

२८५

५

माद्येत्

माद्येत्

२८५

८

स्निह्यात्

स्निह्येत्

२८५

८

—मवष्वज्जेत्

—मवष्वज्जेत्

२८५

९

माद्येत्

माद्येत्

२८६

८

माद्येत्

माद्येत्

२८७

१

स्निह्यात्

स्निह्येत्

२८८

१

अवष्वज्जेत्=

अवष्वज्जेत्=

२८८

३

कुशलो

कुसलो

२९१

५

ना—

प्रा—

३२३

८

तं

तत्

३३४

८

‘त’—मित्यादि ।

‘त’—दित्यादि ।

३३४

१०

अशुद्धम्	शुद्धम्	पृष्ठम्	पंक्तिः
तं	तत्	३३४	१०
सहइ	सहई	३३६	७
सहइ	सहई	३३६	७
अच्चइ	अच्चेइ	३४३	६
पमुच्चइ	पवुच्चइ	३४३	६
वर्त्तयेत्	वर्त्तकः	३४३	७
यस्य दुर्वसुः	यस्य स दुर्वसुः	३४३	१०
वर्तमानः	वर्त्तकः	३४४	२
अणोद्धातन-	अणाद्धातन-	३५६	३
घटते=	घटते,	३६४	९
वयवं	वेयवं	३८४	७
दुःखा	दुक्खा	३८९	४
विदित्वा	विदित्वा	४०५	१
मतिमान्=	मतिमान् मेधावी=	४०५	१
रागद्वेषरहित इत्यर्थः, न छिद्यते	रागद्वेषरहित इत्यर्थः,		
सर्वलोके=समस्तजीवलोके न छिद्यते		४४६	७
पुब्बे	पुब्बं	४४८	२
एतनुदर्शी	एतदनुदर्शी	४५०	६
स्पृष्टो सन्	स्पृष्टः सन्	४६५	६
सम्यक्त्वं	सम्यक्त्वं	५४४	५
ज्ञानावरणीया-	ज्ञानावरणीया-	५६१	१०
काष्ठहारादय-	काष्ठहारादय-	५९२	६
तिर्थकरै-	तीर्थकरै-	५९४	८
तत्परतो	तत्पुरतो	५९६	४
-कतव्य-	-कर्त्तव्य-	५९७	१
पुद्गल परिणा-	पुद्गलपरि-	५९७	८
वालग्नाना-	वालग्नाना-	६०९	४
भवे देवे दित्यर्थः	भवेदेवेत्यर्थः ।	६१६	४

अशुद्धम्	शुद्धम्	पृष्ठम्	पंक्तिः
रसायनं क्रियां,	रसायनक्रियां,	६२१	८
कर्मषु	कर्मसु	६२६	३
दोषो	दोसो	६२८	९
सर्वे	सर्वे	६३५	२
सत्त्वानां	सत्त्वानाम्	६३६	११
धर्मविदः	धर्मविद् इति	६४१	६
-कालवस्था-	-कालावस्था-	६४१	१०
अत एव	इति=अत एव	६४५	१
भवेदित्यर्थः ।	भवेत्यर्थः ।	६५४	५
श्रुत	श्रुतम्	६६५	२
दुःखेन	दुःखेन	६६९	५
निकम्भदंसी	निकम्भदंसी	६८०	२
निष्क्रान्तः	निष्क्रान्तः	६८०	८
कर्मबन्धकरणात्	कर्मबन्धकारणात्	६८२	८.

॥ इति शुद्धिपत्रम् ॥

*

प्रकाशक : श्री अणिल भारत श्वेताम्भर स्थानकवासी जैन शास्त्रोद्धार समिति
तरङ्गथी शेठ भगनलाल छगनलाल मानद्वमन्त्री मु. राजकोट (सौराष्ट्र)
मुद्रक : भण्डीलाल छगनलाल शाह. नवप्रसात ग्री. प्रेस धीकांटा-अमदावाद.

। अथाचाराङ्गसूत्रस्य द्वितीयमध्ययनम् ।

गतं प्रथमाध्ययनं, सम्प्रति द्वितीयमारभ्यते । अस्यायमभिसम्बन्धः-पृथिव्यादिपट्टकायस्वरूपं ज्ञात्वा तदारम्भनिवृत्तो मुनिर्भवतीति दर्शितं, पट्टकायारम्भनिवृत्तिश्च शब्दादिविषयविजयमन्तरेण न भवतीति लोकविजयाध्ययनमारभ्यते । अस्मिन् पट्टदेशकाः सन्ति, तत्र-स्वजनेऽभिष्वङ्गो मुनिना न कार्य इति स्वजनाभिधः प्रथमः १ । “अदृढत्वं संयमिना संयमे न विधेयम्” इत्यदृढत्वाख्यो

। श्रीआचाराङ्ग सूत्रका द्वितीय अध्ययन ।

प्रथम अध्ययन समाप्त हो चुका, अब द्वितीय अध्ययन प्रारंभ होता है । अध्ययन का संबंध इस प्रकार से समझना चाहिये कि प्रथम अध्ययन में “पृथिव्यादि पट्टकाय के जीवों के आरंभ से रहित मुनि होना है ” जो यह बात कही गई है सो छकाय के आरंभ की निवृत्ति, जब तक शब्दादिविषयों पर विजय प्राप्त न की जावेगी तब तक नहीं हो सकती है । इसी अभिप्राय से यह लोकविजय नामका द्वितीय अध्ययन प्रारंभ किया गया है । इसमें छह उद्देश हैं-प्रथम उद्देश में गणधर भगवान इस बातका वर्णन करेंगे कि संयमी मुनिको माता पिता आदि जो अपने इष्टजन हैं उनमें आसक्ति-ममत्वभाव नहीं रखना चाहिये १ । द्वितीय उद्देशकमें-उसे संयम में अरतिपरिणाम को दूरकर दृढता धारण करनी चाहिये कभी भी अदृढता न आने पावे इसका ख्याल रखना

श्री आचारांग सूत्रानुं णीणुं अध्ययन

पट्टेयुं अध्ययन पुं धयुं, डये णीण अध्ययननो प्रारंभ थाय छे. अध्ययननो संबंध ये प्रकारे समजये जेछे ये डे प्रथम अध्ययनमां “पृथिव्यादि पट्टकायना छेवोना आरंभधी रहित मुनि छेय छे. आ बात जे छेवोनामां आवी छे ते छे छायना आरंभनी निवृत्ति. ज्वां सुधी शब्दादि विषयेधी विजय प्राप्त नहि थाय ज्वां सुधी ‘छे’ शक्ती नथी. आ अभिप्रायधी आ ‘लोकविजय’ नामना णीण अध्ययननो प्रारंभ थाय छे. तेनां छे उद्देश छे. प्रथम उद्देशमां गणधर भगवान ते बातनुं वर्णन छे. छे डे संयमी मुनीये माता पिता आदि जे पोताना छेवन छे तेनां आसक्ति-ममत्वभाव नहि राखये जेछे ये १. णीण उद्देशमां तेने संयममां अरतिपरिणामने दूर करी दृढता धारण करी जेछे ये, छे छे वषण थो, अदृढता नथी न जाय तेने ज्वां राखये जेछे ये २. णीण उद्देशमां-

द्वितीयः २ । “मुनिना मानो न कार्यो, निःसारता चार्थसारस्य चिन्तनीये” ति माना-
र्थसाराख्यस्तृतीयः ३ । ‘भोगेषु विरतिः सदा सर्वथा विधेया मुनिने’—ति ‘भोगेषु’
नामकश्चतुर्थः ४ । सर्वसावधानुष्ठानत्यागिना मुनिना संयमयात्रानिर्वाहार्थं स्वार्थारम्भ-
प्रवृत्तलोकनिश्रया विहरणीयमिति ‘लोकनिश्रया’ नामधेयकः पञ्चमः ५ । एवं
विहरता मुनिना पूर्वापर-मातापितृश्वश्रूश्वशुरादिपरिचितापरिचितसंयोगे ममता न
विधेयेति ‘लोकममत्वा’—ख्यः षष्ठ उद्देशः ६ ।

चाहिये २ । तृतीय उद्देशक में—मुनिको मान न करना चाहिये; एवं धना-
दिक परपदार्थों में सदा असारता की भावना रखनी चाहिये ३ । चतुर्थ
उद्देशकमें विषयभोगों से सर्वथा (मन, वचन, कायसे) विरति
भाव रखना चाहिये ४ । पाँचवें उद्देशक में सर्वसावधकर्मों के अनुष्ठान
से रहित उस संयमी को अपने संयमयात्रा के निर्वाह के लिये अपने
आरम्भादिकार्य में प्रवृत्त-गृहस्थलोगों के सहारे ही विहार करना चाहिये
५ । छठवें उद्देशक में—लोगों के सहारे विहार करनेवाले उस संयमी को
अपने परिचित, अपरिचित तथा माता-पिता सास-ससुर आदि से
मिलने की उत्कंठा भी नहीं करनी चाहिये ६ ।

भावार्थः—इस द्वितीय अध्ययन के प्रारंभ करने का स्पष्टीकरण
करते हुए टीकाकार कहते हैं कि प्रथम अध्ययन में यह बात निर्दिष्ट
की गई है कि मुनियों को पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक,
वायुकायिक एवं वनस्पतिकायिक जीवों का यथार्थ स्वरूप जानकर उनके
आरंभ का सदा परित्याग कर देना चाहिये, कारण कि जब तक वह

मुनिने मान न करुं नोद्ये, तेमज धनादिक परपदार्थोभा सदा असारतानी लावना
राखवी नोद्ये ३. योथा उद्देशकभां-विषयलोगोथी सर्वथा (मन-वचन-कायाथी)
विरतिभाव राखवो नोद्ये ४ पाच्यभां उद्देशकभा-सर्वसावधकर्मोभा अनुष्ठा-
नथी रहित ते संयमीये पोताना संयमयात्राना निर्वाह भाटे पोताना आरंभ-
कार्यभां प्रवृत्त गृहस्थ लोकोना सहाराथी विहार करवो नोद्ये ५. छट्ठा उद्देशकभां-
लोकोना सहारे विहार करना ते संयमीने पोताना परिचित अने अपरिचित
माता-पिता सासु-ससुरा आदिथी भणवानी उत्कंठा पाणु न राखवी नोद्ये ६.

भावार्थः—आ भीज अध्ययनने आरंभ करीने स्पष्टीकरण करता टीकाकार
कहे छे के प्रथम अध्ययनभा ये बात कहेवाभा आवे छे के मुनियोये पृथिवी-
कायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक अने वनस्पतिकायिक लोकोना यथार्थ
स्वरूप नोणीने तेना आरंभने सदा परित्याग करी देवो नोद्ये, कारण के

पृथिवीकायिकादिक एकेन्द्रिय जीवों के आरंभ से रहित नहीं होगा तब तक वह यथार्थ संयमी नहीं हो सकता, अतः इनके आरंभ का त्याग करना उसका आवश्यक कर्तव्य है। यह कर्तव्य उसका तभी निर्दोष रूपसे निभ सकता है जब कि वह इन्द्रियजयी होगा, अन्यथा इन्द्रियों के शब्दादिक विषय में लुब्ध होनेसे वह इस गुण से शून्य ही रहेगा, इसी विषय को विशेषरूपसे खुलासा करने के अभिप्राय से इस अध्ययन को छह उद्देशों में विभक्त किया है। प्रथम उद्देश में यह स्पष्ट किया गया है कि संयमी मुनि के लिये अपने मातापितादिक स्वजनों में आसक्ति भाव नहीं रखना चाहिये। द्वितीय उद्देशमें—गृहीत संयममें कभी भी अशुचिभाव नहीं करे प्रत्युत संयमभाव में दृढ़ता आती रहे ऐसा ही उसका प्रयत्न होना चाहिये। तृतीय उद्देशमें—मुनि को “मैं बड़ा तपस्वी हूँ—साधु हूँ—विद्वान् हूँ—मैं बड़े कुलका हूँ” इत्यादि बड़प्पन का अहंकार न करना चाहिये; तथा सांसारिक समस्त पदार्थों के—धनादिक के यथार्थ स्वरूप का चिन्तन करते रहना चाहिये, इस अभ्यास से उसके हृदयमें उनकी असारता का पूर्ण रूपसे भान होता रहेगा जिससे उसका मन उस तरफ कभी भी लोलुप नहीं हो सकेगा। चतुर्थ उद्देश में—विषयभोगों के वास्तविक स्वरूप का विचार करने से उसके हृदय में उनके प्रति सदा

ज्यां सुधी ते पृथिवीकायादिक एकेन्द्रिय जिवोना आरंभथी रहित नहि थशे त्यां सुधी ते यथार्थ संयमी जनी शकतो नथी. माटे तेना आरंभनो त्याग करवो तेनुं आवश्यक कर्तव्य छे. आ कर्तव्य तेनुं त्यारे निर्दोष रुपथी मनारो ज्यारे ते ईन्द्रियजयी थशे. अन्यथा ईन्द्रियोना शब्दादिक विषयमां लुब्ध थवाथी ते आ गुणुथी शून्य ज गणुथो. आ विषयनो विशेष खुलासो करवा आ अध्ययनने छ उद्देशोमां विलकत करेव छे. (१) प्रथम उद्देशमां ऐ स्पष्ट कर्तु छे के संयमी मुनिये पोताना माता—पितादिक स्वजनोमां आसक्तिभाव राखवो न जेछे. (२) भीज उद्देशमां—दीधेदां संयममां कहि पणु अइचिभाव न करे पणु संयमभावमां दृढता आवती रहे जेवो प्रयत्न डोवो जेछे. (३) त्रीज उद्देशमां—मुनिये “हुं मोटो तपस्वी छुं. साधु छुं, विद्वान् छुं, मोटा कुलनो छुं” इत्यादि मोटापणुनो अहंकार न करवो जेछे, तथा सांसारिक समस्त पदार्थोनो तथा धनादिकना यथार्थ स्वरूपनुं चिन्तन करवा रहेवुं जेछे, आ अभ्यासथी तेना हृदयमां तेनी असारतानुं पूर्ण रुपथी लान थतुं रहेशे जेथी तेनुं मन ते तरफ कही पणु दोलुप थशे नहि. (४) चोथा उद्देशमां—विषयभोगोनो वास्तविक स्वरूप विचार करवाथी

તત્ર નિશ્ચિલજીવભેદેન સકલોપાધિરહિતેનોત્તમગુણરઙ્ગિતેન સ્વીકૃતપશ્ચમહા-
ત્રતેન ષટ્કાયસંયમોપસ્થિતમતિના મુનિના સ્વજનાદિષુ નાભિષ્વજ્ઞો વિધેય ઇતિ
પ્રદર્શયતિ સૂત્રકારઃ—“જે ગુણે” ઇત્યાદિ.

મન, વચન ઓર કાય સે વિરતિ પરિણામ હી જગતા રહેગા। પંચમ
ઉદ્દેશમેં—સમસ્ત પ્રકાર કે સાવધ કાર્યોં સે પરે રહનેવાલે ઉસ સંયમી કો
અપને સ્વીકૃત સંયમયાત્રાનિર્વાહ કે લિયે, જો અપને નિમિત્ત બનાયે હુએ
આહારપાની આદિ મેં પ્રવૃત્ત હૈં ઉનકી નેશ્રાયમેં વિહાર કરના ચાહિયે।
છઠવેં ઉદ્દેશ મેં—લોક કે નેશ્રાય સે વિહાર કરતે હુએ મી ઉસકે મનમેં
અપને પરિચિત અપરિચિત પરિજનોં સે મિલને કે લિયે ઉત્સુક પરિણામ
નહીં હોના ચાહિયે, ઇન્હીં સબ બાતોં કા ઇન છહ ઉદ્દેશોં મેં વિશેષરૂપ
સે ખુલાસા કિયા જાવેગા।

ઇસમેં સર્વપ્રથમ પ્રથમ ઉદ્દેશકા પ્રારંભ કરને કે લિયે સૂત્રકાર—જીવોં
કે ભેદજ્ઞાનસે સમન્વિત, સકલ ઉપાધિ સે રહિત, ઉત્તમોત્તમગુણવિશિષ્ટ,
પંચમહાત્રતારાધક, છહકાય કે જીવોં કી રક્ષા કરને મેં દત્તાવધાન, સંયમી
મુનિકો અપને આસજન માતાપિતાદિક મેં મમતાભાવ નહીં રાખના ચાહિયે।
ઇસકા વિવેચન કરતે હૈં—‘જે ગુણે સે મૂલદ્વાળે’ ઇત્યાદિ।

તેના હૃદયમાં તેના પ્રતિ સદા મન-વચન અને કાયથી વિરતિપરિણામ જ જગતો
રહેશે. (૫) પાંચમાં ઉદ્દેશમાં—સમસ્ત પ્રકારના સાવધ કાર્યોથી દૂર રહેનાર તે સંયમીએ
પોતાના સ્વીકૃત સંયમયાત્રા-નિર્વાહ માટે જે પોતાના નિમિત્તે બનાવેલા આહાર-
પાણી આદિમાં પ્રવૃત્ત છે તેની નેશ્રાયમાં વિહાર કરવો બોધ્યો. (૬) છઠ્ઠા ઉદ્દેશમાં
લોકની નેશ્રાયે વિહાર કરવા છતાં મનમાં પોતાના પરિચિત અને અપરિચિત
પરિજનોથી મળવાને ઉત્સુકતા રાખે નહિ. આ બધી વાતોનો આ છ ઉદ્દેશોમાં—
વિશેષ રૂપથી ખુલાસા કરવામાં આવશે.

એમાં સર્વપ્રથમ-પ્રથમ ઉદ્દેશનો પ્રારંભ કરવાને માટે સૂત્રકાર—જીવોના
ભેદજ્ઞાનથી સમન્વિત સકળ ઉપાધિથી રહિત, ઉત્તમોત્તમગુણવિશિષ્ટ, પંચ-
મહાત્રતારાધક, છ કાયના જીવોની રક્ષા કરવામાં દત્તાવધાન સંયમી મુનિને પોતાના
આસજન-માતાપિતાદિકમાં મમતાભાવ નહિ રાખવો બોધ્યો. તેનું વિવેચન કરે છે
—‘જે ગુણે સે મૂલદ્વાળે’ ઇત્યાદિ।

मूलम्—जे गुणे से मूलदूठाणे, जे मूलदूठाणे से गुणे इति से गुणदूठी महया परियावेणं पुणो पुणो वसे पमत्ते, तंजहा—माया मे पिया मे भइणी मे भज्जा मे पुत्ता मे धूआ मे णहुसा मे सहि-सयण-संगंथ-संथुआ मे विविक्तुवगरणपरिवट्टणभोयण-च्छायणं मे, इच्चत्थं गढिए लोए वसे पमत्ते अहो य राओ य परितप्पमाणे कालाकालसमुदूठाई संजोगदूठी अदूठालोभी आ-लुंप्पे सहसाकारे विणिविदूठचित्ते एत्थ सत्थे पुणो पुणो ।

छाया—यो गुणः समूलस्थानं, यन्मूलस्थानं तद्गुणः, इति स गुणार्थी महता परितापेन पुनः पुनः वसति प्रमत्तः, तद्यथा—माता मे पिता मे भगिनी मे भार्या मे पुत्रा मे दुहिता मे स्नुषा मे सखिस्वजनसंग्रन्थसंस्तुता मे, विविक्तोपकरणपरिवर्तनभोजनाच्छादनं मे, इत्यर्थं गृद्धो लोको वसति प्रमत्तः अहश्च रात्रिं च परितप्यमानः कालाकालसमुत्थायी संयोगार्थी अर्थालोभी आलुम्पः सहसाकारः विनिविष्टचित्तः अत्र शस्त्रे पुनः पुनः ॥१॥

शब्दार्थ—जो मुनि छहकाय के जीवों के स्वरूप को भली-भाँति जानकर कृत कारित अनुमोदित एवं मन, वचन, कायसे उनके आरंभ का त्याग कर देता है वह अपने कर्तव्यमार्ग का ज्ञाता कहा जाता है और वही गुणस्थान एवं मूलस्थान के ज्ञानपूर्वक कषायादिरूप लोक पर विजय प्राप्त करनेवाला होता है। अथवा—अपनी बुद्धि से या दूसरे किसी के कथन से अथवा तीर्थंकरों के उपदेश से या किसी आचार्य के समीप सुनकर यह जान लेता है कि जो गुण है वही मूलस्थान है। जो मूल है वही गुणस्थान है। इसलिये वह गुणार्थी अपरिमित दुःखसे

शब्दार्थ—जे मुनि छ कायना जियेना स्वप्नने लली लांती नालीने कृत-कारित अनुमोदित अने मन, वचन कायाथी तेना आरंभने त्याग करे छे ते पोताना कर्तव्य मार्गने ज्ञाता कहेवाय छे, अने ते गुणस्थान तेमज भूण स्थानना ज्ञानपूर्वक कषायादिरूप लोकपर विजय प्राप्त करना थाय छे. अथवा—पोतानी बुद्धिथी अगर नीज कोधना कथनथी अथवा तीर्थंकरेना उपदेशथी अथवा आचार्यने समीपे सांभनीने जे नाली ले छे के जे गुण छे ते भूणस्थान छे, जे भूण छे ते गुणस्थान छे. भाटे ते गुणार्थी—अपरिमित दुःखथी राग-

રાગદ્વેષરૂપપ્રમત્તદશાસંપન્ન હોતા હૈ। ઇસ પ્રકાર વહ ગુણાર્થી વારંવાર વિષયમેં આસક્ત હોતા હુઆ યહ માનતા હૈ કિ-યહ મેરી માતા હૈ, યહ મેરા પુત્ર હૈ, યહ મેરી પુત્રી હૈ, યહ મેરી બહુ હૈ, યે મેરે મિત્ર હૈ। યે મેરે માતામહ આદિ હૈ, યે મેરે સંબંધી જનોં કે સંબંધીજન હૈ, યે મેરે પરિચિત બન્ધુ હૈ, યે મેરે સુન્દર ઉપકરણ હૈ, યહ મેરા વિનિમય-એક વસ્તુકો બેંચકર ઉસકે પ્રાપ્ત સૂલ્ય સે ખરીદા હુઆ પદાર્થ હૈ, યે મેરે યાને કે પદાર્થ હૈ, યે મેરે પહિરને કે કપડે હૈ। ઇસ પ્રકાર યહ જીવ ઇન પૂર્વોક્ત પદાર્થોં મેં હી પ્રમાદી બના હુઆ હૈ। ઓર ઇનકે લિયે હી રાત-દિન શારીરિક, માનસિક એવં વાચનિક અનેક કષ્ટોં કો ફેલતા હુઆ કાલ-અકાલકે વિચાર સે રહિત હોકર મનમાના કાર્ય કરતા રહતા હૈ। કારણ કિ યહ સંયોગ કા અભિલાષી હૈ। ઇસલિયે સબ પ્રકારસે ધનકા અભિલાષી બના હુઆ હૈ। અનુચિત માર્ગ સે બી ધન કે સંગ્રહ કરને મેં જરા બી સંકોચ નહીં કરતા હૈ। લોભરૂપી મહાસર્પ સે ગ્રસિત હો કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્ય કે જ્ઞાન સે રહિત હો કર જિસ કિસી બી રીતિસે જો ધનકા સંગ્રહ કરતા હૈ ઉસકા નામ આલુમ્પ હૈ-યહ જીવ પ્રમાદી બનકર ઇસી પ્રકાર સે ધન કે સંગ્રહ કરને મેં લવલીન હોતા રહતા હૈ। ઇસતરહ યહ

દ્વેષરૂપપ્રમત્તદશાસંપન્ન થાય છે આ પ્રકારે તે ગુણાર્થી વારંવાર વિષયમાં આસક્ત થઈને માને છે કે-આ મારી માતા છે આ મારો પુત્ર છે, આ મારી પુત્રી છે, આ મારી વહુ છે, આ મારો મિત્ર છે, આ મારા માતામહ આદિ છે. આ મારા સંબંધીજનોના સંબંધીજન છે, આ મારા પરિચિત બંધુ છે, આ મારા સુંદર ઉપકરણ છે, આ મારો વિનિમય-એક વસ્તુને વેચીને તેની કિંમતથી ખરીદેલી વસ્તુ-છે, આ મારો આવનો પદાર્થ છે, આ મારા પહેરવાના કપડા છે. આ પ્રકારે આ જીવ આવા પૂર્વોક્ત પદાર્થોમાં જ પ્રમાદી બનેલો છે, અને તેના માટે જ રાતદિન, શારીરિક, માનસિક અને વાચનિક અનેક કષ્ટોને ઉઠાવતો કાળ અકાળના વિચારથી રહિત થઈને મનમાન્ય કાર્ય કરવા લાગે છે, કારણ કે તે સંયોગનો અભિલાષી છે. તેથી બધા પ્રકારથી ધનનો અભિલાષી બની રહે છે. આ અનુચિત માર્ગથી પણ ધનનો સંગ્રહ કરવામાં જરા પણ સંકોચ કરતો નથી. લોભરૂપી મહાસર્પથી ગ્રસિત હોઈને કર્તવ્ય અકર્તવ્યના જ્ઞાનથી રહિત થઈને કોઈ પણ રીતે જે ધનનો સંગ્રહ કરે છે તેનું નામ આલુમ્પ છે. આ જીવ પ્રમાદી બનીને આ પ્રકારથી ધનનો સંગ્રહ કરવામાં રચ્યો પચ્યો રહે છે, આ

ટીકા—અસ્યાધ્યયનસ્ય અનન્તરપરમ્પરસૂત્રૈરિત્થં સમ્બન્ધઃ—અનન્તરસૂત્રસમ્બન્ધો યથા—ષટ્કાયસ્વરૂપં સમ્યગ્જ્ઞાત્વા ત્રિકરણત્રિયોગેન તદારમ્ભં પરિત્યજતિ સ મુનિઃ પરિજ્ઞાતકર્મા ભવતિ, સ એવ ચ ગુણમૂલસ્થાનજ્ઞાનપૂર્વકં કષાયાદિલોકવિજયી ભવતિ । પરમ્પરસૂત્રસમ્બન્ધો યથા—સ્વબુદ્ધ્યા પરવ્યાકરણેન તીર્થઙ્કરોપદેશાદન્યેષાં અપને હિત ઔર અહિત કા કુછ ભી વિચાર ન કર સહસાકર્મકારી હો જાતા હૈ ઇસ પ્રકાર યહ શબ્દાદિવિષયોં મેં આસક્તચિત્ત હો ઉનકે રક્ષણકે સાધનોંકો સંગ્રહ કરનેકે લિયે અપને હિત ઔર અહિત કે વિવેક સે વિકલ બન રાત-દિન છહકાયકે જીવોંકે ઉપમર્દન કરનેમેં હી વારમ્બાર પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ ।

ટીકાર્થઃ—ઇસ અધ્યયન કા અનન્તર ઔર પરમ્પર સૂત્રોંસે સંબંધ હૈ—ઉસમેં અનન્તર સૂત્રોંકા સંબંધ ઇસ પ્રકાર હૈ—જો મુનિ છહકાય કે જીવોં કા સ્વરૂપ અચ્છી તરહ જાનકર કૃત કારિત ઔર અનુમોદિત એવં મન, વચ્ચન ઔર કાયસે ઉનકે આરંભ કા ત્યાગ કર દેતા હૈ વહી અપને કર્તવ્ય કો નિર્દોષ રીતિસે પાલતા હૈ, ઔર વહી અપને તપસંયમ મેં પૂર્ણરૂપ સે નિષ્ણાત બન જાતા હૈ । એસા વહ સંયમી જન ગુણસ્થાન ઔર મૂલસ્થાન કો જાનતા હુઆ કષાયાદિકરૂપ લોક પર વિજય પ્રાપ્ત કરને વાલા હો જાતા હૈ । પરમ્પર સૂત્રોંસે ઇસ અધ્યયન કા સંબંધ ઇસ પ્રકાર હૈ—વહ સંયમી જન અપની બુદ્ધિ સે યા દૂસરોં કે કથન સે અથવા તીર્થકર

રીતે પોતાના હિત અને અહિતનો જરા પણ વિચાર ન કરતાં સહસા કર્મકારી થઈ જાય છે. તેવી જ રીતે તે શબ્દાદિ વિષયોમાં આસક્ત ચિત્ત કરીને તેના રક્ષણને માટે રક્ષણના સાધનોનો સંગ્રહ કરવામાં પોતાના હિતાહિતનો વિચાર કર્યા વગર વ્યાકુળ રાતદિવસ છકાયના બોલોનું ઉપમર્દન (ધાત) કરવામાં જ વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે.

ટીકાર્થઃ—આ અધ્યયનનો અનન્તર અને પરમ્પર સૂત્રોથી સંબંધ છે. તેમાં અનન્તર સૂત્રોના સંબંધ આ પ્રકાર છે:—

જે મુનિ છકાયના બોલોનું સ્વરૂપ સારી રીતે જાણીને કૃત કારિત અને અનુમોદિત તેમજ મન, વચન, કાયથી તેના આરંભનો ત્યાગ કરે છે, તે પોતાના કર્તવ્યને નિર્દોષ રીતિથી પાળે છે, અને તે પોતાના તપસંયમમાં પૂર્ણરૂપથી નિષ્ણાત બને છે. એવો તે સંયમીજન ગુણસ્થાન અને મૂળસ્થાનનો જાણકાર કષાયાદિકરૂપ લોકપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાવાળા હોય છે. પરમ્પર સૂત્રોમાં આ અધ્યયનનો સંબંધ આ પ્રકાર છે—તે સંયમીજન પોતાની બુદ્ધિથી અગર બીજાના કથનથી અથવા તીર્થકર પ્રભુના ઉપદેશથી અથવા બીજા કોઈ આચાર્યની પાસેથી

વા કેપાશ્ચિદાચાર્યાદીનાં સમીપે ગત્તા જાનીયાત્ । કિં તદિત્યાહ 'જે ગુણે' इत्यादि । यो गुणः । गुण्यते=आवर्त्यते-चतुर्गतिषु गमनागमनादिरूपेण परिणम्यते आत्माऽनेनेति गुणः ।

પ્રસુ કે ઉપદેશ સે યા અન્ય કિસી આચાર્ય કે સમીપ સુનકર યહ જાન લેતા હૈ કિ જો ગુણ હૈ વહી સૂલસ્થાન હૈ इत्यादि । चार गतियों-नरकगति, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति और देवगति-में गमन और आगमन रूप से आत्मा जिसके द्वारा भ्रमण करता है उसका नाम गुण है । इस गुण शब्दका वाच्यार्थ-शब्दादिक विषय होता है । यह प्रत्येक इन्द्रियका अपना-अपना स्वतंत्र गुण है ।

જો મુનિ છહકાય કે જીવોં કે સ્વરૂપ કો 'અપને આપ યા કિસી કે ઉપદેશ સે જાનકર છકાય કે આરંભ સે વિરત હોતા હૈ વહ મુનિ અપને અંગીકૃત સંયમ કા નિર્દોષ રીતિ સે પાલન કરને વાલા હોનેસે કુશલ માના જાતા હૈ । છકાય કે આરંભ સે નિવૃત્તિ તવ તક સંભવ નહીં હો સકતી કિ જવ તક વહ પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં-ચાહે વે મનોજ્ઞ હોં ચાહે અમનોજ્ઞ-રાગદ્વેષ કરને કા ત્યાગ નહીં કરે, અતઃ યહ નિશ્ચિત હૈ કિ છહકાય કે આરંભ કા ત્યાગ, પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં રાગદ્વેષ કે ત્યાગ કરને સે હી હોતા હૈ । इनके विषयों में लोलुपी उनके आरंभ का

સાલગી એવું બાણુ છે કે 'જે ગુણુ છે તે મૂળસ્થાન છે' इत्यादि. चार गतियों नरकगति, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति અને देवगतिमा गमन અને आगमनइपथी आत्मा જે દ્વારા ભ્રમણ કરે છે તેનું નામ ગુણુ છે. આ ગુણુ-શબ્દનો વાચ્યાર્થ (મુખ્ય અર્થ) શબ્દાદિક વિષય થાય છે તે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોતપોતાનો સ્વતંત્ર ગુણુ છે.

જે મુનિ છ કાયના જીવોના સ્વરૂપને પોતાની બાલે, અગર ખીબના ઉપદેશથી બાણીને છ કાયના આરંભથી વિરત થાય છે, તે મુનિ પોતાના અંગીકૃત સંયમનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરનાર હોવાથી કુશળ માનવામાં આવે છે. બીજા સુધી પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયો જે મનોજ્ઞ કે અમનોજ્ઞ હોય તેમાં રાગ દ્વેષ રાખે ત્યા સુધી છ કાયના આરંભથી નિવૃત્તિ થતી નથી. તેથી તે નિશ્ચિત છે કે-છકાયના આરંભનો ત્યાગ પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોમાં રાગ દ્વેષનો ત્યાગ કરવાથી જ થાય છે. તેના વિષયોમાં મગ્ન રહેનાર તેના આરંભનો ત્યાગ કરી શકતા નથી.

યદ્વા ગુણ્યતે=વિશિષ્યતે નિશ્ચયનયેન શુદ્ધસ્વરૂપોઽપ્યાત્મા નરામરતિર્યગાદિ-
ભેદેન મિથ્યતે યેનેતિ ગુણઃ-શબ્દાદિરૂપઃ કામગુણઃ । સ એવ મૂલસ્થાનમ્ ।

મૂલસ્થાનપદસ્ય વ્યુત્પત્તિભેદેન. વહ્વોઽર્થો ભવન્તિ । યથા-મૂલં=મોહનીયં
ત્યાગ નહીં કરી શકતા-“ ન યારંભો વિના વહા-ન ચારમ્ભો વિના વધાત્ ”
ઇસ વાક્ય કે અનુસાર વિના હિંસા કે આરંભ નહીં હોતા-જહાં હિંસા હૈ
વહાં સર્વ પ્રકારસે સંયમ કા આરાધન નહીં હૈ । અતઃ નિર્દોષ સંયમ કો
પાલને કે લિયે છહકાય કે જીવોં કે આરંભ કરનેકા ત્યાગ અવશ્યર
કરના પડતા હૈ ।

ગુણ શબ્દકા અર્થ-શબ્દાદિક વિષય હૈ, ક્યોંકિ ઇન્હીંકે સેવન
સે યદ્વા આત્મા ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર મેં ભટકતા ફિરતા હૈ । આના-જાના
યહી તો એક વડા ભારી ગમનાગમન કા ચક્કર ઇસ જીવ કે પીછે પડા
હુઆ હૈ । કમી નરકમેં જાકર રોતા હૈ તો કમી માનવપર્યાય કી પ્રાપ્તિ
સે વિષયભોગોમેં અપને જન્મ કો નિષ્ફલ કર દેતા હૈ, કમી સ્વર્ગમેં
જાકર વહાં કી દિવ્ય ઋદ્ધિ આદિ પાકર ઇઠલાતા ગર્વિષ્ઠ હોતા હૈ, તો
કમી પશુપર્યાય મેં જાકર બિલખતા હૈ ।

યહી વાત-“ યો ગુણઃ ” ઇન શબ્દોંસે સૂત્રકારને પ્રકટ કી હૈ ।

મૂલસ્થાન શબ્દકા અર્થ પ્રકટ કરને કે લિયે ટીકાકાર કહતે હૈં કિ
મૂલસ્થાન શબ્દ કે વ્યુત્પત્તિ કે ભેદ સે અનેક અર્થ હોતે હૈં, જૈસે-“ મૂલં

“ ન યારંભો વિના વહા ” ન ચારમ્ભો વિના વધાત્ ”

આ વાક્ય અનુસાર હિંસા વિના આરંભ થતો નથી. જ્યાં હિંસા છે ત્યાં
સર્વ પ્રકારથી સંયમનું આરાધન નથી, માટે નિર્દોષ સંયમ પાળવામાં છકાય
જીવોનો આરંભ કરવાનો ત્યાગ અવશ્યર કરવો પડે છે.

ગુણ શબ્દનો અર્થ-શબ્દાદિક વિષય છે, કારણ કે તેના સેવનથી આ
આત્મા ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ભટકતો ફરે છે. જાવું-આવું એ તો એક ભારી
ગમનાગમનનું ચક્કર આ જીવના પાછળ પડ્યું છે. કોઈ વખત નરકમાં જઈ
રહે છે તો ક્યારેક માનવપર્યાયની પ્રાપ્તિથી વિષયભોગોમાં પોતાના જન્મને
નિષ્ફળ કરે છે. ક્યારેક સ્વર્ગમાં જઈ ત્યાંની દિવ્યઋદ્ધિ આદિ જોઈને ગર્વિષ્ઠ
થાય છે. ક્યારેક પશુપર્યાયમાં જઈ રહે છે.

આ વાત-“ યો ગુણઃ ” આ શબ્દોથી સૂત્રકારે પ્રકટ કરી છે. મૂલસ્થાન
શબ્દનો અર્થ પ્રકટ કરવાને ટીકાકાર કહે છે કે-મૂલસ્થાન શબ્દના વ્યુત્પત્તિના
લેહથી અનેક અર્થ થાય છે. જેમ-“ મૂલં સંસારસ્તસ્ય સ્થાનમાશ્રય. કારણમ્ ”

તસ્ય સ્થાનમાશ્રયઃ । અથવા સંસારસ્ય મૂલભૂતત્વાન્મૂલમિવ મૂલં કારણં જ્ઞાનાવરણાદિરૂપમષ્ટવિધં કર્મ, તસ્ય સ્થાનમાધારઃ । યદ્વા મૂલમિતિ નરામરનારકતિર્યગ્લક્ષણસ્ય સંસારસ્ય કારણં કષાયાસ્તેષાં સ્થાનમાશ્રયો મૂલસ્થાનમ્, યતો મનોજ્ઞામનોજ્ઞશબ્દાદિપ્રાપ્તૌ કષાયાણામુદયો ભવતિ તેન સંસાર ઇતિ ।

યદ્વા ‘મૂલ’-મિતિ પ્રધાનં, ‘સ્થાન’-મિતિ કારણં, મૂલં ચ તત્સ્થાનં ચેતિ મૂલસ્થાનં, શબ્દાદિક એવ કામગુણઃ, કષાયા વા પ્રધાનં કારણં સંસારસ્ય ભવતીત્યાશયઃ ।

સંસારસ્તસ્ય સ્થાનમાશ્રયઃ કારણમ્ ” અર્થાત-મૂલ નામ સંસાર કા હૈ સ્થાન નામ કારણ કા હૈ-સંસાર કે જો કારણ હૈં ઉનકા નામ મૂલસ્થાન હૈ । વે શબ્દાદિક વિષય અથવા કષાય હૈં । અથવા-મૂલ-મોહનીય કા જો સ્થાન-આશ્રય હૈં ઉસકા નામ મૂલસ્થાન હૈ । અથવા-સંસારકા મૂલ સ્વરૂપ હોનેસે મૂલકે જૈસા જો હૈ, વહ મૂલ હૈ-જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકાર કે પૌદ્ગલિક કર્મોંકા નામ મૂલ હૈં ઓર ઉસકા જો આધાર હૈં ઉસકા નામ મૂલસ્થાન હૈ । અથવા-મૂલ નામ-મનુષ્યગતિ, દેવગતિ, તિર્યગ્ગતિ ઓર નરકગતિરૂપ સંસારકે કારણભૂત કષાયોંકા મી હૈ, ઉનકે અધાર કા નામ મૂલસ્થાન હૈ, વે શબ્દાદિક વિષય હૈં, ક્યોંકિ મનોજ્ઞ ઓર અમનોજ્ઞ શબ્દાદિક વિષયોંકી પ્રાપ્તિ હોને પર કષાયોંકા ઉદય હોતા હૈં ઓર ઇસીસે જીવકો સંસાર કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ ।

પ્રધાન કારણકો મી મૂલસ્થાન કહતે હૈં, સંસાર કે પ્રધાન કારણ શબ્દાદિક વિષય અથવા કષાય હૈં ।

અર્થાત્ મૂળ નામ સંસારનું છે સ્થાન નામ કારણનું છે સંસારનું જે કારણ છે તેનું નામ મૂળસ્થાન છે. તે શબ્દાદિક વિષય અથવા કષાય છે, અથવા મૂળ-મોહનીયનું જે સ્થાન-આશ્રય છે તેનું નામ મૂળસ્થાન છે, અથવા સંસારનું મૂળ સ્વરૂપ હોવાથી મૂળના જેવું છે, તે મૂળ છે. જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારના પૌદ્ગલિક કર્મોંનું નામ મૂળ છે, અને તેનો જે આધાર છે તેનું નામ મૂળસ્થાન છે. અથવા મૂળ નામ, મનુષ્યગતિ, દેવગતિ, તિર્યગ્ગતિ અને નારકગતિરૂપ સંસારના કારણભૂત કષાયો પણ છે, તેના આધારનું નામ મૂળસ્થાન છે, તે શબ્દાદિક વિષય છે કારણ કે મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ શબ્દાદિક વિષયોની પ્રાપ્તિ થવાથી કષાયોનો ઉદય થાય છે, અને તેથી જીવને સંસારની પ્રાપ્તિ થાય છે

પ્રધાન કારણને પણ મૂળસ્થાન કહે છે. સંસારનું પ્રધાન કારણ શબ્દાદિક વિષય અથવા કષાય છે,

ગુણ-મૂલ-સ્થાનયોઃ પરસ્પરમપેક્ષા વર્તતે યથા-યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં, યન્મૂલ-સ્થાનં તદ્ ગુણ ઇતિ તદુપાત્તાનાં વિષયકપાયાદીનામણ્ડપક્ષિવદ્ અનાદિઃ કાર્યકારણ-ભાવો યથા-પક્ષિતોઽણ્ડમ્, અણ્ડાચ્ચ પક્ષી સંજાયતે । એવમેવ મૂલસ્થાનાદ્રુણો, ગુણાચ્ચ મૂલસ્થાનમિતિ ।

અત્ર ચ સપ્તમ્યન્તપાઠમાશ્રિત્યેવં યોજના—યો ગુણે ગુણેષુ વા વર્તતે સ મૂલ-સ્થાને મૂલસ્થાનેષુ વા વર્તતે, યથાત્મા શબ્દાદિકે કામગુણે વર્તતે સ એવ સંસાર-મૂલે કપાયાદિસ્થાને વર્તતે—ઇતિ, એવં દર્શિતરીત્યા ગુણમૂલસ્થાનાનાં કાર્યકારણ-

ગુણ ઓર મૂલસ્થાન, ઇનકી પરસ્પર મેં અપેક્ષા હૈ, ઇસ વાતકો પ્રકટ કરને કે લિયે “યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં, યન્મૂલસ્થાનં તદ્ ગુણઃ” યહ વાક્ય ભગવાનને કહા હૈ । જિસ પ્રકાર પક્ષી સે અણ્ડા પૈદા હોતા હૈ ઓર અણ્ડાસે પક્ષી પૈદા હોતા હૈ ઁસી પ્રકાર મૂલસ્થાન સે ગુણ ઓર ગુણસે મૂલસ્થાન હોતા હૈ । ઇનકા યહ પરસ્પર કાર્ય-કારણભાવ અનાદિ કાલકા હૈ । પંચેન્દ્રિય કે વિષયોસે જીવકો કષાયભાવ ઓર કષાયભાવસે પંચેન્દ્રિયોકે વિષયકા ગ્રહણ હોતા હૈ । “જે ગુણે સે મૂલદ્વાણે” ઇસ વાક્યમેં “જે” કી છાયા “યઃ” માનકર “ગુણે” કો સપ્તમી વિભક્તિકા એક-વચન માનકર ઇસ પ્રકારસે સી અર્થ કિયા જા સકતા હૈ કિ જો ગુણમેં સ્થિત હૈ વહ મૂલ સ્થાનમેં સ્થિત હૈ । અર્થાત્-જો આત્મા શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોકે વિષય સેં લવલીન હૈ વહી આત્મા સંસારકે મૂલ કારણ કષાયાદિ સ્થાનમેં લવલીન હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇસ પદ્ધતિ સે ગુણ ઓર મૂલ સ્થાનોકા પરસ્પરમેં સૂત્રકારને કાર્ય-કારણભાવ પ્રકટ કિયા હૈ । “ઇતિ” શબ્દ

ગુણુ અને મૂળસ્થાન, એની પરસ્પરમાં અપેક્ષા છે, આ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે “યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં યન્મૂલસ્થાનં તદ્ ગુણઃ” આ વાક્ય લગવાને કહ્યું છે—જે પ્રકારે પક્ષીથી ઇંડુ પેદા થાય છે અને ઇંડીથી પક્ષી પેદા થાય છે તે પ્રકાર મૂળસ્થાનથી ગુણુ અને ગુણુથી મૂળસ્થાન થાય છે. તેનો પરસ્પર કાર્ય-કારણ ભાવ અનાદિ કાળનો છે. પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોથી હવને કષાયભાવ અને કષાયભાવથી પાંચ ઇન્દ્રિયોનો વિષય ગ્રહણ થાય છે. “જે ગુણે સે મૂલદ્વાણે” આ વાક્યમાં “જે”ની છાયા “યઃ” માનીને “ગુણે”ને સપ્તમી વિભક્તિનું એકવચન માનીને આ પ્રકારે પણ અર્થ થાય છે કે જે ગુણમાં સ્થિત છે તે મૂળસ્થાનમાં સ્થિત છે. અર્થાત્ જે આત્મા શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં સંચલે છે તે આત્મા સંસારનું મૂળ કારણ કષાયાદિ સ્થાનમાં સંચલે છે. આ પ્રકારે આવી પદ્ધતિથી ગુણુ અને મૂળસ્થાનનો પરસ્પરમાં સૂત્રકારે કાર્યકારણ-

ભાવો વર્ણિતઃ । “યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં, યન્મૂલસ્થાન તદ્ ગુણઃ”-ઇત્યનેન કિમા-
યાતમિત્યાહ-“ઇતિ સ ગુણાર્થી” ઇતિ ।

ઇતિર્હેતૌ, યતો હિ સંસારસ્થાઃ સર્વેઽપિ પ્રાણિનો ગુણાર્થિનઃ સન્તિ, અનાદિકાલત
આત્મનો મોહાવેશેનાવેષ્ટિત્વાત્, અતઃ સ ગુણાર્થી કષાયાદિમૂલસ્થાને વર્તતે ।
ગુણસ્ય=શબ્દાદિગુણસ્ય અર્થઃ=પ્રયોજનં યસ્ય સ ગુણાર્થી । યદ્વા-ગુણે=શબ્દાદૌ
અર્થોઽનુરાગો યસ્ય સ ગુણાર્થી । સર્વો હિ પ્રાણિગણઃ પ્રાયશઃ કામગુણાર્થી ભવતિ ।
શબ્દાદિગુણગણસ્યાલાભે તં મુહુરિચ્છતિ, સમ્પ્રાપ્તસ્ય નાશે ચ શોકાવિષ્ટો ભવતિ ।
મહતા=અપરિમિતેન પરિતાપેન=માનસિકકાચિકવાચિકેન દુઃખેન પ્રમત્તઃ, પ્રમાદોઽત્ર
રાગદ્વેષરૂપસ્તદ્વાન્ પ્રાણી વિષયેષુ રાગાધિક્યેન પ્રવર્તતે, ઇષ્ટવિષયાપ્રાપ્તાવનિષ્ટોપગમે
હેત્વર્થ મેં હૈ-અસકા અભિપ્રાય યહ હૈ-સંસાર કે સમસ્ત પ્રાણી ગુણાર્થી
હૈ, ક્યોંકિ યે અનાદિકાલ સે હી મોહ કે આવેશ સે યુક્ત હૈ, ઇસલિયે
ગુણાર્થી આત્મા-કષાયાદિ મૂલસ્થાન મેં સ્થિત હી હૈ, શબ્દાદિક પાંચઇન્દ્રિયોં
કા વિષય જિસકા પ્રયોજન હૈ વહ, અથવા શબ્દાદિક વિષયોં મેં જિસે
અનુરાગ હૈ વહ ગુણાર્થી હૈ । પ્રાયઃ સાંસારિક સમસ્ત પ્રાણી શબ્દાદિક
વિષયોં કા પ્રાર્થી હોતા હૈ અનકે નહીં મિલને પર અન્હેં પ્રાપ્ત કરનેકી વહ
વાર ૨ ચેષ્ટા કરતા રહતા હૈ । મિલને પર વે નષ્ટ ન હો જાવેં-ઇસ પ્રકાર
કા વહ પ્રયત્ન ભી કરતા રહતા હૈ । યદિ પ્રાપ્ત હુઅ વે નષ્ટ હો જાતે હૈ-તો
અનકે અભાવ મેં અત્યંત શોકાકુલ વહ માનસિક વાચિક ઔર કાચિક
કષ્ટોં કો સેલતા હૈ । સત્ય હૈ, પ્રમત્ત-રાગદ્વેષાવિષ્ટ આત્મા વિષયોં મેં
રાગકી અધિકતા સે હી તો પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ । તથા ઇષ્ટ વસ્તુકે નહીં પ્રાપ્ત
હોને પર અથવા પ્રતિકૂલ વસ્તુ કે મિલને પર અસ વિષયસે દ્વેષ કરતા

ભાવ પ્રકટ કર્યો છે “ઇતિ” શબ્દહેત્વર્થમા છે. તેનો અભિપ્રાય એ છે-સંસારના
સમસ્ત પ્રાણી ગુણાર્થી છે, કારણ કે તે અનાદિકાળથી મોહના આવેશથી યુક્ત છે
માટે ગુણાર્થી આત્મા કષાયાદિ મૂલસ્થાનમા સ્થિત જ છે, શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિ-
યોના વિષય જેનું પ્રયોજન છે તે, અથવા શબ્દાદિક વિષયોમાં જેને અનુરાગ છે
તે ગુણાર્થી છે સાસારિક સમસ્ત પ્રાણી શબ્દાદિક વિષયોના પ્રાર્થી થાય છે, તેના
અભાવમા તેની પ્રાપ્તિ માટે વારવાર ચેષ્ટા કરતા જ રહે છે. મળવાથી ફરી તેનો
નાશ ન થાય તેનો પ્રયત્ન કરતા રહે છે. કદાચ પ્રાપ્ત થયેલાઓનો નાશ થાય
તો તેના અભાવમા તે અત્યંત શોકાકુળ બને છે, અને માનસિક વાચિક અને
કાચિક કષ્ટોને ભોગવે છે સત્ય છે, પ્રમત્ત રાગદ્વેષાવિષ્ટ આત્મા વિષયોમા રાગની
અધિકતાથી જ પ્રવૃત્તિ કરે છે, તથા ઇષ્ટ વસ્તુ પ્રાપ્ત નહિ થવાથી અથવા પ્રતિકૂળ

ચ તં વિપયં દ્રેષ્ટિ । એવંવિધઃ સંસ્ત્ર પુનઃ પુનઃ=વારં વારં વસતિ=વિપયાસત્ત્યા
તિષ્ઠતિ, મૂર્ચ્છિતો ભવતીત્યર્થઃ । રાગદ્વેષો હિ યત્ર યત્ર પ્રાયશો ભવતસ્તત્તદર્શયતિ ।
તદ્વથા—“માતા મે પિતા મે ” ઇત્યાદિ ।

‘ઇયં મે માતા, અયં મે પિતા’ એવંરૂપો માતરિ પિતરિ ચ રાગસ્તુ સંસારેઽ-
નાદિકાલતો મોહનીયસદ્ભાવાદ્ વાલ્યાવસ્થાયાં લાલનપાલનાદિકારકત્વાચ્ચોપ-
જાયતે । રાગાવિષ્ટચેતા હિ ચિન્તયતિ—કથં મયિ જીવતિ સતિ મે માતા-પિતરો
શ્રુત્પિપાસાદિકં દુઃસ્વમનુભવતઃ—ઇતિ, ઇત્થં ત્રિચિન્ત્ય વહુપ્રાણિસંહારજનિતપાપવાન્
કૃષિવાણિજ્યસેવાદિરૂપાં વૃત્તિં સ્વીકરોતિ । સમુદ્રમપિ દુરુલ્લઙ્ઘં ગોષ્પદં મન્વાનો દ્વીપા-
દ્વીપાન્તરં પરિભ્રમતિ । અકાર્યશતમપિ કરોતિ । અહો કીદૃશં રાગસ્ય સામ્રાજ્યમ્ ? ।

હૈ । ઇસ પ્રકાર વહુ ઉન વિષયોં મેં આસક્તિ-પરિણામ સે હી પ્રવૃત્તિ કરતા
રહતા હૈ । સંસારી જીવોં કે રાગ ઓર દ્વેષ કે વિષયભૂત પદાર્થોં કો સૂત્રકાર
સ્પષ્ટ કરતે હુએ કહતે હૈ—“માતા મે” ઇત્યાદિ । યહ મેરી માતા હૈ, યહ મેરા
પિતા હૈ, ઇસ પ્રકાર કા ઉનમેં ઇસ જીવ કો જો રાગ હોતા હૈ ઉસકા પ્રધાન
કારણ મોહ હૈ, વહુ મોહ ઇસ સંસારમેં અનાદિકાલ સે ઇસ જીવ કે સાથ
લગા હુઆ હૈ । તથા દૂસરા કારણ વાલ્યાવસ્થા મેં ઉન્હોંને ઇસકા પાલન
પોષણ ક્રિયા હૈ । રાગાવિષ્ટ યહ જીવ સદા યહી વિચારતા રહતા હૈ કિ મેરે
જીતે-જી મેરે માતા-પિતા કમીં મીં ખૂંચ પ્યાસ આદિ સે જનિત દુઃખોંકા
અનુભવ ન કરેં । ઇસ રુઆલસે વહુ કૃષિ, વાણિજ્ય આદિ અનેક આરંભોં
કો કરતા હૈ, જિસસે હિંસાદિજન્ય અનેક પાપોંકા સંચય કરતા
રહતા હૈ, દુરુલ્લંઘ્ય સમુદ્રકો મીં પારકર ઇક દ્વીપસે દૂસરે દ્વીપોંમેં જાકર

વસ્તુ મળવાથી તે વિષયમાં દ્વેષ કરે છે. આ પ્રકારે તે આવા વિષયોમાં આસક્તિ-
પરિણામથી પ્રવૃત્તિ કરે છે. સંસારી જીવોના રાગ અને દ્વેષના વિષયભૂત પદાર્થોને
સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે અને કહે છે—“માતા મે” ઇત્યાદિ. આ મારી માતા છે,
આ મારા પિતા છે. આ પ્રકારે જીવને જે રાગ થાય છે તેનું પ્રધાન કારણ મોહ
છે. આ મોહ આ સંસારમાં અનાદિ કાળથી જીવની સાથે લાગેલો છે. તથા બીજું
કારણ બાલ્યાવસ્થામાં તેણે તેનું પાલન કર્યું છે. રાગાવિષ્ટ આ જીવ હિંસા
એ જ વિચારતો રહે છે કે મારા માતા પિતા મારા જીવતાં કેઈ વખત પણ
ભૂખ તરસથી દુઃખી ન થાય. આવા બ્યાસથી તે કૃષિ, વાણિજ્ય, આદિ અનેક
આરંભ કરે છે જેનાથી હિંસાદિજન્ય અનેક પાપોનો સંચય કરે છે. દુરુલ્લંઘ્ય
સમુદ્રને ઝોળાંગીને એક દ્વીપથી બીજા દ્વીપોમાં જઈ વ્યાપાર ધંધા નિમિત્તે

“ભગિની મે ભાર્યા મે પુત્રા મે દુહિતા મે સ્તુષા મે” । ઇતિ ।

ભગિની=સ્વસા, સા મે=મમ, અસ્યાં રાગકારણં તુ સમાનમાતાપિતૃજત્વમ્ । ભાર્યાયાં રાગસ્તુ યાવજ્જીવં સ્વાનુકૂલ્યેન વર્તનશીલત્વાત્ । પુત્રે ચ રાગકારણં સેવા-
દિકાર્યપ્રવર્તકત્વમ્ । સ્તુષા=પુત્રવધૂઃ તસ્યાશ્ચ રાગકારણં સકલગૃહકાર્યસમ્પા-
દકત્વમ્, પુત્રાદ્યુત્પાદનદ્વારા પૌત્રાદિસુખાદ્યનુભવકર્તૃત્વશ્ચ । ચેતસિ ચ મૂઢો
વિચિન્તયતિ-કદા મે પુત્રો ભવિતા, કદા મદીયમઢ્ઢમલઢ્ઢરિપ્યતિ । જાતે પુત્રે ચ
કથમયં વિદ્યાધનાદિકં પ્રાપ્સ્યતિ । પત્ની કદા માં સુખિતા આનન્દયિષ્યતિ । કદા
મે દુહિતા દૌહિત્રં જનયિષ્યતિ, શ્વશુરકુલે ધનાદિકં પ્રાપ્સ્યતિ ન વેતિ । તદર્થં ચાનેક-
વ્યાપાર ધંધા કે નિમિત્ત ભ્રમણ કરતા હૈ । પૈસા કમાને કે લિયે અનેક
અકાર્ય ઓ કર ડાલતા હૈ । દેખો રાગકા સામ્રાજ્ય કૈસા આશ્ચર્યકારી હૈ ।

યહ મેરી બહિન, ઇસ પ્રકાર ડસમૈં રાગકા કારણ એક માતા-પિતાસે ઉત્પન્ન
હોના હૈ । સ્ત્રીમૈં રાગકા હેતુ યહ હૈ કિ-જીવન અર તક વહ અપને અનુકૂલ
પ્રવૃત્તિ કરતી હૈ । પુત્રમૈં રાગ હોનેકા કારણ યહ હૈ કિ વહ રાતદિન સેવાદિ
કાર્યમૈં તલ્લીનતા રખતા હૈ । પુત્રીમૈં ઓ-યહ અપનેસે પૈદા હુઈ યહી રાગકા
કારણ હૈ । સમ્પૂર્ણ ઘરકે આરકો સંભાલને તથા પુત્રાદિકોં કો ઉત્પન્ન કરને
દ્વારા પૌત્રાદિસુખકા અનુભવ કરાનેસે પુત્રવધૂ મૈં રાગ હોતા હૈ । પુત્ર-કલ-
ત્રાદિ મૈં મહામૂઢ બનકર યહ જીવ વિચારતા હૈ-મેરે પુત્ર કવ હોગા, કવ
મેરી ગોદી કો વહ સુશોભિત કરેગા, કૈસે વહ વિદ્યાધ્યયન એવં ધનાદિક
પ્રાપ્ત કરેગા, મેરી સ્ત્રી કવ મુઝે સ્વયં સુખ ચૈન ભોગતી હુઈ આનંદિત
કરેગી । મેરી પુત્રી કવ દોહિતે કો જન્મ દેગી, વહ અપને શ્વશુરગૃહ મૈં

ભ્રમણ કરે છે પૈસા કમાવા માટે અનેક અકાર્ય પણ કરે છે બુવો । રાગનું
સામ્રાજ્ય કેવું આશ્ચર્યકારી છે ?

આ મારી બહેન છે, એ પ્રકારના રાગનુ કારણ એક માતા-પિતાથી ઉત્પન્ન
થવુ તે સીમા રાગનું કારણ, બવનભર તે પોતાના અનુકૂળ પ્રવૃત્તિ કરે છે
પુત્રમાં રાગનું કારણ તે રાતદિવસ સેવાદિ કાર્યમાં તલ્લીનતા રાખે છે પુત્રીમાં
પણ રાગનુ કારણ પોતાથી પેદા થઈ છે માટે સમ્પૂર્ણ ઘરનો ભાર સંભાળવામાં
તથા પુત્રાદિકોની ઉત્પત્તિ દ્વારા પૌત્રાદિસુખનો અનુભવ કરાવવાથી પુત્રવધુમાં રાગ
પેદા થાય છે પુત્રકલત્રાદિમાં મહામૂઢ બનીને આ બધું વિચારે છે કે-મારે પુત્ર
ક્યારે થશે, ક્યારે મારી ગોદીમાં તે બેસીને મને સુશોભિત કરશે, કેવી રીતે તે
વિદ્યાધ્યયન તેમજ ધનાદિક પ્રાપ્ત કરશે મારી સ્ત્રી ક્યારે તેણી સુખચેન ભોગવતી
મને આનંદિત કરશે. ક્યારે મારી પુત્રી દોહિતને જન્મ આપશે, તેણીના

સાવધાનુષ્ઠાનપરાયણો ભવતિ । અસૌ મમકારમહાગ્રહગૃહીતસ્વાન્તો નિતાન્તં પરિત-
પતિ । રાગાન્ધો હિ રાગગ્રાહગ્રહિલઃ પરમરમણીયમપિ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિકં વ્યર્થમેવેતિ
નિશ્ચિન્વાનો મોહશય્યાશયાનો માર્યાપુત્રમગિનીગૃહક્ષેત્રારામરમણીયમપિ રમણીયં
મન્યતે ।

તથા ‘સખિ-સ્વજન-સંગ્રન્થ-સંસ્તુતા મે’ इति । સखा ચ સ્વજનશ્ચ સંગ્રન્થશ્ચ
સંસ્તુતશ્ચેતિ इतरेतरयोगद्वन्द्वसमासः । સखा=મિત્રં, સ્વજનો=માતામહાદિઃ, સંગ્રન્થઃ=
સ્વજનસ્યાપિ સમ્બન્ધી યથા-માતામહઃપાલકાદિઃ । સંસ્તુતો મુહુર્મુહુર્દર્શનસમ્મેલના-
ધનકી અધિકારિણી હોગી યા નહીં । ઇસ પ્રકાર યહ અમત્વરૂપી મહા-
ગ્રહ-પિશાચાદિ દ્વારા યુક્ત હોકર રાતદિન ડનકી ચિન્તામેં હી અપને
મીતર હી મીતર જલતા રહતા હૈ, ટીક હૈ રાગસે અંધા હુઆ પ્રાણી અસુ-
ન્દર મી પરપદાર્થોં કો સુન્દર માને તથા ઉપાદેય-સુન્દર પદાર્થોં કો હેય-
અસુન્દર માને, ઇસમેં કૌનસી અચરજકી વાત હૈ । સંસારમેં સમ્યગ્જ્ઞા-
નાદિક ઇસ જીવકે ઉપાદેય ધર્મ હૈ-અન્હેં યહ રાગરૂપી ગ્રહ સે ગ્રસ્ત
હોકર અશોભનીય માનતા હૈ, તથા જો સ્ત્રી, પુત્ર, મગિની, ઘર-ક્ષેત્ર
આદિ અશોભનીય પરપદાર્થ હેય હૈ, અન્હેં મોહરૂપી પ્રવલ મદિરાકે નરો
સે આકુલિનબુદ્ધિ હોતા હુઆ રમણીય-ઉપાદેય માન રહા હૈ । તથા
“સખિ-સ્વજન-સંગ્રન્થ-સંસ્તુતા મે” સખા-મિત્ર, સ્વજન-માતામહાદિ,
સંગ્રન્થ-સ્વજન કે સંબંધીજન, સંસ્તુત-વારંવાર દેખને સે મેલ મિલાપ
સે જિનકે સાથ પરિચય હુઆ હૈ વે, અથવા-પૂર્વ મેં પરિચિત પિતા
કાકા વગૈરહ, પશ્ચાત્-પરિચિત સસુર સાલે વગૈરહ, વે મિત્ર સ્વજન

શ્વશુરગૃહમાં ધનની અધિકારિણી થશે કે નહિ ? આ પ્રકાર તે મમત્વરૂપી મહાગ્રહ
-પિશાચાદિ દ્વારા યુક્ત બનીને રાતદિન તેની જ ચિન્તામાં પોતાના ભીતરની
અંદર જ બળતો રહે છે. ટીક છે, રાગથી અંધ બનેલ પ્રાણી અસુન્દર પણ પર-
પદાર્થોને સુન્દર માને તથા ઉપાદેય-સુન્દર પદાર્થોને હેય - અસુન્દર માને, આમાં
કોઈ અચરજની વાત નથી. સંસારમાં સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક આ જીવનો ઉપાદેય ધર્મ
છે. તેને રાગરૂપી ગ્રહથી અશોભનીય માને છે. તથા જે સ્ત્રી, પુત્ર, ભગિની, ઘર, ક્ષેત્ર
આદિ અશોભનીય પરપદાર્થ હોય છે, તેને મોહરૂપી પ્રબળ મદિરાના નશાથી આકુલિત
બુદ્ધિ થઈ રમણીય-ઉપાદેય માને છે તથા “સખિ-સ્વજન-સંગ્રન્થ-સંસ્તુતા મે”
મળા-મિત્ર, સ્વજન-માતામહાદિ, સંગ્રન્થ-સ્વજનના સંબંધીજન, સંસ્તુત-
વારંવાર દેખવાથી, મેળમેળાપથી જેની સાથે પરિચય થયો છે તે. અથવા
પૂર્વમાં પરિચિત પિતા, કાકા વિગેરે. પાછળથી પરિચિત સસુર સાલે વિગેરે. આ

દિના પરિચિતઃ પિતા પિતૃવ્યાદિઃ । પશ્ચાત્સંસ્તુતઃ=શ્વશુરશ્યાલકાદિઃ । ઇતિ ચેમે
મે સર્વે સર્વદા સુખિનો ભવેયુરિતિ ચિન્તયન્ રાગગ્રસ્તો ભવતિ ।

‘વિવિક્તોપકરણપરિવર્તનભોજનાઞ્છાદનં મે’ વિવિક્તં=સુન્દરં મનોહરં પ્રભૂતં
વા ઉપકરણં=ગૃહારામાદિકં હસ્ત્યશ્વરથાસનપલ્યઙ્કાદિકં ચ, પરિવર્તનં=વિનિમયઃ
હસ્ત્યશ્વાદે-મહાર્ઘસમયે વિક્રયણમ્, તન્મૂલ્યેનૈવ સુલભસમયે ચાનેકેષાં ક્રયણમ્ ।
મયૈવૈકેન હસ્તિનાઽનેકે હસ્ત્યાદયઃ સમ્પાદિતાઃ-ઇત્યાદિલક્ષણં પરિવર્તનમ્ । કચિત્

સંગ્રન્થ સંસ્તુત મેરે હૈં ઓર इनके लिये भी यह “ ये सदा सुखी
होवें ” इस प्रकार विचार करता हुआ राग से ग्रस्त होता है ।
अपने संबंधीजन को तथा संबंधीजन के संबंधीजन को सुखी होने
की कल्पना करना संयमी जन के लिये राग होनेसे बंध का ही कारण
शास्त्रकारों ने प्रकट किया है । इस प्रकार का राग मोहकी पर्याय होने से
संयमी जन के लिये स्वानुभूति में बाधक होता है, अतः इससे निवृत्ति
ही सर्वश्रेष्ठ है ।

‘વિવિક્તુવગરણ’—ઇત્યાદિ-મનોહર અથવા પ્રચુર ઉપકરણરૂપ
ઘર, બગીચા, હસ્તી, અશ્વ, રથ, આસન, પલંગ વગેરે વસ્તુએ વિવિક્ત
ઉપકરણ કહલાતે હૈં । પરિવર્તન શબ્દ કા અર્થ વિનિમય હૈ, તેજી કે સમય
હસ્તિ વગેરે પદાર્થોં કા વેચના તથા મંદી કે સમય ઉસી પૈસે સે અનેક
હસ્ત્યાદિક પદાર્થોં કા ખરીદના यह विनिमय है । कहीं “ विचित्र ” यह
पाठान्तर भी है—जिसका अर्थ होता है कि घर में शोभा के लिये अनेक

મિત્ર, સ્વજન, સંગ્રન્થ, સંસ્તુત મારા છે. તેને માટે પણ તે “ તેઓ સદા સુખી
રહે ” આ પ્રકારનો વિચાર કરીને રાગથી ગ્રસ્ત થાય છે. પોતાના સંબંધીજનના
તથા સંબંધીના સંબંધી તેના સુખની કલ્પના કરવી સંયમીજનને માટે રાગરૂપ
હોવાથી બંધનું જ કારણ શાસ્ત્રકારે પ્રકટ કર્યું છે. આ પ્રકારનો રાગ મોહની
પર્યાય હોવાથી સંયમીજનને માટે સ્વાનુભૂતિમાં બાધક થાય છે માટે તેમાં નિવૃત્તિ
જ સર્વશ્રેષ્ઠ છે

વિવિક્તોપકરણ—ઇત્યાદિ-મનોહર અથવા પ્રચુર ઉપકરણરૂપ ઘર, બગીચા
હસ્તી, અશ્વ, રથ, આસન, પલંગ વિગેરે વસ્તુઓને વિવિક્ત ઉપકરણ કહે છે.
પરિવર્તન શબ્દનો અર્થ વિનિમય છે. તેજના સમયમાં હસ્તિ વિગેરે
પદાર્થોનું વેચવું અને મંદિના સમયમાં તે ખેંચાવી હસ્તિ આદિ પદાર્થોનું ખરીદવું
તે વિનિમય છે. કોઈ કોણે “ વિચિત્ર ” આવું પાઠાન્તર પણ છે જેનો અર્થ

‘વિચિત્રે’-તિ પાઠઃ । તત્ર વિચિત્રમુપકરણં ગૃહાદૌ શોભાર્થે બહુશિલ્પિવિનિર્મિતં નાનાવિધં નયનમનોહારિ વસ્તુજાતં મયૈવ સમ્પાદિતમ્ ।

ભોજનં=મોદકાદિકં, મયૈવેદશં ભોજ્યં ભુક્તમ્ । આચ્છાદનં=વસ્ત્રમ્=એકેન્દ્રિય-નિષ્પન્નં કાર્પાસાદિકં, વિકલેન્દ્રિયનિષ્પન્નં ચીનાંશુકાદિકં, પંચેન્દ્રિયનિષ્પન્નં રત્ન-કમ્બલાદિકમ્, એતત્સર્વં કદાચિદપિ મા વિનાશમાપ્નુયાત્ । યત્ર યત્ર વિષયે રાગસ્ત-

કારીગરોં દ્વારા નિર્મિત નેત્ર ઓર મન કો લુભાનેવાલી અનેક પ્રકાર કી વસ્તુઓં કા સંગ્રહ કરના । પ્રમત્ત-દશા-સમ્પન્ન પ્રાણી એસા ગર્વ કરતા હૈ કિ મૈને હી ઇસ ઘર મેં એક હાથી કી જગહ અનેક હાથિયોં કા સંગ્રહ કિયા હૈ, તથા પહિલે ઇસ ઘરમેં શોભા કે લિયે કોઈ સુન્દર વસ્તુ નહોં થી વહ મૈને હી અવ ઇન તમામ નેત્ર ઓર મન કો લુભાનેવાલી વસ્તુઓં કો એકત્રિત કિયા હૈ ।

મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થ ભોજન હૈ । આચ્છાદન નામ વસ્ત્ર કા હૈ । એકેન્દ્રિય સે નિષ્પન્ન કાર્પાસ (સૂતી) આદિક, વિકલેન્દ્રિયોં સે પૈદા હુઆ ચીનાંશુક (રેશમી) વગૈરહ, તથા પંચેન્દ્રિયોં સે બનાયા ગયા રત્ન-કમ્બલાદિક પદાર્થ મેરે કમી નષ્ટ ન હો જાવેં । ઇસ પ્રકાર કે વિચારોં સે વહ મોહી જીવ સદા સંતપ્ત રહા કરતા હૈ । પ્રતિકૂલ ભોજન મિલને પર પહિલે સુન્દર સ્વાધે ગયે ભોજન કી યાદ કર વ્યાકુલ-ચિત્ત હો જાતા હૈ, સોચતા હૈ-મૈને પહિલે એસા ભોજન કમી નહોં કિયા, સુન્દર ૨ મોદ-કાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થોં કા હી સેવન કિયા હૈ । યહ સર્વ ઇસ પ્રકાર કી

એ થાય છે કે ઘરમાં શોભાને માટે કારીગરોદ્વારા આંખ અને મનને લોભાવવા-વાળી અનેક પ્રકારની વસ્તુઓનો સંગ્રહ કરવો.

પ્રમત્તદશાસમ્પન્ન પ્રાણી એવો ગર્વ કરે છે કે-મેં આ ઘરમાં એક હાથીની જગ્યા અનેક હાથિઓનો સંગ્રહ કર્યો છે, તથા પહેલાં આ ઘરમાં શોભા માટે કોઈ સુંદર વસ્તુ ન હતી પણ મેં જ હમણાં આ તમામ નેત્ર તથા મનને લોભાવવાળી વસ્તુઓ લેગી કરી છે.

મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થ ભોજન છે. આચ્છાદન નામ વસ્ત્રનું છે. એકેન્દ્રિયથી નિષ્પન્ન સૂતરાઉ આદિક, વિકલેન્દ્રિયોથી પૈદા થયેલાં રેશમી વિગેરે, તથા પંચેન્દ્રિયોથી બનાવેલાં મારાં રત્નકંબલાદિક પદાર્થોનો નાશ ન થઈ જાય, આવા પ્રકારના વિચારોથી તે મોહી જીવ સદા સંતપ્ત રહે છે. પ્રતિકૂળ ભોજનના મળવાથી પહેલાં સુંદર ખાધેલાં ભોજનની યાદ કરીને વ્યાકુળચિત્ત થાય છે. અને વિચારે છે કે-મેં પહેલાં આવું ભોજન કોઈ વખત ખાધું નથી. સુંદર મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થો જ

સ્યૈવેષ્ટતાત્તસ્યાલાભે દ્વેષ ઉપજાયતે, અતો યસ્મિન્ રાગસ્તસ્મિન્નેવ દ્વેષો ભવતિ-ઇતિ સ્વભાવસિદ્ધમ્ । इत्यर्थे गृद्धो लोक इत्येवमर्थमेतेषामर्थं मातापितृ-पुत्रभार्यादिष्वेव रागादिकारणेषु यावज्जीवति तावत्प्रमत्तो 'ममेमे, एषां चाह'-मित्यनिशं रागादिमान् अज्ञानमोहितचित्तो वसति=तिष्ठति तत्र मूर्च्छा प्राप्नोती-

વિચારધારા કા પ્રધાન કારણ પદાર્થોં મેં અતિગાય ઉસકી ગૃહ્ણતા હી હૈ । વ્યોંકિ ઇસસે હી ઉસે જિસ ૨ વિષય મેં રાગ હોતા હૈ વહી ઉસે ઇષ્ટ પ્રતીત હોતા હૈ । અનિષ્ટ પ્રાપ્ત હોને પર યા ઇચ્છિત પદાર્થ ન મિલને પર ઉસકી આત્મા મેં ઉસસે દ્વેષ કી ભાવના જાગૃત હોતી હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇન રાગાદિકોં કે કારણભૂત ઇન માતા પિતા સ્ત્રી આદિક પદાર્થોં મેં ગૃહ્ણ બના હુઆ યહ જીવલોક જબ તક જીતા હૈ તબ તક પ્રમત્ત-દશાયુક્ત હી બના રહતા હૈ । 'યે પદાર્થ મેરે હૈ-મૈં ઇનકા હૂં' ઇસ પ્રકાર કી કલ્પના સે રાતદિન રાગાદિક ભાવોં સે લિપ્ત બનકર અજ્ઞાન સે આચ્છાદિત હો ઉન્હોં પદાર્થોં મેં આસક્ત હોતા રહતા હૈ । 'મમકાર' યહ જીવોં કા એક પ્રવલ શત્રુ હૈ । બકરે કી તરહ " મૈ-મૈ " ઇસ પ્રકાર કે શબ્દ કો કરતા હુઆ યહ જીવ અન્ત મેં કસાઈ કે તુલ્ય ઇસ ભયંકર કાલ કે દ્વારા ગ્રસિત હો જાયા કરતા હૈ । મમકાર કો પ્રવલ શત્રુ ઇસ લિયે બત-લાયા ગયા હૈ કિ જિસ પ્રકાર અપને વલિષ્ટ શત્રુ કે સમક્ષ જીવ વિવેક-શૂન્ય બન વાવલા જૈસા હો જાતા હૈ, ઠીક ઇસી પ્રકાર ઇસ મમકાર કે સમક્ષ મી જીવ અપને હિત ઔર અહિત કે મ્હાન સે રહિત હો ઉન્મત્ત

આધેલાં છે આ બધા પ્રકારની વિચારધારાનું મુખ્ય કારણ પદાર્થોમાં તેની અતિશય ગૃહ્ણતા જ છે કારણ કે આથી તેને જે જે વિષયમાં રાગ થાય છે તેથી તે ઇષ્ટ પ્રતીત થાય છે અનિષ્ટ પ્રાપ્ત થવાથી અથવા ઇચ્છિત પદાર્થ ન મળવાથી તેના આત્મામાં તેથી દ્વેષની ભાવના જાગૃત થાય છે. આ પ્રકાર આવા રાગાદિકના કારણભૂત માતા-પિતા સ્ત્રી આદિક પદાર્થોમાં ગૃહ્ણ બનીને ન્યા સુધી આ જીવલોક જીવે છે ત્યાં સુધી પ્રમત્તદશાયુક્ત રહે છે. 'આ પદાર્થ મારો છે, હું તેનો છું.' આવા પ્રકારની કલ્પનાથી રાત દિવસ રાગાદિક ભાવોથી લિપ્ત બનીને અજ્ઞાનથી આચ્છાદિત જાનવાળા હોઈ તેવા પદાર્થોમાં આસક્ત હોય છે મમકાર એ જીવોનો એક પ્રબળ શત્રુ છે. બકરાની માફક "મૈ-મૈ" આ પ્રકારના શબ્દ બોલતા બોલતા આ જીવ અંતમાં કસાઈતુલ્ય ભયંકર કાળદ્વારા ગ્રસિત બને છે. મમકારને પ્રબળ શત્રુની ઉપમા તે માટે આપી છે કે જેમ પોતાના બલિષ્ઠ શત્રુ સમક્ષ જીવ વિવેકશૂન્ય બની આવળો (ગાંડો) બને છે, ઠીક તે પ્રકાર આ મમકારની સમક્ષ પણ જીવ પોતાના હિતાહિતના ભાનથી રહિત થઈ ઉન્મત્ત જેવો બને છે. તે વખતે

ત્યર્થઃ । મમકારો હિ પ્રાણિનો મહાઝ્ઞત્રુઃ, મમશબ્દં કુર્વાણો હિ કરાલકાલવ્યાલ-
કવલિતો ભવતિ પ્રાણિગણઃ । યથા ચોક્તમ્ ।

અશનં મે વસનં મે, જાયા મે બન્ધુવર્ગો મે ।

इति मे-मे-कुर्वाणं, कालवृको हन्ति पुरुषाजम् ॥

પુત્રા મે ભ્રાતા મે સ્વજના મે ગૃહકલત્રવર્ગો મે ।

इति कृत-मे-मे-शब्दं, पशुमिव मृत्युर्जनं हरति ॥

પુત્રકલત્રપરિગ્રહમમત્વદોષૈર્નરો વ્રજતિ નાશમ્ ।

कृमिक इव कोशकारः, परिग्रहाद् दुःखमाप्नोति ॥

જૈસા બન જાતા હૈ । ઉસે ઉસ સમય ઇસ વાત કા ભી ધ્યાન નહીં હોતા
કિ મેરા સ્વરૂપ કયા હૈ ઓર ઇન પરપદાર્થોં કા સ્વરૂપ કયા હૈ ? કસાઈ
કા બકરા જિસ પ્રકાર “મૈ-મૈ” કરતા હુઆ કસાઈ કે દ્વારા અંત મેં
મૌત કે ઘાટ ઉતાર દિયા જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર “મૈ-મૈ” કરનેવાલા
યહ જીવ ભી અન્ત મેં એક ન એક દિન-ઇસ દુષ્ટ ભયંકર કાલ કે દ્વારા
મારા જાતા હૈ । કહા ભી હૈ—

“અશનં મે વસનં મે, જાયા મે બન્ધુવર્ગો મે ।

इति ‘मे-मे’-कुर्वाणं, कालवृको हन्ति पुरुषाजम् ॥ १ ॥

પુત્રા મે ભ્રાતા મે, સ્વજના મે ગૃહ-કલત્ર-વર્ગો મે

इति कृत-‘मे-मे’-शब्दं, पशुमिव मृत्युर्जनं हरति ॥ २ ॥

પુત્ર-કલત્ર-પરિગ્રહ-મમત્વદોષૈર્નરો વ્રજતિ નાશમ્,

कृमिक इव कोशकारः, परिग्रहाद् दुःखमाप्नोति ॥ ३ ॥ ” इति ।

इनका अर्थ ऊपर आ चुका है ।

તેને એ પણ ધ્યાન નથી હોતું કે માઈ સ્વરૂપ શું છે અને આ પરપદાર્થોંનું સ્વરૂપ
શું છે ? કસાઈનો બકરો જેમ “મૈ-મૈ” કરતો કસાઈદ્વારા અંતમાં મૌતને તાળે થાય
છે તે પ્રકારે “મૈ-મૈ” કરવાવાળા આ જીવ પણ અંતમાં એક દિવસ આ દુષ્ટ ભયંકર
કાળદ્વારા મરે છે. કહું પણ છે—

અશનં મે વસનં મે, જાયા મે બન્ધુવર્ગો મે ।

इति ‘मे-मे’-कुर्वाणं, कालवृको हन्ति पुरुषाजम् ॥ १ ॥

પુત્રા મે ભ્રાતા મે, સ્વજના મે ગૃહકલત્રવર્ગો મે ।

इति कृत-‘मे-मे’-शब्दं, पशुमिव मृत्युर्जनं हरति ॥ २ ॥

પુત્રકલત્રપરિગ્રહમમત્વદોષૈર્નરો વ્રજતિ નાશમ્ ।

कृमिक इव कोशकारः, परिग्रहाद् दुःखमाप्नोति ॥ ३ ॥ इति ॥

આનો અર્થ ઉપર આવેલ છે,

इति समकारग्राह्यहीतविग्रहेण पुरुषेण सततं चिन्त्यते । शब्दादिविषयासक्तो नरो मातापित्राद्यर्थं धननिवहोपार्जनपरो दुःखमेवानुभवति । सदैव परितप्यमानो भ्रमतीत्याह—“अहश्च रात्रिश्च परितप्यमानः” । अहो=दिनं रात्रिं, चशब्दात्पक्षमास-

इन्द्रियों के शब्दादिक विषयों में गृह्य पुरुष इन माता पिता आदि को सुखी करने के लिये धनादि कमाने के अभिप्राय से सदा दुःख का ही अनुभव करता है और रातदिन संक्लिष्टपरिणाभी हो उसके संग्रह की चिन्ता में इतस्ततः घूमता है, एवं शारीरिक और कायिक अनेक कष्टों का सामना करता है ।

“अहश्च रात्रिं च ” यहाँ पर “ च ” शब्द से पक्ष-मास-ऋतु-वर्ष आदि का ग्रहण होता है । विचारना रहता है कि कब ऐसा अवसर मिले कि जब मैं बाहर जाऊँ और क्रय विक्रय की वस्तुओं को खरीद बेच कर उनसे खूब लाभ उठाऊँ । कौनसी ऐसी जगह है जहाँ इस वस्तु की अधिक खपत होनेसे विक्री तेजी से होती है । कौनसी चीज खरीदने में इस समय अधिक फायदा होगा?, तथा कौनसी वस्तुका संग्रह करने से भविष्य में अधिक लाभ होगा?, इत्यादि बातों की ही उसके हृदय में सदा उथल-पुथल मची रहती है । यहाँ तक कि सोते समय में अथवा सोते हुए उसे इसी बात के स्वप्न आते हैं और कभी २ बह इन्हीं विचारों को लेकर बड़बड़ाने भी लगता है । उसे निद्रा भी ठीक २ नहीं आती । विचारा

પાત્ર ઇન્દ્રિયોના શબ્દાદિક વિષયોમા ગુથાયેલો પુરુષ માતા-પિતા આદિને મુખી કરવાના હેતુથી ધન કમાવામાં જ હમેશા હુ.ખનો અનુભવ કરે છે અને રાત દિવસ વ્યાકુળ બની તેના સંગ્રહની ચિતામાં અહીં-તહીં ધૂમ્મા કરે છે, અને શારીરિક માનસિક અને કાયિક અનેક કષ્ટોનો સામનો કરે છે

“અહશ્ચ રાત્રિં ચ ” આ ઠેકાણે “ ચ ” શબ્દથી પક્ષ, માસ, ઋતુ, વર્ષ આદિનું ગ્રહણ થાય છે. વિચારતો રહે છે કે ક્યારે એવો વખત મળે જ્યારે હું બહાર જાઉં અને કયવિકયની વસ્તુઓને ખરીદી વેચી તેનાથી ખૂબ લાભ ઉઠાવું એવી કયા જગ્યા છે જ્યાં અમુક વસ્તુઓ સસ્તી મળતી હોય તથા એવી કયા જગ્યા છે જ્યાં આ વસ્તુઓ અધિક ખપત હોવાથી તેજથી વેચાઈ જાય આ વખતે કઈ ચીજ ખરીદવાથી ફાયદો થશે. તથા કઈ વસ્તુનો સંગ્રહ કરવાથી ભવિષ્યમાં અધિક લાભ થશે. ઇત્યાદિ વાતોની તેના હૃદયમાં સદા ઉથલપાથલ મચી રહે છે એટલે મુઘી કે મુવા વખતે તથા મુતા મુતાં તેને આ વિષયનાં સ્વપ્ના આવે છે અને કોઈ વખતે તે આવા વિચારોથી બડબડવા પણ લાગે છે. તેને નિદ્રા પણ ઠીક

तुवर्पादिकं ग्राह्यम् । प्रवृत्तसावधानुष्ठानः परि=सर्वतः, तप्यमानः=शारीरिकमानसिक-
वाचिकदुःखेन क्लिश्यमानः अन्तर्दाहदग्धो भवतीति यावत् ।

कदा मे विदेशगमनं ? कदा कुत्र भाण्डनयने मे लाभो भविता ? कीदृशश्च क्रय-
विक्रयावसरः ? इत्यनिशं तप्यमानः । पुनः कथम्भूतः ? कालाकालसमुत्थायी,
कालः=कार्यकरणावसरः, अकालस्तद्विपरीतः, सम्=सर्वथा उत्थातुं शीलं यस्येति स
समुत्थायी, कालाकालयोः समुत्थायी कालाकालसमुत्थायी । यथैवावसरे करोति
तथैवानसरेऽपि करोतीत्यर्थः । यद्वा यथाऽनवसरे न करोति तथैवावसरेऽपि न
करोति । मातापितृपुत्रभार्याद्यर्थनिखिलकार्यव्यासक्तान्यमनस्कतया ग्रहग्रहिल इव
कालाकालज्ञानकलाविकलो भवति ।

रात दिन इन्हीं विचारों में मग्न बनकर संतप्त होता रहता है । काल और
अकाल का वह कुछ भी विचार नहीं करता, उसके जैसा ही अवसर वैसा
ही अनवसर, उसके लिये अवसर और अनवसर में कोई भेद नहीं ।
वह तो अपनी इच्छानुसार अनर्गल प्रवृत्ति किया करता है । अथवा जिस
प्रकार भूताद्याविष्ट प्राणी भले बुरे की परीक्षा नहीं कर सकता है, वह तो
मनमाना ही काम करता है, उसी प्रकार मातापिता आदि सांसारिक
पदार्थों में ही आसक्त मन वाला प्राणी अन्य आत्महितकारी कार्यों से
उपेक्षितवृत्तिवाला बन काल-अकाल की ज्ञानकलासे सदा विकल ही
बना रहता है । अवसर न होने पर जिस प्रकार कार्य नहीं करना उसी
प्रकार अवसर में भी कार्य नहीं करना, जभी कार्य करने की इच्छा जागृत
हुई चाहे समय हो चाहे असमय हो कार्य करने लग जाता है । जैसे कोई
अरिमर्दन नाम का राजा जो शत्रुओं को नष्ट करने में शक्तिशाली था

आवती नथी. जियारा सतदिन आवा न विचारेमां भग्न गनी संतप्त थाय छे.
डाग अडागने ते नरा पण विचार करेता नथी. तेने जेवो अवसर तेवो न
अनवसर. तेने भाटे अवसर अने अनवसरमां डोई लेह नथी, ते तो पोतानी
इच्छानुसार अनर्गल प्रवृत्ति करे छे. अथवा जेभ भूताद्याविष्ट-(भूतना पणगा-
पाणां) लडा-भूराने विचार नथी करी शकता ते तो मनमान्यो काम करे छे. ते
प्रकारे माता-पिता आदि सांसारिक पदार्थोमां न आसक्त मनवाणां आली अन्य
आन्महितकारी धर्योधी उपेक्षित वृत्तिवाणा गनी डाग-अडागनी ज्ञानकलाधी
इमेमां विकल न गने छे. अवसर नहि होवाधी जेभ धर्य नथी करेता तेभ
अवसरमां पानु धर्य नथी करेता पण न्यां इच्छा थई छे समय-असमय जेथां
बिना काम करवा लागे छे. जेभ अरिमर्दन नामने राजा समयने वाह्यार नहि

યદિ મનુષ્યો દીર્ઘાયુરજરામરો વા ભવેત્તદા યુક્તો માતા-પિત્રાદિષ્વભિષ્વજ્ઞ-
સ્તસ્ય, કિન્તુ નૈવમસ્તિ। મનુષ્યશિરસિ ચ મૃત્યુરનિશં ભ્રમતિ। જરાજીર્ણસ્ય
કર્તવ્યાકર્તવ્યશૂન્યસ્ય પ્રાણિનો વાર્ધકે માતાપિત્રાદિષ્વભિષ્વજ્ઞેઽપિ તદર્થપ્રયાસાક્ષ-
મત્વેન મૂઢતા જાયતેતિ દર્શયતિ-“અપ્પં ચ” ઇત્યાદિ।

મૂલમ્-અપ્પં ચ ચ્ચલુ આઉયં ઇહમેગેસિં માણવાણં, તં જહા
સોયપરિણાણોહિં પરિહાયમાણોહિં, ચક્ષુપરિણાણોહિં પરિહાય-
માણોહિં, ઘાણપરિણાણોહિં પરિહાયમાણોહિં, રસણપરિણાણોહિં
પરિહાયમાણોહિં, ફાસપરિણાણોહિં પરિહાયમાણોહિં, અભિક્કંતં
ચ ચ્ચલુ વયં સંપેહાય તઓ સે ઇગયા મૂઢભાવં જણયઈ (સૂ. ૨)

યદિ મનુષ્ય દીર્ઘાયુ હોતા અથવા અજર અમર હોતા તો માતા-
પિતાદિક મેં ઇસકા મમત્વ કરના મી યુક્તિયુક્ત થા, કિન્તુ એસા તો
હૈ નહીં ક્યોંકિ નિરન્તર હી ઇસકે મસ્તક પર મૃત્યુ ઘૂમતી રહતી હૈ।
ઔર જરા સે સમયાનુસાર યહ જીર્ણકાય મી હોતા રહતા હૈ। ઇસ પરિ-
સ્થિતિ મેં મૃત્યુ ઔર જરા કે વશ મેં પડે હુએ ઇસકે હૃદય મેં સદા
આકુલ-વ્યાકુલ પરિણામોં કી પરિણતિ જાગૃત હોતી રહતી હૈ તબ ઉસમેં
હી રાતદિન મગ્ન હુઆ યહ જબ સ્વયં અપને કર્તવ્યાકર્તવ્ય કે બોધ સે
હી વિકલ રહતા હૈ તબ યહ અપને સગે-સમ્બન્ધી માતાપિતાદિક કા
અભિષ્વંગ-સંબંધ હોને પર મી અપની તરફ સે ઉનકે લિયે થોડા સા
મી પ્રયાસ-ઉચ્ચમ નહીં કર સકતા હૈ, જબ પ્રયાસ નહીં કર સકતા હૈ
તબ વહ કિંકર્તવ્યમૂઢ બન જાતા હૈ। ઇસી વાતકો સૂત્રકાર પ્રકટ
કરતે હૈ:-‘અપ્પં ચ ચ્ચલુ આઉયં’ ઇત્યાદિ।

કહાય મનુષ્ય દીર્ઘાયુ હોત અથવા અજર અમર હોત તો માતાપિતાદિકમાં
તેનું મમત્વ કરવું યુક્તિયુક્ત હતું પણ એવું તો છે નહિ, કારણકે નિરંતર તેના
ગાથા ઉપર મોત ભમે છે, અને ઘડપણથી સમયાનુસાર તે જીર્ણકાય પણ થાય
છે. આવી પરિસ્થિતિમા મૃત્યુ અને જરાની વશમાં પડેલો તેના હૃદયમાં હમેશાં
આકુળ-વ્યાકુળ પરિણામોની પરિણતિ બાબત રહે છે તેમાં જ રાતદિવસ મગ્ન
થએલો તે પોતે પોતાના કર્તવ્યા-કર્તવ્યના બોધથી જ વિકળ રહે છે ત્યારે તે
પોતાના સગાં સંબંધી માતા પિતાદિકના અભિષ્વંગ-સંબંધ હોવા છતાં પણ
પોતાની તરફથી તેમને માટે થોડો પણ પ્રયાસ કરી શકતો નથી:-જ્યારે પ્રયાસ
કરી શકતો નથી ત્યારે તે કિંકર્તવ્યમૂઢ બની બાક છે. પૂર્વોક્ત વાતને જ સૂત્રકાર
પ્રકટ કરે છે-‘અપ્પં ચ ચ્ચલુ આઉયં’ ઇત્યાદિ

ભાવક્ષણસ્તુ દ્વિવિધઃ—કર્મભાવક્ષણો, નોકર્મભાવક્ષણશ્ચ । કર્મભાવક્ષણશ્ચ કર્મ-
 ગામુપશમ-ક્ષયોપશમ-ક્ષયા-ન્યતમપ્રાપ્तिરુપઃ । તત્રોપશમચારિત્રક્ષણ ઉપશમશ્રેણ્યાં
 ૨ દુષ્ણમા, ૩ દુષ્ણમ-સુષમા, ૪ સુષમદુષ્ણમા, ૫ સુષમા, ૬ સુષમ-
 સુષમા, એ હૈં । इसी प्रकार अवसर्पिणी के भी—(१) सुषमसुषमा, (२)
 सुषमा, (३) सुषमदुष्षमा, (४) दुष्षमसुषमा, (५) दुष्षमा, (६) दुष्षम-
 दुष्षमा, ये ६ भेद हैं । जिसकाल में जीवों के ज्ञानादि शुभभावों की
 वृद्धि तथा आयुष्य अवगाहना आदि की और वर्ण गन्ध रस स्पर्श के
 पर्यायों की वृद्धि होती है वह उत्सर्पिणी है, और जिसकाल में जीवों के
 ज्ञानादि शुभभावों का हास, तथा आयुष्य अवगाहना आदि का और
 वर्ण गन्ध रस स्पर्श की पर्यायों का हास होता है वह अवसर्पिणी है । इनमें
 अवसर्पिणी के सुषमदुष्षमा—तीसरे काल में, दुष्षमसुषमा—चतुर्थकाल
 में और दुष्षमा—पंचमकाल में, तथा उत्सर्पिणी के दुष्षमसुषमा—तीसरे
 काल में और सुषमदुष्षमानामक चतुर्थकाल में सर्वविरतिरूप सामा-
 यिक की प्राप्ति जीव को होती है । यह कथन नवीन धर्मप्राप्ति की अपेक्षा
 से कहा है । पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षासे संहरणावस्था में लोकत्रय में सम-
 स्तकालों में सर्वविरतिरूप सामायिक की उपलब्धि जीव को हो सकती है ।

ભાવક્ષણ દો પ્રકાર કા હૈ ૧ કર્મભાવક્ષણ ઓર ૨ નોકર્મભાવક્ષણ ।

૬ ભેદ—૧ દુષ્ણમદુષ્ણમા, ૨ દુષ્ણમા, ૩ દુષ્ણમસુષમા, ૪ સુષમદુષ્ણમા, ૫
 સુષમા, ૬ સુષમસુષમા, એ છે. આ પ્રકારે અવસર્પિણીના પણ (૧) સુષમસુપમા,
 (૨) સુષમા (૩) સુષમદુષ્ણમા, (૪) દુષ્ણમસુષમા, ૫ દુષ્ણમા, ૬ દુષ્ણમદુષ્ણમા,
 આ છ ભેદ છે. જે કાળમાં જીવોને જ્ઞાનાદિ શુભ ભાવોની વૃદ્ધિ તથા આયુષ્ય
 અવગાહના આદિની અને વર્ણ ગંધ રસ સ્પર્શના પર્યાયોની વૃદ્ધિ થાય છે તે
 ઉત્સર્પિણી છે, અને જે કાળમાં જીવોને જ્ઞાનાદિ શુભ ભાવોનો હાસ તથા આયુષ્ય
 અવગાહના આદિનો અને વર્ણ ગંધ રસ સ્પર્શની પર્યાયોનો હાસ થાય છે તે
 અવસર્પિણી છે. તેમાં અવસર્પિણીના સુષમદુષ્ણમા—ત્રીજા કાળમાં દુષ્ણમસુષમા—ચોથા
 કાળમાં અને દુષ્ણમા—પંચમ કાળમાં, તથા ઉત્સર્પિણીના દુષ્ણમસુષમા—ત્રીજા કાળમાં
 અને સુષમદુષ્ણમા નામક ચોથા કાળમાં સર્વવિરતિરૂપ સામાયિકની પ્રાપ્તિ જીવને
 થાય છે. આ કથન નવીન ધર્મપ્રાપ્તિની અપેક્ષાથી કહ્યું છે. પૂર્વપ્રતિપન્નની
 અપેક્ષાથી સંહરણાવસ્થામાં લોકત્રયમાં સમસ્ત કાળોમાં સર્વવિરતિરૂપસામાયિકની
 ઉપલબ્ધિ જીવને થાય છે.

ભાવક્ષણ બે પ્રકારના છે. ૧ કર્મભાવક્ષણ અને ૨ નોકર્મભાવક્ષણ. આ

ચારિત્રમોહનીય કર્મકા-ક્ષય, ક્ષયોપશમ ઓર ઉપશમ-રૂપ અવસ્થાઓ મેં સે કિસી મી અવસ્થારૂપ હોના-સો કર્મભાવક્ષણ હૈ। ઉસમેં ઉપશમ-શ્રેણીમેં ચારિત્રમોહનીય કર્મકી ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે ઉપશમ હોને પર અન્ત-મુદ્ધર્તપરિમિત જો ઉપશમચારિત્ર હોતા હૈ વહ ઉપશમચારિત્ર કા ક્ષણ હૈ। ચારિત્રમોહનીય કર્મકી ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય હોને પર અન્ત-મુદ્ધર્તપરિમિત જો છદ્મસ્થ ઓર યથાખ્યાત ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ તત્સ્વરૂપ ક્ષાયિકચારિત્ર કા ક્ષણ હૈ। ક્ષયોપશમચારિત્રક્ષણ ચારિત્ર મોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતા હૈ। ઉસકા કાલ ઉત્કૃષ્ટ દેશ ઝન એક કરોડ પૂર્વકા હૈ।

કર્મભાવક્ષણ કા મતલબ હૈ-ચારિત્ર કે આવારક-(રોકનેવાલા) ચારિત્રમોહનીય કર્મકે ક્ષય, ક્ષયોપશમ, ઓર ઉપશમ કી પ્રાપ્તિકા અવસર। ઉસમેં ચારિત્રમોહનીય કર્મ કી અપ્રત્યાખ્યાનાવરણાદિ ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે ઉપશમસે જો ચારિત્ર પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસકા નામ ઉપશમ-ચારિત્ર હૈ। યહ ઉપશમશ્રેણિ મેં હોતા હૈ, ઇસકા કાલ અન્તમુદ્ધર્ત હૈ। અપ્રત્યાખ્યાનાવરણાદિ ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય સે જીવ કો જો ચારિત્ર પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસકા નામ ક્ષાયિકચારિત્ર હૈ। ઉપશમશ્રેણીમેં ઉપશમચારિત્ર ઓર ક્ષયકશ્રેણી મેં ક્ષાયિકચારિત્ર હોતા હૈ। ઉપશમ-

મોહનીય કર્મનો-ક્ષય, ક્ષયોપશમ અને ઉપશમ-રૂપ અવસ્થાઓમાં કોઈ પણ અવસ્થારૂપ થવું, તે કર્મભાવક્ષણ છે, તેમાં ઉપશમશ્રેણીમાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓનો ઉપશમ થવાથી અન્તમુદ્ધર્ત પરિમિત જે ઉપશમચારિત્ર થાય છે તે ઉપશમચારિત્રનો ક્ષણ છે. ચારિત્રમોહનીય કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓનો સર્વથા ક્ષય થવાથી અન્તમુદ્ધર્તપરિમિત જે છદ્મસ્થ અને યથાખ્યાત ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે તત્સ્વરૂપ ક્ષાયિકચારિત્રનું ક્ષણ છે, ક્ષયોપશમચારિત્ર ક્ષણનું ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમથી થાય છે, તેનો કાળ ઉત્કૃષ્ટ દેશઝન એક કરોડ પૂર્વનો છે.

કર્મભાવક્ષણનો મતલબ છે ચારિત્રનો આવારક (રોકવાવાળા) ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષય, ક્ષયોપશમ અને ઉપશમની પ્રાપ્તિનો અવસર, તેમાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની અપ્રત્યાખ્યાનાદિ ૨૧ પ્રકૃતિઓનું ઉપશમ જે ચારિત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ ઉપશમચારિત્ર છે. આ ઉપશમશ્રેણીમાં થાય છે. તેનો કાળ અન્તમુદ્ધર્ત છે. અપ્રત્યાખ્યાનાદિ ૨૧ પ્રકૃતિઓના સર્વથા ક્ષયથી જીવને જે ચારિત્ર પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ ક્ષાયિકચારિત્ર છે. ઉપશમશ્રેણીમાં ઉપશમચારિત્ર અને ક્ષયકશ્રેણીમાં ક્ષાયિકચારિત્ર થાય છે, ઉપશમશ્રેણીના સ્થાન ૮-૯-૧૦ અને ૧૧માં

चारित्रमोहनीयोपशमे सत्यन्तर्मुहूर्तपरिमितः, चारित्रमोहनीयक्षये चान्तर्मुहूर्त-परिमितश्छद्मस्थयथाख्यातचारित्रप्राप्तिरूपः । क्षयोपशमचारित्रक्षणः कर्मणः क्षयो-पशमेन भवति, स चोत्कृष्टतो देशोनपूर्वकोटिर्वर्षपरिमितो विज्ञेयः ।

नोकर्मभावक्षणश्च—आलस्यमोहावर्णवादस्तम्भादेरभावे सति सम्यक्त्वादिसामायिकोपलब्धिरूपः । आलस्यमोहाद्युपहतः संसारोच्छेदनसमर्थं मनुष्यभवं प्राप्यापि न बोध्यादिकं लभत इति तात्पर्यम् । केचित्तु—नोकर्मभावक्षणं 'रिक्तक्षण' इत्यभिदधति ।

श्रेणी के स्थान ८ वां ९ वां १० वां और ११ वां गुणस्थान हैं । १२ वें गुणस्थान तक जीव को छद्मस्थावस्था रहती है । यथाख्यातचारित्र ११ वें १२ वें १३ वें और १४ वें गुणस्थान में होता है । छद्मस्थावस्था के चारित्र को छद्मस्थचारित्र और संपूर्ण मोहनीय कर्म के क्षय अथवा उपशम से आत्मा के शुद्ध स्वरूप में स्थिर होने को यथाख्यात चारित्र कहते हैं । अनंतानुबंधी आदि १२ कषायों का उदयभावी क्षय तथा उन्हींके निषेकों का सदवस्थारूप उपशम और संज्वलन तथा नोकषाय का यथासंभव उदय होने पर जो चारित्र होता है उसे क्षायोपशमिक चारित्र कहते हैं । इसका दूसरा नाम सरागसंयम भी है ।

नोकर्मभावक्षण—आलस्य, मोह, अवर्णवादादिक के अभाव होने पर जो सम्यक्त्वादिरूप सामायिक की प्राप्ति हुआ करती है वह नोकर्म-भावक्षण है, क्योंकि आलस्य और मोहादिक से उपहत हुआ प्राणी संसार का निर्मूल उच्छेदन करने में समर्थ मनुष्य भवको प्राप्त करके

गुणस्थान छे. क्षयकश्रेणिनुं स्थान ८-९-१० अने १२मुं गुणस्थान छे. १२ भा गुणस्थान सुधी भवने छद्मस्थावस्था रहे छे. यथाख्यातचारित्र ११-१२-१३ अने १४ भां गुणस्थानभां थाय छे. छद्मस्थावस्थाना चारित्रनुं छद्मस्थ चारित्र अने संपूर्ण मोहनीय कर्मना क्षय अथवा उपशमथी आत्माना शुद्ध स्वरूपभां स्थिर होवुं तेने यथाख्यातचारित्र कहे छे. अनंतानुबंधी आदि १२ कषायोनो उदयभावी क्षय तथा तेना निषेकेनो सदवस्था रूप उपशम. अने संज्वलन तथा नोकषायनुं यथासंभव उदय होवा पर ने चारित्र थाय छे तेने क्षायोप-शमिकचारित्र कहे छे. तेनुं गीणुं नाम सरागसंयम पणु छे.

नोकर्मभावक्षण—आलस, मोह, अवर्णवादादिकनो अभाव यथापर ने सम्यक्त्वादिरूप सामायिकनी प्राप्ति थया करे छे ते नोकर्मभावक्षण छे, कारण के आलस अने मोहादिकथी उपहत थयेत प्राणी संसारनो निर्मूल उच्छेदन

અત્રાયં પ્રકરણાર્થઃ સંક્ષિપ્તઃ—દ્રવ્યક્ષણો જઙ્ગમત્વાદિવિશિષ્ટમાનવભવસ્વરૂપઃ ।
ક્ષેત્રક્ષણ આર્યક્ષેત્રરૂપઃ । કાલક્ષણો ધર્માનુષ્ઠાનસમયઃ । ભાવક્ષણઃ ક્ષયોપશમાદિ-
રૂપો વિજ્ઞેયઃ । અતો હે પण्डित ! एतादृशं चतुर्विधं धर्माचरणायातिदुर्लभं क्षणमव-
गम्य संयमानुपालनतत्परोऽवश्यं भवेति भावः ॥ सू० ८ ॥

इत्थमतिदुरापक्षणमवाप्य यावच्च श्रोत्रादीनां शक्तयो न परिहीनास्तावदात्मार्थ
प्रयासो विधेय इति दर्शयति—‘जावे’—‘त्यादि ।

મૂલમ—જાવ સોયપરિણાણા અપરિહીણા, નેત્તપરિણાણા
અપરિહીણા, ફરિસપરિણાણા અપરિહીણા, इच्छेएहिं विरूवरूवेहिं
पण्णाणेहिं अपरिहीणेहिं आयद्वं सम्मं समणुवासिज्जासि-त्ति
वेमि ॥ सू० ९ ॥

भी बोधि आदि को प्राप्त नहीं कर सकता है । नो कर्म भावक्षण को कोई
२ आचार्य रिक्तक्षण भी कहते हैं ।

इस प्रकरण को संक्षिप्त करते हुए टीकाकार कहते हैं—त्रसपर्याय-
विशिष्ट मानवभवस्वरूप (१) द्रव्यक्षण है, आर्यक्षेत्ररूप (२) क्षेत्रक्षण,
धर्मानुष्ठान का समय—(३) कालक्षण और क्षयोपशमादिरूप (४) भाव-
क्षण है, इसलिये हे परमार्थज्ञ ! मेधावी ! इस प्रकार के इस चतुर्विध क्षण
को धर्माचरण करने के लिये अत्यन्त दुर्लभ मान कर संयम के पालन करने
में अवश्य २ मन को लगाओ, नहीं तो समय के हाथसे निकल जाने
पर अन्त में पश्चात्ताप के सिवाय और कुछ हाथ न आयेगा, इस लिये
प्राप्त हुए इस चतुर्विध क्षण को संयमाराधन से सफलित करो ॥ सू० ८ ॥

કરવામાં સમર્થ મનુષ્યભવને પ્રાપ્ત કરીને પણ બોધિ આદિને પ્રાપ્ત કરી શકતા
નથી નોકર્મભાવક્ષણને કોઈ કોઈ આચાર્ય રિક્તક્ષણ પણ કહે છે

આ પ્રકરણને સંક્ષિપ્ત કરતા ટીકાકાર કહે છે— ત્રસપર્યાયવિશિષ્ટ માનવ-
ભવસ્વરૂપ (૧) દ્રવ્યક્ષણ છે, આર્યક્ષેત્રરૂપ (૨) ક્ષેત્રક્ષણ, ધર્માનુષ્ઠાનનો સમય
(૩) કાલક્ષણ અને ક્ષયોપશમાદિરૂપ (૪) ભાવક્ષણ છે, માટે હે પરમર્થજ્ઞ !
મેધાવી ! આ પ્રકારના ચતુર્વિધ ક્ષણને ધર્માચરણ કરવા માટે અત્યંત દુર્લભ
માનીને સંયમપાલન કરવામાં લગાવો નહિ તો સમય નીકળી જવા પછી અંતમા
પશ્ચાત્તાપ સિવાય કંઈ પણ હાથ આવશે નહિ, માટે આ પ્રાપ્ત થયેલ ચતુર્વિધ
ક્ષણને સંયમારાધનથી સફલિત કરો ॥ સૂ૦ ૮ ॥

छाया—यावच्छ्रोत्रपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, नेत्रपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, घ्राणपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, जिह्वापरिज्ञानानि अपरिहीनानि, स्पर्शपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, इत्येतैर्विरूपरूपैः प्रज्ञानैरपरिहीनैरात्मार्थं समनुवासयेत्, इति ब्रवीमि ॥ सू० ९ ॥

टीका—‘याव-’दित्यादि । यावज्जराया रोगेण च श्रोत्रस्य परिज्ञानानि अपरिहीनानि=न नश्यमानानि तावदात्मार्थं समनुवासयेदिति सम्बन्धः । एवं यावच्छब्दः सर्वत्र योज्यः । एवमन्येषामपि नेत्रादीनां परिज्ञानानि यावन्न क्षीयमाणानि सन्ति तावच्छ्रेयो विचिन्तनीयमिति तात्पर्यम् ।

इस प्रकार अत्यंत कठिनता से प्राप्त करने योग्य इस क्षण को पाकर के जब तक श्रोत्रादिक प्रत्येक इन्द्रिय की अपने २ विषय को जानने की शक्ति कमजोर नहीं पड़ती है तब तक आत्मकल्याण के लिये प्रयास करते रहना चाहिये, यह बात सूत्रकार कहते हैं—‘जाव सोयपरिणणा’ इत्यादि ।

जब तक वृद्धावस्था या किसी रोग से तेरा कर्ण-इन्द्रियजन्य ज्ञान अपने विषय को ग्रहण करने की शक्ति से विकल नहीं हुआ है, नेत्र-इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने विषय ग्रहण करने की सामर्थ्य से रहित नहीं हुआ है, घ्राण-इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने ज्ञेय को जानने की शक्ति से क्षीण नहीं हुआ है, जिह्वा-इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने पदार्थ को ग्रहण करने की सामर्थ्य से रहित नहीं हुआ है, स्पर्शन-इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक कर्कश-कठोरादि अपने विषय को ग्रहण करने की शक्ति से हीन नहीं हुआ

आ प्रकार अत्यंत कठिनताથી प्राप्त करवायेग्य आ क्षणने भेगवीने ज्यां सुधी श्रोत्रादिक प्रत्येक इन्द्रियनी पोतपोतानां विषयने ज्ञापुवानी शक्ति कमजोर थती नथी त्यां सुधी आत्मकल्याण भाटे प्रयास करता रहेवो जेधये, ये बात सूत्रकार कहे छेः—

‘जाव सोयपरिणणा’ इत्यादि. ज्यां सुधी वृद्धावस्था अगर कोछ रोगथी ताई कर्ण-इन्द्रियजन्य ज्ञान पोताना विषयने अहुणु करवानी शक्तिथी विकल नथी थयुं, नेत्र-इन्द्रियजन्य ज्ञान ज्यांसुधी पोताना विषय अहुणु करवानां सामर्थ्यथी रहित नथी थयुं, घ्राण-इन्द्रियजन्य ज्ञान ज्यांसुधी पोताना ज्ञेयने ज्ञापुवानी शक्तिथी क्षीणु नथी थयुं, जिह्वा-इन्द्रियजन्य ज्ञान ज्यांसुधी पोताना पदार्थने अहुणु करवाना सामर्थ्यथी रहित नथी थयुं, स्पर्शन-इन्द्रियजन्य ज्ञान ज्यां सुधी कर्कश कठोरादि पोताना विषयने अहुणु करवानी शक्तिथी हीन

હૈ તવ તક અર્થાત્ ઇન્દ્રિયોં કે જ્ઞાન કી વિદ્યમાનતા મેં હી હે ભવ્ય પ્રાણી ! તૂ અપના કલ્યાણ-અર્થાત્ જ્ઞાનદર્શનચારિત્ર-આરાધન રૂપ નિજ પ્રયોજન કો સિદ્ધ કરલે । યહ નિશ્ચિત હૈ-વૃદ્ધાવસ્થા આને પર, યા કિસી ભયંકર રોગ કે હોને પર-ઇન્દ્રિયોં કી શક્તિયાં યા સ્વયં ઇન્દ્રિયાં હી ક્ષીણ હો જાતી હૈં । જિસ સમય ચેચક નિકલા કરતી હૈ કઈ વ્યક્તિયોં કી આંખેં ફૂટ જાતી હૈં, કાન બી બહિરે હો જાતે હૈં । લકવા કી બીમારી મેં સ્પર્શન ઇન્દ્રિય શૂન્ય હો જાતી હૈ, વચન વર્ગણા ઠીક નહીં નિકલતી, ચલતે સમય પૈર કહીં રખતે હૈં પડતે હૈં કહીં । કહા બી હૈ—

“ ગાત્રં સંકુચિતં ગતિર્વિગલિતા ભ્રષ્ટા ચ દન્તાવલિઃ,
દૃષ્ટિર્નશ્યતિ વર્ધતે વધિરતા વક્ત્રં ચ લાલાયતે ।

વાક્યં નાદ્રિયતે ચ બાન્ધવજનો ભાર્યા ન શુશ્રૂષતે,
હા ! કષ્ટં પુરુષસ્ય જીર્ણવયસઃ પુત્રોઽપ્યમિત્રાયતે ” ॥૧॥

“દૃષ્ટિ ઘટી પલટી તનકી છવિ, વંક ભઈ ગતિ લંક નઈ હૈ,
રૂબ રહી પરની ઘરની, અતિરંક ભયો પરયંક લઈ હૈ ।

કાંપત નાર (નાડ) વહૈ મુખ લાર, મહામતિ સંગતિ છાર ગઈ હૈ,
અંગ ઉપંગ પુરાને પરે, નિસના ઊર ઓર નવીન ભઈ હૈ ” ॥૧॥

નર્થી થયુ ત્યા સુધી અર્થાત્ ઇન્દ્રિયોના જ્ઞાનની વિદ્યમાનતામાં જે હે ભવ્ય પ્રાણી ! તું પોતાનું કલ્યાણ અર્થાત્ જ્ઞાનદર્શન ચારિત્ર આરાધનરૂપ નિજ પ્રયોજનને સિદ્ધ કરી લે એ નિશ્ચિત છે વૃદ્ધાવસ્થા આવવાથી અગર કોઈ ભયંકર રોગ થવાથી ઇન્દ્રિયોની શક્તિઓ અગર સ્વયં ઇન્દ્રિયો જે ક્ષીણ થાય છે. જે વખતે શીતલા નીકળે છે તે વખતે કઈ વ્યક્તિઓની આંખો ફૂટી જાય છે, કાન પણ બહાર થઈ જાય છે, લકવાની બીમારીમાં સ્પર્શન ઇન્દ્રિય શૂન્ય બની જાય છે, વચન-વાણી પણ ઠીક નીકળતી નથી, ચાલતી વખતે પગ કયાંય રાખે છે અને પગ પડે છે કયાંય કહ્યું પણ છે —

“ ગાત્રં સંકુચિતં ગતિર્વિગલિતા ભ્રષ્ટા ચ દન્તાવલિઃ,
દૃષ્ટિર્નશ્યતિ વર્ધતે વધિરતા વક્ત્રં ચ લાલાયતે ।

વાક્યં નાદ્રિયતે ચ બાન્ધવજનો ભાર્યા ન શુશ્રૂષતે,
હા ! કષ્ટં પુરુષસ્ય જીર્ણવયસઃ પુત્રોઽપ્યમિત્રાયતે ” ॥૧॥

“દૃષ્ટિ ઘટી પલટી તનકી છવિ વંક ભઈ ગતિ લંક નઈ હૈ,
રૂબ રહી પરની ઘરની અતિ રંક ભયો પરયંક લઈ હૈ ।

કાંપત નાર (નાડ) વહૈ મુખ લાર મહામતિ સંગતિ છાર ગઈ હૈ,
અંગ ઉપંગ પુરાને પરે તિસના ઊર ઓર નવીન ભઈ હૈ ” ॥૧॥

“વ્યાગ્રીવ તિષ્ઠતિ જરા પરિતર્જયન્તી,
રોગાશ્ચ શત્રવ ઇવ પ્રહરન્તિ દેહમ્ ।
આયુઃ પરિસ્રવતિ ભિન્નઘટાદિવામ્ભો,
લોકસ્તથાપ્યહિતમાચરતીતિ ચિત્રમ્” ॥૧॥

યહ વૃદ્ધાવસ્થા અર્ધમૃતક જેસી હૈ । ઇસ અવસ્થામેં વુદ્ધિ પ્રાયઃ નષ્ટ હો જાતી હૈ, કૂબડ નિકલ આતી હૈ, દાંત ગિર પડતે હૈં, બાલ સ્પેદ હો જાતે હૈં, બલ ભી કમ હો જાતા હૈ, આંખોં સે કમ સૂઝને લગતા હૈ, કાનોં સે શબ્દ સુનાઈ નહીં પડતે, હાથ પૈર ઢીલે ઓર ચલતે ફિરને સે લાચાર હો જાતે હૈં, કફ ઓર શ્વાસકા જોર બઢતા હૈ, વૈરિયોં કી તરહ સમસ્ત રોગ ઇસ અવસ્થા મેં અપના બદલા લેનેકે લિયે હી માનોં ઇકદમ ટૂટ પડતે હૈં, તૃષ્ણા કી પ્રબલતા ઇસ અવસ્થા મેં હો જાતી હૈ, પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય વિષય ગ્રહણ કરને કી શક્તિ સે શૂન્ય હો જાતી હૈ । જિસ તરહ કબૂતર પર બાજ ઝપટને કી તાકમેં રહતા હૈ, અથવા બિલ્લી ચૂહે પકડને કી તાક લગાઈ બેઠી રહતી હૈ, ઠીક ઇસી તરહ મૌત ભી ઇસ અવસ્થા મેં પ્રાણ પચેરુ કો પકડને કે લિયે તૈયાર રહતી હૈ । ઊસી પ્રકાર ઇસ અવસ્થા મેં જવાની કા બલ છિપ જાયા કરતા હૈ । મયૂરોં કી ધ્વનિ સુનને સે જૈસે

“વ્યાગ્રીવ તિષ્ઠતિ જરા પરિતર્જયન્તી,
રોગાશ્ચ શત્રવ ઇવ પ્રહરન્તિ દેહમ્ ।
આયુઃ પરિસ્રવતિ ભિન્નઘટાદિવામ્ભો,
લોકસ્તથાપ્યહિતમાચરતીતિ ચિત્રમ્” ॥૧॥

આ વૃદ્ધાવસ્થા અર્ધમૃતક જેવી છે, આ અવસ્થામાં બુદ્ધિ નષ્ટપ્રાય થાય છે, બલ પણ ઓછું થાય છે, વાંકાપણ આવે છે, દાંત પડી જાય છે, બાલ સ્પેદ થાય છે, આંખોથી ઓછું દેખાય છે, કાનોથી શબ્દ સંભળાતો નથી, હાથ પગ ઢીલા અને ચાલવા ફરવાથી લાચાર બને છે, કફ અને શ્વાસનું જોર વધે છે, વૈરીઓની માફક સમસ્ત રોગ આ અવસ્થામાં બહલો લેવા માટે જાણે એકદમ તુટી પડે છે, તૃષ્ણાની પ્રબલતા આ અવસ્થામાં થાય છે, પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય વિષય ગ્રહણ કરવાની શક્તિથી શૂન્ય થાય છે. જેવી રીતે કબૂતર પર બાજ ઝડપ મારવાની તક શોધે છે, અથવા બિલાડી ઉંદર પકડવાની તાક લગાવી બેસે છે, તેવી રીતે મૌત પણ આ અવસ્થામાં પ્રાણપંખેડને પકડવા તૈયાર રહે છે. જે પ્રકારે વાદળોની અંદર સૂર્યનો પ્રકાશ ઢંકાઈ જાય છે તે પ્રકારે આ અવસ્થામાં જીવાનીનું બળ છુપાઈ જાય છે. મોરની ધ્વનિ સાંભળવાથી જેમ અંદનવૃક્ષોમાં

इत्येतैः=पूर्वोक्तैर्विरूपरूपैः-इष्टानिष्टस्वभावतया नानाप्रकारैः प्रज्ञानैः=प्रकृष्ट-
ज्ञानैरपरिहीनैः=अपरिक्षीणैः सद्भिः आत्मार्थम्=आत्मनोऽर्थ आत्मार्थः, स च ज्ञान-
दर्शन-चारित्र्यरूपस्तम् ।

यद्वा-आत्मनेऽर्थो हितं प्रयोजनमिति यावत्, तच्चारित्र्यानुष्ठानम्, तम्,
समनुवासयेत्=भावयेत्, रञ्जयेदिति वा, यथोक्तानुष्ठानेनात्मानं समनुपाल-
येदिति भावः ।

इति=पूर्वोक्तं ब्रवीमि=सुधર્मा स्वामी जम्बूस्वामिनमाह-यद्भगवतः सकाशात्
श्रुतं तदेवाहं सूत्रात्मना कथयामि ॥ सू० ९ ॥ इति ॥

इति द्वितीयाध्ययनस्य प्रथमोद्देशः सव्याख्य समाप्तः ॥ १ ॥

ચન્દનવૃક્ષોં મેં લપટે હુણ મુજંગોં કે બન્ધન ઢીલે પડ જાતે હૈં વૈસે હી ર્વાંસી
કે રુલ્લ, રુલ્લ શબ્દ સે ઇસ અવસ્થા મેં અસ્થિયોં કી સંધિયાં શિથિલ હો
જાયા કરતી હૈં । યહ જરા એક અયંકર વ્યાધી કી તરહ સામને આકર
નિર્મય રૂપ સે રુલ્લી હો જાતી હૈ, ઉસ સમય શત્રુઓં કી તરહ રોગ ઇસ
પર પ્રહાર કરને સે નહીં ચૂકતે, ફૂટે ઘડે મેં સે પાની કી તરહ આયુ નિક-
લતી ચલી જાતી હૈ તો ભી આશ્ચર્ય કી બાત હૈ કિ-પ્રાણી અપને આત્મ
કલ્યાણ કી તરફ ધ્યાન નહીં દેતા ? ।

इसलिए जब तक वृद्धावस्था या किसी रोगसे तेरी शारीरिक शक्ति
क्षीण नहीं हुई है और प्रत्येक इन्द्रिया जब तक सशक्त बनी हुई है तब
तक सूत्रकार कहते हैं कि-“आत्मार्थ समनुवासयेत्” आत्माके लिये
हितकारी सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र्य की प्राप्ति से अपने
आपको भावित करो ।

લટકેલા સાપોના બંધન ઢીલા પડે છે તેમ ખાસીના ખુદલ-ખુદલ શબ્દથી આ
અવસ્થામા હાડકાઓની સંધિયો શિથિલ બની જાય છે.

આ વૃદ્ધાવસ્થા એક અયંકર વ્યાધિની માફક સામે આવીને નિર્ભય રૂપથી
ખડી થઈ જાય છે, તે વખતે શત્રુઓની માફક રોગ પણ પ્રહાર કરવામા ચુકતા
નથી, ફુટેલા ઘડામાંથી પાણીની માફક આયુ નિકળવા માટે છે, તો પણ આશ્ચ-
ર્યની વાત છે કે પ્રાણી પોતાના આત્મકલ્યાણની તરફ ધ્યાન દેતા નથી માટે
જ્યાં સુધી વૃદ્ધાવસ્થા અગર કોઈ રોગથી તારી શારીરિક શક્તિ ક્ષીણ નથી
થઈ, અને પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય જ્યાં સુધી સશક્ત બનેલી છે ત્યાં સુધી સૂત્રકાર
કહે છે કે-“ આત્માર્થ સમનુવાસયેત્ ” આત્મા માટે હિતકારી સમ્યગ્દર્શન
સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની પ્રાપ્તિથી પોતાને ભાવિત કરે.

યહાં આત્મા કે લિયે હિતકારી સમ્યક્ચારિત્ર કા પ્રધાનતયા ગ્રહણ હોતા હૈ । ક્યોં કિ યથાખ્યાતચારિત્રકે વિના કેવલજ્ઞાન તથા કેવલ-દર્શન નહીં હો સકતે । ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં યથાખ્યાત ચારિત્ર કી પૂર્ણતા હોતે હી યહ આત્મા “ અ ઇ ઉ ક્લ લૃ ” ઇન પાંચ હસ્વ અક્ષરોં કે ઉચ્ચારણ કાલ તક વહાં રહકર મુક્તિમેં જા વિરાજતા હૈ । ઇસ અપેક્ષા સે ચારિત્ર કી યહાં પર પ્રધાનતા કહી હૈ । સમ્યગ્દર્શન કી પૂર્ણતા ચતુર્થ ગુણસ્થાનમેં, સમ્યગ્જ્ઞાનકી પૂર્ણતા તેરહવેં ગુણસ્થાન મેં ઓર સમ્યક્ ચારિત્ર કી પૂર્ણતા ચૌદ હવેં ગુણસ્થાન મેં શાસ્ત્રકારોં ને બતલાઈ હૈ ।

ઇસ પૂર્વોક્ત અર્થ કો સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં કિ-હે જમ્બૂ ! મૈને જૈસા ભગવાન સે સુના હૈ વૈસા હી તુજે કહતા હૂં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

॥ યહ દ્વિતીય અધ્યયન કા પ્રથમ ઉદ્દેશ સમાપ્ત હુઆ ॥ ૨-૧ ॥

અહીં આત્મા માટે હિતકારી સમ્યક્ચારિત્રનું પ્રધાનતયા ગ્રહણ થાય છે, કારણ કે યથાખ્યાતચારિત્ર વિના કેવળજ્ઞાન તથા કેવળદર્શન નથી થતું. ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં યથાખ્યાતચારિત્રની પૂર્ણતા થતાં જ આ આત્મા “ અ ઇ ઉ ક્લ લૃ ” આ પાંચ હસ્વ અક્ષરોનું ઉચ્ચારણ કાલ તક ત્યાં રહીને મુક્તિમાં બિરાજે છે. આ અપેક્ષાથી ચારિત્રની આ ઠેકાણે પ્રધાનતા કહી છે. સમ્યગ્દર્શનની પૂર્ણતા એથા ગુણસ્થાનમાં, સમ્યગ્જ્ઞાનની પૂર્ણતા તેરમા ગુણસ્થાનમાં, અને ચારિત્રની પૂર્ણતા ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં શાસ્ત્રકારોએ બતાવી છે.

આ પૂર્વોક્ત અર્થને સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીથી કહે છે કે-હે જમ્બૂ ! મેં જેવી રીતે ભગવાન પાસેથી સાંભળ્યું છે તેવું જ તમને કહું છું. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

॥ બીજા અધ્યયનનો પહેલો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૧ ॥

॥ આચારાઙ્ગ સૂત્રે દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ ॥

ઉક્તઃ પ્રથમોદ્દેશઃ, સામ્પ્રતં દ્વિતીયો વ્યાખ્યાયતે, તત્રાયં સમ્બન્ધઃ—પ્રથમે વિષયકષાય માતા પિત્રાદિ લોકવિજયેન સંયમિનો મોક્ષકારણચારિત્રસ્ય પ્રાપ્તિઃ, કિંચ્ચ લોકવિજયેન યાવદ્રોગજરાદયો નાયાતાસ્તાવદાત્માર્થં સંયમો વિધેય इत्यपि પ્રતિપાદિતમ્ ।

॥ આચારાઙ્ગ સૂત્રકે દૂસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ ॥

પ્રથમ ઉદ્દેશ કા વર્ણન હો ચુકા, અબ દ્વિતીય ઉદ્દેશ કા વર્ણન કરતે હૈં—ઈસ કે વર્ણન કરને કા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ—પ્રથમ ઉદ્દેશ મેં જો યહ વાત વતલાઈ ગઈ હૈ કિ—“વિષય કષાય ઓર માતા પિતા આદિ જો લોક હૈં ઊન પર વિજય પ્રાપ્ત કરને સે, અર્થાત્ કષાયોં કો જીતને ઓર માતા પિતા આદિ કે સ્નેહ નિવારણ સે સંયમી કો મોક્ષ કે કારણભૂત ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । તથા લોક પર વિજય કરલેને સે જબ તક રોગાદિક અથવા જરાવસ્થા વગેરહ જો સંયમ કો ધારણ કરને મેં પ્રતિબંધક હૈં, વે ઈસ શરીર કો આકર નહીં ઘેરતે હૈં ઈસકે પહિલે આત્મકલ્યાણ કે લિયે સંયમ કા આરાધન કરલેના ચાહિયે ” ॥

આચારાંગ સૂત્રના બીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ

પહેલાં ઉદ્દેશનું વર્ણન સમાપ્ત થયું. હવે બીજા ઉદ્દેશનું વર્ણન કરે છે. તેનું વર્ણન કરવાનો અભિપ્રાય એ છે કે મહેલા ઉદ્દેશમાં જે વાત બતાવવામાં આવી છે કે “વિષયકષાય અને માતાપિતા આદિ જે લોક છે તે ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાથી અર્થાત્ કષાયોને છૂતવાથી અને માતાપિતા આદિનો સ્નેહ નિવારણથી સંયમીને મોક્ષના કારણભૂત ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે. અને લોક ઉપર વિજય કરવાથી ન્યાં સુધી રોગાદિક અને જરાવસ્થા વિગેરે જે સંયમને ધારણ કરવામાં પ્રતિબંધક છે. તે આ શરીરને આવીને ઘેરતા નથી. તેનાં પહેલાં આત્મકલ્યાણ માટે સંયમનું આરાધન કરી લેવું જોઈએ.

હાયા—અલ્પં ચ સ્વલુ આયુષ્કમિહૈકેષાં માનવાનામ્ । તદ્યથા—શ્રોત્રપરિજ્ઞાનૈઃ પરિહીયમાનૈઃ, ચક્ષુઃપરિજ્ઞાનૈઃ પરિહીયમાનૈઃ, ગ્રાણપરિજ્ઞાનૈઃ પરિહીયમાનૈઃ, રસન-પરિજ્ઞાનૈઃ પરિહીયમાનૈઃ, સ્પર્શપરિજ્ઞાનૈઃ પરિહીયમાનૈઃ, અભિક્રાન્તં ચ સ્વલુ વયઃ સમ્પ્રેક્ષ્ય તતઃ સ એકદા મૃદુભાવં જનયતિ ॥ ૨ ॥

ટીકા—અલ્પં=સ્તોકં, ‘ચ’ શબ્દેન દીર્ઘાયુષ્કપરિગ્રહઃ । ‘સ્વલુ’ શબ્દોઽવધારણે, ‘આયુઃ’ પૂર્વકૃતકર્મભોગાર્થમેતિ=સમાગચ્છતીત્યાયુઃ । યદ્વૈતિ=સમાગચ્છતિ સ્વકૃત-કર્મપ્રાપ્તનરકાદિગતિસ્થિતજન્તોઃ પ્રતિવન્ધકતામિત્યાયુઃ, ભવસ્થિતિહેતુઃ કર્મપુદ્ગલ-પુદ્ગલમિત્યર્થઃ । આયુર્હિં સુખદુઃસ્વાધારં દેહસ્થિતં જીવં તત્તદ્ગતૌ ધરતિ । ઉક્તશ્ચ—

“દુઃખં ન દેહ આઝ, ન વિ ય સુહં દેહ ચઉસુવિ ગઈસુ ।

દુઃખસુહાણાધારં, ધરઈ દેહદ્વિયં જીવં ॥ ૧ ॥”

હાયા—દુઃખં ન દંદાત્યાયુર્નાપિ ચ સુખં દંદાતિ ચતસૃષ્વપિ ગતિષુ ।

દુઃખસુખાનામાધારં, ધરતિ દેહસ્થિતં જીવમ્ ॥ ઇતિ ।

इस संसार में कितनेक मनुष्यों की आयु अल्प है, पूर्ण आयु को भोगते हुए भी जब यह प्राणी वृद्धावस्थासंपन्न होता है तब इसकी श्रोत्र-इन्द्रिय अपने विषय के ग्रहण करने में असमर्थ हो जाती है, चक्षु-इन्द्रिय रूप के देखने में क्षीण शक्तिवाली हो जाती है, घ्राण-इन्द्रिय सुगंध-दुर्गन्ध के बोध करने से विमुख हो जाती है, रसना-इन्द्रिय ५ प्रकार के रसास्वादनरूप अपने कार्य से शिथिल बन जाती है और स्पर्शन-इन्द्रिय भी ८ प्रकार के स्पर्श को बतलाने में अक्षम हो जाती है । इस प्रकार प्रत्येक इन्द्रियाँ जब इस अवस्था में अपने २ कर्तव्य से विमुख हो जाती हैं, तब यह प्राणी उस अवस्था में कर्तव्याकर्तव्य के ज्ञान से शून्य हो जाता है ।

આ સંસારમાં કેટલાક મનુષ્યોની આયુ ઓછી છે. પૂર્ણ આયુને ભોગવતો છતાં પણ બન્યારે તે પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન થાય છે ત્યારે તેની શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય પોતાનો વિષય અહણ કરવામાં અસમર્થ બને છે. ચક્ષુઇન્દ્રિય, રૂપ દેખવામાં ક્ષીણશક્તિવાળી થાય છે. ગ્રાણુઇન્દ્રિય સુગંધ દુર્ગંધનો બોધ કરવામાં વિમુખ થઈ બેસે છે. રસના-ઇન્દ્રિય પાંચ પ્રકારના રસાસ્વાદન રૂપ પોતાના કાર્યથી શિથિલ બની બેસે છે અને સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય પણ આઠ પ્રકારના સ્પર્શ બતાવવામાં અક્ષમ થાય છે. આ પ્રકારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય બન્યારે આ અવસ્થામાં પોત-પોતાના કાર્યથી વિમુખ થાય છે ત્યારે આ પ્રાણી આ અવસ્થામાં કર્તવ્યાકર્તવ્યના જ્ઞાનથી શૂન્ય થાય છે.

અત્ર ચ સંયમિનઃ કદાચિન્મોહનીયોદયાદજ્ઞાનલોભાદિસમુદયાદાત્મદોષાદ્વા સંયમે ચારતિરાવિર્ભૂતા તસ્યા નિરસનં, તથા યેઽપિ વિષયિણોઽલ્પમધિકં વા કાલં સંયમમનુપાલ્યાપિ પૂર્વોક્તદોષેણ મોહોદયાત્સંયમે શૈથિલ્યં પ્રાપ્નુવન્તિ તેષાં સંયમે દૃઢતા, વિષયેષુ ચાદૃઢતા યથા ભવેત્તથાઽઽહ ‘અરં’ ઇત્યાદિ।

સંયમી કો કદાચિત્ મોહ કે ઉદય સે યા અજ્ઞાન એવં લોભાદિ કિસી કષાય કે ઉદયસે અથવા અપને હી કિસી દોષ કે વશ સે સંયમ મેં જો અરતિભાવ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈં ઉસકો જૈસે ખી દૂર કિયા જા સકે; તથા જો શબ્દાદિ વિષયોં મેં લોલુપી બને હુએ હૈં ઓર સંયમ કા પાલન ખી કર રહે હૈં વે ઉસ સંયમ કો અલ્પકાલ તક યા અધિક સમય તક પાલન કરકે ખી પૂર્વોક્ત દોષ સે અથવા મોહકે ઉદય સે સંયમ મેં શિથિલ બન જાતે હૈં વે સંયમ મેં શિથિલ ન બનને પાવેં અર્થાત્ સંયમ મેં ઉનકી દૃઢતા હી બની રહે તથા વિષયોં કી ઓર સે ઉનકી આસક્તિ ઘટે—ઈસી વાતકા વર્ણન ઈસ દ્વિતીય ઉદ્દેશ મેં સૂત્રકાર કરતે હૈં— ‘અરં ઇત્યાદિ’ ।

અથવા—ચારિત્ર કો અંગીકાર કરને કે લિયે જિનકી ઇચ્છા જાગૃત તો હો ચુકી હૈં પરન્તુ મોહ કે ઉદય સે ઉનકે મન મેં અખી તક અરતિ-ભાવ વિદ્યમાન હૈં, એવં જિન્હોંને ચારિત્ર કો ધારણ તો કર લિયા હૈં પરન્તુ ઉસકે ધારણકે વાદ લોભાદિ સે કિસી ૨ સમય ઉન્હેં ઉસસે અરતિભાવ ખી પૈદા હો જાતા હૈં, ઉસ સમય ઉન્હેં ક્યા કરના ચાહિયે? ઈસીકા નિરૂ-

સંયમીને કદાચિત્ મોહના ઉદયથી અજ્ઞાન અને લોભાદિ કોઈ કષાયના ઉદયથી અથવા પોતાના કોઈ દોષના વશથી સંયમમાં જે અરતિભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તેને જેમ તેમ પણ દૂર કરવામાં આવે, અને જે શબ્દાદિ વિષયોમાં લોલુપી બનેલાં છે અને સંયમનું પાલન કરે છે તેઓ સંયમનું અલ્પ કાળ સુધી અગર અધિક સમય સુધી પાલન કરીને પણ પૂર્વોક્ત દોષથી અથવા મોહના ઉદયથી સંયમમાં જેઓ શિથિલ બની જાય છે તેઓ સંયમમાં શિથિલ બની ન જાય અર્થાત્ સંયમમાં તેઓની દૃઢતા બની રહે અને વિષયોની તરફથી તેઓની આસક્તિ ઘટે આ વાતનું વર્ણન આ બીજા ઉદ્દેશમાં સૂત્રકાર કરે છે:—‘અરં’ ઇત્યાદિ.

અને ચારિત્રને અંગીકાર કરવા માટે જેની ઇચ્છા જાગૃત બનેલી છે પરંતુ મોહના ઉદયથી તેના મનમાં હજી સુધી અરતિભાવ મોજુદ છે અને જેઓએ ચારિત્રને ધારણ કરી લીધું છે પરંતુ લીધા પછી લોભાદિથી કોઈ કોઈ સમય તેને તેમાં અરતિભાવ પેદા થાય છે. તે વખતે તેણે શું કરવું જોઈએ તેનું નિરૂપણ

યદ્વા સમુત્પદ્યમાનરુચેરપિ મોહોદયાદરતિર્જાયતે, કસ્યચિચ્ચ ચારિત્રગ્રહણાનન્તરં
લોભાદિના કદાચિદરતિર્ભવતિ તદા કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘અરઙ્’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—અરઙ્ આઉટ્ટે સે મેહાવી સ્વળંસિ મુક્કે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—અરતિમ્ આવર્તેત સ મેધાવી ક્ષણે મુક્તઃ ॥ સૂ૦-૧ ॥

ટીકા—‘અરતિ’—મિત્યાદિ, સઃ=કૃતચારિત્રગ્રહણો મેધાવી પરિજ્ઞાતનિઃસાર-
સંસારઃ સન્ ‘અરતિમ્’ રમણં=રતિઃ સંયમે ધૃતિસ્તસ્યાભાવોડરતિસ્તાં પશ્ચાચાર-
પણ કરતે હૈ—‘અરઙ્’ ઇત્યાદિ ।

જિસને સંસાર કી અસારતા જાન લી હૈ ઓર ચારિત્ર કો ખી અંગી-
કાર કર લિયા હૈ વહ અરતિભાવ કો દૂર કરે તો ક્ષણ ભર મેં મુક્ત હો
જાવે । ચારિત્ર કો જિસને અંગીકાર કર લિયા હૈ ઉસકા યહ ધર્મ હૈ કિ
વહ કિતને ખી પરીષદોં ઓર ઉપસર્ગોં કે ઉત્પન્ન હોને પર ખી અપને
ચારિત્ર ધર્મકા નિર્દોષ રીતિ સે પાલન કરે । પરન્તુ જબ તક કષાયોં કા
પૂર્ણતયા વિનાશ નહીં હો જાતા, તબ તક જીવ સે ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ
નહીં હોતી હૈ । ક્યોં કિ જિસ ચારિત્રકા યહાં પર વર્ણન કિયા જા રહા
હૈ વહ ક્ષાયોપશમિક હૈ, ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર તખી હોતા હૈ જબ ચારિત્ર
મોહનીય કર્મ કે ૨૧ પ્રકૃતિયોં મેં સે સર્વઘાતિ પ્રકૃતિયોં કે કુછ સ્પર્દ્ધકોં
કા—અનન્તાનન્ત કર્મ વર્ગણાઓં કે સમુદાયકા એક સ્પર્દ્ધક હોતા હૈ ઉનકા—
ઉદયભાવી ક્ષય હો તથા કુછ સર્વઘાતિસ્પર્દ્ધકોં કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ હો
એવં દેશઘાતિપ્રકૃતિકા ઉદય હો । ઇસ અવસ્થા કા નામ ક્ષાયોપશમ હૈ ।

આ ખીજા ઉદેશમા સૂત્રકાર કરે છે—“અરઙ્” ઇત્યાદિ.

જેણે સંસારની અસારતા જાણી છે, અને ચારિત્રને પણ અંગીકાર કરેલ
છે તે અરતિભાવને દૂર કરે તો ક્ષણ ભરમાં મુક્ત થઈ જાય. ચારિત્રને જેણે
અંગીકાર કરેલ છે તેનો એ ધર્મ છે કે કેટલા પણ પરિષદો અને ઉપસર્ગો
ઉત્પન્ન થાય તો પણ પોતાના ચારિત્રધર્મનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરે, પરંતુ
ન્યાં સુધી કષાયોનો પૂર્ણ વિનાશ નથી થતો ત્યાં સુધી જીવતી તેવા પ્રકારની
પ્રવૃત્તિ થતી નથી, કારણ કે જે ચારિત્રનું આ ઠેકાણું વર્ણન આપવામાં આવ્યું છે તે
ક્ષાયોપશમિક છે. ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર ત્યારે જ થાય છે—જ્યારે ચારિત્ર મોહનીય
કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓથી સર્વઘાતી પ્રકૃતિઓના થોડાં સ્પર્દ્ધકોના—અનન્તાનન્ત કર્મ
વર્ગણાઓના સમુદાયનો એક સ્પર્દ્ધક થાય છે. તેના ઉદયભાવી ક્ષય થાય તથા થોડા
સર્વઘાતિ સ્પર્દ્ધકોના સદવસ્થારૂપ ઉપશમ થાય અને દેશઘાતિ પ્રકૃતિનો ઉદય
થાય. આ અવસ્થાનું નામ ક્ષાયોપશમ છે.

વિષયારુચિં કષાયસંસર્ગોત્પન્નાં માતા-પિતૃ-કલત્ર-મિત્રાદ્યુત્પાદિતામ્ આવર્તેત=નિવર્તયેત્, વિષયાભિષ્વજ્ઞે રતિસત્ત્વે સંયમે ચારતિર્ભવતિ, તથા ચ કણ્ડરીકસદૃશસ્ય સંયમિનો નરકાદિગતિર્જાયતે, વિષયે રત્યભાવે સંયમે રતિરુત્પદ્યતે, તથા ચ પુણ્ડરીકસદૃશસ્ય સદ્ગતિર્ભવતિ । સંયમે રતિં વિદધાનસ્ય ન કિમપિ દુઃસ્વં પરાભવતિ, ઉક્તઞ્ચ—

इस दशामें देशघाति प्रकृतिका तो उदय रहता है। यह चारित्र का बिगाड़ नहीं करती। किन्तु जिनका उपशम हुआ है—वे यदि निमित्त पाकर उदय में आजाती हैं तो वे अवश्य २ चारित्र में जीव को अरति-भाव या उससे भ्रष्ट कर देती हैं। इसी बात को लक्ष्य में रखकर सूत्रकार संयमी जन को कहते हैं कि—‘अरतिं आवर्तैत’ इति संयमधारी मेधावी संयम में अरति को दूर करे। संयम में धृति धारण करना—इस का नाम रति है, रति का अभाव अरति है, पाँच आचारका पालन करना संयम है। इस विषय में संयमी जनको कषायों के संसर्ग से अथवा माता-पिता-मित्र-स्त्री आदि के संसर्ग से अरतिभाव पैदा हो सकता है। टीकाकार इस पर अपना अभिप्राय प्रकट करते हुए कहते हैं कि—बात भी ठीक है, क्योंकि विषयों में अभिष्वंग (आसक्ति) रूप रति के सद्भाव होने पर संयममें अरतिभाव जीवों को उत्पन्न हो जाता है, परन्तु मेधावी मुनि संसार की असारता को भली भाँति जानता है तो उसका कर्तव्य है कि वह अरतिभाव को दूर करे, नहीं तो कण्डरीक की तरह उसे नरक गामी होना पड़ेगा, और संयम में रति करने से पुण्डरीक की तरह उसे

આ દશામાં દેશઘાતિ પ્રકૃતિનો તો ઉદય રહે છે, તે ચારિત્રનો બિગાડ કરતી નથી, પરંતુ જેનો ઉપશમ થયેલ છે તે કદાચ નિમિત્ત બનીને ઉદયમાં આવી જાય છે—તો તે અવશ્ય જ ચારિત્રમાં જીવને અરતિભાવ અગર તેનાથી ભ્રષ્ટ કરે છે. આ વાતને લક્ષમાં રાખીને સૂત્રકાર સંયમી જનને કહે છે કે—‘અરતિં આવર્તેત’ સંયમધારી મેધાવી સંયમમાં અરતિને દૂર કરે. સંયમમાં ધૃતિ ધારણ કરવી, તેનું નામ રતિ છે. રતિનો અભાવ અરતિ છે. પાંચ આચારનું પાલન કરવું સંયમ છે. આ વિષયમાં સંયમી જનને કષાયોના સંસર્ગથી અથવા માતા-પિતા-મિત્ર-સ્ત્રી આદિના સંસર્ગથી અરતિભાવ પેદા થઈ જાય છે ત્યારે ટીકાકાર આ વાત પર પોતાનો અભિપ્રાય પ્રગટ કરતાં કહે છે કે—વાત પણ ઠીક છે. કારણ કે વિષયોમાં આસક્તિરૂપ રતિનો સદ્ભાવ થવાથી સંયમમાં અરતિભાવ જીવને ઉત્પન્ન થાય છે. પરંતુ મેધાવી મુનિ સંસારની અસારતાને ભલીભાંતિ જાણે છે. તેથી તેનું કર્તવ્ય છે કે તે અરતિભાવને દૂર કરે, નહીં તો કંડરીકની માફક તેને નરકગામી થવું પડશે, અને સંયમમાં રતિ કરવાથી પુંડરીકની માફક તેને

“ क्षितितलशयनं वा, प्रान्तभैक्षाशनं वा,
सहजपरिभवो वा, दुष्टदुर्भाषितं वा ।
महति फलविशेषे, नित्यमभ्युद्यतानां,
न मनसि न शरीरे, दुःखमुत्पादयन्ति ” ॥ १ ॥

“ तणसंथारनिसण्णोऽपि मुणिवरो नट्टरागमयमोहो ॥
जं पावइ मुत्तिसुहं, तं कत्तो चक्कवट्ठी वि ” ॥ १ ॥

छाया—तणसंस्तारनिसण्णोऽपि मुनिवरो नट्टरागमदमोहः ॥
यत्प्राप्नोति मुक्तिसुखं तत्कुतश्चक्रवर्त्यपि ॥ १ ॥ इति, किमधिकेन ।

सद्गतिका लाभ होगा । जीवों को अरति का कारण दुःख होता है । परन्तु संयम को निर्दोष रीति से पालन करनेवाले को कोई भी दुःख नहीं होता है । यदि किसी प्रकार के कर्मोदय से उसे दुःख भी आ पड़े तो वह दुःख उस जीव को संयम में अरतिभाव का कारण नहीं होता है । यही बात नीचे लिखे श्लोकसे प्रकट की है, जैसे—

क्षितितलशयनं वा प्रान्तभैक्षाशनं वा,
सहजपरिभवो वा दुष्टदुर्भाषितं वा ।
महति फलविशेषे नित्यमभ्युद्यतानां,
न मनसि न शरीरे दुःखमुत्पादयन्ति ॥ १ ॥

फिर भी—“ तणसंथारनिसण्णो वि मुनिवरो नट्टरागमयमोहो ।
जं पावइ मुत्तिसुहं, तं कत्तो चक्कवट्ठी वि ॥ १ ॥ ”

सद्गतिना लाभ थसे जेवने अरतिना कारणे दुःख थाय छे, परंतु संयमने निर्दोष रीतिथी पालन करवाथी केछि पणु दुःख थतु नथी कदाच केछि प्रकारना कर्मोदयथी तेने दुःख पणु आवी पडे तो ते दुःख ते जेवने संयमभा अरति भावनु कारणे थतु नथी, जे बात नीचे लखेला श्लोकथी प्रकट करी छे—

“ क्षितितलशयनं वा, प्रान्तभैक्षाशनं वा,
सहजपरिभवो वा, दुष्टदुर्भाषितं वा ।
महति फलविशेषे, नित्यमभ्युद्यतानां,
न मनसि न शरीरे, दुःखमुत्पादयन्ति ” ॥ १ ॥

फिर भी—“ तणसंथारनिसण्णो वि मुनिनिवरो नट्टरागमयमोहो ।
जं पावइ मुत्तिसुहं, तं कत्तो चक्कवट्ठी वि ” ॥ १ ॥

મોહનીયક્ષયોપશમેનાધિગતચારિત્રસ્ય કદાચિત્પુનર્મોહનીયોદયાદરતિસ્તપન્ના,
તસ્યાઃ ક્ષયાર્થમુપદિશ્યત-ઇતિ તાત્પર્યમ્ ।

નન્વનેનારતિમતે મેધાવિન ઉપદેશો, યથ મેધાવી સ પરિજ્ઞાતભવસ્વરૂપ એવ
ભવતિ, તસ્મિંશ્ચારતિમત્ત્વસ્યાસમ્ભવાચ્છાયાતપયોરિવ સહાનવસ્થાનરૂપવિરોધ-
સત્ત્વાન્મેધાવિત્વારતિમત્ત્વયોઃ કથમેકત્ર સ્થિતિઃ ? । ઉક્તશ્ચ—

इसका भाव यही है—कि भूमि पर सोना, अन्तर्प्रान्त भिक्षा का सेवन
करना चाहे, कोई तिरस्कार करे, चाहे दुष्ट खोटे २ वचन भी कहें, तो भी
जिन साधु पुरुषों की प्रवृत्ति उत्तम फल के लाभ करने में सावधान है उनके
लिये इन बातों से मन में और शरीर में कोई भी कष्ट नहीं होता है।
“तणसंथारनिसण्णो” घासकी शय्या पर बैठे हुए रागमदमोह रहित मुनि
निवृत्तिभावसे जिस सुखका अनुभव करता है उस प्रकार के सुख का
अनुभव रत्नसिंहासन पर बैठा हुवा चक्रवर्ती भी नहीं कर सकता ॥१॥

शंका—चारित्र मोहनीय कर्मके क्षयोपशम से चारित्र की जिसे
प्राप्ति हो चुकी है और फिर बाद में चारित्रमोहनीय की किसी एक
प्रकृति के उदय से उसमें जिसे अरतिभाव हो गया है ऐसे अरतिभावयुक्त
मेधावी के लिये आपका यह उपदेश कि—“गृहीत-चारित्र में अरतिभाव
को दूर करे” लागू होता है । परन्तु जो मेधावी है वह तो संसार के स्वरूप
का जानकार ही होता है, उसमें अरतिपने का सद्भाव तो असंभव ही
है । क्यों कि जिस प्रकार छाया और आतप-धूप का एक जगह एक साथ

એનો ભાવ એ છે કે—ભૂમિ ઉપર સુવું, અન્ત પ્રાન્ત-ભિક્ષા સેવન કરવી,
ભલે કોઈ તિરસ્કાર કરે અને દુષ્ટ ખોટા ખોટા વચન પણ બોલે તો પણ જે
સાધુપુરુષ ઉત્તમ ફળનો લાભ કરવામાં સાવધાન છે તેને આવી વાતોથી મનમાં
અને શરીરમાં કોઈ પણ કષ્ટ થતું નથી, “તણસંથારનિસણ્ણો” ઘાસની શય્યા
પર બેઠેલા, રાગ મદ મોહ રહિત મુનિ નિવૃત્તિ ભાવથી જે નિર્દોભતારૂપ સુખનો
અનુભવ કરે છે તે સુખનો અનુભવ રત્નસિંહાસન ઉપર બેઠેલો ચક્રવર્તી પણ
કરી શકતો નથી. ॥ ૧ ॥

शङ्का—चारित्रमोहनीय कर्मना क्षयोपशमથી -चारित्रની જેને પ્રાપ્તિ થયેલી
છે, અને પછી ચારित्र मोहनीयની કોઈ એક પ્રકૃતિના ઉદયથી તેમાં જેને અરતિ-
ભાવ થયો છે એવા અરતિભાવયુક્ત મેધાવી માટે આપનો એ ઉપદેશ—“ગૃહીત-
ચારित्रમાં અરતિભાવને દૂર કરે” લાગુ થાય છે. પરંતુ જે મેધાવી છે તે તો
સંસારના સ્વરૂપનો જાણકાર હોય છે, તેમાં અરતિપણના સદ્ભાવનો તો અસંભવ
જ છે, કારણ કે જે પ્રકારે છાયા અને તડકાનો એક જગ્યાએ એકી સાથ રહેવું

“તજ્ઞાનમેવ ન ભવતિ, યસ્મિન્નુદિતે વિભાતિ રાગગણઃ ।

તમસઃ કુતોઽસ્તિ શક્તિર્દિનકરકિરણાગ્રતઃ સ્થાતુમ્ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

મોહગ્રહગ્રહિલોઽજ્ઞાની સંયમેડરતિં, વિષયાભિષ્વજ્ઞે કામિન્યાદૌ રતિં ચ કરોતિ, મેધાવી તુ યથા હસ્તી લઘુવૃક્ષે ઘર્ષણં ન કરોતિ તથૈવ તુચ્છે કામિન્યાદૌ રતિં ન વિદધાતિ, કથં તર્હિ પ્રકૃતે મેધાવિનોડરતિસમ્ભવો વિરોધસત્ત્વાદિતિ ચેન્ન ।

રહના વિરુદ્ધ હૈ, उसी प्रकार मेधावित्त्व का और अरतिमत्त्व का भी एक जगह एक साथ रहना विरुद्ध ही है । फिर इन दोनों का एक जगह युगपत् कहना कैसे संभव हो सकता हैं ? यही बात अन्यत्र भी कही है—

“ तज्ज्ञानमेव न भवति, यस्मिन्नुदिते विभाति रागगणः ।

तमसः कुतोऽस्ति शक्तिः,—दिनकरकिरणाग्रतः स्थातुम् ॥ १ ॥ ” इति॥

વહ જ્ઞાન જ્ઞાન હી નહીં હૈ કિ જિસ કે ઉદિત હોને પર રાગાદિ ગણકા સદ્ભાવ રહે । કયા સૂર્ય કે ઉદય હોને પર બી અંધકાર રહ સકતા હૈ ? કબી નહીં ॥ ૧ ॥ જો મોહ રૂપી ગ્રહસે ઉન્મત્ત હો રહે હૈ—એસે અજ્ઞાની જીવ હી સંયમ મેં અરતિ ઔર શબ્દાદિ 'વિષયોં મેં રતિ કિયા કરતે હૈ । પરન્તુ જો મેધાવી હોતે હૈ—વે જિસ પ્રકાર હાથી એક છોટે વૃક્ષ સે ઘર્ષણ નહીં કરતા उसी प्रकार संसार के तुच्छ पदार्थों में भी रति नहीं करते । किन्तु उनकी उनमें अरति ઔર સંયમ મેં રતિ રહતી હૈ । ફિર યહાં પર મેધાવી કો અરતિ હોને કા સંભવ કૈસે કહા ?

અશક્ય છે તે પ્રકારે મેધાવિત્ત્વને અરતિભાવને પણ એક જગ્યાએ સાથ રહેવું વિરુદ્ધ જ છે, પછી એ બન્નેનું એક જગ્યાએ બેઠાણું કહેવું કેવી રીતે સંભવ થઈ શકે, આ વાત બીજી જગ્યાએ પણ બતાવી છે કે—

“ તજ્ઞાનમેવ ન ભવતિ, યસ્મિન્નુદિતે વિભાતિ રાગગણ ।

તમસ કુતોઽસ્તિ શક્તિર્દિનકરકિરણાગ્રતઃ સ્થાતુમ્ ” ॥ ૧ ॥

તે જ્ઞાન જ્ઞાન જ નથી કે જેના ઉદય થવાથી રાગાદિગણનો સદ્ભાવ રહે, સૂર્યનો ઉદય થવાથી શુ અંધકાર રહી શકે છે ? કદિ નહિ ॥ ૧ ॥

જે મોહરૂપી ગ્રહથી ઉન્મત્ત થઈ રહેલ છે એવા અજ્ઞાની જીવ જ સંયમમા અરતિ અને શબ્દાદિ વિષયોમાં રતિ કરે છે પરંતુ જે મેધાવી હોય છે તે જેમ હાથી નાના વૃક્ષથી ઘર્ષણ કરતો નથી તે પ્રકાર સંસારના તુચ્છ પદાર્થોમાં રતિ નથી કરતા પણ તેની તેમા અરતિ અને સંયમમા રતિ જ રહે છે. વળી આ ઠેકાણે મેધાવીને અરતિ હોવાનો સંભવ પણ કેમ હોય.

अनेन च समधिगतचारित्रस्योपदेशं प्रदातुकाम सूत्रकारः । चारित्रं प्रति ज्ञानस्य हेतुतया ज्ञानरूपकारणाभावाच्चारित्रकार्यासत्त्वं सर्वसम्मतं, न पुनरत्र ज्ञानारत्योर्विरोधः सम्भवति, किन्तु रत्यरत्योर्विरोधाच्चारित्रमोहनीयोदयात्संयमे भवत्येवारति-ज्ञानाज्ञानयोरेव विरोधात्, न संयमारतिज्ञानयोर्विरोध इति प्रकृतेऽपि मेधाविनोऽरतिसत्त्वे विरोधाभावात् । संयमारतिनिवृत्तस्य किं भवतीत्याह 'क्षणे' इति, परम-स्तोकः कालः क्षणस्तत्र मुक्तो भवति ।

उत्तर—चारित्र के प्रति ज्ञान हेतु होता है, ज्ञान रूप कारण के अभाव में चारित्र रूप कार्यका अभाव रहता है, यह सब मानते हैं । यहाँ पर ज्ञान में और अरति में विरोध का कथन नहीं किया है किन्तु रति और अरति का विरोध होने से चारित्र मोहनीय के उदय से संयम में अरति होती है । ज्ञान और अज्ञान में ही विरोध है संयम में अरति का और ज्ञान का कोई विरोध नहीं है । इसलिये मेधावी होने पर भी संयम में अरति का सद्भाव होता है । इस में किसी प्रकारका विरोध नहीं है ।

टीकाकार का यह अभिप्राय है कि जिसने चारित्र-संयम अंगीकार कर लिया है वह यदि ज्ञानी है तो भी उसे चारित्र मोहके उदय से उसमें अरतिभाव उत्पन्न हो सकता है । क्योंकि चारित्र के प्रति ज्ञान हेतु-कारण है, जहाँ कारण का अभाव है वहाँ कार्यका भी अभाव होता है जब ज्ञान रूप कारण का सद्भाव ही नहीं है तब उसके कार्य रूप चारित्र का सद्भाव कैसे हो सकता है ? नहीं हो सकता । इसलिये उसे ज्ञानसंपन्न होना ही चाहिये ।

उत्तर—ચારિત્રને પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ હોય છે. જ્ઞાનરૂપ કારણના અભાવમાં ચારિત્રરૂપ કાર્યનો અભાવ રહે છે, એ બધા માને છે. આ ઠેકાણે જ્ઞાનમાં અને અરતિમાં વિરોધનું કથન નથી કર્યું. પણ રતિ અરતિનો વિરોધ હોવાથી ચારિત્ર-મોહનીયના ઉદયથી સંયમમાં અરતિ થાય છે. જ્ઞાન અને અજ્ઞાનમાં જ વિરોધ છે. સંયમમાં અરતિનો અને જ્ઞાનનો કોઈ વિરોધ નથી માટે મેધાવી હોવા છતાં પણ સંયમમાં અરતિનો સદ્ભાવ થાય છે તેથી કોઈ પ્રકારનો આનાં વિરોધ નથી.

ટીકાકારનો એ અભિપ્રાય છે કે જેણે ચારિત્ર-સંયમ અંગીકાર કરેલ છે તે જ્ઞાની છે તો પણ તેને ચારિત્રમોહના ઉદયથી તેમાં અરતિભાવ ઉત્પન્ન થઈ શકે છે. કેમકે ચારિત્રના પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ-કારણ છે, જ્યાં કારણનો અભાવ છે ત્યાં કાર્યનો પણ અભાવ થાય છે. જ્યાં જ્ઞાનરૂપ કારણનો સદ્ભાવ જ નથી ત્યાં તેના કાર્યરૂપ ચારિત્રનો સદ્ભાવ કેવી રીતે હોઈ શકે ? ખરેખર નથી થતો માટે તેને જ્ઞાનસંપન્ન થવું જ જોઈએ. તેને અરતિભાવ ઉત્પન્ન

उसके अरति भाव उत्पन्न होने में कौन विरोध आता है? सहानवस्थालक्षण-साथमें नहीं रहने रूप विरोध वहीं पर होता है जो परस्पर में विरोधी होते हैं, जैसे शीत और उष्ण। ये परस्पर में विरोधी हैं इनका एक-साथ एक जगह रहना नहीं हो सकता। प्रकृत में ज्ञान और अज्ञान, रति और अरति ये परस्पर विरोधी दो धर्म हैं इनका भी एक जगह अवस्थान (रहना) नहीं हो सकता। गृहीत-चारित्र में रति ज्ञानपूर्वक होगी अतः वह ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम के साथ चारित्र मोहनीय के क्षयोपशम का कार्य है और अरति ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम के साथ चारित्र मोहनीय के उदय का कार्य है। उदय में और क्षयोपशम में बड़ा भारी अन्तर है, एक क्षयोपशम का कार्य है—एक उदय का कार्य है। अतः ये दोनों—रति और अरति—परस्पर विरोधी बातें युगपत् एकत्र नहीं रह सकतीं।

शंका—रति और अरति ये चारित्र मोहनीय के भेद स्वरूप नोकषाय के कार्य हैं इन्हें क्षयोपशम और उदय जन्य कैसे कहते हैं?

उत्तर—शंका ठीक है। वहां पर रति और अरति जो नोकषाय के उदय से मानी गई हैं उनसे इनमें भेद है। यहां पर रति शब्द का वाच्यार्थ चारित्र को निर्दोष रूप से पालन करने की भावना और तद-

થવામાં કયો વિરોધ આવે છે? સહાનવસ્થાનરૂપ સાથે નહિ રહેવા રૂપ વિરોધ ત્યા જ થાય છે જે પરસ્પરમાં વિરોધી હોય છે. જેમ ઠંડી અને ગરમી એ પરસ્પરમાં વિરોધી છે તેનું એકી સાથે એક જગ્યાએ રહેવું બની શકતું નથી. પ્રકૃતમાં જ્ઞાન અને અજ્ઞાન, રતિ અને અરતિ, એ પરસ્પર વિરોધી બે ધર્મ છે તેઓનું પણ એક જગ્યાએ અવસ્થાન (રહેવું) બની શકતું નથી, લીધેલાં ચારિત્રમાં રતિ જ્ઞાનપૂર્વક જ થશે. માટે તે જ્ઞાનાવરણીયના ક્ષયોપશમ સાથે ચારિત્ર મોહનીયના ક્ષયોપશમનું કાર્ય છે અને અરતિ જ્ઞાનાવરણીયના ક્ષયોપશમ સાથે ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયનું કાર્ય છે, ઉદયમાં અને ક્ષયોપશમમાં ઘણો જ અંતર છે, એક ક્ષયોપશમનું કાર્ય છે એક ઉદયનું કાર્ય છે માટે એ બન્ને—રતિ અને અરતિ પરસ્પર વિરોધી વાતો યુગપત્ એકત્ર રહી શકતી નથી.

શંકા—રતિ અને અરતિ એ ચારિત્રમોહનીયના લેહસ્વરૂપ નોકષાયનું કાર્ય છે તેને ક્ષયોપશમ અને ઉદયજન્ય કેમ કહે છે?

ઉત્તર—શંકા ઠીક છે ત્યાં જે રતિ અને અરતિ જે નોકષાયના ઉદયથી માનેલ છે તેનાથી એમાં લેહ છે. આ ઠેકાણે રતિ શબ્દનો વાચ્યાર્થ ચારિત્રના નિર્દોષ રૂપથી પાલન કરવાની ભાવના અને તદનુકૂલ પ્રવૃત્તિ છે, અને અરતિનો

યદ્વા-આર્ષત્વાત્તૃતીયાર્થે સપ્તમી, ક્ષણેન=સ્તોકકાલેન અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ-ઇત્યેવં-
રૂપપશ્ચદ્વસ્વાક્ષરોચ્ચારણસમકાલેનેતિ યાવત્ ; યથાખ્યાતચારિત્રે સમ્યગ્રતો મુક્તો
ભવતિ, સંયમસ્ય સમ્યક્પરિપાલનાત્સ્વલ્પકાલેનૈવ મોક્ષભાગી ભવતીતિ ભાવઃ ॥મૂ. ૧॥

નુકૂલ પ્રવૃત્તિ હૈ, ઓર અરતિકા અર્થ યહ હૈ કિ-લિયે હુએ સંયમ કે
પાલન કરને મેં પ્રમાદ કો નહીં હટાના-યદ્વા તદ્વા પ્રવૃત્તિ કરના ।
નોકષાય કે ઉદય સે જો રતિ ઓર અરતિ હોતી હૈ વે રાગ ઓર દ્વેષ કે
વાચક હૈં । અતઃ પૂર્વોક્ત કથન નિર્દોષ હૈ ।

જિસકો સંયમ મેં અરતિ નહીં હૈ ઉસકો કયા હોતા હૈ ? વહ કહતે
હૈ-‘ક્ષણે’ ઇતિ ।

જિસે સંયમ મેં અરતિ નહીં હૈ વહ ક્ષણ મેં મુક્ત હો જાતા હૈ । અત્યન્ત
સૂક્ષ્મકાલ કો ક્ષણ કહતે હૈં । ક્ષણ, કાલ કા સવસે છોટા હિસ્સા હૈ
ઇસસે સૂક્ષ્મ કાલ કા ઓર કોઈ અંશ નહીં હૈ । સંયમ મેં વહ શક્તિ હૈ
કિ જીવ કો એક ક્ષણ મેં મુક્તિ પ્રાપ્ત કરા દેતા હૈ । ઈંધન કો જિસ પ્રકાર
અગ્નિ જલાતી હૈ ઉસી પ્રકાર સંયમ ભી કર્મરૂપી ઈંધન કો ભસ્મ કર
ઇસ જીવ કો એક ક્ષણ મેં શુદ્ધ કર દેતા હૈ ।

અથવા—‘ક્ષણે મુક્તઃ’ યહાં પર આર્ષવાક્ય હોને સે તૃતીયા કે
અર્થ મેં સપ્તમી વિભક્તિ સમજની ચાહિયે । તથા ચ-‘ક્ષણેન મુક્તઃ’
ઇસ પ્રકાર પરિવર્તન હોને સે એક ક્ષણ કે દ્વારા મુક્ત હો જાતા હૈ, યહ

અર્થ એ છે કે-લીધેલા સંયમનું પાલન કરવામાં પ્રમાદને નહિ છોડતા તે.
આડી અવળી પ્રવૃત્તિ કરવી. નોકષાયના ઉદયથી જે રતિ અને અરતિ થાય છે
તે રાગ અને દ્વેષનું વાચક છે માટે પૂર્વોક્ત કથન નિર્દોષ છે.

જેને સંયમમાં અરતિ નથી તેને શું થાય છે ? તે કહે છે—

જેને સંયમમાં અરતિ નથી તે ક્ષણમાં મુક્ત થાય છે. અત્યન્ત સૂક્ષ્મ
કાળને ક્ષણ કહે છે ક્ષણ કાળનો બધાથી નાનો હિસ્સો છે માટે સૂક્ષ્મ કાળનો
બીજો કોઈ અંશ નથી. સંયમમાં તે શક્તિ છે કે જીવને એક ક્ષણમાં મુક્તિ
પ્રાપ્ત કરાવી આપે છે. અગ્નિ લાકડાને જે પ્રકારે બાળે છે તે પ્રકારે સંયમ પણ
કર્મરૂપી ઇંધનને ભસ્મ કરી આ જીવને એક ક્ષણમાં શુદ્ધ કરી નાંખે છે.

અથવા ‘ક્ષણે મુક્ત’ આ ઠેકાણે આર્ષ વાક્ય હોવાથી ત્રીજી વિભક્તિના
અર્થમાં સાતમી વિભક્તિ સમજવી જોઈએ, અને ‘ક્ષણેન મુક્ત.’ આ પ્રકારે
પરિવર્તન હોવાથી એક ક્ષણથી મુક્ત થઈ જાય છે. એ અર્થ થાય છે. તેને

યે ચારિત્રવિપયારતિમન્તસ્તે ચતુર્ગતિકસંસારે દુઃસ્વસાગરમગ્રાશ્વેતસ્તતઃ પરિ-
ભ્રમન્તીતિ દર્શયતિ—‘અણાણા’—ઈત્યાદિ ।

મૂલમ્—અણાણાણ પુઢાવિ ઇગે નિયટ્ઠાંતિ, મંદા મોહેણ
પાડહા, અપરિગ્ગહા ભવિસ્સામો સમુટ્ઠાયલલ્લેકામે અભિગાહઈ,
અણાણાણ મુણિણો પહિલેહંતિ, એત્થ મોહે પુણો પુણો સન્ના નો
હવ્વાણ નો પારાણ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—અનાજ્ઞયા સ્પૃષ્ટા અપ્યેકે નિવર્તન્તે, મન્દા મોહેન પ્રાવૃતાઃ, અપરિગ્રહા
ભવિષ્યામઃ, સમુત્થાય લબ્ધાન્ કામાનભિગાહતે, અનાજ્ઞયા મુનયઃ પ્રત્યુપેક્ષન્તે,
અત્ર મોહે પુનઃ પુનઃ સન્ના નો હવ્યાય નો પારાય ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—‘અનાજ્ઞયે’—ત્યાદિ, આજ્ઞા=જ્ઞાનાચારાદિપ્રવૃત્તિરૂપો જિનાદેશઃ, ત-
દ્વિપરીતા અનાજ્ઞા, તયા સ્પૃષ્ટાઃ=પરીષહોપસર્ગૈશ્ચલિતચેતસઃ, એકે=કણ્ઠરીકપ્રભૃતયો
અર્થ હોતા હૈ । ઇસ કા ભાવ યહ હૈ કિ યથાખ્યાત ચારિત્ર મેં જબ ઇસ
જીવ કી રતિ-રમણ-હો જાતી હૈ તબ યહ ‘અ ઇ ઉ ઋ લૃ’ ઇન પાંચ
હ્રસ્વ અક્ષરોં કે ઉચ્ચારણ કરને મેં જિતના સમય લગતા હૈ ઉતને સમય
માત્ર મેં સિદ્ધ ગતિ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ અર્થાત્-સંયમ કો નિર્દોષ રીતિ
સે પાલને સે થોડે હી કાલ મેં યહ જીવ મુક્તિકા લાભ કર લેતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

જિનકી ચારિત્ર મેં રતિ નહીં હૈ વે ઇસ ચતુર્ગતિરૂપસંસાર સાગર
મેં દુઃસ્વોં કી અનન્ત બોજે કો ફેલતે હુએ ઇતસ્તતઃ ભ્રમણ કરતે રહતે હૈ ।
ઇસ વાત કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

‘અણાણા’—ઈત્યાદિ । જ્ઞાનાચારાદિકોં મેં પ્રવૃત્તિ કરને રૂપ જો
જિનેન્દ્ર ભગવાન્ કા આદેશ હૈ ઉસકા નામ આજ્ઞા હૈ ઇસસે વિપરીત

ભાવ એ છે કે યથાખ્યાત ચારિત્રમાં જ્યારે આ જીવની રતિ-રમણ થાય છે,
ત્યારે તે ‘અ ઇ ઉ ઋ લૃ’ આ પાંચ હ્રસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણ કરવામાં જેટલો
સમય લાગે છે તેટલા સમય માત્રમાં સિદ્ધગતિને પ્રાપ્ત કરી લે છે અર્થાત્
મયમને નિર્દોષ રીતિથી પાળવાથી થોડાજ કાળમાં તે જીવ મુક્તિનો લાભ
કરી લે છે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

જેની ચારિત્રમાં રતિ નથી તે આ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારસાગરમાં દુઃખોના
અનંત યોગને ઉઠાવતા આહીતહીં ભ્રમણ કરે છે, એ વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરેછે—

‘અણાણા’—ઈત્યાદિ જ્ઞાનાચારાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવા રૂપ જે જિનેન્દ્ર
ભગવાનનો આદેશ છે તેનું નામ આજ્ઞા છે, તેનાથી વિપરીત પ્રવૃત્તિ અનાજ્ઞા છે,

ટીકાર્થ:—સૂત્ર મેં “અપ્પં ચ ” યહાં પર જો “ચ.” શબ્દ હૈ ઉસસે દીર્ઘ આયુ કા મી ગ્રહણ હોતા હૈ । “સ્વલુ” શબ્દ અવધારણ-નિશ્ચય અર્થ મેં આયા હૈ । પૂર્વકૃત કર્મ કે ભોગને કે લિયે જો-જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ વહ આયુ હૈ અથવા જિસકે દ્વારા જીવ એક ગતિ સે દૂસરી ગતિ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ વહ આયુ હૈ અથવા અપને દ્વારા કિયે ગયે કર્મ કે અનુસાર પ્રાપ્ત નરકાદિ ગતિ મેં રહેનેવાલે જીવ કો જો અપની સ્થિતિ તક ઓર દૂસરી ગતિ મેં ન જાને દેવે વહ આયુ હૈ । અથવા-અજ્ઞાતિ મેં રહે હુએ જલ કી તરહ જો પ્રતિક્ષણ હાસ કો પ્રાપ્ત હો વહ આયુ હૈ । ઇન તમામ વ્યુત્પત્તિયોં દ્વારા યહી નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈ કિ જો કર્મ-પુદ્ગલપુજ્ઞ ઇસ જીવ કો પ્રાપ્ત હુએ ભવ મેં રોક રહે વહ આયુ હૈ । ક્યોં કિ સુખ દુઃખ કા આધારભૂત ઓર દેહ મેં રહેને વાલે જીવ કો આયુ હી ઉસ ૨ ગતિ મેં અપને ઉદયપર્યન્ત રોકે રહતા હૈ । આયુ કર્મજીવ કો ચારોં હી ગતિયોં મેં ન તો દુઃખ દેતા હૈ ઓર ન વૈષયિક સુખ હી દેતા હૈ । કિન્તુ જો જીવ જિસ ગતિ કે આયુ કો બાંધ કર ઉસ પર્યાય કા ભોગ કરતા હૈ સુખ દુઃખ કે આધારભૂત ઉસ જીવકો વહ ઉસ ગતિ મેં ઉસ વિવક્ષિત પર્યાય મેં રોકે રાખતા હૈ ।

ટીકાર્થ:—સૂત્રમાં “અપ્પં ચ ” આ ઠેકાણે જે “ચ.” શબ્દ છે તેનાથી દીર્ઘ આયુનું અહણ થાય છે “સ્વલુ” શબ્દ અવધારણ-નિશ્ચય-અર્થમાં આવ્યો છે. પૂર્વકૃત કર્મ ભોગવવાને જે જીવને પ્રાપ્ત થાય છે તે આયુ છે, અથવા જે દ્વારા જીવ એક ગતિથી બીજી ગતિમાં જાય છે તે આયુ છે, અથવા પોતાના દ્વારા કરેલા કર્મનુસાર પ્રાપ્ત નરકાદિ ગતિમાં રહેવાવાળા જીવને જે પોતાની સ્થિતિ સુધી બીજી ગતિમાં ન જવાદે તે આયુ છે, અથવા અજ્ઞાતિમાં રહેલાં પાણીની માફક જે પ્રતિક્ષણ ઘટતું જાય છે તે આયુ છે. આવી તમામ વ્યુત્પત્તિયો દ્વારા એ નિષ્કર્ષ નિકળે છે કે જે કર્મપુદ્ગલપુજ્ઞ આ જીવને પ્રાપ્ત થએલા ભવમાં રોકી રાખે તે આયુ છે, કારણકે સુખ-દુઃખના આધારભૂત અને દેહમાં રહેનાર જીવને આયુ જ તે તે ગતિમાં પોતાના ઉદયપર્યન્ત રોકી રાખે છે, આયુકર્મ જીવને ચારે ગતિમાં દુઃખ અને વૈષયિક સુખ નથી આપતું પણ જે જીવ જે ગતિની આયુને બાંધીને તે પર્યાયનો ભોગ કરે છે. સુખ દુઃખના આધારભૂત તે જીવને તે ગતિમાં વિવક્ષિત પર્યાયમાં રોકી રાખે છે.

મન્દાઃ=જડા અનવગતકર્તવ્યવિવેકા इति यावत्, મોહેન=અજ્ઞાનેન મિથ્યાત્વ-મોહનીયેન વા, પ્રાવૃતાઃ=સર્વતોડવગુણિતા મોહાશ્લિષ્ટાત્માન इति यावत्, 'અપિ'-શબ્દસ્ય નિવર્તન્તે इत्यनेन सम्बन्धः, સકલસાવધવિરતિ રૂપાત્સંયમાન્નિવર્તન્તે, અપિ-નિશ્ચયેન, પ્રાપ્તચારિત્રોઽપિ મોહનીયોદયેન પરીપહોપસર્ગાવિર્ભાવાત્પરિઘૃતસાધુવેષો-ઽપિ ભ્રષ્ટચારિત્રો ભવતીત્યર્થઃ ।

પ્રવૃત્તિ અનાજ્ઞા હૈ । इस अनाज्ञा से जो स्पृष्ट हैं अर्थात् जो परीषह और उपसर्गों के आने पर चञ्चलचित्त हो जाते हैं—गृहीत चारित्र में अरतिभाव रखनेवाले बन जाते हैं वे कंडरीक आदि कर्तव्याकर्तव्य-विवेकशून्य मनुष्य अज्ञान अथवा मिथ्यात्व मोहनीय से सर्वथा युक्त होते हुए उस चारित्र से अवश्य भ्रष्ट हो जाते हैं । सूत्र में 'अपि' शब्द निश्चय अर्थ में प्रयुक्त हुआ है । इसका संबंध 'निवर्तन्ते' इस क्रिया के साथ होता है । जिसने सर्वसावधनिवृत्तिरूप चारित्रधर्म को प्राप्त कर लिया है—ऐसा व्यक्ति यदि मोह के उदयसे परीषह और उपसर्ग के आने पर अपने चारित्र से विचलित हो जाता है तो उसे चारित्रभ्रष्ट ही समझना चाहिये अर्थात् वह भ्रष्टचारित्री है । ऐसे व्यक्ति अपने को साधु के वेष से सुसज्जित कर लोगों की दृष्टि में साधुपने का ढोंग रचते हैं । यद्यपि इनके अन्तरंग में उस वेष से जरा भी प्रेम नहीं होता है तो भी बाह्य में वे अपनी प्रवृत्ति इस प्रकार से प्रदर्शित करते हैं—कि जैसे ये सच्चे

આ અનાજ્ઞાથી જે સ્પૃષ્ટ છે અર્થાત્ જે પરિષદ અને ઉપસર્ગોના આવવા પર ચંચલ થઈ જાય છે. લીધેલા ચારિત્રમાં અરતિભાવ રાખવાવાળાં બની જાય છે તે કંડરીક આદિ કર્તવ્યા-કર્તવ્ય વિવેકશૂન્ય મનુષ્ય અજ્ઞાન અથવા મિથ્યાત્વ મોહનીયથી સર્વથા યુક્ત હોવાથી તે ચારિત્રથી અવશ્ય ભ્રષ્ટ થઈ જાય છે.

સૂત્રમાં 'અપિ' શબ્દ નિશ્ચય અર્થમાં પ્રયુક્ત થયો છે તેનો સંબંધ 'નિવર્તન્તે' આ ક્રિયા સાથે થાય છે, જેણે સર્વસાવધનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્ર ધર્મને પ્રાપ્ત કરી લીધો છે તેવો માણસ કદાચ મોહના ઉદયથી પરિષદ અને ઉપસર્ગ આવવાથી પોતાના ચારિત્રથી વિચલિત થાય છે તો તેને ચારિત્ર ભ્રષ્ટન સમજવો જોઈએ. અર્થાત્ તે ભ્રષ્ટચારિત્રી છે. એવી વ્યક્તિ પોતાને સાધુના વેષથી સુસજ્જિત કરી લોકોની દૃષ્ટિમાં સાધુપણનો ઢોંગ રચે છે, તે કે તેના અંતરંગમાં તે વેષથી જરા પણ પ્રેમ હોતો નથી તો પણ બાહ્યમાં ને પોતાની પ્રવૃત્તિ આ પ્રકારથી પ્રદર્શિત કરે છે કે—જાણે તે સાચા નિર્ગન્ધ છે. આ વાતનો

અસાધવોડપિ સ્વાત્માનં સાધું મન્યમાનાઃ કિં કુર્વન્તીત્યાહ-‘અપરિગ્રહા’-ઈતિ અપરિગ્રહાઃ=પરિ-સર્વતો મૂર્છાભાવેન ગૃહ્યત ઇતિ પરિગ્રહઃ, અવિદ્યમાનઃ પરિગ્રહો યેષામિત્યપરિગ્રહાઃ=નિર્ગ્રન્થા વયં ભવિષ્યામ ઇતિ દણ્ડિશાક્યાદયોડવસન્નપાર્શ્વ-સ્થાંદયો વા સમુત્થાય=સાધુવેષં ચારિત્રં ચ ગૃહીત્વા તતો લબ્ધાન્=પ્રાપ્તાન્ કામાન્=શબ્દાદિવિષયાન્ અભિગાહન્તે=સંશ્રયન્તે । અત્ર મૂળે આર્ષત્વાદેકવચનમ્ । અત્ર ‘અપરિગ્રહા’ ઇતિ પશ્ચમમહાવ્રતોપાદાનાદવશિષ્ટાનિ ચત્તારિ મહાવ્રતાન્યપિ વિજ્ઞે-યાનિ, અપરિગ્રહે સર્વેષામન્તર્ભાવાત્ ।

નિર્ગ્રન્થ હૈં । इसी बात का खुलाशा ‘अपरिग्रहाः’ इस पद से सूत्रकारने किया है । जो मूर्च्छाभाव से ग्रहण किया जाता है उसका नाम परिग्रह है । यह परिग्रह जिनके विद्यमान नहीं है-वे अपरिग्रह हैं । दण्डी शाक्यादिक अथवा अवसन्न पासत्थादिक ‘हम निर्ग्रन्थ हैं अथवा आगे चलकर निर्ग्रन्थ हो जावेंगे’ इस अभिप्रायसे साधुवेष को और चारित्र को ग्रहण कर उसकी आड से अपनी वैषयिक वासना की तृप्ति करते हैं । इनकी इस प्रकार की बाह्य प्रवृत्ति देखकर लोग धार्मिक भावना से उनकी हर एक प्रकार से सेवा करते हैं, जिस वस्तु की उन्हें आवश्यकता होती है उसकी पूर्ति करते रहते हैं । इस साधुपने के बहाने से उन्हें जो कुछ भी मिलता है सिर्फ वे उससे अपनी वैषयिक वासना की ही पूर्ति करते रहते हैं वास्तविक सर्वसावद्य विरति रूप चारित्र का आचरण उनसे दूर ही रहता है । इसी बात की पुष्टि ‘समुत्थाय लब्धात् कामान् अभिगाहन्ते’ इस पङ्क्ति से सूत्रकार ने की है । सर्वसावद्य-विरतिरूप चारित्र को प्राप्त

ખુલાસો ‘અપરિગ્રહા.’ આ પદથી સૂત્રકારે કયો છે. જે મૂર્છાભાવથી ગ્રહણ કરે છે તેનું નામ પરિગ્રહ છે આ પરિગ્રહ જેને વિદ્યમાન નથી તે અપરિગ્રહ છે દંડી શાક્યાદિક અને અવસન્ન પાસત્થાદિક ‘અમે નિર્ગ્રન્થ છીએ’ ‘અથવા આગળ આવીને નિર્ગ્રન્થ થઈ જશું’ આ અભિપ્રાયથી સાધુવેષ અને ચારિત્રને ગ્રહણ કરી તેની આડથી પોતાની વૈષયિક વાસનાની તૃપ્તિ કરી લે છે. તેની આ પ્રકારે બાહ્ય પ્રવૃત્તિ દેખીને લોક ધાર્મિક ભાવનાથી તેની દરેક પ્રકારથી સેવા કરે છે. જે વસ્તુની તેને આવશ્યકતા હોય તેની પૂર્તિ કરતા રહે છે, આ સાધુપણના બહાનાથી જે કંઈ પણ મળે છે ક્રૂર તેનાથી પોતાની વૈષયિક વાસનાની જ પૂર્તિ કરે છે વાસ્તવિક સર્વસાવધવિરતિરૂપ ચારિત્રનું આચરણ તેનાથી દૂર જ રહે છે. આ વાતની પુષ્ટિ ‘સમુત્થાય લબ્ધાન્ કામાન્ અભિગાહન્તે’ આ પંક્તિથી ‘રે કહ્યું’ છે સર્વસાવધવિરતિરૂપ ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરવાને માટે બાહ્ય અને

કરને કે લિયે બાહ્ય ઓર આભ્યન્તર કારણોં કી જરૂરત હોતી હૈ । બાહ્ય કારણ સે इतना કામ નહીં બનતા જિતના અન્તરંગ સે । ચારિત્ર કો અંગી-કાર કરને મેં યદ્યપિ ઉપાદાન કારણ આત્મા હૈ પરન્તુ इन दो बाह्य आभ्यन्तर कारणों से उपादान में वह शक्ति आजाती है कि जिससे उसे अपने लिये हुए संयम में रति एवं संसार-शरीर और भोगों में अरति स्वतઃ આજાતી હૈ । પ્રકૃત મેં યહાં ચારિત્રમોહનીય કા ઉપશમાદિક અન્તરંગ કારણ હૈ ઓર પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં સે સર્વથા વિરતિભાવ કી જાગૃતિ બાહ્ય કારણ હૈ । જૈસે અગ્નિ ઓર ધૂમ કી (પરસ્પર અનિયતિ) વિષમ વ્યાપ્તિ હૈ ઉસ પ્રકાર સમ્યક્ ચારિત્ર કે સાથ અન્તરંગ કારણ ચારિત્ર મોહનીય કે ઉપશમ કી વિષમ વ્યાપ્તિ નહીં હૈ—અર્થાત્ પરસ્પર સમનિયત હૈ, જહાં પર ચારિત્રમોહનીય કા ઉપશમાદિ હૈ વહાં પર નિયમ સે સમ્યક્ ચારિત્ર હૈ ઓર જહાં પર સમ્યક્ ચારિત્ર હૈ વહાં પર નિયમ સે ચારિત્ર મોહનીય કા ઉપશમાદિ હૈ । ઇસ પ્રકાર સમ્યક્ ચારિત્ર ઓર ચારિત્ર મોહનીય કે ઉપશમાદિકોં કી સમવ્યાપ્તિ (પરસ્પર નિયતિ) હૈ । પરન્તુ અન્તરંગ મેં ચારિત્ર મોહનીય કે ઉપશમાદિક કે અભાવ મેં જો બાહ્ય મેં સર્વ-સાવધવિરતિ રૂપ ચારિત્ર કી સત્તા માલૂમ પડતી હૈ—વહ

આભ્યન્તર કારણોની જરૂરત હોય છે. બાહ્ય કારણોથી આટલું કામ નથી બનતું જેટલું અન્તરંગથી. ચારિત્રના અંગીકાર કરવામાં યદ્યપિ ઉપાદાન કારણ આત્મા છે પરંતુ આ બે—બાહ્ય, આભ્યન્તર-કારણોથી ઉપાદાનમાં તે શક્તિ આવી જાય છે કે જેનાથી તેને પોતાને માટે સંયમમાં રતિ અને સંસાર શરીર અને ભોગોમાં અરતિ આપમેળે આવે છે. પ્રકૃતમાં અહીં આ ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિક અંતરંગ કારણ છે, અને પાંચે ઇન્દ્રિયોના વિષયોથી સર્વથા વિરતિલાવની જાગૃતિ બાહ્ય કારણ છે, જેમ અગ્નિ અને ધૂમની (પરસ્પર અનિયતિ) વિષમ વ્યાપ્તિ છે તે પ્રકારે સમ્યક્ ચારિત્રની સાથે અંતરંગ કારણ ચારિત્રમોહનીયના ઉપશમની વિષમ વ્યાપ્તિ નથી. અર્થાત્ પરસ્પર સમનિયત છે. જ્યાં ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિ છે ત્યાં નિયમથી સમ્યક્ ચારિત્ર છે. અને જ્યાં સમ્યક્ ચારિત્ર છે ત્યાં નિયમથી ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિ છે. આ પ્રકારે સમ્યક્ ચારિત્ર અને ચારિત્રમોહનીયના ઉપશમાદિકોની સમ વ્યાપ્તિ (પરસ્પર નિયતિ છે) પરંતુ અન્તરંગમાં ચારિત્ર મોહનીયના ઉપશમાદિકના અભાવમાં જે બાહ્યમાં સર્વસાવધ વિરતિરૂપ ચારિત્રની સત્તા માલૂમ પડે છે તે કેવળ એક ઢાંગ છે. તે ઢાંગ ઉલ્ટો

કેવલ એક ઢોંગ હૈ । વહ ઢોંગ ઉલ્ટા જીવ કો કર્મબન્ધ કા કારણ હોતા હૈ । એસે વ્યક્તિ ચારિત્ર કા ઢોંગ રચકર ઉસકી આડ મેં અપને વિષય-કષાયોં કી હી પુષ્ટિ કિયા કરતે હૈં । યદ્યપિ સૂત્રમેં ‘અપરિગ્રહ’ ઇસ શબ્દ સે કેવલ પાંચવેં મહાવ્રત કા હી ગ્રહણ બતલાયા હૈ પરન્તુ અવશિષ્ટ ચાર મહાવ્રતોંકા ભી ઇસી એક પદ સે ગ્રહણ હો જાતા હૈ ।

ઇસી પ્રકાર જો વાસ્તવિક રૂપ સે અપરિગ્રહી નહીં હૈં કિન્તુ પરિગ્રહ-ત્યાગ કા ઢોંગ રચતે હૈં, ઉસીસે યહ ભી સમજ્ઞ લેના ચાહિયે કિ જો વાસ્તવિક રૂપસે અહિંસાદિમહાવ્રતધારી નહીં હૈં, કિન્તુ અહિંસામહા-વ્રતી આદિ હોને કા ઢોંગ કરતે હૈં, વે કેવલ લોકોં કી પ્રતારણા કરને કે લિએ હી અપની એસી પ્રવૃત્તિ કરતે હૈં । દ્રવ્યલિંગી સાધુઓં કી પ્રવૃત્તિ ઇસી ઢંગ કી હી હોતી હૈ । ઇનકે આત્મા મેં ઉસ સમકિતજ્યોતિ કા બિલકુલ હી પ્રકાશ નહીં હોતા હૈ કિ જિસકે સદ્ભાવ સે મહાવ્રતોં મેં સમ્યક્પના આતા હૈ । ઇનકે ઉપર કે મહાવ્રત હૈં । જિસ પ્રકાર નટ અનેક વેષોં કો ધારણ કરતા હુઆ ભી અન્તરહંગ મેં ઉન ૨ વેષોંકે પરિણામોં સે સર્વથા શૂન્ય રહતા હૈ ઉસી પ્રકાર યે દ્રવ્યલિંગી ભી બાહ્ય મેં મહા-વ્રતી હોનેકા કેવલ એક ઢોંગ હી કિયા કરતે હૈં ઉસસે ઉનકી આત્મા

જીવને કર્મબન્ધનું કારણ થાય છે, એવી વ્યક્તિ ચારિત્રનો ઢોંગ રચીને તેની આડમાં પોતાના વિષય કષાયોની જ પુષ્ટિ કરે છે, યદ્યપિ સૂત્રમાં ‘અપરિગ્રહ’ આ શબ્દથી કેવળ પાંચમા મહાવ્રતનું જ ગ્રહણ બતાવ્યું છે પરંતુ અવશિષ્ટ ચાર મહાવ્રતોનું પણ એમ એક પદથી ગ્રહણ થાય છે.

આ પ્રકારે જે વાસ્તવિક રૂપથી અપરિગ્રહી નથી પણ પરિગ્રહત્યાગનો ઢોંગ રચે છે. તેનાથી એ પણ સમજી લેવું જોઈએ કે જે વાસ્તવિક રૂપથી અહિંસાદિ મહાવ્રતધારી નથી પણ અહિંસા-મહાવ્રતી આદિ હોવાનો ઢોંગ કરે છે તેણે કેવળ લોકોની પ્રતારણા કરવા માટે જ પોતાની એવી પ્રવૃત્તિ કરે છે. દ્રવ્યલિંગી સાધુઓની પ્રવૃત્તિ આ ઢંગની હોય છે. તેના આત્મામાં સમકિત જ્યોતિનો બિલકુલ જ પ્રકાશ નથી હોતો કે જેના સદ્ભાવથી મહાવ્રતોમાં સમ્યક્પણ આવે. તેના ઉપરના મહાવ્રતો છે જે પ્રકારે નટ અનેક વેષોને ધારણ કરે છે પણ અંતરંગમાં તે તે વેષોના પરિણામોથી સર્વથા શૂન્ય રહે છે, તે પ્રકારે એ દ્રવ્યલિંગી પણ બાહ્યથી મહાવ્રતી હોવાનો કેવળ એક ઢોંગ જ કરે છે, જેનાથી તેનો આત્મા બિલકુલ રજિત થતો નથી, ભલે તેની પ્રવૃત્તિથી બાહ્યજન રજિત થાય, પરંતુ તેનો આત્મા સ્વતઃ તદ્દનુકૂળ પ્રવૃત્તિથી શૂન્ય હોવાથી બિલકુલ

તદિત્યં દ્રવ્યલિઙ્ગિનો નટા ઇવ તે હિંસામૃષાઽદત્તાદાનાદિના લોકાન્ વશ્ચયન્તિ ।
તે પુનસ્તલ્લાભાય પ્રવૃત્તા ભવન્તીત્યાહ—‘અનાજ્ઞયે’—તિ ।

અનાજ્ઞયા=ભગવદાજ્ઞાબહિર્ભૂતયા સ્વચ્છન્દમત્યા મુનયઃ=મુનિવેષધારિણઃ,
શબ્દાદિકામોપાયે પ્રત્યુપેક્ષન્તે=પ્રવર્તન્તે કામભોગવિનિવિષ્ટચિત્તા ભવન્તીત્યર્થઃ ।
અત્ર=અસ્મિન્ કામભોગાસક્તિરૂપે મોહે, દ્રવ્યમોહે=મઘાદૌ, ભાવમોહે=સંસારેઽજ્ઞાને

બિલકુલ હી રંજિત નહીં होती है । भले ही—इनकी प्रवृत्ति से बाह्यजन
रंजित नहीं होती है, भले ही—इनकी प्रवृत्ति से बाह्यजन रंजित हो जावें,
परन्तु इनका आत्मा स्वतः तदनुकूल—प्रवृत्ति से शून्य होने से बिलकुल
भी रंजित नहीं हो पाता है; हिंसा, झूठ, चोरी आदि आस्रवों में ही
इनका अन्तरङ्ग लालसायुक्त बना रहता है । इसीसे ये लोकों को
ठगते रहते हैं । ऐसी प्रवृत्ति इनकी क्यों होती है ? इस का कारण बताते
हुए सूत्रकार कहते हैं कि—‘अनाज्ञया मुनयः प्रत्युपेक्षन्ते’ महाव्रतों
को धारण करने का ढोंग ये लोग इसी लिये करते हैं कि ये भगवदाज्ञा
से बहिर्भूत हैं । भगवान की आज्ञा—ग्रहण किये हुए महाव्रतों को अन्त-
रङ्ग की सच्ची लगन के साथ पालने की है । पांच आस्रवों का नवकोटि
से त्याग किये विना उनका शुद्ध पालन नहीं हो सकता है । जो इस प्रकार
की आज्ञा से बहिर्भूत हैं और “जो हम कहते हैं वह सत्य एवं शुद्ध
है” इस प्रकार की स्वच्छन्द्र प्रवृत्तिशाली हैं वे मुनि वेषधारी साधु
शब्दादिक पांच इन्द्रियों के विषयों में प्रवृत्त रहते हैं । “अत्र मोहे पुनः
पुनः संज्ञा नो हव्याय नो पाराय” मोह दो प्रकार का है—एक द्रव्यमोह

પણ રંજિત થતો નથી, હિંસા, જુઠ, ચોરી, આદિ આશ્રવોમાં જ તેની અંતરંગ
લાલસા બની રહે છે જેથી તે લોકોને ઠગતા રહે છે. એવી પ્રવૃત્તિ તેની કેમ
થાય છે તેનું કારણ બતાવતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—

‘અનાજ્ઞયા મુનયઃ પ્રત્યુપેક્ષન્તે’ મહાવ્રતોને ધારણ કરવાનો ઢોંગ તે લોક
એ માટે કરે છે કે—તેઓ ભગવદ્આજ્ઞાથી બહિર્ભૂત છે. ભગવાનની આજ્ઞા
પ્રહણ કરેલા મહાવ્રતોને અંતરંગની સાચી લાગણીથી પાળવાની છે. પાંચ આશ્ર-
વોના નવ કોટિથી ત્યાગ કર્યા વિના તેનું પાલન થતું નથી. જે આ પ્રકારની
આજ્ઞાથી બહિર્ભૂત છે અને “જે અમે કહીએ છીએ તે સત્ય અને શુદ્ધ છે”
આ પ્રકારની સ્વચ્છંદ પ્રવૃત્તિશાલી છે તે મુનિવેષધારી સાધુ શબ્દાદિક પાંચ
ઇન્દ્રિયોના વિષયોમાં પ્રવૃત્ત રહે છે. ‘અત્ર મોહે પુન પુન. સજ્ઞા નો હવ્યાય નો પારાય’
મોહ બે પ્રકારનો છે—એક દ્રવ્યમોહ અને બીજો ભાવમોહ. મઘાદિક દ્રવ્યમોહ

च पुनः पुनः=अत्यन्तं मुहुर्वा सन्नाः=विषयाभिलाषिणो मूढा निमग्नाः सन्तो नो हव्याय, हव्यं=गार्हस्थ्यं प्रकामकामभोगित्वं तस्मै, पारः संयमस्तस्मै=तदर्थं न भवति, नैतल्लोकाय न परलोकाय च, न ते गृहस्था नापि मुनयो, यथा मध्येनदिनिमग्नास्ते न कथमपि पारं गन्तुं शक्नुवन्ति, अपि तु निमज्जन्त्येव, तथैव ते भवन्तीत्यर्थः, ये परिधृतसाधुवेवाः कामोपायेषु सज्जन्ते ते न गृहस्था नापि मुनयो वा भवितुमर्हन्तीति तात्पर्यम् । अदृढचित्तानां मुनिवेषधारिणां पूर्वं हिरण्य-सुवर्ण-धन-धान्य-गृह-गृहिणी-पुत्र-मित्रादेः परित्यक्ततया न गृहस्थत्वं, चारित्र्यस्य सम्यगपरिपालनेन वान्ताभिलाषितया नाप्यनगारत्वमुपपद्यत इति भावः ॥ सू० २ ॥

और दूसरा भावमोह । मद्यादिक द्रव्यमोह है, संसार एवं अज्ञान भावमोह है । कामभोगों में आसक्तिका नाम मोह है । इन भोगों की आसक्तिमें जीव की प्रवृत्ति अज्ञान से होती है । कामभोगों की प्रवृत्ति को उत्तेजना मद्यादिक के सेवन से जीवों को मिलती है । इसलिये उन्हें द्रव्यमोह कहा है । विषयाभिलाषी मूढ जीव इस मोह में अत्यन्त अथवा बारंबार प्रवृत्ति करते हुए न तो यथेच्छ कामभोगादि भोग सकते हैं और न संयम ही पाल सकते हैं । जैसे नदी की मझधार में निमग्न हुआ प्राणी न इस पारका रहता है और न उस पार का रहता है, उसी प्रकार ऐसे प्राणी न इस लोक के रहते हैं और न उस लोक के ही रहते हैं—न वे सच्चे गृहस्थ ही बन पाते हैं और न सच्चे मुनि ही । नदी की मझधार में निमग्न प्राणी जिस प्रकार मझधार में ही डूब जाता है, उसी तरह से ये प्राणी भी साधुवेष छोड़कर विषयों में लवलीन बन बीच

છે, સંસાર અને અજ્ઞાન ભાવમોહ છે. કામભોગોમાં આસક્તિ તેનું નામ મોહ છે, તે ભોગોની આશક્તિમાં જીવની પ્રવૃત્તિ અજ્ઞાનથી થાય છે. કામભોગોની પ્રવૃત્તિને ઉત્તેજના મદ્યાદિકના સેવનથી જીવોને મળે છે, માટે તેને દ્રવ્યમોહ કહ્યો છે, વિષયાભિલાષી મૂઢ જીવ આ મોહમાં અત્યંત અને વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરવા છતાં પણ નથી યથેચ્છ કામભોગાદિ ભોગવી શકતા, અને નથી સંયમનું પાલન કરી શકતા જેમ નદીની મજધારમાં નિમગ્ન થયેલ પ્રાણી નથી આ પાર જઈ શકતું કે નથી તે પાર જઈ શકતું. એ પ્રકારે આવા પ્રાણી, નથી આ લોકના રહેતા અગર નથી પરલોકના રહેતા નથી તેઓ સાચા ગૃહસ્થી બની શકતા, અને નહિ સાચા મુનિ નદીની મજધારમાં નિમગ્ન પ્રાણી જેમ મજધારમાં જ ડુબી જાય છે તે પ્રકારે આ પ્રાણી પણ સાધુવેષ છોડીને વિષયોમાં લવલીન

ये संयमे रतिं, शब्दादिविषये चारतिं विदधानास्ते कीदृशा भवन्तीति दर्शयति-
'विमुक्ता' इत्यादि।

मूलम्—विमुक्ता हु ते जणा जे जणा पारगामिणो, लोभम-
लोभेन दुगुंछमाणे लच्छे कामे नाभिगाहइ, विणावि लोभं निक्खस्स
एस अकम्मे जाणइ पासइ, पडिलेहाए नावकंखइ, एस अण-
गारि-त्ति पवुच्चइ ॥ सू० ३ ॥

छाया—विमुक्ता हु ते जना ये जनाः पारगामिनः, लोभमलोभेन जुगुप्समानो
लब्धान् कामान्नाभिगाहते, विनापि लोभं निष्क्रम्य एषः अकर्मा जानाति पश्यति
प्रत्युपेक्ष्य नावकाङ्क्षति एषः अनगार इति प्रोच्यते ॥ सू० ३ ॥

टीका—'विमुक्ता' इत्यादि, 'पारगामिनः' पारो मुक्तिस्तद्वेतुर्ज्ञानदर्शनचा-
रित्राण्यपि पारः कार्यकारणयोरभेदात्, तेन पारं मोक्षं तद्वेतुश्च ज्ञानादिकं गन्तुं=प्राप्तुं
ही में लटकते रहते हैं, न वे साधु ही हैं और न गृहस्थ ही। संयम पालन
करने में जिनके चित्त में दृढ़ता तो है नहीं, परन्तु मुनि का वेष धारण
कर लिया है, हिरण्य-सुवर्ण, धन-धान्य, गृह-गृहिणी पुत्र-मित्रादिक का
मुनिव्रत धारण करने के पहिले त्याग भी कर दिया है अतः गार्हस्थिक
जीवन के लिये उपयोगी वस्तु का उनके पास सद्भाव न होने से न उनमें
गृहस्थता है, और चारित्र का सम्यक् रीति से पालन नहीं करने की वजह
से मुनिपना ही है ॥ सू० ॥ २ ॥

जो संयम में रति एवं शब्दादि विषयों में अरति करते हैं, वे कैसे
होते हैं? इस बात का खुलाशा करते हैं—

'विमुक्ता हु ते जणा' इत्यादि। कार्यकारण में अभेद-विवक्षा होने से

जनी वयमां न लटकता रहे छे. नथी तेजो साधु छे अगर नथी तेजो गृहस्थी.
संयम पाणवामां जेना चित्तमां द्रढता छे न छि, परंतु मुनिनो वेष धारण
करी दीघो छे. हिरण्य-सुवर्ण धन-धान्य, गृह-गृहिणी पुत्र-मित्रादिकनो मुनिव्रत
धारण करवा पड़ेलां न त्याग करेला छे माटे गृहस्थी जवन माटे उपयोगी
वस्तुनो सद्भाव न होवाथी नथी तेनामां गृहस्थीपाणुं अने आचारित्रने सम्यक्
रीतिथी पालन न छि करवाथी मुनिपाणुं पाणु नथी ॥ सू० २ ॥

जे संयममां रति अने शब्दादि विषयोमां अरति करे छे ते केवा डोय
छे? तेनो खुलासा करे छे.—

'विमुक्ता हु ते जणा' इत्यादि—कार्यकारणमां अभेदविवक्षा होवाथी पार

શીલં યેષાં તે પારગામિનો યે જના મુમુક્ષવસ્તે વિમુક્તા વિવિધભાવનયા દ્રવ્યતો વિક્તપરિવારસંસર્ગેણ, ભાવતો વિષયકષાયાદિતઃ પ્રતિસમયં મુચ્યમાના મોક્ષ્ય-માણા વા વિમુક્તાઃ હુ=નિશ્ચયેન ભવન્તીતિ સમ્બન્ધઃ। વિમુક્તાઃ કુતસ્તે ભવન્તીત્યાહ-‘લોભ’-મિતિ ‘લોભઃ’=લોભમોહનીયોદયેન પરવસ્તુગ્રહણેચ્છા, તમ્ અલોભેન=

પાર શબ્દ કા અર્થ મુક્તિ તથા-મુક્તિ કે કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન, સમ્ય-ગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર હૈ । ઇસ પાર કો પ્રાપ્ત કરને કા જિનકા સ્વભાવ હૈ વે પારગામી કહે જાતે હૈ । જો મુમુક્ષુ હૈ વે અનેક પ્રકાર કી સાંસારિક ભાવનાઓં સે રહિત હોતે હૈ । ‘વિમુક્ત’ ઇસ પદ મેં ‘વિ’ ઉપસર્ગ ઓર ‘મુક્ત’ એસે દો શબ્દ હૈ । ‘વિ’ કા અર્થ અનેક પ્રકાર કી ભાવના હૈ । ‘મુક્ત’ શબ્દ કા અર્થ દ્રવ્ય ઓર ભાવ સે રહિત હોના હૈ ‘હુ’ શબ્દ કા અર્થ નિશ્ચય હૈ । અર્થાત્ જિનકો મુક્તિ પ્રાપ્ત કરને કી ઇચ્છા હોતી હૈ એસે પ્રાણી નિયમતઃ દ્રવ્ય સે-ધનાદિક એવં પરિવાર કે સંસર્ગ સે તથા ભાવસે-વિષયકષાયાદિકોં સે પ્રતિસમય રહિત હોતે હૈ ।

લોભમોહનીય કે ઉદય સે પરવસ્તુ કે ગ્રહણ કરને કી ઇચ્છા કા નામ લોભ હૈ । ઇસસે વિપરીત અલોભ હૈ । ‘જુગુપ્સમાન’ શબ્દ કા અર્થ જીતને વાલા, યા નિગ્રહ કરને વાલા હૈ । વિમુક્ત હોને મેં યહ હેતુ-ગર્ભિત વિશેષણ હૈ । ઇસસે યહ નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈ કિ વે વિમુક્ત ઇસલિયે હૈ કિ ઉન્હોંને લોભ કો સંતોષ સે નિગૃહીત કર દિયા હૈ ।

શબ્દનો અર્થ મુક્તિ અને મુક્તિના કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ ચારિત્ર છે આ પારને પ્રાપ્ત કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે પારગામી કહેવાય છે.

જે મુમુક્ષુ છે તે અનેક પ્રકારની સાંસારિક ભાવનાઓથી રહિત હોય છે. ‘વિમુક્ત’ આ પદમાં ‘વિ’નો અર્થ અનેક પ્રકારની ભાવના છે. ‘મુક્ત’ શબ્દનો અર્થ દ્રવ્ય અને ભાવથી રહિત થવું ‘હુ’ શબ્દનો અર્થ નિશ્ચય છે. અર્થાત્ જેને મુક્તિ પ્રાપ્ત કરવાની ઇચ્છા થાય છે એવો પ્રાણી નિયમતઃ દ્રવ્યથી-ધનાદિક અને પરિવારના સંસર્ગથી, તથા ભાવથી-વિષયકષાયાદિકોથી પ્રતિસમય રહિત થાય છે.

લોભમોહનીયના ઉદયથી પરવસ્તુને ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છા તેનું નામ લોભ છે તેથી વિપરીત અલોભ છે. ‘જુગુપ્સમાન’ શબ્દનો અર્થ છુતવાવાલા અને નિગ્રહ કરવાવાળા છે. વિમુક્ત હોવામાં તે હેતુગર્ભિત વિશેષણ છે તેથી એ નિષ્કર્ષ નીકળે છે કે તે વિમુક્ત એટલા માટે છે કે તેઓએ લોભને સંતોષથી નિગૃહીત કરેલ છે.

તદ્વિરુદ્ધેન સન્તોષેણ જુગુપ્સમાનઃ=નિન્દન્, સૂત્રેઽસ્મિન્ પૂર્વં बहुवचनप्रसङ्गेऽत्रा-
ગ્રેઽપિ સર્વત્રૈકવચનં તુ જાત્યેકત્વવિવક્ષયા સમર્થનીયમ્ । લોભો હિ સંસારગર્ત-
પાતને પ્રથમો ગણ્યતે । લોભસ્તુ જીવસ્ય વિમોહનમાકુલીકરણમિતિ યાવત્, લુબ્ધો

સૂત્ર મેં પહિલે बहुवचन का प्रयोग किया है, बाद में जो सर्वत्र एक
वचन का प्रयोग हुआ है वह जाति की अपेक्षा से समझना चाहिये ।

परवस्तु को अपनाने की इच्छा लोभमोहनीय के उदय से जीवों
को होती है । लोभ दो प्रकार का है—एक बादरलोभ, दूसरा सूक्ष्मलोभ ।
बादरलोभ का सद्भाव आगम में ९वें गुणस्थान तक, तथा सूक्ष्मलोभ
का सद्भाव १०वें गुणस्थान तक प्रकट किया है । इसलिये जबतक आगे २
के गुणस्थानों की प्राप्ति नहीं हुई है तब तक ऐसे जीवों को लोभ का
उदयरहता ही है, अतः जब लोभ का उदय है तो उसका कार्य भी वहां
होना चाहिये ? इस शंका का निराकरण करते हुए सूत्रकार कहते हैं
कि—‘लोभम् अलोभेन जुगुप्समानः’ वे जीव लोभकषाय को संतोष से
जीतते हैं । मुमुक्षु जीव परवस्तु के लाभ से आकृष्ट एवं अलाभ से
असंतुष्ट नहीं होते ।

लोभ का निराकरण करते हुए टीकाकार कहते हैं कि—जीवों को
संसाररूपी गड्ढे में गिराने का सर्वप्रथम कारण लोभ माना गया है जो
जीवों को आकुलितपरिणामी बना देता है । लुબ્ધક રાત-દિન વ્યાકુલ હી

સૂત્રમાં પહેલાં બહુવચનનો પ્રયોગ કરેલ છે બાદમાં જે સર્વત્ર એક વચ-
નનો પ્રયોગ થયેલ છે તે જાતિની અપેક્ષાથી સમજવું જોઈએ.

પરવસ્તુને અપનાવવાની ઇચ્છા લોભમોહનીયના ઉદયથી થાય છે. લોભ
જે પ્રકારના છે. એક બાદરલોભ, બીજો સૂક્ષ્મલોભ.

બાદરલોભનો સદ્ભાવ આગમમાં ૯મા ગુણસ્થાન સુધી, તથા સૂક્ષ્મલોભનો
સદ્ભાવ ૧૦માં ગુણસ્થાન સુધી પ્રગટ કરેલ છે, માટે જ્યાંસુધી આગળ આગ-
ળના ગુણસ્થાનોની પ્રાપ્તિ નથી થઈ ત્યાં સુધી એવા જીવોને લોભનો ઉદય રહે જ
છે, માટે જ્યારે લોભનો ઉદય છે તો તેનું કાર્ય પણ ત્યાં હોવું જોઈએ ? આ
શંકાનું નિરાકરણ કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે—‘લોભમ્ અલોભેન જુગુપ્સમાનઃ’
તે જીવ લોભકષાયને સંતોષથી જીતે છે. મુમુક્ષુ જીવ પરવસ્તુના લાભથી આકૃષ્ટ
અને અલાભથી અસંતુષ્ટ થતાં નથી.

લોભનું નિરાકરણ કરતાંયકા ટીકાકાર કહે છે કે—જીવોને સંસારરૂપી ખાડામાં
પડવાનું સર્વ પ્રથમ કારણ લોભ જ છે. લોભ જીવોને આકુલિતપરિણામી બનાવી

હિ રોત્રિન્દિવં સમાકુલ એવાવતિષ્ઠતે, 'કદા કુતઃ કથં કુત્ર ધનાદિકં લપ્સ્યે' इत्याशा-
 ग्रस्तो दुर्लङ्घ्य पर्वतमपि लिलङ्घयिषति, अपारपारावारमपि तितीर्षति, दुर्गमगिरिकुञ्जेषु
 वंभ्रमीति, निजवान्धवनिकरमपि मिमारयिषति, दुर्गममपि जिगमिषति, बहु भारं
 वावहीति, दुःसहं क्षुधमपि सोढुमिच्छति, पापं चिकीर्षति, कुलशीलजातिधैर्याणि
 च परिजिहासति, किमधिकेन ? अज्ञानान्धकारावृतायां लोभरात्रौ प्राणातिपातादि-
 दोषतस्करैરાत्मधनं लुण्ठयति, चित्तमहारण्ये मोहान्धकारे લોભપિશાચં નર્તયતિ ।
 લોભાકુલિતચેતા હિ જલે જીર્ણપત્રમિવ, વાયૌ લઘુતૃણમિવ, ગગને શરન્મેઘ ઇવેતસ્તતઃ
 સંસારે પરિભ્રમતિ । લોભિનો જનસ્ય સકલોઽપિ ગુણો દોષાયતે । લુબ્ધો હિ
 સર્વાપદાસ્પદં ભવતિ, ઉક્તञ्च—

बना रहता है । वह 'किस समय कहां से कैसे धनादिक का अर्जन करूंगा'
 इस आशा से प्रेरित हो दुर्लघ्य पर्वतादिकों को भी पार करने की इच्छा
 रखता है, अपार समुद्र को भी तैरने की भावना रखता है, दुर्गम-पहाड़ी
 झाड़ियों में भी भ्रमण करने की कामना करता है, अपने बांधवों को भी
 मारने का मनोरथ करता रहता है, जहां कोई नहीं जा सकता ऐसे
 भयंकर स्थान में भी जाने की चाहना करता है, बहुत भारी बोझ को
 भी ढोता है, दुःसह क्षुधा को भी सहन कर लेता है, पाप करने के लिये
 भी उतारु हो जाता है, अपने कुल, शील, जाति और धैर्य को मौका पड़ने
 पर छोड़ने के लिये कटिबद्ध हो जाता है । अधिक क्या कहा जाय ? अज्ञान
 रूपी अन्धकार से अच्छादित इस लोभरूपी महारात्रि में यह जीव
 आत्मधन को प्राणातिपातादिकपापरूपी चोरों से सदा चुराता रहता है ।

દે છે. લુબ્ધક રાત દિવસ બ્યાકુળ જ બની રહે છે, 'કયા વખતે કયારે કેવી રીતે
 ધનાદિકનું અર્જન કરું' આવી આશાથી પ્રેરિત થઈ ઓળંગી ન શકાય તેવા
 પર્વતોને પણ પાર કરવાની ઇચ્છા કરે છે, અપાર સમુદ્રને તરવાની પણ ભાવના
 રાખે છે, દુર્ગમ-પહાડી ઝાડીઓમા પણ ભ્રમણ કરવાની ઇચ્છા રાખે છે, પોતાના
 ભાઈઓને પણ મારવાના મનોરથો સેવે છે, જ્યાં કોઈ જઈ શકતું નથી તેવા
 ભયંકર સ્થાનમા જવાની પણ હિંમત કરે છે, ઘણા ભારે યોગ્ય પણ ઉઠાવે છે,
 દુઃસહ ભૂખને પણ સહન કરી લે છે, પાપ કરવાને માટે પણ તૈયાર થઈ જાય
 છે, પોતાનું કુળ, શીલ, જાતિ અને ધૈર્યને પણ વખત મળતા છોડવાને તૈયાર
 થઈ જાય છે. અધિક કેટલું કહેવું - અજ્ઞાનરૂપી અધકારથી આચ્છાદિત આ
 લોભરૂપી મહારાત્રિમા આ જીવ આત્મધનને પ્રાણાતિપાતાદિકપાપરૂપી ચોરોથી

પુરુષસ્યાયુર્વિદ્યુદિવ ક્ષણભદ્ગુરં, તૈલરહિતો દીપો યથા સ્વલ્પેનૈવ કાલેન નાશ-
મેતિ તથાઽઽયુરપિ તત્તદ્ભવસમ્બન્ધિભોગ્યકર્માભાવે સ્વલ્પેનૈવ કાલેન સમાપ્તિમુપ-
ગચ્છતિ । આયુર્હિં જલતરજ્જમિવ, જલસ્થિતેન્દુપ્રતિવિમ્બમિવ, વિદ્યુદિવ ધર્તુમશક્યં
ભવતીત્યાયુપોઽલ્પત્વં માનવાનામિત્યભિપ્રાયમેવ મનસિ નિધાય દર્શયતિ—“ઇહ એકેષાં
માનવાનામલ્પમાયુષ્કમ્ ” । અત્રૈકેષામિતિ કથનેન સંયમરહિતાનાં સાવધાનુષ્ઠાનેન
દીર્ઘમપ્યાયુરલ્પમિવ ભવતિ, તથૈવ સંયમિનાં ચ સ્વલ્પમપ્યાયુર્નિરવધાનુષ્ઠાનેન દીર્ઘા-

જિસ પ્રકાર તૈલસે રહિત દીપક થોડે હી સમય મેં વુદ્ધ જાતા હૈ
ઉસી પ્રકાર આયુકર્મ બી તત્તદ્ભવસમ્બન્ધી કર્મ પુદ્ગલોં કે અભાવસે
થોડેસે હી કાલમેં સમાપ્ત હો જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર જલકી તરજ્જ ઓર
પાનીમેં પ્રતિવિમ્બિત ચન્દ્રમા કા પ્રતિવિમ્બ, અથવા બિજલી લાખ પ્રયત્ન
કરને પર બી નહીં સ્થિર કિયે યા ઠહરાયી જા સકતી હૈં ઉસી પ્રકાર
તત્તદ્ભવસમ્બન્ધી આયુકી સમાપ્તિ હોને પર ઉસે એક ક્ષણ બી ફિર નહીં
વઢાયા યા ઠહરાયા જા સકતા । હસી અભિપ્રાય કો ચિત્તમેં ધારણ કર
સૂત્રકારને—“ઇહ એકેષાં માનવાનામ્ અલ્પમ્ આયુષ્કમ્ ” યહ કહા હૈ ।
અબ હસી વાતકો સ્પષ્ટ કરતે હૈં—

યહાં પર કિતનેક મનુષ્યોં કા જો આયુ અલ્પ કહા ગયા હૈ ઉસસે
યહ સમજના ચાહિયે કિ જો મનુષ્ય રાત-દિન સાવધકાર્યોં કે અનુ-
ષ્ઠાનમેં હી લવલીન હો રહે હૈં—સંયમભાવસે રહિત હૈં ઉન મનુષ્યોં કા
દીર્ઘકાલિક આયુકર્મ બી ઉસ અનુષ્ઠાનસે અલ્પ જૈસા હો જાતા હૈ, તથા
સંયમી જીવોં કા અલ્પ બી આયુકર્મ નિરવધ અનુષ્ઠાનસે દીર્ઘ જૈસા હો

જેવી રીતે તેલ વગરનો દીપો થોડાજ સમયમા યુગાર્ધ જાય છે તે પ્રકારે
આયુકર્મ પણ તત્તદ્ભવસંબંધી કર્મપુદ્ગલોના અભાવથી થોડાજ કાળમાં
સમાપ્ત થાય છે જેમ પાણીનું મોણુ, અને ચન્દ્રમાનો પાણીમા પડતો પ્રતિબિમ્બ,
અથવા વિજળી લાખ પ્રયત્ન કરવા છતા પણ સ્થિર કરાતી નથી તેવી રીત
તત્તદ્ભવસંબંધી આયુની સમાપ્તિ થવાથી તે એક પણ ક્ષણ રોકી અગર વધારી
શકાતું નથી. આ અભિપ્રાય ચિત્તમા ધારણ કરી સૂત્રકારે “ ઇહ એકેષાં માન-
વાનામ્ અલ્પમ્ આયુષ્કમ્ ” એમ કહ્યું છે. હવે આ વાતને સ્પષ્ટ કરે છે—

આ જગ્યાએ કેટલાક મનુષ્યોની જે આયુ અલ્પ કહેવામાં આવી છે તેથી
એમ સમજવાનું છે કે જે મનુષ્ય રાત્રિનિ સાવધ કાર્યોના અનુષ્ઠાનમાં જ રચેલો
રહે છે, સંયમભાવથી રહિત છે તેવા મનુષ્યોના દીર્ઘકાલિક આયુકર્મ પણ આવા
અનુષ્ઠાનથી ટુંકા જેવા થઈ જાય છે, તથા સંયમી જીવોના ટુંકા પણ આયુકર્મ

“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્ ।

તૃષાર્તો દુઃસ્વમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

અત્ર લોભમલોભેન જુગુપ્સમાનઃ, ઇતિ કથનાત્ પ્રધાનાન્ત્યપરિત્યાગપ્રદર્શનેન ‘પ્રાધાન્યેન વ્યપદેશઃ’ ઇતિ નિયમાત્ ક્રોધાદીનામપિ હેયતા પ્રદર્શિતા । અન્યત્રાપિ પ્રોક્તમ્—

મોહરૂપી અંધકાર સે યુક્ત લોભી જીવ ચિત્તરૂપી ગહન જંગલ મેં લોભરૂપી પિશાચકો સદા નચાતા રહતા હૈ । જિસ તરહ જલ મેં જીર્ણપત્ર હતસ્તતઃ ચક્રર કાઢા કરતા હૈ, વાયુ કે ક્ષોકોં મેં લઘુતૃણ જિસ પ્રકાર ઉડતા રહતા હૈ, આકાશ મેં શરત્કાલીન મેઘમાલા જૈસે યહાં સે વહાં. વહાંસે યહાં ધૂમા કરતી હૈ, ઉસી પ્રકાર લોભાકુલિતચિત્તવાલા પ્રાણી ભી સંસાર મેં યહાં વહાં ભમતા રહતા હૈ । લોભી જન કે સમસ્ત ગુણ દોષ રૂપ મેં હી પરિણત હો જાતે હૈં । જૈસે કહા હૈ—

“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્ ।

તૃષાર્તો દુઃસ્વમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ” ॥૧॥

લોભ સે બુદ્ધિ ચલિત હો જાતી હૈ, લોભ તૃષ્ણા કો પૈદા કરતા હૈ, તૃષ્ણા સે પીડિત પ્રાણી ઇસ લોક મેં ઓર પરલોક મેં દુઃસ્વોં કો પાતા હૈ ॥૧॥ સૂત્ર મેં લોભકષાય કો સંતોષ સે નિગ્રહ કરને કા જો કથન કિયા ગયા હૈ વહ એક ઉપલક્ષણ હૈ, ઇસસે ક્રોધ, માન, માયા કા ભી

હમેશાં લુટાવતો રહે છે. મોહરૂપી અંધકારથી યુક્ત લોભી જીવ ચિત્તરૂપી ગહન જંગલમાં લોભરૂપી પિશાચને હમેશાં નચાવતો રહે છે. જેવી રીતે પાણીમાં છાંયો પાનડા અહીંતહીં ચક્કર ફર્યા કરે છે, વાયુની લહરોમાં લઘુ તૃણ જેમ ઉડતા રહે છે, આકાશમાં શરતકાલીન મેઘમાલા અહીંથી તહીં અને તહીંથી અહીં જેમ ધૂમ્યા કરે છે તે પ્રકારે લોભાકુલિત ચિત્તવાળા પ્રાણી પણ સંસારમાં આંડી તહીં ભમ્યા કરે છે, લોભી જનના સમસ્ત ગુણો દોષરૂપમાં જ પરિણત થાય છે. જેમ કહ્યું છે—

“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્

તૃષાર્તો દુઃસ્વમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ” ॥ ૧ ॥

લોભથી બુદ્ધિ ચલિત થાય છે. લોભ તૃષ્ણાને પૈદા કરે છે. તૃષ્ણાથી પીડિત પ્રાણી આ લોકમાં અને પરલોકમાં દુઃખોને પામે છે ॥ ૧ ॥

સૂત્રમાં લોભકષાયને સંતોષથી નિગ્રહ કરવાનું જે કથન કરવામાં આવ્યું છે તે એક ઉપલક્ષણ છે. તેથી ક્રોધ, માન, માયાનો પણ પોતપોતાનાં પ્રતિપક્ષી

“ ત્રિવિધં નરકસ્યેદં, દ્વારં નાશનમાત્મનઃ ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્રયં ત્યજેત્ ” ॥ ૧ ॥

‘ લોભં સન્તોષેણ જયે ’—દિત્યાશયેન લોભમલોભેનેત્યુક્તમ્,
લોભાદીન્ કેન કેન જયેદિત્યાહ દશવૈકાલિકે—

“ ઉવસમેણ હ્ણે કોહં, માણં મદવયા જિણે ।

માયમજ્જવભાવેણ, લોહં સંતોસઓ જિણે ” ॥ ગાથા ૩૮ ॥

અપને ૨ પ્રતિપક્ષી भावों से निग्रह करना समझ लेना चाहिये । क्योंकि लोभ की तरह मुमुक्षुओं के लिये वे क्रोध आदि भी हेय हैं । चार कषायों में अन्तिम कषाय लोभ है । उसके त्याग के उपदेश से क्रोधादि का त्याग करना स्वतः सिद्ध हो जाता है । कहा भी है—

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।

कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥

इस श्लोक से अन्यत्र भी काम, क्रोध एवं लोभ को नरक का द्वार एवं अपने नाश का कारण बतलाया है ।

शंका—लोभ को जिस तरह से संतोष से जीता जाता है उसी प्रकार क्रोधादिकषायों को जीतने के लिये किन २ भावों की जरूरत होती है ?

उत्तर—दशवैकालिक सूत्र में इन कषायों को जीतने के लिये इन भावों को प्रकट किया है—

ભાવેથી નિગ્રહ કરવાનું સમજી લેવું જોઈએ. કારણ કે લોભની માફક મુમુક્ષુ-એને માટે ક્રોધ માન આદિ પણ હેય છે. ચાર કષાયોમાં અંતિમ કષાય લોભ છે. તેના ત્યાગના ઉપદેશથી ક્રોધાદિકનો ત્યાગ કરવો સ્વતઃ સિદ્ધ થઈ જાય છે. કહ્યું પણ છે—

“ ત્રિવિધં નરકસ્યેદં, દ્વારં નાશનમાત્મનઃ ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્રયં ત્યજેત્ ” ॥ ૧ ॥

આ ૨-લોકથી અન્યત્ર પણ કામ ક્રોધ અને લોભને નરકનું દ્વાર અને પોતાના નાશનું કારણ બતાવ્યું છે.

શંકા—લોભને જેમ સંતોષથી છૂટાય છે તેમ ક્રોધાદિ કષાયોને છૂટવા કયા કયા ભાવોની જરૂરત હોય છે ?

ઉત્તર—દશવૈકલિક સૂત્રમાં આ કષાયોને છૂટવા માટે એ ભાવોને પ્રગટ કર્યા છે—

હાયા-ઉપશમેન હન્યાત્ક્રોધં, માનં માર્દવેન જયેત્ ।

માયામાર્જવભાવેન, લોભં સન્તોષતો જયેત્ ॥

इति क्रोधादीनां चतुर्णां त्यागोपायः प्रदर्शितः, असन्तोषरोगस्य लोभपरित्याग एवौषधमिति, उक्तञ्च—

“ यथाऽऽहारपरित्यागो, ज्वरितस्यौषधं मतम् ।

लोभस्यैवं परित्याग, -स्त्वसन्तोषस्य भेषजम् ” ॥ ૧ ॥

“ ઉવસમેણ હળે કોહં, માણં મદ્વયા જિણે ।

માયમઝ્જવભાવેણ, લોભં સંતોસઓ જિણે ॥”

ઉપશમ સે ક્રોધ કો, માર્દવ-નમ્રભાવ સે માનકો, આર્જવ ભાવ સે માયા કો ઓર સંતોષ સે લોભ કો જીતના ચાહિયે । અસન્તોષરૂપી રોગ કા ઔષધ લોભપરિત્યાગ હૈ । કહા ખી હૈ—

“ यथाऽऽहारपरित्यागो, -ज्वरितस्यौषधं मतम् ।

लोभस्यैवं परित्याग, -स्त्वसन्तोषस्य भेषजम् ॥ ૧ ॥ ”

જૈસે રોગી કે જ્વર કો નષ્ટ કરને કે લિએ આહાર કા પરિત્યાગ દવા કા કામ કરતા હૈ ઉસી તરહ સે અસન્તોષ કો નષ્ટ કરને કે લિએ લોભ કા પરિહાર ખી ઉત્તમ ઔષધિ કા કામ દેતા હૈ । ઇસ કથન સે યહ સિદ્ધાન્ત મલીભાંતિ પુષ્ટ હો જાતા હૈ કિ જો લોભાદિકોં કો ઉનકે પ્રતિપક્ષી સંતોષાદિકોં કે દ્વારા નષ્ટ કર દેતે હૈં વે હી વાસ્તવ મેં પારગામી હૈં । એસે વ્યક્તિ પ્રાપ્ત હુએ કામભોગોં મેં નહીં ફસતે । ઇસી બાત કી પુષ્ટિ “લબ્ધાન્ કામાન્

“ ઉવસમેણ હળે કોહં, માણં મદ્વયા જિણે ।

માયમઝ્જવભાવેણ, લોભં સંતોષઓ જિણે ” ॥

ઉપશમથી ક્રોધને, માર્દવ-નમ્ર ભાવથી માનને, આર્જવભાવથી માયાને અને સંતોષથી લોભને જીતાય છે. અસંતોષરૂપી રોગનું ઔષધ લોભપરિત્યાગ છે. કહ્યું પણ છે—

“ यथाऽऽहारपरित्यागो, -ज्वरितस्यौषधं मतम् ।

लोभस्यैवं परित्याग, -स्त्वसन्तोषस्य भेषजम् ” ॥ ૧ ॥

જેમ રોગીના જ્વરને નષ્ટ કરવા માટે આહારનો પરિત્યાગ દવાનું કામ કરે છે તે પ્રકારે અસંતોષને નષ્ટ કરવા માટે લોભનો પરિહાર પણ ઉત્તમ ઔષધીનું કામ આપે છે. આ કથનથી એ સિદ્ધાન્ત મલીભાંતિ પુષ્ટ થાય છે કે—જે લોભાદિકોને તેના પ્રતિપક્ષી સંતોષાદિકોના મારફત નષ્ટ કરે છે તે જ વાસ્તવમાં પારગામી છે. એવી વ્યક્તિ પ્રાપ્ત થયેલ કામભોગોમાં ફસતી નથી, એ વાતની પુષ્ટિ ‘લબ્ધાન્ કામાન્ નામિગાદતે’ એ ઉપદેશથી સૂત્રકારે

સર્વથા યે લોભાદીન્ સંતોષાદિના જયન્તિ ત એવ પારગામિનો ભવન્તીતિ તાત્પર્યમ્ । તતઃ કિમિત્યાહ-લબ્ધાન્=સમધિગતાન્, કામાન્=કામભોગાન્ નાભિ-ગાહતે=ન શ્રયતે, યો હિ પરિત્યક્તલોભાદિસ્તં કામાદયઃ કદાચિદપિ ન પરાજયન્તિ ઇતિ ભાવઃ ।

કોઽપિ કેનાપિ હેતુના પરિહીનલોભાદિઃ કૃતચારિત્રગ્રહણો ભવતિ, કદા-ચિત્પુનર્લોભોદયસ્તસ્ય ચેતસિ સ્યાત્તસ્ય હેયતાપ્રદર્શનાય, યથ્ચ સર્વદૈવ લોભાદિરહિતઃ સંયમં શૃણ્ણાતિ સ એવાનગાર ઇતિ પ્રતિપાદનાય ચાહ-‘વિનાપી’-ત્યાદિ, એષઃ=લોભ-મલોભેન નિન્દન્ લોભં=પૂર્વોક્તં વિનાઽપિ=લોભરાહિત્યેનાઽપિ નિષ્ક્રમ્ય=ચારિત્રં શૃદ્ધીત્વા અકર્મા=ઘાતિકર્મચતુષ્ટયાપનયનેન પ્રાપ્તકેવલજ્ઞાનકેવલદર્શનો ભરતાદિકલ્પો ભૂત્વા જાનાતિ=વિશેષેણાનુભવતિ, પશ્યતિ=સર્વં વસ્તુજાતં યથાર્થરૂપેણાવલોકતે ।

નાભિગાહતે’ इस उपदेश से सूत्रकार ने की है। क्योंकि जिसने लोभा-दिक का परिहार कर दिया है उसे कामभोगादिक कभी भी परास्त नहीं कर सकते ।

કોઈ વ્યક્તિ લોભાદિકષાયોં સે હીન હૈ, પરન્તુ કિસી વજહ સે યદિ ઉસને ચારિત્ર ગ્રહણ કર લિયા હૈ તો ઉક્ત વ્યક્તિ કે ચિત્ત મેં કદાચિત્ ફિર સે ભી લોભ કા ઉદય હો જાતા હૈ, ઉસકી ઉસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ છોડને યોગ્ય હૈ, યહ દિશ્વાને કે લિયે, તથા જો સર્વદા લોભરહિત હોકર સંયમ કો ધારણ કરતા હૈ વહી અનગાર-સાધુ હૈ, ઇસ વાત કા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે આગે સૂત્રાંશ કા અવતરણ કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-જો વ્યક્તિ ઇસ પૂર્વોક્ત લોભ કે વિના-અર્થાત્ લોભ સે રહિત હોકર ચરિત્ર કો ગ્રહણ કરતે હૈં વે ચાર ઘાતિયા કર્મોં કો નષ્ટ કર ભરતાદિ જૈસે હો-

કરી છે, કારણ કે જેણે લોભાદિકનો પરિહાર કરેલ છે તેને કામભોગાદિક કદી પણ પરાસ્ત કરી શકતા નથી.

કોઈ વ્યક્તિ લોભાદિક કષાયોથી હીન છે, પરંતુ કોઈ કારણથી કદાચ તેણે ચારિત્ર ગ્રહણ કરેલ છે તો તે વ્યક્તિના ચિત્તમાં કદાચ ફરીથી પણ લોભનો ઉદય થાય છે તેની તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ છોડવાયોગ્ય છે. આ દેખાવા માટે, અને જે સર્વદા લોભરહિત થઈ સંયમને ધારણ કરે છે તે આણુગાર-સાધુ છે, આ વાતનું પ્રતિપાદન કરવા માટે આગળના સૂત્રનું અવતરણ કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-જે વ્યક્તિ આ પૂર્વોક્ત લોભ વિના અર્થાત્ લોભથી રહિત થઈને ચારિત્રને ગ્રહણ કરે છે તે ચાર ઘાતિયા કર્મોંને નષ્ટ કરી ભરતાદિક જેવા બનીને કેવળજ્ઞાન

નનુ લોભનાશે કુતઃ કર્માભાવો ભવિતુમર્હતીતિ ચેન્ન । લોભનાશાન્મોહનીયનાશઃ, તસ્મિન્ન ઘાતિકર્મક્ષયઃ, તસ્મિન્ન કેવલજ્ઞાનાધિગમઃ, તેનં ચ ભવોપગ્રાહિકર્મક્ષયઃ, इत्येवंरूपपरम्परया लोभापगमेन अकर्मेतिविशेषणसार्थक्यात् ।

કર કેવલ જ્ઞાન ઓર કેવલ દર્શન કો પાકર દુનિયાં કે ચર અચર સમસ્ત પદાર્થોં કો સ્પષ્ટરૂપ સે સમસ્ત ગુણ ઓર સમસ્ત પર્યાયોં સે યુક્ત જાનતે હૈં ઓર દેખતે હૈં ।

શંકા—લોભ કે નાશ સે કર્મોં કા અભાવ કૈસે હો સકતા હૈ ?

ઉત્તર—એસા નહીં કહના ચાહિયે; ક્યોંકિ લોભ કે ક્ષય સે મોહનીય કા ક્ષય હોતા હૈ, ઉસકે ક્ષય હોને પર શેષ ઘાતિયા કર્મોં કા ક્ષય હોતા હૈ, ઘાતિયા કર્મોં કે અભાવ હોતે હી કેવલ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ, કેવલ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હોને સે ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા કર્મોં કા ક્ષય હો જાતા હૈ । ઇસ પ્રકાર પરમ્પરા કા સમ્બન્ધ કો લેકર લોભ કે વિનાશ સે આત્મા અકર્મા હો જાતા હૈ, ઇસ વિશેષણ કી સાર્થકતા સિદ્ધ હો જાતી હૈ । સર્વ પ્રથમ મોહનીય કર્મ કા ક્ષય હોતા હૈ । સમસ્ત કર્મોં મેં મોહનીય કર્મ સેનાપતિ હૈ, જિસ પ્રકાર સેનાપતિ કે પરાસ્ત હોને પર સેના અશક્ત હો જાતી હૈ ઉસી પ્રકાર મોહનીય કર્મ કે ક્ષય હોતે હી કર્મોં કી સેના ભી ક્ષીણ હો જાતી હૈ । મોહનીય કે ક્ષય સે જ્ઞાનાવરણીય દર્શનાવરણીય ઓર અન્તરાય કા ક્ષય હોતા હૈ, ઉસ સે કેવલ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ ।

અને કેવળદર્શન પામીને દુનિયાના ચર-અચર સમસ્ત પદાર્થોને સ્પષ્ટ રૂપથી સમસ્ત ગુણ અને સમસ્ત પર્યાયોથી યુક્ત બાણે છે અને દેખે છે.

શંકા—લોભના નાશથી કર્મોનો અભાવ કેવી રીતે થઈ શકે ?

ઉત્તર—એમ કહેવું ન બેઠએ, કારણ કે લોભના ક્ષયથી મોહનીયનો ક્ષય થાય છે. તેનો ક્ષય થવા પછી શેષ ઘાતિયા કર્મોનો ક્ષય થાય છે, ઘાતિયા કર્મોનો અભાવ થતાં જ કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે, કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થવાથી ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા કર્મોનો ક્ષય થાય છે. આ પ્રકાર પરંપરા સંબંધને લઈને લોભના વિનાશથી આત્મા અકર્મા બને છે. આ વિશેષણની સાર્થકતા સિદ્ધ થઈ જાય છે. સર્વ પ્રથમ મોહનીય કર્મનો ક્ષય થાય છે, સમસ્ત કર્મોમાં મોહનીય કર્મ સેનાપતિ છે. જેમ સેનાપતિ પરાસ્ત થવાથી સેના અશક્ત બને છે તે પ્રકારે મોહનીય કર્મનો ક્ષય થતાં જ કર્મોની સેના પણ ક્ષીણ થઈ જાય છે. મોહનીયના ક્ષયથી જ્ઞાનાવરણીય દર્શનાવરણીય અને અંતરાયનો ક્ષય થાય છે, તેનાથી કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે.

કર્મનાશાનન્તરં કિં કુરુતે ? इति दर्शयति—‘प्रत्युपेक्ष्ये’—ति, प्रत्युपेक्ष्य लोभो निखिलानर्थकरो भवति, ‘लोहो सव्वविणासणो’ इतिवचनात्, तं पर्यालोच्य नावकाङ्क्षति=किमपि नेच्छति, यथैवंभूतः स एषोऽनगारः=यथाख्यातचारित्रवान् मुनिः प्रोच्यते तत्त्वदर्शिभिरिति शेषः ॥ सू० ३ ॥

यस्तु सत्त्वोपधातिनीं क्रियां विदधानः सकर्मा पापमोक्षकामनयाऽऽशंसया वा यद्यत्કरोતિ તત્તદર્શયતિ—‘અહો ય’ इत्यादि ।

મૂલમ—અહો ય રાઓ પરિતપ્પમાણે કાલાકાલસમુદ્ઘાઈ સંજો-ગઢી અઢાલોભી આલુંપે સહસકારે વિણિવિઢ્ઠચિત્તે એત્થ સત્થે પુણો પુણો, સે આયબલે, સે નાઇબલે, સે મિત્તબલે, સે પિચ્ચબલે, સે દેવબલે, સે રાયબલે, સે ચોરબલે, સે અતિહિબલે, સે કિવિણબલે, સે સમણબલે, ઇચ્છેણહિં વિરૂવરૂવેહિં કજ્જેહિં દંડસમાયાણં સંપેહાણ મયા કજ્જઈ, પાવમુક્કલુત્તિ મન્નમાણે, અદુવા આસંસાણ ॥સૂ૦ ૪॥

જાયા—અહશ્ચ રાત્રિશ્ચ પરિતપ્યમાનઃ કાલાકાલસમુત્થાયી સંયોગાર્થી અર્થા-લોભી આલુમ્પઃ સહસાકારઃ વિનિવિષ્ટચિત્તઃ, અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ, તદાત્મબલં, તજ્ઞાતિબલમ્, તન્મિત્રબલમ્, તત્પ્રેત્યબલમ્, તદેવબલમ્, તદ્રાજબલમ્, તચ્ચોરબલમ્, તદતિથિબલમ્, તત્કૃપણબલમ્ તત્ શ્રમણબલમ્, इत्येतैर्विरूपरूपैः कायैर्दण्डसमादानं सम्प्रेक्ष्य भयात् क्रियते पापमोक्ष इति मन्यमानः अथवा आशंसायै ॥ सू० ४ ॥

‘લોહો સવ્વવિણાસણો’ લોભ સમસ્ત અનર્થોં કી જડ હૈ, ઇસ પ્રકાર પર્યાલોચન કરકે વહ સંયમી કિસીં મી સાંસારિક પદાર્થોં કી ઇચ્છા નહીં કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર જિસકી પ્રવૃત્તિ હૈ વહી સચ્ચા અનગાર હૈ—અર્થાત્ વહી તત્ત્વદર્શિયોં દ્વારા યથાખ્યાત-ચારિત્ર-સમન્વિત મુનિ કહા જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જો પ્રાણિયોં કો કષ્ટ દેને વાલી યા ઉનકે પ્રાણોં કો નાશ કરને વાલી ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ વહ સકર્મા હૈ । વહ પાપોં કો દૂર કરને કી

‘લોહો સવ્વવિણાસણો’ લોભ સમસ્ત અનર્થોની જડ છે. એ પ્રકારે પર્યાયલોચન કરીને તે સયમી કોઈ પણ સાંસારિક પદાર્થની ઇચ્છા કરતા નથી. એ પ્રકારે જેની પ્રવૃત્તિ છે તે જ સાચો અણુગાર છે. અર્થાત્ તે જ તત્ત્વદર્શિયોદ્વારા યથાખ્યાતચારિત્રસમન્વિત મુનિ કહેવામાં આવે છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

જે પ્રાણિઓને કષ્ટ દેવાવાળી અને તેના પ્રાણોનો નાશ કરવાવાળી ક્રિયાઓ કરે છે તે સકર્મા છે. તે પાપોને દૂર કરવાની ભાવનાથી અને આશંસા-અલ્પથ

ટીકા—‘અહશ્ચે’—ત્યાદિ, ‘અહો ય રાઓ’ इत्यारभ्य ‘एत्थ सत्थे पुणो पुणो’ इत्यन्तस्य व्याख्या प्रथमोद्देशे प्रोक्तेति तत एव विज्ञेया। विषयासक्तो रात्रिन्दिवं परितप्तो धनार्थी सत्त्वोपमर्दने प्रवृत्तो भवतीत्यर्थः, अपि च पुनः किं करोतीत्याह—
‘तत् आत्मबल’—मित्यादि, आत्मनो=जीवस्य बलं=सामर्थ्यम् आत्मबलं मेऽवश्यं स्यादितिच्छया बहूपायैः स्वतुष्ट्यर्थं सत्त्वोपघातं करोति, किञ्च—स्वमांसपरिवर्धनाय मांसादिकमप्यश्नाति, तदर्थं पञ्चेन्द्रियादीनपि हन्ति। तत्स्वजनबलं तन्मित्रबलं च मे भविष्यति, येन समापतन्तीमपि विपदं सुखेन तरिष्यामि। प्रेत्यबलं=परलोकबलं

કામના સે, અથવા આશંસા-અલભ્ય વસ્તુ કી લાભ કી ઇચ્છા સે જો જો ક્રિયાયે કરતા હૈ અન્હેં હસ સૂત્ર મેં પ્રકટ કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—

‘અહો ય રાઓ’ इत्यादि। ‘अहो य राओ’ यहां से लेकर ‘एत्थ सत्थे पुणो पुणो’ यहां तक के पदों का व्याख्यान प्रथम उद्देश में लिखा जा चुका है वहीं से जान लेना चाहिये। विषयों में आसक्त धन का इच्छुक प्राणी रात-दिन संतप्तचित्त हो जीवों के उपमर्दन करने में प्रवृत्ति करता रहता है। तथा मुझे आत्मबल प्राप्त हो इस ख्याल से वह अपने सन्तोष के लिये प्राણियों के प्राणों का उपघात करता है। अपना मांस बढ़ाने के लिए मांस खाता है और उसके लिये वह पंचेन्द्रियादिक प्राણियों की हिंसा करता है—‘जो मांस मुझे प्राप्त हुआ, जिसे मैं शिकार करके लाया हूं उसे मैं ही अकेला खाऊँ, अपने सगे सम्बन्धियों में तथा मित्रों में भी उसका वितरण करूँ, क्योंकि परस्पर के इस प्रकार के आदान

વસ્તુના લાભની ઇચ્છાથી જે જે ક્રિયાઓ કરે છે તેને આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—

‘અહો ય રાઓ’ इत्यादि. ‘अहो य राओ’ અહીંયાથી લઈને ‘एत्थ सत्थे पुणो पुणो’ અહીં સુધીના પદોનું વ્યાખ્યાન પ્રથમ ઉદ્દેશમાં આપવામાં આવેલ છે ત્યાંથી બાણી લેવું જોઈએ. વિષયોમાં આસક્ત ધનનો ઇચ્છુક પ્રાણી રાત દિવસ સંતપ્તચિત્ત બની જીવોના ઉપમર્દન કરવામાં પ્રવૃત્તિ કરતો રહે છે. અને ‘મને આત્મબળ પ્રાપ્ત થાય’ એવા જ્યાલથી તે પોતાના સંતોષ માટે પ્રાણિયોના પ્રાણોનો ઉપઘાત કરે છે. પોતાનું માંસ વધારવા માટે માંસ ખાય છે અને તેને માટે તે પંચેન્દ્રિયાદિક પ્રાણિઓની હિંસા કરે છે—‘જે માંસ મને પ્રાપ્ત થયું છે, જેને હું શિકાર કરીને લાવ્યો છું તેને હું એકલો જ ખાઉં. પોતાના સગાસંબંધિઓમાં તથા મિત્રોમાં પણ તેનું વિતરણ કરું, કારણ કે પરસ્પરના આવા પ્રકારના આદાન

મે, इत्याशया मेषादिकं हिनस्ति । देववलं मे स्यादित्याशया पचनपाचनादौ प्रवर्तते । राजवलं स्यादितिच्छया राजसेवा क्रियते । चौरवलं=चौरभागो भविष्यतीति चौरसमीपे तिष्ठति । अतिथिवलम्, “अतिथिः” न विद्यते तिथिरागमनस्य यस्य सोऽतिथिः, अतिथिसेवया मे वलमिति स्पृहया तं सेवते, तदर्थं सत्त्वो-

પ્રદાન સે મુજ્જે ઉનકા બલ પ્રાપ્ત હોગા, જિસસે કબી મેરે ઉપર યદિ કોઈ આપત્તિ આ જાયગી તો વે ઉસમેં મુજ્જે મદદગાર બનેંગે, ઉનકી પ્રાપ્ત સહાયતા સે અથવા સહાનુભૂતિ સે મૈં ઉસ આપત્તિ સે વિના કિસી કષ્ટ કે સુરક્ષિત હો જાઝંગા ’ । ‘દેવોં કા બલ મુજ્જે પ્રાપ્ત હોગા’ ઇસ વિચાર સે વહ નૈવેદ્ય આદિ કે લિયે પચન-પાચનાદિક આરંભ કરતા હૈ । ‘રાજા કી કૃપા મુજ્જ પર બની રહે’ ઇસ ભાવના સે વહ ઉનકી જૂઠી ખુશામદ કરતા હૈ, સેવા કરતા હૈ, ઉસકી પ્રત્યેક ખલી વુરી વાતોં મેં હાં મેં હાં મિલાતા હૈ, ‘ખુશામદ મેં હી આમદ હૈ’ ઇસ તુચ્છ કામના સે વહ હર એક પ્રકાર સે અપને કો કષ્ટ મેં ડાલકર ખી ઉનકી પ્રત્યેક વાત કો શિર-માંથે-કા મુકુટ બનાને મેં ખી સંકોચ નહીં કરતા । ‘મૈં યદિ ચોરોં કી મદદ કરૂંગા, યા ઉન્હેં મદદ પહુંચાઝંગા યા ઉનકા સહવાસ કરૂંગા તો મુજ્જે ઉનસે લૂટ કે દ્રવ્ય મેં સે હિસ્સા ખી મિલતા રહેગા’ ઇસ ચાહના સે વહ ચોરોં કા ખી બલ પ્રાપ્ત કરતા હૈ । જિસકે આને કી કોઈ નિશ્ચિત તિથિ નહીં હૈ ઉસકા નામ અતિથિ હૈ, એસે અતિથિયોં કી વહ સિર્ફ ‘ઇનકા આશી-

પ્રદાનથી મને તેઓનું બળ પ્રાપ્ત થશે, કદાચ મારા ઉપર કોઈ આપત્તિ આવે તો તેઓ મને મદદગાર બનશે, તેમની સહાયતાથી અને સહાનુભૂતિથી હું આવેલી આપત્તિથી કોઈ પણ જાતના કષ્ટ વગર સુરક્ષિત થઈ જઈશ ’ ‘દેવોનું બળ મને પ્રાપ્ત થશે.’ તેથી તે નૈવેદ્ય આદિ માટે પચન-પાચનાદિક આરંભ કરે છે. ‘રાજાની કૃપા મારા ઉપર બની રહે’ તે ભાવનાથી તે તેની જુઠી ખુશામત કરે છે, સેવા કરે છે, તેની પ્રત્યેક સારી નબારી વાતોમાં હા મા હા મિલાવે છે. ‘ખુશામતમાં જ આમદ છે’ આવી તુચ્છ કામનાથી તે દરેક પ્રકારથી પોતાને કષ્ટમાં નાખીને પણ તેની પ્રત્યેક વાતને શિરનો મુગટ બનાવવામાં સંકોચ કરતો નથી. ‘હું જો ચોરોને મદદ કરીશ અને તેમને મદદ પહોંચાડીશ અગર તેમનો સહવાસ કરીશ તો મને તેમની હુંટના દ્રવ્યમાંથી હિસ્સો-(ભાગ) મળતો રહેશે’ આ ભાવનાથી તે ચોરોનું પણ બળ પ્રાપ્ત કરે છે. જેની આવવાની કોઈ નિશ્ચિત તિથિ નથી તેનું નામ અતિથિ છે. એવા અતિથિયોની તે દક્ષ ‘તેમના

पमर्दनं करोति । कृपणबलं स्यादित्यभिलाषेण तं परिचरति । 'श्रमणबलं' श्रमणः शाक्यादिस्तस्य बलं स्यादिति वाञ्छया तदर्थं पचनादिसावधक्रियामाचरति । अत्रानेकेषां बलप्रदर्शनं यं यं चेतसि स्वाभिमतसाधकतया पश्यति तं तं सम्यगुपचरतीति द्योतनाय बोध्यम् । इत्येतैः=पूर्वोक्तैः, विरूपरूपैः=बहुविधैः कार्यैः दण्ड-समादानं, दण्ड्यन्ते=हन्यन्ते सत्त्वानि येन स दण्डस्तस्य सर्वत आदानं ग्रहणं दण्ड-समादानम् 'अहमिदं नाकरिष्यं तदात्मबलादिकं मे नाभविष्य'—दिति सम्प्रेक्ष्य=पर्यालोच्य भयात्=आत्मबलाद्यलाभभयात् सत्त्वोपघातः क्रियते, अनेकानर्थकरं

वादरूप बल मुझे मिले' इस विचार से सेवा करता है, उनके निमित्त प्राणियों की हिंसा भी करता है । कृपण की सेवा भी उनके बल को प्राप्त करने की इच्छा से वह करता है । 'शाक्यादि श्रमणों का सहारा मुझे मिले' इस अभिप्राय से वह उनके लिये पचन-पाचनादि करता है । सूत्र में जो इस प्रकार से अनेकों के बल का कथन किया गया है उसका भाव यही है कि वह जिसे अपने इष्ट अर्थ का साधक समझता है उनका बल प्राप्त करने के लिये उनकी भले प्रकार परिचर्या करता है । जिससे प्राणी की हिंसा होती है उसका नाम दण्ड है, इसका वह अनेक प्रकार के कार्यों से सर्वतः आदान-ग्रहण करता है । व्यर्थ के पापारंभ कार्यों में प्रवृत्त होकर वह प्राणियों के प्राणों का अपहरण कर पाप का भारी बोझ अपने माथे रखता है । 'यदि मैं इस काम को नहीं करूँगा तो मुझे पूर्वोक्त आत्मबलादिकों का लाभ नहीं होगा' इस बात का विचार कर उनके

आशिर्वादरूप भण भने भणे' એ વિચારથી સેવા કરે છે. તેમના નિમિત્તે પ્રાણીઓની હિંસા પણ કરે છે. કૃપણની સેવા પણ તેનું બળ પ્રાપ્ત કરવાની ઇચ્છાથી કરે છે. 'શાક્યાદિ શ્રમણોનો સાથ મને મળે' તે માટે તે તેમને માટે પચન-પાચનાદિ કરે છે સૂત્રમાં જે આ પ્રકારથી અનેક બળોનું કથન કરેલ છે તેનો ભાવ એ છે કે-તે જેને પોતાનાં ઇષ્ટ અર્થનો સાધક સમજે છે તેનું બળ પ્રાપ્ત કરવા માટે તેની ભલી પ્રકાર પરિચર્યા કરે છે. જેનાથી પ્રાણીની હિંસા થાય છે તેનું નામ દંડ છે. તેનો તે અનેક પ્રકારના કાર્યોથી સર્વતઃ આદાન-ગ્રહણ કરે છે. વ્યર્થના પાપારંભ કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થઈને તે પ્રાણીઓના પ્રાણોનું અપહરણ કરી પાપનો ભારી બોજ પોતાના માથે રાખે છે. 'કદાચ હું આ કામને નહિ કરું' તો મને પૂર્વોક્ત આત્મબલાદિનો લાભ થશે નહિ.' આ વાતનો વિચાર કરી તેના અલાભના ભયથી પ્રાણીઓની હિંસાદિક ક્રિયાઓને-અનેક અનર્થકારી સાવધ વ્યાપારોને તે કરે છે. એ આત્મબલાદિકે જે આ જીવને આ લોકમાં દંડ

સાવચ્ચવ્યાપારં કરોતીતિ તાત્પર્યમ્ । એતાન્યાત્મવલાદીનિ ચૈહિકદણ્ડગ્રહણકારણાનિ । ન કેવલં તદર્થમેવાનર્થં કરોતિ કિન્તુ પારલૌકિકાર્થમપિ પરમાર્થાનભિજ્ઞો દણ્ડ-ગ્રહણં કરોતીત્યાહ—‘પાપમોક્ષ’ इति, પાપમોક્ષઃ—પાતયતિ નરકનિગોદાદાવિતિ પાપં, તસ્માન્મોક્ષો મે ભવિષ્યતીતિ મન્યમાનઃ=ચેતસિ ચિન્તયન્,

અત્ર ‘इति’—શબ્દો હેતૌ, યસ્માન્મે પાપમોક્ષો ભવિતેતિ મન્યમાનઃ, इति સમ્બન્ધઃ । અસૌ નાનાવિધહવનીયદ્રવ્યૈર્જુહોતિ । તથા પિતૃતર્પણાર્થં દર્ભ-તિલ-જલાદિના સમા-રમ્ભં કરોતિ ચ । એવંવિધસાવચ્ચવ્યાપારૈર્નાનાવિધદુર્ગતિદાયકમનેકજન્મદુર્મોચમધિ-કમઘમેવાર્જયતિ ।

અલાભ કે ભય સે પ્રાણિયોં કી હિંસાદિક ક્રિયાઓં કો—અનેક અનર્થ-કારી સાવચ્ચ વ્યાપારોં કો વહ કરતા હૈ । યે આત્મવલાદિક જો હસ જીવ કો હસ લોક મેં દણ્ડ ગ્રહણ કે કારણ હૈં, કેવલ ડનકે નિમિત્ત હી અનર્થો કો વહ નહીં કરતા હૈ, કિન્તુ પારલૌકિક કાર્યોં કે લિયે મી પર-માર્થ સે અનભિજ્ઞ બના હુઆ વહ દણ્ડ કા પાત્ર બનતા હૈ । હસી અભિ-પ્રાય કો ‘પાપમોક્ષઃ’ હસ પદ સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં—નરક નિ-ગોદાદિ ગતિયોં કો જીવ જિસકે દ્વારા પ્રાપ્ત કરતે હૈં ડસકા નામ પાપ હૈ । ‘પાપ સે મેરી મુક્તિ હો જાયગી, અર્થાત્ મેં પાપરહિત હો જાઝંગા’ હસ ધારણા સે ઓતપ્રોત હોકર વહ નાનાવિધ હવનીય દ્રવ્ય સે હવન કરતા હૈ, અનેક અનર્થવિધાયક સાવચ્ચ કાર્યોં કે કરને સે દણ્ડ-પ્રાણા-નિપ્રાતાદિ-કા અધિકારી હોતા હૈ, હન કાર્યોં સે પાપમુક્ત ન હોકર ડલ્ટે નરક નિગોદાદિ ગતિયોં મેં ડસ જીવ કા પતન હોતા હૈ । સૂત્ર મેં ‘इति’ વહ શબ્દ હેતુ-અર્થ કા વોધક હૈ, જિસકા ભાવ વહ હૈ—વહ વહ સમ-

અહણુ ડારણુ છે, કેવળ તેના નિમિત્ત જ અનર્થોને તે નથી કરતો પણ પાર-લૌકિક કાર્યો માટે પણ પરમાર્થથી અનભિજ્ઞ બનીને આ દંડનું પાત્ર બને છે. આ અભિપ્રાયને ‘પાપમોક્ષઃ’ આ પદથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—નરક નિગોદાદિ ગતિઓને જીવ જેના દ્વારા પ્રાપ્ત કરે છે તેનું નામ પાપ છે. ‘પાપથી મારી મુક્તિ થઈ જશે, અર્થાત્ હું પાપરહિત થઈ જઈશ’ એ ધારણાથી ઓતપ્રોત થઈને તે નાનાવિધ હવનીય દ્રવ્યોથી હવન કરે છે અનેક અનર્થવિધાયક સાવચ્ચ કાર્યોને કરવાથી દંડ—પ્રાણાતિપ્રાતાદિ—નો અધિકારી થાય છે આવા કાર્યોથી પાપમુક્ત બનતો નથી પણ નરક નિગોદાદિ ગતિઓમા તે જીવનું પતન થાય છે. સૂત્રમા ‘इति’ શબ્દ હેતુ અર્થનો બોધક છે, જેનો ભાવ એ છે કે તે એમ સમજે છે કે

યુરિવ વર્તતે, દીર્ઘકાલિકજન્મમરણોચ્છેદેનાયુષઃ સાફલ્યાત્ । इह=સંસારે એકેષાં
=કતિપયાનાં માનવાનામાયુરલ્પં ભવતીત્યન્વયઃ । આયુષોડલ્પત્વશ્ચ ક્ષુલ્લકભવાપેક્ષ-
યાડન્તર્મૂહૂર્તમાત્રં જઘન્યમ્ । ચ શબ્દાદધિકં ચોત્તરોત્તરસમયાદિવૃદ્ધ્યા યુગલિકમા-
શ્રિત્ય પલ્યોપમત્રયપરિમિતં ભવતિ । પલ્યોપમત્રયાયુરપિ સંયમકાલાભવાદધિકમ-
પ્યલ્પમેવ ।

અન્તર્મૂહૂર્તાદારમ્ય દેશોનર્પૂર્વકોટિપરિમિતાયુષિ સંયમાયુષ્કસ્યાલ્પત્વાત્તદ-
પ્યલ્પમેવ ભવતિ ।

જાતા હૈ । દીર્ઘકાલિક જન્મ-મરણ કે વિનાશ સે હી તો આયુ કી
સફલતા હૈ ।

“અલ્પં ચ खलु आयुष्कम् इह एकेषां मानवानाम् ॥ यहाँ पर
“इह एकेषां मानवानाम् आयुः अल्पं भवति ” इस प्रकार अन्वय
लगाना चाहिए । आयुकी अल्पता क्षुल्लक-सबसे छोटा-भवकी अपेक्षासे
प्रकट की गई है, क्योंकि मनुष्य और तिर्यञ्चों के आयुकर्मकी
स्थिति शास्त्रमें दो प्रकारसे वर्णित है-(१) जघन्य और (२) उत्कृष्ट ।
जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्तकी है, और उत्कृष्ट उत्तरोत्तर एकसमयादि
की वृद्धिसे लगा कर तीन पल्य की है । यह युगलियों की अपेक्षासे है ।
भोगभूमि में जीवको संयम की प्राप्ति होनेका अवसर ही नहीं है, इस
लिये तीन पल्य परिमित दीर्घ आयु भी अल्प जैसा ही है, अर्थात्
उससे जीवका निज कोई भी परमार्थ नहीं सधता, केवल भोगादिकों के
उपभोगसे ही वह निष्फल हो जाता है । संयमाराधन से ही काल के

નિરવધ અનુષ્ઠાનથી દીર્ઘ જેવા થાય છે. દીર્ઘકાલિક જન્મ-મરણના વિનાશથી જ
આયુની સફળતા છે.

“અલ્પં ચ खलु आयुष्कम् इह एकेषां मानवानाम् ”

અહીં “इह एकेषां मानवानाम् आयुः अल्पं भवति ”

આ પ્રકારે અન્વય લગાડવો જોઈએ. આયુની અલ્પતા ક્ષુલ્લક-બધાથી
નાના-ભવની અપેક્ષાથી પ્રકટ કરેલ છે કારણકે મનુષ્ય અને તિર્યંચોના આયુ-
કર્મની સ્થિતિ શાસ્ત્રમાં બે પ્રકારે વર્ણિત છે. (૧) જઘન્ય અને (૨) ઉત્કૃષ્ટ.
જઘન્ય સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તની છે અને ઉત્કૃષ્ટ ઉત્તરોત્તર એક સમયાદિની વૃદ્ધિથી
લગાવી ત્રણ પલ્યની છે, આ યુગલિયાની અપેક્ષાથી છે. ભોગભૂમિમાં જીવને
સંયમની પ્રાપ્તિ થવાનો અવસર નથી, માટે ત્રણ પલ્યની પરિમિત દીર્ઘ આયુ
પણ અલ્પ જેવી છે. અર્થાત્ તેથી જીવનો નિજ કોઈ પણ પરમર્થ સધાતો
નથી, કેવળ ભોગાદિકોના ઉપભોગથી જ તે નિષ્ફળ થાય છે. સંયમારાધનથી જ

અથવા ‘આશંસાયૈ’ આશંસા ચાલમ્બ્યાભસ્પૃહા તસ્યૈ=તદર્થે દણ્ડં સમારમ્ભતે ।
મમૈતત્ પરત્પરારિ પરલોકે વા ભવિષ્યતીત્યાશયા દણ્ડં સમાદદાતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥મૂ.૪॥
এং কটুকবিপাকং দণ্ডসমাদানং সম্যগববুধ্য যত্কর্তব্যং তদাহ-‘তং পরিণায়’
ইত্যাদি ।

મૂલમ્—તં પરિણાય મેહાવી નેવ સયં એહિંકજ્જેહિં દંડં સમા-
રંભિજ્જા, નેવ અન્નં એહિંકજ્જેહિં દંડં સમારંભિજ્જાવિજ્જા, એહિં
કજ્જેહિં દંડં સમારંભંતે વિ અન્ને ન સમણુજાણિજ્જા, એસ સગ્ગે
આરિએહિં પવેઙ્ગ, જહેત્થ કુસલે નોવલિંપિજ્જાસિત્તિવોમિ ॥ સૂ.૦૫ ॥

છાયા—તત્પરિણાય મેહાવી નૈવ સ્વયમેતૈઃ કાર્યૈર્દણ્ડં સમારમ્ભત, નૈવાન્યમ્ એતૈઃ
કાર્યૈર્દણ્ડં સમારમ્ભયેત્, એતૈઃ કાર્યૈર્દણ્ડં સમારમ્ભમાણાનપ્યન્યાન્ન સમણુજાનીયાત્,
એષ માર્ગ આર્યૈઃ પ્રવેદિતઃ, યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પેઃ, ઇતિ બ્રવીમિ ॥મૂ.૦૫ ॥

જ્ઞાતા હૈ કિ-‘પાપોં સી મેરી મુક્તિ હો જાયગી-મૈં નિષ્કલંક બન સ્વર્ગાદિ
લાભ કર લૂંગા’-એસા માનકર વહ પારલૌકિક કાર્ય કરને કે લિયે બી
છહકાય કા આરંભ કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર કે સાવધ વ્યાપારોં સે નાના-
વિધ દુર્ગતિયોં કો દેને વાલે તથા અનેક જન્મ જન્માન્તરોં મેં બી જો ન
નષ્ટ હોં સકે એસે પાપ કા હી વહ અર્જન કરતા હૈ । ‘આશંસાયૈ’ ઇસ
પદ સે યહ વાત સૂત્રકાર સૂચિત કરતે હૈં કિ-વહ અલમ્બ્યવસ્તુ કો પાને
કી ઇચ્છા સે બી દણ્ડ કા સમારંભ કરતા હૈ “યહ વસ્તુ મેરે પાસ નહીં
હૈ, આત્મબલાદિ કાર્યોં કે કરને સે વહ મુઝે આજ નહીં તો કલ, કલ
નહીં તો પરસોં મિલ જાવેગી, યદિ યહાં ન બી મિલેગી તો પારલોક મેં
મિલ જાલેગી” ઇસ ભાવ સે દણ્ડ કા સમાદાન (છહકાય કા આરંભ)
કરતા હૈ ॥ સૂ. ૪ ॥

‘પાપોથી મારી મુક્તિ થઇ જશે, હું નિષ્કલંક બની સ્વર્ગાદિ લાભ કરી લઇશ’
એવું માનીને તે પારલોકિક કાર્યો કરવા માટે છ કાયનો આરંભ કરે છે. આ
પ્રકારના સાવધ વ્યાપારોથી નાનાવિધ દુર્ગતિઓને દેવાવાળા અને અનેક જન્મ
જન્માન્તરોમાં પણ જેનો નાશ ન થાય તેવો પાપનો ભાર જ તે વાહે છે.
‘આશંસાયૈ’ આ પદથી આ બાત સૂત્રકાર સૂચિત કરે છે કે-તે અલભ્ય વસ્તુને
પામવાની ઇચ્છાથી પણ દંડનો સમારંભ કરે છે, ‘આ વસ્તુ મારી પાસે નથી
પણ આત્મબલાદિ કાર્યો કરવાથી તે મને આજ નહિ તો કાલ, કાલ નહિ તો
પરમ દિવસ મળી જશે, કદાચ અહીં નહિ મળે તો પરલોકમાં મળશે’ આ
ભાવથી દંડનું સમાદાન (છ કાયનો આરંભ) કરે છે. ॥ સૂ. ૪ ॥

‘ત’—દિત્યાદિ, મેધાવી=સંયમરતિમાન્ વિદિતસંસારસ્વભાવઃ, તત્=પૂર્વોક્ત-સદ્ગ્રાહકં શસ્ત્રપરિજ્ઞાકથિતમ્ અપ્રશસ્તગુણમૂલસ્થાનં વિષયકષાયાદિકં ચાત્મવલા-દ્યર્થ દળસમાદાનાદિકં ચ પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા મેધાવી સ્વયમ્=આત્મના એતૈઃ=આત્મવલાદાનાદિકૈઃ કાર્યૈઃ દળં=પ્રાણિર્હિંસાં નૈવ સમારંભેત=દળગ્રહણારમ્ભં ન કુર્યાત્, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરેદિત્યર્થઃ, અન્યમપિ એતૈઃ કાર્યૈર્દળં ન સમાર-મ્ભયેદિત્યન્વયઃ, તથા સમારંભમાણાનપ્યન્યાન્ ન સમનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેત્, સુ-ધર્મા સ્વામી જમ્ સ્વામિનં પ્રાહ—એષ માર્ગઃ મૃગ્યતેઽન્વિષ્યતે મોક્ષપદમનેનેતિ માર્ગઃ=રત્નત્રયસ્વરૂપઃ,

इस प्रकार कटुक विपाक वाले दण्ड के आदान को अच्छी तरह जानकर क्या करना चाहिये? सो कहते हैं—

‘तं परिणाय’ इत्यादि । संयम में जिसे प्रेम है, संसार का स्वभाव भी जिसने अली प्रकार जान लिया है ऐसा मेधावी मुनि शस्त्रपरिज्ञा में प्रतिपादित अप्रशस्त गुण एवं मूलस्थानस्वरूप विषयकषायादिकों को तथा आत्मबलादिलाभ के लिये दण्डसमादान (आरम्भ समारम्भ) को ज्ञपरिज्ञा से जानकर स्वयं आत्मबल को प्राप्त करने के खोटे अभि-प्राय से आचरित इन पूर्वोक्त कार्यों से प्राणातिपात आदि दण्ड का समारम्भ नहीं करे । क्योंकि इन कार्यों के करने वाले प्राणी को पापा-रंभ के सिवाय अन्य किसी भी प्रशस्त फल का लाभ नहीं होता है । इस बात को जानकर प्रत्याख्यानपरिज्ञा से उनका त्याग कर देवे । इतना ही नहीं किन्तु दूसरे से भी इन पूर्वोक्त कार्यों से वह दण्ड का

આવા પ્રકાર કડવા વિપાકવાળા દંડના આદાનને સારી રીતે જાણીને શું કરવું જોઈએ તે કહે છે—

‘તં પરિણાય’ ઇત્યાદિ સંયમમાં જેને પ્રેમ છે, સંસારનો સ્વભાવ જેણે અલી પ્રકારે જાણી લીધો છે એવા મેધાવી મુનિ શસ્ત્રપરિજ્ઞામાં પ્રતિપાદિત અપ્રશસ્ત ગુણ અને મૂળસ્થાનસ્વરૂપ વિષયકષાયાદિકને તથા આત્મબલાદિ લાભ માટે દંડસમાદાન (આરંભ-સમારંભ) ને જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણીને સ્વયં આત્મબળ પ્રાપ્ત કરવાના ખોટા અભિપ્રાયથી આચરિત એ પૂર્વોક્ત કાર્યોથી પ્રા-ણાતિપાત આદિ દંડનો સમારંભ કરવો નહિ, કારણ કે આ કાર્યોના કરનાર પ્રાણીને પાપારંભ સિવાય બીજો કોઈ પ્રશસ્ત ફળનો લાભ થતો નથી. એ વાતને જાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે, એટલું જ નહિ પણ બીજાથી પણ તે પૂર્વોક્ત કાર્યોથી તે દંડનો સમારંભ ન કરાવે, અને આ પ્રકારથી દંડનો સમારંભ

“આર્યૈઃ” આરાદ્યહિર્ગતા હેયધર્મેભ્યો યે તે આર્યાઃ તીર્થઙ્કર-ગણધરાદયઃ, તૈઃ પ્રવેદિતઃ=દ્વાદશવિધપરિષદિ પ્રકર્ષેણોક્તઃ । તદ્ બુદ્ધા કિં કાર્યમિત્યાહ—

“યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પે”—રિતિ, હે શિષ્ય! યથા=યેન પ્રકારેણાત્મા કર્મ-ણોપલિમ્પો ન ભવેત્તથા કુશલઃ=ચતુર આત્માર્થી ત્વમત્ર=દણ્ડસમારંભે નોપલિમ્પેઃ= નં સંશ્લિષ્યેઃ, સર્વથા સર્વસમારંભાદાત્માનં પરિરક્ષેદિત્યર્થઃ । કમલપત્રં યથા જલેન સ્પૃષ્ટં ન ભવતિ તથૈવ દણ્ડસમાદાનેનાત્મા યથા સ્પૃષ્ટો ન ભવેત્તથા કુરુષ્વેતિ તાત્પર્યમ્ । ઇતિ બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તૂક્ત એવ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીય ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૨ ॥

સમારંભ ન કરાવે, તથા હસ પ્રકાર સે દણ્ડ કા સમારંભ કરને વાલોં કી અનુમોદના ખી ન કરે, અર્થાત્ દણ્ડ સમારંભ કા સર્વથા ત્યાગ કરે ।

હસ પ્રકાર શ્રીસુધર્મા સ્વમી જમ્બૂ સ્વામી કો કહતે હૈં કિ-યહી રત્નત્રયરૂપ મોક્ષ કા માર્ગ હૈ, મોક્ષ કા અન્વેષણ જિસસે કિયા જાતા હૈ યહી માર્ગ શબ્દ કા વ્યુત્પત્ત્યર્થ હૈ । હસ માર્ગ કા નિરૂપણ આર્ય-તીર્થકર એવં ગણધરાદિકોં ને બારહ પ્રકાર કી પરિષદ મેં કિયા હૈ । વિષય-કષા-યાદિક જો આત્મા કા પતન કરને વાલે હૈં-અનસે જો શીઘ્રાતિશીઘ્ર વિરક્ત હોતે હૈં વે આર્ય હૈં, ઓર વે તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ હૈં, ક્યોંકિ યે સ્વયં અનસે વિરક્ત હોકર દૂસરોં કો ખી અનસે વિરક્ત હોને કા ઉપ-દેશ દેતે હૈં । યે આત્મકલ્યાણકારી મોક્ષ માર્ગ કે અનુપમ પથિક હોતે હૈં, ઓર દૂસરોં કો ખી હસ માર્ગ કે પથિક બનને કે લિયે ઉપાયોં કા પ્રતિપાદન કરતે હૈં । હસ પંચમ કાલ મેં જો મોક્ષમાર્ગ કી પ્રરૂપણા મુનિ

કરવાવાળાની અનુમોદના પણ ન કરે, અર્થાત્ કરવા, કરાવવા, અને અનુમોદવારૂપ, એ દંડસમારંભનો સર્વથા ત્યાગ કરે.

આ પ્રકાર શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે—તે રત્નત્રયરૂપ મોક્ષનો માર્ગ છે, મોક્ષનું અન્વેષણ જેનાથી થાય છે તે માર્ગ શબ્દનો વ્યુત્પત્ત્યર્થ છે. આ માર્ગનું નિરૂપણ આર્ય—તીર્થકર અને ગણધરાદિકોએ બાર પ્રકારની પરિષદમાં કર્યું છે. વિષયકષાયાદિક જે આત્માનું પતન કરવાવાળા છે તેનાથી જે જલદી વિરક્ત થાય છે તે આર્ય છે, અને તે તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ છે. કારણ કે તેઓ સ્વયં તેનાથી વિરક્ત બની બીજાઓને તેનાથી વિરક્ત થવાનો ઉપદેશ આપે છે. તેઓ આત્મકલ્યાણકારી મોક્ષમાર્ગના અનુપમ પથિક હોય છે, અને બીજાઓને પણ તે માર્ગના પથિક બનવા માટે ઉપાયોનું પ્રતિપાદન કરે છે. આ પાંચમા કાળમાં જે મોક્ષમાર્ગની પ્રરૂપણા મુનિ અને આચાર્યોદ્વારા થાય છે તેનું

एवं आचार्यौ द्वारा होती है उसका मूलस्रोत तीर्थकरादि ही है । ऐसा समझकर कुशल आत्मार्थी का कर्तव्य है कि वह अपनी आत्मा को इस दण्डसमारंभ द्वारा आने वाले कर्मों से लिप्त न बनावे । ऐसा उपदेश करते हुए सूत्रकार कहते हैं—“यथाऽत्र कुशलो नोपलिम्पेः” हे भव्य जीव ! तूं पूर्वोक्त कथन से यह भली प्रकार जान चुका है कि इन आत्मबलादिक कार्यों से दण्डसमादान होता है, और इससे कर्मबन्ध के सिवाय आत्मा को कोई लाभ नहीं होता है, अतः तूं इस बात का विचार कर, आत्मार्थी बन, और जिस प्रकार से तेरी आत्मा कर्मों से लिप्त न बने इस तरह की प्रवृत्ति से इन समारंभों से सर्वथा अपनी रक्षा कर । जैसे जल में रहता हुआ कमल जल से लिप्त नहीं होता है उसी प्रकार दण्डसमादान से आत्मा लिप्त न बने ऐसा कर । ‘इति ब्रवीमि’ इसका अर्थ पहिले किया जा चुका है ॥ सू० ५ ॥

॥ द्वितीय अध्ययन का द्वितीय उद्देश समाप्त ॥ २-२ ॥

મૂળસ્રોત તીર્થકરાદિ જ છે એવું સમજીને કુશળ આત્માર્થીનું કર્તવ્ય છે. કે-તે પોતાના આત્માને આ દંડસમારંભદ્વારા આવવાવાળા કર્મોથી લિપ્ત ન બનાવે, એવો ઉપદેશ કરતા સૂત્રકાર કહે છે—

“યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પે.” હે ભવ્ય જીવ ! તું પૂર્વોક્ત કથનથી એ ભલી પ્રકારે જાણી ચુક્યો છે કે આ આત્મબલાદિક કાર્યોથી દંડસમાદાન થાય છે, અને તેનાથી કર્મબંધ સિવાય આત્માને કોઈ લાભ થતો નથી, માટે તું એ ખાતનો વિચાર કરી આત્માર્થી બન, અને જે પ્રકારથી તારો આત્મા કર્મોથી લિપ્ત ન બને એવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી તેવા સમારંભોથી સર્વથા પોતાની રક્ષા કર. જેમ પાણીમાં રહેલા કમળ પાણીથી લિપ્ત નથી થતાં તે પ્રકારે દંડસમાદાનથી આત્મા લિપ્ત ન બને તેવું કર. ‘ઇતિ બ્રવીમિ’ આનો અર્થ પહેલાં કરવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ० ૫ ॥

બીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત. ૨-૨.

॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य तृतीयोद्देशः ॥

कथितो द्वितीयोद्देशोऽधुना तृतीयस्य व्याख्या प्रारम्भ्यते । द्वितीये संयमे रतिर्विषये चारतिः कर्तव्येति प्रोक्तम् । अत्र च तत्सर्वं कषायनिरसनेनैव स्यात्, तन्निरसनं च मानपरित्यागं धनासारतापरिचिन्तनं विना नैव सम्पद्यते, अत उच्चैर्गोत्रोत्पत्त्यभिमानादिकं मुनिना परित्याज्यमिति प्रतिपादयति ।

अत्रानन्तरसूत्रसम्बन्धः—‘जहेत्थ कुसले नोवलिपेज्जासि’ इति, हे शिष्य ! उच्चैर्गोत्राभिमानादौ त्वं यथा नोपलिप्तो भवेरिति ।

॥ आचाराङ्गसूत्र के दूसरे अध्ययन का तृतीय उद्देश ॥

द्वितीय उद्देश का कथन हो चुका, अब तृतीय उद्देश का कथन प्रारंभ होता है । द्वितीय उद्देश में “संयमी को संयम में रति और विषयादिकों में अरति करना चाहिये” यह बात कही गई है । इस उद्देश में यह प्रतिपादन किया जायगा कि गृहीत (ग्रहण किये हुए) संयम में रति और विषयादिकों में अरति संयमी जनको तब ही हो सकती है कि जब वह कषायों को दूर करे । कषायों का परित्याग—जब तक मान का त्याग न कर दिया जावेगा, तथा जब तक धन की असारता का विचार न होगा, तब तक नहीं हो सकता । इसलिये संयमी मुनि को उच्चगोत्र में उत्पन्न होने के अभिमान आदि का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिये ।

यहां पर “जहेत्थ कुसले नोवलिपेज्जासि” इस अनन्तर सूत्र के साथ सम्बन्ध है । जिसका भाव यह है कि हे शिष्य ! तू उच्च-गोत्र में

श्री आचाराङ्गसूत्रना भील अध्ययननो त्रीले उद्देश

भील उद्देशनुं कथन समाप्त थयुं, હવે ત્રીલ ઉદ્દેશનો પ્રારંભ થાય છે. भील उद्देशमां संयमीये संयममां रति अने विषयादिकमां अरति करवी जेधये. એ વાત કહેવામાં આવી છે. આ ઉદ્દેશમાં એનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવશે કે ગૃહીત (ગ્રહણ કરેલાં) સંયમમાં રતિ અને વિષયાદિકમાં અરતિ સંયમીજનને ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે કષાયો દૂર કરવામાં આવે. કષાયોનો પરિત્યાગ, ન્યાં સુધી માનનો ત્યાગ અને ધનની અસારતાનો વિચાર નહિ કરવામાં આવે ત્યાંસુધી તે બની શકતું નથી. માટે સંયમી મુનિએ ‘મારી ઉત્પત્તિ ઉંચ ગોત્રમાં થયેલી છે’ તેવાં અભિમાનનો સર્વથા ત્યાગ કરવો જોઈએ.

આ ઠેકાણે “જહેત્થ કુસલે નોવલિપેજ્જાસિ” આ અનન્તર સૂત્રની સાથે સંબંધ છે, એનો ભાવ એ છે કે—હે શિષ્ય ! તું ઉંચ ગોત્રમાં ઉત્પત્તિના

પરમ્પરસૂત્રસમ્બન્ધસ્તુ-‘ સે આયવલે ’ ઇત્યાદિના, સ્વસમાનાર્થમાત્મવલાદિ-
દળ્ડસમારમ્ભો ન લયા કર્તવ્ય ઇતિ ।

ઉચ્ચગોત્રોત્પત્ત્યા માનં, નીચગોત્રોત્પત્ત્યા ચાપમાનં જ્ઞાત્વા હર્ષ-ક્રોધો ત્વયા ન
વિધેયો, યતસ્તૌ માનાપમાનો વહુષુ જન્મસુ પ્રાપ્તપૂર્વાવિતિ દર્શયતિ-“ સે અસઈ ”
ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે અસઈ ઉચ્ચાગોણ, અસઈ નીઆગોણ, નો હીણે, નો
અઈરિત્તે, નોડપીહણ, ઇયપરિસંખાય કો ગોયાવાઈ, કો માણાવાઈ,
કંસિ વા ણગે ગિજ્ઞે, તમ્હા પંડિણ નો હરિસે નો કુજ્ઞે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા-સોડસક્રુદુચ્ચૈર્ગોત્રેડસક્રુત્તીચૈર્ગોત્રે ન હીનો નાતિરિત્તઃ, નો ર્હેતાપિ,
ઇતિ પરિસંખાય કો ગોત્રવાદી કો માનવાદી, કસ્મિન્ વૈકસ્મિન્ ગૃધ્યેત્, તસ્માત્પ-
ણ્ડિતો ન હૃણ્યેત્ ન ક્રુધ્યેત્ ॥ મ્૦ ૧ ॥

ઉત્પત્તિ કે અભિમાનાદિકોં મેં જિસ તરહ સે ન ફસે ઇસ પ્રકાર સે
અપની પ્રવૃત્તિ કર ।

‘ સે આયવલે ’ ઇત્યાદિ પરમ્પરાસૂત્ર કે સાથ મી સંબંધ હૈ, જિસસે
શિષ્ય કો સંબોધન કરતે હુણ આચાર્ય ઇસ વાત કા ઉપદેશ દેતે હૈં કિ
અપને માન કે લિયે આત્મવલ આદિ દ્વારા તુઝે દળ્ડસમારંભ નહીં
કરના ચાહિયે ।

નીચે કે સૂત્ર કા અવતરણ કરને કે લિયે સૂત્રકાર શિષ્ય સે કહતે
હૈં કિ-હે શિષ્ય ! ઉચ્ચગોત્ર મેં ઉત્પત્તિ સે માન ઓર નીચગોત્ર મેં જન્મ
લેને સે અપમાન કા વિચાર કર હર્ષ ઓર ક્રોધ કરના તુઝે યોગ્ય નહીં
હૈ, ક્યોંકિ કર્મ કે પ્રભાવ સે તૂને પૂર્વ કે અનેક ભવોં મેં ઇન્હેં પ્રાપ્ત કિયા
હૈ । યહી વાત પ્રકટ કી જાતી હૈ-“ સે અસઈ ” ઇત્યાદિ ।

અભિમાનાદિમાં જેવી રીતે ન ફસે તેવી પ્રવૃત્તિ પોતાની કર

‘ સે આયવલે ’ ઇત્યાદિ પરમ્પરાસૂત્ર સાથે પણ સંબંધ છે જેથી શિષ્યને
સંબોધન કરતા આચાર્ય એ વાતનો ઉપદેશ આપે છે કે પોતાના માન માટે
આત્મબલ આદિ દ્વારા તારે ઢંડસમારંભ ન કરવો જોઈએ

નીચેના સૂત્રનું અવતરણ કરવા માટે સૂત્રકાર શિષ્યને કહે છે કે-હે
શિષ્ય ! ઉચ્ચ ગોત્રમાં ઉત્પત્તિથી માન, અને નીચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાથી અપ-
માનનો વિચાર કરી હર્ષ અને ક્રોધ કરવો તને યોગ્ય નથી. કારણ કે કર્મના
પ્રભાવથી તે પૂર્વના અનેક ભવોમાં તે પ્રાપ્ત કર્યા છે એ વાત પ્રગટ
રવામાં આવે છે-‘ સે અસઈ ’ ઇત્યાદિ.

टीका—‘स’ इत्यादि। सः=प्राणी, असकृत्=बहुवारम् उच्चैर्गोत्रे=लोकमान्य उग्रकुलादीं समुत्पन्न इति शेषः, तथा असकृत् नीचैर्गोत्रे काष्ठहारादिकुले चोत्पन्नः, अत्र गोत्रपदस्य कुलपरत्वं विज्ञेयम्। तयोरुभयगोत्रयोरनुभाववन्धाध्यवसाय-स्थानकण्डकानि समानान्येव सन्तीत्याह—‘न हीन’ इति, हीनो=न्यूनो न भवति, एवमतिरिक्तः=अधिकोऽपि न भवति। उच्चनीचगोत्रयोः समसंख्यकान्येवानु-वन्धाध्यवसायस्थानकण्डकानि वर्तन्त इत्याशयः।

जीवात्मा का जन्म-मरण जब तक उसे मुक्ति की प्राप्ति नहीं हुई है तब तक होता रहता है। कभी यह नीच गोत्र के उदय से लोकनिन्दित कुल में जन्म लेता है तो कभी उच्च गोत्र के उदय से लोकप्रजित कुल में। यह उच्च-नीच गोत्र में जन्म की प्राप्ति होना कर्म का कार्य है। इसमें किसी की इच्छा काम नहीं करती। अतः उच्च गोत्र में जन्म लेने से हर्षित होना और नीच गोत्र में जन्म लेने से दुःखित होना आत्मा के लिये योग्य नहीं। कारण कि पर्यायों में उलट-फेर होता ही रहता है; क्योंकि संसारी जीव कर्मों से युक्त हैं। अतः जो नीच गोत्र में उत्पन्न होने से अपना अपमान समझता है उसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि—वह तू अनेक बार लोकमान्य उग्रकुल भोगकुल आदि में उत्पन्न हो चुका है। तथा जो उच्चकुल में जन्म लेने से अपना मान-बड़प्पन समझता है उसके प्रति सूत्रकार कहते हैं कि—भाई तू भी नीचकुल जो काष्ठहार आदि का वंश है, उसमें अनेक बार जन्म ले चुका है। गोत्र

ज्वात्माना जन्म मरण जथा सुधी तेने मुक्तिनी प्राप्ति नहीं यथ त्था सुधी यतां रहे छे, कोछ वणत ते नीच गोत्रना उदयधी लोकनिन्दित कुलमा जन्म ले छे तो कोछ वणत उच्च गोत्रना उदयधी लोकप्रजित कुलमा आ उच्च नीच गोत्रमा जन्मनी प्राप्ति यवी ते कर्मनुं कार्य छे, तेमां कोछनी इच्छा काम करती नहीं, भाटे उच्च गोत्रमा जन्म लेवाधी हर्षित यवुं, अने नीच गोत्रमा जन्म लेवाधी दुःखी यवुं आत्माने भाटे ते योग्य नहीं, कारण छे पर्यायोमां उलट फेर यथा न करे छे, संसारी जव कर्मधी युक्त छे, भाटे ते नीच गोत्रमा उत्पन्न होवाधी पोतानुं अपमान समझे छे तेने भाटे सूत्रकार छो छे छे—तू अनेकवार लोकमान्य उग्रकुल भोगकुल आदिमां उत्पन्न यथ सुकेल छे, तथा ते उच्च कुलमां जन्म लेवाधी पोतानुं मान-मोटापणुं समझे छ तेना अन्य सूत्र कार छो छे छे—भाई तू पणु नीच कुल ले इडीआरा आदिना वंश छ तेमां अनेकवार जन्म लई सुकेल छे, गोत्र शब्दनी अर्थ कुल छे, उच्च गोत्रमां

(કણ્ઠકમિતિ કર્મશ ઉચ્યતે) તસ્માત્ ન ઈહેતાપિ=જાતિ-કુલ-બલ-રૂપાદિમદ-સ્થાનેષ્વન્યતમં નો ઇચ્છેદપિ, મનસાઽપ્યુચ્ચકુલાઘભિમાનં ન ચેષ્ટેતેતિ તાત્પર્યમ્ । તતઃ કિમાયાતમિત્યાહ-‘ઈતી ’તિ, ઇતિ=પૂર્વોક્તપ્રકારમનન્તવારં પ્રાપ્તપૂર્વોચ્ચનીચ-કુલાદિકં સમાનકર્મશત્વં ચ પરિસંખ્યાય=બુદ્ધવા, ‘ગોત્રવાદી ’ગોત્રં વદિતું શીલં યસ્યેતિ સ ગોત્રવાદી=ગોત્રાભિમાની ‘મમૈવૈતાદૃશં પરમસમ્માનનીયં સુન્દરં ગોત્રં, કસ્યાપ્યન્યસ્ય તાદૃશં નાસ્તિ ’ ઇતિ કો ભવેત્, કિન્ન “માનવાદી ” માનં=સ્વગુણો-ત્કીર્તનમભિમાનં વદિતું શીલં યસ્યેતિ સ માનવાદી=સ્વોત્કર્ષવાદી કો ભવેત્ ? ન કોઽપિ ભવેદિત્યર્થઃ । અપિ ચ-કસ્મિન્ વા એકસ્મિન્ પ્રકૃષ્ટગોત્રા-

શબ્દ કા અર્થ કુલ હૈ । ઉચ્ચ ગોત્ર મેં ઉત્પન્ન હોને સે ન તો આત્મા અધિક બઢા હો જાતા હૈ ઓર ન નીચ ગોત્ર મેં જન્મ લેને સે હીન હી । ક્યોંકિ દોનોં ગોત્રોં કે બન્ધાધ્યવસાયસ્થાન કે કણ્ઠક એક સરીલે હૈં । ડનકી સંખ્યા સમાન હૈ । (કર્મ કે અંશ કા નામ કણ્ઠક હૈ) । ઇસલિયે “નો ઈહેત ” જીવ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ જાતિમદ, કુલમદ, બલમદ ઓર રૂપ વગૈરહ કે મદ કરને કી કમી મનસે મી ચેષ્ટા તક ન કરે । ઇસ પ્રકાર જબ યહ જીવ ઉચ્ચ-નીચ ગોત્ર કો અનેક વાર પૂર્વ જન્મોં મેં પ્રાપ્ત કર ચુકા હૈ, ઓર ઇનકે બંધ કે મી જબ સમાન કર્મ કે અંશ હૈં તો ઇસા કૌન પ્રાણી હોગા જો ઇસ પરિસ્થિતિ કો જાન વૂઝકર મી ગોત્રવાદી-ગોત્રાભિમાની હોગા કિ-“મેરા હી ઇસા પરમમાનનીય સુન્દર ગોત્ર હૈ કિસી અન્ય કા ઇસા નહીં હૈ ” ઇસ પ્રકાર કહને કા સ્વભાવવાલા-સાહસ કરને વાલા હોગા, તથા અપને ઉત્કર્ષ કો દૂસરોં કે પ્રતિ પ્રકટ કરને કી

ઉત્પન્ન હોવાથી નથી આત્મા અધિક મોટો થઈ જતો અને નથી નીચ ગોત્રમાં ઉત્પન્ન થવાથી નીચો થઈ જતો. કારણ કે બંને ગોત્રોના બન્ધાધ્યવસાય સ્થાનના કંડકો એકસરખા છે. તેઓની સંખ્યા સમાન છે. (કર્મના અંશનું નામ કંડક છે.) માટે “નો ઈહેત ” જીવનું કર્તવ્ય છે કે-તે જાતિમદ, કુળમદ, બળમદ અને રૂપ વિગેરેનો મદ કરવાની કદિ પણ મનથી એષ્ટા પણ ન કરે. આ પ્રકારે જ્યારે આ જીવ ઉચ્ચનીચ ગોત્રને અનેક વાર પૂર્વ જન્મોમાં પ્રાપ્ત કરી ચુકેલ છે, અને તેના બંધનો પણ જ્યારે સમાન કર્મનો અંશ છે તો એવો કયો પ્રાણી હશે જે આ પરિસ્થિતિને જાણી જોઈને પણ ગોત્રવાદી-ગોત્રાભિમાની થશે કે- “મારું જ એવું પરમ માનનીય સુન્દર ગોત્ર છે બીજા કોઈનું તેવું ગોત્ર નથી ” આ પ્રકારે કહેવાના સ્વભાવ વાળા-સાહસ કરવાવાળા હશે, અને ઉત્કર્ષને જાણીને પ્રતિ પ્રગટ કરવાના ભાવનાવાળા હશે ? માટે જ્યારે એ નિશ્ચિત છે

ભાવનાશાલી હોગા? । इसलिये जब यह निश्चित है कि उच्च गोत्र में अथवा नीच गोत्र में अनेक बार जन्म-मरण यह जीव कर चुका है तो फिर “मेरा जन्म उच्चकुल में हो” इस प्रकार वहां पर उत्पन्न होने के लिये अभिलाषी भी कौन होगा? । अतः जो हेयोपादेय के विवेक से युक्त हैं, ऐसे पण्डित-भव्यात्मा जीव उच्चकुल में उत्पन्न होने से न तो हर्ष करें और न नीचकुल में जन्म लेने से विषाद ही करें । इस बात का विद्वान् को कभी अहंकार नहीं करना चाहिये—कि मैं उच्चकुलका हूँ, तथा इसका कभी विषाद भी नहीं करना चाहिये कि मैं नीचकुल का हूँ । क्योंकि इस संसार का प्रवाह अनादिकाल से इसी प्रकार से चल रहा है, आगे भी ऐसा ही चलता रहेगा कि—जो आज उच्चकुल का है कल वही नीचकुल का बन जाता है, तथा दूसरे स्वर्ग के देव जिनके उच्चगोत्र का उदय है वे च्यवकर एकेन्द्रिय पृथिवी पानी वनस्पति जीवों में जन्म लेकर नीच गोत्र के उदय वाले बन जाते हैं । तब उच्च गोत्र और नीच गोत्र ये सदा एक जीव में स्थिर रहने वाले धर्म तो हैं नहीं; फिर इस विषय में हर्ष विषाद करना निष्कारण है । जब अनेक जन्मों में इस जीव को प्रकृष्ट कुलों की एवं अपकृष्टकुलों की अनेक बार प्राप्ति हो चुकी है तब हर्ष और विषाद करने से आत्मा को कौन सा लाभ हो सकता है? । यदि ये

કે ઉંચ ગોત્રમાં અને નીચ ગોત્રમાં અનેકવાર જન્મ મરણ આ જીવે કરેલ છે તો પછી “મારો જન્મ ઉંચ કુળમાં જ હોય” આ પ્રકાર ત્યાં ઉત્પન્ન થવા માટે કેણુ અભિલાષી હશે? માટે જે હેયોપાદેયના વિવેકથી યુક્ત છે એવો પંડિત—ભવ્યાત્મા જીવ ઉંચ કુળમાં ઉત્પન્ન થવાથી ન તો હર્ષ કરે, અને નીચ કુળમાં જન્મ લેવાથી ન વિષાદ કરે. આ વાતનો વિદ્વાને કોઈ વખત અહંકાર કરવો ન જોઈએ કે—હું ઉંચ કુળનો છું. અને તેનો પણ વિષાદ નહિ કરવો જોઈએ કે—હું નીચ કુળનો છું. કારણ કે આ સંસારનો આ પ્રવાહ અનાદિ કાળથી આ પ્રકારે ચાલી રહ્યો છે. આગળ પણ એવો જ ચાલશે. જે આજ ઉંચ કુળના છે કાલ તેજ નીચ કુળના બની જાય છે. ખીન્ન સ્વર્ગના દેવ જેનો ઉંચ ગોત્રનો ઉદય છે તે વ્યવીને એકેન્દ્રિય—પૃથિવી—પાણી—વનસ્પતિ જીવોમાં જન્મ લઈ નીચ ગોત્રના ઉદયવાળા બની જાય છે, તો પછી ઉંચ ગોત્ર અને નીચ ગોત્ર એ સદા એક જીવમાં સ્થિર રહેવાવાળો ધર્મ તો છે જ નહિ, પછી આ વિષયમાં હર્ષવિષાદ કરવો નિષ્કારણ છે. અનેક જન્મોમાં આ જીવને પ્રકૃષ્ટ કુલોની અને અપ્રકૃષ્ટ કુલોની અનેકવાર પ્રાપ્તિ થયેલી છે પછી હર્ષ અને શોક કરવાથી આત્માને કયો લાભ મળી શકે

દિકેઽનેકથા પ્રાપ્તપૂર્વે ન ગૃધ્યેત્=નામિલખ્યેત્=ઉચ્ચકુલોત્પન્નોઽહમિત્યુત્કર્ષ નેચ્છે-
દિત્યર્થઃ । તતઃ કિમિત્યાહ—‘તસ્મા’—દિતિ, યસ્માદનાદિભવે પરિભ્રમતા વહ્નિ
પ્રકૃષ્ટાનિ કુલાનિ પ્રાપ્તાનિ, તથાઽપકૃષ્ટાનિ ચ લઘ્યાનિ, તસ્માદ્દેતોઃ પण्डितः=
પરમાર્થજ્ઞો જ્ઞાતહેયોષાદેયો ન હૃણ્યેત્, ‘મમૈવેદૃશં કુલ’—મિતિ ન મોદેત, ન ક્રુધ્યેત્=
‘મમ કથમધમતરે કુલે જન્માભૂ’—દિતિ સ્વાત્મને ન કુપ્યેત્, ન વિષાદમપિ કુર્યાત્ ।
અનેકજનિષુ પ્રકૃષ્ટાનિ કુલાનિ પ્રાપ્તાનીતિ કથં હર્ષસમ્ભવઃ?, નીચકુલાનિ વહુશઃ સમ-
ધિગતાનીતિ વૃથૈવ ક્રોધઃ । અભૂતપૂર્વયોઃ સુખદુઃસ્વયોરેવ સતોર્હર્ષ-ક્રોધસમ્ભવાદિતિ
તાત્પર્યમ્ ।

ઉક્તञ्च —

અભૂતપૂર્વ કુલ જીવોં કે પ્રાપ્ત હુએ હોતે તો ડનકી પ્રાપ્તિ મેં હર્ષ વિષાદ
કરના ઉચિત માના જાતા, પરંતુ ંસા તો હૈ નહીં । અતઃ ંસા વિચાર
કર જ્ઞાની કો ંસ વિષય મેં હર્ષ વિષાદ નહીં કરના ચાહિયે; કિન્તુ સદા
ંસા ઁયાલ કરતે રહતા ચાહિયે કિ—

ંસ સંસાર મેં અનાદિકાલ સે નાના યોનિયોં મેં ભ્રમણ કરને વાલે
ંસ આત્મા ને અનેક વાર સર્વ સુખ દુઃસ્વ કે સ્થાનભૂત ઉચ્ચ નીચ ગોત્રોં
કો પ્રાપ્ત કિયા હૈ, ફિર ંનકી પ્રાપ્તિ મેં તુઁ આશ્ચર્ય હી કૌન સા હૈ ।
અનન્ત જન્મજન્માન્તરોં મેં ંસ જીવને અનેક સુખોં કો પ્રાપ્ત કિયા હૈ,
તથા—અપમાન સે, સ્થાન આદિ કે ચ્યુત હોને સે વધવંધન ંવં ધન કે
નાશ સે અનેક રોગોં કો તથા અનેક પ્રકાર કે દુઃસ્વોં કો ઁલા હૈ ।

કહા ઁી હૈ—

ં. કદાચ તે અભૂતપૂર્વ કુળ જીવને પ્રાપ્ત થયેલ હોય તો તેની પ્રાપ્તિમાં હર્ષ
વિષાદ કરવો ઉચિત મનાત, પરંતુ તેવું તો ં હિ, માટે ંવો વિચાર કરી
જ્ઞાનીં આ વિષયમાં હર્ષ વિષાદ નહિ કરવો જોઈં. પણ સદા હમેશાં ંવો
ખ્યાલ રાખવો જોઈં કે—

આ સંસારમાં અનાદિ કાળથી અનેક યોનિયોમાં ભ્રમણ કરવાવાળા આ આત્માને
અનેકવાર સર્વ સુખદુઃખના સ્થાનભૂત ઉંચ નીચ ગોત્રોને પ્રાપ્ત કરેલ ં. પછી
તેની પ્રાપ્તિમાં તને આશ્ચર્ય શું ં. અનન્ત જન્મ જન્માન્તરોમાં આ જીવે
અનેક પ્રકારના સુખોને પ્રાપ્ત કર્યા ં. અને અપમાનથી, સ્થાન આદિના ચ્યુત
હોવાથી, વધ ખંધન અને ધનના નાશથી અનેક રોગોને તથા અનેક પ્રકારના
દુઃખોને સહન કર્યા ં.

કહું પણ ં—

યદ્વા ત્રિપલ્યોપમપરિમિતમપ્યાયુરલ્પમેવ, યતોઽન્તર્મુહૂર્ત વિહાય શેષસર્વસ્યાપ્યા-
યુષોઽપવર્તનશીલત્વાત્, પ્રતિક્ષણમાયુષઃ ક્ષીયમાણત્વાચ્ચ । અપવર્તનં નામ દીર્ઘ-
સ્થિતિકાલિકકર્મપરમાણૂનપગમય્ય તેષાં હ્રસ્વસ્થિતિકાલિકતાસમ્પાદનમ્ । આયુશ્ચ
સોપક્રમ-નિરુપક્રમભેદેન દ્વિવિધમ્, ઉક્તઞ્ચ ભગવતા ભગવત્યામ્—

“જીવા ણં મંતે ! કિં સોવક્કમાડયા નિરુવક્કમાડયા ? ગોયમા ! જીવા સોવક્ક-
માડયાવિ ણિરુવક્કમાડયાવિ ” ઇતિ (ભગવતી, શ. ૨૦ ઉ. ૧૦)

છાયા —જીવાઃ खलु भदन्त ! किं सोपक्रमायुष्का निरुपक्रमायुष्काः ? गौतम !
जीवाः सोपक्रमायुष्का अपि निरुपक्रमायुष्का अपि ॥ इति ॥

एक क्षण तक की सफलता मानी गई है । उसी प्रकार अन्तर्मुहूर्तसे
लगा कर देशोनपूर्वकोटि-देश उन एक करोड पूर्व-परिमित आयु
प्राप्त होने पर भी उसमें संयम कालका अभाव होने से वह भी अल्प ही है ।

अथवा—अन्तर्मुहूर्तकाल परिमित आयुको छोड़ कर शेष समस्त
आयु अपवर्त्तनशील-होने से और क्षण २ में आयुका क्षय होने से त्रिप-
ल्योपम परिमित-तीन पल्योपम का-आयु भी अल्प ही है ।

दीर्घकालिक आयुकर्म के परमाणुओं को खींच कर थोड़ी स्थिति-
वाले आयुकर्म के परमाणुओं में स्थापित करने का नाम अपवर्त्तन है ।

सोपक्रम और निरुपक्रम के भेद से आयु दो प्रकार का है । भग-
वती सूत्रमें भगवानने यही बात कही है—

“जीवा णं मंते ! किं सोवक्कमाडया निरुवक्कमाडया?, गोयमा !
जीवा सोवक्कमाडया वि णिरुवक्कमाडया वि ” इति । (भ. श. २० उ. १०)

કાળની એક ક્ષણ સુધીની સફળતા મનાય છે, તે પ્રકાર અન્તર્મુહૂર્તથી લગાવી
દેશોનપૂર્વ કોટિ-દેશ ઉન એક કરોડ પૂર્વ-પરિમિત આયુ પ્રાપ્ત થવાથી પણ
તેમા સંયમકાળનો અભાવ હોવાથી તે પણ અલ્પજ છે, અથવા અન્તર્મુહૂર્તકાળપરિ-
મિત આયુને છોડીને શેષ સમસ્ત આયુ અપવર્તનશીલ હોવાથી અને ક્ષણક્ષણમા
આયુનો ક્ષય હોવાથી ત્રિપલ્યોપમપરિમિત ત્રણ પલ્યોપમ આયુ પણ અલ્પજ છે

દીર્ઘકાલિક આયુકર્મના પરમાણુઓને ખેંચીને થોડી સ્થિતિવાળા આયુકર્મના
પરમાણુઓમા સ્થાપિત કરવાનું નામ અપવર્તન છે

સોપક્રમ અને નિરુપક્રમના ભેદથી આયુ બે પ્રકારની છે ભગવતી સૂત્રમાં
ભગવાને આ વાત કહી છે.—

“જીવા ણં મંતે ! કિં સોવક્કમાડયા નિરુવક્કમાડયા ?,
ગોયમા ! જીવા સોવક્કમાડયા વિ ણિરુવક્કમાડયા વિ ”

इति (भ. श. २० उ. १०).

“सर्वसुखान्यपि बहुशः, प्राप्तान्यटता मयाऽत्र संसारे।

उच्चैःस्थानानि तथा, तेन न मे विस्मयस्तेषु ” ॥१॥

तथा—“अवमानात्परिभ्रंशाद्वधबन्धधनक्षयात् ।

प्राप्ता रोगाश्च शोकाश्च जात्यन्तरशतेष्वपि ” ॥१॥ इति ।

किमधिकेन वर्तमानेऽपि जन्मनि नानाविधा अवस्था अनुभूयन्ते, अत-
आत्मार्यभिर्हर्षक्रोधौ न कार्यावित्याशयः । अत्र गोत्रपदमुपलक्षणं, तेन जात्या-
दीनां सर्वेषां मदो न विधेय इति प्रकरणार्थः ।

“सर्वसुखान्यपि बहुशः, प्राप्तान्यटता मयाऽत्र संसारे ।

उच्चैः स्थानानि तथा, तेन न मे विस्मयस्तेषु ” ॥ १ ॥

तथा—“अवमानात्परिभ्रंशाद्वधबन्धधनक्षयात् ।

प्राप्ता रोगाश्च शोकाश्च, जात्यन्तरशतेष्वपि ” ॥ १ ॥ इति ।

अधिक क्या कहा जाय ? जब वर्तमान पर्याय में ही इस जीव की
अनेक अवस्थाएँ होती देखी जाती हैं तो जन्म-जन्मान्तरों में इसकी
अनेक अवस्थाएँ हुई हों, अनेक बार उच्च नीच कुलों में जन्म हुआ हो
तो इसमें आश्चर्य की बात ही कौनसी है । ऐसा दृढ़ विश्वास कर आ-
त्मार्यी के लिये इन अवस्थाओं में कभी भी हर्ष और विषाद के लिये
स्थान नहीं होना चाहिये ।

सूत्र में गोत्र पद उपलक्षण है इससे आठ मदों का—(१) जातिमद
(२) कुलमद, (३) बलमद, (४) रूपमद, (५) लाभमद, (६) तपमद,

“सर्वसुखान्यपि बहुशः, प्राप्तान्यटता मयाऽत्र संसारे ।

उच्चैःस्थानानि तथा, तेन न मे विस्मयस्तेषु ” ॥ १ ॥

तथा—“अवमानात्परिभ्रंशाद्वधबन्धधनक्षयात् ।

प्राप्ता रोगाश्च शोकाश्च, जात्यन्तरशतेष्वपि ” ॥ २ ॥ इति

अधिक શું કહેવામાં આવે. જ્યારે વર્તમાન પર્યાયમાં જ આ જીવની અનેક
અવસ્થાઓ થાય છે તે નજરે દેખાય છે તો જન્મ જન્માંતરોમાં તેની અનેક
અવસ્થાઓ થાય, અનેક વાર ઉંચ નીચ ગોત્રમાં જન્મો થાય છે એમાં
આશ્ચર્યની વાત કંઈ છે. એવો દૃઢ વિશ્વાસ કરી આત્માર્થીને માટે આ અવસ્થા
ઓમાં કોઈ વખત પણ હર્ષ અને શોકનું સ્થાન હોવું ન જોઈએ.

સૂત્રમાં ગોત્રપદ ઉપલક્ષણ છે માટે આઠ મદોનું—(૧) જાતિમદ, (૨) કુળ
મદ, (૩) બળમદ, (૪) રૂપમદ, (૫) લાભમદ, (૬) તપમદ, (૭) સૂત્રમદ,

દિકેડનેરૂઠા પ્રાપ્તપૂર્વે ન ગૃધ્યેત્=નામિલપ્યેત્=ઉચ્ચકુલોત્પન્નોઽહમિત્યુત્કર્ષ નેચ્છે-
 દિત્યર્થઃ । તતઃ કિમિત્યાહ-‘તસ્મા’-દિતિ, યસ્માદનાદિભવે પરિભ્રમતા વહૂનિ
 પ્રકૃષ્ટાનિ કુલાનિ પ્રાપ્તાનિ, તથાઽપકૃષ્ટાનિ ચ લઘ્વાનિ, તસ્માદ્દેતોઃ પण्डितः=
 પરમાર્થજ્ઞો જ્ઞાતહેયોપાદેયો ન હૃણ્યેત્, ‘મમૈવેદશં કુલ’-મિતિ ન મોદેત, ન ક્રુધ્યેત્=
 ‘મમ કથમધમતરે કુલે જન્માભૂ’-દિતિ સ્વાત્મને ન કુપ્યેત્, ન વિષાદમપિ કુર્યાત્ ।
 અનેકજનિષુ પ્રકૃષ્ટાનિ કુલાનિ પ્રાપ્તાનીતિ કથં હર્ષસમ્ભવઃ?, નીચકુલાનિ વહુશઃ સમ-
 ધિગતાનીતિ વૃથૈવ ક્રોધઃ । અભૂતપૂર્વયોઃ સુખદુઃસ્વયોરેવ સતોર્હર્ષ-ક્રોધસમ્ભવાદિતિ
 તાત્પર્યમ્ ।

ઉક્તञ्च —

અભૂતપૂર્વ કુલ જીવોં કે પ્રાપ્ત હુએ હોતે તો ડનકી પ્રાપ્તિ મેં હર્ષ વિષાદ
 કરના ડચિત માના જાતા, પરંતુ ંસા તો હૈ નહીં । અતઃ ંસા વિચાર
 કર જ્ઞાની કો ંસ વિષય મેં હર્ષ વિષાદ નહીં કરના ચાહિયે; કિન્તુ સદા
 ંસા ડયાલ કરતે રહતા ચાહિયે કિ—

ંસ સંસાર મેં અનાદિકાલ સે નાના યોનિયોં મેં ભ્રમણ કરને વાલે
 ંસ આત્મા ને અનેક વાર સર્વ સુખ દુઃસ્વ કે સ્થાનભૂત ડચ્ચ નીચ ગોત્રોં
 કો પ્રાપ્ત કિયા હૈ, ફિર ંનકી પ્રાપ્તિ મેં તુઝે આશ્ચર્ય હી કૌન સા હૈ ।
 અનન્ત જન્મજન્માન્તરોં મેં ંસ જીવને અનેક સુખોં કો પ્રાપ્ત કિયા હૈ,
 તથા-અપમાન સે, સ્થાન આદિકે ચ્યુત હોને સે વધવંધન ંવં ધનકે
 નાશ સે અનેક રોગોં કો તથા અનેક પ્રકાર કે દુઃસ્વોં કો ંસેલા હૈ ।

કહા ંહી હૈ—

છે. કહાય તે અભૂતપૂર્વ કુળ જીવને પ્રાપ્ત થયેલ હોય તો તેની પ્રાપ્તિમાં હર્ષ
 વિષાદ કરવો ઉચિત મનાત, પરંતુ તેવું તો છે નહિ, માટે એવો વિચાર કરી
 જ્ઞાનીએ આ વિષયમાં હર્ષ વિષાદ નહિ કરવો જોઈએ. પણ સદા હમેશાં એવો
 ખ્યાલ રાખવો જોઈએ કે—

આ સંસારમાં અનાદિ કાળથી અનેક યોનિયોમાં ભ્રમણ કરવાવાળા આ આત્માને
 અનેકવાર સર્વ સુખદુઃખના સ્થાનભૂત ઉંચ નીચ ગોત્રોને પ્રાપ્ત કરેલ છે. પછી
 તેની પ્રાપ્તિમાં તને આશ્ચર્ય શું છે. અનન્ત જન્મ જન્માન્તરોમાં આ જીવે
 અનેક પ્રકારના સુખોને પ્રાપ્ત કર્યા છે. અને અપમાનથી, સ્થાન આદિના ચ્યુત
 હોવાથી, વધ બંધન અને ધનના નાશથી અનેક રોગોને તથા અનેક પ્રકારના
 દુઃખોને સહન કર્યા છે.

કહ્યું પણ છે—

“सर्वसुखान्यपि बहुशः, प्राप्तान्यटता मयाऽत्र संसारे।

उच्चैःस्थानानि तथा, तेन न मे विस्मयस्तेषु ” ॥१॥

तथा—“अवमानात्परिभ्रंशाद्वधबन्धधनक्षयात् ।

प्राप्ता रोगाश्च शोकाश्च जात्यन्तरशतेष्वपि ” ॥१॥ इति ।

किमधिकेन वर्तमानेऽपि जन्मनि नानाविधा अवस्था अनुभूयन्ते, अत-
आत्मार्यभिर्हर्षक्रोधौ न कार्यावित्याशयः । अत्र गोत्रपदमुपलक्षणं, तेन जात्या-
दीनां सर्वेषां मदो न विधेय इति प्रकरणार्थः ।

“सर्वसुखान्यपि बहुशः, प्राप्तान्यटता मयाऽत्र संसारे ।

उच्चैः स्थानानि तथा, तेन न मे विस्मयस्तेषु ” ॥ १ ॥

तथा—“अवमानात्परिभ्रंशाद्वधबन्धधनक्षयात् ।

प्राप्ता रोगाश्च शोकाश्च, जात्यन्तरशतेष्वपि ” ॥ १ ॥ इति ।

अधिक क्या कहा जाय ? जब वर्तमान पर्याय में ही इस जीव की
अनेक अवस्थाएँ होती देखी जाती हैं तो जन्म-जन्मान्तरों में इसकी
अनेक अवस्थाएँ हुई हों, अनेक वार उच्च नीच कुलों में जन्म हुआ हो
तो इसमें आश्चर्य की बात ही कौनसी है । ऐसा दृढ़ विश्वास कर आ-
त्मार्यी के लिये इन अवस्थाओं में कभी भी हर्ष और विषाद के लिये
स्थान नहीं होना चाहिये ।

सूत्र में गोत्र पद उपलक्षण है इससे आठ मदों का—(१) जातिमद
(२) कुलमद, (३) बलमद, (४) रूपमद, (५) लाभमद, (६) तपमद,

“सर्वसुखान्यपि बहुशः, प्राप्तान्यटता मयाऽत्र संसारे ।

उच्चैःस्थानानि तथा, तेन न मे विस्मयस्तेषु ” ॥ १ ॥

तथा—“अवमानात्परिभ्रंशाद्वधबन्धधनक्षयात् ।

प्राप्ता रोगाश्च शोकाश्च, जात्यन्तरशतेष्वपि ” ॥ २ ॥ इति

अधिक शुं कडेवाभां आवे. ज्यारे वर्तमान पर्यायभां ज आ ज्वनी अनेक
अवस्थाओ थाय छे ते नजरे हेभाय छे तो जन्म जन्मांतरोभां तेनी अनेक
अवस्थाओ थाय, अनेक वार उंच नीच गोत्रभां जन्मो थाय छे येभां
आश्चर्यनी बात कुछ छे. येवो दृढ विश्वास करी आत्मार्यीने भाटे आ अवस्था
ओभां कुछ वषत पणु दुर्ष अने शोकनुं स्थान होवुं न लेछे.

सूत्रभां गोत्रपद उपलक्षण छे भाटे आठ मदोनुं—(१) जातिमद, (२) कुल
मद, (३) बलमद, (४) रूपमद, (५) लाभमद, (६) तपमद, (७) सूत्रमद,

માનાદિનિરસનેન કષાયવ્યુદાસસ્તેન ચ સંયમે દૃઢતા વિષયે ચાદૃઢતા, તથા ચ સમ્યગ્જ્ઞાનાદધિગમસ્તેન ચ મોક્ષ ઇતિ ક્રમેણ સર્વથા માનાપમાનાદૌ હર્ષક્રોધૌ ત્યાજ્યાવિતિ ભાવઃ ।

યથા દેશદેશાન્તરં ભ્રમન્ પથિકઃ કચિત્ સુખં કચિદ્ દુઃખં લભતે, કચિદ્ ગ્રામે કચિદરણ્યે વસતિ, કચિત્સમભૂમિષુ કચિચ્ચ વિષમભૂમિષુ શેતે, કચિત્સ્વચ્છજલં કચિદ્ દૂષિતજલં ચ પિવતિ, ન ચ સુખદુઃખે ગણયતિ લક્ષ્યગમ્યદેશપ્રાપ્તિકામઃ, તથૈવ પ્રકૃતેઽપિ ઉચ્ચગોત્રાદિપ્રાપ્તૌ ન હર્ષ-શોકૌ મુક્તિપ્રાપ્તુકામેન સંયમિના કાર્યાવિતિ વર્તુલકાર્યઃ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

(૭) સૂત્રમદ, (૮) ऐश्वर्यમદ का ग्रहण हो जाता है । मद् भी अहंकार ही है, अतः इनका परित्याग कर देना चाहिये; क्योंकि जाति वगैरह से हीन होने पर भी आत्मा काल लब्धि आदि के प्राप्त होने पर धर्म का अधिकारी बन जाता है । धर्मप्राप्ति में जाति वगैरह बाधक नहीं होते हैं ।

जिस प्रकार देश-देशान्तर में भ्रमण करने वाले प्राणी को कभी किसी स्थान पर सुख, कभी किसी जगह दुःख मिलता है । कभी वह ग्राम में बस जाता है कभी उसे वन में भी बसने का अवसर आता है, कभी प्रशस्त भूमि पर वह सो जाता है कभी कंटकाकीर्ण भूमि में ही पड़ रहता है, कभी मीठा स्वच्छ जल उसे पीने को मिलता है कभी खारा मलिन जल भी वह पी लेता है, तो भी इस विषय में वह सुख और दुःख नहीं मानता । उसे अपने लक्ष्य स्थान पर पहुंचने के लिये यह सब करना पड़ता है । उसी प्रकार प्रकृत में भी मुक्ति को चाहने वाले संयमी मुनि के

(૮) ऐશ્વર્યમદનું ગ્રહણ થાય છે. મદ પણ આહાર જ છે માટે તેનો પણ પરિત્યાગ કરી દેવો જોઈએ, કારણ કે જાતિ વિગેરેનું હીનપણું હોવા છતાં પણ આત્મા કાલ લબ્ધિ આદિના પ્રાપ્ત થવાથી ધર્મનો અધિકારી બની જાય છે, ધર્મપ્રાપ્તિમાં જાતિ વિગેરે બાધક થતા નથી

જેવી રીતે દેશદેશાન્તરમાં ભ્રમણ કરવાવાળા પ્રાણીને કોઈ વખત કોઈ સ્થાનપર સુખ, કોઈવખત કોઈ જગ્યાએ દુઃખ મળે છે. કોઈ વખત ગામમાં વસે છે કોઈ વખત વગડામાં પણ રહેવાનો પ્રસંગ આવે છે કોઈ વખત પ્રશસ્ત ભૂમિ પર તે સુધ્ધ જાય છે કોઈ વખત કાંટાવાળી ભૂમિમાં પણ પડ્યું રહેવું પડે છે. કોઈ વખત મીઠું સ્વચ્છ પાણી પીવા મળે છે કોઈ વખત ખારું મલિન પાણી પણ પીવા મળે છે તો પણ આ બધા વિષયોમાં તે સુખ અગર દુઃખ માનતો નથી. તેને પોતાના લક્ષ્ય સ્થાને પહોંચવા માટે આ બધું કરવું પડે છે તે સ્થાનમાં પણ મુક્તિને આપવાવાળા સંયમીમુનિ માટે હિંચ નીચ ગોત્રની

प्राणिनां सातं प्रियं भवतीति विचार्य केषाञ्चिदपि प्राणिनामहितं न कर्त्तव्यम्। तदहिताचरणस्य यत्फलं भवति तदर्शयति—‘भूएहिं’ इत्यादि।

मूलम्—भूएहिं जाण पडिलेह सायं, समिए एयाणुपस्सी, तं जहा—अंधत्तं बहिरत्तं मूयत्तं काणत्तं कुंटत्तं खुज्जत्तं वडभत्तं सामत्तं सबलत्तं, सह पमाएणं अणेगरूवाओजोणीओ संधायइ, विरूवरूवे फासे संपरिवेयइ ॥ सू० २ ॥

छाया—भूतेषु जानीहि सातम् समित एतदनुदर्शी, तद्यथा—अन्धत्वं बहिरत्वं मूकत्वं काणत्वं कुब्जत्वं वडभत्वं श्यामत्वं सबलत्वं सह प्रमादेन अनेकरूपा योनीः सन्दधाति विरूपरूपान् स्पर्शान् परिसंवेदयते ॥ सू० २ ॥

लिये उच्च नीच गोत्र की प्राप्ति में भी हर्ष विषाद करना उचित नहीं है। इस प्रकार के विचार से मान आदि का जब आत्मा से अभाव हो जाता है तब कषाय का अभाव स्वतः सिद्ध होने से संयमी को संयम-भाव में दृढ़ता, और विषयादिकों में अदृढ़ता आ जाती है, इससे सम्यग्ज्ञानादिक सद्गुणों की प्राप्ति होने से संयमी मुनि को मुक्ति का लाभ कालान्तर में या उसी भव में होजाता है। इस पूर्वोक्त कथन से संयमी मुनि को इस बात का भी सदा विचार करते रहना चाहिये कि मान और अपमान के कारण-कलापोंकी उपस्थिति होने पर मुझे हर्ष और विषाद नहीं करना चाहिये ॥ सू० १ ॥

सांसारिक प्राणियों को सातावेदनीय के उदय से सुख एवं सुख-कारक सामग्री, तथा असातावेदनीय के उदय से दुःख एवं दुःखकारक

प्राप्तिमां पणुं दुर्षं शोकं करवो उचित नथी. आ प्रकारना विचारथी मान आदिनो न्यारे आत्माथी अभाव थर्धं नय छे त्यारे कषायनो अभाव स्वतः सिद्ध होवाथी संयमीने संयम लावमां दृढता अने विषयादिकोमां अदृढता आवी नय छे. भाटे सम्यग्ज्ञानादिक सद्गुणोनी प्राप्ति होवाथी संयमी मुनिने मुक्तिनो लाल कालान्तरमां अगर आ लवमां थाय छे.

आ पूर्वोक्त कथनथी संयमी मुनिअे आ वातनो पणु सदा विचार राभवो नोर्धंअे के—मान अने अपमानना कारणकलापोनी उपस्थिति होवाथी दुर्षं अने विषाद करवुं माइं कर्त्तव्य नथी. ॥ सू० १ ॥

सांसारिक प्राणियोने सातावेदनीयना उदयथी सुख अने सुखकारक सामग्री, अने असातावेदनीयना उदयथी दुःख अने दुःखकारक सामग्री प्राप्त थाय छे,

ટીકા—‘ભૂતેષુ’ इति । अत्र मूले ‘भूएहिं’ इति तृतीयान्तपाठः सप्तम्यर्थे, भूतेषु=भवन्ति, भविष्यन्ति, अभूवन् च सत्तारूपेणेति भूतानि=प्राणिनस्तेषु सातं=सुखं तद्विरुद्धं चासातं=दुःखं प्रत्युपेक्ष्य=मूक्षमधिया विचार्य जानीहि=बुध्यस्व । उपयोगलक्षणो जीवः कालत्रयेऽपि सत्तां दधाति, अतः प्राणिनस्त्रैकालिकसत्ताप्रतिपादनायात्र भूतशब्दोपादानं कृतमिति बोध्यम् ।

સામગ્રી પ્રાપ્ત થોતી હૈ, એસા વિચાર કર કિસી મી પ્રાણી કા જરા મી અહિત નહીં કરના ચાહિયે । અહિત આચરણ કા જો ફલ હોતા હૈ સો કહતે હૈ—

‘ભૂએહિં જાણ’ इत्यादि । प्रत्येक जीवात्मा—चाहे वह दरिद्री हो; चाहे भिक्षुक हो; चाहे धनी हो; चाहे गुणी हो; कोई भी क्यों न हो; यही चाहता है कि हमको शांतिलाभ हो, सुख प्राप्त हो । चाहे आस्तिक हो या नास्तिक; सबका एक यही लक्ष्य है । इससे प्रतिकूल कोई भी नहीं मिलेगा । एक भिक्षुक जो दर दर का भिखारी बनकर अपने उदर का निर्वाह करता है उससे भी यदि प्रश्न किया जाय तो वह भी यही कहेगा कि, क्या करूं; मुझे शांता—सुख नहीं है । अतः इस प्रकार के उसके कथन से यह बात सत्य साबित होती है कि वह भी शांता—सुख पाने का अभिलाषी है । किड़ी को भी कोई छूता है तो वह भय के मारे भागती है । वृक्ष के नीचे किसीने अग्नि जलाई हो तो, वह उसके आताप से मुरझा जाता है । लजवंती एक जात की वनस्पति होती है जो छूते ही संकुचित

એવો વિચાર કરી કોઈ પણ પ્રણિનુ જરા પણ અહિત નહિ કરવું બેઈએ. અહિત આચરણનું બે ફળ હોય છે તે કહે છે—

‘ભૂએહિં જાણ’ इत्यादि प्रत्येक जीवात्मा लवे ते दरिद्री होय अगर भिक्षुक होय, लवे धनी होय आडे गुणी होय लवे कौं भी प्रकारना होय પણ ‘अमोने शांतिनो लाभ थाओ, सुख थाओ’ लवे नास्तिक होय के आस्तिक પણ अधानुं आ ओक न लक्ष्य छे. ऐनाथी प्रतिकूल कौं भी कारण भणशे नहि. ओक भिक्षुक ने धरधरना बिभारी अपनीने पेटाना पेटनो निर्वाह करे छे तेनाथी પણ ऐ प्रश्न करवामा आवे तो ते પણ ऐ न कडेशे के शु कइं मने शांता—सुख नथी, भाटे आ प्रकारना तेना कथनथी ऐ बात सत्य साबित थाय छे के ते પણ शांता—सुख भेगववानो अभिलाषी छे. किड़ीने પણ कौं अडे छे तो ते પણ हूर लागे छे. वृक्षनी नीचे कौं अग्नि सणगावी होय तो ते तेना थी सुकड जाय छे. लजवंती ओक जातनी वनस्पति होय छे ने अडकवाथी

શાન્તિ પ્રદાન કરને કી યોગ્યતા નહીં હૈ । યહ તો હમારી કલ્પના હૈ, જો હમને ઇનમેં સુખશાન્તિ માન રહી હૈ । જિન જડ સ્થૂલ વસ્તુઓં મેં સુખ કી કલ્પના કરકે સાધારણ મનુષ્ય મી જી-તોડ પરિશ્રમ કર રહે હૈં, ઊનકી પ્રાપ્તિ હોને પર મી ઊન્હેં સુખ નહીં મિલતા, ક્યોંકિ ઊનમેં સુખ પ્રદાન કરને કી શક્તિ હૈ નહીં । ઇસી સે આજ સારા સંસાર, ઓહે વૈભવસમ્પન્ન હો; ઓહે દરિદ્રાવસ્થાપન્ન હો; દુઃખી હી હૈ । યહ દુઃખ તવતક નહીં મિટ સકતા જબ તક સુખ કે વાસ્તવિક સ્વરૂપ કા પતા ન લગા લિયા જાયગા, અથવા ઊસકે સ્થાન કા પૂર્ણ જ્ઞાન ન હો જાવેગા ।

વાસ્તવિક સુખ ક્યા હૈ ? ઇસકા ઇક માત્ર ઉત્તર હૈ—નિરાકુલતા । ક્યોંકિ સંસાર મેં જબ કમી ઇચ્છાઓં કે શાંતિ હોને પર યત્-કિશ્ચિત્ સુખ કી અનુભૂતિ હોતી હૈ તબ ઇસસે ઇસ વાત કા અનુમાન મી લગાયા જા સકતા હૈ કિ કોઈ ઇસી મી અવસ્થા હૈ કિ જહાં પર ઇસકા પૂર્ણરૂપ સે વિકાશ હૈ । વહ નિરાકુલતા કે સિવાય ઔર કોઈ દૂસરી અવસ્થા નહીં હૈ । ઇસ નિરાકુલતા કા પૂર્ણમોક્ષા પરમાત્મા હૈ । ઇસી કા અભિલાષી પ્રત્યેક સંસારી જીવ હૈ । ઇસી અભિપ્રાય કો હૃદય મેં રાખકર સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ “ભૂતેષુ જાનીહિ પ્રત્યુપેક્ષ્ય સાતમ્”—હે ભવ્ય ! પ્રત્યેક જીવોં મેં વ્યક્ત ઔર અવ્યક્તરૂપ સે શાંતારૂપ જો સુખ હૈ ઊસકી અભિલાષા

યોગ્યતા નથી, એ તો અમારી કલ્પના છે, જે અમે તેમાં સુખ શાન્તિ માની રાખેલ છે. જે જડ અને સ્થૂળ વસ્તુઓમાં સુખની કલ્પના કરીને સાધારણ મનુષ્ય પણ જીવંતોડ પરિશ્રમ કરે છે. તેના પ્રાપ્તિ થવા છતાં પણ તેને સુખ મળતું નથી કારણ કે તેમાં સુખ પ્રદાન કરવાની શક્તિ છે જ નહિ. એટલા માટે આજ સારો સંસાર ભલે વૈભવસંપન્ન હોય અગર દરિદ્રાવસ્થાપન્ન હોય, દુઃખી જ છે. એ દુઃખ ત્યાં સુધી મટી શકતું નથી જ્યાં સુધી સુખનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ હાથ ન લાગે, અગર તેના સ્થાનનું પૂર્ણ જ્ઞાન ન થાય.

વાસ્તવિક સુખ શું છે ? તેનો એક માત્ર ઉત્તર છે—નિરાકુળતા. કારણ કે સંસારમા ન્યારે કોઈ વખત ઇચ્છાઓના શાંત થવાથી જરાક સુખની અનુભૂતિ થાય છે ત્યારે તેથી એ વાતનો અનુમાન કરવામાં આવે છે કે—કોઈ એવી પણ અવસ્થા છે કે જે ઠેકાણે તેનો પૂર્ણ રૂપથી વિકાશ છે, તે નિરાકુળતા સિવાય બીજી કોઈ અવસ્થા નથી. આ નિરાકુળતાનો પૂર્ણ લોક્ષતા પરમાત્મા છે. તેનો અભિલાષી પ્રત્યેક સંસારી જીવ છે. આ અભિપ્રાયને હૃદયમાં રાખીને સૂત્રકાર કહે છે કે—“ભૂતેષુ જાનીહિ પ્રત્યુપેક્ષ્ય સાતમ્” હે ભવ્ય ! પ્રત્યેક જીવમાં વ્યક્ત અને અવ્યક્ત રૂપથી શાંતારૂપ જે સુખ છે, તેનો અભિલાષા છુપાયેલી છે, તે

છુપી હુઈ હૈ, ઇસ વાત કા તું અપની સૂક્ષ્મ બુદ્ધિ સે વિચાર કર। ઇસ સૂત્ર કૈ અવતરણ મૈં જો સાતવેદનીયજન્ય સુખ કૈ અમિલાષી પ્રત્યેક જીવ કો બતલાયા ગયા હૈ વહ ઇસી નિરાકુલતારૂપ સુખ કા પરમ્પરાકારણ હોને સે હી પ્રકટ કિયા ગયા હૈ। ક્યોંકિ યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ જો સાતવેદનીય કર્મ કૈ ઉદય સે સાંસારિક વૈભવજન્ય સુખ પ્રાપ્ત હોગા વહ ક્ષણિક-વિનશ્વર હોગા, તથા ઉસકા ઉદય દુઃખોં સે અન્તરિમ-છુપા હુવા હોગા। ઇસલિયે ઇસે સુખ સે આત્મા સાક્ષાત્ નિરાકુલતારૂપ પરિણતિ કા સદા ભોક્તા નહીં બન સકતા। હાં! સાંસારિક સુખ કી સામગ્રી યદિ જીવોં કૈ પાસ હૈ, ઓર યદિ ઉનકૈ ચિત્ત મૈં હેયોપાદેય કા વિવેક જાગૃત હૈ તો વે ઉસકૈ દ્વારા કુછ અંશોં મૈં સાંસારિક કાર્યોં સે નિરાકુલ બનકર શુભ ધાર્મિક ક્રિયાઓં કા આરાધન ભલીભાંતિ કર સકતે હૈં। ઇસ અવસ્થા મૈં ઉનકૈ શુભભાવોં કી ક્રમશઃ જાગૃતિ હોતી હૈ, ઓર વહ ઉન્હેં પરમ્પરારૂપ સે આત્મકલ્યાણકારી માર્ગ કા અધિકારી બના દેતી હૈ। જો ભવાભિનંદી હૈ અથવા જિસ કિસી પ્રકાર સે અપના સ્વાર્થ સાધન કરને મૈં હી મસ્ત હૈ, ‘અપને સુખ મૈં હી સબકા સુખ સમાયા હુઆ હૈ’—જો ઇસ દુર્ભાવના કા વશવર્તી હૈ, “સાતવેદનીય કૈ ઉદય સે જિસ પ્રકાર

વાતનો તું તારી પોતાની સૂક્ષ્મ બુદ્ધિથી વિચાર કર. આ સૂત્રના અવતરણમાં જે સાતવેદનીયજન્ય સુખના અમિલાષી પ્રત્યેક જીવને બતાવવામાં આવ્યા છે, તે આ નિરાકુલતારૂપ સુખના પરંપરાકારણ હોવાથી પ્રકટ કર્યા છે, કારણ કે એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે—જે સાતવેદનીય કર્મના ઉદયથી સાંસારિક વૈભવજન્ય સુખ પ્રાપ્ત થશે તે ક્ષણિક વિનશ્વર હશે, અને તેનો ઉદય દુઃખોથી અન્તરિમ-છુપાયેલો હશે માટે એવા સુખથી આત્મા સાક્ષાત્ નિરાકુલતારૂપ પરિણતિનો સદા ભોક્તા બની શકતો નથી. હાં, સાંસારિક સુખની સામગ્રી કદાચ જીવોની પાસે છે, અને કદાચ તેના ચિત્તમાં હેયોપાદેયનો વિવેક જાગૃત છે તો તે તેના દ્વારા થોડા અંશોમાં સાંસારિક કાર્યોથી નિરાકુળ બનીને શુભ ધાર્મિક ક્રિયાઓનું આરાધન ભલીભાંતિ કરી શકે છે. આ અવસ્થામાં તેના શુભ ભાવોની ક્રમશઃ જાગૃતિ થાય છે, અને તે તેને પરંપરાથી આત્મકલ્યાણકારી માર્ગનો અધિકારી બનાવી દે છે. જે ભવાભિનંદી છે અથવા જેકોઈ પ્રકારથી પોતાનો સ્વાર્થ સાધવામાં જ મસ્ત છે ‘પોતાના સુખમાં જ બધાના સુખ સમાયેલા છે’ જે આવી દુર્ભાવનાને વશવર્તી છે, “સાતવેદનીયના ઉદયથી જેવા પ્રકારે

સમિતઃ=પઞ્ચસમિતિભિઃ સમિતઃ સન્ એતદનુદર્શી=એતત્સુખં દુઃખં વા વક્ષ્ય-
માણં વાઽન્ધત્વાદિકં દ્રષ્ટું=વિલોકિતું શીલં યસ્ય સ એતદનુદર્શી=પ્રાણિશુભાશુભાવ-
લોકી ત્વં જાતિકુલાદિમદજનિતકદુર્કર્મવિપાકમન્ધત્વાદિકં જ્ઞાત્વા ભૂતેષુ સાતં
જાનીહિ, ઇતિ સમ્બન્ધઃ । તદેવ દર્શયતિ—‘તદ્યથે’—ત્યાદિના ।

હમ સાંસારિક વૈભવ કે ભોક્તા બને છે, વૈભવે હી દીન દુઃખી જીવ અ-
સાતાવેદનીય કે ઉદય સે દુઃખ દરિદ્રાવસ્થા કે ભોક્તા બને છે, ફિર હમે
इनके दुःख को दूर करने की और इन्हें सुख पहुंचाने की क्या आवश्यक-
कता है? क्योंकि हम किसी के कर्मोदय को तो मेट सकते नहीं हैं।” इत्यादि
दुर्भावनाओं से जिनका अन्तःकरण दूषित है—वे ‘प्रत्येक संसारी जीव
सुखाभिलाषी है’ इस बात को नहीं समझ सकते । इसे समझने के
लिये सूक्ष्म-सद्ज्ञानरूपी बुद्धि, एवं संयम जीवन की आवश्यकता है ।
इसीका खुलासा करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—‘समिप एयाणुपस्सी
समिपः एतदनुदर्शी’ । जो समितियों के पालन करने में सावधान है,
जिसकी चित्तवृत्ति जीवों को दुःखित देखकर द्रवित हो जाती है, जो
जीवों की रक्षा करने में सदा सावधान रहते हैं, जिनकी प्रत्येक क्रिया
यतनापूर्वक होती है, ऐसे समितिपालक संयमी मुनि ही ‘एतदनुदर्शी’
इस बात का अनुभव कर सकते हैं । पांच समितियों के आराधन करने
का उद्देश्य जीवों की एकमात्र रक्षा करना है, इसमें स्व और पर दोनों
की रक्षा आजाती है । ईर्यासमिति में लवलीन साधु—झूसराप्रमाण दृष्टि से

અમે સાંસારિક વૈભવનાં ભોક્તા બન્યા છીએ તેવી જ રીતે એ દીન દુઃખી જીવ અસા-
તાવેદનીયના ઉદયથી દુઃખ દરિદ્રાવસ્થાના ભોક્તા બન્યા છે. પછી અમને તેના દુઃખોને
દૂર કરવાની અને તેમને સુખ પહોંચાડવાની શું આવશ્યકતા છે? કારણ કે અમે
કોઈના કર્મોદયને મિટાવી શકતા નથી ” ઇત્યાદિ દુર્ભાવનાઓથી જેનું અંતઃકરણ
દૂષિત છે તે “ પ્રત્યેક સંસારી જીવ સુખાભિલાષી છે ” એ વાતને સમજી શકતા
નથી. તેને સમજવાને માટે સૂક્ષ્મ સદ્જ્ઞાનરૂપી બુદ્ધિ અને સંયમ જીવનની આવ-
શ્યકતા છે, તેનો ખુલાસો કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—‘ સમિપ યયાણુપસ્સી ’ સમિત-
પતદનુદર્શી, જે સમિતિઓના પાલન કરવામાં સાવધાન છે, જેની ચિત્તવૃત્તિ જીવોની
રક્ષા કરવામાં સદા સાવધાન રહે છે, જેની પ્રત્યેક ક્રિયા યતનાપૂર્વક થાય છે, એવા
સમિતિપાળક સંયમી મુનિ જ ‘એતદનુદર્શી’ એ વાતનો અનુભવ કરી શકે છે.
પાંચ સમિતિઓનું આરાધન કરવાનો ઉદ્દેશ્ય જીવોની એક માત્ર રક્ષા કરવાની છે.
તેમાં સ્વ અને પર બન્નેની રક્ષા આવી જાય છે. ઈર્યાસમિતિમાં લવલીન સાધુ

માર્ગ કો દેવકર ચલતા હુવા મુનિ સદા હસ વાત કા પક્ષા ધ્યાન રવતા હૈ કિ કહીં કોઈ છોટા મોટા જીવ મેરે પૈર કે નીચે આકર પ્રાણોં સે વીયુક્ત ન હો જાય । હસમેં પર કે પ્રાણોં કા રક્ષણ કે સાથ ૨ અપને અહિંસારૂપ મહાવ્રત કા સંરક્ષણ અચ્છી તરહ સે હોતા રહતા હૈ । ૧ । ભાષાસમિતિ મેં પ્રવૃત્ત સાધુ સદા હિત-મિત-વચન બોલેગા, દૂસરે જીવોં કો જિસ વચન સે કષ્ટ પૈદા હો, હસ પ્રકાર કે સાવધ વ કઠોર વચન નહીં બોલતા હૈ । હસ સમિતિ સે સત્ય મહાવ્રત કી રક્ષા હોતી હૈ । ૨ । ઇષણાસમિતિ મેં પ્રવૃત્ત સંયમી મુનિ સિર્ફ સંયમ યાત્રા કા નિર્વાહ કે લિયે ભ્રમરભિક્ષા દ્વારા શુદ્ધ-નિર્દોષ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરતા હૈ । ૩ । આદાનનિક્ષેપણ-સમિતિ મેં મુનિ અપને સંયમ કે ઉપકરણોં કી ઉભય-દોનોં કાલ પ્રતિલેખના કર ઉનકે લેને ઓર રવને મેં યતના કરતા હૈ । ૪ । પ્રતિષ્ઠાપના-સમિતિ મેં મુનિ જીવરહિત સ્થાન મેં મલ-મૂત્રાદિક પરિઠવતા હૈ । ૫ । હન સમિતિયોં મેં પ્રવૃત્તિ કરને વાલે સંયમી મુનિ ‘ સવ હી જીવ સુખ વાહતે હૈ ’ ઇસા અનુભવ કરતે હૈ । જો વર્તમાન મેં સત્તારૂપ સે રહતે હૈ, ભવિષ્યત્ કાલ મેં ભી જો સત્તારૂપ સે રહેંગે, ઇવં ભૂતકાલ મેં જો સત્તારૂપ સે રહે હૈ વે ભૂત હૈ । સૂત્રકાર ને જીવ પ્રાણી આદિ શબ્દોં કા પ્રયોગ ન કર ઉસકી ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે “ ભૂત ”

જુસરાપ્રમાણ દૃષ્ટિથી માર્ગને દેખીને ચાલતાં સદા આ વાતનો ખ્યાલ રાખે છે કે-કોઈ નાના મોટા જીવ મારા પગ નીચે આવી પ્રાણીથી વિમુક્ત ન થઈ જાય. તેમાં બીજાના પ્રાણોના રક્ષણની સાથે સાથે પોતાના અહિંસાપ્રમહાવ્રતનું સંરક્ષણ સારી રીતે થાય છે (૧). ભાષાસમિતિમાં પ્રવૃત્ત સાધુ સદા હિત-મિત વચન બોલશે, બીજા જીવોને જે વચનથી કષ્ટ પેદા થાય તે પ્રકારના સાવધ કઠોર વચન બોલતા નથી, આ સમિતિથી સત્યમહાવ્રતની રક્ષા થાય છે (૨). ઇષણાસમિતિમાં પ્રવૃત્ત સંયમી મુનિ ફક્ત સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે ભ્રમર-ભિક્ષા દ્વારા શુદ્ધ નિર્દોષ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરે છે (૩). આદાનનિક્ષેપણ સમિતિમાં મુનિ પોતાના સંયમના ઉપકરણોની ઉભય-બંને કાળ પ્રતિલેખના કરી તેના લેવામાં અને રાખવામાં યતના કરે (૪). પ્રતિષ્ઠાપનાસમિતિમાં મુનિ જીવરહિત સ્થાનમાં મળ મૂત્રાદિક પરિઠવે (૫). આ સમિતિઓમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા સંયમી મુનિ ‘ બધા જીવો સુખ ચાહે છે ’ એવો અનુભવ કરે છે. જે વર્તમાનમાં સત્તા રૂપથી રહે છે, ભવિષ્ય કાળમાં પણ જે સત્તારૂપથી રહેશે અને ભૂતકાળમાં જે સત્તા રૂપથી રહેલા છે તે ભૂત છે. સૂત્રકારે જીવ પ્રાણી આદિ શબ્દોના પ્રયોગ ન કરી તેની ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરવા માટે “ ભૂત ” એ શબ્દનો સૂત્રમાં પ્રયોગ

સોપક્રમાયુર્નામ અપ્રાપ્તકાલસ્યાયુષો નિર્જરણમ્ । તદ્વિન્નં નિરુપક્રમાયુઃ । યદા જીવઃ સ્વાયુષસ્તૃતીયભાગે તૃતીયભાગતૃતીયભાગે વા જઘન્યત એકેન દ્વાભ્યાં વોત્કૃષ્ટતઃ સપ્તભિરષ્ટભિર્વાઽઽકર્ષૈરથવાઽન્તર્મુદૂર્તપ્રમાણસ્વરુપેઽન્તકાલે સ્વાત્મપ્રદેશનાડિકાન્ત-વર્તિન આયુષ્કર્મવર્ગણાપુદ્ગલપ્રયત્નવિશેષેણાયુષ્કતયા રચયતિ તદા નિરુપક્રમાયુ-ર્ભવતિ, તદ્વિન્નં સોપક્રમાયુઃ । આકર્ષશ્ચ તથાવિધેન પ્રયત્નેન કર્મપુદ્ગલોપાદાનમ્ ।
નનુ કથમેકેન દ્વાભ્યાં ત્રિભિઃ સપ્તભિરષ્ટભિર્વાઽઽકર્ષૈરાયુર્વધ્નાતીતિ ચેદાહ—

હે ભદન્ત ! જીવ સોપક્રમ-આયુવાલે હોતે હૈં યા નિરુપક્રમ-આયુવાલે ?
હે ગૌતમ ! જીવ દોનોં પ્રકાર કે આયુવાલે હોતે હૈં સોપક્રમઆયુવાલે
મી હોતે હૈં ઓર નિરુપક્રમઆયુવાલે મી ।

જીવકો જિતના અપને ભવકે આયુકા બંધ હુઆ હૈં ઉતને કા ઉદયા-નુસાર ભોગ હુએ વિના હી કિસી નિમિત્ત કે વશ પહિલે હી ક્ષય હોનેકા નામ સોપક્રમ આયુ હૈં । ઇસસે વિપરીત નિરુપક્રમ આયુ હૈં ।

જિસ સમય જીવ અપની આયુ કે તૃતીય ભાગમેં અથવા તૃતીય ભાગ કે મી તૃતીય ભાગમેં કમસે કમ એક યા દો આકર્ષોં સે જ્યાદા સે જ્યાદા સાત યા આઠ આકર્ષોંસે અથવા અન્તસમય કે અન્તર્મુદૂર્ત-પ્રમાણ-કાલમેં અપની આત્માકે પ્રદેશોં કી નાડિકા કે મીતર રહે હુએ આયુકર્મકી વર્ગણા કે પુદ્ગલસ્કન્ધોંકો પ્રયત્નવિશેષ સે આયુપને પરિણમાતા હૈં ઉસ સમય નિરુપક્રમ આયુ કા બન્ધ હોતા હૈં । ઇસસે વિપરીત સોપક્રમ આયુ કા બન્ધ હોના હૈં । ઉસ પ્રકાર કે પ્રયત્ન સે કર્મપુદ્ગલોં કા ગ્રહણ કરના આકર્ષ હૈં ।

હે ભદન્ત ! જીવ સોપક્રમ આયુવાળાં હોય છે કે નિરુપક્રમ આયુવાળાં ?
હે ગૌતમ ! જીવ બન્ને પ્રકારની આયુવાળા થાય છે. સોપક્રમ આયુવાળાં પણ થાય છે અને નિરુપક્રમ આયુવાળાં પણ થાય છે.

જીવને જેટલો પોતાના ભવની આયુનો બંધ થયો છે તેટલાનો ઉદયાનુસાર ભોગ થયા વગર કોઈ નિમિત્તથી પહેલાં જ ક્ષય હોવાનું નામ સોપક્રમ આયુ છે, તેનાથી વિપરીત નિરુપક્રમ આયુ છે. જે વખતે જીવ પોતાની આયુના તૃતીય ભાગમાં અથવા તૃતીય ભાગના પણ તૃતીય ભાગમાં ચોથામાં ચોથાં એક અગર બે આકર્ષોંથી વધારેમા વધારે સાત અગર આઠ આકર્ષોંથી અથવા અન્ત સમયના અન્તર્મુદૂર્ત પ્રમાણ કાળમા પોતાના આત્માના પ્રદેશોની નાડિની અંદર રહેલા આયુકર્મની વર્ગણાના પુદ્ગલસ્કન્ધોને પ્રયત્નવિશેષથી આયુપણે પરિણમે છે, તે સમય નિરુપક્રમ આયુનો બંધ કરે છે. તેનાથી વિપરીત સોપક્રમ આયુ બાંધે છે. આ પ્રકારના પ્રયત્નથી કર્મપુદ્ગલોનું ગ્રહણ કરવું આકર્ષ છે.

અન્ધત્વમ્=ઉપહતનેત્રત્વં દ્રવ્યતો ભાવતોઽપિ ભવતિ, તથૈકેન્દ્રિય-દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિયા દ્રવ્યમાવાન્ધાઃ । ચતુરિન્દ્રિયો મિથ્યાદૃષ્ટિપઞ્ચેન્દ્રિયથૌભૌ માવાન્ધૌ, દ્રવ્યભાવભેદ-મિન્નમન્ધત્વં નિયમતો દુઃસ્વજનકં ભવતિ । એવં વધિરત્વં=કર્ણપાટવં, દ્રવ્યતો વધિરઃ શ્રવણશક્તિરહિતઃ, ભાવવધિરો જિનવચનશ્રવણવિકલઃ । મૂકત્વં=વચનવિકલત્વં દ્રવ્યતઃ, ભાવતો મૂકો મિથ્યાત્વાદ્યમિનિવેશેન સ્વદોષાપદ્ધવાય જિનવચનાપ્રતિપાદકઃ ।

इस शब्द का सूत्र में प्रयोग किया है । उपयोगलक्षणवाला जीव तीनों काल में भी सत्ता से रहित नहीं होता है, इसलिये प्राणी की त्रैकालिक सत्ता प्रतिपादन करने के लिये सूत्रकारने इस सूत्र में “भूत” शब्द का प्रयोग किया है । अतः जब संसार का प्रत्येक प्राणी सुखाभिलाषी है, तब उसके साथ अत्याचार-अनर्थ कर उन्हें दुःखित करनेवाला प्राणी स्वयं अपने को दुःखित करने की चेष्टा करता है । जाति और कुलादिक के अभिमान से उन्मत्त बनकर जो दूसरों को हीन समझता है, तथा ‘तू अंधा है, तू बहिरा है, तू मूगा है’ इत्यादि प्रकार के कर्कश शब्दों द्वारा जो दूसरों का तिरस्कार करता है वह अपनी कषायपरिणति से आत्मा को मलिन करता हुआ तदुपार्जित कर्म के कटुक विपाक को अवश्य भोगता है । इसी बात का दिग्दर्शन कराते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—“अन्धत्वं मूकत्वं” इत्यादि । देखने की शक्ति की अभिव्यक्ति से रहित होना इसका नाम अन्धत्व है, यह अंधापना द्रव्य और भाव के भेद से २ प्रकारका है । एकेन्द्रिय, जीव दोन्द्रिय जीव और तीनन्द्रिय जीवों में दोनों प्रकार से अंधता है । पौद्गलिक द्रव्यइन्द्रियरूप चक्षु-इन्द्रिय की विकलता द्रव्य-अन्धता है,

કરેલ છે. ઉપયોગ લક્ષણવાળા જીવ ત્રણે કાળમાં પણ સત્તાથી રહિત થતા નથી, માટે પ્રાણીની ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં ભૂત શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે માટે જ્યારે સંસારના દરેક પ્રાણી સુખાભિલાષી છે ત્યારે તેની સાથે અત્યાચાર-અનર્થ કરી તેને દુઃખ દેવાવાળા પ્રાણી સ્વયં પોતાની જાતને જ દુઃખિત કરવાની ચેષ્ટા કરે છે. જાતિ અને કુળાદિકના અભિમાનથી ઉન્મત્ત બનીને જે બીજાને હીન સમજે છે, અને ‘તું આધળો છે, તું બહિરો છે, તું મુંગો છે’ ઇત્યાદિ પ્રકારનાં કર્કશ શબ્દો દ્વારા જે બીજાનો તિરસ્કાર કરે છે તે પોતાની કષાય પરિણતિથી આત્માને મલિન કરે છે. તદુપાર્જિત કર્મના કટુક વિપાકને અવશ્ય ભોગવે છે. આ વાતનો દિગ્દર્શન કરાવતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—“અન્ધત્વ મૂકત્વં” ઇત્યાદિ. દેખવાની શક્તિની અભિવ્યક્તિથી રહિત થવું તેનું નામ અંધત્વ છે. તે અંધાપણું દ્રવ્ય અને ભાવના ઇથી બે પ્રકાર છે. એકેન્દ્રિય જીવ, બેન્દ્રિય જીવ અને ત્રણે ઇન્દ્રિય જીવોમાં પ્રકારથી અંધતા છે. પૌદ્ગલિક દ્રવ્ય-ઇન્દ્રિયરૂપ ચક્ષુ-ઇન્દ્રિયની વિકલતા

કિઞ્ચ-કાણત્વમ્=एकाक्षत्वं દ્રવ્યતઃ, ભાવતઃ કાણત્વં-निश्चयव्यवहारयोर्ज्ञान-
ક્રિયયોर्वैकपक्षग्राहित्वम् । કુણ્ટત્વં=कुटिलहस्तत्वादિકं દ્રવ્યતઃ, ભાવતઃ કુણ્ટત્વં
પ્રતિલેખનાદિક્રિયારાધને વક્રત્વમ્ । કુબ્જત્વં=वक्रशरीरत्वं દ્રવ્યતઃ, ભાવતઃ કુટિલ-
ક્રિયત્વમ્ । વડભત્વં=वक्रपृष्ठत्वादિકं દ્રવ્યતઃ, ભાવતઃ પરમર્મપ્રકાશકત્વમ્ । શ્યામ-
ત્વં=कालिमा દ્રવ્યતઃ, ભાવતો મલિનાચારત્ત્વમ્, શબલત્વમ્=श्वेतकुण्ठत्वादિકं દ્રવ્યતઃ,
ભાવતઃ શબલદોષવત્ત્વમ્ । અગ્રાન્ધત્વાદિકમુપલક્ષણં પદ્મત્વાદેર્વોધ્યમ્ ।

और भावइन्द्रिय की विकलता भाव-अन्धता है। चतुरिन्द्रिय और मिथ्या-
दृष्टि पंचेन्द्रिय जीव भावान्ध हैं, क्योंकि बाह्य में द्रव्येन्द्रियरूप चक्षुरिन्द्रिय
होने पर भी ये पदार्थ के यथार्थ स्वरूपावलोकन से रहित होते हैं। दोनों
प्रकार से अन्धता होनी, यह प्राणी के लिये नियम से दुःखोत्पादक होती
है। इसी प्रकार बधिरत्व, मूकत्व, काणत्व आदि भी द्रव्य और भाव के
भेद से दो दो प्रकार के होते हैं। उनमें अपने विषय को ग्रहण करने की
शक्ति से श्रवणेन्द्रिय की विकलता का नाम बधिरता है। सुनने की
शक्ति से रहित होना यह द्रव्य-बधिरता, और जिनेन्द्र वचनों को सुनने
में अप्रेम तथा अनादर भाव का होना, या उनके वचनों को श्रवण करने
की विकलता होनी यह भाव-बधिरता है। वचन बोलने की शक्ति की
अभिव्यक्ति से रहित होना इसका नाम मूकत्व है। प्राकृत-संस्कृतादिरूप
अपनी २ मातृभाषा में बोलने की हीनता का नाम द्रव्य-मूकता, एवं
मिथ्यात्वादिक के अभिनिवेश के वश से अपने दोषों को छुपाने के लिये

द्रव्यઅંધતા છે. અને ભાવ-ઈન્દ્રિયની વિકલતા ભાવઅંધતા છે. ચાર ઇન્દ્રિય-
વાળા અને મિથ્યાદૃષ્ટિ પંચેન્દ્રિય જીવ ભાવાન્ધ છે, કારણ કે બાહ્યમાં દ્રવ્યેન્દ્રિય
રૂપ ચક્ષુરિન્દ્રિય થવાથી પણ તે પદાર્થનું 'યથાર્થ' સ્વરૂપાવલોકનથી રહિત હોય છે.
બન્ને પ્રકારથી અંધતા થવી તે પ્રાણી માટે નિયમથી દુઃખોત્પાદક થાય છે. આ
પ્રકાર બહેરાપણું, મુંગાપણું, આંધલાપણું આદિ પણ દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે
પ્રકારે હોય છે. તેમાં પોતાના વિષયને ગ્રહણ કરવાની શક્તિથી શ્રવણેન્દ્રિયની
વિકલતાનું નામ બધિરતા છે. સાંભળવાની શક્તિથી રહિત થવું તે દ્રવ્ય-બહેરા-
પણું, અને જીનેન્દ્રવચનો સાંભળવામાં અપ્રેમ અને અનાદર ભાવ હોવો, અગર
તેમના વચનો સાંભળવાની વિકલતા થવી તે ભાવ-બધિરતા છે. વચન બોલવાની
શક્તિની અભિવ્યક્તિથી રહિત થવું તેનું નામ મૂકત્વ છે. પ્રાકૃતસંસ્કૃતાદિરૂપ
પોતપોતાની માતૃભાષામાં બોલવાની હીનતાનું નામ દ્રવ્યમૂકતા, અને મિથ્યાત્વાદિકના
અભિનિવેશનાવશથી પોતાના દોષોને છુપાવા માટે જિનવચનોનું પ્રતિપાદન નહિ

જિનવચનોં કા પ્રતિપાદન નહીં કરના ઇસકા નામ ભાવ-મૂકત્વ હૈ ।
 એક આંચ કા હોના યહ દ્રવ્ય સે કાળત્વ હૈ, ઓર નિશ્ચય એવં વ્યવહાર
 નય મેં સે, અથવા જ્ઞાન ઓર ચારિત્ર મેં સે કિસી એક કા એકાન્તરૂપ સે
 પક્ષ ગ્રહણ કરના ભાવ સે કાળત્વ હૈ । હાથ પાંચ આદિ અંગ ઉપાંગોં કી
 વક્રતા દ્રવ્ય-કુંદત્વ, ઓર પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓં કે કરને મેં અનાદર યા
 છલ-કપટ કરના યહ ભાવ-કુંદત્વ હૈ । સામાન્યતયા શરીર કા ટેઢાપન
 અથવા શરીર મેં કૂબડ વગૈરહ કા નિકલના યહ દ્રવ્ય સે કુબ્જત્વ હૈ ।
 કુટિલક્રિયાપને કા નામ ભાવ સે કુબ્જત્વ હૈ । પૃષ્ઠ ભાગ વગૈરહ કા વક્ર
 હોના યહ દ્રવ્ય સે વડભત્વ હૈ, દૂસરોં કે ગુપ્ત કાર્યોં એવં અનેક રહસ્યોં કા
 પ્રકાશન કરના યહ ભાવ સે વડભત્વ હૈ । શરીર મેં કૃષ્ણતા કા હોના યહ
 દ્રવ્ય સે શ્યામતા-મલિનતા, તથા હીન આચરણી હોના યહ ભાવ સે શ્યા-
 મતા હૈ । શરીર મેં સફેદ કુષ્ઠ વગૈરહ કા હોના દ્રવ્ય સે શબલતા, તથા
 દોષવિશિષ્ટતા ભાવ સે શબલત્વ હૈ । સૂત્ર મેં અન્ધત્વાદિ પદ ઉપલક્ષણ
 રૂપ હૈ, ઇસસે પડ્ગુપને આદિ કા ભી ગ્રહણ કર લેના ચાહિયે । ઇન સબ
 વાતોં કો દિશ્વાને કા અભિપ્રાય યહી હૈ કિ પ્રાણી કિસી ભી મદ કે
 આવેશ મેં આકર દૂસરોં કે પ્રતિ એસે કષાયવિશિષ્ટ બનકર અપશબ્દોં
 યા દૂસરોં કે મર્મસ્થળ કો ભેદને વાલે કઠોર શબ્દોં કા પ્રયોગ ન કરે ।

કરવું તેનું નામ ભાવમૂકત્વ છે. એક આખનું હોવું તે દ્રવ્યથી કાણુત્વ છે, અને
 નિશ્ચય અને વ્યવહાર નયમાંથી અથવા જ્ઞાન અને ચારિત્રમાંથી કોઈ એકનું એકા-
 ન્તરૂપે પક્ષ ગ્રહણ કરવો તે ભાવથી કાણુત્વ છે. હાથ-પગ આદિ અંગ ઉપાંગોની
 વક્રતા દ્રવ્યકુંદત્વ અને પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓ કરવામાં અનાદર અગર છલકપટ
 કરવું એ ભાવકુંદત્વ છે. સામાન્ય રીતે શરીરનું વાકાપણું અને શરીરમાં કોઠ
 વિગેરેનું નિકળવું તે દ્રવ્યથી કુબ્જત્વ છે. કુટિલક્રિયાપણાનું નામ ભાવથી
 કુબ્જત્વ છે. પૃષ્ઠભાગ વિગેરેનું વક્ર થવું તે દ્રવ્યથી વડભત્વ છે. બીજાના ગુપ્ત
 કાર્યો અને અનેક રહસ્યોનું પ્રકાશન કરવું તે ભાવથી વડભત્વ છે. શરીરમાં
 કાળાશ થવી તે દ્રવ્યથી શ્યામતા-મલિનતા, અને હીન આચરણી થવું તે ભાવથી
 શ્યામતા છે. શરીરમાં સફેદ કોઠ નીકળવો તે દ્રવ્યથી શબલતા અને શબલ
 દોષવિશિષ્ટતા ભાવથી શબલતા છે. સૂત્રમાં અન્ધત્વાદિ પદ ઉપલક્ષણરૂપ છે.
 તેથી લંગકાપણું આદિનું પણ ગ્રહણ કરી લેવું જોઈએ. આ બધી વાતને દેખા-
 ડવાનો અભિપ્રાય એ છે કે-પ્રાણી કોઈ પણ મદના આવેશમાં આવીને બીજાઓના
 પ્રતિ એવા કષાયવિશિષ્ટ બની અપશબ્દોનો અગર બીજાના મર્મસ્થળને લેહવા-

दुःखं च कोऽपि नेच्छति परन्तु कर्मवशात्प्रायशः सर्वेऽपि सावद्यक्रियावन्तो नितान्तदुःखिता भवन्तीति भावः ।

अपिच-‘सहे’ति, प्रमादेन=अनवधानेन सह=सार्द्धं समितिर्विकलोऽनवधानवान् अनेकरूपाः=संवृत-विवृत-रूपा योनीः सन्दधाति=सन्धत्ते, चतुरशीतिलक्षयोनि-सम्बन्धाविच्छेदेनात्मना सह संघट्टनं करोति । तासु च योनिषु विरूपरूपान्=बहु-विधान् स्पर्शान्=दुःखानि परिसंवेदयते=जानाति, नानाविधयोनिषूत्पन्नो जीवो बहुविधां नरकनिगोदादियातनां समनुभूय नितान्तं खिन्नो भवतीति तात्पर्यम् ।

क्यों कि इस प्रकार के वचनों से एक तो बोलनेवालों के लिए भाव-हिंसा का दोष लगता है और दूसरों के चित्त में शोक आदिका उत्पादक होने से द्रव्यहिंसा का भी दोष आता है । इस हिंसा से अनेक अशुभ कर्मों का बंध होता है । आत्मप्रशंसा एवं परकी निंदा करना, तथा अपने दुर्गुणों को सद्गुण का रूप देकर गर्वोन्मत्त बन उन्हें प्रकाशित करना, और दूसरों के सद्गुणों में भी दूषण लगाना या उन्हें दुर्गुणरूप में प्रकट करना इससे नीच गोत्र का बन्ध होना है, इससे जीव अनेक कुयोनियों में जन्म धारण कर हीनआचरणी आदि होता है । किसी धर्मात्मा के ज्ञान एवं दर्शन के विषय में प्रशंसा का नहीं सुहाना, किसी कारण से अपने ज्ञान का छुपाना, सात्त्विक भाव का रखना, किसी के ज्ञान अथवा दर्शन में विघ्न करना, इनसे ज्ञानावरण, तथा दर्शनावरण कर्म का जीव बंध करता है । इसका फल जीवों के ज्ञान एवं दर्शन गुणों का घात होना है ।

वाणा उठोर शब्दोनो प्रयोग न करे, कारण के आ प्रकारे वचनोथी ओक तो ओदवावाणाने लावडिसानो दोष लागे छे, अने भीजना चित्तमां शोक आदिना उत्पादक थवार्थी द्रव्यडिसानो पण दोष लागे छे. आ डिसाथी अनेक अशुभ कर्मोना बंध थाय छे. आत्मप्रशंसा अने पारकानी निंदा करवी अने पोताना दुर्गुणोने सद्गुणुं इप आपीने गर्वोन्मत्त अनी तेने प्रकाशित करवुं, अने भीजना सद्गुणोमां पण दूषण लगाउवुं अगर तेने दुर्गुण इपमां प्रगट करवुं तेनार्थी नीच गोत्रनो बंध थाय छे, तेनार्थी ओव अनेक कुयोनियोमां जन्म धारण करी हीनाचरणी आदि थाय छे. कोथ धर्मात्मानां ज्ञान अने दर्शन विषयमां थती प्रशंसाने सडन नडि करवी, कोथ कारणथी पोताना ज्ञानने छुपाववुं, सात्त्विक भाव राखवो, कोथना ज्ञान अने दर्शनमां विघ्न करवुं, तेनार्थी ओव ज्ञानावरण, अने दर्शनावरण कर्मनो बंध करे छे. तेनुंइण ओवोने ज्ञान अने दर्शन गुणोनां

નિજ ઔર પર કે વિષય મેં દુઃખ, શોક આદિ કરને કરાને સે અસાત-વેદનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ જીવકો કમી મી સાતા નહીં મિલના હૈ । સંસાર કે સમસ્ત પ્રાણી ઔર વ્રતી-અણુવ્રતી યા મહા-વ્રતી જીવોં કી સેવા કરના, નિજ ઔર પર કે ઉપકાર કે લિયે યોગ્ય વસ્તુ કા દાન દેના, સરાગસંયમ કા પાલન કરના, ક્રોધાદિકષાયોં કી શાન્તિ હોની ઔર લોભ કા ત્યાગ કરના આદિ કાર્યોં સે જીવ કે સાત વેદનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ । સેકી વજહ સે જીવોં કો સદા સુખકારી વસ્તુઓં કા સમાગમરૂપ સાંસારિક સુખોં કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । કેવલી કા અવર્ણવાદ, શ્રુતકા અવર્ણવાદ, તથા સંઘ આદિ કા અવર્ણવાદ કરના, સેસે દર્શનમોહનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ સમકિત ગુણ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હોતી । કષાય કે ઉદય સે પરિણામોં મેં તીવ્રતા રહના, સેસે ચારિત્ર મોહનીય કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ જીવ કમી મી ચારિત્ર ધર્મ કો અંગીકાર નહીં કર સકતા । યોગોં કી કુટિલતા કા હોના તથા શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ સે અન્યથા પ્રવૃત્તિ કરના, સેસે અશુભ નામ કર્મ કા બંધ હોતા હૈ । સેસે જીવ ઈન્દ્રિયાદિ અનેક કુયોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કરતા હૈ । કમી ચક્ષુવિકલ હોતા હૈ, કમી

આઘાતરૂપ થાય છે. બીજના અને પોતાના વિષયમા હુ.બ શોકાદિ કરવા-કરાવવાથી અસાતવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે. જેનાથી જીવને કોઈ વખત પણ સાતા મળતી નથી. સંસારના સમસ્ત પ્રાણી અને વ્રતી-અણુવ્રતી કે મહાવ્રતી જીવોની સેવા કરવી, પોતાના અને પારકાના ઉપકાર માટે યોગ્ય વસ્તુનું દાન દેવું, સરાગસંયમનું પાલન કરવું, ક્રોધાદિ કષાયોની શાંતિ થવી, અને લોભનો ત્યાગ કરવો આદિ કાર્યોથી જીવને સાતાવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે, તેનાથી જીવને સદા સુખકારી વસ્તુઓના સમાગમરૂપ સાંસારિક સુખોની પ્રાપ્તિ થાય છે. કેવળીનો અવર્ણવાદ, શ્રુતનો અવર્ણવાદ, અને સંઘ આદિનો અવર્ણવાદ કરવો, એનાથી દર્શનમોહનીય કર્મનો બંધ થાય છે જેનાથી સમકિત ગુણની પ્રાપ્તિ જીવને થતી નથી. કષાયના ઉદયથી પરિણામોમાં તીવ્રતા રહેવી, તેનાથી ચારિત્ર-મોહનીયનો બંધ થાય છે જેનું ફળ જીવ કોઈ વખત પણ ચારિત્રધર્મને અંગીકાર કરી શકતો નથી

યોગોમા કુટિલતા હોવી, અને શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગથી અન્યથા પ્રવૃત્તિ કરવી તેનાથી અશુભ નામકર્મનો બંધ થાય છે, તેનાથી જીવ એક ઈન્દ્રિય આદિ અનેક કુયોનિયોમાં જન્મ ધારણ કરે છે. કોઈ વખત ચક્ષુવિકલ થાય છે,

મુંગા બનતા હૈ, કમી કુબ્જક ઓર કમી બહિરા હોતા હૈ । સૂત્ર મેં જો અન્ધત્વ, બધિરત્વ, મૂકત્વ, કાળત્વ આદિ અનેક શારીરિક દોષ પ્રકટ કિયે ગયે હૈં વે સબ ઇસી અશુભનામકર્મ કે ઉપાર્જન સે જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં । જિસ પ્રકાર ચિત્રકાર કિસી ચિત્ર કા કમી હાથ ટેડા બના દેતા હૈ, કમી ઇક આંખ બના દેતા હૈ, કમી ઉસે છોટા યા કમી બડા અપની ઇચ્છાનુસાર જિસે જૈસા બનાના યાહે બના દેતા હૈ, ઇસી પ્રકાર યહ નામકર્મ મી ઇસ જીવ કો કમી અન્ધા, કમી બહિરા આદિ બના દિયા કરતા હૈ । યોગોં કી વ્રતતા નહીં હોની, ઇવં વિસંવાદ-અન્યથા પ્રવૃત્તિકા અભાવ હોના, ઇસસે શુભનામકર્મ કા ઉપાર્જન હોતા હૈ, જિસ કા ફલ પ્રત્યેક અંગ કી પૂર્ણતા ઇવં સૌષ્ઠવ-સુન્દરતા આદિ કી પ્રાપ્તિ હોના હૈ । ઉત્તમ યોનિયોં મેં જન્મ તથા મુક્તિપ્રાપ્તિ લાયક વજ્રઋષભ-નારાચ સંહનનાદિ શુભ સંહનનોં કી ઇવમ્ સમચતુરસાદિ શુભ સંસ્થાનોં કી પ્રાપ્તિ જીવ કો ઇસી કે ઉદય સે હોતી હૈ । તીર્થકર જૈસી પ્રકૃતિ ઇસી શુભનામકર્મ કા ભેદ હૈ ।

યદ્યપિ પ્રતિ સમય આયુકર્મ કો છોડ શેષ સાત કર્મોં કા બન્ધ હુઆ કરતા હૈ તથાપિ પૂર્વોક્ત ઇન ભાવોં દ્વારા જો જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ ૨ કર્મોં કા બન્ધ હોના પ્રકટ કિયા હૈ સો સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગ-

વખતે મુંગા થાય છે, વળી કુબ્જ અને બહેરા પણ થાય છે. સૂત્રમાં જે અન્ધત્વ, બધિરત્વ, મૂકત્વ, કાળત્વ આદિ અનેક શારીરિક દોષ પ્રગટ કરેલાં છે તે બધા આ અશુભનામકર્મના ઉપાર્જનથી જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. જેમ ચિત્રકાર કોઈ ચિત્રમાં હાથ આડો બતાવે છે, એક આંખ બતાવે છે, કોઈ છોટું કોઈ મોટું પોતાની ઇચ્છાનુસાર જેને જેમ બનાવવા માગે તેમ બનાવે છે. તે પ્રકારે આ નામકર્મ પણ આ જીવને કોઈ વખત આંધળો, બહેરા આદિ બનાવે છે. યોગોની વ્રતતા ન થવી અને વિસંવાદ - અન્યથા પ્રવૃત્તિ-નો અભાવ થવો એથી શુભનામકર્મનું ઉપાર્જન થાય છે. જેનું જીવ પ્રત્યેક અંગની પૂર્ણતા અને સૌષ્ઠવ - સુંદરતા આદિની પ્રાપ્તિ થાય છે. ઉત્તમ યોનિયોમાં જન્મ અને મુક્તિપ્રાપ્તિલાયક વજ્રરૂપનારાચ સંહનનાદિ શુભ સંહનનોની અને સમચતુરસાદિ શુભ સંસ્થાનોની પ્રાપ્તિ જીવને આના ઉદયથી થાય છે. તીર્થકર જેવી પ્રકૃતિ તે શુભનામકર્મનો ભેદ છે.

હવે પ્રતિસમય આયુકર્મને છોડી સાત શેષ કર્મના બંધ થયા કરે છે, તથાપિ પૂર્વોક્ત આ ભાવોદ્વારા જે જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ વિશેષ કર્મોના બંધ થવા પ્રકટ કરેલ છે તે સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધની અપેક્ષા સમજવી જોઈએ,

બંધની અપેક્ષા સમજના ચાહિયે । અર્થાત્ તે સમય પ્રકૃતિ અને પ્રદેશબંધ તો સર્વ કર્મોનાં કારણ કરતાં છે, કિન્તુ સ્થિતિ અને અનુભાગબંધ જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ ૨ કર્મોનાં અધિક હોવા । અંધા હોના, બહિરા હોના, કાણા ઇત્યાદિ હોના, તથા ઇન્દ્રિયાદિકોની પૂર્ણતા હોના પરંતુ શારીરિક શાંતિના લાભ સે વચ્ચિત રહેના, દુઃખોત્પાદક સામગ્રીની પ્રાપ્તિ હોના, ઇષ્ટાનિષ્ટ સંયોગવિયોગજન્ય કષ્ટોનાં કોઈ પણ પ્રાણીને કોઈ પણ સાંસારિક પ્રાણીને નહીં ચાહતાં છે, પરંતુ કર્મોનાં કારણ દ્વારા પરતન્ત્ર થયેલાં પ્રત્યેક સાંસારિક જીવોનાં અપને ૨ યોગ એવમ્ કષાયોનાં દ્વારા ઉપાર્જિત કરેલાં કર્મોનાં ફળ અવશ્ય ૨ ભોગવવા પડતાં છે, ઇસમાં જીવની ઇચ્છા કામ નહીં કરતી । કર્મોથી બચવાનું જ પ્રાણી પ્રાયઃ સાવધ કરવામાં જ દત્તાવધાન રહ્યા કરતાં છે, ઇસનાં કારણ રાત્રિ દિન દુઃખીનાં દુઃખી જ રહ્યા કરતાં છે ।

પ્રશ્ન—કર્મોનાં ફળોનાં ભોગવવાને થયેલાં પણ આગળનાં કર્મોનાં કારણ બંધ નહીં હો એવા પણ કોઈ ઉપાય છે ? ઉત્તર—જાણે ।

પ્રશ્ન—ક્યાં છે ? ઉત્તર—સમતાભાવ । કર્મોનાં ફળોનાં અનુભવ કરવાનાં પ્રાણી ઇવં તેનાં ફળોનાં ભોગવવા સમયે હર્ષ વિષાદ એવમ્ આર્ત-

અર્થાત્ તે વખતે પ્રકૃતિ અને પ્રદેશબંધ તો બંધા કર્મોનાં તથા કરે છે પણ સ્થિતિ અને અનુભાગબંધ જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ વિશેષ કર્મોનાં અધિક થશે. અંધ થવું, બહિરા થવું, કાણા થવું ઇત્યાદિ. તથા ઇન્દ્રિયાદિકોની પૂર્ણતા હોવાથી પણ શારીરિક શાંતિના લાભથી વચ્ચિત રહેવું, દુઃખોત્પાદક સામગ્રીની પ્રાપ્તિ થવી, ઇષ્ટાનિષ્ટ સંયોગવિયોગજન્ય કષ્ટોને સહન કરવા કોઈ પણ સાંસારિક પ્રાણી ચાહતો નથી, પરંતુ કર્મોનાં દ્વારા પરતન્ત્ર થયેલાં દરેક સાંસારિક જીવને પોતાના યોગ અને કષાયોનાં દ્વારા ઉપાર્જિત કરેલાં કર્મોનાં ફળ અવશ્ય અવશ્ય ભોગવવા પડે છે, તેમાં જીવની ઇચ્છા કામ કરતી નથી. કર્મોથી બચવાનું જ પ્રાણી પ્રાયઃ સાવધ કરવામાં જ દત્તાવધાન રહ્યા કરે છે, જેના કારણે રાત્રિ દિન દુઃખીનાં દુઃખી જ રહ્યા કરે છે.

પ્રશ્ન—કર્મોનાં ફળને ભોગવતાં છતાં પણ આગળનાં કર્મોનાં બંધ ન થાય એવા કોઈ ઉપાય છે ? ઉત્તર—જાણે.

પ્રશ્ન—શું છે ? ઉત્તર—સમતાભાવ. કર્મોનાં ફળોનાં અનુભવ કરવાનાં પ્રાણી દાન તેનાં ફળોને ભોગવતી વખતે હર્ષ વિષાદ આદિ અને આર્ત રોદરૂપ પરિણામોથી

રૌદ્રરૂપ પરિણમોં સે યુક્ત નહીં હોના હૈ, ઓર અપને ઉપાર્જિત કર્મોં કા ફલ ભોગે વિના છુટકારા નહીં હૈ અતઃ ઇનકા ફલ અવશ્ય ભોગના હી પડેગા—ચાહે કિસી ખી પરિસ્થિતિ મેં જીવ ક્યોં ન હો । જિસ પ્રકાર અપને ઉપાર્જિત પુણ્ય કા ફલ ભોગતે હુએ વિષાદપરિણતિ આત્મા મેં નહીં હોતી ડસી પ્રકાર અપને ઉપાર્જિત પાપ કર્મ કે ફલ કો ભોગતે હુએ ખી સુઝે વિષાદપરિણતિ નહીં હોની ચાહિયે, ઇત્યાદિ શુભાધ્યવસાય સે પ્રેરિત હોકર સમતાભાવ સે શુભાશુભ કર્મોં કે ફલ કો જો પ્રાણી ભોગતા હૈ ડસકે લિયે નવીન કર્મોં કા બન્ધ નહીં હોતા । નવીન કર્મોં કા બન્ધ કરાને વાલી કષાયપરિણતિ હી હૈ । હર્ષ ઓર વિષાદ યે કષાયપરિણતિ-રૂપ હી હૈ । સમતાભાવ ઇસ કષાયપરિણતિ સે રહિત અવસ્થા હૈ ।

પ્રશ્ન—ઇસ સમતાભાવ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો કૈસે હોની હૈ ?

ઉત્તર—સમકિત કી પ્રાપ્તિ સે ।

સમકિતશાલી જીવ ઘર મેં-સંસાર મેં રહતા હુઆ ખી અપની વૃત્તિ કમલપત્ર કે, અથવા તસલોહપાદન્યાસ (તપે હુએ લોહે પર પૈર રખને) કે સમાન રખતા હૈ ઇસસે વહ સમભાવી હોતા હૈ ।

યુક્ત બનતા નથી અને પોતાના ઉપાર્જિત કર્મોના ફળ ભોગવ્યા વિના છુટકો નથી માટે તેનું ફળ અવશ્ય ભોગવવું જ પડશે ભલે કોઈ પણ પરિસ્થિતિમાં જીવ કેમ ન હોય, જેવી રીતે પોતાના ઉપાર્જિત પુણ્યનું ફળ ભોગવતી વખતે વિષાદ પરિણતિ આત્મામાં થતી નથી તે પ્રકારે પોતાના ઉપાર્જિત પાપ કર્મના ફળને ભોગવતાં પણ મને વિષાદ પરિણતિ થવી ન જોઈએ. ઇત્યાદિ શુભાધ્યવસાયથી પ્રેરિત થઈ સમતાભાવથી શુભાશુભ કર્મના ફળને જે પ્રાણી ભોગવે છે તેને માટે નવીન કર્મોનો બંધ થતો નથી. નવીન કર્મોના બંધ કરાવવાવાળી કષાયપરિણતિ જ છે, હર્ષ અને વિષાદ એ કષાયપરિણતિરૂપ જ છે. સમતાભાવ આ કષાયપરિણતિથી રહિત અવસ્થા છે.

પ્રશ્ન—આ સમતાભાવની પ્રાપ્તિ જીવને કેવી રીતે થાય છે ?

ઉત્તર—સમકિતની પ્રાપ્તિથી.

સમકિતશાળી જીવ ઘરમાં-સંસારમાં રહેવા છતાં પણ પોતાની વૃત્તિ કમલપત્ર અથવા તસલોહપાદન્યાસ (તપેલા લોહા ઉપર પગ રાખવા) સમાન રાખે છે માટે તે સમભાવી છે.

इदमत्र हृदयम्—यः स्वोत्कर्षं समासाद्य जात्यादिमदसम्पन्नोऽन्यं प्रति ‘अन्ध-
स्त्व’—मित्यादिकं परुषं ब्रवीति, मनसा तस्याप्रियमाचरति च, स जन्मान्तरे स्वय-
मेव नीचगोत्रत्वादिकमन्धत्वादिकं फलं लभत इति भयान्मनोवाकाययोगैः कस्या-
प्यप्रियमात्महितार्थी नाचरेदिति बोध्यम् ॥ सू० २ ॥

उत्कृष्टकुलोत्पत्तिगर्वोन्मत्तचित्तोऽधमकुलतया दीनोऽन्धत्वादिकमुपलभमानो वा
कर्तव्याकर्तव्यानभिज्ञः कर्मविपाकमविज्ञाय तत्रैवोच्चकुलादिके विपर्यासं गच्छतीति
दर्शयति—‘से अबુज्झमाणे’ इत्यादि ।

मूलम्—से अबुज्झमाणे હોવહણ જાઈમરણ અણુપરિયટ્ટમાણે,
જીવિયં પુઢો પિયં ઇહમેગેસિં માણવાણં ચિત્તવત્થુમમાયમાણાણં,
આરત્તં વિરત્તં મણિ કુંડલં સહ હિરણ્ણેણ ઇત્થિયાઓ પરિગિજ્ઞ
તત્થેવ રક્તા, નઈત્થ તવો વા દમો વા નિયમો વા દિસ્સઈ, સંપુણ્ણં
વાલે જીવિઉકામેલાલપ્પમાણે મૂઢે વિપ્પરિઆસમુવેઈ ॥સૂ૦ ૩॥

છાયા—સઃ, અબુધ્યમાનો હતોપહતો જાતિમરણમનુપરિવર્તમાનઃ, જીવિતં
પૃથક્ પ્રિયમ્ ઇહૈકેપાં માનવાનાં ક્ષેત્રવાસ્તુમમાયમાનાનામ્, આરત્તં વિરત્તં મણિ
કુંડલં સહ હિરણ્યેન સ્ત્રીઃ પરિગૃહ્ય તત્રૈવ રક્તાઃ, નાત્ર તપો વા દમો વા નિયમો વા
દૃશ્યતે, સમ્પૂર્ણં વાલો જીવિતુકામો લાલપ્યમાનો મૂઢો વિપર્યાસમુપૈતિ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

इस सूत्र का सारांश यही है कि “जो मनुष्य अपने उत्कर्ष को
प्राप्त कर जात्यादिमदावेश में आकर दूसरों के प्रति “तू अन्धा है” इत्यादि
कठोर भाषा का प्रयोग करता है, मनसे भी उसका अप्रिय करने का
विचार करता है वह दूसरे जन्म में स्वयं ही नीच गोत्रादिक अथवा
अन्धत्वादिक फल का भोक्ता बनता है, अतः ऐसा विचार कर आत्मार्थी
जन कभी भी मन वचन और कायरूप योगों से किसी का भी अप्रिय-
—अनिष्ट न करे ॥ सू० २ ॥

આ સૂત્રનો સારાંશ એ છે કે ‘જે મનુષ્ય પોતાના ઉત્કર્ષને પ્રાપ્ત કરી
જાત્યાદિમદાવેશમાં આવીને બીજા પ્રતિ “તું આંધળો છે” ઇત્યાદિ કઠોર ભાષાનો
પ્રયોગ કરે છે, મનથી પણ તેનું અપ્રિય કરવાનો વિચાર કરે છે તે બીજા જન્મમાં
સ્વયં જ નીચ ગોત્રાદિક અથવા અન્ધત્વાદિક ફળનો ભોક્તા બને છે, માટે એવો
વિચાર કરી આત્માર્થી જન કોઈ વખત પણ મન વચન અને કાયાથી કોઈનું
અપ્રિય—અનિષ્ટ નહિ કરે. ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટોકા—‘સ’ ઇત્યાદિ । સઃ=ઉચ્ચકુલોત્પન્નઃ, અન્ધત્વાદિકમનુભવન, અબુ-
ધ્યમાનઃ=પૂર્વકૃતકર્મફલમજાનાનઃ, હતોપહતઃ=અન્ધત્વાદિનાનારોગગ્રસ્તત્વેન ક્ષત-
કાયત્વાદ્ હતઃ, સકલજનનિન્ધત્વેનોપહતઃ;

ઉચ્ચકુલ મેં જન્મ લેને કે ગર્વ સે સંયમી મુનિ અધમકુલ મેં ઉત્પન્ન
હોકર દીન અથવા અન્ધત્વાદિક ફલ કા ભોક્તા બન કર્તવ્ય ઓર અ-
કર્તવ્ય સે વિકલ હોતા હુઆ કર્મ કે ફલ કો નહીં જાનકર ઉસી ઉચ્ચ
ગોત્રાદિક મેં વિપર્યાસ-વિપરીત ભાવ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ, ઇસી કા વર્ણન
કરતે હૈ—“ સે અબુજ્ઞમાણે ” ઇત્યાદિ ।

સૂત્રકાર ને ઇસ સૂત્ર કે પહિલે યહ બાત અચ્છી તરહ સે છુલાશા
કર પ્રકટ કર દી હૈ કિ—“ જો સંયમી મુનિ ઉચ્ચગોત્ર મેં જન્મ લેને કે
અભિમાન સે ઉન્મત્ત બન દૂસરોં કા તિરસ્કાર કરતા હૈ, અથવા મન સે
ભી ઉનકા અહિત વિચારતા હૈ વહ ઇસ કર્મ કે કટુક ફલ કા જન્માન્તર
મેં યા ઇસી ભવ મેં ભોક્તા બનતા હૈ ” ઇસી બાત કો ફિર સે દ્વઢ કરને
કે અભિપ્રાય સે દોહરાતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ—વહ સંયમી મુનિ જો
ઉચ્ચકુલ મેં ઉત્પન્ન હુઆ હૈ ઓર અપને અહંકારજન્ય અન્ધત્વાદિક
ફલવિશેષ કા ભોક્તા બના હુઆ હૈ, તથા “ જો અન્ધત્વાદિક ફલ મુઝે
મિલા હૈ વહ મેરે હી દ્વારા ઉપાર્જિત કર્મ કા કટુક ફલ હૈ ” ઇસ બોધ સે
જો અનભિજ્ઞ હૈ, તથા જો હતોપહત બના હુઆ હૈ—અર્થાત્ અન્ધત્વાદિક

ઉંચ કુળમાં જન્મ લેવાના ગર્વથી સંયમી મુનિ અધમ કુળમાં ઉત્પન્ન
થઈને દીન અન્ધત્વાદિક ફળનો ભોક્તા બની કર્તવ્ય અને અકર્તવ્યના ભાનથી
વિકલ થઈને તેમજ કર્મના ફળને નહિ જાણીને તે જ ઉંચ ગોત્રાદિકમાં વિપર્યાસ-
વિપરીત ભાવને પ્રાપ્ત કરે છે. તેનું વર્ણન કરે છે—“ સે અબુજ્ઞમાણે ” ઇત્યાદિ.

સૂત્રકારે આ સૂત્રના પહેલાં આ વાત સારી રીતે ખુલાસો કરીને પ્રગટ
કરી છે, કે “ જે સંયમી મુનિ ઉંચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાના અભિમાનથી ઉન્મત્ત
બની બીજાઓને તિરસ્કાર કરે છે અથવા મનથી પણ તેનું અહિત કરવા વિચારે
છે તે આ કર્મના કટુક ફળનો જન્માન્તરમાં અગર આ ભવમાં ભોક્તા બને છે.
આ વાતને દ્રશીથી દઢ કરવાના અભિપ્રાયથી સૂત્રકાર કહે છે કે—તે સંયમી મુનિ
જે ઉંચ કુળમાં ઉત્પન્ન થયેલ છે, અને પોતાના અહંકારજન્ય અન્ધત્વાદિક ફળ
વિશેષનો ભોક્તા થયેલ છે, તથા “ જે અન્ધત્વાદિક ફળ મને મળ્યું છે તે મારા
જ દ્વારા ઉપાર્જિત કર્મનું કટુક ફળ છે ” એ યોધથી જે અનભિજ્ઞ છે, તથા જે
હતોપહત બનેલ છે, અર્થાત્ અન્ધત્વાદિક અને નાના રોગોથી જેનું શરીર ક્ષત

યદા જીવસ્ત્રીત્રેણાયુર્વન્ધાધ્યવસાયેન જાતિનામનિધત્તાયુર્વન્ધનાતિ તદૈકેનૈવાકર્ષેણ વન્ધનાતિ । મન્દેન દ્વાભ્યામાકર્ષાભ્યાં, મન્દતરેણ ત્રિભિરાકર્ષૈઃ, મન્દતમેન ચાધ્યવસાયેન ચતુર્ભિઃ પશ્ચભિઃ પઙ્કભિઃ સપ્તભિરુત્કૃષ્ટેનાષ્ટાભિર્વાઽઽકર્ષૈર્જાતિનામનિધત્તાયુર્વન્ધનાતિ ।

एवं गतिस्थित्यवगाहनाप्रदेशानुभावनामनिधत्तायुष्काण्यपि जीवो बन्धनाति । निधत्तं हि आयुषा सह जातिगत्यादीनां नियमत एकरूपेण बन्धनमिति । उक्तञ्च—

‘ जीवा णं भंते ! जाइनामनिधत्ताउयं कइहिं आगरिसेहिं पकरंति ? गोयमा ! जहन्नेणं एक्केण दोहिं वा तिहिं वा उक्कोसेणं अट्ठहिं ” इति ॥

છાયા—જીવાઃ સ્વલુ મદન્ત ! જાતિનામનિધત્તાયુષ્કં કતિભિરાકર્ષૈઃ—પ્રકુર્વન્તિ ? ગૌતમ ! જઘન્યેન એકેન દ્વાભ્યાં વા ત્રિભિર્વા ઉત્કર્ષેણાષ્ટભિઃ । ઇતિ ।

શહ્ણા—यह जीव कैसे एक आकर्षसे अथवा दो आकर्षोंसे एवं तीन अथवा सात आठ आकर्षोंसे आयु बांधता है ?

उत्तर—जिस समय जीव आयु बांधने के तीव्र अध्यवसाय से जातिनामनिधत्त आयु का बंध करता है उस समय एक आकर्ष से ही उसका बन्ध करता है, मन्द अध्यवसाय से दो आकर्षों से, मन्दतर अध्यवसाय से तीन आकर्षों से, मन्दतम अध्यवसाय से पांच छह और सात और ज्यादा से ज्यादा आठ आकर्षों से जातिनामनिधत्त आयु का बंध किया करता है । इसी तरह से गति-स्थिति-अवगाहना-प्रदेश-अनुभाव-नामनिधत्त आयुओं का भी यह जीव बन्ध करता है । आयुबंध के साथ अन्य जाति गति आनुपूर्वी आदि का नियम से जो बंध होता है उसका नाम निधत्त है, कहा भी है—

આ જીવ કેવી રીતે એક આકર્ષથી અથવા બે આકર્ષોથી તેમજ ત્રણ અથવા સાત આઠ આકર્ષોથી આયુ બાંધે છે ?

જે વખતે જીવ આયુ બાંધવાના તીવ્ર અધ્યવસાયથી જાતિનામનિધત્ત આયુનો બંધ કરે છે, તે વખતે એક આકર્ષથી જ તેનો બંધ કરે છે, મંદ અધ્યવસાયથી બે આકર્ષોથી, મન્દતર અધ્યવસાયથી ત્રણ આકર્ષોથી, મન્દતમ અધ્યવસાયથી પાંચ, છ, સાત અને વધારેમા વધારે આઠ આકર્ષોથી જાતિનામનિધત્ત આયુનો બંધ કરે છે. આવી રીતે ગતિ-સ્થિતિ-અવગાહના-પ્રદેશ-અનુભાવ-નામનિધત્ત આયુઓનો પણ એ જીવ બંધ કરે છે આયુબંધની સાથે અન્ય જાતિ ગતિ આનુપૂર્વી આદિનો નિયમથી જે બંધ થાય છે તેનું નામ નિધત્ત છે. કહ્યું છે કે:—

યદ્વા-ઉચ્ચગોત્રાદિસમુદ્ભવગર્વાત્કર્તવ્યચ્યુતત્વેનાપવાદવાન્ જગજ્જનાનાદરવચ-
નદ્વંદેન પટહ ઇવ હતઃ, શ્રુતચારિત્રલક્ષણધર્મરહિતત્વેનોપહતઃ, એવં 'જાતિમરણ'
જાતિશ્ચ મરણં ચ જાતિમરણમ્ અનુપરિવર્તમાનઃ=પારાવારતરલતરતરજ્ઞવત્ પુન-
ર્જન્મ પુનર્મરણં ચેતિ સંસારસાગરે પરિભ્રમન્ ભૂયો ભૂયો જન્મમરણમુપલભમાનોઽ-
નિત્યત્વેઽપિ નિત્યત્વમનુભવન્ વિપર્યાસમુપૈતીતિ સમ્બન્ધઃ ।

એવમ્ નાના રોગોં સે જિસકા શરીર ક્ષત જીર્ણ શીર્ણ હો રહા હૈ, તથા
સકલજન જિસકી નિંદા કરતે હૈં, અથવા ઉચ્ચગોત્રાદિક મેં જન્મ પ્રાપ્ત
કરને કે ગર્વ સે જો કર્તવ્યચ્યુત હો રહા હૈ, “મેરા કયા કર્તવ્ય હૈ” ઇસ
બાત કો હી જો નહીં સમજતા હૈ, યદ્વાતદ્વા પ્રવૃત્તિ કરને સે લોગોં કે
અનેક અપવાદોં કા જો પાત્ર બના હુઆ હૈ, તથા જિસ પ્રકાર દ્વંદે સે
ઢોલ પીટા જાતા હૈ ઇસી પ્રકાર જગત કે જીવોં કે અનાદરકારી વચન-
રૂપી દ્વંદોં કી ચોટ સે જો આહત-તાડિત હૈ, એવમ્ જો વાસ્તવિક અપને
શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કી આરાધના સે વંચિત હૈ, જિસ પ્રકાર સમુદ્ર કી
તરલ તરંગોં સમુદ્ર સે ઉઠતી હૈં ઓર સમુદ્ર મેં હી વિલીન હોતી રહતી
હૈં, ઇસી પ્રકાર જો ઇસ સંસારરૂપી અથાહ સાગર મેં વારંવાર જન્મ મરણ
કે ગોતે રાતા રહતા હૈ, અહિતકારી પદાર્થોં કો હિતકારી એવમ્ અનિત્ય
પરપદાર્થોં કો નિત્ય માનકર જો અનેકે હી અપનાને મેં લગા હુઆ હૈ,
એસા પ્રાણી વિપરીતકલ્પનાવાલા હી માના ગયા હૈ, ઓર વહ અપની ઇસ
કલ્પના કી વજહ સે હી રાતદિન દુઃખી હોતા રહતા હૈ ।

જીર્ણ શીર્ણ થઈ રહ્યું છે, તથા સકલજન જેની નિંદા કરે છે, અને ઉચ્ચ
ગોત્રાદિકમા જન્મ પ્રાપ્ત કરવાના ગર્વથી જે કર્તવ્યચ્યુત થઈ રહેલ છે, “મારું
શું કર્તવ્ય છે” એ વાતને પણ પોતે સમજતો નથી, આડી અવળી પ્રવૃત્તિ કર-
વાથી લોકોના અનેક અપવાદોનો જે પાત્ર બનેલ છે, તથા જે પ્રકાર દ્વંદથી ઢોલ
પીટવામાં આવે છે તે પ્રકાર જગતના જીવોના અનાદરકારી વચનરૂપી દ્વંદોની
ચોટથી જે આહત-તાડિત છે, અને વાસ્તવિક પોતાના શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની
આરાધનાથી વંચિત છે. જે પ્રકારે સમુદ્રની તરલ તરંગો સમુદ્રથી ઉઠે છે અને
સમુદ્રમાં જ વિલીન થાય છે તે પ્રકાર જે આ સંસારરૂપી અથાગ સાગરમાં વારં-
વાર જન્મ મરણના ગોથા ખાતા રહે છે. અહિતકારી પદાર્થોને હિતકારી અને
અને અનિત્ય પદાર્થોને નિત્ય માનીને જે તેને અપનાવવામાં લાગેલ છે. એવા
પ્રાણી વિપરીત કલ્પનાવાળા જ માનેલ છે, અને તે પોતાની આવી કલ્પનાના બેરે
રાતદિવસ દુઃખી થાય છે

કિન્ન-હહ સંસારે 'ક્ષેત્રવાસ્તુ' ક્ષેત્ર=ધાન્યાદ્યુત્પત્તિસ્થાનં, વાસ્તુ=પ્રાસાદાદિકં સર્વં મમેત્યેવમાચરન્તો મમાયમાનાસ્તેષાં ક્ષેત્રવાસ્તુપ્રમૃતિપુ મમત્વં કુર્વતામ્ એકેપામ્=કેષાશ્ચિદ્વિપર્યસ્તમતીનાં માનવાનામ્, ઉપલક્ષણાત્ પ્રાણિનાં જીવિતમ્=અસંયમજીવિતમ્ પૃથક્=વિભિન્નરૂપેણ સ્વસ્વાપેક્ષયા પ્રિયમ્=શ્રદ્ધમ્, ભવતીતિ શેષઃ ।

જો સંયમી ક્ષેત્ર-ધાન્યાદિકા ઉત્પત્તિ સ્થાન; વાસ્તુ-મહલ મકાન આદિ વાહ્ય પદાર્થોં મેં મમત્વશાલી બને હુએ હૈં, વે વાસ્તવિક સંયમી નહીં હૈં, ક્યોંકિ જીવોં મેં વાહ્યપદાર્થોં સે મમત્વ હટે વિના સંયમભાવ હી નહીં ઉત્પન્ન હો સકતા હૈ। જિસ પ્રકાર ઝૂંડ પર નોંદ લેને વાલે વ્યક્તિ કા પ્રાયઃ અધઃપતન હોતા હૈ ડસી પ્રકાર જો સંયમ કા ઢોંગ રચકર વાહ્યપદાર્થોં મેં હી મૂર્ચ્છિત હો રહે હૈં ડનકા ઢી અધઃપતન ડસસે અવશ્ય હોતા હૈ। સંયમ શબ્દ કા અર્થ તો યહી હૈ કિ-ઇન્દ્રિયોં એવમ્ ચિત્ત કી વૃત્તિ જો વાહ્યપદાર્થોં મેં આસક્ત બની હુઈ હૈ ડસકા નિરોધ હો જાના, પરન્તુ જિનકી મમતા વાહ્ય-પર-વસ્તુઓં મેં જાગૃત હૈ કૈસે સ્નાના જા સકતા હૈ કિ ડનકે સત્ય સંયમભાવ હૈ, અતઃ એસે પ્રાણી સંયમભાવ સે વહુત દૂર હી રહા કરતે હૈં, ડન્હેં અપના અસંયમ જીવન ઑહે યે જિસ કિસી ઢી અવસ્થા મેં રહેં પ્રિય હોતા હૈ, ક્યોંકિ શુરુ સે ડનકા અભ્યાસ હી એસા પઢા હુઆ હૈ, અર્થાત્ સંયમ જીવન વ્યતીત કરને લિયે ચિત્તવૃત્તિ એવમ્ ડન્દ્રિયોં પર વિજય પ્રાપ્ત કરને કી વઢી ઢારી જરૂરત હોતી હૈ, ડસ પ્રકાર કા ઉપદેશ ડન્હેં નહીં મિલ્લા હૈ, ક્યોંકિ ડનકા જીવન તો વકરે

જે સંયમી ક્ષેત્ર-ધાન્યાદિકનું ઉત્પત્તિ સ્થાન, વાસ્તુ-મહેલ, મકાન, આદિ વાહ્ય પદાર્થોમાં મમત્વશાળી બનેલાં તેઓ વાસ્તવિક સંયમી નથી, કારણ કે એમાં વાહ્ય પદાર્થોથી મમત્વ દૂર થયા વિના સંયમભાવ જ ઉત્પન્ન થતો નથી. જે પ્રકારે ડંડ ઉપર ડંધ લેવાવાળી વ્યક્તિનો પ્રાયઃ અધઃપતન થાય છે તે પ્રકારે જે સંયમનો ઢોંગ રચીને વાહ્ય પદાર્થોમાં જ મૂર્ચ્છિત થાય છે તેનું પણ અધઃપતન તેનાથી અવશ્ય થાય છે. સંયમ શબ્દનો અર્થ તો એ છે કે-ઇન્દ્રિયો અને ચિત્તની વૃત્તિ જે વાહ્ય પદાર્થોમાં આસક્ત બની છે તેનો નિરોધ થઈ જવો. પરંતુ જેની મમતા વાહ્ય પરવસ્તુઓમાં જાગ્રત છે, કેવી રીતે માનવામાં આવે કે તેનો નત્ય સંયમભાવ છે. માટે એવો પ્રાણી સંયમભાવથી ઊવન ગમે તે સ્થિતિમાં રહે તેને તે પ્રિય લાગે છે, કારણ કે શરૂઆતથી તેનો અભ્યાસ તેવો થયેલ છે. અર્થાત્ સંયમ ઊવન વ્યતીત કરવા માટે ચિત્તવૃત્તિ અને ઇન્દ્રિયો ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની મોટી જરૂરત હોય છે. આ પ્રકારનો ઉપદેશ તેને મળેલ નથી, કારણ કે તેનું ઊવન તો બદલાતી માફક "મં મં" કરતા કરતા

અન્યચ્ચ-આરક્તમ્=રુચિરરાગરક્ષિતમ્, વિરક્તમ્=વિવિધરાગરક્ષિતં પટાદિકમ્
 'મણિમ્' મણિઃ=પદ્મરાગાદિસ્તં, કુણ્ડલમ્=પ્રસિદ્ધમ્, ઉપલક્ષણમેતત્કટકકેયૂરાદી-
 નામ્, હિરણ્યેન=સુવર્ણેન સહ સ્ત્રીઃ પરિગ્રહ=સ્વાયત્તીકૃત્ય તત્રૈવ ક્ષેત્રવાસ્તુવિવિધવસ્ત્ર-
 મણિકુણ્ડલકામિન્યાદૌ રક્તાઃ=ગૃધ્નવો મૂઢમતયો વિપર્યાસમુપયન્તિ, વદન્તિ ચ-
 અત્ર સંસારે તપો વા=અનશનાદિસ્વરૂપમ્, દમો વા=ઇન્દ્રિયનોઇન્દ્રિયોપશમરૂપઃ,
 નિયમો વા=અહિંસાવ્રતં ન દૃશ્યતે=ન ફલવદનુભૂયતે, તપોદમનિયમવતાં જનનાં
 કાયકલેશ એવાન્યન્ન કિમપિ ફલમ્, અપિ ચ દૃષ્ટસ્ય સુખાદેર્હાનિઃ, અદૃષ્ટસુખસ્ય
 કલ્પનં મહદનુચિતં, ભવાન્તરે ચૈતત્ફલં ભાવીતિ ગ્રહગ્રહિલસ્ય પ્રલાપ એવેતિ વદન્

કી તરહ “મૈં મૈ” કરતા હુઆ પરપદાર્થોં મૈં આસક્તિસંપન્ન હો રહા
 હૈ । અચિત્તપરિગ્રહરૂપ મહકીલે રંગ બિરંગે કપડોં કે, પદ્મરાગાદિક
 મણિયોં કે, કટક કેયૂર કુણ્ડલ આદિ કે, સુવર્ણ આદિ ધાતુઓં કે, એવં
 સ્ત્રી આદિ સચિત્ત પરિગ્રહ કે અપનાને, એવમ્ उनके रक्षणादि करने में
 હી इनकी जीवनयात्रा समाप्त हो जाती है, अर्थात् सचित्त और अचित्त
 परिग्रह के संग्रह एवम् रक्षण करने में ही ऐसे जीव गृद्ध बने रहते हैं,
 और संयमजीवन को दोष देते हुए कहते हैं कि-“इस संसार में
 अनशनादिक तप, इन्द्रिय और मन को वश में करने रूप दम, अहिंसा-
 व्रतादिरूप नियम कुछ भी कार्यकारी नहीं है । क्योंकि इनका आचरण
 करने वाले व्यक्तियों को कायकलेश के सिवाय और किसी भी फल
 की प्राप्ति नहीं होती है, ऐसा भला संसार में कौन समझदार होगा जो
 प्रत्यक्ष अनुभूत सुखादिकों की कामना से प्रेरित होकर इनका परित्याग

પદાર્થોમાં આસક્તિસંપન્ન હોય છે અચિત્ત પ્રિગ્રહરૂપ જાતજાતના રંગબેરંગી
 કપડાના, પદ્મરાગાદિક મણિઓના, કટક, કેયૂર, કુણ્ડલ આદિના, સુવર્ણ આદિ ધાતુ-
 ઓના. અને સ્ત્રી આદિ સચિત્ત પરિગ્રહના અપનાવવામાં અને તેના રક્ષણાદિ કરવામાં
 જ તેની જીવનયાત્રા સમાપ્ત થઈ જાય છે, અર્થાત્ સચિત્ત અને અચિત્ત પરિ-
 ગ્રહનો સંગ્રહ અને રક્ષણ કરવામાં જ એવા ગૃહ્હ બની રહે છે, અને સંયમ જીવનને
 દોષ દેતાં દેતા કહે છે કે “આ સંસારમાં અનશનાદિક તપ, ઇન્દ્રિય અને મનને
 વશ કરવારૂપ દમ, અહિંસાવ્રતાદિરૂપ નિયમ કોઈપણ કાર્યકારી નથી, કારણ કે તેનું
 આચરણ કરવાવાળા વ્યક્તિઓને કાયકલેશ સિવાય બીજા કોઈ પ્રકારનું ફળ મળતું
 થી. એવો ભલો ! સંસારમાં કોણ સમજદાર હશે જે પ્રત્યક્ષ અનુભૂત સુખા-
 ળોને છોડીને અદૃષ્ટ સુખાદિકોની કામનાથી પ્રેરિત બનીને તેનો પરિત્યાગ કરશે ?

વાલઃ=પરિગ્રહકટુકફલાનભિજ્ઞઃ, સમ્પૂર્ણ યથાસમયપ્રાપ્તકામિન્યાદ્યાસક્તિપૂર્વકં
યથા સ્યાત્તથા જીવિતુકામઃ અસંયમેન દીર્ઘકાલજીવનાર્થી લાલપ્યમાનઃ=કામ-
ભોગતીવ્રામિલાષેણ વ્યર્થં પ્રલપન્ મૂઢઃ=વિવેકવિકલઃ પૂર્વોક્તવિશેષગાવિશિષ્ટઃ, વિપ-
ર્યાસમ્=વૈપરીત્યમ્ મિથ્યાત્વમિત્યર્થસ્તદ્યથા-તત્ત્વેऽતત્ત્વબુદ્ધિમ્, અતત્ત્વે તત્ત્વબુદ્ધિમ્,
કુદેવ-કુગુરુ-કુધર્મેષુ સુદેવ-સુગુરુ-સુધર્મબુદ્ધિમ્, ઇષ્ટેષ્વનિષ્ટબુદ્ધિમ્, અનિષ્ટેષ્વ-
નિષ્ટબુદ્ધિમ્, इत्थम् વિપર્યયમ્ ઉપૈતિ=પ્રાપ્નોતિ । ઉક્તञ्च-

કરેગા?, યહ તો એક હસ પ્રકાર કી કલ્પના હૈ કિ-જિસ પ્રકાર કોઈ વ્યક્તિ
અપને ઘર મેં ઝરતે હુએ અમૃત કો છોડકર કિસી કે બહકાવે મેં આકર
“પર્વત મેં અમૃત ઝરતા હૈ” હસ રુચાલ સે ઉસકી ચાહના મેં ઉસે છોડ વહાં
દૌડા જાતા હૈ । જો હમારી ઇન્દ્રિયોં કે ગોચર હૈ વહી વાસ્તવિક હૈ, હસકે પરે
સ્વર્ગ નરકાદિ કુછ મી નહીં હૈ, પ્રત્યક્ષ ઇન્દ્રિયોં કે સુખ સિવાય પરોક્ષ
સ્વર્ગાદિક સુખ હૈ, યહ સિર્ફ એક શ્રદ્ધા કી હી વસ્તુ હૈ વાસ્તવિક કુછ નહીં
હૈ । તથા “તપશ્ચર્યાં કા ફલ હસ ભવમેં ન મિલે તો ન સહી પરભવમેં તો
મિલેગા હી” હસ પ્રકાર કી કલ્પના મી ગ્રહગૃહીત પુરુષ કે પ્રલાપ જૈસી હી
હૈ । જૈસે ભૂતાદિ કે આવેશ સે યુક્ત પ્રાણી કા પ્રલાપ નિરર્થક હોતા હૈ ઉસી
પ્રકાર “હસ ભવ મેં તપ સંયમરૂપ કષ્ટ કો ઝેલકર પ્રાણી પરલોકસં-
બંધી સુખ સમૃદ્ધિ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ” યહ કહના મી નિરર્થક હૈ । હસ
પ્રકાર કી વિપરીત માન્યતા ઉન અજ્ઞાની પુરુષોં કી હૈ જો પરિગ્રહ કે
ફલ સે અનભિજ્ઞ હૈં । રાતદિન પરિગ્રહ કે વટોરને એવમ્ ઉસકી વૃદ્ધિ
કરને મેં દત્તાવધાન પ્રાણી કી દૃષ્ટિ મેં સંયમ જીવન જૈસે સુન્દર સિદ્ધાંત

એ તો એક આ પ્રકારની કલ્પના છે કે-જે પ્રકારે કોઈ વ્યક્તિ પોતાના ઘરમાં ઝરતાં
અમૃતને છોડીને કોઈના ભરમાવવાથી “પર્વતમાં અમૃત ઝરે છે” તેવા ખ્યાલથી
તેની આહનામાં તેને છોડીને ત્યાં દોડી જાય છે. જે અમારી ઇન્દ્રિયોને ગોચર
છે તે વાસ્તવિક છે. તેના સિવાય સ્વર્ગ નરકાદિ કંઈ પણ નથી, પ્રત્યક્ષ ઇન્દ્રિ-
યોના સુખ સિવાય પરોક્ષ સ્વર્ગાદિક સુખ છે તે ફક્ત એક શ્રદ્ધાની વસ્તુ છે-
વાસ્તવિક કંઈ પણ નથી. અને “તપશ્ચર્યાનું” ફળ આ ભવમાં નહિ મળે તો
નહિ પરભવમાં તો મળશે જ.” આવા પ્રકારની કલ્પના પણ ગ્રહગૃહીત પુરુષના
પ્રલાપ જેવી જ છે. જેમ ભૂતાદિકના આવેશથી યુક્ત પ્રાણીનો પ્રલાપ નિરર્થક
બને છે તે પ્રકારે “આ ભવમાં તપસંયમરૂપ કષ્ટને ભોગવી પ્રાણી પરલોક
સંબંધી સુખ સમૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે” એમ કહેવું પણ નિરર્થક છે. આવી
વિપરીત માન્યતા તેવા અજ્ઞાની પુરુષોની છે જે પરિગ્રહના કટુક ફળથી અન-
ભિજ્ઞ છે. રાત દિન પરિગ્રહના વધારવામાં દત્તાવધાન પ્રાણીની દૃષ્ટિમાં સંયમ

કા કોઈ મહત્ત્વ ન હો તો इसमें आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है, कारण कि कहावत है—जो नृत्य करने में सिद्धहस्त नहीं है, वह आंगन को टेढ़ा कहता है। परिग्रहादि के बोझ से प्राणी की तमाम शक्तियाँ इतस्ततः बिखर जाती हैं अतः वे बिखरी हुई शक्तियाँ “संयमित जीवन बिखरी हुई शक्तियाँ को केन्द्रित करने वाला है” इस प्रकार कैसे महत्त्व दे सकती हैं, परन्तु यह मानना अवश्य पड़ेगा कि—जिस प्रकार सूर्य की किरणें जब किसी विशेष काच में केन्द्रित करली जाती हैं तो उनसे सहसा अग्नि प्रज्वलित हो उठती है, उसी प्रकार असंयम अवस्था में जो आत्मिक शक्तियाँ इधर उधर विषय कषायों में फँसकर अस्तव्यस्त हो रही थीं—जब वे संयमित जीवन से केन्द्रित करली जाती हैं तो इनसे भी एक ऐसा प्रवाह निकलता है जो प्राणी के जीवन में अपूर्व परिवर्तन कर देता है। लगाम जिस प्रकार स्वच्छंद घोड़े को, अंकुश मदोन्मत्त गजराज को वश में कर देता है, उसी प्रकार संयम भी जीवन को योग्य मार्ग पर पहुँचा देता है। यही एक ऐसा मार्ग है जो असंयम जीवन से प्राणी की रक्षा करता है। अतः ऐसे सुन्दर और हितावह मार्ग का सच्चे भावों से जो आराधन नहीं करते हैं वे प्राणी कैसे इससे उत्पन्न होने वाले लाभ को पा सकते हैं?। माना जा सकता है कि—संयम जीवन को

જીવન જેવા સુંદર સિદ્ધાંતનો કોઈ મહત્ત્વ ન હોય તો તેમાં આશ્ચર્ય થાય તેવી કોઈ વાત નથી, કારણ કે કહેવત છે—જે નૃત્ય કરવામાં સિદ્ધહસ્ત નથી તે આંગણાને વાકું કહે છે પરિગ્રહાદિના બોજથી પ્રાણીની તમામ શક્તિઓ આડી અવળી વિખરાઈ જાય છે માટે તે વિખરાયેલી શક્તિઓ “સંયમિત જીવન જે વિખરાઈ ગયેલી શક્તિઓને કેન્દ્રિત કરવાવાળું છે” આ પ્રકારે તે કેવી રીતે મહત્ત્વ દઈ શકે. પરંતુ તે અવશ્ય માનવું પડશે કે જે પ્રકાર સૂર્યની કિરણો જ્યારે કોઈ વિશેષ કાચમાં કેન્દ્રિત કરવામાં આવે છે તો તેનાથી સહેજે અગ્નિ પ્રજ્વલિત થાય છે, તેવા પ્રકારે અસંયમ અવસ્થામાં જે આત્મિક શક્તિઓ આડી અવળી વિષય કષાયોમાં ફસાને અસ્તવ્યસ્ત થઈ રહી હતી, જ્યારે તે સંયમિત જીવનથી કેન્દ્રિત કરવામાં આવે છે તો તેનાથી પણ એક એવો પ્રવાહ નીકળે છે જે પ્રાણીના જીવનમાં અપૂર્વ પરિવર્તન કરે છે. લગામ જેવી રીતે સ્વચ્છંદ ઘોડાને, અંકુશ મદોન્મત્ત ગજરાજને વશમાં કરે છે તે પ્રકારે સંયમ પણ જીવનને યોગ્યમાર્ગ ઉપર પહોંચાડે છે. તે એક જ માર્ગ છે જે અસંયમ જીવનથી પ્રાણીની રક્ષા કરે છે, માટે આવા સુંદર અને હિતાવહ માર્ગને સાચા ભાવોથી જે આરાધન કરતા નથી તે પ્રાણી કેવી રીતે તેનાથી ઉત્પન્ન થતાં લાભને મેળવી શકે?

“દારાઃ પરિભવકારા, વન્ધુજનો વન્ધનં વિષં વિપયાઃ ।

કોડયં જનસ્ય મોહો, યે રિપવસ્તેષુ સુહદાશા ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

પૂર્ણરૂપ સે વ્યતીત કરને કે લિયે, તથા ઉસકે રક્ષણ કે લિયે કષાયોં પર વિજય પ્રાપ્ત કરને કી સર્વ પ્રથમ બડી ભારી જરૂરત હૈ । પરિગ્રહ કો અપનાના યહ લોભકષાય કે ઉદય મેં હી હોતા હૈ । અસંયમી જીવ અસંયમ અવસ્થા મેં રહતે હુએ હી અપના જીવન વ્યતીત કરતે હૈ, તથા યહ યાહતે હૈ કિ “મૈને જો યહ પરિગ્રહાદિક સંગ્રહીત કિયા હૈ ઉસકે ભોગને કે લિયે મૈં અધિક સે અધિક જીઝં” । અસંયમી જીવ પરપદાર્થોં કે ઉપભોગ કરને મેં હી અધિક આસક્તિસંપન્ન હોતે હૈ—ઇન્હેં જિતની ઇન પરપદાર્થોં કો ભોગને કી તીવ્ર અભિલાષા રહતી હૈ ઉસસે શતાંશ ભી આત્મકલ્યાણમય સંયમિજીવન કી તર્ફ ઇનકી રુચિ નહીં હોતી । જન્માન્તર સે મિથ્યાત્વ કા સંસર્ગ ચલા આતા હૈ । જૈનકુલ મેં ઉત્પન્ન હોને પર ભી ઉનકે ઇસ મિથ્યાત્વ કા નાશ નહીં હોતા । એસે હી જીવ અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ કહલાતે હૈ । જો વર્તમાન ભવ મેં કુગુરુ કુદેવ ઓર કુધર્મ કી સંગતિ મેં પડકર અપને મેં અતત્ત્વરુચિ કો સ્થાન દેતે હૈ વે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હૈ । યે જીવ ઇષ્ટ પદાર્થોં કો અનિષ્ટકારી, તથા અનિષ્ટ પદાર્થોં કો ઇષ્ટકારી માના કરતે હૈ । વે યહ નહીં વિચારતે હૈ કિ—

માનવામાં આવે છે કે—સંયમ જીવનને પૂર્ણ રૂપથી વ્યતીત કરવા માટે તથા તેના રક્ષણ માટે કષાયો પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની સર્વ પ્રથમ જરૂરત છે. પરિગ્રહને અપનાવવો તે લાભકષાયના ઉદયમાં જ થાય છે. અસંયમી જીવ અસંયમ અવસ્થામાં રહીને પોતાનું જીવન વ્યતીત કરે છે, તથા એ યાહે છે કે “ મેં જે આ પરિગ્રહાદિક સંગ્રહ કર્યો છે તેને ભોગવવાને માટે હું વધારેમાં વધારે જીવું ” અસંયમી જીવ પરપદાર્થોના ઉપયોગ કરવામાં જ અધિક આસક્તિસંપન્ન હોય છે. તેને જેટલી પરપદાર્થો ભોગવવાની તીવ્ર અભિલાષા રહે છે તેનાથી સોમાં ભાગની આત્મકલ્યાણમય સંયમ જીવનની તરફ તેની રૂચી થતી નથી. જન્માન્તરથી મિથ્યાત્વનો સંસર્ગ ચાલ્યો આવે છે. જૈન કુળમાં ઉત્પન્ન થવા છતાં પણ તેના આ મિથ્યાત્વનો નાશ થતો નથી. એવા જીવ અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ કહેવાય છે. જે વર્તમાન ભવમાં કુગુરુ કુદેવ અને કુધર્મની સંગતિમાં પડીને પોતાનામાં અતત્ત્વરુચિને સ્થાન આપે છે તે મિથ્યાત્વદૃષ્ટિ જીવ છે. તે જીવ ઇષ્ટ પદાર્થોને અનિષ્ટકારી તથા અનિષ્ટ પદાર્થોને ઇષ્ટકારી માને છે. તે એવું વિચારતા નથી કે—

સર્વથા વિપર્યસ્તોઽનેકભવેષુ પરિભ્રમન્ ભ્રાન્તઃ સંયમાત્મઘાતમેવ કરોતીતિ તાત્પર્યમ્ । સૂત્રે ઉપૈતીત્યત્રૈકવચનમાર્પત્વાત્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

યે પુનરવિપર્યસ્તાઃ સંયમિનસ્તેષાં કર્તવ્યમુપદિશતિ—‘ઇણમેવ’ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઇણમેવ નાવકંઘંતિ, જે જના ધ્રુવચારિણો । જાઈમરણ પરિજ્ઞાય, ચરેઽસંકમણે દઢે ॥ નત્થિકાલસ્સઽનાગમો ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—ઇદમેવ નાવકાઙ્ક્ષન્તિ, યે જના ધ્રુવચારિણઃ । જાતિમરણ પરિજ્ઞાય, ચરેદશઙ્કમના દઢઃ ॥ નાસ્તિ કાલસ્યાઽનાગમઃ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

“દારાઃ પરિભવકારા, -બન્ધુજનો બન્ધનં વિષં વિષયાઃ ।

કોઽયં જનસ્ય મોહો, યે રિપવસ્તેષુ સુહૃદાશા” ॥ ૧ ॥

યે જો સ્ત્રી આદિક પદાર્થ હૈં વે મેરા તિરસ્કાર કરને વાલે હૈં । બન્ધુ જન એક બન્ધન હૈં । વિષયાદિક વિષ હૈં । એસા કયા ઇસ પ્રાણી કા મોહ હૈં જો અપને શત્રુઓં કો ભી મિત્ર સમજ રહા હૈં । ઇસ પ્રકાર યહ પ્રાણી વિપરીતબુદ્ધિવાલા બનકર અનેક ભવોં મેં પરિભ્રમણ કર હેયોપાદેય કે વિવેક સે રહિત હોકર સંયમરૂપ અપની આત્મા કા ઘાત કરતા રહતા હૈં । આત્મા કા સ્વભાવ સંયમસ્વરૂપ હૈં, ઇસકો પાલન નહીં કરના, અથવા આત્મા કો સંયમી નહીં બનાના આત્મા કી ઘાત કરના હૈં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જો સચ્ચે ચારિત્ર સે યુક્ત હૈં વે ઇસ અસંયમિજીવન કો પસન્દ નહીં કરતે હૈં, યહ વાત ઇસ સૂત્ર મેં પ્રદર્શિત કરતે હૈં—“ઇણમેવ નાવ-કંઘંતિ’ ઇત્યાદિ ।

“દારા પરિભવકારા, બન્ધુજનો બન્ધનં વિષં વિષયા ।

કોઽયં જનસ્ય મોહો, યે રિપવસ્તેષુ સુહૃદાશા” ॥ ૧ ॥

આ જે સ્ત્રી આદિક પદાર્થ છે તે મારો તિરસ્કાર કરવાવાળા છે બંધુજન એક બંધન છે. વિષયાદિક વિષ છે. એવો કયો આ પ્રાણીનો મોહ છે જે પોતાના શત્રુઓને પણ મિત્ર સમજે છે આ પ્રકારે આ પ્રાણી વિપરીત બુદ્ધિવાલો બનીને અનેક ભવોમાં પરિભ્રમણ કરી હેયોપાદેયના વિવેકથી રહિત થઈને સયમરૂપ પોતાના આત્માનો ઘાત કરતા રહે છે. આત્માનો સ્વભાવ સયમસ્વરૂપ છે તેનું પાલન નહિ કરવું અથવા આત્માને સંયમી નહિ બનાવવો તે આત્માની ઘાત કરવા બરાબર છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જે સાચા ચારિત્રથી યુક્ત છે તે આવા અસંયમિજીવનને પસંદ કરતા આ વાત આ સૂત્રમાં પ્રદર્શિત કરે છે—“ઇણમેવ નાવકંઘંતિ’ ઇત્યાદિ.

‘ઇદ’-મિત્યાદિ । “ધ્રુવચારિણઃ” ધ્રુવતિ=વ્રજતિ આત્મતઃ પૃથગ્भवति कर्म-चयो येन तद् ध्रुवं=चारित्रं, तच्चरितुं शीलं येषां ते ध्रुवचारिणः ।

यद्वा-ध्रुवो मोक्षस्तद्धेतुत्वात्तपोज्ञानक्रियादिकं कार्यकारणयोरभेदात्, तच्चरण-शीला ध्रुवचारिणः । ये जना ध्रुवचारिणः, ते इदमेव असंयमजीवितं पूर्वभुक्तभोगादिकं वा नावकाङ्क्षन्ति=नेच्छन्ति । ‘जातिमरणं’ जातिश्च मरणं च जातिमरणं, जाति-मरणं यत्र स जातिमरणः=संसारस्तं वा ज्ञ-परिज्ञया ज्ञात्वा ‘अशङ्कितमनाः’ अशङ्कि-तं मनो यस्य सोऽशङ्कितमनाः=तपोदमनियमवैफल्यशङ्काशून्यो जिनवचनश्रद्धावान्, अत एव दृढः=विश्रोतसिकारहितः, परीषहोपसर्गैर्निष्प्रकम्पो वा चरेत्=विहरेत् ।

ધ્રુવ શબ્દ કા અર્થ ચારિત્ર છે, ક્યોંકિ-“ધ્રુવતિ-વ્રજતિ આત્મનઃ પૃથગ્भवति कर्मचयो येन तद् ध्रुवम्” કર્મસમૂહ જિસકે દ્વારા આત્મા સે પૃથક્ હોતા હૈ વહ ધ્રુવ હૈ, વહ ચારિત્રસ્વરૂપ આત્મા કા નિજધર્મ હૈ ।

ભાવાર્થ—ચારિત્ર આરાધન કે દ્વારા આત્મા ડ્યોં ડ્યોં અવિરતિ, પ્રમાદ, કપાય ઔર અશુભ યોગોં કા નિગ્રહ કરતા જાતા હૈ, ત્યોં ત્યોં હિસ આત્મા મેં અપૂર્વ અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ હોતી જાતી હૈ । હિસ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ મેં આત્મા સંવર ઔર નિર્જરા કે દ્વારા સમસ્ત કર્મોં કા નાશ કર દેતા હૈ, અર્થાત્ સમસ્ત કર્મ આત્મા સે પૃથક્ હો જાતે હૈ । તપ શ્રુત ઔર વ્રતોં કા પાલન કરને વાલા આત્મા હી ધ્યાનરૂપ રથ પર આરૂઢ હોકર સંવર ઔર નિર્જરા કે સુન્દર મૈદાન મેં આકર અપને અન્તિમ મોક્ષ પુરુષાર્થ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ । સુવર્ણ જૈસે જૈસે અગ્નિ મેં તપાયા જાતા હૈ વૈસે વૈસે વહ વિલકુલ નિર્મલ હોતા જાતા હૈ, ઉસી પ્રકાર કર્મોં કે અનાદિ સંબંધ સે આવૃત યહ આત્મા ભી મલિનદશાસંપન્ન હૈ, ઉસકી હિસ

ધ્રુવ શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે, કારણ કે “ધ્રુવતિ-વ્રજતિ આત્મનઃ પૃથગ્भवति कर्मचयो येन तद् ध्रुवम्” કર્મસમૂહ જે દ્વારા આત્માથી પૃથક્ થાય છે તે ધ્રુવ છે, તે ચારિત્રસ્વરૂપ આત્માનો નિજધર્મ છે.

ભાવાર્થ—ચારિત્ર આરાધનદ્વારા આત્મા જેમ જેમ અવિરતિ, પ્રમાદ, કપાય અને અશુભ યોગોનો નિગ્રહ કરતા રહે છે તેમ તેમ આ આત્મામાં અપૂર્વ અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતાની જાગૃતિ થાય છે. આ ઉજ્જ્વલતાની જાગૃતિમાં આત્મા સંવર અને નિર્જરાદ્વારા સમસ્ત કર્મોનો નાશ કરે છે, અને સમસ્ત કર્મ આત્માથી પૃથક્ થઈ જાય છે. તપ શ્રુત અને વ્રતોના પાલન કરવાવાળા આત્મા જ ધ્યાનરૂપ રથ પર આરૂઢ થઈ સંવર અને નિર્જરાના સુન્દર મેદાનમાં આવીને પોતાના અંતિમ મોક્ષ પુરુષાર્થને પ્રાપ્ત કરી લે છે. સુવર્ણને અગ્નિમાં જેમ જેમ વધારે તપાવવામાં આવે તેમ તેમ તે વધારે નિર્મળ બને છે. તે પ્રકારે કર્મોના અનાદિ સંબંધથી

મલિનતા કો દૂર કરને મેં ચારિત્ર કી અરાધના અગ્નિ કા કામ દેતી હૈ । કર્મો કા સંબંધ આત્મા કે સાથ આજ કા નહીં હૈ કિન્તુ યહ તો અનાદિકાલ કા હૈ, યહ બાત કઈ બાર લિખી જા ચુકી હૈ । યે કર્મપુદ્ગલ અચેતન હોને સે સ્વયં આત્મા કે પાસ નહીં જાતે કિન્તુ અનાદિકાલ સે વદ્ધરૂપ હસ આત્મા કે યોગરૂપ પરિણામ મેં એસી આકર્ષક શક્તિ હૈ કિ જિસકે દ્વારા વે કર્મરૂપ પુદ્ગલ ળીંચે જાતે હૈ—અર્થાત્ આત્મા જવ કષાયોં કે દ્વારા અત્યન્ત સંતપ્ત હો જાતા હૈ તવ યોગ દ્વારા કર્મપુદ્ગલોં કો—તપા હુઆ લોહા જિસ તરહ પાની કો ચારોં ઓર સે ળીંચતા હૈ ઠીક ઁસી તરહ ળીંચતા હૈ, ઔર વે ળાયે હુએ ભોજન કે હસ રુધિરાદિરૂપ કી તરહ અપને હી આપ ભિન્ન-ભિન્ન રૂપ સે પરિણત હો જાતે હૈ । કર્મપુદ્ગલ નવીન-નવીન તયાર નહીં હોતે, કારણ કિ “સતો ન વિનાશઃ અસતશ્ચ ઉત્પત્તિર્ન ” સત્ કા વિનાશ ઔર અસત્ કી ઉત્પત્તિ નહીં હોતી । આત્મા કષાયોં સે જવ સંતપ્ત હો જાતા હૈ તવ મન, વચન ઔર કાયરૂપ યોગોં કે દ્વારા જિન કાર્મણ વર્ગણાઓં કો ળીંચતા હૈ ઁન્હીં કી કર્મસંજ્ઞા હો જાતી હૈ ।

પ્રશ્ન—આપને અભી તો યહ કહા હૈ કિ—આત્મા કર્મોં કે સાથ અનાદિકાલ સે બંધ રહા હૈ, ઔર અબ આપ કહતે હૈ કિ—જિન કાર્મણ

આવૃત આ આત્મા પણ મલિનદશાસપત્ત છે, તેની આ મલિનતાને દૂર કરવામાં ચારિત્રની આરાધના અશ્વિતુ કામ આપે છે. કર્મોના સમઘ આત્માની સાથે આજનો નથી પણ અનાદિ કાળનો છે, એ વાત ઘણી વખત લખાઈ ચુકી છે. આ કર્મ પુદ્ગલ અચેતન હોવાથી પોતે આત્માની પાસે નથી જતા પણ અનાદિ કાળથી બદ્ધરૂપ આ આત્માને યોગરૂપ પરિણામમાં એવી આકર્ષક શક્તિ છે કે જેના દ્વારા તે કર્મરૂપ પુદ્ગલ ખેંચાઈ જાય છે અર્થાત્ આત્મા જ્યારે કષાયોદ્વારા અત્યન્ત સંતપ્ત થાય છે ત્યારે યોગદ્વારા કર્મ પુદ્ગલોને—તપેલું લોહું જેવી રીતે પાણીને ચારે બાજુથી ખેંચે છે, ઠીક તે પ્રમાણે ખેંચે છે. અને તે ખવાયેલાં ભોજનનું આ રુધિરાદિ રૂપની માફક પોતાની મેળે જ ભિન્ન ભિન્ન રૂપથી પરિણત થાય છે કર્મપુદ્ગલ નવીન નવીન તૈયાર થતા નથી. કારણ કે “સતો ન વિનાશઃ અસતશ્ચ ઉત્પત્તિર્ન ” સત્નો વિનાશ અને અસત્ની ઉત્પત્તિ થતી નથી આત્મા કષાયોથી જ્યારે સંતપ્ત થાય છે ત્યારે મન, વચન અને કાયા રૂપ યોગોદ્વારા જે કર્મણ વર્ગણાઓને ખેંચે છે તેની કર્મસંજ્ઞા થઈ જાય છે.

પ્રશ્ન—આપે હમણા તો એ કહ્યું કે આત્મા કર્મોની સાથે અનાદિ કાળથી બંધ રહ્યો છે, અને હવે આપ કહો છો કે જે કર્મણ વર્ગણાઓને ખેંચે છે

वर्गणाओं को खींचता है उन्हीं की कर्मसंज्ञा हो जाती है। इससे तो आत्मा और कर्म का संबंध सादि सिद्ध होता है।

उत्तर—अभिप्राय को समझे बिना ही यह प्रश्न किया गया है। कहने का तात्पर्य यही है कि—यह जीवात्मा अनादि से ही कर्मबन्ध सहित है। इसके साथ कोई नियमित समय से कर्मबंध नहीं हुआ। ऐसा नहीं था कि जीव अलग-न्यारा था और कर्म न्यारे थे, पीछे से इन दोनों का संयोग हुआ हो। किन्तु जिस प्रकार मेरुगिरि आदि अकृत्रिम स्कन्धों में अनंत पुद्गलपरमाणु अनादि से ही बन्धरूप हो रहे हैं, और उनमें पुराने पुद्गलपरमाणु भिन्न होते रहते हैं, और नवीन आकर मिलते हैं। इसी प्रकार इस संसार में एक जीवद्रव्य और अनन्त कर्मरूप पुद्गलपरमाणुओं का परस्पर में अनादिकाल से संबन्ध है। इनमें से कई कर्मपरमाणु भिन्न होते रहते हैं और कई कर्मपरमाणु मिलते रहते हैं। इस प्रकार इन कर्मपरमाणुओं में परस्पर मिलना बिछुड़ना होना रहना है।

प्रश्न—पुद्गलपरमाणु तो रागादिक के निमित्त को पाकर कर्मरूप हुआ करते हैं, फिर वे अनादि से कर्मरूप अवस्था वाले कैसे माने जा सकते, कारण कि कर्मण वर्गणा, जिससे कर्मपर्याय उत्पन्न होती है वह स्वयं पुद्गल द्रव्य है ?।

तेनी कर्मसंज्ञा थाय छे तेथी तो आत्मा अने कर्मनो संबंध सादि सिद्ध थाय छे.

उत्तर—अभिप्रायने समज्या बिना न प्रश्न कर्यो छे. डहेवानो तात्पर्य ओ छे के—आ जीवात्मा अनादिथी न कर्मबंधनहित छे. तेनी साथे डोछ नियमित समयथी कर्मबंध थयेस नथी. ओवुं न हुतुं के ओव अलग-जुद्धो हुतो अने कर्म पणु जुद्धो हुतां, पाछणथी ओ जन्नेनो संयोग थयो होय, पणु जेवी रीते मेरुगिरि आदि अकृत्रिम स्कन्धोमां अनंत पुद्गलपरमाणु अनादिथी न बंधरूप थछ रहैस छे, अने तेमा पुराणा पुद्गलपरमाणु भिन्न थतां रहै छे अने नवा आवीने भणो छे. आ प्रकार आ संसारमा ओके ओवद्रव्य अने अनंत कर्मरूप पुद्गलपरमाणुओना परस्परमां अनादि डणथी संबंध छे, तेमांथी डोछ कर्मपरमाणु भिन्न थतां रहै छे अने डोछ पुद्गलपरमाणु भणतां रहै छे. आ प्रकार आ कर्मपरमाणुओमां परस्पर भणवुं, छुटा थवुं बिगेरे थतुं न रहै छे.

प्रश्न—पुद्गलपरमाणु तो रागादिकना निमित्तने लभने कर्मरूप थया करै छे, पछी ते अनादिथी कर्मरूप अवस्थावाणा डेवी रीते मानवाना आये डारवुं के डार्मलवर्गणा जेनाथी कर्मपर्याय उत्पन्न थाय छे ते स्वयं पुद्गलद्रव्य छे ?

सोपक्रमायुथोपक्रमकारणैर्दण्डकशाशस्त्ररज्जुवह्निजलपतनविषव्यालशीतोष्णारति-
भयक्षुत्पिपासाव्याधिमूत्रपुरीषनिरोधातिभोजनाजीर्णभोजनवर्षणश्वासप्रतिरोधनपीड-
नरूपैरकाले यस्यायुषो नाशस्तत् ।

उक्तञ्च—दण्ड—कस—सत्थ—रज्जू, अग्नी—उदग—पडणं विसं वाला ।

सी—उण्हं अरइ भयं, खुहा पिपासा य वाही य ॥ १ ॥

मुत्तपुरीसनरोहे, जिण्णाजिण्णे य भोयणं बहुसो ।

वंसण—घोलण—पीलण, आउस्स उवक्कमा एए ॥ २ ॥

छाया—दण्डः कशा शस्त्रं रज्जुरग्निरुदकं पतनं विषं व्यालाः ।

शीतमुष्णमरतिर्भयं क्षुत्पिपासा च व्याधिश्च ॥ १ ॥

मूत्रपुरीषनिरोधो जीर्णेऽजीर्णे च भोजनं बहुशः ।

वर्षणं घोलनं पीडनमायुष उपक्रमा एते ॥ २ ॥ इति ।

“जीवा णं भंते ! जाइनामनिधत्ताउयं कतिहिं आगरिसेहिं पकरंति ? गोयमा ! जहन्नेणं दोहिं वा तिहिं वा उक्कोसेणं अट्ठहिं ।” इति ।

इस सूत्र का अर्थ पूर्वोक्तरूप से ही है ।

सोपक्रम आयु वह है जिसका—उपक्रम के कारणभूत दण्ड, चावुक, शस्त्र, रज्जु, अग्नि, जल, विष, सर्प, शीत, उष्ण, अरति, भय, क्षुधा, तृष्णा, व्याधि, मूत्र-पुरीष-लघुनीत बडीनीत—का निरोध, अतिभोजन, अजीर्ण भोजन, डोरी आदि बांधकर घसीटना, श्वास का निरोध और यंत्र आदि में पीडना आदि से अकाल में ही अन्त हो जाय, कहा भी है—

“दंड-कस-सत्थ-रज्जू-अग्नी-उदग-पडणं-विसं-वाला ।

सी-उण्हं-अरइ-भयं, खुहा पिपासा य वाही य ॥ १ ॥

“जीवा णं भंते ! जाइनामनिधत्ताउयं कतिहिं आगरिसेहिं पकरंति ? गोयमा ! जहन्नेणं दोहिं वा तिहिं वा उक्कोसेणं अट्ठहिं ।” इति ।

आ सूत्रनो अर्थ पूर्वोक्ता इपथी न छे.

सोपक्रम आयु ते छे जेना उपक्रमना कारणभूत दंड, चावुक, शस्त्र, रज्जु, अग्नि, जल, विष, सर्प, शीत, उष्ण, अरति, भय, क्षुधा, तृष्णा, व्याधि, मूत्र-पुरीष,—लघुनीत—बडीनीत नो निरोध, अतिभोजन, अजीर्ण भोजन, डोरी आदि बांधीने घसीटवुं, श्वासनो निरोध अने यंत्र आदिथी पीडवुं, आदीथी अकालमां न अंत थाय. उहुं छे:—

“दंड-कस-सत्थ-रज्जू, अग्नी उदग पडणं विसं वाला ।

सी-उण्हं अरइ भयं, खुहा पिपासा य वाही य ॥ १ ॥

ઉત્તર—નિમિત્તની સંભાવના તો નવીન કાર્યની ઉત્પત્તિમાં જ કાર્યકારી માની જાય છે. અનાદિ અવસ્થામાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે તેની અનાદિતા ઉપર બંધ લગાડવા બરાબર છે જે ઠેકાણે નિમિત્ત છે ત્યાં અનાદિતા નહીં. અને જ્યાં અનાદિતા છે ત્યાં નિમિત્ત નહિ. નિમિત્તનો સંબંધ સાદિતાની સાથે થાય છે. જેમ નવીન પુદ્ગલપરમાણુના બે ગુણ અધિક બંધ સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષ દ્વારા થાય છે. આ ઠેકાણે નવીન પુદ્ગલ પરમાણુઓના બંધના સંબંધમાં સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષરૂપ નિમિત્તની કલ્પના કરવી પડે છે, પરંતુ મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોમાં અનાદિ પુદ્ગલપરમાણુના બંધના સંબંધમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે કોઈ મહત્ત્વ રાખતું નથી. કીક તે પ્રકાર નવીન પુદ્ગલપરમાણુઓનું કર્મરૂપ હોવું રાગાદિક નિમિત્તાધીન છે, પરંતુ જે પુદ્ગલપરમાણુઓની અનાદિ કાળથી જ કર્મરૂપ અવસ્થા થઈ રહેલ છે, તેમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી કોઈપણ પ્રયોજનની પુષ્ટિ નથી કરતી. શાસ્ત્રમાં આ વાતનું સમાધાન આમ લખેલ છે—

“ નૈવમ્, અનાદિપ્રસિદ્ધદ્રવ્યકર્મસમ્બન્ધસ્ય તત્ર હેતુત્વેનોપાદાનાત્ ”
કોઈ વાદી પ્રશ્ન કરતા હોય કે જ્યારે રાગાદિક ભાવકર્મના કારણે દ્રવ્યકર્મ

ઉત્તર—નિમિત્તની સંભાવના તો નવીન કાર્યની ઉત્પત્તિમાં જ કાર્યકારી માની જાય છે, અનાદિ અવસ્થામાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે તેની અનાદિતા ઉપર બંધ લગાડવા બરાબર છે જે ઠેકાણે નિમિત્ત છે ત્યાં અનાદિતા નહીં. અને જ્યાં અનાદિતા છે ત્યાં નિમિત્ત નહિ. નિમિત્તનો સંબંધ સાદિતાની સાથે થાય છે. જેમ નવીન પુદ્ગલપરમાણુના બે ગુણ અધિક બંધ સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષ દ્વારા થાય છે. આ ઠેકાણે નવીન પુદ્ગલ પરમાણુઓના બંધના સંબંધમાં સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષરૂપ નિમિત્તની કલ્પના કરવી પડે છે, પરંતુ મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોમાં અનાદિ પુદ્ગલપરમાણુના બંધના સંબંધમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે કોઈ મહત્ત્વ રાખતું નથી. કીક તે પ્રકાર નવીન પુદ્ગલપરમાણુઓનું કર્મરૂપ હોવું રાગાદિક નિમિત્તાધીન છે, પરંતુ જે પુદ્ગલપરમાણુઓની અનાદિ કાળથી જ કર્મરૂપ અવસ્થા થઈ રહેલ છે, તેમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી કોઈપણ પ્રયોજનની પુષ્ટિ નથી કરતી. શાસ્ત્રમાં આ વાતનું સમાધાન આમ લખેલ છે—

“ નૈવમ્, અનાદિપ્રસિદ્ધદ્રવ્યકર્મસમ્બન્ધસ્ય તત્ર હેતુત્વે નોપાદાનાત્ ”
કોઈ વાદી પ્રશ્ન કરે છે કે—જ્યારે રાગાદિક ભાવકર્મનું કારણે દ્રવ્યકર્મ છે,

હૈ, ઓર દ્રવ્યકર્મ કા કારણ રાગાદિક ભાવકર્મ હૈ તો ંસી પરિસ્થિતિ મેં ઇતરેતરાશ્રય દોષ આકર ઉપસ્થિત હોતા હૈ । ઇસ દોષ મેં કિસીકી ભી સ્વતન્ત્ર સત્તા કી સિદ્ધિ નહીં હોતી હૈ । તવ આચાર્ય કહતે હૈ—બેસા મત કહો, કારણ કિ અનાદિ સે હી દ્રવ્યકર્મ કા સમ્બન્ધ સ્વયં સિદ્ધ હૈ, ઓર ઇસી કી વજહ સે જીવ મેં રાગાદિક ભાવોં કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ । અનુભવ સે ભી યહી વાત પ્રતીતકોટિ મેં આતી હૈ કિ—યદિ રાગાદિક ભાવ જીવ કે વિના કિસી નિમિત્ત કે સ્વીકાર કિયે જાવેં તો વે જીવ કે નિજસ્વભાવ હો જાને સે વિભાવ ભાવ કૈસે માને જા સકેંગે ? । બેસી પરિસ્થિતિ મેં જીવ કા નિજભાવ રાગાદિક ભી માનના હોગા । પરન્તુ બેસી માન્યતા શાસ્ત્ર સે વહિર્ભૂત હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મ ઓર આત્મા કા આપ અનાદિ સમ્બન્ધ કહતે હૈ પરન્તુ યહ વાત ઠીક નહીં વૈઠતી, કારણ કિ ઇન દોનોં કા જો સમ્બન્ધ હૈ વહ સંયોગસમ્બન્ધ હી હૈ, તાદાત્મ્યસમ્બન્ધ નહીં । પહિલે દૂધ ઓર પાની કી તરહ યે દોનોં સ્વતન્ત્ર હોં ઓર ફિર પરસ્પર મિલેં તવ ઇનકા સમ્બન્ધ માનના ઠીક હો સકતા હૈ ।

ઉત્તર—જૈસે જલ ઓર દૂધ કા સુવર્ણ ઓર કિટ્લિક કા તુષ ઓર કણ કા, તિલ ઓર તૈલ કા સમ્બન્ધ જનાદિ કા માના જાતા હૈ, ઁસી

દ્રવ્યકર્મનું કારણ રાગાદિક ભાવકર્મ છે તો આવી પરિસ્થિતિમાં ઇતરેતરાશ્રય દોષ આવીને ઉપસ્થિત થાય છે. આ દોષમાં કોઈની પણ સ્વતંત્ર સત્તાની સિદ્ધિ થતી નથી. ત્યારે આચાર્ય કહે છે—એવું ન કહો, કારણ કે અનાદિથી દ્રવ્ય-કર્મનો સંબંધ સ્વયંસિદ્ધ છે. અને એજ કારણથી જીવમાં રાગાદિક ભાવોની ઉત્પત્તિ થાય છે. અનુભવથી પણ એ વાત પ્રતિતીકોટિમાં આવે છે, કે—કદાચ રાગાદિક ભાવ જીવને વિના કોઈ નિમિત્તે સ્વીકાર કરવામાં આવે. તો તે જીવના નિજ ભાવ થઈ જવાથી વિભાવ ભાવ કેવી રીતે માની શકાશે ? આવી પરિસ્થિતિમાં જીવનો નિજભાવ રાગાદિક પણ માનવો પડશે, પરંતુ એવી માન્યતા શાસ્ત્રથી બહિર્ભૂત છે.

પ્રશ્ન—કર્મ અને આત્માનો આપ અનાદિ સંબંધ કહો છે પરંતુ એ વાત ઠીક બેસતી નથી, કારણ કે જન્મેનો જે સંબંધ છે તે સંયોગસંબંધ જ છે. તાદાત્મ્યસંબંધ નહિ, પહેલા દૂધ અને પાણીની માફક જન્મે સ્વતંત્ર હોય અને પછી પરસ્પર મળે ત્યારે સંબંધ માનવો તે ઠીક લાગે છે.

ઉત્તર—જેવી રીતે પાણી અને દૂધ, સુવર્ણ અને કિટ્લિક, ચોખા અને શેતરી, તલ અને તેલનો સંબંધ અનાદિનો માનવામાં આવે છે, તે પ્રકારે તેનો

પ્રકાર इनका भी सम्बन्ध अनादि का ही है। नवीन इनका सम्बन्ध नहीं हुआ है। इनका परस्पर में संयोगसम्बन्ध ही है, ऐसा जो कहा जाता है वह आगामी काल में इनकी भिन्नता को देखकर ही। अनादि से मिले हुए होने पर भी ये जुदे-जुदे हो जाते हैं, इससे अनुमान होता है कि ये पहिले से भी जुदे हैं। परस्पर संयोगसंबंधविशिष्ट होने पर भी ये दोनों पदार्थस्वस्वरूपापेक्षया भिन्न भिन्न ही है। यदि भिन्न न हों तो फिर मुक्ति इन के पृथक् होने से जो जीवात्मा को प्राप्त होती है, वह कैसे हो सकेगी। अतः जीव और कर्म का संबंध अनादि का ही है सादि नहीं।

प्रश्न—कर्म जब पुद्गलपिंडरूप हैं, तब वे घटपटादिक की तरह इन्द्रियगम्य क्यों नहीं होते।

उत्तर—स्थूल-स्थूल १, स्थूल २, स्थूल-सूक्ष्म ३, सूक्ष्म-स्थूल ४, सूक्ष्म ५, और सूक्ष्म-सूक्ष्म ६, इस प्रकार सिद्धान्तकारों ने पुद्गल को इन छह विभागों में विभक्त किया है। इनमें कागज, लकड़ी, कलम, दावात आदि स्थूल-स्थूल पुद्गल हैं, इनमें कठोर वस्तुओं का समावेश है। स्थूल-स्थूल वस्तुएँ आपस में छिन्न भिन्न होने पर अपने आप फिर मिल नहीं सकती १।

પણ સંબંધ અનાદિ કાળનો છે. નવીન તેનો સંબંધ થયો નથી. તેનો પરસ્પરમાં સંયોગસંબંધ જ છે એવું જે કહેવામાં આવે છે તે આગામી કાળમાં તેની ભિન્નતાને દેખીને જ કહેવામાં આવે છે. અનાદિથી તેઓ મળેલ છે છતાં તે જુદા જુદા થઈ જાય છે, તેથી અનુમાન થાય છે કે પહેલાંથી જ જુદા છે. પરસ્પર સંયોગસંબંધવિશિષ્ટ હોવા છતાં પણ એ બંને પદાર્થ સ્વસ્વરૂપાપેક્ષયા ભિન્ન જ રહેલ છે. જે જુદા નહિ હોત તો પછી મુક્તિ તેના પૃથક્ થવાથી જે જીવાત્માને પ્રાપ્ત થાય છે તે કેવી રીતે થઈ શકે, માટે જીવ અને કર્મનો સંબંધ અનાદિ છે સાદિ નહિ.

પ્રશ્ન—કર્મ જ્યારે પુદ્ગલપિંડરૂપ છે, ત્યારે તે ઘટપટાદિકની માફક ઇન્દ્રિયગમ્ય કેમ નથી થતાં

ઉત્તર—સ્થૂલ-સ્થૂલ ૧, સ્થૂલ ૨, સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ ૩, સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ ૪, સૂક્ષ્મ ૫, અને સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મ ૬, આ પ્રકારે સિદ્ધાંતકારોએ પુદ્ગલોને છ વિભાગોમાં વિભક્ત કરેલ છે. તેમાં કાગળ, લાકડી, કલમ, ખડીઓ આદિ સ્થૂલ-સ્થૂલ પુદ્ગલ છે, તેમાં કઠોર વસ્તુઓનો સમાવેશ છે, સ્થૂલ-સ્થૂલ વસ્તુઓ અંદરોઅંદર છિન્નભિન્ન થવાથી પોતાની એજે ફરી મળી શકતી નથી ૧, સ્થૂલ-વહેવાવાળી ચીજો, જેમ

સ્થૂલ-બહને વાલી चीजें, जैसे पानी दूध घृत वगैरह २। स्थूल-सूक्ष्म-जो देखने में मोटी हों, परन्तु हाथों से पकड़ी न जा सकें, जैसे प्रकाश धूप और छाया आदि ३। सूक्ष्म-स्थूल-जो देखने में न आवें ऐसी सूक्ष्म हों, परन्तु भारी कार्य कर सकें, जैसे हवा शब्द इत्यादि ४। सूक्ष्म-जो पुद्गल-पिंड इतने सूक्ष्म हैं कि वे किसी भी इन्द्रिय से ग्रहण न हो सकें, जैसे कर्मणवर्गणाएँ ५। सूक्ष्म-सूक्ष्म-दो परमाणुओं का स्कंध या एक परमाणु ६। इन छह भेदों में कर्मपुद्गलपिंड सूक्ष्म है, अतः वह इन्द्रिय-गम्य नहीं हो सकता।

प्रश्न—कर्म की सत्ता तब कैसे जानी जाती है ?

उत्तर—उसके कार्य से।

प्रश्न—इन कर्मों का कार्य क्या है ?

उत्तर—आत्मा के ज्ञानादિક गुणों का घात करना, केवलज्ञान की ज्ञानावरण, अनन्त दर्शन की दर्शनावरण, अव्याबाध की वेदनीय, क्षાયिक सम्यक्त्व की मोहनीय, अवगाहनत्व का आयु, सूक्ष्मत्व गुण का नाम, अगुरुलघु गुण का गोत्र और अनन्तवीर्य का अन्तराय घात करता है। तथा एक जीव सुखी है और एक जीव दुःखी है, एक विद्वान् है एक

પાણી, દૂધ, ઘી વિગેરે ૨, સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ-જે દેખવામાં મોટી હોય છે પરંતુ હાથેથી પકડી શકાતી નથી, જેમ પ્રકાશ, ધૂપ, છાયા આદિ ૩, સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ-જે દેખવામાં ન આવે એવી સૂક્ષ્મ હોય પણ ભારી કામ કરી શકે, જેમ હવા, શબ્દ ઇત્યાદિ ૪, સૂક્ષ્મ-જે પુદ્ગલપિંડ એટલા સૂક્ષ્મ છે કે તે કોઈપણ ઇન્દ્રિયથી ઘડણ થઈ ન શકે, જેમ કાર્મણવર્ગણાઓ ૫, સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મ-જે પરમાણુઓના સ્કંધ અને એક પરમાણુ ૬, આ છ ભેદોમાં કર્મપુદ્ગલપિંડ સૂક્ષ્મ છે, માટે તે ઇન્દ્રિયગમ્ય થઈ શકતા નથી.

પ્રશ્ન—કર્મની સત્તા ત્યારે કેવી રીતે બાણી શકાય ?

ઉત્તર—તેના કાર્યથી.

પ્રશ્ન—તે કર્મોનું કાર્ય શું છે ?

ઉત્તર—આત્માના જ્ઞાનાદિક ગુણોનો ઘાત કરવો, કેવળજ્ઞાનનો જ્ઞાનાવરણ, અનન્તદર્શનનો દર્શનાવરણ, અવ્યાબાધનો વેદનીય, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વનો મોહનીય, અવગાહ તત્ત્વનો આયુ, સૂક્ષ્મત્વ ગુણનો નામ, અગુરુલઘુગુણનો ગોત્ર અને અનન્ત વીર્યનો અન્તરાય ઘાત કરે છે. તેથી એક જીવ સુખી છે અને એક જીવ દુઃખી છે, એક વિદ્વાન છે એક મૂર્ખ છે, એક સખલ છે એક કમજોર છે, એક રાત

મૂર્ખ છે, એક સવલ છે એક કમજોર છે, એક રાત્રિન સુખ ચેન મેં મસ્ત બના રહતા છે એક દર દર કા ભિચારી બના હુઆ છે, યહ સબ કિસ કા કાર્ય છે? કહના પડેગા કર્મ કા। યહ જ્ઞાનાવરણાદિકર્મરૂપ પર્યાય કાર્મણવર્ગણાઓં કી હુઈ છે। કાર્મણવર્ગણા પુઙ્ગલ દ્રવ્ય છે, જો જીવ કે રાગાદિક ભાવોં કે નિમિત્તવશ જ્ઞાનાવરણાદિ પર્યાયરૂપ પરિણત હો જાતા છે, જિસ પ્રકાર મૃતિકા મેં નિમિત્તાધાન ઘટપર્યાય હુઆ કરતી છે। ઇસ પ્રકાર કી પર્યાય ડન કાર્મણવર્ગણાઓં મેં અનાદિકાલીન છે- નવીન નહીં છે, ઓર યહ જીવાત્મા મી ડન કર્મપર્યાયોં સે અનાદિકાલ સે હી પરતન્ત્ર હો રહા છે। ઇસકી ઇસ પરતન્ત્રતારૂપ બંધદશા કા કોઈ નિશ્ચિત સમય નહીં છે, અતઃ અનાદિકાલ સે યહ કર્મોં કે જાલ મેં ફંસા છે, એસા કહા જાતા છે। અનાદિતા ઓર અનંતતા એવં સાદિતા કા સંબંધ છે સિફ અનંતતા કા હી નહીં।

ચારિત્રારાધન કરને સે આત્મા કે કર્મોં કા નાશ હોતા છે, ઇસકા અભિ- પ્રાય યહી છે કિ-આત્મા કે કર્મપર્યાયોં કા નાશ હો જાતા છે, ક્યોં કિ કર્મદ્રવ્ય કા કર્મી મી નાશ નહીં હોતા। કર્મપર્યાય કા હી નાશ હોતા છે। જિસ કાર્મણ દ્રવ્ય મેં પહિલે કષાયાદિક કે નિમિત્ત સે કર્મરૂપ પર્યાય

દિવસ સુખચેનમા મસ્ત બન્યો રહે છે, એક ઘરઘરનો ભિખારી બનેલ છે. આ બધા કેના કાર્યો છે? કહેવુ પડશે કે કર્મના આ જ્ઞાનાવરણાદિકર્મરૂપ પર્યાય કાર્મણ વર્ગણાઓની થયેલી છે કાર્મણવર્ગણા તે પુઙ્ગલદ્રવ્ય છે જે જીવના રાગાદિક ભાવોના નિમિત્તવશ જ્ઞાનાવરણાદિપર્યાયરૂપ પરિણત થાય છે. જે પ્રકારે મૃત્તિકામાં નિમિત્તાધાન ઘટપર્યાય થાય છે તે પ્રકારની પર્યાય તે કાર્મણ વર્ગણાઓમાં અનાદિ કાલીન છે, નવીન છે નહિ. અને આ જીવાત્મા પણ તે કર્મપર્યાયોથી અનાદિ કાળથી જ પરતંત્ર થઈ રહેલ છે. તેની આ પરતંત્રતારૂપ બંધદશાનો કોઈ નિશ્ચિત સમય નથી, માટે અનાદિ કાળથી આ કર્મોની જાળમાં ફસેલ છે એવું કહેવામાં આવે છે. અનાદિતા અને અનંતતા એવ સાદિતાનો સંબંધ છે ફક્ત અનંતતાનો જ નહિ

ચારિત્રારાધન કરવાથી આત્માના કર્મોનો નાશ થાય છે. તેનો અભિપ્રાય એ છે કે આત્માના કર્મપર્યાયોનો નાશ થાય છે, કારણ કે કર્મદ્રવ્યનો કોઈ વખત નાશ થતો નથી, કર્મપર્યાયોનો જ નાશ થાય છે કાર્મણ દ્રવ્યમાં પહેલા કષાયાદિકના નિમિત્તથી કર્મરૂપ પર્યાયો બની હતી, તે નિમિત્ત દૂર થવાથી તે દ્રવ્ય કર્મરૂપ પર્યાયથી નિયત થાય છે, કાર્મણવર્ગણારૂપ દ્રવ્ય સામાન્ય છે, તેમાં

હોતી થીં, ઉસ નિમિત્તકે હટ જાને પર વહી દ્રવ્ય અકર્મરૂપ પર્યાય સે સ્થિત હો જાતા હૈ । કાર્મણવર્ગણારૂપ દ્રવ્ય સામાન્ય હૈ, ઉસ મેં જ્ઞાનાવરણાદિરૂપ કર્મપ્રકાર નહીં હૈ । જબ વહ કર્મરૂપ બનતા હૈ, તબ ઉસમેં જ્ઞાનાવરણાદિ પ્રકાર હોતે હૈં । જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મપ્રકાર કી સ્થિતિ જબ પૂર્ણ હો જાતી હૈ, અથવા તપ સંયમ કે દ્વારા જબ ઉસકા વિનાશ કિયા જાતા હૈ તબ વહ આત્મા સે પૃથક્ હો જાતા હૈ, ઇસ કા ભાવ યહી હૈ કિ વહ કાર્મણ દ્રવ્ય ઉનરે પર્યાયોં સે રહિત હોકર અપને મૂલ સ્વભાવ સે વહાં સ્થિત રહતા હૈ, દ્રવ્ય કા કમી મી વિનાશ નહીં હોતા । સુવર્ણ અથવા મણિ સે જિસ પ્રકાર ઉનકે મલ કી નિવૃત્તિ હોતી હૈ, ઉસી પ્રકાર આત્મા સે મી કર્મપર્યાય કી નિવૃત્તિ હોતી હૈ । એસા હોને પર જીવ કી આત્યન્તિક શુદ્ધિ હો જાતી હૈ । સકલકર્મપર્યાય કે વિનાશ હોને પર મૂલ દ્રવ્ય કા વિનાશ નહીં હોતા હૈ । જિસ પ્રકાર ઘટપર્યાયકે વિનાશ હોને પર મૃત્તિકા અઘટ પર્યાય સે સ્થિત રહતી હૈ, ઇસી પ્રકાર સકલપર્યાયકે વિનાશ હોને પર મી કર્મદ્રવ્ય અકર્મપર્યાય સે આક્રાન્ત હો જાતા હૈ, દ્રવ્ય અનન્ત પર્યાયવાલા હૈ । જિસ પ્રકાર કાર્મણ દ્રવ્ય કી પર્યાય કર્મ હૈ ઉસી પ્રકાર અકર્મ મી ઉસકી એક પર્યાય હૈ । વિવક્ષિત જીવ કી અપેક્ષા સે હી ઉસમેં કર્મ ઓર અકર્મ પર્યાય રહતી હૈ । સંસારી

જ્ઞાનાવરણાદિરૂપ કર્મપ્રકાર નથી. જ્યારે તે કર્મરૂપ બને છે ત્યારે તેમાં જ્ઞાનાવરણાદિ પ્રકાર થાય છે. જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મપ્રકારની સ્થિતિ જ્યારે પૂર્ણ થાય છે, અથવા તપ સંયમ દ્વારા જ્યારે તેનો વિનાશ કરવામાં આવે છે ત્યારે તે આત્માથી પૃથક્ થાય છે. તેનો ભાવ એ છે કે તે કાર્મણ દ્રવ્ય તે તે પર્યાયથી રહિત થઈને પોતાના મૂલ સ્વભાવમાં ત્યાં સ્થિત રહે છે. દ્રવ્યનો કોઈ વખત પણ વિનાશ થતો નથી. સુવર્ણ અથવા મણિથી જે પ્રકારે તેના મલની નિવૃત્તિ થાય છે તે પ્રકારે આત્માથી પણ કર્મપર્યાયની નિવૃત્તિ થાય છે. એવું બનવાથી જીવની આત્યન્તિક શુદ્ધિ થાય છે. સકલ કર્મપર્યાયનો વિનાશ થવાથી મૂલ દ્રવ્યનો વિનાશ થતો નથી. જે પ્રકારે ઘટપર્યાયનો વિનાશ થવાથી મૃત્તિકા અઘટપર્યાયથી સ્થિત રહે છે તે પ્રકારે સકલ પર્યાયનો વિનાશ થવાથી કર્મ દ્રવ્ય અકર્મપર્યાયથી આક્રાન્ત થાય છે. દ્રવ્ય અનન્ત પર્યાયવાલા છે.

જે પ્રકારે કાર્મણ દ્રવ્યની પર્યાય કર્મ છે તે પ્રકારે અકર્મપર્યાય પણ તેની એક પર્યાય છે. વિવક્ષિત જીવની અપેક્ષાથી જ તેમાં કર્મ અને અકર્મપર્યાય

જીવોં મેં હસ વર્ગણા કા કર્મરૂપ પર્યાય સે પરિણમન હૈ, ઓર શુદ્ધ આત્મદ્રવ્ય કી અપેક્ષા અકર્મપર્યાયરૂપસે ।

જિસ પ્રકાર સુવર્ણ સે ડસકે કિટ્કાદિરૂપ મૈલ કા સંબંધ પુટપાકાદિ દ્વારા દૂર હોતા હુઆ દેખા જાતા હૈ ડસી પ્રકાર આત્મા મેં અનાદિકાલ સે સંબંધિત ઇન કર્મોંકા વિયોગ મી તપ સંયમ રૂપ સાધન દ્વારા દૂર હો જાતા હૈ । ઇસ મૈલ કે પૃથક્ હોને પર શુદ્ધ સુવર્ણ કી તરહ યહ આત્મા મી શુદ્ધ હોકર અપની અસલી સ્વરૂપ કો પાતા હૈ ।

સંયમી મુનિ કે લિયે ઉપદેશ દેતે હૈ—‘ઈણમેવ’ ઇત્યાદિ । કર્મોં કો આત્મા સે પૃથક્ કરનેવાલે ચારિત્ર કી જો આરાધના કરતે હૈં વે ધ્રુવચારી કહલાતે હૈં । અથવા ધ્રુવ નામ મોક્ષ કા હૈ । કાર્ય ઓર કારણ મેં અભેદ સંબંધ હોને સે મોક્ષ કે કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન, તપ, જ્ઞાન ઓર ક્રિયા આદિ મી ધ્રુવ હૈં । ઇનકો મી પાલન કરને કે સ્વભાવવાલે ધ્રુવચારી હૈં । જો મુનિ ધ્રુવચારી હૈં વે અસંયમ જીવન કી, અથવા પૂર્વ મેં ભોગે હુણ વિષયાદિક ભોગોં કી કર્મોં મી ઇચ્છા નહીં કરતે હૈં । જ્ઞ-પરિજ્ઞા સે સંસારકા સ્વરૂપ અથવા ઇસ વાત કો જાન કર કિ—‘અસંયમ જીવન વ્યતીત કરને સે જીવ કો ઇસ સંસાર મેં વારંવાર જન્મ ઓર મરણ કે ચક્રર મેં

રહે છે સંસારી જીવોમાં આ વર્ગણના કર્મરૂપ પર્યાયથી પરિણમન છે, અને શુદ્ધ આત્મદ્રવ્યની અપેક્ષા અકર્મપર્યાય રૂપથી

જેવી રીતે સુવર્ણથી તેના કિટ્કાદિરૂપ મેલનો સંબંધ પુટપાકાદિદ્વારા દૂર થતો દેખવામાં આવે છે તેવી રીતે આત્મામાં અનાદિ કાળથી સંબંધિત આ કર્મોનો વિયોગ પણ તપસંયમરૂપ સાધનદ્વારા દૂર થાય છે આ મેલના પૃથક્ થવાથી શુદ્ધ સુવર્ણની માફક આ આત્મા પણ શુદ્ધ બની પોતાના અસલ સ્વરૂપને મેળવે છે

સંયમી મુનિ માટે ઉપદેશ આપે છે—‘ઈણમેવ’ ઇત્યાદિ. કર્મોને આત્માથી પૃથક્ભૂત કરવાવાળા ચારિત્રની જે આરાધના કરે છે તે ધ્રુવચારી કહેવાય છે. અને ધ્રુવ નામ મોક્ષનું છે કાર્ય અને કારણમાં અભેદ સંબંધ હોવાથી મોક્ષના કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન તપ જ્ઞાન અને ક્રિયા આદિ પણ ધ્રુવ છે તેનું પણ પાલન કરવાવાળા સ્વભાવી ધ્રુવચારી છે જે મુનિ ધ્રુવચારી છે તે અસંયમ જીવનની અથવા પૂર્વમાં ભોગવેલા વિષયાદિક ભોગોની કદી પણ ઇચ્છા કરતા નથી. જ્ઞ પરિજ્ઞાથી સંસારનું સ્વરૂપ અથવા તે વાતને જાણીને પણ અસંયમ જીવન વ્યતીત થવાથી જીવને આ સંસારમાં વારંવાર જન્મ અને મરણના ચક્રરમાં પડવું પડે છે.

યદ્વા—‘સङ્ક્રમણે’ इतिच्छाया, तत्र सङ्क्रम्यते=प्राप्यते मोक्षोऽनेनेति सङ्क्रमणं=ज्ञानादित्रिकं, तत्रैव चरेत्=तत्परो भवेत्, आत्महितार्थिभिः संयमे दृढ-
पड़ना पड़ता है, इस लिये तप, संयम और नियમों का पालन सर्व
श्रेयस्कर है, इनका पालन कभी भी विफल नहीं हो सकता’ इस प्रकार
जिसका मन उनके पालन करने में अडोल और अंकप है, मन की लगन
से जो तप संयम आदि के पालन करने में दत्तावधान है, तथा जिसके
हृदयमें जिनेन्द्रवचनों के प्रति दृढ़ आस्था है, जो ये अच्छी तरह से
समझता है कि—‘भगवान् वीतराग प्रभु का बनाया हुआ यह मार्ग है किसी
छद्मस्थ का नहीं, संयम की आराधना से कर्मों की निर्जरा होती है, अतः
मुझे इसका परिपालन सम्यक् रीति से ही करना चाहिये अन्यथा अनन्त
संसार का पथिक बनना पड़ेगा, यदि मुझे अपने गृहीत मार्ग से च्युत
करने के लिये परीषद् और उपसर्ग भी आड़े आवें तो मुझे उनकी भी
कुछ परवाह नहीं है, मैं अंकप बन उनका भी सामना करने के लिये
तैयार हूँ’ इस प्रकार अशंकितमन और दृढप्रतिज्ञ होकर अपने गृहीत
मार्गको संयमी आराधना करे ।

सूत्र में “संकमणे” इस शब्द की छाया टीकाकार ने एक तो
“अशंकमनाः” यह की है जिसका अर्थ ‘निःशंकितमन हो कर तप
संयम का पालन करे’ यह होता है । दूसरी “संकमणे” की छाया

માટે તપ-સંયમ અને નિયમોનું પાલન સર્વ શ્રેયસ્કર છે. તેનું પાલન કોઈ વખત પણ
વિફળ થતું નથી. આ પ્રકારથી જેનું મન તેના પાળવામાં મક્કમ અને અકંપ છે, મનની
લગનથી જે તપ સંયમ આદિના પાલન કરવામાં દત્તાવધાન છે, તથા જેના હૃદ-
યમાં જિનેન્દ્રવચનો પ્રતિ દૃઢ આસ્થા છે, જે સારી રીતે જાણે છે કે ભગવાન
વીતરાગ પ્રભુનો બનાવેલો આ માર્ગ છે, કોઈ છદ્મસ્થનો નથી. સંયમની આરા-
ધનાથી કર્મોની નિર્જરા થાય છે, માટે મારે તેનું પરિપાલન સમ્યક્ રીતિથી જ
કરવું જોઈએ, અન્યથા અનંત સંસારનો પથિક બનવો પડશે, જે મારે પોતાના
ગૃહીત માર્ગથી ચ્યુત કરવા માટે પરીષદ અને ઉપસર્ગ પણ આડા આવે તો
મને તેની પણ કોઈ પરવાહ નથી. હું અકંપ બની તેનો પણ સામનો કરવા
તૈયાર છું, તેવા પ્રકારે અશંકિતમન અને દૃઢપ્રતિજ્ઞ બનીને પોતાના ગૃહીત
માર્ગની સંયમી આરાધના કરે.

સૂત્રમાં “સંકમણે” આ શબ્દની ટીકાકારે એક તો “અશકમના.” છાયા કરી
છે જેનો અર્થ ‘નિઃશકિતમન થઈ, તપ સંયમનું પાલન કરે’ તેમ થાય છે.

ર્થાવ્યમ્ । વાર્ધક્યે પરુપરારિ વા ધર્મ કરિષ્યામીતિ ચેતસિ ન ચિન્તયેદિત્યર્થઃ, યતઃ ‘કાલસ્ય’ કાલઃ=મૃત્યુસ્તસ્ય, અનાગમઃ=અપ્રાપ્તિર્નાસ્તિ=ન વર્તત, યતઃ કોઽપિ ક્ષણો ન તાદૃગ્ યસ્મિન્મૃત્યોરાગમનસમ્ભવો નાસ્તિ, તસ્માદહિંસાદિષુ સાવધાનેન ક્ષણ-લવમુહૂર્તાદિસમયેષ્વપ્રતિવન્ધવિહારિણાઽઽત્મૌપમ્યેન ભવિતવ્યમિતિ તાત્પર્યમ્ ॥મૂ० ૪॥

“સંક્રમણે” એસી મી હોતી હૈ । જિસકે દ્વારા મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો હોતી હૈ ઉસકા નામ સંક્રમણ હૈ । વહ સમ્યગ્દર્શનાદિક રત્નત્રય હૈ । હનકે દ્વારા હી જીવ મુક્તિ કા લાભ કરતા હૈ, અતઃ સાવધાન મન હો કર હનકે પરિપાલન કરને મેં સંયમી મુનિ કો તત્પર રહના ચાહિયે, યહ સૂત્રકાર કા આદેશ વચન હૈ । ‘પર પરાર જબ સમય આવેગા તબ ધર્માચરણ કરૂંગા, અમી સમય નહીં હૈ’ હસ પ્રકાર કા ધર્માચરણ કે લિયે વહાના નહીં કરના ચાહિયે । એસા વહાના આત્મહિતાર્થી કે લિયે ઉચિત નહીં હૈ । પહેલે કહા ગયા હૈ કિ-“નાસ્તિ કાલસ્યાનાગમઃ” એસા કોઈ મી સમય નહીં હૈ કિ જિસમેં મૃત્યુકે આને કી સંભાવના ન હો, અતઃ યહ સમજ્ઞ કર કિ-“કાલ પીછે લગા હુવા હૈ, કબ યહાં સે જાના પડેગા” ધર્માચરણ કે લિયે પ્રમાદી ન વને । જો મી જિતના મી સમય મિલે-ધર્મ કી આરાધના કરતા રહે । સંયમી મુનિ અપને ગૃહીત અહિંસાદિવ્રતોં મેં સાવધાન હોકર એક ક્ષણ એક લવ એક મુહૂર્ત મી પ્રતિવન્ધવિહારી ન વને, અર્થાત્ અપ્રતિવન્ધવિહારી હોકર વિચરે ॥ સૂ० ૪ ॥

જેના દ્વારા જીવને મુક્તિની પ્રાપ્તિ થાય છે તેનું નામ સંક્રમણ છે તે સમ્યગ્દર્શનાદિક રત્નત્રય છે. તેના દ્વારા જ જીવ મુક્તિનો લાભ કરે છે માટે સાવધાન મન રાખીને તેનું પરિપાલન કરવામાં સંયમી મુનિએ તત્પર રહેવું જોઈએ, એ સૂત્રકારનું આદેશ વચન છે. ‘આવતી કે તેની આગલની શાલ જ્યારે સમય આવશે ત્યારે ધર્મ કરીશ, હમણા સમય નથી’ આવા પ્રકારનું ધર્માચરણ માટે બહાનું કરવું જોઈએ નહિ એવું બહાનું આત્મહિતાર્થી માટે ઉચિત નથી પહેલાં કહેવામાં આવેલ છે કે-“નાસ્તિ કાલસ્યાનાગમ” એવો કોઈ પણ સમય નથી જેમાં મૃત્યુને આવવાની સંભાવના ન હોય, માટે એવું સમજીને કે “કાળ પછવાડે જ લાગેલો છે, ક્યારે આડીંથી જીવ પડશે” ધર્માચરણ માટે પ્રમાદી ન બને જેટલો પણ વખત મળે તેટલો વખત ધર્મની આરાધના કરતો જ રહે

સંયમી મુનિ પોતાના ગૃહીત અહિંસાદિ વ્રતોમાં સાવધાન બનીને એક જ એક લવ એક મુહૂર્ત પણ પ્રતિબન્ધવિહારી ન બને, અર્થાત્ અપ્રતિબન્ધવિહારી બનીને વિચરે ॥ સૂ० ૪ ॥

ઉક્તં સંયમિજીવનસ્વરૂપમ્, અથાસંયમિજીવનસ્વરૂપમાહ—‘સઁવે પાણા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સઁવે પાણા પિયાડયા સુહસાયા દુઃખપડિકૂલા અપિ-
યવહા પ્રિયજીવણા જીવિડકામા સઁવેસિં જીવિયં પ્રિયં, તં પરિ-
ગિજ્ઞ દુપયં ચડપ્પયં અભિજુંજિયાણં સંસિંચિયાણં તિવિહેણ
જાડવિ સે તત્થ મત્તા ભવઙ્ અપ્પા વા વહુયા વા સે તત્થ ગઢિઁ
ચિટ્ઢ મોયણાઁ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—સર્વે પ્રાણાઃ પ્રિયાયુષઃ સુખાસ્વાદાઃ દુઃખપ્રતિકૂલા અપ્રિયવધાઃ
પ્રિયજીવના જીવિતુકામાઃ સર્વેષાં જીવિતં પ્રિયમ્, તત્પરિગૃહ્ય દ્વિપદં ચતુષ્પદમભિ-
યુજ્ય સ્વલુ સંસિચ્ય સ્વલુ ત્રિવિધેન યાડપિ તસ્ય તત્ર માત્રા ભવત્યલ્પા વા વહુકા
વા સ તત્ર ગૃહ્યસ્તિષ્ઠતિ ભોજનાય ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—‘સર્વે’ ઇત્યાદિ, સર્વે=નિશ્ચિલાઃ, પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ સંસારિણઃ, પ્રિયા-
યુષઃ=પ્રિયજીવિતા ભવન્તિ, યો જીવો યત્રોચ્ચનીચયોનો જન્મ ગૃહ્ણતિ તત્રૈવ રમતે
જીવિતુમિચ્છતિ ચ વિષકૃમિન્યાયેન; ઉક્તઞ્ચ—

“ અમેજ્ઞમજ્ઞે કીડસ્સ, સુરિંદસ્સ સુરાલણ ।

સમાણા જીવિયાકંઘા, તેસિં મચ્ચુભયં સમં ॥ ” ઇતિ ।

છાયા—“ અમેધ્યમધ્યે કીટસ્ય, સુરેન્દ્રસ્ય સુરાલયે ।

સમાના જીવિતાકાઙ્ક્ષા, તયોર્મૃત્યુભયં સમમ્ ॥ ”

સંયમજીવન કા સ્વરૂપ પ્રકટ કિયા, અબ અસંયમજીવન કા સ્વરૂપ
પ્રકટ કરતે હૈં—‘સઁવે પાણા પિયાડયા’ ઇત્યાદિ ।

સમસ્ત સંસારી જીવોં કો જીવન પ્રિય હૈ, કોઈ મી જીવ ંસા નહીં
હૈ, જિસે અપને જીવન સે મમતા ન હો, વિષ્ટા કા કીડા મી અધિક સે
અધિક જીને કી ઇચ્છા રખતા હૈ । જો જીવ જિસ પર્યાય મેં વર્તમાન હૈ
ઁસે વહી પર્યાય પ્રિય હૈ । વિષ્ટા કે કીડે કી મમતા કો દેરિયે—વહ
યદિ ઁસ સ્થાન સે અલગ કિયા જાતા હૈ તો વહ વહાં સે અલગ હોકર

સંયમ જીવનનું સ્વરૂપ પ્રકટ કર્યું, હવે અસંયમ જીવનનું સ્વરૂપ પ્રકટ કરે
છે—‘સઁવે પાણા પિયાડયા’ ઇત્યાદિ.

સમસ્ત સંસારી જીવને જીવન પ્રિય છે, કોઈ પણ જીવ ંસે નથી જીને
પોતાના જીવનથી મમતા ન હોય. વિષ્ટાનો કીડો પણ વધારેમાં વધારે જીવવાની
ઇચ્છા રાખે છે. જે જીવ જે પર્યાયમાં વર્તમાન છે તેને તે જ પર્યાય પ્રિય છે.
વિષ્ટાના કીડાની મમતાને જીવે—તે કદાચ તે સ્થાનથી અલગ કરવામાં આવે તો

एतेन संयमरहितमानवानां स्वल्पमेवायुस्तत्र शतशो विघ्नसमूहाः । तथा हि मनुजानामायुः प्रायशः शतवर्षपरिमितं भवति । तदर्द्धं रात्रिषु गतम् , अवशिष्टार्द्धं च बालत्वे वृद्धत्वे च न श्रुतचारित्रधर्माचरणकर्तृत्वं जीवस्य भवति । कियदवशिष्टमायुर्नानाविधरोगशोकवियोगादिभिरेवाक्रान्तं भवति, कस्मात्तर्हि सौख्यं प्राणिनां भवेत् ।

मुत्त-પુરીસનિરોહે, જિળ્ળાજિળ્ળે ય ભોયળે વહુસો ।

ઘંસળ ઘોલળ પીલળ, આડસ્સ ડવક્કમા ણ ॥ ૨ ॥

अर्थ पहले आचुका है ।

अतः संयमरहित जीवों का दीर्घकालिक आयु भी अल्प जैसा ही है, इसमें भी हजारों विघ्न आते रहते हैं । विचारिये तो—

इस पञ्चम काल में ज्यादा से ज्यादा सौ वर्ष का आयु है । इस सौ वर्ष के आयु का हिसाब लगाया जाय तो पता लगेगा कि आधा आयु तो सोते २ व्यतीत हो जाता है बाकी जो आधा बचता है उसमें बाल-अवस्था वृद्धावस्था आती है । इन अवस्थाओं में जीव किसी भी प्रकार से धर्मादिक शुभ कार्यों का आचरण नहीं कर सकता । अनेक प्रकार के रोग शोक और वियोगादिजन्य दुःख इसके अवशिष्ट जीवन को सदा त्रस्त किये रहते हैं । यौवन अवस्था में स्त्री का प्रेम इसे आराम नहीं लेने देता । इस पर यह छन्द है—

“ बालपने में ज्ञान न लह्यो, तरुण समय तरुणीरत रह्यो ।

अर्धमृतक सम बूढापनो, कैसे रूप लखे अपनो ॥ १ ॥

मुत्त-પુરીસ-નિરોહે, જિળ્ળાજિળ્ળે ય ભોયળે વહુસો ।

ઘંસળ ઘોલળ પીલળ આડસ્સ ડવક્કમા ણ ॥ ૨ ॥

અર્થ પહેલા આવેલા છે.

માટે સંયમરહિત જીવોની દીર્ઘકાલિક આયુ પણ અલ્પ જેવી જ છે, તેમા પણ હજારો વિઘ્નો આવે છે વિચારીએ તો આ પાંચમા કાળમા વધારેમાં વધારે સો વર્ષની આયુ છે. આ સો વર્ષની આયુનો હિસાબ કરીએ તો માલુમ પડશે કે અડધી આયુ તો સુવામા જ નાચ છે બાકીની બે અડધી આયુ છે તેમાં બાલઅવસ્થા અને વૃદ્ધાવસ્થાનો સમાવેશ છે આ અવસ્થાઓમા જીવ કેઈ પણ પ્રકારે ધર્માદિક શુભ કાર્યોનું આચરણ કરી શકતો નથી. અનેક પ્રકારના રોગ-શોક અને વિયોગાદિજન્ય દુઃખ તેના અવશિષ્ટ જીવનને સદા ત્રસ્ત કરતા છે. યૌવન અવસ્થામા સ્ત્રીનો પ્રેમ તેને આરામ લેવા દેતો નથી, આ છંદ છે.—

भी वहीं पर फिर से प्रविष्ट हो जाता है । वह अपने स्थान को जरा भी नहीं छोड़ना चाहता । इसका कारण सिर्फ एक यही है कि-उसे उसी अवस्था में रह कर अपना जीवन व्यतीत करना इष्ट है । विशाल वैभव के भोक्ता को जिस प्रकार जीने की इच्छा रहा करती है, तथा जिस प्रकार उसे अपना जीवन सबसे अधिक प्रिय है उसी प्रकार समस्त संसारी जीवों की यही हालत है-चाहे वे संज्ञी हों चाहे असंज्ञी । कोई भी प्राणी ऐसा नहीं मिलेगा-जिसे अपने जीवन में अधिकसे अधिक ममता न हो । एक भिखारी को जितना अपने जीवन से मोह है उतना ही मोह चक्रवर्ती को भी अपने जीवन से है । कोई अपना अनिष्ट नहीं चाहता । इस बात की पुष्टि करते हुए टीकाकार कहते हैं-“यो जीवो यत्रोच्चनीचयोर्नौ जन्म गृह्णाति तत्रैव रमते-जीवितुमिच्छति च विष कृमिन्यायेन ” जो जीव जिस ऊँच नीच योनिमें जन्म धारण करता है उसे वही योनि प्रिय बन जाती है-वहीं पर वह आनंद मानता है । जैसे विषके कीड़े को विषमें ही मजा आता है बात भी सत्य है कहा भी है—

“ अमेज्झमज्झे कीडस्स, सुरिंदस्स सुरालए ।

समाणा जीवियाकंखा, तेसिं मच्चुभयं समं ” ॥ १ ॥

પણ તે ત્યાંથી અલગ થઈને પણ ત્યાં જ ફરીથી પ્રવિષ્ટ થાય છે, તે પોતાના સ્થાનને જરા પણ છોડવા યાહતો નથી તેનું કારણ ફક્ત એક એ જ છે કે તેની તે અવસ્થામાં રહીને પોતાનું જીવન વ્યતીત કરવું ઈષ્ટ છે વિશાળ વૈભવના ભોક્તાને જે પ્રકારે જીવવાની ઈચ્છા રહ્યા કરે છે તથા જે પ્રકારે તેને પોતાનું જીવન બધાથી અધિક પ્રિય છે, તે પ્રકારે સમસ્ત સંસારી જીવોની તે જ હાલત છે, ભલે તે સંજ્ઞી હોય કે અસંજ્ઞી. કોઈ પણ પ્રાણી એવો નહિ મળે જેને પોતાના જીવનમાં અધિકથી અધિક મમતા ન હોય. એક ભિખારીને જેટલો પોતાનો જીવ વહાલો છે તેટલો જીવનનો મોહ ચક્રવર્તીને પણ હોય છે. કોઈ પોતાનું અનિષ્ટ યાહતું નથી આ વાતની પુષ્ટિ કરતાં ટીકાકાર કહે છે કે— “યો જીવો યત્રોચ્ચનીચયોર્નો જન્મ ગૃહ્ણાતિ તત્રૈવ રમતે જીવિતુમિચ્છતિ ચ વિષકૃમિ-ન્યાયેન ” જે જીવ જે ઉચ્ચ નીચ યોનિમાં જન્મ ધારણ કરે છે તેની તે જ યોનિ પ્રિય બની જાય છે, ત્યાં જ તે આનંદ માને છે, જેમ વિષના કીડાને વિષમાં જ મળ આવે છે, વાત પણ સત્ય છે. કહ્યું પણ છે.

“ અમેજ્ઝમજ્ઝે કીડસ્સ, સુરિંદસ્સ સુરાલણ ।

સમાણા જીવિયાકંખા, તેસિં મચ્છુભયં સમં ” ॥૧॥

ભુવનત્રયાધિપત્યપ્રાપ્ત્યપેક્ષયાપિ સ્વાયુષ્કસ્યેષ્ટતરત્વાત્, અપિ ચ સુખા-
સ્વાદાઃ=સુખામિલાષિણઃ, અમૃતપાનાદપિ સ્વસુખાનુભવસ્ય શ્રેષ્ઠત્વાત્, દુઃખપ્રતિ-
કૂલાઃ=દુઃખાનમિલાપુકાઃ, વિષભક્ષણાદપિ દુઃખં પ્રત્યધિકદ્વેષવત્ત્વાત્, કિન્ચ-અપ્રિ-
યવધાઃ-અપ્રિયઃ=અનિષ્ટઃ-વધો=મરણં યેષાં તે તથા । પ્રિયજીવનાઃ=પ્રિયં જીવનં
યેષાં તે તથા, અનિશં તદર્થં પ્રવૃત્તત્વાત્, અત એવ જીવિતુકામાઃ જીવિતું કામઃ=
સ્પૃહા યેષાં તે જીવિતુકામાઃ, વર્ષશતાયુષ્કસ્યાન્તિમાવસ્થાયામપિ જીવિતેચ્છયા
નાનાવિધમણિમન્ત્રયન્ત્રૌષધાદ્યર્થં પ્રવૃત્તિર્દર્શનાત્ ।

વિષ્ટા કે કીડેકી ઓર સ્વર્ગ કે અપાર વૈભવ કે ભોક્તા ઇન્દ્રકી મી
જીને કી ઇચ્છા ઓર મરણકા ભય સમાન હૈ, કોઈ નહીં યાહતા કિ હમે
કરાલકાલ કે ગાલકા કવલ (ગ્રાસ) બનના પડે । ક્યોં કિ ત્રીન લોક
કે અધિપતિ બનને કી અપેક્ષા અપના જીવન અધિક પ્રિય હૈ ।

લોક મેં અમૃત કા પાન કરના સબસે અધિક સુખકારી સમજા
જાતા હૈ, પરન્તુ લોક ઇસસે મી અધિક સુખ અપને સુખી હોને મેં માનતે
હૈ । અપને કો સુખી બનાને કે લિયે લોગ હર એક પ્રકાર કે સાધનોં કો
જુટાને મેં કસર નહીં કરતે । કિસી સે મી યદિ યહ પ્રશ્ન કિયા જાય
કિ-તુમ અપને જીવન મેં ક્યા યાહતે હો ? તો શીઘ્ર હી વહાં સે યહી ઉત્તર
મિલેગા કિ-હમ અપને જીવન મેં શાંતિ ઓર સુખ કો યાહતે હૈ । “ દુઃખ-
પ્રતિકૂલાઃ ” જગત મેં કોઈ મી પ્રાણી દુઃખકો નહીં યાહતા હૈ, પ્રત્યેક
પ્રાણી દુઃખકો પ્રતિકૂલ માનતા હૈ, વિષ ભક્ષણ કર લેગા કિન્તુ દુઃખ

વિષ્ટાના કીડાની અને સ્વર્ગના અપાર વૈભવના ભોક્તા ઇન્દ્રની બન્નેની જીવવાની
ઇચ્છા અને મરણનું ભય બન્ને સમાન છે, કોઈ યાહતું નથી કે હું કરાલકાલના
ગાલનો ગ્રાસ બનું, કારણ કે ત્રણ લોકના અધિપતિ બનવાની અપેક્ષા પોતાનું
જીવન અધિક પ્રિય છે.

લોકમાં અમૃતનું પાન કરવું તેને બધાથી અધિક સુખકારી માનવામાં
આવે છે, પરંતુ લોક તેનાથી પણ અધિક સુખ પોતાને સુખી હોવામાં માને છે.
પોતાને સુખી બનાવવા માટે લોક દરેક પ્રકારનાં સાધનોને અજમાવવામાં કસર
કરતાં નથી. કોઈથી એ પ્રશ્ન કરવામાં આવે કે-તમે તમારા જીવનમાં શું યાહો
છો, તો ત્યાંથી તરત જ એવો ઉત્તર મળશે કે-અમે અમારા જીવનમાં શાંતિ
અને સુખને યાહીએ છીએ. “ દુઃખપ્રતિકૂલા ” પ્રત્યેક પ્રાણી દુઃખને યાહતું
નથી, પ્રત્યેક પ્રાણી દુઃખને પ્રતિકૂલ માને છે, જેનું પાન કરી લેશે પણ દુઃખ

ભોગના નહીં ચાહતા। “અપ્રિયવધાઃ પ્રિયજીવનાઃ” સંસાર મેં જીવોં કો મરણ અપ્રિય હોતા હૈં ઓર જીવન પ્રિય હોતા હૈં। જીવોં કો અપના જીવન સર્વ પ્રકાર સે પ્રિય હૈં। ચાહે જિસ કિસીં મીં ઉપાય સે યે અપને જીવનકે સંરક્ષણ કરનેમેં હીં ભાવનાશીલ રહતે હૈં। ઉસ સમય ન્યાય યા અન્યાય, ધર્મ યા અધર્મ આદિ કીં ઇન્હેં થોડીં સીં મીં ચિન્તા નહીં હોતીં। ઇસકા મીં કારણ યહ હૈં કિં યે “જીવિતુકામાઃ” હૈં। શત વર્ષ કીં આયુવાલે કો મીં અન્તિમ ક્ષણતક જીવન કીં ઇચ્છા બનીં હીં રહતીં હૈં। ચાહે ધનીં હો યા નિર્ધન હો, રાજા હો યા રંક હો, વિદ્વાન હો યા મૂર્ખ હો, દીર્ઘાયુષ્ક હો યા અલ્પાયુષ્ક હો કોઈં મીં ક્યોં ન હો કોઈં યહ નહીં ચાહતા કિં મેરીં મૃત્યુ હો જાય, અર્થાત્ મૈં મરજાઝં। સબ હીં અધિક સે અધિક જીને કૈં અમિલાષી રહા કરતે હૈં। થોડાં સા મીં શારીરિક કષ્ટ આને પર “કહીં મૈં મર ન જાઝં” ઇસ ક્યાલ સે અનેક પ્રકારકે મણિ મન્ત્ર યન્ત્ર ઓર ઔષધિ વગૈરહ કૈં ઉપચાર મેં યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરને મેં લગ જાતે હૈં।

યહ પૂર્વોક્ત કથન અસંયમીં જીવોં કીં અપેક્ષા સે હીં કિયા ગયા સમજનાં ચાહિયે, ક્યોં કિં ઇન્હેં હીં અપને પ્રાણ વગૈરહ પ્રિય હોતે હૈં। વેહીં અપનીં જીવનયાત્રા કૈં નિર્વાહ કૈં લિયે યદ્વા તદ્વા પ્રવૃત્તિ કિયા

ભોગવનું આહતા નથી. “અપ્રિયવધા પ્રિયજીવનાઃ” સંસારમાં જીવોને મરણ અપ્રિય લાગે છે. જીવોને પોતાનું જીવન બધા પ્રકારે પ્રિય છે, ભલે કોઈ પણ કોઈ ઉપાયથી પોતાના જીવનનું સંરક્ષણ કરવામાં જ ભાવનાશીલ રહે છે. તે સમય ન્યાય અન્યાય ધર્મ અધર્મ આદિની તેને જરા પણ ચિન્તા થતી નથી, તેનું પણ કારણ એ છે કે તે “જીવિતુકામા” છે, સો વર્ષની આયુષ્યવાળાને પણ અન્તિમ ક્ષણ સુધી જીવનની ઇચ્છા બની રહે છે, ભલે તવંગર હોય અગર નિર્ધન હોય, રાજા હોય કે રંક હોય, વિદ્વાન હોય, કે મૂર્ખ હોય, દીર્ઘાયુષ્ક હોય કે અલ્પાયુષ્ક હોય કોઈ પણ કેમ ન હોય પણ કોઈ એ નથી આહતા કે મારું મોત થાય, અર્થાત્ હું મરી જાઉં, બધા જ અધિકથી અધિક જીવવાના અભિલાષી રહ્યા કરે છે થોડુંક શારીરિક કષ્ટ આવવાથી “કહાય હું મરી ન જાઉં” એવા ખ્યાલથી અનેક પ્રકારના મણિ મન્ત્ર યન્ત્ર અને ઔષધિ વિગેરેના ઉપચારમાં યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરવામાં લાગી જાય છે.

આ પૂર્વોક્ત કથન અસંયમીં જીવોની અપેક્ષાથી જ કરેલ સમજવાનું છે, કે તેને જ પોતાનો પ્રાણ વિગેરે પ્રિય હોય છે, તે જ પોતાના જીવન-નિર્વાહ માટે યદ્વા તદ્વા પ્રવૃત્તિ કરે છે, હું ખોથી ગલરાય છે, અને મદદ

યતઃ સર્વેષાં પ્રાણિનાં ગુરુકર્મણાં જીવિતમ્=અસંયમજીવિતં પ્રિયમ્=ઇષ્ટં ભવતિ, ન તુ લઘુકર્મણામ્, તતઃ કિમિત્યાહ-‘ત’-દિત્યાદિ, તત્તસ્માત્કારણાદ્ દ્વિપદં=દાસી-દાસકર્મકરાદિ, ચતુષ્પદં=હસ્તિહયગોમહિષ્યાદિ પરિગૃહ્ય=સ્વાયત્તીકૃત્ય તતસ્તદેવ દ્વિપદં ચતુષ્પદમ્ ઉપલક્ષણાદન્યદપિ હિરણ્ય-સુવર્ણ-ધન-ધાન્યાદિકં ત્રિવિધેન કરણભૂતેન યોગત્રિક-કરણત્રિકેન, અથવાઽઽત્મના પરેણોભયેન, ચેતનાચેતનમિ-શ્રરૂપેણ વા અભિયુજ્ય, અભિ=આભિમુખ્યેન યુત્તવા=બન્ધરોધાદિના તત્તત્કલ્પિત-સંજ્ઞયા કષ્ટાદિપ્રહારેણ વાહયિત્યા=તેષુ તેષુ કર્મસુ નિયુજ્ય શિક્ષયિત્વેત્યર્થઃ । અપિ ચ-તદેવ સંસિચ્ય ક્રયવિક્રયાદિવ્યવહારેણાભિવદ્ધ્ય, અત્રાપિ ‘ત્રિવિધેને’-ત્યસ્ય

કરતે હૈં । દુઃસ્વોં સે વે ઘબડાલે હૈં । ઓર સદા સાંસારિક સુસ્વોંકે અભિ-લાષી રહતે હૈં । સંયમી જીવોં સેં યે સબ પ્રવૃત્તિયાં ઘટિત નહીં હોતીં । યદ્યપિ ઉન્હેં ભી અપને પ્રાણ પ્રિય હોતે હૈં પરન્તુ જબ સંયમ નેં કોઈ ઘોર પરીષદ્ ઉપસર્ગ આકર ઉપસ્થિત હો જાતે હૈં તબ વે અપને સંયમ કી રક્ષા કે લિયે અપને પ્રાણોં કી ભી પરવાહ નહીં કરતે હૈં । અસંયમી જીવોં કો હી અપના અસંયમ જીવન પ્રિય હોતા હૈ, કારણ કિ યે ગુરુકર્મીં હૈં । લઘુકર્મીં સંયમી જીવોં કો એસા જીવન પ્રિય નહીં હોતા । ઇનકી વિચાર-ધારા સદા આત્મકલ્યાણકારી માર્ગ કી ઓર હી ઝુકતી રહતી હૈ । અસંયમજીવી રાત્રિ દિન પરિગ્રહ-દાસીદાસ, નૌકરચાકર, હાથીઘોડા, ગાયમૈસ, હિરણ્યસુવર્ણ, આદિ કે બઢાને કી ઓર હી અધિકાધિક લાલાયિત હોતે રહતે હૈં । વે ચેતન અચેતન તથા મિશ્ર રૂપ પરિગ્રહ કી જિતની ભી માત્રા પ્રાપ્ત કરતે હૈં-ચાહે વહ થોડી હો યા અધિક હો ડસી

સાંસારિક સુખના અભિલાષી રહે છે. સંયમી જીવોમાં આ બધી પ્રવૃત્તિઓ ઘટિત થતી નથી. જો કે તેને પણ પોતાનો પ્રાણ પ્રિય હોય છે પરંતુ જ્યારે સંયમમાં કેઈ ઘોર પરિષદ્ ઉપસર્ગ આવીને ઉપસ્થિત થાય છે ત્યારે તે પોતાના સંયમની રક્ષા માટે પોતાના પ્રાણોની પણ પરવાહ કરતા નથી.

અસંયમી જીવોને પોતાનું અસંયમ જીવન પ્રિય હોય છે, કારણ કે તે શુદ્ધકર્મી છે. લઘુકર્મી સંયમી જીવોને એવું જીવન પ્રિય નથી હોતું, તેની વિચાર-ધારા સદા આત્મકલ્યાણકારી માર્ગની તરફ જ લાગેલ રહે છે. અસંયમજીવી રાત્રિ દિન પરિગ્રહ-દાસીદાસ, નોકરચાકર, હાથીઘોડા, ગાયમૈસ, હિરણ્યસુવર્ણ આદિને વધારવામાં અધિકમાં અધિક મગ્ન રહે છે. તે ચેતન, અચેતન તથા મિશ્રરૂપ પરિગ્રહની જેટલી પણ માત્રા પ્રાપ્ત કરે છે-ચાહે ભલે થોડી હોય કે

સમ્બન્ધઃ. તસ્ય=અર્થારમ્ભિણઃ. તત્ર દાસીદાસહસ્તિહયાદિપરિગ્રહે. યા=યાવત્પરિ-
માણા માત્રા=પરિગ્રહાંશઃ, સા અલ્પા વા=સ્તોકા અચિરકાલભોગક્ષમા વા, વહુકાવા=
દીર્ઘકાલભોગક્ષમા વા. યદ્વા પ્રમાણતો મૂલ્યતો વાઽલ્પા વહુકા, અલ્પત્વ-વહુત્વે
વાપેક્ષિકે, અતઃ સર્વસ્યાઽપ્યલ્પત્વ-વહુત્વયોઃ સમ્ભવાત્, અલ્પા વહુકા વાઽર્થાદિમાત્રા
યસ્ય, તત્ર=અર્થાદૌ અસંયમજીવી ગૃહઃ=મૂર્ચ્છિતઃ, કૃતાકૃતલઙ્ઘાલઙ્ઘાદ્યાશાપાશૈ-
ર્ગ્રથિતઃ સન્ ભોજનાય=ભવિષ્યદુપભોગાય તદ્દનં સ્વાયત્તીકૃત્ય તિષ્ઠતિ=તત્રૈવાસક્તો
ભવતિ, ન તતો મનસાઽપ્યુપરમત ઇત્યર્થઃ. આરમ્ભપરિગ્રહાસક્તઃ કેવલિપ્રવ્રણં
ધર્મં ન શૃણોતિ, ધર્મશ્રવણમન્તરેણ ન સમ્યગ્દર્શનમ્. તદભાવે સમ્યગ્જ્ઞાનાભાવઃ,
તદભાવે મિથ્યાત્વાભિવૃદ્ધિસ્તથા ચ સંસારપરિભ્રમણં પ્રાણિનાં ભવતીતિ પરિગ્રહ-
ગૃહો નાત્મહિતૈષી ભવતીતિ વર્તુલકાર્યઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

મેં अपनी आवश्यकता की पूर्ति न समझ कर उसके बढ़ाने में ही मग्न बने
रहते हैं । परिग्रह में अल्पता और बहुता यहां पर दो तरह से प्रकट की
गई है—एक काल की अपेक्षासे और दूसरी मूल्य या प्रमाण की अपेक्षा
से । थोड़ेसमय तक, अथवा अधिक समय तक परिग्रह का जीवों के भोग
और उपभोग करने के काम में जो आना वह काल की अपेक्षा से परिग्रह
में अल्पता या बहुता है, या जिनका मूल्य कम ज्यादा हो अथवा प्रमाण
से जिनमें कमती बढ़तीपना हो यह मूल्य या प्रमाण की अपेक्षा से उन
में अल्पता तथा बहुता है, क्योंकि अल्पत्व, बहुत्व, ये दोनों सापेक्ष हैं ।

चार नौकर चाकरों एवं चार चतुष्पदादि कों की अपेक्षा दो नौकर
चाकरों एवं दो चतुष्पदादिकों में प्रमाण की अपेक्षा से, उनके अधिक समय
तक रहने की अपेक्षा से थोड़े समय तक रहनेवालों में काल की अपेक्षा से,

વધારે હોય તેમા તે પોતાની આવશ્યકતાની પૂર્તિ ન સમજીને તેના વધારવામાં જ
મગ્ન બની રહે છે. પરિગ્રહમા અલ્પતા અને બહુતા આ ઠેકાણે બે પ્રકારે પ્રગટ કરેલ
છે. એક કાળની અપેક્ષાથી અને બીજી મૂલ્ય અને પ્રમાણની અપેક્ષાથી થોડા
અમય સુધી અથવા અધિક અમય સુધી પરિગ્રહનુ જીવોને ભોગ અને ઉપભોગ
કરવાના કામમા જે આવવુ તે કાળની અપેક્ષાથી પરિગ્રહમા અલ્પતા અને
બહુતા છે, અને જેનુ મૂલ્ય ઓછુ અધિક હોય, અથવા પ્રમાણથી જેમાં
વધઘટ પણ હોય એ મૂલ્ય અગર પ્રમાણની અપેક્ષાથી તેમા અલ્પતા અને બહુતા
છે, કારણ કે અલ્પત્વ, બહુત્વ. એ બંને સાપેક્ષ છે

ચાર નોકર ચાકરો અને ચાર ચતુષ્પદાદિકોની અપેક્ષા બે નોકર ચાકરો અને
ષ્પદાદિકોમા પ્રમાણની અપેક્ષાથી, તેના અધિક અમય સુધી રહેવાની અપેક્ષાથી

તથા અનેક અધિક મૂલ્યની અપેક્ષા કરનાર મૂલ્યવાળાંમાં મૂલ્યની અપેક્ષાથી અલ્પત્વ છે. તેનાથી વિપરીત બહુત્વ સમજી લેનાર છે.

અસંયમી જીવ જાહે પરિગ્રહની માત્રા તેની પાસે અલ્પ હોય અથવા અધિક હોય તેથી તેને તેની સંતોષ નથી થતી, તે તેના પરિગ્રહને ક્રય વિક્રય આદિ ઉપાયો દ્વારા વધારવાની ચેષ્ટામાં જ રહે છે. ચતુષ્પદાદિ જે સમય ઠીક ૨ રાસ્તે પર નથી ચલતા અથવા કોઈની કલ્યાણ કરતા નથી, તેથી તેને મારતા નથી, ખાંડ પીવાની ઠીક ૨ સમય પર નથી દેતા, તેની પ્રતિ અશિષ્ટ શબ્દોનો પ્રયોગ કરતા નથી, અને રસ્સી આદિથી બાંધવામાં તેને છૂટા અથવા એકસાથે રાખવામાં તેને રાખવામાં, તેની ગર્મી શર્દીની બાધામાં તેને ધ્યાન નથી રાખવામાં, એટલું જાણી લેવામાં નથી કે તેની? આથી તેને ચિન્તા નથી થતી. તે ભવિષ્યકાળમાં ઉપયોગ કરવાની જગ્યાની સદા રક્ષા કરતા રહેતા નથી, અને તેમાં તેને તેના આસક્તિશાળી બનાવવામાં તેને મનમાં નથી તેથી તેને તેની છોડવાની જાણ નથી. આરંભ અને પરિગ્રહના કારણમાં તેની પ્રવૃત્તિ સર્વથા સાધ્ય રહેતી નથી.

જોડા સમયના રહેવાવાળામાં કાળની અપેક્ષાથી, તથા તેના અધિક મૂલ્યની અપેક્ષાથી અલ્પત્વ છે. તેનાથી વિપરીત બહુત્વ સમજી લેવામાં નથી.

અસંયમી જીવ જાહે પરિગ્રહની માત્રા તેની પાસે અલ્પ હોય અથવા અધિક હોય તેથી તેને તેની સંતોષ નથી થતી. તે તેના પરિગ્રહને ક્રય વિક્રય આદિ ઉપાયો દ્વારા વધારવાની ચેષ્ટામાં જ રહે છે. ચતુષ્પદાદિ જે સમય ઠીક ઠીક રસ્તા ઉપર નથી ચલતાં અથવા કોઈનું કલ્યાણ કરતા નથી, તેથી તેને મારતા નથી, ખાંડ પીવાની ઠીક ઠીક સમય ઉપર દેતા નથી, તેની પ્રતિ અશિષ્ટ શબ્દોનો પ્રયોગ કરતા નથી, અને રસ્સી આદિથી બાંધવામાં તેને છૂટા અથવા એકસાથે રાખવામાં તેને રાખવામાં, તેની ગર્મી શર્દીની બાધામાં તેને ધ્યાન નથી રાખવામાં, એટલું જાણી લેવામાં નથી કે તેની? આથી તેને ચિન્તા નથી થતી. તે ભવિષ્યકાળમાં ઉપયોગ કરવાની જગ્યાની સદા રક્ષા કરતા રહેતા નથી, અને તેમાં તેને તેના આસક્તિશાળી બનાવવામાં તેને મનમાં નથી તેથી તેને તેની છોડવાની જાણ નથી. આરંભ અને પરિગ્રહના કારણમાં તેની પ્રવૃત્તિ સર્વથા સાધ્ય રહેતી નથી.

યોઽસંયમજીવી ગૃહોઽનર્થકરમર્થમુપાર્જયન્નર્થપરિરક્ષણં કરોતિ કિન્તુ તસ્ય તદ્વનમનેકપ્રકારેણ નશ્યતીતિ દર્શયતિ-‘તઓ સે’ ઇત્યાદિ ।

વીતરાગપ્રણીત ધર્મ મેં સર્વથા સાવધ પ્રવૃત્તિ કરને કા નિષેધ હૈ । હસ વાત કો તબ હી સમજા જા સકતા હૈ કિ જબ વીતરાગપ્રણીત ધર્મ કો સુનને જાનને ઓર ઉસકે મનન કરને કા અવસર મિલે, પરન્તુ જબ વે સિદ્ધાન્ત કો સુનતે હી નહીં હૈ તબ હસ સિદ્ધાન્ત કો જાન મી કૈસે સકતે હૈં । અતઃ જહાં પર હસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ ચાલૂ હૈ, જિન્હેં અપને કર્તવ્ય કા ખાન હી નહીં હૈ, ઓર જો જાન વૂઝ કર મી ખડ્ડે મેં પડ રહે હૈ, વે કેવલિપ્રણીત ધર્મ કૈ સિદ્ધાન્ત કો અમી તક સમજે હી નહીં હૈં । જિન સિદ્ધાન્ત કૈ સમજે વિના સમકિત જૈસી સુન્દર વસ્તુ કમી મી ઉનકે હાથમેં નહીં આસકતી । હસકે અભાવ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન કા અભાવ ઓર ઉસકે અભાવ સે મિથ્યાત્વ કી વૃદ્ધિ, ઉસકી વૃદ્ધિ સે સંસાર મેં પરિભ્રમણ એસે જીવોં કા અનિવાર્ય હૈ, અતઃ જો આત્મહિત કી કામના કરનેવાલે હૈં ઉનકા યહ ધર્મ હૈ કિ-વે પરિગ્રહ મેં ગૃહ ન વનેં । તમી સંસારસાગર સે ઉનકા આત્મોદ્ધાર હો સકતા હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

જો અસંયમજીવી હૈ ઓર પરિગ્રહ મેં હી આસક્તપરિણતિવાલા બના હુઆ હૈ વહ અનેક અનર્થોંકા ઉત્પાદક દ્રવ્ય કૈ સંગ્રહ કરને મેં હી લવલીન રહતા હૈ । વહ યદ્યપિ કમાયે હુઅ અપને હસ દ્રવ્ય કી હર એક

વીતરાગપ્રણીત ધર્મમા સર્વથા સાવધ પ્રવૃત્તિ કરવાનો નિષેધ છે એ વાતને ત્યારે જ સમજી શકાય છે કે ત્યારે વીતરાગપ્રણીત ધર્મને સાલળવા જાણવા અને તેનું મનન કરવામાં અવસર મળે, પરંતુ ત્યારે તે સિદ્ધાંતને સાલળતો જ નથી ત્યારે તે સિદ્ધાંતને જાણી પણ કેવી રીતે શકે, માટે જે ઠેકાણે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ચાલુ છે, જેને પોતાના કર્તવ્યનું પણ જ્ઞાન નથી અને જે જાણી જોઈને પણ ખાડામાં પડે છે તે કેવલિપ્રણીત ધર્મના સિદ્ધાંતને હજી સુધી સમજ્યા જ નથી જે સિદ્ધાંતને સમજ્યા વિના સમકિત જેવી સુન્દર વસ્તુ કોઈ વખત પણ તેના હાથમાં આવી શકતી નથી. તેના અભાવમાં સમ્યગ્જ્ઞાનનો અભાવ, અને તેના અભાવથી મિથ્યાત્વની વૃદ્ધિ, તેની વૃદ્ધિથી મંચારમાં પરિભ્રમણ એવા જીવોને અનિવાર્ય છે અતઃ જે આત્મહિતની કામના કરવાવાળા છે, તેનો એ ધર્મ છે કે તે પરિગ્રહમાં ગૃહ ન બને ત્યારે જ મંચારમાગરથી તેનો આત્મોદ્ધાર થાય છે ॥ સૂ. ૫ ॥

જે અસંયમજીવી છે અને પરિગ્રહમાં જ આસક્તપરિણતિવાળા બનેલ છે તે અનર્થોના ઉત્પાદક દ્રવ્યનો સંગ્રહ કરવામાં જ તલલીન રહે છે. તે જો કે પોતાના

મૂલમ—તઓ સે ઇગયા વિવિહં પરિસિદ્ધં સંભૂયં મહોવગરણં
ભવઈ, તંપિ સે ઇગયા દાયાયા વા વિભયંતિ, અદત્તહારો વા સે
અવહરઈ, રાયાણો વા સે વિલુંપંતિ, નસ્સઈ વાસે, વિનસ્સઈ વા
સે, અગારદાહેણ વા સે હજ્જઈ, ઇય સે પરસ્સઽદ્દાણ કૂરાઈં કમ્માઈં
બાલે પકુવમાણે તેણ દુક્ખેણ સંમૂઢે વિપ્પરિઆસમુવેઈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—તતસ્તસ્યૈકદા વિવિધં પરિશિષ્ટં સમ્ભૂતં મહોપકરણં ભવતિ, તદપિ
તસ્યૈકદા દાયાદા વા વિભજન્તે, અદત્તહારો વા તસ્યાપહરતિ, રાજાનો વા તસ્ય
વિલુમ્પન્તિ, નશ્યતિ વા તસ્ય, વિનશ્યતિ વા તસ્ય, અગારદાહેન વા તદ્દહ્યતે, ઇતિ
સ પરસ્યાર્થાય કૂરાણિ કર્માણિ બાલઃ પ્રકુર્વાણસ્તેન દુઃખેન સમ્મૂઢો વિપર્યાસ-
મુપૈતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘તત’ ઇત્યાદિ, તતઃ સંગૃહીતધનાત્, સદ્ગ્રહકાલાદ્વા, એકદા =
એકસ્મિન્ કાલે ન સર્વદા કદાચિદિવા વા રાત્રૌ વા । યદ્વા લાભાન્તરાયકર્મક્ષયો-
પશમે ચેત્યર્થઃ, તસ્ય=અર્થસદ્ગ્રહશીલસ્ય વિવિધમ્=અનેકપ્રકારસ્ પરિશિષ્ટમ્ ઉપ-
ભોગોર્વરિતમ્ સમ્ભૂતં સમ્=સમ્યગ્રક્ષણાય ભૂતં સશ્ચિતં, સંવૃતં વા ભૂમ્યાદિનિશ્વા-
પ્રકાર સે રક્ષા કરતા હૈ તો ખી ડસકા વહ દ્રવ્ય અનેક પ્રકાર સે નષ્ટ
હો હી જાતા હૈ, ઇસ વાત કો પ્રકટ કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘તઓ
સે ઇગયા ’ ઇત્યાદિ ।

લાભાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હી જીવોં કો દ્રવ્યાદિકકા લાભ
હોતા હૈ, યહ શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધાન્ત હૈ । ઇસકે અભાવ મેં અનેક પ્રકાર કે
કિયે ગયે પ્રયત્ન ખી દ્રવ્યલાભ કરાને મેં કારણ નહીં હોતે હૈ । ઇસ
લાભાન્તરાય કર્મ કે ઉદય મેં સંગૃહીત દ્રવ્ય ખી નષ્ટ હો જાતા હૈ । ઇસ
કી સ્થિતિ રહના ખી ઇસી કર્મ કે ક્ષયોપશમાધીન હૈ । જવ ઇસકા ઉદય

કમાએલાં દ્રવ્યની દરેક પ્રકારે રક્ષા કરે છે, તો પણ તેનું દ્રવ્ય અનેક પ્રકારથી
નષ્ટ થઈ જાય છે, આ વાતને પ્રગટ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘તઓ સે ’ ઇત્યાદિ

લાભાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમથી જ જીવોને દ્રવ્યાદિક લાભ થાય છે, તે
શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધાન્ત છે. તેના અભાવમાં અનેક પ્રકારના કરેલા પ્રયત્ન પણ દ્રવ્ય
લાભ કરાવવામાં કારણ નથી થતાં. આ લાભાન્તરાય કર્મના ઉદયમાં સંગૃહીત
દ્રવ્ય પણ નષ્ટ થાય છે, તેની સ્થિતિ રહેવી પણ તે કર્મને ક્ષયોપશમાધીન છે,

તર્મિત્યર્થઃ, મહોપકરણં=દ્વિપદચતુષ્પદાદિસમૂહો ભવતિ । તસ્ય સ ધનસમૂહોઽ-
પ્યુપભોગાય ન ભવતીત્યાહ-‘તદપી’-તિ, એકદા=દુર્ભાગ્યોદયે, યદ્વા કદાચિત્
‘દાયાદાઃ’ દાયં=વિભાજ્યદ્રવ્યમાદદતિ=ગૃહ્ણન્તીતિ દાયાદાઃ=સગોત્રાઃ, તસ્ય
ધનાર્જનકષ્ટમનુભવતો જનસ્ય તદપિ દ્વીપાન્તરગમન-દુરારોહપર્વતારોહણ-સ્વન્યા-
દિસ્વનન-રાજસેવા-કૃપિવાણિજ્યાદિરૂપસાવધવ્યાપારૈઃ સ્વપરસન્તાપકૈરુપભોગાય
સમુપાર્જિતસશ્વિતવિવર્દિતં ધનમ્ વિભજન્તે=સ્વસ્વભાગગ્રહણાય વિભાગં કુર્વન્તિ,
પૃથક્કુર્વન્તીત્યર્થઃ, અથવા અદત્તહારઃ, અદત્તમેવ હરતીત્યદત્તહારશ્ચૌરો વા તસ્ય
ધનમપહરતિ=ચોરયતિ ।

રહતા હૈ તબ અનેક પ્રકારકે દ્રવ્યનાશ હોને કે ઉપાય મી જીવોં કો
સ્વયમેવ પ્રાપ્ત હોતે રહતે હૈં । ઉસ સમય બુદ્ધિ મેં મી કુછ એસી વિપરી-
તતા આજાતી હૈ જિસસે દ્રવ્ય કે વ્યય હોને કે ઉપાય મી અચ્છે ઔર
ઉપાદેય પ્રતીત હોને લગતે હૈં । સંસાર મેં કૌન યહ ચાહતા હૈ કિ મેરા
યહ દ્રવ્યાદિક નષ્ટ વિનષ્ટ હો જાય ? પરન્તુ સબ કુછ વિચારતે હુએ મી
યા ઉસકી રક્ષા કે ઉપાય કરતે હુએ મી જો જીવ રાજા સે રંક હો જાતે
હૈં વે હસી બાત કે પ્રબલ પ્રમાણ હૈં ।

હિસ કર્મ કે ક્ષયોપશમ હોને પર જિસ પ્રકાર જીવોંકો દ્રવ્ય કે
આને કે અનેક ઉપાય એવં દ્વાર પ્રાપ્ત હોતે હૈં ઉસી પ્રકાર હિસકે ઉદય મેં
ઉસકે વિનાશ કે અનેક દ્વાર મી ઉન્હેં મિલ જાતે હૈં, યહી બાત સૂત્રકાર
હિસ સૂત્ર મેં પ્રકટ કર રહે હૈં—

ઉસ અર્થસંગ્રહશીલ વ્યક્તિ કે પાસ લાભાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ

ન્યારે તેનો ઉદય રહે છે ત્યારે અનેક પ્રકારના દ્રવ્યનાશ હોવાના ઉપાયો પણ
જીવોને સ્વયમેવ પ્રાપ્ત થાય છે. તે સમય બુદ્ધિમા પણ કોઈ એવી વિપરીતતા
આવી જાય છે જેનાથી દ્રવ્યનો વ્યય હોવાના ઉપાયો પણ સારા અને ઉપાદેય
પ્રતીત થવા લાગે છે. સંસારમાં કોણ એ ચાહે છે કે મારું આ દ્રવ્યાદિક નષ્ટ
વિનષ્ટ થાય, પરન્તુ ચારે બાજુથી વિચારતાં પણ તેની રક્ષાના ઉપાયો કરવા છતાં
પણ જે જીવ રાજાથી રંક થાય છે તે આ વાતનું પ્રબલ પ્રમાણ છે.

આ કર્મના ક્ષયોપશમ થવાથી જે પ્રકારે જીવોને દ્રવ્ય આવવાના અનેક
ઉપાય અને દ્વાર પ્રાપ્ત થાય છે તે પ્રકારે તેના ઉદયમાં તેના વિનાશના અનેક
દ્વાર પણ તેને મળી રહે છે, એ વાત સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરે છે—

તે અર્થસંગ્રહશીલ વ્યક્તિની પાસે લાભાન્તરાય કર્મનો ક્ષયોપશમ થવાથી

હોને પર અનેક પ્રકાર કા ભોગ ઉપભોગ સે બાકી બચા હોને કૈ કારણ ધનાદિ કા સંગ્રહ હો જાતા હૈ “ ધનકો ધન કમાતા હૈ ” હસ લોકોક્તિ કૈ અનુસાર ઉસકૈ સંગૃહીત દ્રવ્ય સે ફિર અનેક ઉપાયોં દ્વારા ઉસે દ્રવ્યાદિકી પ્રાપ્તિ હોને લગતી હૈ । ભોગ ઓર ઉપભોગ કી આવશ્યકતાઈં મી જૈસા જૈસા લાભ હોતા હૈ વૈસે ૨ વધતી જાતી હૈ, ઓર ઉનકી પૂર્તિ કરનેમૈં મી દ્રવ્યાદિક કા વ્યય હોને લગતા હૈ । ભોગવિલાસ કી સામગ્રી જુટાને મૈં તથા મૌજ મજા કરને મૈં લાભાનુસાર દ્રવ્ય કા વ્યય હોતા હૈ । આવશ્યકતા કી પૂર્તિ સે અથવા લેન-દેન કૈ વ્યવહાર સે અવશિષ્ટ દ્રવ્ય કો લોગ, યા તો કિસી બેંક મૈં જમા કરા દેતે હૈં, યા જમીન મૈં ઉસે ગાડ કર રખ દેતે હૈં । જમીન મૈં ન ગાડે તો ઉસે તિજોરિયોં મૈં ભર કર મી એક જગહ રખદેતે હૈં । ઉન્હેં એસે અપને સગોત્રિયોં કા સમાગમ મિલતા હૈ જો ઇન્હેં રાત દિન દુઃખી કિયા કરતે હૈં । અવિભક્ત કુટુંબ હોનેસે કિસી વાતકો લેકર પરસ્પર મૈં જબ કુછ અનબનસી હો જાતી હૈ તબ આપસ મૈં અલગર હોને કી પરિસ્થિતિ આતી હૈ । જબ વિભક્ત હોતે હૈં તબ વે સમસ્ત ધનકો વટવા લેતે હૈં । સગોત્રિયોં કા સમાગમ ધની વ્યક્તિયોં કો કદાચિત્ અનુકૂલ પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા મી મિલ જાવે ઓર વે ધન કો અર્જન કરને મૈં કષ્ટ કા અનુભવ કરનેવાલે ઉસ વ્યક્તિ કૈ ઉસ દ્રવ્ય કો

અનેક પ્રકારના લોગ અને ઉપલોગથી બાકી બચવાને કારણે ધનાદિનો સંગ્રહ થાય છે. “ ધનથી ધન પ્રાપ્ત થાય છે ” આ લોકોક્તિને અનુસાર તેના સંગૃહીત દ્રવ્યથી પછી અનેક ઉપાયો દ્વારા તેને દ્રવ્યાદિકની પ્રાપ્તિ થવા લાગે છે. લોગ અને ઉપલોગની આવશ્યકતાઓ પણ જેમ જેમ લાભ થાય છે તેમ તેમ વધતી જાય છે. અને તેની પૂર્તિ કરવામાં પણ દ્રવ્યાદિકનો વ્યય થવા લાગે છે. લોગ-વિલાસની સામગ્રી મેળવવામાં તથા મોજમજા કરવામાં લાભાનુસાર દ્રવ્યનો વ્યય થાય છે. આવશ્યકતાની પૂર્તિથી અથવા લેણદેણના વ્યવહારથી અવશિષ્ટ દ્રવ્યને લોક અગર કોઈ બેંકમાં જમા કરાવે છે અગર જમીનમાં તેને દાટીને રાખે છે. જમીનમાં ન દાટે તો તેને તિજોરીઓમાં ભરીને પણ એક જગ્યાએ રાખે છે. તેને એવા પોતાના સગોત્રિઓનો સમાગમ મળે છે જે તેને રાતદિવસ દુઃખી કરે છે. અવિભક્ત કુટુંબ હોવાથી કોઈ વાતને લઈને પરસ્પરમાં બ્યારે કાંઈક અણબનાવ થાય છે ત્યારે આપસ આપસમાં અલગ અલગ થવાની તૈયારી બને છે. બ્યારે વિભક્ત થાય છે ત્યારે તે સમસ્ત ધનને વહેંચી લે છે. સગોત્રિઓનો સમાગમ ધની વ્યક્તિઓને કદાચિત્ અનુકૂળ પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા પણ મળી આવે,

एतादृशस्वल्पायुषः कृते च शिरसि परिभ्राम्यदनेकमहाविपत्तिकलापः संयो-
गाद्यर्थी विवेकविकलो मानवोऽनिशमितस्ततः परिभ्रमति । स्वल्पेनैव कालेनायुषः
क्षयोऽवश्यं भावीत्यहो मौढ्यं प्राणिनो यदर्थं सततं परितप्यमानो धावतीति भावः ।

यह हालत है इस जीव की; फिर कहो इसे सुख कैसे प्राप्त हो
सकता है ? फिर भी इतनी छोटी सी आयु को लेकर यह अनेक प्रकार
की शिर पर घूमनेवाली आपत्तिविपत्तियों का कुछ भी ख्याल न कर
रात-दिन पर पदार्थों के अपनाने में ही मस्त हो रहा है, और अपने
कर्तव्य का कुछ भी ख्याल कहीं कर रहा है । अन्त में आयु के समाप्ति
होने पर मृत्युशय्या पर विलाप करते हुए इस जीव का कोई भी रक्षक
नहीं होगा । वे सब कुटुम्बी-जिनके लिये यह रात-दिन परिश्रम करके
अपने खून का पानी कर रहा था-इससे जुदे हो जावेंगे और इसे
फाल्गुन मास की होली की तरह चिता में जला देंगे ।

इस प्रकार आयु की अल्पता को देखता हुआ यह जो नहीं चेत
रहा है यही एक इसकी बड़ी भारी मूर्खता है । जो इससे जुदे हो जाने
वाले हैं उन्हीं के लिये यह रात-दिन महा परिश्रम करने में लगा हुआ
है । इसकी इस महा अज्ञानता पर ज्ञानियों को बड़ा भारी आश्चर्य
होता है । यहां तक-“अप्पं खलु आउयं इहमेगेसिं माणवाणं” इस
वाक्य का अर्थ हुआ है ।

“ बालपनमें ज्ञान न लह्यो, तरुण समय तरुणीरत रह्यो ।

अर्धमृतकसम बूढापनो, कैसे रूप लखे अपनो ॥ १ ॥

आवी डालत छे आ ज़ुवनी. डवे डडो तेने सुभ डेवी रीते प्राप्ति थाय ?
आटली थोडी आयु डोवा छतां ते अनेक प्रकारनी शिर पर घूमवावाणी आपत्ति
विपत्तिओनो. पणु जरा जयाल न डरतां रात-दिन पर पदार्थोने अपनाववाभां न
भर्यो रहे छे, अने पोताना डर्तव्यनो जरा पणु जयाल डरतो नथी. अंतभां
आयुनी समाप्ति थवाथी मृत्युशय्या पर विलाप डरे छे आ ज़ुवनो डोर्ध पणु
रक्षक थशे नडि. आ जधा कुटुंभीजनो भाटे पोताना डोडीनुं पाणुी डरतो डतो
तेनाथी जुडो थर्ध जशे अने तेने ड्रगणु भासनी डोणी भाड्ड चिताभां सणगावी डेशे.

आ प्रकारे आयुनी अल्पताने डेणीने पणु येततो नथी, जेज जेक, ज़ुवनी
मूर्खता छे. जेनाथी जुडं थवानु छे तेवाओना भाटे रात-दिन परिश्रम डडावे
छे. आ तेनी अज्ञानता डपर ज्ञानीओने मोटु आश्चर्य थाय छे. अडीं सुधी-
“ अप्पं खलु आउयं इहमेगेसिं माणवाणं ” आ वाक्यनो अर्थ थयो छे.

જો ઘડી કઠિનતા સે उसने द्वीपान्तरगमन से, दुरारोह पर्वतों के उल्लंघनसे, खानि में पड़े हुए उसके खोदने से, राजा की सेवासे, और अपने एवं पर को सन्ताप करनेवाले कृषि-वाणिज्यादि रूप सावद्य व्यापारों से पैदा किया है सञ्चित किया है और व्याज आदि द्वारा जिस को वृद्धि की है भले ही विभाजित न करें; परन्तु चोरों से द्रव्य की रक्षा करना एक मुश्किल कार्य है। धनी व्यक्तियों के अनेक मित्र और शत्रु हो जाते हैं। जिनका उससे काम निकलता रहता है वे उसके मित्र, और जिनका उससे काम नहीं निकलता वे उसके शत्रु हो जाते हैं। जो मित्र होते हैं वे भी कालान्तर में शत्रु, और जो शत्रु होते हैं वे भी कालान्तर में मित्र बनते हुए देखे जाते हैं। अतः जो पहिले मित्र बन कर शत्रु बन जाते हैं वे सब इसका भेद भाव जान कर चोरों को गुप्त रीति से सब प्रकार की इसकी प्रवृत्ति से परिचित करा देते हैं और अन्त में इसे लुटवा देते हैं। क्षण भर में यह अमीर से गरीब बन जाता है। यदि पुण्योदय से चोरोंको भी इसके द्रव्यको चुराने का साहस न जाग्रत हो और वे इसके ऊपर धाड़ न भी पाडे तो भी अधर्मी राजा की नजर से द्रव्यकी रक्षा करना मुश्किल ही है।

અને તે ધનને ઉપાર્જન કરવામા કષ્ટનો અનુભવ કરવાવાળા તે વ્યક્તિએ તે દ્રવ્યને જે ઘણી મુશ્કેલીથી દરિયાપારથી, મહાન પર્વતોના ઉલ્લંઘનથી, ખાણમાં પહેલાને તેના ખોદવાથી, રાજાની સેવાથી અને પોતાને તેમજ બીજાને સંતાપ કરવાવાળી ખેતી-વાણિજ્યાદિ રૂપ સાવધ વ્યાપારથી પેદા કરેલ છે, સંચિત કરેલ છે, અને વ્યાજ આદિ દ્વારા જેની વૃદ્ધિ કરેલ છે, ભલે તે વિભાજિત ન કરે, પરંતુ ચોરોથી દ્રવ્યની રક્ષા કરવી એક મુશ્કેલ કાર્ય છે પૈસાદાર વ્યક્તિઓના અનેક મિત્રો અને શત્રુઓ થાય છે જેનાથી જેનું કામ થાય છે તે મિત્ર, અને જેનાથી જે કામ બનતું નથી તે શત્રુ બની બેસે છે. જે મિત્ર હોય છે તે પણ કાલાન્તરમા શત્રુ, અને જે શત્રુ હોય છે તે પણ કાલાન્તરમાં મિત્ર બને છે તેમ દેખવામા આવે છે માટે જે પહેલા મિત્ર બનીને શત્રુ બને છે તે બધા તેના ભેદભાવ જાણીને ચોરોને ગુપ્ત રીતિથી સર્વ પ્રકારની તેની પ્રવૃત્તિથી પરિચિત કરી આપે છે, અને અન્તમા તેને લુટાવે છે ક્ષણભરમા તે અમીરથી ગરીબ બની બેસે છે. કદાચ પુણ્યોદયથી ચોરો તરફથી તેનું દ્રવ્ય ચોરાવાનું કદાચ સાહસ ન બને, અને તેઓ તેની તરફ ધાડ પણ ન પાડે તો પણ અધર્મી રાજાની નજરથી દ્રવ્યની રક્ષા થવી મુશ્કેલ છે.

અથવા રાજાનઃ=વૃપારતસ્ય ધનં વિલુમ્પન્તિ=વિલુપ્તન્તિ અભિયોગદ્વારેણ વલા-
લાત્તદ્ધનં ગૃહ્ણન્તીત્યર્થઃ । અથવા તસ્યાર્થગૃહ્ણસ્ય ધનં સ્વયમેવ નશ્યતિ, વાણિજ્યાદૌ
વહુમૂલ્યેન ક્રયણાદલ્પેન વિક્રયણાદિત્યર્થઃ । ‘વિનશ્યતિ’ રાજકોશે ‘વૈદ્ધ’
પદવાચ્યે સંસ્થાપિતં, ભૂમ્યાદૌ વા નિશ્ચાતં તસ્ય રાજ્ઞઃ પરિવર્તનેનાપગતાત્, ભૂમૌ યત્ર
નિશ્ચાતં દીર્ઘકાલેન તતોડપગમાદ્વા વિનશ્યતિ=સ્વયમેવ નષ્ટં ભવતીત્યર્થઃ ।

રાજા કી જબ લોલુપ દૃષ્ટિ ઇસકે ધન પર પડતી હૈ તવ વહ જવર્દસ્તી
કોઈ એસા અભિયોગ લગા દેતા હૈ કિ જિસસે ઉસ વિચારે કા વહ ધન
દેગ્વતેર લુટવા લિયા જાતા હૈ ।

યદિ ધાર્મિક રાજાકે રાજ્ય મેં વસને કા ધનીકો સૌભાગ્ય મિલતા
હૈ ઓર ઉસકી વજહ સે ઉસકે ધનકી હર એક પ્રકાર સે રક્ષા મી હોની
રહતી હૈ તો મી અધિક સંગ્રહ કી લાલસા સે યા ઉસકી વૃદ્ધિ કી તીવ્ર
ભાવનાસે જવ ધની ઉસે કિસી વ્યાપાર મેં લગા દેતા હૈ તો તેજી મંદી કે
સમય ક્રય વિક્રય કરને સે અચાનક જવ વ્યાપાર મેં ઘાટા આજાતા હૈ
તવ વહ કમાયા હુઆ દ્રવ્ય સહસા હાથ સે નિકલ જાતા હૈ, ઓર વહ
ધની વ્યક્તિ ફિર હાથ મલતે હી રહ જાતા હૈ । વ્યાપાર મેં યદિ પુણ્ય
કર્મ કે ઉદય સે અચ્છા લાભ મી હો જાતા હૈ, તો લોગ ઉસે વૈકોં મેં
જમા કર દેતે હૈ યા ઉસે જમીન વગેરહ મેં ગાડ દેતે હૈ । વહાં ઉસકી
સુરક્ષા હોતી હો તો મી જવ રાજ્ય કા પરિવર્તન હોતા હૈ તવ વૈકે મી
પ્રાયઃ લુટ જાતી હૈ, અથવા જવ વહ ઉસ ભૂમિ સે વહુત સમય કે વાદ ગાડે

રાજની ન્યારે લોલુપ દૃષ્ટિ તેના ધન ઉપર પડે છે ત્યારે તે જળશય્થી
કોઈ એવો અભિયોગ લગાવે છે કે જેનાથી તે બિચારાનું તે ધન દેખતા
દેખતામાં હુંટાવી લઈ જાય છે.

કદાચ ધાર્મિક રાજના રાજ્યમાં વસવાનો ધનીને સૌભાગ્ય મળે છે, અને
તેના તરફથી તેના ધનની દરેક પ્રકારે રક્ષા પણ થાય છે તો પણ અધિક સંગ્ર-
હની લાલસાથી અગર તેની વૃદ્ધિની તીવ્ર લાવનાથી ન્યારે પૈસાદાર તે ધનને
કોઈ વ્યાપારમાં લગાવી દે છે તો તેજી મંદીના સમયમાં ક્રય વિક્રય કરવાથી
અચાનક ન્યારે વ્યાપારમાં નુકસાન આવે છે ત્યારે તે કમાયેલું ધન સહસા હાથથી
શુમાવી દે છે, અને પછી તે પૈસાદાર વ્યક્તિ હાથ ધરતો થઈ જાય છે, વ્યાપારમાં
કદાચ પુણ્ય કર્મના ઉદયથી સારો લાભ પણ મળે છે તો લોક તેને ખેંડોમાં જમા
કરાવી દે છે, અગર તેને જમીન વિગેરેમાં દાટી દે છે. તે જગોએ તેની સુરક્ષા
અને તો પણ ન્યારે રાજ્યનું પરિવર્તન થાય છે ત્યારે એકોને પણ લુટવામાં
આવે છે, અથવા ન્યારે તે ભૂમિથી બહુ સમય બાદ દાટેલા સ્થાનથી સ્થાનાન્તરિત

કથંચિત્સુરક્ષિતમપિ તદ્ધનં કાંસ્યદ્રવ્યસુવર્ણરજતાદિકમ્ અગારદાહેન=
ગેહદાહેન દહ્યતે, इत्यादिकारणैरुपार्जितस्याप्यर्थस्य बहुविधो नाशो भवति, अन्तराय-
कर्मप्रावल्येनोपार्जयितुरूपभोगाय नैव भवतीत्यर्थः। उक्तञ्च—

“ चत्वारो धनदायदा, धर्माग्निनृपतસ્कराः ॥

तत्र ज्येष्ठापमानेन, त्रयः कुप्यन्ति सोदराः ” ॥ ૧ ॥ इति ।

હુણે સ્થાન સે સ્થાનાન્તરિત હો જાતા હૈ તવ ઉસકા મિલના મી મુશ્કિલ
હો જાતા હૈ । ઇસ તરહ સે મી ઉસકા વિનાશ હોતે દેર નહીં લગતી ।

કથંચિત્ કાંસા; દ્રવ્ય, સુવર્ણ, રજતાદિ રૂપ વહ ધન ઘર મેં સુરક્ષિત
મી રહે તો મી અચાનક ઘરમેં આગ લગજાને સે ઉસકા મી વિનાશ
હો જાના હૈ । ઉસ સમય વહુમૂલ્ય વસ્તુએ ગ્વાકમેં મિલ જાતી હૈ ।
આગ કો બુઝાને કે લિયે આવે હુણે લોગોં કે હાથ મી ઉસ સમય જો
મી વસ્તુ લગતી હૈ વે ઉસે ઉઠાકર લે જાતે હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇન પૂર્વોક્ત
કારણોં સે ઉપાર્જિત દ્રવ્ય કા અન્તરાય કર્મ કે પ્રવલ ઉદયમેં અનેક રીતિ
સે વિનાશ હોતે દેર નહીં લગતી । નીતિકાર મી યહી વાત કહતે હૈ—

“ ચત્વારો ધનદાયદા; , ધર્માગ્નિનૃપતસ્કરાઃ ।

તત્ર જ્યેષ્ઠાપમાનેન, ત્રયઃ કુપ્યન્તિ સોદરાઃ ॥ ૧ ॥ ”

ધન કે હિસ્સેદાર ચાર હૈ । ૧ ધર્મ, ૨ અગ્નિ, ૩ રાજા, ઓર ૪ ચોર ।
જિસ ધનકા સદુપયોગ ધર્મ મેં નહીં હોતા હૈ ઉસ ધનકા અગ્નિ, રાજા
ઓર ચોરોં કે દ્વારા વિનાશ ઓર અપહરણ હોતા હૈ ॥ ૧ ॥

થાય છે ત્યારે તેનું મળવું પણ મુશ્કેલ બની જાય છે આવી રીતે પણ તેનો
વિનાશ હોવામાં વાર લાગતી નથી

કોઈ પણ પ્રકારે કાંસા, દ્રવ્ય, સુવર્ણ, રજતાદિ રૂપ તે ધન ઘરમાં સુર-
ક્ષિત રહે તો પણ અચાનક ઘરમાં આગ લાગવાથી તેનો પણ વિનાશ થઈ જાય
છે. તેવા વખતે બહુમૂલ્ય વસ્તુઓ ખાક થાય છે આગને ઓલવવા આવેલા
લોકોના હાથમાં પણ તે વખતે જે વસ્તુ પડે છે તે પણ ઉઠાવી લઈ જાય છે. આ
પ્રકારે આ પૂર્વોક્ત કારણોથી ઉપાર્જિત દ્રવ્યનો અન્તરાય કર્મના પ્રબલ ઉદયમાં
અનેક રીતિથી વિનાશ થવામાં વાર લાગતી નથી નીતિકાર પણ એ વાત કહે છે—

“ ચત્વારો ધનદાયદા; , ધર્માગ્નિનૃપતસ્કરા. ।

તત્ર જ્યેષ્ઠાપમાનેન, ત્રય કુપ્યન્તિ સોદરા ॥ ૧ ॥ ”

ધનના હિસ્સેદાર ચાર છે ૧ ધર્મ, ૨ અગ્નિ, ૩ રાજા અને ૪ ચોર. જે
ધનનો સદુપયોગ ધર્મમાં નથી થતો તે ધનનો અગ્નિ, રાજા અને ચોરો દ્વારા
વિનાશ અને અપહરણ થાય છે. ॥ ૧ ॥

વહુપ્રકારૈઃ સ ધનસશ્ચયકારી પરસ્યાર્થાય=અન્યાર્થમ્, દાયાદાદ્યર્થમેવ, ક્રૂરાણિ=શિરશ્છેદ-ગલકર્તૃનાદીનિ કર્માણિ=દુરાચરણાનિ બાલઃ=કર્તવ્યશૂન્યચેતાઃ પ્રકુર્વાણઃ=પ્રકર્ષેણ વિદધાનઃ સન્, તેન કટુકર્મવિપાકોદયેન દુઃસ્વેન સંમૂઢઃ=પરિ-હતમતિઃ રાગદ્વેષાભિભૂતતયા કાર્યાકાર્યમજાનન્ વિપર્યાસમ્=વૈપરીત્યં મિથ્યાત્વમ્ ઉપૈતિ=પ્રાપ્નોતિ, અર્થાર્થમનર્થકારી ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

મૂઢાઃ સુસ્વેપ્સવો દુઃસ્વમવાપ્નુવન્તીતિ ન મયા સ્વબુદ્ધ્યોચ્યતે, इति सुधर्मा स्वामी कथयति-‘मुणिणा’ इत्यादि ।

મૂલમ્—મુણિણા હુ એયં પવેદ્યં, અણોહંતરા એ, નો ય ઓહં તરિત્તણ, અતીરંગમા એ નો ય તીરં ગમિત્તણ, અપારં-ગમા એ, નો ય પારં ગમિત્તણ, આયાણિજ્જં ચ આયાય તંમિ ઠાણે ન ચિટ્ઠઈ વિતહં પપ્પડ્ધેયન્ને તંમિ ઠાણંમિ ચિટ્ઠઈ ॥સૂ૦ ૭॥

હાયા—મુનિના હુ એતત્પ્રવેદિતમ્, અનોઘન્તરા એતે ન ચૌઘં તર્તુમ્, અતીરંગમા એતે, ન ચ તીરં ગન્તુમ્, અપારંગમા એતે, ન ચ પારં ગન્તુમ્, આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ, વિતથં પ્રાપ્યાસ્વેદજ્ઞસ્તસ્મિન્ સ્થાને તિષ્ઠતિ ॥સૂ૦ ૭॥

જિસ ધનકા અન્તિમ યહ પરિણામ હોતા હૈ ઉસ ધનકો સંચિત કરનેવાલે અજ્ઞાન મેં પડે હુએ હૈં “પરસ્યાર્થાય” સિર્ફ દાયાદ વગૈરહ દૂસરોં કે ઉપભોગ કે લિયે હી ઉસકે સંગ્રહાર્થ ભયંકર સે ભયંકર ગલ-કર્તન, શિરશ્છેદન જૈસે નિંદિત દુરાચારોં કો કરતા હુઆ તજ્જન્ય કટુક કર્મકે વિપાકજનિત દુઃસ્વ સે સંતસચિત્ત બન કર્તવ્યાકર્તવ્ય કે વિવેક સે રહિત હોકર મિથ્યાત્વભાવરૂપ વિપર્યાસપને કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ અર્થાત્ વહ ધનકે લિયે અનેક અનર્થ કરતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

બાલ અજ્ઞાની સુસ્વની ચાહના કરતે હૈં પરન્તુ ઉન્હેં દુઃસ્વની હી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ, ઇસ વિષય મેં શ્રીસુધર્મા સ્વામી અપની નિજી કલ્પના કા નિષેધ

જે ધનનો અન્તિમ આ પરિણામ થાય છે તે ધનનો સંચિત કરવાવાળા અજ્ઞાનમાં પડેલા છે. “પરસ્યાર્થાય” શ્રુત દાયાદ વિગેરે બીજાના ઉપભોગ માટે જ તેના સંગ્રહાર્થ ભયંકરથી ભયંકર ગલકર્તન, શિરશ્છેદન જેવા નિંદિત દુરાચારોને કરીને તજ્જન્ય કટુક કર્મના વિપાકજનિત દુઃખથી સંતસચિત્ત બની કર્તવ્યાકર્તવ્યના વિવેકથી રહિત બની મિથ્યાત્વભાવરૂપ વિપર્યાસપણાને પ્રાપ્ત થાય છે, અર્થાત્ તે ધન માટે અનેક અધર્મ કરે છે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

બાલ અજ્ઞાની સુખની ચાહના કરે છે પરંતુ તેને હુ.બની જ પ્રાપ્તિ થાય છે. આ વિષયમાં શ્રી સુધર્માસ્વામી પોતાની નિજી કલ્પનાનો નિષેધ કરીને કહે છે—

ટીકા—‘મુનિને’—ત્યાદિ । ‘મુનિના’ સંસારસ્ય ત્રિકાલાવસ્થાં મનુતે યઃ સ મુનિઃ=ઘાતિકર્મચતુષ્ટયક્ષયસમુદ્ભૂતાન્મસ્વરૂપસ્તીર્થદ્વરગણધરાદિઃ, તેન, હુ=નિશ્ચ-
યેન એતત્=પૂર્વોક્તં વક્ષ્યમાણં વા, તત્ર પૂર્વોક્તં પરિગ્રહાસક્તિજનિતસંસારપરિભ્રમણ-
સ્વરૂપમ્, અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રોત્પત્ત્યાદિકં ચ પ્ર=પ્રકર્ષેણ વેદિતં=દ્વાદશપર્ષદિ પ્રરૂપિતમ્
ભિન્નભિન્નસ્વરૂપેણ કથિતમિત્યર્થઃ । વક્ષ્યમાણં પ્રવેદિતમાહ—‘અનોઘન્તરા’ ઇત્યાદિ,
કરતે હુઃ કહતે હૈં—‘મુણિણા’ ઇત્યાદિ ।

“મુનિ” યહ શબ્દ ‘મન્’ ધાતુ સે નિષ્પન્ન હુઆ હૈ । ‘મન્’ ધાતુ કા અર્થ જાનના હૈ । જો સંસારી કી ત્રિકાલસંબંધી સમસ્ત ગુણ-પર્યાયરૂપ અવસ્થાઓં કો જાનતા હૈ ઉસકા નામ મુનિ હૈ, ઘાતિયા કર્મોં કૈ ક્ષય હોને સે જિન્હોં કો કેવલજ્ઞાન સ્વરૂપ આત્મા કૈ નિજરૂપ કી પ્રાપ્તિ હો ચુકી હૈ એસે તીર્થકર, ગણધરાદિ દેવ યહાં ‘મુનિ’ શબ્દ સે લિયે ગયે હૈ । અપની નિજી કલ્પના કા પરિહાર કરતે હુઃ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ—પૂર્વોક્ત પરિગ્રહમેં અત્યાસક્તિવશ જીવ સંસાર મેં હી પરિભ્રમણ કરતા હૈ, તથા “અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રે અસકૃન્નીચૈર્ગોત્રે” ઇત્યાદિ સૂત્રોં (હસી ઉદ્દેશ કૈ પ્રથમાદિ સૂત્રોં) મેં જો કહા ગયા હૈ યહ સમસ્ત વિષય, અથવા જો ખી કુછ આગે કહા જાવેગા વહ સબ એને અપની નિજબુદ્ધિ સે કલ્પિત કર નહીં કહા હૈ, કિન્તુ તીર્થકરાદિક દેવોં ને અપની ૨ પરિષદ્ મેં પૃથક્ પૃથક્ રૂપ સે એસાહી કહા હૈ । ઉનકી પરંપરા સે જિસ પ્રકાર યહ વિષય ચલા

‘મુણિણા’ ઇત્યાદિ

“મુનિ” આ શબ્દ ‘મન્’ ધાતુથી નિષ્પન્ન થયો છે ‘મન્’ ધાતુનો અર્થ જાણવું થાય છે જે સંસારીની ત્રિકાલસંબંધી સમસ્ત ગુણપર્યાયરૂપ અવસ્થાઓને જાણે છે તેનું નામ મુનિ છે ઘાતિયા કર્મનો ક્ષય હોવાથી જેને કેવળ જ્ઞાનસ્વરૂપ આત્માના નિજરૂપની પ્રાપ્તિ થયેલ છે એવા તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ આ ઉદ્દેશે મુનિ-શબ્દથી લેવામાં આવેલ છે પોતાની નિજ કલ્પનાનો પરિહાર કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે—પૂર્વોક્ત પરિગ્રહમાં અત્યાસક્તિવશ જીવ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરે છે તથા “અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રે અસકૃન્નીચૈર્ગોત્રે” ઇત્યાદિ સૂત્રો (આ ઉદ્દેશના પ્રથમાદિ સૂત્રો)ના જે કહેવામાં આવેલ છે તે સમસ્ત વિષય, અને જે આગળ કહેવામાં આવશે તે બધા મેં પોતાની નિજ બુદ્ધિથી કલ્પના કરી કહેલ નથી, પણ તીર્થકરાદિક દેવોએ પાતપોતાની પગ્નિદમાં પૃથક્ પૃથક્ રૂપથી એમ જ કહેલ છે, તેની પરંપરાથી જે પ્રકારે આ વિષય આપ્યો

અનોઘન્તરાઃ=ઓઘો દ્રવ્યભાવભેદેન દ્વિવિધઃ-દ્રવ્યોઘો નદીપૂરાદિકઃ, ભાવોઘોઽષ્ટવિધં કર્મ સંસારો વા યેન યત્ર દુઃખિતો ભવતિ પ્રાણી, તમોઘં તરન્તીત્યોઘન્તરાઃ, ન ઓઘન્તરા અનોઘન્તરાઃ=મિથ્યાદર્શિનઃ કુતીર્થિકાદયઃ પાર્શ્વસ્થાદયો વા, જ્ઞાનક્રિયાપ્રવહનવિક્લાઃ, ઓઘતરણવ્યગ્રમનસોઽપિ તરણોપાયવિવેકાભાવાન્ન તર્તુ પ્રભવન્તિ તદેવાહ-

આ રહ્યા છે. તેની જાણ કરવા માટે આ પ્રતિપાદિત કર્યું છે. માટે મૂળમાં આ સર્વ-જોડત હોવાથી અપ્રમાણભૂત માની શકાતું નથી.

વક્ષ્યમાણ વિષયમાં સૂત્રકાર કહે છે-‘અનોઘન્તરા’ ઇત્યાદિ, ‘અનોઘન્તર’ શબ્દનો અર્થ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ છે. જે ઓઘન્તર નથી, તે અનોઘન્તર છે. દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી ઓઘ બે પ્રકારે છે. નદીનું પૂર વિગેરે દ્રવ્ય ઓઘ છે. અષ્ટપ્રકાર કર્મ અથવા સંસાર ભાવઓઘ છે. જેના દ્વારા પ્રાણી જે જગ્યાએ હાજી થાય છે તેનું નામ ઓઘ છે તે ઓઘ જે તરી બાય છે-પાર કરે છે તે ઓઘન્તર કહેવાય છે. તેનાથી જે વિપરીત છે તે અનોઘન્તર-મિથ્યાદૃષ્ટિ કુતીર્થિક અગર પાસત્યાદિક જીવ છે, કારણ કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ ભાવ-ઓઘને પાર કરતા નથી. ભાવ ઓઘને પાર કરવા માટે જ્ઞાન અને ક્રિયારૂપી પ્રવહન (નૌકા) ની જરૂર પડે છે. જેવી રીતે મનુષ્ય વિના સમુદ્ર પાર કરી શકતો નથી તે પ્રકારે આ સંસાર અને અષ્ટવિધકર્મરૂપી સમુદ્રનો પાર કરવો તે જ્ઞાન અને ક્રિયા વગર સર્વથા અસંભવ છે.

આવે છે તે અનુસાર મેં પણ આ પ્રતિપાદન કર્યું છે. માટે મૂળમાં આ સર્વ-જોડત હોવાથી અપ્રમાણભૂત માની શકાતું નથી.

વક્ષ્યમાણ વિષયમાં સૂત્રકાર કહે છે-‘અનોઘન્તરા’ ઇત્યાદિ. અનોઘન્તર શબ્દનો અર્થ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ છે. જે ઓઘન્તર નથી તે અનોઘન્તર છે. દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી ઓઘ બે પ્રકારે છે. નદીનું પૂર વિગેરે દ્રવ્ય ઓઘ છે. અષ્ટપ્રકાર કર્મ અથવા સંસાર ભાવઓઘ છે. જેના દ્વારા પ્રાણી જે જગ્યાએ હાજી થાય છે તેનું નામ ઓઘ છે તે ઓઘ જે તરી બાય છે-પાર કરે છે તે ઓઘન્તર કહેવાય છે. તેનાથી જે વિપરીત છે તે અનોઘન્તર-મિથ્યાદૃષ્ટિ કુતીર્થિક અગર પાસત્યાદિક જીવ છે, કારણ કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ ભાવ-ઓઘને પાર કરતા નથી. ભાવ ઓઘને પાર કરવા માટે જ્ઞાન અને ક્રિયારૂપી પ્રવહન (નૌકા) ની જરૂર પડે છે. જેવી રીતે મનુષ્ય વિના સમુદ્ર પાર કરી શકતો નથી તે પ્રકારે આ સંસાર અને અષ્ટવિધકર્મરૂપી સમુદ્રનો પાર કરવો તે જ્ઞાન અને ક્રિયા વગર સર્વથા અસંભવ છે. સમ્યગ્જ્ઞાન અને

ન ચૌઘમિતિ, ઓઘં તર્તુ ન ચ સમર્થા ભવન્તીત્યર્થઃ સ્પષ્ટઃ । કિં ચ-એતે ‘અતીરંગમાઃ’ તીરં ન ગચ્છન્તીત્યતીરંગમાઃ, એતે વ્રીતરાગપ્રણીતરત્નત્રયસમારાધનાભાવાત્ તીરં ગન્તું સમર્થા ન ભવન્તીત્યર્થઃ, અપિ ચ-‘અપારંગમાઃ’ પારસ્તટસ્તં ગચ્છન્તીતિ પારંગમાઃ, ન પારંગમા અપારંગમાઃ, સમ્યગુપદેશાભાવાત્પારગમનમનસોઽપિ ઉત્તમ્ત્રપ્રરૂપણાત્, હૈ । સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર વિકલ જીવોં કો હી મિથ્યાદૃષ્ટિ કહા ગયા હૈ । સમ્યક્જ્ઞાન કે અભાવ સે સમ્યગ્દર્શન કા અભાવ મી સ્વતઃ સિદ્ધ હૈ, અતઃ ઉસે યહાં પ્રથક્ રૂપસે નહીં કહા ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ યદ્યપિ ઓઘ કો પાર કરને કે લિયે લાલાયિતમન રહતે હૈં પરન્તુ ઉનકે પાસ પાર કરનેકા ઉપાયસ્વરૂપ વિવેકકા અભાવ હોને સે વે ઉસે પાર નહીં કર સકતે । યહીં વાત “ ન ચૌઘં તર્તુ ” હસ પદ સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં । સંસારરૂપ સમુદ્ર સે પાર હોને કે લિયે સર્વ પ્રથમ સમકિત કી જરૂરત પડતી હૈ । શાસ્ત્ર મેં સમકિત કો જેવટિયા કી ઉપમા દી ગઈ હૈ । જિસ પ્રકાર વિના જેવટિયા કે નૌકા જીવોં કો જલાશય સે પાર નહીં ઉતાર સકતી, ઉસી પ્રકાર હસ સંસારરૂપ સમુદ્ર સે જીવ વિના સમકિત કો પાયે કમીં ખી પાર નહીં ઉતર સકતા । સમકિત કે વિષય મેં પીછે વિવેચન કિયા જા ચુકા હૈ ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સંસારરૂપી સમુદ્ર કે તીરકો ઓર પાર કો પાનેકે લિયે અસમર્થ હસલિયે હૈં કિ-યે “ અતીરંગમ ” ઓર “ અપારંગમ ” હૈં ।

સમ્યક્ચારિત્ર વિકલ જીવો ને મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ કહેલ છે સમ્યક્જ્ઞાનના અભાવથી સમ્યગ્દર્શનનો અભાવ પણ સ્વતઃ સિદ્ધ છે માટે તેને આ ઠેકાણે પૃથક્ રૂપથી કહેલ નથી

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ યદ્યપિ ઓઘનો પાર કરવા માટે લાલાયિત મન રાખે છે પરંતુ તેની પાસે પાર કરવાના ઉપાયસ્વરૂપ વિવેકનો અભાવ હોવાથી પાર કરી શકતા નથી તે વાત “ ન ચૌઘં તર્તુ ” એ પદથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે સંસાર રૂપ સમુદ્રનો પાર કરવા માટે સર્વ પ્રથમ સમકિતની જરૂર પડે છે શાસ્ત્રમાં સમકિતને જેવટિયાની ઉપમા આપેલ છે જે પ્રકારે જેવટિયા વગર નૌકા જીવોને જલાશયથી પાર નહિ ઉતારી શકે, તે પ્રકારે આ સંસારરૂપ સમુદ્રથી જીવ વિના સમકિત મેળવ્યે કોઈ વખત પાર ઉતરી શકતા નથી સમકિતના વિષયમાં પાછળ વિવેચન કરવામાં આવેલ છે.

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સંસારરૂપી સમુદ્રના તીરનો પાર કરવાને માટે અસમર્થ છે માટે છે કે તે “ અતીરંગમ ” અને “ અપારંગમ ” છે વ્રીતરાગપ્રણીત રત્ન-

તત્રૈવ પ્રવૃત્તત્વાત્, ઉન્માર્ગપ્રચારકત્વાચ્ચ પારં ગન્તું પ્રભવો ન ભવન્તીત્યર્થઃ । ‘અતીરંગમાઃ’ ‘અપારંગમાઃ’ ઇત્યુભયત્રાપિ નજો ‘ભવન્તી’—ત્યત્ર ભવનક્રિયાયામન્વયે આર્પિત્વાદરામર્થસમાસો बोध्यः । તે તીરં તિતીર્ષવોઽપિ પારં પિપારયિપવોઽપિ સ્વાભિમત-શાસ્ત્રપ્રવૃત્તયો નૈવ તીરં ગચ્છન્તિ, નાપિ પારં પ્રાપ્નુવન્તિ । લોકે તીરપારયોરેકાર્થત્વેઽપિ અત્ર તીરપદેન મોહનીયક્ષયઃ, પારપદેન ઘાતિકર્મક્ષયો ગૃહ્યત્ત્વેતિ વિશેષાન્ન પૌનસ્ત્યમ્ । ઓઘં તિતીર્ષવોઽપિ ક્રુતો ન તીરપારગામિનો ભવન્તીત્યાહ—‘આદાનીય’—

વીતરાગપ્રણીત રત્નત્રય કી આરાધના કા इनमें अभाव होने से ये ‘अतीरंगम’ और सम्यक् उपदेश की प्राप्ति का अभाव होने से पार प्राप्त करने के लिये अभिलाषी होते हुए भी ये उत्सूत्र के प्ररूपक और उन्मार्ग के प्रचारक होने की वजह से ‘अपारंगम’ हैं । लोक में तीर और पार शब्द का एक ही वाच्यार्थ होना है फिर भी सूत्र में जो इन दो शब्दोंका प्रयोग किया है, उससे यह बात ज्ञात होती है कि—तीर शब्द से घाती कर्मोंका क्षय और पार शब्द से अघातिया कर्मोंका अभाव अर्थ होता है ।

“આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ” આદાનીય શબ્દ કા અર્થ મુક્તિ જિસસે પ્રાપ્ત કી જાતી હૈ એસા ચારિત્ર હૈ । મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહ મેં સૂચ્છિત હોને સે અપની કલ્પનાનુસાર ચારિત્ર કા આરાધન કરતે હૈ । મુક્તિ તો સમ્યક્ચારિત્ર કે આરાધન સે પ્રાપ્ત હોતી હૈ । જિસમેં સાવધ પ્રવૃત્તિકા લેશ નહીં હૈ ઉસકા નામ સમ્યક્ચારિત્ર હૈ । જૈસે ૨ જીવ ગુણસ્થાનોં કી પ્રાપ્તિ કરતા જાતા હૈ વૈસે ૨ ગૃહીતચારિત્રમેં ઉજ્જ્વલતા

ત્રયની આરાધનાનું તેમાં અભાવ હોવાથી તે ‘અતીરંગમ’ અને સમ્યક્ ઉપદેશની પ્રાપ્તિનો અભાવ હોવાથી પાર પ્રાપ્ત કરવા માટે અભિલાષી હોવા છતાં તે ઉત્સૂત્રના પ્રરૂપક અને ઉન્માર્ગના પ્રચારક હોવાથી ‘અપારંગમ’ છે. લોકમાં તીર અને પાર શબ્દનો એક જ વાચ્યાર્થ થાય છે તો પણ સૂત્રમાં જે જે શબ્દોનો પ્રયોગ કર્યો છે. તેનાથી એ વાત જ્ઞાત થાય છે કે—તીર શબ્દથી ઘાતિયા કર્મોનો ક્ષય અને પાર શબ્દથી અઘાતિયા કર્મોનો અભાવ અર્થ થાય છે.

“આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ”

આદાનીય શબ્દનો અર્થ મુક્તિ જેનાથી પ્રાપ્ત થાય છે એવું ચારિત્ર છે. મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહમાં મૂર્છિત હોવાથી પોતાની કલ્પનાનુસાર ચારિત્રનું આરાધન કરે છે, મુક્તિ તો સમ્યક્ચારિત્રના આરાધનથી પ્રાપ્ત થાય છે. જેમાં સાવધ પ્રવૃત્તિનો લેશ પણ નથી તેનું નામ સમ્યક્ચારિત્ર છે. જેમ જેમ જીવ ગુણસ્થાનોની પ્રાપ્તિ કરતો જાય છે તેમ તેમ ગૃહીત ચારિત્રમાં ઉજ્જ્વલતા આવતી જાય છે,

મિત્યાદિ, સ તીરપારજિગમિષુઃ આદાનીયમ્=આદીયતે=પ્રાપ્યતે મોક્ષોડનેત્યા-
દાનીયં=ચારિત્રં, તદાદાય=સમારાધનજ્ઞાનવિષયીકૃત્ય તસ્મિન્=ચારિત્રસ્થાને ન
તિષ્ઠતિ પરિગ્રહમૂર્ચ્છિતત્વાત્,

યદ્વા—આદાનીયં=દાસીદાસહસ્ત્યશ્વરથધનધાન્યસુવર્ણાદિકં, તદ્ આદાય=
ગૃહીત્વા તત્ર વિમુહ્ય, અથવા મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકષાયયોગૈરાદાનીયં=કર્મ ગૃહી-
ત્વા રત્નત્રયાત્મકે મોક્ષમાર્ગે ન તિષ્ઠતિ=આત્માને ન સ્થાપયતિ। ન સ કેવલં સર્વજ્ઞો-
પદેશસ્થાને તિષ્ઠતિ, પ્રત્યુત વિપરીતાચારમાચરતીત્યાહ—‘વિતથ’—મિતિ, અલ્પદજ્ઞઃ
=પરપીડાનભિજ્ઞઃ, વિતથં=મિથ્યાત્વમોહનીયં પ્રાપ્ય=લબ્ધ્વા તત્રૈવ સ્થાને=પરિગ્રહા-
દિમૂર્ચ્છાયાં તિષ્ઠતિ, તત્રૈવ જીવનં યાપયતીત્યર્થઃ। શબ્દાદિકામગુણસજ્જસજ્ઞી
પદ્મજીવનિકાયસમારમ્ભવાન્ પરિગ્રહમૂર્ચ્છિતો જ્ઞાનાવરણીયાદિચિક્ષણકર્માણિ સ-
મુપાર્જયન્નજસં નરકનિગોદાદિવ્યપદેશં લભત ઇત્યાશયઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

આતી જાતી હૈ। મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સમકિત કે અભાવ મેં પ્રથમ ગુણસ્થાન-
વર્તી હોતા હૈ અતઃ વહ સમકિતસહિત ચારિત્ર કા આરાધન નહીં કર
સકતા, ઇસલિયે તીર ઔર પારકે લાભસે સદા વંચિત રહા કરતા હૈ।

અથવા—આદાનીય શબ્દ કા અર્થ—દાસી, દાસ, હસ્તિ, અશ્વ, રથ, ધન,
ધાન્ય ઔર સુવર્ણાદિક પરિગ્રહ મી હૈ। મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ ઇસી પરિગ્રહ
મેં અત્યન્ત આસક્ત રહતા હૈ ઇસ લિયે વહ રત્નત્રયાત્મક મોક્ષમાર્ગ મેં
કમી મી સ્થિતિ કા લાભ નહીં કર સકતા। આદાનીય શબ્દ કા અર્થ કર્મ
મી હૈ, ઇસ કર્મ કો વહ મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કષાય, પ્રમાદ ઔર યોગો
દ્વારા ગ્રહણ કરતા હૈ। કર્મકે સદ્ભાવ મેં જીવ શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપરૂપ મુક્તિ
કી પ્રાપ્તિ સે દૂર હી રહતા હૈ। ઇસ વિષય મેં પહિલે લિખા જા ચુકા હૈ। જબ

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સમકિતના અભાવમા પ્રથમગુણસ્થાનવર્તી થાય છે, માટે તે
સમકિતસહિત ચારિત્રનુ આરાધન કરી શકતા નથી, માટે તીર અને પારના
લાભથી વંચિત રહે છે

અથવા—આદાનીય શબ્દનો અર્થ — દાસી, દાસ, હસ્તિ, અશ્વ, રથ, ધન,
ધાન્ય અને સુવર્ણાદિક પરિગ્રહ પણ છે, મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ આ પરિગ્રહમાં
અત્યન્ત આસક્ત રહે છે, જેથી તે રત્નત્રયાત્મક મોક્ષમાર્ગમાં ડોઈ વખત
પણ સ્થિતિનો લાભ કરી શકતો નથી આદાનીય શબ્દનો અર્થ કર્મ પણ
છે આ કર્મને તે મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કષાય, પ્રમાદ અને યોગોદ્વારા ગ્રહણ
કરે છે, કર્મના સદ્ભાવમા જીવ શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપરૂપ મુક્તિની પ્રાપ્તિથી
દૂર રહે છે. આ વિષયમા પહેલા લખવામા આવેલું છે. —ન્યાં સુધી મુક્તિના

યો નરકાદિવ્યપદેશભાગૂ ન ભવતિ, યશ્ચ ભવતિ તં દર્શયતિ—‘ ઉદ્દેસો ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઉદ્દેસો પાસગસસ નતિથિ, બાલે પુણ નિહે કામસમ-
પુત્રે અસમિયદુક્ષ્વે દુક્ષ્વી દુક્ષ્વાણમેવ આવટ્ટં અણુપરિયદ્દહિત્તિ
વેમિ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ, બાલઃ પુનઃ સ્નિહઃ કામસમનુજ્ઞોઽશમિત-
દુઃખો દુઃખી દુઃસ્વાનામેવાઽઽવર્તમનુપરિવર્તતે । ઇતિ વ્રવીમિ ॥ મૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—‘ ઉદ્દેશ ’ ઇત્યાદિ, પશ્યતીતિ પશ્યઃ, પશ્ય એવ પશ્યકઃ=પરિજ્ઞાત-
સકલહેયોપાદેયસ્તીર્થઙ્કરગણધરાદિરતસ્ય વિદિતવેદિતવ્યસ્ય, ઉદિશ્યતે ઇત્યુ-
દ્દેશઃ=નરકાદિવ્યપદેશો નારકાદિપર્યાયવ્યવહાર ઇતિ યાવત્, અત્ર વ્યપદેશાર્થકો-
દ્દેશશબ્દકથનેન નામકર્મણઃ સકલાપ્યુત્તરપ્રકૃતિપ્રાપ્તિઃ । નાસ્તિ=નૈવ વર્તતે તસ્ય
સર્વજ્ઞત્વાત્, ન તસ્ય વ્યપદેશાપેક્ષા, તસ્મિન્નેવ ભવે તસ્ય મોક્ષપ્રાપ્તેઃ ।

તક મુક્તિ કે કારણોં કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી તબ તક મુક્તિ નહીં મિલ
સકતી હૈ । મુક્તિકા કારણ રત્નત્રય હૈ । જબ તક જીવ કો ઇન તીનોં કી
પૂર્ણતા પ્રાપ્ત નહીં હોતી તબ તક મુક્તિકા માર્ગ ઉસકે હાથમેં નહીં આતા ।
મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ જબ ઇસ માર્ગ કી પ્રાપ્તિ સે હી રહિત હૈ તબ વહ મુક્તિ
કા લાભ ભી કૈસે કર સકતા હૈ ? યહી સર્વજ્ઞ કા ઉપદેશ હૈ । ઇસ સર્વજ્ઞ
કે ઉપદેશ કી ઓર ઉસ કી જરા ભી રુચિ જાગ્રત નહીં હોતી હૈ, યહી
મિથ્યાત્વ કા જોર હૈ । ઇસ જોર સે વહ અપની મનમાની પ્રવૃત્તિ કરને મેં
લગા રહતા હૈ, ઓર ઇસી કી વજહ સે વહ પરિગ્રહ મેં મૂર્ચ્છિત હોતા
રહતા હૈ । પરિગ્રહ કે સંગ્રહ કરને મેં ‘ જીવોં કા વિવાત મેરે દ્વારા હોતા હૈ ’
ઇસકી ઓર ઉસકા લક્ષ્ય હી નહીં જાતા, ઓર અપના સમસ્ત જીવન
અવિરત અવસ્થા મેં હી વ્યતીત કર દેતા હૈ ।

કારણેની પ્રાપ્તિ થતી નથી ત્યાં સુધી મુક્તિ મળી શકતી નથી. મુક્તિનું કારણ
રત્નત્રય છે. જ્યાં સુધી જીવને આ ત્રણેની પૂર્ણતા પ્રાપ્ત થતી નથી ત્યાં સુધી
મુક્તિનો માર્ગ તેના હાથમાં આવતો નથી. મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ જ્યારે આ માર્ગની
પ્રવૃત્તિથી જ રહિત છે તો પછી તે મુક્તિનો લાભ પણ કેવી રીતે મેળવી શકે
એ જ સર્વજ્ઞનો ઉપદેશ છે. આ સર્વજ્ઞના ઉપદેશ તરફ તેની જરા પણ રૂચિ
જાગ્રત નથી થતી તે જ મિથ્યાત્વનું જોર છે. તે જોરથી તે પોતાની મનમાની
પ્રવૃત્તિ કરવામાં લાગ્યો રહે છે, અને તેના પ્રભાવે તે પરિગ્રહમાં પણ મૂર્ચ્છિત
થતો રહે છે. પરિગ્રહનો સંગ્રહ કરવામાં ‘ જીવોનો વિવાત મારા દ્વારા થાય છે ’
તે તરફ તેનું લક્ષ્ય પણ જતું નથી, અને પોતાનું સમસ્ત જીવન અવિરત અવ-
સ્થામાં જ વ્યતીત કરે છે.

દળ્ડકશાદિરૂપોપક્રમાભાવેઽપિ પુનસ્તે વાર્દ્ધકકાલવ્યાલકવલિતા માનવા મર-
ણાદપિ ગુરુતરાં દુર્દશામનુભવન્તિ । સકલાનિ ચેન્દ્રિયાણિ જરાભિભૂતતયા શિથિ-
લતાં ગતાનિ, તરુણાયમાનયા ચ તૃષ્ણયા વ્યાકુલા મૂઢા ભવન્તીતિ દર્શયતિ—“તથ-
થે”-તિ । વાર્દ્ધક્યે સર્વેષામિન્દ્રિયાણાં સ્વકાર્યકરણાક્ષમતા જાયતે તદા “શ્રોત્રપરિ-
જ્ઞાનૈઃ પરિહીયમાનૈઃ” જ્ઞાનોતિ ભાષાવર્ગણાપરિણતાન્ પુદ્ગલાનિતિ શ્રોત્રમ્ । તથ
દ્રવ્યભાવભેદેન દ્વિવિધમ્ । તત્ર કદમ્બપુષ્પસદૃશં દ્રવ્યાત્મકં, ભાવરૂપં હિ ભાષાદ્રવ્ય-
ગ્રહણલઘ્યુપયોગસ્વભાવાત્મકમ્ ।

દળ્ડ કશા આદિરૂપ ઉપક્રમ કે અભાવ સે યદિ આયુ કી
પૂર્ણતા મી જીવ કો પ્રાપ્ત હુઈ તો યહ જીવ વૃદ્ધાવસ્થા મેં મરણાન્તિક
કષ્ટોં કો ભોગતા હૈ, યહી વાત આગે કે વાક્યોં સે સ્પષ્ટ કી જાતી હૈ ।

જવ યહ વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન હોના હૈ ઉસ સમય ઇસકા શ્રોત્રેન્દ્રિય-
જન્ય જ્ઞાન વિલકુલ અલ્પ હો જાતા હૈ, અર્થાત્ જિસ પ્રકાર ઇસકી
શ્રોત્રેન્દ્રિય તરુણાવસ્થા મેં કામ દેતી થી ઉસ પ્રકાર સે ઇસ અવસ્થા મેં
નહીં દેતી । ઇસ સમય જવકિ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયાં શિથિલ હો જાતી હૈં તથ
એક વીજ ઇસકી તરુણ હોની રહતી હૈ વહ હૈ ઇસકી તૃષ્ણા—“તૃષ્ણા
ચ તરુણાયતે” ।

“જ્ઞાનોતિ ભાષાવર્ગણાપરિણતપુદ્ગલાન્ ઇતિ શ્રોત્રમ્” ભાષાવર્ગણા
કે રૂપ મેં પરિણત પુદ્ગલોં કો જો સુનતા હૈ ઉસકા નામ શ્રોત્ર હૈ । વહ
શ્રોત્ર દ્રવ્ય ઔર ભાવ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા હૈ । જિસકા આકાર
કદમ્બ પુષ્પ કે સમાન હૈ વહ દ્રવ્ય શ્રોત્ર હૈ, જિસકે દ્વારા ભાષાવર્ગણા

દંડ કશા આદિ રૂપ ઉપક્રમના અભાવથી કદાચ આયુની પૂર્ણતા પણ
હવની પુરી થઈ તો આ હવ વૃદ્ધાવસ્થામાં મરણાન્તિક કષ્ટોને ભોગવે છે આ
વાત આગળના વાક્યોથી સ્પષ્ટ છે.

ત્યારે તે વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન થાય છે ત્યારે તેનું શ્રોત્રેન્દ્રિયજ્ઞાન બિલકુલ
અસ્પ થઈ જાય છે અર્થાત્ જે પ્રકારે તેની શ્રોત્રેન્દ્રિય તરુણાવસ્થામાં કામ દેતી હતી
તે પ્રકારે વૃદ્ધાવસ્થામાં દેતી નથી. આ સમયે દરેક ઇન્દ્રિય શિથિલ થઈ જાય
છે ત્યારે એક જ ચીજ તેની તરુણા રહે છે, તે ફક્ત તૃષ્ણા. “તૃષ્ણા ચ તરુણાયતે ।”

“જ્ઞાનોતિ ભાષાવર્ગણાપરિણતપુદ્ગલાન્ ઇતિ શ્રોત્રમ્ ।”

ભાષાવર્ગણાના રૂપમાં પરિણત પુદ્ગલોને જે સુણે છે (સંભળે છે)
નામ શ્રોત્ર છે. તે શ્રોત્ર દ્રવ્ય અને ભાવથી બે પ્રકારે છે. જેનો આકાર
અપુષ્પ સમાન છે, તે દ્રવ્ય શ્રોત્ર છે. જે દ્વારા ભાષાવર્ગણાના રૂપમાં

इस सूत्र का सारांश यही है कि मिथ्यादृष्टि जीव सांसारिक विषय भोगों में आसक्त बन कर परिग्रह का संग्रह करता रहता है। इस प्रवृत्ति में उसके द्वारा षट्काय के जीवों का विघात भी होता है परन्तु उसकी वह प्रवृत्ति संयमयुक्त न होनेसे ज्ञानावरण आदि चिक्कण कर्मों के तीव्र अनुभागबंध में और तीव्र स्थितिवंध में प्रधान कारण बनती है, अतः वह मुक्तिसुख के लाभ से वंचित रहता है, इतना ही नहीं प्रत्युत चतुर्गति रूप संसार में नरकनिगोदादि के कष्टों का ही भोक्ता बनता है ॥ सू० ७ ॥

नरकनिगोदादि कष्टोंका भोक्ता कौन होता है और कौन नहीं होता है? इसी विषय को फिर से इस सूत्र में अन्वयव्यतिरेकमुग्न से प्रतिपादन करते हैं—“उद्देशो पासगस्स नत्थि” इत्यादि।

देखनेवाले का नाम पश्य है, स्वार्थ में ‘क’ प्रत्यय होने से पश्यक शब्द बन जाता है। पश्य शब्द का जो अर्थ है वही पश्यक का है।

प्रश्न—संसार के संजी और असंजी चतुरिन्द्रियादि जितने भी जीव हैं वे सब देखनेवाले हैं अतः ये भी पश्यक हो जायेंगे, परन्तु इस सूत्र में इन पश्यकों का तो ग्रहण किया ही नहीं गया है, क्यों कि “उद्देशः पश्यकस्य नास्ति” इस कथन से उनमें उद्देश का अभाव नहीं है, वहां पर तो यह मनुष्यजातीय है, यह चतुरिन्द्रिय जातीय है, इत्यादि व्यवहार

આ સૂત્રનો સારાંશ એ છે કે—મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સાંસારિક વિષયભોગોમાં આસક્ત બની પરિગ્રહનો સંગ્રહ કરતો રહે છે આ પ્રવૃત્તિમાં તે દ્વારા ષટ્કાય જીવોનો ધાત પણ થાય છે, પરંતુ તેની તે પ્રવૃત્તિ સંયમયુક્ત ન હોવાથી જ્ઞાનાવરણ આદિ ચિક્કણા કર્મોના તીવ્ર અનુભાગબંધમાં પ્રધાન કારણ બને છે, માટે તે મુક્તિસુખના લાભથી વંચિત રહે છે, આટલું જ નહિ પ્રત્યુત ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં નરકનિગોદાદિના કષ્ટોનો પણ ભોક્તા બને છે ॥ સૂ. ૭ ॥

નરકનિગોદાદિ કષ્ટોનો ભોક્તા કોણ બને છે? અને કોણ બનતો નથી? તે વિષયને ફરીથી આ સૂત્રમાં અન્વયવ્યતિરેકમુખથી પ્રતિપાદન કરે છે—“ઉદ્દેશો પાસગસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ

દેખવાવાળાનું નામ પશ્ય છે સ્વાર્થમાં ‘ક’ પ્રત્યય હોવાથી પશ્યક શબ્દ બને છે, પશ્ય શબ્દનો જે અર્થ છે તેજ પશ્યકનો છે

પ્રશ્ન—સંસારના સંજી અને અસંજી ચતુરિન્દ્રિયાદિ જેટલા પણ જીવ છે તે બધા દેખવાવાળા છે માટે તે પણ પશ્યક થઈ જશે. પરંતુ આ સૂત્રમાં પશ્યકોનો તો ગ્રહણ કરવામાં આવેલ નથી, કારણ કે “ઉદ્દેશ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” થઈ નથી તેમાં ઉદ્દેશનો અભાવ નથી, તે જગ્યોએ તો એ મનુષ્યજાતીય છે,

હોતા હી હૈ । ઉદ્દેશ શબ્દ કા વ્યુત્પત્ત્યર્થ—“ઉદ્દિશ્યતે ઇતિ ઉદ્દેશઃ, નર-કાદિવ્યપદેશો, નરકાદિવ્યવહાર ઇતિ યાવત્” યહ નારકી હૈ, અર્થાત્ યહ નરકપર્યાયવિશિષ્ટ જીવ હૈ, ઇત્યાદિ વ્યવહાર કો હી ઉદ્દેશ કહા હૈ । ઇસ ઉદ્દેશ કા અભાવ પૂર્વોક્ત સંસારી જીવોં મેં નહીં આતા હૈ, અતઃ “ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” યહ કૈસે કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—યહાં પર પહિલે યહ જો કહા ગયા હૈ કિ—મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહ મેં આસક્ત બન કર ષટ્કાય કે જીવોં કે ઉપમર્દન કરનેવાલા હોને સે જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મોંકા બંધ કર નરકનિગોદાદિ ગતિયોં કે અનન્ત દુઃખોં કા ભોક્તા બનતા હૈ, પરન્તુ જો પરિગ્રહ મેં આસક્ત નહીં હૈં વે ષટ્કાય કે જીવોં કે રક્ષક હોને સે કર્મોં કે બંધ કરનેવાલે નહીં હોતે, ઔર ક્રમશઃ કેવલજ્ઞાન કો પાકર મુક્તિ કો પ્રાપ્ત કર લેતે હૈં, એસે જીવ હી યહાં પશ્યક શબ્દ સે ગ્રહણ કિયે હૈં । વે સાક્ષાત્ તીર્થંકર ગણધરાદિ દેવ હૈં । જબ તક વે મુક્તિ નહીં પ્રાપ્ત કર લેતે તબ તક નામ કર્મ કી કુછ પ્રકૃતિયોં કા સદ્ભાવ હોને સે અનમેં મી મનુષ્યપર્યાય વિશિષ્ટ આદિ કા વ્યવહાર હોતા હી હૈ, પરન્તુ ભવિષ્ય મેં અસપ્રકાર કા વ્યવહાર અનમેં સર્વથા નહીં હોનેવાલા હૈ, ઇસ ભવિષ્યત્પ્રજ્ઞાપનનય કી

એ ચતુરિન્દ્રિયજ્ઞતીય છે, ઇત્યાદિ વ્યવહાર થાય જ છે ઉદ્દેશશબ્દનો વ્યુત્પત્ત્યર્થ “ઉદ્દિશ્યતે ઇતિ ઉદ્દેશ-નરકાદિવ્યપદેશો, નરકાદિવ્યવહાર ઇતિ યાવત્” આ નારકી છે અર્થાત્ એ નરકપર્યાયવિશિષ્ટ જીવ છે, ઇત્યાદિ વ્યવહારને જ ઉદ્દેશ કહ્યો છે. આ ઉદ્દેશનો અભાવ પૂર્વોક્ત સંસારી જીવોમાં આવતો નથી, માટે “ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” એ કેમ કહેવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર—આ જગ્યાએ પહેલાં એ કહેવામાં આવેલ છે કે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહમાં આસક્ત બની ષટ્કાય જીવોના ઉપમર્દન કરવાવાળા હોવાથી જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મોનો બંધ કરી નરકનિગોદાદિ ગતિયોના અનંત દુખોના ભોક્તા બને છે, પરંતુ જે પરિગ્રહમાં આસક્ત નથી તે ષટ્કાય જીવોના રક્ષક હોવાથી કર્મોના બંધ કરવાવાળા નથી બનતા, અને ક્રમશઃ કેવળજ્ઞાનને મેળવી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરી લે છે. એવા જીવ જ અહીં પશ્યક શબ્દથી ગ્રહણ કરેલ છે. તે સાક્ષાત્ તીર્થંકર ગણધરાદિ દેવ છે. જ્યાં સુધી તે મુક્તિ પ્રાપ્ત નથી કરી લેતા ત્યાં સુધી નામકર્મની થોડી પ્રકૃતિયોનો સદ્ભાવ હોવાથી તેમાં પણ મનુષ્યપર્યાયવિશિષ્ટ આદિનો વ્યવહાર થાય છે, પરંતુ ભવિષ્યમાં તે પ્રકારનો વ્યવહાર તેમાં સર્વથા નહિ બનવાવાળો છે. આ ભવિષ્યત્પ્રજ્ઞાપનનયની અપેક્ષાથી

અપેક્ષા સે યહાં પર ખી “પશ્યકસ્ય ઉદ્દેશો નાસ્તિ” પશ્યક કો ઉદ્દેશ નહીં હૈ, યહ કથન સુસંગત સમજના ચાહિયે ।

પ્રશ્ન—કૈસે જાના જાતા હૈ કિ—અનમેં આગે ચલકર સમસ્ત અવશિષ્ટ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયાં સર્વથા ક્ષય હો જાનેવાલી હૈ? પ્રત્યક્ષ સે તો યહ વાત જ્ઞાત હો નહીં સકતી, ક્યોં કિ પ્રત્યક્ષ તો વર્તમાનસંબંધી પદાર્થ કો હી ગ્રહણ કરતા હૈ । અસ પ્રકાર કી પર્યાયસંબંધી વર્તમાન તો હૈ નહીં । અનુમાન ખી ઇસ વિષય કો નહીં જાન સકતા, ક્યોં કિ તદવિનાભાવી કોઈ ખી ઁસા હેતુ નહીં હૈ જો ઇસ વાત કા અનુમાપક હો, જિસકે વિના જો ન હો અસકો અવિનાભાવી કહતે હૈં ।

ઉત્તર—યહ તો હમ ખી જ્ઞાનતે હૈં કિ—ચક્ષુરાદિન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાનરૂપ પ્રત્યક્ષ (સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ) ઇસ પ્રકાર કી અવસ્થાકો નહીં જાન સકતા, પરન્તુ અનુમાનપ્રમાણ સે ઇસ વાત કી સિદ્ધિ હોતી હૈ કિ—અવશિષ્ટ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયોં કા વહાં પર સર્વથા ક્ષય હોગા । યહ કૈસે કહા કિ તદવિનાભાવી હેતુ વહાં પર નહીં હૈ । “તસ્ય સર્વજ્ઞત્વાત્” અર્થાત્ “વે સર્વજ્ઞ હૈં” યહી તદવિનાભાવી હેતુ હૈ । જિસ પ્રકાર ધૂમ વહ્નિ કા અવિનાભાવી હેતુ હૈ અસી પ્રકાર ઘાતિયા કર્મોં કે અભાવ સે ઉત્પન્ન

તે જગ્યોએ પણ “પશ્યકસ્ય ઉદ્દેશો નાસ્તિ” પશ્યકને ઉદ્દેશ નથી, એ કથન સુસંગત સમજવું જોઈએ

પ્રશ્ન—કેવી રીતે જાણવામા આવે કે તેમા આગળ સમસ્ત અવશિષ્ટ નામકર્મની પ્રકૃતિયો સર્વથા ક્ષય થઈ જવાવાળી છે? પ્રત્યક્ષથી તો એ વાત જ્ઞાત થઈ શકતી નથી, કારણ કે પ્રત્યક્ષ તો વર્તમાનસંબંધી પદાર્થને જ ગ્રહણ કરે છે તેવા પ્રકારની પર્યાયસંબંધી વર્તમાન તો છે નહિ અનુમાનથી પણ આ વિષયને જાણી શકાતો નથી, કારણ કે તદવિનાભાવી કોઈ પણ એવો હેતુ નથી જે આ વાતનો અનુમાપક હોય જેના વિના જે ન હોય તેને અવિનાભાવી કહે છે

ઉત્તર—એ તો અમે પણ માનીએ છીએ કે—ચક્ષુરાદિન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાનરૂપ પ્રત્યક્ષ (સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ) આ પ્રકારની અવસ્થાને જાણી શકતા નથી, પરંતુ અનુમાનપ્રમાણથી આ વાતની સિદ્ધિ થાય છે કે—અવશિષ્ટ નામકર્મની પ્રકૃતિઓનો ત્યા સર્વથા ક્ષય થશે એમ કેમ કહેવાય કે તદવિનાભાવી હેતુ ત્યાં “તસ્ય સર્વજ્ઞત્વાત્” અર્થાત્ “તે સર્વજ્ઞ છે” એજ તદવિનાભાવી જેવી રીતે ધુમાડો આગનો અવિનાભાવી હેતુ છે, તેવી રીતે

વર્ણ અવસ્થા મી શેષ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયોં કા ભવિષ્ય મેં વહાં વિલય-
નેરૂપ સાધ્ય કી સિદ્ધિ કરાને મેં અવિનાભાવી હેતુ હૈ અતઃ ઇસ અવિના-
ભાવી હેતુ સે વહાં પર સાધ્યકી સિદ્ધિ હોને મેં કોઈ મી બાધા નહીં આતી ।

પ્રશ્ન—અપને સાધ્ય કો સિદ્ધ કરને મેં હેતુ કી સિદ્ધિ પ્રધાન માની
તી હૈ । જિસ સાધ્ય કા હેતુ સિદ્ધ નહી હોતા વહ અપને સાધ્યકી સિદ્ધિ
હીં કર સકતા । સાધ્ય અસિદ્ધ હોતા હૈ, હેતુ તો સિદ્ધ હોના ચાહિયે ।

ઉત્તર—હેતુ સિદ્ધ હી હૈ-અસિદ્ધ નહીં, ભૂત ભવિષ્યત્ ઓર વર્તમાન
લીન સમસ્ત દ્રવ્ય ઓર ઉનકી અનન્તાનન્તપર્યાયોં કો હસ્તામલકવત્
પકાલાવચ્છેદેન (એક કાલમેં) જાનનેવાલા હોને સે તીર્થકરાદિ પ્રભુ
વર્ણ હૈં । જ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર ઘાતિયાકર્મોં કે સર્વથા વિનષ્ટ હોને સે
નહોને અપની જીવન્મુક્ત અવસ્થા મેં કેવલજ્ઞાનરૂપી સૂર્ય કો પ્રાપ્ત કરલિયા
। ઇસ પ્રશસ્તતમ ઓર અસાધારણ જ્ઞાન કે દ્વારા હી યે વિશ્વ કે સમસ્ત
ર્થસાર્થકો જાનતે રહતે હૈં । ઉનકા જ્ઞાન સમસ્ત પદાર્થોં કા જ્ઞાતા હૈ,
હ બાત અનુમાન પ્રમાણ સે સિદ્ધ હોતી હૈ, ક્યોં કિ જબ છદ્મસ્થ જીવોં
જ્ઞાનગુણ મેં જાનને કી હીનાધિકતા પાઈ જાતી હૈ તો ઉસસે યહ બાત

ઘાતિયા કર્મોના અભાવથી ઉત્પન્ન સર્વજ્ઞ અવસ્થા પણ શેષ નામકર્મની પ્રકૃતિ-
યોના ભવિષ્યમાં ત્યાં વિલયહોવારૂપ સાધ્યની સિદ્ધિ કરાવવામાં અવિનાભાવી
હેતુ છે માટે આ અવિનાભાવી હેતુથી ત્યાં સાધ્યની સિદ્ધિ થવામાં કોઈ અડ-
ચણ આવતી નથી

પ્રશ્ન—પોતાના સાધ્યને સિદ્ધ કરવામાં હેતુની સિદ્ધિ પ્રધાન માનવામાં
આવે છે. જે સાધ્યનો હેતુ સિદ્ધ થતો નથી ને પોતાના સાધ્યની સિદ્ધિ કરી
શકતો નથી. સાધ્ય અસિદ્ધ થાય છે, હેતુ તો સિદ્ધ થવો જોઈએ.

ઉત્તર—હેતુ સિદ્ધ જ છે. અસિદ્ધ નહિ. ભૂત ભવિષ્યત્ અને વર્તમાન
કાલીન સમસ્ત દ્રવ્ય અને તેની અનન્તાનન્ત પર્યાયોને હસ્તામલકવત્
પકાલાવચ્છેદેન (એક કાળમાં) જાણવાવાળા હોવાથી તીર્થ કરાદિ પ્રભુ સર્વજ્ઞ
છે. જ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર ઘાતિયા કર્મોનો સર્વથા વિનષ્ટ થવાથી તેને પોતાની
જીવન્મુક્ત અવસ્થામાં કેવળજ્ઞાનરૂપી સૂર્યને પ્રાપ્ત કરેલ છે. આ પ્રશસ્તતમ અને
અસાધારણ જ્ઞાનદ્વારા વિશ્વના સમસ્ત પદાર્થોને જાણતા રહે છે. તેનું જ્ઞાન સમસ્ત
પદાર્થોનું જ્ઞાતા છે. એ વાત અનુમાન પ્રમાણથી સિદ્ધ થાય છે. કારણ કે બન્યારે
છદ્મસ્થ જીવોને જ્ઞાનગુણમાં જાણવાની હીનાધિકતા મેળવી શકાય છે તો તેનાથી

परि=सर्वतो घटपटादिशब्दविषयकाणि ज्ञानानि=परिज्ञानानि श्रोत्रेण परि-
ज्ञानानि श्रोत्रपरिज्ञानि, तैः श्रोत्रपरिज्ञानैः, वार्द्धक्येन परिहीयमानैः=क्षीयमाणै-
रेकदात्मनो मूढतां जनयति, इत्युत्तरेण सम्बन्धः । वार्द्धक्ये च श्रोत्रेन्द्रियस्य
शिथिलतामुपगतस्य क्षीयमाणस्वशक्तिकस्य शब्दादिविषयग्रहणे चाक्षमता संजायते,
येन च बधिरो भवति, घटं टमिव शृणोति न शृणोति वेति तात्पर्यम् । एवं रोगेणापि
श्रोत्रपरिज्ञानानि क्षीयमाणानि भवन्तीति बोध्यम् । एवं सर्वत्र योज्यम् ।

के रूप में परिणत पुद्गलस्कन्धों का ग्रहण किया जाता है वह भावश्रोत्र
है । इसके भी दो भेद हैं—(१) लब्धि, और (२) उपयोग । भाषा के रूप
में परिणत पुद्गलस्कन्धों को जाननेरूप जो क्षयोपशम है उसका नाम लब्धि
है, अर्थात् शब्दों के जानने की शक्ति का नाम लब्धि है, और उन
शब्दों के जाननेरूप आत्मा का जो व्यापार-प्रयत्नविशेष है उसका
नाम उपयोग है । परिज्ञान शब्द का अर्थ है—सर्व प्रकार से अथवा सब
तरफ से घट पट आदि शब्दों का विषय करने वाला ज्ञान । वृद्धावस्था में
श्रोत्रजन्य ज्ञान क्षीणप्राय हो जाता है—कोई कहता कुछ है वृद्ध सुनता
कुछ है, अतः इस अवस्था में इस प्रकार की हालत आत्मा में मूढता को
उत्पन्न करती है । “ एकदा आत्मनो मूढतां जनयति ” इस उत्तर पदका
सम्बन्ध प्रत्येक के साथ लगा लेना चाहिये, अर्थात्—“ वार्द्धक्ये परिहीय-
मानैः श्रोत्रपरिज्ञानैः अभिक्रान्तं वयः समीक्ष्य मूढभावं जनयति, परिहीय-
मानैः चक्षुर्ज्ञानैः अभिक्रान्तं वयः समीक्ष्य मूढभावं जनयति, ” इत्यादि ।

परिणत पुद्गल स्कन्धोने अङ्गु करे छे ते भावश्रोत्र छे. तेना पणु जे लेह
छे—(१) लब्धि, अने (२) उपयोग. भाषाणा रूपमां परिणत पुद्गलस्कन्धोना
भाषुवाइप क्षयोपशम छे तेनुं नाम लब्धि छे, अर्थात् शब्दोनी शक्तिनुं
भाषुवुं तेनुं नाम लब्धि, अने ते शब्दोने भाषुवाइप आत्मानो जे व्यापार-
यत्नविशेष छे तेनु नाम उपयोग. परिज्ञान शब्दोने अर्थ, सर्व प्रकारथी
अथवा सर्व तरक्षथी घट पट आदि शब्दोने विषय करवावाणुं ज्ञान. वृद्धावस्थामां
श्रोत्रजन्य ज्ञान क्षीणप्राय थाय छे. कोर्छ कहे छे कोर्छ अने वृद्ध भाषुस सांलजे
छे भीणुं, तेथी आ अवस्थामां आ प्रकारनी हालत आत्मामां मूढताने उत्पन्न करे छे.

“ एकदा आत्मनो मूढतां जनयति ” आ उत्तरपदोने सम्बंध प्रत्येकनी
साथे लगाउवो जेछे अ, अर्थात् “ वार्द्धके परिहीयमानैः श्रोत्रपरिज्ञानैः अभि-
क्रान्तं वयः समीक्ष्य मूढभावं जनयति, परिहीयमानैः चक्षुर्ज्ञानैः अभिक्रान्तं वयः
समीक्ष्य मूढभावं जनयति ” इत्यादि,

ચક્ષુઃપરિજ્ઞાનૈઃ-ચક્ષુષા મમ્મરસંસ્થાનેન પરિજ્ઞાનાનિ-શુક્લનીલાદિરૂપવિષ-
યકાણિ ચક્ષુઃપરિજ્ઞાનાનિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=નશ્યમાનૈઃ । ગ્રાણપરિજ્ઞાનૈઃ-ગ્રાણેન

પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થા મેં બહિરા હો જાતા હૈ, ક્યોંકિ ઉસ સમય ઇસકી શ્રોત્રેન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ જિસસે અપને વિષય કો સ્પષ્ટરૂપ સે નહીં જાનતી, અર્થાત્ ઇસ સમય પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શબ્દાદિકવિષયોં કો ગ્રહણ કરને મેં ક્ષીણશક્તિ-(નાકાબિલ) હો જાતી હૈ, અતઃ વહ ઉન્હેં ગ્રહણ કરને મેં અસમર્થ હોતી હૈ, ઇસીકારણ સે બહિરા વ્યક્તિ ઘટ (ઘડા) શબ્દ કહે જાને પર ઉસે પટ (વસ્ત્ર) શબ્દ જૈસા સુનતા હૈ, અથવા ધીરે બોલને પર નહીં મી સુનતા હૈ । જિસ પ્રકાર વૃદ્ધાવસ્થા કે કારણ સ્વ ઇન્દ્રિયોં શિથિલ હો જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર રોગાદિક કારણોં સે મી ઉનમેં શિથિલતા આજાતી હૈ, યહ સ્વયં સમજ્ઞ લેના ચાહિયે, ઓર ઇસકા સમ્બન્ધ મી પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય કી પરિહીનતા કે સાથ જોડ લેના ચાહિયે । અર્થાત્-જિસ પ્રકાર શ્રોત્રેન્દ્રિય મેં સ્વવિષયગ્રહણરૂપ વ્યાપાર કે પ્રતિ પરિહીનતા કા કારણ રોગાદિક સે ઉત્પન્ન શિથિલતા હૈ ઉસી પ્રકાર પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય મેં મી અપને-અપને વિષય કો ગ્રહણ કરને રૂપ વ્યાપાર કી પરિહીનતા મેં રોગાદિક કારણ હૈ ।

ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કા આકાર મમ્મર કી દાલ કે તુલ્ય હૈ, ઇસકા વિષય શુક્લ, નીલ આદિ વર્ણ હૈ, ઇસ અવસ્થા મેં અથવા રોગાદિક કારણોં સે

પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થામા બહેરો થાય છે, કારણકે તે વખતે તેની શ્રોત્રેન્દ્રિય શિથિલ થાય છે, જે પોતાના વિષયને સ્પષ્ટ રૂપથી નથી જાણતી, અર્થાત્ આ વખતે દરેક ઇન્દ્રિય શબ્દાદિક વિષયને ગ્રહણ કરવામાં શક્તિહીન થાય છે અને તેને ગ્રહણ કરવામાં અસમર્થ બને છે આ કારણે બહેરો માણસ ઘડાને વસ્ત્ર શબ્દના રૂપમાં સાંભળે છે અને હળવેથી બોલવા આવે તો સાંભળતો નથી જેમ વૃદ્ધાવસ્થાના કારણે સઘળી ઇન્દ્રિયો શિથિલ બને છે તે પ્રકારે રોગાદિક કારણોથી પણ તેમાં શિથિલતા આવે છે તે પોતાની મેળે જાણવું નોંધ્યે, અને તેનો સંબંધ પણ દરેક ઇન્દ્રિયની પરિહીનતા સાથે જોડવો નોંધ્યે, અર્થાત્ જેમ શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં સ્વવિષય ગ્રહણ કરવા રૂપ વ્યાપાર પ્રતિ પરિહીનતાનું કારણ રોગાદિકથી ઉત્પન્ન થતી શિથિલતા છે તેમ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોતપોતાના વિષયને ગ્રહણ કરવા રૂપ વ્યાપારની પરિહીનતામાં રોગાદિક કારણ છે.

ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો આકાર મમ્મરની દાળ જેવો છે. તેનો વિષય શુક્લ, નીલ વર્ણ છે. આ અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક કારણોથી ચક્ષુ ઇન્દ્રિય ન્યારે

અતિમુક્તકકુસુમાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-ગન્ધવિષયકાણિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=પરિત્ય-
જ્યમાનૈઃ । રસનપરિજ્ઞાનૈઃ-રસનેન ક્ષુરપ્રાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-મધુરતિક્તાદિરસવિષય-
કાણિ જ્ઞાનાનિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=ક્ષીયમાણૈઃ । સ્પર્શપરિજ્ઞાનૈઃ-સ્પર્શન-સ્પર્શને-
ન્દ્રિયેણ નાનાવિધાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-શીતોષ્ણસ્પર્શદિવિષયકાણિ જ્ઞાનાનિ, તૈઃ,
પરિહીયમાનૈઃ=વિલીયમાનૈઃ । ઇતિ સકલાનામપીન્દ્રિયાણાં વાર્દ્ધક્યેન રોગોદયેન ચ
સ્વસ્વવિષયગ્રાહકશક્તયઃ પરિક્ષીણા ભવન્તીતિ ભાવઃ । અભિક્રાન્તં ચ સ્વલુ વયઃ
સમ્પ્રેક્ષ્ય સ એકદા મૂઢભાવં જનયતીત્યુત્તરેણાન્વયઃ । શ્રોત્રચક્ષુર્ગ્રાણરસનસ્પર્શનાના-

ચક્ષુઃ-ઇન્દ્રિય જ્ય શુક્લ-નીલાદિરૂપ અપને વિષય કો ગ્રહણ કરને વાલે જ્ઞાન
સે રિક્ત હો જાતી હૈ; ગ્રાણ-ઇન્દ્રિય-જિસકા આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ
કે સમાન હૈ, વહ જ્ય હસ અવસ્થા મેં અથવા રોગાદિક કારણોં સે
અપને ગન્ધગ્રહણ કરને વાલે જ્ઞાન સે શૂન્ય હો જાતી હૈ, રસના-ઇન્દ્રિય-
જિસકા આકાર કુરપા કે સદૃશ હૈ, ઓર જો મધુર, તિક્ત આદિ રસોં
કો વિષય કરતી હૈ વહ મી જ્ય હસ અવસ્થામેં અથવા રોગાદિ કારણોં
સે અપને વિષયકો ગ્રહણ કરનેવાલે જ્ઞાનમેં અસમર્થ હો જાતી હૈ; સ્પર્શન-
ઇન્દ્રિય-જિસકા આકાર નિયત નહીં હૈ કિન્તુ અનેક પ્રકારકે આકાર કો
ધારણ કરનેવાલી હૈ, ઓર જિસકા વિષય આઠ પ્રકાર કા શીત-ઉષ્ણ
આદિ સ્પર્શ હૈ વહ જ્ય હસ અવસ્થામેં અથવા રોગાદિક કારણોંસે શિથિલ
હો જાતી હૈ ત્ય હસ આત્મામેં મૂઢતા ઉત્પન્ન હોતી હૈ યહ અનુભવસિદ્ધ
વાત હૈ । મૂઢતા ઉત્પન્ન હોનેકા કારણ યહી હૈ કિ હસ હાલતમેં પ્રત્યેક
ઇન્દ્રિય અપને ૨ વિષયકો ગ્રહણ કરને કે બોધસે વિકલ હો જાતી

શુક્લ-નીલાદિ રૂપ પોતાના વિષયને ઓળખના જ્ઞાનથી રિક્ત થાય છે, ગ્રાણ-
ઇન્દ્રિય જેનો આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ સમાન છે. તે જ્યારે આ અવસ્થામાં
અથવા રોગાદિક કારણોથી પોતાને ગન્ધ ઓળખ કરવાના જ્ઞાનથી શૂન્ય થાય છે,
રસના-ઇન્દ્રિય જેનો આકાર તાવેથા જેવો છે અને જે મધુર, તિક્ત આદિ રસોનો
વિષય કરે છે તે પણ આવી અવસ્થામાં અથવા રોગાદિ કારણોથી પોતાના વિષયને
ઓળખ કરવાના જ્ઞાનમાં અસમર્થ થાય છે, સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય જેનો આકાર નિયત
નથી પરંતુ અનેક પ્રકારના આકારને ધારણ કરે છે અને જેના વિષય આઠ
પ્રકારના શીત-ઉષ્ણ આદિ સ્પર્શ છે તે પણ આ અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક
કારણોથી શિથિલ થાય છે ત્યારે આત્મામાં મૂઢતા ઉત્પન્ન થાય છે તે અનુભવસિદ્ધ
વાત છે. મૂઢતા ઉત્પન્ન રવાનું કારણ એ છે કે આવી હાલતમાં દરેક બધી

મિન્દ્રિયાણામાકારાઃ ક્રમેણ કદમ્બપુષ્પ-મમૂરધાન્યાઽતિમુક્તકકુસુમ-ધુરપ્ર-નાના-
વિધાકારા ભવન્તિ । ઉક્તશ્ચ—

પુષ્પં કલંબુયારં, ધન્નમસૂરાઈમુત્તચંદો ય ॥

હોઈ સુરપ્પ, નાના-કિઈ ય સોઈંદિયાઈણં ॥ ૧ ॥

છાયા—પુષ્પં કદમ્બાકારં ધાન્યમમૂરાતિમુક્તચન્દ્રશ્ચ ।

ભવતિ ધુરપ્રા નાનાકૃતિશ્ચ શ્રોત્રેન્દ્રિયાદીનામ્ ॥ ઇતિ ।

ઇન્દ્રો જીવસ્તસ્ય ચિહ્નમિન્દ્રિયમ્, તેનૈવ જીવજ્ઞાનસમ્ભવાત્ । તત્ત્વ દ્રવ્યભાવ-
ભેદેન દ્વિવિધમ્ । દ્રવ્યેન્દ્રિયં દ્રવ્યમયમ્, તત્ત્વ નિર્વૃત્ત્યુપકરણભેદાદ્વિવિધમ્ । નિર્માણ-
નામકર્માઙ્ગોપાઙ્ગનામકર્મભ્યાં નિર્વર્તિતં નિર્વૃત્તીન્દ્રિયમ્, તત્ત્વ વાહ્યાભ્યન્તરભેદા-
હૈ । ઇન્દ્રિયોં કા જો યહ આકાર પ્રકટ કિયા હૈ વહ શાસ્ત્રકારોંને હસ
પ્રકાર વતલાયા હૈ—

“ પુષ્પં કલંબુયારં, ધન્નમસૂરાઈમુત્તચંદો ય ।

હોઈ સુરપ્પ, નાનાકિઈ ય સોઈંદિયાઈણં ॥ ૧ ॥ ”

ઇન્દ્રિય શબ્દ કા અર્થ યહ હૈ કિ—‘ ઇન્દ્ર ’ નામ જીવ કા હૈ, ઉસકા
જો ચિહ્ન હૈ વહ ઇન્દ્રિય હૈ, અર્થાત્ જિસકે દ્વારા જીવ પહિચાના જાવે
ઉસકા નામ ઇન્દ્રિય હૈ । યહ પાંચ પ્રકાર કી હૈ । ઇનમેં પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય કે
દો-દો ભેદ હૈ—(૧) દ્રવ્યેન્દ્રિય, (૨) ભાવેન્દ્રિય । પુદ્ગલદ્રવ્યોં કી જો
ઇન્દ્રિયાકાર રચના હૈ ઉસકા નામ દ્રવ્યેન્દ્રિય હૈ । યહ દ્રવ્યેન્દ્રિય, નિર્વૃત્તિ
ઔર ઉપકરણ કે ભેદસે દો પ્રકાર કી હૈ । હસ દ્રવ્યેન્દ્રિય કી રચના
નિર્માણનામકર્મ ઔર અઙ્ગોપાઙ્ગ નામકર્મ કે દ્વારા હોતી હૈ । હસ નિર્વૃત્તી-
ન્દ્રિય કે-વાહ્યનિર્વૃત્તિ ઔર આભ્યન્તર-નિર્વૃત્તિ, હસ પ્રકાર સે દો ભેદ

ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાના વિષયને ગ્રહણ કરવાના બોધથી વિકલ થાય છે. ઇન્દ્રિયોના
જે આકારો બતાવ્યા છે તે શાસ્ત્રકારોએ આ પ્રકારે બતાવ્યા છે.—

“ પુષ્પં ફલંબુયાર, ધન્નમસૂરાઈમુત્તચંદો ય ।

હોઈ સુરપ્પ-નાનાકિઈય સોઈંદિયાઈણં ॥ ૧ ॥ ”

ઇન્દ્રિય શબ્દનો અર્થ એ છે કે—‘ ઇન્દ્ર ’ નામ જીવનું છે, તેનું જે ચિહ્ન
છે તે ઇન્દ્રિય છે, અર્થાત્ જે દ્વારા જીવની પિછાણ થાય તેનું નામ ઇન્દ્રિય છે
તે પાંચ પ્રકારની છે. તેમાં દરેક ઇન્દ્રિયના બે-બે ભેદ છે. (૧) દ્રવ્યેન્દ્રિય, (૨)
ભાવેન્દ્રિય પુદ્ગલ દ્રવ્યોની જે ઇન્દ્રિયાકાર રચના છે તેનું નામ દ્રવ્યેન્દ્રિય છે.
તે દ્રવ્યેન્દ્રિય, નિર્વૃત્તિ અને ઉપકરણના ભેદથી બે પ્રકારે છે. દ્રવ્યેન્દ્રિયની રચના
નામકર્મ અને અંગોપાંગ-નામકર્મ દ્વારા થાય છે. આ નિર્વૃત્તીન્દ્રિય,
નિર્વૃત્તિ અને આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિ, આ પ્રકારથી બે ભેદ રૂપ છે. ઉત્સેધાશુલના

द्विविधम् । उत्सेधाङ्गुलासंख्येयभागप्रमितानां स्वच्छतराणामात्मप्रदेशानां प्रतिनियतचक्षुरादीन्द्रियसंस्थानेनावस्थिता या वृत्तिः सा आभ्यन्तरा निर्वृत्तिरुच्यते, खड्ग-धारास्थानीयेति यावत्, आत्मप्रदेशेषु पुद्गलविपाकिना निर्माणारूपेण कर्मणा रथादिवस्तुसम्पादकरथकारेणैवयः प्रतिनियतसंस्थानस्तत्तदिन्द्रियाभिधेयः कर्णशङ्कुल्यादिनिर्वर्त्यते सा बाह्या निर्वृत्तिः खड्गसदृशी । तत्र बाह्या पर्पटिकादिरूपा, सा च विचित्रा प्रतिनियतरूपतयोपदेष्टुं न शक्यते, तथा हि—कस्यचिदक्षि स्थूलं, कस्य-हैं । उत्सेधाङ्गुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण अत्यन्त निर्मल आत्म-प्रदेशों की चक्षुरादि इन्द्रियों के प्रतिनियत आकार से अवस्थित जो वृत्ति है उसका नाम आभ्यन्तर निर्वृत्ति है । इसकी उपमा तलवार की धारासे दी गई है । उन आत्मप्रदेशोंमें पुद्गलविपाकी निर्माणनामकर्म के द्वारा जो कर्णशङ्कुली आदि रूपसे उस-उस इन्द्रियों के आकारों की रचना की जाती है उसका नाम बाह्यनिर्वृत्ति है । जैसे बढई रथादिक वस्तुओं के प्रतिनियत आकारों को बनाता है उसी प्रकार यह निर्माण-नामकर्म, जो पुद्गलविपाकी प्रकृति है, उन इन्द्रियाकाररूपपरिणत आत्मप्रदेशों में पुद्गलद्रव्योंकी प्रतिनियत इन्द्रियाकाररूप से रचना करता है । इसकी उपमा तलवारसे दी गई है । बाह्य निर्वृत्तिका प्रतिनियत कोई आकार नहीं है, वह अनेक प्रकार की है, जैसे आंखों में पर्पटिकादिरूपरचना । यह चक्षु-इन्द्रिय की बाह्य निर्वृत्ति है, परन्तु यह सर्वत्र इसी प्रकार की होनी है, यह नियमित नहीं, क्योंकि किसी की आंख मोटी होती है

असंख्यातमां भाग प्रमाण अत्यन्त निर्मल आत्मप्रदेशोनी चक्षुरादि इन्द्रियोना प्रतिनियत आकार्थी अवस्थित जे वृत्ति छे तेनुं नाम आभ्यन्तर निर्वृत्ति छे, तेनी उपमा तलवारनी धार जेम छे, ते आत्मप्रदेशोमा पुद्गलविपाकी निर्माण नामकर्म द्वारा जे कर्णशङ्कुली आदि रूपे ते ते इन्द्रियोना आकारोनी रचना करी छे तेनुं नाम बाह्यनिर्वृत्ति छे जेम अुथार रथादिक वस्तुओना प्रतिनियत आकारोने जनावे छे ते प्रकारे आ निर्माण नामकर्म जे पुद्गलविपाकी प्रकृति छे, ते इन्द्रियाकार रूप परिणत आत्मप्रदेशोमां पुद्गलद्रव्योनी प्रतिनियत इन्द्रियाकार रूप रचना करे छे, तेनी उपमा तलवारथी आपी छे, बाह्य निर्वृत्तिनो प्रतिनियत केई आकार नहीं, ते अनेक प्रकारना छे, जेम आंखोमा पर्पटिकादि रूप रचना, ते चक्षुइन्द्रियनी बाह्य निर्वृत्ति छे, परन्तु आम सर्वत्र छे, तेम नियमित नछि, केईनी आण मोटी छाय छे, केईनी नानी, आभ्यन्तर

ચિત્ત્વ હ્રસ્વમિત્યાદ્યનેકપ્રકારા । આભ્યન્તરા તુ નિર્વૃત્તિઃ સર્વેષાં સમાના ભવતિ । ચતુર્ણામેવેન્દ્રિયાણાં બાહ્યાભ્યન્તરભેદો ભવતિ, ન સ્પર્શનેન્દ્રિયસ્યેતિ બોધ્યમ્ । ઉપક્રિયત ઇત્યુપકરણમ્, ઉપકરણેન્દ્રિયશ્ચ સ્વઙ્ગસ્થાનીયવાહ્યનિર્વૃત્તેઃ સ્વઙ્ગધારાસદૃશ-સ્વચ્છતરપુદ્ગલસમૂહરૂપાઽભ્યન્તરનિર્વૃત્તેશ્ચ શક્તિવિશેષઃ । અનુપઘાતાનુગ્રહાભ્યાં નિર્વૃત્તી-ન્દ્રિયસ્યોપકારિત્વેનોપકરણમ્ । તદપિ બાહ્યાભ્યન્તરનિર્વૃત્ત્યુપકારકત્વેન દ્વિવિધમ્ । નિર્વૃત્ત્યુપકરણરૂપમુભયમેતત્પુદ્ગલપરિણામાત્મકમપિ સદિન્દ્રિયશબ્દવ્યવહારં લભતે ।

और किसीकी छोटी । आभ्यन्तर निर्वृत्ति समस्त इन्द्रियों की एकसी होती है । निर्वृत्ति-इन्द्रिय के जो बाह्य और आभ्यन्तर भेद किये हैं वे स्पर्शन-इन्द्रिय को छोड़ कर शेष चार इन्द्रियों के ही हैं, ऐसा समझ लेना चाहिये ।

द्रव्येन्द्रिय का जो दूसरा भेद उपकरण है उसका अर्थ ‘निर्वृत्ति का जो उपकार करे’ यह है । यह स्वङ्ग-तलवार-स्थानीय बाह्यनिर्वृत्ति तथा उसकी धारास्थानीय स्वच्छतरपुद्गलसमूहरूप आभ्यन्तर निर्वृत्ति की एक विशेष शक्ति है-जो अनुपघात और अनुग्रह से निर्वृत्ति-इन्द्रिय की उपकारिका मानी गई है ।

यह उपकरण द्रव्येन्द्रिय भी आभ्यन्तर और बाह्य निर्वृत्ति का उप-कारक होने की वजहसे दो प्रकार की है-(१) आभ्यन्तर-उपकरण और (२) बाह्य-उपकरण । आभ्यन्तर निर्वृत्ति का जो उपकार करे वह आभ्यन्तर-उपकरण और बाह्य निर्वृत्तिका जो उपकार करे वह बाह्य-उप-करण है । निर्वृत्तिरूप और उपकरणरूप द्रव्येन्द्रिय यद्यपि पुद्गलपरिणामा-

નિર્વૃત્તિ સમસ્ત ઇન્દ્રિયોની એક સરખી છે નિર્વૃત્તિ ઇન્દ્રિયના જે બાહ્ય અને આભ્યન્તર ભેદ છે તે સ્પર્શન ઇન્દ્રિયને છાંડીને શેષ ચાર ઇન્દ્રિયોના છે તેમ સમજવાનું છે

દ્રવ્યેન્દ્રિયનો બીજો ભેદ ઉપકરણ છે, એનો અર્થ ‘નિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે’ એ છે આ તલવારસ્થાનીય બાહ્ય નિર્વૃત્તિનો તથા તેની ધારાસ્થાનીય સ્વચ્છતરપુદ્ગલસમૂહરૂપ આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિની એક વિશેષ શક્તિ છે જે અનુપઘાત અને અનુગ્રહથી નિર્વૃત્તિ ઇન્દ્રિયની ઉપકારિકા માની છે

આ ઉપકરણ દ્રવ્યેન્દ્રિય પણ આભ્યન્તર અને બાહ્ય નિર્વૃત્તિનું ઉપકારક હોવાથી બે પ્રકારનું છે (૧) આભ્યન્તર ઉપકરણ, અને બાહ્ય ઉપકરણ, આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે તે આભ્યન્તર ઉપકરણ છે અને બાહ્યનિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે તે બાહ્ય ઉપકરણ છે. નિર્વૃત્તિ રૂપ અને ઉપકરણ રૂપ દ્રવ્યેન્દ્રિય

તત્ત્વ ભાવેન્દ્રિયસહયોગં પ્રાપ્યૈવાત્મનઃ સાહાય્યં કરોતિ પ્રસ્થકાષ્ઠવત્ 'પાયલીકાઠ' ઇતિ ભાષા । આત્મપરિણતિરૂપં ભાવેન્દ્રિયમપિ લઙ્ઘ્યુપયોગભેદાદ્વિવિધમ્, તત્ત્વ તત્ત્વ-દિન્દ્રિયાવારકકર્મણાં ક્ષયોપશમો લઙ્ઘિઃ । ઇન્દ્રિયાણાં સ્વસ્વવિષયેષુ પરિચ્છેદ્યવ્યા-પાર ઉપયોગઃ । અત્ર લઙ્ઘ્યૌ વર્તમાનાયાં સત્યાં નિર્વૃત્યુપકરણોપયોગાનાં ત્રયાણામપ્ય-પેક્ષા । નિર્વૃત્તૌ વર્તમાનાયાં સત્યામુપકરણોપયોગયોરપેક્ષા । સત્યુપકરણે ચોપયો-ત્મક હૈ તો મી ઉસકા જો ઇન્દ્રિય શબ્દસે વ્યવહાર કિયા ગયા હૈ ઉસકા મતલબ યહી હૈ કિ યહ આત્માકો પદાર્થજ્ઞાનમેં સહાયક હૈ, ક્યોંકિ વિના દ્રવ્યેન્દ્રિય કે આત્મા કો પદાર્થજ્ઞાન નહીં હો સકતા । યહી કારણ હૈ કિ વિગ્રહગતિ મેં ભાવેન્દ્રિયકે હોને પર મી દ્રવ્યેન્દ્રિય કે અભાવમેં જીવકો બાહ્ય પદાર્થજ્ઞાન નહીં હોતા । દ્રવ્યેન્દ્રિય યદ્યપિ આત્માકો પદાર્થજ્ઞાન કરાનેમેં સહાયક હૈ તો મી વહ ભાવેન્દ્રિય કે સહયોગ કે વિના આત્માકો પદાર્થબોધમેં સહાયક નહીં હો સકતા ।

આત્મપરિણતિરૂપ ભાવેન્દ્રિય મી લઙ્ઘિ ઓર ઉપયોગકે ભેદ સે દો પ્રકાર કી હૈ । ડન-ડન ઇન્દ્રિયોં કો આવરણ કરનેવાલે કર્મોંકા જો ક્ષયોપશમ હૈ ઉસકા નામ લઙ્ઘિ હૈ । ઇવં ઇન્દ્રિયોંકા અપને ૨ વિષયોં કે જાનને રૂપ જો વ્યાપાર હૈ ઉસકા નામ ઉપયોગ હૈ । આત્મામેં લઙ્ઘિ-જાનને કી યોગ્યતા-હોનેપર મી ઉસે નિર્વૃત્તિ, ઉપકરણ ઇવં ઉપયોગ કી અપેક્ષા રહતી હૈ । લઙ્ઘિ કે હોતે હુણ મી ઇનકે વિના આત્માકો પદાર્થ-

યદ્યપિ પુહ્લગલપરિણામાત્મક છે તો પણ તેનો જે ઇન્દ્રિય શબ્દથી વ્યવહાર કરેલ છે તેનું કારણ એ છે કે તે આત્માને પદાર્થજ્ઞાનમાં સહાયક છે, કારણકે દ્રવ્ય ઇન્દ્રિય વિના આત્માને પદાર્થજ્ઞાન થતું નથી, એજ કારણ છે કે વિગ્રહગતિમાં ભાવેન્દ્રિય થવાથી પણ દ્રવ્યેન્દ્રિય ના અભાવમાં જીવને બાહ્ય પદાર્થજ્ઞાન થતું નથી. દ્રવ્યેન્દ્રિય યદ્યપિ આત્માને પદાર્થજ્ઞાન કરાવવામાં સહાયક છે, તો પણ તે ભાવેન્દ્રિયના સહયોગ વિના પદાર્થબોધમાં આત્માનો સહાયક થઈ શકતો નથી.

આત્મપરિણતિરૂપ ભાવેન્દ્રિય પણ લઙ્ઘિ અને ઉપયોગના ભેદથી બે પ્રકારે છે તે તે ઇન્દ્રિયોના આવરણ કરનાર કર્મોના જે ક્ષયોપશમ છે તેનું નામ લઙ્ઘિ છે. ઇન્દ્રિયોના પોત-પોતાના વિષયોને બાણવા રૂપ જે વ્યાપાર છે તેનું નામ ઉપયોગ છે.

આત્મામાં લઙ્ઘિ-બાણવાની યોગ્યતા-હોવા છતાં તેને નિર્વૃત્તિ, ઉપકરણ, અને ઉપયોગની અપેક્ષા રહે છે. લઙ્ઘિના હોવા છતાં પણ તેના વિના આત્માને પદાર્થ-

ગસ્યાપેક્ષેતિ વિજ્ઞેયમ્ । અત્રાયં વિશેષઃ—શ્રોત્રં દ્વાદશયોજનાગતં શબ્દં ગૃહ્ણતિ, ચક્ષુરપિ સાતિરેકૈકવિંશતિલક્ષયોજનસ્થિતં રૂપં ગૃહ્ણતિ, અન્યાનિ ત્રીણીન્દ્રિયાણિ નવયોજનાગતસ્વસ્વવિષયગ્રાહકાણિ ભવન્તિ । જઘન્યતસ્તુ ચક્ષુરઙ્ગુલસંખ્યેયભાગ-મિતદેશવર્તિરૂપં ગૃહ્ણતિ । અન્યાનિ ચત્વારીન્દ્રિયાણિ ચાઙ્ગુલસંખ્યેયભાગપ્રમિત-દેશસ્થિતં સ્વસ્વવિષયં ગૃહ્ણન્તીતિ ભાવઃ । તત્ર શ્રોત્રાદીનાં ચતુર્ણાં પ્રાપ્યકારિત્વં, શબ્દાદિપુદ્ગલાનાં કર્ણાદિસંયોગેનૈવ નિર્ણયાત્ । ચક્ષુષશ્ચાપ્રાપ્યકારિત્વં રૂપસ્ય સંયોગં વિના દૂરત એવ નિશ્ચયાદિતિ વિશેષઃ ।

બોધ નહીં હોતા હૈ । ઇસી પ્રકાર નિર્વૃત્તિ કે હોને પર મી ઉસે ઉપકરણ ઔર ઉપયોગકી અપેક્ષા રહા કરતી હૈ, ઔર ઉપકરણ કે સદ્ભાવમેં ઉપયોગ કી । શ્રોત્ર-ઇન્દ્રિય વારહ યોજન સે આયે હુએ શબ્દ કો ગ્રહણ કરતી હૈ । ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કુછ અધિક ૨૧ ઇક્કીસ લાખ યોજન સ્થિત રૂપ કો જાનતી હૈ । બાકી કી ત્રીન ઇન્દ્રિયાં નવ યોજન સે આયે હુએ અપને ૨ વિષય કો ગ્રહણ કરનેવાલી હોતી હૈ । યહ ઉત્કૃષ્ટ કી અપેક્ષા ઇન્દ્રિયોં કા વિષય બતલાયા હૈ । જઘન્ય કી અપેક્ષા ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય અઙ્ગુલ કે સંખ્યાતવેં ભાગમેં સ્થિત રૂપકો ગ્રહણ કરતી હૈ । બાકી કી ચાર ઇન્દ્રિયાં અઙ્ગુલકે અસંખ્યાતવેં ભાગ પ્રમાણ દેશમેં રહે હુએ અપને ૨ વિષય કો જાનનેવાલી હૈ ।

સ્પર્શન, રસન, ઘ્રાણ ઔર શ્રોત્ર, યે ચાર ઇન્દ્રિયાં અપને ૨ પૌદ્ગલિક વિષયોં કો છ (સ્પર્શ) કર હી જાનતી હૈ ઇસ લિયે યે પ્રાપ્યકારી હૈ ।

બોધ થતો નથી, એ પ્રકારે નિર્વૃત્તિ થવા છતાં પણ તેને ઉપકરણ અને ઉપયોગની અપેક્ષા રહે છે, અને ઉપકરણના સદ્ભાવમાં ઉપયોગની રહે છે.

શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય બાર યોજનથી આવેલા શબ્દને ગ્રહણ કરે છે. ચક્ષુઇન્દ્રિય કાંઈક અધિક એકવીસ લાખ યોજનથી રૂપ જાણે છે બાકીની ત્રણ ઇન્દ્રિયો નવ યોજનથી આવેલા પોત-પોતાનાં વિષયને ગ્રહણ કરી શકે છે. આ ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષા ઇન્દ્રિયોનો વિષય જતાવ્યો છે જઘન્યની અપેક્ષા ચક્ષુઇન્દ્રિય અંગુળના સંખ્યાતમાં ભાગમાં સ્થિત રૂપને ગ્રહણ કરે છે. બાકીની ચાર ઇન્દ્રિયો અંગુળના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ દેશમાં રહેલા પોત-પોતાના વિષયને જાણે છે

સ્પર્શન, રસન, ઘ્રાણ અને શ્રોત્ર, આ ચાર ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાનાં પૌદ્ગલિક વિષયોનો સ્પર્શ કરી જાણે છે માટે એ પ્રાપ્યકારી છે ચક્ષુઇન્દ્રિય પોતાના વિષયને સ્પર્શ કર્યા વિના જાણી લે છે માટે તે અપ્રાપ્યકારી છે, અર્થાત્ આ

યથા કશ્ચિદરિસર્દનનામા નરાધિપો વિપક્ષપક્ષદલનદક્ષોઽપ્યવસરાનભિજ્ઞો નગરીં સિંહાદિશ્વાપદાકુલિતામવલોક્યાપિ વહુષુ પ્રાણિગણેષુ નાશમુપગતેષુ પશ્ચાચ્ચ રક્ષાર્થં પ્રાકારં કારિતવાન્ તથૈવ કાલાકાલસમુત્થાયી ચાવસરાનવસરાનભિજ્ઞો ભવતીતિ ભાવઃ ।

યસ્તુ સમ્યક્ કાલોત્થાયી સ ચ કાલપરિજ્ઞાનાર્થં સતતં સાવધાનો યથાવસરં સકલાં ક્રિયાં વિદધાતિ । કિન્તુ યથા જન્માદેરકાલો નાસ્તિ તથા ધર્મેઽપિ નાઽકાલઃ, “ધર્મો હિ બુદ્ધેર્હિ પરિસેવિયન્વો” ઇતિ વચનાત્ । યો હિ રાગવાન્ સ કાલાકાલસમુત્થાયી કિમર્થમિત્યાહ—“સંયોગાર્થી” સંયુજ્યતે, સંયોજનં વા સંયોગઃ, સોઽર્થઃ—પ્રયોજનં યસ્યાસ્તીતિ સંયોગાર્થી । સંયોગઃ=શબ્દાદિવિષયઃ, માતાપિત્રાદિભિશ્ચ સંયોગસ્તદર્થી=તત્પ્રયોજનવાન્ ।

પરંતુ અનવસરજ્ઞ હોને સે ડસને અપની પ્રજાકી રક્ષા ડસ સમય—જબ કિ ડસે સિંહાદિ નષ્ટ-ભ્રષ્ટ કર રહે થે; નહીં કી, પશ્ચાત્ જબ લોગ હર તરહ સે વર્ષાદ હો ચુકે તબ ડસ સમય જોકિ ડનકી રક્ષા કા અવસર નહીં થા ડસને રક્ષા કે લિયે નગર કા કોટ બનવા દિયા । જિસ પ્રકાર વહ રાજા કાલાકાલસમુત્થાયી હોને સે વિવેકી નહીં માના જા સકતા, ડસી પ્રકાર જો પ્રાણી કાલાકાલસમુત્થાયી હોતા હૈ વહ ભી અવસર ઓર અનવસર કા યથાર્થ જ્ઞાતા નહીં હોતા, જો કાર્ય કે ડચિત કાલ મેં કાર્ય કરને કે સ્વભાવવાલા હોતા હૈ વહ નિરન્તર અવસર કે અનુસાર હી સાવધાન હોકર ડસી સમય મેં સમસ્ત ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ । રાગવાન પ્રાણી કાલાકાલસમુત્થાયી ક્યોં હોતા હૈ? ડસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ—“સંયોગાર્થી” ઇત્યાદિ । વહ સંયોગાર્થી હૈ । સંયોગ હી જિસકા પ્રયોજન હૈ વહ સંયોગાર્થી હૈ શબ્દાદિક વિષયોં કે સાથ,

હોવાથી બ્યારે સિંહાદિ હિંસક પ્રાણી પ્રજાનો નાશ કરી રક્ષા છતાં ત્યારે પ્રજાની રક્ષા કરી નહિ પણ બ્યારે પ્રજાની ખરબાહી થઈ ગઈ ત્યારે જે કે અવસર નહિ હોવા છતાં પ્રજાની રક્ષા માટે કોટ બનાવ્યો. તે જે પ્રકારે તે રાજા કાળાકાળ-સમુત્થાયી હોવાથી વિવેકી મનાતો નથી તે પ્રકારે જે પ્રાણી કાળાકાળસમુત્થાયી છે તે પણ સમય અસમયનો જ્ઞાતા નથી, જે કાર્યના ઉચિત કાળમા કાર્ય કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે તે નિરંતર અવસર અનુસાર જ સાવધાન થઈ તે સમયમાં સમસ્ત ક્રિયાઓ કરે છે. રાગવાળો પ્રાણી કાળાકાળસમુત્થાયી કેમ બને છે? તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે—“સંયોગાર્થી” ઇત્યાદિ. તે સંયોગાર્થી છે. સંયોગ જ જેનું પ્રયોજન છે તે સંયોગાર્થી છે. શબ્દાદિક વિષયોમા તેમ જ માતાપિતાદિકની

નન્વિન્દ્રિયાણ્યેવ વસ્તુ નિર્ણેતું પ્રભવન્તુ કિમધિકેનાતિરિક્તાત્મસ્વીકારેणेતિ
ચેન્ન, તત્તદિન્દ્રિયનાશેઽપિ તત્તદિન્દ્રિયપૂર્વાનુભૂતાર્થસ્મરણસ્યાન્યથાનુપપત્ત્યાઽતિરિ-
ક્તસ્યાત્મનોઽવશ્યં સિદ્ધેઃ । આત્મનો વિજ્ઞાનોત્પત્તૌ શ્રોત્રાદીનિ પ્રકૃષ્ટોપકારકાણિ
ભવન્તિ, તેન કરણરૂપકારકતયા તૃતીયા વિભક્તિઃ સિદ્ધયતિ, તતોઽનેન શ્રોત્રેણ મયા
શબ્દઃ શ્રુતઃ, અનેન ચ મન્દતરઃ શબ્દઃ શ્રુતઃ, इत्यादयः प्रयोगाः सङ्गच्छन्ते ।

ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય અપને વિષય કો વિના છૂએ (સ્પર્શ કિયે) હી જાન લેતી હૈ
અતઃ વહ અપ્રાપ્યકારી હૈ, અર્થાત્ યહ ઇન્દ્રિય અપને સાથ અપને વિષય
કા સંયોગ હુએ વિના દૂરસે હી અપને રૂપ-વિષય કા પ્રકાશક હૈ ।

શંકા—ઇન્દ્રિયોં કો હી અપને ૨ વિષયરૂપ જ્ઞેય કા નિર્ણય કરનેવાલી
માનલેની ચાહિયે, ઉનસે અતિરિક્ત આત્માકે માનનેકી કયા આવશ્યતા હૈ ? ।

ઉત્તર—યહ વાત કહના ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ-જબ ઇન્દ્રિયાં નષ્ટ
હો જાતી હૈં તબ ઉનકે દ્વારા પૂર્વાનુભૂત પદાર્થકા સ્મરણ હોતા હૈ । યદિ
ઇન્દ્રિયાં હી પદાર્થ કી જ્ઞાતા માની જાયેં તો ફિર જો ઉનકે વિનાશ હોને
પર અનુભૂત પદાર્થ કી સ્મૃતિ હોતી હૈ વહ નહીં હોની ચાહિયે અતઃ અન્ય-
થાનુપપત્તિ (જિસકે નહીં હોને પર નહીં હોના) રૂપ અનુમાન સે ઇન્દ્રિ-
યોંકે અતિરિક્ત આત્માકે અસ્તિત્વકી સિદ્ધિ હોતી હૈ ।

શંકા—યદિ ઇન્દ્રિયોં સે ભિન્ન આત્માકે અસ્તિત્વ કી સ્વીકૃતિ માની
જાવેગી તો ફિર “ ચક્ષુષા દૃશ્યતે, શ્રોત્રેણ શ્રૂયતે ” इत्यादि जो व्यवहार
होता है वह नहीं होना चाहिये ।

ઇન્દ્રિય પોતાની સાથે પોતાના વિષયનો સંયોગ થયા વિના દૂરથી જ પોતાના
રૂપ વિષયનો પ્રકાશક છે.

શંકા—ઇન્દ્રિયોનેજ પોત-પોતાના વિષયરૂપ જ્ઞેયનો નિર્ણય કરનાર માનવી
જોઇએ એથી અતિરિક્ત આત્માને માનવાની શું આવશ્યકતા છે ?

ઉત્તર—આમ કહેવું વ્યાજબી નથી. કારણકે જ્યારે ઇન્દ્રિયો નષ્ટ થાય છે
ત્યારે તેના દ્વારા પૂર્વાનુભૂત પદાર્થનું સ્મરણ થાય છે. કદાચ ઇન્દ્રિયોનેજ પદાર્થની
જ્ઞાતા માનવામા આવે તો પછી જે તેના વિનાશ પછી અનુભૂત પદાર્થની સ્મૃતિ
થાય છે તે થવી જોઇએ નહિ. માટે અન્યથાનુપપત્તિ (જેના નહિ હોવાથી નથી થતું)
રૂપ અનુમાનથી ઇન્દ્રિયોથી અતિરિક્ત આત્માના અસ્તિત્વની સિદ્ધિ થાય છે.

શંકા—કદાચ ઇન્દ્રિયોથી ભિન્ન આત્માના અસ્તિત્વની સ્વીકૃતિ માનવામાં આવે
તો પછી “ ચક્ષુષા દૃશ્યતે, શ્રોત્રેણ શ્રૂયતે ” इत्यादि જે व्यवहार થાય
છે તે થવો જોઇએ નહિ.

નન્વેવં કરણત્વાદિન્દ્રિયસ્વીકારે તુ વાકપાણિપાદપાયૂપસ્થાનામપિ કરણ-
ત્વાદિન્દ્રિયત્વમન્યત્ર સ્વીકૃતમિદાપિ કુતો નાભિહિતમિતિ चेन्न, आत्मनो विज्ञानो-
त्पत्तौ तेषां प्रकृष्टोपकारकत्वाभावादिन्द्रियत्वस्यासिद्धेः, सामान्यतः करणत्वादिन्द्रि-
यत्वस्वीकारे तु स्वस्वव्यापारवत् उदरादेरपि करणत्वादिन्द्रियत्वापत्तेश्च ।

उत्तर—शङ्का ठीक है परन्तु विचारने पर स्वतः ही इस शङ्काका
समाधान हो जाता है, क्योंकि इन्द्रियाँ आत्माके ज्ञानकी उत्पत्ति में
प्रकृष्ट साधक हैं इस कारण वहाँ पर “ चक्षुषा दृश्यते, श्रोत्रेण श्रूयते ”
इत्यादि में करण रूप कारक पने तृतीया विभक्ति का प्रयोग होता है ।
जभी ये आत्माके विज्ञानकी उत्पत्तिमें प्रकृष्ट उपकारक हैं तभी तो
‘ मैने इस श्रोत्र इन्द्रियसे मन्द शब्द सुना और इस श्रोत्र इन्द्रियसे
मन्दतर शब्द सुना—इत्यादि प्रयोग ठीक बैठ जाते हैं ।

शङ्का—आत्माके विज्ञान रूप कार्यकी उत्पत्ति में अत्यन्त साधक
होनेसे स्पर्शनादिकों को यदि आप इन्द्रिय रूपसे स्वीकार करते हैं तो
फिर वाक्, पाणि, पाद, पायु (गुदा), और उपस्थ (जननेन्द्रिय), इन
को भी इन्द्रियरूपसे आपको स्वीकार करना चाहिये, क्योंकि ये भी
आत्माके अपने २ अनुरूप कार्यमें प्रकृष्ट साधक होते हैं इसीलिये
सांख्य सिद्धान्तमें इन्हें इन्द्रियरूपसे स्वीकार किया है फिर आपने इन्हें
इन्द्रियरूपसे यहाँ पर क्यों स्वीकार नहीं किया ? ।

उत्तर—शङ્કા ઠીક છે, પરંતુ વિચારવાથી આપમેળે જ તે શકાનું સમાધાન થાય
છે કારણકે ઇન્દ્રિયો આત્માને જ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં પ્રકૃષ્ટ સાધકો છે. આ
કારણે ત્યાં “ ચક્ષુષા દૃશ્યતે, શ્રોત્રેણ શ્રૂયતે ” ઇત્યાદિકરણત્વ રૂપ કારકપણે
ત્રીજી વિભક્તિનો પ્રયોગ થાય છે, માટે જ્યારે આત્માને વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં
પ્રકૃષ્ટ ઉપકારક છે તેથી જ મેં આ શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી મન્દ શબ્દ સાલજ્યો અને
આ શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી મન્દતર શબ્દ સાલજ્યો ઇત્યાદિ પ્રયોગ ઠીક બેસે છે.

શકા—આત્માના વિજ્ઞાન રૂપ કાર્યની ઉત્પત્તિમાં અત્યન્ત સાધકાહોવાથી સ્પર્શ-
નાદિકોને કદાચ આપ ઇન્દ્રિય રૂપે સ્વીકાર કરો છો તો પછી વાક્, પાણિ,
પાદ, પાયુ (ગુદા) અને જનનેન્દ્રિય આ સધનાંને ઇન્દ્રિય રૂપે આપે
સ્વીકારવા જોઈએ કારણ કે આ બધા આત્માને પોત-પોતાનાં અનુરૂપ કાર્યથી
પ્રકૃષ્ટ સાધક થાય છે માટે સાંખ્ય સિદ્ધાન્તમાં તેઓને ઇન્દ્રિય રૂપે સ્વીકાર્યા
છે તો પછી આપે ઇન્દ્રિય રૂપે આ ઠેકાણે કેમ સ્વીકાર ન કર્યો ?

ननु श्रोत्रेणैव रूपादीनामपि कथं न प्रत्यक्षमिति चेन्न, इन्द्रियाणां भिन्न-भिन्न-विषयकत्वेन तत्तदिन्द्रियेण स्वस्वविषयकातिरिक्तज्ञानासम्भवात् ।

उत्तर—यह कहना ठीक नहीं है, यहां पर तो आत्माके लिये जो विज्ञानकी उत्पत्तिमें अत्यन्त उपकारक हैं वे इन्द्रियाँ हैं और वे स्पर्शन आदि हैं, वाक् पाणि वगैरह सांख्यादि सिद्धान्तकी मानी हुई इन्द्रियाँ आत्माको विज्ञानकी उत्पत्तिमें श्रोत्र आदि की तरह प्रकृष्ट उपकारक नहीं हैं अतः उन वाक् आदि में इन्द्रियत्वका व्यपदेश ही सिद्ध नहीं होता। सामान्य रीतिसे जो यह बात मान ली जावे कि—जो करण होते हैं वे इन्द्रियाँ होती हैं अतःकरण होनेसे वाक् पाणि वगैरहमें भी इन्द्रियत्व स्वीकार करलेना चाहिये, तो फिर इस प्रकारसे आत्माके लिये अपने २ व्यापारमें निरत उदरादिक—पेट वगैर—को भी करण होने से इन्द्रिय मानना पड़ेगा, तब इन्द्रियों की जो सांख्यादि सिद्धान्तकारोंने ११ ग्यारह संख्या नियत की है वह सिद्ध नहीं होगी, इससे भी अधिक इन्द्रियाँ इस प्रकार सिद्ध होती हैं ।

शङ्का—श्रोत्र इन्द्रियसे ही रूपादिक अन्य इन्द्रियों के विषयों का प्रत्यक्ष क्यों नहीं होता ?

उत्तर—यह कहना ठीक नहीं, कारण कि प्रत्येक इन्द्रिय का अपना २

उत्तर—आम કહેવું ઠીક નથી. અહીંતો આત્માને જે વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં અત્યન્ત ઉપકારક છે તે ઇન્દ્રિયો છે અને તે સ્પર્શનઆદિ છે. વાક્ (વાણી) પાણિ (હાથ), વિગેરે સાંખ્યાદિ સિદ્ધાંતની માનેલી ઇન્દ્રિયો આત્માને વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં શ્રોત્ર આદિની માફક પ્રકૃષ્ટ ઉપકારક નથી માટે તે વાક્ આદિમાં ઇન્દ્રિયત્વનો વ્યપદેશ જ સિદ્ધ થતો નથી. સામાન્ય રીતિથી જો આ વાત માની લેવા આવે કે જે કરણ થાય છે તે ઇન્દ્રિયો હોય છે માટે કરણ થવાથી વાક્, પાણિ વિગેરેમાં પણ ઇન્દ્રિયત્વનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ તો પછી આ પ્રકારે આત્માને માટે પોત-પોતાના વ્યાપારમાં સામાન્ય રુપે કરણ થવાવાળાં ઉદરાદિક-પેટ વિગેરેનું પણ ઇન્દ્રિયપણું માનવું પડે ત્યારે ઇન્દ્રિયોની જે સાંખ્ય સિદ્ધાન્તકારોએ અગીયાર સંખ્યા નક્કી કરેલ છે તે સિદ્ધ થતી નથી, તેથી પણ અધિક ઇન્દ્રિયો આવી રીતે સિદ્ધ થાય છે.

શંકા—શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી જ રૂપાદિક અન્ય ઇન્દ્રિયોના વિષયોની પ્રત્યક્ષ કેમ થતાં નથી ?

ઉત્તર—આમ કહેવું ઠીક નથી. કારણકે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોત-પોતાનો વિષય

નન્વેવં તર્હિ રસપ્રતીતિકાલે શીતોષ્ણકર્કશકઠોરાદિસ્પર્શજ્ઞાનમપિ કથં ભવ-
તીતિ ચેદાહ—સ્પર્શનેન્દ્રિયસ્ય સર્વવ્યાપિત્વેન રસનેન્દ્રિયપ્રદેશેઽપિ તસ્ય સત્ત્વેન
રસપ્રતીતિકાલેઽપિ સ્પર્શજ્ઞાનસ્ય સુલભત્વાત્ ।

નનુ શ્રોત્રાદિવન્મનસઃ કુતો નેન્દ્રિયત્વમિતિ ચેદાહ—

વિષય નિયત હૈ અતઃ વહ દૂસરે વિષયકી ગ્રાહક નહીં હો સકતી ।
શાસ્ત્રકાર મી તો યહી કહતે હૈં કિ ઇન્દ્રિયાં ભિન્નર વિષયવાલી હૈં ઇસ
લિયે વે અપનેર વિષયકે સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયોંકે વિષયકી બોધક
નહીં હોતી હૈં ।

શઙ્કા—યદિ યહી બાત સ્વીકાર કી જાવે તો ફિર રસના ઇન્દ્રિય સે
રસકે જ્ઞાનકે સમયમેં જ્ઞાન, ઉષ્ણ, કર્કશ, કઠોરાદિક સ્પર્શકા જો જ્ઞાન
હોતા હૈં વહ કૈસે હોગા ?

ઉત્તર—સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સર્વ વ્યાપક હૈં ઇસલિયે રસના ઇન્દ્રિયકે
પ્રદેશમેં મી ડસકી સત્તા હોને સે રસ પ્રતીતિકે સમયમેં મી સ્પર્શકે
જ્ઞાનકી સુલભતા હોતી હૈં ।

શઙ્કા—જિસ પ્રકાર શ્રોત્રાદિકોં મેં ઇન્દ્રિયત્વકા વ્યપદેશ હોતા હૈં
ડસી પ્રકાર મનમેં મી ઇન્દ્રિયત્વકા વ્યપદેશ ક્યોં નહીં હોતા હૈં ? ।

ઉત્તર—શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયોં અપનેર વિષયકો ગ્રહણ કરનેમેં જિસ
પ્રકાર સ્વતન્ત્ર હૈં ડસ પ્રકાર મન નહીં હૈં, ક્યોંકિ વહ ડન ઇન્દ્રિયોંકા

નિયત છે તેથી તે બીજા વિષયની ગ્રાહક બનતી નથી શાસ્ત્રકાર
પણુ એમ કહે છે કે ઇન્દ્રિયો ભિન્ન ભિન્ન વિષયવાળી છે માટે તેઓ
પોત-પોતાના વિષય સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયોના વિષયની બોધક થતી નથી.

શંકા—માનો. આ વાત સ્વીકારવામા આવે તો પછી રસના ઇન્દ્રિયથી રસના
જ્ઞાનના સમયમા શીત, ઉષ્ણ, કર્કશ, કઠણાદિક સ્પર્શનુ જે જ્ઞાન થાય
છે તે કેમ થાય છે ?

ઉત્તર—સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સર્વવ્યાપક છે, માટે રસના ઇન્દ્રિયના પ્રદેશમાં પણ
તેની સત્તા હોવાથી રસપ્રતીતિના સમયમા પણ સ્પર્શના જ્ઞાનની
સુલભતા થાય છે.

શંકા—જે પ્રકારે શ્રોત્રાદિકોમા ઇન્દ્રિયના વ્યપદેશ થાય છે તેમ મનમાં પણ
ઇન્દ્રિયત્વનો વ્યપદેશ કેમ થતો નથી ?

ઉત્તર—શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાના વિષયો ગ્રહણ કરવામા જે પ્રકારે
સ્વતન્ત્ર છે તે પ્રકારે મન નથી. કારણકે તે તે ઇન્દ્રિયોનુ ઉપકારક માત્ર

શ્રોત્રાદીનિ ચ શબ્દાદિવિષયગ્રહણે સ્વતન્ત્રાણિ સન્તિ, મનસ્તુ તેષામુપકારિ-
માત્રં, સ્વતન્ત્રતયા તસ્ય પદાર્થનિર્ણાયકત્વાભાવાત્ । યતસ્તત્તદિન્દ્રિયનિર્ણીતપદાર્થ
એવ તસ્ય પ્રવૃત્તિર્ભવતિ નાતસ્તસ્યેન્દ્રિયત્વં ભવિતુમર્હતિ । એકસ્મિન્ન સમય એકેને-
ન્દ્રિયેનૈક એવોપયોગો ભવતિ, એકસમયે ઉપયોગદ્વયાસમ્ભવાત્ ।

નન્વેવં તર્હિ પર્યટ ('પાપડ' ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધપદાર્થ) મક્ષણકાલે પશ્ચમિ-
રિન્દ્રિયૈઃ સર્વ જ્ઞાનં ભવતિ યથા—શ્રોત્રેણ શબ્દં ગૃણોતિ, ચક્ષુષા રૂપં પશ્યતિ, ગ્રાણેન
ઉપકારક માત્ર હૈ । યદ્ વિના ઇન્દ્રિયોંસે જાને પદાર્થ કા સ્વતન્ત્ર રૂપસે
નિર્ણાયક નહીં હોતા હૈ, ક્યોંકિ ભિન્ન ભિન્ન ઇન્દ્રિયોં સે નિર્ણીત પદાર્થ
મેં હી ઉસકી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ ઇસલિયે ઉસમેં સ્વતન્ત્ર રૂપસે ઇન્દ્રિયપના
નહીં હૈ । એક સમય મેં એક ઇન્દ્રિયસે એક હી ઉપયોગ હોતા હૈ—એક
સમયમેં દો ઉપયોગ નહીં હોતે ।

શઙ્કા—યદિ એક સમયમેં દો ઉપયોગ નહીં હોતે હૈં તો ફિર જિસ
સમય પાપડ ખાયા જાતા હૈં ઉસ સમય જો પશ્ચેન્દ્રિય—જન્ય ઉસકા
જ્ઞાન હોતા હૈં વદ નહીં હોના ચાહિયે ?, દેખિયે—ખાતે સમય પાપડકી
ચર-ચર આવાજ હોતી હૈં અતઃ ઇસ શબ્દ કા શ્રોત્રેન્દ્રિયસે પ્રત્યક્ષ હોતા
હૈં, ઉસ સમય ચક્ષુ—ઇન્દ્રિય ઉસકે રૂપકી બોધિકા હોતી હૈં । ગ્રાણ—ઇન્દ્રિય
ઉસકે ગન્ધકી, રસના—ઇન્દ્રિય ઉસકે રસકી ઓર સ્પર્શન—ઇન્દ્રિય ઉસકે
કર્કશ કઠોર આદિ સ્પર્શ કો બોધિકા હોતી હૈં । યે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયસે એક
હી સમયમેં ઉસર વિષયકે ભિન્નર બોધ હોતે હૈં, સો ક્યોં હોતે હૈં ? ।

છે, તે ઇન્દ્રિયોથી જાણ્યા વગર પદાર્થનો સ્વતંત્ર રૂપે નિર્ણાયક થતું
નથી, કારણકે જુદી જુદી ઇન્દ્રિયોથી નિર્ણીત પદાર્થમાં જ તેની પ્રવૃત્તિ
છે. માટે તેમાં સ્વતંત્ર રૂપે ઇન્દ્રિયપણું નથી. એક સમયમાં એક ઇન્દ્રિયથી
એક જ ઉપયોગ થાય છે. એક સમયમાં બે ઉપયોગ થતા નથી.

શંકા—કહાય એક સમયમાં બે ઉપયોગ થતા નથી તો પછી જે વખતે પાપડ
ખાવામાં આવે છે તે સમયે જે પંચેન્દ્રિયજન્ય તેનું જ્ઞાન છે તે ન હોવું
જોઈ એ ? દેખો, ખાતી વખતે પાપડનો ચર-ચર અવાજ થાય છે અને
તે શબ્દ શ્રોત્રેન્દ્રિયથી પ્રત્યક્ષ છે તે વખતે ચક્ષુઇન્દ્રિય તેના રૂપની બોધક
થાય છે, ગ્રાણુઇન્દ્રિય તેના ગંધની, રસના ઇન્દ્રિય તેના રસની, અને સ્પર્શન
ઇન્દ્રિય તેના કર્કશ કઠણ આદિ સ્પર્શની બોધક થાય છે તે પ્રત્યેક
ઇન્દ્રિયથી એક જ સમયમાં તે તે વિષયનો ભિન્ન ભિન્ન બોધ થાય છે તો
શા માટે થાય છે ?

ગન્ધં જિઘ્રતિ, રસનેન રસમાસ્વાદયતિ, સ્પર્શનેન કર્કશકઠોરાદિકં સ્પૃશતિ, ઇતિ કથમેકસ્મિન્ સમયે શબ્દાદિવિષયકજ્ઞાનં સંજાયતે ? ઇતિ चेन्न, समयभेदेऽपि कमलपत्रशतवेधनवत्सूक्ष्मतया तस्य ज्ञातुमशक्यत्वात् ।

एष चोपयोगक्रमः—आत्मा मनसा युज्यते, मनश्चेन्द्रियेण, इन्द्रियाणि च विषयसंयुक्तानि भूत्वा तत्तद्विषयग्राहकाणि भवन्ति, अतो मनसोऽन्तःकरणत्वं सर्वानुगामित्वश्चोपपद्यते ॥

उत्तर—इन पांच इन्द्रियों से होने वाले ज्ञानोंमें भी समयका भेद अवश्य है परन्तु यह समयका भेद अति सूक्ष्म होनेसे जाना नहीं जाता है । जिस प्रकार कमलके सैकड़ों पत्ते तीर के ऊपर रखकर वेधने से वे ‘एक साथ ही विंध गये’ ऐसा बोध होता है परन्तु वे एक साथ नहीं विंधे, एक साथ विंधनेका उनमें भ्रम ही होता है, क्रम-क्रमसे ही वे विंधते हैं परन्तु उनके विंधनेका समय अति सूक्ष्म होनेसे उसमें क्रमिकताका बोध नहीं होता । उपयोगका क्रम इस प्रकार है—आत्मा मनसे संबंधित होता है, मन इन्द्रियों से, इन्द्रियाँ पदार्थोंसे संबंधित होकर अपने-विषयकी ग्राहक होती हैं; इसीलिये मनका, ‘अन्तःकरण’ यह संज्ञा सार्थक है, क्योंकि यह अन्तरङ्ग करण है और इन्द्रियाँ बहिरंग करण हैं । प्रत्येक इन्द्रियके साथ इसका क्रमसे ही गमनरूप सम्बन्ध है इसलिये यह सर्वानुगामी है ।

ઉત્તર—આ પાંચ ઇન્દ્રિયોથી થવાવાળા જ્ઞાનમાં પણ સમયનો ભેદ અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી બાણી શકતો નથી. જેમ કમલના સેકડો પત્તા વિંધવાથી તે ‘એક સાથ જ વિંધાઈ ગયા’ એવો બોધ થાય છે, પરંતુ તેઓ એકી સાથ વિંધાએલ નથી, એકી સાથ વિંધાવાનો તેમાં ખાલી ભ્રમજ છે. કેમ કેમથીજ તે વિંધાય છે, પરંતુ તેના વિંધાવાનો સમય અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી તેમાં ક્રમિકતાનો બોધ થતો નથી ઉપયોગનો ક્રમ આ પ્રકારે— છે. આત્મા મનથી સંબંધિત છે, મન ઇન્દ્રિયોથી ઇન્દ્રિયો પદાર્થોથી સંબંધિત થઈ પોત-પોતાના વિષયની ગ્રાહક થાય છે માટે મનની ‘અન્તઃકરણ’ એ સંજ્ઞા સાર્થક છે, કારણકે તે અન્તરંગ કરણ છે અને ઇન્દ્રિયો બહિરંગ કરણ છે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયની સાથ તેનો ક્રમ-ક્રમથી જ ગમન રૂપ સંબંધ છે માટે તે સર્વાનુગામી છે.

इन्द्रियविषयको विचारो गतः, साम्प्रतं प्रकृतार्थमनुसरामः । वृद्धावस्थायां रोगोदये च सर्वेषामिन्द्रियाणां स्वस्वसामर्थ्यहीनतामवलोक्य स प्राणी मौढ्यमापद्यते, इति दर्शयति—‘ अभिक्रान्तं च खलु वयः सम्प्रेक्ष्य स एकदा मूढभावं जनयति ’ इति । प्राणिनां कालकृता बाल्ययौवनादिरूपा शरीरावस्था वयस्तत् अभिक्रान्तम्—अतिक्रान्तम्, यद्वा अभि=जरा मृत्यु अभिमुखीकृत्य क्रान्तं=प्राप्तं, तिस्रो हि मानवानामवस्था भवन्ति, तासु च बाल्य-यौवनद्वयमतीतं विलोक्य सकलेन्द्रियसामर्थ्यस्य क्षीणतां मृत्युकालसामीप्यञ्च समालोच्य ततः=तदनन्तरं स प्राणी, एकदा=वृद्धाव-

यहां तक इन्द्रिय सम्बन्धी विचार किया, अब प्रकृत अर्थका प्रतिपादन करते हैं—

वृद्धावस्था में अथवा किसी के रोगादि कारण जब यह प्राणी समस्त इन्द्रियोंको अपने२ विषयोंके ग्रहण करने में शक्तिविकल देखता है, तब यह कर्त्तव्यमूढ बन जाता है, इस बातका वर्णन करते हैं—“ अभिक्रान्तं च खलु वयं ” इत्यादि ।

प्राણियोंकी कालकृत जो बाल्य-यौवनादि रूप अवस्था होती है उसका नाम वय है, उसको अभिक्रान्त-अभि=जरा और मृत्युके संमुख क्रान्त=प्राप्त देखकर यह प्राणी एकदा=वृद्धावस्था अथवा रोगोदयमें मूढ-भाव=कर्त्तव्याकर्त्तव्यके विवेककी शून्यताको प्राप्त होता है ।

પ્રાણિયોંકી ત્રીન પ્રકાર કી અવસ્થાઈં હૈં—એક બાલ્યાવસ્થા, દૂસરી યૌવનાવસ્થા, ઔર ત્રીસરી વૃદ્ધાવસ્થા । ઇનમૈં બાલ્ય ઔર તરુણ અવ-

આટલે સુધી ઈન્દ્રિયસંબંધી વિચાર કર્યો, હવે પ્રકૃત અર્થનું પ્રતિપાદન કરે છે.

વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા કોઈ રોગાદિક કારણે જ્યારે પ્રાણી સમસ્ત ઈન્દ્રિયોને પોતપોતાના વિષયોને ગ્રહણ કરવામાં શક્તિવિકલ દેખે છે ત્યારે તે કર્તવ્યમૂઢ બને છે. આ વાતનું વર્ણન કરે છે. “ અભિક્રાન્તં ચ ખલુ વયં ” ઇત્યાદિ ।

પ્રાણિયોની કાલકૃત જે બાલ્ય-યૌવનાદિરૂપ અવસ્થા છે તેનું નામ વય છે. તેનું અભિક્રાન્ત-અભિ=જરા અને મૃત્યુના સંમુખ ક્રાન્ત=પ્રાપ્ત દેખીને પ્રાણી એકદા-વૃદ્ધાવસ્થા અથવા રોગોદયમાં કર્તવ્યા-કર્તવ્યના વિવેકની શૂન્યતાને પ્રાપ્ત થાય છે.

પ્રાણીઓની ત્રણ પ્રકારની અવસ્થા છે. એક બાલ્યાવસ્થા, બીજી યૌવનાવસ્થા અને ત્રીજી વૃદ્ધાવસ્થા, તેમાં બાલ્ય અને તરુણ અવસ્થાને વ્યતીત દેખીને

સ્થાયાં રોગોદયે ચાત્મનો મૂઢતાં=કર્તવ્યાકર્તવ્યવિચારશૂન્યતાં જનયતિ=અજ્ઞાનભાવં પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ । પ્રતિસમયં શ્રોત્ર-ચક્ષુ-ગ્રાણ-રસન-સ્પર્શન-વિજ્ઞાનૈઃ સકલૈરૈકૈકશો વા, દેશતઃ સર્વતો વા નશ્યમાનૈઃ કરણરૂપૈઃ કર્તવ્યમૂઢો ભવતિ ।

યદ્વા-‘સોયપરિણાણેહિં, પરિહીયમાણેહિં’ ઇત્યાદૌ પ્રથમાર્થે તૃતીયાઽઽર્પ-ત્વાત્તદા તાનિ પરિજ્ઞાનાનિ ક્ષીયમાણાનિ કર્તૃરૂપાણિ મૂઢતાં જનયન્તીત્યર્થો ભવતિ ।

સ્થાકો વ્યતીત દેશકર વૃદ્ધાવસ્થા કો સકલ ઇન્દ્રિયોંકી શક્તિસે રિત્ત, એવં મૃત્યુકાલ કે સમીપ આઈ હુઈ દેશ કર ઉસ કાલમેં યહ પ્રાણી મૂઢ ભાવકો પ્રાસ હોતા રહતા હૈ-‘મેરા કર્તવ્ય ક્યા હૈ ઓર અકર્તવ્ય ક્યા હૈ’ ઇસ બાતકા ઉસ સમય વિચાર હી જાતા રહતા હૈ । ઉસ સમય શ્રોત્ર, ચક્ષુ, ગ્રાણ, રસના ઓર સ્પર્શન, યે સમસ્ત ઇન્દ્રિયાં અપનેર વિષયકે જ્ઞાનસે ક્રમર કરકે અથવા એકહી સાથ, યા કુછ-કુછ અંશમેં રિત્ત હો જાતી હૈં ફિર ઇસે કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્યકા ભાન ભી કૈસે હો સકતા હૈ, ક્યોંકિ કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્ય કા ભાન ઇન્દ્રિયોં દ્વારા હી ગ્રહણ કિયે હુએ વિષયોંમેં માનસિક વિચારધારા સે હોતા હૈ । જબ વે ઇન્દ્રિયાં અપનેર વિષયકે બોધસે વિકલ બનજાતી હૈં તબ ઉનકે વિષયોં મેં જો માનસિક વિચારધારા બંધતી થી વહ કૈસે બંધ સકેગી ? અતઃ યહ ઉસ સમય ઇસ પ્રકાર કે બોધસે રહિત હોકર એક તરહ કા ઉન્મત્ત જૈસા કર્તવ્યમૂઢ હો જાતા હૈ ।

અથવા-આર્ષવાક્ય હોને સે-“સોયપરિણાણેહિં પરિહીયમાણેહિં”

વૃદ્ધાવસ્થાને સકળ ઇન્દ્રિયની શક્તિથી રિત્ત અને મૃત્યુકાળ નજીક આવેલી દેખીને આ કાળમા પ્રાણી મૂઢ ભાવને પ્રાપ્ત થાય છે. ‘માઈ કર્તવ્ય શું છે અને અકર્તવ્ય શું છે’ એ વાતનો તે સમયે તેવો વિચાર જ વિસરાય બાય છે, તે વખતે શ્રોત્ર, ચક્ષુ, ગ્રાણ, રસના અને સ્પર્શન, આ બધી ઇન્દ્રિયો પોતપોતાના વિષયના જ્ઞાનથી કંમે કંમે અથવા એકી સાથે, અથવા થોડા થોડા અશમાં રિત્ત થાય છે. પછી તેને કર્તવ્ય અને અકર્તવ્યનું ભાન કેવી રીતે રહે, કારણ કે કર્તવ્ય અકર્તવ્યનું ભાન ઇન્દ્રિયોદ્વારા જ ગ્રહણ કરેલાં વિષયોમા માનસિક વિચારધારાથી થાય છે, ત્યારે આ ઇન્દ્રિયો પોતપોતાના વિષયના બોધથી વિકલ બને છે ત્યારે તેના વિષયોમાં જે માનસિક વિચારધારા બંધાતી હતી તે કેવી રીતે બંધાઈ શકે ? માટે તે વખતે તે આ પ્રકારના બોધથી રહિત થઈને એક પ્રકારનો ઉન્મત્ત અને કર્તવ્યમૂઢ થાય છે.

અથવા—આર્ષવાક્ય હોવાથી—સોયપરિણાણેહિં પરિહીયમાણેહિં ” ઇત્યાદિ

વૃદ્ધો હિ સન્તતં ચિન્તાનુત્તમઃ પ્રણટેન્દ્રિયસામર્થ્યઃ ક્ષુત્તિપાસાતુરસ્તરુણાયમાનતૃષ્ણા-
ભિભૂતઃ કલ્યાણસરણિવિચ્ચુતો ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥ ૨ ॥

વૃદ્ધાવસ્થાયાં ક્રીદશી દશા જાયતે ? इत्याह—‘ जेहिं वा सद्धिं ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જેહિં વા સદ્ધિં સંવસદ્ તેઽવિ ણં એગયા નિયગા પુર્વિં
પરિવયંતિ, સોઽવિ તે નિયએ પચ્છા પરિવણ્જા, નાલં તે તવ
તાણાએ વા સરણાએ વા, તુમંપિ તેસિં નાલં તાણાએ વા સરણાએ
વા, સે ન હાસાએ, ન કિઙ્ઙાએ, ન રઈએ, ન વિભૂસાએ ॥ ૩ ॥

છાયા—યૈર્વાં સાર્દ્ધં સંવસતિ તેઽપિ સ્વલુ એકદા નિજકાઃ પૂર્વ પરિવદન્તિ,
સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિવદતિ, નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા,
ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા, સ ન હાસાય, ન ક્રીડાયૈ, ન રતયે, ન
વિભૂષાયૈ ॥ ૩ ॥

इत्यादि वाक्यों में प्रथमा विभक्ति के स्थानमें तृतीया विभक्ति का प्रयोग किया है । अतः प्रथमा विभक्ति का आश्रय लेकर उसका अर्थ इस प्रकार होगा—नष्ट होनेवाले वे श्रोत्रादिक—परिज्ञान, उस समय—वृद्धावस्था या रोगोदयमें इस जीवको कर्तव्यमूढ बना देते हैं, क्योंकि वृद्ध उस समय निरन्तर चिन्तासे जलता रहता है, उसके प्रत्येक इन्द्रिय की शक्ति नष्ट हो जाती है, वह क्षुधा तृषासे पीड़ित रहता है, उसके तृष्णा की वृद्धि होती रहती है, ऐसी हालतमें उसे आत्मकल्याण की बात ही नहीं सुहाती, अतः वह कल्याणमार्गसे बहुत ही दूर रहता है, अर्थात् वह आत्मकल्याण नहीं कर सकता ॥ २ ॥

વાક્યોમાં પ્રથમા વિભક્તિના સ્થાનમાં ત્રીજી વિભક્તિનો પ્રયોગ કરેલ છે, માટે પ્રથમા વિભક્તિનો આશ્રય લઈ તેનો અર્થ આ પ્રકાર થશે—નષ્ટ થનારા તે શ્રોત્રાદિક—પરિજ્ઞાન તે વખત—વૃદ્ધાવસ્થા અગર રોગોદયમાં જીવને કર્તવ્યમૂઢ બનાવે છે, કારણ કે વૃદ્ધ તે વખતે નિરંતર ચિન્તાથી બળતો રહે છે. તેની પ્રત્યેક ઈન્દ્રિયની શક્તિ નષ્ટ થાય છે, તે ક્ષુધા તૃષ્ણાથી પીડિત રહે છે. તેના તૃષ્ણાની વૃદ્ધિ થતી જ રહે છે. આવી હાલતમાં તેને આત્મકલ્યાણની વાત જ સારી લાગતી નથી માટે તે કલ્યાણ માર્ગથી ઘણો દૂર રહે છે, અર્થાત્ તે આત્મકલ્યાણ કરી શકતો નથી. ૨

ટીકા—“યૈર્વા સાર્ધં સંવસતિ” ઇતિ, વા-શબ્દોઽર્થાન્તરમૂચકઃ તેન યૈઃ સહ ન સંવસતિ તે પરિવદન્તીતિ કિમાશ્ચર્ય, પરં યૈર્વા સાર્ધં સંવસતિ તેઽપિ નિન્દન્તીત્યર્થઃ । યૈર્વા પુત્રમાનૃભાર્યાદિભિઃ સાર્ધં=સહ સંવસતિ=સાનુરાગં નિવસતિ યાન યૌવનાવસ્થાયાં સર્વથા ધનોપાર્જનાદિના પરમાદરેણોપકૃત્ય પુષોષેત્યર્થઃ । તેઽપિ

વૃદ્ધાવસ્થામેં ઇસ જીવકી કેસી દશા હો જાતી હૈ ઇસકે લિયે કહતે હૈ—“જેહિં વા સર્દિં” ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—જિનકે સાથ યહ રહતા હૈ વે આત્મીય જન ભી વૃદ્ધાવસ્થામેં અથવા રોગાદિકે સમયમેં ઇસકા તિરસ્કાર કરને લગ જાતે હૈ । યહ ભી ઉન આત્મીય જનોંકી ઉસ હાલતમેં નિન્દા કરને લગ જાતા હૈ ઇસલિયે હે આત્મન્ ! વે પરિચિત બન્ધુ તેરી રક્ષા કરનેકે લિયે, તુઝે શરણ દેનેકે લિયે સમર્થ નહીં હૈ, ઓર ન તૂ ભી ઉન અપને પરિચિત બન્ધુઓંકી રક્ષા કરનેકે લિયે, ઉન્હેં શરણ પ્રદાન કરનેકે લિયે સમર્થ હૈ । ઉસ અવસ્થામેં વહ વૃદ્ધ ન હાસ્યકે યોગ્ય હોતા હૈ ન ક્રીડાકે લાયક રહતા હૈ, ન રતિમેં સમર્થ હોતા હૈ ઓર ન વિભૂષાકે લાયક રહતા હૈ ॥ ૩ ॥

“યૈર્વા સાર્ધં સંવસતિ” યહાં જો વા શબ્દ હૈ વહ અર્થાન્તર કા સૂચક હૈ, ઇસસે યહ વાત પ્રકટ હોતી હૈ કિ યહ જિનકે સાથ નહીં રહતા હૈ વે યદિ ઇસકા તિરસ્કાર યા ઇસકી નિન્દા કરતે હૈ તો કોઈ અચરજ કી વાત નહીં હૈ, પરન્તુ આશ્ચર્ય તો ઇસ વાતકા હૈ કિ ચિરપાલિત જિન

વૃદ્ધાવસ્થામા આ જીવની કેવી દશા થઈ જાય છે તેના માટે કહે છે:—
“જેહિં વા સર્દિં” ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—જેની સાથે તે રહે છે તે આત્મીયજન પણ વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા રોગાદિક સમયમાં તેનો તિરસ્કાર કરવા લાગી જાય છે. તે પણ તે આત્મીયજનોની તેવી હાલતમાં નિંદા કરવા લાગી જાય છે માટે હે આત્મન્ ! તે પરિચિત બંધુ તારી રક્ષા કરવા માટે, તને શરણ દેવામાં સમર્થ નથી, અને તું પણ પોતાના પરિચિત બંધુઓની રક્ષા કરવામાં તેમજ શરણ દેવામાં સમર્થ નથી. તે અવસ્થામાં તે વૃદ્ધ હાસ્યને યોગ્ય હોતો નથી, તેમજ ક્રીડાને લાયક પણ રહેતો નથી, અને રતિમાં પણ સમર્થ થતો નથી, તેમજ વિભૂષાને લાયક પણ રહેતો નથી.

“યૈર્વા સાર્ધં સંવસતિ” આ ઠેકાણે જે વા શબ્દ છે તે અર્થાન્તરનું સૂચક છે તેથી એ વાત પ્રગટ થાય છે કે—એ જેની સાથે નહિ રહેતા તે કહાય તેનો તિરસ્કાર અગર તેની નિંદા કરે તો કોઈ અચરજની વાત નથી, પરંતુ આશ્ચર્ય ॥ એ વાતનું છે કે ચિરપાલિત જે પુત્ર ભાઈ અને સ્ત્રી સાથે તે ઘણા અનુ-

યદ્વા હસ્ત્યશ્વરથઋલત્રમિત્રદ્વિપદચતુષ્પદાદિરૂપઃ સંયોગસ્તત્પ્રયોજનવાન્ । યતઃ સંયોગાર્થી અતएव કાલાકાલસમુત્થાયી, ઇતિ હેતુર્ગર્ભ વિશેષણમ્ । સંયોગવ્યગ્રતયૈવાનવગતકાલાકાલવ્યવસ્થા ઇતિ યાવત્ । અતएव અર્થાલોભી-અર્થો ધનં કુપ્યમકુપ્યં ચેતિ, તત્ર સુવર્ણાદિભિન્નં રત્નાદિ કુપ્યમ્, સુવર્ણરજતાદિરૂપસકુપ્યં ચેતિ ભેદઃ । આ=સમન્તાત્ સર્વતઃ ઇતિ યાવત્, લોભો=લાલસા વિદ્યતે યસ્ય સ આલોભી અર્થસ્યા-લોભી અર્થાલોભી, અત્રાપિ કાલાકાલસમુત્થાયીતિ વિશેષણમ્ । યસ્માદ્ધનાભિલાષી તસ્માત્કાલાકાલસમુત્થાયી, અનિર્જાતકાલાકાલનિયમઃ, યો હિ ધનં કામયતે

અથવા માતાપિતાદિક કે સાથ જો સંબંધ હૈ । ઉસી કા નામ સંયોગ હૈ । અથવા-હસ્તિ, અશ્વ, રથ, સ્ત્રી, મિત્ર, દ્વિપદ, ચતુષ્પદાદિ રૂપ પરિગ્રહ કે સાથ સંબંધ મી સંયોગ હૈ । તત્પ્રયોજનવાન્ પ્રાણી સંયોગાર્થી કહલાતા હૈ । યહ સંયોગાર્થી હૈ ઇસીલિયે કાલાકાલસમુત્થાયી હૈ । કાલાકાલ-સમુત્થાયી હોને મેં સંયોગાર્થિત્વ યહ હેતુ હૈ । સંયોગ મેં વ્યગ્રતા હી કાલાકાલ કી અવ્યવસ્થા કા કારણ હોતી હૈ । “અર્થાલોભી”-સર્વ પ્રકાર સે અર્થ કા અભિલાષી જો હોતા હૈ-વહ અર્થાલોભી હૈ । કુપ્ય ઓર અકુપ્ય કે ભેદ સે ધન દો પ્રકાર કા બતલાયા ગયા હૈ । રત્નાદિક કુપ્ય હૈ । સુવર્ણ-રજતરૂપ દ્રવ્ય અકુપ્ય હૈ । અર્થ-આ-લોભી-ઇસ પ્રકાર ઇસ વાક્ય મેં પદચ્છેદ કરને સે યહ અર્થ નિષ્પન્ન હોતા હૈ કિ જો આ-સર્વ પ્રકાર સે અર્થલોભી હૈ । યહાં પર મી ‘કાલાકાલસમુત્થાયી’ ઇસ વિશેષણ કી યોજના કર લેની ચાહિયે । ઇસસે યહ ફલિતાર્થ હોતા હૈ કિ યહ ધનાભિલાષી હૈ ઇસીલિયે કાલાકાલસમુત્થાયી હૈ, કાલ ઓર

આથે જે સંબંધ છે તેનું નામ સંયોગ છે, અથવા હસ્તિ, અશ્વ, રથ, સ્ત્રી, મિત્ર, દ્વિપદ, ચતુષ્પદાદિ રૂપ પરિગ્રહની સાથે સંબંધ પણ સંયોગ છે. એવા પ્રયોજનવાળો પ્રાણી સંયોગાર્થી કહેવાય છે. તે સંયોગાર્થી છે માટે કાળાકાલસમુત્થાયી છે. કાળાકાલસમુત્થાયી હોવામાં સંયોગાર્થિત્વ હેતુ છે, સંયોગમાં વ્યગ્રતા જે કાળાકાળની અવ્યવસ્થાનું કારણ થાય છે. “અર્થાલોભી” બધા પ્રકારે અર્થનો અભિલાષી થાય છે. તે અર્થલોભી છે. કુપ્ય અને અકુપ્યના ભેદથી ધન બે પ્રકારનું બતાવ્યું છે. રત્નાદિક કુપ્ય છે, સુવર્ણ-રજતરૂપ દ્રવ્ય અકુપ્ય છે. ‘અર્થ-આ-લોભી’ આ પ્રકારે આ વાક્યમાં પદચ્છેદ કરવાથી એવો અર્થ નિષ્પન્ન થાય છે કે જે આ સર્વ પ્રકારથી અર્થ-કુપ્ય અને અકુપ્યરૂપ દ્રવ્યનો લોભી-અભિલાષી-છે તે અર્થલોભી છે. આ ઠેકાણે પણ ‘કાળાકાલસમુત્થાયી’ આ વિશેષણની યોજના કરવી જોઈ એ તેથી એ ફલિતાર્થ થાય છે કે ધનાભિલાષી છે માટે કાળાકાલસમુત્થાયી છે. કાળ અને અકાળના

खलु एकदा निजकाः पूर्वं परिवदन्तीति, ते चिरपरिपालिता अपि स्त्रीपुत्रभृत्यादयः
खलु=निश्चयेन एकदा=वृद्धावस्थायां रोगोदये च निजकाः=आत्मीयाः परिवदन्ति=
तिरस्कुर्वन्तीत्यर्थः । तं पूर्वोपकारिणं वृद्धं सम्प्रति शत्रुमिव मन्यन्त इति भावः ।
“अयं वाचालः परुषवाग् न म्रियते, नापि मौनं तिष्ठति, नापि स्थानान्तरं गच्छति,

पुत्र भाई और भार्या के साथ यह बड़े अनुरागसे रहता है, और जिनका
इसने अपनी जवानी अवस्थाके समय सर्व प्रकारसे धनादिक के अर्जन
द्वारा बड़े आदरके साथ संरक्षण किया है, पालन-पोषण किया है ऐसे
वे आत्मीय जन भी अपने इस उपकारी जनका इस वृद्धावस्थामें, अथवा
इसके रोगाक्रान्त हो जाने पर तिरस्कार करने लगते हैं, वे इसके प्रति
इस प्रकारसे व्यवहार करते हैं जैसे कोई अपने शत्रुके साथ व्यवहार
करता है । नौकर चाकर भी इसकी एक भी बात नहीं सुनना चाहते
हैं, अथवा सुनकर भी वे उसकी बातका कोई महत्त्व ही नहीं समझते ।
घरवाले उस समय यही कहते हैं कि-इसकी इस अवस्थामें बुद्धि मारी
गई है, ‘साठ वर्षमें मनुष्यकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है’ यह बात सत्य
है, इसे बोलने तकका भी अब तमीज नहीं है-रात दिन बड़बडाता
ही रहता है, हर एकसे यद्वा-तद्वा कठोर वचन बोल दिया करता है,
क्या करें, इसे मौत भी नहीं आती है, इससे हजारों बार कह दिया है
कि ज्यादा मत बोला करो, चुप रहा करो, परन्तु यह नहीं मानता, रात-
दिन यहीं पर अड़ा बैठा रहता है, इससे इतना भी नहीं बनता कि

રાગથી રહે છે અને જેનો તેણે પોતાની જીવાન અવસ્થાને સમયે સર્વ પ્રકારથી
ધનાદિક કમાઈને આદરથી રક્ષણ કર્યું છે. એવા તે આત્મીય જન પણ પોતાના
આવા ઉપકારી માણસનો આ વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા રોગા-ક્રાન્ત થવાથી તેનો
તિરસ્કાર કરવા લાગી જાય છે. તે તેના પ્રતિ એવા પ્રકારથી વ્યવહાર કરે છે
કે જાણે પોતાના શત્રુની સાથે વ્યવહાર કરતા હોય. નોકર-ચાકર પણ તેની
કોઈ વાત સાંભળતા નથી, અથવા સાંભળે તો તેની વાતનો કોઈ મહત્ત્વ સમજતા
નથી. ઘરવાળા આ સમયમાં એ કહે છે કે-એની આ અવસ્થાએ બુદ્ધિ મારી
ગઈ છે. “સાઠ વર્ષે મનુષ્યની બુદ્ધિ ભ્રષ્ટ થાય છે.” આ વાત સત્ય છે, જેને
બોલવાનો પણ ઢંગ નથી, રાત-દિવસ બડ-બડ કર્યા કરે છે. દરેકથી
જેમ-તેમ ખરાબ ખરાબ શબ્દો બોલી નાંખે છે. શું કરવું એને મોત પણ આવતી
નથી. એને હજાર વાર કહ્યું કે આજુ બોલો નહિ, ચુપ રહ્યા કરો, પરંતુ એ
માનતો જ નથી, રાત-દિન આ ઠેકાણે અફો લગાવી બેસી જ રહે છે, એનાથી

સ્વદ્વાદિકમપિ ન પરિત્યજતિ इत्येवं नानाविधकठोरवाक्यैस्तर्जन्यादिना तर्जयन्
 “किमनेन वराकेणे”—त्येवं सततं तं धिक्कुर्वन्ति । अन्येषां का वार्ता किन्तु स्वय-
 मपि स्वात्मानं नाद्रियते, तथा हि—उत्थातुकामोऽपि नोत्थातुं शक्नोति, श्रोतुं द्रष्टुं
 घ्रातुमास्वादयितुं स्पृष्टुमिच्छति, परन्तु तत्तदिन्द्रियसामर्थ्यस्य परिक्षीणतया न
 शृणोति शब्दं, न पश्यति रूपं, न जिघ्रति गन्धं, नापि रसमास्वादयति, न चैव कर्कशक-
 यहांसे दूसरी जगह भी जाकर बैठ जावे, जब देखो तब खाट पर ही
 पड़ा रहता है, यों तो इसके कोई मतलब ही नहीं है, क्योंकि कमा कर
 तो हम ही लाते हैं । इस प्रकार के अनेक कठोर वचनोंसे अथवा तर्जनी
 ऊंगली दिखाकर इसका अनादर करते हैं, उसे सदा धिक्कारा करते हैं ।

इस अवस्थामें दूसरोंकी क्या बात कहना, अर्थात् दूसरे व्यक्ति
 अथवा अपने सगे संबन्धी लोग इस वृद्ध की सेवा चाकरी आदर सत्कार
 न करे तो कोई अचरज की बात नहीं, परन्तु यह स्वयं अपने शरीर
 सम्बन्धी कार्य करनेमें भी असमर्थ हो जाता है—यह उठना चाहता है
 तो भी उठ नहीं सकता, सुननेकी, देखनेकी, सूंघनेकी और चखनेकी
 तथा छूनेकी इच्छा करता है तो भी अपनी उनर पदार्थोंको विषय कर-
 नेवाली इन्द्रियोंकी शक्ति क्षीण होनेसे न शब्द को सुन सकता है, न
 रूपको देख सकता है, न गन्धको सूंघ सकता है, न रसको चख सकता
 है और न कर्कश कठोर आदि स्पर्शको पहचान सकता है ।

એટલું પણ નથી બનતું કે અહીંયાથી ઉઠી બીજી જગ્યાએ જઈ બેસે. જ્યારે
 દેખો ત્યારે ખાટ પર જ પડી રહે છે. આમ તો એને કોઈ મતલબ જ નથી,
 કારણ કે કમાઈ કમાઈને તો અમે લાવીએ છીએ. આવા પ્રકારના અનેક
 કઠોર વચનોથી અથવા અશુદ્ધ બતાવી બતાવીને તેનો અનાદર કરતા જ રહે છે
 અને તેને ધિકાર્યા જ કરે છે.

આ અવસ્થામાં બીજાની શુ વાત કહેવી — અર્થાત્ બીજી વ્યક્તિ અને
 પોતાના સગાં સગાંધી લોક આ વૃદ્ધની સેવા ચાકરી આદર સત્કાર ન કરે તો
 કોઈ અચરજની વાત નહિ પરંતુ તે પોતે પોતાના શરીર સંબંધી કાર્ય કરવામાં
 પણ અસમર્થ બને છે. તે ઉઠવા ચાહે છે તો પણ ઉઠી શકતો નથી, સાંભળવાની
 દેખવાની સૂંઘવાની અને ચાખવાની તથા સ્પર્શની ઇચ્છા કરે છે તો પણ પોતાની
 તે તે પદાર્થોથી વિષય કરવાવાળી ઇન્દ્રિયોની શક્તિ ક્ષીણ હોવાથી ન તો શબ્દને
 ભણી શકતાં, ન તો રૂપને દેખી શકતાં, નથી ગંધને પારખી શકતો, નથી
 રસને ચાખી શકતાં અને કઠોર તેમજ કર્કશ સ્પર્શને પીછાણી શકતો નથી.

ઠોરાદિકં સ્પૃશતિ । इति नानाविधां दुर्दशामनुभूय नवद्वारेभ्यो विनिःसृतं कर्णमलादिकं घृणास्पदं वस्तु दर्श दर्शमत्यर्थं क्लान्तमना भवति ततः 'कथमेतादृशस्य मम मरणं नायाती—'त्यनिशं खट्वारूढः कासश्वासादिरोगाभिभूतः कफावृतशय्यावसनादिको मुहुरुपतप्तो भवतीति निजशरीरं स्वस्मै सर्वथा न रोचते । उक्तञ्च—

ऐसी अनेक प्रकारकी दुर्दशाको भोगता हुआ यह वृद्ध सदा चित्तमें सन्तप्त होता रहता है । तथा शरीर के नव द्वारोंसे सदा निकलनेवाले कानके मेल तथा खेंखार आदि अपवित्र वस्तुओंको देख-देख कर नित्य ग्लानि करता रहता है परन्तु कर कुछ नहीं सकता, यह तो यही विचारता है कि मेरी मृत्यु कब आवे, ताकि इस दुःखसे छुटकारा मिल जावे, परन्तु इसके इस विचारसे कुछ होना जाना नहीं है, यह तो विचारा अपनी खटिया पर पडा-पडा ही कफ खाँसी श्वास आदि रोगोंसे दुःखित होता रहता है, कफ आदि मलोंको यह बाहर फेंकनेकी इच्छा करता है तो भी शारीरिक अशक्ति की वजहसे वे कपडों पर ही गिर जाते हैं, बाहरमें मलत्यागकी भावना होनेपर भी उठनेकी अशक्ति की वजह से खटिया पर ही टही पेशाब हो जाती है, यह उसमें ही लथ-पथ हो कर पडा रहता है और दुःखी भी होता है, परन्तु कर-घर कुछ नहीं सकता । ऐसी परिस्थितिमें इसे स्वयं भी अपना शरीर रुचिकर प्रतीत नहीं होता । कहा भी है—

એવી અનેક પ્રકારની દુર્દશાને ભોગવતાં તે વૃદ્ધ સદા ચિત્તમાં સંતપ્ત રહ્યા કરે છે, તથા શરીરના નવ દ્વારોથી સદા નીકળતાં કાનનો મેલ તથા ખેંખાર આદિ અપવિત્ર વસ્તુઓને દેખીને નિત્ય ગ્લાનિ ભોગવ્યાં કરે છે. પરંતુ કંઈ પણ કરી શકતો નથી. એ તો એ જ વિચારે છે કે મારી મૃત્યુ ક્યારે આવે જોઈ આ દુઃખથી છુટકારો મળી જાય, પરંતુ તેના આ વિચારથી કંઈ બની શકતું નથી. એ તો બિચારો ખાટલા ઉપર પડ્યો પડ્યો કફ-ખાંસી શ્વાસ આદિ રોગોથી દુઃખી થતો રહે છે. કફ આદિ મળોને તે બાહર ફેંકવાની ઇચ્છા કરે છે તો પણ શારીરિક અશક્તિથી તે તેના કપડા ઉપર જ પડી જાય છે. બાહર મલ ત્યાગની ભાવના હાવા છતાં પણ ઉઠવાની અશક્તિથી ખાટલા ઉપર જ ઝાડો પેશાબ થઈ જાય છે તે તેમાં જ લથ-પથ પડ્યો રહે છે, અને દુઃખી પણ થાય છે. પરંતુ કંઈ પણ કરી શકતો નથી. આવી પરિસ્થિતિમાં તેને પોતાને પણ પોતાનું શરીર રૂચિકર પ્રતીત થતું નથી. કહ્યું છે—

શિરઃ શ્વેતં દન્તાવલિરપિ ગતા સ્નાયુનિચયઃ,
 પ્રયાતઃ શૈથિલ્યં પલલમપિ નૈરસ્યવલિતમ્ ॥
 સ્વયં સ્વં સંનિન્દન્ લગુડશરણો મન્દકરણો,—
 મનોભાવાભિજ્ઞા કિમુ જરસિ કાન્તા ન હસતિ ? ॥ ૧ ॥
 શરીરં સઙ્કોચં વ્રજતિ ચરણૌ મન્દગતિકૌ
 મુખં લાલાપન્નં નયનમપિ નાલોકિતુમલમ્ ॥
 ન વાક્યં મન્યન્તે પરિજનગણાઃ સ્ત્રી ન ભજતે
 જરાયાં હા ! કષ્ટં તનુજનુરપિ દ્વેષ્ટિ જનકમ્ ॥ ૨ ॥
 સકલપરિવારો વૃદ્ધાવસ્થાયાં જુગુપ્સતે તદ્વિષયે કથાનકમત્ર, તથા હિ—

“ શિરઃ શ્વેતં દન્તાવલિરપિ ગતા સ્નાયુનિચયઃ,
 પ્રયાતઃ શૈથિલ્યં પલલમપિ નૈરસ્યવલિતમ્ ।
 સ્વયં સ્વં સંનિન્દન્ લગુડશરણો મન્દકરણો,—
 મનોભાવાભિજ્ઞા કિમુ જરસિ કાન્તા ન હસતિ ? ॥ ૧ ॥
 શરીરં સઙ્કોચં વ્રજતિ ચરણૌ મન્દગતિકૌ,
 મુખં લાલાપન્નં નયનમપિ નાલોકિતુમલમ્ ।
 ન વાક્યં મન્યન્તે પરિજનગણાઃ સ્ત્રી ન ભજતે,
 જરાયાં હા ! કષ્ટં, તનુજનુરપિ દ્વેષ્ટિ જનકમ્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।
 અર્થ સ્પષ્ટ છે ॥

વૃદ્ધાવસ્થામાં ઉસકે સમસ્ત અવને જન હસસે ઘૃણા કરને લગજાતે
 હૈ, હસ વિષયમાં એક કથા લિખી જાતી હૈ—

“ શિરઃ શ્વેતં દન્તાવલિરપિ ગતા સ્નાયુનિચયઃ,
 પ્રયાતઃ શૈથિલ્યં પલલમપિ નૈરસ્યવલિતમ્ ।
 સ્વયં સ્વં સંનિન્દન્ લગુડશરણો મન્દકરણો,
 મનોભાવાભિજ્ઞા કિમુ જરસિ કાન્તા ન હસતિ ? ॥ ૧ ॥
 શરીરં સઙ્કોચં વ્રજતિ ચરણૌ મન્દગતિકૌ,
 મુખં લાલાપન્નં નયનમપિ નાલોકિતુમલમ્ ।
 ન વાક્યં મન્યન્તે પરિજનગણા સ્ત્રી ન ભજતે,
 જરાયાં હા ! કષ્ટં તનુજનુરપિ દ્વેષ્ટિ જનકમ્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।
 અર્થ ખુલ્લો છે.

વૃદ્ધાવસ્થામાં તેના સમસ્ત પોતાના જન જેનાથી ઘૃણા કરવા લાગી બાકી
 આ વિષયમાં એક કથા આપવામાં આવી છે.—

आसीद्राजगृहे नगरे गुणगणविभूषितः संसारसारसुचारुसौन्दर्यालङ्कृतो निखिल-
गजवाजिरथवसनविभवोपार्जको 'देवदास'—नामा कश्चिच्छ्रेष्ठी । स च यौवने भा-
ग्यातिरेकेण दशकोटिमितसुवर्णमुद्रां वाणिज्यकर्मणा समर्प्य सकलस्त्री-पुत्रादि-
परिपोषकश्चन्द्र इवाह्लादकस्तेषां बभूव । तस्य चत्वारः पुत्रा आसन् । स एकदा
वार्द्धके रत्नादिकं सकलधनं विभज्य पुत्रेभ्यः समर्प्य निश्चिन्तोऽभूत्स्वयम् । पुत्रा
अपि निज-निजपत्नीः पितृशुश्रूषार्थं समादिश्य स्वस्वकार्यसमासक्ता अभूवन् । गतेषु

राजगृह नामके प्रसिद्ध नगरमें देवदास नामक एक सेठ रहता था
जो अनेक गुणों से अलङ्कृत था । जिसका शरीर संसारमें सारबुद्धिको
उत्पन्न करानेवाले सुन्दर सौन्दर्यसे सुशोभित था । जिसका घर हाथी
घोड़ों और रथोंसे सदा भरा-हुवा था । सुन्दर २ कीमती वस्त्रोंकी जिसके
यहां पर कमी नहीं थी । सम्पत्ति जिसकी दासी थी । किसी समय
उसने यौवन अवस्थामें शुभ कर्मके उदयसे व्यापारके जरिये दस करोड़
सुवर्ण मुद्राओंका उपार्जन किया । वह स्त्री-पुत्रादिक परिजनोंके लिये
चन्द्रमाकी तरह आनन्द उत्पन्न करता था । उसके चार पुत्र थे । उसने
एक समय अपनी वृद्धावस्थामें अपनी धनसम्पत्ति अपने समस्त पुत्रों
को बाँट दी और उनकी तर्फसे स्वयं निश्चिन्त हो गया । वे पुत्र भी
अपनी २ स्त्रियोंको “तुम हमारे पिताकी अच्छी तरहसे सेवा करना”
ऐसा आदेश देकर अपने २ काममें लग गये । कुछ दिनोंके बाद बड़े
पुत्र की स्त्री अपने ससुर की सेवा करने में आलस्य करने लगी । पुत्र

राजगृह नामका प्रसिद्ध नगरमां देवदास नामको ओक शेठ रहेतो હતો. જે
અનેક ગુણોથી અલંકૃત હતો. જેનું શરીર સંસારમાં સાર બુદ્ધિને ઉત્પન્ન કરવા-
વાળા સુંદર સૌન્દર્યથી સુશોભિત હતું, જેના ઘરે સુંદર કીમતી વસ્ત્રોની કમીના
ન હતી. જેનું ઘર હંમેશા હાથી-ઘોડા અને રથોથી ભરેલું રહેતું હતું. સંપત્તિ
જેની દાસી હતી. એક વખત તેણે યૌવન અવસ્થામાં શુભ કર્મના ઉદયથી
વ્યાપારથી દસ કરોડ સુવર્ણમુદ્રા કમાયો. તે સ્ત્રી પુત્રાદિક પરિજનો માટે ચંદ્ર-
માની માફક આનંદ ઉત્પન્ન કરતો હતો. તેને ચાર પુત્રો હતા. તેણે એક વખત
પોતાની વૃદ્ધાવસ્થામાં પોતાની ધનસંપત્તિ પોતાના સમસ્ત પુત્રોમાં વહેંચી આપી,
અને તેમના તરફથી બિલકુલ નિશ્ચિત થઈ ગયો. તે પુત્ર પણ પોતપોતાની
સ્ત્રીઓને “તમે અમારા પિતાની સારી રીતે સેવા કરજો” એવો આદેશ આપીને
પોતપોતાના કામે લાગી ગયા. થોડા સમય પછી મોટા પુત્રની સ્ત્રી પોતાના
સસરાની સેવા કરવામાં આળસ કરવા લાગી. પુત્ર જે વખત ઘેર આવે અને

ચ કતિપયેષુ દિવસેષુ સા જ્યેષ્ઠપુત્રવધૂસ્તસ્ય શુશ્રૂષાયાં સાલસા વભૂવ । યદા પુત્રો ગૃહમાગત્ય પિતરં કુશલં શુશ્રૂષાદિ ચ પૃચ્છતિ તથા સ્થવિરઃ કથયતિ-નેયં સ્તુષા માં શુશ્રૂષતે । સા તુ પત્યા નિર્ભર્ત્સિતા સ્વામિનમાહ-ભવતાં ન મમોપરિ વિશ્વાસોઽસ્તિ તતશ્ચાન્યા એવ શુશ્રૂષન્તામ્ । તતશ્ચાન્યા સ્તુષા તદીયસેવાકર્મણિ નિયુજ્યમાનાઽપિ તથૈવ કૃતમન્દાદરા પુનઃ સ્વપતિભર્ત્સિતા સેવાધર્માદિરતા વભૂવ । એવમન્યા સ્તુષા દુહિતા પૌત્રી પૌત્રો મૃત્યવર્ગશ્ચ ક્રમેણ સેવાત ઉપરતા આસન્ । તતશ્ચ સતતમનુત્તમો ગુસ્તરસ્થેદશ્વિન્નો ગ્રહગૃહીત ઇવ દુઃખશતમનુભવતિ । તતઃ સર્વૈઃ પરિત્યક્ત એકપદમપિ

જિસ સમય ઘર આકર અપને પિતાસે કુશલ સમાચાર તથા સેવા કરને કી વાત પૂછતા તો વહ વૃદ્ધ કહતા કિ ખાઈ કયા કહૂં યહ વહૂ તો મેરી જરા ભી ટહલ નહીં કરતી હૈ । ઇસ વાતકો સુન કર જબ ઉસકા પતિ ઉસસે નારાજ હોતા તો વહ અપને પતિસે કહતી કિ યદિ આપકા મેરે ઉપર વિશ્વાસ નહીં હૈ તો આપ અપને પિતા કી સેવા દૂસરી વહૂસે કરા ક્યોં નહીં લેતે ? । ઇસ પ્રકાર ઉસકે કહને પર જબ ઉસને પિતા કી સેવા કે લિયે દૂસરી વહૂ કો નિયુક્ત કિયા તો વહ ભી પહિલી વહૂ જૈસી હી ઉસકી સેવામેં મન્દ આદરવાલી હોને લગી તબ ઉસકે ભી પતિને ઉસકો બુરા ભલા કહા તો વહ ભી ઉસકી સેવા કરને સે વિમુખ હો ગયી । ઇસી પ્રકાર અન્ય ઔર ભી વહુએ તથા પુત્રી, પૌત્રી એવં નૌકર વાકર ભી ઉસકી સેવા કરને સે ક્રમ ર સે વિમુખ બન ગયે । જબ યહ અપની હાલત ઉસ વૃદ્ધને દેખી તો ઉસકે ચિત્તમેં બહુત હી જ્યાદા સન્તાપ હુઆ ઔર વહ અત્યન્ત સ્થેદશ્વિન્ન હો પાગલ જૈસા બન કર અનેક પ્રકારકે કષ્ટોંકા

પિતાને કુશલ સમાચાર તથા સેવા કરવાની વાત પૂછે ત્યારે તે વૃદ્ધ કહેતો કે ભાઈ શું કહું ? આ વહુ તો મારી જરા પણ ખાતરખરદાસ કરતી નથી, આવી વાત સાંભળીને ન્યારે તેનો પતિ તેણીથી નારાજ થાય છે ત્યારે તેણી પોતાના પતિને કહે છે કે તમને મારા ઉપર વિશ્વાસ નથી તો પછી તમારા પિતાજીની સેવા ખીજી વહુથી કેમ કરાવતાં નથી ? આવા પ્રકારના તેણીના કહેવા પરથી ન્યારે તેણે પિતાની સેવા માટે ખીજી વહુને નિયુક્ત કરી તો તે પણ પહેલી વહુની માફક તેની સેવામાં મન્દ મન્દ આદરવાલી થવા લાગી. ત્યારે તેનો પતિ પણ ન્યારે તેને ભણું બુઝું કહેતો તો તે પણ તેની સેવા કરવાથી વિમુખ બની જતી. આ પ્રકારે ખીજી વહુઓ તથા પુત્ર, પૌત્રી અને નોકર ચાકર પણ તેની સેવા કરવામાં ક્રમે-ક્રમે વિમુખ બની ગયાં. ન્યારે આ પોતાની હાલત તે વૃદ્ધે જોઈ તો તેના ચિત્તમાં ઘણુંજ સન્તાપ પેદા થયો અને તે અત્યંત ખેદાનિત

गन्तुमक्षमस्त्वृणकुब्जीकरणेऽप्यसमर्थः शय्यासविधे कृतमूत्रपुरीषोऽतिमलिनवसनो विगलितदशनः कुक्कुरपिण्डमिवाहर्निशं भोजनं लभमानो वृद्धश्चेतसि व्यचिन्तयत् —‘अहं यौवने धनार्जनपरायणः कुटुम्बपोषणपरः कदापि कल्याणमार्गं नाराधितवान् किमधुना करोमि कोऽपि मां न गणयति, ते पूर्वमुपलालिताश्चिरपालिताः पुत्रादि-परिवारा आत्मसाधनविकलितं कृतकलकलं मामुपहसन्तीत्येवं भृशं विलपति, पश्चात्ता-

अनुभव करने लगा, सब घरवालों ने उसे छोड़ दिया। वह बिलकुल कमजोर हो गया। एक पैर भी चलनेकी उसमें शक्ति नहीं रही। वह अपनी खाटके पास ही मल-मूत्र का त्याग करने लगा। वस्त्र भी उसके अत्यन्त मलिन रहने लगे। उसके दाँत पहिलेसे ही गिर चुके थे। घर-वालों में से भी किसीका उसके प्रति जरा भी स्नेह नहीं रहा। भोजन भी उसे अनादरपूर्वक दिया जाने लगा। इस अपनी हालत को देख कर वह विचार करने लगा कि-हाय ! मैंने यौवन अवस्थामें धन कमानेमें ही अपना समय व्यतीत किया, कुटुम्बके भरण-पोषण करने में ही चित्तको लगाया, कल्याण मार्गकी तर्फ सदा उदासीन रहा, उसकी थोड़ीसी भी आराधना नहीं की, अब इस अवस्थामें मैं क्या कर सकता हूँ। इतना सब कुछ करने पर भी तो ये लोग मेरी तर्फ जरा भी ध्यान नहीं देते। जिनका मैंने पहिले अच्छी तरह से लालन-पालन किया, और जिनके साथ मेरा घनिष्ठ प्रेम रहा है। संसारमें जिन्हें आत्मीय

जनी गांडानी माइक जनी अनेक प्रकारना कष्टोने अनुभव करवा लाग्यो. जधा घरवाणाय्ते तेने छोडी दीधो. ते जीलकुल कमजोर थई गयो. ओक उगलुं पणु आलवानी तेनामां शक्ति न रही. ते पोताना पाटलानी पासे न आडा पेशाजने त्याग करवा लाग्यो. तेना वस्त्रो पणु मेला रडेवा लाग्या. तेना दाँतो पड़ेलाथी न पडी गया हुता. घरवाणामांथी केईनो पणु तेना प्रति नरा नेटवो पणु प्रेम ना रह्यो. सोजन पणु तेने अनादरपूर्वक आपवामां आवतुं हुतुं. आ पोतानी डावतने देणीने ते विचार करवा लाग्यो के-“ हाय ! में यौवन अवस्थामां धन कमावामां न पोतानो समय व्यतीत क्यो. कुटुंजनुं लरणु पोषणु करवामां न चित्तने लगाव्युं. कल्याणमार्गनी तरङ्ग सदा उदासी रह्यो, तेनुं थोडुं पणु आराधन न क्युं. हुवे आवी अवस्थामां हुं शुं करी शकुं ? आटलुं आटलुं करवा छतां पणु आ दोडो भार तरङ्ग पणु जेता नथी. जेनुं में पड़ेलां मारी रीते लालन-पालन अने जेनी साथे भारो घनिष्ठ प्रेम रह्यो छे, संसारमां जेने

પાલુત્તમઃ ‘કથં શીઘ્રં ન મ્રિયે’ इति वारं-वारं वदन् विपीदति च । वृद्धावस्थायां कृषिवाणिज्यगजवाजिरथादिविषया जिज्ञासा जागर्ति, प्रत्यहं पृच्छति पुत्रादिकं, परं पुत्रेण ‘तिष्ठ तिष्ठ जाल्म ! काक इवारुन्तुदां गिरं किं मुधा प्रलपसि ? किं ते ज्ञातेन ? किमत्र तव प्रयोजनम् ? मौनं कृत्वा यन्मिलति चाशनवसनादिकं तद् गृहाण’ इत्यादिनानाविधपरुषवाग्भिर्भूयोभूयस्तर्जितो भर्त्सितश्च भवति ।

કહતે હૈં વે હી મેરી ઉપેક્ષા કર રહે હૈં તો અવ ઓર કૌન એસા હૈ જો આત્મસાધનાસે રહિત મુઝ અમાગે કી ઓર ધ્યાન દેગા ? યે સવ લોગ મુઝે દેખ ર કર હૈસતે હૈં, હાય ! અવ મૈં કયા કરૂં ? इत्यादि रूप से वह विलाप करने लगा, और पश्चात्तापकी अग्निमें जलता हुवा “मैं शीघ्र क्यों नहीं मर जाता हूँ” इस प्रकार वारंवार विचारने लगा और दुःखी होने लगा ।

જવ જવ વહ ઇસ અવસ્થામેં કૃષિ, વાણિજ્ય, હાથી, ઘોડા ઓર રથ આદિ કે વિષયમેં અપને પુત્રોં સે પૂછતા તો વે ઇસસે કહતે કિ-અરે ! બઢ-બઢ ક્યોં કરતે હો ? चुप-चाप क्यों नहीं बैठे रहते हो ? तुमको इनसे अब क्या मतलब है ? व्यर्थ ही कौए के समान हमको नहीं सुहा-नेवाली वाणी क्यों बोलते हो ?, क्या हो रहा है, क्या नहीं हो रहा है ?; इसके जाननेकी तुम्हें क्या जरूरत है ?, इस प्रकार के जानने से भी तुम्हारा कौनसा स्वार्थ सिद्ध होता है ?, तुम तो चुप ही रहा करो, और जो कुछ भी खाने-पीने को मिल जाता है उसीमें सन्तोष रक्खो । इत्यादि

આત્મીય કહે છે તે જ મારી ઉપેક્ષા કરી રહ્યાં છે. તો હવે એવો કોણ છે જે આત્મસાધનાથી રહિત મારા જેવા અભાગીની તરફ ધ્યાન આપે ? આ બધા લોકો મને દેખીને હસે છે. હાય ! હવે હું શું કરૂં ” इत्यादि रूपથી તે विलाप કરવા લાગ્યો અને पश्चात्तापની અગ્નિમાં જલીને “હું જલહી કેમ મરતો નથી ? ” આ પ્રકારે વારંવાર વિચારવા લાગ્યો અને દુઃખી થવા લાગ્યો.

ન્યારે ન્યારે તે આ અવસ્થામાં ખેતી, વ્યાપાર, હાથી, ઘોડા અને રથ આદિ વિષયમાં પોતાના પુત્રોથી પૂછતો તો તેઓ કહેતા કે-“અરે ! બડબડ શું કર્યા કરો છો ? चुपचाप કેम भेसता नथी ? તમારે તેનાથી શું મતલબ છે ? ખાલી કાગડા સમાન અમારે નહિ સાલળવા જેવી વાણીને સાલળાવો છો. ‘શું થઈ રહ્યું છે ? શું નથી થઈ રહ્યું ?’ એ બધું બાણવાની તમારે શું જરૂર છે ? આ પ્રકારનું બાણવાથી પણ તમારો કયો સ્વાર્થ સિદ્ધ થવનો છે ? તમે તો ચુપ જ રહ્યા કરો અને જે કંઈ પણ ખાવા પીવાનું મળે છે તેમાં સંતોષ રાખો ” इत्यादि

वृद्धावस्थायां बहुप्रलपनशीलो निजपरिवारकृताननादरान् यस्मै कस्मैचिदपि प्रातिवेशिकाय कथयतीति दर्शयति—‘ सोऽपि तान् निजकान् पश्चात्परिवदति ’ इति, सः=वृद्धोऽपि तान्=पुत्र-कलत्र-भृत्यादीन् निजकान्=आत्मीयान्, पश्चात्=वृद्धावस्थायां, परिवदति=परिभवति, पूर्वं यान् पुत्रादीन् पोषयितुं धनोपार्जनासक्तः ‘ स्त्री पुत्रादिभरणमेव श्रेयः ’ इति मत्वा विहितनिखिलानर्थनिवहो व्यग्रविग्रहः कल्याणमार्ग-

अनेक प्रकार के कठोर वचनोंसे बारंबार वे उसका तिरस्कार करते हुए उस वृद्ध सेठको दुःखित करते थे ।

वृद्धावस्थामें एक तो मनुष्यको स्वभावतः पहिले की अपेक्षा अधिक वाचालता आजाती है अतः अपने सगे संबंधियों द्वारा जो कुछ भी अनादरसूचक व्यवहार उसके साथ होता है वह जब तक अपने पड़ोसियोंसे न कह दे तब तक उसे शान्ति भी नहीं मिलती, अब इसी बातको सूत्रकार सूचित करते हैं—“ सोऽपि तान् निजकान् पश्चात् परिवदति ” वह वृद्ध उन अपने पुत्र कलत्र और नौकर चाकर आदि अपने आत्मीय जनों की इस प्रकार से निन्दा करने लगता है कि जिनके पालन-पोषण करने में मैंने जरा भी कसर नहीं की, जिनकी सेवामें रात दिन एक कर दिया, यह समझ कर कि स्त्री पुत्रादिकों का पालन-पोषण करना ही सर्वोत्तम कार्य है । मैंने धन उपार्जन करनेमें भी कुछ कसर नहीं रखी, संसार भर के सब अनर्थ किये और आकुलव्याकुल चित्त बन असावधानीपूर्वक अपनी प्रवृत्ति चालू रखी, और अभी तक भी मैं

अनेक प्रकारनां कठोर वचनोथी वारंवार तेथो तेनो तिरस्कार करीने ते वृद्ध शेठने दुःखी करता होता.

वृद्धावस्थाમાં એક તો મનુષ્યને સ્વભાવતઃ પહેલાની અપેક્ષા અધિક વાચાલતા આવે છે માટે પોતાના સગાં સંબંધીઓ દ્વારા જે કાંઈ પણ અનાદરસૂચક વ્યવહાર તેની સાથે થાય છે, તે જ્યાં સુધી પોતાના પાડોશીઓને તે ન કહે ત્યાં સુધી તેને શાંતિ થતી નથી. હવે આ વાતને સૂત્રકાર સૂચિત કરે છે—

“ સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્ પરિવદતિ ”

તે વૃદ્ધ તે પોતાના પુત્ર કલત્ર અને નોકર આદિ પોતાના આત્મીયજનોની આ પ્રકારે નિંદા કરવા લાગે છે કે—જેનું પાલન પોષણ કરવામાં મેં જરા પણ કસર નહિ રાખી, જેની સેવામાં રાત દિવસ એકજ માન્યો, એવું સમજીને કે સ્ત્રી પુત્રાદિકોનું પાલન પોષણ કરવું એ સર્વોત્તમ કાર્ય છે. મેં ધન ઉપાર્જન કરવામાં કાંઈ કસર રાખી નહિ. સંસારભરના સર્વ અનર્થ કર્યા, અને આકુળ-

અષ્ટો જાતોઽહં, ત એવ સામ્પ્રતં મમાશનવસનાદિકાર્યેઽપિ વિમનસો ભવન્તીતિ મહત્કષ્ટમ્, કિમધિકેન મદ્વચનમપિ તેષાં વિપાયતે, इत्येवंविधवाक्यैर्निजपरिवारान् वृद्धो धिक्करोतीति भावः । अतो हे आत्मन् ! ‘ नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वेति ’ ‘ त्राणाय वा ’ दौर्बल्यपीडादिरूपापदुद्धरणाय, शरणाय वा= निर्भयावस्थानाय वा न अलं=समर्थाः । अत्र वा-शब्दोऽर्थान्तरद्योतकस्तेन कदाचि-

જિનકે કારણ કલ્યાણમાર્ગસે દૂર રહ્યા વેહી અવ મેરે સ્વાને-પીને પહિનને કે ઇન્તજામ કરનેમેં ખી મન નહીં લગા રહે હૈં, યહ કિતને કષ્ટ કી વાત હૈં? અરે ! અધિક કયા કહ્યા જાય ઉન લોગોંકો તો અવ મેરા બોલના ખી વિષ જૈસા માલૂમ પડતા હૈં । હસ પ્રકાર કે વચનોંસે વહ વૃદ્ધ ઉન આત્મીય જનોં કી નિન્દા કરતા હૈં ઓર ઉન્હેં ધિક્કારતા હૈં, હસલિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ—

“ નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા ” ઇતિ ।

હે આત્મન્ ! જિન પર પદાર્થોંકા તૃને અપની રક્ષાકે સ્વાલસે પાલન પોષણ કિયા હૈં વે કોઈ તેરી હસ વૃદ્ધાવસ્થાજન્ય દુર્બલતાસે અથવા ઉસ સમયમેં હોનેવાલે અનેક કષ્ટરૂપ આપત્તિયોંસે તેરા ઉદ્ધાર નહીં કર સકતે હૈં ઓર ન તુજે શરણ દેને કે લિયેં હી સમર્થ હો સકતે હૈં । હસ વાક્યમેં જો “ વા ” શબ્દ આયા હૈં વહ હસ વાતકા સૂચક હૈં કિ યદિ પૂર્વ પુણ્યકે ઉદયસે કોઈ એસે આત્મીય જન મિલે હોં જો માતાપિતાકે

વ્યાકુળ ચિત્ત રાખી અસાવધાનીપૂર્વક પોતાની પ્રવૃત્તિ ચાલુ રાખી, અને હજી સુધી પણ મેં જેના કારણે કલ્યાણ માર્ગથી દૂર રહ્યો તે આજ મારા ખાવામાં-પીવામાં પહેરવામાં સગવડ કરી આપવાજરા પણ મન લગાડતા નથી, તે કેટલા દુઃખની વાત છે? અરે! અધિક શું કહેવું, તે લોકોને તો હવે માફ બોલવું પણ ઝેર જેવું લાગે છે. આ પ્રકારના વચનોથી તે વૃદ્ધ તે આત્મીય જનોની નિંદા કરે છે અને તેને ધિક્કારે છે તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

“ નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા ” ઇતિ

હે આત્મન્ ! જે પરપદાર્થોંનું તે પોતાની રક્ષા માટે પાલન પોષણ કર્યું છે તે કોઈ તારી આ વૃદ્ધાવસ્થાજન્ય દુર્બલતાથી અથવા આ સમયમાં થનાર અનેક કષ્ટરૂપ આપત્તિઓથી તારો ઉદ્ધાર કરી શકતા નથી, અને તને શરણ દેવામાં પણ સમર્થ નથી. આ વાક્યમાં જે “વા” શબ્દ આવ્યો છે તે આ વાતનો અર્થ છે કે કદાચ પૂર્વ પુણ્યના ઉદયથી કોઈ આવા આત્મીય જન મળ્યા હોય ‘ માતા-પિતાની વૃદ્ધાવસ્થામાં ભક્તિ કરતા હોય, તેમની દરેક પ્રકારની સેવા

સોડવસરાદિકં ન કિમપિ જાનાતિ । અનવસરમપિ શોભમાનાવસરમેવ મન્યમાનો
યસ્માત્કસ્માદ્ યેન કેન પ્રકારેણાર્થં વાઙ્છતિ । અર્થલુબ્ધો હિ સતતમર્થોપાર્જન-
વ્યાસક્તમાનસઃ પ્રાવૃષિ મુશલધારાઙ્ગરિતે કાલે દુરધિગતજલસ્થલસુપથવિપથાયાં
પદમપિ ગન્તુમક્ષમાયાં ક્ષમાયાં વાણિજ્યાર્થં નાવાપારપાશવારમપિ તિતીર્થુર્દ્વીપાદ્-
દ્વીપાન્તરે ગમનાગમનાદિકં કરોતિ, સર્વત્ર ધનલોભ એવ કારણમ્ । ધનાર્થી પ્રાણમપિ

અકાલ કે નિયમ કા જ્ઞાતા નહીં હૈ । જો ધનકા અભિલાષી હોતા હૈ વહ
સમય કી પ્રતીક્ષા નહીં કિયા કરતા હૈ । ધનાર્જન કરને કા અવસર નહીં
હોને પર ભી યહ “ ધન કમાને કા સુન્દર અવસર હી હૈ ” એસા માન
કર જિસ કિસી ભી રીતિ સે ધન કી અભિલાષા કિયા કરતા હૈ । જો
દ્રવ્ય કા લુબ્ધક હોતા હૈ વહ નિરન્તર દ્રવ્ય કે ઉપાર્જન કરને મેં આસક્ત-
ચિત્ત બન કર વર્ષાકાલ મેં સૂસલધાર પાની વરસને પર ભી રાત્રિ કે
સમય હી ઉસ ભૂમિ મેં કિ જિસમેં જલ સ્થલ સમમાર્ગ ઓર વિષમમાર્ગ
કી કુછ ભી સ્વબર નહીં પડતી ઓર જહાં એક કદમ ભી ચલના બઢા
મુશ્કિલ હોતા હૈ એસી ભૂમિ મેં ભી વ્યાપાર કે લિયે ગાડી આદિ કિસી
સાધન દ્વારા એક નગર સે દૂસરે નગર મેં, ઓર નૌકા સે અપાર સમુદ્ર કો
ભી પાર કર એક દ્વીપ સે દૂસરે દ્વીપ મેં આતા જાતા રહતા હૈ । પ્રાણોં કો
ભી સંકટ મેં ઢાલ ધનાભિલાષી ધન કમાને કે લિયે દુર્ગમ પ્રદેશોં મેં
જાકર ધન કા ઉપાર્જન કરતા હૈ, ઉસમેં સિર્ફ ધન કા લોભ હી કારણ
હૈ । દ્રવ્યલોલુપી અપને પ્રાણોં કી બાજી લગાકર ભી ઇધર ઉધર દ્રવ્ય

નિયમનો જાતા નથી, જે ધનનો અભિલાષી છે તે સમયની પ્રતીક્ષા કરતો નથી,
ધન ઉપાર્જન કરવાનો અવસર નહિ હોવા છતાં “ ધન કમાવાનો સુંદર અવસર
છે ” એમ માની કોઈ પણ પ્રકારે ધનની અભિલાષા કર્યા કરે છે. જે દ્રવ્યનો
લુબ્ધક હોય છે તે નિરંતર દ્રવ્ય ઉપાર્જન કરવામાં આસક્ત બની વર્ષાકાળમાં
સૂસળધાર પાણી વરસતો હોય છતાં રાત્રિ સમય તે ભૂમિમાં કે જ્યાં જળ સ્થળ
સમમાર્ગ અને વિષમમાર્ગની કાંઈ પણ બબર પડતી નથી અને જ્યાં એક ડગલું
પણ ભરવું મુશ્કેલ થઈ પડે છે તેવી ભૂમિમાં પણ વ્યાપાર કરવા ગાડા આદિ
કોઈ સાધનદ્વારા એક ગામથી બીજા ગામમાં અને નૌકાથી અપાર સમુદ્રનો પણ
પાર કરી એક દ્વીપથી બીજા દ્વીપમાં આવે જાય છે, પ્રાણને પણ જોખમમાં મૂકીને
અભિલાષી ધન કમાવા દુર્ગમ પ્રદેશોમાં જઈ ધનનું ઉપાર્જન કરે છે તેમાં ફક્ત
નનો લોભ જ કારણ છે. દ્રવ્યલોલુપી પોતાના પ્રાણના ભોગે પણ અહીં-તહીં

तत्पूर्वपुण्योदयेन वृद्धावस्थायां पुत्रादयोऽतिभक्तास्तवापमानं नैव कुर्वन्ति तथापि ते वृद्धावस्थाजनितदुःखपरिमोचका न भवितुमर्हन्तीति तात्पर्यमवगम्यते ।

अथ यदि पुत्रकलत्रादयः सेवापरा दुःखभारभरमग्नाः सन्तीत्यालोच्य तेषां दुःखोद्धाराय तत्र चेतसि चिन्ता स्यादपि तथापि तदुद्धारः कर्तुमशक्य इति दर्शयति—
‘त्वमपि तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय वे’—ति, एवं वृद्धो न तेषां दुर्दशापदुद्धारको-
नापि तदाश्रयो भवितुमर्हसि सामर्थ्याभावादिति भावः ।

वृद्धावस्था में भी अतिभक्त हों, उनकी हर तरहसे सेवा चाकरी करनेमें कोई कर-कसर न रखते हों, उनका जरा भी तिरस्कार नहीं करते हों तो भी इस वृद्धावस्थामें होनेवाले जो अनेक कष्ट हैं चाहें वे शारीरिक हों चाहें मानसिक हों, चाहें वाचिक हों उनसे वे उनका उद्धार नहीं कर सकते ।

वृद्धावस्थामें यदि वह वृद्ध चाहे कि—मैं—अपने सेवक पुत्र कलत्रा-
दिकों का जो रात दिन मेरी सेवा करनेमें ही लगे रहते हैं, और जो विचारे दुःखों से पीड़ित हो रहे हैं मैं उन्हें कष्टसे निर्मुक्त करदूँ तो इस प्रकारका भी उसका विचार करना व्यर्थ ही है, इसी बातको प्रकट करते हुए सूत्रकार कहते हैं—“त्वमपि तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय वा” इति । भाई ! वृद्धावस्थामें तुझे इस प्रकारकी चिन्ता करना ठीक नहीं है, कारण कि तुम स्वयं अशक्त हो तब तुम उन दुर्दशामें फँसे हुए अपने पुत्र कलत्रादिकों के उद्धारक कैसे हो सकते हो और कैसे उनके

आकरी करवामां डोढपिणु प्रकारनी कसर राणता न डोय, तेनो जरा पणु तिर-
स्कार करता नथी तो पणु आ वृद्धावस्थाभां थनार जे कण्ठो छे लवे ते शारीरिक
डोय डे मानसिक डोय, अगर वाचिक डोय, तेनाथी तेओ तेमनो उद्धार करी
शकता नथी.

वृद्धावस्थाभां कदाय ते वृद्ध आडे डे—‘हुं मारा सेवक पुत्र कलत्रादिको, जे
रात दिवस मारी सेवा करवामां ज लाग्या रहे छे अने जे गियारा दुःखोथी
पीडित थछ रह्यां छे, हुं तेमने कष्टथी निर्मुक्त करी दउ’ तो तेनो आ प्रका-
रनो पणु विचार व्यर्थ ज छे. आ बातने प्रगट करवा सूत्रकार डडे छे—

“त्वमपि तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय वा” इति

भाई ! वृद्धावस्थाभां तारे आ प्रकारनी चिन्ता करवी ठीक नथी, कारण डे
तुं पोते अशक्त छे तारे तुं आवी दुर्दशाभां इसेलां पोतानां पुत्र कलत्रादिकोनो

ત્રાણ-શરણપદયોરર્થસ્તૂત્ત એવ । અત્રાપિ વા-શબ્દેન તવ પુત્ર-કલત્રાદયો
યદિ દુઃસ્વમગ્નાસ્ત્વત્સેવાપરા અપિ સ્યુસ્તથાપિ ન તેષાં ત્વં રક્ષકો ભવિતું શક્નોપિ,
इत्येवं गम्यते । स्वकार्यिककार्यकरणेऽप्यसमर्थस्त्वं कथं महायाससाध्यं तेषां
भरणपोषणादिकार्यं कर्तुमध्यवस्यसीति भावः ।

સ તસ્યામવસ્થાયાં સ્વયં હાસયોગ્યો નાન્યં જનમુપહસિતું પ્રભવતીતિ દર્શયતિ--
'સ ન હાસાયે-' તિ, સઃ=વૃદ્ધો હાસાય નિન્દિતાચારમુપહસિતું ન યોગ્યો ભવતિ ।

આશ્રયપ્રદાતા હો સકતે હો, તુમ તો સ્વયં હસ સમય રક્ષા કરને યોગ્ય
એવં આશ્રય પાને યોગ્ય હો રહે હો ।

હસ સૂત્રમેં ભી જો 'વા' શબ્દ આયા હૈં ઉસસે યહ બોધ હોતા હૈં
કિ-તેરે પુત્ર કલત્રાદિક યદિ દુઃસ્વમગ્ન હૈં ઓર તેરી સેવામેં ભી તત્પર
હૈં તો ભી તું ઉનકા રક્ષક નહીં હો સકતા, ક્યોંકિ જબ તું સ્વયં અપના
શારીરિક કાર્ય કરને તકમેં ભી અસમર્થ હો રહા હૈં તો ફિર કૈસે મહાકષ્ટ-
સાધ્ય ઉનકે ભરણ-પોષણ આદિ કાર્ય કરનેકે લિયે વિચાર કર સકતા હૈં ।

વૃદ્ધ અપની અવસ્થામેં સ્વયં હસીકા પાત્ર હૈં વહ દૂસરોંકી હસી
કૈસે કર સકતા હૈં ? હસકા વર્ણન કરતે હૈં--“સ ન હાસાય” જો સ્વયં
હી હસી-મજાક કા પાત્ર હોતા હૈં વહ દૂસરોંકી હસી ભી કૈસે કર સકતા
હૈં અતઃ કોઈ યદિ નિન્દિત આચારવાલા હૈં તો વહ ઉસકી હસી કરનેકે
યોગ્ય હી નહીં હૈં ।

ઉદ્ધારક કેવી રીતે બની શકે છે, અને કેવી રીતે તેને આશ્રય આપી શકાય. તમે
પોતે આ સમયે રક્ષા કરાવવા યોગ્ય અને આશ્રય લેવા યોગ્ય છો.

આ સૂત્રમા પણ જે 'વા' શબ્દ આવ્યો છે તેનાથી એ બોધ થાય છે કે
તારા પુત્ર કલત્રાદિક કદાચ હું બમળું છે અને તારી સેવામા પણ તત્પર છે તો
પણ તું તેમનો રક્ષક બની શકતો નથી કારણ કે જ્યારે તું સ્વય પોતાના
શારીરિક કાર્ય કરવામા અસમર્થ છે તો પછી કેવી રીતે મહાકષ્ટસાધ્ય તેનું
ભરણ પોષણ આદિ કાર્ય કરવા વિચાર પણ કરી શકે.

વૃદ્ધ પોતાની અવસ્થામા સ્વય હાસીને પાત્ર છે, તે બીજાની હાસી કેવી
રીતે કરી શકે ? તેનું વર્ણન કરે છે--“સ ન હાસાય” જે સ્વય હાસી મળકનો
પાત્ર છે તે બીજાની હાસી કેવી રીતે કરી શકે, માટે કોઈ કદાચ નિન્દિત
આચારવાળા છે તો તેઓ તેની હાસી કરવાને યોગ્ય જ નથી.

યઃ સ્વયમુપહાસપાત્રં સ કથમન્યમુપહસેદિતિ તાત્પર્યમ્ । વૃદ્ધાવસ્થાયાં પુરુષઃ ક્રીડા-
કરણાક્ષમો ભવતિ, યદા કામચેષ્ટાભિભૂતો ભવતિ તદા સ પ્રાણપણેનાપિ યુવતિ
કામયતે પરં સા નિજાનન્દાક્ષમં તં વિદિત્વાઽવહેલયતીતિ દર્શયતિ-‘ ન ક્રીડાયૈ ન
રતયે ’ ઇતિ, ક્રીડા=અક્ષાદિનાં खेलनं, लङ्घनप्रधावनास्फोटनादिकं वा, तस्यै न स
प्रभवति । रतिर्नाम वनिताविषयक आलिङ्गनादिनानारूपः क्षणिकसुखविशेषस्तस्यै
न समर्थो भवतीत्यर्थः । वृद्धावस्थायां युवतिं वशीकर्तुं न पारयति प्रत्युत ‘न लज्जतेऽयं
पलितकेशोऽचारुवेशो मम हृदयेशो बुभूषुर्दुहितृतुल्यामपि मामभिकामयते ’
इत्यादिवाक्यैस्तं सा भर्त्सयति ।

યુવતિં લબ્ધુકામો ધૃતભૂષણોઽપિ ન શોભત ઇતિ દર્શયતિ-‘ ન વિભૂષાયૈ ’ ઇતિ,
વિભૂષા=कटककुण्डलकेयूराद्यलङ्काररूपा, तस्यै स न योग्यो भवति, वृद्धस्य विभूषा
न शोभत इति भावः ।

“ ન ક્રીડાયૈ ન રતયે ” ઇસ સૂત્રમેં યહ પ્રકટ કિયા હૈ કિ વૃદ્ધા-
વસ્થામેં પુરુષ ક્રીડા કરનેમેં અસમર્થ હો જાતા હૈ તથા વહ વિષયસેવનકે
ભી યોગ્ય નહીં રહતા હૈ ।

યહાં ક્રીડા કા અર્થ અક્ષાદિકો-પાસોં-સે લેખના, લાંઘના, દૌડના
તથા વ્યાયામ કરના, ઇત્યાદિ હૈ । યહ ક્રીડા વૃદ્ધ કૈસે કર સકતા હૈ?
ક્યોં કિ વહ વૃદ્ધાવસ્થા મેં બિલકુલ અસક્ત હો જાતા હૈ । રતિ કા અર્થ હૈ
આલિંગનાદિક । ઇસકા ભી ઉપભોક્તા વહ નહીં હો સકતા કારણ કિ
વૃદ્ધાવસ્થામેં પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ । અર્થાત્ શોભાકે લિયે
ધારણ કિયે ગયે અલંકાર ભી ઇસે કમી શોભા પ્રદાન નહીં કર સકતે ।
કડે, કુણ્ડલ, કેયૂર-મુજબન્ધ આદિ અલંકાર ઉસકી શોભા કે અભિ-
વર્દ્ધક ન હોકર પ્રત્યુત ઉસકે લિયે હાસ્ય કે કારણ હી બનતે હૈ । કહા ભી હૈ-

“ ન ક્રીડાયૈ ન રતયે ” આ સૂત્રમાં એ પ્રગટ કરેલ છે કે વૃદ્ધાવસ્થામાં પુરુષ
ક્રીડા કરવાને અસમર્થ બની જાય છે તથા તે વિષયસેવન માટે પણ યોગ્ય રહેતો નથી.

આ ઠેકાણે ક્રીડાનો અર્થ અક્ષાદિકો-પાસાઓથી ખેલવું, ઠેકવું, કુદવું, દોડવું
તથા વ્યાયામ કરવો, ઇત્યાદિ છે. આ ક્રીડા વૃદ્ધ કેવી રીતે કરી શકે, કારણ કે
તે વૃદ્ધાવસ્થામાં બિલકુલ અશક્ત થઈ જાય છે. રતિનો અર્થ છે આલિંગનાદિક
તેના પણ ઉપભોક્તા તે બની શકતો નથી, કારણ કે વૃદ્ધાવસ્થામાં પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયો
શિથિલ બને છે. અર્થાત્ શોભા માટે પણ ધારણ કરેલાં અલંકાર પણ તેને શોભા
આપી શકતાં નથી. કડા, કુંડલ, કેયૂર-મુજબન્ધ આદિ અલંકાર તેની શોભામાં
વૃદ્ધ કરતા નથી પણ તેના માટે હાસ્યનું કારણ બને છે. કહ્યું છે કે:-

ઉક્તञ્ચ—“ ન ભૂષણં ભાતિ ન હાસ્યમસ્ય, ન વિભ્રમો નૈવ જના અધીનાઃ ।

પ્રવર્તતે તત્ર યદા તુ વૃદ્ધો, વિડમ્બનાં યાતિ પરાં તદા સઃ” ॥૧॥

एवं च वृद्धावस्थायां निजतनयवनितादितिरस्कृतस्य जराजर्जरितदेहस्य क्रीडारतिविभूषादिकं न किमपि शोभत इति सूत्राशयः ॥ ३ ॥

ઉક્તમપ્રશસ્તમૂલસ્થાનં, સંપ્રતિ પ્રશસ્તમૂલસ્થાનમાહ—યદ્વા—યતસ્તે પુત્રકલત્રાદયો નાલં મે ત્રાણાય વા શરણાય વા ભવિતુર્મર્હન્તીતિ વિચાર્ય ધીરઃ ક્ષણમપિ ન પ્રમાદં કુર્યાદિતિ દર્શયતિ—‘ઇચ્છેવં’ ઇત્યાદિ ।

“ ન ભૂષણં ભાતિ ન હાસ્યમસ્ય, ન વિભ્રમો નૈવ જના અધીનાઃ ।

પ્રવર્તતે તત્ર યદા તુ વૃદ્ધો, વિડમ્બનાં યાતિ પરાં તદા સઃ ॥૧॥”

इस प्रकार इसको न भूषण शोभा देते हैं—न इसकी हँसी ही इसकी सुन्दरता बढ़ा सकती है, न विभ्रम-विलास ही यह कर सकता है, इसके अपने पास में रहे हुए जन भी कहने में नहीं रहते । अगर वह ऊपर की बातों में प्रवृत्ति करे तो वह इस वृद्धावस्था में विडम्बना पाता हुआ अपने पुत्र-स्त्री आदि से तिरस्कार को ही पाता है, तथा जरासे जर्जरित काय बने हुए इसके लिये क्रीडा-रति-विभूषादिक कुछ भी शोभा नहीं देते ॥ ३ ॥

અપ્રશસ્ત મૂલસ્થાનોં કા વર્ણન હો ચુકા, અવ પ્રશસ્ત મૂલસ્થાનોં કા વર્ણન ક્રિયા જાતા હૈ, અથવા—વે પુત્ર કલત્રાદિક મેરી રક્ષા કે લિયે યા મુઝે શરણ પ્રદાન કરને કે લિયે સમર્થ નહીં હો સકતે હૈ, એસા વિચાર

“ ન ભૂષણ ભાતિ ન હાસ્યમસ્ય, ન વિભ્રમો નૈવ જના અધીનાઃ ।

પ્રવર્તતે તત્ર યદા તુ વૃદ્ધો, વિડમ્બનાં યાતિ પરાં તદા સઃ” ॥ ૧ ॥

આ પ્રકારે તેને ભૂષણ શોભા દેતા નથી તેની હાંસી પણ તેની સુદરતા વધારી શકતી નથી તે વિલાસ પણ કરી શકતો નથી. તેની પાસે રહેતા માણસો પણ તેના કહેવામાં રહેતા નથી. અગર તે ઉપર કહેલી વાતોમાં પ્રવૃત્તિ કરે તો તે આ વૃદ્ધાવસ્થામાં વિડમ્બના પામીને પોતાના પુત્ર સ્ત્રી આદિથી તિરસ્કાર જ પામે છે તથા ઘડપણથી જર્જરિત શરીર અનેકું ઢોધ તેના માટે ક્રીડા, રતિ, વિભૂષાદિક કોઈ પણ શોભા માટે યોગ્ય નથી

અપ્રશસ્ત મૂલસ્થાનોનું વર્ણન થઈ ચુક્યું. હવે પ્રશસ્ત મૂલસ્થાનોનું વર્ણન કરે છે—અથવા તે પુત્ર કલત્રાદિક મારી રક્ષા માટે અગર મને શરણ પ્રદાન કરવા માટે અમર્થ બની શકતા નથી, એવો વિચાર કરી ધીર વીર પુરુષનું

મૂલમ્—ઇચ્છેવં સમુદ્વિષ્ટિ અહોવિહારાણ, અંતરં ચ ચ્ચલુ ઇમં સંપેહાણ ધીરે મુહુર્ત્તમવિ ણો પમાયણ વઓ અચ્છેતિ જોવ્વણં વા ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—ઇત્યેવં સમુત્થિતઃ અહોવિહારાય અન્તરં ચ ચ્ચલુ ઇમં સંપેક્ષ્ય ધીરો મુહુર્ત્તમપિ નો પ્રમાદયેત્, વયોસ્ત્યેતિ યૌવનં વા ॥ સૂ૦ ૪ ॥

કર ધીર વીર પુરુષ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ એક ક્ષણ મી પ્રમાદ ન કરે—
ઈસી વાતકી પુષ્ટિ કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—

“ઇચ્છેવ સમુદ્વિષ્ટિ” ઇત્યાદિ—યૌવન અવસ્થા મેં પુત્ર-મિત્રાદિકોં મેં આસક્ત બના હુઆ યહ પ્રાણી સાવધ વ્યાપાર મેં લવલીન રહતા હૈ ઓર જબ વૃદ્ધાવસ્થા આતી હૈ તબ વહ ડન સકલ કાર્યોં કે વેદને મેં અસમર્થ હો જાતા હૈ, એસા વિચાર કર સંયમ પાલન કરને કે લિયે ઉદ્યુક્ત હુઆ સંયમી મુનિ સંયમ કો પાલન કરને કે ઇસ અવસર કા અચ્છી તરહ વિચાર કર એક મુહુર્ત્ત મી પ્રમાદ ન કરે, ક્યોં કિ આયુ ઓર યૌવન ડોનોં વીત રહે હૈ ।

સૂત્ર મેં “ઇત્યેવં” યહ શબ્દ પૂર્વોક્ત કથન કી પુષ્ટિ કરતા હૈ, અર્થાત્—જબ યહ વાત પ્રમાણિત હો ચુકી કિ યૌવન અવસ્થા મેં પુત્ર મિત્ર કલ-ત્રાદિકોં મેં આસક્ત બના હુઆ પ્રાણી સાવધકાર્યોં કે કરને મેં લવલીન હોતા હૈ પરન્તુ વહી પ્રાણી જબ વૃદ્ધાવસ્થા આતી હૈ તબ ડન સમસ્ત કાર્યોં કે કરને મેં અપને કો સર્વથા અસમર્થ પાતા હૈ, જબ યહ હાલત હૈ

કર્તવ્ય છે કે તે એક ક્ષણ પણ પ્રમાદ ન કરે. આ વાતની પુષ્ટિ કરવા સૂત્ર-કાર કહે છે કે—

“ઇચ્છેવ સમુદ્વિષ્ટિ” ઇત્યાદિ, યૌવન અવસ્થામાં પુત્ર-મિત્રાદિકમાં આસક્ત બનીને આ પ્રાણી સાવધ વ્યાપારમાં લવલીન રહે છે અને ન્યારે વૃદ્ધાવસ્થા આવે છે ત્યારે તે એ બધા કાર્યોંને કરવામાં અશક્ત બની જાય છે, એવો વિચાર કરી સંયમ પાલન કરવા માટે ઉદ્યુક્ત થઈને સંયમી મુનિ સંયમનું પાલન કરવાને આ અવસરનો સારી રીતે વિચાર કરી એક ક્ષણનો પણ પ્રમાદ ન કરે, કારણ કે આયુષ્ય અને યૌવન બન્ને વીતી જાય છે.

સૂત્રમાં “ઇત્યેવ” આ શબ્દ પૂર્વોક્ત કથનની પુષ્ટિ કરે છે. અર્થાત્ ન્યારે આ વાત પ્રમાણભૂત બની ચૂકી છે કે યૌવન અવસ્થામાં પુત્ર મિત્ર કલત્રાદિકોં આસક્ત બનેલ પ્રાણી સાવધ વ્યાપાર કરવામાં લવલીન થાય છે. પરંતુ તે પ્રાણી ન્યારે વૃદ્ધાવસ્થા આવે છે ત્યારે આ બધા કાર્યોં કરવામાં યોતાને સર્વથા અસ-

ટીકા—‘इत्येवम्’ इतिशब्दः पूर्वपददर्शितवस्तुसूचकस्तेन यौवने पुत्रकलत्रासक्तः सावधानुष्ठानरतः स एव वृद्धावस्थायां सकलकार्याभिमो भवतीत्यर्थः । एवं=यथो-पदर्शितेन प्रकारेण ‘समुत्थितः अहोविहाराय’ इति ।

अहो इत्याश्चर्यजनको विहारो=विहरणं यस्मिन् सः=अहोविहारः संयमानुपालनं, तस्मै=तदर्थं समुत्थितः=सम्यगुद्युक्तः सन् मुहूर्तमपि न प्रमादयेदित्यनेन सम्बन्धः ।

તો વહ ઇસ પ્રકાર કી પરિસ્થિતિ કો દૂર કરને કે લિયે યહ સર્વોત્તમ પ્રયત્ન કરે કિ વહ સંયમ મેં અપને કો લગા દે, કારણ કિ સંયમ કા અનુષ્ઠાન કરના હી ઇસ રોગકા ઇલાજ હૈ, ઇસકે પાલન-સેવન કિયે બિના યહ ભવર કા રોગ દૂર નહીં હો સકતા-સંયમારાધન મનુષ્ય-ગતિ કે સિવાય અન્ય ઓર કિસી બી ગતિ મેં હો નહીં સકતા-ઇસલિયે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ કિ ઇસ સંયમરૂપી ઓષધિ કા પાન બી વહી કર સકતા હૈ જો ધીર હો-પરીષદ ઓર ઉપસર્ગ કે આને પર બી જો અપને કર્તવ્યપથ સે ચ્યુત નહીં હોતા હો, ઉસકા નામ સિદ્ધાન્ત કી પરિભાષા મેં ધીર હૈ । ઇસી વાત કી પુષ્ટિ—“અહોવિહારાય” ઇસ પદસે તથા “ધીરે” ઇસ પદ સે સૂત્રકારને કી હૈ । અહોવિહાર શબ્દ કા અર્થ સંયમ હૈ, કારણ કિ ઇસમેં વિચરણ કરનેવાલા પ્રાણી દેહ મેં મમત્વબુદ્ધિ રાખનેવાલોં કે લિયે આશ્ચર્ય પૈદા કરનેવાલા હોતા હૈ, ઉસ કી અનેક પ્રકાર કી તપશ્ચર્યા એવં કાયકલેશાદિક બાહ્ય તપકો દેખ કર સંસારી વહિરાત્મા જીવ આશ્ચર્યચકિત હો જાતે હૈ, વે વિચારતે હૈ—ધન્ય હૈ ઇસ

મર્થ માને છે. જ્યારે આવી હાલત છે તો તે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિને દૂર કરવા માટે સર્વોત્તમ પ્રયત્ન કરે કે સંયમમા પોતાને લગાવી દે, કારણ કે સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવું તે જ આ રોગનો ઉપાય છે. તેનું પાલન-સેવન કર્યા વગર આ ભવોભવનો રોગ મટતો નથી સંયમારાધન, મનુષ્યગતિ સિવાય અન્ય કોઈ ગતિમાં થઈ શકતું નથી તેથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે કે આ સંયમરૂપી ઔષધિનું પાન તે કરી શકે છે જે ધીર છે અને પરીષદ ઉપસર્ગ આવવા છતાં પણ જે પોતાના કર્તવ્યથી દૂર થતાં નથી. તેનું નામ સિદ્ધાન્તની પરિભાષામાં ધીર છે આ વાતની પુષ્ટિ—“અહોવિહારાય” આ પદથી તથા “ધીરે” આ પદથી સૂત્રકારે કરેલ છે. અહોવિહાર શબ્દનો અર્થ સંયમ છે, કારણ કે તેમાં વિચરણ કરવાવાળાં પ્રાણી દેહમાં મમત્વબુદ્ધિ રાખવાવાળાઓને માટે આશ્ચર્ય પૈદા કરવાવાળા હોય છે તેની અનેક પ્રકારની તપશ્ચર્યા અને કાયકલેશાદિક બાહ્ય તપને દેખીને સંસારી બહિરાત્મા જીવ આશ્ચર્યચકિત થાય છે. તે વિચારે છે—ધન્ય છે

संयमी जन को, इस प्रकार की तपश्चर्या को-जिससे शरीर पर भी ममता नहीं रहती है, अतः इस प्रकार का संयमाराधन “पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे शयनं” इस महारोग का अचूक महौषध है। उसकी प्राप्ति के लिये हे प्राणी ! तू एक मुहूर्त की भी देरी मत कर, मत सोच इस बातको कि-“अभी तो खाने पीने के दिन हैं-ऐश-आराम भोगने का यह समय है, बाद जब वृद्धावस्था आवेगी। तब संयमाराधन करलूंगा” कारण कि कौन कह सकता है कि वृद्धावस्था आवेगी। वृद्धावस्था आने के पहिले ही यदि तू इस पर्याय से पर्यायान्तरित हो गया तो फिर तेरी यह कल्पना कोरी ही रह जावेगी। तथा वृद्धावस्था में जब कि प्रत्येक इन्द्रिय शिथिल हो जाती है, शरीर भी अशक्त बन जाता है, करने की भावना होने पर भी जिसमें कुछ भी करते धरते नहीं बनता तो इस संयम का आराधन हो भी कैसे सकता है। यदि पहिले से संयमाराधन की शक्ति आत्मामें आई हुई हो तो वृद्धावस्था में संयमाराधन पूर्वसंस्कार के बश से हो भी जाय, परन्तु इस प्रकार की योग्यता तो तूने अभी तक प्राप्त ही नहीं की, यह योग्यता जब प्रत्येक इन्द्रिय बलवान् थी, शरीर भी सशक्त था, द्रव्य, क्षेत्र, काल और

ते संयमीजनने, आ प्रकारनी तपश्चर्याने, जेथी शरीरमां पणु ममता रहेती नथी. भाटे आ प्रकारनु संयमाराधन “पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननी-जठरे शयनं” आ महारोगनु जर मडा औषध छे, तेनी प्राप्ति भाटे हे प्राणी, तूं अेक क्षण पणु ढील न कर. अे वातनो विचार पणु न कर के-“हुमणुं तो आवा पीवाना द्विसो छे-ऐशआराम लोगवानो समय छे, न्यारे वणी वृद्धा-वस्था आवशे त्यारे संयमाराधन करी लछशि.” कारण के कोणु कही शके छे के वृद्धावस्था आवशे. वृद्धावस्था आव्या पहेलां न कदाय तूं आ पर्यायथी पर्याया-न्तरित थछ गयो तो पछी तारी आ कल्पना नकामी न रही नवानी. अने वृद्धावस्थामां न्यारे प्रत्येक इन्द्रिय शिथिल थाय छे, शरीर पणु असक्त अने छे, करवानी भावना होवा छतां पणु कछ पणु करी शकतो नथी तो पछी आ संयमनुं आराधन केवी रीते णनी शके. कदाय पहेलाथी संयमाराधननी शक्ति आत्मामां आवी गछ होत तो वृद्धावस्थामां संयमाराधन पूर्व संस्कारने बशथी थछ पणु नय परंतु आ प्रकारनी योग्यता तो तने हुणु सुधी प्राप्त न नथी थछ. आ योग्यता न्यारे प्रत्येक इन्द्रिय णणवान हुती, शरीर पणु सशक्त हुतुं, द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव रूप सामग्री अनुकूल हुती, ते अवस्थामा आवी शकत.

ભાવ રૂપ સામગ્રી અનુકૂલ થી उस अवस्था में आती, परन्तु वह अवस्था तो तूने मित्र पुत्र कलत्रादिकों में आसक्ति के वशवर्ती होकर गमा दी और सावधानुष्ठानों के करने से अपनी आत्मपरिणति को कलुषित कर दिया, तब भला, कहो तो सही, सहसा यह कार्य तुझ से अब कैसे बन सकेगा ? । इस पर सूत्रकार कहते हैं कि—हे भव्य प्राणी ! तू “मुहुत्तमवि नो पमायए” एक मुहूर्त भी प्रमाद मत कर, और मन वचन एवं काय से, तथा कृत कारित और अनुमोदना से, अर्थात् नव कोटि से इस संयम का आराधन कर, कनक कामिनी आदि पदार्थ जिन्हें तू भ्रमके वश से अभी तक अपने मानता आया है, और जिनके पाने में तथा पालन पोषण करने में तूने अपने हित और अहित का भी विवेक लुप्त कर दिया है, भला ! उनके स्वरूप का विचार कर और देख कि इनके संयोग से तेरी आत्मा में कहां तक शान्ति जागृत होती है ? यदि ये वास्तविक शान्ति प्रदान करने में असमर्थ हैं तो तू इनका नवकोटि से परित्याग कर दे, इस परित्याग से तेरी आत्मा में वह अपूर्व संस्कार जागृत होगा जो तेरी इन दीनदशा का अन्त करनेवाला हो जायगा, इन पदार्थों का भोग अथवा संग्रह खाज को खुजलाने के समान है—जिस प्रकार खाजको खुजलानेवाला व्यक्ति

પરતુ તે અવસ્થા તો તે પુત્ર મિત્ર કલત્રાદિકોમાં આસક્તિને વશવર્તી બની શુભાવી અને સાવધાનુષ્ઠાનો કરવાથી પોતાની આત્મપરિણતિને કલુષિત કરી, ત્યારે ભલા કહો તો યશ, સહસા આ કાર્ય તારાથી હવે કેવી રીતે બની શકશે ?, આ ઉપર સૂત્રકાર કહે છે કે —હે ભવ્ય પ્રાણી ! તુ “મુહુત્તમવિ નો પમાયણ” એક ક્ષણનો પણ પ્રમાદ ન કર અને મન વચન અને કાયાથી તથા કૃત, કારિત અને અનુમોદનાથી અર્થાત્ નવ કોટિથી આ સંયમનુ આરાધન કર, કનક કામિની આદિ પદાર્થ જેને તુ ભ્રમવશ હજી સુધી પોતાના માનતો આવ્યો છે અને જેને મેળવવામાં અને પાલન પોષણ કરવામાં તે પોતાના હિત અહિતનો પણ વિવેક લુપ્ત કરી નાખેલ છે. ભલા ! તેના સ્વરૂપનો વિચાર કર અને દેખ કે તેના સંયોગથી તારા આત્મામાં કયાં સુધી શાંતિ બંધત થાય છે. કદાચ તે વાસ્તવિક શાંતિ પ્રદાન કરવામાં અસમર્થ છે તો તુ તેનો નવકોટિથી પરિત્યાગ કરી દે. આ પરિત્યાગથી તારા આત્મામાં અપૂર્વ સંસ્કાર બંધત થશે તો આ તારી દીન-દશાનો અંત કરી દેશે, આ પદાર્થોનો ભોગ અથવા સંગ્રહ ખુજલીને ખણવા બરાબર છે જે પ્રકારે ખુજલીને ખણવાવાળો વ્યક્તિ, તે વખતે ખણવાથી આનંદ આવે તેમ માને છે. અને કહ્યું પણ છે.—

ખુજલાતે સમય આનંદ મેં ગોતે લગાને લગતા હૈં ઓર કહા મીં હૈં—

“જો નહીં મજા દેખા હલવા પુરી खाने में, સો મજા દેખા એક खाज के खजुवाने में”

જ્યોં હીં ઉસ ખુજલાને રૂપ કાર્ય કો બંદ કર દેતા હૈં તો ઉસકો જો જલનરૂપ વેદના હોતી હૈં વહ વહીં જાનતા હૈં, હસીં પ્રકાર હન વિષયોં કા સેવન મીં હૈં, એસા વિચાર કર મન, વચન આદિ રૂપ નવ કોટિ સે હનકા ત્યાગ કર। હસીં વાતકી પુષ્ટિ “અહો વિહારાણ” હસ પદ મેં લગા હુઆ “અહો” યહ પદ કરતા હૈં યહ તો નિશ્ચિત હૈં કિ આત્મા મેં પૂર્વ સંસ્કાર જિતના કાર્ય કરતે હૈં ઉતના વર્તમાન સંસ્કાર નહીં। બચા જબ માતા કે પેટ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈં તો ઉસકી સ્તન્યપાનપ્રવૃત્તિ મેં પૂર્વ સંસ્કાર હીં સર્વ પ્રથમ કામ કરતા હૈં। હમ યહ મીં પ્રત્યક્ષ અનુભવ કરતે હૈં કિ કુંભકાર અપને ઘટરૂપ કાર્ય કો નિષ્પન્ન કરને કે લિયે ચાક મેં જબર્દસ્ત બ્રમી પૈદા કરતા હૈં, યહ જબર્દસ્ત બ્રમી સિર્ફ વર્તમાન મેં હીં ઉસને ઉસમેં ઉત્પન્ન નહીં કીં હૈં, કિન્તુ એક કે બાદ એક જો વહ ઉસમેં બ્રમી કિયા કરતા હૈં—વારંવાર ઉસે દંડ સે ઘુમાતા હૈં ઉસસે હીં યહ ઉત્પન્ન હુઈ હૈં, હસીં બ્રમીરૂપ સંસ્કાર કે દ્વારા ઉસને ઘટરૂપ અપને કાર્ય કો નિષ્પન્ન કિયા હૈં, હસીં પ્રકાર આત્મા મીં પૂર્વ પૂર્વ પર-પદાર્થોં કે ભોગને આદિ રૂપ વાસના-સંસ્કાર સે સાંસારિક પરપદાર્થોં કો ભોગને

“જો નહીં મજા દેખા હલવા પુરી खाने में, સો મજા દેખા એક खाज के खजुवाने में”

જ્યારે તે ખણુવારૂપ કાર્યને બંધ કરવામાં આવે અને પછી તેની જે જલનરૂપ વેદના થાય છે તે તેજ જાણે છે. તે પ્રકારે આ વિષયોનું સેવન પણ છે. તેવો વિચાર કરી મન વચન આદિ રૂપ નવ કોટિથી તેનો ત્યાગ કરીદે. આ વાતની પુષ્ટિ “અહો વિહારાણ” આ પદમાં લાગેલા “અહો” એ પદ કરે છે. એ તો નિશ્ચિત છે કે આત્મામાં પૂર્વસંસ્કાર જેટલું કાર્ય કરે છે તેટલું વર્તમાન સંસ્કાર નહિ. બચ્ચું જ્યારે માતાના પેટથી ઉત્પન્ન થાય છે તો તેની સ્તન્યપાન-પ્રવૃત્તિમાં પૂર્વસંસ્કાર જ સર્વ પ્રથમ કામ કરે છે. અમે એ પણ પ્રત્યક્ષ અનુભવ કરીએ છીએ કે કુંભાર પોતાના ઘટરૂપ કાર્યને નિષ્પન્ન કરવા માટે ચાકમાં જબર્દસ્ત બ્રમી પૈદા કરે છે, આ જબર્દસ્ત બ્રમી દ્રષ્ટ વર્તમાનમાં જ તેને તેમાં ઉત્પન્ન કરેલ નથી પણ એકની પછી એક જે તે તેમાં બ્રમી કર્યા કરે છે—વારંવાર લાકડીથી ઘુમાવ્યા કરે છે તેથી જ તે ઉત્પન્ન થયેલ છે, આ બ્રમીરૂપ સંસ્કાર દ્વારા તેણે ઘટરૂપ પોતાના કાર્યને નિષ્પન્ન કર્યું છે, તે પ્રકારે આત્મા પણ પૂર્વ પૂર્વ પરપદાર્થોના ભોગવવા આદિરૂપ વાસના-સંસ્કારથી સાંસારિક

અથવા અપનાને કી ઓર હુકતા હૈ। इन संस्कारों को सर्वथा प्रक्षीण करने की शक्ति यदि कहीं है तो वह सिर्फ एक संयम में ही है, इस संयम का आराधन नव कोटि से ही होना चाहिये, ऊपर की दिखावटीसे नहीं। “अहो विहाराए” इस पदमें जो “अहो” यह शब्द है वह आश्चर्य वाचक है, पूर्वोक्त प्रकारसे एक तो इस पदकी सार्थकता प्रकट की है, दूसरे इस प्रकार से भी इस पदकी सार्थकता टीकाकार प्रकट करते हुए कहते हैं कि—यह भी एक आश्चर्य की बात है कि जब यह आत्मा सांसारिक वासनाओं से वासित था। उस समय किसी को अपना मित्र, किसी को अपना शत्रु मानकर रातदिन राग और द्वेष के फंदे में आपाद-शिख-एडी से चोटी तक जकड़ा हुआ था, इष्टानिष्ट पदार्थों की कल्पना से रात-दिन आर्त रौद्र ध्यान करने में मस्त रहता था, परन्तु ज्यों ही संयम की बागडोर इसके हाथ में आती है यह उस प्रकार की कल्पना से सर्वथा रहित हो जाता है, कारण कि पदार्थों में इष्ट की कल्पना इन्द्रियों के अनुकूल पदार्थों में ही होती है, प्रतिकूल पदार्थों में अनिष्ट की कल्पना। पर जब संयम की बागडोर इसे प्राप्त हो जाती है तब क्या तो अनु-कूल क्या प्रतिकूल सब एक हो जाते हैं—एक जैसे ही मालूम पड़ते हैं।

પરપદાર્થોને લોગવવા તથા અપનાવવાની તરફ જ ઝુકે છે આ સંસ્કારોને સર્વથા પ્રક્ષીણ કરવાની શક્તિ કદાચ કોઈ જગ્યાએ હોય તો તે ફક્ત સંયમમા જ છે આ સંયમનુ આરાધન નવકોટિથી હોવુ નોઈએ, ઉપર ઉપરના દેખાવ પુરતું ન હોવુ નોઈએ

“અહો વિહારાએ” આ પદમા જે “અહો” એ શબ્દ છે તે આશ્ચર્ય-વાચક છે, પૂર્વોક્ત પ્રકારથી એક તો આ પદની સાર્થકતા પ્રગટ કરી છે બીજી આ પ્રકારથી પણ આ પદની સાર્થકતા ટીકાકાર પ્રગટ કરીને કહે છે કે—એ પણ એક આશ્ચર્યની વાત છે કે જ્યારે આ આત્મા સાંસારિક વાસનાઓથી વાસિત હતો તે વખતે કોઈને પોતાને મિત્ર, કોઈને પોતાનો શત્રુ માનીને રાત દિવસ ગગ અને દ્વેષથી પુરેપુરે પગથી માથા સુધી ફસાએલો હતો, અર્થાત્ જકડાએલો હતો. ઇષ્ટ અનિષ્ટ પદાર્થોની કલ્પનાથી રાતદિવસ આર્ત રૌદ્ર ધ્યાન કરવામા મસ્ત રહેતો હતો પરંતુ જ્યારે સંયમની લગામ તેના હાથમા આવે છે ત્યાં તે એવા પ્રકારની કલ્પનાથી સર્વથા રહિત થાય છે કારણ કે પદાર્થોમા ઇષ્ટની કલ્પના ઇન્દ્રિ-યોના અનુકૂળ પદાર્થોમાં જ થાય છે પ્રતિકૂળ પદાર્થોમા અનિષ્ટની કલ્પના પરંતુ જે સંયમની ઢાંચી તેને પ્રાપ્ત થાય છે ત્યારે અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ બધું એક

તૃણવન્મન્યમાનો મુહુર્મમતિ । ઉપાર્જિતાર્થરક્ષણાય રાત્રાવપિ ચૌરાદિભયાન્ન નિદ્રા-
મનુભવતિ । મમ્મણશ્રેષ્ઠિવદુઃસ્વી ભવતિ । તથા ચોક્તમ્—

‘ ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિતપ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥ ૧ ॥

કો કમાને કે હી રખાલ સે ઘૂમતા હૈ તથા ઉપાર્જિત દ્રવ્ય કે રક્ષણ કે
લિયે રાત્રિમેં भी चौरादिक के भय से यथेच्छ निद्रा नहीं लेता । मम्मण
सेठ की तरह दुःख का ही अनुभव करता है । कहा भी है:—

“ उत्त्वनति स्वनति निदधाति, रात्रौ न स्वपिति दिवापि च सशङ्कः ।

लिम्पति स्थगयति सततं, लाङ्छितप्रतिलाङ्छितं करोति ॥ १ ॥

भुङ्क्ष्व न तावन्निर्व्यापारो जिमितुं नापि चाद्य मङ्क्ष्यामि ।

नापि च वत्स्यामि गृहे, कर्तव्यमिदं बह्वच ॥ २ ॥

जनयन्त्यर्जने दुःखं, तापयन्ति विपत्तिषु ।

मोहयन्ति च संपत्तौ, कथमर्थाः सुखावहाः ” ॥ ૩ ॥

અર્થ:—ધનલોભી પુરુષ જમીન મેં ગડે હુએ અપને ધનકો કમી
બાહર નિકાલતા હૈ કમી ફિર જમીન મેં ગાડતા હૈ કમી પેટી આદિ મેં
રખતા હૈ । વહ ચોર આદિ કે ભય સે રાતકો સોતા નહીં ઓર દિન મેં
भी शंका करता रहता है कि ‘ मेरे धन को कोई चुरा न ले जाय । ’ वह
धन को डाट कर ऊपर से लीपता है, तथा उस लीपे हुए पर उस धन को

द्रव्य કમાવાના ખ્યાલથી રખડતો ફરે છે, તથા કમાયેલા દ્રવ્યનું રક્ષણ કરવા રાત્રિના
સમયમાં ચૌરાદિકના ભયથી સુખથી નિદ્રા પણ લેતો નથી. મમ્મણ શેઠ માફક
હુઃખનો જ અનુભવ કરે છે. કહ્યું છે કે:—

“ ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિત-પ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥ ૧ ॥

ભુઙ્ક્ષ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો જિમિતું નાપિ ચાદ્ય મઙ્ક્ષ્યામિ ।

નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં બહ્વચ ॥ ૨ ॥

જનયન્ત્યર્જને દુઃખં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।

મોહયન્તિ ચ સમ્પત્તૌ, કથમર્થાઃ સુખાવહાઃ ” ॥ ૩ ॥

અર્થ:—ધનલોભી પુરુષ જમીનમાં દાટેલું પોતાનું ધન કોઈ વખત બહાર
કાઢે છે, કોઈ વખત જમીનમાં દાટે છે, ક્યારેક પેટી આદિમાં રાખે છે, વળી
રાત્રે ચોર આદિના ભયથી સુતો નથી અને દિવસે પણ શંકા કરે છે કે—“ માફક
ધન કોઈ ચોરી ન બાય ” વળી ધનને દાટીને ઉપરથી લીંપે છે, તથા તે લીંપેલી

આશ્ચર્યકારિત્વશ્ચાત્ર ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ કનકકામિન્યાદિસકલવસ્તુપરિત્યાગિત્વેન ।
યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મિત્રભાવેન । અથવાઽન્તર્મુહૂર્તાન્તર્ગતાઽષ્ટસમયમાત્રસંસ્પૃષ્ટસ્વેઽ-
પ્યનન્તર્કર્મનિર્જરકત્વેન બોધ્યમ્ ।

લગામ હી તો ઘોડે કો બેઠને વાલે કે અધીનસ્થ કરતી હૈ, ઇન્દ્રિયારૂપી ઘોડે ખી હસી સંયમ કી બાગડોર-લગામ સે આત્મા કે અધીન બન જાતે હૈ, તબ “ સમો નિંદાપસંસાસુ તદ્વા માણાવમાણઓ ” અર્થાત્ વહ નિન્દા ઓર પ્રશંસાકો તથા માન ઓર અપમાનકો સમાન સમજતા હૈ । યહ કહને કી હી વાત નહીં હૈ-અનુભવ સિદ્ધ વિષય હૈ । કયા સંયમિયોં કે સમક્ષ પરસ્પર વિરોધી જીવ મૈત્રીભાવ ધારણ કર બેઠે હુએ નહીં સુને હૈ ?, સંયમ વહ અંજન હૈ કિ જિસકે લગતે હી આંતર ચક્ષુઓંકી યહ કલ્પના કિ “ યહ મિત્ર હૈ, યહ શત્રુ હૈ ” બિલકુલ નષ્ટ હો જાતી હૈ । યહ સંયમી જીવ યદ્યપિ બાહ્ય જગત મેં વિચરણ કરતા હૈ તો ખી બાહ્ય જગત મેં વહ જલ મેં કમલ કી તરહ અલિપ્ત હી રહતા હૈ, અતઃ શત્રુ, મિત્ર, ઇષ્ટ, અનિષ્ટ આદિ સમસ્ત કલ્પનાઓં કો મમત્વજન્ય બુદ્ધિ કા વિકાર માનકર વહ ઉનસે ઇકદમ પરે હો જાતા હૈ । હસી અભિપ્રાય કો લેકર ટીકાકાર ને “ યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મૈત્રીભાવેન ” હસ પદ સે હસકા ખુલાસા કિયા હૈ । સમતાભાવ સંયમકા સર્વપ્રથમ ગુણ હૈ । જિસ

જ થઈ જાય છે-એક જ જેવું માલૂમ પડે છે. લગામ જ તો ઘોડાને બેસનારના અધીનમાં કરે છે. ઇન્દ્રિયો રૂપી ઘોડા પણ આ સંયમરૂપ લગામથી આત્માને આધીન થઈ રહે છે. ત્યારે “ સમો નિંદાપસંસાસુ તદ્વા માણાવમાણઓ ” અર્થાત્ તે નિંદા અને પ્રશંસાને તથા માન અને અપમાનને સમાન સમજે છે એ કહેવાની જરૂર રહેતી નથી, કારણ કે આ અનુભવસિદ્ધ વિષય છે. શું સંયમીઓના સમક્ષ પરસ્પર વિરોધી જીવ મૈત્રીભાવ ધારણ કરીને બેઠેલાં નથી સાંભળ્યાં ?, સંયમ તે અંજન છે કે જેનાથી આંતરચક્ષુઓની એ કલ્પના કે “ આ મિત્ર છે, આ શત્રુ છે ” બિલકુલ નષ્ટ થઈ જાય છે. તે સંયમી જીવ હજી સુધી બાહ્ય જગતમાં વિચરણ કરે છે તો પણ તે બાહ્ય જગતમાં તે જલમાં કમલની માફક અલિપ્ત જ રહે છે, માટે શત્રુ, મિત્ર, ઇષ્ટ, અનિષ્ટ, એ બધી કલ્પનાઓ મમત્વજન્ય બુદ્ધિનો વિકાર માનીને તે તેનાથી એકદમ દૂર થઈ જાય છે. આ અભિપ્રાયને લઈને ટીકાકારે “ યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મૈત્રીભાવેન ” એ પદથી તેનો ખુલાસો કરેલ છે. સમતાભાવ સંયમનો સર્વપ્રથમ ગુણ છે, જેમ સૂર્યના ઉદયથી અંધકારનો નાશ

પ્રકાર સૂર્ય કે ઉદિત હોને પર અંધકાર કા અભાવ હો જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર સંયમરૂપી સૂર્ય કે ઉદિત હોતે હી આત્મા સે વિષમતા કી કલ્પના-રૂપ અંધકાર વિલીન હો જાતા હૈ ।

ઇસ પ્રકાર સે મી ‘અહો વિહારાણ્ણ’ ઇસ સૂત્રમેં ‘અહો’ પદ કી સાર્થકતા ટીકાકાર પ્રકટ કરતે હૈ—“અન્તર્મુહૂર્તાન્તર્ગતાષ્ટસમયમાત્ર-સંસ્પૃષ્ટત્વેઽપિ અનન્તકર્મનિર્જરકત્વેન” ૪૮ મિનટ કે સમયકો એક મુહૂર્ત કહતે હૈ, ઇસ મુહૂર્ત કે ખીતર કે સમયકો અન્તર્મુહૂર્ત કહતે હૈ । યહ અસંખ્યાત સમયોં કા એક કાલ હૈ । સમય, વ્યવહારકાલ કા સબ સે સૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ હિસ્સા હૈ । કાલ દો પ્રકાર કા હૈ ૧-નિશ્ચયકાલ, ૨-વ્યવહારકાલ । સમય, ઘડી, ઘંટા, પલ, મુહૂર્ત, વર્ષ આદિ સબ વ્યવહાર કાલ હૈ । વર્તના જિસકા લક્ષણ હૈ વહ નિશ્ચયકાલ હૈ, ક્યોં કિ શાસ્ત્રમેં ‘વટ્ટણાલક્ષણો કાલો’ કહા હૈ ।

સદ્ભાવોં સે યદિ અષ્ટસમયમાત્ર મી સંયમ કા આરાધન કર લિયા જાવે તો વહ અનન્ત કર્મોં કી નિર્જરા કા કારણ માના ગયા હૈ । હમ દેખતે હૈ—અગ્નિ કી થોડી સી મી ચિનગારી જબ રૂડે કે પુંજપર પડ જાતી હૈ તો વહ ઉસે ભસ્મ કર દેતી હૈ । ઇસી પ્રકાર અષ્ટસમયમાત્ર

થાય છે તે પ્રકારે સંયમરૂપી સૂર્યના ઉદયથી આત્માથી વિષમતાની કલ્પનારૂપ અંધકારનો નાશ થાય છે.

આ પ્રકારથી પણ “અહો વિહારાણ્ણ” આ સૂત્રમાં ‘અહો’ પદની સાર્થ-કતા ટીકાકાર પ્રકટ કરે છે—“અન્તર્મુહૂર્તાન્તર્ગતાષ્ટસમયમાત્રસંસ્પૃષ્ટત્વેઽપિ અનન્તકર્મનિર્જરકત્વેન” ૪૮ મીનીટના સમયને એક મુહૂર્ત કહે છે. આ મુહૂર્તના ખીતરના સમયને અન્તર્મુહૂર્ત કહે છે. તે અસંખ્યાત સમયોનો એક કાળ છે, સમય, વ્યવહાર કાળનો બધાથી સૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ હિસ્સો છે. કાલ બે પ્રકારનો છે. ૧ નિશ્ચયકાલ, ૨ વ્યવહારકાલ, સમય, ઘડી, ઘંટા, પલ, મુહૂર્ત, વર્ષ આદિ બધો વ્યવહારકાલ છે, વર્તવું જેનું લક્ષણ છે તે નિશ્ચયકાળ છે, કારણ કે શાસ્ત્રમાં ‘વટ્ટણાલક્ષણો કાલો’ કહેલ છે

સદ્ભાવોથી કદાચ અષ્ટ સમય માત્ર પણ સંયમનું આરાધન કરી લેવામાં આવે તો તે અનન્ત કર્મોની નિર્જરાનું કારણ માનેલ છે. અમે દેખીએ છીએ અગ્નિની થોડી પણ ચિનગારી ન્યારે રૂના ઢગલા ઉપર પડી જાય છે તે બધું રૂ બાળી નાખે છે, તે પ્રકારે અષ્ટ સમય માત્ર પણ સંયમનું સેવન જીવોના અનન્ત કર્મોના નિર્જરાનું કારણ બને છે તેમાં કંઈ અચરજની વાત છે ?

किं कृत्वा संयमानुपालनतत्परो भवेदित्याह—‘ अन्तरं च खलु इमं सम्प्रेक्ष्य’ इमं=तपःसंयमकरणरूपम् अन्तरम्=अवसरम्, च=समुच्चये, खलु=निश्चयेन सम्प्रेक्ष्य =सम्यग्दृष्ट्वा अनन्तकालदुर्लभमानुपजन्मार्यक्षेत्रशोभनकुलोत्पत्तिबोधिलाभसर्वविरति-प्राप्तिरूपावसरोऽनादौ संसारे जीवेन लब्ध इत्यनुभूय “ धीरो मुहूर्तमपि नो प्रमादयेत् ” धीरः=परीपहोपसर्गसहने दृढः संयमी नो प्रमादयेत्=प्रमादं न कुर्यात् ।

भी संયમ કા સેવન જીવોં કે અનન્તકર્મોં કી નિર્જરા કા કારણ હો તો ઇસ મેં કૌનસી અચરજ કી વાત હૈ ? ।

અજ્ઞાની જીવ કરોડો ભવોં સે બી જિતને કર્મોં કી નિર્જરા નહીં કર સકતા હૈ ઉતને કર્મોં કી નિર્જરા ત્રીન ગુણિ કે ધારક-સંયમી મહાત્મા ઉચ્છ્વાસ માત્ર મેં કર દેતા હૈ, યહ સવ મહિમા સંયમ કી હી હૈ ઇસી લિયે સંયમ ભાવ અચરજકારી હૈ । ઇસલિયે મનુષ્ય-જન્મ કો સફલ બનાવે કે લિયે યહ આવશ્યક કર્તવ્ય હૈ કિ સંયમ કા આરાધન કિયા જાવે । યહ દૃઢ વિશ્વાસ રાખના ચાહિયે કિ-સંયમપ્રાપ્તિ કી યોગ્યતા મનુષ્યજન્મ મેં હી હૈ, ઇસમેં બી યદિ અનાર્ય ક્ષેત્ર મેં જન્મ હુવા વહાં અનાર્યોં કી સંગતિ મિલી તો જિસ પ્રકાર કઢવી તુંબડી કે સંગ સે દૂધ કી હાલત હોતી હૈ ટીક યહી હાલત ઇસ આત્મા કી બી હો જાતી હૈ । રાતદિન દુર્વિચારોં કા ઉનકી સંગતિ મેં પડને સે તાંતા લગા રહતા હૈ, ધર્મ કર્મકા ઉસ અવસ્થા મેં ભાન નહીં રહતા-વેહોશી કા નશા હી સવાર રહતા હૈ, મેરા શુભ કર્તવ્ય ક્યા હૈ ? હેય ક્યા હૈ ? ઉપાદેય ક્યા હૈ ? ભક્ષ્ય ક્યા હૈ ? અભક્ષ્ય ક્યા હૈ ? ઇત્યાદિ સમસ્ત વાનોં કા વિચાર ઉસસે દૂર રહતા હૈ ।

અજ્ઞાની જીવ કરોડો ભવોથી પણ જેટલા કર્મોની નિર્જરા નથી કરી શકતા તેટલા કર્મોની નિર્જરા ત્રણ ગુણિના ધારક સંયમી મહાત્મા ઉચ્છ્વાસમાત્રમાં કરી લે છે, આ બધો મહિમા સંયમનો જ છે. માટે સંયમભાવ અચરજકારી છે, માટે મનુષ્યજન્મને મક્કળ બનાવવા માટે એ આવશ્યક કર્તવ્ય છે કે સંયમનું આરાધન કરવામાં આવે. એ દૃઢ વિશ્વાસ રાખવો જોઈએ કે-સંયમપ્રાપ્તિની યોગ્યતા મનુષ્યજન્મમાં જ છે તેમાં પણ કદાચ અનાર્ય ક્ષેત્રમાં જન્મ થયો ત્યાં અનાર્યોની સંગતિ મળી તો જે પ્રકારે કઢવી તુંબડીના સંગથી દૂધની હાલત થાય છે ટીક તે જ હાલત આ આત્માની પણ થાય છે, રાતદિવસ દુર્વિચારોનું તેની સંગતિમાં પડવાથી તાંતા લાગ્યો રહે છે, ધર્મકર્મનું આ અવસ્થામાં ભાન નહિ રહેતું હોવાથી બેહોશીનો નશો રહ્યા કરે છે. માટે શુભ કર્તવ્ય શું છે ? હેય શું છે ? ઉપાદેય શું છે ? ભક્ષ્ય શું છે ? અભક્ષ્ય શું છે ? ઇત્યાદિ સમસ્ત

જવ્હ ઇસ પ્રકાર કી પરિસ્થિતિ અનાયૌં કૈ સંગ સૈ ઉપસ્થિત હોતી હૈ તવ્હ વહાં પર સંયમ જૈસી શુદ્ધ પ્રવૃત્તિ કી પ્રાપ્તિ કૈસૈ હો સકતી હૈ ? કિન્તુ નહીં । યદિ આર્યક્ષેત્ર મૈં જન્મ હુવા તો ખી દુષ્કુલ મૈં જન્મ મિલા તો વહાં ઉસકી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી; કારણ કિ વહાં પર ઇતની યોગ્યતા હી નહીં કિ જિસસૈ સંયમભાવકો ધારણ કરને કી ભાવના જાગૃત હો, હિંસા, ઝૂઠ, ચોરી, કુશીલ ઓર પરિગ્રહ જૈસૈ પાંચ આસ્રવૌં કા હી વિશેષતર વહાં સંગ્રહ હોતા રહતા હૈ જિસસૈ ઉસ મનુષ્યજન્મ કા પાના ન પાને કૈ હી તુલ્ય હો જાતા હૈ । મનુષ્ય પર્યાય ખી મિલી, આર્યક્ષેત્ર મિલા ઓર ઉત્તમ કુલમૈં જન્મ મિલા, પરન્તુ જો મૂલ મૈં હી કમી હુઈ તો ઉસ જન્મ સૈ ખી ક્યા લાભ હો સકતા હૈ ? અતઃ વહ જન્મ તખી સફલ હો સકતા હૈ જો બોધિ કી પ્રાપ્તિ હો । યદિ બોધિ કી પ્રાપ્તિ હી ન હુઈ તો સર્વવિરતિ કહાં સૈ હોગી । સર્વવિરતિ-સાધુકા ચારિત્ર હી શ્રેય કી પ્રાપ્તિકા પ્રધાન કારણ કહા ગયા હૈ ઇસલિયૈ ઇન તમામ વાતૌં કી પ્રાપ્તિ કી ઉત્તરોત્તર દુર્લભતા જાનકર ધીર પુરુષ કો ચાહિયૈ કિ વહ અપને જન્મ કો સફલ કરને કૈ લિયૈ સંયમારાધન કૈ પ્રતિ મુદ્ધર્ત માત્ર ખી પ્રમાદ નહીં કરૈ । ઇસી વાત કા ટીકાકારને-“ અનન્તકાલદુર્લભમાનુ-

વાતોનો વિચાર તેનાથી દૂર રહે છે જ્યારે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિ રહે છે ત્યારે આ ઠેકાણે સંયમ જેવી શુદ્ધ પ્રવૃત્તિની પ્રાપ્તિ કેવી રીતે થઈ શકે ? બટકે નહિ જ. કદાચ આર્ય ક્ષેત્રમાં જન્મ થયો તો પણ દુષ્કુલમાં જન્મ થયો તો ત્યાં પણ તેની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી, કારણ કે તે જગ્યાએ એટલી યોગ્યતા જ નથી કે જેનાથી સંયમભાવને ધારણ કરવાની ભાવના બહુત થાય હિંસા, બુઝ, ચોરી, કુશીલ અને પરિગ્રહ જેવા પાંચ આશ્રવોનું જ વિશેષતર ત્યા સંગ્રહ થયા કરે છે તેથી તે મનુષ્યજન્મ મળ્યો ના મળ્યા બરાબર જ થઈ જાય છે મનુષ્યપર્યાય પણ મળી આર્યક્ષેત્ર મળ્યુ. ઉત્તમ કુળમાં જન્મ પણ મળ્યુ પરંતુ મૂળમાં જ કમીના બની તો તે જન્મથી જ કયો લાભ મળી શકે ? માટે તે જન્મ ત્યારે સફળ બની શકે છે જ્યારે તેનાથી બોધિની પ્રાપ્તિ થાય કદાચ બોધિની પ્રાપ્તિ જ ન થઈ તો સર્વવિરતિ ક્યાથી થશે સર્વવિરતિ-સાધુનુ ચારિત્ર જ શ્રેયની પ્રાપ્તિનુ પ્રધાન કારણ કહેવામાં આવ્યુ છે, માટે આ તમામ વાતોની પ્રાપ્તિની ઉત્તરોત્તર દુર્લભતા બણીને ધીર પુરુષને જોઈએ કે પોતાના જન્મને સફળ કરવા સંયમારાધન પ્રતિ મુદ્ધર્ત માત્ર પણ પ્રમાદ ન કરે. આ વાતનો ટીકાકારે-

ષજન્મા-ऽऽર્યક્ષેત્ર-શોભનકુલોત્પત્તિ-બોધિલાભ-સર્વવિરતિપ્રાપ્તિરૂપા-વસરોઽનાદૌ સંસારે જીવેન લબ્ધઃ, इत्यनुभूय धीरो मुहूर्तमपि नो प्रमादयेत्” इन पङ्क्तियोंसे खुलाशा किया है । अर्थात् दुर्लभ मनुष्य-जन्म, आर्यक्षेत्र, उच्चकुल में जन्म, बोधिका लाभ, सर्वविरतिरूप चारित्र की प्राप्तिरूप अवसर जीवने अनन्तकालसे प्राप्त किया है, ऐसा विचार कर धीर वीर संयमीजन मुहूर्त मात्र भी संयमाराधन करने में प्रमाद-शील न बनें । मनुष्यजन्म का पाना बहुत ही दुर्लभ है । इसकी दुर्लभता शास्त्रकारोंने दश १० दृष्टान्तों से शास्त्रमें प्रकट की है । प्रथम तो मनुष्यजन्म की प्राप्ति होना दुर्लभ है, उसमें भी आर्यक्षेत्र में जन्म मिलना यह और भी महादुर्लभ है, आर्यक्षेत्र में भी उच्चकुल में जन्म पाना यह और भी दुर्लभ है, इस में भी बोधिका लाभ होना और कठिनतर है, इसमें भी सर्वविरतिरूप चारित्र का आराधन करना और भी दुर्लभतम है, अतः इस अनादि संसार में यदि इस पूर्ण साधनसामग्रीकी प्राप्ति तेरे हाथ आई है तो हे प्राणी ! तू संयमभाव से एक मुहूर्त भी प्रमादी मत बन, धीर वीर होकर इसका-कितने ही उपसर्ग आवें कितने ही चाहे परीषहों का ढेर तेरे मार्ग में आडा पड़ा हो तो भी आराधन

“अनन्तकालदुर्लभमानुषजन्माऽऽर्यक्षेत्रशोभनकुलोत्पत्तिबोधिलाभसर्वविरतिप्राप्ति-रूपावसरोऽनादौ संसारे जीवने लब्धः, इत्यनुभूय धीरो मुहूर्तमपि नो प्रमादयेत्” આ પંક્તિઓથી ખુલાસો કરેલ છે, અર્થાત્ દુર્લભ મનુષ્યજન્મ, આર્યક્ષેત્ર, ઉચ્ચકુળમાં જન્મ, બોધિનો લાભ, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિરૂપ અવસર જીવે અનંતકાળથી પ્રાપ્ત કરેલ છે. એવો વિચાર કરી ધીર વીર સંયમી જન મુહૂર્ત માત્ર પણ સંયમારાધન કરવામાં પ્રમાદશીલ ન બને. મનુષ્યજન્મનું મળવું ઘણું જ દુર્લભ છે, તેની દુર્લભતા શાસ્ત્રકારોએ ૧૦ દૃષ્ટાન્તોથી શાસ્ત્રમાં પ્રગટ કરી છે. પ્રથમ તો મનુષ્યજન્મની પ્રાપ્તિ થવી દુર્લભ છે, તેમાં પણ આર્યક્ષેત્રમાં જન્મ મળવો એ મહાદુર્લભ છે, આર્યક્ષેત્રમાં પણ ઉચ્ચ કુળમાં જન્મ થવો એ પણ દુર્લભ છે, તેમાં પણ બોધિનો લાભ થવો ઘણું જ કઠિનતર છે. તેમાં પણ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રનું આરાધન કરવું તે દુર્લભતમ છે. માટે આ અનાદિ સંસારમાં કદાચ આ પૂર્ણ સાધન સામગ્રીની પ્રાપ્તિ તારે હાથે આવી છે તો હે પ્રાણી ! તું સંયમભાવથી એક મુહૂર્ત પણ પ્રમાદી બનીશ નહિ. ધીર વીર થઈ તેમાં કેટલાંક ઉપસર્ગ આવે અને ગમે તેટલા પરિષેહોના ઢગલા તારા માર્ગમાં આડા આવે તો પણ સંયમનું આરાધન કર. જેથી પ્રાપ્ત થયેલો આવો અવસર તારા

છદ્મસ્થોપયોગો મુહૂર્તમાત્રમવતિષ્ઠતે, તેનાત્ર મુહૂર્તમિતિ કથિતમ્; શાસ્ત્રસમ્મતં તુ સમયમાત્રમપીત્યર્થઃ “ સમયં ગોયમ મા પમાયણ ” ઇતિ વચનાત્ ।

પૂર્વપુણ્યોદયેન માનવજન્મ લબ્ધવાન્, તત્રાપિ સંસારાસારતાસમાલોચનેન ચિરતો ભૂત્વા ક્ષણમપિ પ્રમાદી ન ભવેદિત્યત્ર હેતુમુપદર્શયતિ—“ અત્યેતિ વયો યૌવન વા ” ઇતિ, વયઃ=ઋમાસયૌવનાદિ અત્યેતિ=અતિગચ્છતિ વ્યતીતં ભવતીત્યર્થઃ, યૌવનં વા વ્યતિગચ્છતિ, વયોમધ્યેઽપિ યૌવનસ્ય સત્ત્વાત્પુનરુપાદાનં તસ્યૈવ પ્રાધાન્યં નાન્યસ્યેતિ જ્ઞાપનાય, ધર્માર્થકામાદિસાધનાનાં તદધીનત્વાત્, મેઘચ્છાયાસન્ધ્યારાગવદ્ યૌવનં સ્પર્ણકાલસ્થાયીતિ મત્ત્વા યથા વ્યર્થં તન્ન વ્યતીયાત્તથા સંયમિના ચાપ્રમાદિના કાર્યમિતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૪ ॥

કર, તાકિ પ્રાપ્ત હુઆ યહ અવસર તેરે હાથ સે ન નિકલને પાવે । પરી-પહ ઔર ઉપસર્ગ કે આને પર ભી જો સંયમ પથસે વિચલિત ન હો ઉસકા હી નામ ધીર હૈ । સચા ધીર વીર વહી હૈ—જો હસ પવિત્ર સંયમ કા આરાધન કર અપને જન્મકો સફલ બનાતા હૈ ।

યહાં પર જો ‘એક મુહૂર્ત ભી પ્રમાદ ન કરે’ એસા કહા હૈ વહ છદ્મસ્થ જીવોં કે ઉપયોગ કી અપેક્ષા કથન સમજના ચાહિયે, ક્યોં કિ છદ્મસ્થોં કા ઉપયોગ એક મુહૂર્ત તક હી સ્થિર રહતા હૈ—ફિર ઉપયોગાન્તર હો જાતા હૈ ।

શાસ્ત્રીય સિદ્ધાન્ત તો હસ વાત કા પ્રતિપાદન કરતા હૈ કિ એક સમય ભી પ્રમાદ મત કરો—“ સમયં ગોયમ ! મા પમાયણ ”—હે ગૌતમ એક સમય ભી પ્રમાદી મત વન ।

હસલિયે સૂત્રકાર હસ વાત કા વિચાર કર સંબોધન કરતે હુએ કહતે હૈં કિ—હે પ્રાણિ ! કિસી વિશિષ્ટ પૂર્વપુણ્યોદય સે હી તુજે હસ દુર્લભતમ

હાથથી આદ્યો ન જાય. પરીપહ અને ઉપસર્ગ આવવા છતાં જે સંયમમાર્ગથી વિચલિત ન થાય તેનું નામ જ ધીર છે. સાચો ધીર વીર તે છે જે આ પવિત્ર સંયમનું આરાધન કરી પોતાના જન્મને સફળ બનાવે છે.

આ ઠેકાણે જે ‘એક મુહૂર્ત પણ પ્રમાદ ન કરે.’ એવું કહ્યું છે તે છદ્મસ્થ જીવોના ઉપયોગની અપેક્ષા કથન સમજવું જોઈએ. કારણ કે છદ્મસ્થોનો ઉપયોગ એક મુહૂર્ત સુધી જ સ્થિર રહે છે પછી ઉપયોગાન્તર થઈ જાય છે. શાસ્ત્રીય સિદ્ધાન્ત તો આ વાતનું પ્રતિપાદન કરે છે કે એક સમય પણ પ્રમાદ ન કરે “ સમયં ગોયમ ! મા પમાયણ ” હે ગૌતમ ! એક સમય પણ પ્રમાદી ન બન.

આના માટે સૂત્રકાર આ વાતનો વિચાર કરી સંબોધન કરી કહે છે કે—હે પ્રાણી ! કેઈ વિશિષ્ટ પૂર્વપુણ્યોદયથી જ તને આ દુર્લભતમ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ થઈ

મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ હુઈ છે તો ઉસે સફલ બનાવે છે તે સંસારની અસારતાના વિચાર કર, તાકિ તેરો મન સાંસારિક પદાર્થોમાં લુબ્ધ ન બને । સંસારની અસારતાના વિચાર હી તો સાંસારિક પદાર્થોમાં તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત કરતા છે । જિન પદાર્થોએ લિયે યહ રાત્રિ દિન એક કર ડાલતા છે, ઉન પદાર્થોના જબ સ્વરૂપ વિચાર કરતા છે તો નિયમતઃ ઉસકે ચિત્તમાં ઉનસે વિરક્તિભાવ જાગૃત હોતા છે, દૃષ્ટિકા ભેદ હી તો વિરક્તિભાવ છે । જિન પદાર્થોએ પરિણમનમાં યહ અપના પરિણમન માનતા થા, તથા પ્રાપ્તિ ન હોવે પર આકુલિત હો ઉઠતા થા, ઉન્હી પદાર્થોમાં અસારતા યા તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત હોવે પર ઉનસે ઉસકી દૃષ્ટિ બદલ જાતી છે ઓર ‘ભોગોંએ નિમિત્તસે આત્મામાં કર્મના બન્ધ હોતા છે’ એસા સમજ કર ઉનસે ઉદાસીન વૃત્તિ ધારણ કર લેતા છે, તબ જિસ પ્રકાર એક ઘાસ એ તિનચેમાં સાધારણ મનુષ્યકો ભી ન રાગ હોતા છે ઓર ન દ્વેષ હોતા છે, ઠીક ઉસી પ્રકારની પ્રવૃત્તિ, પરપદાર્થોમાં દૃષ્ટિભેદ હોવેસે ઉસકી હો જાતી છે, તબ યહ પ્રત્યેક પદાર્થએ પરિણમનમાં જ્ઞાતા-દ્રષ્ટા-સ્વરૂપ હી રહતા છે, આકુલિત યા મોહી નહીં બનતા । યહી પરિસ્થિતિ ઉસે સંયમભાવમાં દૃઢ રૂપસે સ્થિર રાખતી છે અતઃ યહ એક ક્ષણ ભી પ્રમાદી નહીં બનતા, ઉસી વાતના છુલાશા-“અત્યેતિ વયો યૌવનં ચ” ઉસ વાક્યસે સૂત્ર-

છે તો તેને સફળ બનાવવા માટે તું સંસારની અસારતાનો વિચાર કર, જેથી તારું મન સાંસારિક પદાર્થોમાં લુબ્ધ ન બને. સંસારની અસારતાનો વિચાર જ તો સાંસારિક પદાર્થોમાં તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત કરે છે, જે પદાર્થો માટે તે રાત્રિ દિવસ એક કરી નાખે છે, ત્યારે તે પદાર્થોનું સ્વરૂપ વિચાર કરે છે તો નિયમતઃ તેના ચિત્તમાં તેનાથી વિરક્તિભાવ જાગૃત થાય છે. દૃષ્ટિનો ભેદ તે જ વિરક્તિભાવ છે. જે પદાર્થોના પરિણમનમાં તે પોતાનું પરિણમન માનતો હતો તથા પ્રાપ્તિ ન થવાથી આકુલિત બનતો હતો, તે પદાર્થોમાં અસારતા અગર તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત થવાથી તેનાથી તેની દૃષ્ટિ બદલી જાય છે, અને “ભોગોના નિમિત્તથી આત્મામાં કર્મનો બંધ થાય છે” એવું સમજીને તેનાથી ઉદાસીનવૃત્તિ ધારણ કરી લે છે, ત્યારે જે પ્રકારે એક ઘાસના તણબલા માટે સાધારણ મનુષ્યને પણ રાગ થતો નથી તેમ દ્વેષ થતો નથી, ઠીક તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ, પર પદાર્થોમાં દૃષ્ટિભેદ થવાથી તેની થઈ જાય છે. ત્યારે તે પ્રત્યેક પદાર્થના પરિણમનમાં જ્ઞાતા-દ્રષ્ટા-સ્વરૂપ જ રહે છે, આકુલિત અગર મોહી બનતો નથી. આ પરિસ્થિતિ આ સંયમભાવમાં દૃઢ રૂપથી સ્થિર રાખે છે, માટે તે એક ક્ષણ પણ પ્રમાદી બનતો નથી. આ વાતનો

કારને કિયા હૈ । પ્રમાદી નહીં બનને મેં યહ હેતુરૂપસે કથન કિયા હૈ । કૌમાર યૌવનાદિ અવસ્થાઓં કા નામ વય હૈ, સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-
 દેખો હે ભવ્ય જીવ ! પરપદાર્થોં મેં રાગી દ્રેષી યા મોહી હોતેર કૌમાર
 યૌવનાદિ કર્દ પૂર્વ ભવોં કી અવસ્થાઈ વ્યતીત હો ચુકી હૈં, પરન્તુ તૂને
 અપના કુછ ભી સુધાર નહીં કિયા, અતઃ યહ વર્તમાન સમય જો તુજે મિલા
 હૈ હસે સફલ કરને કી કોશિશ કર, હસ ભવકી ભી યે બાલયૌવનાદિ
 અવસ્થાઈ વ્યતીત હો જાનેવાલી હૈં-સ્થિર રહનેવાલી નહીં હૈં, હસ લિષ અબ
 તો હનસે અપના કુછ કલ્યાણ કરલે । માના કિ-બાલ અવસ્થા મેં અલ્પ-
 જ્ઞાન હોને સે આત્મા કલ્યાણમાર્ગ કે પથ પર અગ્રસર ન હો સકે તો ભી
 યૌવન અવસ્થા મેં તો હો સકતા હૈ, પરન્તુ તૂ તો હસે ભી વ્યર્થ સ્વો બૈઠતા
 હૈ, ક્યોં કિ સબ અવસ્થાઓં મેં યૌવન અવસ્થા કી હી મુખ્યતા હૈ, હસ
 અવસ્થા મેં હી યહ પ્રાણી સબ કુછ કરતા રહતા હૈ, ધર્મ, અર્થ ઓર કામાદિ
 સાધન સબ હસી અવસ્થા મેં પ્રાપ્ત કિયે જાતે હૈં, હસી સ્વાલ સે ‘વય’
 હસ મેં હસકા સમાવેશ હોનેપર ભી “યૌવન” હસ પદ કા પૃથક્
 રૂપસે ગ્રહણ કિયા હૈ, અતઃ વહ યૌવન અવસ્થા વ્યર્થ વ્યતીત ન હો હસ
 પ્રકાર સે સંયમી પુરુષ કો વહ અવસ્થા અપ્રમાદદશાસમન્વિત હોકર

ખુલાસો—“ અત્યેતિ વયો યૌવનં ચ ” આ વાક્યથી સૂત્રકારે કહેલ છે. પ્રમાદી
 નહિ બનવામા આ હેતુરૂપથી કથન કરેલ છે કૌમાર યૌવનાદિ અવસ્થાઓનાં
 નામ વય છે. સૂત્રકાર કહે છે કે-દેખો હે ભવ્ય જીવ ! પરપદાર્થોમા રાગી દ્રેષી
 અગર મોહી થતાં કૌમાર-યૌવનાદિ અનેક પૂર્વભવોની અવસ્થાઓ વ્યતીત થયેલ
 છે. પરંતુ તે પોતાનો કાંઈ પણ સુધાર કર્યો નહિ, માટે આ વર્તમાન સમય જે
 તને મળેલ છે તેને સફળ કરવાની કોશિશ કર આ ભવની પણ એ બાલ યૌવનાદિ
 અવસ્થાઓ વ્યતીત થઈ જવાની છે-સ્થિર રહેવાવાળી નથી, માટે હવે તો તેનાથી
 પોતાનું કલ્યાણ કરી લ્યો. માનીલ્યો કે-બાલ અવસ્થામાં અલ્પજ્ઞાન હોવાથી આત્મા
 કલ્યાણ માર્ગમાં અગ્રસર ન બની શકે તો પણ યૌવન અવસ્થામાં તો બની
 શકે છે, પરંતુ તુ તો તેને પણ વ્યર્થ જોઈ જોસે છે, કારણ કે બધી અવસ્થા
 ઓમાં યૌવન અવસ્થાની જ મુખ્યતા છે. આ અવસ્થામા જ પ્રાણી કાંઈકે પણ
 કરી શકે છે. ધર્મ, અર્થ અને કામાદિ સાધન બધું આ અવસ્થામા પ્રાપ્ત થાય
 છે, એ બ્યાલથી ‘વય’ તેમાં તેનો સમાવેશ હોવા છતાં પણ “યૌવન” આ
 પદનું પૃથક્ રૂપથી ગ્રહણ કરેલ છે માટે તે યૌવન અવસ્થા વ્યર્થ વ્યતીત
 ન થાય એ પ્રકારથી સંયમી પુરુષે તે અવસ્થા અપ્રમાદદશાસમન્વિત બની

‘સંયમાનુપાલનં શ્રેયઃ’ इति यो न जानाति पुत्रकलत्रासक्तः संसारासारसरणि-
मनुवर्तमानोऽनाराधितकल्याणमार्गोऽसंयमजीविताभिनिवेशवान् प्राणी बहुशः सच्चो-
पघातकारिणीं क्रियां करोतीति दर्शयति—“ जीविण ”—इत्यादि ॥

મૂલમ્—જીવિણ્ણ ઇહ જે પમત્તા સે હંતા છેત્તા મેત્તા લુંપિતા
વિલુંપિતા ઉદ્ધવિતા ઉત્તાસદ્ધતા અકડં કરિસ્સામિત્તિ મણ્ણમાણે
॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—જીવિત્ત ઇહ યે પ્રમત્તાઃ સ હન્તા છેત્તા મેત્તા લુમ્પયિતા વિલુમ્પયિતા
અપદ્રાવયિતા ઉત્ત્રાસકોઽકૃતં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

સફલ બના લેની યાહિયે, ક્યોંકિ યહ અવસ્થા સદા સ્થાયી નહીં હૈ, સંધ્યા-
રાગ ઓર મેઘછાયાકી તરહ સ્વલ્પકાલ મેં હી દેખતે ૨ નષ્ટ હોજાનેવાલી
હૈ, અતઃ ઇસકી સફલતા કરને મેં હી બુદ્ધિમાની હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જો વ્યક્તિ ઇસ બાત કો નહીં સમજ્ઞતા હૈ કિ—‘સંયમ કા પાલન
કરના હિતાવહ હૈ’ વહ પુત્ર કલત્રાદિ પદાર્થોં મેં આસક્તચિત્ત હોકર ઇસ
અસાર સંસાર મેં હી ભ્રમણ કરના રહતા હૈ, કલ્યાણમાર્ગ કા આરાધન
નહીં કરને કે કારણ અસંયમ જીવન મેં હી વહ અપના સમય વ્યતીત
કરતા હૈ, ઓર સંયમ જીવન ધારણ કરને કી બાત કહે જાને પર વહ
અપને દુરભિનિવેશ કે વશવર્તી હો ઉસ તર્ફ જરા મી ધ્યાન નહીં દેતા,
તથા એસે ૨ કાર્ય કરતા રહતા હૈ કિ જિનકે કરને મેં અનેક ત્રસ જીવોં
કા ઘાત હોતા હૈ ઇસી બાતકો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

સક્ષ્ણ ળનાવી લેવી જોધએ, કારણ કે આ અવસ્થા સદા સ્થાયી નથી, સંધ્યાના
રાગ અને મેઘછાયા ની માફક સ્વલ્પકાળમાં જ દેખતાં—દેખતાં નષ્ટ થવાવાળી
છે, માટે તેની સક્ષ્ણતા કરવામાં જ બુદ્ધિમાની છે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જે વ્યક્તિ, ‘સંયમનું’ પાલન કરવું તે હિતાવહ છે’ તેમ સમજતો નથી તે
પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોમાં આસક્તચિત્ત થઈ આ અસાર સંસારમાં જ ભ્રમણ
કરતો રહે છે, કલ્યાણ માર્ગનું આરાધન નહિ કરવાના કારણે અસંયમ જીવનમાં
તે પોતાનો સમય વ્યતીત કરે છે. અને સંયમ જીવન ધારણ કરવાની વાત કહેવા
ઉપર તે દુરભિનિવેશવશવર્તી હોઈ તેના તરફ જરા પણ ધ્યાન આપતો નથી.
તથા એવું કાર્ય કરતો રહે છે કે જે કરવામાં અનેક ત્રસ જીવોનો ઘાત થાય
છે તે વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—

ટીકા—“ જીવિત ઇહ યે પ્રમત્તાઃ ” ઇતિ, ઇહાસ્મિન્ જીવિતે પ્રત્યહં વયોઽતિ-
ક્રમેઽપ્યસંયમજીવિતે, પ્રમત્તાઃ=વિષયકષાયે પ્રમાદવન્તો ભવન્તીતિ સમ્બન્ધઃ, પ્રમત્તો
હિ ષડ્જીવનિકાયોપમર્દને પ્રવૃત્તોઽનેકાનર્થકરો વિવિધાં વિરુદ્ધાં સાવધાં ક્રિયાં
વિદધાતીત્યાહ—“ સ હન્તા ” ઇતિ સઃ=શબ્દાદિવિષયગૃહ્ણઃ પ્રમાદી હન્તા=પૃથિવ્ય-
પ્તેજોવાયુવનસ્પતિત્રસાનાં પ્રાણિનાં નાશકઃ ‘ છેત્તા ’ વનસ્પતિપ્રમૃતીનાં, કર્ણનાસિ-
કાદીનાં ચ, ‘ મેત્તા ’ પૃથિવ્યાદિનિકાયાનાં, ‘ લુમ્પયિતા ’ ગ્રન્થિભેદનાદિના,
‘ વિલુમ્પયિતા ’ ગ્રામઘાતાદિકર્મણા, ‘ અપદ્રાવયિતા ’ વિષશસ્ત્રાદિપ્રયોગેણ મારકઃ,
‘ ઉત્ત્રાસકઃ ’ લોષ્ટપ્રક્ષેપાદિનોદ્વેજકો લોકાનાં ભવતીતિ સર્વત્ર યોજ્યમ્ ।

‘ જીવિણ ઇહ જે ’ ઇત્યાદિ । ઇસ જીવન મેં જો પ્રમાદી બના હુઆ હૈ
વહ ‘ યહ કાર્ય મેરે પૂર્વજોને નહીં કિયા હૈ, ઇસે મૈં કરૂંગા ’ એસા સમજકર
ત્રસ સ્થાવર જીવોં કા ઘાતક હોતા હૈ, ઉનકા છેદન કરનેવાલા હોતા હૈ,
ઉનકા ભેદન કરનેવાલા હોતા હૈ, ઉનકા લુમ્પન કરનેવાલા હોતા હૈ,
વિલુમ્પન કરનેવાલા હોતા હૈ, અપદ્રાવક હોતા હૈ, ઉત્ત્રાસક હોતા હૈ ।

જીવન ઉનકા હી સફલ હૈ જો ઇસ અલ્પજીવન મેં મી સંયમ દ્વારા
અપના આત્મહિત કર લેતે હૈં । ધન્ય હૈ ઉન મહાત્માઓં કો જો વિપુલ
વિભૂતિ કે ભોક્તા હોકર મી ઉસે જીર્ણ તૃણ કે સમાન છોડ દેતે હૈં,
ઔર આત્મકલ્યાણ કે માર્ગ મેં અગ્રસર હો જાતે હૈં, ચક્રવર્તિયોં યા તીર્થ-
કરોં કે પાસ કિસ વસ્તુકી કમી થી, જિનકા વૈભવ અતુલ્ય થા, છહ
ખંડકી વિભૂતિકે જો ભોક્તા થે, દેવતા તથા ઇન્દ્ર જિનકી સેવા મેં સદા

‘ જીવિણ ઇહ જે ’ ઇત્યાદિ આ જીવનમાં જે પ્રમાદી બનેલ છે તે ‘ આ
કાર્ય મારા પૂર્વજોએ કરેલ નથી એ હું કરીશ ’ એવું સમજીને ત્રસ સ્થાવર
જીવોનો ઘાતક થાય છે, તેનું છેદન કરવાવાળો થાય છે, તેનું ભેદન કરવાવાળો
થાય છે, તેનું લુમ્પન કરવાવાળો થાય છે, વિલુમ્પક થાય છે, અપદ્રાવક થાય છે,
ઉત્ત્રાસક થાય છે.

જીવન તેનું જ સફળ છે જે આ અલ્પ જીવનમાં પણ સંયમદ્વારા પોતાનું
આત્મહિત કરી લે છે. ધન્ય છે તે મહાત્માઓને જે વિપુલ વિભૂતિના ભોક્તા
બનીને પણ તેને જીર્ણતૃણની સમાન છોડી દે છે, અને આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં
અગ્રેગર થાય છે ચક્રવર્તિઓ અગર તીર્થ કરોની પાસે કંઈ વસ્તુની ખોટ હતી,
જેનો વૈભવ અતુલ્ય હતો. છ બહુની વિભૂતિના જે ભોક્તા હતા. દેવતા અને
ઇન્દ્ર જેની સેવામાં સદા ઉપસ્થિત રહેતા હતા. એક ક્ષણ માત્ર પણ જેણે સાંસા-

શુદ્ધસ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો, જિમિતું નાપિ ચાદ્ય મદ્ધક્ષ્યામિ ।

નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં વદ્વદ્ય ॥ ૨ ॥ અપિ ચ-

જનયન્ત્યર્જને દુઃખં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।

મોહયન્તિ ચ સમ્પત્તૌ, કથમર્થાઃ સુખાવહાઃ ? ॥ ૩ ॥

પુનરર્પ્યર્થાલોભિનોઽનુચિતકરણે પ્રવૃત્તિં દર્શયતિ-“આલુમ્પઃ” ઇતિ, આ-સમન્તાલ્લુમ્પતીત્યાલુમ્પો લુણ્ઠાકો હઠાદ્ધનાપહારકઃ, સ ચ લોભમહાશીવિષદષ્ટો વિસ્મૃતકર્તવ્યાકર્તવ્યો ધનમેવાર્જનીય-મિતિ મન્યમાનઃ કદુકકદુકતરવિપાકજનકં

પહિંચાનને કે લિએ પુનઃ પુનઃ સુદ્રા-નિશાન કરતા રહતા હૈ ॥ ૧ ॥ વહ ન પૂરા રાતા હૈ ન અચ્છા રાને કે લિએ પ્રવૃત્ત હોતા હૈ તથા વોલતા હૈ કિ-મેં આજ ન સ્નાન કરૂંગા ઓર ન ઘર પર હી રહ સકૂંગા, ક્યોંકિ આજ મુજે વહુત કામ કરના હૈ ॥ ૨ ॥ યહ ધન ઉપાર્જનકાલ મેં દુઃખ ઉત્પન્ન કરનેવાલા હૈ, ઉસકે નષ્ટ હોને પર વહ પરમદુઃખ કા કારણ હોતા હૈ, વઢ જાને પર વહ મોહકષાય કો બઢાતા હૈ તો ફિર કહો કિ ધન સુખકા કારણ કૈસે હો સકતા હૈ ? અર્થાત્ નહીં હો સકતા । અર્થ અનર્થ કા હી સૂલ હૈ કિન્તુ સુખ કા નહીં ॥ ૩ ॥

અર્થલોભી ઓર મી અયોગ્યકાર્ય મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ઇસે પ્રકટ કરતે હૈ-આલુમ્પઃ-‘આ-સમન્તાત્ લુમ્પતિ-ઇતિ આલુમ્પઃ લુણ્ઠાકઃ હઠાદ્ધનાપહારકઃ’ જો જવર્દસ્તી સે દૂસરોં કા ધન લૂટે-ઉસે આલુમ્પ કહતે હૈ । લૂટ યહ ઇસલિએ સચાતા હૈ કિ યહ લોભરૂપી મહાસર્પ સે ડસા હુઆ રહતા હૈ । અતઃ ઇસે અપને કર્તવ્યાકર્તવ્ય કા કુછ મી માન

જગ્યા ઉપર તે ધનની પિછાણ માટે નિશાની પણ કરે છે ॥ ૧ ॥ તે પુરૂં ખાતો પણ નથી તેમજ સાડું ખાવાને પ્રવૃત્ત થતો નથી. અને બોલે છે કે-હું આને સ્નાન કરવાનો નથી તેમજ ઘેર પણ રહેવાનો નથી, કારણકે આને મારે ઘણુ કામ છે (૨) આ ધન, ઉપાર્જનકાળમાં હું ખ ઉત્પન્ન કરવાવાળુ છે અને તેનો નાશ થવાથી વધારે હું ખનુ કારણ થાય છે. વધી જતાં ઉપર તે મોહકષાયનો વધારો કરે છે તો હવે કહો । ધન સુખનુ કારણ કેવી રીતે થાય ? અર્થાત્ થઈ શકનું નથી અર્થ અનર્થનુ જ મૂળ છે પણ સુખનુ નહિ ॥ ૩ ॥

અર્થલોભી વળી અયોગ્ય કાર્યમાં પણ પ્રવૃત્તિ કરે છે તે પ્રકટ કરે છે - આલુમ્પ ‘આ-સમન્તાત્ લુમ્પતિ-ઇતિ આલુમ્પ-લુણ્ઠાક. હઠાદ્ધનાપહારકઃ’ જગશયથી ખીજાનુ ધન લૂટે-તેને આલુમ્પ કહે છે લુટ તે એવી મચાવે બાલે લોભરૂપી મહાસર્પથી ડસાયેલો હોય, અને તેવે વળતે કર્તવ્યા-

અત્ર મૂલે પૂર્વે 'પ્રમત્તાઃ' ઇતિ बहुवचनप्रसङ्गे हन्तेत्यादौ सर्वत्रैकवचनं तु जात्येकत्वविवक्षया विज्ञेयम् । अनेकानर्थकरक्रियाप्रदर्शनं च संसाराभिष्वङ्गपरः कालाकालसमुत्थायी सततं परहननादिरूपां नानाविधां क्रियां करोतीत्यर्थबोधनायेति तात्पर्यम् ।

उपस्थित रहते थे । एक क्षण मात्र भी जिन्हें सांसारिक कष्ट का अनुभव नहीं होता था, वे भी इस संयम जीवन की प्राप्ति के लिये उसे तृणवत् त्याग कर आत्मकल्याण के मार्ग में अग्रगामी हुए ।

यह जानी हुई बात है कि-सब भरत चक्रवर्ती जैसे नहीं हैं । जहां आरंभ और परिग्रह का निवास है, वहां शान्तिमय जीवन नहीं, निराकुलतामय आत्मपरिणति नहीं, यत्नाचारपूर्वक प्रवृत्ति नहीं, इन्द्रिय-संयम अथवा प्राणिसंयम जैसी सुन्दर वस्तुके वहां पर दर्शन नहीं । रातदिन आधि-व्याधि और उपाधि के भार से दबा हुआ यह प्राणी आत्मिक शांतिके सच्चे निर्मल स्रोत से वञ्चित ही रहा करता है-सिर्फ झूठी कल्पना से ही अपने को सुखी और शांति का उपभोक्ता मानता रहता है । जहां जितना अधिक आरंभ होगा वहां उतना ही अधिक जीवों का उपमर्दन होगा । आरंभ परिग्रह के सद्भाव में यतनापूर्वक प्रवृत्ति ही नहीं हो सकती । अयतनापूर्वक प्रवृत्तिका नाम ही प्रमत्त दशा है । इस प्रमत्त दशाकी निवृत्ति, सर्वविरतिरूप संयम के अनुष्ठान विना नहीं हो सकती !, क्योंकि संयमके अनुष्ठान में त्रस और स्यावर

રિક કષ્ટનો અનુભવ કરેલ નથી. તે પણ આ સંયમ જીવનની પ્રાપ્તિ માટે તેને તૃણવત્ ત્યાગ કરી આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં અગ્રગામી થયા.

એ બાણેલી હકીકત છે. બધા ભરત ચક્રવર્તી જેવા નથી. જ્યાં આરંભ અને પરિગ્રહનો નિવાસ છે કે ત્યાં શાંતિમય જીવન નહિ. નિરાકુલતામય આત્મ-પરિણતિ નહિ. યતનાચારપૂર્વક પ્રવૃત્તિ નહિ. ઇન્દ્રિયસંયમ અથવા પ્રાણિસંયમ જેવી સુંદર વસ્તુનું જ્યાં 'દર્શન' નથી. રાત-દિવસ આધિ-વ્યાધિ અને ઉપાધિના ભારથી દબાએલો આ પ્રાણી આત્મિક શાંતિના સાચા નિર્મળ સ્રોતથી દૂર જ રહ્યા કરે છે. ફક્ત જુઠી કલ્પનાથી જ પોતાને સુખી અને શાંતિનો ઉપભોક્તા માનતો રહે છે. જ્યાં જેટલો અધિક આરંભ થશે ત્યાં તેટલું જ અધિક જીવોનું ઉપમર્દન થશે. આરંભ પરિગ્રહના સદ્ભાવમાં યતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ જ બની શકતી નથી, અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિનું નામ જ પ્રમત્તદશા છે. આ પ્રમત્તદશાની નિવૃત્તિ-સર્વવિરતિરૂપ સંયમના અનુષ્ઠાન વિના બની શકતી નથી, કારણ કે સંયમના અનુ-

જીવોંકે ઉપમર્દન કા ત્યાગ નવકોટિસે હો જાતા હૈ ।

इस संयमाराधन के लिये यह नहीं कहा जा सकता है कि-अभी समय नहीं है, समय आने पर संयमका आराधन कर लेंगे। वे तो एक घहाना लेकर संयमाराधन से विमुख हो रहे हैं, उनकी यह आत्माकी कमजोरी है, जब तक यह कमजोरी नहीं हटाई जावेगी, तब तक असंयम जीवन से छुटकारा भी नहीं मिल सकता है। संयमाराधन के सम्मुख होने के लिये आत्मकमजोरी को जानने की और जान कर उसे दूर करने की सख्त आवश्यकता है। हम जानते हैं कि हमारे घरमें सांप घुसा बैठा है परन्तु जब तक उसे हम नहीं निकाल देते तब तक हमारा जानना हमारे लिये किस मतलब का ।

जीवन अल्प है। स्त्री पुत्रादिकों की प्राप्ति इस जीवको अनन्त वार हो चुकी है। संयोग और वियोग, ये दो ही नाटक संसार के पर्दे पर होते रहते हैं। हमारे साथ जो जन्मे थे वे चले गये, हम भी कभी न कभी चले जावेंगे, परन्तु सर्वविरति-संयमाराधन का अवसर इस जीव को हाथ नहीं आया। यदि आया होता तो-जो हमारा भव भवमें संसार में चकर लग रहा है-वह कभी का बंद हो जाता, अतः जब जीवन

ખડાનમાં ત્રસ અને સ્થાવર જીવોના ઉપમર્દનનો ત્યાગ નવ કોટિથી થઈ જાય છે

આ સંયમારાધન માટે એમ કહેવામાં નથી આવતું કે હમણાં સમય નથી પણ સમય આવશે ત્યારે સંયમનું આરાધન કરી લેશું. એ તો એક ખડાનું માત્ર છે. જે સમયનું ખડાનું લઈ સંયમારાધનથી વિમુખ થઈ જાય છે તે તેના આત્માની કમજોરી છે જ્યાંસુધી એ કમજોરી દૂર કરવામાં નહિ આવે ત્યાંસુધી અસંયમ જીવનથી છુટકારો પણ મળી શકતો નથી

સંયમારાધનસન્મુખ હોવા માટે આત્મકમજોરી જાણવાની અને જાણીને તેને દૂર કરવાની સખ્ત આવશ્યકતા છે અને જાણીએ છીએ કે અમારા ઘરમાં સાપ ઘુસેલો છે પરંતુ જ્યાં સુધી અમે તેને નહિ ખડાર નિકાલીએ ત્યાં સુધી અમારું જાણપણું નકામું છે.

જીવન અલ્પ છે. સ્ત્રી પુત્રાદિકોની પ્રાપ્તિ આ જીવને અનંતવાર થયેલ છે. સંયોગ અને વિયોગ, એ બે સંસારના પર્દા પર નાટક થતાં જ રહે છે. અમારી માથે જે જન્મ્યા હતા તે ચાલી ગયાં, અમે પણ ક્યારેક ચાલ્યા જઈશું, પરંતુ સર્વવિરતિ-સંયમારાધનનો અવસર આ જીવને હાથ નહિ આવ્યો. કદાચ આવ્યો હોત તો જે અમારા ભવોભવના સંસારમાં ચક્કર લાગી રહ્યા છે તે ક્યારના

ક્ષણભંગુર હૈ તો उसके द्वारा संयमकी जितनी भी आराधना हो सके शुद्ध मन, वचन और काय से कर लेनी चाहिये, इसी में बुद्धिमानी है। शुद्ध आराधित थोड़ा भी संयम अनन्त कर्मों की निर्जरा का कारण माना गया है। जिस प्रकार संतप्त लोहेका गोला पानीको चारों ओर से खींचता है, उसी तरह असंयम जीवन भी विषयकषायों के द्वारा चारों ओर से कर्मणवर्गणाओंको खींचकर उन्हें कर्मरूप से परिणत कर उनसे लिप्त होता रहता है। असंयमी कर्मणवर्गणाओंको खींच उन्हें कर्मरूप में क्यों परिणमाता है ? इसका उत्तर देते हुए सूत्रकार कहते हैं—

‘ जीविए इह जे पमत्ता से हंता ’ इत्यादि।

નિરન્તર આયુષ વ્યતીત હો રહી છે—અંજલિ મેં રચે હુએ જલ કી तरह क्षण ૨ મેં આયુકર્મ કી સ્થિતિ ઘટ રહી છે—ફિર બી પ્રાણી અસંયમ-જીવનવાલા હી બના હુઆ છે, વિષય ઓર કષાયો મેં લવલીન હો રહા છે, રાતદિન વિકથા ઓર કષાય એવં પાંચઇન્દ્રિયોં કે વિષય સેવન કરને મેં હી જુટા હુઆ છે। પ્રમાદી વ્યક્તિ સકષાય યોગવાલા હોતા છે—સકષાય યોગવાલા હોને સે હી ઉસકી પ્રવૃત્તિ ષડ્જીવનિકાય કે ઉપમર્દન કરને મેં હોતી રહતી છે। ઉસે ઇસ વાતકા જરા બી વિચાર નહીં આતા કિ મેરી

પણ અંધ થઇ જાત. માટે જ્યારે જીવન ક્ષણભંગુર છે તો તે દ્વારા સંયમની જેટલી પણ આરાધના થઇ શકે તેટલી શુદ્ધ મન-વચન-કાયાથી કરી લેવી જોઈએ. તેમાં જ બુદ્ધિમાની છે. શુદ્ધ આરાધિત થોડો પણ સંયમ અનંત કર્મોની નિર્જરાનું કારણ મનાય છે. જે પ્રકારે સંતપ્ત લોઢાનો ગોળો ચારે બાજુથી પાણીને ખેંચે છે, તે પ્રકારે અસંયમ જીવન પણ વિષય કષાયોદ્વારા ચારે તરફથી કામણ વર્ગણાઓને ખેંચીને તેને કર્મરૂપ પરિણમન કરી તેનાથી લિપ્ત થઇ જાય છે. અસંયમી કામણ વર્ગણાઓને ખેંચી તેને કર્મરૂપ શા માટે પરિણમાવે છે ? તેનો ઉત્તર આવતા સૂત્રકાર કહે છે—‘ જીવિએ ઇહ જે પમત્તા સે હંતા ’ ઇત્યાદિ.

નિરંતર આયુષ્ય વ્યતીત થઈ રહ્યું છે, અંજળીમાં રાખેલા પાણી સાફ ક્ષણ ક્ષણમાં આયુકર્મની સ્થિતિ ઘટી રહી છે તો પણ પ્રાણી અસંયમ જીવનવાળા જ બની રહે છે. વિષય અને કષાયોમાં જ લવલીન થઈ રહે છે. રાતદિન વિકથા અને કષાય અને પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય સેવન કરવામાં જ મગ્યા રહે છે. પ્રમાદી વ્યક્તિ સકષાય યોગવાલા થાય છે. સકષાય યોગવાલા હોવાથી જ તેની પ્રવૃત્તિ ષડ્જીવનિકાયનું ઉપમર્દન કરવામાં જ બની રહે છે. તેને આ વાતનો જરા પણ વિચાર આવતો નથી કે—

હસ પ્રવૃત્તિ સે ત્રસ અથવા સ્થાવર જીવોંકા ઘાત હો રહા હૈ । અનેક અન-
ર્થકારી સાવધ ક્રિયાઓં કો વહ કરતે હુઅ નહીં હિચકતા હૈ । હસ લિયે
વહ પ્રમાદી વ્યક્તિ શબ્દાદિ વિષયોં મેં ગૃહ્ બનકર ડન-ત્રસ સ્થાવર
જીવોંકા હનન કરનેવાલા હોતા હૈ । જહાં અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ હૈ વહાં
પ્રમત્તયોગ હોને સે હિંસા હોતી હી હૈ, હસલિયે પ્રમાદી વ્યક્તિ 'હંતા'
કહા જાતા હૈ । જો રાતદિન અપની પ્રવૃત્તિ કો કુત્સિત કરનેવાલી ક્રિયાઓં
કે સેવન મેં લગાતા રહતા હૈ વહ ઇક પ્રકાર સે ડસ તર્ફ સે હતના વિવેક-
શૂન્ય હો જાતા હૈ કિ ફિર ડસે ડસ કાલ સે જરા ભી ઘૃણા યા સંકોચ
નહીં હોતા, દયા જૈસી વસ્તુ ડસકે હૃદય મેં દેખને કો હી નહીં મિલતી ।
જિસ પ્રકાર ઠક ૨ શબ્દ હોતે રહને પર ભી ઠડેરે કા કબૂતર નિર્ભય હોકર
અપને સ્થાન પર બૈઠા રહતા હૈ અર્થાત્ ડસ જગહ ડસે બૈઠને મેં જરા ભી
સંકોચ નહીં હોતા હૈ, ડસી પ્રકાર જો બાર બાર હિંસા-શૂઠ-આદિ પાંચ
આત્મવોં કે સેવન કરને મેં તત્પર રહતે હૈં વે હતને દયારહિત ઔર ડસ
કાર્યકે કરને મેં હતને વિવેકશૂન્ય બન જાતે હૈં કિ ડન કામોં કો કરતે હુઅ
જરા ભી નહીં લજાતે, યા ડનકે ક્રિયે બિના ડન્હેં ચૈન નહીં પડતા । યદિ વે
પાહર મેં ડસ તરહ કી પ્રવૃત્તિ ન ભી કરેંતો ભી ડનકી માનસિક પ્રવૃત્તિ

માદી આ પ્રવૃત્તિથી ત્રસ અને સ્થાવર જીવોનો ઘાત થઈ રહ્યો છે અનેક અનર્થ-
કારી પાપમય ક્રિયાઓને કરતા જરા પણ થડકતો નથી. માટે તે પ્રમાદી વ્યક્તિ
શબ્દાદિ વિષયોમાં ગૃહ બનીને આ ત્રસ સ્થાવર જીવોનો ઘાત કરવાવાળો બને
છે, જ્યાં અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ છે ત્યાં પ્રમત્ત યોગ હોવાથી હિંસા થયા કરે છે,
માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ 'હંતા' કહેવાય છે. જે રાતદિવસ પોતાની પ્રવૃત્તિને કુત્સિત
કરવાવાળી ક્રિયાઓના સેવનમાં લગાડતો રહે છે. તે એક પ્રકારે એક તરફથી એવો
વિવેકશૂન્ય થઈ જાય છે કે તેને તે કામથી જરા પણ ઘૃણા અગર સંકોચ થતો
નથી. દયા જેવી વસ્તુ તેના હૃદયમાં દેખવામાં આવતી નથી જે પ્રકારે ઠક ઠક
શબ્દ થવા છતાં પણ કંસારાની જગ્યા પાસેનું કબુતર નિર્ભય બની પોતાના
સ્થાન પર જ બેસી જ રહે છે અર્થાત્ તે જગ્યા ઉપર બેસવામાં તેને જરા
પણ સંકોચ થતો નથી, તે પ્રકારે જે વારંવાર હિંસા, શૂઠ, આદિ પાંચ આશ્રવોનું
સેવન કરવામાં તત્પર રહે છે તે એટલા દયારહિત અને તે કાર્ય કરવામાં વિવે-
કશૂન્ય બની જાય છે કે તેવા કામો કરવામાં તે જરા પણ લાજ મર્યાદા રાખતો
નથી. અગર તેવા કામ કર્યા બિના તેને ચૈન પડતું નથી કહાય તે બહારમાં
તેવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ન કરે તો પણ માનસિક પ્રવૃત્તિ તેની સુતા ઉઠતાં બેસતાં

સોતે ઉઠતે બેઠતે उस तरफ सचेत बनी रहती है । शास्त्रकारों ने हिंसा के मुख्य दो भेद किये हैं—१ द्रव्यहिंसा और २ भावहिंसा । प्राणियों के अपने-२ योग्य प्राणों का वियोग करना द्रव्यहिंसा, तथा भाव-अन्तःकरणकी कलुषित वृत्ति करना भावहिंसा है । पर्याप्तवस्था में एकेन्द्रिय जीवों के ४ प्राण होते हैं, द्वीन्द्रिय जीवों के ६, तेन्द्रिय जीवों के ७, चतुरिन्द्रिय जीवों के ८, असंज्ञि पंचेन्द्रिय जीवों के ९, और संज्ञि पंचेन्द्रिय जीवों के १० । एकेन्द्रिय जीव सूक्ष्म और बादर के भेद से दो प्रकार के होते हैं । सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव जो इस लोक में सर्वत्र व्याप्त हैं उनका किसी भी निमित्त से घात नहीं होता है, बादर एकेन्द्रिय जीवोंका ही घात होता है । अतः प्रमादी व्यक्ति अपनी प्रवृत्ति से पृथिवी-कायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक एवं वनस्पतिकायिक एकेन्द्रिय जीवों का तथा द्वीन्द्रियादिक त्रस जीवों का घातक माना गया है । रागादिक भावों का उद्रेक प्रत्येक अवस्थामें रहता है, इनके बिना कोई भी प्राणी जीवों के घात करने में प्रवृत्त नहीं होता, अतः इनकी उद्रेकता ही भावहिंसा है । अथवा रागादिकों की उत्पत्ति स्वयं भावहिंसा है, अतः प्रमादी व्यक्ति बाहरमें हिंसादिक कार्यों में प्रवृत्त न भी हो तो भी वह

તે તરફ જ સચેત બની રહે છે. શાસ્ત્રકારોએ હિંસાના મુખ્ય બે ભેદ કહ્યાં છે. ૧ દ્રવ્યહિંસા, અને ૨ ભાવહિંસા. પ્રાણીઓના પોતપોતાના યોગ્ય પ્રાણોના વિયોગ કરવું તે દ્રવ્યહિંસા, તથા ભાવ-અંતઃકરણની કલુષિત વૃત્તિ કરવી તે ભાવહિંસા છે. પર્યાપ્તવસ્થામાં એકેન્દ્રિય જીવોને ૪ પ્રાણ હોય છે, બેઈન્દ્રિય જીવોને ૬, તેન્દ્રિય જીવોને ૭, ચોરેન્દ્રિય જીવોને ૮, અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોને ૯ અને સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોને ૧૦.

એકેન્દ્રિય જીવ સૂક્ષ્મ અને બાહરના ભેદથી બે પ્રકારના હોય છે, સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય જીવ જે આ લોકમાં સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે, તેનો કોઈ પણ નિમિત્તથી ઘાત થતો નથી. બાહર એકેન્દ્રિય જીવોનો ઘાત થાય છે, માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ પોતાની પ્રવૃત્તિથી પૃથિવીકાયિક, અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિક એકેન્દ્રિય જીવોનો તથા બેઈન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોનો ઘાતક માનેલ છે. રાગાદિક ભાવોનો ઉદ્દેક પ્રત્યેક અવસ્થામાં રહે છે. તેના વિના કોઈ પણ પ્રાણી જીવોનો ઘાત કરવામાં પ્રવૃત્ત નથી થતો. માટે તેની ઉદ્દેકતા જ ભાવહિંસા છે. અને રાગાદિકોની ઉત્પત્તિ સ્વયં ભાવહિંસા છે માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ બહારમાં હિંસાદિક કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત ન હોય તો પણ તે પ્રમત્ત હોવાથી હિંસક માનવામાં

કિમર્થં ચૈતાન્ વ્યાપારાન્ વિદધાતીત્યાહ—‘અકૃતં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ’
 इति, यदन्यैः पूर्वैः सद्भिर्न कृतं=नानुष्ठितं तत्सर्वं करिष्यामि=विधास्यामि, इति मन्य-
 मानः=स्वीकुर्वाणः सन् हननादिकर्मकर्ता भवति । पुत्रकलत्रासक्तोऽप्राप्तविविध-
 विभवोऽनर्थकरं कर्म करिष्यामીति निश्चित्य हननादौ प्रवर्तते ।

પ્રમત્ત હોને સે હિંસક માના જાતા હૈ । इसीलिये प्रमादी को शास्त्रकारों ने
 हिंसक कहा है । प्रमादी जिस प्रकार पांचइन्द्रियों के विषय में लोलुपी बन
 कर त्रस स्थावरों का घात करता है उसी प्रकार वह उनका छेदन भेदन
 भी करता है । फिर वह लुम्पयिता—किसी की गांठ काटना, खिसा कत-
 रना आदि कार्य करता है, विलुम्पयिता—ग्रामघातादि कार्य करता है,
 अपद्रावयिता—विष शस्त्रादि के प्रयोग से किसीको मारता है, उत्त्रास-
 यिता—कंकर पत्थर फेंकर किसीको डराता है । अनेक अनर्थों को करनेवाली
 हनन—छेदन—भेदन आदि क्रियाओं का जो यहां पर प्रदर्शन किया है
 उसका अभिप्राय सिर्फ इतना ही है कि जो संसार में ही फँसा है वह
 कालाकाल के ज्ञान से रहित होकर पर जीवों के विषय में अनेक अनर्थोंको
 पैदाकरनेवाली अनेकप्रकार की घातादिक क्रियाओं को निरन्तर करता
 रहता है । शंका—अनर्थकारी क्रियाओं को यह प्राणी क्यों करता है ?

उत्तर—“ अकृतं करिष्यामીति मन्यमानः ” अर्थात्—‘जो पहिले
 अन्य पूर्वजों ने कार्य नहीं किये हैं वे सब मैं करूँगा’ इस अभिप्राय के
 वशवर्ती होकर ही यह प्राणी उन अनर्थोत्पादक क्रियाओं के करने में

આવે છે. માટે પ્રમાદીને શાસ્ત્રકારોએ હિંસક કહ્યો છે, પ્રમાદી જે પ્રકારે પાંચ
 ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં લોલુપી બનીને ત્રસ સ્થાવરોનો ઘાત કરે છે તે પ્રકારે તે
 તેનું છેદન ભેદન પણ કરે છે, પછી તે લુમ્પયિતા—કોઈની ગાંઠ કાપવી, ખિસ્સુ
 કાતરવું, આદિ કાર્ય કરે છે. વિલુમ્પયિતા—ગ્રામઘાતાદિ કાર્ય કરે છે. અપદ્રાવયિતા
 —વિષ શસ્ત્રાદિકોના પ્રયોગથી કોઈને મારે છે. ઉત્ત્રાસયિતા—કંકર પથ્થર ફેંકીને
 કોઈને ડરાવે છે, અનેક અનર્થોને કરવાવાળી, હણવું, છેદવું, ભેદવું, આદિ ક્રિયા-
 ઓનું જે આ ઠેકાણે પ્રદર્શન કર્યું છે, તેનો અભિપ્રાય ફક્ત એટલો જ છે કે
 જે સંસારમાં જ ફસેલા છે તે કાલાકાલના જ્ઞાનથી રહિત બની પર જીવો
 વિષે અનેક અનર્થોને પેદા કરવાવાળી અનેક પ્રકારની ઘાતાદિક ક્રિયાઓને નિર-
 તર કરતા રહે છે. શંકા.—અનર્થકારી ક્રિયાઓને આ પ્રાણી કેમ કરે છે ?
 ઉત્તર—“ અકૃતં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ ”

અર્થાત્ ‘જે પહેલાના અન્ય પૂર્વજોએ કાર્ય નથી કર્યું’ તે બધું હું કરીશ.’
 આવા અભિપ્રાયને વશવર્તી બનીને તે પ્રાણી તેવા અનર્થોત્પાદક ક્રિયાઓને કર-

યદ્વા-યદન્યૈઃ કૈરપ્યાશ્ચર્યઘ્નોદ્યાનાદિકં પૂર્વં ન કૃતં તત્સર્વં કરિષ્યામીતિ મન્ય-
માનઃ પ્રયતત્ત્વમ્ । સતતં વ્યગ્રો ભૂત્વા નાનાવિધશસ્ત્રોપઘાતપ્રવૃત્તો
ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

પ્રવૃત્ત હોતા હૈ । યહ સંસારમેં ફંસા હૈ-સ્ત્રીપુત્રાદિકોં મેં ગૃહ્ બના હુઆ
હૈ । ઉનકે નિર્વાહ કે લિયે સર્વપ્રથમ દ્રવ્યકી હસે જરૂરત હોતી હૈ પરન્તુ
નિર્વાહ લાયક સાધનોંકો કરતે હુએ ખી મનમાના દ્રવ્ય હસે પ્રાપ્ત નહીં
હોતા હૈ, હસલિયે ઉસકી પ્રાપ્તિ કે લિયે યહ ન્યાય અન્યાય માર્ગકા
વિચાર ન કર યેન કેન પ્રકારેણ દ્રવ્ય કે સંગ્રહકેલિયે હનનાદિ ક્રિયાઓં
મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ।

અથવા—“ અકૃતં કરિષ્યામિ ” હસકા યહ ખી અર્થ હોતા હૈ કિ
‘જો મકાન વગેરહ, અથવા બગીચા વગેરહ હમારે પૂર્વજોંને નહીં કરવાયે
ઉન્હેં અવ મેં કરવાજંગા’ એસા સોચ કર જબ વહ ઉનકી તૈયારી કરાને
મેં પ્રયત્નશીલ હોતા હૈ ઉસ સમય જિસ સ્થાન પર હસે બગીચા વગેરહ
કી તૈયારી કરાની હૈ ઉસ સ્થાન કી વહ સફાઈ કરાને મેં પ્રવૃત્તિ હોતા હૈ ।
યદિ ઉસ સ્થાન પર કોઈ જાડી વગેરહ રૂઢી હોતી હૈ તો યહ ઉસે કટ-
વાતા હૈ, અથવા જો શક્ય હોતા હૈ તો ઉસે સ્વયં ખી કાટતા હૈ । હસ
પ્રકાર યહ પ્રમાદી વ્યક્તિ સ્ત્રીપુત્રાદિકોં મેં ગૃહ્ બનકર અકૃત કે કરને
મેં લગ જાતા હૈ, અતઃ હસ સ્થિતિ મેં વહ ષડ્જીવનિકાય કા ઘાતક
હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

વામાં પ્રવૃત્ત થાય છે. તે સંસારમાં ફસેલા છે. સ્ત્રી-પુત્રાદિકોમાં ગૃહ્ બનેલા છે.
તેના નિર્વાહ માટે સર્વ પ્રથમ દ્રવ્યની તેને જરૂરત પડે છે, પરંતુ નિર્વાહલાયક
સાધનોને કરતાં છતાં પણ મનમાન્યું દ્રવ્ય તેને પ્રાપ્ત થતું નથી માટે તેની
પ્રાપ્તિ માટે તે ન્યાય અન્યાય માર્ગનો પણ વિચાર ન કરીને યેન કેન પ્રકારેણ
દ્રવ્યના સંગ્રહ માટે હુણવાદિ ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે.

અથવા—“ અકૃતં કરિષ્યામિ ” એનો એ પણ અર્થ થાય છે કે-‘જો મકાન
વિગેરે અથવા બગીચા વિગેરે અમારા પૂર્વજોએ નહિ બનાવ્યા તે હું બનાવીશ’
એવો વિચાર કરીને ન્યારે તે તેની તૈયારી કરાવવામાં પ્રયત્નશીલ થાય છે તે
વખતે જે સ્થાન પર તેને બગીચા વિગેરેની તૈયારી કરાવવાની છે તે સ્થાનની
તે સફાઈ કરાવવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે. કદાચ તેવા સ્થાનપર કોઈ જાડી વિગેરે આડું
ખડું હોય તો તેને તે કપાવી નાંખે છે, અથવા જે શક્ય હોય છે તેને પોતે
કાપે છે. આ પ્રકાર આ પ્રમાદી વ્યક્તિ સ્ત્રી પુત્રાદિકોમાં ગૃહ્ બની અકૃત કરવામાં
લાગી જાય છે માટે આ સ્થિતિમાં તે ષડ્જીવનિકાયનો ઘાતક થાય છે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

एवं हननादि प्रकारानुचितव्यापारकरणोद्यतो द्वीपान्तरगमनेऽपि समग्रकार्य-
साधनभूतप्रभूतधनालाभाद्विषणवेताः किं करोतीति दर्शयति—“जेहिं वे”—त्यादि ॥

मूलम्—जेहिं वा सद्धिं संवसइ ते वा णं एगया नियगा
ते पुठिं पोसेंति, सो वा ते नियगे पच्छा पोसिज्जा, नालं ते
तव ताणाए वा सरणाए वा, तुमं पि तेसिं नालं ताणाए वा
सरणाए वा ॥ सू० ६ ॥

छाया—यैर्वा सार्द्धं संवसति, ते वा खलु एकदा निजकास्तं पूर्वं पोषयन्ति,
स वा तान् निजकान् पश्चात्पोषयति नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वा, त्वमपि
तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय वा ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘यैर्वેતિ’યૈઃ=માતાપિત્રાદિભિઃ સાર્દ્ધં સંવસતિ=પ્રેમ્ણા નિવસતિ તે સ્વલુ=
નિશ્ચયેન, એકદા=વાલ્યે વયસિ નિજકાઃ=સ્વક્રીયાઃ માતાપિત્રાદયઃ, તં=પુત્રાદિકં
પૂર્વં=વાલ્યાવસ્થાયાં પોષયન્તિ, વા=શબ્દોઽપ્યર્થે સ વા=સોઽપિ તાન્=માતાપિત્રાદીન્,
નિજકાન્=આત્મીયાન્, પશ્ચાત્=ટુદ્ધાવસ્થાયાં ધનાદિના પોષયતિ કિન્તુ તે=માતા-
પિત્રાદયઃ તવ નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા, ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય
વા, ऐहिक-पारत्रिक-दुःखोदयेषु न कोऽपि पोष्यः पोषको वा कस्यापि त्राण
शरणभूतो भवतीति भावः ॥ सू० ६ ॥

इस तरह हननादि प्रकारवाले अनुचिन्त व्यापारों के करने में उद्यत
यह प्राणी धन कमाने की इच्छा से अन्य दूसरे द्वीपों में भी जाता है, परन्तु
यदि वहाँ पर भी समग्र कार्यका साधनभूत प्रभूत धन अर्थात् यथेच्छ
धनका लाभ जब इसे नहीं होता है तब यह अतिशय खेदखिन्न होता है
और इस परिस्थिति में यह क्या करता है सो प्रकट करते हैं—

‘जेहिं वा सद्धिं संवसइ’ इत्यादि । अर्थ स्पष्ट है ।

આવી રીતે હણવાના પ્રકારવાળા અનુચિત વ્યાપારો કરવામાં પ્રયત્નશીલ
તે પ્રાણી ધન કમાવાની ઇચ્છાથી બીજા અન્ય દ્વીપોમાં પણ જાય છે, પરંતુ કદાચ
ત્યાં પણ સમગ્ર કાર્યનું સાધનભૂત પ્રભૂત ધન અર્થાત્ યથેચ્છ ધનનો લાભ જ્યારે
ત્યાં પણ મળતો નથી તો તે ઘણો ખિન્ન થઈ જાય છે, અને આ પરિસ્થિતિમાં
તે શું કરે છે તે પ્રકટ કરવામાં આવે છે:—‘જેહિં વા સદ્ધિ સંવસઈ’ ઇત્યાદિ
અર્થ ખુલ્લો છે.

વિશેષાર્થ—જિન માતાપિતા આદિકોં કે સાથ યહ રહતા હૈ વે इसकी बाल्य अवस्था में सर्वप्रथम सेवा-चाकरी करते हैं, इसकी सहायता करते हैं, इसका पालन पोषण करते हैं। वह भी जब युवावस्था आदि से समृद्ध हो जाता है तब इन अपने मातापिता आदिकी वृद्धावस्था में धन आदि से सहायता, सेवा, या इनका पालन पोषण करता है। इस प्रकार पारस्परिक पोष्यपोषक भाव होने पर भी यह उनकी रक्षा के लिये, अथवा उनको शरण देने के लिये समर्थ नहीं होता है, वे भी इसकी रक्षा के लिये, अथवा इसके शरण देने के लिये समर्थ नहीं होते हैं।

સંસાર કી યહ રીતિ હૈ—પ્રત્યેક પ્રાણી અપને ૨ કુટુંબિયોં કી—સ્ત્રી પુત્રાદિકોં કી મોહાધીન હો હરતરહ સે સેવા શુશ્રૂષા સંરક્ષણ પાલન પોષણ કિયા કરતા હૈ। યહ વૃત્તિ સિર્ફ મનુષ્યોં મેં હી નહીં હૈ, પશુ-પક્ષિયોં તક મેં ભી इसी प्रकार की पाई जाती है। वे भी इष्ट के संयोग में हर्षाते हैं और उनके वियोग में दुःखी होते हैं। जैसे चिड़िया घोंसले में रहती है और बच्चाबच्ची देती है, जब बाहर से खाना लेकर आती है तब उसके छोटे २ बच्चे उसे देखते ही चैं-चैं कर बाहर निकलते हैं और उसके आस पास फुदक २ कर उसकी ओर अपनी २ चंचु खोलकर

વિશેષાર્થ—જે માતાપિતા આદિની સાથે તે રહે છે તે તેની બાલ્ય અવસ્થામાં સર્વ પ્રથમ સેવા આકરી કરે છે તેની સહાયતા કરે છે, તેનું પાલન-પોષણ કરે છે, તે પણ જ્યારે યુવાવસ્થા આદિથી સમૃદ્ધ થઈ જાય છે ત્યારે તે પોતાના માતાપિતા આદિની વૃદ્ધાવસ્થામાં ધન આદિથી સહાયતા, સેવા, અને તેમનું પાલન-પોષણ કરે છે. આ પ્રકારે પારસ્પરિક પોષ્ય-પોષક ભાવ હોવા છતાં પણ તે તેમની રક્ષા માટે કે શરણ દેવામાં સમર્થ થતો નથી, તેમજ તેઓ પણ તેની રક્ષા અને શરણ દેવામાં અસમર્થ બને છે.

સંસારની એ રીતિ છે કે પ્રત્યેક પ્રાણી પોતપોતાના કુટુંબીઓની સ્ત્રી-પુત્રાદિકોંની મોહાધીન થઈ દરેક પ્રકારથી સેવા, શુશ્રૂષા, સંરક્ષણ પાલન પોષણ કર્યા કરે છે. આવી વૃત્તિ ફક્ત મનુષ્યોમાં જ છે તેમ નહિ પણ પશુપક્ષીઓમાં પણ છે તેમ દેખવામાં આવે છે. તેઓ પણ ઈષ્ટ સંયોગમાં હર્ષ પામે છે અને તેના વિયોગમાં દુઃખી થાય છે. જેમ ચકલીઓ માળામાં રહે છે અને બચ્ચાં બચ્ચી દે છે, અને જ્યારે બહારથી ખાવાનું લઈ આવે છે ત્યારે તેના નાના નાનાં બચ્ચાં તેને દેખતાં જ ચૈં-ચૈં કરી બહાર નીકળે છે અને તેની આસપાસ ફરવા માંડે છે અને તેની તરફ પોતપોતાની ગાંઘ બોલીને બેચી જાય છે. તે પોતાની ગાંઘથી

યથા સ્વજનાદિર્ન તવ ત્રાણાય પ્રભવતિ તથૈવ કષ્ટસમ્પાદિતં સુરક્ષિતં ધનમપિ ન ત્રાણાયેતિ દર્શયતિ—“ઉવાઙ્યે”—ત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઉવાઙ્યસેસેણ વા સંનિહિસંનિચઓ કિજ્જઙ્ગ ઇહ-મેગેસિં અસંજયાણ ભોયણાણ, તઓ સે ઇગયા રોગસમુપ્પાયા સમુપ્પજ્જંતિ, જેહિં વા સઙ્ગિં સંવસઙ્ગ તે વા ણં ઇગયા નિયગા તં પુઘિં પરિહરંતિ, સો વા તે નિયગે પચ્છા પરિહરિજ્ઞા, નાલં તે તવ તાણાણ વા સરણાણ વા, તુમંપિ તેસિં નાલં તાણાણ વા સરણાણ વા ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—ઉપાદિતશેષેણ વા સન્નિધિસંનિચયઃ ક્રિયતે, ઇહૈકેપામસંયતાનાં ભોજનાય, તતસ્તસ્યૈકદા રોગસમુત્પાદાઃ સમુત્પદ્યન્તે, યૈર્વા સાર્દ્ધં સંવસતિ તે વા સ્વલુ એકદા નિજકાસ્તં પૂર્વ પરિહરન્તિ, સ વા તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિહરતિ, નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા, ત્વમપિ તેપાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા ॥ મ્૦ ૭ ॥

બેઠ જાતે હૈં । વહ અપની ચંચુ સે ઇનકી ચંચુ મેં કુછ સ્વાના ધર દેતી હૈ, વે સ્વા જાતે હૈં, બડે સ્વશ હોતે હૈં ।

જવ પશુપક્ષિયોં કી યહ પરિસ્થિતિ હૈ તો ફિર મનુષ્ય જો સમ-હદાર પ્રાણી માના ગયા હૈ ઉસકી અપને ઇષ્ટ બંધુ જનોં કે—પુત્રાદિકોં કે પાલન પોષણ કરને કી વૃત્તિ સવસે વઢ કર હો ઇસમેં કોઈ આશ્ચર્ય જૈસી વાત નહીં, કિન્તુ ઇહલોક પરલોક સમ્બન્ધી દુઃસ્વોં કા ઉદય હોને પર ન વે તેરે ત્રાણ ઔર શરણ હોતે હૈં ઔર ન તૂં ઉનકેલિયે ત્રાણ ઔર શરણ હો સકતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

તેની આચરમા કાઈક ખાવાનુ ધરે છે તે તેઓ ખાઈ જાય છે. અને ઘણા ખુશ થાય છે

ન્યારે પશુ પક્ષિઓની આ પરિસ્થિતિ છે તો પછી મનુષ્ય તો સમજદાર વ્યક્તિ માનવામા આવે છે તેને પોતાના ઇષ્ટ બંધુ જનોને, પુત્રાદિકોને પાળવામા વૃત્તિ બધાથી વધારે હોઈ શકે તેમા કોઈ આશ્ચર્યની વાત નથી પરંતુ આલોક પરલોક સમબંધી દુખોનો ઉદય થવાથી નથી તુ તેમનો ત્રાણ અને શરણ દેવામા અમર્થ થતો, અને નથી તેઓ તને ત્રાણ અને શરણ દેવામા અમર્થ થતા ॥ અ૦ ૬ ॥

निर्लाञ्छन-गलकर्तन-गृहदाहादिकं क्रूरकर्म करोति 'धनमेव सारं' मन्यमानो हि सततं तलाभाय मोहाविष्टो भ्रमति । स चार्थलाभाय किं करोतीत्याह-“सहसाकार” इति आर्षत्वात्कर्तरि घञ् । सहसा करोतीति सहसाकारः । स्वहिताहितमविचार्य कर्मकारी । यथा मृगादिः क्षेत्रे जालादिकं विलोक्यापि तमवज्ञाय धान्यादिभक्षण-लोभेन स्ववधमप्यविचार्य जाले बद्धो भवति श्रियते च पश्चात्तेनैव निमित्तेन । तथैव लोभाकुलितचेता धनलाभपरायणः स्वपरप्राणघातकर्मपि कर्म करोति । अर्थलाभाय

नहीं रहता, उस समय एक यही उसका लक्ष्य रहता है कि किसी भी तरह से द्रव्य एकत्रित करना चाहिये । इस ख्याल से वह भयंकर से भी भयंकर भविष्यत्कालीन कटुक विपाक की परवाह न करके लोक-निन्दित निर्लाञ्छन, दूसरों का गला घोटना, दूसरों का घर-बार फूंकना आदि क्रूर कर्म कर डालता है । 'संसार में सार वस्तु एक द्रव्य ही है' ऐसा मान कर निरंतर उसके लाभ के लिये मोहाधीन हो घूमता रहता है । और इसके लाभ के लिये वह “सहसाकारः” हिताहित के विवेक से विकल हो अयोग्य कर्म करने के लिये तत्पर हो जाता है । जैसे मृगादि पशु क्षेत्र में विस्तीर्ण जाल को देख कर भी उसकी कुछ भी परवाह न कर धान्यादिक खाने के लोभ से अपने वध (मृत्यु) की भी उपेक्षा कर जाल में फंस जाते हैं और उसी में फंसे मर जाते हैं । उसी प्रकार लोभ से आकुलितमति होकर धन के लाभ के लिये तत्पर हुआ जीव भी स्व और पर के प्राणों को घात करने वाले क्रूर कर्मों को किया करता है । द्रव्य के लाभ के लिये प्रयत्नशील बना हुआ यह प्राणी जिस प्रकार

कर्तव्यनुं कांछे पणु लान नहि राभतां इक्षत अेक न लक्ष्य राभे छे के कोछ पणु प्रकारे द्रव्य अेकत्रित करी लउ. आवा ज्ञ्यालथी ते लयंकरमां लयंकर भविष्यत्कालीन कटुक विपाकनी परवाह पणु न करतां लोकनिन्दित-निर्लाञ्छन, भीजनुं गणुं हणववुं, भीजनुं-घर भाणवुं, आदि क्रूर कर्म करे छे 'संसारमां सार वस्तु अेक द्रव्य न छे' अेवुं मानीने निरंतर तेनी प्राप्ति माटे मोहाधीन थंछे इरतो रह्ये छे. द्रव्यप्राप्ति माटे ते “सहसाकारः” हिताहितना विवेकथी विकल थंछे अयोग्य कर्म करवा तत्पर थाय छे. जेरा मृगादि पशु क्षेत्रमां विस्तीर्ण जालने देणीने पणु तेनी परवाह नहि करता धान्यादिक भावाना लोभथी पोताना मृत्युनी पणु उपेक्षा करी जणमां इसे छे अने तेनी अंदर इसीने तेमां न भरे छे. ते प्रकारे लोभथी आकुलितमतिने जनीने धनना लाल माटे तत्पर थयेल जव पणु पोताना अने भीजना प्राणोने घात करवामां क्रूर कर्मोने करे छे; द्रव्यना लाल माटे प्रयत्नशील जनी ते प्राणी जेभ धन कभावाना

ટીકા—‘ઉપાદિતે—’ત્યાદિ इह=સંસારે એકેપાં=કતિપયાનામ્, અસંયતાનાં=ગૃહસ્થાનાં સન્નિધિસંનિચયઃ=સન્નિધેર્વિધમાનધનસ્ય સંનિચયઃ=એકત્રીકરણં, યદ્વા—સંનિચયો=ગ્રાહુલ્યમ્, ઉપભોગ્યધનસમૂહ इति યાવત્, ઉપાદિતશેષેણ=ઉપાદિતસ્ય=ઉપભુક્તસ્ય શેષેણ=અવશિષ્ટભાગેન ભોજનાય=ભોજનમુપભોગસ્તસ્મૈ=તદર્થ ક્રિયતે । યદ્વા—અસંયતાના-મિત્યત્રાર્પત્વાત્તૃતીયાર્થે પષ્ઠી, તેન ચોપાદિતશેષેણ સદ્ગ્રહલિપ્સુભિઃ કૈરપ્યસંયતૈર્નાનાવિધસાવધક્રિયોપાર્જિતમનર્થજનકં ધનં સમ્પાદ્ય ભવિષ્યત્કાલે કુટુમ્બપોષણાય સ્વોપભોગાય વા ક્રિયત इत्यર્થઃ । સંસારમૂર્ચ્છિતો ગૃહસ્થો ભવિષ્યત્કાલે ઉપભોગાર્થ ધનસંચયં કરોતીતિ ભાવઃ । કિન્તુ સોઽપિ ધનસંચયો ન તસ્યોપભોગાયેત્યાહ—‘તતઃ’ इत्यादिना, તતો=ધનસંચયાનન્તરમુપભોગકાલ इति યાવત્, તસ્યોપભોક્તુરેકદા દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવનિમિત્તપ્રકટવેદનીયકર્મોદયે ‘રોગ-સમુત્પાદાઃ’ રોગાણાં=કાસશ્વાસરાજયક્ષ્મકુષ્ઠાર્શાદીનાં સમુત્પાદાઃ=પ્રાદુર્ભાવાઃ

૧ ઉપપૂર્વકાત્ ‘અદ્’-ધાતોઃ સ્વાર્થેણિચિત્તઃ ।

જિસ પ્રકાર સ્વજન વગેરહ્ इस जीवके रक्षक नहीं हो सकते हैं उसी प्रकार कष्टसंपादित सुरक्षित धन भी इसका रक्षक नहीं होता है इसी बात को सूत्रकार कहते हैं—

‘उवाइयसेसेण वा’ इत्यादि । इस संसार में कितनेक असंयत संसारी जीव अपने उपभोग के लिये नाना प्रकार की सावध क्रियाओं द्वारा अनर्थकारी धनका उपार्जन कर खाने पीने से अवशिष्ट धनका संचय करते हैं और उसका उपभोग करते समय इच्छानुकूल आहार विहार करते हैं, परन्तु जब असाता का उदय आता है तब उनके शरीर में कास-श्वास आदि अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं । इस अवस्था में इसके नेत्र और नासिका से पानी गिरने लगता है, कुष्ठ

જે પ્રકારે સ્વજન વિગેરે આ જીવના રક્ષક નથી બની શકતા તે પ્રકારે કષ્ટસંપાદિત સુરક્ષિત ધન પણ તેનું રક્ષક બનતું નથી. આ વાતને સૂત્રકાર કહે છે—

‘उवाइयसेसेण वा’ इत्यादि—આ સંસારમાં કેટલાક અસંયત સંસારી જીવ પોતાના ઉપભોગ માટે નાના પ્રકારની સાવધ ક્રિયાઓદ્વારા અનર્થકારી ધનનું ઉપાર્જન કરી ખાવા-પીવાથી અવશિષ્ટ ધનનો સંચય કરે છે, અને તેનો ઉપભોગ કરી તે સમય ઇચ્છાનુકૂળ આહાર વિહાર કરે છે, પરંતુ જ્યારે અશાતાનો ઉદય આવે છે ત્યારે તેના શરીરમાં કાસ શ્વાસ આદિ અनेक प्रकारના रोग उत्पन्न થાય છે. આ અવસ્થામાં તેના नेत्र અને नासिकाથી पानी नीकળવા लागे છે.

સમુત્પદ્યન્તે=જાયન્તે, ધનોપભોગે માનવાનાં સ્વેચ્છાહારક્રીડાદિના ણ્ટિતિ ધાતુ-
વૈપમ્યોદયાન્નાનાવિધરોગા ભવન્તીતિ ભાવઃ ।

તતઃ કિં ભવતીત્યાહ—‘યૈર્વા સાર્દ્ધ’—મિત્યાદિ । યૈઃ=પુત્રકલત્રાદિભિઃ સાર્દ્ધ
સંવસતિ ત એવ નિજકાઃ=આત્મીયા એકદા=રોગાભિભવે પૂર્વ=પ્રથમં પરસ્પરરોગ-
સંસર્ગભયાત્ તં ગલન્નેત્રનાસિકં વિશીર્ણપાણિપાદં રોગિણં પરિહરન્તિ । કદાચિત્
સ વા=સોઽપિ પશ્ચાત્ તાન્ નિજકાન્=આત્મીયાન્ પુત્રકલત્રાદીન્ પરિહરતિ, કિન્તુ યદિ
કથञ્ચિત્તે શુશ્રૂષણપરા અપિ ન તવ રક્ષકાઃ, નાપિ તેષાં ત્વં રક્ષકઃ, એહિક-પારત્રિક-
દુઃખવિમોચનાય પરસ્પરં સમર્થા ન ભવન્તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

યાવદ્વાર્ધક્યાદિકં નાયાતં તાવદેવ શ્રુતચારિત્રાદિલક્ષણે ધર્મે યત્નઃ કર્તવ્ય
ઈતિ દર્શયતિ—‘એવં જાણિત્તુ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એવં જાણિત્તુ દુઃખં પત્તેયં સાયં, અણભિક્રાંતં ચ ચ્વલુ
વયં સંપેહાણ, ચ્વણં જાણાહિ પંડિયા ! ॥ સૂ. ૮ ॥

હાયા—એવં જ્ઞાત્વા દુઃખં પ્રત્યેકં સાતમ્, અણભિક્રાન્તં ચ ચ્વલુ વયઃ સમ્પ્રેક્ષ્ય
ક્ષણં જાનીહિ પંડિત ! ॥ સૂ. ૮ ॥

આદિ રોગ કે કારણ હાથ પૈર ગલને લગતે હૈં, ઉસ સમય હસકે અપને
કુદુમ્બી-પુત્ર કલત્રાદિક-ભી ‘હમકો ભી રોગ ન લગ જાય’ ડસ ભય સે
હસે છોડ દેતે હૈં । અથવા કિસી સમય યહ ભી કિસી કારણવશ ઉન્હેં
છોડ દેતા હૈ । યદિ પરસ્પર કોઈ કિસીકો ન ભી છોડે તો ભી એહિક
ઔર પારત્રિક દુઃખોં સે કોઈ કિસી કી રક્ષા નહીં કર સકતા હૈ ॥ સૂ. ૭ ॥

જવ તક વૃદ્ધાવસ્થા વગેરહ નહીં આઈ હૈ તવ તક શ્રુતચારિત્રરૂપ
ધર્મ સેવન કરને મેં પ્રયત્ન કરતે રહના ચાહિયે । ઇસી વાતકો સૂત્રકાર
પ્રદર્શિત કરતે હૈ—

કુઠ્ઠ આદિ રોગના કારણે હાથ પગ ગળવા લાગે છે, તે વખત તેના પોતાના
કુદુમ્બી-પુત્રકલત્રાદિક પણ ‘અમને પણ રોગ ન લાગી જાય’ આ લાયથી તેને
છોડી દે છે અથવા કોઈ વખત તે પણ કોઈ કારણવશ તેઓને છોડી દે છે.
કદાચ પરસ્પર કોઈ કોઈને ન પણ છોડે તો પણ એહિક અને પારત્રિક દુઃખોથી
કોઈ કોઈની રક્ષા કરી શકતા નથી ॥ સૂ. ૭ ॥

ત્યા સુધી વૃદ્ધાવસ્થા વિગેરે નથી આવી ત્યા સુધી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ
સેવન કરવામા પ્રયત્ન કરતો રહેવો જોઈએ, આ વાતને સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરે છે.—

टीका—हे पण्डित ! = हे परमार्थज्ञ—मेधाविन् ! एवं = “ केऽपि स्वजनादयस्त्राणाय वा शरणाय वा न भवन्ति ” इति पूर्वोक्तप्रकारेण प्रत्येकं = प्रत्येकप्राणिनः सर्वेषां प्राणिनामित्यर्थः, दुःखं, तथा सातं = सुखं च ज्ञात्वा = ‘ स्वकृतशुभाशुभकर्मविपाकानुभवोऽवश्यं भवती ’—तिबुद्ध्वा अनभिक्रान्तम् = अव्यतीतं वयः = शरीरस्य कालकृतावस्थां संप्रेक्ष्य = परिवाददोषवतो वार्द्धक्यस्य, पोषणदोषवतो बाल्यस्य, परिहारदोषवतो रोगस्य च दूरवर्तित्वं यत्रास्ति तादृशं वयः समालोच्य, क्षणम् = अवसरं जानीहि = बुध्यस्व हे पण्डित ! इति सम्बन्धः ।

‘ एवं जाणिन्तु ’ इत्यादि । हे मेधावी !—हे सर्वविरतिसम्पन्न ! हे परमार्थ के जाननेवाले मुनि ! कोई भी स्वजनादिक एक दूसरे को त्राण और शरण के लिए समर्थ नहीं हो सकता है । इसप्रकार पूर्वोक्त रीति से प्रत्येक प्राणी के सुख दुःख को जानकर—अर्थात् अपने किये हुए पुण्यपाप का फल अवश्य भोगना पड़ता है, ऐसा समझकर तथा अवस्था को भी अनभिक्रान्त देख कर, तथा जब तक रोगादि का उदय नहीं हुआ है—सब इन्द्रियां अपनी २ शक्ति में समर्थ हैं और स्वजनादिकों ने नहीं छोड़ा है अर्थात् जबतक स्वजनादि आदर करते हैं तबतक ही आत्मा का श्रेय साध लेना चाहिये, ऐसी अवस्था को अर्थात् परिवाद—दोषयुक्त वृद्धावस्था, पोषण—दोषवाली बाल्यावस्था और परिहार—दोषवाली रोगावस्था को सोचकर तूं संयमाराधन के अवसर को भली—भाँति जान ।

‘ एवं जाणिन्तु ’ इत्यादि—हे मेधावी !—हे सर्वविरतिसम्पन्न ! हे परमार्थना भाणुकार मुनि ! कोई પણ स्वजनादिक એક બીજાને ત્રાણ અને શરણ માટે સમર્થ બનતા નથી. આ પ્રકારે પૂર્વોક્ત રીતિથી પ્રત્યેક પ્રાણીના સુખ દુઃખને બાણીને અર્થાત્ ‘ પોતાના કરેલા પાપ પુન્યના ફળ અવશ્ય ભોગવવા પડે છે ’ એવું સમજીને તથા અવસ્થાને પણ અનભિક્રાન્ત દેખીને, તથા જ્યાં સુધી રોગાદિકનો ઉદય થયો નથી, બધી ઈન્દ્રિયો પોતપોતાની શક્તિમાં સમર્થ છે, અને સ્વજનાદિએ છોડેલ નથી, અર્થાત્ જ્યાંસુધી સ્વજનાદિ આદર કરે છે ત્યાંસુધી આત્માનું શ્રેય સાધી લેવું જોઈએ. એવી અવસ્થાને અર્થાત્ પરિવાદદોષયુક્ત વૃદ્ધાવસ્થા, પોષણદોષવાળી બાલ્યાવસ્થા અને પરિહારદોષવાળી રોગાવસ્થાને સોચીને તું સંયમારાધનના અવસરને ભલિભાંતિ બાણ.

ચાહે સુખી હો ચાહે દુઃખી હો-પ્રત્યેક મનુષ્ય કો અપને કૃત-કિયે હુણ શુભાશુભ કર્મ કે ફલ કા ભોગ અવશ્ય ભોગના પડતા હૈ । યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ વિના ફલ દિયે કર્મ કભી ભી નષ્ટ નહીં હોતે । આત્મા કો જો પૌદ્ગલિક વર્ગણાઈ પરતન્ત્ર કરતી હૈં, ઉનકા નામ હી કર્મ હૈ । ઇસ લોક મેં કજ્જલ કી કુષ્પી કી તરહ સર્વત્ર કાર્મણવર્ગણાઈ ભરી હુઈ હૈં-યે પૌદ્ગલિક હૈં । આત્મા કે ક્રોધાદિ કષાયોં કે નિમિત્ત સે ઉનમેં સ્થિતિબન્ધ ઔર અનુભાગબન્ધ રૂપ ફલ દેને કી શક્તિ આતી હૈ । કર્મબન્ધ કી શાસ્ત્રકારોંને ૪ પ્રકાર કી અવસ્થાઈ બતલાઈ હૈં । ૧ પ્રકૃતિ-બન્ધ, ૨ સ્થિતિબન્ધ, ૩ અનુભાગબન્ધ ઔર ૪ પ્રદેશબન્ધ । જ્ઞાનાવરણીયા-દિક અષ્ટવિધ કર્મોં મેં આત્મા કે ઉન ૨ ગુણોં કે ઘાત કરને કી જો શક્તિ હૈં ઉસ કા નામ પ્રકૃતિબન્ધ હૈ । પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવ કા હૈ । જિસ પ્રકાર નીમકા સ્વભાવ કડુવા હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે જ્ઞાન ગુણ કો ઘાત કરને કા હોના હૈ, દર્શના-વરણીય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે દર્શનગુણ કો ઘાત કરને કા હૈ, વેદ-નીય કર્મકા સ્વભાવ આત્મા કો સુખ ઔર દુઃખ દેનેકા હૈ, મોહનીય કર્મકા સ્વભાવ, આત્માકે સ્વભાવ કો પરપદાર્થોં મેં ગૃહ્થ બનાને કા હૈ,

ભલે સુખી હાંચ યા દુઃખી પ્રત્યેક મનુષ્યને પોતાના કૃત-કરેલા શુભાશુભ કર્મના ફળને ભોગવવુ પડે છે એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે ફળ આપ્યા વિના કર્મ કોઈ વખત નાશ થતા નથી

આત્માને પૌદ્ગલિક વર્ગણા પરતન્ત્ર કરે છે તેનું નામ જ કર્મ છે આ લોકમા કાજળની શીશી માફક સર્વત્ર કાર્મણ વર્ગણાઓ ભરેલી છે એ પૌદ્ગ-લિક છે. આત્માના ક્રોધાદિ કષાયોના નિમિત્તથી તેમા સ્થિતિબધ અને અનુભાગ બધરૂપ ફળ દેવાની શક્તિ આવે છે કર્મબધની શાસ્ત્રકારોએ ૪ પ્રકારની અવ-સ્થાઓ બતાવેલી છે. ૧ પ્રકૃતિબધ, ૨ સ્થિતિબધ, ૩ અનુભાગબધ, અને ૪ પ્રદેશબધ. જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટવિધ કર્મોમા આત્માના તે તે ગુણની ઘાત કરવાની જે શક્તિ છે તેનું નામ પ્રકૃતિબધ છે પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવનું છે. જેમ લીળડાનો સ્વભાવ કડવો હોય છે તે પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના જ્ઞાનગુણનો ઘાત કરવાનું હોય છે દર્શનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના દર્શનગુણનો ઘાત કરવાનો છે વેદનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માને સુખ અને દુઃખ આપવાનો છે. મોહનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના સ્વભાવને પરપદાર્થોમાં

आयु कर्मका स्वभाव नियत समय तक जीवको उस २ पर्यायमें रोक रखने का है, नाम कर्मका स्वभाव चित्रकार की तरह शरीरादिकों को अनेक रूपमें परिणमाने का है, गोत्रका स्वभाव ऊँच नीच कुलमें पैदा कराने का तथा अन्तराय कर्म का स्वभाव आत्मा के वीर्य के घात करने का है। प्रदेशबन्ध वह है—जिसकी वजह से दूध और पानी की तरह आत्मा और कर्म के अनन्तानन्त प्रदेशों का एकीभाव जैसा संबंध हो जाता है। यह दोनों प्रकार का बंध, मन वचन काय के योगों से होता है। स्थितिबंध—कर्मों में आत्मा के साथ रहने की मर्यादा को कहते हैं। फल देने की शक्ति की हीनाधिकता को अनुभागबंध कहते हैं। ये स्थितिबंध और अनुभागबंध कषायों से होते हैं। कर्मोंका आत्माके साथ बंध होता है, इसका यह मतलब नहीं है कि आत्मा कर्म हो जाता है, अथवा कर्म आत्मा रूप हो जाते हैं। प्रत्येक द्रव्यमें एक अगुरु—लघु नामकी शक्ति रह करती है, जिसकी वजह से एक द्रव्य दूसरे द्रव्यरूप नहीं हो सकता। इस शक्ति के सद्भाव से प्रत्येक द्रव्य अपनेस्वरूप में सदा कायम बना रहता है। हर एक द्रव्य में इन छह गुणों का कि जिनको सामान्य गुण कहते हैं सदा निवास रहता है। (१) अस्तित्व—इस गुण के निमित्त से द्रव्य

गृह्ण णनाववानो छे. आयुकर्मनो स्वभाव नियत समय सुधी छवने ते ते पर्या-
यमां रोकी राखवानो छे. नामकर्मनो स्वभाव चित्रकारनी भाइक शरीरादिकोने
अनेक रूपमां परिणुभाववानो छे. गोत्रनो स्वभाव ऊँच नीच कुलमां पैदा कराववानो
अने अन्तराय कर्मनो स्वभाव आत्माना वीर्यनो घात करवानो छे. प्रदेशबंध
ते न छे, जेनी भारइत दूध अने पाणी भाइक आत्मा अने कर्मने अनन्तानन्त
प्रदेशोनो ओकीभाव जेवो संबंध थई जाय छे. ओ णन्ने प्रकारना बंध मन
वचन कायाना योगाथी थाय छे. स्थितिबंध—कर्मोमां आत्माना साथे रहेवानी
मर्यादाने कहे छे, इण देवानी शक्तिनी हीनाधिकताने अनुभागबंध कहे छे.
ओ स्थितिबंध अने अनुभागबंध कषायेथी थाय छे. कर्मनो आत्मा साथे बंध
थाय छे, तेनो ओ मतलब नथी के आत्मा कर्म णनी जाय छे, अथवा कर्म
आत्मारूप णनी जाय छे. प्रत्येक द्रव्यमां ओक अगुरुलघु नामनी शक्ति रह्या
करे छे, जेनी भारइत ओक द्रव्य णीज द्रव्यरूप णनी शक्तुं नथी. आ शक्तिना
सद्भावथी प्रत्येक द्रव्य पोताना स्वरूपमां सदा कायम णनी रहे छे. दरेक द्रव्यमां
आ छ गुणो के जेने सामान्य गुण कहे छे ते सदा निवास करी रहेला छे.
१ अस्तित्व—आ गुणना निमित्तथी द्रव्यनो कोर वणत नाश नथी थतो.

કા કમી નાશ નહીં હોતા, (૨) વસ્તુત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય ક્ષણ ૨ મેં કુછ ન કુછ કામ કિયા હી કરતા હૈ । (૩) દ્રવ્યત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય મેં એકસી વ ભિન્ન પ્રકાર કી અવસ્થાએ બદલા કરતી હૈ, (૪) અગુરુલઘુત્વ-ઇસકે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય સદા અપની મર્યાદા મેં હી રહતા હૈ-કોઈ ભી ઇસકા ગુણ દૂસરે ગુણરૂપ નહીં હો સકતા, કોઈ દૂસરા ગુણ ભી ઇસમેં બાહર સે આકર નહીં મિલ સકતા, (૫) પ્રદેશવત્ત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્યકા કોઈ ન કોઈ આકાર અવશ્ય હોતા હૈ, (૬) પ્રમેયત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય કિસી ન કિસી જ્ઞાનકા વિષય હોતા રહતા હૈ ।

આત્મા ઓર પુદ્ગલ મેં એક એસી વૈભાવિક શક્તિ હૈ કિ જિસસે યે દોનોં અનાદિકાલ સે અન્યોન્યસંપૃક્ત હોને કે કારણ સ્વભાવ સે અન્યથા હોને રૂપ વિભાવ અવસ્થા મેં પડે હુએ હૈ । ઇનકી યહ વિભાવ અવસ્થા અનાદિકાલ કી હૈ-આજ નર્દ પૈદા નહીં હુઈ હૈ, ઇસી સે જીવ મેં પુદ્ગલ કે નિમિત્ત સે વિભાવ-અન્યથાભાવ રૂપ પરિણમન ઓર વિભાવ-દશાસંપન્ન જીવ કે નિમિત્ત સે પુદ્ગલ મેં વિભાવ-(કર્મ)-રૂપ પરિણમન હુઆ કરતા હૈ । ઇનકા યહ પરિણમન અનાદિકાલકા હૈ-આજકા નહીં ।

૨ વસ્તુત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્ય ક્ષણ-ક્ષણમા કાંઈને કાંઈ કામ કર્યા જ કરે છે ૩ દ્રવ્યત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યમાં એક અને ભિન્ન પ્રકારની અવસ્થાઓ બદલ્યાં કરે છે ૪ અગુરુલઘુત્વ-એના નિમિત્તથી દ્રવ્ય સદા પોતાની મર્યાદામાં જ રહે છે, કોઈ પણ તેનો ગુણ બીજા ગુણરૂપ બની શકતો નથી, અને બીજો ગુણ પણ તેમા બહારથી આવી મળી શકતો નથી ૫ પ્રદેશવત્ત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યનો કોઈ ને કોઈ આકાર અવશ્ય થાય છે ૬ પ્રમેયત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્ય કોઈ ને કોઈ જ્ઞાનનો વિષય થઈ રહે છે

આત્મા અને પુદ્ગલમા એક એવી વૈભાવિક શક્તિ છે કે જેનાથી એ બન્ને અનાદિ કાળથી અન્યોન્ય સંયુક્ત હોવાને કારણે સ્વભાવથી અન્યથા હોવારૂપ વિભાવ અવસ્થામા પડેલ છે, તેની આ વિભાવ અવસ્થા અનાદિ કાળની છે. આજ નવી પેદા થયેલ નથી.

એનાથી હવમા પુદ્ગલના નિમિત્તથી વિભાવ-અન્યથા ભાવરૂપ પરિણમન અને વિભાવદશાસંપન્ન હવના નિમિત્તથી પુદ્ગલમા વિભાવ-(કર્મ)-રૂપ પરિણમન થયા કરે છે. તેનું આ પરિણમન અનાદિ કાળનું છે. આજનું નહિ.

પ્રશ્ન—યદિ આત્મા પહેલે શુદ્ધ થા એસા માન લિયા જાવે તો ક્યા હાનિ હૈ ?

ઉત્તર—બડી ભારી હાનિ હૈ । ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા મેં કર્મ કે સંબંધ કે પહિલે આત્મા શુદ્ધ ઠહેરેગા, ઓર ફિર ઉસકો કર્મકા સંબંધ માનને સે સિદ્ધાત્માઓં કો ભી કર્મ કા સંબંધ માનના પડેગા । એસા તો હૈ નહીં—શુદ્ધ મેં અશુદ્ધતા આસકતી નહીં । સિદ્ધ અવસ્થા શુદ્ધ અવસ્થા હૈ । અશુદ્ધ સે શુદ્ધ હોતા હૈ, ઇસીલિયે બન્ધ સે હી મોક્ષ કહા ગયા હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મ કે ફલ દેને કી કોઈ વિશેષ વિધિ હૈ ?

ઉત્તર—હાં, હૈ । જબ કર્મ બંધતે હૈં તવ ઉનકે પકને કે લિયે કુછ કાલ ચાહિયે, બાંધે હુએ કર્મ ઉસી સમય ઉદયમેં નહીં આને લગતે । ઇનકા હિસાબ તો ચેતમેં પડે હુએ વીજ કી તરહ હૈ । જિસ પ્રકાર ચેત મેં વોયા ગયા વીજ કુછ કાલ કે વાદ હી પકતા હૈ ઠીક ઇસી પ્રકાર બાંધે હુએ કર્મ કો પકને મેં ભી સમય લગતા હૈ । ઇસ સમયકા નામ અવાધાકાલ હૈ । ઇસ અવાધાકાલ કા યહ હિસાબ હૈ કિ—એક કોડા-કોડી સાગર કી સ્થિતિવાલે કર્મ મેં ઉસકા અવાધાકાલ ૧૦૦ વર્ષ કા પડતા હૈ, સત્તર ૭૦ કોડાકોડી સાગર કી સ્થિતિવાલે મોહકર્મ મેં ૭૦૦૦ વર્ષકા

પ્રશ્ન—કહાય આત્મા પહેલાં શુદ્ધ હતો તેમ માની લેવામાં આવે તો શું હરકત છે ?

ઉત્તર—ઘણી ભારી હાનિ છે. આ પ્રકારની માન્યતામાં કર્મના સંબંધના પહેલા આત્માને શુદ્ધ માનવું પડશે. અને પછી તેને કર્મનો સંબંધ માનવાથી સિદ્ધાત્માઓને પણ કર્મનો સંબંધ માનવો પડશે. એવું તો છે નહિ. શુદ્ધમાં અશુદ્ધતા આવી શકતી નથી. સિદ્ધ અવસ્થા શુદ્ધ અવસ્થા છે અશુદ્ધથી શુદ્ધ છે. માટે બંધથી જ મોક્ષ કહેવાય છે.

પ્રશ્ન—કર્મના રૂળ દેવાની બીજી કોઈ વિશેષ વિધિ છે ?

ઉત્તર—હા. છે. જ્યારે કર્મ બંધાય છે ત્યારે તેને પાકવા માટે થોડો વખત જોઈએ, બાંધેલા કર્મ તે વખત ઉદયમાં આવવા લાગતા નથી તેનો હિસાબ તો ખેતરમાં પડેલા બી માફક છે. જે પ્રકારે ખેતરમાં વાવેલા બી થોડા વખત પછી પાકે છે તે પ્રકારે બાંધેલા કર્મને પાકવામાં પણ થોડો વખત લાગે છે. તે સમયનું નામ અબાધાકાલ છે. આ અબાધાકાલનો એ હિસાબ છે કે એક કોડાકોડી સાગરની સ્થિતિવાળા કર્મમાં તેની અબાધા ૧૦૦ વર્ષની પડે છે ૭૦ કોડાકોડી સાગરની સ્થિતિવાળા મોહકર્મમાં ૭૦૦૦ વર્ષનો અબાધાકાલ

અવાધાકાલ પડતા હૈ। ઇસ હિસાબસે કરોડ સાગર કી સ્થિતિવાલે કર્મકા અવાધાકાલ અન્તર્મુહર્ત માત્ર હી પડેગા, ઇસસે યહ બાત જાની જાતી હૈ કિ-જિતને કર્મ સ્થિતિ કે કર્મ બંધેંગે, વે જલ્દી ફલ દેને કો તૈયાર હો જાવેંગે, ઓર યહી વજહ હૈ કિ ઇસી ભવમેં બાંધે હુઅ કર્મ જીવ કો ઇસી ભવમેં ઉદય આ જાતે હૈં ।

પ્રશ્ન—બાંધે હુઅ કર્મકા વૈસા હી ફલ મિલતા હૈ? યા ઉસ મેં કુછ પરિવર્તન ભી હો સકતા હૈ? ।

ઉત્તર—જીવોં કે પરિણામોં કે નિમિત્ત સે ફલોપભોગ મેં પરિવર્તન ભી હો જાતા હૈ। ઉસ પરિવર્તન કો-ઉત્કર્ષણ, અપકર્ષણ, સંક્રમણ, ઓર ઉદીરણા કહતે હૈં । બાંધે હુઅ કર્મોં કી સ્થિતિ યા ઉનકે અનુભાગ મેં જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્તસે જો વૃદ્ધિ હો જાતી હૈ ઉસે ઉત્કર્ષણ કહતે હૈં । પહિલે બાંધે હુઅ કર્મોં કી સ્થિતિ વ અનુભાગ મેં જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે જો ઘટતી હોતી હૈ ઉસે અપકર્ષણ કહતે હૈં । જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે પાપ કા પુણ્ય મેં યા પુણ્ય કા પાપ મેં જો પરિવર્તન-બદલના હોતા હૈ ઉસકા નામ સંક્રમણ હૈ । કિન્હીં કર્મોં કો કિસી નિમિત્ત કે વશ અપની ઠીક સ્થિતિ કે પહિલે ઉદય મેં લાકર રખા દેનેકા નામ ઉદીરણા હૈ ।

પડે છે આ હિસાબથી કરોડ સાગરની સ્થિતિવાળા કર્મનો અવાધાકાળ અન્તર્મુહર્ત માત્ર જ પડે છે. આથી તે વાત જણાય છે કે જેટલો થોડો સ્થિતિનો કર્મ બંધાશે તેટલો જલ્દી ફળ દેવાને તૈયાર થઈ જશે, અને એજ કારણથી આ ભવમાં બાંધેલા કર્મ જીવને આ ભવમાં ઉદય આવે છે

પ્રશ્ન—બાંધેલા કર્મનું તેવું જ ફળ મળે છે અગર તેમાં કાંઈ પરિવર્તન પણ થાય છે ?

ઉત્તર—જીવોના પરિણામોના નિમિત્તથી ફલોપભોગમાં પરિવર્તન પણ થઈ જાય છે, આ પરિવર્તનને-ઉત્કર્ષણ, અપકર્ષણ, સંક્રમણ, અને ઉદીરણા કહે છે બાંધેલા કર્મોની સ્થિતિ અગર તેના અનુભાગમાં જીવોના ભાવોના નિમિત્તથી જે વૃદ્ધિ થાય છે તેને ઉત્કર્ષણ કહે છે પહેલા બાંધેલા કર્મોની સ્થિતિ અને અનુભાગમાં જીવોના ભાવોના નિમિત્તથી જે ઘટતી થાય તેને અપકર્ષણ કહે છે. જીવોના ભાવોના નિમિત્તથી પાપનો પુણ્યમાં, અને પુણ્યનો પાપમાં જે પરિવર્તન થાય છે, તેનું નામ સંક્રમણ છે. કોઈ કર્મને કોઈ નિમિત્તના કારણથી ચોટાની ઠીક સ્થિતિના પહેલાં ઉદયમાં લાવીને જે ખાવાની નાંખે છે તેનું નામ ઉદીરણા છે

इन कर्मों की उत्तर प्रकृतियां कितनी हैं ? और उनका क्या स्वरूप है ? तथा देशघाति और सर्वघाति, पुण्यरूप और पापरूप प्रकृतियां कितनी और कौन २ हैं ? तथा देशघाति प्रकृतियां में सर्वघाति स्पर्द्धक कितने हैं ? इत्यादि समस्त बातोंका विचार शास्त्रों में अच्छी तरह किया गया है । इस प्रकार कर्मों का संक्षेप में स्वरूप समझ कर यह प्रकट किया है कि इसी कर्म के निमित्त से आत्मा इस संसार में भटकता और अनेक दुःखों को सहन करता रहता है । कर्म आत्मा को संसार में भ्रमाता है । आत्मा भी स्वयं इनका निमित्त पाकर संसार में भ्रमता रहता है । कर्मों से दुःखी होनेवाले जीव ही संसारी हैं । वे सदा इस संसार में इसी की वजह से भ्रमण किया करते हैं । इस के इस परिभ्रमण को देख कर ज्ञानीजन इसे संबोधन करते हुए कहते हैं कि—

“ आघ्रातं मरणेन जन्म जरया विद्युच्चलं यौवनं,
सन्तोषो धनलिप्सया शमसुखं भोगाशया देहिनाम् ।
लोकैर्मत्सरिभिर्गुणा वनभुवो व्यालैर्नृपा दुर्जनै,—
रस्थैर्येण विभूतिरप्यपहृता ग्रस्तं न किं केन वा ? ” ॥१॥

આ કર્મોની ઉત્તર પ્રકૃતિઓ કેટલી છે ? અને તેનું શું સ્વરૂપ છે ? તથા દેશ-
ઘાતિ અને સર્વઘાતિ પુણ્યરૂપ અને પાપરૂપ પ્રકૃતિઓ કેટલી અને કઈ કઈ છે ?
તથા દેશઘાતિ પ્રકૃતિઓમાં સર્વઘાતિસ્પર્દ્ધક કેટલાં છે ? ઇત્યાદિ સમસ્ત વાતોનો
વિચાર શાસ્ત્રોમાં સારી રીતે કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકાર કર્મોનો સંક્ષેપમાં
સ્વરૂપ સમજીને એવું પ્રગટ કરેલ છે કે આ કર્મના નિમિત્તથી આત્મા આ
સંસારમાં ભટકતો અને અનેક દુઃખોને સહન કરતો રહે છે. કર્મ આત્માને
સંસારમાં ભ્રમાવે છે. આત્મા પણ સ્વયં તેનો નિમિત્ત બનીને સંસારમાં ભ્રમતો
રહે છે. કર્મોથી દુઃખી થવાવાળા જીવ સંસારી છે. તે સદા આ સંસારમાં એજ
કારણથી ભ્રમણ કર્યા કરે છે. તેના આ પરિભ્રમણને દેખીને જ્ઞાની જન તેને
સંબોધન કરીને કહે છે કે:—

“ આઘ્રાતં મરણેન જન્મ જરયા વિદ્યુચ્ચલં યૌવન,
સન્તોષો ધનલિપ્સયા શમસુખં ભોગાશયા દેહિનામ્ ।
લોકૈર્મત્સરિભિર્ગુણા વનભુવો વ્યાલૈર્નૃપા દુર્જનૈ,—
રસ્થૈર્યેણ વિભૂતિરપ્યપહૃતા ગ્રસ્તં ન કિં કેન વા ? ” ॥૧॥

હે સંસાર કે જીવોં ! કહો ઢુનિયામેં એસી કૌનસી વસ્તુ હૈ જો નિર્ભય હો । દેઁવો-મૃત્યુને જન્મકો, બુઢાપે ને વિજલી કે સમાન ચંચલ યુવાવસ્થા કો, ધન કી તૃષ્ણા ને સંતોષ કો, ભોગોં કી આશાને માનસિક શાંતિ કો, મત્સર-ભાવવાલે ઢુર્જનોં ને ગુણોં કો, સર્પ ઔર હિંસકોં ને જંગલી જાનવરોં કો, ઢુષ્ટોં ને રાજાઓં કો ઔર અસ્થિરતા ને ઐશ્વર્ય કો ખયભીત કર રહ્યા હૈ । એક કો એકકા ખય લગ્યા હુઆ હૈ । એકસે એક ગ્રસિત હૈ, ફિર ઇસમેં શાંતિ કી ભાવના રખના માનોં કૂપ કે કિનારે પર બૈઠ કર નિર્ભયતાકે સાથ ઝંઘના જૈસા હૈ । ઇસી લિયે તો જ્ઞાની પદ પદ પર સંબોધિત કર કહતે રહતે હૈં કિ-અરે ભવ્ય !

“ તત્ત્વં ચિન્તય સતતં ચિત્તે, પરિહર ચિન્તાં નશ્વરવિત્તે ”

સદા તૂં સારાસાર કા વિચાર કરતા રહ । ક્યોં નાશવાન ધનાદિક કી ચિન્તા સે વ્યર્થ હી અપને કો વ્યાકુલ કિયા કરતા હૈ ?, ક્યા તુજે પતા નહીં કિ જિસ પ્રકાર માંસકે ઝપર ગીધ મંડરાયા-ઘૂમા-કરતે હૈં ઁસી પ્રકાર તુજે રાને કે લિયે યહ કાલ તેરે શિર પર મંડરા-ઘૂમ-રહ્યા હૈ । લોગોં કો તૂ મરતે હુએ નિત્ય દેઁવતા હૈ, પ્રત્યેક દિવસ વૃદ્ધોં કો અસહ્ય કષ્ટ કી યાતનાઓં સે પીડિત નિહારતા હૈ ઔર સંસાર કો ખી

હે સંસારી જીવો ! કહો ઢુનીયામા એવી કઈ વસ્તુ છે કે જે નિર્ભય છે. દેખો મૃત્યુનો જન્મને, ઘડપણનો વિજળી સમાન ચંચળ યુવાવસ્થાને, ધનની તૃષ્ણાનો સંતોષને, લોગની આશાનો માનસિક શાંતિને, મત્સરભાવવાળા ઢુર્જનોનો ગુણને, સર્પ અને હિંસકોનો જંગલી જાનવરોને, ઢુષ્ટોનો રાજાઓને, અને અસ્થિરતાનો ઐશ્વર્યને મહાભય છે. એકને એકનો ભય લાગેલો છે. એકથી એક ગ્રસિત છે, પછી તેમાં શાંતિની ભાવના રાખવી કુવાના કિનારા ઉપર એસીને નિર્ભયતાની સાથે ઉંઘ લેવા ખરાખર છે. માટે તો જ્ઞાની પદે પદે સંબોધિત કરી કરીને કહેતા રહે છે કે અરે ભવ્ય !

“ તત્ત્વં ચિન્તય સતતં ચિત્તે, પરિહર ચિન્તા નશ્વરવિત્તે ”

સદા તુ સારાસારનો વિચાર કરતો રહે, કારણ કે નાશ થનારા ધનાદિકની ચિન્તાથી વ્યર્થ પોતાની જાતને વ્યાકુલ બનાવીશ નહિ શું તને ખબર નથી કે જેવી રીતે માંસ ઉપર ગીધ અવારનવાર ઘૂમ્યા કરે છે તે પ્રકારે તને ખાવા માટે કાલ તારા શિર ઉપર ઘૂમી રહ્યો છે. કોકોને મરતા તુ નિત્ય જુવે છે. પ્રત્યેક દિવસ વૃદ્ધોને અસહ્ય કષ્ટની યાતનાઓથી પીડિત લાગે છે, અને સંસારીજીવોને પણ તરેહ તરેહના ભયોથી ઘેરાયેલા અને નાના પ્રકારના સકટોને સહન કરતા

પ્રયત્નમાનો હિ યથોપાયાન્ પશ્યતિ તથા નાપાયાન્ । અર્થાતુરો હિ ન સ્વજનાદિક-
મપિ ગણયતિ તમપિ વશ્ચયતિ । પુનરર્થાલોભી કીદૃશો ભવતીત્યાહ—“ વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ”
ઇતિ, વિ=વિવિધં નિવિષ્ટસ્ અનેકધા સ્થિતં ધનાર્જને ચિત્તં યસ્ય સ વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ।

યદ્વા—માતાપિત્રાદ્યભિસમ્બન્ધે વિનિવિષ્ટં ચિત્તમન્તઃકરણં યસ્ય સ વિનિ-
વિષ્ટચિત્તઃ, સતતં તસ્ય ચિત્તે ધનલાભાભિનિવેશ ઉપજાયત ઇતિ ભાવઃ । એવંભૂતઃ
કિં કરોતીત્યાહ—“ અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ ” ઇતિ । અત્ર=અસ્મિન્ માતાપિતૃભ્રાતૃ-
ભગિની-ભાર્યા-પુત્ર-દુહિતૃ-સ્તુપા-મિત્ર-પિતૃવ્ય-શ્વશુર-હસ્ત્ય-શ્વાદિકે, ગન્ધાદિ-
કામગુણે વા વિનિવિષ્ટચિત્તઃ શસ્ત્રે=ષડ્જીવનિકાયોપમર્દનલક્ષણે પુનઃ પુનઃ પ્રવર્તતે ।
રાગાદ્યાવિષ્ટચેતા સંયોગાર્થી અર્થાલોભી આલુમ્પઃ સહસ્રાકારસ્તત્ર વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ષડ્-
જીવનિકાયસ્યારમ્ભે વારં વારં પ્રવર્તત ઇતિ સૂત્રાશયઃ ॥ ૧ ॥

ધન કમાને કે ઉપાયોં કી ઓર દેખતા હૈ ઉસ પ્રકાર સે કષ્ટોં કી તરફ
નહીં દેખતા, અર્થાત્ પ્રાણી અપને નિજ જન કી ભી ઇજ્જત નહીં કરતા,
પ્રત્યુત ઉન્હેં ભી ઠગને કી ફિરાક મેં રહતા હૈ । ક્યોંકિ વહ “ વિનિવિષ્ટ-
ચિત્તઃ ” અનેક પ્રકાર સે ધન કે ઉપાર્જન કરને મેં આસક્તચિત્તવાલા
હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર વહ “ અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ ” માતા, પિતા, માઈ,
બહિન, સ્ત્રી, પુત્ર, પુત્રી, વહુ, મિત્ર, કાકા, સસુર ઓર હસ્તિ આદિ
પદાર્થોં મેં અથવા શબ્દાદિકવિષયોં મેં વિનિવિષ્ટચિત્ત-તહીંન બનકર
ષડ્જીવનિકાય કે ઉપમર્દનરૂપ શસ્ત્રમેં વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ ।
ઇસ સૂત્ર કા ફલિતાર્થ યહ હુઆ કિ રાગાદિકોં મેં તહીંનચિત્તવાલા
સંયોગાર્થી, અર્થાલોભી, આલુમ્પ સહસ્રાકારી પ્રાણી, ઉન ૨ પદાર્થોં મેં
નત્પર હોકર ષડ્જીવનિકાય કે આરંભ મેં વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ॥૧॥

ઉપાયો તરફ જ દેખે છે તે પ્રમાણે કષ્ટો તરફ દેખતો નથી અર્થાત્ પ્રાણી પોતાના
નિજ જનની પણ ઇજ્જત કરતો નથી, ઉદ્દુ તેને પણ લુટવાની ફિકર કરે છે,
કારણકે તે “ વિનિવિષ્ટચિત્ત ” અનેક પ્રકારથી ધન ઉપાર્જન કરવામા આસક્ત-
ચિત્તવાળો થાય છે. આ પ્રકારે તે “ અત્ર શસ્ત્રે પુન પુન. ” માતા, પિતા,
ભાઈ, બહિન, સ્ત્રી, પુત્ર, પુત્રી, વહુ, મિત્ર, કાકા, સસરા અને હસ્તિ આદિ
પદાર્થોમા અથવા શબ્દાદિકવિષયોમા વિનિવિષ્ટચિત્ત-તહીંન બનીને ષડ્જીવ-
નિકાયના ઉપમર્દનરૂપ શસ્ત્રમા વારવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે આ સૂત્રનો ફલિતાર્થ
એ થાય છે કે રાગાદિકોમા તહીંનચિત્તવાળા સંયોગાર્થી, અર્થાલોભી, આલુમ્પ
હસાકારી પ્રાણી તેવા પદાર્થોમા તત્પર બનીને ષડ્જીવનિકાયના આરંભમાં
વારવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે. ૧

તરહ ૨ કે ભયોંસે ઘિરા હુઆ એવં નાના પ્રકાર કે સંકટોં કો ફેલતા હુઆ તું સ્વયં અપની આંખોંસે દેખતા હૈ, ફિર મી તું વિષય રૂપ ચારે કે લોભ સે મમતા કે કાંટે મેં ફાંસ કર અપના નાશ કર રહા હૈ। મછલી ઓર બન્દર કી તરહ બન્ધન મેં ફાંસતા હુઆ મી વહાં સે નહીં નિકલના ચાહતા। કયા તુજે નહીં માલૂમ કિ તેરી મી એક દિન યહી દશા હોને-વાલી હૈ, અતઃ યહી અવસર કલ્યાણ કરને કા હૈ। કહા મી હૈ—

“ યાવત્સ્વસ્થમિદં કલેવરગૃહં યાવચ્ચ દૂરે જરા,
યાવચ્ચેન્દ્રિયશક્તિરપ્રતિહતા યાવત્ક્ષયો નાયુષઃ।
આત્મશ્રેયસિ તાવદેવ વિદુષા કાર્યઃ પ્રયત્નો મહાન્,
પ્રોદીપ્તે ભવને તુ કૂપસ્થનનં પ્રત્યુદયઃ કીદૃશઃ ? ” ॥ ૧ ॥

હે ભવ્ય ! જબ તક તેરા યહ શરીર ટીક હાલત મેં હૈ, ઇસમેં કોઈ મી રોગ ને નિવાસ નહીં કિયા હૈ, જબ તક બુઢાપા દૂર હૈ, જબ તક ઇન્દ્રિયોં કી શક્તિ બની હુઈ હૈ, જબ તક આયુ કે દિન બાંકી હૈ, તબ તક તું આત્મ-કલ્યાણ કરને કી ચેષ્ટા અચ્છી તરહ કરતા રહ। ઘર જલને પર કૂપ ઓદને સે કયા લાભ ? ॥ ૧ ॥

ઇન પૂર્વોક્ત વાતોં કો ધ્યાનમેં રાખતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘ એવં જાણિત્તુ ’ ઇત્યાદિ। ‘ હે પંડિત ! ’ ઇસ શબ્દ કે અર્થ કા ટીકાકાર—

તું સ્વયં પોતાની આંખોથી દેખે છે, છતાં તું વિષયના લોભથી મમતાના કાંટામાં ફસી પોતાનો નાશ કરી રહ્યો છે. માછલી અને વાંદરાની માફક તું બંધનમાં ફસેલો પણ ત્યાંથી બહાર નીકળવા આહતો નથી. શું તને ખબર નથી કે તારી પણ એક દિવસ આ દશા થવાની છે. માટે એજ અવસર કલ્યાણ કરવાનો છે. કહ્યું પણ છે—

“ યાવત્સ્વસ્થમિદં કલેવરગૃહં યાવચ્ચ દૂરે જરા,
યાવચ્ચેન્દ્રિયશક્તિરપ્રતિહતા યાવત્ક્ષયો નાયુષઃ।
આત્મશ્રેયસિ તાવદેવ વિદુષા કાર્યઃ પ્રયત્નો મહાન્,
પ્રોદીપ્તે ભવને ચ કૂપસ્થનનં પ્રત્યુદયઃ કીદૃશઃ ? ” ॥ ૧ ॥

હે ભવ્ય ! જ્યાં સુધી આ તારું શરીર સારી હાલતમાં છે, તેમા કેઈ પણ રોગે નિવાસ નથી કર્યો, જ્યાં સુધી ઘડપણ દૂર છે, જ્યાં સુધી ઇન્દ્રિયોની શક્તિ બની રહી છે, જ્યાં સુધી આયુના દિવસો બાકી છે, ત્યાં સુધી તું આત્મ-કલ્યાણ કરવાની ચેષ્ટા સારી રીતે કરતો રહે. ઘર બળવા લાગે ત્યારે કુવો ખોદવાનો શું અર્થ ? ॥ ૧ ॥

આ પૂર્વોક્ત વાતોને ધ્યાનમાં રાખીને સૂત્રકાર કહે છે—“ એવં જાણિત્તુ ” ઇત્યાદિ. ‘ હે પંડિત ! ’ આ શબ્દના અર્થનું ટીકાકાર—હે મેધાવી !, હે સર્વવિરતિસંપન્ન

હે મેધાવી ! હે સર્વવિરતિસંપન્ન ! હે પરમાર્થજ્ઞ ! इन तीन पदों से विवेचन करते हैं। सार और असारतत्त्व का विवेचन करनेवाली बुद्धि का नाम मेधा-प्रज्ञा है। इसके बलपर ही प्राणी 'उपादेय क्या वस्तु है ? हेय क्या है ?' इस बात का विचार कर सकता है। इस पवित्र विचारधारा से उसकी आत्मामें भेदविज्ञान जागृत होता है। इससे वह यह भली भांति जान लेता है कि "एगो हं नत्थि मे कोई" "मैं स्वतंत्र एक हूं, मेरा इस संसार में कोई नहीं है। इन पर-पदार्थों का केवल मेरे साथ संयोग संबंध है, तादात्म्य संबंधवाले ज्ञानादिगुण मेरी आत्मा के साथ सदा रहनेवाले हैं। इन संयोगी पदार्थों का नियम से वियोग होगा, जिनका तादात्म्य संबंध है वे तो इस आत्मा से त्रिकाल में भी दूर नहीं हो सकते। जो अपना निज गुण है वही हमें उपादेय है, बाकी हेय हैं" इस प्रकार की विशुद्ध भावना से उसकी आत्मा में उन पदार्थों से वैराग्यवृत्ति उत्पन्न होती है, इस वैराग्यवृत्ति से आत्मा में कोई अपूर्व वीर्योल्लास पैदा होता है, इसकी वजह से आत्मा से अनंतानुबंधी चोकड़ी का और दर्शनमोहनीय की प्रकृतियों का क्षय, क्षयोपशम या उपशम होता है। इसी परिस्थिति में इसे उपशम क्षयोपशम या क्षायिक समकित पैदा हो जाता है। अभी आत्मा में चारित्रमोहनीय कर्म की सत्ता मौजूद है,

હે પરમાર્થજ્ઞ !, આ ત્રણ પદોથી વિવેચન કરે છે-સાર અને અસાર તત્ત્વનું વિવેચન કરવાવાળી બુદ્ધિનું નામ મેધા-પ્રજ્ઞા છે. તેના બળ ઉપર હે પ્રાણી 'ઉપાદેય શું વસ્તુ છે. હેય શું છે' આ વાતનો વિચાર કરી શકે છે. આવી પવિત્ર વિચારધારાથી તેના આત્મામાં ભેદવિજ્ઞાન જાગૃત થાય છે, તેથી તે આ સારી રીતે જાણી લે છે કે-"એગો હં નત્થિ મે કોઈ" "હું એકલો છું માફ આ સંસારમાં કોઈ નથી. આ પર પદાર્થોનો કેવલ મારા આત્માની સાથે સંયોગ સંબંધ છે. તાદાત્મ્ય સંબંધવાળા જ્ઞાનાદિગુણ મારી આત્માની સાથે સદા રહેવાવાળા છે. આ સંયોગી પદાર્થોનું નિયમથી વિયોગ થશે, જેનો તાદાત્મ્ય સંબંધ છે તેઓ તો આ આત્માથી ત્રિકાળમાં પણ દૂર થઈ શકતા નથી. જે પોતાનો નિજગુણ છે તે અમને ઉપાદેય છે, બાકી હેય છે" આવા પ્રકારની વિશુદ્ધ ભાવનાથી તેના આત્મામાં તે પદાર્થોથી વૈરાગ્યવૃત્તિ ઉત્પન્ન થાય છે તે વૈરાગ્ય વૃત્તિથી આત્મામાં કોઈ અપૂર્વ વીર્યોલ્લાસ પેદા થાય છે તેની મારફતે આત્માથી અનંતાનુબંધી ચોકડીનો અને દર્શનમોહનીયની પ્રકૃતિઓનો ક્ષય, ક્ષયોપશમ, અગર ઉપશમ થાય છે. આવી પરિસ્થિતિમાં તેને ઉપશમ, ક્ષયોપશમ, અને ક્ષાયિક સમકિત પેદા થાય છે. હવે આત્મામાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની સત્તા મોજુદ છે,

इससे इसे देशविरति या सर्वविरति की प्राप्ति नहीं हुई है, परन्तु समकित की प्राप्ति होने के बाद ज्यों ही यह आगे बढ़नेका प्रयास करता है त्यों ही इसको या तो देशविरति होती है या सर्वविरति। देशविरति से मुक्ति नहीं, अतः जब यह अपने पुरुषार्थ की दिशाको आगे बढ़ाता है तब सर्वविरति के लाभ से यह अपने को पवित्र करता है और वास्तविक तप संयम का आराधक बन जाता है, अतएव परमार्थज्ञ-परम=उत्कृष्ट जो अर्थ=आत्मा का स्वरूप, उसका ज्ञ=ज्ञाता हो जाता है। देशविरति में आत्मा प्राणातिपातादिक पांच आश्रयोंका एक देशसे त्यागी होता है और सर्व विरतिमें उनका सर्व प्रकार से त्याग हो जाता है। वहां समस्त जीवों पर समताभाव रहता है। आत्माका निजस्वरूप जो ज्ञाता-द्रष्टापना है वह इस तपसंयमकी अवस्था में प्रकट हो जाता है।

सूत्रमें-“दुःखं पक्षेयं सायं” जो पद है वह इस बातकी पुष्टि करता है-यह दुःख और सुख, पाप और पुण्य से होते हैं, अतः “संसार के समस्त प्राणियों को रोगादिक वेदना आदि के समय अपने द्वारा किये गये कर्मका विपाक अवश्य भोगना पड़ता है” ऐसा समझकर हे भव्य ! जब तक अपने शरीरमें रोगादिकों का उदय नहीं होना, और जब तक सचेष्टता बनी हुई है, तथा जब तक स्वजन संबंधी अपने से

तेનાથી તેને દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિ પણ પ્રાપ્ત થયેલ નથી પરંતુ સમકિતની પ્રાપ્તિ થયા બાદ ન્યારે તે આગળ વધવાનો પ્રયાસ કરે છે ત્યારે તેને દેશવિરતિ થાય છે, અથવા સર્વવિરતિ. દેશવિરતિથી મુક્તિ નહિ માટે ન્યારે એ પોતાના પુરુષાર્થની દિશાને આગળ વધારે છે, ત્યારે સર્વવિરતિના લાભથી તે પોતાને પવિત્ર કરે છે, અને વાસ્તવિક તપ સંયમનો આરાધક બની જાય છે, એટલે પરમર્થજ્ઞ-પરમ=ઉત્કૃષ્ટ ને અર્થ=આત્માનું સ્વરૂપ તેનો જ્ઞ=જ્ઞાતા થાય છે. દેશવિરતિમાં આત્મા પ્રાણાતિ પાતાદિક પાંચ આશ્રયોનો એક દેશથી ત્યાગી થાય છે અને સર્વવિરતિમાં તેનો સર્વ પ્રકારથી ત્યાગ થઈ જાય છે. ત્યાં સમસ્ત જીવો ઉપર સમતાભાવ રહે છે. આત્માનું નિજ સ્વરૂપ ને જ્ઞાતા-દ્રષ્ટાપન છે તે આ તપ સંયમની અવસ્થામાં પ્રગટ થઈ જાય છે.

સૂત્રમાં “દુઃખં પક્ષેયં સાયં” ને પદ છે તે આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે-તે દુઃખ અને સુખ પાપ અને પુણ્યથી થાય છે, માટે “સંસારના સમસ્ત પ્રાણીઓને રોગાદિક વેદના આદિના સમયે પોતાનાથી કરેલા કર્મનો વિપાક અવશ્ય ભોગવવો પડે છે.” એવું સમજીને છે ભવ્ય ! ત્યાં સુધી પોતાના શરીરમાં રોગાદિકનો ઉદય નથી થતો. અને ત્યાં સુધી સચેષ્ટતા બનેલ છે, અને ત્યાં સુધી

વિરક્ત નહીં હોતે તબ તક આત્મકલ્યાણ કરને મેં અગ્રસર હો જા, ઔર
 इस संयमाराधनरूप पवित्र कार्यको न छोड़ । क्यों कि-

“हाथ पांवमें जब तक बल है, आंखों में है तेज प्रकाश,
 श्रवणशक्ति है, बुद्धि उपस्थित, रोगादिक का हुआ न त्रास।
 धर्म आचरण करले प्राणी, धरकर मन में उत्तम साज,
 को जाने कल रहा न कल तो, क्यों जाने देते हो आज ॥ १ ॥”

“अनभिक्रान्तं च वयः सम्प्रेक्ष्य”

સમય સમય આયુ ઘટતી હૈ, ક્ષણ ક્ષણ કાયાક્ષીણ હોતી હૈ । જિસ
 प्रकार मिट्टीका ढेला भीजते ही गल जाता है, उसी तरह देखते २ यह
 शरीर गल जाता है, इसलिये तूं अपने आत्म-कल्याण की तरफ प्रवृत्ति
 कर । क्यों कि वय के व्यतीत होने पर परिवाद, पोषण और परिहार
 आदिक दोष उत्पन्न हो जाते हैं । इस लिये उस हालत में संयमका पालन
 अशक्य होता है । इस लिये सूत्रकार कहते हैं कि-जब तक संयम धारण
 करने योग्य अवस्था व्यतीत नहीं हुई है तब तक धर्माचरण रूप अवसर
 को हाथसे मत जाने दो, अर्थात् यही अवस्था है जिसमें प्राणी धर्माचरण
 कर सकता है । सूत्र में ‘च’ शब्द अर्थान्तर का बोधक है इस से यह

સ્વજન સળાંધી પોતાનાથી વિરક્ત નથી થતાં ત્યાં સુધી આત્મકલ્યાણ કરવામાં
 અગ્રસર બની બ, અને આ સંયમારાધન રૂપ પવિત્ર કાર્યને ન છોડ, કારણ કે-

“हाथ पांवमें जब तक बल है, आंखोंमें है तेजप्रकाश,
 श्रवणशक्ति है, बुद्धि उपस्थित, रोगादिकका हुआ न त्रास ।
 धर्म आचरण कर ले प्राणी, धरकर मनमें उत्तम साज,
 को जाने कल रहा न कल तो, क्यों जाने देते हो आज ॥ १ ॥”

“अनभिक्रान्तं च वयः सम्प्रेक्ष्य”

સમય સમય આયુ ઘટે છે, કાણે કાણે કાયા ક્ષીણ થાય છે. જેમ માટીનું
 ढेकु पाणी लागता २ गणी बय છે તેમ દેખતાં દેખતાંમાં આ શરીર ગળી
 બય છે, માટે તું પોતાના આત્મકલ્યાણ તરફ પ્રવૃત્તિ કર. કારણ કે વયના
 व्यतीत થવાથી પરિવાદ, પોષણ અને પરિહાર આદિક દોષ ઉત્પન્ન થાય છે,
 તેથી તેવી હાલતમાં સંયમનું પાલન થવું અશક્ય છે, માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-
 ત્યાં સુધી સંયમ ધારણ કરવાની યોગ્ય અવસ્થા વ્યતીત થઈ નથી ત્યાં સુધી
 धर्माचरणरूप अवसरને હાથથી જવા દો નહિ. અર્થાત્ આજ અવસ્થા છે
 જેમા ધર્માચરણ પ્રાણી કરી શકે છે. સૂત્રમાં ‘ચ’ શબ્દ અર્થાન્તરનો બોધક છે

યદ્વા-અવસીદતો વિનેયસ્યોત્સાહવર્ધનપરમિદં વાક્યમ્-હે પण्डित ! सम्प्रति त्वमनतिक्रान्तवया असि, अथ च परिवादादिदोषत्रयरहितोऽसि तावदेव संयमाय यतस्वेत्यर्थः, अत्रेदशक्षणाभिज्ञत्वेन पण्डित ! इति सम्बोधनं सङ्गच्छते ।

પ્રતીત હોતા હૈ કિ પૂર્વોક્ત પરિવાદાદિ ૩ દોષોં મેં સે કિસી એક મી દોષ સે જો અસ્પૃષ્ટ-રહિત હૈ ઓર અવસ્થા મી ધર્માચરણ કરને કી જિસકી નિકલ ગઈ હૈ, પરંતુ યદિ વહ દૃઢસંહનન વાલા હૈ તો મી પ્રવ્રજ્યા-ભાગવતી દીક્ષા કે યોગ્ય હૈ । જિસ પ્રકાર ભગવાન કે માતા પિતાને-દેવાનન્દા ઓર ઋષભદત્તને અપની વૃદ્ધાવસ્થામેં દીક્ષા ધારણ કી થી ।

અથવા-“અનભિક્રાન્તં ચ खलु वयः संप्रेक्ष्य क्षणं जानीहि पण्डित !” यह वाक्य संयम में सीदाते हुए शिष्यजनों में जो निरुत्साहित हो रहे हैं उनका उत्साह बढ़ाने के लिये कहा गया है । उनका उत्साह बढ़ाते हुए वे कह रहे हैं कि-हे पण्डित ! इस समय तुम प्रव्रज्या ग्रहण करने की अवस्था वाले हो, तथा परिवादादिक दोषत्रय रहित भी हो, सो तुम जब तक इस अवस्था में हो तब तक संयम ग्रहण के लिये प्रयत्नशील रहो । इसी अभिप्राय से सूत्रकार ने ‘पण्डित !’ इस संबोधन से उन्हें संबोधित किया है, कारण कि शिष्यजन स्वयं इस प्रकार की अपनी अवस्था को समझ रहे हैं, अतः यह संबोधन उनके लिये संगत बैठता है ।

તેથી એ પ્રતીત થાય છે કે-પૂર્વોક્ત પરિવાદાદિ ત્રણ દોષોમાંથી કોઈ એક પણ દોષથી જે અસ્પૃષ્ટ-રહિત છે અને અવસ્થા પણ ધર્માચરણ કરવાની જેની વીતી ગઈ છે. પરંતુ કદાચ તે દૃઢ સંહનનવાલા છે તો પણ પ્રવ્રજ્યા-ભાગવતી દીક્ષાને યોગ્ય છે. જેમ ભગવાનના માતાપિતાએ દેવાનંદા અને ઋષભદત્તે પોતાની વૃદ્ધા વસ્થામાં દીક્ષા ધારણ કરી હતી.

અથવા-“અનભિક્રાન્તં ચ खलु वयः संप्रेक्ष्य क्षणं जानीहि पण्डित !” આ વાક્ય, સંયમમાં કબૂત પામતાં શિષ્યજનોમાં જે નિરુત્સાહિત અનેક છે, તેનો ઉત્સાહ વધારવા માટે કહેવામાં આવેલ છે. તેનો ઉત્સાહ વધારીને તેઓ કહે છે કે-હે પંડિત ! આ વખત તમે પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ કરવાની અવસ્થાવાળા છો, તથા પરિવાદાદિક દોષત્રય વગર પણ છો જેથી તમે ન્યાય સુધી આ અવસ્થામાં છો ત્યાં સુધી સંયમ ગ્રહણ કરવા માટે પ્રયત્નશીલ રહો, આ અભિપ્રાયથી સૂત્રકારે ‘પંડિત’ આ સંબોધનથી તેને સંબોધિત કરેલ છે. કારણ કે-શિષ્યજન સ્વયં આ પ્રકારની પોતાની અવસ્થાને સમજી શકે છે માટે આ સંબોધન તેને માટે સંગત એસે છે.

અથવા—હે અનભિક્રાન્તયૌવન ! શિષ્ય ! ક્ષણં દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવભેદેન ચતુર્વિધં જાનીદિ । તત્ર દ્રવ્યક્ષણથ સ્થાવરજઙ્ગમયોર્જઙ્ગમત્વં, તત્રાપિ દ્વીન્દ્રિયાદિપરિહારેણ પચ્ચેન્દ્રિયત્વં, તત્રાપિ સંજિગ્તત્વં, તત્રાપિ મનુષ્યત્વં, તેષ્વપિ વિશિષ્ટજાતિ-ગોમનકુલોત્પત્તિદીર્ઘાયુષ્ઠનૈરુજ્યાદિકમુપલભ્ય ચારિત્રપ્રાપ્તિરૂપોઽવસરો લબ્ધઃ । યતો દેવનારકભવે સમ્યક્ત્વં જ્ઞાનાવબોધરૂપશ્રુતસામાયિકોપલબ્ધિશ્ચ ભવતિ, તિર્યક્ષુ કસ્યચિદ્દેશવિરતિરુપજાયતે, સર્વવિરતિરૂપં ચારિત્રં મનુષ્યજન્મન્યેવ લભતે, સ એવ દ્રવ્યક્ષણઃ । સામાયિકશ્ચતુર્વિધઃ-સમ્યક્ત્વ-શ્રુત-દેગવિરતિ-સર્વવિરતિ-રૂપો વોદ્યઃ ।

અથવા—શિષ્ય કે લિયે સૂત્રકાર ફિર કહતે હૈં કિ-હે અનભિક્રાન્ત-યૌવન શિષ્ય ! દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કે ભેદસે ક્ષણ (અવસર) ચાર પ્રકાર કા હૈં ।

(૧) સર્વવિરતિરૂપ અવસ્થા જીવ કો જિસ ક્ષણ મેં પ્રાપ્ત હોતી હૈં ડસકા નામ દ્રવ્યક્ષણ હૈં, ક્યોં કિ યહ જીવ અવ્યવહાર રાશિસે વ્યવહાર રાશિ મેં આતા હૈં વહાં પર પૃથિવીકાયિક આદિ એકેન્દ્રિય જીવોં મેં જન્મ ગ્રહણ કરતા હૈં । ફિર વહ કર્મ સ્થિતિકો ભોગના હુઆ ક્રમ સે દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈં । ડસ પ્રકાર સ્થાવર ઓર ત્રસપર્યાય મેં । ત્રસપર્યાય કી પ્રાપ્તિ દ્રવ્યક્ષણ હૈં । ડસમેં ભી દ્વીન્દ્રિયાદિક પર્યાયોં કે સિવાય પંચેન્દ્રિયપર્યાય કી પ્રાપ્તિ; ડસમેં ભી સંજિપન કી પ્રાપ્તિ; ડસમેં ભી મનુષ્યપર્યાય કી પ્રાપ્તિ; વહાં ભી વિશિષ્ટ જાતિ-ઉચ્ચકુલ મેં જન્મ, દીર્ઘાયુ કા પાના, નિરોગ શરીર કી પ્રાપ્તિ હોના, ડસ મેં ભી ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ

અથવા શિષ્ય માટે સૂત્રકાર ડરીવાર કહે છે કે-હે અનભિક્રાન્તયૌવન શિષ્ય ! દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ ના ભેદથી ક્ષણ (અવસર) ચાર પ્રકાર છે

(૧) સર્વવિરતિરૂપ અવસ્થા ઊવને જે ક્ષણે પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ દ્રવ્ય ક્ષણ છે કારણ કે-આ ઊવ અવ્યવહાર રાશિથી વ્યવહાર રાશિમા આવે છે ત્યાં પૃથિવીકાયિક આદિ એકેન્દ્રિય ઊવોમા જન્મ ગ્રહણ કરે છે, પછી તે કર્મસ્થિતિને ભોગવતા કંઈથી એકેન્દ્રિય ઊવોમા ઉત્પન્ન થાય છે, આ પ્રકાર સ્થાવર અને ત્રસ પર્યાયની પ્રાપ્તિ દ્રવ્યક્ષણ છે. તેમા પણ એકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયો સિવાય પંચેન્દ્રિય પર્યાયની પ્રાપ્તિ, તેમાં પણ સંજીવણની પ્રાપ્તિ, તેમાં પણ મનુષ્યપર્યાયની પ્રાપ્તિ, ત્યાં પણ વિશિષ્ટ જાતિ-ઉચ્ચ કુળ-માં જન્મ, દીર્ઘાયુ મેળવવું, નિરોગ શરીર પ્રાપ્ત થવું, તેમાં પણ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થવી, ઇત્યાદિ. એ બધું દ્રવ્ય

હોના; इत्यादि, ये सब द्रव्यक्षण हैं। ये सब बातें तुझे प्राप्त हुई हैं, क्यों कि-
देवगति और नरकगति में तत्त्वश्रद्धानरूप सम्यक्त्वसामायिक, और
तत्त्वावबोधरूप श्रुतसामायिक की उपलब्धि जीवको प्राप्त होती है,
तिर्यञ्चगति में किसी २ जीव को देशविरति का लाभ होता है, सर्वविरति
रूप चारित्र की प्राप्ति तो इस जीवको मनुष्यजन्म में ही होती है। इसी
लिये यहां पर वही द्रव्यक्षण है। सामायिक ४ प्रकार का है-१ सम्यक्त्व,-
२ श्रुत, ३ देशविरति और ४ सर्वविरति।

यहां पर द्रव्यक्षण का विचार किया है, सर्वविरतिरूप चारित्र की
उत्पत्ति अथवा प्राप्ति की मुख्यता से मनुष्य पर्याय को ही प्रधानतया
द्रव्यक्षण कहा है, क्यों कि सर्वविरतिरूप चारित्र के सिवाय आत्मा दूसरी
किसी अवस्था से कर्मों का क्षय कर मोक्ष प्राप्त नहीं करता। मोक्षप्राप्त
करना यह इस की स्वाभाविक अवस्था है। जिस प्रकार तुंबड़ी के ऊपर
भिट्टीका लेप लगाने से वह पानी के नीचे बैठ जाती है, ठीक उसी प्रकार
यह जीव भी कर्ममल से लिप्त होने के कारण संसाररूप समुद्र के अन्दर
बैठ जाता है। जैसे उस तुंबड़ीका लेप ज्यों-२ पानी से गल कर हटता जाता
है त्यों २ वह तुंबड़ी पानी के ऊपर आती जाती है, बिल्कुल निर्लेप होने

क्षण છે. આ બધી વાતો તને પ્રાપ્ત થયેલ છે, કારણ કે દેવગતિ અને નરકગતિમાં
તત્ત્વશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વસામાયિક અને તત્ત્વાવબોધરૂપ શ્રુતસામાયિકની ઉપલબ્ધિ
જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. તિર્યંચગતિમાં કોઈ કોઈ જીવને દેશવિરતિનો લાભ
થાય છે. સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ તો આ જીવને મનુષ્ય જન્મમાં જ થાય
છે માટે આ ઠેકાણે તેજ દ્રવ્યક્ષણ છે. સામાયિક ચાર પ્રકારનું છે. ૧ સમ્યક્ત્વ,
૨ શ્રુત, ૩ દેશવિરતિ અને ૪ સર્વવિરતિ.

અહીં દ્રવ્યક્ષણનો વિચાર કર્યો છે. સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની ઉત્પત્તિ અથવા
પ્રાપ્તિની મુખ્યતાથી મનુષ્યપર્યાયને જ પ્રધાનતયા દ્રવ્યક્ષણ કહ્યું છે, કારણ કે સર્વ
વિરતિરૂપ ચારિત્ર સિવાય આત્મા બીજી કોઈ અવસ્થાથી કોને ત્યાંથી મોક્ષ પ્રાપ્ત
કરતા નથી. મોક્ષપ્રાપ્ત કરવો તે તેની સ્વાભાવિક અવસ્થા છે. જેમ તુંબડી ઉપર
માટીનો લેપ લગાડવાથી તે પાણીની નીચે બેસી જાય છે, ઠીક તે પ્રકારે આ
જીવ પણ કર્મમલથી લિપ્ત હોવાના કારણે સંસારરૂપ સમુદ્રની અંદર બેસી જાય
છે. જેમ જેમ જેવો તે તુંબડી ઉપરનાં માટીનો લેપ પાણીથી યજીને તૂટી જાય
છે તેમ તેમ તે તુંબડી પાણી ઉપર આવે જાય છે. બિલકુલ નિર્લેપ થવાથી તે

પર વહ પાની કે ડપર નૈરને લગતી હૈ, ઠીક હસી પ્રકાર ડ્યોં ૨ કર્મમલકા લેપ હસ જીવાત્મા સે છૂટતા જાના હૈ ત્યોં ૨ યહ મી અપની શુદ્ધ અવસ્થા કો પ્રાપ્ત કરતા જાના હૈ, ઁક દિન યહ મી આતા હૈ જબ યહ કર્મમલ કે લેપ સે સર્વથા નિર્લેપ હો જાના હૈ । સર્વથા નિર્લેપ હોના હી હસકી શુદ્ધ અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ હૈ । યહ કર્મો કો નાશ કરને કી દશા, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ સે હી જીવ કો પ્રાપ્ત હોતી હૈ, ઁકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોં મેં હસકી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હોતી. ક્યોં કિ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ વિના જ્ઞાન કે વિકાસ કે નહીં હો સકતી, જ્ઞાન કા વિકાસ મનુષ્ય પર્યાય કે સિવાય અન્યત્ર નહીં હોતા । હસીલિયે પ્રધાનતયા હસીકો હી દ્રવ્યક્ષણ કહા હૈ । જ્ઞાનકે વિકાસ કા અભિપ્રાય પાંચ આસ્રવોં કી નિવૃત્તિ સે હૈ । જ્ઞાનસે પાંચ આસ્રવોં કી સર્વથા નિવૃત્તિ હો વહી જ્ઞાન કા વિકાસ હૈ । યદપિ દેવપર્યાય મેં ભવપ્રત્યય અવધિ હોતા હૈ તથાપિ વહાં પર જો સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી યોગ્યતા નહીં હૈ ડસકા રાસ કારણ યહી હૈ । ડસ જ્ઞાન સે વહાં પર પાંચ આસ્રવોં કી નિવૃત્તિ નહીં હો સકતી । હસી પ્રકાર નરક મેં મી પાંચ આસ્રવોં કી નિવૃત્તિ કે અભાવ સે દેશવિરતિ ઔર સર્વવિરતિ કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી ।

પાણી ડપર તરવા લાગે છે. તે પ્રકારે જેમ જેમ કર્મમલનો લેપ આ જીવાત્માથી છૂટી જાય છે તેમ તેમ તે પણ પોતાની શુદ્ધ અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરતો રહે છે એક દિવસ એવો પણ આવે છે કે તે કર્મમલના લેપથી સર્વથા નિર્લેપ થઈ જાય છે. સર્વથા નિર્લેપ થવું તે તેની શુદ્ધ અવસ્થાની પ્રાપ્તિ છે. આ કર્મોનો નાશ કરવાની દશા, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિથી જ જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. એકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોમાં તેની પ્રાપ્તિ જીવને થતી નથી. કારણ કે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ જ્ઞાનના વિકાસ સિવાય થતી નથી. જ્ઞાનનો વિકાસ મનુષ્ય પર્યાય સિવાય અન્યત્ર નથી થતો, માટે પ્રધાનતયા તેને જ દ્રવ્યક્ષણ કહેલ છે. જ્ઞાનના વિકાસનો અભિપ્રાય પાંચ આસ્રવોની નિવૃત્તિથી છે. જ્ઞાનથી પાંચ આસ્રવોની સર્વથા નિવૃત્તિ થાય તે જ્ઞાનનો વિકાસ છે. હજુ દેવપર્યાયમાં ભવપ્રત્યય અવધિ હોય છે તથાપિ તે જગ્યાએ જે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની યોગ્યતા નથી તેનું પ્રાપ્ત કારણ એ છે કે તે જ્ઞાનથી ત્યાં પાંચ આસ્રવોની નિવૃત્તિ થતી નથી. એ પ્રકારે નરકમાં પણ પાંચ આસ્રવોની નિવૃત્તિના અભાવથી દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી.

ક્ષેત્રક્ષણસ્તુ યસ્મિન્ ક્ષેત્રે સર્વવિરતિસ્વરૂપચારિત્રોપલબ્ધિર્જાયતે, તથા હિ-
અધોલોકગ્રામસંવલિતતિર્યગ્લોક એવ, તત્રાપિ સમયક્ષેત્ર એવ, તત્રાપિ પચ્ચદશકર્મ-
ભૂમિષ્વેવ, તાસ્વપિ ભરતક્ષેત્રાપેક્ષયા સાર્દ્ધપચ્ચવિંશતિદેશેષ્વેવ ચારિત્રાવાપ્તિર્ભવતિ । સ
ચાયં ક્ષેત્રરૂપોઽવસરો દુર્લભઃ । યતોઽન્યક્ષેત્રેષુ સમ્યક્ત્વશ્રુતસામાયિકયોરેવોપલબ્ધિઃ,
કસ્યચિદ્દેશવિરતિસમ્ભવઃ, કિન્તુ ન સર્વવિરતિપ્રાપ્તિર્ભવતિ ।

इदमुक्तं भवति-क्षेत्रम् ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्लोकरूपम् । तत्रोर्ध्वलोके देशविरति-
सर्वविरतिरूपसामायिकयोः क्षणो नास्ति, अवशिष्टयोः क्षणोऽस्ति । अधोलोके-

जिस क्षेत्र में सर्वविरतिरूप चारित्र की प्राप्ति इस जीव को होती है उसका नाम क्षेत्रक्षण है । अधोलोक-ग्राम-संवलित अर्थात् सलिलावतीविजययुक्त तिर्यग्लोक में ही, वहां पर भी समयक्षेत्र में ही, वहां भी पन्द्रह कर्मभूमियों में ही, वहां पर भी भरतक्षेत्र की अपेक्षा से २५॥ देशों में ही इस जीव को चारित्र की प्राप्ति होती है । यह क्षेत्र रूप अवसर भी दुर्लभ है, क्यों कि अन्यक्षेत्रों में सम्यक्त्वसामायिक और श्रुतसामायिक, इन दो की उपलब्धि, तथा किन्हीं २ को देशविरति रूप चारित्र की उपलब्धि की संभावना है, परन्तु वहां पर जीवों को सर्वविरति का लाभ नहीं होता है ।

ऊर्ध्वलोक, अधोलोक, और तिर्यग्लोक, इस प्रकार क्षेत्र ૨ प्रकार का है । इनमें ऊर्ध्वलोक में देशविरति और सर्वविरति रूप सामायिक धारण करने का अवसर ही नहीं है । सम्यक्त्वसामायिक और श्रुतसामायिक इन दो की जीव को वहां प्राप्ति हो सकती है । अधोलोक में भी अधो-

જે ક્ષેત્રમાં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ આ જીવને થાય છે તેનું નામ ક્ષેત્રક્ષણ છે. અધોલોકગ્રામસંવલિત અર્થાત્ સલિલાવતીવિજયયુક્ત તિર્યગ્લોકમાં, ત્યાં પણ સમયક્ષેત્રમાં જ, ત્યાં પણ પંદર કર્મભૂમિઓમાં જ, ત્યાં પણ ભરતક્ષેત્રની અપેક્ષાથી સાર્દ્ધપચીસ (૨૫૦) દેશોમાં આ જીવને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે. તે ક્ષેત્રરૂપ અવસર પણ દુર્લભ છે. કારણ કે અન્ય ક્ષેત્રોમાં સમ્યક્ત્વસામાયિક અને શ્રુતસામાયિક, આ બંનેની ઉપલબ્ધિ, તથા કોઈ કોઈને દેશવિરતિરૂપ ચારિત્રની ઉપલબ્ધિની સંભાવના છે, પરંતુ તે જગ્યાએ જીવને સર્વવિરતિનો લાભ થતો નથી.

ઉર્ધ્વલોક, અધોલોક અને તિર્યાગ્લોક, આ પ્રકારે ક્ષેત્ર ત્રણ પ્રકારના છે. તેમાં ઉર્ધ્વલોકમાં દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિરૂપ સામાયિક ધારણ કરવાનો અવસર જ નથી. સમ્યક્ત્વસામાયિક અને શ્રુતસામાયિક, આ બેની જીવને ત્યાં પ્રાપ્તિ થઈ

ધોલોકગ્રામં (સલિલાવતીવિજયં) વર્જયિત્વોર્ધ્વલોકવદ્વિજ્ઞેયમ્, અધોલોક-ગ્રામેષુ ચ ચતુર્ણાં સામાયિકાનાં ક્ષણોઽસ્તિ । તિર્યગ્લોકે મનુષ્યક્ષેત્રાદ્વાહિઃ સર્વ-વિરતિં વિહાય ત્રયાણાં સામાયિકાનાં ક્ષણોઽસ્તિ, તેન મનુષ્યક્ષેત્ર એવ ચતુર્વિધ-સામાયિકપ્રાપ્તિરિતિ વોધ્યમ્ ।

કાલક્ષણઃ—કાલરૂપોઽવસરઃ, સ હિ અત્સર્પિણ્યાં સુષમદુષ્પમા-દુષ્પમાસુષમા-દુષ્પમા-રૂપેષુ તૃતીય-ચતુર્થ-પશ્ચમાત્મકેષુ ત્રિષ્વરકેષુ, ઉત્સર્પિણ્યાં દુષ્પમાસુષમા-સુષમદુષ્પમારૂપયોસ્તૃતીય-ચતુર્થારકયોશ્ચ સર્વવિરતિરૂપસામાયિકોપલબ્ધિરૂપ-જાયતે । એતચ્ચ નૂતનધર્મપ્રાપ્તિમપેક્ષ્ય કથિતમ્ । પૂર્વપ્રતિપન્નાપેક્ષ્યા સંહરણાવ-સ્થાયાં લોકત્રયે સર્વારકેષુ સર્વવિરતિસામાયિકોપલબ્ધિર્જાયતે ।

લોકગ્રામ (સલિલાવતીવિજય) કો છોડકર ઝર્ધ્વલોક કી તરહ હી સમજના ચાહિયે । અર્થાત્ અધોલોક મેં—અધોલોકગ્રામ—સલિલાવતી વિજય મેં ચારોં હી સામાયિક કો પ્રાપ્ત કરને કા અવસર હૈ, પરન્તુ બાકી જગહ સમ્યક્ત્વ ઓર શ્રુત, ઇન દો સામાયિકોં કી પ્રાપ્તિ કા હી અવસર હૈ । તિર્યગ્લોક મેં મનુષ્યક્ષેત્ર સે બાહિર સર્વવિરતિરૂપ સામાયિક કે અતિ-રિક્ત બાકી ત્રીન સામાયિકોં કી ઉપલબ્ધિ કા અવસર જીવ કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ, પરન્તુ ચારોં પ્રકાર કે સામાયિક કી પ્રાપ્તિ તો જીવ કો મનુષ્ય-ક્ષેત્ર—ઢાઈદ્વીપ મેં હી હોતી હૈ ।

જિસકાલ મેં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હસ જીવકો હોતી હૈ ઉસકા નામ કાલક્ષણ હૈ । કાલ દો પ્રકારકા હૈ—ઉત્સર્પિણીકાલ ઓર અવસર્પિણીકાલ । હસમેં ઉત્સર્પિણીકાલ ૬ પ્રકાર કા, ઓર અવસર્પિણી-કાલ ભી ૬ પ્રકારકા હૈ । ઉત્સર્પિણી કે ૬ ભેદ—૧ દુષ્પમાદુષ્પમા,

શકે છે. અધોલોકમાં પણ અધોલોકગ્રામ (સલિલાવતીવિજય) ને છોડીને ઉર્ધ્વ-લોકની માફક જ સમજવું જોઈએ, અર્થાત્ અધોલોકમા—અધોલોકગ્રામ—સલિલાવતી વિજયમાં ચારે સામાયિકને પ્રાપ્ત કરી લેવાનો અવસર છે, પરંતુ બીજા જગ્યાએ સમ્યક્ત્વ અને શ્રુત એ બે સામાયિકોને પ્રાપ્ત કરવાનો જ અવસર છે, તિર્યગ્લોકમા મનુષ્યક્ષેત્રથી બહાર સર્વવિરતિરૂપ સામાયિકના અતિરિક્ત બાકીના ત્રણ સામા-યિકોની ઉપલબ્ધિનો અવસર જીવને પ્રાપ્ત થાય છે, પરંતુ ચારે પ્રકારની સામા-યિકની પ્રાપ્તિ તો જીવને મનુષ્યક્ષેત્ર—ઢાઈદ્વીપમાં જ થાય છે

બે કાળમાં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ આ જીવને થાય છે તેનું નામ કાલક્ષણ છે કાલ બે પ્રકારે છે—ઉત્સર્પિણીકાલ અને અવસર્પિણીકાલ, આમાં ઉત્સર્પિણીકાલ ૬ પ્રકારે, અને અવસર્પિણીકાલ પણ ૬ પ્રકારે છે, ઉત્સર્પિણીના

અનુપરિવર્તેતે=ઘટીયન્નન્યાયેન મુહુર્મુહુઃ પર્યટતિ, યથા જલાવર્તે પતિતસ્તૃણાદિસ્ત-
દાવર્તમેવાનુધાવતિ પરાધીનતયા નોન્મજ્જતિ ચ, તથૈવ વિષયૈકતાનચિત્તો વીતરાગો-
પદેશપરાઙ્મુખો ગુરુકર્મા જીવઃ સંસારસાગરસ્ય દુઃસ્વાવર્તનિમગ્નઃ સન્ ન કદાપ્યુ-
દ્ધૂતો ભવતીતિ બાલસ્ય સંસારપરિભ્રમણં વિજ્ઞાય તત્કારણપરિગ્રહવિષયાદિષુ ગૃદ્ધો મા
ભૂદિતિ શિષ્યં પ્રત્યુપદેશતિ તાત્પર્યમ્ । ઇતિ બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તૂક્ત એવ ॥ સૂ. ૮ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય તૃતીયોદેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૩ ॥

જિસ પ્રકાર રહટ ધૂમતા રહતા હૈં उसी प्रकार जो नाना प्रकार के ऐह-
लौकिक एवं पारलौकिक दुःखोंको भोगते हुए इस संसारचक्रमें परि-
भ्रमण कर रहे हैं ।

ऐसे बालजीव कि जिनका मन विषयों में लवलीन हो रहा है, वीत-
राग प्रभु के उपदेश से जो सर्वथा पराङ्मुख हो रहे हैं, गुरुकर्मी हैं, पानी
के आवर्त में पड़े हुए तृणकी तरह इस संसारसागर के दुःखरूपी
आवर्त में निमग्न बन कभी भी वहांसे छुटकारा नहीं पा सकते हैं । जिस
तरह पानी के आवर्त में पड़े हुए तृणकी दशा होती है उसी प्रकार की
इनकी भी दशा होती है । जैसे वह तृण उससे बाहर नहीं निकलने पाता
प्रत्युत उसमें इधर-उधर चकर काटा करता है-कभी उसमें डूबता है
और कभी उसी में ऊपर तैर आता है, ठीक इसी प्रकार से इन बाल-
जीवोंका भी इस चतुर्गतिरूप संसारचक्रमें परिभ्रमण होता रहता है ।
ऐसा समझ कर संयमी मुनिका कर्तव्य है कि वह संसारपरिभ्रमण का

જે પ્રકાર રેંટ ધુમતો રહે છે તે પ્રકારે જે નાનાપ્રકારનાં ઐહલૌકિક અને
પારલૌકિક દુઃખોને ભોગવતા આ સંસારચક્રમાં પરિભ્રમણ કરે છે.

આવા બાલ જીવો કે જેના મન વિષયોમાં લવલીન રહે છે, વીતરાગ પ્રભુના
ઉપદેશથી જે સર્વથા પરાઙ્મુખ રહે છે, ગુરુકર્મી છે. પાણીમાં પડેલા તૃણ માફક
આ સંસારસાગરના દુઃખરૂપી આવર્તમાં નિમગ્ન બની કોઈ વખત પણ ત્યાંથી
છુટકારો મેળવી શકતા નથી જેવી રીતે પાણીના આવર્તમાં પડેલા તૃણની દશા
થાય છે તે પ્રકારે તેની પણ દશા થાય છે જેવી રીતે તે તણખલુ તેનાથી બહાર
નીકળી શકતું નથી પણ તેમાં ચક્કર લગાવ્યા કરે છે-કોઈ વખત તેમાં ડુબે
છે તો કોઈ વખત ઉપર તરી આવે છે, ઠીક તે પ્રકારે આ બાલ જીવોના પણ
ચારંગતિરૂપ સંસાર ચક્રમાં પરિભ્રમણ થયા કરે છે એવું સમજીને સંયમી
મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે સંસારપરિભ્રમણનું કારણ જે વિષય અને પરિચ્છાદિક

=સ્પૃહા-મદનરૂપાન્ સમ્=સમ્યક્, અનુ=અનુકૂલં જાનાતીતિ કામસમનુજ્ઞઃ=કામ-
ગુણાનુમોદકઃ, અત એવ અશમિતદુઃખઃ-અશમિતમ્=અક્ષીણં દુઃખમ્=અલબ્ધલાભાય
લબ્ધપરિરક્ષણાય ચ વ્યગ્રતયા નિરન્તરચિન્તનરૂપં યસ્ય સોઽશમિતદુઃખઃ=વિષય-
કષાયાસક્તત્વેન નિતાન્તઃક્રાન્તસ્વાન્તઃ, અત એવ દુઃખી=શારીરિક-માનસિક-પીડા-
પીડિતઃ, દુઃખાનામ્=ૐહિક-પારત્રિક-નાનાવિધાનામેવ, આવર્ત=સંસારચક્રમ્-

“બાલે પુણ ણિહે” ઇત્યાદિ । “સુયં મે આડસં તેણં” યહાં સે લેકર
“તંમિ ઠાણંમિ ચિટ્ઢિ” યહાં તક કા પૂર્વોક્તસ્વરૂપવાલા ઉપદેશ તથા
“બાલે પુણ ણિહે” યહાં સે લેકર “આણાણ આરાહિયા વિ ભવઈ” યહાં
તક વક્ષ્યમાણ-આગે કહા જાનેવાલા-ઉપદેશ સર્વજ્ઞની અપેક્ષા સે
નહીં કહા ગયા હૈ । ક્યોં કિ વે કૃતકૃત્ય હૈં, ઉન્હેં કિસી ખી વસ્તુસે
પ્રયોજન નહીં રહા હૈ, કેવલજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ હોનેસે વે સમસ્ત પદાર્થોં કો
હસ્તામલકવત્ સાક્ષાત્ જાનતે હૈં, અતઃ યહ ઉપદેશ બાલજીવોંની
અપેક્ષા સે હૈ । બાલ જીવ વે હૈં જો પરિગ્રહ મેં આસક્ત હૈં, જ્ઞાનક્રિયા સે
વિકલ હૈં, વિષયાનુરાગી હૈં, કામગુણોંકે અનુમોદક હૈં, અલબ્ધ કો પ્રાપ્ત
કરને કે લિયે તથા લબ્ધની રક્ષા કરને કે લિયે જો વ્યગ્રચિત્ત હોને સે સદા
ચિંતાશીલ બને રહતે હૈં, વિષયકષાયોં મેં આસક્ત હોનેની વજહ સે
જિનકા અન્નઃકરણ અત્યન્ત દુઃખિત હોતા રહતા હૈ । ઇસ લિયે જો રાત-
દિન શારીરિક એવં માનસિક કષ્ટોંકા અનુભવ કિયા કરતે હૈં તથા

‘બાલે પુણ ણિહે’ ઇત્યાદિ. ‘સુયં મે આડસં તેણં’ અહીંથી લઈ ‘તંમિઠાણં-
મિચિટ્ઢિ’ સુધીનો પૂર્વોક્તસ્વરૂપવાળો ઉપદેશ, તથા “બાલે પુણ ણિહે” અહીંથી
લઈને “આણાણ આરાહિયા વિ ભવઈ” અહીં સુધી વક્ષ્યમાણ-આગળ કહેવામાં
આવનાર-ઉપદેશ આ સર્વજ્ઞની અપેક્ષાથી કહેવામાં આવેલ નથી, કારણ કે તે
કૃતકૃત્ય છે, તેને કોઈ પણ વસ્તુથી પ્રયોજન રહ્યું નથી. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ હોવાથી
તે સમસ્ત પદાર્થોંને હસ્તામલકવત્ સાક્ષાત્ જાણે છે માટે આ ઉપદેશ બાલ
જીવોંની અપેક્ષાથી છે. બાલ જીવ તે છે જે પરિગ્રહમાં આસક્ત છે, જ્ઞાનક્રિયાથી
વિકલ છે, વિષયાનુરાગી છે, કામગુણોના અનુમોદક છે, અલબ્ધને પ્રાપ્ત કરવા,
લબ્ધની રક્ષા કરવા માટે જે વ્યગ્રચિત્ત હોવાથી સદા ચિંતાશીલ બની રહે છે,
વિષયકષાયોમાં આસક્ત હોવાથી જેનું અંતઃકરણ અત્યંત દુઃખિત થતું રહે છે.
માટે જે રાત દિન શારીરિક અને માનસિક કષ્ટોનો અનુભવ કર્યા કરે છે, તથા

॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य चतुर्थोद्देशः ॥

तत्र पूर्वस्मिन्नुद्देशे 'उच्चैर्गोत्रोत्पत्त्यभिमानादिर्न कार्यः' इति प्रतिपादितम्, अत्र च 'भोगेष्वभिष्वङ्गो न कार्यः, तत्र रोगस्यावश्यं सद्भावा'-दिति दर्शयिष्यते ।

अत्रानन्तरसूत्रसम्बन्धः—'दुःखी दुःखाणामेव आवष्टं अणुपरिवष्टइ' इति, तानि च दुःखानि रोगकारणानि भवन्त्यतो रोगानेव दर्शयति ।

॥ आचाराङ्गसूत्र के दूसरे अध्ययन का चौथा उद्देश ॥

तृतीय उद्देश का कथन हो चुका; अब चतुर्थ उद्देश का कथन प्रारंभ होता है । तृतीय उद्देश में संयमी मुनि को अपने संयम की रक्षा के लिए उच्च गोत्रमें उत्पत्ति होने का अभिमान आदि नहीं करना चाहिये यह भली भाँति समझा दिया गया है । इस चतुर्थ उद्देश में यह समझाया जायगा कि भोगों में संयमी मुनि के लिये अपने संयम की रक्षा करने के लिये अभिष्वंग-रागपरिणति-नहीं करना चाहिये । क्यों कि "भोग बुरे भवरोग बढ़ावे बैरी हैं जग जी के" इस वाक्यके अनुसार एक तो वे भवरोग बढ़ाते हैं, दूसरे उनके सेवन से अनेक शारीरिक रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं ।

इस प्रकरण का "दुःखी दुःखाणामेव आवष्टं अणुपरिवष्टइ" इस तृतीय उद्देश के अन्तिम सूत्र से संबंध है, इसलिये सूत्रकार उन्हीं रोगों का यहां पर वर्णन करेंगे, क्यों कि दुःख रोग के कारण हुआ करते हैं ।

આચારાંગસૂત્રના બીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ.

ત્રીજા ઉદ્દેશનું કથન સમાપ્ત થયું હવે ચોથા ઉદ્દેશનો પ્રારંભ થાય છે, ત્રીજા ઉદ્દેશમાં સંયમી મુનિએ પોતાના સંયમની રક્ષા માટે ઉચ્ચ ગોત્રમાં ઉત્પત્તિ થવાને કારણે અભિમાન આદિ નહિ કરવું જોઈએ, એ સારી રીતે સમજાવી દેવામાં આવેલ છે. આ ચતુર્થ ઉદ્દેશમાં એ સમજાવવામાં આવશે કે—ભોગોમાં સંયમી મુનિએ પોતાના સંયમની રક્ષા માટે અભિષ્વંગ-રાગપરિણતિ નહિ કરવી જોઈએ, કારણ કે "ભોગ બુરે ભવરોગ વધાવે વૈરી છે જગજી કે" આ વાક્ય અનુસાર એક તો તે ભવરોગ વધારે છે, બીજું તેના સેવનથી અनेક શારીરિક રોગ પણ ઉત્પન્ન થાય છે

આ પ્રકરણના "દુઃખી દુઃખાણમેવ આવઢં અણુપરિવઢઈ" આ ત્રીજા ઉદ્દેશના અંતિમ સૂત્રથી સંબંધ છે માટે સૂત્રકાર તે રોગોના આ ઠેકાણે વર્ણન કરશે, કારણ કે રોગોના કારણથી દુઃખ થયા કરે છે

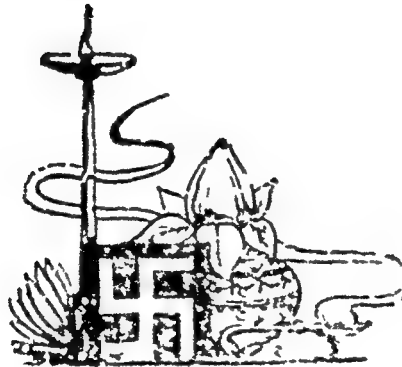
कारण जो विषय और परिग्रहादिक हैं उनमें गृह न बने । इस प्रकार से सूत्रकार का शिष्य के प्रति यह उपदेश है । 'ब्रवीमि' इस पद का पहिले के प्रकरणों में अर्थ कहा जा चुका है ॥ सू० ८ ॥

॥ दूसरे अध्ययनका तृतीय उद्देश संपूर्ण ॥



छे तेमां गृह न बने, आ प्रकारे सूत्रकारनो शिष्य प्रति आ उपदेश छे, इति ब्रवीमि आ पदनां पडैला प्रकरणोमां अर्थ करवामां आवेल छे.

॥ भीज अध्ययननो त्रीजे उद्देश संपूर्ण २-३ ॥



મૂલમ્—‘તઓ સે ઇગયા રોગસમુપ્પાયા સમુપ્પજ્ઞંતિ જેહિં સદ્ધિં સંવસઈ તે વા ણં ઇગયા નિયયા પુવ્વિં પરિવયંતિ, સો વા તે નિયગે પચ્છા પરિવજ્ઞા, નાલં તે તવ તાણાણ વા સરણાણ વા, તુમંપિ તેસિં નાલં તાણાણ વા સરણાણ વા, જાણિત્તુ દુક્ખં પત્તેયંસાયં, ભોગામેવ અનુસોયંતિ, ઇહમેગેસિં માણવાણં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—તતસ્તસ્યૈકદા રોગસમુત્પાદાઃ સમુત્પદ્યન્તે યૈર્વા સાર્દ્ધં સંવસતિ તે વા સ્વલુ એકદા નિજકાઃ પૂર્વં પરિવદન્તિ, સ વા તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિવદતિ, નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા, ત્વમપિ તેવાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા, જ્ઞાત્વા દુઃસ્વં પ્રત્યેકં સાતં ભોગાનેવાનુશોચતિ, ઇહૈકેવાં માનવાનામ્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—‘તત’ इत्यादि । इदं मूलं प्रथमोद्देशे वृद्धावस्थाप्रसङ्गे प्रोक्तम्, इह च यौवनेऽपि भोगासक्त्या नानारोगाः समुत्पद्यन्त इति दर्शयति नातः पुनरुक्तिः ।

રોગા યથા—(૧)શ્વાસ(૨)કાસ(૩)જ્વર(૪)દાહ(૫)કુક્ષિશૂલ(૬)ભગન્દરા—(૭)અર્શ(૮)—અજીરક(૯)દૃષ્ટિશૂલ(૧૦)મૂર્ધશૂલ(૧૧)—અરુચિ(૧૨)નેત્રવેદના(૧૩)—કર્ણવેદના(૧૪)કણ્ઠવેદનો(૧૫)દરવેદના(૧૬)કુપ્ટાખ્યાઃ ષોડશ વિજ્ઞેયાઃ ।

સર્વેઽપિ જીવાઃ સ્વકૃતકર્મફલભોગિન इति विभाव्य विवेकी भुक्तपूर्वान् भोगान्नानुस्मरेत्, प्राप्तान् सेवेत, अलब्धान्नाभिवाञ्छेदिति भावः ।

યૌવન અવસ્થા મેં જીવોં કી ભોગાદિકોં મેં અધિક આસક્તિ વઢતી હૈ, ડસસે ઇસ અવસ્થા મેં ભી અનેક પ્રકાર કે રોગ ઉત્પન્ન હોતે હૈં । ઇસ લિયે રોગોં કે નામ કહતે હૈં—૧ શ્વાસ—૨ કાસ ર્વાંસી ૩ જ્વર ૪ દાહ ૫ કુક્ષિ-શૂલ ૬ ભગન્દર ૭ અર્શ—વવાસીર ૮ અજીરક ૯ દૃષ્ટિશૂલ ૧૦ મૂર્ધશૂલ ૧૧ અરુચિ ૧૨ નેત્રવેદના ૧૩ કર્ણવેદના ૧૪ કણ્ઠપીડા ૧૫ ઉદરપીડા ૧૬ કુપ્ટ । યે ૧૬ રાગોં કે નામ હૈં ।

યૌવન અવસ્થામા જીવોની ભોગાદિકોમા અધિક આસક્તિ વધે છે, તેથી તે અવસ્થામા પણ અનેક પ્રકારના રોગ ઉત્પન્ન થાય છે, માટે રોગોના નામ કહે છે—૧ શ્વાસ, ૨ કાસ—ખાસી, ૩ તાવ, ૪ દાહ, ૫ કુક્ષિશૂલ, ૬ ભગન્દર, ૭ અર્શ—હરસ, ૮ અજીરક, ૯ દૃષ્ટિશૂલ, ૧૦ મૂર્ધશૂલ, ૧૧ અરુચિ, ૧૨ નેત્રવેદના, ૩ કાનની વેદના, ૧૪ કંઠપીડા, ૧૫ ઉદરપીડા, અને ૧૬ કોહ, એ રોગના સોડ નામ છે.

કામભોગસેવનાદાસક્તિઃ, તથા ચાર્તૃરૌદ્રધ્યાનં, તતશ્ચ કર્મરજઃસમુપાર્જનમ્, તેન ચાત્મમાલિન્યં ભવતિ, તતો જ્ઞાનાદિગુણપ્રણાશઃ, તેનોન્માર્ગપ્રવૃત્તિઃ, તથા ચૈહિક-પારત્રિકદુઃસ્વાનિ જાયન્તે, દુઃસ્વાનિ ચ રોગાદિના ભવન્તિ, તત્ર દુઃસ્વહેતૂન્ રોગાનુપદર્શયતિ—‘ તઓ સે ’ ઇત્યાદિ ।

કામભોગોં કે સેવન સે જીવકી ઉસમેં આસક્તિ બઢતી હૈ । આસક્તિ સે આર્ત્ત ઔર રૌદ્રધ્યાન ઉત્પન્ન હોતે રહતે હૈં । ઉન ધ્યાનોં સે જીવ અશુ-ભકર્મપરમાણુઓં કા બંધ કરતા હૈ । ઉસસે આત્મા મેં મલિનતા આતી હૈ । મલિનતા કે સંબંધ સે જ્ઞાનાદિક ગુણોંકા આવરણ હોને સે જીવોંકી ઉન્માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । ઉસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે જીવ હહલોક ઔર પરલોક-સંબંધી અનંત યાતનાઓં કો ભોગતા હૈ । ઇસ પ્રકાર પરંપરા-સંબંધ સે કામભોગસેવન તથા ઉસ વિષય કી આસક્તિ જીવકો અનેક અનન્ત કષ્ટોં કો દેનેવાલી હોતી હૈ । પરલોકસંબંધી દુઃસ્વ જીવોં કો અશુભ કર્મોદય સે પ્રાપ્ત હોતા હૈ । વહાં પર ભી અનેક પ્રકાર કે શારીરિક તથા માનસિક દુઃસ્વ ઇસ જીવ કો ફેલને પડતે હૈં ।

ઇસલોકસંબંધી દુઃસ્વોંકી ભી યહી પરિસ્થિતિ હૈ, ફિર ભી વ્યવહારી જીવોં કી દૃષ્ટિમેં દુઃસ્વાદિક રોગાધીન હોતે હૈં; ઇસ અભિપ્રાય સે સૂત્રકાર ઉન દુઃસ્વોં કે કારણભૂત રોગોં કા વર્ણન કરતે હુણ કહતે હૈં—“ તઓ સે ” ઇત્યાદિ ।

કામભોગોના સેવનથી જીવની તેમાં આસક્તિ વધે છે. આસક્તિથી આર્ત્ત અને રૌદ્ર ધ્યાન ઉત્પન્ન થાય છે. તે ધ્યાનોથી જીવ અશુભ કર્મ પરમાણુઓનો બંધ કરે છે, તેથી આત્મામાં મલિનતા આવે છે. મલિનતાના સંબંધથી જ્ઞાનાદિક ગુણોનું આવરણ હોવાથી જીવોની ઉન્માર્ગમાં પ્રવૃત્તિ થાય છે. આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી જીવ આલોક અને પરલોક સંબંધી યાતનાઓને ભોગવે છે. આ પ્રકાર પરંપરાસંબંધથી કામભોગસેવન, તથા તે વિષયની આસક્તિ જીવને અનેક અનંત કષ્ટોને દેવાવાળી હોય છે. પરલોકસંબંધી દુઃખ જીવોને અશુભ કર્મોદયથી પ્રાપ્ત થાય છે. ત્યાં પણ અનેક પ્રકારના શારીરિક તથા માનસિક દુઃખ આ જીવને ભોગવવા પડે છે.

આલોકસંબંધી દુઃખોની પણ એ જ પરિસ્થિતિ છે તો પણ વ્યવહારી જીવોની દૃષ્ટિમાં દુઃખાદિક રોગાધીન થાય છે. આ અભિપ્રાયથી સૂત્રકાર આ દુઃખોના કારણભૂત રોગોના વર્ણન કરતાં કહે છે—“ તઓ સે ” ઇત્યાદિ.

હૈ તવ યહ વિચારતા હૈ કિ-જવ મૈ નિરોગ હો જાઝંગા તવ નિયમ સે નિરંતર ઇન વિષયાદિકોં કા મનમાફિક સેવન કરૂંગા । યદિ મુઝે નીરોગતા પ્રાપ્ત કરને મેં અપના સર્વસ્વ ભી અર્પણ કર દેના પડે તો ભી કોઈ ચિંતા કી બાત નહીં । જીવન રહેગા તો ફિર ધન હો જાયગા । ધન હૈ ભી કિસ લિયે ? યદિ સાંસારિક મૌજ મજા ન દેખી તો ઇસ દ્રવ્ય કી પ્રાપ્તિ સે લાભ હી ક્યા હુઆ ? ઇત્યાદિ અનેક પ્રકાર કે સંકલ્પ-વિકલ્પોં સે અશાન્ત-ચિત્ત બન નિરંતર સંતપ્ત હોતા રહતા હૈ । ઇસ પ્રકાર કી સંતપ્તતા કા કારણ સિર્ફ ઇસ જીવ કી વિષયસંબંધી આસક્તિ હી હૈ । વે સંયમી મુનિ ધન્ય હૈ જો વિષયાદિક સેવન કે કટુકવિપાક કો જાનકર ઇસસે સર્વદા અપની રક્ષા કરતે રહતે હૈ । પરંતુ જો ઇસકે કટુક વિપાક સે અનભિજ્ઞ બને હુએ હૈ એસે કિતનેક બ્રહ્મદત્ત ચક્રવર્તી જૈસે મનુષ્ય હી ઇસ વિષયજાલ મેં ફાંસ કર અપના ઇહલોક ઔર પરલોક દોનોં કા બિગાડ કર નાના પ્રકાર કે કષ્ટોં કા અનુભવ કરનેવાલે હોતે હૈ । ઇસ લિયે વિષયોં કો દોનોં ભવોં મેં કષ્ટકારક જાન કર સંયમી મુનિ કો ભોગાસક્તિ સે સર્વદા અપની રક્ષા કરને મેં સાવધાન રહના ઞાહિયે । યહી ઇસ સૂત્ર કા આશય હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

બાઈશ ત્યારે નિયમથી નિરંતર આ વિષયાદિકોનું મનમાફક સેવન કરીશ. કદાચ મને નિરોગતા પ્રાપ્ત કરવામાં પોતાનું સર્વસ્વ પણ અર્પણ કરી દેવું પડે તો કોઈ ચિંતા નહિ, જીવન રહેશે તો પછી ફરીથી ધન થાશે. ધન કેના માટે છે ? જો સાંસારિક મોજમજા ન કરી તો આ દ્રવ્યની પ્રાપ્તિથી લાભ પણ શો ? ” ઇત્યાદિ અનેક પ્રકારના સંકલ્પ વિકલ્પોથી અશાન્તચિત્ત બની નિરંતર સંતપ્ત રહ્યા કરે છે, આ પ્રકારની સંતપ્તતાનું કારણ ફક્ત આ જીવની વિષયસંબંધી આસક્તિ જ છે

તે સંયમી મુનિ ધન્ય છે જે વિષયાદિકસેવનના કટુક વિપાકને બાણીને તેનાથી સર્વદા પોતાની રક્ષા કરે છે, પરંતુ જે તેના કટુક વિપાકથી અનભિજ્ઞ બનેલા છે એવા કેટલાક બ્રહ્મદત્ત ચક્રવર્તી જેવા મનુષ્ય જ આ વિષયબળમાં ફસીને પોતાનો આલોક અને પરલોક બંનેને બગાડીને નાના પ્રકારના કષ્ટોનો અનુભવ કરવાવાળાં થાય છે વિષયોને બંને ભવોમાં કષ્ટકારક બાણીને સંયમી મુનિએ ભોગાસક્તિથી સર્વદા પોતાની રક્ષા કરવામાં સાવધાન રહેવું જોઈએ, એ જ આ સૂત્રનો આશય છે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ગૃહસ્થ ભોગસ્યેવાનુચિન્તનં કરોતીત્યાહ-‘ભોગાનેવે’-તિ, ભોગાનેવ=શબ્દાદિ-વિષયાનેવ અનુશોચતિ=સતતં પરિચિન્તયતિ । સૂત્રે વહુવચનમાર્ષત્વાત્ । યદ્યહં સર્વસ્વવ્યયસાધ્યભૈષજ્યાદિના નીરોગઃ સ્યાં તદાઽવશ્યમજસ્રં ભોગાન્ શુઙ્ગીય, નાના-વિધાનિ સુખાન્યનુભવેયમિત્યાદિનાનાવિધપરિચિન્તનાદશાન્તસ્વાન્તઃ સન્તતમનુ-તપ્તો ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ । એવંવિધભોગાનુચિન્તનં કિં સર્વેષાં ભવતિ ? નેત્યાહ-‘ઈહૈકેષા’-મિત્યાદિ, ઇહ=સંસારે એકેષામ્=અપરિજ્ઞાતવિષયકદુઃખવિપાકાનાં કતિ-પયાનાં માનવાનામ્, બ્રહ્મદત્તસદૃશાનાં ભવતિ । ઇહામુત્ર દુઃસ્વકારણત્વાદ્ ભોગાસક્તિઃ પરિહરણીયેતિ સૂત્રાશયઃ ॥ સૂ. ૧ ॥

इस अवस्थामें जिनके साथ यह रहता है वे पुत्रकलत्रादिक पहले इसका अनादर करते हैं और तिरस्कारजनक वचन बोलते हैं, फिर यह भी उनका अनादर करता हुआ अपशब्द बोलता है, परन्तु हे जीव ! नहीं तो वे तेरे त्राण और शरण के लिये समर्थ हो सकते हैं और न तू भी उनको त्राण और शरण देनेके लिए समर्थ हो सकता है । समस्त संसारी जीव अपने-२ किये हुए कर्मके अनुसार सुखदुःखादिक फल के भोगने-वाले होते हैं । ऐसा विचार कर विवेकी संयमी मुनि पूर्वमें भोगे हुए उन भोगोंकी स्मृति न करे, तथा प्राप्त हुए उन भोगोंका सेवन न करे और अलब्ध भोगोंको भोगनेकी इच्छा तक भी न करे ।

જો વિષયાદિકોં મેં ગૃહ્હ હોતા હૈ વહુ ઉનકા હી નિરન્તર વારંવાર ચિન્તવન-સ્મરણ કરતા રહતા હૈ; એસા જીવ જવ વિષયાદિકોં કે સેવન કરને મેં કિસી રોગાદિક કે પરાધીન બન અપને કો અસમર્થ પાતા

આ અવસ્થામાં જેની સાથે તે રહે છે તે પુત્ર કલત્રિક પહેલાં તેનો અનાદર કરે છે અને તિરસ્કારજનક વચન બોલે છે, પછી તે પણ તેનો અનાદર કરીને અપશબ્દ બોલે છે, પરંતુ હે જીવ ! તે તારા તારણહાર નથી અને શરણ દેવામાં પણ સમર્થ નથી, અને તું પણ તેનો તારણહાર નથી અને શરણ દેવામાં પણ સમર્થ નથી. સમસ્ત સંસારી જીવ પોતપોતાના કરેલા કર્મ અનુસાર સુખદુઃખાદિક ફળના ભોગવવાવાળા હોય છે. એવો વિચાર કરી વિવેકી સંયમી મુનિ પૂર્વમાં ભોગવેલાં તે ભોગોની સ્મૃતિ પણ ન કરે, તથા પ્રાપ્ત થયેલાં ભોગોનું પણ સેવન ન કરે અને અલબ્ધ ભોગોને ભોગવવાની ઇચ્છા સુદ્ધાં પણ ન કરે.

જે વિષયાદિકોમાં ગૃહ્હ થાય છે તે તેનું જ નિરંતર ચિંતવન સ્મરણ કરતા રહે છે. એવા જીવ જ્યારે વિષયાદિકોનું સેવન કરવામાં કોઈ રોગાદિકથી પરાધીન બને અને અસમર્થ બની જાય ત્યારે તે વિચારે છે કે-“જ્યારે હું નિરોગી બની

एवं 'भोगे रोगः' इति प्रोक्तम् । अथ च भोगसाधनं धनमपि नश्वरं ततः किं विधेयमिति दर्शयति—'आसं च' इत्यादि ।

સદ્ગ્રાવ મેં જીવ સાંસારિક મૌજ-મજા ભોગનેમેં અપની શક્તિઅનુસાર કસર નહીં રાખતે; કિન્તુ ભોગ સદા દુઃખદાયી હોતે હૈં । કહા મી હૈ—

ભોગ બુરે ભવ રોગ બઢાવૈ, વૈરી હૈં જગ જી કે ।
 વેરસ હોંય વિપાક સમય અતિ, સેવત લાગૈ નીકે ॥
 વજ્ર અગનિ વિષ સે વિષધર સે, યે અધિકે દુઃખદાઈ ।
 ધર્મરતન કે ચોર ચપલ અતિ, દુર્ગતિપંથસહાઈ ॥
 મોહ-ઉદય યહ જીવ અજ્ઞાની, ભોગ ભલે કર જાનૈ ।
 જ્યોં કોઈ જન ધતૂરા, સો સવ કંચન માનૈ ॥
 જ્યોં જ્યોં ભોગ સંજોગ મનોહર, મનવાંછિત જન પાવૈ ।
 તૃષ્ણા નાગિન ત્યોં ત્યોં ડંકૈ, લહર જહર કી આવૈ ॥

उन भोगों की आशा से बाल अज्ञानी जीव प्राणातिपातादिक अनेक प्रकार के क्रूर कर्मों को करता हुआ विपरीतपने को प्राप्त होता है, अर्थात् मोक्षमार्ग से विमुख हो जाता है ॥ सू० २ ॥

इस प्रकार जब भोग में रोग है और भोग का साधनभूत धन विनश्वर है तब क्या करना चाहिये? इसका प्रत्युत्तर देते हुए सूत्रकार कहते हैं—“आसं च” इत्यादि ।

જીવ સાંસારિક ભોગ-મજા ભોગવવામાં પોતાની શક્તિઅનુસાર કસર રાખતા નથી પણ ભોગ સદા દુઃખદાયી થાય છે કહ્યું પણ છે—

“ભોગ બુરે ભવ રોગ બઢાવૈ, વૈરી હૈં જગજીકે ।
 વેરસ હોય વિપાક સમય અતિ, સેવત લાગૈ નીકે ॥
 વજ્ર અગનિ વિપસે વિષધર સે, યે અધિકે દુઃખદાઈ ।
 ધર્મરતનકે ચોર ચપલ અતિ, દુર્ગતિપથસહાઈ ॥
 મોહ ઉદય યહ જીવ અજ્ઞાની, ભોગ ભલે કર જાનૈ ।
 જ્યોં કોઈ જન ધતૂરા, સો સવ કંચન માનૈ ॥
 જ્યોં જ્યોં ભોગ સંજોગ મનોહર, મનવાંછિત જન પાવૈ ।
 તૃષ્ણા નાગિન ત્યોં ત્યોં ડંકૈ, લહર જહર કી આવૈ ॥”

આવા ભોગોની આશાથી બાલ અજ્ઞાની જીવ પ્રાણાતિપાતાદિક અનેક પ્રકારનાં ક્રૂર કર્મો કરીને વિપરીતપણાને પ્રાપ્ત થાય છે, અર્થાત્ મોક્ષમાર્ગથી વિમુખ થાય છે. ॥ સૂ० ૨ ॥

આ પ્રકારે ત્યારે ભોગમાં રોગ છે. અને ભોગના સાધનભૂત ધન વિનશ્વર છે. ત્યારે શું કરવું જોઈએ? તેનો પ્રત્યુત્તર આપતા સૂત્રકાર કહે છે—“આસં ચ” ઇત્યાદિ.

ભોગસાધનસ્ય ધનસ્ય વિનશનશીલતાં દર્શયતિ—‘તિવિહેણ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—તિવિહેણ જાડિવિ સે તત્થ મત્તા ભવઈ અપ્પા વા
બહુયા વા, સે તત્થ ગઢિઢાં ચિટ્ઠાં ભોયણાં, તઓ સે ઇગયા
વિપરિસિટ્ઠં સંભૂયં મહોવગરણં ભવઈ, તં પિ સે ઇગયા દાયાયા
વિભયંતિ, અદત્તહારો વા સે અવહરઈ, રાયાણો વા સે વિલુંપંતિ,
ણસ્સઈ વા સે, વિણસ્સઈ વા સે અગારદાહેણ વા સે ડજ્જઈ,
ઇય સે પરસ્સ અટ્ટાં કૂરાણિ કમ્માણિ બાલે પકુવમાણે તેણ
દુક્ખેણ વિપ્પરિયાસમુવેઈ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ત્રિવિધેન યાડિવિ તસ્ય તત્ર માત્રા ભવતિ—અલ્પા વા બહુકા વા, સ
તત્ર ગૃહસ્થિષ્ઠતિ ભોજનાય, તતસ્તસ્યૈકદા વિપરિશિષ્ટં સમ્ભૂતં મહોપકરણં ભવતિ
તદપિ તસ્યૈકદા દાયાયા વિભજન્તે, અદત્તહારો વા તસ્ય હરતિ, રાજાનો વા તસ્ય
વિલુંપન્તિ, નશ્યતિ વા તસ્ય, વિનશ્યતિ વા તસ્ય, અગારદાહેન વા દહ્યતે તદ્,
ઇતિ સ પરસ્યાર્થાય કૂરાણિ કર્માણિ બાલઃ પ્રકુર્વાણસ્તેન દુઃખેન મૂઢો વિપર્યા-
સમુપૈતિ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—‘ત્રિવિધેને’—ત્યાદિ, એતસ્ય વ્યાખ્યા તુ તૃતીયોદેશે પ્રોક્તા । પ્રાગ્
ધનસ્ય નિસ્સારતા પ્રદર્શિતા, અત્ર તુ ભોગસાધનસ્ય ધનસ્ય ક્ષીણમાણતયા તદ-
ભાવાદપિ ન ભોગો ભવિતુમર્હતીતિ દર્શિતમ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ભોગ કે સાધનભૂત ધનની વિનશ્વરતા દિશ્વલાતે હુએ સૂત્રકાર કહતે
હૈ—“તિવિહેણ જાવિ” इत्यादि ।

ઇસ સૂત્રની વ્યાખ્યા તૃતીય ઉદ્દેશ મેં અચ્છી તરહ સે કી જા ચુકી
હૈ । વહાં પર સામાન્યતયા ધનની અસારતા પ્રકટ કી હૈ, યહાં પર ભોગ ઓર
ઉપભોગ મેં કામ આનેવાલે સાધનભૂત ધનની અસારતા બતલાઈ ગઈ હૈ;
કારણ કિ સાંસારિક ભોગ ઓર ઉપભોગ કા કારણ ધન હોતા હૈ । ઇસકે

ભોગોના સાધનભૂત ધનની વિનશ્વરતા દેખાડતાં સૂત્રકાર કહે છે—
“તિવિહેણ જાવિ” इत्यादि.

આ સૂત્રની વ્યાખ્યા ત્રીજા ઉદ્દેશમાં સારી રીતે આપવામાં આવેલ છે. તે
જગ્યોએ સામાન્યતયા ધનની અસારતા પ્રગટ કરેલ છે. આ ઠેકાણે ભોગ અને
ઉપભોગમાં કામ આવવાવાળા સાધનભૂત ધનની અસારતા બતાવવામાં આવેલ છે,
કારણ કે સાંસારિક ભોગ અને ઉપભોગનું કારણ ધન જ છે. તેના સદ્ભાવમાં

કે ભોગને કીં ચાહના કે વશવર્તી બના રહતા હૈ વહ દંભકા સેવન કરનેવાલા હૈ । વે શબ્દાદિવિષયોંકો ન ભી ભોગતે હોં તો ભી ઉનકી પરિણતિ તન્દુલમત્સ્ય કે સમાન ઉસ ઓર લાલસાવાલી હોને સે સંયમ કા નાશ કરનેવાલી માની ગઈ હૈ । સંયમ કો મૂલ સે નાશ કરનેવાલા શલ્ય હૈ । માયાશલ્ય કે સદ્ભાવ સે હી અવ્રત ભી વ્રત જૈસે માલૂમ પડતે હૈં । અતઃ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે શિષ્ય ! તું ઇસ શલ્ય કો દૂર કર, વ્યર્થ ક્યોં ઇસકે ફંદે મેં પડકર અપને કો દુઃખી બના રહા હૈ । દૂસરે ચાહે કુછ ભી કરતે હોં યહ તુજે નહીં દેખના હૈ, તું અપની હી ઓર દેખ “તું તારું રે સંભાલ તને બીજાની શી પડી ” તું કયા કર રહા હૈ ? ઇસી લિયે સૂત્રકાર “ત્વમેવ” ઇસ પદ પર જોર દેકર શિષ્ય સે કહ રહે હૈં ।

અથવા-શલ્ય શબ્દકા અર્થ-અષ્ટવિધ કર્મ ભી હૈ, યહ પહિલે વત-લાયા જા ચુકા હૈ કિ-“તપસા નિર્જરા ચ” તપ, સંયમ પાલન કરને સે સંવર તો હોતા હી હૈ પરન્તુ સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા ભી હોતી હૈ । ચારિત્રારાધન કે દ્વારા આત્મા જ્યોં ૨ અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય, ઓર અશુભ યોગોં કા નિગ્રહ કરતા જાતા હૈ ત્યોં ૨ ઇસ આત્મા મેં અપૂર્વ ૨ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ હોતી જાતી હૈ । ઇસ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ મેં આત્મા સંવર ઓર નિર્જરા કે દ્વારા કર્મોં કા ક્રમશઃ નાશ કરતા હુઆ આગે ૨ કે ગુણ-

વવાની આહુનાને વશવર્તી બની રહે છે, તે શબ્દાદિ વિષયોને ભલે નહિ ભોગવતા હોય તો પણ તેની પરિણતિ તન્દુલમત્સ્યસમાન તે તરફ લાલસાવાળી હોવાથી સંયમનો નાશ કરવાવાળી માનવામાં આવે છે સંયમને મૂળથી નાશ કરવાવાળા શલ્ય છે. માયાશલ્યના સદ્ભાવથી અવ્રત પણ વ્રત જેવા માલુમ પડે છે માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-હે શિષ્ય ! તું આ શલ્યને દૂર કર, વ્યર્થ શા માટે તેના ફંદામાં પડીને પોતાને દુઃખી બનાવે છે ? બીજા ભલે કોઈ પણ કાર્ય કરતા હોય એ તારે જોવાનું નથી, તું ફક્ત તારી જ તરફ દેખ, “તું તારું રે સંભાળ, તને બીજાની શી પડી ? ” તું શું કરી રહ્યો છે ? તે માટે સૂત્રકાર “ત્વમેવ” આ પદ ઉપર જોર દઈને શિષ્યને કહે છે.

અથવા શલ્ય શબ્દનો અર્થ અષ્ટવિધ કર્મ પણ છે, એ પહેલાં બતાવવામાં આવેલ છે કે-“તપસા નિર્જરા ચ” તપ, સંયમ પાલન કરવાથી સંવર તો થાય જ છે, પરંતુ સંચિત કર્મોની નિર્જરા પણ થાય છે. ચારિત્રારાધનદ્વારા આત્મા જેમ જેમ અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય, અને અશુભ યોગોનો નિગ્રહ કરતો જાય છે તેમ તેમ આ આત્મામાં અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતાની બદલતિ થતી જાય છે. આ ઉજ્જ્વલતાની બદલતિમાં આત્મા સંવર અને નિર્જરાદ્વારા કર્મોનો ક્રમશઃ નાશ કરીને આગળ આગળના ગુણસ્થાનોમાં ચઢતો જાય છે. એક સમય એવો

મૂલમ્—આસં ચ છંદં ચ વિગિંચ ધીરે, તુમં ચેવ તં સહ-
માહટ્ટુ, જેણ સિયાતેણ નો સિયા, ઇણમેવ નાવબુઝ્ઝાંતિ જે જણા
મોહપાડા, થીલોભપવ્વહિણે તે ભો વયંતિ ણ્યાઈં આયત-
ણાઈં, સો દુક્ખાણ મોહાણ મારાણ નરગાણ નરગતિરિવ્વિણાણ
સયયં મૂઢે ધમ્મં નાભિજાણઈ ઉદાહુ વીરે, અપ્પમાઓ મહામોહે,
અલં કુસલસ્સ પમાણં સંતિ મરણં સંપેહાણ મિદુરધમ્મં
સંપેહાણ નાલં પાસ અલં તે ણેહિં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—આશાં ચ છન્દશ્ચ વેવિક્ષ્વ ધીર ! ત્વમેવ તત્ શલ્યમાહત્ય યેન સ્યાત્
તેન નો સ્યાત્, इदमेव नावबुध्यन्ते ये जना मोहप्रावृताः, स्त्रीलोकप्रव्यथितः,
ते भो वदन्ति, एतान्यायतनानि, तत् (तेषां) दुःखाय मोहाय माराय नरकाय
नरकात्, तिरश्चे, सततं मूढो धर्मं नाभिजानाति, उदाह वीरः, अप्रमादो महामोहे अलं
कुशलस्य प्रमादेन शान्तिमरणं संप्रेक्ष्य भिदुरधर्म संप्रेक्ष्य नालं पश्यालं ते एतैः ॥મૂ૦ ૩॥

ટીકા—‘આશાં ચે’ત્યાદિ । હે ધીર ! ધિયા=ચારિત્રારાધનરૂપયા મત્યા
રાજત ઇતિ ધીરસ્તત્સંવોધને હે ધીર ! =હે સંયમિન્ ! યદ્વા-ધિયં=બુદ્ધિમ્
ઈરયતિ=પ્રેરયતિ પરીપહોપસર્ગવિજયાર્થં યઃ સ ધીરસ્તત્સંવોધને હે ધીર ! હે
સંયમિન્ ! અથવા હે પરીપહોપસર્ગૈરક્ષોભ્ય ! આશાં=શબ્દાદિવિષયસ્પૃહાં,
છન્દઃ=ભોગસ્યાભિપ્રાયં ચ વેવિક્ષ્વ=પૃથક્કુરુ-પરિત્યજેત્યર્થઃ । હે શિષ્ય ! ત્વમેવ

ચારિત્ર કો આરાધન કરનેવાલી બુદ્ધિ સે જો શોભિત હોતા હૈ
અથવા પરીપહ્ઠ ઓર ઉપસર્ગ કો જીતને કે લિયે જો બુદ્ધિ કો પ્રેરિત
કરતા હૈ યહાં ઉસકા નામ ધીર હૈ । સંવોધન કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે
હૈં કિ-હે ધીર ! હે સંયમી ! અથવા પરીપહ્ઠ ઓર ઉપસર્ગ કો જીતને-
વાલે શિષ્ય ! તુમ શબ્દાદિ વિષય કી ઇચ્છા ઓર ભોગ કી ચાહના કો
અપને સે પૃથક્ કરો-છોડો; કારણ કિ વ્રતી કા લક્ષણ “નિઃશલ્યો વ્રતી”
શલ્યરહિત હોના બતલાયા હૈ । સંયમ કો લેકર મી જો શબ્દાદિવિષયોં

ચારિત્રનું આરાધન કરવાવાળી બુદ્ધિથી જે શોભિત થાય છે, અથવા પરિ-
પહ અને ઉપસર્ગને જીતવા માટે જે બુદ્ધિને પ્રેરિત કરે છે; આ ઠેકાણે તેનું નામ
ધીર છે. સંવોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-હે ધીર ! હે સંયમી ! અથવા પરિપહ
અને ઉપસર્ગને જીતવાવાળા શિષ્ય ! તમે શબ્દાદિ વિષયની ઇચ્છા અને ભોગની
ચાહનાઓને તમારાથી દૂર કરો-છોડો, કારણ કે-વ્રતીના લક્ષણ “નિઃશલ્યો વ્રતી”
શલ્યરહિત થવું બતાવેલ છે. સંયમને લઈને પણ જે શબ્દાદિ વિષયને ભોગ-

નાન્યઃ, શલ્યં=માયાદિરૂપમ્ અઘ્નવિધં કર્મ વા આહૃત્ય=પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃસ્વમુત્પા-
દયસિ । યતો યેનાર્થાદિના ભોગપ્રાપ્તિઃ સ્યાત્ તેનૈવ કદાચિન્નો સ્યાત્, અન્તરાય-
કર્મપરિણામસ્યાઘટિતઘટનાઘટકત્વાત્ । અન્તરાયકર્મવૈચિત્ર્યમિદં મોહપ્રાવૃતા ન
જાનન્તીત્યાહ—‘ઇદમેવે’—તિ, ‘મોહપ્રાવૃતાઃ’ મોહેન=અજ્ઞાનેન પ્રાવૃતાઃ=સમ્યગવ-
ગુણિતાઃ, અજ્ઞાનતમસાઽઽચ્છાદિતા इत्यर्थः, ये जनाः तीर्थङ्करगणधराज्ञाविराधकाः
इदमेव=ભોગસાધનમપ્યભોગસાધનં ભવતીતિ કારણવૈચિત્ર્યમેવ નાવબુધ્યન્તે=ન
જાનન્તિ । ભોગાન્તરાયોદયાદજ્ઞાનાન્ધ્યા વિપરીતમતયો હેતુવૈચિત્ર્યં ન મન્યન્તે ।
દૃશ્યતે હિ લોકે ભોગાય સમવહિતોઽપિ કારણકલાપોઽન્તરાયોદયાદનર્થાય ભવતિ ।

કી ઓટ મેં બેઠ કર ભોગાદિક કી યાહના સે તૂને અન્ય પ્રાણિયોં કો
રિજ્ઞાકર કિસી દૂસરે બહાને સે ભોગાદિક સામગ્રી કો જુટાને મેં સાધન-
ભૂત દ્રવ્યાદિક કા સંગ્રહ ભી કરલિયા તો તુજે યહ કૈસે વિશ્વાસ હૈ કિ
હસ દ્રવ્યાદિક સે સુજે ડસ મનોનુકૂલ સામગ્રી કા લાભ અવશ્યર હો
હી જાયગા । વિપરીત ભી હો સકતા હૈ, કારણ કિ અઘટિત ઘટના કો
ઘટાને મેં પટુ અન્તરાય કર્મ કા ઉદય અમી તેરે બના હુઆ હૈ, ડસકા
જબ તક નાશ નહીં હોતા તબ તક ણી મનોઽનુકૂલ ભોગાદિકોં કો
ભોગને મેં સર્વથા અસમર્થ રહતા હૈ, યહી બાત “જેણ સિયા તેણ ણો
સિયા” હન પદોં સે વ્યક્ત કી હૈ । જિસ દ્રવ્યાદિક સાધન સે ભોગપ્રાપ્તિ
હોતી હૈ અન્તરાય કે ઉદય હોને પર ડસી સે ભી સંભવ હૈ કિ ન ભી હો ।
યહ સબ અન્તરાય કર્મ કી હી વિચિત્રતા હૈ, પરન્તુ જિન કી આત્મા મોહ
કે ઉદય સે આચ્છાદિત હો રહી હૈ, તથા તીર્થંકર ંવં ગણધરાદિકોં કી
આજ્ઞા કે વિરાધક હૈં વે અન્તરાયકી હસ વિચિત્રતા કો નહીં જાનતે ।

ચાહનાથી તું અન્ય પ્રાણીઓને રીઝાવી કોઈ બીજા બહાનાથી ભોગાદિક સામગ્રી
ભોગવવામાં સાધનભૂત દ્રવ્યાદિકનો સંગ્રહ પણ કરી લે તો પણ તને એવો
વિશ્વાસ કેમ છે કે—આ દ્રવ્યાદિકથી મને તે મનોનુકૂળ સામગ્રીનો લાભ અવશ્ય
થઈ જ નશે? વિપરીત પણ બની શકે છે, કારણ કે અઘટિત ઘટનાને ઘટાડવામાં
પટુ અન્તરાય કર્મનો ઉદય હજી પણ તારે વિધમાન છે તેનો જ્યાં સુધી નાશ
થશે નહિ ત્યાં સુધી પ્રાણી મનોઽનુકૂળ ભોગાદિકોને ભોગવવામાં સર્વથા અસમર્થ
રહે છે આ વાત “જેણ સિયા તેણ ણો સિયા” આ પદોથી વ્યક્ત કરી છે.
જે દ્રવ્યાદિકસાધનથી ભોગપ્રાપ્તિ થાય છે, અન્તરાયનો ઉદય થતાં તેનાથી પણ સંભવ
છે કે કદાચ ન પણ બને, આ બધી અન્તરાય કર્મની જ વિચિત્રતા છે, પરંતુ
તેની આત્મા મોહના ઉદયથી આચ્છાદિત થઈ રહી છે, તથા જે તીર્થંકર અને
ગણધરાદિકોની આજ્ઞાના વિરાધક છે તે અન્તરાયની આ વિચિત્રતાને બાણતા નથી.

સ્થાનોં મેં ચઢતા ચલા જાતા હૈ । એક સમય એસા ખી આતા હૈ કિ જિસમેં
 હસ કી આત્યંતિક શુદ્ધિ હો જાતી હૈ । હસ પ્રકાર કર્મોચ્છેદ મેં ચારિત્ર કો
 સર્વપ્રથમ સ્થાન પ્રાપ્ત હુઆ હૈ । અતઃ હે શિષ્ય ! નિર્દોષ ચારિત્રારાધન
 કર ઓર હન કર્મોં પર ક્રમશઃ અથવા યુગપત્ વિજય પ્રાપ્ત કર । વિષય
 ભોગોં કી ચાહ સે એસે સુન્દરતમ ચારિત્ર કો બિગાડને કે લિયે ક્યોં
 વ્યર્થ મેં ચેષ્ટા કરતા હૈ ? ક્યોં હસે નષ્ટ બ્રષ્ટ કરતા હૈ ? એસા કરને સે
 ઉલ્ટે અનન્ત સંસાર વર્ધન કરનેવાલે હન કર્મોંકા બંધન દૃઢ હી હોગા,
 જો તુજે અવર મેં દુઃખદાતા હોગા । અપને કો દુઃખી કરને મેં તેરા હી
 અપરાધ હૈ, હસમેં ઓર કોઈ નિમિત્ત નહીં । હસી બાત કી પુષ્ટિ “ અષ્ટ
 વિધં કર્મ વા આહૃત્ય-પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃખમુત્પાદયસિ ” ટીકાકારને
 હસ પંક્તિસે કી હૈ । યહ દૃઢ વિશ્વાસ રખ-જિસ ભોગાદિક કી ચાહના
 મેં પડકર તૂં સંયમ જૈસે અમૂલ્ય રત્ન કો કલંકિત કરને મેં સંકોચ નહીં
 કરતા હૈ । કયા હન ભોગાદિકોં કો ભોગને કી તેરી યહ ભાવના સફલ
 હો જાયગી ? । માન લિયા સંયમરત્ન કો વેંચ કર તૂંને ભોગાદિક વસ્તુઓંકો
 ખરીદ ખી લિયા, પરન્તુ યદિ તેરે પ્રબલ અન્તરાય-ભોગાન્તરાય કા ઉદય
 હૈ તો પ્રાપ્ત હુઅ હન ભોગાદિકોં કો તૂં નહીં ભોગ સકતા । અથવા સંયમ

પણ આવે છે કે જેમાં તેની આત્યંતિક શુદ્ધિ થઈ જાય છે. આ પ્રકારે કર્મો-
 ચ્છેદમાં ચારિત્રને સર્વપ્રથમ સ્થાન પ્રાપ્ત થયેલ છે. માટે હે શિષ્ય ! નિર્દોષ
 ચારિત્રારાધન કર, અને એ કર્મો ઉપર ક્રમશઃ અથવા યુગપત્ વિજય પ્રાપ્ત કર.
 વિષય ભોગોની આહનાથી એવા સુંદરતમ ચારિત્રને બગાડવા શા માટે વ્યર્થ
 ચેષ્ટા કરે છે ? શા માટે તેને નષ્ટ બ્રષ્ટ કરે છે ? આવું કરવાથી ઉલ્ટા અનંત
 સંસારને વધારવાવાળા તે કર્મોના બંધન દેઢ જ થશે, જે તને ભવભવમાં દુઃખ
 દાતા થશે, પોતાને દુઃખી કરવામાં તારોજ અપરાધ છે, તેમા કોઈ બીજું નિમિત્ત
 નથી. આ વાતની પુષ્ટિ “ અષ્ટવિધં કર્મ વા આહૃત્ય પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃખ-
 મુત્પાદયસિ ” ટીકાકારે આ પંક્તિથી કહ્યું છે. એ દેઢ વિશ્વાસ રાખ, જે ભોગા-
 દિકની આહનામાં પડીને તું સંયમ જેવા અમૂલ્ય રત્નને કલંકિત કરવામાં સંકોચ
 કરતો નથી. શું તે ભોગાદિકોને ભોગવવાની તારી એ ભાવના સફળ થશે ? માની
 લ્યે કે-આ સંયમરત્નને વેચીને તેં ભોગાદિક વસ્તુઓને ખરીદી લીધી, પરંતુ
 કદાચ તારા પ્રબળ અંતરાય-ભોગાન્તરાયનો ઉદય હોય તો પ્રાપ્ત થયેલ તે ભોગા-
 દિકોને તું ભોગવી શકતો નથી, અથવા સંયમની ઓટમાં બેસીને ભોગાદિકની

મોહનીયે કામપ્રાધાન્યેન સ્ત્રિયાઃ પ્રાધાન્યમિતિ દર્શયતિ-‘સ્ત્રી’-તિ, સ્ત્રીલોકૈઃ=કામિનીजनैः, प्रव्यथितः=प्रकर्षेण व्यथितः=अधीनीकृतः भोगाशापाशवद्धः साव-
धानुष्ठायां जनः । ते त्वन्यानपि मुहुरूपदेशादिना ससाराधोगर्ते पातयन्तीत्याह
-‘ते भो’ इत्यादि । ते वनितावशवर्तिनो वदन्ति=कथयन्ति ‘भो’ इति संबोधने
हे जनाः ! एतानि=कामिन्यादीन्येव आयतनानि=भोगाधिष्ठानानि सुखकारणानी-
त्यर्थः । कामिन्यो हि कमनीयसुखकारणीभूताः सकलजगतो ललामरूपा निखिल-
लोकामन्दानन्दसन्दोहदायिन्यो भवन्ति, किं भोगस्ताभिर्विना?, इत्यादि ब्रुवन्ति ।

પરન્તુ બીચ હી મેં અશુભોદય સે કિસી એક સીઢી પર સે ઉસકા પૈર
ફિસલ ગયા ઓર વહ વહાં સે નીચે ગિર કર મર ગયા । હિસ દૃષ્ટાન્ત સે
યહી ફલિતાર્થ નિકલતા હૈ કિ-જો સામગ્રી ભોગ કે નિમિત્ત હોતી હૈ
વહી ભોગાન્તરાય કે ઉદય સે કાલાન્તર મેં અનર્થ કે લિયે જીવોં કો હો
જાતી હૈ । પરન્તુ કર્મ કી બલવત્તા હી કુછ એસી હૈ, જો હિસ જીવ કો
બાહિરી વસ્તુઓં મેં ઉન્મત્ત બના રહી હૈ ।

હસી મોહનીય કે ઉદયમેં ભોગોં કી આશારૂપપાશ સે બંધે
હુએ જીવોં મેં કામ કી પ્રધાનતા હોને સે વે સ્ત્રિયોં કે દ્વારા વ્યથિત
કિયે જાતે હૈં, અધીન કિયે જાતે હૈં । શાસ્ત્રકાર કહતે હૈં કિ-એસે
જીવ “ઇતો ભ્રષ્ટસ્તતો ભ્રષ્ટઃ” હો તો કોઈ અચરજ કી બાત નહીં
હૈ, પરન્તુ યે સ્વયં બિગડકર દૂસરોં કો બી બિગડાને કી બાતેં કરતે
હૈં, યહી એક બડા આશ્ચર્ય હૈ । યે દૂસરોં સે યહી કહતે હૈં કિ-“અરે
ભાઈ! હિન સ્ત્રી આદિ પદાર્થોં કે સેવન કરનેમેં હી સંસાર કા સર્વ સુખ

પગથીયા ઉપરથી તેનો પગ લપસી ગયો; અને તે ત્યાંથી નીચે પડીને મરી ગયો.
આ દાખલાથી એવું તાત્પર્ય નીકળે છે કે-જે સામગ્રી ભોગને નિમિત્ત હોય છે
તે ભોગાન્તરાયના ઉદયથી કાલાન્તરમાં જીવોને અનર્થરૂપ પણ બની જાય છે.
પરંતુ કર્મની બલવત્તા જ કોઈ એવી છે કે, જે આ જીવને બહારની વસ્તુઓમાં
ઉન્મત્ત બનાવે છે

આ મોહનીયના ઉદયમાં ભોગોની આશારૂપ પાશથી બંધાયેલા જીવોમાં
કામની પ્રધાનતા હોવાથી તે સ્ત્રિયોદ્વારા વ્યથિત કર્યે જાય છે. અધીન કર્યે જાય
છે શાસ્ત્રકાર કહે છે કે-એવો જીવ ઇતો ભ્રષ્ટસ્તતો ભ્રષ્ટ થાય તો કોઈ અચ-
રજની વાત નથી પરંતુ તે પોતે બગડીને બીજાને પણ બગાડવાની વાતો કરે
છે એ પણ એક મોટું આશ્ચર્ય છે તે બીજાઓને એમ કહે છે કે-“અરે ભાઈ
આ સી આદિ પદાર્થોનું સેવન કરવામાં જ સંસારનું સર્વ સુખ સમાએલું છે

યથા સ્વભોગાર્થં વિપુલવિભવસમ્પાદિતં સકલજનાશ્ચર્યકારિકાશ્ચકલાકલાપનિર્મા-
યિતં સકલેન્દ્રિયસુખાવલમ્બિ-ગગનચુમ્બિ-પ્રાસાદમવલોકિતુમુપરિતનભાગમુપગતૌ
ભવનશોભાવલોકનનિમગ્નો ભવનાધિપતિરારોહમાર્ગેણાવતરન્ કર્મવૈચિત્ર્યાત્પાદસ્વ-
લનેન તતો નિપત્ય મૃતિમવાપ । અહો ! પશ્યન્તુ મહામોહમહિમાનમ્ ।

સચ વાત હૈ ભોગાન્તરાય કે ઉદય સે જો અજ્ઞાન સે અન્ધ હો રહે હૈ, એવં
જિનકી મતિ વિપરીત બની હુઈ હૈ વે इस अन्तराय की विचित्रता को
कि-जो पदार्थ भोगसामग्री का साधन है वही कालान्तर में अन्तरायादि
निमित्त को पाकर उसका साधन नहीं होता है-नहीं माना करते हैं, परन्तु
उनकी मान्यता या अमान्यता से कुछ भी नहीं हो सकता है। हम
व्यवहार में यह बात प्रत्यक्ष देखते हैं कि-भोग के लिये एकत्रित किये
गये कारणकलाप-साधन अन्तराय के उदय से अनर्थकारी हो जाते हैं।

જैसे કિસી ધનિક વ્યક્તિને અપને ઉપભોગ કરને કે લિયે પૂર્ણ ઉપભોગ
કી સામગ્રીસમન્વિત એક સર્વસુંદર ગગનતલચુમ્બી પ્રાસાદ બહુત
ચતુર કારીગરોં દ્વારા બનવાના પ્રારંભ કિયા । ધીરે ૨ વહ બનકર પૂર્ણ
તૈયાર હો ગયા । મકાનમાલિક ઉસકી શોભા કા નિરીક્ષણ કરને લિયે
વહાં ગયા । સબ સે ઝંચે સ્વખંડ પર ચઢ કર ઉસને ઉસકી શોભા કા
સર્વાંગનિરીક્ષણ કિયા । પૂર્ણ શોભા સે યુક્ત ઉસે દેસકર વહ આનન્દ
મગ્ન બી હુઆ । કુછ દેર બાદ વહ વહાંસે વાપિસ લોટકર નીચે આને લગા,

સાચી વાત છે કે ભોગાન્તરાયના ઉદયથી જે અજ્ઞાનથી અંધ થઈ રહેલ છે, અને
જેની મતિ વિપરીત બનેલ છે તે આ અંતરાયની વિચિત્રતાને કે-જે પદાર્થ ભોગ
સામગ્રીનું સાધન છે તે કાલાન્તરમાં અંતરાયાદિક નિમિત્તને મેળવી તેનું સાધન
બનતું નથી-માનતા પણ નથી, પરંતુ તેની માન્યતા અગર અમાન્યતાથી
કંઈ પણ બની શકતું નથી. અમે વ્યવહારમાં આ વાત પ્રત્યક્ષ દેખીએ છીએ
કે-ભોગ માટે એકત્રિત કરવામાં આવેલ કારણકલાપ-સાધન અંતરાયના ઉદયથી
અનર્થકારી બની જાય છે.

જેવી રીતે કંઈ ધનિક વ્યક્તિએ પોતાના ઉપભોગને માટે પૂર્ણ
ઉપભોગની સામગ્રીસમન્વિત એક સર્વસુંદર ગગનચુંબી મહેલ ઘણા ચતુર
કારીગરો દ્વારા બનાવવાનો પ્રારંભ કર્યો. ધીરે ધીરે તે બનીને પૂર્ણ તૈયાર
બની ગયો. મકાનમાલિક તેની શોભાનું નિરીક્ષણ કરવા ત્યાં ગયો. સૌથી
ઉંચા ખંડ ઉપર ચડીને તેણે તેની શોભાનું સર્વાંગ નિરીક્ષણ કર્યું. પૂર્ણ શોભાથી
યુક્ત તેને દેખીને તે આનંદમગ્ન પણ થયો, થોડા વખત પછી તે ત્યાંથી પાછો
ફરીને નીચે આવવા લાગ્યો. પરંતુ વચમાં જ અશુભ ઉદયથી કંઈ એક સીડીના

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા, દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિચ્છતિ ।

તૃતીયે દીર્ઘનિઃશ્વાસશ્ચતુર્થે જ્વરમાદિશેત્ ॥ ૧ ॥

પશ્ચમે દહ્યતે ગાત્રં, ષષ્ઠે ભક્તં ન રોચતે ।

સપ્તમે ચ ભવેત્કમ્પ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥

નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં ત્યજેત્ ।

કામિનાં મદનોદ્વેગા, જાયન્તે દશ તે હ્યમી ” ॥ ૩ ॥ ઇતિ ॥

અતઃ એવોક્તં ‘મારાયે’-તિ । કિંચ-મૃત્વા નરકાય=દશવિધક્ષેત્રયાતનાસ્થાનાય, તથા ચ-‘નરકતિરથે’ અત્ર ‘નરક’ ઇતિ લુપ્તપશ્ચમી, તેન નરકાન્નિર્ગત્ય યદિ સ જન્મ લભતે તર્હિ પ્રાયસ્તિર્યગ્યોનિષ્વેત્યર્થઃ ।

અન્તિમ દશા મેં પહુંચાનેવાલી હૈં । કામ કી દશ અવસ્થાઈ બતલાઈ હૈં, ઉનમેં મરણ યે કામ કી અન્તિમ અવસ્થા હૈ । કહા મી હૈ—

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિચ્છતિ ।

તૃતીયે દીર્ઘનિઃશ્વાસશ્ચતુર્થે જ્વરમાદિશેત્ ॥ ૧ ॥

પશ્ચમે દહ્યતે ગાત્રં, ષષ્ઠે ભક્તં ન રોચતે ।

સપ્તમે ચ ભવેત્કમ્પઃ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥

નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં ત્યજેત્ ।

કામિનાં મદનોદ્વેગા જાયન્તે દશ તે હ્યમી ” ॥ ૩ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ હૈ । સ્ત્રિયોં કે સંગમ સે જીવ અનેક અસાધ્ય રોગોંકા ઘર બન કર આર્ત રૌદ્ર ધ્યાન કી વજહ સે મર કર નરક મેં જા પડતા હૈ । વહાં પર દશ પ્રકાર કી ક્ષેત્રીય યાતના કો ભોગતા હૈ । નરક इन યાતનાઓં કે

કામની દશ અવસ્થાઓ બતાવેલ છે તેમાં મરણ એ કામની અન્તિમ અવસ્થા છે કહ્યું પણ છે—

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિચ્છતિ ।

તૃતીયે દીર્ઘનિઃશ્વાસશ્ચતુર્થે જ્વરમાદિશેત્ ॥ ૧ ॥

પશ્ચમે દહ્યતે ગાત્રં, ષષ્ઠે ભક્તં ન રોચતે ।

સપ્તમે ચ ભવેત્કમ્પ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥

નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં ત્યજેત્ ।

કામિનાં મદનોદ્વેગા, જાયન્તે દશ તે હ્યમી ” ॥ ૩ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ છે સ્ત્રિયોનો સંગમ હોવાને નરકનુ દુઃખ આપે છે, અને અંતમાં તેનાથી હવ અનેક અસાધ્ય રોગોનુ ઘર બનીને આર્તરૌદ્ર ધ્યાનથી મરીને નરકમાં જાય છે. તે ઠેકાણે દશ પ્રકારની ક્ષેત્રીય યાતનાઓ ભોગવે છે. નરક આ યાતનાઓના

કિન્તુ નૈવ, પ્રત્યુત દુઃસ્વાધર્થમેવેત્યાહ—‘તદિ’—ત્યાદિ, તેષાં તત્=કામિની-વશવર્તનં તાસાં સુખાયતનકથનં ચોભયમેવ દુઃસ્વાય=એહિકપારત્રિકાઽકલ્યાણાય ભવતિ । એવં સર્વત્ર ચતુર્થ્યન્તે યોજ્યમ્ । અપિ ચ મોહાય=અજ્ઞાનાય । કિં ચ મારાય=મરણં મારસ્તસ્મૈ ચરમકામદશાર્થમ્, કામસ્ય દશવિધા અસ્થાઃ સમુત્પદ્યન્તે, તાસુ દશમાવસ્થા મરણાશ્ચ ભવતિ । ઉક્તશ્ચ—

સમાયા હૈ, યે હી સુખ કે કારણ હૈ ” । મોહાભિભૂત જીવોં કી દૃષ્ટિ મેં સ્ત્રી હી ઉત્તમ સે ઉત્તમ આનંદ પ્રદાન કરનેવાલી વસ્તુ પ્રતિભાસિત હોતી હૈ । જગત કે અનેક સુન્દર પદાર્થોં સે ભી વહ અધિક સુન્દર ઉન્હેં માલૂમ દેતી હૈ । ઇસકે વિના સંસાર કા મજા ભી ઉનકી દૃષ્ટિ મેં ફીકા રહતા હૈ, પરન્તુ ઇસ પ્રકાર કી ઉનકી માન્યતા કેવલ એક મોહ કા હી વિલાસ હૈ । જિસ પ્રકાર અશુચિ પદાર્થ કા સેવન કરનેવાલા વરાહ અપને કો સુખી માનતા હૈ ઉસી પ્રકાર “નારીજઘનરન્ધ્રસ્થવિષ્મૂત્રમયચર્મણા” નારીકે જઘન કે છિદ્રસ્થ ચમડે કે સેવન સે અજ્ઞાની મનુષ્ય ભી અપને કો સુખી માનતા રહતા હૈ, પરન્તુ જ્ઞાનિયોં કી દૃષ્ટિ મેં ઇસ પ્રકાર કે જીવોં કા વ્યવહાર ગર્હિત એવં નિન્દિત હૈ । ઇસી બાત કો ખુલાશા કરતે હુએ કહતે હૈં કિ—“તત્ તેષાં દુઃસ્વાય મોહાય” ઇત્યાદિ । સ્ત્રિયોં કે અધીન રહના ઔર ઉન્હેં સુખ કા સ્થાન સમજના યે દોનોં બારે માનવ જગત કો ઇસ લોક ઔર પરલોક મેં અકલ્યાણપ્રદ હૈં, અજ્ઞાન કો દેનેવાલી હૈં ઔર કામ કી

તે જ સુખનું કારણ છે ” મોહવશ જીવોની દૃષ્ટિમાં સ્ત્રી જ ઉત્તમમાં ઉત્તમ આનંદ આપવાવાળી વસ્તુ પ્રતિભાસિત થાય છે. જગતના અનેક સુંદર પદાર્થોથી પણ તે અધિક સુંદર તેને માલૂમ પડે છે. તેના વિના સંસારની મજા પણ તેની દૃષ્ટિમાં ફીકી રહે છે, પરંતુ આ પ્રકારનો તેનો કેવળ એક મોહનો જ વિલાસ છે. જે પ્રકારે અશુચિ પદાર્થનું સેવન કરવાવાળા ભૂંડ પ્રાણી પોતાને સુખી માને છે તેજ પ્રકારે “નારીજઘનરન્ધ્રસ્થવિષ્મૂત્રમય-ચર્મણા” નારીના જઘના છિદ્રસ્થ આમડાનું સેવન કરવાથી અજ્ઞાની મનુષ્ય પણ પોતાને સુખી માનતો રહે છે, પરંતુ જ્ઞાનીયોની દૃષ્ટિમાં આ પ્રકારના જીવોનો વ્યવહાર ગર્હિત અને નિન્દિત છે. આ વાતનો ખુલાસો કરીને કહે છે કે— તત્ તેષાં દુઃસ્વાય મોહાય ઇત્યાદિ. સ્ત્રિયોના આધીન રહેવું, અને તેને સુખનું સ્થાન સમજવું, એ બન્ને વાતો માનવજગતને આલોક અને પરલોકમાં અકલ્યાણપ્રદ છે. અજ્ઞાનને દેવાવાળી છે. અને કામની અન્તિમ દશાને પહોંચાડવાવાળી છે.

ન પ્રમાદોઽપ્રમાદઃ, સ વિધેયઃ, ન તત્ર પ્રમાદપ્રમત્તેન ભાવ્યમ્ । અન્યદપ્યાહ—‘અલં’-મિત્યાદિ, ‘કુશલસ્ય’ કુશાન્=ભાવકુશાન્ અષ્ટવિધકર્માણિ લુનાતિ=છિનત્તીતિ કુશલઃ=કર્મવિદારણપરસ્તસ્ય પ્રમાદેન=મદ્ય-વિષય-કષાય-નિદ્રા-વિકથારૂપેણ અલં=વ્યર્થ, તત્ર કુશલે પ્રમાદસ્યાસમ્ભવાત્ । કિં કૃત્વા પ્રમાદં ન કરોતીત્યાહ—‘શાન્તી’-ત્યાદિ, શાન્તિમરણં, શમનં શાન્તિઃ=સકલકર્મનાશઃ, અત એવ શાન્તિઃ=

રૂપ મહામોહ મેં આસક્તિ નહીં કરની ચાહિયે । પ્રમાદ સે સંસાર ઔર અપ્રમાદ સે મુક્તિ કા લાભ હોતા હૈ । સૂત્ર મેં શાન્તિ ઔર મરણ ઇન શબ્દોં કા વાચ્ય અર્થ ક્રમશઃ અવ્યાવાધસુખલક્ષણ મોક્ષ ઔર ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર હૈ, ક્યોં કિ “શમનં શાન્તિઃ” શમન કા નામ શાંતિ હૈ, વહ સમસ્ત કર્મોં કા અભાવસ્વરૂપ અવસ્થા હૈ । ઇસકા દૂસરા નામ અવ્યાવાધસુખલક્ષણ મોક્ષ ખી હૈ । વારંવાર ચતુર્ગતિયોં મેં પ્રાણી જહાં પર મરતે રહતે હૈં ઉસ કા નામ મરણ-સંસાર હૈ । ભાવકુશરૂપ અષ્ટવિધ કર્મોંકા જો છેદન કરતા હૈ વહ કુશલ હૈ, ક્યોં કિ—“કુશાન્ લુનાતીતિ કુશલઃ” । અષ્ટ પ્રકાર કે કર્મોં કો વિદારણ કરનેવાલે કા નામ કુશલ હૈ । “અલં કુશલસ્ય પ્રમાદેન” અર્થાત્ કુશલ કે લિયે પ્રમાદ હોતા હી નહીં હૈ । મદ્ય વિષય કષાય નિદ્રા ઔર વિકથા કે ભેદસે પ્રમાદ પાંચ પ્રકારકા હોતા હૈ । જો કર્મોં કો નાશ કરને મેં પ્રયત્નશાલી હો રહે હૈં, વે કખી પ્રમત્તદશાસંપન્ન નહીં હોતે હૈં । કારણ કિ વે જાનતે હૈં કિ—પ્રમાદ સે સંસાર મેં પરિભ્રમણ તથા અપ્રમાદ સે શાંતિ-અવ્યાવાધસુખ-

અને નપુસકવેદ ૩૫ મહામોહમા આસક્તિ કરવી જોઈએ નહિ પ્રમાદથી સંસાર અને અપ્રમાદથી મુક્તિનો લાભ થાય છે. સૂત્રમાં શાંતિ અને મરણ આ શબ્દોનો વાચ્ય અર્થ ક્રમશઃ અવ્યાવાધસુખલક્ષણ મોક્ષ અને ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર છે કારણ કે “શમનં શાન્તિ” શમનનું નામ શાંતિ છે તે સમસ્ત કર્મોની અભાવ સ્વરૂપ અવસ્થા છે. તેનું ખીજું નામ અવ્યાવાધસુખલક્ષણ મોક્ષ પણ છે. વારંવાર ચતુર્ગતિમાં પ્રાણી જ્યાં મરતા રહે છે તેનું નામ મરણ-સંસાર છે ભાવકુશ ૩૫ અષ્ટવિધ કર્મોનું જે છેદન કરે છે. તે કુશલ છે કારણ કે “કુશાન્ લુનાતીતિ કુશલ.” આઠ પ્રકારના કર્મોનું વિદારણ કરવાવાળાનું નામ કુશળ છે. “અલં કુશલસ્ય પ્રમાદેન” અર્થાત્ કુશળને માટે પ્રમાદ થતો જ નથી. મદ્યવિષય કષાય નિદ્રા અને વિકથાના લેદથી પ્રમાદ પાંચ પ્રકારનો હોય છે, જે કર્મોનો નાશ કરવામાં પ્રયત્નશાળી હોય છે તે કોઈ વખત પ્રમત્તદશાસંપન્ન બનતાં નથી. કારણ કે તેઓ જાણે છે કે—પ્રમાદથી સંસારમાં પરિભ્રમણ અને અપ્રમાદથી શાંતિ

एवम्भूतः स्वात्मद्वितं न जानातीत्याह—‘सतत’—मित्यादि । सततं=नित्यं, मूढः=दर्शनमोहचारित्रमोहकर्मणा युक्तः धर्म=जिनोक्तं श्रुतचारित्रलक्षणं न जानाति । एतत्सर्वं न मया स्वमत्या प्रोक्तं किन्तु—‘उदाह’—ति, वीरः=परिज्ञातसकलहेयो पादेयस्तीर्थङ्करादिः, उत्=प्रावल्येन आह=कथितवान् । अवर्षत्वाद् भूते लट् । कि-मित्याह—‘अप्रमाद’ इति, महामोहे=स्त्रीपुंनपुंसकवेदरूपे अप्रमादः=प्रमाद आसक्तिः प्रधान स्थान हैं। वहां से निकल कर जीव प्रायः तिर्यच योनि में ही जन्म धारण करता है। “नरक-निरिक्खाण” अर्थात् नरक से निकल कर जीव जब जन्म धारण करता है तो वह प्रायः तिर्यच योनि में ही उत्पन्न होता है, यह अर्थ इस पद से प्रतीत होता है।

जिनकी आत्मा नित्य चारित्रमोहनीय के उदय से मलिन बनी है वे जिनेन्द्र भगवान् द्वारा प्रतिपादित इस श्रुतचारित्र रूप धर्म को नहीं जानते हैं। इस प्रकार का कथन श्री अन्तिम तीर्थंकर महावीर स्वामीका है, जिन्होंने जगत के समस्त हेयोपादेय तत्त्वों को अच्छी तरह जान लिया है। इस कथन में सूत्रकार महावीर स्वामी की प्ररूपणा प्रकट करने से तथा अपनी कल्पना का निषेध करने से उसमें प्रमाणता प्रकट करते हुए कहते हैं—“एतत्सर्वं न मया स्वमत्या प्रोक्तं किन्तु उदाह वीरः”। यह समस्त पूर्वोक्त कथन तथा जो कुछ आगे कहा जाता है वह सब मैंने नहीं किया है, किन्तु वीर भगवान् ने कहा है। भगवान् का उपदेश है कि जीवों को “अप्पमाओ महामोहे” स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसक वेद

પ્રધાન સ્થાન છે. ત્યાથી નીકળીને જીવ પ્રાયઃ તિર્યચ યોનિમાં જ જન્મ ધારણ કરે છે. “નરકતિરિક્ખાણ” નરકનાથી નીકળી જીવ ત્યારે જન્મ ધારણ કરે છે ત્યારે તે તિર્યચ યોનિયામાં જ ઉત્પન્ન થાય છે એ પૂર્વોક્ત અર્થ આ પદ્યથી પ્રતીત થાય છે.

જેનો આત્મા કાયમ ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયથી મલિન બનેલ છે તે જીનેન્દ્ર ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત આ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને જાણતો નથી, આ પ્રકારનું કથન શ્રી અંતિમ તીર્થંકર મહાવીર સ્વામીનું છે જેણે જગતના સમસ્ત હેયોપાદેય તત્વોને સારી રીતે જાણી લીધા છે આ કથનમાં સૂત્રકાર મહાવીર સ્વામીની પ્રરૂપણા પ્રગટ કરવાથી, તથા પોતાની કલ્પનાનો નિષેધ કરવાથી તેના પ્રમાણતા પ્રગટ કરતાં કહે છે. “એતત્સર્વં ન મયા સ્વમત્યા પ્રોક્તં કિન્તુ ઉદાહવીરઃ” આ સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન અને જે આગળ કહેવામાં આવશે તે બધા મં કરેલ નથી પણ વીર ભગવાને કરેલ છે. ભગવાનનો ઉપદેશ છે કે જીવોને “અપ્પમાઓ મહામોહે” સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ

પ્રમાદો ન વિધેય इति सम्बन्धः । भोगास्तु भुक्तपूर्वा अपि न वृत्तिजनकाः, इत्याह—
'नाल'-मिति भोगाः परिभुक्ता अपि स्पृहानिवृत्तये नालं=न समर्था भवन्ति । उक्तञ्च—

“ नग्गी तिप्पइ कड्ढेहिं, नावगाहिं महोदही ।

न जमो सव्वभूएहिं, इत्थीहिं पुरिसो तहा ” ॥ १ ॥

મેં પરિભ્રમણ કરતે હુણ અનન્ત કષ્ટોં કો ભોગના પડેગા । શરીર કા નાશ અવશ્યંભાવી હૈ, તો મેં સંયમની વિરાધના કરકે હસે અવિનશ્વર અમર તો કર નહીં સકતા ! અતઃ હસ વિનશ્વર વસ્તુ સે જો મુક્કે પરંપરા રૂપ સે અવિનશ્વર વસ્તુની પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ તો યહ સવ સે વડા ભારી લાભ મુક્કે મિલતા હૈ; ફિર ક્યોં પ્રમાદી બન કર હસ શરીર કે મોહ મેં પડ અપને સંયમની વિરાધના કરૂં ? । દોનોં હાલત મેં શરીર કા નાશ સ્વયં સિદ્ધ હૈ; ફિર ભી ંક હાલત અનંત આનંદપ્રદ ંર દૂસરી હાલત અનંત કષ્ટપ્રદ હૈ, ંસા વિચાર કર સંયમી કો કર્મી ભી પ્રમાદ નહીં કરના ચાહિયે । હસી લિયે સૂત્રકાર ને “ મિદુરધર્મ સંપ્રેક્ષ્ય ” હસ વાક્ય કે દ્વારા સંયમી જનકો શિક્ષા દી હૈ । તથા આગે ભી શિક્ષા દેતે હુણ વે પ્રકટ કર રહે હૈં કિ જિન પંચેન્દ્રિયોં કે ભોગ તુમને પહિલે ભોગ લિયે હૈં વે ભી તુમ્હારી ંચ્છા કી શાંતિ કરને કે લિયે સમર્થશાલી નહીં હૈં, કહા ભી હૈ—

“ નગ્ગી તિપ્પઈ કડ્ઢેહિં, નાવગાહિં મહોદહી ।

ન જમો સવ્વભૂણ્હિં, ંત્થીહિં પુરિસો તહા ” ॥ ૧ ॥

કષ્ટોને ભોગવવા પડશે, શરીરનો નાશ અવશ્યભાવી છે, તો હું સંયમની વિરાધના કરીને તેને અવિનશ્વર અમર તો કરી શકતો નથી, માટે આ વિનશ્વર વસ્તુથી જે મને પરંપરારૂપથી અવિનશ્વર વસ્તુની પ્રાપ્તિ થાય છે તો આ બધાથી માટેો લાભ મને મળે છે તો પછી શા માટે પ્રમાદી બનીને આ શરીરના મોહમાં પડી પોતાના સંયમની વિરાધના કરૂં, બને હાલતમાં શરીરનો નાશ સ્વયં સિદ્ધ છે તો પણ એક હાલત અનંત આનંદપ્રદ અને બીજી હાલત અનંત કષ્ટપ્રદ છે. એવો વિચાર કરી સંયમીએ કોઈ વખત પણ પ્રમાદ નહિ કરવો જોઈએ, માટે સૂત્રકારે “ મિદુરધર્મ સંપ્રેક્ષ્ય ” આ વાક્યદ્વારા સંયમી જનને શિક્ષા આપી છે. તથા આગળ પણ શિક્ષા આપતા તે પ્રગટ કરે છે કે—જે પાંચ ઇન્દ્રિયોના ભોગ તમે પહેલા ભોગવી લીધા છે તે પણ તમારી ઇચ્છાની શાંતિ કરવા માટે સમર્થશાળી નથી, કહ્યું પણ છે—

‘ નગ્ગી તિપ્પઈ કડ્ઢેહિં, નાવગાહિં મહોદહી ।

ન જમો સવ્વભૂણ્હિં, ંત્થીહિં પુરિસો તહા ” ॥ ૧ ॥

ભોગામિષઘૃદ્ધાનાં ભોગસ્યાધિગમેઽનધિગમેઽપિ મહાદુઃસ્વમેવેત્યુપદિશતિ-
'એયં પસ્સ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એયં પસ્સ મુણી, મહઙ્ગમયં નાઙ્વાઙ્ગ કંચણં, એસ
વીરે પસંસિએ, જે ન નિવિઙ્ગિઙ્ગ આયાણાએ ન મે દેઙ્ગ ન કુપ્પિઙ્ગા,
થોવં લઙ્કું ન ચિંસએ, પહિસેહિઓ પરિણમિઙ્ગા, એયં મોણં
સમણુવાસિઙ્ગાસિ-ત્તિવેમિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—એતત્પશ્ય મુને ! મહઙ્ગયં નાતિપાતયેત્ કશ્ચન એપ વીરઃ પ્રશંસિતઃ
યો ન નિર્વિઘ્નેત આદાનાય ન મે દદાતિ ન કુપ્યેત્, સ્તોકં લઙ્ક્યા ન નિન્દેત્,
પ્રતિષિદ્ધઃ પરિણમેત્, એતન્મૌનં સમનુવાસયેઃ, ॥ ઇતિ બ્રવીતિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—'એત'—દિત્યાદિ । હે મુને !—હે અનગાર ! એતત્=કામભોગાસેવનં,
મહઙ્ગયં=ભયજનકતયા મહાદુઃસ્વરૂપમ્, મરણકારણત્વેન દુઃસ્વે મહત્ત્વમ્, પશ્ય=
સર્વથા દુઃસ્વજનક જાનીહિ । ઉક્તઞ્ચ—

ટીક નહીં; કારણ કિ-ન માલૂમ કાલકા ગ્રાસ હો કવ જાના પડે ।
મૃત્યુ કા જબર્દસ્ત ભય પ્રમાદી પ્રત્યેક પ્રાણી કો લગા હી રહતા હૈ ।
કાલ બાજે બજાતા તો આતા નહીં હૈ કિ જિસસે ડસસે સચેત હો
જાય । યહ તો વિના વિચાર કરનેવાલે પ્રત્યેક જીવાત્મા કો અપને પંજે મેં
ફેંસા લેતા હૈ । અતઃ સંસારદશા ભયવાલી હૈ ઓર યહાં પર નિર્ભયદશા
રૂપ સુખ કા અંશ માત્ર ખી પ્રાપ્ત હોના સર્વથા અસંભવ હૈ; અતઃ અવ્યા-
વાધ સુખ હી વાસ્તવિક સુખ હૈ । ઇસકી પ્રાપ્તિ સંયમારાધન સે હી જીવોં
કો હોતી હૈ । એસા વિચાર કર સંયમી મુનિ કો સંયમભાવ મેં કખી
ખી પ્રમત્તદશાયુક્ત નહીં હોના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ખખર નથી કે કાળનો ગ્રાસ ધની કચારે જાવું પડે. આ પ્રકારે મૃત્યુનો
ભય પ્રમાદી પ્રત્યેક પ્રાણીને લાગેલો જ રહે છે. કાળ વાળુ વગાડતો તો આવતો
જ નથી કે જેનાથી પ્રાણી ચેતી જાય, એ તો વિચાર નહિ કરવાવાળા પ્રત્યેક
જીવાત્માને યોતાના પજામાં ફેંસાવે છે. માટે સંસારદશા ભયવાળી છે, અને આ
ઠેકાણે નિર્ભયદશાએ સુખનો અશમાત્ર પણ પ્રાપ્ત થવો સર્વથા અસંભવ છે.
માટે અવ્યાવાધસુખ જ વાસ્તવિક સુખ છે તેની પ્રાપ્તિ સંયમારાધનથીજ
જીવોને થાય છે એવો વિચાર કરી સયમી મુનીએ સયમભાવમાં કોઈ વખત
પણ પ્રમત્તદશાયુક્ત થવું જોઈએ નહિ. ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—નાગ્નિસ્તૃપ્યતિ કાષ્ઠૈઃ=નાપગાભિર્મહોદધિઃ ।

ન યમઃ સર્વભૂતૈશ્ચ, સ્ત્રીભિઃ પુરુષસ્તથા ॥ ૧ ॥ इति

તત્સર્વં પદ્ય=બુદ્ધ્યસ્વ, દુઃશેર્જાનસામાન્યાર્થકત્વાત્, અતો હે મેધાવિન્ ! તે= તવ સદુપદેશજિઘ્ક્ષોઃ એભિઃ=પ્રમાદમયૈર્દુઃસ્વજનકૈર્વિષયોપભોગૈઃ અલં=વ્યર્થમ્, એમિરાત્મકલ્યાણં સાધ્યં નાસ્તીત્યર્થઃ ।

યદ્વા—એતૈર્વિષયોપભોગૈરવ્યાવાધસુખમ્, અલમ્=પર્યાપ્તં વિશિષ્ટતરમિત્યર્થઃ, અતર્કિતોપનતમરણે સંસારે સુખલવસ્યાઽસમ્ભવાદવ્યાવાધસુખમેવ સુખમિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જિસ પ્રકાર અગ્નિ કાષ્ઠોં સે, સમુદ્ર નદિયોં સે, કાલ પ્રાણિયોં કી મૃત્યુ સે તૃપ્ત નહીં હોતા હૈ, ડસી પ્રકાર મનુષ્ય ધી સ્ત્રીસંભોગ સે કમી ધી તૃપ્ત નહીં હોતા હૈ ॥ ઇસલિયે હે મેધાવી શિષ્ય ! તુમ ધી યહ અપને મન મેં દૃઢ ધારણા કર લો કિ પ્રમાદ-ભય-દુઃસ્વજનક ઇન વિષયભોગોં સે કમી ધી આત્મકલ્યાણ સાધ્ય નહીં હો સકતા, અતઃ ઇનકી યાહકી ડાહમેં ક્યોં અપને સંયમરૂપી પવિત્ર ધર્મકી આહુતિ કરને કે લિયે સંકલ્પ વિકલ્પ કરતે હો । યહ તુમસે ઇસલિયે કહા જાતા હૈ કિ તુમ સદુપદેશ કો ગ્રહણ કરને કી ઇચ્છા રખતે હો ।

અથવા—યહ સમજો કિ ઇસ વૈષયિક સુખ કી અપેક્ષા અવ્યાવાધ-સુખ વિશિષ્ટતર હૈ । કારણ કિ સંસારદશા ભયવાલી હૈ, ઇસમેં નિર્ભય અવસ્થા તો હો હી નહીં સકતી । યદિ થોડી દેર કે લિયે યહ અસંભવ ધી સંભવિત કલ્પિત કર લિયા જાય કિ—“યહાં પ્રાણી ભયરહિત હૈ” તો ધી

જે પ્રકારે અગ્નિ કાષ્ઠોથી, સમુદ્ર નદિઓથી, કાળ પ્રાણિઓની મૃત્યુથી તૃપ્ત થતો નથી, તે પ્રકારે મનુષ્ય પણ સ્ત્રી સંભોગથી કોઈ વખત પણ તૃપ્ત થતો નથી. માટે હે મેધાવી શિષ્ય ! તમે પણ એ, પોતાના મનમાં દૃઢ કરી લ્યો કે પ્રમાદ-ભય-દુઃખજનક આ વિષયભોગોથી કોઈ વખત પણ આત્મ-કલ્યાણ સાધ્ય થઈ શકતું નથી, માટે તેની આહનાની ઢાહમાં શા માટે પોતાના સંયમરૂપી પવિત્ર ધર્મની આહુતિ કરવા સંકલ્પ વિકલ્પ કરો છો. આ તમને એટલા માટે કહેવામાં આવે છે કે તમે સદુપદેશને ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છા રાખનાર છો.

અથવા એ સમજો કે આ વૈષયિક સુખની અપેક્ષા અવ્યાવાધ સુખ વિશિષ્ટતર છે, કારણ કે સંસારદશા ભયવાળી છે. તેમાં નિર્ભય અવસ્થા તો થઈ શકતી નથી. કલ્પ થોડા વખત માટે આ અસંભવ પણ સંભવિત માની લઈએ કે “આંહી પ્રાણી ભયરહિત છે” તો પણ ઠીક નહિ, કારણ કે—એ

યદ્વા યત્કામભોગાસક્ત આસ્રવદ્વારૈર્હિંસાદિષુ પ્રવર્તતે તસ્યેહ પરત્ર ચ મહદ્ગ્રયં ભવતીતિ પશ્ય । इह लोके पुरुषबन्धकाऽलीकवादिचोरपारदारिकाणां मारदण्डन-जिह्वाच्छेदनबन्धघातादिकं च पश्य, परलोके नरकादिषूपपातं पश्येति तात्पर्यम् । एवं तर्हि किं विधेयम् ? इत्याह—‘नातिपातये’—दित्यादि । मुनिः कञ्चन=कमपि प्राणिनं नातिपातयेत्=न प्राणैर्व्यपरोपयेत्; उपलक्षणं मृषावादाद्यास्रवाणामेतत् ।

કામભોગ સે અધિક સંસાર મેં ઔર કોઈ વેદના ઉષ્ણતર નહીં હૈ, ક્યોં કિ હસ વ્યાધિ કા રોગી શીતલચંદ્રકિરણોં સે મી અત્યંત સંતપ્ત હો જાતા હૈ ।

અથવા—કામભોગસેવન હસ જીવ કો હસ લોક મેં ઔર પરલોક મેં મહાભયકારી હોતા હૈ । ક્યોં કિ કામભોગ મેં આસક્ત પ્રાણી હિંસા-દિક પાપોં મેં પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ । હિંસાદિકોં મેં પ્રવૃત્તિ હોને સે જીવ અશુભ કર્મોં કો બાંધતા હૈ, ઔર હસકે ફલ કો વહ નરકાદિ યોનિયોં મેં ભોગતા હૈ । જો પ્રાણી હિંસક, ઝૂઠા, ચોર ઔર પરદારલંપટ હોતે હૈં ઉન્હેં હસી લોક મેં ફાંસી, રાજદણ્ડ, જિહ્વાછેદન, બંધ ઔર ઘાતાદિક અનેક કષ્ટ ભોગને પડતે હૈં, તથા પરલોક મેં નરકાદિ ગતિયોં મેં ઉનકો જન્મ ધારણ કરના પડતા હૈ । ऐसा समझ कर हे मुने ! तुम इस ओर अपनी मानसिक परिणति को लालसावाली मत करो, किन्तु सदा इस प्रकार की प्रवृत्ति करो कि जिससे किसी भी जीव की विराधना न हो । सूत्र में “नातिपातयेत्” यह पद झूठ, चोरी आदि आस्रवों का उपलक्षक है,

કામભોગથી અધિક આ સંસારમાં બીજી કોઈ વેદના ઉષ્ણતર નથી, કારણકે, આ વ્યાધિના રોગી શીતલ ચંદ્રકિરણોથી પણ અત્યંત સંતપ્ત થાય છે.

અથવા કામભોગસેવન આ જીવને આલોકમાં અને પરલોકમાં મહા ભય-કારી થાય છે. કારણ કે કામભોગમાં આસક્ત પ્રાણી હિંસાદિક પાપોમાં પ્રવૃત્તિ કરતા રહે છે. હિંસાદિકોમાં પ્રવૃત્તિ હોવાથી જીવ અશુભ કર્મો બાંધે છે, અને તેના ફળને તે નરકાદિ યોનિઓમાં ભોગવે છે. જે પ્રાણી, હિંસક, જુઠો, ચોર અને પરસ્ત્રીલંપટ હોય છે તેને આ લોકમાં ફાંસી, રાજદંડ, જીભછેદન, બંધ અને ઘાતાદિક અનેક કષ્ટો ભોગવવા પડે છે, તથા પરલોકમાં નરકાદિ ગતિયોમાં તેને જન્મ ધારણ કરવો પડે છે એવું સમજીને હે મુનિ ! તમે આ તરફ પોતાની માનસિક પરિણતિને લાલસાવાળી બનાવો નહિ, પણ સદા એવી પ્રવૃત્તિ કરો કે જેનાથી કોઈ પણ જીવની વિરાધના ન થાય સૂત્રમાં “નાતિપાતયેત્” આ પદ જુઠ, ચોરી આદિ આસ્રવોનું ઉપલક્ષક છે, અર્થાત્ સંયમી જીવોને પોતાની પ્રવૃત્તિ

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, उज्झइ किर चंदकिरणेहिं ” ॥ १ ॥ इति ।

छाया—एतस्मादुष्णतरा अन्याः का वेदना गण्यन्ते ।

यत्कामव्याधिगृहीतो, दह्यते किल चन्द्रकिरणैः ॥ १ ॥

भोग रूपी मांस में गृद्ध बने प्राणियों को भोगों की प्राप्ति होने पर अथवा नहीं होने पर बड़ा भारी दुःख ही होता है । इस बात का सूत्रकार उपदेश देते हुए कहते हैं—“ एयं पस्स मुणी ” इत्यादि ।

हे मुने ! कामभोग-विषयसेवन को तुम बहुत भारी भय-स्वरूप-अर्थात् मरणरूप भय का कारण होने से महादुःखरूप ही मानो । भावार्थ—कामभोग का सेवन सदा भय एवं दुःखदायी माना गया है । विषयसेवन से जीवों को अनेक दुःख होने का सदा भय बना रहता है । तथा अनेक प्रकार के दुःख उन्हें भोगने भी पड़ते हैं । महाकष्टों को भोगते-र जीव जब अत्यन्त दुःखी हो जाते हैं, तब वे आत्मघात तक कर लिया करते हैं । इसलिये विषयसेवन सदा महादुःखदायी ही है, ऐसा समझ कर कभी भी अनगार को उस तरफ लालसापरिणति नहीं करनी चाहिये । कहा भी है—

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, उज्झइ किर चंदकिरणेहिं ॥ ” इति ॥

लोगरूपी मांसमां गृद्ध बनेल प्राणिओने लोगोनी प्राप्ति थवाथी अथवा नहि भणवाथी धणुं लारी दुःख न थाय छे. आ वातनो सूत्रकार उपदेश आपी कहे छे—“ एयं पस्स मुणी ” इत्यादि.

हे मुनि ! कामभोग-विषयसेवनने तमे धणु लयस्वरूप अर्थात् मरणरूप लयनु कारण होवाथी महादुःखरूप न मानो.

भावार्थ—कामभोगनुं सेवन सदा लय अने दुःखदायी न मानवामां आवे छे. विषयसेवनथी एवोने अनेक दुःख थवानो सदा लय रह्या करे छे, तथा अनेक प्रकारना दुःख तेने भोगववा पणु पडे छे, महाकष्टो लोगवी लोगवी एव न्यारे अत्यंत दुःखी थाय छे त्यारे ते आत्मघात पणु करे छे भाटे विषयसेवन सदा महादुःखदायी न छे. एवुं समझने कोर वणत पणु आणुगारे ते तरङ्ग लालसापरिणति नहि राखवी जेधये कहुं छे—

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, उज्झइ किर चंदकिरणेहिं ॥ इति ॥

પરિગૃહીતયા દુર્લભલાભયા પ્રવ્રજ્યયા' इत्येवं 'ढंढणाऽनगारवन्न स्वयमवमन्येते-
ति तात्पर्यम् । “ वहुं परधरे अत्थि, विविहं खाइमसाइमं, ण तत्थ पंडिओ कुप्पे,
इच्छा दिज्ज परो ण वा ” ॥ इत्यादि भगवद्वचनात् ।

अपि च—लाभालाभसमभावः सन् स्तोत्रम्=अल्पं भैक्षं लब्ध्वा=प्राप्य दातारम्
अन्नादिकञ्च न निन्देत्=न जुगुप्सेत्, किन्त्वेवं चिन्तयेत्, समैवान्तरायोदयप्राव-
ल्यमेतत् । किञ्च—प्रतिषिद्धः=निषिद्धः सन् परिणमेत्=निवर्तेत किञ्चिदपि दौर्मनस्यं
न कुर्यात्, तं गृहस्थं पुरुषवाग्भिर्न तिरस्कुर्यात्, तंतनाटादिशब्दं न कुर्यादित्यर्थः ।

કે કિ જિસમેં લાભ દુર્લભ હૈ અંગીકાર કરને સે મુझे લાભ હી क्या हुआ ”
इस प्रकार ढंढण अनगार की तरह स्वयं अपने ग्रहण किये हुए चारित्र की
उपेक्षा न करे । यह भी स्वप्न में विचार न करे कि—“ देखो तो सही, इन
गृहस्थों के यहां अशन पान खाद्य स्वाद्य आदि विविध वस्तुएँ मौजूद हैं
परन्तु ये कितने अविनयी, अश्रद्धालु एवं लोभी हैं जो इनमेंसे मुझे कुछ
भी नहीं देते हैं ” । चाहे कुछ मिले या न मिले, अथवा थोड़ा मिले, साधु
का यही परम कर्तव्य है कि वह इन अवस्थाओं में सप्तभावशाली
रहे । दाता की अथवा उसके दिये हुए अन्नादि की कभी भी निंदा न करे ।
अल्पलाभ होने पर यही एक मात्र विचार करे कि मेरा ही यह अन्तराय
का प्रबल उदय है, जो यथेच्छ लाभ नहीं हो रहा है, अथवा नहीं हुआ है ।
आहारादिक के निमित्त परधरप्रवेश करते समय यदि वहां पर आहा-
रादिक की याचना करने पर उस के लिये कोई निषेध भी करे तो उस
समय मन में कोई जात का दुर्भाव न आने देवे, और न उस गृहस्थ का
“ तूं अधर्मात्मा है ” इत्यादि कठोर शब्दों से तिरस्कार ही करे ।

જેમાં લાભ દુર્લભ છે, અંગીકાર કરવાથી મને લાભ શુ થયો ” આ પ્રકારે ઢંढણ
અણુગાર માફક સ્વયં પોતાના ગ્રહણ કરેલાં ચારિત્રની ઉપેક્ષા કરે નહિ. એવું
પણ સ્વપ્નથી વિચાર ન કરે કે—“બુઓ ! તે ગૃહસ્થોને ત્યા અશન પાન ખાદ્ય
સ્વાદ્ય આદિ વિવિધ વસ્તુઓ મૌજુદ છે પરંતુ એ બધા કેટલા અવિનયી અશ્ર-
દ્ધાણુ અને લોભી છે જે તેમથી મને કાંઈ પણ દેતા નથી.” ભલે મળે, ભલે ન
મળે, ભલે જરાક મળે, સાધુનું એ પરમ કર્તવ્ય છે કે તે બંને અવસ્થામાં સમભાવી

દાતાની અથવા તેનાથી અપાયેલા અન્નાદિની કોઈ વખત પણ નિંદા ન કરે.

લાભ થવાથી એ એક જ માત્ર વિચાર કરે કે—મારો આ અંતરાયનો પ્રબલ ઉદય

કે જેથી મને યથેચ્છ લાભ થતો નથી, અથવા થયો નથી, આહારાદિક નિમિત્તે
રધર પ્રવેશ કરતી વખતે કદાચ આહારિકની યાચના કરવાથી કોઈ તેને માટે નિષેધ

परित्यक्तभोगाभिलाषस्य षट्कायपरिपालकस्य गुणाधिगमो भवतीत्याह—‘एष’
इत्यादि । एषः=कामभोगरपृहाभिप्रायविवेचनचतुर एक एव प्रमादपञ्चकरहितः,
वीरः=कर्मरिपोर्नाशनाद्वीर इव वीरः, प्रशंसितः=तीर्थङ्करगणधरादिभिरभिनन्दितः ।
वीरस्वभावमाह—‘यो ने ’-त्यादि । यो वीरः, ‘आदानाय’ आदीयते=अधिगम्यते
निखिलकर्मक्षयसञ्जातसर्वविषयज्ञानं येन तदादानं=चारित्रानुष्ठानं, तस्मै न
निर्विद्येत=न खिद्येत—‘अन्ये लभन्तेऽशनवसनादिकं वराकोऽहं न लभे किमेतया

अर्थात्-संयमी जीवों को अपनी प्रवृत्ति इस प्रकार की करनी चाहिये कि
जिससे उन्हें हिंसा, झूठ, चोरी आदि आस्रवों का बंध नहीं हो । जो
संयमी मुनि इस प्रकार की शुभप्रवृत्तिवाला तथा कामभोग की इच्छा से
रहित होता है, तथा पांच प्रमाद के वशवर्ती नहीं होता है वह वीर है
और प्रशंसा का पात्र है । ऐसे मुनि की प्रशंसा तीर्थकर गणधरादि देव
भी किया करते हैं । प्रशंसा पाने का कारण यह है कि वह सदा अपनी
इस प्रकार की प्रवृत्ति से क्रमशः भविष्य में कर्मशत्रुओं पर विजय प्राप्त
करनेवाला हो जावेगा । धन्य हैं वे जो चारित्र अंगीकार करके किसी भी
निमित्त के उपस्थित होने पर उस चारित्र से विरक्तिभाव पैदा नहीं
करते । यहां “आदान” शब्द का अर्थ चारित्र का अनुष्ठान है, क्योंकि
इस से ही सकल कर्मों के क्षय से उद्भूत सर्वपदार्थविषयक बोध—केवल-
ज्ञान जीवों को प्राप्त होता है । “अशनवसनादिक दूसरों को तो प्राप्त हो
रहे हैं मैं ऐसा अभागा हूं जो मुझे कोई पूछता भी नहीं है, इस चारित्र

એવા પ્રકારની કરવી જોઈ એ કે જેનાથી તેને હિંસા જુઠ ચોરી આદિ આશ્રવોના
બંધ ન થાય.

જે સંયમી મુનિ આ પ્રકારની શુભ પ્રવૃત્તિવાળા તથા કામભોગની ઇચ્છાથી
રહિત હોય છે તથા પાંચ પ્રમાદને તાબે થતા નથી તે વીર છે. અને પ્રશંસા-
પાત્ર છે. એવા મુનિની પ્રશંસા તીર્થકરગણધરાદિ દેવ પણ કરે છે. પ્રશંસા
મળવાનું કારણ એ છે કે—તે સદા પોતાની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી ક્રમશઃ ભવિ-
ષ્યમાં કર્મશત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાવાળા થઈ જશે. ધન્ય છે તેઓને જે
ચારિત્ર અંગીકાર કરીને પછી કોઈ પણ કારણ ઉપસ્થિત થવા છતાં પણ તે ચારિ-
ત્રથી વિરક્તિભાવ પેદા કરતા નથી. આહીં “આદાન” શબ્દનો અર્થ ચારિત્રનું
અનુષ્ઠાન છે, કારણ કે તેનાથી જ સકલ કર્મોના ક્ષયથી ઉદ્ભૂત સર્વપદાર્થ-
વિષયક બોધ—કેવળજ્ઞાન જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે. “અશનવસનાદિક બીજાને તો
પ્રાપ્ત થતાં જ રહે છે અભાગી હું છું જે મને કોઈ પૂછતું પણ નથી. આ ચારિત્રને

॥ આચારાંગસૂત્રે દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય પશ્ચમોદ્દેશઃ ॥

અભિહિતશ્વતુર્થોદ્દેશોઽધુના પશ્ચમસ્ય વ્યાખ્યા પ્રારમ્ભ્યતે । પૂર્વે ભોગાભિષ્વજ્ઞં વિહાય લોકનિશ્રયા શરીરરક્ષણાર્થં વિચરણીયમિત્યુક્તમ્ । અત્રાપિ તદેવ પ્રતિપાદયિષ્યતે । તથા ચ વિપયકષાયકરાલજ્વાલાજટિલસંસારદાવાનલત્રસ્તો વાલકુરજ્ઞઃ સ્વપલાયમાનો નિર્વાધશાન્તિપ્રાપ્તયે પરિહૃતભોગસ્પૃહો ગૃહીતપશ્ચમહાત્રતો નિરવધાનુષ્ઠાનપરઃ કાયનિર્વહણાર્થં લોકનિશ્રયા વિહરતિ, આશ્રયરહિતસ્ય દેહસાધનાઽસમ્ભવાત્, દેહસ્યાસદ્ભાવે ધર્મોઽપિ ભવિતું નાર્હતિ । દેહસદ્ભાવશ્ચ નિશ્રયા ભવતિ । નિશ્રા હિ પશ્ચધા, ઉક્તશ્ચ—

॥ આચરાંગસૂત્રકે દૂસરે અધ્યયનકા પાંચવાં ઉદ્દેશ ॥

ચતુર્થ ઉદ્દેશ કી વ્યાખ્યા સમાપ્ત હો ચુકી, અબ યહાં પંચમ ઉદ્દેશ કી વ્યાખ્યા પ્રારમ્ભ હોતી હૈ । પહિલે જો યહ કહા ગયા હૈ કિ—ભોગોં સે ચિત્તવૃત્તિ કો હટાકર શરીરરક્ષા કે લિયે સંયમી કો લોક કી નેસરાય સે વિચરના ચાહિયે; યહી વિષય યહાં પર સ્પષ્ટ કિયા જાયગા । મૃગ કે બચ્ચે કી તરહ જો સંયમીજન ઇસ સંસારરૂપી દાવાનલ સે—કિ જો વિષય—કષાયરૂપી ભયંકર જ્વાલા સે વ્યાપ્ત હૈ—ત્રસ્ત હોકર નિરાબાધ શાંતિ લાભ કે લિયે ઇતસ્તતઃ દૌડા ફિરતા હૈ, જિસને ભોગોં કી ઇચ્છા કા પરિત્યાગ કર દિયા હૈ, પશ્ચમહાત્રતોં કા જો આરાધક હૈ, ઓર નિર્દોષ અનુષ્ઠાન કે આચરણ કરને મેં જો સર્વથા સાવધાન હૈ વહ અપને શરીરનિર્વાહ કે લિયે લોક-નિશ્રા (નેસરાય) સે વિચરતા હૈ; કયોંકિ વિના આશ્રય કે દેહ

આચારાંગ સૂત્રના બીજા અધ્યયનનો પાંચમો ઉદ્દેશ.

એથા ઉદ્દેશની વ્યાખ્યા સમાપ્ત થઈ. હવે પાંચમા ઉદ્દેશની વ્યાખ્યા શરૂ થાય છે, પહેલા જે એમ કહેવામાં આવેલ છે કે—ભોગોથી ચિત્તવૃત્તિને હટાવી શરીરરક્ષા માટે સંયમીએ લોકની નેસરાયથી વિચરવું જોઈએ આ જ વિષય આ ઠેકાણે સ્પષ્ટ કરવામાં આવશે.

મૃગના બચ્ચા માફક જે સંયમી જન આ સંસારરૂપી દાવાનલથી કે જે વિષયકષાયરૂપી લય કર જ્વાલાથી વ્યાપ્ત છે, ત્રાસીને નિરાબાધ શાંતિ લાભ માટે અહીં તહીં ઈર્ષ્યા કરે છે. જેણે ભોગોની ઇચ્છાનો પરિત્યાગ કર્યો છે પશ્ચમહાત્રતોના જે આરાધક છે, અને નિર્દોષ અનુષ્ઠાનનું આચરણ કરવામાં જે સર્વથા સાવધાન તે પોતાના શરીરના નિર્વાહ માટે લોક-નિશ્રા (નેસરાય)થી વિચરે છે. કારણ આશ્રય વિના દેહની સાધના બની શકતી નથી. દેહની સાધના વિના ધર્મનું

ઉપસંહરનાહ—‘એત’-દિત્યાદિ । એતત્=પ્રવ્રજ્યાનિર્વેદરૂપમ્—આદાનાકોપનમ્, અલ્પા-
નિન્દનમ્, પ્રતિષિદ્ધિનિર્વર્તનં મૌનં—મુનેરિદં મૌનમ્—અનગારાચરણં જ્ઞાનાચારાદિક-
મિત્યર્થઃ, હે શિષ્ય ! ‘સમનુવાસયેઃ’ સમ્—સમ્યક્પ્રકારેણ પૂજા—સત્કાર—ગૌરવ-
નિદાનરાહિત્યેન અનુવાસયેઃ—અનુપાલયેરિત્યર્થઃ, ગગધરાદિસેવિતં નિરતિચારં ચારિત્રં
પરિપાલયેરિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ ઇતિ બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તૂત્ત એવ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય ચતુર્થોદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૪ ॥



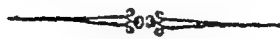
અન્ત મેં ઉપસંહાર કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં—યે જો પૂર્વોક્ત સાધુ
કા આચાર પ્રકટ કિયા હૈં કિ—વહ અપને ગ્રહણ કિયે હુએ ચારિત્ર કે પ્રતિ
ઉપેક્ષાભાવ ન રહે, અલ્પલાભ મેં ખી સંતુષ્ટ રહે, નિષેધ કરને પર પરઘર
સે શાંતિપૂર્વક વાપિસ હો જાવે । અતઃ હે શિષ્ય ! તુમ અચ્છી તરહ સે અર્થાત્
પૂજા, સત્કાર, ગૌરવ ઔર નિદાન કી ભાવના સે રહિત હોકર ગગધરાદિ-
સેવિત ઇસ નિરતિચાર ચારિત્ર કા પાલન કરો । “ ઇતિ બ્રવીમિ ” ઇન
પદોં કા અર્થ પહિલે સ્પષ્ટ કર દિયા ગયા હૈં ॥ સૂ૦ ૪ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીય અધ્યયન કા ચૌથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૪ ॥

પણુ કરે તો તે વખતે મનમાં કોઈ પણ જાતનો ડુર્લાવ લાવે નહિ, તેમજ તે
ગૃહસ્થનો “ તું અધર્માત્મા છે ” ઇત્યાદિ ખરાબ શબ્દોથી તિરસ્કાર પણુ ન કરે.

અંતમાં ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—આ જે પૂર્વોક્ત સાધુનો આચાર
પ્રગટ કરેલ છે કે—તે પોતાનાં ગ્રહણુ કરેલ ચારિત્ર પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રાખે નહિ.
અલ્પ લાભમાં પણુ સંતુષ્ટ રહે. નિષેધ કરવાથી ઘરથી શાંતિપૂર્વક પાછા ફરી
જાય. માટે હે શિષ્ય ! તમે સારી રીતે અર્થાત્ પૂજા, સત્કાર, ગૌરવ અને
નિદાનની ભાવનાથી રહિત થઈને તીર્થકર ગણધરાદિકથી સેવિત નિરતિચાર ચારિત્રનું
પાલન કરો. “ ઇતિ બ્રવીમિ ” આ પદોનો અર્થ પહેલાં સ્પષ્ટ કરેલ છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ઇતિ બીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૪ ॥



અત્રાનન્તરસૂત્રસમ્બન્ધો યથા-‘એયં મોણં સમણુવાસિજ્ઞાસિ’ ઇતિ । તત્ર નિરતિચારચારિત્રપાલનં તુ લોકનિશ્રયા ભવતીતિ કથિતમ્, અત્રાપિ મુનિના સમ્યગાહારશુદ્ધિર્વિચિન્તનીયેતિ દર્શયિષ્યતે ।

ગૃહપતયો હિ સ્વીયપુત્રદુહિત્રાદ્યર્થે શસ્ત્રસમારમ્ભં કુર્વન્તીતિ દર્શયતિ-‘જમિણં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-‘જમિણં વિરૂવરૂવેહિં સત્થેહિં લોગસ્સ કમ્મસમા-
રમ્ભા કજ્ઞંતિ તં જહા-અપ્પણો સે પુત્તાણં ધૂયાણં સુણ્હાણં નાઈણં
ધાઈણં રાઈણં દાસાણં દાસીણં કમ્મકરાણં કમ્મકરીણં આ-
સાણ પુઢોપહેણાણ સામાસાણ પાયરાસાણ સંનિહિસંનિચઓ
કજ્ઞજ્ઞ, ઇહમેગોસિં માણવાણં ભોયણાણ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

અશનાદિક પ્રતિદિન તૈયાર કરતે હૈં । સંયમી મુનિ સંયમજીવન કી રક્ષા કે લિયે અપની આવશ્યકતાનુસાર ગૃહસ્થ કે યહાં સે આહાર આદિ લેકર સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ કરતે હૈં ।

યહાં પર “એયં મોણં સમણુવાસિજ્ઞાસિ” ઇસ અનન્તર સૂત્ર કે સાથ સંબંધ હૈ-વહાં ‘નિરચિતાર ચારિત્ર કા પાલન લોક-નિશ્રા સે હોતા હૈ’ યહ કહા હૈ । ઇસમેં ભી ‘સંયમી મુનિ કો આહાર કી શુદ્ધિ કા અચ્છી તર સે ધ્યાન રખના ચાહિયે’ યહ વાત આગે ચલકર પ્રકટ કી જાયગી ।

ગૃહસ્થ અપને પુત્ર-પુત્રી આદિ કે નિમિત્ત શસ્ત્ર-ષટ્કાયસમારંભરૂપ સાવચ વ્યાપારોં એવં ભોજનાદિ સાધનોં કે આરમ્ભોં કો કિયા કરતે હૈં, યહી વાન સૂત્રકાર કહતે હૈં-“જમિણં” ઇત્યાદિ ।

ગૃહસ્થ પોતાના પરિવારના પોષણ માટે અશનાદિક પ્રતિદિન તૈયાર કરે છે. સંયમી મુનિ સંયમજીવનની રક્ષા માટે પોતાની આવશ્યકતાનુસાર ગૃહસ્થને ત્યાંથી આહાર આદિ લાવીને સંયમયાત્રાનો નિવાહ કરે છે.

આ ડેકાણે “એયં મોણં સમણુવાસિજ્ઞાસિ” એ અનન્તરસૂત્ર સાથે સંબંધ છે. ત્યાં ‘નિરચિતાર ચારિત્રનું પાલન લોકનિશ્રાથી થાય છે’ એમ કહેલ છે. તેમા પણ સંયમી મુનિએ આહારની શુદ્ધિનો સારી રીતે ધ્યાન રાખવો જોઈએ. એ વાત આગળ ઉપર પ્રગટ કરવામાં આવશે.

ગૃહસ્થ પોતાના પુત્ર પુત્રી આદિ નિમિત્તે શસ્ત્ર-ષટ્કાય સમારંભરૂપ સાવ-ચવ્યાપારો અને ભોજનાદિ સાધનોનો આરંભ કર્યા કરે છે તેજ ખાત સૂત્રકાર કહે છે —“જમિણં” ઇત્યાદિ.

“ ધમ્મં ણં ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઠાણા પણ્ણત્તા;
તં જહા-હક્કાયા, ગણો, રાયા, ગાહાવર્હ, સરીરં ॥

(સ્થાનાઙ્ગ ૦ સ્થાન ૫ । ઉ ૩ ।)

છાયા—ધર્મ સ્વલુ ચરતઃ પશ્ચ નિશ્રાસ્થાનાનિ પ્રજ્ઞાનિ, તદ્વથા-ષટ્કાયાઃ, ગણો, રાજા, ગાથાપતિઃ, શરીરમ્, ઇતિ ।

યદ્યપિ દેહસ્ય સાધનાનિ-વસતિવસ્ત્રપાત્રાશનશયનાસનાદીનિ સન્તિ, તથાપિ તેષુ પ્રત્યહમાહારસ્યાઽઽવશ્યકતયા તસ્ય પ્રાધાન્યં, સ ચ ગૃહપતેઃ સ્કાશાદ્ગવેષયિ-ત્વ્યો ભવતિ । સ હિ ગૃહસ્થો નિજપરિવારપોષણાર્થમન્નાદિકં સમુત્પાદયત્યેવ, તતઃ સંયમજીવનરક્ષણાય વૃત્તિરેષ્ટવ્યા ભવતીતિ ।

કી સાધના નહીં હો સકતી, દેહ કી સાધના કે વિના ધર્મ કા આરાધન નહીં હો સકતા; અતઃ ધર્મ કી આરાધના કરને કે લિયે દેહ કી સાધના, ઓર દેહ કી સાધના કે લિયે લોક કી નેસરાય સંયમી કો આવશ્યકીય હૈ । નેસરાય પાંચ પ્રકાર કી હૈ ? કહા મી હૈ—

“ ધમ્મં ણં ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઠાણા પણ્ણત્તા;

તંજહા-હક્કાયા, ગણો, રાયા, ગાહાવર્હ, સરીરં ”

અર્થાત્ ધર્મારાધન કરનેવાલે સંયમીજન કે પાંચ નિશ્રા-સ્થાન હૈ—ષટ્કાયા, ગણ, રાજા, ગાથાપતિ ઓર શરીર । યદ્યપિ દેહ કી સાધના કે સાધન-વસતિ, વસ્ત્ર, પાત્ર, ભોજન, શયન ઓર આસનાદિક હૈ તો મી ઊન સર્વમેં આહાર કી હી મુખ્યતા હૈ । સંયમીજન ત્રીન કરણ ત્રીનયોગ પૂર્વક સાવધ વ્યાપાર સે રહિત હોતે હૈ, અતઃ ઊસ આહાર કી ગવેષણા ગૃહસ્થોં કે યહાં કરની ચાહિયે, ક્યોંકિ વે ગૃહસ્થ અપને પરિવાર કે પોષણ કે લિયે

આરાધન બની શકતું નથી. અને ધર્મની આરાધના કરવા માટે દેહની સાધના, અને દેહની સાધના માટે લોકની નેસરાય સંયમીને આવશ્યક જ છે. નેસરાય પાંચ પ્રકારની છે. કહ્યું પણ છે—

“ ધમ્મં ણ ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઠાણા પણ્ણત્તા, તં જહા-હક્કાયા, ગણો, રાયા, ગાહાવર્હ, સરીરં ”

અર્થાત્ ધર્મારાધન કરવાવાળા સંયમી જનો માટે પાંચ નિશ્રા-સ્થાન છે. ષટ્કાયા, ગણ, રાજા, ગાથાપતિ અને શરીર. કહાય દેહની સાધનાના આધન-વસતિ, વસ્ત્ર, પાત્ર, ભોજન, શયન અને આસનાદિક છે તો પણ એ સધનામાં આધારની મુખ્યતા છે. સંયમીજન સાવધ વ્યાપારથી ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી રહિત હોય છે. માટે તેવા આધારની ગવેષણા ગૃહસ્થોને ત્યાં કરવી જોઈએ, કારણ કે

અથવા 'લોગસે'—તિ તૃતીયાર્થે ષષ્ઠી, લોકેન કર્મસમારમ્ભાઃ ક્રિયન્તિતિ ।
 અત્રેદં તત્ત્વમ્, 'તં જહા' ઇતિ મૂલપાઠેન લોકાયેતિ ચતુર્થ્યેવ સાધીયસી-
 યદર્થં સમારમ્ભસ્તં પૂર્વં સામાન્યતો લોકપદેનોપદર્શ્ય વિશેષતો દર્શયિતું 'તં જહા'
 ઇત્યસ્ય પ્રતિપાદનમ્ ।

યદિ ચ તૃતીયાર્થેઽપિ ષષ્ઠી, સાઽપિ સામાન્યતઃ સમારમ્ભા લોકેન ક્રિયન્તિ
 ઇત્યુપદર્શ્ય કિમર્થમિતિ જિજ્ઞાસાયાં 'તંજહા' ઇત્યપિ કથञ્ચિત્સમાધાનં ભવિતુમર્હતિ ।

યદર્થં પાકકૃષિવાણિજ્યાદિસાવધવ્યાપારમારમ્ભન્તે તાન્ દર્શયતિ—'તદ્યથેતિ'
 તસ્ય સમારમ્ભશીલસ્ય આત્મને=સ્વશરીરાર્થમ્, આત્મશબ્દોઽત્ર શરીરવાચકઃ, સ્વાર્થં
 સ્વયમેવ સમારમ્ભતિત્યર્થઃ ।

માતા-પિતા સાસુ-સસુર આદિ કે લિયે, સ્વજનોં કે લિયે, ધાયમાતા કે
 લિયે, રાજા કે લિયે દાસી-દાસ નૌકર ચાકર ઔર પાહુનોં કે લિયે, પૃથક્-
 પ્રહેળક કે લિયે, અર્થાત્ કન્યાવિવાહ કે ઉત્સવ કા ભોજન, પ્રસ્થાન કે
 સમય રાસ્તે મેં સુબહ-શામ યાને કે લિયે સાથ મેં દિયે જાને વાલા ભોજન,
 તથા કાંસા પરોસા આદિ પૃથક્પ્રહેળક કહલાતા હૈ, ઉસકે લિયે પચન-
 પાચનાદિરૂપ અનેક સાવધ વ્યાપાર કરતે હૈં ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર યહાં પર યહ વાત સ્પષ્ટ કર રહે હૈં કિ—ગૃહસ્થ લોગ
 અપને તથા અપને સગે સંબંધિયોં એવં બાલ-બઢોં વગેરહ કે લિયે ભોજન
 વગેરહ આરમ્ભોં કો નિતપ્રતિ કરતે રહતે હૈં । સર્વવિરતિ મુનિ કે શરીર
 કી યાત્રા કા નિર્વાહ ઉનકે યહાં સે માત્રાનુસાર પ્રાપ્ત ભોજન સે અચ્છી
 તરહ હો સકતા હૈ, ઇસલિયે મુનિ કો સાવધ વ્યાપાર કરને કી આવશ્ય-

આદિ માટે, સ્વજનો માટે, ધાયમાતા માટે, રાજા માટે, દાસી-દાસ નૌકર-ચાકર
 માટે, મહેમાનો માટે, પૃથક્પ્રહેણકને માટે, અર્થાત્ કન્યાવિવાહના ઉત્સવનું
 ભોજન, મુસાફરી સમય રસ્તામાં સવારસાંજ ખાવા માટે સાથે આપવામાં આવતું
 ભોજન, અને કાંસા પિરસણું આદિ પૃથક્પ્રહેણક કહેવાય છે, તેને માટે પચન-
 પાચનાદિરૂપ અનેક સાવધ વ્યાપાર કરે છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર આ ઠેકાણે એ વાત સ્પષ્ટ કરે છે કે—ગૃહસ્થ લોક પોતાના
 તથા પોતાના સગાસંબંધિયો અને છોકરાં-છેાં વિગેરે માટે ભોજન વિગેરે
 આરંભો હરહમેશ કરતાં જ રહે છે. સર્વવિરતિ મુનિના શરીરની યાત્રાનો નિર્વાહ
 તેને ત્યાંથી માત્રાનુસાર પ્રાપ્ત ભોજનથી સારી રીતે થઈ શકે છે, માટે મુનિને
 સાવધ વ્યાપાર કરવાની આવશ્યકતા જ નથી, સાવધ વ્યાપારોથી હિંસા થવાના

छाया—यदिदं विरूपरूपैः शस्त्रैर्लोकाय कर्मसमारम्भाः क्रियन्ते, तद्यथा—
आत्मने तस्य पुत्रेभ्यो दुहितृभ्यः स्नुषाभ्यो ज्ञातिभ्यो धात्रीभ्यो राजभ्यो दासेभ्यो
दासीभ्यः कर्मकरेभ्यः कर्मकरीभ्य आदेशाय पृथक्प्रहेणकाय श्यामाशाय प्रातराशाय
सन्निधिसंनिचयं क्रियते, इहैकेषां मानवानां भोजनाय ॥ सू० १ ॥

टीका—‘यदिदं’—मित्यादि । यद् इदम्=सुखदुःखप्राप्तिपरिहाररूपं प्रयोजन-
मुद्दिश्य विरूपरूपैः=बहुप्रकारैः शस्त्रैः=षट्कायसमारम्भरूपैः लोकाय=असंयतलोकाय-
स्वशरीरपुत्रकलत्रादिरूपाय कर्मसमारम्भाः=षट्कायोपमर्दनरूपाः पचनपाचनादिसाव-
द्यव्यापाराः क्रियन्ते, यद्वा कर्मणोऽष्टप्रकारकस्य समारम्भाः=उपार्जनोपायाः क्रियन्ते ।

सुखप्राप्ति और दुःखपरिहार के प्रयोजन से गृहस्थीजन जपने शरीर
पुत्रकलत्रारूप लोक के लिये अनेक प्रकार के षट्कायसमारंभरूप पचन-
पाचनादि सावद्य व्यापार करते हैं, उनका दिग्दर्शन कराते हुए सूत्र-
कार कहते हैं—

गृहस्थ जीवन भोजन-कृषि-वाणिज्य आदि सावद्य व्यापार के बिना
चलता नहीं है । इसमें इस तरह के अनेक प्रकार का आरम्भ जीवों को
करना ही पड़ता है । जहां आरंभ-समारंभ है वहां जीवों की हिंसा
अवश्यंभावी है । हिंसा से आश्रय होता है, और इससे जीवों का संसार
बंधन से छुटकारा होना बड़ा कठिन होता है । इसीलिये आत्मा को
सावद्यनिवृत्तिरूप चारित्र्य आराधन करने की आवश्यकता है ।

गृहस्थ लोक अपने लिये तथा पुत्रों के लिये पुत्रियों के लिये पुत्र-
वधुओं के लिये, जातिभाईयों, सगे संबंधियों एवं कुटुम्बियों के लिये,

सुखप्राप्ति અને દુઃખપરિહારના પ્રયોજનથી ગૃહસ્થી જન પોતાના શરીર
પુત્ર કલત્રાદિરૂપ લોક માટે અનેક પ્રકારના ષટ્કાયસમારંભરૂપ પચનપાચનાદિ
સાવધ વ્યાપાર કરે છે તેનું દિગ્દર્શન કરાવીને સૂત્રકાર કહે છે—

ગૃહસ્થ જીવન ભોજન-કૃષિ-વાણિજ્ય આદિ સાવધ વ્યાપાર વિના ચાલતું
જ નથી. તેમાં આવા પ્રકારનાં અનેક પ્રકારે આરંભ જીવોને કરવાં જ પડે છે.
ત્યાં આરંભ-સમારંભ છે ત્યાં જીવોની હિંસા અવશ્યંભાવી છે. હિંસાથી આશ્રય
થાય છે, અને તેનાથી જીવોનો સંસારબંધનથી છુટકારો થવો ઘણું કઠિન થઈ પડે
છે, માટે આત્માને સાવધનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરવાની આવશ્યકતા છે.

ગૃહસ્થલોક પોતાના માટે તથા પુત્રો માટે, પુત્રિયો માટે, પુત્રવધુ માટે,
જાતિભાઈઓ, સગાં-સંબંધિઓ અને કુટુંબિયો માટે, માતા-પિતા, સાસુ-સસરા

યદ્વા કન્યાપરિણયોત્સવે કન્યાપિતૃગૃહે વિભિન્નરૂપેણ યદ્ગ્રોજ્યં સ પૃથક્પ્રહેણકઃ ।
અથવા પ્રસ્થાનસમયે જામાતૃભ્યો વિભિન્નરૂપેણ દીયમાનં પ્રાથેયં પૃથક્પ્રહેણકપદેન
કથ્યતે, તસ્મૈ । ‘શ્યામાશાય’ શ્યામાયાં રાત્ર્યામ્, અશનમાશઃ=શ્યામાશસ્તસ્મૈ ।
‘પ્રાતરાશાય’ પ્રાતઃ=પ્રાતઃકાલે આશો=ભોજનં પ્રાતરાશસ્તસ્મૈ કર્મસમારમ્ભાઃ
ક્રિયન્તે । તમેવ વિશિનષ્ટિ-‘સન્નિધિસન્નિચયમ્’ ઇત્યાદિ, સન્નિધાનં સન્નિધિઃ=અલ્પ-
કાલસ્થાયિદ્રવ્યાણાં સંગ્રહકરણમ્, દધિ-મક્ત-કૃશર-વ્યજ્જનાદીનાં સ્થાપનમ્ ।

અપિ ચ-‘સન્નિચયઃ’ સમ્યગ્ નિચયનં=સંગ્રહણં સન્નિચયઃ=ચિરસ્થાયિનાં ઘૃત-
તૈલ-ગુડાદિદ્રવ્યાણાં સંગ્રહઃ, સન્નિધિશ્ચ સન્નિચયશ્ચ સન્નિધિ-સન્નિચયમ્, તત્
ક્રિયતે । મૂત્રે પુંસ્ત્વમાર્ષત્વાત્ । યદ્વા-સન્નિધેઃ=અશનવશનાદેઃ સન્નિચયઃ=સંગ્રહઃ
ક્રિયતે । કિમર્થં સંગ્રહઃ ક્રિયતે? ઇત્યાહ-‘ઇહે’-તિ । ઇહ=સંસારે એકેષાં
=રૂતિપયાનાં માનવાનાં=સમ્બન્ધિજનનાં ભોજનાય=ભવિષ્યદુપભોગાય, વિરૂપરૂપૈઃ
શત્રૈઃ કર્મસમારમ્ભાઃ ક્રિયન્તે ઇતિ ।

લોકાઃ પુત્રાદ્યર્થં કર્માણિ સમારમન્તે એવ, તેભ્યઃ સંયમયાત્રાં નિર્વોદું માત્ર-
યાઽન્નાદિકમાદાય મુનિના વર્તિતવ્યમિતિ સૂત્રતાત્પર્યમ્ ॥ મ્ ૧ ॥

इस प्रकार की जिज्ञासा होने पर उसका समाधान सूत्रकार ने “तं जहा”
पद से किया है ।

“सन्निधिसंनिचय ” यहां दो पद हैं-१‘सन्निधि’ और दूसरा ‘२
संनिचय । दही, भात, कृशर-खीचडी, व्यञ्जन-शाक आदि ‘सन्निधि’
पदसे ग्रहण किये गये हैं । घृत, तैल, गुड आदि पदार्थ ‘संनिचय’
पद से गृहीत हुए हैं । अथवा सन्निधि-अशन वशन आदि का संनिचय-
संग्रह करना वह सन्निधिसंनिचय है । कितनेक गृहस्थ अपने व
संबन्धिजनों के निमित्त भविष्यत्काल में उपभोग के अभिप्राय से
धान्यादि अनेक पदार्थों का संग्रह कर लिया करते हैं । इस संग्रह में

થાય છે” તે શા માટે કરવામા આવે છે, આ પ્રકારની જિજ્ઞાસા થવાથી તેનું
સમાધાન સૂત્રકારે “તંજહા” પદથી કર્યું છે.

“ સન્નિધિસંનિચય ” આંહી બે પદ છે. ૧ ‘સન્નિધિ’ અને બીજું
૨ ‘સંનિચય’ દહીં, ભાત, ખીચડી, શાક આદિ ‘સન્નિધિ’ પદથી લેવામાં આવેલ
છે. ઘી, તેલ, ગોળ આદિ પદાર્થ ‘સંનિચય’ પદથી લેવામાં આવેલ છે. અથવા
‘સન્નિધિ’ અશન વસન આદિનો ‘સંનિચય’ સંગ્રહ કરવો તે સન્નિધિસંનિચય
ને. કેટલાક ગૃહસ્થ પોતાને અને સમન્ધીજનોને નિમિત્તે ભવિષ્ય કાળમા ઉપભો-
ગના અભિપ્રાયથી ધાન્યાદિ અનેક પદાર્થોનો સંગ્રહ કરે છે. આ સંગ્રહમાં

ભવિષ્યદુપભોગાય સન્નિધિ-સન્નિચયપ્રવૃત્તે લોકે સંયમિના કિં વિધેયમિત્યાહ-
'સમુદ્વિષ્ટ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સમુદ્વિષ્ટ અણગારે આરિષ આરિયપત્રે આરિયદંસી
અયં સંધિ-ત્તિ અદક્ષૂ , સે નાઈષ નાઈયાવણ ન સમણુજાણણ
સઠ્ઠામગંધં પરિજ્ઞાય નિરામગંધો પરિઠ્ઠવણ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—સમુત્થિતોડનગાર આર્ય આર્યપત્ર આર્યદર્શી અયં સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્,
સ નાદદીત નાદાપયેત્ ન સમનુજાનીયાત્, સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરામગન્ધઃ
પરિવ્રજેત્ ॥ મૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—'સમુત્થિત' ઇત્યાદિ । સમુત્થિતઃ=સમ્=સમીચીનં ચારિત્રાચરણે
ઉત્થિતઃ=સમુત્થિતઃ-સંયમારાધનસમુદયત્ ઇત્યર્થઃ, અનગારઃ=અવિદ્યમાનમગારં
ગૃહં यस્ય સોડનગારો દ્રવ્યભાવગૃહરહિતઃ, આર્યઃ=આરાદ્ દૂરં ગતો હેયધર્મેભ્યો યઃ

અનેક પ્રકાર સે સાવધ વ્યાપાર મેં પ્રવૃત્તિ હોને કી વજહ સે ત્રસ એવં
સ્થાવર જીવોં કી હિંસા હોતી હી હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

આગામી સમય કે લિયે અપને-અપને યોગ્ય ઉપભોગાદિ સાધન-
સમૂહ કે સંગ્રહ કરને મેં તત્પર રહે હુએ જનસમુદાય કે વીચ મેં સંયમી
મુનિ કો કયા કરના ચાહિયે? ઇસકે પ્રત્યુત્તર મેં સૂત્રકાર કહતે હૈ—
'સમુદ્વિષ્ટ' ઇત્યાદિ ।

જો નિર્મલ ચારિત્ર કે આચરણ મેં ઉત્થિત હૈ, અર્થાત્ નિર્દોષ ચારિત્ર
કે આરાધન કરને મેં જો અચ્છી તરહ સે પ્રયત્નશીલ હૈ ઉસકા નામ
સમુત્થિત હૈ । જિસકે ઘર નહીં હૈ ઉસકા નામ અનગાર હૈ । અગાર કે દો

અનેક પ્રકારથી સાવધ વ્યાપારમાં પ્રવૃત્તિ થાય છે જેથી તેમાં ત્રસ અને સ્થાવર
જીવોની હિંસા થાય છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

આગામી સમય માટે પોતપોતાના યોગ્ય ઉપભોગાદિ સાધન સમૂહનો સંગ્રહ
કરવામાં તત્પર રહેલા જનસમુદાયની વચમાં સંયમી મુનિએ શું કરવું જોઈએ,
તેના પ્રત્યુત્તરમાં સૂત્રકાર કહે છે—'સમુદ્વિષ્ટ' ઇત્યાદિ.

જે નિર્મળ ચારિત્રના આચરણમાં ઉત્થિત છે અર્થાત્ નિર્દોષ ચારિત્રના
આરાધન કરવામાં જે સારી રીતે પ્રયત્નશીલ છે તેનું નામ સમુત્થિત છે. જેને અગાર-
ઘર નથી તેનું નામ અનગાર છે. અગારના બે પ્રકાર છે. એક દ્રવ્ય-અગાર અને બીજો

સ આર્યઃ=શ્રુતચારિત્રરૂપધર્મારાધનયોગ્યઃ । યદ્વા-વિષય-કષાય-કાષ્ઠચ્છેદ-
કત્વેનાઽઽસાદૃશ્યાદારા=રત્નત્રયં, તાં યાતિ=પ્રાપ્નોતિ યઃ સ આર્યઃ=સર્વથા સકલ-
કલ્મષપરાશિકલુષિતવૃત્તિરહિત इत्यर्थः । ‘આર્યપ્રજ્ઞઃ’ આર્યા=શ્રેષ્ઠા પ્રજ્ઞા=મતિ-
ર્યસ્ય સ આર્યપ્રજ્ઞઃ હેયોપાદેયવિવેકવાન્ । એવમાર્યદર્શી=આર્ય-યુક્તિયુક્તં દ્રષ્ટું શીલં
યસ્યેત્યાર્યદર્શી=આરમ્ભજન્યકટુવિપાકદર્શી । ય એવમ્ભૂતઃ પુનઃ ‘અયં સન્ધિ’-રિતિ
અયં=પ્રત્યક્ષોપલભ્યમાનઃ સન્ધિઃ-પારગમનાધઃપતનયોર્મધ્યે સન્ધિરિવ સન્ધિઃ-
આર્યક્ષેત્ર-સુકુલોત્પત્તી-ન્દ્રિયનિર્વૃત્તિ-શ્રદ્ધા-સંવેગ-રત્નત્રયપ્રાપ્તિલક્ષણં સન્ધિસ્થાનમ્,
इति=इत्येवम् अद्राक्षीत्=अज्ञासीत् । યદ્વા-અયં પ્રત્યક્ષનિર્દિષ્ટઃ સન્ધિઃ-પ્રતિલેખન-

પ્રકાર હૈં । એક દ્રવ્ય-અગાર ઔર દૂસરા ભાવ-અગાર । અનગાર ઇન દોનોં
પ્રકાર કે અગારોં સે રહિત હોતા હૈં । જો હેય ધર્મોં સે સદા દૂર રહતા
હૈં ઉસકા નામ આર્ય હૈં । આર્ય-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કે આરાધન કરને
યોગ્ય હોતા હૈં, અથવા વિષયકષાયરૂપ કાષ્ઠ કા છેદક હોને સે આરા-
કરોંત કે સદૃશ રત્નત્રયરૂપ ધર્મ કો જો પ્રાપ્ત કરતા હૈં વહ આર્ય હૈં, અર્થાત્
જિસકી સકલ કલ્મષ-પાપરાશિ સે કલુષિત પરિણતિ નહીં હૈં ઉસકા
નામ આર્ય હૈં । ઉત્તમ જિસકી મતિ હૈં, હેય ઔર ઉપાદેય કે વિવેક સે
જિસકા અન્તઃકરણ યુક્ત હૈં ઉસકા નામ આર્યપ્રજ્ઞ હૈં । યુક્તિયુક્ત દેખને
કા જિસકા સ્વભાવ હૈં ‘આરમ્ભજન્ય પાપોં કા વિપાક ભયંકર કષ્ટપ્રદ
હોતા હૈં’ ઇસ બાત કો ભલી-ભાંતિ સે જાનતા સમજતા હૈં વહ આર્યદર્શી
હૈં । સંસાર સે પાર હોના એવં ઉસમેં અધઃપતન હોના, ઇન દોનોં કે વીચ
મેં સન્ધિ કે સમાન આર્યક્ષેત્ર, સુકુલ મેં જન્મ, ઇન્દ્રિયાદિકોં કી પૂર્ણતા
શ્રદ્ધા, સંવેગ ઔર રત્નત્રય કી પ્રાપ્તિરૂપ સંધિસ્થાન હૈં । જો પ્રત્યક્ષ

ભાવ-અગાર. અનગાર આ બન્ને પ્રકારના અગારોથી રહિત હોય છે. જે હેય
ધર્મોથી મદદ દૂર રહે છે તેનું નામ આર્ય છે. આર્ય-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું
આરાધન કરવા યોગ્ય હોય છે અથવા વિષયકષાયરૂપ કાષ્ઠના છેદક હોવાથી આરા-
કરવતના સદૃશ રત્નત્રયરૂપ ધર્મને જે પ્રાપ્ત કરે છે તે આર્ય છે. અર્થાત્ જેની
સકલકલ્મષ-પાપરાશિ થી કલુષિત પરિણતિ નથી તેનું નામ આર્ય છે. ઉત્તમ
જેની મતિ છે. હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી જેનું અંતઃકરણ યુક્ત છે તેનું નામ
આર્યપ્રજ્ઞ છે. યુક્તિયુક્ત દેખવું એવો જેનો સ્વભાવ છે ‘આરભજન્ય પાપોનો
વિપાક ભયંકર કષ્ટપ્રદ થાય છે.’ આ વાતને જે ભલીભાંતિથી બાણે છે, તેમજ
જામને છે તે આર્યદર્શી છે, સંસારથી પાર થવું અને તેમાં અધઃપતન થવું, એ
જેની વચમાં સન્ધિસમાન આર્યક્ષેત્ર, સારા કુળમાં જન્મ, ઇન્દ્રિયોની પૂર્ણતા,
શ્રદ્ધા, સંવેગ અને રત્નત્રયની પ્રાપ્તિરૂપ સંધિસ્થાન છે. જે આ પ્રત્યક્ષ

મવિષ્યદુપભોગાય સન્નિધિ-સન્નિચયપ્રવૃત્તે લોકે સંયમિના કિં વિધેયમિત્યાહ-
'સમુદ્વિષ્ટ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સમુદ્વિષ્ટ અણગારે આરિષ આરિયપન્ને આરિયદંસી
અયં સંધિ-ત્તિ અદક્ષૂ , સે નાઈએ નાઈયાવએ ન સમણુજાણએ
સઠ્ઠામગંધં પરિજ્ઞાય નિરામગંધો પરિઠ્ઠવએ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—સમુત્થિતોડનગાર આર્ય આર્યપ્રજ્ઞ આર્યદર્શીઅયં સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્,
સ નાદદીત નાદાપયેત્ ન સમનુજાનીયાત્, સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરામગન્ધઃ
પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—'સમુત્થિત' ઇત્યાદિ । સમુત્થિતઃ=સમ્=સમીચીનં ચારિત્રાચરણે
ઉત્થિતઃ=સમુત્થિતઃ-સંયમારાધનસમુદયત્ ઇત્યર્થઃ, અનગારઃ=અવિદ્યમાનમગારં
ગૃહં યસ્ય સોડનગારો દ્રવ્યભાવગૃહરહિતઃ, આર્યઃ=આરાદ્ દૂરં ગતો હેયધર્મેભ્યો યઃ
અનેક પ્રકાર સે સાવધ વ્યાપાર મેં પ્રવૃત્તિ હોને કી વજહ સે ત્રસ એવં
સ્થાવર જીવોં કી હિંસા હોતી હી હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

આગામી સમય કે લિયે અપને-અપને યોગ્ય ઉપભોગાદિ સાધન-
સમૂહ કે સંગ્રહ કરને મેં તત્પર રહે હુએ જનસમુદાય કે વીચ મેં સંયમી
મુનિ કો કયા કરના ચાહિયે? હિસકે પ્રત્યુત્તર મેં સૂત્રકાર કહતે હૈ—
'સમુદ્વિષ્ટ' ઇત્યાદિ ।

જો નિર્મલ ચારિત્ર કે આચરણ મેં ઉત્થિત હૈ, અર્થાત્ નિર્દોષ ચારિત્ર
કે આરાધન કરને મેં જો અચ્છી તરહ સે પ્રયત્નશીલ હૈ ઉસકા નામ
સમુત્થિત હૈ । જિસકે ઘર નહીં હૈ ઉસકા નામ અનગાર હૈ । અગાર કે દો

અનેક પ્રકારથી સાવધ વ્યાપારમાં પ્રવૃત્તિ થાય છે જેથી તેમાં ત્રસ અને સ્થાવર
જીવોની હિંસા થાય છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

આગામી સમય માટે પોતપોતાના યોગ્ય ઉપભોગાદિ સાધન સમૂહનો સંગ્રહ
કરવામાં તત્પર રહેલા જનસમુદાયની વચમાં સંયમી મુનિએ શું કરવું જોઈએ,
તેના પ્રત્યુત્તરમાં સૂત્રકાર કહે છે—'સમુદ્વિષ્ટ' ઇત્યાદિ.

જે નિર્મળ ચારિત્રના આચરણમાં ઉત્થિત છે અર્થાત્ નિર્દોષ ચારિત્રના
આરાધન કરવામાં જે સારી રીતે પ્રયત્નશીલ છે તેનું નામ સમુત્થિત છે. જેને અગાર—
ઘર નથી તેનું નામ અનગાર છે. અગારના બે પ્રકાર છે. એક દ્રવ્ય-અગાર અને બીજો

હાહારં પરિજ્ઞાય=જ્ઞ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા નિરામગન્ધઃ, આમગન્ધાદશુદ્ધાહારાન્નિર્ગતો
 યઃ સ નિરામગન્ધઃ=ઉદ્ગમોત્પાદનૈષણાગતદ્વિચત્વારિંશદોષદૂષિતાહારાગ્રાહકઃ સન્
 'પરિવ્રજેત્'—પરિ=સમન્તાદ્ વ્રજેત્=વિહરેત્ રત્નત્રયસમારાધનતત્પરો ભવેદિતિ
 ભાવઃ । તીર્થંકરનિર્દિષ્ટે સમુચિતાવસરે પ્રતિલેખન-પ્રતિક્રમણાદિક્રિયાં કુર્વન્
 નગાર આર્યદેશોત્તમકુલાદિકં મોક્ષકારણં પ્રાપ્ય સંસારપારાવારમુત્તીર્ય ચ સન્ધિ-
 સ્થાનીયે તત્તીરે વર્તમાનો નિઃશિલકર્મક્ષયં કૃત્વા તતો નિષ્ક્રમિતુકામોઽસ્મીત્યેવં
 પરિજ્ઞાવાન્ 'અથઃકર્માદિદોષદૂષિતાહારો વિષમક્ષણમિવાત્મગુણવાતકઃ' इति
 સમ્યગ્લોચ્ય તાદૃશમાહારં ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ પરિત્યજ્ય પરિશુદ્ધમાહારાદિકં
 ભિન્નમાણો વિહરેદિતિ સમુદિતાર્થઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

દૂસરોં કો કરાવે, તથા કરને વાલે કિસી અન્ય કી અનુમોદના મી ન
 કરે । “સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરામગન્ધઃ પરિવ્રજેત્” ઇસકા અર્થ હૈ
 અશુદ્ધઆહાર, અર્થાત્ જ્ઞ-પરિજ્ઞાદ્વારા ઇસ પ્રકાર કે આહાર કો અશુદ્ધ
 જાનકર ‘નિરામગન્ધઃ’—અશુદ્ધ આહાર સે ભિન્ન શુદ્ધ આહાર કો કિ જો
 ઉદ્ગમ (૧૬) ઉત્પાદન (૧૬) એષણા (૧૦) સંબંધી બચાલીસ (૪૨) દોષોં
 સે રહિત હોતા હૈ ગ્રહણ કરે । યદિ ઇસ પ્રકાર કે આહાર કા લાભ સંયમી
 કો નહીં હોતા હૈ તો વહ ઇસ દૂષિત આહાર કો છોડકર અપને રત્નત્રય
 કી આરાધના મેં તત્પર રહે । તીર્થંકર પ્રભુને પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓં કા
 જો સમય નિશ્ચિત કર દિયા હૈ ઇસ સમય મેં ઇનર ક્રિયાઓં કો કરને
 વાલા, તથા આર્ય ક્ષેત્ર કા લાભ, ઉત્તમ કુલ મેં જન્મ, રત્નત્રય કી પ્રાપ્તિ
 આદિ મોક્ષ કે કારણભૂત સંધિસ્થાનોં કો જિસને પાયા હૈ એસા અનગાર

કરવાવાળા ખીજ ડોઈની અનુમોદના પણ ન કરે “સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરા
 મગન્ધઃ પરિવ્રજેત્” આનો અર્થ છે અશુદ્ધ આહાર અર્થાત્ જ્ઞ-પરિજ્ઞાદ્વારા
 આ પ્રકારના આહારને અશુદ્ધ જાણીને નિરામગન્ધ. અશુદ્ધ આહારથી ભિન્ન
 શુદ્ધ આહારને કે જે ઉદ્ગમ (૧૬) ઉત્પાદન (૧૬) એષણા (૧૦) સંબંધી ૪૨
 બેતાલીસ દોષોથી રહિત હોય છે તેને ગ્રહણ કરે છે કદાચ આ પ્રકારના આહાર-
 નો લાભ સંયમીને ન થાય તો તે આવા દૂષિત આહારને છોડીને પોતાના
 રત્નત્રયની આરાધનામાં તત્પર રહે.

તીર્થંકર પ્રભુએ પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓનો જે સમય નિશ્ચિત કરી આપ્યો
 છે તે સમયમાં તે તે ક્રિયાઓને કરવાવાળા, તથા આર્યક્ષેત્રનો લાભ, ઉત્તમ
 કુળમાં જન્મ રત્નત્રયની પ્રાપ્તિ આદિ મોક્ષના કારણભૂત સંધિસ્થાનોને જેણે

પ્રતિક્રમણાદિક્રિયાયા યઃ સમુચિતઃ કાલ ઇતિ યોઽજ્ઞાસીદિત્યર્થઃ । એવંભૂતઃ સઃ
અનગારો નાદદીત=અકલ્પનીયમાહારાદિકં ન ગૃહીયાત્, શાસ્ત્રે તસ્ય પ્રતિષિદ્ધત્વાત્,
ષટ્જીવનિકાયારમ્ભદોષસ્ય મુનિના પૂર્વે પરિત્યક્તત્વાત્, નાઽઽદાપયેત્=નાન્યં
ગ્રાહયેત્, ન સમનુજાનીયાત્=નાપીતરં સાધું ગૃહ્ણન્તમનુમોદયેત્ । યદ્વા-નાઽધ્યાન્નાઽઽ-
દયેદિતિચ્છાયા, સ મુનિરિજ્જાલધૂમાદિપશ્ચવિધદોષદૂષિતમાહારં નાઘાત્=નાશ્ત્રી-
યાત્, નાદયેત્=નાન્યં ભોજયેત્ અદન્તમન્યં ન સમનુજાનીયાત્ ।

અપિ ચ કિ કુર્યાદિત્યાહ-‘સર્વામગન્ધ’-મિત્યાદિ । સર્વામગન્ધમ્, આમં ચ
ગન્ધશ્ચાનયોઃ સમાહારદ્વન્દ્વે આમગન્ધં, સર્વં ચ તદામગન્ધમિતિ સર્વામગન્ધમ્=અશુ-

પ્રતિભાસિત વાત કો અચ્છી તરહ સે જાનતા હૈ, અથવા પ્રતિલેખન, પ્રતિ-
ક્રમણાદિ ક્રિયાઓં કે ઉચિત અવસર કા જો જ્ઞાતા હૈ, યહ વાત “અયં
સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્” ઇસ પદ સે પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈ । ઇસ પ્રકાર કા
જો અનગાર હૈ વહ અકલ્પનીય આહારાદિક કો ન સ્વયં ગ્રહણ કરતા
હૈ, ક્યોંકિ સદોષ આહાર કા ગ્રહણ કરના અનગાર કે લિયે શાસ્ત્ર મેં
નિષિદ્ધ બતલાયા ગયા હૈ, ઇસકા કારણ-ષટ્કાય કે જીવોં કા આરમ્ભ
અનગાર ને પહિલે સે હી છોડ દિયા હૈ, વહ સદોષ આહાર સ્વયં ન
ગ્રહણ કરતા હૈ, ન દૂસરોં સે ગ્રહણ કરવાતા હૈ, ઓર ન ઇસ પ્રકાર કે
આહાર કો ગ્રહણ કરને વાલે અન્ય કિસી કી અનુમોદના ભી કરતા હૈ ।

અથવા “સે નાઈય નાઈયાવણ” ઇન પદોં કી સંસ્કૃત છાયા “સ ન
અઘાત્ ન આદયેત્” યહ ભી હૈ, ઇસકા અર્થ ઇસ પ્રકાર હૈ-જ્જાલ ધૂમ
આદિ પાંચ પ્રકાર કે દોષોં સે દૂષિત આહાર કો ન સ્વયં કરે ઓર ન

પ્રતિભાસિત વાતને સારી રીતે જાણે છે, અથવા પ્રતિલેખન, પ્રતિક્રમણાદિ ક્રિયા-
ઓના ઉચિત અવસરનો જે જ્ઞાતા છે, એ વાત “અયં સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્”
આ પદથી પ્રદર્શિત કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારના જે અણુગાર છે તે અક-
લ્પનીય આહારાદિકને સ્વયં ગ્રહણ કરતા નથી, કારણ કે સદોષ આહારનું ગ્રહણ
કરવું અણુગાર માટે શાસ્ત્રમાં નિષિદ્ધ બતાવેલ છે. તેનું કારણ ષટ્કાયના જીવોના
આરંભ અણુગારે પડેલાંથી જ છોડી આવેલ છે. તે સદોષ આહાર પોતે ગ્રહણ નથી
કરતા. બીજાથી ગ્રહણ નથી કરાવતા, અને આ પ્રકારના આહાર ગ્રહણ કરવાવાળા
અન્ય કોઈની અનુમોદના પણ નથી કરતા

અથવા “સે નાઈય નાઈયાવણ” આ પદોની સંસ્કૃત છાયા “ન અઘાત્ ન
આદયેત્” એ પણ છે. એનો અર્થ આ પ્રકારે છે. ઈજાલ, ધૂમ આદિ પાંચ
પ્રકારના દોષોથી દૂષિત આહારને ન સ્વયં કરે અને બીજાથી કરાવે નહિ, તથા

યદ્વા-‘અદૃશ્યમાનઃ’ ઇતિચ્છાયા, ક્રય-વિક્રયયોઃ અદૃશ્યમાનઃ=દ્રવ્યાદ્યભાવા-
ત્ક્રયવિક્રયવ્યવહારેઽદૃશ્યમાનોઽકિશ્ચનઃ સઃ=અનગારઃ આહારાદિકં ન ક્રીणीયાત્
નાન્યં ક્રાપયેત્, ક્રીણન્તમન્યં ન સમનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેત્ । एतेन हननादि-
नवकोटिपरिशुद्धमाहारादिकं परिगृह्याङ्गारधूमादिदोषरहितं मुनिर्भुञ्जीतेति निगूढार्थः ।
अत्र क्रयपदेनोद्गमदोषाणां ग्रहणं, तेन चोत्पादनैषणादोषाः संगृहीता इति सूत्र-
तात्पर्यम् ॥ मू० ३ ॥

है । जो क्रय-विक्रयरूप व्यापार को करता है वह व्यवहार में बेचने-
खरीदने वाला कहा जाता है । मुनि, जो सर्वसावध क्रियाओं के त्यागी हो
चुके हैं वे, क्रय-विक्रय रूप सावध व्यापार को नहीं कर सकते हैं । इस
लिये सूत्रकार यहां इस बात का प्रदर्शन करते हुए कहते हैं कि-अनगार
शुद्ध आहार के न मिलने पर आहारादिक अन्य से न खरीदे, और मिले
हुए को अन्य किसी को न बेचे । क्योंकि इस प्रकार के व्यवहार करने
से उसमें क्रय विक्रय का दोष लागू होता है, जो सिद्धान्तदृष्टि से मुनि
के आचार से सर्वथा निषिद्ध है । अथवा “अदिस्समाणे” इस पद की
संस्कृत छाया “अदृश्यमानः” यह भी होती है । इसका भाव यह है
कि-अनगार अपने पास किसी भी प्रकार का द्रव्यादिक तो रखते ही
नहीं हैं, क्योंकि वे सकल परिग्रह के त्यागी होते हैं, सचित्त अचित्त
आदि समस्त परिग्रह के छोड़ने से ही उनमें अपरिग्रहता आती है ।
इसीको सूत्रकार यहां पर प्रकट करते हुए कहते हैं कि-जब मुनिके पास

વિક્રય રૂપ વ્યાપાર કરે છે તે વ્યવહારમાં વેચવાખરીદવાવાળા કહેવાય છે. મુનિ
જે સર્વ સાવધ ક્રિયાઓના ત્યાગી બનેલ છે તે ક્રય-વિક્રયરૂપ સાવધ વ્યાપારને
કરી શકતા નથી, માટે સૂત્રકાર આ ઠેકાણે આ વાતનું પ્રદર્શન કરીને કહે છે કે-
આણુગાર શુદ્ધ આહાર ન મળવાને કારણે આહારાદિક બીજાથી ખરીદાવી શકે
નહિ, અને મળેલ હોય તે એનાથી બીજાને વેચી શકાય નહિ કારણ કે આ
પ્રકારનો વ્યવહાર કરવાથી તેમાં ક્રય-વિક્રયનો દોષ લાગુ પડે છે, જે સિદ્ધાન્ત-
દૃષ્ટિથી મુનિના આચારથી સર્વથા નિષિદ્ધ છે. અથવા “અદિસ્સમાણે” આ
પદની સંસ્કૃત છાયા “અદૃશ્યમાન” એ પણ થાય છે તેનો ભાવ એ છે
કે-આણુગાર પોતાની પાસે કોઈપણ પ્રકારનું દ્રવ્યાદિક તો રાખતા જ નથી, કારણ
કે તે સકળ પરિગ્રહના ત્યાગી હોય છે. સચિત્ત અચિત્ત આદિ સમસ્ત પરિગ્રહના
છોડવાથી જ તેનામાં અપરિગ્રહતા આવે છે માટે સૂત્રકાર આ ઠેકાણે પ્રગટ
રતાં કહે છે કે-જ્યારે તની પાસે લેણુદેણુનો વ્યવહાર કરવામાં સહાયક બાહ્ય

निरामगन्ध इति निषेधे आमपदेन हननकोटित्रिकं, गन्धपदेन पचनकोटि-
त्रिकं च प्रतिषिध्य क्रयणकोटित्रिकं निषेधयितुमुपदर्शयति—‘आदिस्समाणे’ इत्यादि।

मूलम्—आदिस्समाणे कयविक्रयेसु से न किणे न किणावए
किणंतं न समणुजाणए ॥ सू० ३ ॥

छाया—आदिश्यमानः क्रयविक्रययोः स न क्रीणीयात्, न क्रापयेत्, क्रीणन्तं
न समनुजानीयात् ॥ सू० ३ ॥

टीका—‘आदिश्यमान’ इति। क्रयविक्रययोः, क्रयश्च विक्रयश्चानयोरितरेतर-
योगद्वन्द्वे क्रयविक्रयौ, तयोः—आदिश्यमानः=व्यपदेशमलभमानः—‘अयं क्रयविक्रय-
कर्ते’—ति व्यपदेशभागे न भवतीत्यर्थः ॥

‘सकल कर्म को नाश कर मैं इस संसारसमुद्र से पार होने की दृढ़
भावना वाला हूँ’ इस प्रकार के संसारसमुद्र के पार जाने के अभि-
प्राय से जो समन्वित हो रहा है वह अनगार आधाकर्मादि दोष से
दूषित आहार को विषभक्षण की तरह आत्मगुण का घातक जानकर
तीन करण और तीन योग से उसका परित्याग ही कर देवे, और शुद्ध
निर्दोष आहार की प्राप्ति से अपने शरीर की यात्रा का निर्वाह करता
हुआ संयममार्ग में विचरे ॥ सू० २ ॥

‘निरामगन्ध’ इस निषेध में ‘आम’ पद से हननकोटित्रिक तथा
‘गन्ध’ पद से पचनकोटित्रिक का प्रतिषेध करके क्रयणकोटित्रिक का
निषेध करने के लिये सूत्रकार कहते हैं—‘आदिस्समाणे’ इत्यादि।

क्रय शब्द का अर्थ खरीदना और विक्रय शब्द का अर्थ बेचना

मेणव्या छे अेवा अणुगार “सकल कर्मनो नाश करी हुं” आ संसारसमुद्रथी
पार थवानी द्रढ लावनावाणे छुं” आ प्रकारे जे संसार समुद्रथी पार जवाना
अलिप्रायथी जे समन्वित थयेल छे ते अणुगार आधाकर्मादि दोषथी दूषित
आहारने विषभक्षणणी भाइउ आत्मगुणना घातक ज्ञाणीने त्रण करण अने त्रण
योगथी तेनो परित्याग करे, अने शुद्ध निर्दोष आहारनी प्राप्तिथी पोताना शरीरनी
यात्रानो निर्वाह करीने संयम मार्गमां विचरे ॥ सू० २ ॥

निरामगन्ध आ निषेधमां आम—पदथी हननकोटित्रिक तथा गन्ध—पदथी
पचनकोटि त्रिकनो प्रतिषेध करीने कयणकोटित्रिकनो निषेध करवाने भाटे
सूत्रकार कहे छे—‘अदिस्समाणे’ इत्यादि

कय शब्दनो अर्थ खरीदवुं, अने विक्रय शब्दनो अर्थ बेचवुं, जे कय-

પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટોઽનગારઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—‘સે ભિક્ષૂ’ ઇત્યાદિ।

મૂલમ્—સે ભિક્ષૂ કાલઙ્ગે વલઙ્ગે માયઙ્ગે खेयઙ્ગે खणयઙ્ગે વિણયઙ્ગે સસમયઙ્ગે પરસમયઙ્ગે ભાવઙ્ગે પરિગ્ગહં અમમાયમાણે કાલાણુટ્ટાઈ અપહિણ્ણે દુહઓ છેત્તા નિયાઈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—સ ભિક્ષુઃ કાલઙ્ગો વલઙ્ગો માત્રાઙ્ગઃ खेदઙ્ગઃ क्षणकङ्गो विनयङ्गः स्वसम-
યઙ્ગઃ પરસમયઙ્ગો ભાવઙ્ગઃ પરિગ્રહમમાયમાનઃ કાલાનુષ્ઠાયી, અપતિઙ્ગઃ, દ્વિધાતશ્ચિ-
ત્ત્વા નિયાતિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—‘સ ભિક્ષુ’-રિત્યાદિ। સઃ—પૂર્વોક્તઃ સમુત્પિતેત્યાદિમુનિગુણગણયુક્તો
ભિક્ષુઃ=ચારિત્રવાન્ કાલઙ્ગઃ—કાલં=પ્રતિલેખનાદિસમયં જાનાતીતિ કાલઙ્ગઃ।

અથવા કાલં=ભિક્ષાકાલં જાનાતીતિ કાલઙ્ગઃ, અકાલે ભૈક્ષાચરણેનાત્મનઃ
ક્લેશાધિગમો ગ્રામનિન્દા ચ જાયતે, તતશ્ચ ભગવદાજ્ઞાવિરાધકત્વેન खेदप्रकटनेन
ચ ચારિત્રમાલિન્યં ભવત્યતોઽનુચિતકાલે ભૈક્ષાદિકં નાચરણીયમિત્યાદ્યભિજ્ઞ ઇત્યર્થઃ।
યદ્વા કાલં=સુભિક્ષં દુર્ભિક્ષં દિનપ્રમાણં રાત્રિપ્રમાણં વા જાનાતીતિ કાલઙ્ગઃ।

પદ સે ઉદ્ગમ દોષોં કા ગ્રહણ હોતા હૈ, ઉસસે ઉત્પાદન ઓર ઇષણા દોષોં
કા ભી ગ્રહણ હો જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

इन पूर्वोक्त विशेषणों से युक्त अनगार कैसा होता है? इसका
खुलाशा करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘से भिक्षू’ इत्यादि।

वह चारित्रवान् अनगार कि जिसका वर्णन ‘समुद्दिष्ट’ इस द्वितीय सूत्र
में किया जा चुका है वह; कालङ्ग-प्रतिलेखनादि क्रियाओं के अवसर का
ज्ञाता होता है। अथवा ‘कालङ्ग’-शब्द का अर्थ-काल का जानने वाला-ऐसा है।
इससे यह बात सूत्रकार प्रकट करते हैं कि-साधु को भिक्षाचरण के काल
में ही भिक्षा के लिये गमन करना चाहिये; क्योंकि अकाल में उसके निमित्त

દોષોનું અહણ થાય છે તેનાથી ઉત્પાદન અને ઔષણાદિ દોષોનો પણ અહણ
થઈ જાય છે. (સૂ ૩)

એવા પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત અણુગાર કેવા હોય છે? તેનો ખુલાસો
કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘સે ભિક્ષૂ’ ઇત્યાદિ.

તે ચારિત્રવાન અણુગાર કે જેનું વર્ણન ‘સમુદ્દિષ્ટ’ આ બીજા સૂત્રમાં
કરવામાં આવેલ છે તે ‘કાલઙ્ગ’—‘પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓના અવસરના જ્ઞાતા’ હોય
છે, અથવા ‘કાલઙ્ગ’ શબ્દનો અર્થ ‘કાળના જાણવાવાળા’ હોય છે. એથી આ વાત
સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે કે—સાધુઓ ભિક્ષાચરણના કાલમાં જ ભિક્ષા માટે જવું જોઈએ,

लेन-देन के व्यवहार करने में सहायक बाह्य द्रव्यादिक सामग्री नहीं है तो वह उस प्रकार के व्यवहार करने में सर्वथा अकिञ्चित्कर है। तब शुद्ध निर्दोष आहार के न मिलने पर वह उस प्रकार की आहारादिक सामग्री को न तो स्वयं खरीदता है, और न दूसरों से खरीद करवाता है, और खरीद करते हुए अन्य को न भला जानता है, अतः नवकोटि-विशुद्ध आहार की ही उसे गवेषणा करनी चाहिये, और उसके प्राप्त होने पर मात्रानुसार उसे ग्रहण कर अपने संयम की रक्षा करने में ही सावधान रहना चाहिये। इसी को प्रकट करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—

वह अनगार द्रव्यादिक के अभाव से क्रय विक्रय के व्यवहार में अकिञ्चन है, इसलिये आहारादिक को न स्वयं खरीदे और न दूसरों से उसे खरीदवावे, तथा इसे खरीदने वाले अन्य किसी की अनुमोदना भी न करे। इससे इस बात की पुष्टि की है कि—अनगार मन वचन काया से कृत, कारित एवं अनुमोदना द्वारा हननादि तीन, पचनादि तीन क्रयणादि तीन, एवं नवकोटि से विशुद्ध आहारादिक प्राप्त कर शरीर की पुष्टि के अभिप्राय से नहीं, किन्तु संयम की रक्षा के अभिप्राय से ही अंगारधूमादिदोषरहित हो उसका सेवन करे। सूत्र में कहे हुए क्रय विक्रय

द्रव्यादिक सामग्री नहीं तो ते अे प्रकारने व्यवहार करवामां सर्वथा अकिञ्चित्कर छे, भाटे शुद्ध निर्दोष आहारना न भणवाथी ते अेवा प्रकारनी आहारादिक सामग्रीने पोते नहीं भरीही शकता, अने भीजथी भरीहावी पाणु शकता नहीं, अने भरीह करवावाणा भीजने लवो पाणु लणुता नहीं, भाटे नवकोटिविशुद्ध आहारनी न तेणु गवेषणा करवी जेध अे, अने तेना प्राप्त थवाथी मात्रानुसार तेने ग्रहण करीने पोतानी संयमनी रक्षा करवामां न सावधान रहेवुं जेध अे. तेने प्रगट करीने सूत्रकार कहे छे डे—

ते अणुगार द्रव्यादिना अभावथी क्य-विक्रयना व्यवहारमां अकिञ्चन छे, भाटे आहारादिकने पोते न भरीहे अने भीजथी भरीहावे नहि, तथा ते भरी-हवावाणा भीज डोधनी अनुमोदना पाणु न करे. आथी आ वातनी पुष्टि करी छे डे—अणुगार मन, वचन कायाथी कृत कारित अगर अनुमोदना द्वारा हननादि त्रणु, पचनादि त्रणु, क्रयणादि त्रणु, अेम नव कोटिथी विशुद्ध आहारादिक प्राप्त करी शरीरनी पुष्टिना अलिप्रायथी नहि पाणु संयमनी रक्षाना अलिप्रायथी अंगारधूमादि-दोषरहित थधने तेनुं सेवन करे. सूत्रमां कहेला क्य विक्रय पहथी उद्दग्गम

યો જાનાતિ સ ચેદજ્ઞઃ, યદ્વા-ચેદં=ષડ્જીવનિકાયદુઃખં જાનાતીતિ ચેદજ્ઞઃ । યદ્વા-‘ ક્ષેત્રજ્ઞ ’ ઇતિ-ચ્છાયા, ક્ષેત્રમુત્તમકુલાદિરૂપં જાનાતિ યઃ સ ક્ષેત્રજ્ઞઃ । યદ્વા-ભૈક્ષાદિલાભક્ષેત્રપરિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । ‘ ક્ષણકજ્ઞઃ ’ ક્ષણ એવ ક્ષણકઃ પ્રતિલેખન-ભૈક્ષાદિકર્તવ્યકાલસ્તં જાનાતીતિ ક્ષણકજ્ઞઃ=નમસ્કારપૌરુષ્યાદિદશવિધપ્રત્યાખ્યાના-વસરજ્ઞઃ । ‘ વિનયજ્ઞઃ ’ વિનયં દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવપેક્ષયા ગુરુસમીપે યથોક્તપ્રતિ-પત્તિલક્ષણં જાનાતિ યઃ સ વિનયજ્ઞઃ । યદ્વા-વિનયજ્ઞઃ=અભ્યુત્થાનાદ્યભિવન્દ-નાઙ્ગલિકરણાદિવિજ્ઞાતા । યદ્વા-ગુરુસમીપે ગર્વં ન કુર્યાન્ન દીનો ભવેત્, ન મિથો-કાયિક જીવોં કે દુઃખોં કા જો જ્ઞાતા હૈ ઉસકા નામ ચેદજ્ઞ હૈ । અથવા-“ ચેયન્ને ” ઇસકી સંસ્કૃત છાયા “ ક્ષેત્રજ્ઞઃ ” યહ ભી હોતી હૈ, જો ઉત્તમ કુલાદિકરૂપ ક્ષેત્ર કા જ્ઞાતા, અથવા ભિક્ષાદિક લાભ કે ક્ષેત્ર કો જો જાનતા હૈ વહ ક્ષેત્રજ્ઞ હૈ ।

પ્રતિલેખન એવં ભિક્ષા કરને યોગ્ય કાલ કા નામ ક્ષણ હૈ, ઇસકો જો જાનને વાલા હૈ ઉસકા નામ ક્ષણજ્ઞ હૈ । નમસ્કાર, પૌરુષ્યાદિ દશ પ્રકાર કે પ્રત્યાખ્યાન કે અવસર કો જાનના યહ ઇસકા ફલિતાર્થ હૈ । દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કી અપેક્ષા સે ગુરુ કા આદર સત્કાર કરના જો જાનતા હૈ ઉસકા નામ વિનયજ્ઞ હૈ । ગુરુ જિસ સમય અપની તરફ આવેં યા ચડે હોં ઉસ સમય ચડે હો જાના, નમસ્કાર કરના, હાથ જોડના આદિ ભી વિનય હૈ, ઇસ પ્રકાર કે વ્યવહાર કો જાનને વાલા ભી વિનયજ્ઞ કહલાતા હૈ । અથવા-ગુરુ મહારાજ કે સમીપ અહંકાર ન કરના, દીનતા જાહિર નહીં કરની, ન ઉનકી ગુસ્સ વાત કિસી કો કહની, ઇત્યાદિરૂપ ભી

જીવેના હુ.ખોને જે જ્ઞાતા છે તેનું નામ ચેદજ્ઞ છે અથવા “ ચેયન્ને ” તેની સંસ્કૃત છાયા ‘ ક્ષેત્રજ્ઞ ’ એ પણ થાય છે જે ઉત્તમકુલાદિરૂપ ક્ષેત્રનો જ્ઞાતા, અથવા ભિક્ષાદિક લાભના ક્ષેત્રનો જે બાણકાર છે તે ક્ષેત્રજ્ઞ છે

પ્રતિલેખન અને ભિક્ષા કરવાયોગ્ય કાલનું નામ ક્ષણ છે, તેના જે બાણકાર છે તેનું નામ ક્ષણજ્ઞ છે. નમસ્કાર પૌરુષ્યાદિ દશ પ્રકારના પ્રત્યાખ્યાનના અવસરને બાણવો તે તેનું ફલિતાર્થ છે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની અપેક્ષાથી ગુરૂનો આદર સત્કાર કરવો જે બાણ છે તેનું નામ વિનયજ્ઞ છે, ગુરૂ જે વખતે પોતાની તરફ આવે અગર ઉભા હોય તે વખતે ઉભા થવું, નમસ્કાર કરવો, હાથ જોડવા આદિ પણ વિનય છે. આ પ્રકારના વ્યવહારને બાણવાવાળા પણ વિનયજ્ઞ કહેવાય છે અથવા ગુરૂ મહારાજની સમીપ અહંકાર ન કરવો, દીનતા બહાર ન કરવી, તેની કોઈ ગુસ્સ વાત બીજાને ન કહેવી, ઇત્યાદિરૂપ પણ વિનય છે. જે આ પ્રકારના

‘વલજ્ઞઃ’ વલં=સ્વશક્તિં પરશક્તિં વા યો જાનાતિ સ વલજ્ઞઃ=સ્વ-પરવલાભિજ્ઞઃ,
 ‘માત્રાજ્ઞઃ’ માત્રાં જાનાતિ યઃ સ માત્રાજ્ઞઃ, યાવત્પ્રમાણાહારાદિગ્રહણેન ગૃહસ્થો ન
 પુનરારમ્ભે પ્રવર્તતે । યદ્વા—સ્વસંયમયાત્રાનિર્વાહો યાવતાઽઽહારેણ ભવતિ, તાવન્મા-
 ત્રાજ્ઞાનકુશલદ્વ્યર્થઃ । ‘સ્વેદજ્ઞઃ’ સ્વેદમ્=અભ્યાસં, સંસારપરિભ્રમણજન્યં શ્રમં વા

ક્રિયા ગયા ગમન એક તો અપને લિયે કલેશકારક હોતા હૈ, દૂસરે ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે ગામ મેં ઉસ સાધુ કી નિંદા બી હોતી હૈ । ઇસલિયે આહાર લેને કે લિયે જો માર્ગ શાસ્ત્રાનુસાર વિહિત હૈ ઉસસે વિપરીત પ્રવૃત્તિ કરને વાલે સંયમી-સાધુ કે ચારિત્ર મેં ભગવાન્ કી આજ્ઞા કા વિરાધક હોને કી વજહ સે, ઓર અપને મેં સ્વેદ ઉત્પન્ન કરને કે નિમિત્ત સે મલિનતા આતી હૈ, ઇસલિયે અકાલ મેં ભિક્ષાવૃત્તિ નહીં કરની ચાહિયે । ‘કાલજ્ઞ’ શબ્દ કા અર્થ યહ બી હોતા હૈ—જો સુભિક્ષ-દુર્ભિક્ષ, દિનપ્રમાણ એવં રાત્રિ કે પ્રમાણ કો જાનતા હૈ ।

અપની શક્તિ એવં પરકી શક્તિ કો જો જાનતા હૈ વહ વલજ્ઞ હૈ । જિતને પ્રમાણ કા આહાર લેને સે ગૃહસ્થ ફિર દુબારા આરમ્ભ ન કરે, અથવા જિતને આહાર કે ગ્રહણ સે અપની સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ હો સકતા હૈ, ઉતની હી માત્રા મેં આહાર લેના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કી વિધિ મેં જો કુશલ હોતા હૈ ઉસકા નામ માત્રાજ્ઞ હૈ ।

અભ્યાસ, અથવા સંસાર મેં પરિભ્રમણ સે ઉત્પન્ન હુએ કલેશ યા ષટ્-

કારણ કે અકાળે તે નિમિત્તે થએલું ગમન એક તો પોતાને માટે કલેશકારક થાય છે, બીજું આવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી ગામમાં તે સાધુની નિંદા પણ થાય છે. માટે આહાર લેવા માટે જે માર્ગ શાસ્ત્રાનુસાર વિહિત છે તેનાથી વિપરીત પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા સંયમી સાધુના ચારિત્રમાં ભગવાનની આજ્ઞાના વિરાધક હોવાના મતલબથી, અને પોતાનામાં ખેદ ઉત્પન્ન કરવાના નિમિત્તથી મલિનતા આવે છે માટે અકાળમાં ભિક્ષાવૃત્તિ કરવી જોઈએ નહિ.

કાળજ્ઞ શબ્દનો અર્થ એ પણ થાય છે—જે સુભિક્ષ-દુર્ભિક્ષ દિનપ્રમાણ અને રાત્રિના પ્રમાણને જાણે છે.

પોતાની તેમજ બીજાની શક્તિને જે જાણે છે તે બલજ્ઞ છે, જેટલા પ્રમાણમાં આહાર લેવાથી ગૃહસ્થ ફરીથી બીજી વાર આરંભ ન કરે, અથવા જેટલા આહારના ગ્રહણથી પોતાની સંયમયાત્રાનો નિર્વાહ થાય છે એટલી જ માત્રામાં આહાર લેવો જોઈએ. આ પ્રકારની વિધિમાં જે કુશળ છે તેનું નામ માત્રાજ્ઞ છે.

અભ્યાસ અથવા સંસારમાં પરિભ્રમણથી ઉત્પન્ન થતાં કલેશ, અગર ષટ્કાયિક

પરસમયનિરસનવીતરાગસમયસ્થાપનચતુર ઇતિ યાવત્ । ‘ભાવજ્ઞઃ’ ભાવમન્તઃ- કરણાશયં સ્વીયં પરકીયં વા યો જાનાતિ સ ભાવજ્ઞઃ=સ્વપરાશયવેત્તા, એવં ‘પરિગ્રહં’ પરિગ્રહ્યતે યઃ સ પરિગ્રહઃ, યાવદાહારવસ્ત્રપાત્રાદિગ્રહણેન સંયમમાત્રા નિર્વહતિ, તતોઽધિકસ્યૈષણીયસ્યાપિ મૂર્છાભાવેન ગ્રહણં પરિગ્રહસ્તમ્ અમમાયમાનઃ=અમમી-કુર્વન્, તં મનસાઽપ્યનાદદાન ઇત્યર્થઃ ।

કિન્ન-કાલાનુષ્ઠાયી=શાસ્ત્રવિહિતકાલે કર્તવ્યકરણશીલઃ । પૂર્વે ‘કાલજ્ઞઃ’ ઇતિ કાલં જાનાતીતિ જ્ઞપરિજ્ઞયા પ્રોક્તમ્, અત્ર ચાવસરેઽનુષ્ઠાનવિધાયીતિ આસેવન

અર્થ સ્પષ્ટ છે । આ પ્રકાર કા સાધુ પરસિદ્ધાન્ત કા નિરસન ઓર સ્વસિદ્ધાન્ત કા સંસ્થાપન કરને મેં બડા ચતુર રહતા છે । અપને ઓર પર કે માનસિક અભિપ્રાય કે જ્ઞાતા કા નામ ભાવજ્ઞ છે । જિતને આહાર, વસ્ત્ર, ઓર પાત્રાદિકોં સે સંયમયાત્રા નિભ સકતી છે ઉસસે અધિક કા મૂર્છાભાવ સે ગ્રહણ કરના પરિગ્રહ છે । આ પરિગ્રહ કા જો સર્વથા ત્યાગી હોતા છે-મન સે મી ઉસે ગ્રહણ કરને કી ચાહના નહીં કરતા છે વહ પરિગ્રહ કી મમતા નહીં કરને વાલા કહલાતા છે । જિસ પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયા કે કરને કા જો સમય શાસ્ત્ર મેં નિયત કિયા ગયા છે ઉસી કે અનુસાર અપને આવશ્યક કાર્યોં કા કરને વાલા સાધુ કાલાનુષ્ઠાયી કહલાતા છે । કાલજ્ઞ મેં ઓર કાલાનુષ્ઠાયી મેં યહી ભેદ છે કિ-કાલજ્ઞ તો ભિક્ષાદિ આચરણ કે સમય કા જ્ઞાતા હોતા છે, ઓર કાલાનુષ્ઠાયી ઉસ ૨ કાલ મેં અપને કર્તવ્ય કર્મોં કા કરને વાલા હોતા છે । જ્ઞ-પરિજ્ઞા કી અપેક્ષા કાલજ્ઞ

“સ્નાનં મદદર્પકરં, કામાણ્ઠં પ્રથમં સ્મૃતમ્ ।

તસ્માત્કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ” ॥ ૧ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ છે આ પ્રકારનો સાધુ પરસિદ્ધાન્તનું નિરસન અને સ્વસિદ્ધાન્તનું સંસ્થાપન કરવામાં ઘણું ચતુર રહે છે પોતાના અને બીજાના માનસિક અભિપ્રાયના જ્ઞાતાનું નામ ભાવજ્ઞ છે જેટલો આહાર, વસ્ત્ર અને પાત્રાદિકોથી સંયમ-યાત્રા નહીં શકે છે તેનાથી અધિક મૂર્છાભાવથી ગ્રહણ કરવું તે પરિગ્રહ છે. આ પરિગ્રહના જે સર્વથા ત્યાગી હોય છે, મનથી પણ તે ગ્રહણ કરવાની યાહના નથી કરતા તે પરિગ્રહની મમતા નહિ કરવાવાળા કહેવાય છે. જે પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયા કરવાનો સમય શાસ્ત્રમાં નિયત કરેલ છે તે અનુસાર પોતાના આવશ્યક કાર્યોને કરવાવાળા સાધુ કાલાનુષ્ઠાયી કહેવાય છે. કાલજ્ઞમાં અને કાલાનુષ્ઠાયીમાં એ ભેદ છે કે-કાલજ્ઞ તો ભિક્ષાદિ આચરણના સમયના જ્ઞાતા હોય છે, અને કાલાનુષ્ઠાયી તે તે કાલમાં પોતાના કર્તવ્ય કર્મોંના કરવાવાળા હોય છે જ્ઞ-પરિજ્ઞાની અપેક્ષા

રહસ્યાદિ બ્રુવીતેત્યાદિરૂપો વિનયસ્તદભિજ્ઞ इत्यर्थः । ‘સ્વસમયજ્ઞઃ’ સ્વં=નિજં સમયં=સિદ્ધાન્તં જાનાતિ યઃ સ સ્વસમયજ્ઞઃ, એવં પરસમયજ્ઞઃ-અન્યદીયસિદ્ધાન્તજ્ઞાનનિપુણઃ, ‘સ્વસિદ્ધાન્તે તત્પરતા પરસિદ્ધાન્તે ચોપેક્ષા કાર્યા’ इत्याद्यभिज्ञः, યથા પરસમયે સ્નાનાદેશવચ્યકર્તવ્યત્વેન પ્રતિપાદિતેऽपि स्वसमये तस्य मददर्पकरत्वेन मुनिना तत्परित्याज्यमेवेति यो वेत्तीत्यर्थः । ઉક્તञ્ચ—

स्नानं मददर्पकरं, कामाङ्गं प्रथमं स्मृतम् ।

तस्मात्કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ । ૧ । ઇતિ

વિનય હૈ । જો હસ પ્રકાર કે વિનય કા જ્ઞાતા હોતા હૈ ઉસકા નામ ભી વિનયજ્ઞ હૈ । અપને સિદ્ધાન્ત ઓર પર કે સિદ્ધાન્ત કે જ્ઞાતા કો સ્વસમયજ્ઞ એવં પરસમયજ્ઞ કહતે હૈ । જો સ્વસિદ્ધાન્ત કા જ્ઞાતા હોગા ઉસકે હૃદય મેં પરસિદ્ધાન્ત કે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રહેગા—દ્વેષ ઉત્પન્ન નહીં હોગા । સ્વસિદ્ધાન્ત કે બોધ સે યુક્ત સાધુ કે હૃદય મેં પરસિદ્ધાન્તપ્રતિપાદિત તત્ત્વોં કે પ્રતિ ન રાગ હોગા ઓર ન દ્વેષ હી—ઉનકે પ્રતિ ઉસકી સદા માધ્યસ્થ્ય ભાવના હી રહેગી । સમકિતી કે લિયે પરસિદ્ધાન્ત કે તત્ત્વોં કા બોધ હી અપને સિદ્ધાન્ત મેં પ્રતિપ્રાદિત તત્ત્વોં કે સ્વરૂપ કે પ્રતિ અધિક શ્રદ્ધા કા કારણ બનતા હૈ । અન્ય સિદ્ધાન્તકારોં ને સાધુ અવસ્થા મેં ભી સ્નાન વગૈરહ કરના કર્તવ્ય બતલાયા હૈ, તવ જૈનસિદ્ધાન્ત મેં હસે ઉસ અવસ્થા મેં મદ ઓર દર્પકારી માના ગયા હૈ, હસલિયે હી સાધુ હસ પ્રવૃત્તિ સે સદા દૂર રહતે હૈ । કહા ભી હૈ—

“સ્નાનં મદદર્પકરં, કામાઙ્ગં પ્રથમં સ્મૃતમ્ ।

તસ્માત્કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ ॥ ૧ ॥”

વિનયના જ્ઞાતા હોય છે તેનું નામ પણ વિનયજ્ઞ છે. પોતાના સિદ્ધાન્તનો અને બીજાના સિદ્ધાન્તનો જે જ્ઞાતા છે તેને સ્વસમયજ્ઞ અને પરસમયજ્ઞ કહે છે. જે સ્વસિદ્ધાન્તના જ્ઞાતા હશે તેના હૃદયમાં પરસિદ્ધાન્ત પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રહેશે—દ્વેષ ઉત્પન્ન થશે નહિ સ્વસિદ્ધાન્તના બોધથી યુક્ત સાધુના હૃદયમાં પરસિદ્ધાન્તપ્રતિપાદિત તત્ત્વો પ્રતિ રાગ અને દ્વેષ થતો નથી. તેના પ્રતિ તેની સદા મધ્યસ્થ ભાવનાજ રહેશે, સમકિતી માટે પરસિદ્ધાન્તના તત્ત્વોનો બોધ પોતાના સિદ્ધાન્તમાં પ્રતિપ્રદિત તત્ત્વોના સ્વરૂપ પ્રતિ અધિક શ્રદ્ધાનું કારણ બને છે. અન્ય સિદ્ધાન્તકારોએ સાધુ અવસ્થામાં પણ સ્નાન વિગેરે કરવું, કર્તવ્ય બતાવ્યું છે, ત્યારે જૈનસિદ્ધાન્તમાં તેને તે અવસ્થામાં મદ અને દર્પકારી માનેલ છે. માટે સાધુ આવી પ્રવૃત્તિથી સદા દૂર રહે છે. કહ્યું પણ છે—

પ્રતિજ્ઞા મુનિના ન કાર્યેતિ તાત્પર્યમ્ । યદ્વા-ભૈક્ષાચરણાદૌ ‘મમૈવાહારાદિકં સ્યા’-
 દિત્યાદિપ્રતિજ્ઞા ન સાધીયસી । અથવા-યથા સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્તે ‘જ્ઞાનક્રિયાભ્યાં
 મોક્ષઃ’ ઇત્યસ્તિ તત્ર એકતરેણૈવ તદધિગમ ઇત્યાદિપ્રતિજ્ઞા ન વિધેયેત્યર્થઃ, પશ્ચ-
 મહાવ્રતાતિરિક્તે કસ્મિંશ્ચિદપિ વિષયે પ્રતિજ્ઞા ન કર્તવ્યા મુનિના । યદિવા અપ્ર-
 તિજ્ઞઃ=અનિદાનઃ માયાશલ્યાદિરહિત ઇત્યર્થઃ । ઈદૃશોઽનગારઃ કિં કૃત્વા વિહરતી-
 ત્યાહ—‘દ્વિધાતઃ’ ઇત્યાદિ, દ્વિધાતઃ=ઉભૌ રાગદ્વેષાવિત્યર્થઃ છિત્ત્વા=વ્યપનીય
 નિયાતિ=નિ=નિશ્ચયેન યાતિ=મોક્ષમાર્ગં પ્રાપ્નોતિ, પૂર્વગુણસમ્પન્નોઽપિ રાગવાન્
 દ્વેષવાંશ્ચ ન મોક્ષં લભત ઇતિ ભાવઃ ।

ભિક્ષા કે સમય મેં ‘મુજે હી આહારાદિક મિલે’ એસી પ્રતિજ્ઞા નહીં
 કરની चाहिये, क्यों कि मुनि के लिये इस प्रकार की प्रतियज्ञा करना उचित
 नहीं है । ज्ञान और क्रिया इन दोनों से मुक्ति का लाभ स्याद्वादसिद्धान्त
 में प्रतिपादित किया गया है, परन्तु इस प्रकार की प्रतियज्ञा करना कि-
 ‘सिर्फ ज्ञानमात्र से या क्रियामात्र से ही मुक्ति होती है’ उचित नहीं है ।
 मुनियों को पंचमहाव्रतों के आराधन करने के सिवाय अन्य किसी भी
 विषय में प्रतियज्ञा नहीं करनी चाहिये ।

अथवा “अप्रतिज्ञः” इस शब्द का अर्थ—‘मायादि तीन शल्यों रहित’
 होता है । अनगारों का सर्व संयम शल्यत्रय से रहित होकर ही निर्मल हो
 सकता है । इन पूर्वोक्तविशेषणविशिष्ट अनगार ही राग और द्वेषों का
 उन्मूलन कर “नियाति” निश्चय से मोक्ष के मार्ग को प्राप्त करता है ।
 रागद्वेष के उन्मूलन के अभाव में इन पूर्वोक्तगुणसम्पन्न भी अनगार

“अप्रतिज्ञ” એ વિશેષણ આપેલ છે. અથવા—ભિક્ષાસમયમાં ‘મનેજ
 આહારાદિક મળે’ એવી પ્રતિજ્ઞા કરવી ભેદ એ નહિ, કારણ કે મુનિ માટે આવા
 પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરવી ઉચિત નથી. જ્ઞાન અને ક્રિયા આ બંનેથી મુક્તિનો
 લાભ સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્તમાં પ્રતિપાદિત કરેલ છે, પરંતુ એવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા
 કરવી કે ‘ફક્ત જ્ઞાનમાત્રથી અગર ક્રિયામાત્રથી જ મુક્તિ થાય છે’ તે ઉચિત
 નથી. મુનિઓએ પચ મહાવ્રતોનુ આરાધન કરવા સિવાય બીજા કોઈ પણ વિષયમાં
 પ્રતિજ્ઞા નહિ કરવી ભેદ એ.

અથવા “અપ્રતિજ્ઞઃ” આ શબ્દનો અર્થ ‘માયાદિ ત્રણ શલ્યોથી રહિત’
 થાય છે. અણુગારોનો સર્વ સંયમ શલ્યત્રયથી રહિત બનીને જ નિર્મળ
 થઈ શકે છે. આ પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટ અણુગાર જ રાગ અને દ્વેષનું ઉન્મૂલન કરી
 “નિયાતિ” નિશ્ચયથી મોક્ષના માર્ગને પ્રાપ્ત કરે છે. રાગ દ્વેષના ઉન્મૂલનના

परिज्ञया प्रतिपादितम् । ‘अपि चाप्रतिज्ञः’ अविद्यमाना प्रतिज्ञा यस्य सोऽप्रतिज्ञः प्रतिज्ञा च कषायप्राबल्येन भवति । यथा क्रोधाविर्भावान्नास्तिकमतानुयायिना पालकब्राह्मणेन स्कन्दकाचार्यस्य पञ्चशतशिष्यान् तैलयन्त्रे निष्पीड्यमानानवलोक्य स्कन्दकऋषिणा सकलराजधान्या विनाशप्रतिज्ञा कृता । मानोदयाद्बाहुबलिना ‘यज्ज्येष्ठोऽहं पूर्वं प्रव्रजितानष्टनवतिसंख्यकान् कनीयसः स्वभ्रातृन् न वन्दे’ इति प्रतिज्ञा व्यधायि । मायोदयान्मल्लीस्वामिजीवेन पूर्वभवेऽन्यमुनीन् प्रतार्य प्रत्याख्यानप्रतिज्ञाऽकारि । लोभोदयात्सुभूमचक्रवर्तिना सप्तमखण्डसाधनप्रतिज्ञा विहिता । एवमादि-

और आसेवन-परिज्ञा की अपेक्षा कालानुष्ठायी समझना चाहिये । “अप्रतिज्ञः” जिसके प्रतिज्ञा विद्यमान नहीं है उसका नाम अप्रतिज्ञ है । प्रतिज्ञा, कषाय की प्रबलता से होती है, जैसे क्रोध के आवेश से नास्तिकमतानुयायी पालक ब्राह्मण ने स्कन्दकाचार्य के पांच सौ शिष्यों को तैल के यन्त्र में पेल दिया था । इस बात को देखकर स्कन्दकऋषि ने समस्त राजधानी को नष्ट करने की प्रतिज्ञा की थी । मानकषाय के उदय से बाहुबली महाराज ने दीक्षित अपने से छोटे (९९) निन्यानवे भाइयों को इस ख्याल से वन्दन नहीं किया था कि ‘मैं इनसे बड़ा हूँ-और ये मुझ से छोटे हैं’ । मायाकषाय के उदय से मल्ली स्वामी के जीवने पूर्वभव में अन्य मुनियों के साथ माया करके प्रत्याख्यान की प्रतिज्ञा की थी । लोभ-कषाय के उदय से सुभूमचक्रवर्ती ने सप्तम खंड को साधने की प्रतिज्ञा की, इत्यादि । इस प्रकार की कषायोदयजनित प्रतिज्ञा मुनियों को नहीं करनी चाहिये, इसीलिये यहां ‘अप्रतिज्ञः’ यह विशेषण दिया है । अथवा

કાલજ અને આસેવન-પરિજ્ઞાની અપેક્ષા કાલાનુષ્ઠાયી સમજવું જોઈએ. “અપ્રતિજ્ઞ” જેની પ્રતિજ્ઞા વિદ્યમાન નથી તેનું નામ અપ્રતિજ્ઞ છે. પ્રતિજ્ઞા, કષાયની પ્રબલતાથી થાય છે. જેમ ક્રોધના આવેશથી નાસ્તિકમતાનુયાયી પાલક બ્રાહ્મણ સ્કન્દકાચાર્યના પાંચસો શિષ્યોને તેલના યંત્રમાં પિડ્યા હતા, તે વાતને દેખીને સ્કન્દકઋષિએ સમસ્ત રાજધાનીને નષ્ટ કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરી હતી. માન-કષાયના ઉદયથી બાહુબલિ મહારાજે દીક્ષિત પોતાનાથી નાના (૯૯) નવાજી ભાઈઓને તેવા ખ્યાલથી વંદન ન કર્યું કે “હું તેમનાથી મોટો છું” અને એ મારાથી નાના છે.” માયાકષાયના ઉદયથી મલ્લી સ્વામીના જીવે પૂર્વ ભવમાં અન્ય મુનિઓ સાથે માયા કરીને પ્રત્યાખ્યાન પ્રતિજ્ઞા કરી હતી. લોભકષાયના ઉદયથી સુભૂમચક્રવર્તીએ સાત ખંડ સાધવાની પ્રતિજ્ઞા કરી, ઇત્યાદિ. આવા પ્રકારની કષાયોદયજનિત પ્રતિજ્ઞા મુનિઓએ કરવી જોઈએ નહિ, માટે અહીં આ

ટીકા—‘વસ્ત્ર’-મિત્યાદિ । મુનિર્યથાઽઽહારં યાચયેત્ ગૃહસ્થેભ્યસ્તથૈવ એતેષુ ચૈવ =ગૃહપતિષ્વેવ વસ્ત્રં=વસનં પતદ્ગ્રહં=પાત્રં વસ્ત્રગ્રહણેન વસ્ત્રૈષણા પતદ્ગ્રહગ્રહણેન ચ પાત્રૈષણા ચ સઙ્ગૃહીતા, કમ્બલં=રજીકાદિકમ્, એતેનોર્ગાવસ્ત્રગ્રહણમ્, પાદપ્રોઞ્છનં=રજોપહરણમ્, અવગ્રહમ્=અવગૃહ્યતે યઃ સોઽવગ્રહો વસતેરાજા, શક્રેન્દ્રરાજગૃહસ્થ-શય્યાતરસાધર્મિકભેદેનાવગ્રહઃ પશ્ચધા, એતેનાવગ્રહપ્રતિજ્ઞાઃ સર્વાઃ સઙ્ગૃહીતાઃ, તમ-વગ્રહમ્, અપિ ચ કટાસનં કટથ્=સંસ્તારથ્ આસનં ચ=પીઠફલકાદિકં ચાનયોઃ સમાહારદ્વન્દ્વસ્તત્કટાસનમ્, આસ્યતેઽન્ત્રેત્યાસનં શય્યા વા, સંસ્તારઃ સાર્દ્ધહસ્તદ્વય-પ્રમાણઃ, શય્યા ચ શરીરપ્રમાણા, એતત્સર્વં યાચયેત્=ગવેષયેત્, એષણીયં વસ્ત્રાદિકં યાચયેત્ નાનેષણીયમ્, ઇતિ ॥ સૂ. ૫ ॥

સંયમી મુનિ કે વિશેષ આચાર કો પુનરપિ પ્રદર્શિત કરતે હુણ સૂત્ર-કાર કહતે હૈ—‘વત્થં’ ઇત્યાદિ ।

અનગાર જિસ પ્રકાર ગૃહસ્થોં સે આહાર કી યાચના કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર ઉનસે વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, રજોહરણ, રહને કે લિયે વસતિ-સ્થાન કી ઔર કટાસન કી મી યાચના કરે । સૂત્ર મેં વસ્ત્ર કે ગ્રહણ સે વસ્ત્રૈષણા ઔર પાત્ર કે ગ્રહણ સે પાત્રૈષણા કા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । કંબલ સે ઝની કંબલ જાનના ચાહિયે, રેશમી આદિ કમ્બલ નહીં । અવગ્રહ શબ્દ કા અર્થ-વસતિ-સ્થાન મેં ઠહરને કી આજ્ઞા । અવગ્રહ, શક્રેન્દ્ર, રાજા, ગૃહસ્થ, શય્યાતર, ઔર સાધર્મિક કે ભેદ સે ૫ પ્રકાર કા હૈ । અવગ્રહ (આજ્ઞા) શબ્દ સે અવગ્રહમમ્બન્ધી સમસ્ત પ્રતિજ્ઞાઓં કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । કટ સે સંસ્તારક એવં આસન સે પીઠફલકાદિ જાનના ચાહિયે । આસન સે અપને શરીરપ્રમાણ શય્યા, તથા સંસ્તાર સે (૨॥) ઢાઈ હાથકા

સંયમી મુનિના વિશેષ આચારને પુનરપિ પ્રદર્શિત કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘વત્થં’ ઇત્યાદિ.

અણુગાર જેવી રીતે ગૃહસ્થોથી આહારની યાચના કરે છે તે પ્રકારે તેનાથી વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, રજોહરણ, રહેવાને મકાનની અને કટાસનની પણ યાચના કરે. સૂત્રમાં વસ્ત્રના ગ્રહણથી વસ્ત્રૈષણા અને પાત્રના ગ્રહણથી પાત્રૈષણાનું ગ્રહણ કહેવાય છે. કંબલથી ઉનની કંબલ બાણુવી ભેઠએ, રેશમી આદિ કંબલ નહિ. અવગ્રહ શબ્દનો અર્થ—વસતિ-સ્થાનમાં રહેવાની આજ્ઞા. અવગ્રહ—શક્રેન્દ્ર, રાજા, ગૃહસ્થ, શય્યાતર, અને સાધર્મિઓના ભેદથી ૫ પ્રકારના છે. અવગ્રહ (આજ્ઞા) શબ્દથી અવગ્રહસમ્બન્ધી સમસ્ત પ્રતિજ્ઞાઓનું ગ્રહણ છે. કટથી સંસ્તારક અને આસનથી પીઠ-ફલકાદિ બાણુવું ભેઠએ. આસનથી પોતાના શરીર પ્રમાણ શય્યા, તથા સંસ્તારથી અઢી હાથનું બિંછાનું—બિસ્તર સમજવો.

નનુ શાસ્ત્રે નાનાવિધાભિગ્રહરૂપા પ્રતિજ્ઞાઽભિહિતાઽત્ર તુ ‘ મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવે ’-
દિતિ કથિતં તત્કથમ્ ? इत्यत्राह—द्विधेति, अत्र पक्षे द्विधेतिच्छाया, द्विधा=
द्विप्रकारेण रागेण द्वेषेण च प्रतिज्ञां छित्त्वा=अकृत्वा नियाति=नियतं याति=संयमे
विहरति, रागद्वेषवशेन मुनिरनेषणीयमपि गृह्णाति भुङ्क्ते चेति रागद्वेषवती प्रतिज्ञा
मुनिना न विधेयेति भावः ॥ सू० ४ ॥

આચારવિશેષં પુનરપિ દર્શયતિ—‘ વત્થં ’ इत्यादि ।

मूलम्—वत्थं पङ्क्तिगृहं कंबलं पायपुच्छं उग्गहं च कटासनं
एषु चैव जाएज्जा ॥ सू० ५ ॥

छाया—वस्त्रं पतद्ग्रहं कम्बलं पादप्रोच्छनमवग्रहं च कटासनमेतेषु चैव
याचयेत् ॥ सू० ५ ॥

मुक्ति के लाभ से वंचित माना गया है ।

પ્રશ્ન—શાસ્ત્ર મેં અનેક પ્રકાર કી અભિગ્રહરૂપ પ્રતિજ્ઞાઓં કા કથન
કિયા ગયા હૈ, ફિર યહાં પર “ મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવેત્ ” મુનિ કો પ્રતિજ્ઞા-
સંપન્ન નહીં હોના ચાહિયે, યહ કૈસે કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—રાગ ઔર દ્વેષ સે જો પ્રતિજ્ઞા કી જાતી હૈ વહ સંયમી મુનિ
કે લિયે ઉચિત નહીં હૈ । તમી વહ અપને સંયમ માર્ગ મેં વિચર સકતા
હૈ । રાગ ઔર દ્વેષ કે વશ હોકર કી ગઈ પ્રતિજ્ઞા સે મુનિ અનેષણીય
મી આહારાદિક કો ગ્રહણ કર લેતા હૈ, ઇસલિયે રાગદ્વેષવાલી પ્રતિ-
જ્ઞાઓં કે કરને કા નિષેધ કિયા ગયા હૈ । યહ ભાવ “ દુહઓ હેત્તા નિયાઈ ”
ઇન પદોં સે પ્રકટ હોતા હૈ અતઃ ઇસ પ્રકાર કી પ્રતિજ્ઞા મુનિજનોં કો
નહીં કરની ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

અભાવમાં આ પૂર્વોક્તગુણસંપન્ન પણ અણુગાર મુક્તિના લાભથી વંચિત માનેલ છે.

પ્રશ્ન—શાસ્ત્રમાં અનેક પ્રકારની અભિગ્રહરૂપ પ્રતિજ્ઞાનું કથન કરેલ છે,
વળી આ ઠેકાણે “ મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવેત્ ” મુનિએ પ્રતિજ્ઞાસંપન્ન નહિ બનવું
જોઈએ, એ કેમ કહેવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર—રાગ અને દ્વેષથી જે પ્રતિજ્ઞા કરવામાં આવે છે, સંયમી મુનિએ
તેવી પ્રતિજ્ઞા નહિ કરવી જોઈએ. તો જ તે પોતાના સંયમ માર્ગમાં વિચરી શકે
છે. રાગ અને દ્વેષથી કરેલી પ્રતિજ્ઞાથી મુનિ અનેષણીય પણ આહારાદિક ગ્રહણ
કરી લે છે. માટે રાગ દ્વેષવાળી પ્રતિજ્ઞાઓ કરવાનો નિષેધ કરેલ છે. આ ભાવ
“ દુહઓ હેત્તા નિયાઈ ” એ પદોથી પ્રગટ થાય છે. માટે આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા
મુનિજનોએ નહિ કરવી જોઈએ. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ગૃહપતિર્ન પુનરાસ્મિ પ્રવર્તેત, યાવતા ચાત્મનઃ સંયમયાત્રાનિર્વાહો ભવતિ, યથા ચ પરિષ્ઠાપનીયં ન ભવેત્ તાવતી માત્રા, તાં જાનીયાત્=બુદ્ધ્યેત માત્રાતોઽધિકગ્રહણે સંયતમર્યાદાસ્વલનાત્ । એતત્સર્વં 'જમિણં વિરૂવરૂવેહિં' ઇત્યુદ્દેશસ્યાદિમમૂત્રમારમ્ભ્યૈ-તાવત્પર્યન્તં ન મયા સ્વબુદ્ધ્યા પ્રોક્તમિતિ દર્શયતિ—'તદ્યથેત્યાદિ । તદ્યથા—ઇદમ્-ઉદ્દેશારમ્ભતોઽવ્યવહિતમૂત્રપર્યન્તમભિવ્યાપ્ય યદભિહિતં તત્સર્વં ભગવતા પ્રવેદિતમ્=ઉક્તમ્ । એતેન પૂર્વોક્તમૂત્રાદભિહિતાર્થેઽવશ્યકર્તવ્યતા પ્રદર્શિતા, અન્યથા ભગવદાજ્ઞા વિરાધકત્વમાપદ્યેતેતિ સંમ્પ્રચિતમ્ । અપિ ચાનગારઃ કિં કુર્યાદિતિ દર્શયતિ—'લાભ ઇતી'-તિ, લાભઃ=અશનવસનાદર્મમૈવાધિગમ ઇતિ ચેતસિ પરિચિન્ત્ય ન માદ્યેત=ન મોદેત નાભિમાનં કુર્યાદિત્યર્થઃ ।

નિર્વાહ હો સકે, અર્થાત્ જો સંયમયાત્રા કે નિર્વાહ કરને મેં કિસી તરહ સે વાધક ન બન સકે । લેતે સમય યહ ધ્યાન અવશ્ય રખના ચાહિયે, એસા ન હો કિ—અધિક લેને પર પરિષ્ઠાપન કરના પડે । ઇતના ધ્યાન રખના હી માત્રા હૈ । ઇસ માત્રા કી મર્યાદા કા ઉલ્લંઘન કરને સે યથાવત્સંયમ કા નિર્વાહ નહીં હો સકતા ।

શ્રીસુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં કિ—યહ સબ કુછ જો ઇસ ઉદ્દેશ કે પ્રથમ સૂત્ર સે લગા કર યહાં તક કહા ગયા હૈં વહ મૈને અપની નિજ કલ્પના સે નહીં કહા હૈ, કિન્તુ વીતરાગ પ્રભુ ને યહ સબ પ્રકટ કિયા હૈ । ઇસલિયે જો કુછ યહાં તક કહા ગયા હૈં સંયમી મુનિ કા કર્તવ્ય હૈ કિ ઉસ પર પૂર્ણ ધ્યાન રખે, ઓર ઉસકા અપને સંયમ કો નિર્મલ બનાને કે લિયે અવશ્ય પાલન કરે, નહીં તો ભગવાન કી આજ્ઞા કા વિરાધક બનના પડેગા ।

કરવામાં ડોઈ પણ પ્રકારે બાધક ન બની શકે. લેતી વખત એ ધ્યાન અવશ્ય રાખવું જોઈએ, એવું ન બને કે અધિક લેવાથી પરિષ્ઠાપન કરવું પડે આટલું ધ્યાન રાખવું તે માત્રા છે. આ માત્રાની મર્યાદાનું ઉલ્લંઘન કરવાથી બરોબર સંયમનો નિર્વાહ બની શકતો નથી.

શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે—આ બધું જે એ ઉદ્દેશના પ્રથમ સૂત્રથી લઈને અહીં આ સુધી કહ્યું છે તે મેં મારી પોતાની કલ્પનાથી કહેલ નથી. પણ વીતરાગ પ્રભુએ જ આ બધું પ્રગટ કરેલ છે. માટે જે કંઈ અહીં આ સુધી કહ્યું છે તે ઉપર સંયમી મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તેના ઉપર પુરેપુરું ધ્યાન આપે, અને તેનું પોતાના સંયમને નિર્મળ બનાવવા માટે અવશ્ય પાલન કરે. નહિ તો ભગવાનની આજ્ઞાના વિરાધક બનવું પડશે.

મુનિર્માત્રયૈવાહારાદિકં ગૃહ્ણીયાત્, લાભાલાભાદૌ ચ મધ્યસ્થતામવલમ્બેતેતિ દર્શયતિ—‘લઘ્વે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—લઘ્વે આહારે અણગારો માયં જાણિજ્ઞા સે જહેયં ભગવયા પવેદ્યં લાભુત્તિ ન મજિજ્ઞા, અલાભુત્તિ ન સોદ્જ્ઞા વહુંપિ લઘું ન નિહે પરિગ્ગહાઓ અપ્પાણં અવસક્કિજ્ઞા અન્નહા ણ પાસણ પરિહરિજ્ઞા ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—લઘ્વે આહારેડનગારો માત્રાં જાનીયાત્, તદ્યથેદં ભગવતા પ્રવેદિતમ્, લાભ ઇતિ ન માત્રેત, અલાભ ઇતિ ન શોચેત્, વદ્વપિ લઘ્વ્યા ન સ્નિહ્યાત્, પરિગ્રહા-દાત્માનમવપ્યપ્કેત્, અન્યથાનપશ્યકઃ પરિહેરેત્ ॥ મૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘લઘ્વે’ ઇત્યાદિ । અનગારઃ=મુનિઃ, લઘ્વે=સમ્પ્રાપ્તે આહારે ઉપલક્ષ-
ણાદન્યસ્મિન્નપિ વસ્ત્રપાત્રશય્યાસંસ્તારકાદાવધિગતે સતિ ‘માત્રા’ યાવદ્ગ્રહણેન
વિઘ્નૌના-વિસ્તર સમજ્ઞનાં ચાહિયે । અનગાર ઇન સમસ્ત ઉપનીય વસ્તુઓ
કી હી ગૃહસ્થોં સે યાચના કરે, અનેપનીયોં કી નહીં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

અનગાર માત્રાપ્રમાણ હી આહારાદિકોં કો લેવે । ઉંકે લાભ ઓર
અલાભ મેં મધ્યસ્થ ભાવ રહે, ઇસ વાત કો સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘લઘ્વે
આહારે’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ સૂત્ર મેં ‘આહાર’ યહ શબ્દ ઉપલક્ષણ હૈ, ઇસસે વસ્ત્ર, પાત્ર,
શય્યા, સંસ્તારક આદિ કા મી ગ્રહણ હો જાતા હૈ । આહાર એવં વસ્ત્રા-
દિક વસ્તુઓં કો ગૃહસ્થ કે પાસ ઉતની હી માત્રા મેં ઘોરના ચાહિયે કિ
જિસસે ઘોરારને વાલે ગૃહસ્થ કો દુવારા આરંભ નહીં કરના પડે । તથા
ઇતની હી લેની ચાહિયે કિ જિનકે લેને સે અપની સંયમયાત્રા કા

જેઠ્ઠ એ. અણુગાર આ સમસ્ત એપણીય વસ્તુઓની ગૃહસ્થોથી યાચના કરે,
અનેપણીયોની નહિ. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

અણુગાર માત્રાપ્રમાણથી આહારાદિ લે, તેના લાભ-અલાભમાં મધ્યસ્થ
ભાવ રાખે, આ વાતને સૂત્રકાર કહે છે—લઘ્વે આહારે ઇત્યાદિ.

આ સૂત્રમાં ‘આહાર’ આ શબ્દ ઉપલક્ષણ છે. તેનાથી વસ્ત્ર, પાત્ર, શય્યા,
સંસ્તારક આદિનું ગ્રહણ થાય છે. આહાર અને વસ્ત્રાદિક વસ્તુઓને ગૃહસ્થોને
પાસેથી એટલી માત્રામાં લેવી જોઈએ કે જેનાથી દેવાવાળા ગૃહસ્થને ફરીથી બીજી
વાર આરંભ કરવો ન પડે, તથા એટલી જ માત્રા લેવી જોઈએ કે જે લેવાથી
પોતાની સંયમયાત્રાનું પાલન થઈ શકે, અર્થાત્ જે સંયમયાત્રાનો નિર્વાહ

કિં ચ-વહ્વપિ=કેનાપિ કારણેન પુષ્કલં લબ્ધ્વા=પ્રાપ્ય ન સ્નિહ્યાત્=અન્નાદૌ
ગૃહપતૌ વા સ્નેહં ન કુર્યાત્, અપિ ચ પરિગ્રહાત્સંયમયાત્રાનિર્વાહમાત્રાતો મૂર્છાભાવે-
નૈષણીયસ્યાપ્યધિકસ્યાનાદાનાત્ આત્માનમ્ અવષ્વષ્કેત્=અપગમયેત્, તત આત્માનં
નિવર્તયેદિત્યર્થઃ ।

નનુ સંયમયાત્રાનિર્વાહાર્થમાવશ્યકવસ્ત્રપાત્રાદીનામપિ ગ્રહણં પરિગ્રહપદેન વક્તુ-

આહારાદિક વસ્તુએ મિલે તો મી ઠીક, ન મિલે તો મી ઠીક, મુઝે
તો દોનોં અવસ્થાઓં મેં સમતા હૈ । લાભ મેં પ્રાણોં કા રક્ષણ ઓર
અલાભ મેં તપ કી વૃદ્ધિ હોગી । એસા વિચાર કરના ચાહિયે ।

કિસી કારણવશ યદિ આહારાદિક સામગ્રી કિસી એક હી જગહ
સે અધિક મિલ જાવે તો અન્નાદિક સામગ્રી પર તથા દેને વાલે દાતા-
ગૃહસ્થ પર રાગભાવ ન કરે-મધ્યસ્થ ભાવ રક્ષે । ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ
નહીં રખને સે સંયમી મુનિ મેં દીનતા, તથા સિંહવૃત્તિ કે અભાવ હોને
કા પ્રસંગ આજાતા હૈ । સંયમયાત્રા કા નિર્વાહમાત્રાવાલી આહારાદિક
સામગ્રી કે અતિરિક્ત અન્ય સામગ્રી સે અપને કો દૂર રખે, કારણ કિ
એષણીય હોને પર મી મૂર્છાભાવ સે અધિક ગ્રહણ કરને સે ડસ મેં
પરિગ્રહ કા દોષ આતા હૈ, અતઃ ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિરૂપ પરિગ્રહ સે
સદા અપની રક્ષા કરતા રહે ।

પ્રશ્ન—સંયમયાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે જો આપ આવશ્યક વસ્ત્ર
પાત્રાદિકોં કા ગ્રહણ કરના સંયમી મુનિ કે લિયે કહ રહે હો સો યહ

આહારાદિક વસ્તુઓ મળે તો પણ ઠીક છે, ન મળે તો પણ ઠીક છે, એમ
મને તો બન્ને અવસ્થાઓમાં સમતા છે લાભમાં પ્રાણુ રક્ષણ અને અલાભમાં
તપની વૃદ્ધિ થશે એવો વિચાર કરવો જોઈએ

કોઈ કારણવશ કદાચ આહારાદિક સામગ્રી કોઈ એક જગ્યાથી અધિક મળી
જાય તો અન્નાદિક સામગ્રી પર તથા દેવાવાળા દાતા ગૃહસ્થ પર રાગભાવ ન કરે-
મધ્યસ્થભાવ રાખે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ નહિ રાખવાથી સંયમી મુનિમાં દીનતા,
તથા સિંહવૃત્તિનો અભાવ હોવાનો પ્રસંગ આવી જાય છે સંયમયાત્રાના નિર્વાહ
માત્રાવાળી આહારાદિક સામગ્રીથી અતિરિક્ત અન્ય સામગ્રીથી પોતાને દૂર રાખે,
કારણ કે એષણીય હોવા છતાં પણ મૂર્છાભાવથી અધિક ગ્રહણ કરવાથી તેમાં
પરિગ્રહનો દોષ આવી જાય છે, માટે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ પરિગ્રહથી સદા
પોતાની રક્ષા કરતા રહે

પ્રશ્ન—સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે જે આપ આવશ્યક વસ્ત્ર પાત્રાદિકોનું
ગ્રહણ કરવું સંયમી મુનિ માટે કહી રહ્યા છે તો તે કહેવું વ્યાજબી નથી,

અથવા ‘લાભે’ इति-ज्ज्ञाया, लाभे सति वस्त्राहारादेरधिगमे च न माद्येत ।
 एवमलाभे वस्त्रपात्रादेरप्राप्तौ ‘धिग् हतभाग्यं मां यदन्यैर्लभ्यते अन्तरायोदयान्मया
 न लभ्यते’ इति=एवं न शोचेत् शोकं न विदध्यात्, लाभालाभयोर्मध्यस्थभावमव-
 लम्बेतेत्यर्थः । उक्तञ्च—

“लाभो वरमलाभोऽपि, मुनिरुभयस्मिन्दधाति माध्यस्थ्यम् ।

लाभे प्राणपरिस्थितिरथचालाभे तपोवृद्धिः” ॥ १ ॥ इति ।

ऐसा कभी भी भाव न रखे कि-अशनादि-आहारवस्त्रादिक का लाभ मुझे ही होता है अन्य को नहीं । क्यों कि इस प्रकार की भावना से आत्मा में एक प्रकार का अहंकार उत्पन्न होता है जो संयम जीवन में सफेद वस्त्र में धब्बे की तरह बाधक होता है, अतः इस प्रकार का अहंकार कभी नहीं करना चाहिये । अथवा “लाभ इति न माद्येत” इसका अभिप्राय यह भी होता है कि आहार वस्त्रादिक का लाभ होने पर संयमी को हर्षित नहीं होना चाहिये, और अलाभ होने पर उसे “मुझ हतभागी-अभागे को धिक्कार है, दूसरों को तो सब कुछ मिलता है मुझे अन्तराय के उदय से कुछ भी नहीं मिलता” इस प्रकार का शोक भी नहीं करना चाहिये, क्योंकि संयमजीवन की शोभा लाभ और अलाभ में मध्यस्थ भाव रखने से ही है । कहा भी है—

“लाभो वरमलाभोऽपि, मुनिरुभयस्मिन् दधाति माध्यस्थ्यम् ।

लाभे प्राणपरिस्थिति-रथ चालाभे तपोवृद्धिः ॥ १ ॥” इति ॥

એવો ભાવ કોઈ વખત ન રાખે કે-‘અશનાદિ-આહારવસ્ત્રાદિકનો લાભ મને જ થાય છે. બીજાને નહિ.’ કારણ કે આ પ્રકારની ભાવનાથી આત્મામાં એક પ્રકારનો અહંકાર ઉત્પન્ન થાય છે જે સંયમ જીવનમાં સફેદ વસ્ત્રમાં ડાઘાની માફક બાધક થાય છે. માટે આ પ્રકારનો અહંકાર કોઈ વખત કરવો ન જોઈએ. અથવા “લાભ इति न माद्येत” એનો અભિપ્રાય એ પણ થાય છે કે-આહારનો લાભ થવાથી સંયમીએ હર્ષિત નહિ થવું જોઈએ, અને આલાભ થવાથી તેણે “હું હતભાગી-અભાગીને ધિક્કાર છે, બીજાઓને સઘળું મળે છે, મને અંતરાયના ઉદયથી કંઈ પણ મળતું નથી.” આવા પ્રકારનો શોક પણ નહિ કરવો જોઈએ, કારણ કે સંયમજીવનની શોભા લાભ અને અલાભમાં મધ્યસ્થભાવ રાખવામાં જ છે. કહ્યું પણ છે—

“લાભો વરમલાભોઽપિ, મુનિરુભયસ્મિન્ દધાતિ માધ્યस्थ्यમ્ ।

લાભે પ્રાણપરિસ્થિતિ-રથ ચાલાભે તપોવૃદ્ધિઃ ॥ ૧ ॥” इति ।

છાયા—અપ્યાત્મનોડપિ દેહે નાચરન્તિ મમાયિતમ્ । ઇતિ । તેપાં કર્મનિર્જરણાર્થં સ્વીકારાત્, યથ્ચ મૂર્છ્યા પરિગ્રહતે તસ્ય પરિગ્રહપદેનાભિધેયત્વાચ્ચ । તત્પરિહારે ચ સંયમયાત્રાયા અપિ નિર્વોદ્મશક્યત્વાત્ ।

કિન્ન—અન્યથાનપશ્યકઃ—પશ્યતીતિ પશ્યઃ, સ એવ પશ્યકઃ, અન્યથા=અન્ય-પ્રકારેણ ન પશ્યકઃ=અન્યથાનપશ્યકઃ=ધર્મોપકરણાપરિગ્રહદર્શી સન્ પરિગ્રહં પરિહરેત્ । યથા ગૃહસ્થો વસ્ત્રાદિકં શરીરાદિસુખસાધનં મન્યતે ન તથા મુનિઃ । સ ચૈતદ્ધર્મોપકરણં મમ ધર્મસાધનમેવ, ન શરીરાદિસુખસાધનમિતિ મન્યમાનઃ પરિગ્રહં

સાધુઓં કો જવ અપને નિજ શરીર મેં હી મોહ મમત્વ નહીં હોતા હૈ, તબ શરીર સે સર્વથા ભિન્ન ઉપકરણાદિકોં મેં મમત્વભાવ કૈસે હો સકતા હૈ । મુનિ અવસ્થા મેં માત્રાનુસાર ગ્રહણ કિયે હુએ વસ્ત્ર પાત્રાદિક સંયમ કે ઉપકારક હોને સે કર્મોં કી નિર્જરા કે હી સાધક હોતે હૈં, ઇસીલિયે વે સંયમ અવસ્થા મેં સ્વીકાર કિયે જાતે હૈં । પરિગ્રહ વહીં પર હૈ કિ જહાં પર મૂર્છાભાવ સે અપનાના હોતા હૈ । ઇન પાત્રાદિકોં કા ગ્રહણ મૂર્છાભાવ સે નહીં કિયા જાતા હૈ, અતઃ યે પરિગ્રહરૂપ નહીં હૈં, પ્રત્યુત ઇનકે અભાવ મેં સંયમયાત્રા કા યથાવત્ નિર્વાહ નહીં હો સકતા, ઇસીલિયે ઇનકા ગ્રહણ કરના આવશ્યક બતલાયા ગયા હૈ । ઇસી વાત કી પુષ્ટિ સૂત્રકારને “અન્યથાનપશ્યકઃ પરિહરેત્” ઇસ વાક્ય સે કી હૈ । વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મોપકરણ હૈં, ઇનકે વિના સંયમ કા યથાવત્ નિર્વાહ નહીં હો સકતા, ઇસલિયે ઇનકા રાખના આવશ્યક હૈ । ઇસ પ્રકાર ડનકો પરિગ્રહરૂપ નહીં દેખતા હુઆ અનગાર ઇનસે અતિરિક્ત ધન-

સાધુઓને ન્યારે પોતાના શરીર ઉપર જ મોહ અને મમત્વ નથી થતો તો પછી શરીરથી સર્વથા ભિન્ન ઉપકરણાદિકોમા મમત્વભાવ કેવી રીતે હોઈ શકે. મુનિ અવસ્થામાં માત્રાનુસાર ગ્રહણ કરેલા વસ્ત્રપાત્રાદિક સંયમના ઉપકારક હોવાથી કર્મોની નિર્જરાના જ સાધક બને છે, માટે તે સંયમ અવસ્થામાં સ્વીકાર કરવામાં આવે છે પરિગ્રહ તે જગ્યો ઉપર છે કે ન્યાં મૂર્છા ભાવથી લેવામાં આવે છે. આ પાત્રાદિકોનું ગ્રહણ મૂર્છાભાવથી કરવામાં આવતું નથી, માટે તે પરિગ્રહરૂપ નથી પ્રત્યુત તેના અભાવમાં સંયમયાત્રાનો યથાવત્ નિર્વાહ થઈ શકતો નથી, માટે તેનું ગ્રહણ કરવું આવશ્યક બતાવ્યું છે. આ વાતની પુષ્ટિ સૂત્રકારે “અન્યથાનપશ્યકઃ પરિહરેત્” આ વાક્યથી કરેલ છે. વસ્ત્રપાત્રાદિક ધર્મોપકરણ છે, તે વિના સંયમનો યથાવત્ નિર્વાહ થઈ શકતો નથી, માટે તેનું રાખવું આવશ્યક છે. એ પ્રકારે તેને પરિગ્રહરૂપ નહિ દેખતા

મુચિતમ્, યતશ્ચાનુકૂલે વસ્તુનિ રાગઃ પ્રતિકૂલે દ્વેષશ્ચ સજ્જાયતે, એવશ્ચ રાગદ્વેષ-યોરવશ્યંભાવાન્મૂર્છાં, સૈવા પરિગ્રહઃ ‘મુચ્છા પરિગ્રહો વુત્તો’ ઇતિ વચનાત્, તત્સદ્ભાવે ચ કર્મવન્ધ ઇતિ કથં સંયમોપકરણસ્ય ન પરિગ્રહત્વમિતિ ચેદુચ્યતે—ધર્મોપકરણે મુનીનાં ‘મમેદ’—મિતિ ન મોહો ભવતિ । ઉક્તશ્ચ—

“અવિ અપ્પણોઽવિ દેહંમિ નાયરંતિ મમાદ્યં” ઇતિ । (દશ. અ. ૬ ગા. ૨૨)

ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ યહ બી પરિગ્રહ હી હૈ, ઔર પરિગ્રહ કા ત્યાગ કિયે વિના સર્વથા સંયમારાધકતા હોતી નહીં હૈ । પરિગ્રહરૂપતા इनमें इसलिये હૈ કિ અનુકૂલ इनकी પ્રાપ્તિ મેં પ્રાપ્તકર્તા કો હર્ષ, ઔર પ્રતિકૂલ પ્રાપ્તિ મેં પાનેવાલે કો દ્વેષ હોતા હૈ । જહાં પર રાગ ઔર દ્વેષ હૈ વહાં પર મૂર્છા હૈ, ઔર મૂર્છા કા હોના હી પરિગ્રહ હૈ । “મુચ્છા પરિગ્રહો વુત્તો” મૂર્છા હી પરિગ્રહ હૈ, એસા ભગવાન કા કથન હૈ, જહાં इसका સદ્ભાવ હૈ વહાં કર્મવન્ધ અવશ્ય હૈ, અતઃ વસ્ત્રપાત્રાદિક ઉપકરણ કો પરિગ્રહ ક્યોં નહીં કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—સામાન્યતયા વસ્ત્રપાત્રાદિકોં મેં પરિગ્રહતા કા હમ નિષેધ નહીં કરતે હૈં, કિન્તુ જો સંયમ કે ઉપકારક હૈં વે પરિગ્રહરૂપ નહીં હૈ । યહ એક વિશેષ વિધિ હૈ, કારણ કિ મુનિયોં કો उनमें “મમ ઇદં” “યહ મેરે હૈં” इस प्रकार की મમત્વભાવરૂપ મૂર્છાં નહીં હોતી હૈ । કહા બી હૈ—“અવિ અપ્પણોઽવિ દેહંમિ, નાયરંતિ મમાદ્યં” ઇતિ । (દશ. અ. ૬ ગા. ૨૨)

કારણ કે તે પણ પરિગ્રહ જ છે. અને પરિગ્રહનો ત્યાગ કર્યા વિના સર્વથા સંય-મારાધકતા થતી નથી. પરિગ્રહરૂપતા તેમાં એ માટે છે કે અનુકૂળ તેની પ્રાપ્તિમાં પ્રાપ્તકર્તા ને હર્ષ અને પ્રતિકૂળ પ્રાપ્તિમાં લેનારને દ્વેષ થાય છે, જે જગ્યોએ રાગ અને દ્વેષ છે ત્યાં મૂર્છા છે, અને મૂર્છાનું હોવું તે પરિગ્રહ છે. “મુચ્છા પરિ-ગ્રહો વુત્તો” મૂર્છા એ જ પરિગ્રહ છે, એવું ભગવાનનું કથન છે, જ્યાં તેનો સદ્ભાવ છે ત્યાં કર્મવન્ધ અવશ્ય છે, માટે વસ્ત્રપાત્રાદિક ઉપકરણને પરિગ્રહ કેમ માનેલ નથી ?

ઉત્તર—સામાન્ય રીતે વસ્ત્રપાત્રાદિકોમાં પરિગ્રહતાનો અમે નિષેધ કરતા નથી. જે સંયમના ઉપકારક છે તે પરિગ્રહરૂપ નથી. એ એક વિશેષ વિધિ છે, કારણ કે મુનિયોને તેમાં “મમ ઇદં” એ ભાસ છે, એ પ્રકારની મમત્વ ભાવરૂપ મૂર્છા થતી નથી. કહ્યું પણ છે—

“અવિ અપ્પણો વિ દેહંમિ નાયરંતિ મમાદ્ય ” ઇતિ (દશ. અ. ૬ ગા. ૨૨)

હે શિષ્ય ! યથા=યેન પ્રકારેણ ત્વં કુશલઃ સન્ આર્યક્ષેત્રસુકુલજન્માદિકં, સંસારાર્ણવતરિં વોધિં, સકલકર્મક્ષપણસમર્થ ચારિત્રં ચ લબ્ધ્વા અત્ર=અહ તીર્થઙ્કરનિર્દિષ્ટમાર્ગેઽષ્ટવિધકર્મહેતુભૂતેન પાપકર્મણા નોપલિમ્પયેઃ=નોપલિમ્પો ભવેસ્તથા કુરુષ્વ, એતસ્મિન્માર્ગે સ્થિત એવ મુનિઃ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિકં લભતિતિ ભાવઃ । ઇતિ-શબ્દોઽધિકારસમાપ્ત્યર્થઃ, સ ચાહારાદિગવેષણારૂપઃ । યન્મયા ભગવત્સમીપે શ્રુતં તત્સર્વં ત્વાં વ્રવીમિ=વચ્મિ । ઇતિ ॥સૂ. ૭॥

પરિગ્રહાદાત્મનિવૃત્તિશ્ચ તત્કારણોન્મૂલનં વિના ન સમ્ભવતિ, તત્કારણં ચ શબ્દાદયઃ પશ્ચ કામગુણાઃ, તેષામુન્મૂલનં ચ દુષ્કરમિતિ દર્શયતિ-‘કામા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કામા દુરઙ્કકમા, જીવિયં દુષ્પણિબૂહગં, કામકામી ખલુ અયં પુરિસે, સે સોયઙ્ જૂરઙ્ તિષ્પઙ્ પિટ્ઙ્ પરિતપ્પઙ્ ।સૂ. ૮॥

વારહ પ્રકાર કી સભા મેં પ્રકટ કિયા હૈ । ઉન્હોને કહા હૈ કિ—જો મનુષ્ય આર્યક્ષેત્ર, સુકુલ મેં જન્મ; સંસારરૂપી સમુદ્ર કે પાર પહુંચને કે લિયે નૌકા સ્વરૂપ વોધિ, એવં સકલ કર્મોં કે વિનાશક ચારિત્ર કો પ્રાપ્તકર તીર્થકરાદિ પ્રદર્શિત ઇસ માર્ગ કા અવલંબન કરતા હૈ—ઇસમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ પાપકર્મ સે—જો અષ્ટ પ્રકાર કે કર્મોં કે આસ્રવ કા હેતુ હૈ—કમીં મીં ઉપલિપ્ત નહીં હોતા હૈ, ઇસલિયે હે શિષ્ય ! તુમ મીં અપની પ્રવૃત્તિ કો ઇસ પ્રકાર કી બનાઓ, તાકિ તુમ મીં ઇસ વિષય મેં કુશલ બન પાપકર્મ સે ઉપલિપ્ત ન હો સકો । સૂત્ર મેં ‘ઇતિ’ શબ્દ ઇસ અધિકાર કી સમાપ્તિ કા સૂચક હૈ, અર્થાત્ હે શિષ્ય ! આહારાદિક કી ગવેષણારૂપ યહ અધિકાર જૈસે મૈને ભગવાન્ કે નિકટ સુના હૈ વૈસા હી યહાં તુમ સે પ્રકટ કિયા હૈ, મેરી નિજી કલ્પના ઇસ વિષય મેં કુછ મીં નહીં હૈ ॥સૂ. ૭॥

પ્રકારની સભામાં પ્રગટ કરેલ છે. તેઓએ કહ્યું છે કે—જે મનુષ્ય આર્યક્ષેત્ર, સુકુળમાં જન્મ. અવ્યાબાધ સુખરૂપી સમુદ્રના પાર સ્વરૂપ બોધિ અને સકલ કર્મોના વિનાશક ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરી તીર્થકરાદિપ્રદર્શિત આ માર્ગનું અવલંબન કરે છે—આમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તે પાપકર્મથી જે આઠ પ્રકારના કર્મોના આસ્રવનો હેતુ છે—કોઈ વખત પણ ઉપલિપ્ત થતો નથી. માટે હે શિષ્ય ! તમે પણ તમારી પ્રવૃત્તિને એવા પ્રકારની બનાવો કે તમે પણ આ વિષયમાં કુશળ બની પાપ કર્મથી ઉપલિપ્ત ન થઈ શકો. સૂત્રમાં ‘ઇતિ’ શબ્દ આ અધિકારની સમાપ્તિનો સૂચક છે, અર્થાત્ હે શિષ્ય ! આહારાદિકની ગવેષણારૂપ આ અધિકાર જેવો મેં ભગવાન પાસેથી સાંભળ્યો છે તેવો હું તને કહું છું, મારી પોતાની કલ્પના આ વિષયમાં કોઈ પણ નથી. ॥ સૂ. ૭ ॥

परित्यजेत्, न तत्र ममत्वं कुर्यादित्यर्थः। समुचितमात्रयाऽऽहारादिग्राही मुनिर्लाभ-
लाभहर्षविषादवर्जितः परिग्रहाग्रहनिवृत्तो रत्नत्रयसमाराधनतत्परो भवेदिति
तात्पर्यम् ॥ सू० ६ ॥

केन दर्शितोऽयं मार्ग इति दर्शयति—‘ एस मग्गे ’ इत्यादि ।

मूलम्—एस मग्गे आरिएहिं पवेइए जहेत्थ कुशलो नोपलिं-
पेज्जासि-त्ति वेमि ॥ सू० ७ ॥

छाया—एष मार्ग आर्यैः प्रवेदितः यथाऽत्र कुशलो नोपलिम्पयेः। इति
ब्रवीमि ॥ सू० ७ ॥

टीका—‘ एष मार्ग ’ इत्यादि । एषः=पूर्वोक्तरूपः मार्गः श्रुतचारित्रलक्षणः
आर्यैः=तीर्थङ्करगणधरादिभिः प्रवेदितः—ग्र=ग्रन्थेण=द्वादशपरिपदि कथितः ।

धान्यादि को परिग्रह समझकर छोड़ देता है । गृहस्थ जिस प्रकार वस्त्रा-
दिकों को शारीरिक सुखादि का कारण मानकर उन्हें ग्रहण करना है
उस प्रकार की भावना से मुनि नहीं । धर्मोपकरण से धर्म का ही साधन
होता है—अन्य शरीरसुखादिक का नहीं । ऐसा मानकर ही मुनि ग्रहण
करता है, और उनमें ममत्वभाव से रहित होता है । तात्पर्य यह है कि-
अनगार को समुचित मात्रा में आहारादिक ग्रहण करने वाला, लाभ और
अलाभ में समभावी; परिग्रह से विरत, और रत्नत्रय की आराधना में
निमग्न होना चाहिये ॥ सू० ६ ॥

इस मार्ग के प्रदर्शक कौन हैं? इस बात को दिखलाते हुए सूत्रकार
कहते हैं—‘ एस मग्गे ’ इत्यादि ।

यह पूर्वोक्त श्रुतचारित्ररूप मार्ग तीर्थंकर गणधरादिक आर्य पुरुषोंने

आशुगार तेनाथी अतिरिक्त धनधान्यादिने परिग्रह समझने छोड़ी दे छे. गृहस्थ
जेवी रीते वस्त्रादिकोने शारीरिक सुखादिकनुं कारण मानीने तेने ग्रहण करे छे
ते प्रकारणी लावनाथी मुनि नहि. धर्मोपकरणथी धर्मनुं न साधन थाय छे—अन्य
शरीरसुखादिकनुं नहि. ओवुं मानीने न मुनि तेने ग्रहण करे छे, अने तेमां
ममत्वलावथी रहित थाय छे. तात्पर्य ओ छे के—आशुगारे समुचित मात्राभां
आहारादिक ग्रहण करवावाणा. लाभ अने अलाभमां समभावी, परिग्रहथी विरत,
अने रत्नत्रयणी आराधनामां निमग्न यवुं जेठ ओ. ॥ सू० ६ ॥

आ मार्गनो प्रदर्शक ओवु छे, आ बातने बतावतां सूत्रकार के छे—
‘ एस मग्गे ’ इत्यादि.

आ पूर्वोक्त श्रुतचारित्ररूप मार्ग तीर्थंकर गणधरादिक आर्य पुरुषोंने आर

અતઃ એવ દ્વિવિધા અપિ કામા 'દુરતિક્રમાઃ' દુઃ=દુઃસ્થેનાતિક્રમઃ=ઉન્મૂલનં=વિનાશો
યેષાં તે દુરતિક્રમાઃ । અથવા-દુઃસ્થેનાતિક્રમ્યન્તે=ઉન્મૂલ્યન્તે યે તે દુરતિક્રમાઃ=
દુઃશક્યપ્રતીકારા દુષ્પરિહરા इति યાવત્ ।

કિં ચ-જીવિતં=ભવગ્રહાયુષ્કં પ્રતિદિનમપચીયમાનતયા દુષ્પરિવૃંહણીયં=વૃદ્ધિ-
યિતુમશક્યં પરિજીર્ણચ્છિન્નવસ્ત્રવત્સન્ધાતુમનર્હમિત્યર્થઃ ।

યદ્વા-જીવિતં-સંયમજીવિતં દુષ્પરિવૃંહણીયં, સંયમિનશ્ચારિત્રાન્તરાયોદયા-
ત્કામાભિપ્લવ્જે સતિ સંયમજીવિતસ્ય પ્રત્યહં ક્ષીયમાણત્વાત્ ।

દિન હાસ હો રહ્યા હૈ । આયુકર્મ કા શાસ્ત્રકારોં ને અપકર્ષણ તો બતલાયા
હૈ કિન્તુ ઉત્કર્ષણ નહીં, ઇસલિયે આયુઃકર્મ કા પ્રતિસમય અપચય હોને સે
જીવન ભી અપચય કી ઓર હી વઢ રહ્યા હૈ । એસા કોઈ ભી કારણ નહીં હૈ
જો જીવન કો સ્થિર, અથવા ભુજ્યમાન આયુ મેં એક સમય ભી વૃદ્ધિ કર
સકે, ઇસલિયે જિસ પ્રકાર બિલકુલ જીર્ણ ફડે હુએ વસ્ત્ર કા સીના
અશક્ય હોતા હૈ ઁસી પ્રકાર આયુકર્મ કી વૃદ્ધિ હોની ભી અશક્ય
હૈ । એસા સમજ્ઞકર આત્મહિતૈષી કે લિયે ઇન વિષયાદિકોં મેં વાંચ્છા નહીં
કરની ઁહિયે । જીવન કા જિતના અંશ ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે સુર-
ક્ષિત રહ સકે એસા હી પ્રયત્ન કરતે રહના ઁહિયે ।

અથવા-જીવન શબ્દ કા અર્થ સંયમજીવન હૈ । યહ દુષ્પરિવૃંહણીય
(વઢાના મુશ્કિલ) ઇસલિયે બતલાયા જા રહ્યા હૈ કિ યદિ સંયમી કો
ચારિત્રમોહનીય કે ઉદય સે કામગુણોં મેં વાંચ્છા ઉત્પન્ન હો જાવે તો

હાસ થઈ રહ્યો છે, આયુકર્મનો શાસ્ત્રકારોએ અપકર્ષણ તો બતાવેલ છે, પણ
ઉત્કર્ષણ નહિ, માટે આયુકર્મ પ્રતિસમય અપચય હોવાથી જીવન પણ અપ-
ચય ની તરફ જ વધી રહ્યું છે એવું કોઈ પણ કારણ નથી જે જીવનને સ્થિર
અથવા ભુજ્યમાન આયુમાં એક સમય પણ વૃદ્ધિ કરી શકે, માટે જે પ્રકારે
ખિલકુલ ફોટેલા વસ્ત્રનું શીવવું અશક્ય થાય છે તે પ્રકારે આયુકર્મની વૃદ્ધિ થવી
પણ અશક્ય છે એવું સમજીને આત્મહિતૈષી માટે આ વિષયાદિકોમાં વાંચ્છના નહિ
કરવી જોઈએ. જીવનનો જેટલો પણ અંશ આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી સુરક્ષિત રહી
શકે તેવો જ પ્રયત્ન કરતા રહેવો જોઈએ

અથવા—જીવિત શબ્દનો અર્થ સંયમ જીવન છે આ દુષ્પરિવૃંહણીય
(વધારવું મુશ્કેલ) છે એટલા માટે બતાવવામાં આવેલ છે કે કદાચ સંયમીને ચારિત્ર-
મોહનીયતા ઉદયથી કામગુણોમાં વાંચ્છના ઉત્પન્ન થઈ જાય તો તેનું તે સંયમ-

છાયા—કામા દુરતિક્રમાઃ, જીવિતં દુષ્પ્રતિવૃંહણીયં, કામકામીં સ્વલુ અયં પુરુષઃ, સ શોચતિ જૂર્યતે તેષતે પીડ્યતે પરિતપ્યતે ॥ મૂ. ૮ ॥

ટીકા—‘કામા’ ઇત્યાદિ । કામાઃ—ઇચ્છામદનભેદાદ્વિવિધાઃ । તત્ર-ઇચ્છાકામાઃ-હિરણ્યાદિવાઙ્છારૂપાઃ, મદનકામાઃ=શબ્દાદિરૂપાઃ, પૂર્વસ્ય કારણં મોહનીયભેદૌ હાસ્યરતી, પરસ્ય ચ કારણં મોહનીયભેદવેદોદયઃ । તતથ્ચોભયોરપિ કામયોઃ પ્રાદુર્ભાવો મોહનીયાદેવ, એવંચ કારણસત્ત્વે કાર્યભૂતસ્ય કામસ્યોન્મૂલનમશક્યમ્ ।

પરિગ્રહ સે નિવૃત્તિ, ઉસકે કારણોં કા નાશ કિયે વિના નહીં હો સકતી । ઉસકે કારણ શબ્દાદિક પાંચ કામ ગુણ હૈં । ઉનકા ઉન્મૂલન કરના વડા કઠિન હૈ, ઇસી વાત કો પ્રદર્શિત કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—“કામા દુરિક્રમા” ઇત્યાદિ ।

ઇચ્છા ઔર મદન કે ભેદ સે કામ દો પ્રકાર કા હૈ । હિરણ્યાદિક કી વાઙ્છારૂપ ઇચ્છાકામ હૈ । ઇસકા કારણ મોહનીય કર્મ કા ભેદ હાસ્ય ઔર રતિ હૈ । શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોં કે વિષય મદનકામ હૈ । ઇનકા ભી કારણ—મોહનીય કર્મ કા ભેદ—વેદ—નોકષાય કા ઉદય હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇન દોનોં કામોં કી ઉત્પત્તિ મોહનીયકર્મ કે ઉદય સે હી હોતી હૈ । કારણ કે સદ્ભાવ મેં કાર્ય કા સદ્ભાવ અવશ્યંભાવી હૈ, ઇસીલિયે સૂત્ર મેં સૂત્રકાર ને “દુરતિક્રમાઃ” ઇસ પદ સે ઇનકા ઉન્મૂલન દુષ્કર બતલાયા હૈ । જ્યતક મોહનીયરૂપ કારણ કા ઉદય હૈ તવ તક ઇનકા અભાવ હો હી નહીં સકતા, અતઃ ઇનકા પ્રતીકાર કરના દુઃશક્ય હૈ । જીવન કા ભી પ્રતિ-

પરિગ્રહથી નિવૃત્તિ તેના કારણનો નાશ કર્યા વગર બની શકતી નથી. તેનું કારણ શબ્દાદિક પાંચ કામ ગુણ છે. તેનું ઉન્મૂલન કરવું ઘણું કઠિન છે આ વાતને પ્રદર્શિત કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘કામા દુરિક્રમા’ ઇત્યાદિ.

ઇચ્છા અને મદનના ભેદથી કામ બે પ્રકારના છે. હિરણ્યાદિકની વાંચ્છારૂપ ઇચ્છાકામ છે, તેનું કારણ મોહનીય કર્મના ભેદ—હાસ્ય અને રતિ છે. શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય મદન કામ છે, તેનું પણ કારણ—મોહનીય કર્મના ભેદ—વેદ—નોકષાયનો ઉદય છે. આ પ્રકારે બન્ને કામોની ઉત્પત્તિ મોહનીય કર્મના ઉદયથી જ થાય છે, કારણ સદ્ભાવમાં કાર્યનો સદ્ભાવ અવશ્યભાવી છે, માટે સૂત્રમાં સૂત્રકારે “દુષ્કરં” આ પદથી તેનું ઉન્મૂલન દુષ્કર બતાવ્યું છે. ત્યાં સુધી મોહનીયરૂપ કારણનો ઉદય છે ત્યાં સુધી તેનો અભાવ થઈ જ શકતો નથી, માટે તેનો પ્રતિકાર કરવો દુઃશક્ય છે. જીવનનો પણ પ્રતિ-

પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,—

વહુજનદયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ॥

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્લીબ ! સંતપ્યસે કિં,

નહિ જડ ! ગતતોયે સેતુબન્ધાઃ ક્રિયન્તે ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અપિ ચ=તેપતે કુલાદિમર્યાદાતઃ સંચલતિ-નિર્મર્યાદો ભવતીત્યર્થઃ । તથા પીડ્યતે=શારીરમાનસદુઃખૈઃ ક્લિશ્યતે । કિં ચ-પરિતપ્યતે-પરિ=સર્વતો બાહ્યમન્ત્રશ્ચ

યહ વાત ઇસ શ્લોક સે પ્રકટ કી જાતી હૈ—

“પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,

વહુજનદયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ।

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્લીબ ! સંતપ્યસે કિં,

નહિ જડ ! ગતતોયે સેતુબન્ધાઃ ક્રિયન્તે ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥

કામિયોં કી દશા હી કુછ એસી વિલક્ષણ હોતી હૈ કિ જિસ કી વજહ સે વે અપની કુલ કી મર્યાદા તક કો ખી છોડ દેતે હૈં । શારીરિક એવં માનસિક દુઃખોં સે વે સદા સંતપ્ત રહા કરતે હૈં । રાતદિન પશ્ચાત્તાપ હી પશ્ચાત્તાપ કિયા કરતે હૈં કિ “ યદિ એસા ઉપાય કરતે તો યહ વાત બન જાતી, એસા ઉપાય કરતે તો યહ કામના ફલીભૂત હો જાતી, અવ ક્યા કરેં ?, એસા નહીં હુઆ ” ઇત્યાદિ પશ્ચાત્તાપ સે બાહર ખીતર જલા કરતે હૈં । મન મેં પશ્ચાત્તાપ કરના ખીતરી પશ્ચાત્તાપ હૈ, ઓર ઉસે શબ્દ સે પ્રકટ કરના બાહ્ય પશ્ચાત્તાપ હૈ । મનોજ્ઞ પદાર્થોં કી અપ્રાપ્તિ મેં અથવા પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોં કે વિનાશ મેં દુઃખી હોના ખી પરિતાપ હૈ । યે જો

પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,—

વહુજનદયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ।

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્લીબ ! સંતપ્યસે કિં ,

નહિ જડ ! ગતતોયે સેતુબન્ધાઃ ક્રિયન્તે ” ॥૧॥ ઇતિ ॥

કામીઓની દશા જ કઇ એવી વિલક્ષણ થાય છે કે જે તે પોતાના કુળની મર્યાદાને પણ છોડી દે છે, શારીરિક અને માનસિક દુઃખોથી તે સદા સંતપ્ત રહ્યા કરે છે રાતદિન પશ્ચાત્તાપ જ કર્યા કરે છે કે—“ કદાચ એવો ઉપાય કરત તો એ વાત બની જાત, આવો ઉપાય કરત તો તેમા મારી કામના ફળીભૂત થાત, હવે શું કરું એવું બન્યું નહિ ” ઇત્યાદિ પશ્ચાત્તાપથી બહારથી તેમજ અંદરથી બળ્યા કરે છે, મનમાં પશ્ચાત્તાપ કરવો અંતરનો પશ્ચાત્તાપ છે, અને તેને શબ્દથી પ્રગટ કરવો તે બાહ્ય પશ્ચાત્તાપ છે. મનોજ્ઞ પદાર્થની અપ્રાપ્તિમાં અથવા પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોના વિનાશમાં દુઃખી થવું પણ પરિ-

યતઃ કામા દુરતિક્રમા અત એવ અયં પુરુષઃ સ્વલુ=નિશ્ચયેન કામકામી—કામં દ્વિપ્રકારં કમિતું શીલં યસ્ય સ કામકામી=કામસ્પૃહાશીલો ભવતિ, ય ઈદ્દશઃ સઃ= પૂર્વોક્તપ્રકારઃ અપહતમનઃસંકલ્પઃ સન્ કિં કરોતીત્યાહ—શોચતીતિ । શોચતિ= ઇષ્ટવિપયાપ્રાપ્તો તન્નાશે વા શોકં કરોતિ । અપિ ચ—સ એવ જૂર્યતે=જૂરણાં કરોતિ— અન્તર્દુઃસ્વેન શરીરં શોપયતીત્યર્થઃ, દીનઃ સન્ વહુ વિલપતિ, તથાદિ—

અસકા વહ સંયમજીવન વિલકુલ હી નષ્ટ હુઆ સમજ્ઞના ચાહિયે । એસા તો હો નહીં સકતા કિ સંયમજીવન બના રહે ઓર કામગુણોં કી વાઙ્છા બી અપના કામ કરતી રહે । ઇસલિયે એસી પરિસ્થિતિ મેં સંયમ-જીવન કા પાલન અશક્ય હી હૈ ।

જવ યે કામગુણ દુરતિક્રમ હૈ તવ હી તો પ્રાણી ઇન્કે અધીન બન ઇન્કી ઓર સ્પૃહાશીલ હોકર આકૃષ્ટ હોતા હૈ । આકૃષ્ટ હોને પર બી જવ ઇસકા માનસિક સંકલ્પ પૂર્ણ નહીં હોતા, અથવા ઇસકી મનચાહી વસ્તુ ઇસે નહીં મિલતી તવ યહ પ્રાણી શોકાકુલ હોતા રહતા હૈ । યદિ ઇસે મનચાહી વસ્તુ મિલ બી જાતી હૈ પરન્તુ જ્યોં હી ઇસકા વિયોગ હો જાતા હૈ તો ઇસકે હૃદય મેં અપાર શોક કા સમુદ્ર ઉમડને લગતા હૈ । અનભીષ્ટ સંયોગ હોને પર ડસે દૂર કરને કે લિયે ઇસકે ચિત્ત મેં અનેક પ્રકાર કે અશુભ સંકલ્પ ઉઠતે રહતે હૈ । અનિષ્ટ વસ્તુ કે સંયોગ મેં એસા હી હોતા હૈ । પ્રાણી ડસ સમય અન્તર્દુઃસ્વ સે અપને તક કો બી સુખા દેતા હૈ । કામી પુરુષ સ્વતઃ હી દીન બનકર પ્રલાપ કરને લગ જાતા હૈ ।

જીવન બિલકુલ જ નષ્ટ થયેલ સમજવું બેધએ. એવુ તો બની જ શકતું નથી કે સંયમજીવન બની રહે અને કામગુણોની વાંછના પણ પોતાનું કામ કરતી રહે. માટે આવી પરિસ્થિતિમાં સંયમજીવનનું પાલન અશક્ય જ છે.

જ્યારે એ કામગુણ દુરતિક્રમ છે ત્યારે જ તો પ્રાણી તેના આધીન બની તેની તરફ સ્પૃહાશીલ બનીને આકૃષ્ટ થાય છે. આકૃષ્ટ થવા છતાં પણ જ્યારે તેનો માનસિક સંકલ્પ પૂર્ણ નથી થતો, અથવા તેની મનપસંદ વસ્તુ તેને નથી મળતી ત્યારે તે પ્રાણી શોકાકુલ થઈ રહે છે. કદાચ તેને મનપસંદ વસ્તુ મળી પણ જાય પરન્તુ જ્યાં તેનો વિયોગ થઈ જાય છે તો તેના હૃદયમાં અપાર શોકનો સમુદ્ર ઉલગવા લાગે છે. અનભીષ્ટ સંયોગ બનવાથી તેને દૂર કરવા માટે તેના ચિત્તમાં અનેક પ્રકારના અશુભ સંકલ્પ વિકસિત થઈ જાય છે, અનિષ્ટ વસ્તુના સંયોગમાં એવું જ થાય છે. પ્રાણી તે વખતે અંતરદુઃખથી પોતાની જાતને પણ સુકાવી નાંખે છે. કામી પુરુષ સ્વતઃ દીન બની પ્રલાપ કરવા લાગી જાય છે, આ જાન આ શ્લોકથી પ્રકટ કરવામાં આવે છે.

નાચરિતઃ ' ઇતિ શોકં કરોતિ । અશુભસ્ય પરિણતિમનવધાયૈવ તત્ર યા પ્રવૃત્તિર્વિહિતા
સા વાર્ધક્યે દુઃખદા ભવતિ । ઉક્તञ્ચ—

“ ભવિત્રીં ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,
પુરા યદ્યત્ કિञ્ચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકૈકગમને,
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ” ॥ ૧ ॥

‘જૂર્યતે’ ઇત્યાદેરર્થસ્તુ પૂર્વવત્ । અતો મેધાવિના પૂર્વ કાર્ય પરિણતિમાલોચ્યૈવ
કરણીયં, યેન પશ્ચાત્ પશ્ચાત્તાપો ન ભવેત્ । ઉક્તञ્ચ—

મેં ઉપાર્જિત અશુભ-પરિણતિ કે હી ફલરૂપ હૈં । નીચે કે શ્લોક મેં યહી
વાત પ્રકટ કી ગઈ હૈ, જૈસે—

“ ભવિત્રીં ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,
પુરા યદ્યત્ કિञ્ચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકૈકગમને,
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

વૃદ્ધ અપને કો દુઃખી દેખકર ઝૂરતા હૈ, માનસિક એવં શારીરિક
અનેક કષ્ટોં કા અનુભવ કરતા હૈ । દુઃખી હોને પર અપની કુલમર્યાદા
કા ભી ધ્યાન નહીં રખતા । ઇસલિયે બુદ્ધિમાન્ પુરુષ કા કર્તવ્ય હૈ કિ
પ્રત્યેક કાર્ય કે પ્રારંભ-કાલ મેં ઉસકે ફલાફલ કા વિચાર કર ઉસ
કાર્ય કે કરને મેં પ્રવૃત્તિ કરે । વિના વિચારે તથા ઉસકી સારતા એવં
અસારતા કી પૂરી વિચારણા કિયે વિના કોઈ ભી કાર્ય નહીં કરના
ચાહિયે, નહીં તો પશ્ચાત્તાપ કે સિવાય ઓર કોઈ ફલ હાથ નહીં લગતા

૩૫૫ છે. નીચેના શ્લોકમાં એજ વાત પ્રગટ કરવામા આવેલ છે. જેમ—

“ ભવિત્રીં ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,
પુરા યદ્યત્ કિञ્ચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકૈકગમને,
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ.

વૃદ્ધ પોતાને દુઃખી દેખીને ઝૂરે છે, માનસિક અને શારીરિક અનેક કષ્ટોને
અનુભવ કરે છે. દુઃખી થવાથી પોતાની કુળમર્યાદાનો પણ ખ્યાલ રાખતો નથી
તેથી બુદ્ધિમાન્ પુરુષનું કર્તવ્ય છે કે પ્રત્યેક કાર્યના પ્રારંભકાળમાં તેના ફળાફળનો
વિચાર કરી તે કાર્યમા પ્રવૃત્તિ કરે. વિચાર્યા વગર તથા તેની સારતા અને અસારતાની
“ તપાન કર્યા વિના કોઈ પણ કાર્ય કરવું જોઈ એ નહિ. નહિ તો પશ્ચાત્તાપ સિવાય

તપ્યતે=પશ્ચાત્તાપસંતપ્તો ભવતિ । અથવા-હિતાપ્રાપ્તૌ પુત્રકલત્રાદિનાશે ચ પરિતપ્યતે । નિર્ચિલમિદં હિ શોચનાદિકં વિષયાસક્તેન કલુષિતાન્તઃકરણસ્ય દુઃસ્વાવસ્થાદ્યોતકમ્ ।

યદિ વા યૌવનધનમદમોહાભિભૂતઃ કાશ્ચનકામિન્યાદીન્યુપભુજ્ય વૃદ્ધાવસ્થાયાં નિકટમરણકાલે શોચતિ-‘ ધિગ્ માં હતભાગ્યં, યદવસરે સકલસુખદો ધર્મો મયા શોચનાદિક અવસ્થાએં યહાં કામી પુરુષોં કી પ્રકટ કી ગઈ હૈં ; વે સમસ્ત હી વિષય કે સમ્બન્ધ સે કલુષિત-અન્તઃકરણવાલે વ્યક્તિયોં કી દુઃસ્વાવસ્થા કી ઘોતક હૈં ।

અથવા-‘ શોચતિ ’ આદિ પદોં કે અર્થ કા સમન્વય વૃદ્ધાવસ્થા કે સાથ મીં હસ પ્રકાર સે હોતા હૈ-યૌવન ઓર ધન કે મદ સે ઉન્મત્ત તથા મોહ કે નશે સે અચેત બના હુઆ યહ પ્રાણી કંચન કામિની કા ઉપભોગ કરતે ૨ જબ વૃદ્ધાવસ્થા કા મેહમાન હોતા હૈ ઓર અપના મરણકાલ નિકટ દેખતા હૈ તબ વહ શોકાકુલ હો વિચારતા હૈ-મુજ્જ અભાગે કો ધિક્કાર હૈ કિ મૈને યોગ્ય અવસર કે પ્રાપ્ત હોને પર મીં સકલ સુખદાયી ધર્મ કા અરાધન નહીં કિયા, રાત દિન યૌવન ઓર ધન કે મદ સે ઉન્મત્ત હોકર અશુભ કા હી સંગ્રહ કિયા, હસકા ફલ ક્યા હોગા? હસ વાત કા જરા મીં વિચાર નહીં કિયા; અબ વૃદ્ધાવસ્થા આચુકી હૈ, હસમેં જિન ૨ કષ્ટોં કા મૈં અનુભવ કર રહા હૂં યે સબ પૂર્વ

તાપ છે. આ જે શોચનાદિક અવસ્થાઓ આ ઠેકાણે કામી પુરુષોની પ્રગટ કરેલ છે તે સમસ્ત વિષયના સંબંધથી કલુષિત અન્તઃકરણવાળી વ્યક્તિઓની દુઃસ્વાવસ્થાની ઘોતક છે.

અથવા-‘ શોચતિ ’ આદિ પદોના અર્થનો સમન્વય વૃદ્ધાવસ્થામાં પણ આ પ્રકારે થાય છે-યૌવન અને ધનના મદથી ઉન્મત્ત તથા મોહના નશાથી અચેત બનેલ તે પ્રાણી કંચન કામિનીનો ઉપભોગ કરતો કરતો જ્યારે વૃદ્ધાવસ્થાનો મેહમાન થાય છે અને પોતાનો મરણકાળ નિકટ આવેલો જાણીને શોકાતુર બની વિચારે છે કે ‘ મને અભાગીને ધિક્કાર છે કે મેં યોગ્ય અવસરની પ્રાપ્તિ હોવા છતાં પણ સુખદાયી ધર્મનું આરાધન ન કર્યું. રાત્રિન યૌવન અને ધનના મદથી ઉન્મત્ત બની અશુભનો જ સંગ્રહ કર્યો, તેનું ફળ શું મળશે ? એ વાતનો જરા પણ વિચાર ન કર્યો. હવે વૃદ્ધાવસ્થા આવી તેમાં જે જે કષ્ટોનો હું અનુભવ કરી રહ્યો છું તે બધા પૂર્વમાં ઉપાર્જિત અશુભ પરિણતિનું જ

છાયા—આયતચક્ષુર્લોકવિદર્શી લોકસ્યાધોભાગં જાનાતિ, ऊर्ध्वं ભાગં જાનાતિ, તિર્યશ્ચં ભાગં જાનાતિ, ગૃદ્ધો લોકોઽનુપરિવર્તમાનઃ સન્ધિં વિદિત્વા ઇહ મર્ત્યેષુ, એપ વીરઃ પ્રશંસિતો યો વદ્ધાન્ પરિમોચયતિ, યથાઽન્તસ્તથા વાહ્યં, યથા વાહ્યં તથાઽન્તઃ, અન્તઃ અન્તઃ પૂતિદેહાન્તરાણિ પૃથગપિ સ્તવન્તિ પણ્ડિતઃ પ્રત્યુપેક્ષેત । ૧ ।

ટીકા—‘ આયતચક્ષુરિત્યાદિ । આયતચક્ષુઃ=આયતં=દીર્ઘં ચક્ષુઃ=જ્ઞાનચક્ષુર્યસ્ય સ આયતચક્ષુઃ=એહિકપારત્રિકદુઃસ્વદર્શી—‘કામા નિયમતોઽનર્થવહુલાઃ’ इत्यवधार्य तान् विहायाऽऽत्मसुखानुभवीत्यर्थः । किंच लोकविदर्शी, लोकं विषयासङ्गेन क्लिश्यमानं जनं वि=विशेषेण=कामाभिष्वङ्गेन लोके दुःखाधिक्यं, तत्त्यागेन च प्रशमसुखं भवति ’ इत्येवंरूपेण द्रष्टुं शीलं यस्य स लोकविदर्शी—लोकदुःखाभिज्ञः,

શોકાદિકોં કો કૌન પ્રાપ્ત નહીં કરતા ? ઇસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘આયયચક્ષૂ’ ઇત્યાદિ ।

इहलोकसम्बन्धी और परलोकसम्बन्धी दुःखों का ज्ञान जिससे होता है ऐसे ज्ञानचक्षु का ही यहां पर चक्षु-शब्द से ग्रहण किया गया है । उभयलोकसम्बन्धी दुःखों के ज्ञान से ही उस चक्षु में आयतता प्रकट की गई है । इसी आभ्यन्तर चक्षु से यह जाना जाता है कि काम-गुण नियम से अनर्थकारी हैं । अतः इनका परित्याग कर आत्मसुख का अनुभवशाली होना चाहिये । इस प्रकार के पवित्र विचार से जो उस सुख का अनुभवी है, तथा जो लोकविदर्शी है—अर्थात् जो इस बात को जानता है कि यह लोक विषयों के सम्बन्ध से ही अधिक दुःखी हो रहा है, यदि प्रशम सुख यहां पर हो सकता है तो उनके सच्चे त्याग से ही हो सकता है । इस प्रकार से जिसके देखने का स्वभाव है उसका

શોકાદિકને ડોણુ પ્રાપ્ત નથી કરતા તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘આયય-ચક્ષૂ’ ઇત્યાદિ.

આ લોકસંબંધી અને પરલોકસંબંધી દુઃખોનું જ્ઞાન જેને થાય છે એવા જ્ઞાનચક્ષુને આ ઠેકાણે ચક્ષુ-શબ્દથી ગ્રહણ કરેલ છે બન્ને લોકસંબંધી દુઃખોના જ્ઞાનથી જ તે ચક્ષુમાં આયતતા પ્રગટ કરેલ છે આ આભ્યન્તર ચક્ષુથી એમ બાણુવામાં આવે છે કે કામગુણ નિયમથી અનર્થકારી છે, માટે તેનો પરિત્યાગ કરી આત્મસુખના અનુભવશાળી બનવું જોઈએ. આવા પ્રકારના પવિત્ર વિચારથી જે તેવા સુખના અનુભવી છે, તથા જે લોકવિદર્શી છે અર્થાત્ જે આ વાતને બાણુ છે કે આ લોક વિષયોના સંબંધથી જ અધિક દુઃખી બની રહેલ છે કદાચ પ્રશમ સુખ અહીં બની શકતું હોય તો તેના સાચા ત્યાગથી જ બની શકે છે. આવા પ્રકારથી જેને દેખવાનો સ્વભાવ છે તેનું નામ લોક-

“ઉચિતમનુચિતં વા કુર્વતા કાર્યમાદૌ
 પરિણતિરવધાર્યા યત્નતઃ પણિતેન ।
 અતિરભસકૃતાનાં કર્મણામાફલાપ્તે,—
 ભવતિ હૃદયદાહી શલ્યતુલ્યો વિપાકઃ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અતઃ પરિગ્રહકારણં શબ્દાદિકામગુણોઽવશ્યમુન્મૂલનીયો મુનિનેતિ
 તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ. ૮ ॥

કઃ શોકાદિકં ન પ્રાપ્નોતીતિ દર્શયતિ—‘આયયચક્ષૂ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—આયયચક્ષૂ લોગવિપસ્સી લોગસ્સ અહોભાગં જાણઇ,
 ઉડ્ઢં ભાગં જાણઇ, તિરિયં ભાગં જાણઇ, ગડ્ઢિયે લોએ અણુ-
 પરિયટ્ટમાણે સંધિં વિડ્ઢિત્તા ઇહ મચ્છિયેહિ, એસ વીરે પસંસિયે જે
 બદ્ધે પડિમોયે, જહા અંતો તહા બાહિં, જહા બાહિં તહા અંતો,
 અંતો અંતો પૂડ્ઢેહંતરાણિ પાસડ પુઢો વિ સવંતાઇં પંડિયે
 પડિલેહયે ॥ સૂ. ૧ ॥

હૈ । નીચે કે પદ્ય મેં યહી વાત દિખલાઈ ગઈ હૈ, જૈસે—

“ઉચિતમનુચિતં વા કુર્વતા કાર્યમાદૌ,
 પરિણતિરવધાર્યા યત્નતઃ પણિતેન ।
 અતિરભસકૃતાનાં કર્મણામાફલાપ્તે,—
 ભવતિ હૃદયદાહી શલ્યતુલ્યો વિપાકઃ” ॥ ૧ ॥

ઇસલિયે મુનિજન કા કર્તવ્ય હૈ કિ વે જૈસે ભી હો સકે પરિગ્રહ
 કે કારણભૂત ઇન પૂર્વોક્ત કામગુણોં કા ઉન્મૂલન કરે ॥ સૂ. ૮ ॥

બીજું કાંઈ પણ ક્ષણ મળતું નથી. નીચેના પદ્યમાં આજ વાત બતાવવામાં આવી
 છે, જેમ—

“ઉચિતમનુચિતં વા કુર્વતા કાર્યમાદૌ,
 પરિણતિરવધાર્યા યત્નતઃ પણિતેન ।
 અતિરભસકૃતાનાં કર્મણામાફલાપ્તે,—
 ભવતિ હૃદયદાહી શલ્યતુલ્યો વિપાકઃ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

માટે મુનિનું કર્તવ્ય છે કે જ્યાં સુધી બને ત્યાં સુધી પરિગ્રહના કારણભૂત
 આ પૂર્વોક્ત કામગુણોનું ઉન્મૂલન કરે. ॥ સૂ. ૮ ॥

યદ્વા લોકસ્ય=પશ્ચાસ્તિકાયરૂપસ્ય વિ=વિશેષમ્ ઊર્ધ્વાધસ્તિર્યગ્ગતિસુખદુઃસ્વાયુઃ-
કારણકર્મરૂપં દ્રષ્ટું શીલં યસ્ય સ લોકવિદર્શી । તદેવાહ-‘લોકસ્યે-’ ત્યાદિ । લોકસ્ય
અધોભાગં=નિમ્નભાગં ભવનપતિનારકાદિનિવાસસ્થાનરૂપં જાનાતિ=જ્ઞાનવિષયી-
કરોતિ, એવમ્, ઊર્ધ્વ ભાગમ્=ઉપરિતનભાગં સૌધર્મકલ્પાદિરૂપં જાનાતિ, તથા
તિર્યઞ્ચં ભાગં=મધ્યભાગં પશુપક્ષિ-મનુષ્યાદિનિવાસસ્થાનરૂપં જાનાતિ, લોકવિ-
દર્શી યેન કર્મવિપાકેન યસ્મિંલ્લોકે યસ્ય પ્રાણિનો જન્મ ભવતિ તત્સર્વં જાનાતીત્યર્થઃ ।

યદ્વા—‘લોકવિદર્શી’ લોકં=પરિગ્રહાદ્યર્જનતત્પરં ગૃહં વિશેષેણ દ્રષ્ટું શીલં
યસ્ય સ લોકવિદર્શી । તદેવ દર્શયતિ ‘ગૃહઃ’ इत्यादि । ‘ગૃહઃ’=કામભોગમૂર્ચ્છિતો
લોકઃ=જનઃ અનુપરિવર્તમાનઃ=ચતુર્ગતિષુ ભૂયો ભૂયો જન્મમરણે પ્રાપ્નુવન્ વર્તતે’

નામ લોકવિદર્શી હૈ । અથવા પશ્ચાસ્તિકાયરૂપ ઇસ લોક કે ઉર્ધ્વલોક,
અધોલોક એવં તિર્યગ્લોક કે સુખ દુઃખ ઓર આયુબંધ કે કારણરૂપ કર્મ
કો જાનને કા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ બી લોકવિદર્શી હૈ । લોકવિદર્શી
ભવનપતિ ઓર નારકી આદિ કે નિવાસસ્થાનભૂત અધોભાગ કો,
તથા સૌધર્મકલ્પાદિ રૂપ ઉર્ધ્વભાગ કો ઓર પશુ, પક્ષી, મનુષ્યાદિકા
નિવાસસ્થાનરૂપ મધ્ય લોક કો જાનતા હૈ । કહને કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ
લોકવિદર્શી જિસ કર્મકે વિપાક સે જિસ લોક મેં જિસ જીવ કા જન્મ
હોતા હૈ ડસ સબ વિષય કો ખલીખાંતિ જાનતા હૈ ।

અથવા પરિગ્રહાદિક કે ઉપાર્જન તથા સંગ્રહ કરને મેં તત્પર ઓર
કામભોગમેં મૂર્ચ્છિત એસે ઇસ લોક કો વિશેષ રીતિ સે દેખને કા જિસ
કા સ્વભાવ હૈ વહ બી લોકવિદર્શી હૈ । વહ યહ બાત બી જાનતા હૈ કિ
જો પ્રાણી કામભોગોં મેં આસક્ત હૈં વે ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ સંસાર મેં ચારં-

વિદર્શી છે, અથવા પશ્ચાસ્તિકાયરૂપ આ લોકનો, ઉર્ધ્વલોક, અધોલોક અને તિર્યગ્-
લોકના સુખદુઃખ અને આયુબંધના કારણરૂપ કર્મને જાણવાનો જેનો સ્વભાવ
છે તે પણ લોકવિદર્શી છે. લોકવિદર્શી ભવનપતિ અને નારકી આદિના નિવા-
સસ્થાનભૂત અધોભાગને, તથા સૌધર્મકલ્પાદિરૂપ ઉર્ધ્વભાગને, અને પશુ, પક્ષિ,
મનુષ્યાદિના નિવાસસ્થાનરૂપ મધ્યલોકને જાણે છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે-
લોકવિદર્શી જે કર્મના વિપાકથી જે લોકમાં જે જીવનો જન્મ થાય છે તે બધા
વિષયને સારી રીતે જાણે છે.

અથવા પરિગ્રહાદિકનું ઉપાર્જન, તથા સંગ્રહ કરવામાં તત્પર અને કામ-
ભોગોમાં મૂર્ચ્છિત એવા આ લોકને વિશેષ-રીતિથી દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે
પણ લોકવિદર્શી છે. તે એ વાત પણ જાણે છે કે-જે પ્રાણી કામભોગોમાં
આસક્ત છે તેનું ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસારમાં વારંવાર જન્મ અને મરણ થયા કરે છે.

કેન પ્રકારેણ સ્વપરાત્માનં પ્રતિમોચયતીતિ જિજ્ઞાસાયાં શરીરામેધ્યત્વ-નિસ્સાર-ત્વ-પ્રદર્શનપુરસ્સરં નિર્વેદ-જનનેત્યાહ—‘યથાઽન્તઃ’ ઇત્યાદિ । યથા=યેન પ્રકારેણ અન્તઃ=શરીરસ્યાખ્યન્તરે શુક્રશોણિતમેદોમજ્જાવસાસ્થ્યાદિપૂર્ણતયા નિઃસારતાઽસ્તિ તથૈવ બહિઃ=શરીરસ્ય બહિર્ભાગેઽપિ શ્લેષ્મશિઙ્ગાણમૂત્રપુરીષાદયો મલાઃ નિઃસરન્તિ, ઇતિ નિઃસારતા દ્રષ્ટવ્યા । એવં યથા—યાદૃશા=બર્હિનવભિર્દ્વારૈર્મલા નિઃસરન્તિ તથા=તાદૃશાસ્તે મલા અન્તરપિ વર્તન્તે । શરીરં હિ—અતિજુગુપ્સિતશુક્રશોણિતસંયોગાદુત્પન્નત્વેનાતિઘૃણિતમૂત્રપુરીષપૂત્યાદેર્નિષ્પન્દમાનતયા ચાન્તર્બહિરત્યન્તામેધ્યમેવ ।

છુડાતા હૈ? ઇસ પ્રકાર કી જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કરને કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ—‘યથાન્તસ્તથાવાહ્ય’—મિતિ । સંસાર મેં સમસ્ત અજ્ઞાની જીવોં કો જિતના મોહ અપને શરીર પર હોતા હૈં ઉતના કિસી પર મી નહીં હોતા । અપને શરીર કી સંભાલ કે લિયે પ્રત્યેક પ્રાણી અપની પ્રિય સે પ્રિય વસ્તુ તક કી મી ઉપેક્ષા કર દિયા કરતા હૈં । અતઃ જિસ શરીર પર અજ્ઞાની કા ઇતના અધિક મોહ હોતા હૈં, જ્ઞાની જીવ ઉસી કી અસારતા પ્રકટ કર ઉસસે મોહી જીવોં કા અનુરાગ ઘટાને કે લિયે કહતે હૈં કિ—જિસ પ્રકાર યહ શરીર મીતર સે શુક્ર, શોણિત, મેદ, મજ્જા, વશા ઓર અસ્થ્યાદિ અશુચિ પદાર્થોં સે યુક્ત હૈં—અર્થાત્ ઇસ શરીર કે મીતર ઇન અપવિત્ર વસ્તુઓં કા જમઘટ હૈં ઉસી પ્રકાર બાહર મેં મી યહ શરીર શ્લેષ્મ-કફ, મૂત્ર, પુરીષાદિ સે સદા ઘૃણિત બના રહતા હૈં । ઇન અપવિત્ર પદાર્થોં કો બહાને કે લિયે જૈસે ઇસમેં નવદ્વાર હૈં, ઉસી તરહ મીતર મી હૈં । યહ અતિજુગુપ્સિત-ઘૃણિત શુક્ર ઓર શોણિત કે સંયોગ

છોડાવે છે? તે પ્રકારની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—‘યથાન્તસ્તથાવાહ્ય’—મિતિ । સંસારમાં સમસ્ત અજ્ઞાની જીવોને જેટલો મોહ પોતાના શરીર ઉપર હોય છે એટલો બીજા ઉપર હોતો નથી. પોતાના શરીરની સંભાળ માટે પ્રત્યેક પ્રાણી પોતાની પ્રિયમાં પ્રિય વસ્તુની પણ ઉપેક્ષા કરી દે છે. માટે જે શરીર ઉપર અજ્ઞાનીનો આટલો અધિક મોહ હોય છે, જ્ઞાની જીવ તેનીજ અસારતા પ્રગટ કરી તેનાથી મોહી જીવોનો અનુરાગ ઘટાડવા માટે કહે છે કે—જે પ્રકારે આ શરીર બીતરથી શુક્ર, લોહી, મેદ, મજ્જા, વસા અને અસ્થિ આદિ અશુચિ પદાર્થોથી યુક્ત છે, અર્થાત્ આ શરીરની બીતર એ અપવિત્ર વસ્તુઓનો જમાવ છે તે પ્રકારે બહાર પણ આ શરીર શ્લેષ્મ-કફ, મૂત્ર, પુરીષાદિથી સદા ઘૃણિતજ અન્યું રહે છે. આ અપવિત્ર પદાર્થોને બહાર નિકળવા જેમ તેનાં નવ દ્વાર છે તે પ્રકારે બીતરમાં પણ છે. એ અતિજુગુપ્સિત-ઘૃણિત

તથા ‘પુઢો વિ’ પૃથગપિ=દેહાદ્ વહિરપિ ‘સવંતાઈં’ સ્તવન્તિ=નિઃસરન્તિ=સ્યન્દ-
માનાનિ પૂતિદેહાન્તરાણિ-પૂત્યન્તરાણિ=વિકૃતદુર્ગન્ધરુધિરાણિ, દેહાન્તરાણિ=
શ્લેષ્માદીનિ, કુષ્ઠરોગિણાં માંસાદીનિ ચ પશ્યતિ । યદ્દેવં તતઃ કિં કુર્યાત્ ?
इत्याह—‘पण्डितः’ इत्यादि । पण्डितः=परिज्ञातहेयोपादेयः, प्रत्युपेक्षेत=यथा-
वस्थितरूपेण जानीयात् । एतत्सर्वं विदित्वाऽत्यन्ताशुचौ यौवनरूपसम्पन्नेऽपि
शरीरे रागं न विदध्यादिति भावः । उक्तञ्च—

“મંસદ્વિરુહિરણ્દારુવણદ્વકલમલયમેયમજ્જાહિં ।

પુણ્ણમિ ચમ્મકોસે, દુર્ગંધે અસુહ્વીમચ્છે ॥ ૧ ॥

સંચારિમજંતગલંતવચ્ચમુત્તંતસેઅપુણ્ણમિ ।

દેહે હુજ્જા કિં રાગકારણં અસુહ્હેઝમ્મિ ” ॥ ૨ ॥ इति ॥

દુર્ગંધ સે ઘૃણિતર હૈં । યદિ ડન ભાગોં કે દુર્ગંધ કી યાદ કી જાવે તો
વમન તક ભી હો જાવે । તથા ઇસ દેહ મેં અપને ૨ સ્થાન મેં રહી હુઈ
જો જો માંસ, રુધિર, મજ્જા, શુક્ર, વસા-(ચરબી) તથા હઢી વગેરહ
ધાતુઁ ઉપધાતુઁ હૈં વે સવ હી, તથા કુષ્ઠાદિ-અવસ્થા મેં સમસ્ત હી
इन्द्रियां गल जानी हैं । अतः ज्ञानी जन इस क्षणविनश्वर एवं नित्य
अशुचि शरीर में ममताशाली नहीं होते हैं । कहा भी है—

“મંસદ્વિરુહિરણ્દારુવણદ્વકલમલયમેયમજ્જાહિં,

પુણ્ણમિ ચમ્મકોસે, દુર્ગંધે અસુહ્વીમચ્છે ॥ ૧ ॥

સંચારિમજંતગલંતવચ્ચમુત્તંતસેઅપુણ્ણમિ, ।

દેહે હુજ્જા કિં રાગકારણં અસુહ્હેઝમ્મિ ” ॥ ૨ ॥ इति

ભાવાર્થ ઇસકા યહી હૈં કિ યહ દેહ માંસાદિક પદાર્થોં સે યુક્ત

છે. કદાચ તે લાગેાની દુર્ગન્ધની યાદ કરવામાં આવે તો ઉલટી પણ થાય છે
તથા આ દેહમાં પોતપોતાના સ્થાનમાં રહેલા જે જે માંસ, રુધિર, મેદ, મજ્જા,
શુક્ર, ચરબી તથા હાડકા વિગેરે ધાતુઓ, ઉપધાતુઓ છે તે બધી, તથા
કુષ્ઠાદિ-અવસ્થામાં સમસ્ત ઈન્દ્રિઓ પણ ગળી જવા માડે છે, તેથી જ્ઞાનીજન
આ ક્ષણવિનશ્વર અને નિત્ય અશુચિ શરીરમાં મનતાશાળી થતા નથી. કહું પણ છે—

“મંસદ્વિરુહિરણ્દારુવણદ્વકલમલયમેયમજ્જાહિં ।

પુણ્ણમિ ચમ્મકોસે દુર્ગંધે અસુહ્વીમચ્છે ॥ ૧ ॥

સંચારિમજંતગલંતવચ્ચમુત્તંતસેઅપુણ્ણમિ ।

દેહે હુજ્જા કિં રાગકારણં અસુહ્હેઝમ્મિ ” ॥ ૨ ॥ इति,

ભાવાર્થ એ છે કે આ દેહ માંસાદિક પદાર્થોથી યુક્ત હોવાથી અશુચિ

कृम्यादीनि भवन्ति तथा बहिः=शरीरबहिर्भागेऽपि पूयपूतिशोणितकृम्यादीनि स्रवन्ति भवन्ति । तदुपरि 'भिनभिनेति' शब्दं कुर्वाणैर्मक्षिकासहस्रैराक्रान्तं स्वशरीरं विज्ञाय स्वयमपि स्वात्मानं जुगुप्सते उद्विजते च । यच्छरीरदौर्गन्ध्येन सङ्क्रामकरोगभिया च यत्पार्श्वे परिजनोऽपि नोपवेष्टुमुत्सहते ।

‘जहा अंतो तहा बाहिं’ इत्यादिना गूढतयोक्तमेवार्थं प्रकटीकुर्वन्नाह—‘अंतो अंतो’ इत्यादि । स आयतचक्षुर्लोकविदर्शी अन्तः अन्तः=शरीरस्य मध्ये मध्ये पूतिदेहान्तराणि-पूत्यन्तराणि=पूतिविशेषान्, तथा देहान्तराणि=देहावस्थाविशेषान् मांसरुधिरमेदोमज्जादिरूपाणि पूत्यन्तरदेहान्तराणीत्यर्थः, पश्यति=ज्ञानचक्षुषा विलोकयति,

गलने लग जाते हैं, इस रोगी को गलत्कुष्ठी कहते हैं । इसके शरीर के भीतर जैसे मूत्र, पुरीष, खेल-कान का मैल, शिङ्घाण-नाक का मैल, पित्त, शोणित और कृम्यादिक होते हैं वैसे ही शरीर के बाहिरी भागों में भी पीब, शोणित और कीड़े बगैरह निकलते रहते हैं, हजारों मक्खियां भी भिन्-भिन् शब्द करती हुई उसके ऊपर मंडराती रहती हैं । ऐसी अपनी दशा देखकर वह स्वयं भी अपने से घृणा करने लग जाता है, और दुःखी भी होता रहता है । उसी समय उसके पास उस रोग के लग जाने के भय से तथा उसकी दुर्गंध से उसके परिजन तक भी बैठने की इच्छा तक भी नहीं करते । अतः इस शरीर की जब यह हालत हो तो फिर उसमें मोह करना ही व्यर्थ है ।

ज्ञानी जन तो इस शरीर को सदा अपवित्र जानकर राग करने का स्थान ही नहीं मानते, उनकी दृष्टि में तो इस देह के समस्त भाग ही अति

गणवा लागे છે, આ રોગીને ગલત્કુષ્ઠી કહે છે. તેના શરીરની બીતર બેમ મૂત્ર-પુરીષ, બળખાં, કાનનો મેલ, શિઙ્ઘાણુ-નાકનો મેલ, પિત્ત, શોણિત અને ચર-મીઆ આદિ થાય છે તેવી જ રીતે શરીરના બહારના ભાગમાં પણ પર્, શોણિત અને કીડા વિગેરે નીકળતા રહે છે હબરો માખીઓ પણ બણ-બણ શબ્દો કરતી તેના ઉપર ફરતી રહે છે. એવી પોતાની દશા દેખીને તે પોતે પોતાની બતની ઘૃણા કરવા લાગી જાય છે, અને દુઃખી પણ બને છે. તે વખતે તે રોગના લાગી જવાના ભયથી તથા તેની દુર્ગંધથી તેના પરિજન પણ તેની પાસે બેસવાની ઈચ્છા કરતા નથી. માટે આ શરીરની તેવી સ્થિતિ બનતી હોય તો પછી તે શરીર ઉપર મોહ રાખવો વ્યર્થ છે.

જ્ઞાનીજન તો આ શરીરને સદા અપવિત્ર જાણીને રાગ કરવાનું સ્થાનજ માનતા નથી, તેની દૃષ્ટિમાં તો આ દેહના સમસ્ત ભાગ અતિ દુર્ગંધથી ઘૃણિતતર જ

ટીકા—‘અવ મતિમન્નિ’-ત્યાદિ । અથ કાયકામસ્વરૂપપરિજ્ઞાનાનન્તરં મતિ-મન્=હે મેધાવિન્ ! પરિજ્ઞાય=અશુચિ અશુચિસમ્ભવં ક્ષણમદ્ગુરં ચ શરીરં કટુવિપાકં શબ્દાદિવિષયસ્વરૂપં ચ જ્ઞ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞયા પરિત્યજ્ય ‘ચ’ સમુચ્ચયે ‘હુ’—વાક્યાલક્ષ્ણે ‘લાલાપ્રત્યાગી’ લાલા=પ્રક્ષરદત્તુટ્નમુલસલિલં, તાં પ્રત્યગિતું=પુનરગિતું શીલં यस્ય સ લાલાપ્રત્યાગી=લાલામત્રી મા ભવ । યથા વિવેકકલાવિકલો વાલો મુલનિસ્સૃતામધઃપતન્તીં લાલાં પુનઃ પુનરાસ્વાદયતિ તથૈવ ત્વમપિ પરિત્યક્તાનાં કામભોગાનાં પુનરભિલાપં મા કુરુષ્વેતિ તાત્પર્યમ્ । અપિ ચ તેષુ મિથ્યાત્વાવિરત્યાદિસંસારસ્રોતસ્મુ આત્માનં તિરસ્વીનં=પ્રતિકૂલગામિનં પતન-શીલં મા આપાદયેઃ=મા કુરુ, જન્મ-મરણપ્રવાહે સ્વાત્માનં મા પાતયેત્યર્થઃ, શ્રુત-ચારિત્રલક્ષણપરમાનન્દે સ્થાપયેતિ ભાવઃ ।

જ્ઞાનીજન દેહ કા ઉક્ત સ્વરૂપ જાનકર કયા કરતે હૈં ? સો કહતે હૈં—‘સે મદ્મં’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય કા સંબોધન કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે મેધાવી શિષ્ય ! તુમ શરીર ઔર કામગુણ કે વર્ણિત સ્વરૂપ સે પરિચિત હો ચુકે હો, તથા યહ ભી જાન ચુકે હો કિ યહ શરીર સ્વયં અશુચિ તથા અશુચિ-કારણોં સે પૈદા હુઆ હૈં ; ઔર ક્ષણમગુરં હૈં, યે શબ્દાદિ વિષય ભી કટુકવિપાકવાલે હૈં, ઇસલિયે ઇન સવ ચાતોં કો જ્ઞપરિજ્ઞા સે જાનકર ઔર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા સે ઇનકા પરિત્યાગ કર અવ લાલાપ્રત્યાગી-લાર ચાટને વાલા મત વનો । અર્થાત્ જિસ પ્રકાર વિવેકવિકલ વાલક મુગ્ધસે નીચે ગિરતો હુઈ અપની લાર કો વારંવાર ચાટતા હૈં ઁસી તરહ તુમ ભી પરિત્યક્ત ઇન કામભોગોં કો ફિર સે ભોગને કી અભિલાપા મન કરો । તથા મિથ્યાત્વ, ઔર અવિરતિ આદિ

જાનીજન દેહનુ ઉક્તસ્વરૂપ જાણીનેશુ કરે છે, તે કહે છે ‘સે મદ્મં’ ઇત્યાદિ

શિષ્યને સંબોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-હે મેધાવી શિષ્ય ! તમે શરીર અને કામગુણના વર્ણિત સ્વરૂપથી પરિચિત બની ચૂકેલ છો, તથા એ પણ જાણી ચૂક્યા છો કે-આ શરીર સ્વયં અશુચિ તથા અશુચિ કારણોથી પૈદા થયેલ છે, અને ક્ષણભંગુર છે. એ શબ્દાદિ વિષય પણ કટુકવિપાકવાલા છે, નાટે આ સમગ્રી વાતોને જ-પરિજ્ઞાથી જાણીને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી તેનો પરિત્યાગ કરી હુવે લાલાપ્રત્યાગી-લાલચાટનારા ન બનો. અર્થાત્ જેવી રીતે વિવેકવિકલ બાળક મુગ્ધથી નીચે ટપકતી પોતાની લાળને વારંવાર ચાટે છે તે માફક તમે પણ ત્યજ્યા આ કામભોગોને ફરીથી ભોગવવાની અભિલાષા ન કરો તથા મિથ્યાત્વ અને

છાયા—માંસાસ્થિરુધિરસ્તાય્વનદ્વકલમલકમેદોમજ્જાભિઃ ।

પૂર્ણે ચર્મકોશે દુર્ગન્ધેઽશુચિવીભત્સે ॥ ૧ ॥

સંચારિમયન્ત્રગલદ્વર્ષોમૂત્રાન્ત્રસ્વેદપૂર્ણે ॥

દેહે ભવેત્કિં રાગકારણમ્ અશુચિહેતૌ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ॥ સૂ૦ ૯ ॥ સૂ૦

ઉક્તસ્વરૂપં શરીરં નિર્વર્ણ્ય કિં કરોતીતિ દર્શયતિ—‘સે મઙ્ગમં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે મઙ્ગમં પરિજ્ઞાય મા ય હુ લાલપચ્ચાસી, મા તેસુ તિરિચ્છમપ્પાણમાવાયૈઃ કાસંકસે સ્વલુ અયં પુરિસે, બહુમાઈ ક-
ડેણ મૂઢે પુણો તં કરેઈ લોહં વેરં વડ્ઢેઈ અપ્પણો, જમિણં પરિક-
હિજ્જઈ ઇમસ્સ ચેવ પરિવૂહણયાઃ, અમરાયઈ મહાસડ્ઢી અટ્ટમેયં
તુ પેહાઃ અપરિણ્ણાઃ કંદઈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા—અથ મતિમન્ ! પરિજ્ઞાય મા ચ હુ લાલાપત્યાસી, મા તેષુ તિરશ્ચીન-
માત્માનમાપાદયેઃ, કાસંકષઃ સ્વલુ અયં પુરુષઃ, બહુમાયી કૃતેન મૂઢઃ પુનસ્તત્કરોતિ
લોભં વૈરં ચ વર્દ્ધયતિ આત્મનઃ, યદિદં પરિકથ્યતેઽસ્ય ચૈવ પરિવૂહણાય અમરાયતે
મહાશ્રદ્ધી આર્તમેતં તુ પ્રેક્ષ્યાપરિજ્ઞાય ક્રન્દતિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

હોને કી વજહ સે અશુચિ, દુર્ગન્ધયુક્ત, વીભત્સ હૈ । ઇસમેં કોઈ બી એસી
ચીજ નહીં હૈ જો જ્ઞાનીજન કે રાગ કા કારણ હો સકે, અતઃ જો હેયો-
પાદેય કે જ્ઞાતા હૈં ઉનકા કર્ત્તવ્ય હૈ કિ વે ઇસ શરીર કો જૈસા ઇસકા
સ્વભાવ હૈ ઉસી રૂપ સે જાનેં । ઇસ સબકે કહને કા તાત્પર્ય યહી હૈ
કિ યૌવન સે મદમાતે રૂપ સે યુક્ત બી ઇસ અત્યન્ત અપવિત્ર દેહ મેં
પૂર્વોક્ત રીતિ સે કથિત ઇસ શરીર કા સ્વરૂપ સમજ્ઞકર જ્ઞાની-સંયમી
મુનિ કો રાગ નહીં કરના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ॥ ૯ ॥

દુર્ગન્ધયુક્ત વીભત્સ છે. તેમાં એવી કોઈ પણ ચીજ નથી કે જેને માટે જ્ઞાની-
જનો રાગનું કારણ માની શકે, માટે જે હેયોપાદેયના જ્ઞાતા છે તેનું કર્તવ્ય છે
કે આ શરીરને જેવો તેનો સ્વભાવ છે તેવા રૂપમાં જ માને. આ સઘળું
કહેવાનો મતલબ એ છે કે—યૌવનના મદમાતા રૂપથી યુક્ત પણ આ અત્યન્ત
અપવિત્ર દેહમાં પૂર્વોક્ત રીતિથી કથિત આ શરીરનું સ્વરૂપ સમજીને જ્ઞાની
સંયમી મુનિએ રાગ નહિ કરવો જોઈએ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

વહુલઃ નાનાવિધોપાયૈઃ પરપ્રતારણચતુર इत्यर्थः । શબ્દાદિવિપયાસક્તસ્ય કપાયો-
 દયોઽવશ્યમ્ભાવી તતો 'વહુમાયી'—ત્યુપલક્ષણં ક્રોધાદીનાં ત્રયાણાં, તેન 'વહુક્રોધી'
 इत्यादि भवति । અપિ ચ 'કૃતેન મૂઢઃ' કૃતેન=કર્તવ્યેન મૂઢઃ=વિકલઃ, કાર્ય-
 વ્યાકુલચિત્તત્વેન ભોજનાદિસમયે ભોક્તુમપ્યશક્તુવન્ સ પુનસ્તન્માયાદિકં તથા
 सुखं गच्छति-इति कासंकषः " અર્થાત્ જિનકે દ્વારા પ્રાણી દુઃખિત હોતે
 हैं उनका नाम कास है, और वे शब्दादि विषय हैं, इनकी ओर जो
 प्रवृत्ति करता है उसका नाम कासंकष है ।

શબ્દાદિક-વિષયોં મેં આસક્ત પ્રાણી માયાવહુલ હોતે હેં । અનેક
 પ્રપંચ રચકર દૂસરોં કી પ્રતારણા (ઠગાઈ) કરને કા ડનકા ધ્યેય બના
 રહતા હેં । ઇસ કાર્ય મેં યે ઇતને ચતુર હોતે હેં કિ-મોલે-માલે પ્રાણી ઇન
 કી માયાચારી મેં વહુત જલ્દી ફેસ જાતે હેં । 'વહુમાયી' પદ અન્ય ક્રોધ
 માન લોભ કા ઉપલક્ષક હેં । ઇસસે શબ્દાદિ-વિષયોં મેં ફેસે હુએ પ્રાણી
 વહુક્રોધી, વહુમાની, વહુલોમી હોતે હેં, એસા અર્થ મી ઇસી એક પદ સે
 ગૃહીત હો જાતા હેં, કારણ કિ શબ્દાદિક વિષયોં મેં આસક્ત પ્રાણિયોં કે
 કષાય કા ઉદય અવશ્ય હોતા હેં તથા એસે પ્રાણી કર્તવ્ય સે મી વિકલ
 હોતે હેં અર્થાત્-સમયાનુસાર જો કાર્ય ડનહેં કરના ચાહિયે ડનકો નહીં
 કરતે । અન્ય કાર્યોં મેં વ્યાકુલચિત્ત હોને સે, અધિક કયા કહા જાય ?;
 ડનકો રાને તક કી મી ફુરસત નહીં મિલતી । રાતદિન ડનહીં માયાદિક

गच्छति-इति कासंकषः " अर्थात् ते द्वारा प्राणी दुःखित थाय छे तेनुं नाम कास
 छे अने ते शब्दादि विषय छे, तेनी तरङ्गे प्रवृत्ति करे छे तेनुं नाम कासंकष छे.

શબ્દાદિક વિષયોમા આસક્ત પ્રાણી માયાબહુલ હોય છે, અનેક પ્રપંચ
 રચીને બીજાને ડગવાને તેનો ધ્યેય બની રહે છે તે કાર્યમાં તે એટલો
 ચતુર હોય છે કે ભોળા પ્રાણી તેની માયાબળમાં બહુ જલ્દી ઇસી બળ્ય છે.
 બહુમાયીપદ અન્ય ક્રોધ માન લોભનો પણ ઉપલક્ષક છે, તેથી શબ્દાદિ વિષ-
 યોમા ઇસેલા પ્રાણી બહુક્રોધી, બહુમાની અને બહુલોભી હોય છે, એવો
 અર્થ પણ તેના એક પદથી અહિં થઈ બળ્ય છે, કારણ કે શબ્દાદિ વિષયોમા
 આસક્ત પ્રાણિયોને કપાયનો ઉદય અવશ્ય થાય છે, તથા એવો આત્મા કર્તવ્યથી
 પણ વિકલ થાય છે, સમયાનુસાર જે કર્મ તેણે કરવું જોઈએ તેતો કરતો નથી,
 અન્ય કાર્યોમાં વ્યાકુળચિત્ત હોવાથી તેને અધિક શું કહેવું ? , ખાવાપીવાની પણ
 સદા મળતી નથી. રાતદિન તેવા માયાદિક કાર્યોમાં જ ઇસી રહે છે, લોભ

ન પ્રમાદવતઃ શાન્તિરિતિ દર્શયતિ=‘કાસંકપઃ’ ઇત્યાદિ । અયં પ્રમાદી પુરુષઃ કાસંકપઃ=કસ્યતે=પીડ્યતે પ્રાણી યૈસ્તે કાસાઃ શબ્દાદિવિષયાસ્તાન્ કષતિ=તદભિમુખં ગચ્છતીતિ ‘કાસંકપઃ’ શબ્દાદિવિષયલોલુપઃ । સ હિ સમુદીયમાન-ભોગસ્પૃહોઽહર્નિશં ‘કૃતવાનમું કરિષ્યે ચેમમ્’ ઇત્યાદિનાનાવિધસંકલ્પવિકલ્પવશતઃ પદે પદે વિષીદન્ન કદાચિદપિ શાન્તિમુપલભમાન ઇત્યર્થઃ । કિં ચ વહુમાયી=માયા-

જો સંસાર કે સ્રોત-કારણ હૈં, ઉનમૈં અપની આત્મા કો પતનશીલ મત બનાઓ ; કારણ કિ એસા કરને સે જન્મ ઓર મરણ કે પ્રવાહ કા કમી મી અંત નહીં આ સકેગા । અતઃ જો ઇસ પ્રવાહ કો રોકને કી યાહના હો તો મિથ્યાત્વ આદિ સાંસારિક કારણોં મૈં અપને કો મત ફસાઓ, શ્રુતચારિત્રરૂપ પરમ આનન્દ મૈં હી અપને કો સ્થિત કરો ।

પ્રમાદી આત્મા કો શાંતિ નહીં મિલતી હૈ યહ માની હુઈ બાત હૈ; ક્યોંકિ પ્રમાદી મનુષ્ય શબ્દાદિ વિષયોં કી ઓર ઝુકતારહતા હૈ, ઉનમૈં લોલુપી બના રહતા હૈ, ઇસકે ચિત્ત મૈં ભોગોં કી ઇચ્છા નિરન્તર રહા કરતી હૈ, “મૈને ઇસકો કિયા, ઇસકો અબ કરૂંગા” ઇત્યાદિ અનેક સંકલ્પ-વિકલ્પોં કે તાંતોં મૈં ફસકર યહ કમી મી સચ્ચી શાંતિ કા અનુભવ નહીં કર સકતા । ક્ષણ-ક્ષણ મૈં વિષાદી બનતા હૈ, કારણ કિ ઇસકા એક સંકલ્પ પૂરા હોતા હૈ ઓર દૂસરે કો પૂર્ણ કરને કે લિયે આકુલ-વ્યાકુલ હો ઉઠતા હૈ । જો શબ્દાદિ-વિષયોં મૈં લોલુપ હૈ ઇસકા નામ કાસંકપ હૈ । “કાસ્યતે પીડ્યતે પ્રાણી યૈસ્તે કાસાસ્તાન્ કષતિ=તદભિ-

અવિરતિ આદિ જે સંસારના સ્રોત-કારણ છે તેમાં પોતાના આત્માને પતનશીલ બનાવો નહિ. કારણ કે એવું કરવાથી જન્મ અને મરણના પ્રવાહનો કોઈ વખત પણ અંત આવી શકશે નહિ. માટે જે આ પ્રવાહને રોકવાની યાદના હોય તો મિથ્યાત્વ આદિ સાંસારિક કારણોમાં પોતાની બંધાને ફસાવો નહિ. શ્રુતચારિત્ર-રૂપ પરમ આનંદમાં જ પોતાને સ્થિર કરો.

પ્રમાદી આત્માને શાંતિ મળતી નથી, એ માનેલી વાત છે, કારણ કે પ્રમાદી મનુષ્ય શબ્દાદિ વિષયોની તરફ ઝુકતા રહે છે, તેમાં લોલુપી બની રહે છે, તેના ચિત્તમાં ભોગોની ઇચ્છા નિરન્તર રહ્યા કરે છે. “મેં આ બનાવ્યું, આ વસ્તુને હમણા કંઈ છું અગર કરીશ” ઇત્યાદિ અનેક સંકલ્પ વિકલ્પોના તાંતામાં ફસીને તે સાચી શાંતિનો અનુભવ ક્યારેય પણ કરી શકતો નથી. ક્ષણે ક્ષણે વિષાદી બની રહે છે, કારણ કે તેનો એક સંકલ્પ પુરો થાય છે ત્યાં બીજાને પુરો કરવામાં આકુલ-વ્યાકુલ થઈ જાય છે. જે શબ્દાદિક વિષયોમાં લોલુપ છે તેનું નામ કાસંકપ છે, “કાસ્યતે પીડ્યતે પ્રાણી યૈસ્તે કાસાઃ, તાન્ કષતિ=તદભિમુખં

સ્વયં ક્ષિયતે ચ । इदमपरं कथ्यते—‘अमरायते’ इत्यादि, ‘महाश्रद्धी’ महती वासौ श्रद्धाऽर्थकामविषया महाश्रद्धा, साऽस्ति यस्य स महाश्रद्धी—भोगेषु तत्साधनेषु चाति-श्रद्धावान् सन् अमरायते भोगवाञ्छयाऽर्थोपार्जनपर आत्मानममरमिव मन्यते । एतम्=अमरायमाणम् महाश्रद्धिनम् आर्तम्=शारीरमानसिकपीडापीडितं प्रेक्ष्य धिवेकबुद्ध्या विचार्य, हे शिष्य ! शब्दादिविषये मनो न निधेयमिति भावः । यश्च भोगगृहः

सुखी मानता रहता है, और अर्थ, काम और विषयों एवं उनके साधनों के जुटाने में ही रात-दिन वह तल्लीन बना रहता है । उसके हृदय में सदा यही दृढ़ विश्वास काम करता रहता है कि—‘अर्थ कामादिक एवं उनके साधनों की प्राप्ति से ही जीवन सुखमय होता है, इनके बिना जीवन का कोई मूल्य नहीं । शारीरिक साता ही जीवन की साता है, यह बिना भोगों के होती नहीं, भोगों का भोगना भी बिना अर्थोपार्जन किये बनता नहीं, अतः वे भोगों की वाञ्छा से प्रेरित होकर अर्थोपार्जन करने में तत्पर होते रहते हैं और सब कुछ साधनसंपन्न हो जाने पर अपने आपको अमर मानने लग जाते हैं । इस प्रकार भोग और उनके साधनों में श्रद्धासंपन्न तथा अपने आपको अमर मानने वाले प्राणियों को हे शिष्य ! तुम कभी भी सुखी न समझो । वे तो सदा शारीरिक एवं मानसिक पीडाओं से व्यथित ही रहते हैं । ऐसा जानकर तुम शब्दादिविषयों में अपने मनको कभी भी आसक्तियुक्त न करो ।

અર્થ, કામ તથા વિષયો અને તેના સાધનોને ભોગવવામાં જ રાત દિવસ તल्लीન બની રહે છે તેના હૃદયમાં સદા એ જ વિશ્વાસ કામ કરતો રહે છે કે ‘અર્થ-કામાદિક અને તેના સાધનોની પ્રાપ્તિથી જ જીવન સુખમય થાય છે તેના વિના જીવનનું કોઈ મૂલ્ય નથી શારીરિક સાતા જ જીવનની સાતા છે. એના વિના ભોગો થતા નથી ભોગોનું ભોગવવું અર્થ ઉપાર્જન કર્યા વિના થતું નથી, તેથી તે ભોગોની વાછનાથી પ્રેરિત થઈને અર્થ ઉપાર્જન કરવામાં તત્પર રહ્યા કરે છે. અને બધાસાધનસંપન્ન બનવાથી પોતે પોતાની બતને અમર માનવા લાગી બાથ છે. આ પ્રકારે ભોગ અને તેના સાધનોમાં શ્રદ્ધાસંપન્ન તથા પોતે પોતાની બતને અમર માનવાવાળા પ્રાણીને હે શિષ્ય ! તમે કોઈ વખત પણ સુખી ન માનો. એ તો સદા શારીરિક અને માનસિક પીડાઓથી વ્યથિત જ રહે છે. એવું સમજીને તમે શબ્દાદિ વિષયોથી પોતાના મનને કોઈ વખત પણ આસક્તિ-યુક્ત ન કરો.

અને વેરભાવને વધારતા રહે છે. લોભથી જ માયાચાર કરવામાં જીવોની પ્રવૃત્તિ થાય છે, માયાચારથી વેરભાવની વૃદ્ધિ થાય છે. થોડા વખતને માટે માની લ્યો કે શબ્દાદિ-વિષયોની અપ્રાપ્તિજન્ય દુઃખોથી પીડિત થયેલ પ્રાણી કદાચ તે શબ્દાદિક-વિષયોને પ્રાપ્ત કરી લે તો પણ ભોગવવામાં આવેલા તે શબ્દાદિ વિષય પરિણામમાં વિરસ થવાથી ભવિષ્યકાળમાં જીવોને ચિરકાલ સુધી દુઃખદાયી જ થાય છે. કેમ કે-“ **खणमिच्छुक्खा बहुकालदुक्खा** ” આ વિષય ક્ષણમાત્ર સુખરૂપ લાગે છે પણ અનંત દુઃખોના દેવાવાળા હોય છે, જેના માટે જીવ અનંતસંસારજનક વૈરને ઉત્પન્ન કરે છે, આ વાતને સૂત્રકાર “ **जमिणं** ” ઇત્યાદિ પદોથી સ્પષ્ટ કરીને કહે છે-સંસારમાં જીવો હિંસાદિક અનેક સાવધ વ્યાપારો કરવામાં જે પ્રવૃત્તિ કરે છે તેનું પ્રધાન કારણ એક પોતાના શરીરની પુષ્ટિ કરવાનો મોહ જ છે. આવા પ્રકારના મોહને આધીન બનેલા જીવ પોતે પોતાની જાતને અનેક કષ્ટોથી દુઃખી બનાવતાં છતાં પણ સુખી માને છે, અને

ટોકા—‘તદિત્યાદિ । યસ્માત્કામા દુઃખમૂલાઃ તત્તસ્માત્કારણાત્ યત્પૂર્વોક્તં વચ્ચમાણં વા અહં વ્રવીમિ તત્સર્વં યથાવસ્થિતં યૂયં જાનીત-’ કામભોગા હેયાઃ’
 ઇતિ મદીયોપદેશમવશ્યં ગૃણુતેત્યર્થઃ ।

નતુ ભવદુપદેશે કિં વૈલક્ષણ્યં યદુપદેશં વયં ગૃણુમઃ, અન્યોપદેશાદપિ કામ-
 નિવૃત્તિર્ભવિતુમર્હતીતિ ચેદાહ-‘ચૈકિત્સ્ય’-મિત્યાદિ, પણ્ઠિતઃ=પણ્ઠિતસ્મન્યઃ
 કેવલં શબ્દજ્ઞાની ચૈકિત્સ્યં કામચિકિત્સામુત્પન્નરોગચિકિત્સામિવ કામસેવનમેવ

હે શિષ્ય ! કામ સદા દુઃખોં કે મૂલ-કારણ હૈં, ઇસલિયે ઇસ વિષય
 મેં પહિલે જો કુછ કહા ગયા હૈ, અથવા આગે ખી જો કુછ કહા જાવેગા
 વહ સવ યથાર્થ હૈ; ઇસમેં થોડા સા ખી સંદેહ કે લિયે સ્થાન નહીં હૈ,
 ઇસા તુમ વિશ્વાસ રલો. ‘કામભોગ સદા હેય હૈં’ યહી હમારા ઉપદેશ
 હૈ. ઇસ ઉપદેશ કી પુષ્ટિ ઇસ પ્રકાર સે કામભોગોં મેં હેયતા કે પ્રદર્શન
 સે ખલીખાંતિ હો જાતી હૈ. અતઃ મોક્ષાખિલાષીજન કો ઇસ ઉપદેશ કા
 શ્રવણ કરના ચાહિયે. ઇસ પ્રકાર સે શિષ્યોં કે પ્રતિ સૂત્રકાર કા
 આદેશ હૈ. ।

પ્રશ્ન—ઇસ આપકે ઉપદેશ મેં હી ઇસી ક્યા વિલક્ષણતા હૈ જિસકે
 લિયે યહ ઉપદેશ અવશ્ય સુના જાય, અન્ય કે ઉપદેશ સે ખી કામા-
 દિક કી નિવૃત્તિ હો સકતી હૈ ? ।

ઉત્તર—જો સિર્ફ શબ્દજ્ઞાની હૈં, અપને આપકો વિદ્વાન્ માનતે હૈં

હે શિષ્ય ! કામ સદા દુઃખોંનું મૂળ કારણ છે. માટે આ વિષયમાં પહેલાં
 જે કંઈ કહેવામાં આવેલ છે અથવા આગળ પણ કહેવામાં આવશે તે સઘળું
 યથાર્થ છે. તેમા જરા પણ સંદેહનું સ્થાન નથી. એવો તમે વિશ્વાસ રાખો.
 કામભોગ સદા હેય-ત્યાન્ય છે એજ અમારો ઉપદેશ છે. આ ઉપદેશની પુષ્ટિ આ
 પ્રકારથી કામભોગોમાં હેયતાના પ્રદર્શનથી લાગી લાગી થાય છે. માટે પ્રત્યેક
 મોક્ષાર્થીએ આ ઉપદેશનું શ્રવણ કરવું જોઈએ આ પ્રકારથી શિષ્યો પ્રતિ
 સૂત્રકારનો આદેશ છે.

પ્રશ્ન—આ આપના ઉપદેશમાં એવી કંઈ વિલક્ષણતા છે જેના માટે આ
 ઉપદેશ અવશ્ય સાંભળવો પડે. ખીન્નના ઉપદેશથી પણ કામાદિકની નિવૃત્તિ
 થઈ શકે છે ?

ઉત્તર—જે રૂઝા શબ્દજ્ઞાની છે, પોતે પોત ને વિદ્વાન માને છે એવી વ્યક્તિ

સોઽપરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયાઽનર્થકામં તદ્વિપાકં ચાબુદ્ધ્વા, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા ચ તમ-
પરિત્યજ્ય ચ ક્રન્દતિ=ઇષ્ટવિષયાપ્રાપ્તૌ સ્પૃહાં, તન્નાશે શોકં ચાનુભૂયોચૈ રોદિતિ ।
કામભોગાસક્તશ્ચતુર્ગતિકસંસારે ભ્રામં ભ્રામં નરકનિગોદાદિષ્વનન્તયાતનાં પ્રાપ્નો-
તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કામકટુવિપાકમુપદર્શ્ય સામ્પ્રતમુપસંહરતિ-‘ સે તં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે તં જાણહ જમહં બેમિ, તેઙ્છં પંડિણ પવયમાણે
સે હંતા છેત્તા મેત્તા લુંપિતા વિલુંપિતા ઉદ્ધવિતા, અકલં કરિસ્સા-
મિત્તિ મન્નમાણે, જસ્સ વિય ણં કરેઙ્, અલં બાલસ્સ સંગેણં, જે વા
સે કારઙ્ બાલે, ન ઇવં અણગારસ્સ જાયઙ્-ત્તિ બેમિ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા—તત્ (તસ્માત્) તજ્જાનીત યદહં બ્રવીમિ, ચૈકિત્સયં પણ્ડિતઃ પ્રવદન્
સ હન્તા છેત્તા મેત્તા લુમ્પયિતા વિલુમ્પયિતા અપદ્રાવયિતા, અકૃતં કરિષ્યામિ-ઇતિ
મન્યમાનઃ, યસ્મૈ અપિ ચ खलુ કરોતિ, અલં બાલસ્ય સજ્ઞેન, યો વા તત્કારયતિ
બાલઃ, ન ઇવમનગારસ્ય જાયતે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥ ઇતિ બ્રવીમિ ॥

“અપરિજ્ઞાય ક્રન્દતિ”—જો વિષય-ભોગોં મેં ગૃહ્ બને હુણે હૈં વે ઇન
અર્થકામરૂપ ભોગોં કો ઓર ઇનકે વિપાક કો જ્ઞ-પરિજ્ઞા સે નહીં જાન-
કર ઓર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા સે ડનકા પરિત્યાગ નહીં કર, ઇષ્ટ વિષય
કો પ્રાપ્તિ કો ઇચ્છા સે ઓર ડસકે વિયોગ મેં શોક સે સદા આકુલ-
વ્યાકુલ બને રહતે હૈં । કામભોગોં મેં આસક્ત વે પ્રાણી ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ
સંસાર મેં બારંબાર ભ્રમણ કર નરક-નિગોદાદિ કો અનન્ત વેદનાઓં કો
પાતે રહતે હૈં । ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કામ કે કટુક વિપાક કો સ્પષ્ટકર અબ ઇસકા ઉપસંહાર કરતે
હુણે સૂત્રકાર કહતે હૈં-‘ સે તં ’ ઇત્યાદિ ।

“અપરિજ્ઞાય ક્રન્દતિ” જે વિષય ભોગોમાં ગૃહ્ બનેલા છે, તેઓ આ
અર્થકામ-રૂપ ભોગોને અને તેના વિપાકને જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી નહિ જાણીને અને
પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી તેનો પરિત્યાગ નહિ કરીને ઇષ્ટ વિષયની પ્રાપ્તિની ઇચ્છાથી
તેના વિયોગમાં શોકથી સદા આકુળ-વ્યાકુળ બની રહે છે. કામભોગોમાં આસક્ત
પ્રાણી ચતુર્ગતિ-રૂપ આ સંસારમાં વારંવાર ભ્રમણ કરી નરકનિગોદાદિની અનંત
વેદનાઓને ભોગવતા રહે છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કામના કટુક વિપાકને સ્પષ્ટ કરીને હવે તેનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર
કહે છે-‘ સે તં ’ ઇત્યાદિ.

તીર્થિકોં કા ઉપદેશ મિથ્યા ઇસલિયે હૈ કિ ઉનકે ઉપદેશ સે જીવોં કી સાવધ ક્રિયાઓં મેં પ્રવૃત્તિ હો જાતી હૈ। ઇસકા કારણ ભી યહી હૈ કિ વે સ્વયં ઉન સાવધ ક્રિયાઓં સે વિરક્ત નહીં હોતે હૈં, હનન-છેદન-ભેદન-લુમ્પન ઓર વિલુમ્પનાદિક અનેક અકૃત્યોં મેં ઉનકી પ્રવૃત્તિ બની રહતી હૈ। દણ્ડાદિક સે તાડન કરને કા નામ હનન હૈ, ઇસ ક્રિયા કે કર્તા હોને સે વે હન્તા કહે જાતે હૈં। યજ્ઞગાદિક સે વિદારણ કરને કા નામ છેદન હૈ, ભાલે વગૈરહ સે ભેદને કા નામ ભેદન, ગાંઠ વગૈરહ કે છેદનાદિક કરને કા નામ લુમ્પન ઓર આક્રમણાદિક કરને કા નામ વિલુમ્પન તથા પ્રાણાતિપાત આદિ કરને કા નામ અપદ્રાવણ હૈ। ઇન ૨ ક્રિયાઓં કે કર્તા હોને સે વે છેત્તા, ભેત્તા, લુમ્પયિતા, વિલુમ્પયિતા ઓર અપદ્રાવયિતા કહે જાતે હૈં। ઇન ૨ ક્રિયાઓં કે કરને મેં ઉનકી પ્રવૃત્તિ ઇસલિયે હોતી હૈ કિ-વે યહ વિચાર કરતે હૈં કિ કામ કી યહ ચિકિત્સા પૂર્વ મેં કિસી ને નહીં કી હૈ હમ ઇસે કરેંગે। ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા સે પ્રેરિત હોકર વે જિનકે લિયે ઉપદેશ કરતે હૈં વે ઓર સ્વયં ઉપદેષ્ટા, યે દોનોં પૂર્વોક્ત હનન ઓર છેદનાદિક વ્યાપારોં કો કરતે હૈં, ઇસલિયે કરને વાલે કરાને વાલે તથા ઉસકા અનુમોદન કરને વાલે ભી અજ્ઞાની માને ગયે હૈં। અર્થાત્ એસે જીવોં કા જ્ઞાન સિર્ફ શાબ્દિક હી હૈ।

પરતીર્થિઓનો ઉપદેશ મિથ્યા તેટલા માટે છે કે તેઓના ઉપદેશથી જીવોની સાવધ વ્યાપારોમાં પ્રવૃત્તિ થઈ જાય છે તેનું કારણ એ છે કે તેઓ પોતે તેવા સાવધ વ્યાપારોથી વિરક્ત બનેલ નથી હણવું, છેદવું, ભેદવું, લુમ્પન, અને વિલુમ્પનાદિક અનેક અકૃત્યોમાં તેઓની પ્રવૃત્તિ બની રહે છે. દંડાદિકથી તાડન કરવાનું નામ હણવું છે આ ક્રિયાનો કર્તા હોવાથી તે કર્તા હણનાર કહેવાય છે. તલવાર આદિથી વિદારણ કરવાનું નામ છેદન છે, ભાલા વિગેરેથી ભેદવું તેનું નામ ભેદન, ગાંઠ વિગેરેનું છેદવું તેનું નામ લુમ્પન અને આક્રમણાદિક કરવાનું નામ વિલુમ્પન તથા પ્રાણાતિપાત આદિ કરવાનું નામ અપદ્રાવણ છે આ બધી ક્રિયાઓનો કર્તા બનવાથી તે છેત્તા, ભેત્તા, લુમ્પયિતા, વિલુમ્પયિતા અને અપદ્રાવયિતા કહેવામાં આવે છે આવી ક્રિયાઓના કરવામાં તેઓની પ્રવૃત્તિ તેટલા માટે થાય છે કે-તે એવો વિચાર કરે છે કે આ કામની ચિકિત્સા પૂર્વમાં કોઈએ કરેલ નથી, અમે તે કરીશું આવા પ્રકારની માન્યતાથી પ્રેરિત થઈને તે જોના માટે ઉપદેશ કરે છે તે અને સ્વયં ઉપદેષ્ટા એ બન્ને પૂર્વોક્ત હનન અને છેદનાદિક વ્યાપારો કરે છે, માટે કરનાર, કરાવનાર તથા તેની અનુમોદના કરનાર પણ અજ્ઞાની માનવામાં આવે છે અર્થાત્ એવા જીવોનું જ્ઞાન ફક્ત શાબ્દિક જ છે.

अनगारस्य=द्रव्यभावागाररहितस्य परिज्ञातशब्दादिविषयकद्विपाकस्य संयतस्य एवं कामचिकित्सोपदेशदानं तत्कारणं च न जायते=न कल्पते 'इति ब्रवीमि' इति पूर्ववद् व्याख्येयम् ॥ सू० ॥ सू० ११ ॥

इत्याचाराङ्गसूत्रस्याचारचिन्तामणिटीकायां द्वितीयाध्ययनस्य
पञ्चमोद्देशः समाप्तः ॥ २-५ ॥

और न उसके कारण ही बनते हैं। "इति ब्रवीमि" इन पदों की व्याख्या पहिले की जा चुकी है ॥ सू० ११ ॥

॥ आचाराङ्गसूत्रके द्वितीय अध्ययन का
पंचम उद्देश समाप्त ॥ २-५ ॥

तेभ्य तेन कारणं यत्तु भवता नथी. "इति ब्रवीमि" आ पदोनी व्याख्या
पडेली आपवाभा आवेल छे. ॥ सू० ११ ॥

आचाराङ्गसूत्रना भील अध्ययनने।
पांचमे उद्देश समाप्त २-५.



भेदनादिसावद्यव्यापारान् करोति । यो वा तत् हननादिकं कारयति 'वा' शब्दात्तद-
नुमोदकोऽपि, बालः=अज्ञानी शब्दज्ञानमात्रावलम्बी भवति, अतो बालस्य=
एतादृशस्य कर्तुः कारयितुरनुमोदयितुरज्ञानिनः संगेन=संसर्गेण, अलं=व्यर्थम् ।
अज्ञानिनः संसर्गोऽपि सर्पसंसर्ग इव सर्वथा परिवर्जनीय इति भावः । तस्मात्पर-
तीर्थिकोपदेशः शब्दादिविषयकपायकलुपितत्वेन हननादिसावद्यक्रियासु प्रवृत्ति-
जनकतया च हेय एव, न चैतादृशो भदीयोपदेशः वीतरागभगवन्मुखात्साक्षाच्छ्रुत-
स्यैव परिकथ्यमानत्वादिति तात्पर्यम् । कस्यैव न भवतीत्याह—'नैव'—मित्यादि ।

इसलिये जिस प्रकार सर्प का संसर्ग सर्वथा त्याज्य होता है उसी प्रकार
ऐसे अज्ञानी जीवों का संसर्ग भी सदा छोड़ने योग्य शास्त्रकारों ने
बतलाया है, अतः इसे अवश्य ही छोड़ देना चाहिये । इससे यह भाव
निकलता है कि परतीर्थिकों का उपदेश शब्दादिक-विषय-कषायों से कलु-
षित होने की वजह से, तथा हननादिक सावद्यक्रियाओं में प्रवृत्ति का
जनक होने से सदा हेय-त्याज्य है । जिस प्रकार का इनका उपदेश होता
है ऐसा उपदेश मेरा नहीं है । क्योंकि यह जो उपदेश दिया गया है,
वह साक्षात् वीतराग प्रभु के मुख से ही सुना हुआ दिया गया है, मनः
कल्पित नहीं । जो द्रव्य एवं भाव दोनों प्रकार के अगार से रहित हैं,
तथा शब्दादिक विषयों के कटुक फल से परिचित हैं ऐसे संयमी मुनि
कभी भी इस प्रकार से काम की चिकित्सा का उपदेश नहीं देते हैं,

भाटे જેવી રીતે સર્પનો સંસર્ગ સર્વથા ત્યાજ્ય હોય છે, તે પ્રકારે આવા અજ્ઞાની
જીવોનો સંસર્ગ પણ સદા છોડવા યોગ્ય શાસ્ત્રકારોએ બતલાવેલ છે, માટે તેને
અવશ્ય છોડી દેવો જોઈએ. આથી સાર એ નિકળે છે કે પરતીર્થિઓનો ઉપદેશ
શબ્દાદિક-વિષય-કષાયોથી કલુષિત હોવાથી, તથા હણવું આદિ સાવધ વ્યાપારની
પ્રવૃત્તિનો જનક હોવાથી સદા હેય-ત્યાજ્ય છે. જેવી રીતે તેઓનો ઉપદેશ
હોય છે, તે પ્રકારે મારો ઉપદેશ નથી. કારણકે આ જે ઉપદેશ આપવામાં
આવેલ છે તે સાક્ષાત વીતરાગ પ્રભુના મુખથી સાંભળેલો જે છે તેજ આપવામાં
આવેલ છે. મનકલ્પિત નહિ. જે દ્રવ્ય અને ભાવ બન્ને પ્રકારના અગાર-ઘરથી
રહિત છે, તથા શબ્દાદિક વિષયોના કટુક ફળથી પરિચિત છે એવા સંયમી
મુનિ કોઈ વખત પણ આ પ્રકારથી કામની ચિકિત્સાનો ઉપદેશ દેતા નથી,

ટીકા—‘સ ત-’દિત્યાદિ । યઃ ષડ્જીવનિકાયોપઘાતજનકં ચિકિત્સોપદેશં તદાચરણં ચ ન કરોતિ સ પૂર્વોક્તરૂપોઽનગારઃ, તત્=ચિકિત્સોપદેશાદિકં સમ્બુદ્ધ્ય-માનઃ, સમ્=સમ્યક્પ્રકારેણ બુદ્ધ્યમાનઃ=જ્ઞ-પરિજ્ઞયા જ્ઞેયત્વેન, પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞયા ચ હેયત્વેન જાનાનઃ આદાનીયં=રત્નત્રયં સમુત્થાય=ગૃહીત્વા ।

યદ્વા—સઃ પૂર્વોક્તોઽનગારસ્તદાદાનીયં=જ્ઞાનાદિકં મોક્ષૈકકારણમસ્તીત્યેવં સમ્બુદ્ધ્યમાનઃ=સમ્યગ્ જાનાનઃ સમુત્થાય=સમ્યક્સંયમાચરણેનોત્થાય ‘સર્વસાવધ-વ્યાપારં ન કરિષ્યામી’-તિ પ્રતિજ્ઞાય, તં કદાપિ ન કુર્યાદિત્યાદિ । યતઃ સર્વસાવ-

જો અનગાર ષટ્કાય કે જીવોં કા વિરાધક ચિકિત્સા કે ઉપદેશ કો ઔર ઉસકે આચરણ કો નહીં કરતા હૈ એસા પૂર્વોક્ત સ્વરૂપવાલા વહ અનગાર જ્ઞ-પરિજ્ઞા સે જ્ઞેયપને ઔર પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞા સે હેયપને ઉસ ચિકિત્સોપદેશાદિક કો અચ્છી તરહ સે જાનતા હુઆ આદાનીય-રત્ન-ત્રય કો ગ્રહણ કર પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ અઠારહ પ્રકાર કે પાપકર્મોં કો કમી ખી ન કરે, ન દૂસરોં સે કરાવેં, કરને વાલે ઇવં કરાને વાલે કી અનુમોદના ખી ન કરે ।

અથવા—સૂત્રમેં આયે હુએ ‘આદાનીય’ શબ્દ કા અર્થ જ્ઞાનાદિક ખી હૈ । જિસકા અભિપ્રાય યહ હોતા હૈ કિ—“મોક્ષ કે પ્રધાનકારણ જ્ઞાનાદિક હૈ” ઇસ વાત કો અચ્છી તરહ સે જાનને વાલા વહ અનગાર “મે સમસ્ત સાવધ વ્યાપારોં કો નહીં કરુંગા” ઇસ પ્રકાર કી પ્રતિજ્ઞા કરકે અચ્છી તરહ સે સંયમ કી આરાધના કરતા હુઆ ઉસ સાવધ વ્યાપાર કો કમી ખી ન કરે । ક્યોંકિ ઇસ પ્રકાર કી જવ વહ પ્રતિજ્ઞા

જે અનગાર ષટ્કાય જીવોના વિરાધક ચિકિત્સાનો ઉપદેશ, અને તેનું આચરણ નથી કરતા, એવા પૂર્વોક્ત સ્વરૂપવાળા તે અનગાર જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી જ્ઞેયપણુ, અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી હેયપણુ, તે ચિકિત્સોપદેશાદિકને સારી રીતે જાણીને આદાનીય-રત્નત્રયને ગ્રહણ કરી પ્રાણાતિપાતાદિ રૂપ અઠાર પ્રકારના પાપ કર્મને કચારેય પણ ન કરે ન જીજ્ઞાસી કરાવે કરનાર અને કરાવનારની અનુ-મોદના પણ ન કરે

અથવા—સૂત્રમા આવેલા ‘આદાનીય’ શબ્દનો અર્થ જ્ઞાનાદિક પણ છે. જેનો અભિપ્રાય એ થાય છે કે—“મોક્ષના પ્રધાન કારણ જ્ઞાનાદિક છે.” આ વાતને સારી રીતે જાણવાવાળા તે અણુગાર “હું સમસ્ત પાપના વ્યાપારો નહીં રીશ” આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરીને સારી રીતે સંયમની આરાધના કરતા થકા । સાવધ વ્યાપારો કેઈ વખત પણ ન કરે કારણકે જ્યારે તે આવા પ્રકારની

॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य षष्ठोद्देशः ॥

अभिहितः पञ्चमोद्देशः, साम्प्रतं षष्ठ आरभ्यते । इहानन्तरोद्देशके शरीरपरि-
रक्षणाय लोकनिश्रया विहरन्नासक्तिरहितोऽनगारो लोके ममत्वं न कुर्यादित्यर्थोऽ-
भिहितः, स एवात्र प्रतिपाद्यते—‘ सेतं ’ इत्यादि ।

पूर्वोद्देशस्यान्तिमसूत्रे ‘ न ह्येवं अणगारस्स जायइ ’ संयमिन एवं न कल्पते,
इति कथितम्, तस्यैव विशदीकरणायाह—‘ से तं ’ इत्यादि ।

मूलम्—से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुट्ठाय तम्हा
पावकम्मं नेव कुज्जा न कारवेज्जा ॥ सू० १ ॥

छाया—स तत् सम्बुद्धयमान आदानीयं समुत्थाय तस्मात्पापकर्म नैव
कुर्यात् न कारयेत् ॥ सू० १ ॥

॥ आचाराङ्गसूत्रके दूसरे अध्ययनका छठा उद्देश ॥

द्वितीय अध्ययन का पंचम उद्देश संपूर्ण हुवा; अब यहां उसका
छठा उद्देश प्रारंभ किया जाता है। पंचम उद्देश में ‘ शरीर की रक्षा करने
के लिये आसक्तिरहित होकर लोक की निश्रया से संयममार्ग में विचरना
चाहिये, संयमी मुनि को लोक के साथ कभी भी ममत्व नहीं करना
चाहिये ’—यह बात कही गई है। इसी विषय की पुष्टि इस उद्देश में की
जायगी ‘ सेतं ’ इत्यादि ।

पंचम उद्देश के “ न ह्येवं अणगारस्स जायइ ” इस अन्तिम सूत्र
में “ संयमी को ऐसा नहीं कल्पता है ” जो यह कहा है उसी को विशद
करने के लिये कहते हैं—‘ से तं ’ इत्यादि ।

आचाराङ्गसूत्रना णीन अध्ययननो छठो उद्देश.

णीन अध्ययननो पांचमो उद्देश समाप्त थयो. छठे छठ्ठो उद्देशनो आरंभ
थाय छे. पांचमां उद्देशमां शरीरनी रक्षा करवा माटे आसक्ति रहित णीने
लोकेनी निश्रया संयमीये संयम मार्गमां विचरवुं जेछये. संयमी मुनिजे
लोकेनी साथे केछ वणत पणु ममत्व नहि करवुं जेछये. आ बात कहेवामां
आवेळ छे. ते विषयनी पुष्टि आ उद्देशमां करवामां आवशे.—‘ सेतं ’ इत्यादि.

पांचमां उद्देशमां “ न ह्येवं अणगारस्स जायइ ” आ अन्तिम सूत्रमां
“ संयमीने जेवुं कल्पतुं नथी. जेम कहेळ छे तेनु विशद करवाने माटे कहे
छे—‘ से तं ’ इत्यादि.

ટીકા—‘સ્યા—’ દિત્યાદિ । યઃ પુરુષઃ સ્યાત્=કદાચિત્ પ્રમાદવશેન તત્ર=પ્રાણાતિપાતાદિરૂપપાપકર્મસુ એકતરં પ્રાણાતિપાતાદિરૂપં વિપરામૃશતિ=સમારમ્ભતે, યથ્વ પદ્સુ મધ્યે અન્યતરસ્મિન્ પૃથિવીકાયાદિકે એકસ્મિન્નપિ સમારમ્ભતે સ પદ્સુ જીવનિકાયેષુ કલ્પતે=સમારમ્ભતે, યથા કુલાલશાલાયા ઉદકેન પ્લાવને એકજીવનિકાયારમ્ભે પઙ્ગજીવનિકાયારમ્ભો ભવતિ તથૈવાત્રૈકજીવનિકાયવિરાધનાયાં પઙ્ગજીવનિકાયવિરાધનાઞ્વર્યમ્ભાવિની । ઉક્તઞ્ચ—

“ જત્ય જલં તત્ય વળં, જત્ય વળં તત્ય નિસ્સિઓ અગ્ની ।

અગ્ની વાઉસહગયા, તસા ય તન્નિસિયા ચેવ ” ॥૧॥

છાયા—યત્ર જલં તત્ર વળં યત્ર વળં તત્ર નિઃશ્રિતોઽગ્નિઃ ।

અગ્નિર્વાયુસહગતસ્ત્રસાથ તન્નિઃશ્રિતાથૈવ ॥ ઇતિ ।

પ્રાણાતિપાતાદિક ૧૮ પ્રકાર કે પાપસ્થાનોં મેં સે જો કિસી એક મી પાપસ્થાન કા કરનેવાલા હોતા હૈ વહ અન્ય પાપસ્થાનોં કા મી કરનેવાલા હૈ । હસી વિષય કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—“સિયા તત્ય” ઇત્યાદિ ।

જો પુરુષ કદાચિત્ પ્રમાદ કે વશવર્તી હોકર પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોં મેં સે કિસી એક પાપ કર્મ કો કરતા હૈ, છહકાય કે જીવોં કી વિરાધના મેં સે કિસી એક કાયકે જીવોં કી વિરાધના કરતા હૈ, વહ સમસ્ત પાપકર્મોં કા, એવં છહકાય કે જીવોં કી વિરાધના કા કર્તા માના જાતા હૈ । જૈસે કુંભકાર કી શાલા કો જલ સે સીંચને પર એક જીવનિકાય કે આરંભ હોને પર પઙ્ગજીવનિકાય કા આરંભ હોતા હૈ, હસી તરહ યહાં પર મી એક જીવનિકાય કી વિરાધના મેં પટ્કાય કે જીવોં કી વિરાધના મી અવશ્ય હોતી હૈ । કહા મી હૈ—

પ્રાણાતિપાતાદિક ૧૮ અઢાર પ્રકારના પાપસ્થાનોમાંથી જે કોઈ એક પણ પાપસ્થાનના કરનાર હોય છે તે અન્ય પાપસ્થાનોના કરનાર હોય છે. આ વિષયને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—“સિયા તત્ય” ઇત્યાદિ.

જે પુરુષ કદાચિત્ પ્રમાદને વશ બની પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોમાંથી કોઈ એક પાપકર્મને કરે છે છકાય હવોની વિરાધનામાંથી કોઈ એક કાયના હવોની વિરાધના કરે છે, તેને સમસ્ત પાપકર્મોના અને છ કાય હવોની વિરાધનાનો કર્તા માનવામા આવે છે જેવી રીતે કુલારના ઘરને બલથી સીંચવાથી એક હવ નિકાયનો આરંભ થવાથી પટ્કાવનિકાયનો આરંભ થાય છે. તેવી રીતે આ ઠેકાણે પણ એક હવ નિકાયની વિરાધનામાં પટ્કાય હવોની વિરાધના પણ અવશ્ય થાય છે. કહ્યું પણ છે—

ઘવ્યાપારાકરણપ્રતિજ્ઞાકારી તસ્માત્કારણાત્ પાપકર્મ=પાપજનકત્વાત્પાપરૂપમેવ કર્મ પ્રાણાતિપાતાદિરૂપાષ્ટાદશપ્રકારકં નૈવ કુર્યાત્=ન કદાચિદપિ સમાચરેત્, ન કારયેત્ 'એવે-'ત્યસ્ય નિશ્ચયાર્થકત્વાત્ કુર્વન્તં કારયન્તં વા નાનુમોદયેત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

પ્રાણાતિપાતાદિષ્વેકં પાપકર્મ કુર્વન્નન્યસ્યાપિ કર્તા ભવતીતિ દર્શયતિ—'સિયા તત્થ ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સિયા તત્થ એગયરં વિપ્પરામુસઙ્ગહુ અન્નયરંમિ કપ્પઙ્ગ, સુહટ્ઠી લાલપ્પમાણે સણ્ણ દુક્ખેણ મૂઢો વિપ્પરિયાસ-મુવેઙ્ગ, સણ્ણ વિપ્પમાણેણ પુઢો વયં પકુવ્વઙ્ગ, જંસિમે પાણા પવ્વહિયા, પઢિલેહાણ નો નિકરણાણ્ણ એસ પરિન્ના પવુચ્ચઙ્ગ, કમ્મોવસંતી ॥ સૂ૦ ૨ ॥

જાયા—સ્યાત્તત્રૈકતરં વિપરામૃશતિ, પટ્સ્વન્યતરસ્મિન્ કલ્પતે, સુસ્વાર્થી લાલ-પ્યમાનઃ સ્વકેન દુઃસ્વેન મૂઢો વિપર્યાસપ્રપૈતિ, સ્વકેન વિપ્રમાદેન પૃથગ્વ્રતં પ્રકુરુતે, યસ્મિન્નિમે પ્રાણાઃ પ્રવ્યથિતાઃ પ્રત્યુપેક્ષ્ય નો નિકરણાય, એષા પરિજ્ઞા પ્રોચ્યતે કર્મોપશાન્તિઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

કર ચુકા હૈ તવ વહ કૈસે પ્રાણાતિપાતાદિક અઠારહ પ્રકાર કે પાપ કર્મોં કો કર સકતા હૈ । જવ નહીં કર સકતા હૈ તવ વહ ઉન પાપકર્મોં કો કરને વાલોં કી તથા ઉન્હેં કરાને વાલોં કી અનુમોદના મી કૈસે કર સકતા હૈ? અર્થાત્ નહીં કર સકતા । સૂત્ર મેં 'એવ' શબ્દ નિશ્ચય અર્થ મેં પ્રયુક્ત હૈ, અતઃ યહ નિશ્ચિત હૈ કિ અનગાર કમી મી ન સ્વયં ૧૮ અઠારહ પ્રકાર કે પાપસ્થાનોં કો કરેગા, ન કરાવેગા ઓર ન ઉન કરને-કરાને વાલોં કી કમી અનુમોદના હી કરેગા ॥ સૂ૦ ૧ ॥

પ્રતિજ્ઞા લીધેલ છે ત્યારે તે પછી પ્રાણાતિપાતાદિક અઠાર પ્રકારનાં પાપકર્મોં કેવી રીતે કરી શકે? જો નથી જ કરી શકે તો પછી તેવા પાપ કર્મોંના કરનારની તેને કરાવનારની અનુમોદના પણ કેવી રીતે કરી શકે? અર્થાત્ કરી શકતા નથી. સૂત્રમાં એવ શબ્દ નિશ્ચય અર્થમાં પ્રયુક્ત છે, માટે એ નિશ્ચિત છે કે અણુગાર કોઈ વખત પણ ૧૮ અઠાર પ્રકારના પાપસ્થાનોને કરે નહિ, કરાવે નહિ તેમજ તેઓની-કરનારાઓની અને કરાવનારાઓની અનુમોદના પણ કરે નહિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

પરિગ્રહસ્ત્ર મૈથુનં રાત્રિભોજનં ચ જાયત એવ । તતશ્ચ પદ્મસ્વન્યતરસ્મિન્ પ્રવૃત્તો જનઃ સર્વેષ્વપિ પ્રવર્તત એવ । યદ્વા-એકતરમ્=એકમપિ પાપારમ્ભં ય આચરતિ સ સર્વમપિ સમારમ્ભં કરોત્યેવ, ઉન્માર્ગપ્રવૃત્તસ્ય તસ્યૈકકરણે સર્વત્ર પ્રવૃત્તિસદ્ધાવાત્ ।

વાલા સંયમી મુનિ યદિ ઉસી પ્રત્યાખ્યાત વિષય મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ તો ઇસ પ્રકાર કી ઉસકી પ્રવૃત્તિ સે એક તો ઉસકે ગૃહીતવ્રત કા ભંગ હોતા હી હૈ, દૂસરા ઉસકા મૃષાવાદ કા દોષ ભી લગતા હૈ; ક્યોંકિ ઉસને અપની પ્રતિજ્ઞા ભંગ કરનેરૂપ મૃષાવાદ કા સેવન કિયા । જિસ જીવ કી હિંસા કરને મેં વહ પ્રવૃત્ત હો રહા હૈ ઉસ જીવને ઉસકે લિયે અપને શરીર કો ઘાત કરને કે નિમિત્ત તો દિયા નહીં હૈ, અતઃ અદત્ત કા ગ્રહીતા હોને સે ઉસકે લિયે અદત્તાદાન કા દોષ ભી લગતા હૈ । જિતને ભી સાવચકર્મ હૈં વે અપરિગ્રાહ્ય હૈં; ઉન અપરિગ્રાહ્યોં કો ગ્રહણ કરનેવાલા હોને સે ઉસે પરિગ્રહ કે ગ્રહણ કરને કા દોષ ભી લાગૂ હોતા હૈ । જહાં પર પરિગ્રહ હૈ વહાં પર મૈથુન એવં રાત્રિભોજનજન્ય દોષ ભી લગતા હી હૈ । ઇસલિયે છહ ૬ વ્રતોં મેં સે અન્ય એક ભી વ્રત કી વિરાધના કરને વાલા મુનિ સમસ્ત વ્રતોં કી વિરાધના કરતા હૈ, યહ વાત ભલીભાંતિ સિદ્ધ હો જાતી હૈ । ઇસી પ્રકાર છહ વ્રતોં મેં સે એક ભી વ્રત કા નિર્દોષ રીતિ સે પાલન કરને વાલા મુનિ અન્ય ઔર ભી વ્રતોં કા પાલક માના જાતા હૈ ।

‘હું હિંસાદિક પાપોને કરીશ નહિ’ આ પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરવાવાળા સંયમી મુનિ કદાચ તે પ્રત્યાખ્યાત વિષયમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તો આ પ્રકારની તેની પ્રવૃત્તિથી એક તો તેના લીધેલા વ્રતનો ભંગ થાય છે બીજી તેને મૃષાવાદનો દોષ પણ લાગે છે. કારણ કે તેણે પોતાની પ્રતિજ્ઞા ભંગ કરવારૂપ મૃષાવાદનું સેવન કર્યું. જે છવની હિંસા કરવામા તે પ્રવૃત્ત થઈ રહ્યા છે, તે છવે તેના માટે પોતાનું શરીર ઘાત કરવાને નિમિત્તે તો આપેલ જ નથી. માટે અદત્તનો પણ ગ્રહીતા હોવાથી તેને માટે અદત્તાદાનનો દોષ પણ લાગે છે. જેટલા પણ સાવચકર્મ છે તે અપરિગ્રાહ્ય છે. તે અપરિગ્રાહ્યોના ગ્રહણ કરવાવાળા હોવાથી તેને પરિગ્રહને ગ્રહણ કરવાનો દોષ પણ લાગુ થાય છે ન્યા પરિગ્રહ છે ત્યાં મૈથુન અને રાત્રિ ભોજનજન્ય દોષ પણ લાગે જ છે માટે છ વ્રતોમાંથી અન્ય એક પણ વ્રતની વિરાધના કરવાવાળા મુનિ સમસ્ત વ્રતોની વિરાધના કરે છે આ વાત ભલીભાંતિ સિદ્ધ થઈ જાય છે. તે પ્રકારે છ વ્રતોમાંથી એક પણ વ્રતને નિર્દોષ રીતિથી ન કરવાવાળા મુનિ અન્ય બીજા પણ વ્રતોના પાલક માનવામાં આવે છે.

एवं षट्सु व्रतेष्वाद्यव्रतविराधनायां षण्णामपि व्रतानां विराधना भवति, तद्यथा—संयमी प्राणातिपाते प्रवृत्तिं कुर्वन् हिंसादिदोषं स्पृशति, तेन प्रतिज्ञाभङ्गजन्यो मृषावादः । उक्तञ्च—

“न करेमिच्छि भणित्ता, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।

पच्चक्खमुसावाई, मायानियडीपसंगो य ।” इति ।

छाया—न करोमीति भणित्वा, तदेव निषेवते स तु ।

प्रत्यक्षमृषावादी, मायानिकृतिप्रसङ्गश्च ॥

कश्चिज्जीवं घ्नतो घातयतो वा स जीवो नैव स्वशरीरं तस्मै हननाय नादात्, अतोऽदत्तादानमपि । सर्वं सावद्यं कर्मापरिग्राह्यं, तस्य ग्रहणात्परिग्रहोऽपि । यत्र

“जत्थ जलं तत्थ वणं, जत्थ वणं तत्थ निस्सिओ अग्गी ।

अग्गी वाउसहगया, तसा य तन्निस्सिया चेव ॥ १ ॥” इति ।

“जहां जल है वहां वनस्पति है, जहां वनस्पति है वहां उसके निश्चित अग्नि होती है, जहाँ अग्नि होती है वहां वायुकाय है, जहां वायुकाय है वहां त्रसकाय नियम से होते हैं ॥ १ ॥” इसी प्रकार छह व्रतों में से प्रथम व्रत की विराधना होने पर छही व्रतों की विराधना होती है। संयमी जब प्राणातिपात में प्रवृत्ति करता है उस समय हिंसादिदोषजन्य पाप का भागी होता हुआ प्रतिज्ञाभंगजन्य मृषावाद का भागी होता है। कहा भी है—

“न करेमिच्छि भणित्ता, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।

पच्चक्खमुसावाई, मायानियडीपसंगो य ॥ १ ॥” इति ।

‘मैं हिंसादिक पापों को नहीं करूँगा’ इस प्रकार की प्रतिज्ञा करने

“जत्थ जलं तत्थ वणं, जत्थ वणं तत्थ निस्सिओ अग्गी ।

अग्गी वाउसहगया, तसा य तन्निस्सिया चेव ” ॥१॥ इति ।

“જ્યાં જળ છે ત્યાં વનસ્પતિ છે. જ્યાં વનસ્પતિ છે ત્યાં તેને નિશ્ચિત અગ્નિ હોય છે. જ્યાં અગ્નિ છે ત્યાં વાયુકાય છે, જ્યાં વાયુકાય છે ત્યાં ત્રસકાય નિયમથી થાય છે ॥ ૧ ॥” આ પ્રકાર છ વ્રતોમાંથી પ્રથમ વ્રતની વિરાધના હોવાથી છ વ્રતોની વિરાધના થાય છે. સંયમી જ્યારે પ્રાણાતિપાતમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તે વખતે હિંસાદિ દોષજન્ય પાપનો ભાગી બનતો થકો પ્રતિજ્ઞાભંગજન્ય મૃષાવાદનો ભાગી થાય છે. કહ્યું પણ છે—

“ન करेमिच्छि भणित्ता, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।

पच्चक्खमुसावाई, मायानियडीपसंगो य ” ॥ १ ॥ इति ।

શાન્તયે વાયુકાયમ્, આહારાદ્યથં વનસ્પતિકાયં, કાષ્ઠાદિનિઃશ્રિતં ત્રસકાયં ચ વિરાધયન્ સ્વકેન સ્વકૃતકર્મજનિતેન પૂર્વભવે જ્ઞાનાવરણીયાદ્યધિકર્મરૂપં દુઃસ્વ-તસ્વીજં તથોક્તવાન્ યથાઽસ્મિન્ ભવે સ દુઃસ્વતરુઃ પ્રરોહત્યેવ । તાદૃશેન દુઃસ્વેન શારીરિકમાનસિકેન મૂઢઃ=વ્યાકુલિતઃ પરમાર્થમજાનન્ હિતાહિતપ્રાપ્તિપરિહાર-વિકલઃ વિપર્યાસઘ્રુપૈતિ પ્રાણિષીડનાદિકં સાવધવ્યાપારમાચરન્ સુખસ્ય વિપરીતં દુઃસ્વમેવ ફલં પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ ।

યદ્વા—અલ્પસુખદં સાવધાનુષ્ઠાનમનુતિષ્ઠન્, સુખસ્થાનેઽનન્તકાલિકં શારીરિક-માનસિકદુઃસ્વમેવ પ્રાપ્નોતીતિ ભાવઃ । પુનરપ્યાહ—‘સ્વકેને—’ત્યાદિ । સ્વકેન=અથવા સ્વેતી આદિ કી રક્ષા કરને કે લિયે અગ્નિ કા સહારા લેતા હૈ, ઇસમેં અગ્નિકાયિક એવં ઉસે પ્રજ્વલિત કરને કે લિયે વનસ્પતિકાય તથા ઉસમેં રહે હુએ ત્રસકાય જીવોં કી ખી વિરાધના કરતા હૈ, ગર્મીજન્ય સંતાપ કે શમન કે લિયે વાયુકાય કે જીવોં કા ખી ઘાત કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર યહ જીવ પટ્કાય કે જીવોં કી વિરાધના કરતા હુઆ તજ્જન્ય પાપ-કર્મોં કે ઉદય સે દુઃસ્વિત વન હિતાહિત કે વિવેક સે વિકલ હોકર સદા વિપર્યાસ—મિથ્યાત્વ કો ગ્રાસ કરતા હૈ । જીવ પૂર્વભવ મેં જિસ પ્રકાર કે તીવ્ર, મન્દ, મધ્યમાદિ પરિણામોં સે જ્ઞાનાવરણીયાદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કો બાંધતા હૈ ઉસી પ્રકાર સે ઉનકા ફલ ખી ઉસી અવ મેં અથવા આગામી ભવ મેં ભોગતા હૈ, યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ । દુઃસ્વ ભોગના ખી ઇન્હીં કર્મોં કે ઉદયા-ધીન હૈ । જિસ પ્રકાર વિના બીજ કે વૃક્ષ નહીં હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર વિના

જીવોની વિરાધના કરે છે. રસોઇ આદિ બનાવવા માટે અથવા ખેતી આદિની રક્ષા કરવા માટે અગ્નિનો આશ્રય લે છે, તેમાં અગ્નિકાયિક અને તેને પ્રજ્વલિત કરવા માટે વનસ્પતિકાય તથા તેમાં રહેલા ત્રસકાય જીવોની પણ વિરાધના કરે છે. ગર્મીજન્ય સંતાપને શમાવવા માટે વાયુકાયના જીવોનો પણ ઘાત કરે છે. આ પ્રકાર આ જીવ પટ્કાય જીવોની વિરાધના કરતાં તજ્જન્ય પાપકર્મોના ઉદયથી દુષિત બની હિતાહિતના વિવેકથી વિકલ બનીને સદા વિપર્યાસ—મિથ્યાત્વને ગ્રાસ કરે છે જીવ પૂર્વભવમાં જેવા પ્રકારે તીવ્ર, મન્દ, મધ્યમાદિ પરિણામોથી જ્ઞાનાવરણીયાદિ આઠ પ્રકારના કર્મોને બાંધે છે તે પ્રકારે તેનું ફળ પણ તે ભવમાં અથવા આગામી ભવમાં ભોગવે છે, એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે દુષ્ણ ભોગવવું પણ તેના કર્મોના બાંધીન છે. જે પ્રકારે બીજ વિના વૃક્ષ થતું નથી તે પ્રકારે અશુભ કર્મોદય વિના પણ જીવોને ગ્રાસ થતું નથી. પરભવના બાંધેલા કર્મ આગામી ભવમાં પણ

કિમર્થમયં પાપકર્મણિ પ્રવર્તતે ? इत्याह—‘सुखार्थी—’त्यादि । सुखार्थी=पौद्गलिक-सुखाभिलाषी लालप्यमानः=अत्यर्थं मुहुर्मुहुर्वा लपतीति लालप्यमानः, सुखार्थमुन्मत्तवन्मोहवशेन यद्वा तद्वा मुहुर्मुहुर्ब्रुवन्, नानाप्रकारान् धावनवल्गनादिकान् व्यापारान् विदधत्, सुखकारणानि च चेतसि चिन्तयन्, कृष्यादिव्यापारैः पृथिवी-कायमुपमर्दयन्, तत्सेचनाद्यर्थमप्कायं, पाकाद्यर्थं तैजसकायं, ग्रीष्मसन्तापोप-

અથવા—કિસી એક મી પાપારમ્મ કા જો આચરણ કરતા હૈ વહ અન્ય સમસ્ત પાપારમ્મોં કા આચરણ કરનેવાલા હોતા હી હૈ; ક્યોંકિ જિસકી પ્રવૃત્તિ ઉન્માર્ગ મેં ચાલૂ હૈ વહ યદિ એક મી પાપારમ્મ કો કરતા હૈ તો ઉસ એક કે કરને મેં અન્ય સવ પાપારમ્મ કે કરને કા સદ્ભાવ આ હી જાતા હૈ ।

પાપકર્મ મેં પ્રવૃત્તિ હોને કા કારણ એક કેવલ ઉસકી પૌદ્ગલિક સુખ પ્રાપ્ત કરને કી અભિલાષા હી હૈ । અતઃ સુખાર્થી હોને કે કારણ સે હી ઇસકી પ્રવૃત્તિ પાપકાર્યોં મેં હોતી હૈ । જિસ પ્રકાર ઉન્મત્ત પ્રાણી નશા કે આવેશ સે યદ્વા-તદ્વા બારંબાર બોલતા હૈ ઓર વ્યર્થ મેં ઇધર-ઉધર દોડતા ફિરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર યહ મી મોહ કે આવેશ સે યદ્વા-તદ્વા બારંબાર બોલતા હુઆ અનેક પ્રકાર કી યહાં સે વહાં દોડ-ધૂપ કિયા કરતા હૈ, ‘મુજે ઇન કામોં કે કરને સે સુખ પ્રાપ્ત હોગા’ ઇસ પ્રકાર કી વિચારધારા સે પ્રેરિત હોકર કૃષિ આદિ અનેક પૃથિવીકાયિક જીવોં કે ઉપમર્દન કરને વાલે વ્યાપારોં કો કરતા હૈ, ઉસકે સિંચન કે લિયે અપ્કાય જીવોં કી વિરાધના કરતા હૈ, રસોઈ આદિ બનાને કે લિયે

અથવા—કોઈ એક પણ પાપારમ્મનો જે આચરણ કરે છે તે અન્ય સમસ્ત પાપારમ્મોનું આચરણ કરવાવાળા હોય જ છે. કારણ કે જેની પ્રવૃત્તિ ઉન્માર્ગમાં લાગેલી છે તે કદાચ એક પણ પાપારમ્મ કરે તો તે એક કરવામાં અન્ય બધા પાપારમ્મ કરવાનો સદ્ભાવ આવી જ બાય છે.

પાપકર્મમાં પ્રવૃત્તિ હોવાનું કારણ એક કેવળ તેની પૌદ્ગલિક સુખ પ્રાપ્ત કરવાની અભિલાષા જ છે. અતઃ સુખાર્થી હોવાના કારણથી જ તેની પ્રવૃત્તિ પાપ કાર્યોમાં થાય છે. જેવી રીતે ઉન્મત્ત પ્રાણી નશાના આવેશથી જેમ તેમ વારંવાર બોલે છે અને વ્યર્થમાં અહીં તહીં દોડતા ફરે છે, તે પ્રકારે તે પણ મોહના આવેશથી જેમ તેમ વારંવાર બોલતાં અનેક પ્રકારની ત્યાંથી અહીં અને અહીંથી ત્યાં દોડધામ કરતા રહે છે. ‘મને એ કામો કરવાથી સુખ પ્રાપ્ત થશે’ આવા પ્રકારની વિચારધારાથી પ્રેરિત થઈને કૃષિ આદિ અનેક પૃથિવીકાયિક જીવોનું ઉપમર્દન કરવાવાળા વ્યાપારોને કરે છે, તેના સિંચન માટે અપકાય

इसी प्रकार जो अपने द्वारा उपार्जित मद्यादि पांच प्रकार के प्रमाद के वशवर्ती होकर जिनोक्त छह प्रकार के व्रतों का पालन छिन्न-भिन्नरूप से करते हैं, अथवा जिन भगवानने इन व्रतों के पालन करने की जो विधि बतलाई है उस विधि-विधान से विपरीत विधि-विधान को लेकर जो व्रतों का आराधन करते हैं, अथवा जिनशासनप्रतिपादित व्रतों से विपरीत व्रतों को जो पालते हैं, वे संसार में परिभ्रमण किया करते हैं। संयमी के लिये छह व्रतों का पालन आवश्यक बतलाया है, वह यदि पांच प्रकार के प्रमाद में पतित होकर अपनी इच्छानुसार प्रथम व्रत का आचरण करे और द्वितीय का आचरण न करे तथा तृतीय का आचरण करे अन्य का नहीं; तो इस प्रकार के व्रताराधन से उसके संसार के बंधन का अन्त नहीं आ सकता। अतः व्रतों के पालन करने की विधि जिस प्रकार शास्त्रों में वर्णित है उसी विधि से व्रतों की आराधना करनी चाहिये। जिन व्रतों का पालन संयमी के लिये बतलाया गया है उनके सिवाय यदि वह अन्य व्रतों की आराधना करता है तो इस प्रकार की उसकी स्वच्छंदवृत्ति उसके भव का अन्त करने वाली न होकर उल्टी उसके अनन्त संसार की बढ़ाने वाली ही होगी; क्यों कि इस प्रकार की निजमान्यता में वीतराग प्रभु की आज्ञा का भंग होता है। यह

આ પ્રકારે જે પોતાના દ્વારા ઉપાર્જિત મદ્યાદિ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદને વશ બનીને જીનોક્ત છ પ્રકારના વ્રતોના પાલનને છિન્નભિન્ન રૂપમાં કરી નાંખે છે. અથવા જિન ભગવાને આ વ્રતોના પાલન માટે જે વિધિ બતાવી છે તે વિધિ-વિધાનથી વિપરીત વિધિ-વિધાન લઈને જે વ્રતોનું આરાધન કરે છે, અથવા જિન શાસન પ્રતિપાદિત વ્રતોથી વિપરીત વ્રતોને જે પાળે છે તે સંસારમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે સંયમી માટે છ વ્રતોનું પાલન આવશ્યક બતાવ્યું છે, તે કદાચ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદમાં પતિત થઈને પોતાની ઇચ્છાનુસાર પ્રથમ વ્રતનું આચરણ કરે અને બીજાનું આચરણ ન કરે, તથા ત્રીજાનું આચરણ કરે અન્યનું નહિ. તો આ પ્રકારના વ્રતારાધનથી તેના સંસારના બંધનનો અંત આવી શકતો નથી. માટે વ્રતોના પાલન કરવાની વિધિ જે પ્રકારે શાસ્ત્રોમાં વર્ણિત છે તેવી વિધિથી વ્રતોની આરાધના કરવી જોઈએ. જે વ્રતોનું પાલન સંયમી માટે બતાવ્યું છે તેના સિવાય કદાચ તે અન્ય વ્રતોની આરાધના કરે છે તો આવા પ્રકારની તેની સ્વચ્છંદવૃત્તિ તેના ભવનો અંત કરવાવાળી નથી બનતી ઉલ્ટી તેને અનંત સંસાર વધારવા-વાળી થશે, કારણ કે આ પ્રકારની તેની માન્યતામાં વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાનો

નિજાજિતેન વિપ્રમાદેન વિ=વિવિધેન પશ્ચપ્રકારેણ પ્રમાદેન પૃથક્ જિનોક્તેષુ વટ્સુ વ્રતેષુ છિન્નભિન્નરૂપેણ જિનશાસનોક્તવિપરીતં વા વ્રતં પ્રકુરુતે ।

इदमत्र तत्त्वम्—वट्सु व्रतेषु प्रथमस्यांचरणे द्वितीयस्यानाचरणं, तृतीयस्य चाचरण—मित्येवं छिन्नभिन्नरूपेण व्रतकरणम् ।

અશુભ કર્મોદય કે દુઃખ મી જીવોં કો પ્રાપ્ત નહીં હોતા । પરમવ કે બાંધે હુએ કર્મ અગામી ભવ મેં મી ઉદય મેં આતે રહતે હૈં । ઇસીલિયે જીવ ઉન અશુભ કર્મોદયજન્ય દુઃખોં સે હિતાહિત કે વિવેક સે રહિત હોકર વ્યથિત હોતા રહતા હૈ । કમી શારીરિક કષ્ટોં કા અનુભવ કરતા હૈ તો કમી માનસિક પીડા સે દુઃખી હોતા રહતા હૈ । વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ સે અજાન બનકર “સાવધ વ્યાપારોં કે આચરણ સે હી મૈ સુખી હોઝંગા” ઇસ પ્રકાર કી અપની વિપરીત કલ્પના સે સુખ કે સ્થાન મેં દુઃખ કો હી પ્રાપ્ત કરતા રહતા હૈ । અથવા—સાવધ વ્યાપારોં કા કરના સદા સુખદાયી નહીં હોતા । અપની આવશ્યકતા કી પૂર્તિ હોને પર જીવોં કો ઉસકી પૂર્તિજન્ય કાલ્પનિક અલ્પસુખ ભલે હી મિલ જાવે પરંતુ વહ સદા સ્થાયી નહીં । જિસ સુખ કી આશા સે ઇન સાવધ વ્યાપારોં મેં જીવ પ્રવૃત્તિ કિયા કરતે હૈં ઉનસે તો ઉન્હેં ઉલ્ટે ઉસ સુખ કે સ્થાન મેં અનન્તકાલ તક ભોગને યોગ્ય શારીરિક ંવ માનસિક દુઃખ હી પ્રાપ્ત હોતે હૈં । ંસા સમજકર સંયમી કો કમી મી કિસી મી પ્રાણાતિપાતાદિક મેં પ્રવૃત્તિ નહીં કરના ચાહિયે ।

ઉદયમાં આવે છે, માટે જીવ એ અશુભ કર્મોદયજન્ય દુઃખથી હિતાહિતના વિવેકથી રહિત થઈને વ્યથિત થતા રહે છે. કોઈ વખત શારીરિક કષ્ટોનો અનુભવ કરે છે તો કોઈ વખત માનસિક પીડાથી દુઃખી થતા રહે છે. વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિથી અજાણ બનીને “સાવધ વ્યાપારોના આચરણથીજ હું સુખી થઈશ” એવા પ્રકારની પોતાની વિપરીત કલ્પનાથી સુખના સ્થાને દુઃખને જ પ્રાપ્ત કરે છે. અથવા—સાવધ વ્યાપારોનું કરવું સદા સુખદાયી થતું નથી. પોતાની આવશ્યકતાની પૂર્તિ થવાથી જીવોને તેની પૂર્તિજન્ય કાલ્પનિક અલ્પ સુખ ભલે મળી જાય પરંતુ તે સદા સ્થાયી નહિ. જે સુખની આશાથી આ સાવધ વ્યાપારોમાં જીવ પ્રવૃત્તિ કરે છે, તેનાથી તો તેને ઉલ્ટા તે સુખના સ્થાનમાં અનન્ત કાળ સુધી ભોગવવા યોગ્ય શારીરિક અને માનસિક દુઃખ જ પ્રાપ્ત થાય છે. એવું સમજીને સંયમીએ કોઈ વખતે પણ કોઈ પણ પ્રાણાતિપાતાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવી બેધએ નહિ.

તત્ર જન્તવઃ વિલક્ષ્યન્ત ઇત્યાહ—‘ યસ્મિ—’ ત્રિત્યાદિ । યસ્મિન્નિજાર્જિતપ્રમાદ-
જન્યઋદુર્કર્મકે, ભવોપગ્રાહિચતુર્ગતિકે સંસારેઽવસ્થાવિશેષે વા, ઇમે=પ્રત્યક્ષનિર્દિષ્ટાઃ
પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ પ્રવ્યથિતાઃ=વહુવિધવ્યસનસમ્પાતેન પીડિતા ભવન્તિ । તતઃ કિં
કુર્યાદિત્યાહ—‘ પ્રત્યુપેક્ષ્યે ’—ત્યાદિ । તદેતત્સર્વં સ્વકૃતકર્મવિપાકેન વિવિધપ્રમાદેન
વા પ્રાણિનાં પ્રવ્યથનં પ્રત્યુપેક્ષ્ય=સમાલોચ્ય નિકરણાય—નિતરાં ક્રિયન્તે નાનાદુઃસ્વા-
વસ્થાયન્તો જન્તવો યેન તન્નિકરણં દુઃસ્વોત્પાદનં, યેન કર્મણા પ્રાણિનો દુઃસ્વનિવહ-
મનુભવન્તિ તત્કર્મ નિકરણં, તસ્મૈ=તદર્થ—કર્મ ન કુર્યાત્, પ્રાણિપીડાજનકં કર્મ સર્વથા
દારિદ્ર્ય ઓર દૌર્ભાગ્યાદિરૂપ અવસ્થાઈં હોતી હૈં । પ્રમાદ કા કારણ કર્મ હૈં
ઓર પ્રમાદ ઉસકા કાર્ય હૈં । ઇન દોનોં મેં અભેદ સંબંધ સે યહ અર્થ ઘટિત
હો જાતા હૈં । અર્થાત્ જીવોં કી એકેન્દ્રિયાદિક તથા કલલ અર્બુદાદિરૂપ એવં
દારિદ્ર્ય-દૌર્ભાગ્યાદિરૂપ અવસ્થાઈં કર્મકૃત માની જાની હૈં । પરન્તુ જો
યહાં પર પ્રમાદકૃત ઉન્હેં બતલાયા ગયા હૈં ઉસકા કારણ પ્રમાદ મેં ઉસકે
કારણભૂત કર્મ કા અભેદ-સંબંધ માનકર હી પ્રકટ ક્રિયા ગયા હૈં । ઇસ
પ્રકાર પ્રમાદજન્ય ઇન અવસ્થાવિશેષોં મેં, અથવા ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ
સંસાર મેં યે સમસ્ત પ્રાણી અનેક પ્રકાર કે કષ્ટોં કે પડને સે રાતદિન
પીડિત હોતે રહતે હૈં । ઇસાલિયે જીવોં કી સ્વકૃત કર્મ કે વિપાક સે
અથવા અનેક પ્રકાર કે પ્રમાદ સે દુઃસ્વિત અવસ્થાઓં કા અચ્છી પ્રકાર
વિચાર કર સંયમી મુનિ કો પ્રાણિપીડાજનક કાર્ય સર્વથા છોડ દેના
ચાહિયે । અનેક પ્રકાર કી અવસ્થાઓં સે યુક્ત પ્રાણી જિસકે દ્વારા ક્રિયે
જાતે હૈં, એસે દુઃસ્વોં કો ઉત્પાદન કરનેવાલે કાર્યોં સે જીવ સદા દુઃસ્વોં
કી પરંપરા કા હી અનુભવ કરતે રહતે હૈં । એસે કાર્ય સંયમી મુનિ કો

દ્રવ્ય અને દુર્ભાગ્યાદિરૂપ અવસ્થાઓ થાય છે પ્રમાદનુ કારણ કર્મ છે અને પ્રમાદ
તેનુ કાર્ય છે. આ બન્નેમાં અભેદ સળધથી તેવો અર્થ ઘટિત થઇ બાક છે
અર્થાત્ જીવોની એકેન્દ્રિયાદિક તથા કલલ અર્બુદાદિરૂપ અવસ્થાઓ કર્મકૃત માન-
વામાં આવે છે, પરન્તુ જે તેને આ જગ્યાએ પ્રમાદકૃત બતાવેલ છે તેનું
કારણ પ્રમાદમા તેના કારણભૂત કર્મનો અભેદ-સળધ માનીને જ પ્રગટ કરવામાં
આવેલ છે. આ પ્રકાર પ્રમાદજન્ય આ અવસ્થા-વિશેષોમાં અથવા ચતુર્ગતિરૂપ
આ સંસારમા એ સમસ્ત પ્રાણી અનેક પ્રકારના કષ્ટો પડવાથી રાતદિન પીડિત
થયા કરે છે. માટે જીવોના સ્વકૃત કર્મના વિપાકથી અથવા અનેક પ્રકારના
પ્રમાદથી દુખિત અવસ્થાઓનો આરી રીતે વિચાર કરી સંયમી મુનિએ પ્રાણિ
પીડાજનક કાર્ય સર્વથા છોડી દેવું જોઇએ. અનેક પ્રકારની દુખિત અવસ્થાઓથી

યદ્વા-‘વયં’ ઇત્યસ્ય ‘વય-’મિતિચ્છાયા, તત્ર વયન્તિ=પરિભ્રમન્તિ જન્તવઃ સ્વેન કર્મણા યસ્મિન્ સ વયઃ સંસારસ્તં પ્રકુરુતે-સંસારે પરિભ્રમતીત્યર્થઃ ।

અથવા ‘વયઃ’ ઇતિચ્છાયા, કારણસ્ય-જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણઃ કાર્યેણ-પ્રમાદેન સહાભેદાત્ સ્વકેન વિપ્રમાદેન=નિજાર્જિતેનાનેકવિધેન મઘાદિરૂપપ્રમાદજનકેન કર્મણા વયઃ=અવસ્થાવિશેષમેકેન્દ્રિયાદિકં, પંચેન્દ્રિયેષુ કલલાર્બુદાદિરૂપં, દારિદ્ર્ય-દૌર્ભાગ્યાદ્યાત્મકં ચ પ્રકુરુતે ।

ભંગ હી મહાન્ અનર્થ કા ઓર ભવ કી અનન્ત પરંપરા કા બઢાનેવાલા કારણ માના ગયા હૈ ।

અથવા-જો સંયમી પાંચ પ્રકાર કે પ્રમાદોં કા આસેવન કરતા હૈ વહ અપને સંસાર કો બઢાતા હૈ, યહ બી “વયં પકુવ્વહ” ઇસ પદ સે પ્રકટ હોતા હૈ । “વયં” ઇસકી છાયા “વ્રતં” જબ હોતી હૈ તબ પૂર્વોક્ત-રૂપ સે ઉસકા અર્થ સંગત હોતા હૈ । પરન્તુ જબ “વયં” ઇસકા અર્થ “વયન્તિ=પરિભ્રમન્તિ જન્તવઃ સ્વેન કર્મણા યસ્મિન્ સ વયઃ” ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર કિયા જાવેગા તો ઉસકા અર્થ સંસાર હોગા; ક્યોંકિ પ્રાણી અપને ઉપાર્જિત કર્મોં કે દ્વારા સંસાર મેં હી પરિભ્રમણ કરતે રહતે હૈં ।

અથવા—“વયં” કી છાયા “વયઃ” જબ હોગી તબ ઇસકા યહ બી અર્થ હોગા કિ નિજાર્જિત મઘાદિકરૂપપ્રમાદજનક કર્મ સે એકેન્દ્રિયાદિક-રૂપ અવસ્થાઈ, તથા પંચેન્દ્રિયોં મેં ગર્ભ કે અન્દર કલલ અર્બુદાદિરૂપ, તથા

ભંગ થાય છે તે ભંગ જ મહાન અનર્થનો, અને ભવની અનંત પરંપરાને વધારવાના કારણ રૂપ બને છે.

અથવા—જે સંયમી પાંચ પ્રકારના પ્રમાદોનું આસેવન કરે છે તે પોતાના સંસારને વધારે છે તે પણ “વયં પકુવ્વહ” એ પદથી પ્રગટ થાય છે. “વયં” તેની છાયા “વ્રતં” જ્યારે હોય છે ત્યારે પૂર્વોક્ત રૂપથી તેનો અર્થ સંગત થાય છે. પરંતુ જ્યારે “વયં” તેનો અર્થ “વયન્તિ=પરિભ્રમન્તિ જન્તવઃ સ્વેન કર્મણા યસ્મિન્ સ વયઃ” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર કરવામાં આવે તો તેનો અર્થ સંસાર થશે; કારણ કે પ્રાણી પોતાના ઉપાર્જિત કર્મો દ્વારા સંસારમાં જ પરિભ્રમણ કરતા રહે છે.

અથવા “વયં”ની છાયા “વયઃ” જ્યારે થશે ત્યારે તેનો એ પણ અર્થ થશે કે પોતાના ઉપાર્જિત મઘાદિકરૂપ પ્રમાદજનક કર્મથી ભ્રવોની એકેન્દ્રિયાદિક રૂપ અવસ્થાઓ, તથા પંચેન્દ્રિયોના ગર્ભની અંદર કલલ અર્બુદાદિરૂપ, તથા દારિ-

શારીરિક-માનસિક-દુઃખોત્પાદનકારણં મમત્ત્વબુદ્ધિરેવ, તન્નિવૃત્ત્યા મુનિર્ભવ-
તીતિ દર્શયતિ—‘ જે મમાઇયમઇં ’ इत्यादि ।

મૂલમ—જે મમાઇયમઇં જહાઇ, સે ચયઇ મમાઇયં,

સે હુ દિટ્ઠપહે મુળી, જસ્સ નત્થિ મમાઇયં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—યો મમાયિતમતિં જહાતિ સ ત્યજતિ મમાયિતમ્ । સ હુ દૃષ્ટપથો મુનિ-
ર્યસ્ય નાસ્તિ મમાયિતમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—‘ યો મમાયિતમતિ ’—મિત્યાદિ । યઃ પરિગ્રહજન્યકટુવિપાકજ્ઞો
‘ મમાયિતમતિં ’ મમેત્યેવંરૂપો મમાયિતઃ પરિગ્રહસ્તસ્ય મતિર્મમાયિતમતિસ્તાં મમા-
યિતમતિં જહાતિ=ત્યજતિ, સ એવ મમાયિતં દ્રવ્યતઃ પુત્રકલત્રહિરણ્યસુવર્ણૈશ્વર્યા-

શારીરિક એવં માનસિક દુઃખોં કી ઉત્પત્તિ કા કારણ એક મમત્ત્વ-
બુદ્ધિ હી હૈ । ઉસકા જવતક પરિહાર નહીં કિયા જાવેગા તવતક વાસ્ત-
વિક મુનિપના નહીં આસકતા હૈ । ઇસલિયે મુનિ હોને કે લિયે ઉસકી
નિવૃત્તિ હોના આવશ્યક હૈ । ઇસ વાત કો દિખાતે હુએ સૂત્રકાર કહતે
હૈ—‘ જે મમાઇયમઇં ’ इत्यादि ।

જો યહ સમજ્ઞતા હૈ કિ ‘ પરિગ્રહ કા સંગ્રહ મહાદુઃખદાયી હૈ, તથા
ઇસકા ફલ ‘મી કટુક હી હૈ’ વહ કમી મી પરિગ્રહ કે ઉપાર્જન કરનેમેં
નહીં ફેસતા હૈ, તથા જો ઇસ વાત કો મી મલીમાંતિ જાન ચુકા હૈ કિ
‘ પરિગ્રહ માત્ર હી દુઃખપ્રદ એવં પરિણામ મેં અનેક અનર્થો કા મૂલ
હૈ’ વહ તો ઉસ પરિગ્રહ કી અભિલાષા તક મી નહીં કરતા હૈ,
ચાહે વહ દ્રવ્ય સે પુત્ર, કલત્ર, હિરણ્ય, સુવર્ણ, ऐश्वर्यादिरूप પરિગ્રહ હો,

શારીરિક અને માનસિક દુઃખોની ઉત્પત્તિનું કારણ એક મમત્ત્વ-બુદ્ધિ જ
છે. તેનો જ્યાં સુધી પરિહાર નહિ કરવામા આવે ત્યાં સુધી વાસ્તવિક મુનિપણું
આવી શકતું નથી. માટે મુનિ હોવાથી તેની નિવૃત્તિ આવશ્યક છે. એ વાતને
દેખાડીને સૂત્રકાર કહે છે—‘ જે મમાઇયમઇં ’ इत्यादि.

જે એમ સમજે છે કે ‘ પરિગ્રહનો સંગ્રહ મહા દુઃખદાયી છે, તથા તેનું
ફળ પણ કટુ જ છે ’ તે કોઈ વખત પણ પરિગ્રહનો ઉપાર્જન કરવામા ફેસતા
નથી, તથા જે આ વાતને ભલીભાતિથી જાણે છે કે ‘ પરિગ્રહમાત્ર દુઃખપ્રદ અને
પરિણામમાં અનેક અનર્થોનું મૂળ છે ’. તે તો તે પરિગ્રહની અભિલાષા સુધાં
કરતા નથી, ભલે તે દ્રવ્યથી પુત્ર, કલત્ર, હિરણ્ય, સુવર્ણ, ऐश्वर्यादिरूप પરિગ્રહ

વર્જયેદિત્યર્થઃ । તતોઽપિ કિમિત્યાહ ‘એપે’-ત્યાદિ । એપા=પૂર્વોક્તા સર્વારંભ-
નિવૃત્તિરૂપા પરિજ્ઞા=તત્ત્વવિચારણા જ્ઞપ્રત્યાખ્યાનરૂપા પ્રોચ્યતે=પ્રકર્ષેણ ઉચ્યતે=
કથ્યતે મયા । સર્વારંભપરિત્યાગે કિમિત્યાહ-‘કર્મોપશાન્તિ-’રિતિ । કર્મોપશા-
ન્તિઃ=કર્મણામષ્ટવિધાનામુપશાન્તિઃ=ઉપશમઃ કર્મક્ષયો વા ભવતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

સદા છોડ દેના चाहिये । इस प्रकार के कार्यों के परित्याग से आठ
कर्मों की उपशान्ति-उपशम अथवा उनका क्षय होता है । इस प्रकार
से यहां पर जो संयमी मुनि के लिये सार्वभौमनिवृत्तिरूप ज्ञपरिज्ञा और
प्रत्याख्यानपरिज्ञा कही गई है, उसका कारण यही है कि संयमी मुनि
अपनी प्रवृत्ति को प्रमाद से सदा सुरक्षित रखे । प्रमाद करने से नवीन
कर्मों का बन्ध और उससे फिर प्रमाद इस प्रकार की परस्पर में कार्य-
कारणभावकी परंपरा चलती है, जिससे संयमी अपने लक्ष्य की सिद्धि
से वंचित रहता है । अतः वह अपने लक्ष्य की सिद्धि करने के लिये
ग्रहण किये हुए संयममार्ग की ओर उत्तरोत्तर वृद्धि करता हुआ अग्र-
सर होता रहे । इसी विचारणा से सुधर्मास्वामी कहते हैं कि यह जो
सार्वभौमनिवृत्तिरूप परिज्ञा का कथन मैंने किया है उससे संयमी मुनि
अपने अष्टविध कर्मों का निराकरण कर अपने लक्ष्य की सिद्धि कर
लेता है ॥ सू० २ ॥

યુક્ત પ્રાણી જે દ્વારા કરવામાં આવે છે, એવા હુ:ખોને ઉત્પન્ન કરનાર કાર્યોનું
નાશ નિકરણ છે. એવા કાર્યોથી છવ સદા હુ:ખોની પરંપરાનો જ અનુભવ કરે
છે. એવું કાર્ય સંયમી મુનિએ સદા છોડી દેવું જોઈએ. આવા પ્રકારના કાર્યના
પરિત્યાગથી આઠ કર્મોની ઉપશાન્તિ-ઉપશમ અથવા તેનો ક્ષય થાય છે. આ
પ્રકારે આ જગ્યાએ જે સંયમી મુનિ માટે સમારંભનિવૃત્તિરૂપ જ્ઞ-પરિજ્ઞા
અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા કહેલ છે તેનું કારણ એ છે કે સંયમી મુનિ પોતાની
પ્રવૃત્તિને પ્રમાદથી સદા સુરક્ષિત રાખે. પ્રમાદ કરવાથી નવીન કર્મોનો બંધ અને
તેનાથી પછી પ્રમાદ એ પ્રકારની પરસ્પરમાં કાર્યકારણ-લાવની પરપરા આવે છે.
તેનાથી સંયમી પોતાના લક્ષ્યની સિદ્ધિથી વંચિત રહે છે. માટે તે પોતાના લક્ષ્યની
સિદ્ધિ કરવા માટે યત્ન કરેલા સંયમ-માર્ગની તરફ ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ કરીને
અગ્રસર પતા રહે. એવી વિચારણાથી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે આ જે સર્વારંભ-
નિવૃત્તિરૂપ પરિજ્ઞાનું કથન મેં કર્યું છે તેનાથી સંયમી મુનિ પોતાના અષ્ટ-
વિધ કર્મોનું નિરાકરણ કરી પોતાના લક્ષ્યની સિદ્ધિ કરી લે છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

શારીરિક-માનસિક-દુઃખોત્પાદનકારણં મમત્વબુદ્ધિરેવ, તન્નિવૃત્ત્યા મુનિર્ભવ-
તીતિ દર્શયતિ—‘ જે મમાઇયમઇં ’ इत्यादि ।

મૂલમ—જે મમાઇયમઇં જહાઇ, સે ચયઇ મમાઇયં,

સે હુ દિટ્ઠપહે મુળી, જસ્સ નત્થિ મમાઇયં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—યો મમાયિતમતિં જહાતિ સ ત્યજતિ મમાયિતમ્ । સ હુ દૃષ્ટપથો મુનિ-
ર્યસ્ય નાસ્તિ મમાયિતમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—‘ યો મમાયિતમતિ ’—મિત્યાદિ । યઃ પરિગ્રહજન્યકટુવિપાકક્ષો
‘ મમાયિતમતિં ’ મમેત્યેવંરૂપો મમાયિતઃ પરિગ્રહસ્તસ્ય મતિર્મમાયિતમતિસ્તાં મમા-
યિતમતિં જહાતિ=ત્યજતિ, સ એવ મમાયિતં દ્રવ્યતઃ પુત્રકલત્રહિરણ્યસુવર્ણૈશ્વર્યા-

શારીરિક એવં માનસિક દુઃખોં કી ઉત્પત્તિ કા કારણ એક મમત્વ-
બુદ્ધિ હી હૈ । ઉસકા જવતક પરિહાર નહીં કિયા જાવેગા તવતક વાસ્ત-
વિક મુનિપના નહીં આસકતા હૈ । ઇસલિયે મુનિ હોને કે લિયે ઉસકી
નિવૃત્તિ હોના આવશ્યક હૈ । ઇસ વાત કો દિખાતે હુએ સૂત્રકાર કહતે
હૈ—‘ જે મમાઇયમઇં ’ इत्यादि ।

જો યહ સમજતા હૈ કિ ‘ પરિગ્રહ કા સંગ્રહ મહાદુઃખદાયી હૈ, તથા
ઇસકા ફલ મી કટુક હી હૈ ’ વહ કમી મી પરિગ્રહ કે ઉપાર્જન કરનેમેં
નહીં ફેસતા હૈ, તથા જો ઇસ વાત કો મી મલીમાંતિ જાન ચુકા હૈ કિ
‘ પરિગ્રહ માત્ર હી દુઃખપ્રદ એવં પરિણામ મેં અનેક અનર્થોં કા મૂલ
હૈ ’ વહ તો ઉસ પરિગ્રહ કી અમિલાષા તક મી નહીં કરતા હૈ,
ચાહે વહ દ્રવ્ય સે પુત્ર, કલત્ર, હિરણ્ય, સુવર્ણ, ऐश्वर्यादिरूप પરિગ્રહ હો,

શારીરિક અને માનસિક દુઃખોની ઉત્પત્તિનું કારણ એક મમત્વ-બુદ્ધિ જ
છે. તેનો જ્યાં સુધી પરિહાર નહિ કરવામાં આવે ત્યાં સુધી વાસ્તવિક મુનિપણ
આવી શકતું નથી માટે મુનિ હોવાથી તેની નિવૃત્તિ આવશ્યક છે એ વાતને
દેખાડીને સૂત્રકાર કહે છે—‘ જે મમાઇયમઇં ઇત્યાદિ.

જે એમ સમજે છે કે ‘ પરિગ્રહનો સંગ્રહ મહા દુઃખદાયી છે, તથા તેનું
ફળ પણ કટુ જ છે ’ તે કોઇ વખત પણ પરિગ્રહનો ઉપાર્જન કરવામાં ક્ષમતા
નથી, તથા જે આ વાતને ભલીભાતિથી જાણે છે કે ‘ પરિગ્રહમાત્ર દુઃખપ્રદ અને
પરિણામમાં અનેક અનર્થોનું મૂળ છે ’ તે તો તે પરિગ્રહની અભિલાષા સુધાં
કરતા નથી, ભલે તે દ્રવ્યથી પુત્ર, કલત્ર, હિરણ્ય, સુવર્ણ, ऐश्वर्याદિરૂપ પરિગ્રહ

દિરૂપં ભાવતો મૂર્છારૂપમાત્મપરિણામં ત્યજતિ=પરિહરતિ-પરિગ્રહબુદ્ધિપરિત્યાગેન પરિગ્રહઃ સુત્યજો ભવતિ । યસ્ય=અનિર્દિષ્ટનામધેયસ્ય મમાયિતં નાસ્તિ સ હુ સ એવ 'દૃષ્ટપથઃ' દૃષ્ટો રત્નત્રયરૂપઃ પન્થાઃ=મોક્ષમાર્ગો યેન સ દૃષ્ટપથઃ પરિજ્ઞાતમોક્ષ-માર્ગો મુનિઃ=અનગારો ભવતિ । મમાયિતમતિપરિત્યાગેનાવશ્યં મમાયિતઃ પરિત્યક્તો ભવતિ, તત્પરિત્યાગે ચ દ્રવ્યભાવરૂપો મમાયિતવ્યપદાર્થસાથો હિરણ્યાદિરૂપોઽપિ નિયતં પરિહતો ભવતિ । એવં પશ્ચાન્નુપૂર્વ્યાં મૈથુનમતિપરિત્યાગેન મૈથુનં સુતરાં પરિ-ત્યક્તં ભવતિ । इत्थं शेषत्रतेष्वपि योजनीयम् ।

ચાહે ભાવ સે મૂર્છારૂપ હો; इन दोनों प्रकार के परिग्रह का परित्याग करता है । जहां परिग्रहबुद्धि का परित्याग है वहां परिग्रह का परित्याग करना कोई कठिन कार्य नहीं है । यह तो अनायास ही हो जाता है । परिग्रह का अपनाना या बाह्यपदार्थों में परिग्रहरूपता लाना इच्छा के अधीन है । जब उस प्रकार की इच्छा ही नहीं है, तब बाह्यपदार्थों में परिग्रहता ही नहीं आसकती है । जिस व्यक्ति के पास इस प्रकार का परिग्रह नहीं है वही रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग का द्रष्टा मुनि कहा गया है ।

इसका सारांश यही है कि जिसने परिग्रह की बुद्धि का परित्याग कर दिया है उसके परिग्रह का त्याग अवश्य होता है । इसके परित्याग से द्रव्यभावरूप हिरण्यादि तथा मूर्च्छारूप परिग्रह नियम से दूर हो जाते हैं । यहां पर परिग्रहमति के त्याग से जो परिग्रह का त्याग करना बत-लाया गया है वह पश्चानुपूर्वी को लेकर कहा गया है । इससे यह भी समझ लेना चाहिये कि मૈથુનમતિ के परित्याग से मૈथुन का तथा चोरी

હોય, ભલે ભાવથી મૂર્છારૂપ હોય, આ બંને પ્રકારના પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરે છે. ત્યાં પરિગ્રહ-બુદ્ધિનો પરિત્યાગ છે, ત્યાં પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરવો કાંઈ કઠિન કાર્ય નથી. એ તો અનાયાસ જળની શહે છે. પરિગ્રહને અપનાવવો અગર બાહ્ય પદાર્થોમાં પરિગ્રહરૂપતા લાવવી ઇચ્છાને આધીન છે. ત્યારે આવા પ્રકારની ઇચ્છા જ નથી ત્યારે બાહ્ય પદાર્થોમાં પરિગ્રહતા આવી શકતી નથી. જે વ્યક્તિની પાસે આવા પ્રકારનો પરિગ્રહ નથી તે જ રત્નત્રયરૂપ મોક્ષ માર્ગનો દ્રષ્ટા મુનિ કહેવાય છે.

તેનો સારાંશ એ છે કે જેણે પરિગ્રહની બુદ્ધિનો પરિત્યાગ કરેલ છે તેનાથી પરિગ્રહનો ત્યાગ અવશ્ય થાય છે. તેના પરિત્યાગથી દ્રવ્ય-ભાવરૂપ હિરણ્યાદિ તથા મૂર્છારૂપ પરિગ્રહ નિયમથી દૂર થઈ જાય છે. આ કેડાણે પરિગ્રહમતિના ત્યાગથી જે પરિગ્રહનો ત્યાગ કરવો બતાવેલ છે તે પશ્ચાન્નુપૂર્વીને લઈને કહેલ છે. તેથી એ પણ સમજ લેવું જોઈએ કે મૈથુનમતિના પરિત્યાગથી મૈથુનનો, તથા ચોરી કરવાની

વિદિત્વા=જ્ઞાત્વા લોકસંજ્ઞાં લોકસ્ય=પ્રાણિગણસ્ય સંજ્ઞા=આહારાદિમૂર્ચ્છારૂપા,
તાં લોકસંજ્ઞાં વાન્ત્વા=ઉદ્ધીર્ય પરિત્યજ્યેત્યર્થઃ, સ મતિમાન્ વિદિતહેયોપાદેયઃ
પરાક્રમેત=સંયમાનુષ્ઠાને પરાક્રમં કુર્યાત્ । ઇતિ-શબ્દોઽધિકારસમાપ્ત્યર્થકઃ । બ્રવી-
મીત્યસ્યાર્થસ્તૂક્ત એવ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

સંયમાચરણે પરાક્રમમાણઃ પરિહૃતમમાયિતોઽનગારઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—
' નારં સહૃ ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—નારં સહૃ વીરે, વીરે ન સહૃ રં ।

જમ્હા અવિમણે વીરે તમ્હા વીરે ન રજ્જઈ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—નારતિં સહતે વીરો, વીરો ન સહતે રતિમ્ ।

યસ્માદવિમના વીરસ્તસ્માદ્વીરો ન રજ્યતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

સે ઇહ લોક એવં પરલોક સમ્બન્ધી ભય રહતા હૈ । તથા વિષયભોગાદિક
भी किंपाकफल के समान ऊपर से ही मनोहर मालूम पड़ते हैं परन्तु
परिणाम में जीवों के लिये नरक-निगोदादि गतियों के कारण बनते हैं ।
किंपाकफल का सेवन जिस प्रकार प्राणों का हरण करने वाला होता है
उसी प्रकार ये भी भवर में जीवों को अनन्त यातनाओं के देनेवाले होते
हैं । ऐसा समझकर उस कषायलोक का संयमी मुनि सदा त्याग कर देवे ।

यहां “इति” शब्द अधिकार की परिसमाप्ति का सूचक है
“ब्रवीमि” पद का अर्थ पहिले कहा जा चुका है । ॥ सू० ४ ॥

સંયમ કે પાલન કરને મેં પરાક્રમશાલી ઔર પરિગ્રહ કા ત્યાગી
અનગાર કૈસા હોતા હૈ? સો કહતે હૈ—‘ નારં સહૃ ’ ઇત્યાદિ ।

પરલોક સંબન્ધી ભય રહે છે તથા વિષય ભોગાદિક પણ કિંપાક ફળ સમાન
ઉપરથી જ મનોહર માલૂમ પડે છે પરંતુ પરિણામમાં જીવો માટે નરક નિગોદાદિ
ગતિઓનું કારણ બને છે. કિંપાક ફળનું સેવન જે પ્રકારે પ્રાણોનું હરણ કરે છે
તે પ્રકારે આ પણ ભવોભવમાં જીવોને અનંત યાતનાઓ દેનાર બને છે, એવું
સમજીને તે કષાયલોકનો તથા વિષયલોકનો સંયમી મુનિ સદા ત્યાગ કરે.

અહીં “ ઇતિ ” શબ્દ અધિકારની પરિસમાપ્તિનો સૂચક છે. “ બ્રવીમિ ”
પદનો અર્થ પહેલાં કરવામાં આવેલ છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

સંયમનું પાલન કરવામાં પરાક્રમશાલી અને પરિગ્રહના ત્યાગી અણુગાર
કેવા હોય છે તે કહે છે—“ નારં સહૃ ” ઇત્યાદિ.

દિરૂપં ભાવતો મૂર્છારૂપમાત્મપરિણામં ત્યજતિ=પરિહરતિ-પરિગ્રહબુદ્ધિપરિત્યાગેન પરિગ્રહઃ સુત્યજો ભવતિ । યસ્ય=અનિર્દિષ્ટનામધેયસ્ય મમાયિતં નાસ્તિ સ હુ સ એવ 'દૃષ્ટપથઃ' દૃષ્ટો રત્નત્રયરૂપઃ પન્થાઃ=મોક્ષમાર્ગો યેન સ દૃષ્ટપથઃ પરિજ્ઞાતમોક્ષ-માર્ગો મુનિઃ=અનગારો ભવતિ । મમાયિતમતિપરિત્યાગેનાવશ્યં મમાયિતઃ પરિત્યક્તો ભવતિ, તત્પરિત્યાગે ચ દ્રવ્યભાવરૂપો મમાયિતવ્યપદાર્થસાથો હિરણ્યાદિરૂપોઽપિ નિયતં પરિહતો ભવતિ । એવં પશ્ચાન્નુપૂર્વ્યા મૈથુનમતિપરિત્યાગેન મૈથુનં સુતરાં પરિ-ત્યક્તં ભવતિ । इत्थं शेषत्रतेष्वपि योजनीयम् ।

ચાહે ભાવ સે મૂર્છારૂપ હો; इन दोनों प्रकार के परिग्रह का परित्याग करता है । जहां परिग्रहबुद्धि का परित्याग है वहां परिग्रह का परित्याग करना कोई कठिन कार्य नहीं है । यह तो अनायास ही हो जाता है । परिग्रह का अपनाना या बाह्यपदार्थों में परिग्रहरूपता लाना इच्छा के अधीन है । जब उस प्रकार की इच्छा ही नहीं है, तब बाह्यपदार्थों में परिग्रहता ही नहीं आसकती है । जिस व्यक्ति के पास इस प्रकार का परिग्रह नहीं है वही रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग का द्रष्टा मुनि कहा गया है ।

इसका सारांश यही है कि जिसने परिग्रह की बुद्धि का परित्याग कर दिया है उसके परिग्रह का त्याग अवश्य होता है । इसके परित्याग से द्रव्यभावरूप हिरण्यादि तथा मूर्च्छारूप परिग्रह नियम से दूर हो जाते हैं । यहां पर परिग्रहमति के त्याग से जो परिग्रह का त्याग करना बत-लाया गया है वह पश्चानुपूर्वी को लेकर कहा गया है । इससे यह भी समझ लेना चाहिये कि मૈથુનમતિ के परित्याग से मૈथुन का तथा चोरी

હોય, ભલે ભાવથી મૂર્છારૂપ હોય, આ બંને પ્રકારના પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરે છે. જ્યાં પરિગ્રહ-બુદ્ધિનો પરિત્યાગ છે, ત્યાં પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરવો કાંઈ કઠિન કાર્ય નથી. એ તો અનાયાસ જળની શકે છે. પરિગ્રહને અપનાવવો અગર બાહ્ય પદાર્થોમાં પરિગ્રહરૂપતા લાવવી ઇચ્છાને આધીન છે. જ્યારે આવા પ્રકારની ઇચ્છા જ નથી ત્યારે બાહ્ય પદાર્થોમાં પરિગ્રહતા આવી શકતી નથી. જે વ્યક્તિની પાસે આવા પ્રકારનો પરિગ્રહ નથી તે જ રત્નત્રયરૂપ મોક્ષ માર્ગનો દ્રષ્ટા મુનિ કહેવાય છે.

તેનો સારાંશ એ છે કે જેણે પરિગ્રહની બુદ્ધિનો પરિત્યાગ કરેલ છે તેનાથી પરિગ્રહનો ત્યાગ અવશ્ય થાય છે. તેના પરિત્યાગથી દ્રવ્ય-ભાવરૂપ હિરણ્યાદિ તથા મૂર્છારૂપ પરિગ્રહ નિયમથી દૂર થઈ જાય છે. આ ઠેકાણે પરિગ્રહમતિના ત્યાગથી જે પરિગ્રહનો ત્યાગ કરવો બતાવેલ છે તે પશ્ચાન્નુપૂર્વીને લઈને કહેલ છે. તેથી એ પણ સમજ લેવું જોઈએ કે મૈથુનમતિના પરિત્યાગથી મૈથુનનો, તથા ચોરી કરવાની

તતઃ કિમાયાતમિતિ દર્શયતિ—‘સદે’ ઇત્યાદિ,

મૂલમ્—સદે ય ફાસે અહિયાસમાણે, નિર્વિંદ નંદિંં હહ જીવિ-
યસ્સ । મુણી મોણં સમાયાય, ધુણે કમ્મસરીરગં । પંતં લૂહં ચ
સેવંતિ, વીરા સંમત્તદંસિણો । એસ ઓહંતરે મુણી તિન્ને મુત્તે વિરણ
વિયાહિણ-ત્તિવોમિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—શબ્દાન્ ચ સ્પર્શાનધિસહમાનો, નિર્વિંદ નન્દિમિહ જીવિતસ્ય, મુનિમૌનં
સમાદાય ધુનીત કર્મશરીરકં, પ્રાન્તં રૂક્ષં ચ સેવન્તે વીરાઃ સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ, એપ
ઓઘન્તરો મુનિસ્તીર્ણો મુક્તો વિરતો વ્યાખ્યાત ઇતિ બ્રવીણિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘શબ્દા’—નિત્યાદિ, શબ્દાન્ સ્પર્શાન્—ઇષ્ટાનનિષ્ટાન્, આઘન્તગ્રહણાદિ-
તરેપાં મધ્યવર્તિનાં રૂપાદીનામપિ ગ્રહણમ્ । અધિસહમાનઃ=સમ્યક્ સહમાનઃ રાગ-
સે દૂર હો જાતી હૈ, ઇસી પ્રકાર ઇન પરિણામોં કી ખી યહી સ્થિતિ હોતી
હૈ । ઇસીલિયે સંયમી મુનિ શબ્દાદિક કામગુણોં મેં મૂર્છાંભાવ કો પ્રાપ્ત
નહીં હોતે હૈં । સૂત્ર મેં સૂત્રકાર ને વારં વાર જો ‘વીર’ શબ્દ કા પ્રયોગ કિયા
હૈ, ડસસે યહી ધ્વનિત હોતા હૈ કિ કર્મરૂપી શત્રુ એસે સંયમીજનોં કે
દ્વારા અવશ્ય જીતને કે યોગ્ય હૈ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ઇસસે ક્યા સિદ્ધ હોતા હૈ ?—ઇસ વાતકો દિખલાતે હૈં—“સદે ય
ફાસે” ઇત્યાદિ ।

સૂત્ર મેં અન્તકી કર્ણ-ઇન્દ્રિય કે વિષય શબ્દ કા ઓર આદિ કી
સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય કે વિષય સ્પર્શ કા નિર્દેશ કિયા હૈ । ઇસસે મધ્યવર્તી
ઇતર ઇન્દ્રિયોં કે વિષય-રૂપાદિકોં કા ખી ગ્રહણ હો જાતા હૈ । શિષ્ય કો
સંવોધન કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે મેધાવી શિષ્ય ! ઇન્દ્રિયોં
કે ઇષ્ટ ઓર અનિષ્ટ વિષયોં મેં તુમ સર્વથા રાગદ્વેષ મત કરો । શાસ્ત્ર

આ પરિણામોની પણ તે સ્થિતિ છે માટે સયમી મુનિ શબ્દાદિક કામગુણોમા
મૂર્છાભાવને પ્રાપ્ત થતા નથી. સૂત્રમાં સૂત્રકારે વારં વાર જે વીર શબ્દનો પ્રયોગ
કર્યો છે તેથી એ નક્કી થાય છે કે કર્મરૂપી શત્રુ એવા સયમીજનોથી અવશ્ય
જીતવા યોગ્ય છે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

આથી શું સિદ્ધ થાય છે ? એ વાતને બતાવે છે—“સદે ય ફાસે” ઇત્યાદિ

સૂત્રમાં અન્તની કર્ણ ઇન્દ્રિયના વિષય-શબ્દનો અને આદિની સ્પર્શન
ઇન્દ્રિયના વિષય-સ્પર્શનો ગ્રહણ થયેલ છે, આથી મધ્યવર્તી બીજી ઇન્દ્રિયોનો
વિષય-રૂપાદિકોનો પણ ગ્રહણ થાય છે. શિષ્યને સંવોધન કરીને સૂત્રકાર કહે
છે કે હે મેધાવી શિષ્ય ! ઇન્દ્રિયોના ઇષ્ટ અને અનિષ્ટ વિષયોમા તમે સર્વથા રાગ

ટીકા—‘નારતિ—’ મિત્યાદિ । વીરः=કર્મવિદારણસમર્થઃ પરિહૃતપુત્રકલત્રાદિઃ સંયમી કદાચિન્મોહનીયોદયાત્સમુત્પન્નામ્, અરતિમ્=ચારિત્રવિષયામપ્રીતિં ન સહતે=ન ક્ષમતે, એવમેવ વીરઃ=પૂર્વોક્તઃ રતિં=વિષયાનુરાગં ચ ન સહતે=ન ક્ષમતે, ધર્મધ્યાનપરાયણો મુનિઃ સમુત્પન્નમાત્રામપિ રતિમરતિ ચ નિષ્કાસયતીત્યર્થઃ । વીરો=યસ્માત્કારણાત્ રત્યરતિપરિત્યાગાત્ અવિમનાઃ=તત્રાનાસક્તઃ, તસ્માત્ વીરઃ શબ્દાદિકામગુણેષુ ન રજ્યતિ=મૂર્છાં ન પ્રાપ્નોતિ । અત્ર વીર-શબ્દસ્ય પુનઃ પુનરુપાદાનં કર્મરિપુરવશ્યં વિજેતવ્યં ઇતિ દ્યોતનાયેતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

“નારતિં સહતે વીરઃ” અર્થાત્ કર્મોં કે વિનાશ કરને મેં જો શક્તિસંપન્ન છે, એવં જિસને પુત્રકલત્રાદિ પરિગ્રહ કા સર્વથા પરિહાર કર દિયા છે એસા વીર સંયમી મુનિ કદાચિત્ મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે ચારિત્ર મેં ઉત્પન્ન હુએ અરતિ-પરિણામ કો કમીં મીં સહન નહીં કર સકતા છે, ઓર ન વિષયોં કો તરફ ઝીંચને વાલી રતિ કો કમીં હૃદય મેં સ્થાન દે સકતા છે; કારણ કિ યે દોનોં પ્રકાર કે પરિણામ સંયમ એવં ધર્મધ્યાન કે વિઘાતક હેં । સંયમી કા અન્તઃકરણ સદા ધર્મધ્યાન મેં મગ્ન રહતા છે । કદાચિત્ કર્મ કી પ્રવલતા સે ઇસ તરહ કે પરિણામ ઉસકે ચિત્ત મેં આ મીં જાવેં તો વહ મુનિ એસે પરિણામોંકો અપને ધર્મધ્યાન કે પ્રભાવ સે શીઘ્રાતિશીઘ્ર દૂર કર દેતા છે । ઇન પરિણામોં કે પ્રતિ ઉસ સંયમી કી આસક્તિ નહીં હોતી । ઇસીલિયે ઇસ પ્રકાર કે રતિ-અરતિરૂપ પરિણામ, વિના કિસી રુકાવટ કે ઉસકી આત્મા સે વહુત શીઘ્ર દૂર હો જાતે હેં । જૈસે સૂરે ઘડે પર આઈ હુઈ વાલુ વિના કુછ કિયે ઉસ ઘડે

નારતિ સહતે વીરઃ અર્થાત્ કર્મોંનો વિનાશ કરવામાં જે શક્તિસંપન્ન છે અને જેણે પુત્ર કલત્રાદિ પરિગ્રહનો સર્વથા ત્યાગ કરેલ છે એવા વીર સંયમી મુનિ કદાચિત્ મોહનીય કર્મના ઉદયથી ચારિત્રમાં ઉત્પન્ન થયેલ અરતિ પરિણામને ડોઈ વખત પણ સહન કરી શકતા નથી, અને વિષયોની તરફ ખેંચવાવાળી રતિને પણ હૃદયમાં ડોઈ વખત પણ સ્થાન ન આપે, એટલે આપી શકતા નથી કારણ કે એ બન્ને પ્રકારના પરિણામ સંયમ અને ધર્મધ્યાનના વિઘાતક છે. સંયમીનું અંતઃકરણ સદા ધર્મધ્યાનમાં જ મગ્ન રહે છે. કદાચ કર્મની પ્રવલતાથી આવા પ્રકારનું પરિણામ તેના હૃદયમાં આવી જાય તો તે મુનિ આવા પરિણામોને પોતાના ધર્મધ્યાનના પ્રભાવથી જલ્દી દૂર કરી નાંખે છે. આ પરિણામો તરફ તે સંયમીની આસક્તિ થતી નથી, માટે આ પ્રકારના રતિઅરતિરૂપ પરિણામ ડોઈ જાનની રૂકાવટ વિના તેના આત્માથી જલ્દી દૂર થઈ જાય છે. જેવી રીતે મુકા થયા ઉપર ઉઘીને આવેલી ઘુડ કાંઈ પણ કર્યા વિના તે ઘડથી દૂર થઈ જાય છે તે પ્રકારે

યદ્વા-૩૬=મનુષ્યજીવિતે વા પશ્ચવિધવ્રતાતીચારાણાં મધ્યે વ્યતીતં નિન્દ, સંજાયમાન સંવૃણુ, મવિષ્યન્તં ચાતીચારં પ્રત્યાખ્યાહીત્યાશયઃ । કિમાશ્રિત્ય નન્દિ નિર્વિન્દેદિત્યાહ-‘મુનિ-’સ્તિયાદિ । મુનિઃ=કર્મવિપાકજ્ઞો યતિઃ, ‘મૌન’ મુનેરયં મૌનઃ સંયમો વાકસંયમો વા ઉપલક્ષણતયા કાય-મનસૌરપિ સંયમસ્તં તો આત્મા કો ઇનસે કોઈ લાભ નહીં, નહીં હોં તો ઇનકે અભાવ મેં આત્મા કો કોઈ હાનિ નહીં । આત્મા કી જો નિજ ચીજ હૈ વહ ઇનકે સંયોગ ઔર વિયોગ મેં ન અચ્છી હોતી હૈ ઔર ન વિગડતી હી હૈ । એસા ઘ્યાલકર વાહ્ય વસ્તુ મેં સંયમી કો અપના અન્તઃકરણ આસક્તિયુક્ત નહીં કરના ચાહિયે ।

અથવા—શિષ્ય કો સમજાતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે મેધાવી ! અપને મનુષ્ય જીવન કો સફલિત કરને કે લિયે જો સંયમજીવન તુમને અંગીકાર કિયા હૈ, ઉસમેં જો યે પાંચ મહાવ્રતોં કી તુમ આરાધના કર રહે હો સો યહ સદા ધ્યાન રઘો કિ ઇનમેં જો પહિલે અતીચાર લગ ચુકે હૈં ઉનકી નિંદા કરો, વર્તમાન મેં અતીચાર ન લગને પાવેં ઇસકી સંભાલ રઘો, તથા આગામીકાલ મેં લગને વાલે અતીચારોં કા પ્રત્યાખ્યાન કરો । કર્મ કે વિપાક કા જ્ઞાતા મુનિ વાચિક સંયમ કો, ઉપલક્ષણ સે કાયિક ઔર માનસિક સંયમ કો ખલીપ્રકાર ગ્રહણ કર કાર્મણ-શરીર સે અથવા કર્મજન્ય ઇસ ઔદારિક શરીર સે રહિત હો જાતા હૈ અર્થાત્ મોક્ષ કા મોક્ષા વન જાતા હૈ ।

હોય તો આત્માને એનાથી કોઈ લાભ નહિ. ન હોય તો તેના અભાવમાં આત્માને કોઈ હાનિ નહી. આત્માની જે નિજ ચીજ છે તે તેના સંયોગ અને વિયોગમાં નથી મારી બનતી અને બગડતી પણ નથી એવો ખ્યાલ કરી બાહ્ય વસ્તુમાં સંયમીએ પોતાનું અતઃકરણ આમૃતિયુક્ત નહિ કરવું જોઈએ

અથવા શિષ્યને સમજાવતા સૂત્રકાર કહે છે કે હે મેધાવી ! પોતાના મનુષ્ય જીવનને સફળ બનાવવા માટે જે સંયમ જીવન તમે અંગીકાર કર્યું છે, તેના જે આ પાંચ મહાવ્રતોની તમે આરાધના કરી રહ્યા છો તો એ સદા ધ્યાનમાં રાખો કે તેમાં જે પહેલાં અતિચાર લાગી ચુકેલ છે તેની નિંદા કરો. વર્તમાનમાં અતિચાર ન લાગી જાય તેની સંભાળ રાખો અને આવતા કાળમાં લાગવાવાળા અતિચારોનું પ્રત્યાખ્યાન કરો. કર્મના વિપાકના જ્ઞાતા મુનિ વાચિક સંયમને ઉપલક્ષણથી કાયિક અને માનસિક સંયમને ભેદી પ્રકારે ગ્રહણ કરી કાર્મણશરીરથી અથવા કર્મજન્ય આ ઔદારિક શરીરથી રહિત થઈ જાય છે, અર્થાત્ મોક્ષનો ભાગી બની જાય છે.

દ્વેષાવકુર્વાણઃ સન્, इह=તિર્યગ્લોકે જીવિતસ્ય=અસંયમજીવિતસ્ય નન્દિ=પ્રમોદં
'મમેદં ધનાદિ ભવતિ, ભવિષ્યતિ, અભૂચ્ચ' इत्यादिविकल्परूपां मनस्तुष्टिं निर्विन्द=
અનાદ્રિયસ્વ=અપાકુર્વિત્યર્થઃ, ऐश्वर्यरूपबलादिषु सर्वत्र मनःसंकल्पविकल्पजालं मह-
दनर्थकरमिति तात्पर्यम् ।

કા યહ ઉપદેશ હૈ કિ “ सदेसु य भदयपावएसु सोयविसयसुवगएसु
तुट्टेण वा रुट्टेण वा समणेण सयान होयव्वं ” શબ્દ કર્ણપ્રિય હોં યા કર્ણ-
કટુક હોં, इन्द्रियों के विषय चाहे मनोज्ञ हों, चाहे अमनोज्ञ हों,
સંયમી કો ઉનમં કમી મી નતુષ્ટ હોના ચાહિયે ઓર નરુષ્ટ હી હોના
ચાહિયે । સંસાર મં સમી પ્રકાર કી સામગ્રી હૈ । બુદ્ધિમાન્ સંયમી વહી હૈ
જો ઇનમં સે કિસી મં મી ન પેસે ઓર સબમં સમતાભાવસંપન્ન બન
અપને લક્ષ્ય કી સિદ્ધિ મં તત્પર રહે । અસંયમજીવન કી જો યહ
આત્મપરિણતિ હૈ કિ ‘मेरे पास पहिले इतना धनादि था, अब इतना है,
आगे और हो जावेगा,’-इन सब का परित्याग कर दो । ઢાઈ દ્રીપ મં
હી સંયમમાર્ગ કી આરાધના કરને કા સુવર્ણ અવસર હાથ આતા હૈ;
બાકી ઇસ તિર્યગ્લોક મં ઇસ સંયમભાવ કી આરાધના હો હી નહીં સકતી ।
ઇસલિયે મમત્વરૂપ સંકલ્પવિકલ્પમય માનસિક તુષ્ટિ કા પરિહાર કરો,
કારણ કિ ઇન ऐश्वर्य, रूप और बल आदि में किया गया मानसिक संकल्प-
विकल्प का जाल आत्मा के लिये महान् अनर्थकर होता है । ये पदार्थ हों

દ્વેષ ન કરો. શાસ્ત્રનો એ ઉપદેશ છે કે “ सदेसु य भदयपावएसु सोयविसय-
सुवगएसु, तुट्टेण वा रुट्टेण व समणेण सयान होयव्वं ” इन्द्रियोना विषय लदे
मनोज्ञ होय अगर अमनोज्ञ होय, शब्द लदे कर्णप्रिय होय, अगर कर्णकटुक
होय, संयमीએ તેમાં કોઈ વખત પણ ન આનંદ માનવો જોઈએ કે ન રૂષ્ટ
થવું જોઈએ. સંસારમાં બધી સામગ્રી છે. બુદ્ધિમાન્ સંયમી તે જ છે જે આમાંથી
કોઈમાં પણ ન ફેસે અને બધામાં સમતાભાવસંપન્ન બની પોતાના લક્ષ્યની
સિદ્ધિમાં તત્પર રહે. અસંયમ જીવનની જે આ આત્મપરિણતિ છે કે ‘ મારી
પાસે પહેલાં આટલું ધન હતું, હવે આટલું છે, આગળ વળી વધારે થઈ જશે’
આ સંધાનાનો પરિત્યાગ કરી આપો. અહીંદ્રીપમાં જ સંયમમાર્ગની આરાધના
કરવાનો સુઅવસર હાથ આવે છે બાકી આ તિર્યગ્લોકમાં આ સંયમભાવની
આરાધના બની જ શકતી નથી, માટે મમત્વરૂપ સંકલ્પવિકલ્પમય માનસિક
તુષ્ટિનો પરિહાર કરો, કારણ કે એ ऐश्वर्य, रूप અને बल आदिમાં કરેલા માન-
સિક સંકલ્પ વિકલ્પની બલ આત્મા માટે મહાન અનર્થકારી છે. એ પદાર્થો

વીરાઃ પરીપહોપસર્ગસહનસમર્થા મુનયઃ, પ્રાન્તં=દ્રવ્યતઃ સ્વાભાવિકરસરહિતં શીતલ-પુરાણકુલત્થાદિકં સ્તોકં વા, રૂક્ષં=દ્રવ્યત આગન્તુકઘૃતાદિરસવર્જિતં, ભાવતઃ પ્રાન્તં દ્રેવવિકલં ધૂમદોષવર્જિતમ્, ભાવતો રૂક્ષમ્=રાગરહિતમજ્જારદોષવર્જિતમાહારં ચ સેવન્તે=અશ્નન્તિ । યથ પ્રાન્તરૂક્ષભોજી સ કિમાપ્નોતીત્યાહ-‘ એષ ’ ઇતિ, એષઃ=પરિશુદ્ધપ્રાન્તરૂક્ષાહારસેવનેન કર્મશરીરં ધુન્વાનો મુનિઃ=અનગારઃ, ‘ ઓઘન્તરઃ ’

દર્શિનઃ ” લિખી છે । પ્રાન્ત ઓર રૂક્ષ, દ્રવ્ય તથા ભાવ કે ભેદ સે દો-દો પ્રકાર કે હૈં, ડનમેં દ્રવ્યપ્રાન્ત સ્વાભાવિકરસવર્જિત ઠંઢા પુરાના કુલત્થ આદિ, તથા પ્રમાણ મેં થોડા । ભાવપ્રાન્ત દ્રેવરહિત ધૂમદોષવર્જિત । દ્રવ્ય-રૂક્ષ-ઘૃત આદિ રસવર્જિત, ઓર ભાવરૂક્ષ-રાગરહિત અજ્જારદોષવર્જિત આહાર । મુનિ ઇસ પ્રકાર કા આહાર કરતે હૈં । ઇસ પ્રકાર કે આહાર કો અપને ઉપયોગ મેં લેનેવાલા અનગાર કર્મશરીર ક્ષીણ કરતા હુવા ‘ ઓઘન્તરઃ ’ સંસારરૂપી ભાવ ઓઘકો “ કહેમાણે કહે ” ઇસ વાક્ય કે અનુસાર પાર કરને વાલા હો જાતા છે । યદ્યપિ સંસારરૂપી સમુદ્ર કો અભી ડસને પાર નહીં ક્રિયા છે પરન્તુ પાર કરનેરૂપ ક્રિયા અભી ડસકી ચાલૂ છે-પાર કરને કે સન્મુખ હો રહા છે, ભવિષ્ય મેં ડસે પાર કરેગા ફિર ભી સૂત્ર મેં “ તિણ્ણે-તીર્ણઃ ” જો ઇસ ભૂતકૃદન્ત કા પ્રયોગ ક્રિયા ગયા છે વહ “ ક્રિયમાણં કૃતં ” ઇસ વાક્ય કે અનુસાર ક્રિયા હુઆ સમજના ચાહિયે । જૈસે કિસી કાર્ય કી સમાપ્તિ અભી હુઈ નહીં છે, સમાપ્તિ કી ઓર વહ અગ્રસર હો રહા છે ઓર ભવિષ્ય મેં પાર હોગા; પરન્તુ વ્યવહાર મેં

ભાવ લેઢથી ડે પ્રકારે છે તેમાં દ્રવ્યપ્રાન્ત-સ્વભાવિક રસવર્જિત ઠંડા પુરાણા કુલત્થ આદિ, તથા પ્રમાણમાં થોડુ ભાવપ્રાન્ત-દ્રેવરહિત-દોષરહિત, દ્રવ્યરૂક્ષ-ઘી આદિ રસ વર્જિત, અને ભાવરૂક્ષ-રાગરહિત અંગારદોષવર્જિત આહાર, મુની આવા પ્રકારનો આહાર કરે છે. આવા પ્રકારના આહારને પોતાના ઉપયોગમાં લાવવાવાળા અણુગાર કર્મ-શરીરને ક્ષીણ કરીને “ ઓઘન્તર ” સંસારરૂપી ભાવ ઓઘને “ કહેમાણે કહે ” આ વાક્ય અનુસાર પાર કરવાવાળા થઈ જાય છે, જે કે સંસારરૂપી સમુદ્રને હવું તેમણે ઓળંગેલ નથી પરંતુ ઓળંગવારૂપ ક્રિયા હવું તેમની ચાલુ છે. ઓળંગવા માટે સન્મુખ થતા જાય છે. ભવિષ્યમાં તેનો પાર કરશે તો પણ સૂત્રમાં “ તિણ્ણે-તીર્ણ. ” જે આ ભૂત કૃદન્તનો ઉપયોગ કર્યો છે તે “ ક્રિયમાણં કૃતં ” આ વાક્ય અનુસાર કરેલું સમજવું જોઈએ. જેમ કોઈ કાર્યની સમાપ્તિ હવું થયેલ નથી પણ સમાપ્તિના માર્ગ ઉપર છે અને ભવિષ્યમાં સમાપ્ત કરશે, પણ વ્યવહારમાં તે “ થઈ ગયેલ

‘સમાદાય’ સમ્=સમ્યક્ આદાય=ગૃહીત્વા કર્મશરીરકં કાર્મણશરીરમૌદારિકં વા ધુનીત=પરિશાતયેદપનયેદિત્યર્થઃ, અથવા-‘મુળી’ इत्यस्य ‘हे मुने !’ इतिच्छाया, हे सम्यक्त्वदर्शिन् ! मौनं=संयमं समादाय=सम्यग् गृहीत्वा कर्मशरीरकं धुनीहि पृथक्कुरु, तत्र ममत्वं न कुष्वेत्यर्थः । यतः कर्मशरीरे मुनेर्ममत्वं न भवति तस्मा-देवाह-‘प्रान्त-’मित्यादि । सम्यक्त्वदर्शिनः=वस्तुतत्त्वपरिज्ञानकुशलाः, यद्वा ‘संम-त्तदंसिणो’ इत्यस्य ‘समत्वदर्शिनः’ इतिच्छाया, समत्वदर्शिनः=रागद्वेषवर्जिताः,

અથવા—“મુળી” इस शब्द की छाया ‘मुने !’ यह भी होती है । जिसका भाव यह है कि हे सम्यक्त्वदर्शी ! तुम संयम को अच्छी तरह ग्रहण कर कर्मशरीर को अपने से पृथक् करो, अर्थात् यह समझो कि यह कर्मशरीर पुद्गल, जड, मूर्तिक है और मैं ज्ञाता द्रष्टा शुद्ध ज्ञानादि-मय हूं । इस शरीर के बिगड़ने में मेरा कुछ नहीं बिगड़ता है, मैं इससे भिन्न हूं । इसलिये इसमें ममत्ववृद्धि करना ही व्यर्थ है । इसके पोषण के लिये जो वस्तुतत्त्वके परिज्ञान में कुशलमति हैं वे अन्त, प्रान्त, एवं ठंडा और रुक्ष आहार से इस कर्मशरीर की उचित संभाल करते हुए अपने संयमभाव की वृद्धि करने में सावधान रहते हैं, ऐसे मुनि ही वीर कहलाते हैं । परीषद् और उपसर्ग आने पर भी वे अपने पथ संयम-मार्ग में रंचमात्र भी विचलित नहीं होते हैं । जहां पर समताभाव का स्रोत बहता है वहां पर आत्मा अत्यन्त बलिष्ठ होती है । इसी बातका ख्यालकर टीकाकारने “सम्मत्तदंसिणो” की दूसरी छाया “समत्व-

અથવા “મુળી” આ શબ્દની છાયા “મુને” એ પણ થાય છે, જેનો ભાવ એ છે કે હે સમ્યક્ત્વદર્શિ ! તમે સંયમને સારી રીતે ગ્રહણ કરી કર્મ શરીરને પોતાથી પૃથક્ કરો, અર્થાત્ એમ સમજો કે આ કર્મશરીર પુદ્ગલ, જડ મુર્તિક છે, અને હું જ્ઞાતા, દ્રષ્ટા, શુદ્ધ જ્ઞાનાદિમય છું. આ શરીરના બગડવામાં મારું કંઈ પણ બગડતું નથી. હું તેનાથી ભિન્ન છું. તેથી તેમાં મમત્વબુદ્ધિ કરવી વ્યર્થ છે. તેના પોષણ માટે જે વસ્તુતત્વના પરિજ્ઞાનમાં કુશળમતિ છે, તે અન્ત પ્રાન્ત, ઠંડા અને રૂક્ષ આહારથી આ કર્મશરીરની ઉચિત સંભાળ કરતાં કરતાં પોતાના સંયમભાવની વૃદ્ધિ કરવામાં સાવધાન રહે છે. એવા મુનિ જ વીર કહેવાય છે. પરિષદ અને ઉપસર્ગ આવવા છતાં પણ પોતે સંયમમાર્ગમાં રંચમાત્ર પણ વિચલીત થતા નથી. જે ઠેકાણે સમતાભાવનો પ્રવાહ જ વહે છે ત્યાં આત્મા અત્યંત બલિષ્ઠ બને છે. આ વાતનો ખ્યાલ કરીને ટીકાકારે “સમત્ત-દંસિણો ની ખીણ છાયા “સમત્વદર્શિનઃ” લખી છે. પ્રાંત અને રૂક્ષ, દ્રવ્ય તથા

મુનિઃ=મોક્ષાનર્હો રત્નત્રયવિરાધક इत्यर्थः, કુત इत्यमित्याह—‘અનાજ્ઞયે’ત્યાદિ । અના-
જ્ઞયા વર્તમાનઃ=ગીતરાગોપદેશવિકલઃ સ્વચ્છન્દાચારી । નનુ વીતરાગોપદેશાનુસારેણ
કુતો ન વર્તતે યેન સ્વૈરિત્વં સ્યાદિતિ चेन्न, લોકેऽમમીકારો, રત્યરત્યોર્વિરોધઃ,
શબ્દાદિવિષયે તટસ્થતા ચ, इत्येवंरूपतीक्ष्णासिधाराकल्पसदुपदेशपरिसेवनस्याति-
दुष्करत्वेन स्वच्छन्दचारित्वस्य सुलभत्वात् । यथैतादृशः स तुच्छः=ભાવતુચ્છો જ્ઞાના-
દિકલાવિકલઃ સન્ ગ્લાયતિ=સંદેહવિષયં પૃષ્ટવન્તં કંચિત્ સ વસ્તુતત્ત્વસ્યાપરિજ્ઞાનાત્ત-

યહ ભવ્ય-કલ્યાણ જિસસે દૂર હૈ, અથવા જો ભવ્યભાવ સે દુષ્ટ-વિપરીત
હૈ, વહ દુર્વસુ હૈ । મુક્તિ પ્રાપ્તિ કે અયોગ્ય એસા રત્નત્રયકા વિરાધક
મુનિ હી યહાંદુર્વસુ શબ્દ કા વાચ્યાર્થ હૈ । વીતરાગ પ્રભુ કે ઉપદેશ કા
નામ આજ્ઞા હૈ । ઇસ આજ્ઞા સે ભિન્ન અનાજ્ઞા હૈ । દુર્વસુ મુનિ વીતરાગ
પ્રભુ કી આજ્ઞા સે વિકલ હોતા હૈ અર્થાત્ સ્વેચ્છાચારી હોતા હૈ ।
સ્વેચ્છાચારિતા ઇસમેં ઇસલિયે આતી હૈ કિ યહ જો પ્રભુકા ઉપદેશ હૈ
કિ—“ કિસી ખી પદાર્થ મેં મમત્વ નહીં રખના । રતિ અરતિ નહીં
કરના, તથા ઇન્દ્રિયોં કે શબ્દાદિવિષયોં મેં તટસ્થ રહના ” ઇસે રુચિકર નહીં
હોતા, કારણ કિ યહ તીક્ષ્ણ અસિધારાસદૃશ ડનકે સદુપદેશ કે સેવન
કો અતિદુષ્કર માનતા હૈ । ઇસીલિયે વહ તુચ્છ-ભાવતુચ્છ હૈ, અર્થાત્-
જ્ઞાનાદિક કલાસે વિકલ હૈ । યદિ વહ સમ્યગ્ જ્ઞાનસંપન્ન હોતા તો કખી
ખી વીતરાગ પ્રભુ કે ઉપદેશ સે વાહ્યમતિવાલા ન હોતા । જ્ઞાનકલા સે
વિકલ હોંકર હી તો વહ દુઃસ્થિત હોતા હૈ । જવ કોઈ ડસકી સ્વચ્છન્દ

જે ભવ્ય ભાવથી દુષ્ટ-વિપરીત છે તે દુર્વસુ છે. મુક્તિપ્રાપ્તિના માટે અયોગ્ય
એવા રત્નત્રયના વિરાધક મુનિ જ આહી દુર્વસુ શબ્દનો વાચ્યાર્થ છે. વીતરાગ
પ્રભુના ઉપદેશનુ નામ આજ્ઞા છે આ આજ્ઞાથી ભિન્ન અનાજ્ઞા છે. દુર્વસુ મુનિ
વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાથી વિકળ બને છે અર્થાત્ સ્વેચ્છાચારી થાય છે સ્વચ્છન્દપણુ
તેઓમાં આ માટે આવે છે કે એવો જે પ્રભુનો આદેશ છે કે “કોઈપણુ પદાર્થમાં
મમત્વ રાખવું” નહિ, રતિ અરતિ કરવી નહિ, તથા ઈન્દ્રિયોના શબ્દાદિ વિષયોમાં
તટસ્થ રહેવું. ” આ તેઓને રુચિકર થતું નથી. કારણ કે આ તીક્ષ્ણ તલવારની ધાર
સમાન તેના સદુપદેશને માનવું ઘણુ કઠીન સમજે છે, તેથી તે તુચ્છ-ભાવતુચ્છ
છે, અર્થાત્ જ્ઞાનાદિક કલાથી વિકળ છે. કદાચ તેઓ સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હોત તો
કદિ પણ વીતરાગ પ્રભુના ઉપદેશથી વિમુખ ન થાત જ્ઞાનકળાથી વિકળ બની
તે દુઃખી થાય છે. ન્યારે કોઈ પણ તેની સ્વચ્છન્દ પ્રવૃત્તિ દેખી વાસ્તવિક મુનિના

ઓઘં=ભાવોઘં સંસારં તરતીત્યોઘન્તરઃ, ‘કહેમાણે કહે’ इति वचनात्तीर्णः, मुक्तः=
वाह्याभ्यन्तरममत्वरहितो भवति, किञ्च-स एव विरतः=विषयकषायसङ्गवर्जितः,
व्याख्यातः=मुनित्वेन प्रसिद्धः । इति ब्रवीमીत्यस्यार्थस्तूक्त एव ॥ सू० ६ ॥

यश्च पूर्वोक्तविपरीतवर्ती स कीदृशो भवतीत्याह—‘दुर्वसुमुणी’ इत्यादि ।

મૂલમ્—દુર્વસુમુણી અણાણાણ તુચ્છણ ગિલાઈ વત્તણ एस
वीरे पसंसिए, अच्छइ लोगसंजोगं एस नाए पमुच्चइ ॥सू० ७॥

છાયા—દુર્વસુમુનિરનાજાયા તુચ્છો ગ્લાયતિ વર્તયેત્ एष वीरः प्रशंसितः
अत्येति लोकसंयोगम्, एष न्यायः प्रोच्यते ॥ सू० ७ ॥

ટીકા—‘દુર્વસુમુનિ’ રિત્યાદિ, દુર્વસુમુનિઃ, વસુ=દ્રવ્યં ભવ્યં કલ્યાણમિતિ
યાવત્, તત્ત્વ દુર્=દુષ્ટં વિપરીતં દૂરે સ્થિતં વા યસ્ય દુર્વસુઃ, સ ચાસૌ મુનિશ્ચ દુર્વસુ-
વહ “હોચુકા” એસા કહા જાતા હૈ, ઉસી પ્રકાર ઘઘાં પર ભી યહી
સમજાકર “તીર્ણઃ” ઇસ પદકા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ । જો ‘ઓઘન્તર’
હોતે હૈં વે વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર પરપદાર્થોં સે મમત્વરહિત હોતે હૈં ઓર
વિષયકષાયોં કે સંગસે રહિત હોકર મુનિરૂપસે પ્રસિદ્ધ કોટિ મેં આતે હૈં ।
“इति ब्रवीमि” इन पदों का भावार्थ पहिले लिखा जा चुका है ॥ सू० ६ ॥

જો સંયમી પૂર્વોક્ત સ્વરૂપ સે વિપરીતવર્તી હૈં વહ કૈસા હોતા હૈં ?
ઇસ વિષય કો સમજાતે હૈં—‘દુર્વસુમુણી’ इत्यादि ।

વહ દુર્વસુ મુનિ હૈં જો વીતરાગ પ્રભુ કી આજ્ઞા સે રહિત હોતા
હુઆ સ્વચ્છન્દ આચારવિચારવાલા હોતા હૈં । વસુ શબ્દ કા અર્થ દ્રવ્ય
હૈં, દ્રવ્ય સે મતલબ ધન સે નહીં કિન્તુ ભવ્ય અર્થાત્ કલ્યાણ સે હૈં ।

છે” એમ કહેવામાં આવે છે, તે પ્રકારે આ ઠેકાણે પણ તેવું સમજીને “તીર્ણઃ”
આ પદનો ઉપયોગ કરવામાં આવેલ છે. જે આઘન્તર અને છે તે બાહ્ય અને
આભ્યંતરમાં પરપદાર્થોથી મમત્વરહિત અને છે, અને વિષય કષાયોના સંગથી
રહિત બની મુનિરૂપથી પ્રસિદ્ધ કોટિમાં આવે છે. “इति ब्रवीमि” આ પદોનો
ભાવાર્થ પહેલાં લખાઈ ચૂકેલ છે. ॥સૂ૦ ૬ ॥

જે સંયમી પૂર્વોક્ત સ્વરૂપથી વિપરીતવર્તી છે, તે કેવા હોય છે ? આ
વિષયને સમજાવતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘દુર્વસુમુણિ’ इत्यादि.

તે દુર્વસુ મુનિ છે કે જે વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાથી રહિત થઈને સ્વચ્છન્દ
આચાર વિચારવાળા બને છે. વસુ શબ્દનો અર્થ દ્રવ્ય છે. દ્રવ્યનો તાત્પર્ય ધન
નહિ પણ ભવ્ય અર્થાત્ કલ્યાણ છે. આ ભવ્ય—કલ્યાણ જેનાથી દૂર છે. અથવા

નુયાયી સ રત્નત્રયસમારાધકઃ સુવસુમ્નિર્વસ્તુતત્ત્વપરિજ્ઞાનાન્ન કદાચિદપિ ગ્લાયતિ ।
 एषः=सुवसुमुनिः वीरः=संयमानुष्ठानकुशलः प्रशंसितः=गणधरादिभिरभिनन्दितः,
 स एव च लोकसंयोगं-लोकेन=असंयमिलोकेन सह संयोगः=सम्बन्धो ममीकार इति
 यावत् लोकसंयोगस्तं, यद्वा-लोकसंयोगं-लोकैर्वाह्यभूतैर्हिरण्यसुवर्णधनधान्यमाता-
 पितृपुत्रकलत्रदुहित्रादिभिराभ्यन्तरै रागद्वेषादिभी रागद्वेषजन्यैरष्टविधकर्मभिर्वा
 सह संयोगं=सम्बन्धम् अत्येति=अतिक्राम्यति स मुनिर्ममत्त्वादिभिः परिमुक्तो भवती-

ये लक्षण दुર્વસુ મુનિ કે હૈં, અવ સુવસુ મુનિ કે સમ્બન્ધ કા વર્ણન કરતે હૈં—

વે સુવસુ મુનિ હૈં જો વીતરાગ પ્રભુ કી આજ્ઞા કે આરાધક હૈં—રત્ન-
 ત્રયમાર્ગ કે પાલને મેં સાવધાન હૈં । વે વસ્તુતત્ત્વ કે વાસ્તવિક જ્ઞાતા
 હોને સે કમી મી અન્યથા પ્રરૂપણા નહીં કરતે । પ્રરૂપણા કે અનુ-
 સાર હી અપની પ્રવૃત્તિ રખતે હૈં । જૈસા કહતે હૈં વૈસા સ્વયં પાલન કરતે
 હૈં, હસલિયે હનકો કિસી મી પ્રકાર કા ભય મી નહીં હોતા; યે વીર હોતે
 હૈં । ગણધરાદિક દેવોને એસે હી સુવસુ મુનિયોં કી પ્રશંસા કી હૈ । હનહેં
 વીર હસલિયે કહા ગયા હૈ કિ—યે નિર્દોષ સંયમ કે અનુષ્ઠાન કરને મેં
 કુશલ હોતે હૈં । અસંયમી લોગોં કે સાથ યદિ કદાચિત્ હનકા સંયોગ
 હો જાતા હૈ તો મી યે અપને મોક્ષમાર્ગ સે ચલિત નહીં હોતે હૈં । અથવા
 વાહ્યપરિગ્રહ—હિરણ્ય સુવર્ણ ધનધાન્ય માતા-પિતા પુત્ર કલત્ર આદિ કે
 સાથ હનકા સમ્બન્ધ હો જાતા હૈ તો યે હસ સમ્બન્ધસે સદા બહિર્ભૂત

આ લક્ષણ દુર્વસુ મુનિના છે, હવે સુવસુ મુનિના સળ ધનું વર્ણન કરે છે:—

તે સુવસુ મુનિ છે જે વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાના આરાધક છે. રત્નત્રય
 માર્ગનું પાલન કરવામાં સાવધાન છે. તે વસ્તુતત્ત્વના વાસ્તવિક જ્ઞાતા હોવાથી
 જે કોઈ વખત અન્યથા પ્રરૂપણા કરતા નથી. પ્રરૂપણા અનુસાર જ પોતાની
 પ્રવૃત્તિ રાખે છે. જેવું કહે છે તેવું સ્વયં પાલન કરે છે, તેથી તેને કોઈ પણ
 પ્રકારનો ભય રહેતો નથી. તે વીર બને છે. ગણધરાદિક દેવોએ એવા જ સુવસુ
 મુનિઓની પ્રશંસા કરી છે, તેમને વીર એટલા માટે કહેવામાં આવેલ છે કે તે
 નિર્દોષ સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવામાં કુશળ હોય છે. અસંયમી લોકોનો સંગ
 કદાચ સંયોગથી બને તો પણ તે પોતાના મોક્ષમાર્ગથી ચલિત થતા નથી, અને
 બાહ્ય પરિગ્રહહિરણ્ય સુવર્ણ ધન ધાન્ય માતા પિતા પુત્ર કલત્ર આદિની સાથે
 તેનો સંબંધ થાય તો પણ તે તેવા સંબંધમાં સદા તે બહિર્ભૂત રહે છે તેમાં
 તેની મમતા લાગતી નથી. આભ્યંતર પરિગ્રહ રાગ દ્વેષ આદિ, અથવા તેનાથી

दुत्तरं कर्तुम् असमर्थो भवतीत्यर्थः । यद्वा-ज्ञानवानपि चारित्रशून्यः पूजासत्कारभयाद् मोक्षमार्गनिरूपणावसरे यथावस्थितं बोधयितुं लज्जत इवेत्यर्थः, यश्च तीर्थङ्कराज्ञा-
प्रवृत्तिं देखकर वास्तविक मुनिके आचारविषयक प्रश्न उससे पूछता है तो वह वस्तुतत्त्व का वास्तविक ज्ञाता न होने से उसके प्रश्नका यथार्थ उत्तर नहीं दे सकता है, या जो कुछ कहता है वह स्वकपोलकल्पित ही कहता है जिसे लोग मानने को तैयार नहीं होते । इस प्रकार वह अपनी मान्यता में बढ़ा लगने के अथवा पोल खुलने के डर से सदा दुःखी ही बना रहता है । अथवा-ज्ञानकलासम्पन्न हो तो भी यथार्थ चारित्र से वह शून्य है इसलिये जिस समय वह मोक्ष मार्ग की प्ररूपण करता है उस समय वह उसकी यथार्थ प्ररूपणा करने में लज्जित जैसा होता है, क्योंकि वह समझता है कि मैं स्वयं यथार्थ चारित्रशाली नहीं हूँ, यदि मैं वास्तविक वस्तुस्थिति का परिचय लोगों को करा दूँगा तो लोगों की दृष्टिमें मेरी मान्यता गिर जावेगी, लोग कहेंगे कि-महाराज ! जैसी आप प्ररूपणा करते हैं उस प्रकार की क्रिया आप क्यों नहीं पालते ? । इस प्रकार अपना मान-सम्मान के जाने के भय से वह लोगों को अन्ध-कार में ही रखता है, परन्तु उसे यह भय सदा लगा रहता है कि कहीं कोई यथार्थ वक्ता आकर वास्तविक वस्तुस्थिति का प्रतिपादन न करदे।

आचारविषयनो प्रश्न पूछे छे तो ते वस्तुतत्त्वनो वास्तविक ज्ञाता न होवाथी तेना प्रश्ननो उत्तर यथार्थइपे आपी शकतो नथी. अगर जे कंठ पणु जवाण आपे छे तो ते स्वकपोलकल्पित ज आपे छे, जे मानवाने लोक तैयार थता नथी. आवा प्रकारथी ते पोतानी मान्यतामां अध लागवाना लयथी अथवा पोल खुल्ली थवाना लयथी सदा दुःखी भनी रहे छे, अथवा ज्ञानकलासंपन्न होय तो पणु यथार्थ चारित्रथी ते शून्य छे, तेथी जे वभते मोक्षमार्गनी प्ररूपणा करे ते वभते ते तेनी यथार्थ प्ररूपणा करवामां लज्जित भने छे, कारणे के ते समजे छे के हुं स्वयं यथार्थचारित्रशाली नथी, कदाय हुं वास्तविक वस्तुस्थितिनो परिचय लोकाने करावी आपीश तो लोकाने दृष्टिमां भारी मान्यता नीथी पडशे, लोक जोलवा मांडशे के-महाराज ! जेवी आप प्ररूपणा करे छे तेवा प्रकारनी क्रिया आप केम पाणता नथी ? आवा प्रकारे पोतानुं मान सम्मान जवाना लयथी ते लोकाने अंधारामां ज राखे छे, परंतु तेने सदा ते लय लाग्ये ज रहे छे के कदाय केई यथार्थवक्ता आवीने वास्तविक वस्तुस्थितिनुं प्रति-पादन न करी नांजे.

છાયા—યદ્દુઃખં પ્રવેદિતમિહ માનવાનાં તસ્ય દુઃખસ્ય કુશલાઃ પરિજ્ઞામુદાહરન્તિ-
 इति कर्म परिज्ञाय सर्वशः, योऽनन्यदर्शी सोऽनन्यारामः, योऽनन्यारामः सोऽनन्यदर्शी,
 यथा पुण्याय कथ्यते तथा तुच्छाय कथ्यते, यथा तुच्छाय कथ्यते तथा पुण्याय
 कथ्यते, अपि च हन्यादनाद्रियमाणः ॥ सू० ८ ॥

टीકા—‘યદ્દુઃખ’ મિત્યાદિ, યત્=અનિર્દિષ્ટં દુઃખં=શારીરિકમાનસિકં, દુઃખ-
 जनकं कर्म वा यथा यत्र येन प्रकारेण कर्म वध्यते मुच्यते वा, यथा च विपाको भवति
 यथा च न भवति तत्सर्वं प्रवेदितं=तीर्थङ्करगणधरैः प्ररूपितम् । इह=अस्मिन् लोके
 कुशलाः=द्रव्यक्षेत्रकालभावपरिज्ञाननिपुणाः स्वसमयपररामयज्ञाः परीपहोपसर्ग-
 सहनक्षमाः, कर्ममहासुभटघटाविघटनोपायघटकाः रागद्वेषमहोरगविषमविषमन-
 विषवैद्याः, कपायानलसन्तापप्रशमनप्रवीणाः, विकटभवाटवीपारगमननिष्णाताः
 भावकुशलाः, मानवानां तस्य दुःखस्य पूर्वोक्तस्य प्राणातिपाताद्युपाजितस्य कर्मणो
 वा परिज्ञाम्=कर्मोपाजिततन्निरोधकारणपरिज्ञानम् उदाहरन्ति=उपदिशन्ति-वन्धो

અવ ફિર મી ભગવાન કે ઉપદેશ કો કહતે હૈં—‘જં દુઃખં’ ઇત્યાદિ ।

इस चतुर्गतिक रूप संसार में ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है जो किसी
 न किसी तरह से दुःखी न हो । कोई शारीरिक तो कोई मानसिक
 दुःख से हर समय दुःखी ही बने रहते हैं । इन दुःखों का प्रदाता जीवों
 को अपने किये हुए कर्म के सिवाय और कोई नहीं है । यह बात हमें
 हमारे तीर्थङ्कर गणधरादि महापुरुषों ने अच्छी तरह से शास्त्रों में बत-
 लाई है । साथ में यह भी बतलाया है कि जिन कर्मों से हमें सुखदुःख
 प्राप्त होता है उन कर्मों को यह जीव किस प्रकार से कैसे बांधता है ?,
 तथा उन कर्मों के उदय क्षय क्षयोपशमादि कैसे होते हैं ? कैसे नहीं
 होते हैं ? । उन्हीं के सिद्धान्तानुसार आचार्य आदि महर्षिगण भी—

હવે ફરીથી પણ ભગવાનનો ઉપદેશ કહે છે—‘જં દુઃખં’ ઇત્યાદિ.

આ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં એવું કોઈ પણ પ્રાણી નથી જે કોઈને
 કોઈ પ્રકારે દુઃખી ન હોય કોઈ શરીરથી તો કોઈ મનથી દુઃખી તેવા પ્રકારે
 સદા દુઃખી બની રહે છે આ દુઃખોનો પ્રદાતા જીવોને પોતાના કરેલા કર્મો સિવાય
 બીજું કોઈ પણ નથી આ વાત અમને અમારા તીર્થંકરોએ તથા ગણધરાદિકે ઘણી
 સારી રીતે શાસ્ત્રોમાં બતાવી છે સાથે એ પણ બતાવેલ છે કે જે કર્મોથી અમોને
 સુખદુઃખ પ્રાપ્ત થાય છે તેવા કર્મોને આ જીવ કેવા પ્રકારે કેવી રીતે બાંધે
 છે ? તથા તેવા કર્મોના ઉદય ક્ષય ક્ષયોપશમાદિ કેમ થાય છે ? કેવી રીતે થતા
 નથી ? તેના સિદ્ધાન્તાનુસાર આચાર્ય આદિ મહર્ષિગણ પણ—જે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર,

ત્યર્થઃ, કિં તેનેત્યાહ-‘एष’ इत्यादि, एषः=लोकसंयोगातिक्रमो न्यायः=सन्मार्गः प्रोच्यते=कथ्यते, यद्वा-‘नायः’ इतिच्छाया, ‘नायः’ आत्मानं मोक्षं नयतीति नायः=सुसुभुरनगारः, आर्षित्वात्कर्तरि घञप्रत्ययः, भगवदाज्ञानुयायी सुवसुमुनिरेव मोक्षं लभत इति तात्पर्यम् ॥ सू० ७ ॥

સામ્પ્રતં ભગવદુપદેશમેવ દર્શયતિ-‘જં દુઃખં’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જં દુઃખં પવેદ્યં इह माणवाणं तस्स दुःखस्स कुसला परिन्नमुदाहरंति, इय कम्मं परिन्नाय सव्वसो, जे अणन्नदंसी से अणन्नारामे, जे अणन्नारामे से अणन्नदंसी, जहा पुण्णस्स कत्थइ तहा तुच्छस्स कत्थइ, जहा तुच्छस्स कत्थइ तहा पुण्णस्स कत्थइ, अवि य हणे अणाइयमाणे ॥ सू० ८ ॥

રહતે હૈં, ઉનમેં ઇનકી મમતા નહીં હોતી હૈ । આભ્યન્તર પરિગ્રહ-રાગદ્વેષ આદિ યા ઇનસે ઉત્પન્ન આઠ કર્મોં કે સાથ કે સમ્બન્ધ કો સદા યે નાશ કરને મેં ઉદ્યત રહતે હૈં । યે કોઈં ખીં એસા કાર્ય યા પ્રયત્ન નહીં કરતે કિ જિસસે રાગદ્વેષાદિક યા ઉનકી પરમ્પરા બઢે યા ઇનસે ઉત્પન્ન કર્મોં કા બન્ધ દૃઢ હોતા રહે । સદા યે વૈસા હી પ્રયત્ન કરતે હૈં કિ જિસસે રાગ-દ્વેષાદિક કા સમ્બન્ધ છૂટે ઔર સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા એવં આગામી કર્મોં કા સંવર અર્થાત્ બન્ધ કા અભાવ હોતા રહે । ઇસ પ્રકાર કા યહ ઇનકા લોકસંયોગ-માતાપિતાદિક કા સમ્બન્ધ-કા ત્યાગ હી સન્માર્ગ હૈ । અથવા “નાએ” કી છાયા “નાય” ખીં હૈ । આત્મા કો જો મોક્ષ પ્રાપ્ત કરાતા હૈ વહ નાય હૈ, અર્થાત્ ભગવાન કી આજ્ઞાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરને વાલા, એસા સુવસુ મુનિ હી મોક્ષ કા પ્રાપક હોતા હૈ, અન્ય નહીં ॥સૂ૦ ૭॥

ઉત્પન્ન થતાં આઠ કર્મોના સંબંધનો નાશ કરવામાં સદા તે ઉદ્યમી રહે છે. તે કોઈ પણ એવું કાર્ય કે પ્રયત્ન નથી કરતા કે જેનાથી રાગ દ્વેષાદિક અગર તેની પરંપરા વધે, અગર તેનાથી ઉત્પન્ન કર્મોના બંધ દૃઢ થતાં રહે. સદા તે એવો જ પ્રયત્ન કરે છે કે જેનાથી રાગદ્વેષાદિકનો સંબંધ છુટે, અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા અને આગામી કર્મોનો સંવર અર્થાત્ બંધનો અભાવ થતો રહે. આવા પ્રકારનો તેનો લોકસંયોગ-માતા પિતાદિકના સંબંધનો ત્યાગ જ સન્માર્ગ છે. અથવા “નાએ”ની છાયા “નાયઃ” પણ છે. આત્માને જેનાથી મોક્ષ પ્રાપ્ત થાય તે નાય છે, અર્થાત્ ભગવાનની આજ્ઞાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા એવા સુવસુ મુનિ જ મોક્ષના પ્રાપક બને છે, અન્ય નહિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ધર્મોપદેશકઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—‘યોડન્યે’—ત્યાદિ, યઃ કશ્ચિત્ અનન્યદર્શી-અન્યં દ્રષ્ટું શીલં યસ્ય સોડન્યદર્શી, ન અન્યદર્શી=અનન્યદર્શી=અન્યદર્શનશ્રદ્ધાનરહિતઃ-ભગવદુપદિષ્ટવસ્તુતત્ત્વરુચિશીલો ભવતિ સ એવ અનન્યારામઃ=રત્નત્રયાતિરિક્ત-વસ્તુરમણવિરતો ભવતિ । મિથ્યાદૃષ્ટિશાસ્ત્રસ્યાનાત્મણીતત્વાત્તત્ર ન રમત ઇત્યાશયઃ ।

કરનેવાલે, તથા उनके मतानुसार चलनेवाले व्यक्तिका यह प्रधान कर्तव्य है कि वह उनके इस प्रकारके दिव्य उपदेशको—कि ज्ञानावरणीयादिक कर्मोंको यह जीव इस प्रकार बांधता है और तज्जन्य इन दुःखों को नितप्रति भोगता रहता है, इन सभी बातोंको—ज्ञ-परिज्ञासे जानकर और प्रत्याख्यान-परिज्ञासे तीन करण तीन योगोंद्वारा उन सबका त्याग करे, तथा ‘फिरसे नवीन कर्मोंका आस्रव न हो’ इस प्रकारसे अपनी प्रवृत्तिको संभालकर रखे ।

ધર્મોપદેશક કેસા હોતા હૈ? ઇસ વાતકા ખુલાસા કરતે હુણ કહતે હૈ—‘જે અણન્નદંસી’ ઇત્યાદિ, તીર્થઢ્ઢરાદિદ્વારા પ્રતિપાદિત સિદ્ધાન્તકે સિવાય અન્ય સિદ્ધાન્તમૈં જિસકી ઉપાદેયરૂપસે આસ્થા નહીં હોતી હૈ ઉસકા નામ અનન્યદર્શી હૈ । અન્ય સિદ્ધાન્તકો ગ્રહણ કરનેકી જિસકી દૃષ્ટિ હોતી હૈ વહ અન્યદર્શી હૈ, ઇસસે વિપરીત અનન્યદર્શી હૈ । જો અનન્યદર્શી હૈ વહી અનન્યારામ હૈ, અર્થાત્ જિસકી રુચિ વીતરાગ પ્રતિપાદિત તત્ત્વોમૈં હી એકતાનરૂપસે તલ્લીન હૈ । વહ ઉનસે અતિરિક્ત મિથ્યાદૃષ્ટિયોંકે શાસ્ત્રોંમૈં કબી ભી રતિશાલી નહીં હોતા હૈ પ્રત્યુત ઉનકે

વ્યક્તિનું એ પ્રધાન કર્તવ્ય છે કે તે તેના આવા પ્રકારના દિવ્ય ઉપદેશને કે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોને એ જીવ આ પ્રકારે બાંધે છે અને તજ્જન્ય તેવા દુઃખોને નિત્ય ભોગવતા રહે છે આ સઘળી વાતોને—જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી જાણીને, અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી ત્રણ કરણ ત્રણ યોગદ્વારા તે સઘળાનો ત્યાગ કરે, તથા ‘ફરીથી નવીન કર્મોના આશ્રવ ન બને’ તેવા પ્રકારથી પોતાની પ્રવૃત્તિને સંભાળી રાખે.

ધર્મોપદેશક કેવા હોય છે? એ વાતનો ખુલાસો કરતાં કહે છે—‘જે અણન્નદંસી’ ઇત્યાદિ.

તીર્થકરાદિદ્વારા પ્રતિપાદિત સિદ્ધાન્ત સિવાય અન્ય સિદ્ધાન્તમાં જેની ઉપાદેય રૂપથી આસ્થા થતી નથી તેનું નામ અનન્યદર્શી છે. બીજા સિદ્ધાન્તને ગ્રહણ કરવાની જેની દૃષ્ટિ થાય છે તે અન્યદર્શી છે, તેનાથી વિપરીત અનન્યદર્શી છે. જે અનન્યદર્શી છે તે અનન્યારામ છે. અર્થાત્ જેની રૂચી વીતરાગપ્રતિપાદિત તત્ત્વોમાં જ એકતાન રૂપથી તલ્લીન છે, તે તેથી અતિરિક્ત મિથ્યાદૃષ્ટિઓના શાસ્ત્રોમાં કદી પણ રતિશાળી થતા નથી, બલ્કે તેના સિદ્ધાન્તોની

વન્ધહેતુસ્તન્મોક્ષો મોક્ષહેતુશ્ચ ભવતીતિ સતતં કથયન્તીત્યર્થઃ, અપિ ચ ઇતિ=યત્પૂર્વોક્તં કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિકં તજ્જન્યં યદ્દુઃખં તદ્, યચ્ચ પ્રાણિદુઃસ્વપરિજ્ઞાતારઃ કુશલા ઉદાહરન્તિ તદપિ ચ સર્વશઃ=સર્વપ્રકારેણ પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યા-
 રુચ્યાનપરિજ્ઞયા યોગત્રિકકરણત્રિકૈઃ પરિહત્ય ચાસ્રવદ્વારેષુ ન વર્તેત, યદ્વા સર્વશઃ=
 ભેદપ્રભેદપૂર્વકં પરિજ્ઞાય કથયતિ, અથવા સર્વશઃ=સર્વસ્માત્ કેવલિનશ્ચતુર્દશપૂર્વવિદો
 વા સકાશાત્ પરિજ્ઞાય=જ્ઞાત્વા, યદિવા સર્વશઃ=આક્ષેપણ્યાદિભિશ્ચતુર્વિધાભિઃ
 કથાભિઃ કથયતિ ।

જો દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કે પરિજ્ઞાન મેં નિપુણ હોતે હૈં, સ્વ-
 સિદ્ધાન્ત ઓર પરસિદ્ધાન્ત કે જો વેત્તા હોતે હૈં, પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ કે
 સહને મેં જો શક્તિશાલી હોતે હૈં, કર્મરૂપી મહાસુખદોં કી ઘટાકો હટાને
 કે ઉપાયોં કે જુટાને મેં પ્રવીણ હોતે હૈં, રાગ ઓર દ્વેષરૂપી શ્વેત ઓર
 કાલે નાગ કે ભયદ્ગ્ન વિષ કો શમન કરને મેં જો વિષવૈદ્ય કે સમાન હૈં,
 કષાયરૂપી અગ્નિ કે જ્વાલાજન્ય સન્તાપ કો શાન્ત કરને મેં જો કુશલ
 હૈં, ઓર જો ભયદ્ગ્ન ઇસ સંસારરૂપી અટવી સે પાર હોને મેં અદ્વિતીય
 નિપુણ હોતે હૈં વે મનુષ્યોં કે ઇસ પૂર્વોક્ત દુઃસ્વકી, અથવા પ્રાણાતિપાતાદિ
 સે ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટવિધ કર્મોં કી પરિજ્ઞા કો નિરન્તર
 પ્રકટ કરતે રહતે હૈં । વે અપને દિવ્ય ઉપદેશોં દ્વારા “કર્મ કિસ તરહ
 બંધતે હૈં ?, બંધ કે કૌન-કૌન સે કારણ હૈં ?, બંધ કા અભાવ કેસે હોતા
 હૈં ? ઓર મોક્ષકે કારણ ક્યા હૈં ?” ઇન સવ વાતોંકો સ્પષ્ટ કર સમ-
 જ્ઞાતે હૈં । ઇનકે દિવ્ય ઉપદેશરૂપ શાસ્ત્રકા ધર્મોપદેશકકે નિકટ શ્રવણ

કાળ અને ભાવના પરિજ્ઞાનમાં નિપુણ હોય છે, સ્વસિદ્ધાન્ત અને પરસિદ્ધાન્તના
 જે બાણકાર છે પરિષદ્ અને ઉપસર્ગ સહન કરવામાં જે શક્તિશાળી હોય છે,
 કર્મરૂપી મહાસુખદોની ઘટાને હટાવવામાં ઉપાયો યોજવામાં જે નિપુણ હોય
 છે, રાગ અને દ્વેષરૂપી ઘોળા અને કાળા નાગના ભયંકર વિષનું શમન કરવામાં
 જે વિષવૈદ્યસમાન છે, કષાયરૂપી અગ્નિની જ્વાલાજન્ય સંતાપને શાન્ત કરવામાં
 કુશળ છે અને જે ભયંકર આ સંસારરૂપી અટવીથી પાર થવામાં અદ્વિતીય
 નિપુણ હોય છે.—મનુષ્યોના તે પૂર્વોક્ત દુઃખોની, અથવા પ્રાણાતિપાતાદિથી
 ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટવિધ કર્મોની પરિજ્ઞાને નિરંતર પ્રકટ કરતા રહે છે
 તે પોતાના દિવ્ય ઉપદેશોદ્વારા “કર્મ કેવી રીતે બંધાય છે ? બંધ શું છે ?
 બંધના ક્યા ક્યા કારણો છે ? બંધ કેવી રીતે થાય ? અને મોક્ષનું કારણ
 શું છે ?” આ બધી બાબતો સ્પષ્ટ રીતે સમજાવે છે. તેના દિવ્ય ઉપદેશરૂપ
 શાસ્ત્રના ધર્મોપદેશક નિકટ શ્રવણ કરવાવાળા તથા તેના મતાનુસાર ચાલનાર

एवमुपदेशकस्वरूपमुपदर्श्य सर्वेभ्यः समान एव भगवदुपदेश इति दर्शयति-‘यथे’त्यादि ।

यथा=येन प्रकारेण पुण्याय=पुण्यवते भव्यजीवाय सुरेश्वरचक्रवर्तिमाण्डलिकाय च कथ्यते=उपदिश्यते, तथा=एवमेव तुच्छाय=द्रमककाष्ठहारकाय कथ्यते,

अवलम्बन करके उपदेश देते हैं । इसी बातको प्रकट करनेके लिये “सन्वसो” पदका सूत्रकारने सूत्रमें ग्रहण किया है । जिस विषयमें उपदेशक अकुशल होता है, अथवा जहां पर उसे सन्देह होता है उस विषयको वह स्वयं केवली अथवा श्रुतज्ञानीके पाससे जानकर बादमें उसका प्रतिपादन करता है । जिस समय केवलियोंका यहां पर अस्तित्व था उस समय भी धर्मोपदेशक थे । धर्मोपदेशकोंको जिस विषयमें शंका होती थी वे अपनी शंकाओंका समाधान उनके निकट करते थे, और उस विषयमें पूर्ण निष्णात बनते थे । यद्यपि वर्त्तमानकालमें इस क्षेत्रमें साक्षात् केवली विद्यमान नहीं हैं फिर भी उनके स्थानापन्न उनका उपदेश शास्त्रोंमें अब भी विद्यमान है । उपदेशक गुरु उन्हीं उपदेशोंका अब भी अपनी प्रवृत्ति तदनुकूल बनाकर प्रचार करते रहते हैं ।

वीतराग प्रभुद्वारा प्रतिपादित विषय—चाहे वह दरिद्री हो, धनी हो, इन्द्र हो, चक्रवर्त्ती हो, माण्डलिक राजा हो, कोई भी क्यों न हो—सबके लिये समानरूपसे है, इसमें किसीभी जातिविशेष या वर्ण-विशेषका भेद नहीं रक्खा गया है । भगवानका उपदेश पक्षपातसे

તેવી કથાનુ અવલંબન કરીને ઉપદેશ આપે છે. આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે “સન્વસો” પદનુ સૂત્રકારે સૂત્રમાં ગ્રહણ કરેલ છે જે વિષયમાં ઉપદેશક અકુશળ હોય છે અથવા જે ઠેકાણે તેને સંદેહ થાય છે, તે વિષયને તે સ્વયં કેવળી અથવા શ્રુતજ્ઞાની પાસેથી જાણી લે છે, બાદમાં તેનું પ્રતિપાદન કરે છે. જે વખતે કેવળીઓનું અહીં અસ્તિત્વ હતું તે સમય પણ ધર્મોપદેશક હતા. ધર્મોપદેશકોને જે વિષયમાં શંકા થતી હતી તેઓ પોતાની શંકાઓનું સમાધાન તેમની પાસે કરતા હતા અને તે વિષયમાં પૂર્ણ નિષ્ણાત બનતા હતા. જે કે વર્તમાનકાળમાં આ ક્ષેત્રમાં સાક્ષાત્ કેવળી વિદ્યમાન નથી તો પણ તેના સ્થાનાપન્ન તેમનો ઉપદેશ શાસ્ત્રોમાં હજી પણ વિદ્યમાન છે, ઉપદેશક ગુરુ તેઓના ઉપદેશોનો હજી પણ પોતાની પ્રવૃત્તિ તદનુકૂળ બનાવી પ્રચાર કરતા રહે છે.

વીતરાગ પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત વિષય—ચાહે કોઈ દરિદ્રી હોય, ધનીક હોય, ઇન્દ્ર હોય કે ચક્રવર્તી હોય, માંડલિક રાજા હોય, બીજા કોઈ પણ હોય—બધાને માટે સમાનરૂપ જ છે. તેમાં કોઈ પણ જાતિવિશેષ અગર વર્ણ વિશેષનો ભેદ રાખવામાં આવેલ નથી. ભગવાનનો ઉપદેશ પક્ષપાતથી રહિત હોય

સિદ્ધાન્તકા આલોડનકર જબ વહુ ડનકી માન્યતાઓંકો તર્કણાકી કસોટી પર કસતા હૈ ઓર જબ વે અપની યથાર્થતાસે શૂન્ય સાબિત હોતી હૈં તબ ઇસકી દૃષ્ટિમૈં જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોંકી ઓર હી સન્તોષ ઉત્પન્ન હોતા હૈં । વહુ અપનેકો ધન્ય ઇસલિયે માનતા હૈં કિ મુઝે ત્રિલોકીનાથ દ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મકી શીતલ છત્રછાયા મિલી હૈં । સચ્ચે મણિકી કીમત કાચખણડકે દેખનેસે હી હોતી હૈં । ઉપદેશક જબ તક અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ શ્રદ્ધાવાલા નહીં હોગા તબ તક વહુ દૂસરોંકે લિયે અપને સિદ્ધાન્તકા રહસ્ય હૃદયંગમ નહીં કરા સકતા । ઉપદેશક ગુરુકા કર્ત્તવ્ય હૈં કિ વહુ પહિલે અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ રૂપસે જ્ઞાતા હો, શ્રોતાઓંકી ચિત્તવૃત્તિકો પરખનેવાલા હો, ડનકી શંકાઓંકા યુક્તિ ઓર આગમકે અનુસાર સમાધાન કરનેવાલા હો, સદાચારી હો, અપને ઉપદેશમૈં શંકા સમાધાનકે સાથ અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ વ્યવસ્થાપક હો । ઇસ પ્રકારકે ઉપદેશકકા શ્રોતાઓંકે ઉપર અસર જિતના પડતા હૈં ઉતના ઓર કિસીકા નહીં પડતા, ઇસલિયે સૂત્રકારને ડસકી પ્રશંસા-અનન્યારામ ઓર અનન્યદર્શી, ઇન પદોંસે કી હૈં । ઉપદેશક અપને વિષયકા પ્રતિપાદન આક્ષેપણી વિક્ષેપણી સંવેગિની ઓર નિર્વેદની આદિ ચાર પ્રકારકી કથાઓંમૈંસે જિસ કથાકી જહાં આવશ્યકતા હોતી હૈં ડસી કથાકા

આલોચના કરી જ્યારે તે તેમની માન્યતાઓને તર્કણી કસોટી ઉપર કસે છે અને જ્યારે તે પોતાની યથાર્થતાથી શૂન્ય સાબિત થાય છે ત્યારે તેની દૃષ્ટિમાં જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોની તરફ જ સંતોષ ઉત્પન્ન થાય છે. તે પોતાને ધન્ય તેટલા માટે માને છે કે મને ત્રિલોકીનાથદ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મની શીતળ છત્રછાયા મળી છે. સાચા મણિની કીમત કાચના ટુકડા દેખવાથી થાય છે. ઉપદેશક જ્યાં સુધી પોતાના સિદ્ધાંતનો પૂર્ણ શ્રદ્ધાવાળો નહિ અને ત્યાં સુધી તે બીજાઓને પોતાના સિદ્ધાંતનું રહસ્ય હૃદયંગમ કરાવી શકતો નથી. ઉપદેશક ગુરુનું કર્તવ્ય છે કે તે પહેલાં પોતાના સિદ્ધાંતના પૂર્ણ જ્ઞાતા હોય, શ્રોતાઓની ચિત્તવૃત્તિને પારખનાર હોય, તેની શંકાઓનું યુક્તિ અને આગમ અનુસાર સમાધાન કરવાવાળા હોય, સદાચારી હોય, પોતાના ઉપદેશમાં શંકા સમાધાન સાથે પોતાના સિદ્ધાંતનો પૂર્ણ વ્યવસ્થાપક હોય. આવા પ્રકારથી ઉપદેશકની શ્રોતાઓ ઉપર અસર નેટલી પડે છે તેટલી બીજા કશાથી થતી નથી. સૂત્રકારે તેની પ્રશંસા ‘અનન્યારામ અને અનન્યદર્શી’ આ પદોથી કરેલ છે. ઉપદેશક પોતાના વિષયનું પ્રતિપાદન આક્ષેપણી વિક્ષેપણી સંવેગિની અને નિર્વેદની આદિ ચાર પ્રકારની કથાઓમાંથી જે કથાની જ્યાં આવશ્યકતા હોય છે,

दिशेत्, अन्यथोपदेशे वदपायसम्भवात्, तदेवाह—अपि चेत्यादि, अनाद्रियमाणः=अवमन्यमानो भूपादिः, उपदेशकविहितनिन्दः सन् हन्यादपि=सदुपदेशकं नाशयेदपि, 'अपि' सम्भावने, 'च'—शब्दादन्यदपि दण्ड-क्राताडनादिकमपि कुर्यात्,

“दशसूनासमश्चक्री, दशचक्रिसमो ध्वजः ॥

दशध्वजसमा वेश्या, दशवेश्यासमो नृपः ॥ १ ॥ ” इति,

इत्यादिनिन्दासूचिकामरुन्तुदां वाचमभिदधतमुपदेष्टारं प्रति राजा—‘एष मुनिः सर्वधर्मवाहो राजधर्मानभिज्ञो नीतिधर्ममपि न जानाति, मोक्षधर्मस्तावद्दूरादपेतः’ इत्येवं ब्रुवन् क्रुध्यमानो यष्टिमुष्टिभिस्ताडयन् ततो निःसारयन् तत्र रुन्धन् वस्त्रादिकं लुण्ठयन् चर्मादिच्छेदं कारयन् प्राणानप्यपहरेदतस्ताड्यं नोपदिशेदित्याशयः ॥ सू० ८ ॥

विचारे जो उपदेश दिया जायगा उसमें अनेक कष्टोंका उसे सामना करना पड़ेगा । उपदेशमें यदि किसी भी प्रकारसे राजाकी शानके विरुद्ध कोई शब्द उससे निकल जाता है, अथवा राजधर्मके प्रतिपादनमें कोई ऐसी बात आ जाती है जो उसकी प्रतिष्ठाके विरुद्ध पड़ती हो, तो इससे राजा अपना अपमान समझकर उस उपदेष्टाका प्राणघात तक कर देता है । यदि ऐसा न भी करे तो वह उसे दण्डविधान करता है, कोड़ोंसे भी पिटवाता है । इस श्लोकमें राजविरुद्ध बात प्रकट की गई है, जैसे—

“दशसूनासमश्चक्री, दशचक्रिसमो ध्वजः ।

दशध्वजसमा वेश्या, दशवेश्यासमो नृपः ॥ १ ॥ ”

इस प्रकार राजनिन्दासूचक उपदेश यदि उपदेष्टा राजसभामें बैठ कर करे तो इससे राजाके हृदयमें अपार कष्ट होगा । ऐसे उपदेशसे

उपदेशनो प्रवाह्य यथावे. वगर विचार्ये जे उपदेश आपवा भांडशे तो तेमां तेने अनेक कष्टोनो सामनो करयो पडशे उपदेशमां कदाय कोर्ध पछु प्रकारथी राजनी शाननी विरुद्ध कोर्ध शब्द तेनाथी निकणी जय, अथवा राजधर्म प्रतिपादनमां कोर्ध ऐवी वात आवी जय जे तेनी प्रतिष्ठानी विरुद्ध पडे छे तो तेनाथी राज पोतानुं अपमान समज्जे तेवा उपदेशकनो प्राणघात पछु करी नाछे छे कदाय ऐवुं न पछु करे तो तेने दंड करे छे, डोरडाथी नार भारे छे आ श्लोकमां राजविरुद्ध वात प्रकट करवामा आवी छे. जेभ—

‘दशसूनासमश्चक्री, दशचक्रिसमो ध्वज ।

दशध्वजसमा वेश्या, दशवेश्यासमो नृप ॥ १ ॥ ”

आ प्रकार राजनिन्दासूचक उपदेश कदाय उपदेशक राजसभामां जेसीने करे तेथी राजना हृदयमां अपार कष्ट थशे. तेवा उपदेशथी मुनि राजना कोधनो

एवं यथा तुच्छाय कथ्यते तथा पुण्याय कथ्यते । मेघो यथा स्थले जले च सम-
 भावेन वर्षति तथैवोपदेष्टाऽपि निरपेक्षमुच्चावचभ्यः सर्वेभ्योऽनुग्रहबुद्ध्या समा-
 नमेवोपदिशति । अत्रायं विवेकः—उपदेशको हि द्रव्यक्षेत्रकालभावमनुसृत्य 'यथा-
 ऽयं नृपादिरभिगृहीतमिथ्यादृष्टिरनभिगृहीतमिथ्यादृष्टिर्वेत्यादि पूर्वमवधार्यैवोप-
 विहीन होता है । जिस प्रकार मेघकी धारा जलमें और स्थलमें समान-
 रूपसे बरसती है, उसे यह पक्षपात नहीं होता कि मुझे यहां बरसना
 चाहिये अथवा यहां नहीं बरसना चाहिये, इस प्रकारकी निरपेक्ष वृत्तिसे
 ही वह एकरूपसे मेघधारा बरसती है । इसी प्रकार भगवानके उपदेशमें
 भी भेदभावकी वृत्ति नहीं होती कि 'यह पुण्यात्मा है अतः इसके लिये
 मेरा यह उपदेश है, और यह पापी है इसके लिये मेरा यह उपदेश
 नहीं है ' । पुण्यात्मासे लगाकर पापात्मा तक, और धनीसे लगा कर
 काष्ठहार-लकड़हारे तक, तथा राजासे लगा कर रंक तक सबके लिये
 प्रभुका उपदेश एक रससे सना हुआ होता है फिर भी उपदेशकका
 कर्त्तव्य है कि वह उस उपदेशको द्रव्य क्षेत्र काल और भावके अनुसार
 श्रोताओं तक पहुंचावे । यह उपदेशककी ही कुशलता है । अन्यथा वह
 उस उपदेशसे अपने स्वयंकी हानि करनेवाला हो जाता है । जैसे राज-
 सभामें बैठ कर धर्मोपदेश देनेवाला उपदेष्टा पहिले इस बातका अपने
 मनमें निर्णय कर लेवे कि यह राजा अभिगृहीतमिथ्यादृष्टि है या अन-
 भिगृहीत मिथ्यादृष्टि है ? फिर अपने उपदेशका प्रवाह चलावे । विना

છે. જેવી રીતે મેઘની ધારા જળમાં અને સ્થળમાં સમાન રૂપથી વરસે છે તેને
 એવો પક્ષપાત થતો નથી કે મારે આંહી જ વરસવું અને ત્યાં વરસવું નહિ. એવા
 પ્રકારની નિરપેક્ષ વૃત્તિથી તે એકરૂપથી મેઘધારા વરસે છે. તેવા પ્રકારે ભગવાનના
 ઉપદેશમાં પણ ભેદભાવની વૃત્તિ હોતી નથી કે ' આ પુણ્યાત્મા છે માટે તેના માટે
 મારો આ ઉપદેશ છે, અને આ પાપી છે માટે તેના માટે મારો આ ઉપદેશ નથી.'
 પુણ્યાત્માથી લઈને પાપાત્મા સુધી અને ધનવાનથી લઈને કઠીયારા સુધી, રાજાથી
 રંક સુધી દરેકને માટે પ્રભુનો ઉપદેશ એક રસથી સરખો જ હોય છે, તો પણ
 ઉપદેશકનું કર્તવ્ય છે કે તે તે ઉપદેશને દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ, અનુસાર શ્રોતા-
 એને સંભળાવે, તે ઉપદેશકની જ કુશળતા છે. અન્યથા તે તેવા ઉપદેશથી પોતાની
 જ હાનિ કરવાવાળા બની જાય છે. જેવી રીતે રાજસભામાં એસીને ધર્મોપદેશ
 દેનાર ઉપદેશક પહેલાં એ વાતનો પોતાના મનમાં નિર્ણય કરી લે કે આ રાજા
 અભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે અગર અનભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે ? પછી પોતાના

છાયા —અત્રાપિ જાનીહિ શ્રેય ઇતિ નાસ્તિ, કોડ્યં પુરુષઃ કંચ નતઃ, એષ વીરઃ પ્રશંસિતઃ, યો વદ્ધાન્ પરિમોચયતિ, ઊર્ધ્વમધસ્તિર્યક્ષુ દિશાસુ, સ સર્વતઃ સર્વપરિજ્ઞાચારી, ન લિપ્યતે ક્ષણપદેન વીરઃ, સ મેધાવી યઃ અણોદ્ધાતનસ્વેદજ્ઞઃ, યશ્ચ વન્ધ-પ્રમોક્ષાન્વેપી કુશલઃ પુનર્નો વદ્ધો નો મુક્તઃ ॥ સૂ. ૯ ॥

ટીકા—‘અત્રાપી’—ત્યાદિ, અત્ર=ધર્મકથાયાં શ્રેયઃ=કલ્યાણમ્ ઇતિ અપિ=નિશ્ચયેન નાસ્તિ=ન વિદ્યતે પ્રત્યુત કર્મવન્ધો ભવતીતિ જાનીહિ=બુદ્ધ્યસ્વ ત્વમિતિ શેષઃ, ઇહૈવ તાવન્નાનિષ્ઠમપિ ચ પરત્રાપિ તત્પ્રસજ્યેતેત્યર્થઃ ।

જો ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓનો સમજાવતો દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર ભાવકે અનુસાર ઉપદેશ કરતા હૈં વહ કિસીકે ભી કોપકા અથવા દણ્ડાદિકકા પાત્ર નહીં હોતા હૈં, યહ સમજાવે હૈં—“ एत्थंपि जाण ” इत्यादि ।

વક્તાકો યહ એકાન્તરૂપસે માનના ચાહિયે કિ ધર્મકથા કરનેમેં નિશ્ચયસે કલ્યાણ હી હોતા હૈં, પરન્તુ વિના દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ભાવકા ધ્યાન રખે ધર્મકથા કરે તો વહ કર્મવન્ધકા કારણ ભી હો જાતી હૈં । વીતરાગ-ભાવસે જહાં જય-પરાજય હોનેકા કુછ ભી રુખાલ નહીં હૈં, સિર્ફ; યે પ્રાણી કૈસે સદ્ધર્મકા આશ્રય કરે ? ઇસી સદ્ધિપ્રાયસે જો કથા કી જાતી હૈં, અથવા ઉપદેશ દિયા જાતા હૈં વહી ધર્મકથા હૈં । દ્રવ્ય ક્ષેત્રાદિકકા વિચાર કિયે વિના હી જો ઉપદેશ કિયા જાયગા ઉસસે સંભવતઃ ઉપદેષ્ટા કો અનેક અનર્થોકા સામના ભી કરના પડેગા, ઇસલિયે ધર્મકથાકે કરનેમેં શ્રેયકા ધ્યાન રખના ચાહિયે, જ્યોં કિ અપની પ્રકૃતિકે અનુસાર જીવોં કો

જે ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓને સમજાવે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ અનુસાર ઉપદેશ કરે છે તે કોઈના પણ કોઈના તેમજ દંડાદિકના પાત્ર થતા નથી તે સમજાવે છે—“ एत्थंपि जाण ” इत्यादि

વક્તાએ એકાંત રૂપથી માનવું જોઈએ કે ધર્મકથા કરવામાં નિશ્ચય કલ્યાણ જ થાય છે. પરંતુ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવનો જ્યાં સખ્યા વિના ધર્મકથા કરે તો કર્મબંધનું કારણ પણ બની જાય છે

વીતરાગ ભાવથી જ્યાં જય પરાજય હોવાનો જરા પણ જ્યાં નથી, ફક્ત આ પ્રાણી કેવી રીતે સદ્ધર્મનો આશ્રય કરે ? એવા પ્રકારના સદ્ધ અભિપ્રાયથી જે કથા કરવામાં આવે છે, અથવા ઉપદેશ આપવામાં આવે છે તે જ ધર્મકથા છે. દ્રવ્યક્ષેત્રાદિકનો વિચાર કર્યા વિના જે ઉપદેશ આપવામાં આવે તો વિના સંદેહ ઉપદેષ્ટાને અનેક અનર્થોનો સામનો કરવો પડે, માટે ધર્મકથા કરવામાં શ્રેયનું ધ્યાન રાખવું જોઈએ. કારણ કે પોતાની પ્રકૃતિ અનુસાર પોતાને જે જે

શ્રોતારં પરીક્ષ્યોપદેષ્ટા હિસાદિના નોપલિપ્તો ભવતીતિ દર્શયતિ—‘એત્થં’
 इत्यादि ।

મૂલમ્—એત્થં પિ જાણ સેયંતિ નત્થિ, કેયં પુરિસે કં ચ નણ,
 एस वीरे पसंसिए जे बद्धे परिमोयए, उड्डं अहं तिरियं दिसासु, से
 સવઓ સવવપરિન્નાચારી, ન લિપ્પડ છળપણ વીરે, સે મેહાવી
 જે અણુગ્ધાયણચેયન્ને, જે ય બંધપમુક્કલમન્નેસી કુસલે પુણ નો
 बद्धे नो मुक्के ॥ सू० ९ ॥

મુનિ રાજાકા કોપભાજન હો જાયગા । રાજા યહ સમજ્ઞ લેગા કિ યહ
 मुनि सर्वधर्मसे बाह्य है, राजधर्म क्या है ? इसे भी यह नहीं
 જાનતા હૈ । અરે ! જબ યહ નીતિધર્મ તક નહીં જાનતા હૈ તો બોક્ષધર્મ
 की बात ही क्या कहनी ? यह बिल्कुल जड़-अबुध है । ऐसे व्यक्तियों के
 અસ્તિત્વકી કયા આવશ્યકતા હૈ ? ઇસ પ્રકાર રાજા દ્વારા ઉપેક્ષિત બન યષ્ટિ-
 मुष्टि आदिजन्य अनेक कष्टोंको भोगता हुआ वह मुनि वहांसे निकाल
 દિયા જાતા હૈ; અથવા કારાગારમ્ બંદ કર દિયા જાતા હૈ । ઉસકે વસ્ત્રાદિક
 भी छीन लिये जाते हैं । शरीरका छेदन कर उसके प्राण तक भी ले
 લિયે જાતે હૈ । ઇસલિયે ઉપદેષ્ટાકા યહ સર્વપ્રથમ કર્તવ્ય હૈ કિ વહ
 द्रव्य क्षेत्र काल और भावका अच्छी तरह विचार कर अपने उपदेशका
 પ્રવાહ બહાવે । એસા ઉપદેશ ન કરે કિ જિસસે સ્વયંકો અનેક કષ્ટોંકા
 या प्राणोंके विनाशका सामना करना पड़े ॥ सू० ८ ॥

ભોગ બનશે. રાજા એવું સમજી લેશે કે આ મુનિ સર્વ ધર્મથી બાહ્ય છે,
 राजधर्म शुं छे ? ते पणु आ जाणुतो नथी. अरे ! न्यारे आ नीतिधर्म सुधी
 રાજધર્મ શું છે ? તે પણ આ જાણુતો નથી. અરે ! ન્યારે આ નીતિધર્મ સુધી
 पणु जाणुतो नथी तो मोक्षधर्मनी बात न शुं करवी ? आ बिल्कुल जड़-
 અબુધ છે, આવી વ્યક્તિઓના અસ્તિત્વની શું આવશ્યકતા છે ? આવા પ્રકારે
 રાજાદ્વારા ઉપેક્ષિત બની યષ્ટિ-મુષ્ટિ આદિ જન્ય અનેક કષ્ટોને ભોગવતાં તે
 मुनिने त्यांथी डांकी काढे छे, अगर कारागारमां मोकली देवामां आवे छे. तेना
 વસ્ત્રો પણ આંચકી લેવામાં આવે છે. તેના શરીરનું છેદન કરી તેનો પ્રાણ પણ
 लई देवामां आवे छे माटे न उपदेष्टानुं ओ सर्वप्रथम कर्तव्य छे કે द्रव्य क्षेत्र
 કાળ અને ભાવનો સારી રીતે વિચાર કરી પોતાના ઉપદેશનો પ્રવાહ ચલાવે.
 એવો ઉપદેશ ન આપે કે જેનાથી પોતાને અનેક કષ્ટોનો સામનો કરવો પડે
 અને પ્રાણ પણ ગુમાવે ॥ सू. ८ ॥

યદ્વા-કં=કતરં ધર્મ=સાહ્યં વૌદ્ધમન્યં વા નતઃ=પ્રતિપન્નઃ, ઉપલક્ષણાત્, કિમયં મિથ્યાદૃષ્ટિસ્ત સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ કેન વાઽઽશ્યેનાહં પૃષ્ટઃ?, इत्यादिकमपि समालोच्य धर्ममुपदिशेदित्यर्थः, चशब्दादेशकालादीनां समालोचना कर्तव्या । यश्चैवं विचार्योपदिशति, एषः=उपदेष्टा वादिमानमर्दनपूर्वकप्रवचनपरिमण्डन-समर्थः, प्रशंसितः=गणधरादिभिः श्लाघितः, यो वद्वान्=अष्टविधपाशनिगडितान्

કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નહીં હૈ । યદિ એસા હૈ તો ઉપદેશ કૈસા હોના ચાહિયે ? ઇસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ સર્વપ્રથમ ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓંકો ભલી પ્રકાર દેશ કર ચિત્તમેં યહ વિચાર કરે કિ જો યહ મુઝસે ધર્મકો પૂછતા હૈ, વહ પુણ્યાત્મા હૈ યા તુચ્છાત્મા હૈ? અથવા વક્ત્ર હૈ યા જડ હૈ? અથવા વક્ત્ર-જડ દોનોં સ્વભાવવાલા હૈ? કિસ દેવકા ઉપાસક હૈ? કિસ મતકા અનુયાયી હૈ—સાંખ્યમતકા યા વૌદ્ધધર્મકા? । ઉપલક્ષણસે યહ મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ અથવા સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ? યહ ની જાન લેના ચાહિયે । યહ જો મુઝસે ધર્મવિષયક પ્રશ્ન પૂછતા હૈ સો કિસ અભિપ્રાયસે પૂછતા હૈ? ઇત્યાદિ સમસ્ત વાતોંકા વિચાર કર ઉપદેશકકો ધર્મકા ઉપદેશ દેના ચાહિયે । સાથમેં દેશકાલાદિકકા બી વિચાર કરના આવશ્યક હૈ । જો ઉપદેશક ઇસ પ્રકારકી સમસ્ત વાતોંકા વિચાર કર ઉપદેશ કરતા હૈ વહ વાદિયોંકે માનકા મર્દન કરતા હુઆં અપને સિદ્ધાન્તકી સ્થાપના કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર ગણધરાદિકોંસે પ્રશંસિત વહ ઉપદેશક આઠ પ્રકારકે કર્મરૂપી પાશસે જકડે હુઅ પ્રાણિયોંકો અપને ધર્મોપદેશસે

નથી હવે આવું છે તો ઉપદેશ કેવો હોવો જોઈએ? તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—સર્વ પ્રથમ ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓને ભલી પ્રકાર દેખીને ચિત્તમાં એ વિચાર કરે કે જે આ મને ધર્મ વિષે પૂછે છે તે પુણ્યાત્મા છે યા તુચ્છાત્મા છે? અથવા વક્ત્ર છે યા જડ છે? અગર વક્ત્ર અને જડ બન્ને સ્વભાવવાળા છે? કયા દેવના ઉપાસક છે? કયા મતના અનુયાયી છે—સાંખ્યમતના યા બૌદ્ધધર્મના? ઉપલક્ષણથી મિથ્યાદૃષ્ટિ છે યા સમ્યગ્દૃષ્ટિ? એ પણ બાણી લેવું જોઈએ આ જે મને ધર્મવિષયક પ્રશ્ન પૂછે છે તે કયા અભિપ્રાયથી પૂછે છે? ઇત્યાદિ સર્વ વાતોનો વિચાર કરી ઉપદેશકોએ ધર્મનો ઉપદેશ દેવો જોઈએ સાથમાં દેશ-કાળાદિકનો પણ વિચાર કરવો આવશ્યક છે જે ઉપદેશક આ પ્રકારની સમસ્ત વાતોનો વિચાર કરી ઉપદેશ આપે છે તે વાદિઓના માનનું મર્દન કરીને પોતાના સિદ્ધાન્તની સ્થાપના કરવામાં સમર્થ થાય છે આ પ્રકારે ગણધરાદિકોથી પ્રશંસિત તે ઉપદેશક આઠ પ્રકારના કર્મરૂપી પાશથી જકડાયેલાં પ્રાણીઓને પોતાના ધર્મ

યદ્વા—અત્રાપિ યદ્યદ્વિધિજલ્પનં હિંસકોડયં રાજેત્યાલોચ્ય પશુવધાદિરૂપ હિં-
સાધર્મમણ્ડનાત્મકં ચાર્વાકાદિમતસ્થાપનં ચ, તત્ર સર્વત્રાપિ શ્રેયો નાસ્તિ શાસ્ત્રપ્રતિ-
ષિદ્ધત્વાત્ । તર્હિ કથમુપદિશેદિત્યાહ—‘કોડય’—મિત્યાદિ, શ્રોતારં સમીક્ષ્યોપ-
દેષ્ટા ચેતસિ ચિન્તયેત્, કોડયં પુરુષઃ કં ચાયં ધર્મે પરિપૃચ્છતિ, સોડયં કઃ કિં
પુણ્યવાન્ ઉત તુચ્છઃ ? । યદ્વા—અયં વક્રો વા જડો વા વક્રજડો વા પુરુષઃ, કં
ચ=દેવવિશેષં નતઃ=પ્રણતઃ કં દેવમુપાસ્તે વા ? ।

જો હિતાવહ-ઈષ્ટ હોતા હૈ વહ અન્ય જીવોંકે લિયે મી હિતાવહ હોગા,
યહ નહીં ખાના જા સકતા । સમ્યગ્દષ્ટિ અથવા મન્યપુરુષકે લિયે જિસ
ઉપદેશસે આત્મકલ્યાણ કરનેકી ઓર સતર્કતા જાગૃત હોતી હૈ उसी
ઉપદેશસે મિથ્યાદૃષ્ટિમેં સતર્કતા જાગૃત ન હોકર પ્રત્યુત કલુષતા જાગૃત
હો સકતી હૈ ।

અથવા—“યહ રાજા હિંસક હૈ” એસા વિચાર કર પશુવધાદિરૂપ
હિંસાધર્મકા મણ્ડન, તથા ચાર્વાકાદિક નાસ્તિક મતકા સ્થાપનરૂપ કથન
કરના મી ઉપદેશકકે લિયે કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નહીં હૈ । ઇસસે અનેક
અનર્થોંકી પરમ્પરા વઢતી હૈ । તથા ઇસ પ્રકારકી માન્યતા મી શાસ્ત્રપ્રતિ-
ષિદ્ધ હૈ । અતઃ દૂસરોંકી માન્યતાનુસાર અપની માન્યતાકો દવાકર ઉસકી
હાં મેં હાં મિલા કર જો ઉપદેશક ઉપદેશ કરતા હૈ વહ કલ્યાણકારી
માર્ગ નહીં હૈ । ઇસ સમસ્ત કથનસે યે દો વાતેં ફલિતાર્થ હોતી હૈ—એક તો
અવસર દેખે વિના ધર્મકથા કરનેમેં એકાન્તરૂપસે કલ્યાણ નહીં હૈ તથા
દૂસરોંકી માન્યતાનુસાર અપની માન્યતા બનાકર ઉપદેશ દેના, યહ મી

હિતાવહ-ઈષ્ટ થાય છે તે તે અન્ય જીવો માટે પણ હિતાવહ થશે તેમ માની શકાતું
નથી. સમ્યગ્દષ્ટિ અથવા ભવ્ય પુરુષો માટે જે ઉપદેશથી આત્મકલ્યાણ કરવાની
તરફ સતર્કતા જાગૃત થાય છે તે જ ઉપદેશથી મિથ્યાદૃષ્ટિમાં સતર્કતા જાગૃત
થતી નથી બલકે કલુષતા જાગૃત થાય છે, અથવા “રાજા હિંસક છે” એવો
વિચાર કરી પશુવધાદિરૂપ હિંસાધર્મનું મંડન તથા ચાર્વાકાદિક નાસ્તિકમતનું
સ્થાપન રૂપ કથન કરવું તે પણ ઉપદેશક માટે કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નથી. તેનાથી
અનેક અનર્થોની પરંપરા વધે છે. તથા આ પ્રકારની માન્યતા પણ શાસ્ત્રપ્રતિ-
ષિદ્ધ છે, માટે બીજાઓની માન્યતાનુસાર પોતાની માન્યતાઓને દબાવીને તેની
હા માં હા મેળવી જે ઉપદેશક ઉપદેશ કરે છે તે કલ્યાણકારી માર્ગ નથી.
આ સમસ્ત કથનથી એ બે વાતો સિદ્ધ થાય છે કે—એક તો અવસર દેખ્યા
વિના ધર્મકથા કરવામાં એકાન્તરૂપથી કલ્યાણ નથી તથા, બીજાઓની માન્યતા-
નુસાર પોતાની માન્યતા બનાવીને ઉપદેશ આપવો એ પણ કલ્યાણકારી માર્ગ

પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરતિ, અત એવ સર્વેતિ કથનં સંગતમ્ । એવંભૂતોઽસૌ
કિમાસાદયતીત્યાહ-‘ ન લિપ્યત ’ ઇત્યાદિ, વીરઃ-પ્રત્યાત્મપ્રદેશધર્મપ્રભાવપ્રચાર-
શક્તિસમ્પન્નઃ ક્ષણપદેન હિંસાસ્થાનેનાત્મસંયમવિરાધનારૂપેણ ન લિપ્યતે=નોપલિપ્તો
ભવતિ આક્રોશનોદ્ધ્વંસનવધાદિનાઽઽત્મવિરાધકો જ્ઞાનાદિપચ્ચાચારાનાચરણેન

પરિજ્ઞાસે છોડ દેતા હૈ વહ ઉપદેશક ભી સર્વપરિજ્ઞાચારી કહલાતા હૈ । ઇસ
અપેક્ષાસે પરિજ્ઞાકે સાથ ‘ સર્વ ’ યહ વિશેષણ સંગત બેઠતા હૈ । ઇસ
પ્રકારકા ઉપદેશક કિ જો આત્માકે પ્રત્યેક પ્રદેશમેં ધર્મકા પ્રચાર કરને
કી શક્તિસે સમ્પન્ન હૈ વહ હિંસાકેસ્થાનભૂત અપની આત્માકી વિરાધના
સે તથા સંયમકી વિરાધનાસે કમી ભી ઉપલિપ્ત નહીં હોતા હૈ । તાત્પર્ય
યહ કિ વહ ઉપદેશક-આક્રોશન, ઉદ્ધ્વંસન ઓર વધાદિકસે અપની
આત્માકી વિરાધના કરનેવાલા નહીં હોતા હૈ, ઓર ન જ્ઞાનાચાર દર્શના-
ચાર ઓર તપઆચાર આદિ પાંચ પ્રકારકે આચારોંકે અનાચરણસે
સંયમકા હી વિરાધક હોતા હૈ, ક્યોં કિ વહ ઇન દોનોં પ્રકારકી વિરા-
ધના કે કટુક ફલકો ભલી પ્રકાર જાનતા હૈ । ઉસે યહ પૂર્ણ રૂપસે
વિશ્વાસ હૈ કિ જો ઇન દોનોં પ્રકારકી યા કિસી ભી એકપ્રકારકી વિરા-
ધનાકા કરનેવાલા હોતા હૈ ઉસે સંસારમેં હી ભ્રમણ કરના પડતા હૈ,
કારણ કિ ઇસ પ્રકારકી વિરાધનાસે જીવ અશુભ કર્મોંકા હી બંધ કરતા
હૈ ઓર ઇનકા ફલ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમેં ભ્રમણ કરના હૈ । ઇસ સંસારકે

અવિધિના કથનના દોષોને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી છોડી આપે છે તે ઉપદેશક
પણ સર્વપરિજ્ઞાચારી કહેવાય છે. આ અપેક્ષાથી ‘ પરિજ્ઞા ’ની સાથે ‘ સર્વ ’ આ
વિશેષણ સંગત બેસે છે આ પ્રકારના ઉપદેશક જે આત્માના પ્રત્યેક પ્રદેશમા
ધર્મનો પ્રચાર કરવાની શક્તિથી સંપન્ન છે, તે હિંસાના સ્થાનભૂત પોતાના આત્માની
વિરાધનાથી તથા સંયમની વિરાધનાથી કદિ પણ ઉપલિપ્ત થતા નથી. તાત્પર્ય
એ છે કે તે ઉપદેશક-આક્રોશન ઉદ્ધ્વંસન અને વધાદિકથી પોતાના આત્માની
વિરાધના કરવાવાળા થતા નથી, તેમજ જ્ઞાનાચાર, દર્શનાચાર અને તપઆચાર
આદિ પાંચ પ્રકારના આચારોના અનાચરણથી સંયમના વિરાધક બનતા નથી,
કારણ કે તે એ બંને પ્રકારની વિરાધનાના કટુ ફળને સારી રીતે જાણે છે. તેને
પૂર્ણ રીતે વિશ્વાસ છે કે જે આ બંને પ્રકારની અગર કોઈ પણ એક પ્રકારની
વિરાધનાના કરવાવાળા હોય છે, તેને સંસારમા જ ભ્રમણ કરવું પડે છે. કારણ
કે આ પ્રકારની વિરાધનાથી જીવ અશુભ કર્મોના જ બંધ કરે છે, અને તેનું ફળ
ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમા ભ્રમણ થાય છે, ‘ આ સંસારના કારણભૂત કર્મોના નાશ

પ્રાણિનો ધર્મોપદેશેન પરિમોચયતિ=સંસારકારાગારાન્નિષ્કાશયતિ સ એવ ઊર્ધ્વમધ-
સ્તિર્યક્ષુ લોકેષુ સર્વતઃ=સર્વાસુ દિશાસુ દશસુ દિક્ષિત્યર્થઃ, સર્વપરિજ્ઞાચારી-સર્વા-
ચાસૌ પરિજ્ઞા સર્વપરિજ્ઞા તયા જ્ઞપત્યાખ્યાનરૂપયા દ્વિવિધયાઽઽચરિતું શીલં યસ્ય
સ સર્વપરિજ્ઞાચારી-સમસ્તહેયોપાદેયકુશલઃ। અત્રાયં વિવેકઃ-જ્ઞપરિજ્ઞા દ્વિવિધા-
છાદ્યસ્થિકી કૈવલિકી ચ, તત્ર છાદ્યસ્થિકી મતિશ્રુત્યવધિમનઃપર્યવભેદેન ચતુર્વિધા,
કૈવલિકી કેવલજ્ઞાનરૂપૈકૈવ, મૂલોત્તરગુણભેદેન પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાઽપિ દ્વિવિધા,
યદ્વા સર્વપરિજ્ઞાચારી યો વિધિકથનગુણાન્ જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વાઽવિધિકથનદોષાંશ્ચ

સંસારરૂપી કારાગારસે મુક્ત કર દેતા હૈ । એસા ઉપદેશક હી ઉર્ધ્વદિશા
અધોદિશા તથા ઇસ તિર્યગ્લોકમેં ઓર સમસ્ત દિશાઓમેં સર્વપરિજ્ઞા-
ચારી હોતા હૈ । સમસ્તપરિજ્ઞાકા નામ સર્વપરિજ્ઞા હૈ । સર્વપરિજ્ઞાસે જિસ
કા આચરણ કરનેકા સ્વભાવ હૈ ઉસકા નામ સર્વપરિજ્ઞાચારી હૈ । પરિજ્ઞા
દો પ્રકારકી હૈ (૧) જ્ઞપરિજ્ઞા ઓર (૨) પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા । ઇન દોનોં
પ્રકારકી પરિજ્ઞાસે વહ યુક્ત હોતા હૈ, અર્થાત્ સમસ્ત હેય ઓર ઉપા-
દેયમેં વહ કુશલ હો જાતા હૈ । ઇસકા ભાવ યહ હૈ કિ-જ્ઞપરિજ્ઞા દો
પ્રકારકી હૈ-(૧) છદ્મસ્થ-સમ્બન્ધી ઓર (૨) કેવલજ્ઞાની-સમ્બન્ધી ।
છદ્મસ્થ-સમ્બન્ધી પરિજ્ઞા-મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન ઓર મનઃ
પર્યવજ્ઞાનકે ભેદસે ચાર પ્રકારકી હૈ । કેવલજ્ઞાની-સમ્બન્ધી પરિજ્ઞા એક
કેવલજ્ઞાનરૂપ હી હૈ, ઉસકે ભેદ નહીં હૈ । પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા બી મૂલગુણ
ઓર ઉત્તરગુણકે ભેદસે દો પ્રકારકી હૈ । જો ઉપદેશક વિધિકે કથનકે
ગુણોં કો જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાન કર અવિધિ કે કથનકે દોષોંકો પ્રત્યાખ્યાન-

ઉપદેશથી સંસારરૂપી કારાગારથી મુક્ત કરે છે. તેવા ઉપદેશક જ ઉર્ધ્વદિશા
અધોદિશા તથા આ તિર્યગ્લોકમાં અને સમસ્ત દિશાઓમાં સર્વ પરિજ્ઞાચારી
થાય છે. સમસ્તપરિજ્ઞાનું નામ સર્વપરિજ્ઞા છે સર્વપરિજ્ઞાથી જેનું આચરણ કરવાનો
સ્વભાવ છે તેનું નામ સર્વપરિજ્ઞાચારી છે પરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે. (૧) જ્ઞ-પરિજ્ઞા
અને (૨) પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા, આ બન્ને પ્રકારની પરિજ્ઞાથી તે યુક્ત બને છે.
અર્થાત્ સમસ્ત હેય અને ઉપાદેયમાં તે કુશળ બની જાય છે. તેનો ભાવ એ છે
કે-જ્ઞપરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે. (૧) છદ્મસ્થસંબંધી અને (૨) કેવળજ્ઞાની સંબંધી
છદ્મસ્થસંબંધી પરિજ્ઞા-મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યવજ્ઞાનના
ભેદથી ચાર પ્રકારની છે. કેવળજ્ઞાનીસંબંધી પરિજ્ઞા એક કેવળજ્ઞાનરૂપ જ છે,
તેના ભેદ નથી. પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા પણ મૂલગુણ અને ઉત્તરગુણના ભેદથી બે
પ્રકારની છે. જે ઉપદેશક વિધિના કથનના ગુણોને જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી જાણીને અને

નનુ ય એવ અણોદ્ધાતનચ્છેદજ્ઞઃ સ એવ વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી ચેતિ પૌનરુક્ત્યં સ-
માપતિતમિતિ ચેન્ન—‘અણોદ્ધાતનચ્છેદજ્ઞઃ’ ઇત્યનેન મૂલોત્તરપ્રકૃતિભેદવિશિષ્ટસ્ય
યોગનિમિત્તેન પ્રાપ્તસ્ય કપાયસ્થિતિમતઃ કર્મણો વદ્વસ્પૃષ્ટનિધત્તનિકાચિતરૂપવધ્યમા-
માનાવસ્થાયાસ્તદ્દૂરીકરણોપાયસ્ય ચ સમ્યગ્જ્ઞાતેત્યસ્યાર્થસ્યાભિહિતત્વાદ્ વન્ધપ્ર-
મોક્ષેત્યાદિના ચ કેવલં તદ્દૂરીકરણાનુષ્ઠાનસ્યાભિહિતત્વાત્ ।

જો રત્નત્રયાદિક ઉપાય હૈં ઉન્હેં મી ‘વન્ધપ્રમોક્ષ’ શબ્દસે ગ્રહણ કર લિયા
ગયા હૈં । વન્ધપ્રમોક્ષકા અથવા ઇનકે ઉપાયોંકા અન્વેષણ કરનેકા જિસકા
સ્વભાવ હૈં વહ વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં । જો અણોદ્ધાતનકુશલ ઔર વન્ધ-
પ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં વહી મેધાવી હોતા હૈં ।

શઙ્કા—જો અણોદ્ધાતનમેં કુશલ હૈં વહી તો વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં ।
ફિર ઇસ પ્રકારકે કથનસે તો દોનોં શબ્દોંકે અર્થોંમેં પરસ્પરમેં સમાનતા
આજાનેસે પુનરુક્તિદોષકા પ્રસન્ન આતા હૈં ।

ઉત્તર—યહ વાત નહીં હૈં—“ અણોદ્ધાતનચ્છેદજ્ઞ ” ઇસ શબ્દસે “મૂલ
ઔર ઉત્તરભેદ વિશિષ્ટ યોગકે નિમિત્તસે ગૃહીત ઔર કપાયસે સ્થિતિ-
યુક્ત, એસે કર્મોંકી વદ્વ, સ્પૃષ્ટ, નિધત્ત ઔર નિકાચિતરૂપ વધ્યમાન
અવસ્થાઓંકા ઔર કર્મોંકો દૂર કરનેવાલે ઉપાયોંકા વહ સમ્યગ્જ્ઞાતા
હૈં ” યહ અર્થ પ્રતિપાદિત કિયા ગયા હૈં । ‘વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી’ ઇસ શબ્દ
સે સિર્ફ ઁનકો દૂર કરનેવાલે અનુષ્ઠાનકા પ્રતિપાદન કિયા ગયા હૈં ।

તેને પણ બધપ્રમોક્ષ શબ્દથી ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે બંધપ્રમોક્ષનું, અથવા
તેના ઉપાયોનું અન્વેષણ કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે.
જે અણોદ્ધાતનકુશળ અને બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે તે જ મેધાવી હોય છે.

શંકા—જે અણોદ્ધાતનમાં કુશળ છે તે જ બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે, એ
પ્રકારના કથનથી તો બન્ને શબ્દોના અર્થોમાં પરસ્પરમાં સમાનતા આવવાથી
પુનરુક્તિ દોષનો પ્રસંગ આવે છે

ઉત્તર—એ વાત નથી “ અણોદ્ધાતનચ્છેદજ્ઞ ” આ શબ્દથી “ મૂલ અને
ઉત્તરભેદવિશિષ્ટ યોગના નિમિત્તથી ગૃહીત અને કપાયથી સ્થિતિયુક્ત એવા
કર્મોની બદ્ધ, સ્પૃષ્ટ, નિધત્ત અને નિકાચિતરૂપ બધ્યમાન અવસ્થાઓના, અને તેવા
કર્મોને દૂર કરવાવાળા ઉપાયોના તે સમ્યગ્જ્ઞાતા છે ” આ અર્થ પ્રતિપાદિત કરેલ
છે તથા ‘વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી’ આ શબ્દથી ક્રૂત તેને દૂર કરનાર અનુષ્ઠાનનું
પ્રતિપાદન કરેલ છે.

સંયમવિરાધકો ન ભવતીત્યભિપ્રાયઃ । અન્યદપિ વીરકર્તવ્યમાહ—‘સ મેધાવી’-
ત્યાદિ, સઃ=મુનિઃ મેધાવી=વિદિતાત્મસંયમવિરાધનકટુકફલો યઃ અણોદ્ધાતનચેદજ્ઞઃ-
અણતિ=ગચ્છતિ યેન પ્રાણિગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારં તદાણં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાબલ્યેન
ઘાતનમ્=અપનયનમ્ અણોદ્ધાતનં, તસ્ય તત્ર વા ચેદજ્ઞઃ=નિપુણઃ, યથા બન્ધપ્રમો-
ક્ષાન્વેષી-બન્ધસ્ય=પ્રકૃતિસ્થિત્યનુભાવપ્રદેશરૂપસ્ય પ્રમોક્ષઃ=પ્રકર્ષેણ મોક્ષસ્તદુપાયો
વા રત્નત્રયરૂપસ્તમન્વેષ્ટું=ગવેષયિતું શીલં યસ્ય સ બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી, યોઽણો-
દ્ધાતનચેદજ્ઞો યથા બન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી સ એવ મેધાવી ભવતીતિ સમ્બન્ધઃ ।

કારણભૂત કર્મકો નાશ કરનેકે લિયે હી તો મૈને યહ મુનિવેષ ધારણ
કિયા હૈ । ઇસી અભિપ્રાયકી પુષ્ટિ સૂત્રકાર—“અણુઘાયણચેયન્ને”
‘અણોદ્ધાતનચેદજ્ઞઃ’ ઇસ પદસે કી હૈ—“અણતિ=ગચ્છતિ યેન પ્રાણિ-
ગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારે તદ્ અણં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાબલ્યેન ઘાતનમ્=
અપનયનં, તસ્ય તત્ર વા ચેદજ્ઞઃ” ઇતિ । અર્થાત્—જિસકે દ્વારા પ્રાણિ-
સમૂહ ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ સંસારમેં ભ્રમણ કરતા હૈ વહ અણ-કર્મ હૈ,
ઉસ કર્મકે વિનાશ કરનેમેં જો નિપુણ હૈ વહ અણોદ્ધાતનચેદજ્ઞ હૈ । જો
બંધકે નાશ કરનેકા અથવા ઉસકે નાશ કરનેકે ઉપાયોંકે અન્વેષણ કરને
કા સ્વભાવવાલા હોતા હૈ વહ સંસારકે કારણભૂત કર્મકે વિનાશ કરનેમેં
કુશલ હોતા હૈ ।

શાસ્ત્રમેં બન્ધકે ચાર ભેદ બતલાયે ગયે હૈ—(૧) પ્રકૃતિબન્ધ, (૨)
સ્થિતિબન્ધ, (૩) અનુભાગબન્ધ, (૪) પ્રદેશબન્ધ । ઇનકા અત્યન્ત અભાવ
હોના વહ બન્ધપ્રમોક્ષ હૈ । અથવા ઇનકે અત્યન્ત અભાવ હોનેમેં કારણભૂત

કરવા માટે જ મેં મુનિપણના વેશ લીધો છે. ’ આ અભિપ્રાયની પુષ્ટિ સૂત્રકાર
“અણુઘાયણચેયન્ને” અણોદ્ધાતનચેદજ્ઞઃ એ પદથી કરેલ છે. “અણતિ-
ગચ્છતિ યેન પ્રાણિગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારે તદ્ અણં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાબલ્યેન
ઘાતનમ્=અપનયનં, તસ્ય તત્ર વા ચેદજ્ઞઃ, ઇતિ, અર્થાત્ જેના દ્વારા પ્રાણીસમૂહ
ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસારમાં ભ્રમણ કરે તે અણ=કર્મ છે. તે કર્મનો વિનાશ કરવામાં
જે નિપુણ છે તે અણોદ્ધાતનચેદજ્ઞ છે. જે બંધનો નાશ કરવાના, અથવા તેનો
નાશ કરવાના ઉપાયોનું અન્વેષણ કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે તે સંસારના
કારણભૂત કર્મનો વિનાશ કરવામાં કુશળ હોય છે.

શાસ્ત્રમાં બંધના ચાર ભેદ બતાવેલ છે. (૧) પ્રકૃતિબંધ (૨) સ્થિતિબંધ
(૩) અનુભાગબંધ, અને (૪) પ્રદેશબંધ. તેનો અત્યંત અભાવ થવો તે બંધપ્રમોક્ષ
છે અથવા તેના અત્યંત અભાવ હોવાના કારણભૂત જે રત્નત્રયાદિક ઉપાય છે

યથૈતાદૃશઃ કેવલી છદ્મસ્થો વા સ યદનુષ્ઠિતવાન્ યચ્ચાનુતિષ્ઠતિ વા તદ-
ન્યેનાપિ સાધુનાઽનુષ્ઠેયમિતિ દર્શયતિ—‘ સે જં ચ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે જં ચ આરભે જં ચ નારભે , અનારબ્ધં ચ ન
આરભે છળં છળં પરિણાય લોકસન્નં ચ સઠ્ઠવસો ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા—સ યચ્ચારભતે યચ્ચ નારભતે, અનારબ્ધં ચ નારભતે ક્ષણં ક્ષણં
પરિજ્ઞાય લોકસંજ્ઞાં ચ સર્વશઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—‘ સ ય ’-દિત્યાદિ, સઃ=તીર્થંકરઃ સામાન્યકેવલી પ્રાપ્તરત્નત્રયો મુનિર્વા
જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્માપનયનાય યત્કર્મ તપઃસંયમવિનયાદિકં ચ આરભતે=વિદધાતિ
વટતે=પરાક્રમતે, યતતે વા, યચ્ચ તદ્વિપરીતં સંસારહેતું મિથ્યાત્વાવિરત્યાદિકં

મુક્ત ઇસલિયે નહીં હૈ કિ ઇસ સમય સ્ત્રી ઉસકે ઉસ ઉસ કર્મકા સદ્ભાવ
હૈ । અજ્ઞાન, અવિરતિ ઓર મિથ્યાત્વ, ઇનસે વહ મુક્ત-રહિત હૈ; પરન્તુ
પ્રશસ્ત ચારિત્ર, તપ ઓર વિનયાદિસે મુક્ત-રહિત નહીં હૈ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ઇસ પ્રકારકે ચાહે કેવલી હોં યા છદ્મસ્થ, પરન્તુ ઉન્હોંને જિસકા
આચરણ ક્રિયા ઓર જો આચરણ કર રહે હૈં વહ અન્ય સાધુકો સ્ત્રી
કરના ચાહિયે, ઇસ વાતકો કહતે હૈં—‘ સે જં ચ ’ ઇત્યાદિ ।

તીર્થંકર સામાન્યકેવલી અથવા રત્નત્રયકે ધારી મુનિ, (જે “ સે ”
ઇસ શબ્દસે ગ્રહણ ક્રિયે ગયે હૈં) । ઉન્હોંને જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોંકે
નાશ કરનેકે લિયે જિન તપ સંયમ ઓર વિનયાદિકોંકાં અનુષ્ઠાન-
પાલન ક્રિયા હૈ, ઇનકે પાલન કરનેમેં જો પરાક્રમ દિશ્વલાયા હૈ, તથા
ઇનકી આરાધના કરનેમેં જો પ્રયત્ન ક્રિયે હૈં, ઓર ઇનસે વિપરીત સંસાર

સમયે પણ તેઓને તે તે કર્મનો સદ્ભાવ છે અજ્ઞાન, અવિરતિ અને મિથ્યાત્વ,
તેનાથી તે મુક્ત-રહિત છે પરંતુ પ્રશસ્ત ચારિત્ર, તપ અને વિનયાદિથી મુક્ત-
રહિત નથી. ॥ સૂ૦ ૯ ॥

આવા પ્રકારના ભલે કેવળી હોય કે છદ્મસ્થ પરંતુ તેઓએ જેનું આચ-
રણ કર્યું અને જે આચરણ કરે છે તે બીજા સાધુઓએ પણ કરવું જોઈએ.
આ વાત કહે છે—‘ સે જં ચ ’ ઇત્યાદિ

તીર્થંકર, સામાન્યકેવળી અથવા રત્નત્રયધારી મુનિ, એ “ સે ” શબ્દથી
ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે. તેઓએ જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોંનો નાશ કરવા
માટે જે તપ સંયમ અને વિનયાદિનું અનુષ્ઠાન-પાલન કરેલ છે, તેનું
પાલન કરવામાં જે પરાક્રમ બતાવેલ છે, તથા તેની આરાધના કરવામાં જે પ્રયત્ન
રેલ છે, અને તેનાથી વિપરીત સંસારના કારણભૂત મિથ્યાત્વ તેમજ અવિરતિ

નનુ યથૈતાદૃશઃ સ કેવલી છદ્મસ્થો વા ? પ્રોચ્યતે—કેવલિનોડ્ઝોદ્ધાતેત્યાદિ-
વિશેષણાસમ્ભવાચ્છદ્મસ્થસ્ય ગ્રહણમ્ । કેવલિનસ્તર્હિ કિં સ્યાદિતિ દર્શયતિ—‘કુશલ’
ઇત્યાદિ । કુશલઃ=કેવલી તીર્થઢ્કરઃ સામાન્યકેવલી વા પુનઃ ન વદ્ધઃ ઘાતિકર્મણો
નાશાત્, ન મુક્તઃ=ભવોપગ્રાહિકર્મસત્ત્વાત્ । વાહ્યાભ્યન્તરસાવધાનુષ્ઠાનૈશ્ચ મુક્તઃ,
ભવોપગ્રાહિકર્મણઃ સત્ત્વેન વદ્ધોડ્પિ ।

યદ્વા છદ્મસ્થ એવ કુશલપદેનોચ્યતે, તેન કુશલઃ=પ્રાપ્તરત્નત્રયઃ, ન વદ્ધઃ=અન-
ન્તાનુબન્ધ્યાદિકષાયાનલોપશમાદિસત્ત્વાત્, ન મુક્તઃ=ઇદાનીમપિ તત્કર્મસત્ત્વાત્, અ-
જ્ઞાનાવિરતિમિથ્યાત્વૈશ્ચ મુક્તઃ, પ્રશસ્તૈસ્તુ ચારિત્રતપોવિનયાદિભિર્વા ન મુક્તઃ ॥મૂ૦૧॥

શઢ્કા—જો એસા હોતા હૈ વહ કૌન હૈ? કેવલી હૈ યા છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવલીમેં “ અણોદ્ધાતનચેદજ્ઞ ” ઇત્યાદિ વિશેષણ સંભ-
વિત નહીં હોતે હૈં, ઇન દોનોં વિશેષણોંસે તો કેવલ છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ
હુઆ હૈ । હાં “ કુશલ ” ઇસ શબ્દસે કેવલીકા ગ્રહણ હોતા હૈ, વે ચાહે
સામાન્યકેવલી હોં ચાહે તીર્થઢ્કર હોં । વે ન તો વદ્ધ હૈં; ક્યોં કિ ઉનકે
ઘાતી કર્મોંકા અભાવ હો ચુકા હૈ, ઓર ન મુક્ત હી હૈં, કારણ કિ ભવો-
પગ્રાહી કર્મોંકા ઉનકે સદ્ભાવ હૈ । યદ્યપિ વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર સાવધ
કર્મોંસે વે મુક્ત-રહિત-હૈં તો મી ભવોપગ્રાહી કર્મોંકી સત્તા હોનેસે વે
વદ્ધ મી હૈં ।

અથવા—‘કુશલ’ ઇસ પદસે છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ હુઆ હૈ । જિસને રત્ન-
ત્રયકો પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ વહ કુશલ હૈ । વહ વદ્ધ નહીં હૈ, ક્યોં કિ
ઇસકે અનન્તાનુબન્ધી આદિ કષાયરૂપ અગ્નિકા ઉપશમાદિ હો ચુકા હૈ ।

શંકા—જે એવા છે તે કોણ છે ? કેવળી છે કે છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવળીમાં “ અણોદ્ધાતનચેદજ્ઞઃ ” ઇત્યાદિ વિશેષણો સંભવિત થતા
નથી. આ બન્ને વિશેષણોથી તો કેવળ છદ્મસ્થનું જ ગ્રહણ થયેલ છે. હા “કુશલ”
આ શબ્દથી કેવળીનું ગ્રહણ થાય છે તે ભલે સામાન્ય કેવળી હોય કે તીર્થઢ્કર
હોય. તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેઓને ઘાતી કર્મોના અભાવ થયેલ છે, અને
મુક્ત પણ નથી. કારણ કે ભવોપગ્રાહી કર્મોના તેને સદ્ભાવ છે. જે કે બાહ્ય
અને આભ્યંતર સાવધ કર્મોથી તેઓ મુક્ત-રહિત છે તો પણ ભવોપગ્રાહી
કર્મોની સત્તા હોવાથી તેઓ બદ્ધ પણ છે.

અથવા “કુશલ” આ પદથી છદ્મસ્થનું જ ગ્રહણ થયેલ છે. જેણે રત્નત્રય પ્રાપ્ત
કરેલ છે તે કુશલ છે. તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેના અનન્તાનુબન્ધી આદિ
કષાયરૂપ અગ્નિનું ઉપશમાદિ થઈ ચુકેલ છે. મુક્ત એટલા માટે નથી કે આ

તસ્ય વીપ્સાયાં ક્ષણં-ક્ષણં, હિંસાજનકં સકલં કર્મેત્યર્થઃ, પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહૃત્ય ચ । યદ્વા—ક્ષણઃ સંયમાચારાવસરઃ, તસ્ય વીપ્સાયાં ક્ષણઃ ક્ષણસ્તં પરિજ્ઞાય જ્ઞપરિજ્ઞયા વિદિત્વા, આસેવનપરિજ્ઞયા ચાઽસેવ્ય વિચરેત્ । અપિ ચ લોકસંજ્ઞાં ચ લોકસ્ય=અસંયતલોકસ્ય સંજ્ઞા=સંજ્ઞાનં શબ્દાદિવિષયાસજ્ઞજન્ય-સુખસ્પૃહા પરિગ્રહાદિસંજ્ઞા વા, તાં સર્વશઃ=સર્વપ્રકારેણ યોગત્રિકરણત્રિકેણ પરિજ્ઞાય પરિહૃત્ય, યદ્વા—ચશબ્દાદાત્મૌપમ્યેન ક્ષણનં ન વિદ્ધ્યાત્ “જહ મમ ણ પિયં દુઃખં જાણિય એમેવ સ્વજીવાણં” ઇત્યાદિવચનાત્ । સર્વથા પ્રાણાતિપાતાદૌ ન પ્રવર્તેત

જિસ કર્મકે દ્વારા હિંસારૂપ કાર્ય ઉત્પન્ન હોતા હૈં ઉસ કર્મકા નામ ક્ષણ હૈં । યદ્વા પર વીપ્સા મેં ‘ક્ષણં ક્ષણં’ યહ દ્વિરુક્તિ હૈં । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈં કિ હિંસાત્મક સકલકર્મોં કો સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનકર ઔર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે ઇનકા પરિત્યાગ કર વિચરણ કરે ।

અથવા-સંયમકે આચરણ કરનેકે પ્રત્યેક અવસરકો મી સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનકર ઔર આસેવનપરિજ્ઞાસે ઇસકા સેવન કરે ।

તથા લોકસંજ્ઞાકા સર્વ પ્રકારસે પરિત્યાગ કરે । અસંયત લોકોંકો શબ્દાદિક વિષયોંકે, સમ્બન્ધસે ઉત્પન્ન સુખકી જો ચાહના હોતી હૈં ઉસકા નામ લોકસંજ્ઞા હૈં । અથવા પરિગ્રહાદિકસંજ્ઞાકા નામ મી લોકસંજ્ઞા હૈં । સંયમી ઇસ લોકસંજ્ઞાકા સર્વ પ્રકારસે અર્થાત્ ત્રીન કરણ ત્રીન યોગસે ત્યાગ કરે ।

“લોકસંજ્ઞાં ચ સર્વશઃ” યદ્વા પર જો “ચ” આયા હૈં ઉસસે યહ વાત પ્રકટ કી ગઈ હૈં કિ સંયમી સમસ્ત જીવોંકો અપને સમાન સમજ્ઞ કર કમી મી હિંસાદિક કાર્યોંમે પ્રવૃત્તિ ન કરે, ક્યોંકિ આગમકા

તે કર્મનુ નામ ક્ષણુ છે. અહીં વીપ્સાથી ‘ક્ષણ ક્ષણ’ આ દ્વિરુક્તિ છે એટલે હિંસાજનક સકલ કર્મોંને સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો પરિત્યાગ કરી વિચરણુ કરે.

અથવા સંયમનુ આચરણુ કરવાના પ્રત્યેક અવસરને પણ સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણી અને આસેવનપરિજ્ઞાથી તેનું સેવન કરે.

તથા લોકસંજ્ઞાનો સર્વ પ્રકારથી પરિત્યાગ કરે, અસંયત લોકોંને શબ્દાદિક વિષયોના સંબંધથી ઉત્પન્ન સુખની જે ચાહના થાય છે તેનું નામ લોકસંજ્ઞા છે અથવા પરિગ્રહાદિકસંજ્ઞાનું નામ પણ લોકસંજ્ઞા છે, સંયમી આ લોકસંજ્ઞાનો સર્વ પ્રકારથી અર્થાત્ ત્રણુ કરણુ ત્રણુ યોગથી ત્યાગ કરે

“લોકસંજ્ઞાં ચ સર્વશઃ” આ ઠેકાણે જે ‘ચ’ શબ્દ આવેલ છે તેનાથી એ વાત પ્રગટ કરી આપેલ છે કે સંયમી સમસ્ત જીવોંને પોતાના સમાન સમજ્ઞ જેમ વખત પણ હિંસાદિક કાર્યોંમાં પ્રવૃત્તિ ન કરે, કારણુ કે આગમનું વાક્ય

પ્રાણાતિપાતાદિરૂપાષ્ટાદશપાપસ્થાનાનિ ચ નારમ્ભતે=ન કરોતિ ન ઘટતે ન યતતે ન પરાક્રમતે વા । તદ્વિપરીતમાચરતીત્યર્થોઽપિ । સંયતૈઃ પશ્ચમહાવ્રતપાલનં વિધેયં, સંસારકારણં મિથ્યાત્વાવિરત્યાદિકં ચ નાસેવનીયમિત્યભિપ્રાયઃ । તદેવાહ—‘અનારબ્ધ’-મિત્યાદિ, અનારબ્ધં કેવલિભિઃ પ્રાપ્તરત્નત્રયૈશ્છદ્મસ્થૈર્વા અનારબ્ધમ્=અનાચીર્ણં ચ દ્વિપશ્ચાશત્પ્રકારં નારમ્ભત=ન સેવેત, ચ શબ્દાદ્યદારબ્ધં તત્કુર્યાદિત્યર્થોઽપિ । અનાચરણીયમેવાહ—‘ક્ષણ’-મિત્યાદિ, ક્ષણં ક્ષણં, ક્ષણનં ક્ષણઃ=હિંસનં, કાર્યકારણયોરભેદાદ્ યેન કર્મણા કારણભૂતેન હિંસા કાર્યરૂપા સમુત્પદ્યતે તત્કર્મ ક્ષણઃ, તમ્,

કે કારણભૂત મિથ્યાત્વ એવં અવિરતિ આદિ તથા પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ અઠારહ (૧૮) પાપસ્થાનોં કા જિસ પ્રકારસે ઇન્હોંને પરિત્યાગ કિયા હૈ, ઉંનેકે છોડનેમેં જો અપની શક્તિ પ્રકટ કી હૈ, ઓર જિસ પ્રકારકા પ્રયત્ન કિયા હૈ, તથા ઇન અવિરતિ આદિકોંસે વિપરીત અપની પ્રવૃત્તિ બનાઈ હૈ, સંયતોંકા કર્તવ્ય હૈ કિ વે ભી પાંચ મહાવ્રતોંકા ઇસી લગનકે સાથ પાલન કરેં, ઓર સંસારકે કારણ-મિથ્યાત્વ અવિરતિ આદિ-કા પરિત્યાગ કરેં, સ્વપ્નમેં ભી ઇનકા સેવન ન કરેં । કેવલિયોંને અથવા રત્નત્રયકો પ્રાપ્ત હુએ છદ્મસ્થ મુનિયોંને જિનકા સેવન નહીં કિયા, અર્થાત્ (૫૨) પ્રકારકે જિન અનાચીર્ણોં-અનાચારોં-કા અનુષ્ઠાન નહીં કિયા ઉંનકા સંયતિ કમી ભી સેવન ન કરે ।

સૂત્રમેં આયે હુએ “ ચ ” શબ્દસે ઇસ પ્રકાર અર્થ હોતા હૈ કિ જો ઉંનેં પાલન કિયા હૈ વહી વહ પાલન કરે । ઉંનેં કયા આચરણ નહીં કિયા ? ઇસકો પ્રકટ કરતે હૈ—‘ ક્ષણં ક્ષણં ’ ઇત્યાદિ । ‘ક્ષણ’ શબ્દકા અર્થ હિંસા હૈ । કાર્ય ઓર કારણમેં અભેદ સમ્બન્ધકી વિવક્ષાસે કારણભૂત

આદિ તથા પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ અઠાર (૧૮) પાપસ્થાનોનો જે પ્રકારે તેણે પરિત્યાગ કરેલ છે, તે છોડવામાં જે પોતાનો શક્તિ પ્રગટ કરેલ છે, અને જે પ્રકારનો પ્રયત્ન કરેલ છે, તથા આ અવિરતિ આદિથી વિપરીત પોતાની પ્રવૃત્તિ બનાવી છે. સંયતોનું કર્તવ્ય છે કે તે પણ પાંચ મહાવ્રતોનું તેવી ભાવનાથી પાલન કરે અને સંસારનાં કારણ મિથ્યાત્વ અવિરતિ આદિનો પરિત્યાગ કરે. સ્વપ્નમાં પણ તેનું સેવન ન કરે કેવળીઓએ, અથવા રત્નત્રયપ્રાપ્ત છદ્મસ્થ મુનિઓએ જેનું સેવન નથી કર્યું ‘અર્થાત્ બાવન પ્રકારના જે અનાચારોનું અનુષ્ઠાન નથી કર્યું’ તેનું કોઈ પણ સંયતી સેવન ન કરે.

સૂત્રમાં આવેલાં “ ચ ” શબ્દથી એ પ્રકારે અર્થ થાય છે કે જે તેઓએ પાલન કરેલ છે તે જ તે પાલન કરે. તેઓએ શું આચરણ નથી કર્યું ? તે પ્રગટ કરે છે—‘ ક્ષણં ક્ષણં ’ ઇત્યાદિ. ‘ક્ષણ’ શબ્દનો અર્થ હિંસા છે. કાર્ય અને કારણમાં અભેદસંબંધની વિવક્ષાથી કારણભૂત કર્મદ્વારા જે હિંસારૂપ કાર્ય ઉત્પન્ન થાય છે

ઉપસંહાર:-

અસ્મિન્નધ્યયને હિ લોકવિજયે સજ્ઞો ન કાર્યો બુધૈ-
 માત્રાદૌ ચ મહાવ્રતેઽપ્યદૃઢતા માનોઽપિ હેયસ્તથા ॥
 વૈરાગ્યં વિષયે મુનેર્વિહરણં લોકેઽપિ નિશ્રાણ્યયા
 પુત્રાદૌ મમતાં ત્યજેન્નિગદિતં તૂદેશપટ્કાન્વિતે ॥ ૧ ॥
 ઇત્યાચારાંગસૂત્રસ્ય લોકવિજયાણ્યદ્વિતીયાધ્યયનસ્ય આચારચિન્તામણિ-
 ટીકાયાં પષ્ઠ ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૬ ॥
 ઇતિશ્રી-વિશ્વવિખ્યાત-જગદ્વલ્લભ-પ્રસિદ્ધવાચક-પશ્ચદશભાષાકલિત-
 લલિતકલાપાલાપક-પ્રવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માયક-વાદિમાનમર્દક
 -શ્રીરાહુછત્રપતિ-કોલ્હાપુરરાજપ્રદત્ત - 'જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય' -પદ-
 ભૂષિત-કોલ્હાપુરરાજગુરુ-વાલબ્રહ્મચારિ-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મ-
 દિવાકર-પૂજ્યશ્રી-ઘાસીલાલ-વ્રતિવિરચિતાયામ્ આચા-
 રાંગસૂત્રસ્યાચારચિન્તામણિટીકાયાં લોકવિજયાણ્યં
 દ્વિતીયમધ્યયનં સમ્પૂર્ણમ્ ॥ ૨ ॥

ઉપસંહાર-

લોકવિજય નામક ઇસ પ્રકરણ, મેં એ છે ઉદ્દેશ ભરે,
 માતાદિકમેં સંગ અદૃઢતા, મહાવ્રતોમેં બુધ ન કરે ।
 માન તજન વૈરાગ્ય વિષયમેં, હો વિહાર જગનિશ્રાસે,
 પુત્રાદિકસે મમતા હરની છ ઉદ્દેશ ઇસ નિશ્રાસે ॥ ૧ ॥
 ॥ ઇતિ આચારાંગસૂત્રકે લોકવિજય-નામક દૂસરે અધ્યયનકી
 આચારચિન્તામણિ-ટીકાકા હિન્દીભાષાનુવાદ સંપૂર્ણ ॥ ૨ ॥

—. ઉપસંહાર —

લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનમાં આ છ ઉદ્દેશો બતાવ્યા છે:-જ્ઞાનીએ
 માતા વગેરેનો સંગ ત્યજવો મહાવ્રતોમાં દૃઢતા રાખવી અભિમાન ત્યજવું.
 વિષયોથી વિરક્ત થવું સસારીએને આશ્રયે વિહરવું. અર્થાત્ પચનપાચનાદિક
 સાવધ ક્રિયાઓને ટાળતો થકો ગૃહસ્થોએ પોતાને માટે કરેલ નિરવધ આહાર
 પાણીથી સયમ-યાત્રાનો નિર્વાહ કરવો તથા પુત્ર વગેરેની મમતા ત્યજવી
 એ છ ઉદ્દેશો તેમાં છે. ॥૧॥

આચારાંગ સૂત્રના લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનના છઠ્ઠા ઉદ્દેશનો
 ગુજરાતી અનુવાદ સમાપ્ત ૨-૬.

આ આચારાંગસૂત્રના લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનની આચાર-
 ચિન્તામણિ-ટીકાનો ગુજરાતી અનુવાદ સંપૂર્ણ. ॥૨॥

સંયમાચરણાદૌ ચ પ્રવર્તેતેતિ સૂત્રાશયઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

યથા પૂર્વોક્તસકલગુણવિશિષ્ટસ્તસ્ય કિં ભવતીત્યાહ—‘ઉદેસો’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઉદેશો પાસગસ્સ નત્થિ, વાલે પુણ નિહે કામસમણુન્ને અસ-
મિયદુક્ખે દુક્ખી દુક્ખાણમેવ આવટ્ટં અણુપરિયટ્ટહિત્તિવેમિ । સૂ૦ ૧૧ ।

॥ ઇય વીયજ્ઞયણસ્સ છટ્ઠો ઉદેસો સમત્તો ॥ ૨-૬ ॥

છાયા—ઉદેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ, વાલઃ પુનઃ સ્નિહઃ કામસમણુજ્ઞોડશમિત-
દુઃખો દુઃખી દુઃખાનામેવાવર્તમનુવર્તતે, ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય પઠ ઉદેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૬ ॥

ટીકા—‘ઉદેશ’ ઇત્યાદિ । સૂત્રમિદં તૃતીયોદેશે વ્યાખ્યાતમિતિ । ઇતિ
બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તુ પ્રથમાધ્યયનોક્તદિશાઽવસેયઃ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

વાક્ય હૈ કિ—“ જહ મમ ણ પિયં દુક્ખં, જાણિય એમેવ સવ્વજીવાણં”
જિસ પ્રકાર દુઃખ હમેં અપ્રિય હૈ ઉસી પ્રકાર વહ સમસ્ત જીવોંકો ઓ
અપ્રિય હૈ । હિંસાદિક કાર્યોં મેં જીવોંકો દુઃખ પહુંચતા હૈ, એસા સમજ
કર સંયમી જન કમી ઓ પ્રાણાતિપાતાદિક કાર્યોં મેં પ્રવૃત્તિ ન કરે,
ઑર ન સંયમાચરણસે મુખ મોડે, અર્થાત્ સંયમ મેં પ્રવૃત્તિશાલી બને, યહી
સૂત્રકા આશય હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જો સંયમી પૂર્વોક્ત સકલ ગુણોંસે યુક્ત હોતા હૈ ઉસકે ક્યા હોતા
હૈ ? ઇસકા ખુલાસા કરતે હેં—‘ઉદેસો પાસગસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન ઇસી અધ્યયનકે તીસરે ઉદેશમેં લિખા જા
ચુકા હૈ । ‘ઇતિ બ્રવીમિ’ ઇસકા અર્થ પ્રથમ ઉદેશકે અનુસાર જાન
લેના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ આચારાઙ્ગ સૂત્રકે લોકવિજયનામક દૂસરે અધ્યયનકે છટ્ટે ઉદેશકા
હિન્દી-ભાષાનુવાદ સમાપ્ત ॥ ૨-૬ ॥

છે કે “ જહ મમ ણ પિયં દુક્ખં જાણિય એમેવ સવ્વજીવાણં” જે પ્રકારે દુઃખ
અમને અપ્રિય છે તે પ્રકારે તે સમસ્ત જીવોને પણ અપ્રિય છે. હિંસાદિક
કાર્યોમાં જીવને દુઃખ પહોંચે છે. એવું સમજીને સંયમી જન કદિ પણ પ્રાણા-
તિપાતાદિક કાર્યોમાં પ્રવૃત્તિ ન કરે, અને સંયમાચરણથી દૂર રહે નહિ, અર્થાત્
સંયમમાં પ્રવૃત્તિશાળી બને, એ જ સૂત્રનો આશય છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જે સંયમી પૂર્વોક્ત સકલ ગુણોથી યુક્ત બને છે. તેને શું થાય છે ? તેનો
ખુલાસો કરે છે—‘ઉદેસો પાસગસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ.

આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ અધ્યયનના ત્રીજા ઉદેશમાં લખાઈ ગયેલ છે.
‘ઇતિ બ્રવીમિ’ તેનો અર્થ પ્રથમ ઉદેશ અનુસાર જાણી લેવો ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

પ્રથમોદ્દેશે ભાવસુપ્તાનાં દોષા જાગ્રતાં ચ ગુણાઃ પ્રદર્શિતાઃ ॥ ૧ ॥

દ્વિતીયે ભાવનિદ્રાવતાં દુઃસ્વાનુભવઃ પ્રદર્શિતઃ ॥ ૨ ॥

તૃતીયે સંયમાચરણમન્તરેણ કેવલં દુઃસ્વસહનાદેવ શ્રમણો ન ભવતીતિ કથિતમ્ ॥ ૩ ॥

ચતુર્થે તુ વાન્તવત્ કષાયાસ્ત્યાજ્યાઃ, પાપકર્મણશ્ચ વિરતિઃ, તથા વિદિત-
વેદ્યસ્ય સંયમઃ પ્રતિવોદિતઃ, તથા ક્ષપકશ્રેણિપ્રવિષ્ટાનાં ચ સંયમિનાં મોક્ષો
ભવતીત્યાવેદિતમ્ ॥ ૪ ॥

છોડ કર સંયમીનો સહન કરના ચાહિયે । इस प्रकारके सम्बन्धका
प्रतिपादन करनेवाला यह अध्ययन है । इसमें ४ चार उद्देश हैं । उनमें—

પ્રથમ ઉદ્દેશમેં 'ભાવસુપ્ત સંયમિયોંકે દોષ ઓર જગતે હુએ સંયમિયોંકે
ગુણ દિશ્વલાયે ગયે હેં ૧ ।

દ્વિતીય ઉદ્દેશમેં—'ભાવનિદ્રાવાલે સંયમિયોંકો દુઃસ્વોંકા અનુભવ
કરના પડતા હેં ' यह बात दिखलाई गई है २ ।

તૃતીયઉદ્દેશમેં—'સંયમાચરણકે વિના કેવલ દુઃસ્વોંકે સહન કરને
માત્રસે સાધુ નહીં હોતા હેં ' यह विषय प्रतिपादित किया गया है ३ ।

ચતુર્થ ઉદ્દેશમેં—'વમન-છર્દિત કિયે હુએ અન્નકે સમાન કષાય ત્યાગ
કરને યોગ્ય હેં, પાપકર્મ પરિહરણીય હેં, તથા પદાર્થોંકે સ્વરૂપકો જાનને-
વાલે સંયમી મુનિકે લિયે સંયમ આરાધનીય હેં, એવં ક્ષપકશ્રેણિમેં પ્રાપ્ત
હુએ સાધુજનોંકો મુક્તિકા લાભ અવશ્યંભાવી હેં ' આદિ સર્વ વિષય
પ્રકટ કિયે ગયે હેં ૪ ।

છોડીને સંયમીઓએ સહન કરવા જોઈએ. આ પ્રકારના સંબંધનું પ્રતિપાદન
કરવાવાળું આ અધ્યયન છે. તેમાં ચાર ઉદ્દેશ છે તેમાં—

પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવસુપ્ત સંયમીઓના દોષ અને જાગતા સંયમીઓના
ગુણ બતાવવામાં આવેલ છે. ૧.

બીજા ઉદ્દેશમાં ભાવનિદ્રાવાળા સંયમીઓને દુઃખોનો અનુભવ કરવો પડે
છે, એ વાત બતાવવામાં આવી છે. ૨.

ત્રીજા ઉદ્દેશમાં 'સંયમાચરણ વિના કેવળ દુઃખો સહન કરવા માત્રથી
કોઈ સાધુ બની શકતો નથી' એ વિષય પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે. ૩.

ચોથા ઉદ્દેશમાં—'વમન-છર્દિત કરેલા અન્ન સમાન કષાય ત્યાગ કરવા યોગ્ય છે,
પાપકર્મ પરિહરણીય છે તથા પદાર્થોના સ્વરૂપને જાણવાવાળા સંયમી મુનિ માટે
સંયમ આરાધનીય છે, તેમજ ક્ષપકશ્રેણિમાં પ્રાપ્ત થયેલાં સાધુજનોને મુક્તિનો
જા અવશ્યભાવી છે' આદિ સઘળા વિષય પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. ૪.

। અથાચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય શીતોષ્ણીયનામકં તૃતીયમધ્યયનમ્ ।

દ્વિતીયાધ્યયનકથનાનન્તરં શીતોષ્ણીયં નામ તૃતીયમધ્યયનમભિધીયતે ।
 અસ્ય દ્વિતીયાધ્યયનેન સહાયમભિસમ્બન્ધઃ—શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામકાધ્યયનનિર્દિષ્ટવિશિ-
 ષ્ટવ્રતભારધારિણો લોકવિજયાખ્યદ્વિતીયાધ્યયનોક્તસંયમમનુતિષ્ઠતોઽપાસ્તસમસ્ત-
 કષાયાદિલોકસ્ય પરમપદમારુદ્ધોરકસ્માત્ શીતોષ્ણાઃ=અનુકૂલપ્રતિકૂલાઃ પરી-
 પહાઃ સમુત્પદ્યન્તે । તેષુ સ્ત્રીપરીપહસત્કારપરીપહાવેવાનુકૂલાવન્યે વિંશતિસંખ્યકાઃ
 પરીપહાઃ પ્રતિકૂલાઃ । તેષાં હર્ષવિષાદપરિત્યાગપૂર્વકં પ્રસહનં કર્તવ્યમિતિ સમ્બન્ધા-
 મિધાયકમિદમધ્યયનમ્ । અત્ર ચત્વાર ઉદ્દેશાઃ સન્તિ । તત્ર—

આચારાઙ્ગસૂત્રકા શીતોષ્ણીયનામક તૃતીય અધ્યયન

દ્વિતીય અધ્યયનકે બાદ અબ્બે આ શીતોષ્ણીય નામક તૃતીય અધ્ય-
 યન પ્રારંભ હોતા હૈ । દ્વિતીય અધ્યયનકે સાથે આ અધ્યયનકા આ પ્રકારસે સમ્બન્ધ હૈ કિ શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામક અધ્યયનમેં જિન વિશિષ્ટ
 વ્રતોંકે ધારણ કરનેકા વિધાન કિયા ગયા હૈ અન વ્રતોંકે પાલનેવાલે,
 તથા લોકવિજય નામક દ્વિતીય અધ્યયનમેં પ્રતિપાદિત સંયમકે અનુષ્ઠાન
 કરનેવાલે, સમસ્ત કષાયલોકકે નિરાકરણ કરનેવાલે ઓર પરમપદ જો
 મોક્ષ અસમેં પહુંચનેકી ઇચ્છાવાલે એસે સંયમી મુનિ અકસ્માત્ ઉત્પન્ન શીત-
 ઉષ્ણ અર્થાત્ અનુકૂલ પ્રતિકૂલ પરીપહોંકો સહન કરતે હૈ । પરીપહ ૨૨
 બાઈસ પ્રકારકે હૈ, અનમેં સ્ત્રીપરીપહ ઓર સત્કારપરીપહ હી અનુકૂલ હૈ,
 બાકીકે ૨૦ બીસ પરીપહ પ્રતિકૂલ હૈ । અન સબ પરીપહોંકો હર્ષ વિષાદ

આચારાંગ સૂત્રનું શીતોષ્ણીયનામનું ત્રીજું અધ્યયન.

બીજા અધ્યયન બાદ હવે શીતોષ્ણીય નામના ત્રીજા અધ્યયનનો પ્રારંભ થાય છે. બીજા અધ્યયનની સાથે આ અધ્યયનનો એ પ્રકારે સંબંધ છે કે શસ્ત્ર-
 પરિજ્ઞા નામના અધ્યયનમાં જે વિશિષ્ટ વ્રતો ધારણ કરવાનું વિધાન કરેલ છે,
 તે વ્રતોના પાળવાવાળાં, તથા લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનમાં પ્રતિપાદિત
 સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવાવાળાં, સમસ્ત કષાયલોકનું નિરાકરણ કરવાવાળાં અને
 પરમપદ જે મોક્ષ તેમાં પહોંચવાની ઇચ્છાવાળાં એવાં સંયમી મુનિ અકસ્માત્ ઉત્પન્ન
 શીત-ઉષ્ણ અર્થાત્ અનુકૂળ પ્રતિકૂલ પરિપહો સહન કરે છે. પરીપહ બાવીસ
 પ્રકારના છે. તેમાં સ્ત્રીપરીપહ અને સત્કારપરીપહ, એ બે પરીપહ જ અનુકૂળ
 છે. બાકીના ૨૦ બીસ પરીપહો પ્રતિકૂળ છે. આ સઘળાં પરીપહોને હર્ષ વિષાદ

દ્રવ્યસુષ્તાસ્તસ્કરાદિના મણિમાણિક્યરત્નાદ્યપહારેણ યથાઽન્તર્દાહદારિદ્ર્ય-
દૌર્ભાગ્યાદિલક્ષણપરિતાપકલાપમનુભવન્તિ તથા ભાવસુષ્તા અપિ પ્રમાદાદિના સમ્ય-
ગ્જ્ઞાનદર્શનચારિત્રાદ્યાત્મકરત્નાપહારાદીર્ઘસંસારપરિભ્રમણેન જન્મજરામરણાદિલક્ષણ-
વિવિધપરિતાપકલાપમનુભવન્તિ ।

મુનયઃ=મોક્ષમાર્ગાદવિચલન્તો લબ્ધસમ્યગ્વોધાઃ અનગારાઃ, સદા=અનવરતં
જાગ્રતિ=મિથ્યાત્વાદિનિદ્રાપગમેન ઇષ્ટાનિષ્ટપ્રાપ્તિપરિહારાર્થ યતનયા ગમનાદિ
શાલી જો હૈં વે દ્રવ્યસે સુષ્ત હૈં । અથવા જિસમેં નેત્રોંકા પ્રચાર શિથિલ
હો જાતા હૈં તથા અઙ્ગ-ઉપાઙ્ગોં કી ક્રિયા ભી જહાં શિથિલ હો જાતી હૈં,
એસી અસ્પષ્ટ ચેતનાકી અવસ્થાસે જો યુક્ત હૈં વે ભી દ્રવ્યસે સુષ્ત હૈં,
અર્થાત્ નિદ્રાવસ્થાવાલે પ્રાણી દ્રવ્યસુષ્ત હૈં । યે દ્રવ્યસુષ્ત જીવ જિસ પ્રકાર
ચોરોં વગેરહકે દ્વારા મણિ માણિક્ય ઓર રત્નાદિક દ્રવ્યકે ચુરાયે જાને
સે અન્તર્દાહ એવં દારિદ્ર્ય દૌર્ભાગ્યાદિરૂપ અનેક સન્તાપોંકા અનુભવ
કરતે હૈં ઉસી પ્રકાર ભાવસુષ્ત પ્રાણી ભી પ્રમાદ આદિકે દ્વારા સમ્યગ્જ્ઞાન
સમ્યગ્દર્શન ઓર સમ્યક્ચારિત્રરૂપ રત્નોંકે ચુરાયે જાનેસે દીર્ઘ સંસારમેં
પરિભ્રમણજન્ય જન્મ જરા ઓર મરણ આદિ રૂપ અનેક સન્તાપોંકો
ભોગતે રહતે હૈં ।

મુનિ સદા જગતે હૈં । મોક્ષમાર્ગસે જો વિચલિત નહીં હોતે હૈં ઉનકા
નામ મુનિ હૈં । યે નિરન્તર સચેત રહતે હૈં, અર્થાત્ મિથ્યાત્વાદિ નિદ્રાકે
વિનાશ હોનેસે ઇષ્ટકી પ્રાપ્તિ ઓર અનિષ્ટ કે પરિહારકે લિયે યતનાસે

(૧) દ્રવ્યથી અને (૨) ભાવથી. નિદ્રાપ્રમાદશાળી જે છે તેઓ દ્રવ્યથી સુષ્પ્ત છે,
અથવા જેમાં આંખોનો પ્રચાર શિથિલ થઈ બંધ છે તથા અગ ઉપાંગોની ક્રિયા
પણ બંધા શિથિલ થઈ બંધ છે, એવી અસ્પષ્ટ ચેતનાની અવસ્થાથી જે યુક્ત
છે તેઓ પણ દ્રવ્યથી સુષ્પ્ત છે અર્થાત્ નિદ્રાવસ્થાવાળા પ્રાણી દ્રવ્યસુષ્પ્ત છે.
એ દ્રવ્યસુષ્પ્ત જીવ જે પ્રકારે ચોરો વિગેરે દ્વારા મણિ-માણિક-રત્નાદિક દ્રવ્ય
આદિના ચોરાઈ જવાથી અન્તર્દાહ અને દારિદ્ર્ય દુર્ભાગ્યાદિ-રૂપ અનેક સંતા-
પોનો અનુભવ કરે છે તે પ્રકારે ભાવસુષ્પ્ત પ્રાણી પણ પ્રમાદ આદિ દ્વારા સમ્ય-
ગ્જ્ઞાન સમ્યગ્દર્શન અને સમ્યક્ચારિત્રાદિરૂપ રત્નો ચોરાઈ જવાથી દીર્ઘ સંસારમાં
પરિભ્રમણજન્ય જન્મ જરા અને મરણ આદિરૂપ અનેક સંતાપોને ભોગવતાં રહે છે.

મુનિ સદા જાગતા રહે છે મોક્ષમાર્ગથી જે વિચલિત થતા નથી, તેનું
નામ મુનિ છે. એઓ નિરંતર સચેત રહે છે, અર્થાત્ મિથ્યાત્વાદિ નિદ્રાના
વિનાશ થવાથી ઇષ્ટની પ્રાપ્તિ અને અનિષ્ટના પરિહાર માટે યતનાથી ગમનાદિક

દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય ચરમસૂત્રેણાસ્યવમભિસમ્બન્ધઃ—તત્ર “ દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામે-
વાવર્તમનુપરિવર્તતે ” इत्युक्तं, तदिहापि “ भावसुप्ता दुःखिनो दुःस्वानामेवावर्तमनु-
वर्तन्ते ” इति प्रतिबोधयितुमाह—‘ सुप्ता अमुणी ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—સુપ્તા અમુણી, સયા મુણિણો જાગરંતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—સુપ્તા અમુનયઃ, સદા મુનયો જાગ્રતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—અમુનયઃ=ગૃહસ્થાઃ સુપ્તાઃ=ભાવતઃ સુપ્તાઃ મિથ્યાત્વાજ્ઞાનમયનિદ્રા-
વ્યામોહિતાઃ હિંસાદાસ્રવદ્વારેષુ સતતં પ્રવૃત્તાઃ સન્તિ । સુપ્તા હિ દ્વિવિધા ભવન્તિ
દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ । તત્ર નિદ્રાપ્રમાદવન્તો દ્રવ્યસુપ્તાઃ, યદ્વા-શિથિલિતનયનપ્રચારા-
જ્ઞોપાજ્ઞાવિસ્પષ્ટચેતનાવસ્થાપન્નાઃ દ્રવ્યસુપ્તાઃ । ભાવસુપ્તાસ્ત્વમિહિતા એવ ।

દ્વિતીય અધ્યયનકે અન્તિમ સૂત્રકે સાથે હસ અધ્યયનકા હસ પ્રકાર
સમ્બન્ધ હૈ—ઉસ અધ્યયનકા અન્તિમ સૂત્ર “... દુઃસ્વી દુઃસ્વાણમેવ
આવટ્ઠં અણુપરિચદ્ધૈ ” (દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે) યહ હૈ,
હસકા ભાવ યહ હૈ કિ-દુઃસ્વી દુઃસ્વોંકી પરંપરાકા હી અનુવર્તન કરતે
હૈં । જિસ પ્રકાર યહ વાત ઉસ અધ્યયનમેં કહી ગઈ હૈ ઉસી પ્રકાર યહાં
પર મી—‘ જો ભાવસુપ્ત દુઃસ્વી હૈં વે દુઃસ્વોંકી હી પરમ્પરાકા અનુભવ કરતે
હૈં ’ હસ વિષયકો સમજાનેકે લિયે કહતે હૈં—‘ સુપ્તા અમુણી ’ હત્યાદિ ।

અમુનિ શબ્દકા અર્થ ગૃહસ્થ હૈ । યે ભાવસે સુપ્ત-સોયે હુએ હૈં ।
મિથ્યાત્વ અજ્ઞાનમય નિદ્રાસે વ્યામોહિત મતિવાલે હોતે હુએ યે પ્રાણા-
તિપાતાદિક જો કર્મોંકે આનેકે દ્વાર હૈં ઉનમેં નિરન્તર પ્રવૃત્તિશાલી હૈં ।
સુપ્ત દો પ્રકારકે હોતે હૈં—(૧) દ્રવ્યસે ઓર (૨) ભાવસે । નિદ્રાપ્રમાદ-

બીજા અધ્યયના અંતિમ સૂત્રની સાથે આ અધ્યયનનો આ પ્રકારે સંબંધ
છે, તે અધ્યયનનું અંતિમ સૂત્ર “... દુઃસ્વી દુઃસ્વાણમેવ આવટ્ઠં અણુ-
પરિચદ્ધૈ ” (.. દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે) એ છે. તેનો ભાવ એ છે કે
દુઃખી દુઃખોની પરંપરાનું જ અનુવર્તન કરે છે, જેવી રીતે આ વાત તે અધ્યયનમાં
કહેવામાં આવેલ છે તેવી રીતે આ ઠેકાણે પણ ‘ જે ભાવસુપ્ત દુઃખી છે તેઓ
પણ દુઃખોની જ પરંપરાનો અનુભવ કરે છે. ’ આ વિષયને સમજાવવા માટે કહે
છે—‘ સુપ્તા અમુણી ’ ઇત્યાદિ.

અમુનિ શબ્દનો અર્થ ગૃહસ્થ છે. એ ભાવથી સુપ્ત-સુતેલા છે. મિથ્યાત્વ
અજ્ઞાનમય નિદ્રાથી વ્યામોહિત મતિવાળા હોવા છતાં પ્રાણાતિપાતાદિક જે કર્મોના
આવવાના દ્વાર છે તેમાં નિરંતર પ્રવૃત્તિશાળી છે. સુપ્ત એ પ્રકારના હોય છે.—

ચારિત્રમોહનીયક્ષયોપશમક્ષયસમુત્પન્નસ્વરૂપપરાયણાઃ, કષાયોદ્ધેકરહિતાઃ, સમર-
સકન્દાયમાનાઃ, સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનચારિત્રારાધકાઃ, પ્રશસ્તયોગસાધકાઃ, સમિતિ-
ગુપ્તિધારકાઃ, નિશ્ચયવ્યવહારપ્રચારકાઃ, આસ્રવવર્જિતાઃ સંવેગાદિલક્ષણયુક્તાઃ,
યથાર્થોપયોગેન દ્રવ્યાર્થિકપર્યાયાર્થિકનયેન સ્વરૂપવેદિનઃ, કર્મરજોહારકાઃ,
મુખોપરિ સદોરકમુખવચ્ચિકાધારકાઃ, વિંશતિસ્થાનકસમારાધકાઃ, દેવાસુરનરજ-
નિતત્રિવિધોપસર્ગસહનશીલાઃ, શાસ્ત્રોક્તાચારવિચારપરિપાલકાઃ, જ્ઞાતપરમાર્થા
ભવન્તિ । ત એવ સદા=નિરન્તરં જાગ્રતિ=પ્રબુદ્ધ્યન્તે-હેયોપાદેયવિવેકપૂર્વકં સકલ-
પરિપહ્પસહનં પ્રકુર્વાણાઃ સંયમાનુષ્ઠાનં સમાચરન્તીત્યર્થઃ ।

ક્ષયસે સમુત્પન્ન નિજ આત્મસ્વરૂપમેં લવલીન રહતે હૈં । કષાયોંકે ઉદ્રેક
સે રહિત હોતે હૈં । સમતારૂપી રસકે કન્દ હોતે હૈં । પાંચ સમિતિ ઔર
ત્રીન ગુપ્તિકે ધારક હોતે હૈં । નિશ્ચય ઔર વ્યવહારકે પ્રચારક હોતે હૈં ।
આસ્રવઢારોંસે રહિત તથા સંવેગાદિક-લક્ષણોંસે યુક્ત હોતે હૈં । જિસ
નયકા જહાં ઉપયોગ હોતા હૈ વહાં ઉસી નયકા ઉપયોગ કરનેવાલે હોતે
હૈં, અર્થાત્ જહાં દ્રવ્યાર્થિક નયકી પ્રધાનતાસે વસ્તુતત્ત્વકા નિર્ણય હોતા
હો વહાં પર્યાયાર્થિક નયકી ગૌણતા કર ઉસી નયસે ઉસકે સ્વરૂપકા
નિર્ણય કરતે હૈં, જહાં પર્યાયાર્થિક નયસે વસ્તુકે સ્વરૂપકા નિર્ણય હોતા હો
વહાં ઉસ નયસે ઇતર-દ્રવ્યાર્થિક નયકો ગૌણકર વસ્તુકે સ્વરૂપકા નિર્ણય
કરતે હૈં; કિન્તુ અપને આગ્રહસે કિસી ભી વસ્તુકા એકાન્તરૂપસે નિર્ણય
યા પ્રતિપાદન નહીં કરતે હૈં । આત્માકે ઉપર અનાદિ કાલસે ચઢી હુઈ
કર્મરૂપી ધૂલિકો નાશ કરનેવાલે હોતે હૈં । મુખપર દોરાસહિત મુખ-

કર્મના ક્ષયોપશમથી તથા ક્ષયથી સમુત્પન્ન નિજ આત્મસ્વરૂપમાં આનંદિત રહે
છે. કષાયોના ઉદ્રેકથી રહિત હોય છે. સમતારૂપી રસના કન્દ હોય છે. પાંચ
સમિતિ અને ત્રણ ગુપ્તિના ધારક હોય છે નિશ્ચય અને વ્યવહારના પ્રચારક હોય
છે. આસ્રવઢારોથી રહિત અને સંવેગાદિક લક્ષણોથી સહિત હોય છે જે નયનો
ન્યાં ઉપયોગ થાય છે, ત્યાં તે નયનો ઉપયોગ કરવાવાળા હોય છે અર્થાત્ ન્યાં
દ્રવ્યાર્થિક નયની પ્રધાનતાથી વસ્તુતત્ત્વનો નિર્ણય થતો હોય ત્યાં પર્યાયાર્થિક
નયની ગૌણતા કરી તે નયથી તેના સ્વરૂપનો નિર્ણય કરે છે ન્યાં પર્યાયાર્થિક
નયથી વસ્તુ સ્વરૂપનો નિર્ણય થતો હોય ત્યાં તે નયથી બીજા-દ્રવ્યાર્થિક-નયને
ગૌણ કરી વસ્તુના સ્વરૂપનો નિર્ણય કરે છે, પણ પોતાના આગ્રહથી કેઈ પણ
વસ્તુનો એકાન્તરૂપથી નિર્ણય અગર પ્રતિપાદન કરતા નથી. આત્માની ઉપર
અનાદિ કાળથી ચઢેલી કર્મરૂપી ધૂળનો નાશ કરવાવાળા હોય છે. મુખ ઉપર

કુર્વન્તઃ સમ્યગ્જ્ઞાનચારિત્રોપાર્જને પ્રવૃત્તાઃ સન્તીત્યર્થઃ । યદ્યપિ ક્વચિદાચાર્યાનુજ્ઞયા પ્રથમપૌરુષ્યામ્ ઉત્સર્ગતશ્ચ દ્વિતીયતૃતીયપૌરુષ્યોર્દીર્ઘસંયમાધારભૂતસ્ય શરીરસ્ય સ્થિત્યર્થ નિદ્રાં ભજન્તિ તથાપિ મુનયઃ સદા ભાવતો જાગરૂકા એવ । ધર્માપેક્ષયા સુપ્તજાગ્રદવસ્થે ઇહ પરિગૃહીતે ।

મુનયો દ્વિધા ભવન્તિ દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ । તત્ર દ્રવ્યમુનયસ્તાવત્-લિઙ્ગમાત્રધારિણઃ, અસંયમપરિણામપરિણતાઃ, અવસન્નપાશ્વસ્થાદિકાઃ । એષાં નાત્રાધિકારઃ, અમુનિકોટૌ તેષાં સમાવિષ્ટત્વાત્ । અધિકારશ્ચાત્ર ભાવમુનીનામ્ । તે ચ ભાવમુનયઃ

ગમનાદિક ક્રિયાઈ કરતે હુણે મી સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્રકે ઉપાર્જન કરનેમેં હી પ્રવૃત્તિશીલ રહા કરતે હૈં । યદ્યપિ કમી ૨ આચાર્ય મહારાજ કી આજ્ઞાસે યે રાત્રિકી પ્રથમ પૌરુષી મેં, ઓર ઉત્સર્ગ સે દ્વિતીય તૃતીય પૌરુષી મેં દીર્ઘ સંયમકે આધારભૂત શરીરકી સ્થિતિકે લિયે નિદ્રા લેતે હૈં તો મી યે સદા ભાવસે જાગરૂક-જગતે હુણે-હી રહતે હૈં । સુપ્ત અવસ્થા ઓર જાગ્રત અવસ્થા કા સમ્બન્ધ યહાં ધર્મકી અપેક્ષાસે ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ ।

મુનિ દો પ્રકારકે હોતે હૈં-(૧) દ્રવ્યસે ઓર (૨) ભાવસે । લિઙ્ગમાત્રકો ધારણ કરનેવાલે દ્રવ્યમુનિ હૈં । ઇનકા પરિણામ અસંયમમેં પરિણત રહા કરતા હૈ । અવસન્ન પાસથાદિક ઇસી શ્રેણિકે હૈં । ઇનકા યહાં પ્રકરણ નહીં હૈ, કયોં કિ યે દ્રવ્યલિઙ્ગી અમુનિયોંકી કોટિમેં આતે હૈં । યહાં પર ભાવમુનિયોંકા પ્રકરણ ચલ રહા હૈ અતઃ ડન્હીંકા યહાં પર વિચાર હોગા । વે ભાવમુનિ ચારિત્રમોહનીય કર્મકે ક્ષયોપશમસે તથા

ક્રિયાઓ કરતાં કરતાં પણ સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રનું ઉપાર્જન કરવામાં જ પ્રવૃત્તિશીલ રહ્યા કરે છે. જોકે ક્યારેક આચાર્ય મહારાજની આજ્ઞાથી એ રાત્રિની પ્રથમ પોરસીમાં, અને ઉત્સર્ગથી દ્વિતીય તૃતીય પોરસીમાં દીર્ઘ સંયમના આધારભૂત શરીરની સ્થિતિ માટે નિદ્રા લે છે તો પણ મુનિ સદા ભાવથી જાગરૂક-જગતાં જ રહે છે. સુપ્ત અવસ્થા અને જાગ્રત અવસ્થાનો સંબંધ આંહી ધર્મની અપેક્ષાથી ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે.

મુનિ એ પ્રકારના હોય છે. (૧) દ્રવ્યથી અને (૨) ભાવથી. લિંગ માત્રને ધારણ કરવાવાળા દ્રવ્યમુનિ છે. તેનું પરિણામ અસંયમમાં પરિણત રહ્યા કરે છે. અવસન્ન પાસથાદિક તેવી શ્રેણિના છે. તેનું અહીં પ્રકરણ નથી, કારણ કે એ દ્રવ્ય-લિંગી અમુનિઓની કોટિમાં આવે છે. આ ઠેકાણે ભાવમુનિઓનું પ્રકરણ આવી રહ્યું છે. માટે તેઓનો આ ઠેકાણે વિચાર થશે. તે ભાવમુનિ ચારિત્રમોહનીય

શયનં જાગરણં ચાત્ર ધર્મારાધનમધિકૃત્યાભિધીયતે, અતો દ્રવ્યભાવભેદેન સુપ્તાનાં જાગ્રતાં ચ મધ્યે કસ્ય ધર્મારાધનં ભવતિ કસ્ય નેતિ ભઙ્ગચતુષ્ટયં પ્રદર્શ્યતે—

- (૧) દ્રવ્યતઃ સુપ્તઃ, ભાવતો જાગર્તિ ।
- (૨) ભાવતઃ સુપ્તઃ, દ્રવ્યતો જાગર્તિ ।
- (૩) દ્રવ્યતોઽપિ જાગર્તિ, ભાવતોઽપિ જાગર્તિ ।
- (૪) દ્રવ્યતોઽપિ સુપ્તઃ, ભાવતોઽપિ સુપ્તઃ ।

અત્ર પ્રથમભઙ્ગવતો ધર્મારાધનં ભવતિ ૧ । દ્વિતીયસ્ય ન ભવતિ ૨ ।

સોના ઓર જાગના, યે દોનોં વાતેં ધર્મકે આરાધન કરનેકી અપેક્ષાસે યહાં કહી ગઈ હૈં । ઇસલિયે દ્રવ્ય ઓર ભાવકે ભેદસે સોનેવાલોંકે તથા જાગનેવાલોંકે વીચમેં કૌન ધર્મકા આરાધક હોતા હૈ, કૌન નહીં હોતા હૈ ? ઇસ વાતકો ચાર ભંગોંસે દિખલાતે હૈં—

- (૧) દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈ પર ભાવસે જાગ્રત હૈ ।
- (૨) ભાવસે સુપ્ત હૈ પર દ્રવ્યસે જાગ્રત હૈ ।
- (૩) દ્રવ્યસે જાગ્રત હૈ ઓર ભાવસે ભી જાગ્રત હૈ ।
- (૪) દ્રવ્યસે ભી સુપ્ત હૈ ઓર ભાવસે ભી સુપ્ત હૈ ।

ઇન ચાર ભંગોંકો લેકર જબ વિચાર ક્રિયા જાતા હૈ તો જો દ્રવ્યસે તો સુપ્ત હૈ પર ભાવસે જાગ્રત હૈ, એસે પ્રથમ ભંગવાલેકો ધર્મકા આરાધન હોતા હૈ । દ્વિતીય ભંગવાલેકો નહીં હોતા હૈ, કારણ કિ યહ ભાવસે હી સુપ્ત હૈ, દ્રવ્યજાગરૂકતા તો ધર્મારાધનમેં કાર્યકારી હી નહીં હૈ ।

સુપ્ત અને જાગવું એ બન્ને વાતો ધર્મનું આરાધન કરવાની અપેક્ષાથી અહીં કહેવામાં આવેલ છે, જેથી દ્રવ્ય અને ભાવના લેહથી સુવાવાળાની તથા જાગવાવાળાની વચમાં ધર્મનું આરાધન કેને થાય છે ? અને કેને થતું નથી ? આ વાતને ચાર ભંગોથી લતાવે છે.

- (૧) જે દ્રવ્યથી સુપ્ત છે પણ ભાવથી જાગૃત છે.
- (૨) જે ભાવથી સુપ્ત છે પણ દ્રવ્યથી જાગૃત છે.
- (૩) જે દ્રવ્યથી જાગૃત છે અને ભાવથી પણ જાગૃત છે.
- (૪) જે દ્રવ્યથી પણ સુપ્ત છે અને ભાવથી પણ સુપ્ત છે.

આ ચાર ભંગોને લઈને જ્યારે વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે જે દ્રવ્યથી તો સુપ્ત છે પણ ભાવથી જાગૃત છે, એવા પ્રથમ ભંગવાળાને ધર્મનું આરાધન થાય છે, બીજા ભંગવાળાને નહિ, કારણ કે તે ભાવથી જ સુપ્ત છે. દ્રવ્ય જાગૃકતા ધર્મારાધનમાં કાર્યકારી નથી.

તે હિ દર્શનાવરણીયકર્મવિપાકોદયાત્ સંયમાધારશરીરસ્થિત્યર્થં નિદ્રોપગતા દ્રવ્યતઃ સુપ્તા અપિ દર્શનમોહનીયરૂપમહાનિદ્રાપગમાત્ સમ્યગ્જ્ઞાનદર્શનચારિત્રારાધકત્વેન સદા જાગરૂકા એવ । તત્ર જિનકલ્પિનો રાત્રૌ પ્રહરમેકં સ્થવિરકલ્પિનસ્તૂત્સર્ગતઃ પ્રહરદ્વયં સ્વપન્તિ ।

વસ્ત્રિકા-મુંહપત્તીકે ધારક હોતે હૈં । બીસ સ્થાનોંકી અચ્છી તરહ આરાધના કરનેવાલે હોતે હૈં । દેવ, અસુર તથા મનુષ્ય, ઇન તીનોં દ્વારા કિયે ગયે તીન પ્રકારકે ઉપસર્ગોં કો સહનેકે સ્વભાવવાલે હોતે હૈં । શાસ્ત્રોંમેં જિન ૨ આચાર-વિચારોંકા પાલના બતલાયા હૈં ઊન ૨ આચાર-વિચારોંકો પાલ-નેવાલે હોતે હૈં । પરમાર્થકે જ્ઞાતા હોતે હૈં । એસે યે ભાવમુનિ હી સદા જાગરૂક હોતે હૈં, અર્થાત્ હેય ઔર ઉપાદેયકે વિવેકપૂર્વક સકલ પરીષહોં કો જીતતે હુએ સંયમકે આરાધનમેં સદા દત્તાવધાન રહતે હૈં ।

યદ્યપિ યે દર્શનાવરણીય કર્મકે વિપાકોદયસે સંયમકે આધારભૂત શરીરકી સ્થિતિકે લિયે નિદ્રા લેતે હૈં, ઇસ અપેક્ષાસે યે દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈં, તો ભી દર્શનમોહનીયરૂપ મહાનિદ્રાકે વિનાશસે ઉત્પન્ન સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન ઔર સમ્યક્ચારિત્રકે આરાધક હોનેસે યે સદા જાગરૂક હી રહતે હૈં । જિનકલ્પી મુનિ રાત્રિમેં એક પ્રહર સોતે હૈં, ક્યોં કિ ઇનકા ઇસી પ્રકારકા કલ્પ હૈં । સ્થવિરકલ્પી મુનિ ઉત્સર્ગસે દો પ્રહર સોતે હૈં ।

દોશસહિત મુખવસ્ત્રિકા-મુંહપત્તીના ધારક હોય છે. વીસ સ્થાનોની સારી રીતે આરાધના કરનારા હોય છે. દેવ, અસુર તથા મનુષ્ય એમ ત્રણે દ્વારા કરવામાં આવેલાં ત્રણ પ્રકારના ઉપસર્ગોને સહન કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે. શાસ્ત્રોમાં જે જે આચાર વિચારોનું પાલન કરવાનું બતાવેલ છે તે તે આચાર વિચારોના પાળવાવાળાં હોય છે. પરમાર્થના જ્ઞાતા હોય છે. એવા એ ભાવમુનિ જ સદા જાગરૂક હોય છે, અર્થાત્ હેય અને ઉપાદેયના વિવેકપૂર્વક સકળ પરીષદોને જીતતાં સંયમના આરાધનમાં સદા દત્તાવધાન રહે છે.

જો કે તેઓ દર્શનાવરણીય કર્મના વિપાકના ઉદયથી સંયમના આધારભૂત શરીરની સ્થિતિ માટે નિદ્રા લે છે, આ અપેક્ષાથી એ દ્રવ્યથી સુપ્ત છે તો પણ દર્શનમોહનીયરૂપ મહાનિદ્રાના વિનાશથી ઉત્પન્ન સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રના આરાધક હોવાથી સદા જાગરૂક જ રહે છે. જનકલ્પી મુનિ રાત્રિમાં એક પ્રહર સુવે છે, કારણ કે તેનો આ પ્રકારનો કલ્પ છે. સ્થવિરકલ્પી મુનિ ઉત્સર્ગથી બે પ્રહર સુવે છે.

શયનં જાગરણં ચાત્ર ધર્મારાધનમધિકૃત્યાભિધીયતે, અતો દ્રવ્યભાવભેદેન સુપ્તાનાં જાગ્રતાં ચ મધ્યે કસ્ય ધર્મારાધનં ભવતિ કસ્ય નેતિ મદ્ભવતુષ્ટ્યં પ્રદર્શ્યતે—

- (૧) દ્રવ્યતઃ સુપ્તઃ, ભાવતો જાગર્તિ ।
- (૨) ભાવતઃ સુપ્તઃ, દ્રવ્યતો જાગર્તિ ।
- (૩) દ્રવ્યતોઽપિ જાગર્તિ, ભાવતોઽપિ જાગર્તિ ।
- (૪) દ્રવ્યતોઽપિ સુપ્તઃ, ભાવતોઽપિ સુપ્તઃ ।

અત્ર પ્રથમમદ્ભવતો ધર્મારાધનં ભવતિ ૧ । દ્વિતીયસ્ય ન ભવતિ ૨ ।

સોના ઓર જાગના, યે દોનોં બાતેં ધર્મકે આરાધન કરનેકી અપેક્ષાસે યહાં કહી ગઈ હૈં । इसलिये द्रव्य और भावके भेदसे सोनेवालोंके तथा जागनेवालोंके बीचमें कौन धर्मका आराधक होता है, कौन नहीं होता है ? इस बातको चार भंगोंसे दिखलाते हैं—

- (૧) દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈ પર ભાવસે જાગ્રત હૈ ।
- (૨) ભાવસે સુપ્ત હૈ પર દ્રવ્યસે જાગ્રત હૈ ।
- (૩) દ્રવ્યસે જાગ્રત હૈ ઓર ભાવસે ભી જાગ્રત હૈ ।
- (૪) દ્રવ્યસે ભી સુપ્ત હૈ ઓર ભાવસે ભી સુપ્ત હૈ ।

इन चार भंगोंको लेकर जब विचार किया जाता है तो जो द्रव्यसे तो सुप्त है पर भावसे जाग्रत है, ऐसे प्रथम भंगवालेको धर्मका आराधन होता है । द्वितीय भंगवालेको नहीं होता है, कारण कि यह भावसे ही सुप्त है, द्रव्यजागरूकता तो धर्मााराधनमें कार्यकारी ही नहीं है ।

સુવું અને જાગવું એ બન્ને વાતો ધર્મનું આરાધન કરવાની અપેક્ષાથી અહીં કહેવામાં આવેલ છે, જેથી દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી સુવાવાળાની તથા જાગવાવાળાની વચ્ચે ધર્મનું આરાધન કેને થાય છે ? અને કેને થતું નથી ? આ વાતને ચાર ભગોથી ભતાવે છે.

- (૧) જે દ્રવ્યથી સુપ્ત છે પણ ભાવથી જાગૃત છે.
- (૨) જે ભાવથી સુપ્ત છે પણ દ્રવ્યથી જાગૃત છે.
- (૩) જે દ્રવ્યથી જાગૃત છે અને ભાવથી પણ જાગૃત છે.
- (૪) જે દ્રવ્યથી પણ સુપ્ત છે અને ભાવથી પણ સુપ્ત છે.

આ ચાર ભગોને લઈને જ્યારે વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે જે દ્રવ્યથી તો સુપ્ત છે પણ ભાવથી જાગૃત છે, એવા પ્રથમ ભગવાળાને ધર્મનું આરાધન થાય છે, બીજા ભગવાળાને નહિ, કારણ કે તે ભાવથી જ સુપ્ત છે. દ્રવ્ય જાગૃકતા ધર્મારાધનમાં કાર્યકારી નથી.

તૃતીયભંગવતો દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ જાગ્રતઃ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપો ધર્મઃ સુચારુરૂપેણ સમ્પદ્યતે । મુનિના સદા તૃતીયભંગવતૈવ ભાવ્યમતો ભગવતા કથિતમ્—“ સુત્તા અમુળી સયા મુણિણો જાગરંતિ ”—સુપ્તા અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ—ઈતિ । ચતુર્થભંગવતશ્ચ સર્વથા ધર્મારાધનં ન ભવતિ, તસ્ય મિથ્યાત્વોદયપ્રાવલ્યાત્ ૪ ।

દ્રવ્યસુપ્તો હિ નિદ્રયા ભવતિ । સા ચ પશ્ચવિધા (૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા (૪) પ્રચલાપ્રચલા (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિઃ ।

તાસુ નિદ્રાનિદ્રા—પ્રચલાપ્રચલા—સ્ત્યાનર્દ્ધિરૂપં નિદ્રાત્રિકં દુરન્તમ્ । એતત્રિકો-દયે ભવસિદ્ધિકોઽપિ સમ્યક્ત્વં ન લભતે । અસ્ય વન્ધો હિ મિથ્યાદૃષ્ટિગુણસ્થાને

તૃતીય ભંગવાલેકો સુચારુરૂપસે સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપ ધર્મકી આરાધના હોતી હૈ; કારણ કિ યહ દ્રવ્યસે ઓર ભાવસે—દોનોં પ્રકારસે સદા જાગરૂક હૈ । મુનિકો સદા ઇસ તૃતીયભંગવાલા હી હોના ચાહિયે । ઇસીલિયે ભગવાને કહા હૈ કિ—“ સુત્તા અમુળી, સયા મુણિણો જાગરંતિ । ” (સુપ્તા અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ) । ચતુર્થ ભંગવાલેકે ધર્મકા આરાધન સર્વથા હૈ હી નહીં; કયોં કિ યહ દ્રવ્ય ઓર ભાવ, ઇન દોનોં પ્રકારસે સોયા હુઆ હૈ, અર્થાત્ ઇસમેં મિથ્યાત્વકે ઉદયકી પ્રવલતા હૈ ।

દ્રવ્યકી અપેક્ષાસે સુષાવસ્થા નિદ્રાસે હોતી હૈ । વહ નિદ્રા પાંચ પ્રકાર કી હૈ—(૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા, (૪) પ્રચલાપ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિ ।

ઇનમેં નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા, ઓર સ્ત્યાનર્દ્ધિ, યે ત્રીન નિદ્રાઈ જીવોંકો બહુત દુઃખદાયી હૈ । ઇન ત્રીનોંકે ઉદયમેં ભવસિદ્ધિક (મુક્તિગામી)

ત્રીજા ભંગવાળાને સુચારુરૂપથી સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપ ધર્મની આરાધના થાય છે, કારણ કે તે દ્રવ્યથી અને ભાવથી—બન્ને પ્રકારથી સદા જાગરૂક છે. મુનિએ સદા આ ત્રીજા ભંગવાળા બનવું જોઈએ. માટે ભગવાને કહ્યું છે કે “ સુત્તા અમુળી સયા મુણિણો જાગરંતિ । ” (સુપ્તાઃ અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ) એથી ભંગવાળાને ધર્મનું આરાધન સર્વથા છે જ નહિ, કારણ કે એ દ્રવ્ય અને ભાવ, એ બન્ને પ્રકારથી પણ સુતેલ છે, અર્થાત્ તેમાં મિથ્યાત્વના ઉદયની પ્રબળતા છે.

દ્રવ્યની અપેક્ષાથી સુષાવસ્થા નિદ્રાથી થાય છે તે નિદ્રા પાંચ પ્રકારની છે,—(૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા, (૪) પ્રચલાપ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિ.

તેમાં નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા, અને સ્ત્યાનર્દ્ધિ, એ ત્રણ નિદ્રાઓ જીવોને ઘણી દુઃખદાયી છે, આ ત્રણના ઉદયમાં ભવસિદ્ધિક (મુક્તિગામી) જીવ પણ

સાસ્વાદનગુણસ્થાને ચાનન્તાનુવન્ધિકષાયવન્ધેન સહ ભવતિ, ક્ષયસ્તુ નવમાઽનિર્વૃત્તિ-
વાદરગુણસ્થાનસ્ય નવસુ ભાગેસુ મધ્યે પ્રથમભાગસ્થકાલસ્ય કિયત્સુ સંખ્યેયાંશેષુ
ગતેષુ સત્સુ જાયતે । નિદ્રાપ્રચલયોરુદયઃ સામાન્યદર્શનાવરણીયકર્મોદયાદ્ભવતિ ।
વન્ધોપરમોઽપૂર્વકરણનામકાષ્ટમગુણસ્થાનકાલસ્ય સંખ્યેયભાગાન્તે જાયતે, તત્પ-
શ્ચાન્નૂતનવન્ધાભાવાત્ । ક્ષયશ્ચ ક્ષીણમોહાખ્યદ્વાદશગુણસ્થાનસ્ય ચરમસમયદ્વયેઽવ-
શિષ્ટે સતિ ભવતિ । એતયોરુદયસ્તુ ઉપશાન્તક્રોધોપશાન્તમોહયોરપિ ભવતીતિ નિદ્રા-
પ્રમાદસ્ય દુરન્તત્વં વિજ્ઞેયમ્ ।

જીવ મી સમ્યક્ત્વકો પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હૈ । ઇનકા વન્ધ મિથ્યાદૃષ્ટિ
નામક પ્રથમ ગુણસ્થાનમ્ ઓર સાસ્વાદન નામક દ્વિતીય ગુણસ્થાનમ્
અનન્તાનુવન્ધી કષાયકે વન્ધકે સાથ જીવોંકો હોતા હૈ, ઓર ક્ષય નવમ્
અનિર્વૃત્તિવાદર ગુણસ્થાનકે નૌ ૯ આગોંમેંસે પ્રથમ ભાગકે કાલકે જવ
કિતનેક સંખ્યાત અંશ વ્યતીત હો જાતે હૈં તવ હોતા હૈ ।

નિદ્રા ઓર પ્રચલાકા ઉદય સામાન્ય દર્શનાવરણીય કર્મકે ઉદયસે
હોતા હૈ । ઇનકે વન્ધકા અભાવ અપૂર્વકરણ નામકે આઠવેં ગુણસ્થાનકે
સંખ્યાતવેં ભાગકે અન્તમેં હોતા હૈ । ઉસકે વાદ ઇનકે નૂતન વન્ધકા
અભાવ હો જાતા હૈ । ઇનકા ક્ષય મી ક્ષીણમોહ નામકે વારહવેં ગુણસ્થાનકે
અન્તિમ દો સમયોં કે અવશિષ્ટ રહને પર હોતા હૈ । ઇન દોનોંકા ઉદય
દસવેં ઓર ગ્યારહવેં ગુણસ્થાનક તકકે જીવોંમેં મી હોતા હૈ । ઇસી લિયે
નિદ્રાપ્રમાદકી દુરન્તતા હૈ, અર્થાત્ ઇસકા અન્ત હોના વડા કઠિન હૈ ।

સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેનો બંધ મિથ્યાદૃષ્ટિ નામના પ્રથમ ગુણ
સ્થાનમાં, અને સાસ્વાદન નામના બીજા ગુણસ્થાનમાં અનન્તાનુબંધી કષાયના
બંધની સાથે જીવોને થાય છે, અને ક્ષય નવમાં અનિર્વૃત્તિવાદરગુણસ્થાનના નવ
ભાગોમાંથી પ્રથમ ભાગના કાળના જ્યારે કેટલાક સંખ્યાત અંશ વ્યતીત થઈ
જાય છે ત્યારે થાય છે.

નિદ્રા અને પ્રચલાનો ઉદય સામાન્ય દર્શનાવરણીય કર્મના ઉદયથી થાય
છે. તેના બંધનો અભાવ અપૂર્વકરણ નામના આઠમા ગુણસ્થાનના સંખ્યાતમાં
ભાગના અંતમાં થાય છે. ત્યારબાદ તેને નૂતન બંધનો અભાવ થઈ જાય છે.
તેનો ક્ષય પણ ક્ષીણમોહ નામના બારમા ગુણસ્થાનના અંતિમ બે સમયોના અવ-
શિષ્ટ રહેવા પર થાય છે. એ બંનેનો ઉદય દશમા અને અગીયારમા ગુણસ્થાન
મુખીના જીવોમાં પણ થાય છે, માટે નિદ્રાપ્રમાદની દુરન્તતા છે, અર્થાત્
તેનો અંત થવો પણ કઠિન છે.

તૃતીયભંગવતો દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ જાગ્રતઃ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપો ધર્મઃ સુચારુરૂપેણ સમ્પદ્યતે । મુનિના સદા તૃતીયભંગવતૈવ ભાવ્યમતો ભગવતા કથિતમ્—“ સુત્તા અમુળી સયા મુણિણો જાગરંતિ ”—સુપ્તા અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ—ઈતિ । ચતુર્થભંગવતશ્ચ સર્વથા ધર્મારાધનં ન ભવતિ, તસ્ય મિથ્યાત્વોદયપ્રાવલ્યાત્ ૪ ।

દ્રવ્યસુપ્તો હિ નિદ્રયા ભવતિ । સા ચ પશ્ચવિધા (૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા (૪) પ્રચલાપ્રચલા (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિઃ ।

તાસુ નિદ્રાનિદ્રા-પ્રચલાપ્રચલા-સ્ત્યાનર્દ્ધિરૂપં નિદ્રાત્રિકં દુરન્તમ્ । એતત્રિકો-દયે ભવસિદ્ધિકોઽપિ સમ્યક્ત્વં ન લભતે । અસ્ય વન્ધો હિ મિથ્યાદૃષ્ટિગુણસ્થાને

તૃતીય ભંગવાલેકો સુચારુરૂપસે સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપ ધર્મકી આરાધના હોતી હૈ; કારણ કિ યહ દ્રવ્યસે ઓર ભાવસે-દોનોં પ્રકારસે સદા જાગરુક હૈ । મુનિકો સદા ઇસ તૃતીયભંગવાલા હી હોના ચાહિયે । ઇસીલિયે ભગવાનને કહા હૈ કિ—“ સુત્તા અમુળી, સયા મુણિણો જાગરંતિ । ” (સુપ્તા અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ) । ચતુર્થ ભંગવાલેકે ધર્મકા આરાધન સર્વથા હૈ હી નહીં; ક્યોં કિ યહ દ્રવ્ય ઓર ભાવ, ઇન દોનોં પ્રકારસે સોયા હુઆ હૈ, અર્થાત્ ઇસમેં મિથ્યાત્વકે ઉદયકી પ્રવલતા હૈ ।

દ્રવ્યકી અપેક્ષાસે સુષ્પાવસ્થા નિદ્રાસે હોતી હૈ । વહ નિદ્રા પાંચ પ્રકાર કી હૈ—(૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા, (૪) પ્રચલાપ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિ ।

ઇનમેં નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા, ઓર સ્ત્યાનર્દ્ધિ, યે ત્રીન નિદ્રાઈ જીવોંકો બહુત દુઃખદાયી હૈ । ઇન ત્રીનોંકે ઉદયમેં ભવસિદ્ધિક (મુક્તિગામી)

ત્રીજા ભંગવાળાને સુચારુરૂપથી સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપ ધર્મની આરાધના થાય છે, કારણ કે તે દ્રવ્યથી અને ભાવથી—બન્ને પ્રકારથી સદા જાગરુક છે. મુનિએ સદા આ ત્રીજા ભંગવાળા બનવું જોઈએ. માટે ભગવાને કહ્યું છે કે “ સુત્તા અમુળી સયા મુણિણો જાગરંતિ । ” (સુપ્તાઃ અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ) એવા ભંગવાળાને ધર્મનું આરાધન સર્વથા છે જ નહિ, કારણ કે એ દ્રવ્ય અને ભાવ, એ બન્ને પ્રકારથી પણ સુતેલ છે, અર્થાત્ તેમાં મિથ્યાત્વના ઉદયની પ્રબળતા છે.

દ્રવ્યની અપેક્ષાથી સુષ્પાવસ્થા નિદ્રાથી થાય છે તે નિદ્રા પાંચ પ્રકારની છે,— (૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા, (૪) પ્રચલાપ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિ. તેમાં નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા, અને સ્ત્યાનર્દ્ધિ, એ ત્રણ નિદ્રાઓ જીવોને ઘણી દુઃખદાયી છે, આ ત્રણના ઉદયમાં ભવસિદ્ધિક (મુક્તિગામી) જીવ પણ

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં જાગરમાણસ્સ વડ્ઢણ વુદ્ધી ।

જો સુયઇ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગઇ સો સયા ધન્નો ” । ઇતિ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદશ્ચાજ્ઞાનાદ્વયતિ, તત્ત્વ પ્રાણિનામહિતાયેતિ શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂ-
સ્વામિનમાહ-‘લોયંસિ જાણ, ઇત્યાદિ ।

મૂલ-લોયંસિ જાણ અહિયાય દુઃખં, સમયં લોગસ્સ
જાણિત્તા ઇત્થ સત્થોવરણ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા-લોકે જાનીહિ અહિતાય દુઃખં, સમયં લોકસ્ય જ્ઞાત્વા અત્ર શક્ત્યોપરતઃ ॥૨॥

ટીકા-હે જમ્બૂ ! લોકે=ષડ્જીવનિકાયરૂપે જિનશાસને વા, દુઃખં=દુઃખ-

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં, જાગરમાણસ્સ વડ્ઢણ વુદ્ધી ।

જો સુયઇ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગઇ સો સયા ધન્નો ॥૧॥ ” ઇતિ ।

ગાથાકા અર્થ યહ હૈ કિ-‘હે ભગ્યો ! તુમ સદા જાગતે રહો । ક્યોં
કિ જાગનેવાલોંકી વુદ્ધિ વદતી હૈ । જો સોતા હૈ વહ ધન્ય નહીં હૈ, જો
જાગતા હૈ વહ સદા ધન્ય હૈ ’ ॥૧॥

યહ પહિલે કહા જા ચુકા હૈ કિ સુપ્ત ઓર જાગ્રત અવસ્થા ધર્મારા-
ધનકી અપેક્ષાસે હી સમજના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનસે હોતા હૈ, ઓર અજ્ઞાન પ્રાણિયોંકા સદા અહિ-
તકારી હૈ, એસા વિચાર કર શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીસે કહતે હૈ-
“ લોયંસિ જાણ ” ઇત્યાદિ ।

હે જમ્બૂ ! ષડ્જીવનિકાયસ્વરૂપ ઇસ લોકમેં, અથવા જિનશાસનમેં,

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં, જાગરમાણસ્સ વડ્ઢણ વુદ્ધી ।

જો સુયઇ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગઇ સો સયા ધન્નો ” ॥૧॥ ઇતિ ।

ગાથાનો અર્થ આ છે કે-હે ભગ્યો ! તમે સદા જાગતા રહો, કારણ કે
જાગવાવાળાની બુદ્ધિ વધે છે જે સુતેલા છે તે ધન્ય નથી જે જાગતા છે તે
જ સદા ધન્ય છે

એ પહેલા કહેવામા આવ્યું છે કે મુક્ત અને જાગૃત અવસ્થા ધર્મારાધનની
અપેક્ષાથી જ સમજવી જોઈએ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનથી થાય છે, અને અજ્ઞાન પ્રાણિઓ માટે સદા અહિત-
કારી છે. એવો વિચાર કરી શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે-‘લોયંસિ
જાણ ’ ઇત્યાદિ.

હે જમ્બૂ ! ષડ્જીવનિકાયસ્વરૂપ આ લોકમાં અથવા જિનશાસનમાં દુઃખ

દ્રવ્યભાવસુષ્પત્તિવિષયે વિવેકદક્ષઃ સુખમનુભવતિ । યથા પથિ તસ્કરાદિભયે સમુપસ્થિતે વિવેકી સ્વાત્મનઃ સાપાયનિરપાયવિષયકં વિવેકમાલમ્બ્ય પલાયનાદિકાં ક્રિયાં કુર્વાણઃ સુખભાગ્ભવતિ । એવં મુનિરપિ સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મકવિવેકવત્ત્વેન સદા પ્રમાદાદિભયાદ્ જ્ઞાનાચારાદિસમારાધનાવધાનરૂપાં જાગ્રદવસ્થાં વિભ્રાણઃ શિવસુખભાગ્ભવતિ । ઉક્તञ્ચ—

દ્રવ્યસુષ્પત્તિ અને ભાવસુષ્પત્તિના વિષયમાં વિવેકદક્ષ પ્રાણી સુખનો અનુભવ કરતા છે, અર્થાત્ મુનિ આ વાતને સમજે છે કે ‘દ્રવ્યસુષ્પત્તિ અવસ્થા અને ભાવસુષ્પત્તિ અવસ્થા આત્મા માટે સદા દુઃખદાયી છે માટે તેવી અવસ્થાઓનો સદા પરિહાર કરવો જોઈએ. તેવી અવસ્થાઓમાં વર્તમાન પ્રાણીનું કદિ પણ કલ્યાણ થતું નથી’ એવા પ્રકારનો વિવેક જે આત્મામાં એ બંને અવસ્થાઓ પ્રતિ બદલતો થઈ જાય છે તે તેનાથી સદા દૂર રહે છે. જે પ્રકારે માર્ગમાં ચોર આદિનો ભય ઉપસ્થિત હોવા છતાં વિવેકી વ્યક્તિ એ વાતનો વિચાર કરે છે કે, આ બાબત ભય છે, આ બાબત ભય નથી, પછી નિર્ભય સ્થાનની તરફ ભાગે છે અને સુખનો શ્વાસ લે છે. તે પ્રકારે મુનિ પણ સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મક-વિવેકશાળી હોવાથી સદા પ્રમાદાદિકોના ભયથી જ્ઞાનાચારાદિકોની સમ્યક્ આરાધનામાં અવધાનરૂપ જાગરૂક અવસ્થાનો ધારણ કરતા હોવા મોક્ષ સુખનો ભાગી હોતા છે । કહા મી છે—

દ્રવ્યસુષ્પત્તિ અને ભાવસુષ્પત્તિના વિષયમાં વિવેકદક્ષ પ્રાણી સુખનો અનુભવ કરે છે, અર્થાત્ મુનિ આ વાતને સમજે છે કે ‘દ્રવ્યસુષ્પત્તિ અવસ્થા અને ભાવસુષ્પત્તિ અવસ્થા આત્મા માટે સદા દુઃખદાયી છે માટે તેવી અવસ્થાઓનો સદા પરિહાર કરવો જોઈએ. તેવી અવસ્થાઓમાં વર્તમાન પ્રાણીનું કદિ પણ કલ્યાણ થતું નથી’ એવા પ્રકારનો વિવેક જે આત્મામાં એ બંને અવસ્થાઓ પ્રતિ બદલતો થઈ જાય છે તે તેનાથી સદા દૂર રહે છે. જે પ્રકારે માર્ગમાં ચોર આદિનો ભય ઉપસ્થિત હોવા છતાં વિવેકી વ્યક્તિ એ વાતનો વિચાર કરે છે કે, આ બાબત ભય છે, આ બાબત ભય નથી, પછી નિર્ભય સ્થાનની તરફ ભાગે છે અને સુખનો શ્વાસ લે છે. તે પ્રકારે મુનિ પણ સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મક-વિવેકશાળી હોવાથી સદા પ્રમાદાદિકોના ભયથી જ્ઞાનાચારાદિકોની સમ્યક્ આરાધનામાં અવધાનરૂપ જાગરૂક અવસ્થાનો ધારણ કરીને મોક્ષ સુખનો ભાગી થાય છે. કહ્યું છે:—

દુઃસ્વહેતોરજ્ઞાનરૂપાદ્ દ્રવ્યભાવસ્વાપાન્નિવર્તનમિતિ । તતઃ કિં કુર્યાદિત્યાહ-લોક-
સ્યે-ત્યાદિ 'લોકસ્ય=પ્રાણિસદ્વસ્ય સમયમ્=આચારં જ્ઞાત્વા=દુઃસ્વહેતું વિચાર્ય,
લોકો હિ ભોગેચ્છયા પ્રાણિપીડનાદિજનિતં કર્મ પરિગૃહ્ય નરકેષ્ટપદ્યતે, તતઃ કથં
ચિન્નિષ્ક્રાન્તો ધર્મોપાર્જનહેતુભૂતં મનુષ્યજન્માવાપ્ય પુનરપિ તત્તદેવ કર્મ કરોતિ યેન
યેન પુનરધોઽધઃ સ્થાનં વ્રજતિ, ન કદાચિત્સંસારદાવાનલાદ્ વહિર્યાતીતિ લોકાચારઃ ।

इस जाननेरूप क्रियाका फल अज्ञानरूप द्रव्यनिद्रा और भावनिद्रा से
जीवका निवृत्त होना है । जीव जब इनसे निवृत्तिसंपन्न हो जाता है तब
वह यह समझने लगता है कि-यह लोक भोगोंकी इच्छासे प्राणिपीडन
आदि कृत्य करता है, और इस प्रकारके कृत्य करनेसे वह अशुभ क-
र्मोंका आस्रव कर बन्धक बनता है । उनके उदयमें इसको नरकादि अनेक
कुगतियोंमें जन्म मरण करना पड़ता है । वहांसे निकलने पर यदि इसको
किसी शुभ कर्मके उदयसे मनुष्यभवकी-जिसमें कि इसको धर्मोपार्जन
करनेका अवसर मिलता है-प्राप्ति हो जाती है तो भी यह जीव बारंबार
उन्हीं कुकृत्योंको करता है, जिनकी वजहसे इसको पुनः नरकादि गतियों
में जाना पड़ता है । इस तरहसे इस जीवका कभी भी संसाररूपी दावा-
नलसे बाहर आना नहीं हो सकता है । यही इस लोकका आचार है । इस
आचारको-जिससे कि इसको अनेक अनेक संकटोंका सामना करना पड़ता
है-जान कर तुम इस द्रव्यरूप एवं भावरूप शस्त्रसे सदा निवृत्त होओ ।

કિયાતું' ઇળ દુઃખતુ કારણુ જે અજ્ઞાનરૂપ દ્રવ્યનિદ્રા અને ભાવનિદ્રા છે તેનાથી
જીવને નિવૃત્ત થવું છે. જીવ ન્યારે તેનાથી નિવૃત્તિસંપન્ન થઈ જાય છે ત્યારે તે
એવું સમજવા લાગે છે કે આ લોક, ભોગોની ઇચ્છાથી પ્રાણિ-પીડન આદિ કૃત્ય
કરે છે અને આવા પ્રકારનું કૃત્ય કરવાથી તે અશુભ કર્મોનો આસ્રવ કરી બંધક
બને છે. તેના ઉદયમાં તેને નરકાદિ અનેક કુગતિઓમાં જન્મ મરણ કરવું પડે
છે. ત્યાંથી નિકળીને કદાચ કોઈ શુભ કર્મના ઉદયથી મનુષ્યભવની-કે જેમાં
તેને ધર્મોપાર્જન કરવાનો અવસર મળે છે-પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે તો પણ તે જીવ
વારંવાર તેજ કુકૃત્યો કરે છે કે જેનાથી તેને પુનઃ નરકાદિ ગતિઓમાં જવું
પડે છે. આવી રીતે આ જીવને કદિ પણ સંસારરૂપી દાવાનળથી બહાર આવવાનું
બની શકતું નથી. એ જ આ લોકનો આચાર છે આવા આચારને-કે જેનાથી
તેને અનેક સંકટોનો સામનો કરવો પડે છે-જાણીને તમે આ દ્રવ્યરૂપ તેમજ
ભાવરૂપ શસ્ત્રથી સદા નિવૃત્ત થાઓ.

યતિ=પીડયતીતિ દુઃખમ્, इह दुःखशब्देनाज्ञानं प्राणातिपातादिरूपं कर्म वा गृह्यते
 दुઃખજનકત્વાત્, તત્ અહિતાય=એહિકપારત્રિકદુઃખાય જાયતે । તત્રૈહિકં દુઃખં
 प्राणातिपातादिसावधानुष्ठानप्रवृत्तानां भावसुप्तानां भूपादिकृतं बन्धवधताडनशू-
 लारोपणादिकम्, પારત્રિકશ્ચ દુઃખં નરકનિગોદાદિયાતનારૂપમિતિ એહિકપારત્રિક-
 दुःखहेतुभूतमज्ञानं कर्म वाऽस्तीति त्वं जानीहि=ज्ञपरिज्ञया बुध्यस्व । एतस्य फलश्च

दुःख-अज्ञान अथवा प्राणातिपातादिरूप कार्य जीवोंके लिये इस लोकमें
 तथा परलोकमें अहितकारी माने गये हैं । यहां 'दुःख' शब्दका अर्थ-
 “दुःखयति=पीडयतीति दुःखम्” जो जीवोंको पीडा पहुंचावे ऐसा अज्ञान,
 अथवा हिंसादिक पापकर्म-है । अज्ञान अथवा हिंसादिक, जीवोंको सदा
 दुःखदायी होते हैं, इस अपेक्षासे अज्ञानादिक दुःखके कारण हैं । फिर
 भी यहां पर इन्हें जो दुःखरूप कहा गया है वह कारणमें कार्यके उप-
 चारसे कहा गया है । इन प्राणातिपातादिकरूप सावध अनुष्ठानोंमें
 प्रवृत्ति करनेवाले भावसुप्त जीवोंको इस लोकमें राजा आदिके द्वारा
 किये गये बन्ध, वध, ताडन और शूलारोपण आदि अनेक कष्ट भोगने
 पड़ते हैं, तथा परलोकमें नरकनिगोदादिककी यातनाएँ सहनी पड़ती हैं ।
 इसलिये जम्बूस्वामीको उद्देश करके सुधर्मास्वामी कहते हैं—

हे जम्बू ! इस लोक और परलोकसम्बन्धी अनेक दुःखोंके कारण
 प्राणातिपातादिक कर्म तथा अज्ञान हैं, ऐसा तुम ज्ञपरिज्ञासे जानो ।

=अज्ञान अथवा प्राणातिपातादिरूप कार्य आ लोकમાં તથા પરલોકમાં જીવો માટે
 અહિતકારી માનવામાં આવેલ છે. અહીં દુઃખ શબ્દનો અર્થ—“ દુઃખયતિ પીડ-
 યતીતિ દુઃખમ્ ” જે જીવોને પીડા આપે એવું અજ્ઞાન અને હિંસાદિક પાપકર્મ છે.
 અજ્ઞાન અથવા હિંસાદિક કર્મ જીવોને સદા દુઃખદાયી થાય છે. આ અપેક્ષાથી અજ્ઞા-
 નાદિક, દુઃખના કારણ છે તો પણ આ ઠેકાણે તેને જે દુઃખરૂપ કહેવામાં આવેલ
 છે તે કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી કહેવામાં આવેલ છે. આ પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ
 સાવધ અનુષ્ઠાનોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા ભાવસુપ્ત જીવોને આ લોકમાં રાજા આદિ
 દ્વારા કરવામાં આવેલ બંધ વધ તાડન અને શુળી આદિ અनेક કષ્ટોને ભોગ-
 વવા પડે છે, તથા પરલોકમાં નરકનિગોદાદિકની યાતનાઓ સહન કરવી પડે
 છે. એથી જમ્બૂસ્વામીને ઉદ્દેશ કરીને સુધર્માસ્વામી કહે છે:—

હે જમ્બૂ ! આ લોક અને પરલોક સંબંધી અનેક દુઃખોનું કારણ પ્રાણા-
 તિપાતાદિક કર્મ તથા અજ્ઞાન છે, એવું જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણો. એ જાણવારૂપ

‘યથા મમ દુઃખાદિકં ભવતિ તથૈવાન્યેષામપ્યેકેન્દ્રિયાદીનાં મૃત્યુભીરુણાં સુખેચ્છનાં તદુત્પદ્યતે’ इत्यनुभवसिद्धामात्मोपमां ज्ञात्वा अत्र=अस्मिन् षड्जीवनिकायरूपे लोके शस्त्रोपरतो भवेत्यर्थः ॥ सू० २ ॥

षड्जीवनिकायलोके शस्त्रोपरतः सन् यथा मुनित्वं प्राप्नोति तदाह—
‘जस्सिमे’ इत्यादि ।

मूलम्—जस्सिमे सदा य रूवा य रसा य गंधा य फासा य अभिसमन्नागया भवंति, से आयवं नाणवं वयवं धम्मवं वंभवं पन्नाणेहिं परियाणइ लोयं, मुणीति वुच्चे, धम्मविऊ उज्जू, आवट्टसोयसंगमभिजाणइ ॥ सू० ३ ॥

विचार करो कि जिस प्रकार हमें हिंसादिक कारणोंके उपस्थित होनेपर कष्टका अनुभव होता है उसी प्रकार दूसरे एकेन्द्रियादिक प्राणियोंको—जो सदा मृत्युसे डरते हैं और सुखके अभिलाषी हैं—हिंसादिक कारणोंके उपस्थित होनेपर दुःख होता है । इस प्रकार अनुभवसिद्ध—“आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्” इस वाक्यको अपने हृदयपटल पर उतार कर कभी भी किसी भी जीवको कष्ट न पहुंचे ऐसी प्रवृत्ति करो । परके दुःखोंका अपने दुःखोंके साथ मिलान कर सदा ज्ञानीको इस बातका दृढ़ विचार करना चाहिए कि संसार के एकेन्द्रियसे लगा कर पंचेन्द्रिय पर्यन्त समस्त जीव मृत्युसे डरतें हैं और सुखको चाहते हैं, इसलिये षड्जीवनिकायरूप लोकमें अपनी प्रवृत्ति सदा यतनाशाली बनानी चाहिये ॥ सू० २ ॥

અમને હિંસાદિક કારણો ઉપસ્થિત થવાથી કષ્ટનો અનુભવ થાય છે તે પ્રકારે બીજા એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણીઓને—કે જે સદા મૃત્યુથી ડરે છે અને સુખના અભિલાષી છે—હિંસાદિક કારણો ઉપસ્થિત થવાથી દુઃખ થાય છે, આવા પ્રકારે અનુભવસિદ્ધ—“આત્મન પ્રતિકૂલાનિ પરેષાં ન સમાચરેત્” આ વાક્યને પોતાના હૃદયમાં ઉતારીને કોઈ વખત કોઈ પણ જીવને કષ્ટ ન પહોંચે તેવી પ્રવૃત્તિ કરો. પારકાના દુઃખોને પોતાના દુઃખોની સાથે મેળવી સદા જ્ઞાનીએ એ વાતનો દૃઢ નિશ્ચય કરવો જોઈએ કે સંસારના એકેન્દ્રિયથી લઈ પંચેન્દ્રિય પર્યન્ત સમસ્ત જીવ મૃત્યુથી ડરે છે અને સુખને ચાહે છે માટે ષડ્જીવનિકાય રૂપ લોકમાં પોતાની પ્રવૃત્તિ મદા યતનાશાળી બનાવવા જોઈએ ॥ સૂ० ૨ ॥

यद्वा लोकस्य=जिनशासनस्य समयम्=आचारं ज्ञानाचारादिरूपं पञ्चविधं ज्ञात्वा=मोक्षसुखहेतुभूतं सम्यग्बुद्ध्य, अत्र=षड्जीवनिकाये शस्त्रोपरतः=शस्त्रात् द्रव्यभावभेदभिन्नात् उपरतः=निवृत्तो भव । धर्मजागरणेन जागृहीत्यर्थः ।

सर्वो हि लोकः शब्दादिविषयभोगेच्छया प्राणातिपातादिकं नानाविधं कर्म करोति, तेन नरकादियातनास्थानेषु घोरतरं दुःखमाप्नोति, अतः षड्जीवनिकाये शस्त्रोपरतो भवेति भावः ।

अथवा लोकस्येति षष्ठ्याः सप्तम्यर्थे विधानात् लोके=प्राणिसङ्घे 'समयं' इत्यस्य समतामितिच्छाया तेन समतां स्वकीयदुःखादिना परदुःखादेस्तुल्यतां,

“समयं लोगस्स जाणित्ता इत्थ सत्थोवरण” इसका यह भी अर्थ होता है कि—‘हे जम्बू ! तुम जिनशासनके ज्ञानाचार आदिरूप पांच प्रकारके आचारको मोक्षसुखका कारण अच्छी तरहसे जानकर षड्जीवनिकायके विषयमें द्रव्य और भावरूप शस्त्रसे निवृत्त होओ, अर्थात्—सदा धर्मका आचरण करनेमें सतर्क रहो । भावनिद्रासे युक्त न बनो । सारांश इसका यही है कि—यह समस्त लोक शब्दादिक विषय भोगों की इच्छासे प्राणातिपातादिक अनेक प्रकारके दुष्कार्योंको करता है, उन से नरकादिक जो अनेक यातनाके स्थान हैं उनमें घोरातिघोर दुःखोंको भोगता है । इसलिये हे जम्बू ! षड्जीवनिकायके विषयमें शस्त्रसे सदा अलग रहो ।

अथवा “लोगस्स” इस षष्ठी विभक्तिके स्थानमें “लोके” इस सप्तमी विभक्तिका पाठ, तथा ‘समयं’की छाया “समतां” मान कर ऐसा अर्थ हो जाता है कि—हे जम्बू ! तुम सदा इस बातका भली प्रकार

“समयं लोगस्स जाणित्ता इत्थ सत्थोवरण” એનો એ પણ અર્થ થાય છે કે—હે જમ્બૂ ! તમે જીનશાસનના જ્ઞાનાચાર આદિરૂપ પાંચ પ્રકારના આચારને મોક્ષ-સુખનું કારણ સારી રીતે જાણીને ષડ્જીવનિકાયના વિષયમાં દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ શસ્ત્રથી નિવૃત્ત થાઓ. અર્થાત્ સદા ધર્મનું આચરણ કરવામાં સતર્ક રહો. ભાવ નિદ્રાથી યુક્ત ન બનો. સારાંશ તેનો એ છે કે—આ સમસ્ત લોક, શબ્દાદિક વિષય-ભોગોની ઇચ્છાથી પ્રાણાતિપાતાદિક અનેક પ્રકારના દુષ્કાર્યો કરે છે, તેનાથી નરકાદિક જે અનેક યાતનાના સ્થાન છે તેમાં ઘોરાતિઘોર દુઃખો ભોગવે છે. તે માટે હે જમ્બૂ ! ષડ્જીવનિકાયના વિષયમાં શસ્ત્રથી સદા અલગ રહો.

અથવા “લોગસ્સ” આ છઠ્ઠી વિભક્તિના સ્થાનમાં “લોકે” આ સપ્તમી વિભક્તિનો પાઠ તથા ‘સમયં’ની છાયા “સમતાં” માનીને એવો અર્થ થઈ જાય છે કે—હે જમ્બૂ ! તમે સદા આ વાતનો ભલી પ્રકારે વિચાર કરો કે જે પ્રકારે

અતસ્તત્ર મનોજ્ઞામનોજ્ઞવિષયેષુ यस્ય રાગદ્વેષૌ નોત્પદ્યેતે इत्यर्थः, સ આત્મવાન્= જ્ઞાનાદિગુણસમ્પન્નઃ, યદ્વા-આત્મહિતાચરણપ્રવૃત્તઃ, શબ્દાદિવિષયેષુ પ્રવર્તમાનમાત્માને તેભ્યઃ પૃથક્કૃત્ય તુપાદ્ધાન્યમિવ રક્ષિતેત્યર્થઃ । જ્ઞાનવાન્=હેયોપાદેયવિવેકવાન્, શબ્દાદિવિષયે રાગદ્વેષૌ કારણં, રાગદ્વેષતઃ કર્મવન્ધઃ, તસ્માત્ સંસારપરિભ્રમણં ભવતીત્યેવં વિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । તથા વેદવાન્ વેદ્યતે જ્ઞાયતે જીવાજીવાદિસ્વરૂપમનેનેતિ વેદઃ=આચારાણ્ણાધ્યાગમઃ, સોઽસ્યાસ્તીતિ વેદવાન્-આચારાધ્યાગમાધિગન્તેત્યર્થઃ, તથા-ધર્મવાન્-દુર્ગતૌ પ્રપતન્તં જીવં ધારયતિ રક્ષતીતિ ધર્મઃ-શ્રુતચારિત્રલક્ષણઃ

મેં-ચાહે યે અનુકૂલ હોં ચાહે પ્રતિકૂલ હોં-જિસ પ્રાણીકો રાગ ઓર દ્વેષ નહીં હોતે હેં વહી પ્રાણી આત્મવાન્ હૈ, અર્થાત્ જ્ઞાનાદિ ગુણોંસે સંપન્ન હૈ, અથવા આત્મહિતકારી આચરણમેં લવલીન હૈ । જિસ પ્રકાર તુષસે ધાન્ય અલગ કિયા જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર શબ્દાદિ વિષયોંમેં પ્રવર્તમાન અપની આત્માકો ઉનસે અલગ કર વહ ઉસકી રક્ષા કરનેવાલા હૈ । જ્ઞાનવાન્ હૈ-હેય ઓર ઉપાદેયકે વિવેકવાલા હૈ । ઇષ્ટ ઓર અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોંમેં પ્રવૃત્તિ ઓર નિવૃત્તિકે કારણ રાગ ઓર દ્વેષ હેં । રાગ ઓર દ્વેષસે નવીન કર્મોંકા વન્ધ, ઓર ઇસસે જીવોંકા સંસારમેં પરિભ્રમણ હોતા હૈ । વેદવાન્ હૈ-જીવાદિક પદાર્થોંકા સ્વરૂપ જિસસે જાના જાતા હૈ ઉસકા નામ વેદ હૈ, વે આચારાણ્ણ આદિ આગમ હેં, ઇનકા જો જાન-નેવાલા હૈ ઉસકા નામ વેદવાન્ હૈ । ધર્મવાન્ હૈ-દુર્ગતિમેં પડતે હુએ જીવોં કી રક્ષા કરતા હૈ ઉસકા નામ ધર્મ હૈ, વહ ધર્મ શ્રુતચારિત્રરૂપ હૈ, યહ

લલે તે અનુકૂળ હોય કે પ્રતિકૂળ હોય, જે પ્રાણીને રાગ અને દ્વેષ થતો નથી. તે પ્રાણી જે આત્મવાન છે અર્થાત્ જ્ઞાનાદિ ગુણોથી સંપન્ન છે, અથવા આત્મ-હિતકારી આચરણમાં લવલીન છે જેવી રીતે તુષથી ધાન્ય અલગ કરવામાં આવે છે તેવી રીતે શબ્દાદિક વિષયોમાં પ્રવર્તમાન પોતાના આત્માને તેનાથી અલગ કરી તે તેની રક્ષા કરવાવાળા છે, જ્ઞાનવાન્ છે-હેય અને ઉપાદેયના વિવેકવાળા છે-ઇષ્ટ અને અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોમાં પ્રવૃત્તિ અને નિવૃત્તિના કારણ રાગ અને દ્વેષ છે, રાગ અને દ્વેષથી નવીન કર્મોના બંધ અને તેનાથી છવોનું સંસારમાં પરિભ્રમણ થાય છે. આવા પ્રકારના જ્ઞાનથી તે સંપન્ન છે. વેદ-વાન્ છે-છવાદિક પદાર્થોના સ્વરૂપ જેનાથી બાણી શકે છે તેનું નામ વેદ છે. તે આચારાંગ આદિ આગમ છે. તેના જે બાણનાર છે તેનું નામ વેદવાન્ છે. ધર્મવાન્ છે-દુર્ગતિમાં પડતા છવોની જે રક્ષા કરે છે તેનું નામ ધર્મ છે. તે ધર્મ શ્રુતચારિત્રરૂપ છે. તે જેની પાસે છે અર્થાત્ જે આ ધર્મનો પાલક છે, તેનું

छाया—यस्येमे शब्दाश्च रूपाणि च रसाश्च गन्धाश्च स्पर्शाश्चाभिसमन्वागता भवन्ति, स आत्मवान् ज्ञानवान् वेदवान् धर्मवान् ब्रह्मवान् प्रज्ञानैः परिजानाति लोकम्, मुनिरित्युच्यते, धर्मविद् ऋजुः, आवर्तस्रोतःसङ्गमभिजानाति ॥ मू० ३॥

टीका—यस्य मुनेः, इमे=प्रत्यक्षमनुभूयमानाः, शब्दाः रूपाणि रसा गन्धाः स्पर्शाश्च अनुकूलप्रतिकूलरूपाः, अभिसमन्वागताः—अभि=आभिमुख्येन, सम्यगू= इष्टानिष्टावधारणेन, अनु=शब्दादिस्वरूपावगमात् पश्चात्, आगताः=विज्ञाताः, भवन्ति—शब्दादिविषयाः परमार्थतः संसारकारणतयाऽऽत्मकल्याणाय न भवन्ति,

षड्जीवनिकायरूप इस लोकमें द्रव्य और भावरूप शस्त्रसे उपरत होता हुआ जीव जिस प्रकारसे मुनिपनेको पाता है उसीका प्रतिपादन करते हैं—‘जस्सिमे’ इत्यादि ।

जिस मुनिके लिये प्रत्यक्ष अनुभूत शब्द; रूप, रस, गन्ध और स्पर्श, ये पौद्गलिक गुण अनुकूल और प्रतिकूल होते हुए इष्ट और अनिष्टकी कल्पनाके कारण नहीं बनते हैं, अर्थात् वे शब्दादिक विषय पुद्गलके गुण हैं, इनसे मेरी आत्माका कोई भी उपकार या अपकार नहीं हो सकता है । इनमें इष्टानिष्टकी कल्पना करनेसे ये मेरे लिये संसारका कारण बनेंगे, क्यों कि ये स्वयं संसारके ही कारण हैं—मुक्तिके नहीं । मुक्तिके कारण वे ही होते हैं जिनसे इस आत्माका कल्याण होता है । इनसे तो मेरी आत्माका कुछ भी कल्याण नहीं हो सकता है, अतः इनमें इष्टानिष्टकी कल्पना कर मैं क्यों अपना बिगाड़ करूँ । इनके स्वरूपको जाननेके बाद इस प्रकारके दृढ़ अध्यवसायसे इन शब्दादिकों

षड्जीवनिकायरूप आ लोकमां द्रव्य अने भावरूप शस्त्रथी उपरत अनीने अव ने प्रकारे मुनिपणाने प्राप्त थाय छे तेनुं प्रतिपादन करे छेः—‘जस्सिमे’ इत्यादि.

ने मुनिना माटे प्रत्यक्ष अनुभूत—शब्द, रूप, रस, गंध अने स्पर्श, अने पौद्गलिक गुण अनुकूल अने प्रतिकूल होवा छतां छष्टि अने अनिष्टनी कल्पनाना कारण अनता नथी. अर्थात् ते शब्दादिक विषय पुद्गलानो गुण छे. तेनाथी मारा आत्माने कोछ पणु उपकार या अपकार अनी शकतो नथी. तेमां छष्टानिष्टनी कल्पना करवाथी अने मारा माटे संसारनुं कारण अनशे. कारण के अने स्वयं न संसारनुं न कारण छे, मुक्तिनुं नहि. मुक्तिनुं कारण ते अने छे नेनाथी आ आत्मानुं कल्याण थाय छे, आनाथी तो मारा आत्मानुं कोछ पणु कल्याण अनी शकतुं नथी. माटे तेमां छष्टानिष्टनी कल्पना करीने शा माटे पोतानो अगाड के. तेना स्वरूपने जाणया पाद आ प्रकारना दृढ अध्यवसायथी ते शब्दादिकोमां

ચારિત્રલક્ષણસ્યાવલમ્બનાદકુટિલઃ, યદ્વા-સરલચિત્તઃ, આવર્તસ્રોતઃસજ્જમ્=આવર્તો-
ભાવાવર્તો જન્મજરામરણાધિવ્યાધિવ્યસનોપનિપાતરૂપઃ સંસારઃ-ઉક્તञ्च—

“રાગદ્વેષવશાવિદ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ ક્ષિપ્તં, પ્રમાદાદ્ ભ્રામ્યતે મૃશમ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

સ્રોતશ્ચાત્ર ભાવસ્રોતઃ-શબ્દાદિવિષયામિલાષઃ, આવર્તશ્ચ સ્રોતશ્ચાવર્તસ્રોત-
સી, તયોઃ સજ્જમ્=રાગદ્વેષકૃતઃ સમ્બન્ધઃ, તમ્ અભિજાનાતિ । સંસારસ્રોતઃસજ્જો
રાગદ્વેષકૃતો ભવતીતિ વિજ્ઞાય યસ્તં પરિહરતિ, સ એવાવર્તસ્રોતસોઃ સજ્જં વિજાના-
તીત્યર્થઃ ॥ મૂ૦ ૩ ॥

ઋજુઃ=સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન ઔર સમ્યક્ચારિત્રરૂપ મોક્ષકે સરલ
માર્ગકે અવલમ્બનસે ઋજુપરિણામી-અકુટિલ, અથવા સરલચિત્ત હૈ
વહી હસ વાતકો જાન સકતા હૈ કિ-આવર્ત ઔર સ્રોતકા સમ્બન્ધ
રાગદ્વેષકૃત હૈ । આવર્ત્ત દો પ્રકારકા હૈ-ઁક દ્રવ્ય-આવર્ત્ત ઔર દૂસરા
ભાવ-આવર્ત્ત, જલપ્રવાહમેં ભંવર ઉઠતા હૈ વહ દ્રવ્ય-આવર્ત્ત હૈ । જન્મ,
જરા, મરણ, આધિ, વ્યાધિ આદિ અનેક ઉપદ્રવોંકા સ્થાનરૂપ સંસાર
ભાવ-આવર્ત્ત હૈ । કહા મી હૈ—

“રાગદ્વેષવશાવિદ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ ક્ષિપ્તં, પ્રમાદાદ્ ભ્રામ્યતે મૃશમ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અર્થાત્—યહ જગત્ રાગ ઔર દ્વેષસે વ્યાપ્ત હૈ, મિથ્યા દર્શનસે
યુક્ત હોનેકે કારણ યહ દુસ્તર હૈ, જન્મરૂપી આવર્ત્તમેં પડા હુઆ હૈ ઔર
પ્રમાદસે ઇતસ્તતઃ ચારોં ગતિયોંમેં ચક્કર કાટતા ફિરતા હૈ ॥ ૧ ॥

સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રરૂપ મોક્ષના સરલ માર્ગના અવલં-
બનથી ઋજુપરિણામી-અકુટિલ અથવા સરલચિત્ત છે તે જ આ વાતને બાણી
શકે છે કે-આવર્ત્ત અને સ્રોતનો સંબંધ રાગદ્વેષકૃત છે. આવર્ત્ત બે પ્રકારના
છે. એક દ્રવ્ય-આવર્ત્ત અને બીજું ભાવ-આવર્ત્ત. જળ પ્રવાહમાં જે ભંવર પડે
છે તે દ્રવ્ય-આવર્ત્ત છે. જન્મ, જરા, મરણ, આધિ, વ્યાધિ આદિ અનેક ઉપદ્રવોના
સ્થાનરૂપ સંસાર ભાવ-આવર્ત્ત છે. કહ્યું છે—

“રાગદ્વેષવશાવિદ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ ક્ષિપ્તં, પ્રમાદાદ્ ભ્રામ્યતે મૃશમ્ ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્ આ જગત્ રાગ અને દ્વેષથી વ્યાપ્ત છે મિથ્યાદર્શનથી યુક્ત
હોવાને કારણે તે દુસ્તર છે. જન્મરૂપી આવર્ત્તમાં પડેલ છે અને પ્રમાદથી
ચારે ગતિઓમાં પરિભ્રમણ કરે છે ॥ ૧ ॥

સોઽસ્યાસ્તીતિ ધર્મવાન્ । તથા બ્રહ્મવાન્-બ્રહ્મ=મોક્ષસુખં, તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્-મોક્ષસુખાભિજ્ઞાં ઇત્યર્થઃ, યદ્વા બ્રહ્મ=અષ્ટાદશવિધં બ્રહ્મચર્યં, તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્, યદ્વા-બ્રહ્મ=કામસેવનપરિત્યાગઃ તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્, ઇત્થંભૂતઃ સંયમી પ્રજ્ઞાનૈઃ=પ્રકર્ષેણ જ્ઞાયતે જ્ઞેયં જીવાજીવાદિ યથાવસ્થિતસ્વરૂપં યૈસ્તાનિ પ્રજ્ઞાનાનિ-મત્યાદીનિ, તૈર્લોકં=ષડ્જીવનિકાયસ્વરૂપં પરિજાનાતિ । યદ્વા લોકં=શબ્દાદિવિષયલોકં પરિજાનાતિ=જ્ઞપરિજ્ઞયા બન્ધકારણત્વેન વિજ્ઞાય પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરતીત્યર્થઃ ।

યઃ સ્વલ્પાત્મવાન્ જ્ઞાનવાન્ વેદવાન્ ધર્મવાન્ બ્રહ્મવાન્ સ એવ ચ મુનિરિત્યુચ્યતે ।
કિં ચ-ધર્મવિત્=જીવાજીવદ્રવ્યસ્વભાવાભિજ્ઞઃ, ઋજુઃ=ઋજુમાર્ગસ્ય સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાન-

જિસકે પાસ હૈ, અર્થાત્ જો ઇસ ધર્મકા પાલક હૈ ઉસકા નામ ધર્મવાન્ હૈ । બ્રહ્મવાન્ હૈ-બ્રહ્મ શબ્દકા અર્થ મોક્ષસુખ હૈ, વહ જિસકો હૈ ઉસકા નામ બ્રહ્મવાન્ હૈ અર્થાત્ મોક્ષસુખકા જ્ઞાતા હૈ, અથવા ૧૮ અઠારહ પ્રકારકે બ્રહ્મચર્યકા જો પાલક હોતા હૈ વહ ભી બ્રહ્મવાન્ હૈ, અથવા જો મૈથુનકા સર્વથા પરિત્યાગી હોતા હૈ વહ ભી બ્રહ્મવાન્ હૈ । ઇસ પ્રકારકા સંયમી અચ્છી તરહસે જીવાદિક પદાર્થોંકે સ્વરૂપકો પ્રકાશિત કરનેવાલે પ્રજ્ઞાનોં-મત્યાદિક જ્ઞાનોં-કે દ્વારા લોક-ષડ્જીવનિકાય-કે સ્વરૂપકો જાનતા હૈ । અથવા લોક-શબ્દાદિકવિષયરૂપ લોકકો જ્ઞપરિજ્ઞાસે બન્ધકા કારણ જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે ઉનકા પરિહાર-ત્યાગ કર દેતા હૈ । જો આત્મવાન્, જ્ઞાનવાન્, વેદવાન્, ધર્મવાન્ ઓર બ્રહ્મવાન્ હૈ વહી મુનિ કહા જાતા હૈ ।

કિન્ન-જો ધર્મવિત્=જીવ-અજીવ દ્રવ્યકે સ્વરૂપકા જ્ઞાતા હૈ, તથા

નામ ધર્મવાન્ છે, બ્રહ્મવાન્ છે-બ્રહ્મ શબ્દનો અર્થ મોક્ષસુખ છે. જે તેને છે તેનું નામ બ્રહ્મવાન્ છે. અર્થાત્ મોક્ષસુખનો જ્ઞાતા છે, અથવા ૧૮ અઠાર પ્રકારના બ્રહ્મચર્યનો પાલક છે તે પણ બ્રહ્મવાન્ છે. અથવા જે મૈથુનનો સર્વથા પરિત્યાગી થાય છે તે પણ બ્રહ્મવાન્ છે. આવા પ્રકારનો સંયમી સારી રીતે જીવાદિક પદાર્થોના સ્વરૂપને પ્રકાશિત કરવાવાળાં પ્રજ્ઞાન-મત્યાદિક જ્ઞાનોદ્વારા લોક-ષડ્જીવનિકાય-ના સ્વરૂપને જાણે છે, અથવા લોક-શબ્દાદિકવિષયરૂપ લોકને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બંધનું કારણ જાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો પરિહાર-ત્યાગ કરે છે. જે આત્મવાન્, જ્ઞાનવાન્, વેદવાન્, ધર્મવાન્ અને બ્રહ્મવાન્ છે તેને જ મુનિ કહેવામાં આવે છે.

વળી-જે ધર્મવિત્-જીવ અજીવ દ્રવ્યના સ્વરૂપનો જ્ઞાતા છે તથા ઋજુઃ

ચ કર્મવન્ધહેતુત્વાદુપેક્ષમાણ इत्यर्थः । परुषतां=परीषहाणां पारुष्यं कष्टजनकत्वरूपं नो वेत्ति—न तान् पीडाकारित्वेन गृह्णाति, अपि तु कर्मवन्धोच्छेदार्थमुद्यतः संसारादुद्विग्नमनास्तान् साहाय्यकारित्वेनानुमन्यते इत्यर्थः ।

किंच—स जागरः=मिथ्यात्वाविरतिप्रमादनिद्रापगमाज्जागर्तीति जागरः—श्रुत-
चारित्रधर्मारोधने सदा जागरूक इत्यर्थः । वैरोपरतः—वैरं परापकारचिन्तनं, तस्मा-
दुपरतः, अत एव—वीरः=कर्मवैरिविदारणसमर्थो भवति । हे शिष्य ! एवम्=इत्थंभूतः
श्रुतचारित्रधर्मारोधने सदा जागरूकः परापकाराध्यवसायरहितः सन् दुःखात्=
दुःखकारणात् कर्मणः प्रमोक्षयसे=मुक्तो भविष्यसि ॥ सू० ४ ॥

કી ઉપેક્ષા કર પરીષહોંકો કષ્ટજનક નહીં માનતા હૈ, કિન્તુ કર્મવન્ધ
કે વિનાશ કરનેકી ઓર ઉદ્યમી વહ અનગાર उन परीषहोंको उस कर्म
विनाशरूप कार्य में अपने सहायक मानता है ।

भावार्थ—परिग्रહमें आसक्तिसंपन्न व्यक्ति ही अनुकूल परीषहोंमें
अभिलाषी और प्रतिकूल परीषहोंमें उद्वेगी बनता है । जिसके पास
परिग्रह ही नहीं है ऐसे संयमी मुनिके लिये क्या प्रतिकूल परीषह क्या
अनुकूल परीषह सब एक समान हैं । अनुकूलमें इसकी लालसा नहीं
और प्रतिकूलमें इसको द्वेष नहीं, कारण कि इस सिद्धान्तको भलीभाँति
जान चुका है कि—संसारके मूल कारण राग और द्वेष हैं । अनुकूलमें
अभिलाषा होनी यह रागकी पर्याय है, और प्रतिकूलमें उद्वेग होना द्वेष
की पर्याय है, अतः वह दोनों प्रकारके परीषहोंको समभावसे सहन
करता है । परीषहो एवं उपसर्गोंसे कदाचित् इसके चित्तमें संयमपरि-

માનતા નથી, પણ કર્મબંધનો વિનાશ કરવાની તરફ ઉદ્યમી તે અણુગાર તેવા
પરીષહોને તે કર્મવિનાશરૂપ કાર્યમાં પોતાના સહાયક માને છે.

ભાવાર્થ—પરિગ્રહમાં આસક્તિસંપન્ન વ્યક્તિ જ અનુકૂળ પરીષહોમાં અભિ-
લાષી અને પ્રતિકૂળ પરીષહોમાં ઉદ્વેગી બને છે. જેની પાસે પરિગ્રહ જ નથી
એવા સંયમી મુનિ માટે શું પ્રતિકૂળ પરીષહ અને શું અનુકૂળ પરીષહ ? સઘળા
એકસમાન છે અનુકૂળમાં તેની લાલસા નહિ અને પ્રતિકૂળમાં તેને દ્વેષ નહિ,
કારણ કે એ આ સિદ્ધાંતને સારી રીતે જાણી ચુકેલ છે કે સંસારનું મૂળ કારણ રાગ
અને દ્વેષ છે. અનુકૂળમાં અભિલાષા થવી તે રાગની પર્યાય છે અને પ્રતિકૂળમાં
ઉદ્વેગ થવો તે દ્વેષની પર્યાય છે, માટે સંયમી મુનિ તે બંને પ્રકારના પરીષ-
હોને સમભાવથી સહન કરે છે. પરીષહો તેમજ ઉપસર્ગોથી કોઈ વખત તેના
ચિત્તમાં સંયમપરિણામ તરફ અવરતિ અને અસંયમપરિણામ તરફ રતિ થઈ

આવર્તસ્રોતસોઃ સદ્ગમભિજાનન્ કં ગુણં પ્રાપ્નોતીત્યાહ-‘ સીઝસિણચ્ચાઈ’
 ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સીઝસિણચ્ચાઈ સે નિગ્ગન્થે અરરરરરસહે ફરુસયં
 નો વેણ્ઙ, જાગર વેરોવરણ વીરે, એવં દુઃસ્વા પમુક્ખસિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા-શીતોષ્ણત્યાગી સ નિર્ગન્થઃ અરતિરતિસહઃ પરુષતાં નો વેત્તિ, જાગરો
 વૈરોપરતઃ, વીર એવં દુઃસ્વાત્ પ્રમોક્ષ્યસે ॥ ૩ ॥

ટીકા-સ નિર્ગન્થઃ=વાહ્યાભ્યન્તરગ્રન્થરહિતો નિષ્પરિગ્રહ ઇતિ યાવત્, શીતો-
 ણ્ણત્યાગી=અનુકૂલપ્રતિકૂલપરિષદ્ સહમાનઃ, અનુકૂલેઽનભિલાષી, પ્રતિકૂલે
 ચાનુદ્વેગીત્યર્થઃ । અરતિરતિસહઃ=અરતિં સંયમે, રતિમસંયમે સહમાનઃ-સંયમારાધને
 પરીષદોપસર્ગતઃ કદાચિદરતિરુત્પદ્યતે, કદાચિચ્ચાસંયમે રતિરુત્પદ્યતે, તામરતિં રતિં

સ્રોત મી દ્રવ્ય ઓર ભાવકે મેદસે દો પ્રકારકા હૈ । નદી આદિકા
 પ્રવાહ દ્રવ્યસ્રોત હૈ । શબ્દાદિક વિષયોંકી અભિલાષા ભાવસ્રોત હૈ ।
 ઇન દોનોંકા સમ્બન્ધ રાગ એવં દ્વેષસે હુઆ હૈ, ઇસ વાતકો જાન કર
 જો ડનકે ડસ સમ્બન્ધકા પરિહાર-ત્યાગ કર દેતા હૈ વહી આવર્ત્ત ઓર
 સ્રોતકે સંગકા પરિજ્ઞાતા કહા જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જો મુનિ ઇસ આવર્ત્ત ઓર સ્રોતકે સમ્બન્ધકો જાન લેતા હૈ વહ
 કિસ ગુણકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? સો કહતે હૈ-‘ સીઝસિણચ્ચાઈ’ ઇત્યાદિ ।

વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર પરિગ્રહસે રહિત-નિષ્પરિગ્રહી મુનિ અનુકૂલ
 ઓર પ્રતિકૂલ પરીષદોંકો સહન કરતા હુઆ અર્થાત્-અનુકૂલ પરીષદમ્
 અભિલાષી ઓર પ્રતિકૂલ પરીષદમ્ ડદ્વેગી ન વનતા હુઆ રતિ ઓર અરતિ

સ્રોત પશુ દ્રવ્ય અને ભાવના લેદથી જે પ્રકારનું છે. નદી -આદિનો પ્રવાહ
 દ્રવ્યસ્રોત છે. શબ્દાદિક વિષયોની અભિલાષા ભાવસ્રોત છે. એ બન્નેનો સંબંધ
 રાગ અને દ્વેષથી થયેલ છે. તે વાતને જાણી જે તેના તે સંબંધનો પરિહાર-
 ત્યાગ કરે છે તે આવર્ત્ત અને સ્રોતના સંગનો પરિજ્ઞાતા કહેવાય છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જે મુનિ આવર્ત્ત અને સ્રોતના સંબંધને જાણી લે છે તે કેવા ગુણોને પ્રાપ્ત
 કરે છે ? તે કહે છે-‘ સીઝસિણચ્ચાઈ ’ ઇત્યાદિ.

વાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહથી રહિત-નિષ્પરિગ્રહી મુનિ અનુકૂળ અને પ્રતિ-
 કૂળ પરીષદો સહન કરતાં થકાં અર્થાત્ અનુકૂળ પરીષદમાં અભિલાષી અને પ્રતિકૂળ
 પરીષદોમાં ઉદ્વેગી ન બનીને રતિ અને અરતિની ઉપેક્ષા કરી પરીષદોને કષ્ટજનક

યશ્ચાવર્તસ્રોતસોઃ સજ્ઞાદજાગરઃ, સ તુ સંસારદુઃસ્વાન્ન વિમુચ્યત ઇત્યાશયેનાહ—
'જરામચ્ચુ૦' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જરામચ્ચુવસોવણીઐ નરે સયયં મૂઢો ધમ્મં નાભિ-
જાણઈ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—જરામૃત્યુવશોપનીતો નરઃ સતતં મૂઢો ધર્મં નાભિજાનાતિ ॥મૂ૦ ૫॥

ટીકા—જરામૃત્યુવશોપનીતઃ=જરામરણપરાધીનઃ, નરઃ=મનુષ્યઃ, સતતં=સર્વદા,
મૂઢઃ=મોહનીયોદયાદ્ વિવેકરહિતઃ ધર્મં=શ્રુતચારિત્રલક્ષણં નાભિજાનાતિ । ભાવ-
સુપ્તઃ સંસારી મોક્ષમાર્ગમપ્રાપ્ય પુનઃ પુનર્જરામૃત્યુવશંગતો દુઃસ્વાન્તં નોપયાતીતિ
ભાવઃ ॥ મૂ૦ ૫ ॥

નતુ જરામૃત્યુપારવશ્યાદેવ દુઃસ્વાન્તો ન ભવતિ ચેત્તર્હિ તત્પારવશ્યવારણાય
મુમુક્ષુણાં કિં કર્તવ્યમિતિ જિજ્ઞાસાયમાહ—'પાસિય આરુપાણે' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—પાસિય આરુપાણે અપ્પમત્તો પરિઠ્ઠવ્ઠ ॥ મંતા ઇયં
મહમં પાસ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—દૃષ્ટ્વા આતુરપ્રાણાન્ અપ્રમત્તઃ પરિવ્રજેત્ । મત્વા એતત્ મતિમન્
પશ્ય ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જો આવર્ત્ત ઓર સ્રોતકે સમ્બન્ધસે જાગરૂક નહીં હૈ વહ સંસારકે
દુઃસ્વોંસે છૂટ નહીં સકતા । ઇસ વિષયમેં કહતે હૈ—'જરામચ્ચુ૦' ઇ૦।

જો આવર્ત્ત ઓર સ્રોતકે સમ્બન્ધસે જાગરૂક નહીં હૈં એસે મનુષ્ય
જરા ઓર મરણકે આધીન હોકર નિરન્તર મોહનીય કર્મકે ઉદય
સે વિવેકરહિત હો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકો નહીં જાનતે હૈં । ઇસકા ભાવ
યહી હૈ કિ ભાવસુપ્ત સંસારી મોક્ષમાર્ગકો નહીં પ્રાપ્ત કર વારંવાર જરા
ઓર મૃત્યુકે આધીન હોકર કમી મી દુઃસ્વોંસે છૂટકારા નહીં પાતે હૈં ।૧।

જે આવર્ત્ત અને સ્રોતના સંબંધથી જાગરૂક નથી તે સંસારના દુઃખોથી
છુટી શકતા નથી. તે વિષયમાં કહે છે—'જરામચ્ચુ૦' ઇત્યાદિ.

જે આવર્ત્ત અને સ્રોતના સંબંધથી જાગરૂક નથી તેવા મનુષ્ય જરા
અને મરણને આધીન બની નિરંતર મોહનીય કર્મના ઉદયથી વિવેકરહિત થઈ
શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને જાણતા નથી. આનો ભાવ એ છે કે ભાવસુપ્ત સંસારી મોક્ષ-
માર્ગને પ્રાપ્ત કર્યા વિના વારંવાર જરા અને મૃત્યુને આધીન બની કદિ પણ દુઃખોથી
છુટકારો મેળવતા નથી. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ળામકે પ્રતિ અરતિ ઔર અસંયમપરિણામકે પ્રતિ રતિ હો જાતી હો સો ભી બાત નહીં હૈ । ક્યોં કિ યહ્ ઇન દોનોં પ્રકારકી પરિણતિયોંકો ભી કર્મબન્ધકા કારણ જાન કર ઁનકી તર્ફસે ઉપેક્ષિત રહતા હૈ । પરીષહોં કો યહ્ અપને લિયે કષ્ટકારી નહીં માનતા હૈ પ્રત્યુત ઁન્હેં અપને લક્ષમેં અધિકરૂપ જુટાનેવાલે હોનેસે અપના સહાયક હી માનતા હૈ । સંસાર શરીર ઔર ભોગોંસે જો નિર્વિણ્ણ-ઉદાસ હોતા હૈ ઁસે પરીષહ ઔર ઉપસર્ગ અપને લક્ષ્યસે નહીં ગિરા સકતે હૈં । ઁસે વ્યક્તિ વિઘ્નકારક કારણકલાપોંકો-પરીષહોંકો કર્મબન્ધકે ઉચ્છેદન કરનેમેં સુવર્ણમેં શુદ્ધિ લાનેકે લિયે અગ્નિરૂપ સહાયકકી તરહ અપના સહાયક માના કરતે હૈં ઔર ઁનકા સહર્ષ સ્વાગત કરતે હૈં ।

નિર્ગ્રન્થ મુનિ મિથ્યાત્વ અવિરતિ ઔર પ્રમાદરૂપ નિદ્રાકે અભાવસે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકે આરાધનમેં સદા જાગરૂક રહતા હૈ, ઁવં પરકે અપકાર કરનેકે વિચારરૂપ વૈરસે વિરક્ત હોતા હુઆ કર્મરૂપી વૈરીકો નિવારણ કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ । ઇસલિયે હે શિષ્ય ! તુમ ભી શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેમેં સદા જાગરૂક બન પરકે અપકાર કરનેકે અધ્યવસાયસે રહિત હોકર દુઃખ ઁવં દુઃખકે કારણ કર્મોંસે રહિત હો જાઓગે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જતી હોય તે પણ વાત નથી. કારણ કે તે આ બન્ને પ્રકારની પરિણતિઓને પણ કર્મબંધનું કારણ બાણીને તેની તરફથી ઉપેક્ષિત રહે છે. પરિષદોને તે પોતાને માટે કષ્ટકારી માનતો નથી પ્રત્યુત તેને પોતાના લક્ષમાં અધિકરૂપ બેડવાવાળા હોવાથી પોતાના સહાયક જ માને છે. સંસાર, શરીર અને ભોગોથી જે ઉદાસ થાય છે તેને પરીષદ અને ઉપસર્ગ પોતાના લક્ષથી દૂર કરી શકતા નથી. એવી વ્યક્તિ વિઘ્નકારક કારણકલાપોને-પરીષદોને કર્મબંધનુ ઉચ્છેદન કરવામાં સુવર્ણમાં શુદ્ધિ લાવવા માટે અગ્નિરૂપ સહાયકની માફક પોતાના સહાયક માન્યા કરે છે, અને તેઓનું સહર્ષ સ્વાગત કરે છે.

નિર્ગ્રન્થ મુનિ મિથ્યાત્વ અવિરતિ અને પ્રમાદરૂપ નિદ્રાના અભાવથી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનાં આરાધનમાં સદા જાગરૂક રહે છે અને પરનો અપકાર કરવાના વિચારરૂપ વૈરથી વિરક્ત બનીને કર્મરૂપી વૈરીનું નિવારણ કરવામાં સમર્થ થાય છે. માટે હે શિષ્ય ! તમે પણ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવામાં સદા જાગરૂક બની પરના અપકાર કરવાના અધ્યવસાયથી રહિત થઈ દુઃખ અને દુઃખના કારણ કર્મોથી રહિત બની જશો. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

કિન્ન—

મૂલમ—આરંભજં દુઃખમિણંતિણચ્ચા, માયી પમાઈ પુણેરેઈ ગબ્ભં।

उवेहमाणो सदरूपेसु अंजू, माराभिसंकी मरणा पमुच्चइ॥सू० ७॥

छाया—आरम्भजं दुःखमिदमिति ज्ञात्वा, मायी प्रमादी पुनरेति गर्भम् । उपेक्षमाणः शब्दरूपेषु (यः) ऋजुः, माराभिःशङ्की (सः) मरणात् प्रमुच्यते ॥सू० ७॥

ટોકા—इदं=संसारपरिभ्रमणरूपं दुःखम्, आरम्भजम्=सावद्यक्रियानुष्ठान-फलभूतम्, इति ज्ञात्वा आत्मकल्याणाय जागृहि । भावसुप्तः किं प्राप्नोतीत्याह—‘मायी’ इत्यादि । मायी=क्रोधादिकषाययुक्तः, कषायमध्यवर्तिमायाग्रहणेन पूर्वापरकषायाणा-मपि ग्रहणम् । प्रमादी=मद्यादिसेवी पुनः=वारं वारं, गर्भमेति=नरकादियातनामनु-भूय सकलदुःखहेतुभूतं गर्भं प्राप्नोति ।

है । संसारी प्राणी जो जन्म मरणके अनन्त कष्टोंको भोग रहे हैं उसका कारण भावनिद्राका सद्भाव ही है, ऐसा समझकर और प्रभुके उपदेश पर ध्यान देकर हे मतिमान् शिष्य ! तुम अनर्थात्पादक इस निद्राका परित्याग करो, अर्थात् संयमधर्ममें सदा जागरूक रहो, जिससे जरा-मरणजन्य कष्टोंसे तुम्हें छुटकारा मिले ॥सू० ६॥

फिर भी कहते हैं—‘आरंभजं’ इत्यादि ।

‘सावद्य क्रियाओंके अनुष्ठानका फल ही यह संसारका परिभ्रमणरूप दुःख है’ ऐसा जानकर हे शिष्य ! तुम आत्मकल्याणकी ओर अपनी प्रवृत्ति करो । यहां कषायोंके मध्यवर्त्ती मायाका ग्रहण करनेसे अन्य कषायोंका भी ग्रहण हो जाता है अतः भावसुप्त प्राणीके ये चिह्न हैं कि वह क्रोधादिक कषायोंसे युक्त होता है । प्रमादसेवी-मद्यादिकका सेवन

જન્મ મરણના અનંત કષ્ટોને ભોગવી રહ્યા છે તેનું કારણ ભાવનિદ્રાનો સદ્ભાવ જ છે એવું સમજીને અને પ્રભુના ઉપદેશ ઉપર ધ્યાન આપીને હે મતિમાન્ શિષ્ય ! તમે અનર્થોત્પાદક આ નિદ્રાનો પરિત્યાગ કરો, અર્થાત્ સંયમધર્મમાં સદા જાગરૂક રહો, જેથી તમને જરામરણજન્ય દુઃખોથી છુટકારો મળે ॥ સૂ. ૬ ॥

ફરી કહે છે—‘આરંભજં’ ઇત્યાદિ.

સાવધ ક્રિયાઓના અનુષ્ઠાનનું ફળ જ આ સંસારના પરિભ્રમણરૂપ દુઃખ છે. એવું જાણીને હે શિષ્ય ! તમે આત્મકલ્યાણની તરફ યોતાની પ્રવૃત્તિ કરો. અહીં કષાયોના મધ્યવર્તી માયાનું ગ્રહણ કરવાથી અન્ય કષાયોનું પણ ગ્રહણ થાય છે, માટે ભાવસુપ્ત પ્રાણીનું એ ચિહ્ન છે કે તે ક્રોધાદિ કષાયોથી યુક્ત બને છે, પ્રમાદસેવી-મદ્યાદિકનું સેવન કરવાવાળા બને છે “પુનર્વાપ જનનં પુનરપિ

टीका—आत्मकल्याणार्थी मनुष्यः आतुरप्राणान्=भावस्वापजनितजरामरण-
पारवश्योपनीतदुःखसागरान्तःपातिप्राणिनः, दृष्ट्वा, अप्रमत्तः=भावजागरूकः सन्
परिव्रजेत्=संयमाराधनतत्परो भवेत् । मतिमन्=हे मेधाविन् शिष्य ! त्वमपि
एतत्=सुप्तदूषणं जरामृत्युपारतन्व्यम्, मत्वा=ज्ञात्वा पश्य=चक्षुरुन्मीलय-संयम-
धर्मे जागृहीत्यर्थः ॥ सू० ६ ॥

यदि जरा और मृत्युकी परवशतासे जीवोंके दुःखोंका अन्त नहीं
होता है तो फिर उनकी परवशताको दूर करनेके लिये मुमुक्षु प्राणियोंको
क्या उपाय करना चाहिये ? इस प्रकारकी जिज्ञासाका समाधान करनेके
लिये कहते हैं—‘ पासिय आउरपाणे ’ इत्यादि ।

“आत्मकल्याणका अभिलाषी मनुष्य भावनिद्रासे उत्पन्न, जरा और
मरणकी परवशतासे प्राप्त दुःखरूपी सागरमें पड़े हुए प्राणियोंको देख
कर भावनिद्राका परित्याग करके संयमकी आराधना करनेमें सदा तत्पर
रहे” प्रभुके इस सर्वोत्तम उपदेशसे हे मेधावी शिष्य ! तुम भी
भावनिद्राजन्य जरा और मरणकी परवशतारूप दूषणको जानकर सदा
संयमरूप धर्ममें जागरूक रहो ।

भावार्थ—प्रभुका उपदेश है कि—आत्मकल्याणकी कामना करनेवाला
मनुष्य भावनिद्राका परित्याग करे, क्योंकि निद्राके सद्भावमें जरा और
मरणजन्य अनेक दुःखोंका कभी भी अन्त नहीं आ सकता है । इन
दुःखोंसे छुटकारा करनेवाला यदि कोई है तो वह भावनिद्राका अभाव

कदाच जरा અને મૃત્યુની પરવશતાથી ભવેના દુઃખનો અંત થતો નથી તો પછી
તેની પરવશતાને દૂર કરવા માટે મુમુક્ષુ પ્રાણીઓએ શો ઉપાય કરવો જોઈએ ? આવા
પ્રકારની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરવા માટે કહે છે—‘ પાસિય આઝરપાણે ’ ઇત્યાદિ.

“ આત્મકલ્યાણના અભિલાષી મુનિ ભાવનિદ્રાથી ઉત્પન્ન જરા અને મરણની
પરવશતાથી પ્રાપ્ત દુઃખરૂપી સાગરમાં પડેલાં પ્રાણીઓને દેખીને ભાવનિદ્રાનો
પરિત્યાગ કરીને સંયમની આરાધના કરવામાં સદા તત્પર રહે ” પ્રભુના આ સર્વો-
ત્તમ ઉપદેશથી હે મેધાવી શિષ્ય ! તમે પણ ભાવનિદ્રાજન્ય જરા અને મરણની
પરવશતારૂપ દૂષણને જાણીને સદા સંયમરૂપ ધર્મમાં જાગરૂક રહો.

ભાવાર્થ—પ્રભુનો ઉપદેશ છે કે—આત્મકલ્યાણની કામના કરવાવાળા મુનિ
ભાવનિદ્રાનો પરિત્યાગ કરે, કારણ કે આ નિદ્રાના સદ્ભાવમાં જરા અને મરણ
જન્ય અनेક દુઃખોનો કદિ પણ અંત આવી શકતો નથી. આ દુઃખોથી છુટ-
કારો કરાવનાર જે કોઈ હોય તો તે ભાવનિદ્રાનો અભાવ છે. સંસારી પ્રાણી જે

હાયા—અપ્રમત્તઃ કામૈઃ, ઉપરતઃ પાપકર્મભ્યઃ, વીરો ગુપ્તાત્મા યઃ खेदज्ञः॥૮॥

ટીકા—યઃ खेदज्ञः=સંસારિણાં દુઃસ્વામિજ્ઞઃ, સ કામૈરપ્રમત્તઃ=કામભોગકૃત-પ્રમાદરહિતઃ, પાપકર્મભ્ય ઉપરતઃ=મનોવાકાયૈઃ સાવધવ્યાપારેભ્યો નિવૃત્તઃ, અતएव वीरः=કર્મવિદારણસમર્થઃ, ગુપ્તાત્મા=આત્મરક્ષણપરાયણઃ આત્મોદ્ધારકારીત્યર્થઃ ॥૮॥

‘खेदज्ञस्य गुणमाह—‘ जे पञ्जवज्जायसत्थस्स ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જે પજ્જવજ્જાયસત્થસ્સ खेयण्णे, સે असत्थस्स खेयन्ने, जे असत्थस्स खेयण्णे, स पञ्जवज्जायसत्थस्स खेयन्ने॥૯॥

હાયા—યઃ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય खेदज्ञः, સઃ अशस्त्रस्य खेदज्ञः, यः अशस्त्रस्य खेदज्ञः, स पर्यवजातशस्त्रस्य खेदज्ञः ॥ સૂ૦ ૯ ॥

फिर भी कहते हैं—‘ अप्रमत्तो ’ इत्यादि ।

જો સંસારી જીવોંકે દુઃખોંકા જ્ઞાતા હૈ વહ કામભોગજન્ય પ્રમાદસે રહિત હોકર મન વચન ઔર કાયસે હોનેવાલે સાવધ વ્યાપારોંસે દૂર રહતા હુઆ કર્મોંકે નાશ કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ, યહી આત્મરક્ષા હૈ । ઇસ અપની રક્ષા કરને મેં વહ તત્પર રહતા હૈ, અર્થાત્ અપની આત્માકા ઉદ્ધાર કરનેવાલા હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

જો ઇસ પ્રકારસે નિષ્ણાત બન જાતા હૈ ઉસે ક્યા લાભ હોતા હૈ ? સો વતાતે હૈ—‘ જે પજ્જવજ્જાય૦ ’ ઇત્યાદિ ।

‘ પર્યવ ’ શબ્દકા અર્થ—શબ્દાદિ વિષયોંકે ભેદ-પ્રકાર, ‘ શસ્ત્ર ’ શબ્દકા અર્થ—પ્રાણિપીડનાદિ સાવધકર્મ, ‘ खेदज्ञ ’ શબ્દકા અર્થ—પ્રાણિયોંકે સાવધક્રિયાજન્ય દુઃખોંકા જ્ઞાતા, હોતા હૈ ।

इरीथी डहे छे—‘ अप्रमत्तो ’ इत्यादि.

જે સંસારી જીવોના દુઃખોનો જ્ઞાતા છે તે કામભોગજન્ય પ્રમાદથી રહિત બનીને મન વચન અને કાયાથી બનનારા સાવધ વ્યાપારોથી દૂર રહીને કર્મોનો નાશ કરવામાં સમર્થ થાય છે. તે જ આત્મરક્ષા છે. આ પોતાની રક્ષા કરવામાં તત્પર રહે છે, અર્થાત્ પોતાના આત્માનો ઉદ્ધાર કરવાવાળો થાય છે. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

જે આવા પ્રકારથી નિષ્ણાત બની જાય છે તેને શુ લાભ થાય છે ? તે બતાવે છે—‘ જે પજ્જવજ્જાય૦ ’ ઇત્યાદિ

‘ પર્યવ ’ શબ્દનો અર્થ—શબ્દાદિક વિષયોના ભેદ-પ્રકાર, ‘ શસ્ત્ર ’ શબ્દનો અર્થ—પ્રાણિપીડનાદિ સાવધ કર્મ, ‘ खेदज्ञ ’ શબ્દનો અર્થ—પ્રાણિયોના સાવધ ક્રિયાજન્ય દુઃખોનો જ્ઞાતા, થાય છે

एवं भावसुप्तस्य दोषं पर्यालोच्य यः शब्दरूपेषु=इदमुपलक्षणं, तेन शब्दरूप-
रसगन्धस्पर्शेषु विषयेषु इत्यर्थः, उपेक्षमाणो=रागद्वेषरहितः ऋजुः=अवक्रहृदयो
मायाप्रमादपरिवर्जितः, माराभिशङ्की=पुनः पुनर्मरणदुःखाभ्यागमशङ्कया भीरुः,
तद्दुःखपरिहारार्थं श्रुतचारित्रधर्मे जागरूक इति यावत्, स मरणात् प्रमुच्यते ॥सू० ७॥

किञ्च—

मूलम्—अप्पमत्तो कामेहि, उवरओ पावकम्मेहि, वीरे आ-
यगुत्ते जे खेयन्ने ॥ सू० ૮ ॥

करनेवाला होता है “पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे
शयनम्” बारंबार जन्म मरण और गर्भमें आगमन; इनसे उसका
छुटकारा नहीं होता है। सावध क्रियाओंमें तत्पर प्राणी नरकनिगोदा-
दिककी अनन्त यातनाओंको भोगता हुआ इनसे भी अधिक कष्टोंके
स्थानभूत गर्भमें जाकर बसेरा करता है।

इस प्रकार भावसुप्त प्राणीकी जब यह दशा होती है तब संयमी
मुनिका कर्तव्य है कि वह इस भावनिद्राका परिहार करे और पांच
इन्द्रियोंके विषयों—शब्द, रूप, रस, गन्ध और स्पर्श—में रागद्वेषरहित
होकर मायाप्रमादसे अपनी प्रवृत्तिको सुरक्षित रखता हुआ बारंबार
जन्म मरणके दुःखोंको प्राप्त होनेकी आशङ्कासे भयभीत होकर सांसा-
रिक दुःखोंसे छुटकारा पानेके लिये श्रुतचारित्ररूप धर्ममें सदा जागरूक
रहे। इस प्रकारकी प्रवृत्तिसे ही प्राणी मरणसे छूट सकता है, अन्यथा
नहीं ॥ सू० ७ ॥

મરણં પુનરપિ જનનીજઠરે શયનમ્” વારંવાર જન્મ મરણ અને ગર્ભમાં આગ-
મન, તેનાથી તેનો છુટકારો થતો નથી. સાવધ ક્રિયાઓમાં તત્પર પ્રાણી નરક-
નિગોદાદિકની અનન્ત યાતનાઓને ભોગવતાં તેનાથી પણ અધિક કષ્ટોના સ્થાનભૂત
ગર્ભમાં સ્થાન લે છે.

આવા પ્રકારે ભાવસુપ્ત પ્રાણીની જ્યારે આવી દશા થાય છે ત્યારે સંયમી
મુનિનું એ કર્તવ્ય છે કે તે આ ભાવનિદ્રાનો પરિત્યાગ કરે. અને પાંચ ઈન્દ્રિ-
યોના વિષયો—શબ્દ, રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શો—માં રાગદ્વેષ રહિત બનીને માયા
પ્રમાદથી પોતાની પ્રવૃત્તિને સુરક્ષિત રાખીને વારંવાર જન્મ મરણના દુઃખોને
પ્રાપ્ત થવાની આશંકાથી ભયભીત બની સાંસારિક દુઃખોથી છુટકારો મેળવવા
માટે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમાં સદા જાગરૂક રહે. આવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી જ
પ્રાણી મરણથી છુટી શકે છે, અન્યથા નહિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

અર્થ ભાવ:—યોડનુકૂલપ્રતિકૂલશબ્દાદિવિષયપ્રાપ્તિપરિહારાર્થ સાવચકર્માનુ-
ષ્ઠાનં શસ્ત્રરૂપં વેત્તિ સ સંયમમપિ સર્વજીવોપકારકમશસ્ત્રરૂપં જાનાતિ । શસ્ત્રાશસ્ત્રરૂ-
પતાં વિદંસ્તત્ર નિવર્તતે પ્રવર્તતે ચ । સકલસાવચવ્યાપારેભ્યો નિવૃત્ત્યા સંયમારાધને
પ્રવૃત્ત્યા ચ મુનેઃ કર્મક્ષયો ભવતીતિ ।

યદ્વા-યઃ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય=પર્યવજાતસ્ય=શબ્દાદિપર્યાયજનિતસ્યાષ્ટવિધકર્મણઃ
શસ્ત્રં=તપઃ તદ્દહનજનકત્વાત્, તસ્ય યઃ સ્વેદજઃ, સોડશસ્ત્રસ્ય સંયમસ્યાપિ સ્વેદજઃ ।

રૂપ સંયમકે અભ્યાસ કરનેમેં કર્મઠ-કુશલ-હૈ વહ જિન ૨ કાર્યોંસે
પ્રાણિયોંકે પ્રાણોંકો કષ્ટ પહુંંચે એસી સાવચ ક્રિયાઓંસે સદા વિરક્ત
હી રહતા હૈ ।

વિસ્તરાર્થ—જો અનુકૂલ ઓર પ્રતિકૂલ શબ્દાદિક વિષયોંકી પ્રાપ્તિ
એવં પરિહારકે લિયે સાવચ ક્રિયાકો શસ્ત્રરૂપ માનતા હૈ, વહ યહ મી
સમજતા હૈ કિ સંયમ સર્વ જીવોંકા ઉપકારક હોનેસે અશસ્ત્રરૂપ હૈ । ઇસ
પ્રકાર વહ સાવચ ક્રિયામેં શસ્ત્રરૂપતા ઓર સંયમમેં અશસ્ત્રરૂપતા જાન
કર અશસ્ત્રરૂપ સંયમમેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ ઓર શસ્ત્રરૂપ સાવચ ક્રિયાઓંકે
અનુષ્ઠાનસે વિરક્ત હોતા હૈ । યહ માની હુઈ વાત હૈ કિ-મુનિકે, કર્મોંકા
નાશ સકલ સાવચ વ્યાપારોંકી નિવૃત્તિસે ઓર સંયમકી આરાધનામેં
પ્રવૃત્તિ કરનેસે હી હોતા હૈ ।

અથવા—‘પર્યવ’ શબ્દકા અર્થ-‘શબ્દાદિ પર્યાય’ હૈ, ‘જાત’ શબ્દ કા
અર્થ-‘ઉત્પન્ન’ હૈ, ‘શસ્ત્ર’ શબ્દકા અર્થ ‘તપ’ હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ-
શબ્દાદિ પર્યાયોંસે ઉત્પન્ન હોનેવાલે આઠ પ્રકારકે કર્મોંકા શસ્ત્ર તપ હૈ,

ને ને કાર્યોંથી પ્રાણીઓના પ્રાણોંને કષ્ટ પહોંચે એવી સાવચ ક્રિયાઓંથી સદા
વિરક્ત ન રહે છે.

વિસ્તરાર્થ—ને અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ શબ્દાદિક વિષયોંની પ્રાપ્તિ તેમજ
પરિહાર માટે સાવચ ક્રિયાને શસ્ત્રરૂપ માને છે તે એ પણ સમજે છે કે સંયમ
સર્વ જીવોંને ઉપકારક હોવાથી અશસ્ત્રરૂપ છે, આ પ્રકારે તે તેમાં શસ્ત્ર અને
અશસ્ત્રરૂપતા બહોંને અશસ્ત્રરૂપ સંયમમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, અને શસ્ત્રરૂપ સાવચ
ક્રિયાઓંના અનુષ્ઠાનથી વિરક્ત થાય છે. એ માનેલી વાત છે કે મુનિને કર્મોંના
નાશ સકલ સાવચ વ્યાપારોંની નિવૃત્તિથી અને સંયમની આરાધનામાં પ્રવૃત્તિ
કરવાથી ન થાય છે.

અથવા—‘પર્યવ’ શબ્દનો અર્થ શબ્દાદિ પર્યાય છે, ‘જાત’ શબ્દનો
અર્થ ‘ઉત્પન્ન’ છે. ‘શસ્ત્ર’ શબ્દનો અર્થ ‘તપ’ છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે
શબ્દાદિ પર્યાયોંથી ઉત્પન્ન હોવાવાળા આઠ પ્રકારના કર્મોંનું શસ્ત્ર તપ છે, કારણ

ટીકા—યઃ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય—પર્યવાઃ=શબ્દાદિવિષયપ્રકારાઃ તેષુ=તન્નિમિત્તં જાતં શસ્ત્રં=પર્યવજાતશસ્ત્રં=શબ્દાદિવિષયવિશેષોપભોગાર્થં યત્ પ્રાણિનાં પીડના-દિરૂપં સાવધકર્મ, તસ્ય સ્વેદજ્ઞઃ=સાવધક્રિયાસમુત્પાદિતપ્રાણિદુઃસ્વાભિજ્ઞઃ, સઃ અશસ્ત્રસ્ય=નિરવધક્રિયારૂપસ્ય સંયમસ્ય સ્વેદજ્ઞઃ=અભ્યાસજ્ઞઃ, સંયમારાધને યાવદ-ધિકદુઃસ્વસહનં તાવદધિકકર્મનિર્જરા ભવતીત્યભિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । યશ્ચાશસ્ત્રસ્ય=સંયમસ્ય સ્વેદજ્ઞઃ, સ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્યાપિ સ્વેદજ્ઞઃ ।

ભાવાર્થ—સંસારી જીવ શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષયોંકા ઉપ-ભોગ કરનેકી લાલસાકે અધીન બનકર હી અપની પ્રવૃત્તિકો અસંયમિત બનાતે હૈં । ડનકી ઇસ અસંયમિત પ્રવૃત્તિસે ત્રસ-સ્થાવર પ્રાણિયોંકો અનેક પ્રકારકે કષ્ટ ભોગને પડતે હૈં । અસંયમી જીવોંકી અનર્ગલ પ્રવૃત્તિ હી અન્ય જીવોંકે લિયે અનેક પ્રકારકે કષ્ટોંકો દેનેવાલી હોતી હૈ । સંયમી જીવ ઇસ બાતકા સદા વિશેષ ધ્યાન રખતા હૈ કિ કહોં મેરી પ્રવૃત્તિસે પ્રાણિયોંકો દુઃસ્વ ન પહુંચે । ઇસલિયે વહ અપની પ્રવૃત્તિકો ઇતની સંય-મિત રખતા હૈ કિ કોઈ ભી પ્રાણી ડસસે દુઃસ્વી નહોં હો પાતા । વહ અપની ઇસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિકો ઉત્તરોત્તર બઢાનેકા ઇતના અધિક સે અધિક અભ્યાસ કરતા હૈ કિ યહ કમી ન કમી વીતરાગ પદકા ધારક હો જાતા હૈ । વહ જાનતા હૈ કિ મૈ સંયમકે આરાધનમેં જિતને અધિક દુઃસ્વોંકો સહુંગા ડતની હી અધિક મેરે કર્મોંકી નિર્જરા હોગી, યહી વીત-રાગપદ તક પહુંચનેકી ઉત્તમ સીઢી હૈ । ઇસ પ્રકાર જો નિરવધ ક્રિયા

ભાવાર્થ—સંસારી જીવ શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોના ઉપભોગ કરવાની લાલસાને આધીન બનીને જ પોતાની પ્રવૃત્તિને અસંયમિત બનાવે છે. તેની આ અસંયમિત પ્રવૃત્તિથી ત્રસ સ્થાવર પ્રાણીઓને અનેક પ્રકારના કષ્ટ ભોગવવા પડે છે. અસંયમી જીવોની સ્વચ્છંદ પ્રવૃત્તિ જ અન્ય જીવો માટે અનેક પ્રકારના કષ્ટોને દેવાવાળી બને છે. સંયમી જીવ આ બાબતનું સદા વિશેષ ધ્યાન રાખે છે કે કદાચ મારી પ્રવૃત્તિથી પ્રાણીઓને દુઃખ ન પહોંચે. તેટલા માટે તે પોતાની પ્રવૃત્તિને આટલી સંયમિત રાખે છે કે કોઈ પણ પ્રાણી તેનાથી દુઃખી થતો નથી. તે પોતાની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિને ઉત્તરોત્તર વધારવાનો એટલો અધિકથી અધિક અભ્યાસ કરે છે કે તે કોઈને કોઈ વખત વીતરાગપદનો ધારક બને છે, તે જાણે છે કે હું જેટલું સંયમ આરાધનમાં દુઃખ સહન કરીશ તેટલી જ મારે કર્મોની નિર્જરા થશે, આજ વીતરાગપદ સુધી પહોંચવાની ઉત્તમ સીડી છે. આ પ્રકારે જ નિરવધક્રિયારૂપ સંયમનો અભ્યાસ કરવામાં કર્મઠ-કુશળ છે તે

ત્યાહ-‘કર્મણા’ इत्यादि । उपाधीयते व्यपदिश्यते येन स उपाधिः=विशेषणम्, यद्वा-उपाधिः=संसारपरिभ्रमणरूपः, कर्मणा=ज्ञानावरणीयादिना जायते । जीवस्य यावत् कर्मसंबन्धस्तावदुपाधिर्जायते-इत्यर्थः ।

उपाधिसिद्धि-आत्मशरीरकर्मभेदात् । तत्रात्मोपाधिः-आत्मनो दुष्प्रयुक्तत्वम्, ततः कर्मोपाधिर्जायते । स एव शरीरोपाधित्वेन व्यपदिश्यते । नारकादिशरीरो-
हार नहीं होता है । इस प्रकारके व्यवहारका कारण कर्मबन्ध था, वह उसका नष्ट हो चुका है । कर्मबन्धसहित जीवके लिये ही यह व्यवहार घटित होता है, उससे रहित जीवके लिये नहीं । ‘उपाधि’ शब्दका अर्थ विशेषण है, कर्मबन्धसहित जीवके ही नारकी, मनुष्य आदि विशेषण संगत बैठते हैं । क्यों कि मनुष्यगति-नामकर्मके उदयसे जीव मनुष्य-विशेषणवाला होता है, नरकगति-नामकर्मके उदयसे जीव ‘नारकी’ इस विशेषणवाला होता है, इत्यादि । तात्पर्य यह कि-कर्मबन्धसहित जीवके तत्तत्कर्मोदयमें तत्तद्व्यपदेशता घटित होती है । अथवा संसारपरिभ्रमणका नाम भी उपाधि है । यह संसारपरिभ्रमणरूप उपाधि ज्ञानावरणीय आदि कर्मोंके संबन्धसे ही जीवको प्राप्त होती है । जीवको जब तक कर्मका सम्बन्ध रहता है तब तक ही उपाधिका सद्भाव रहता है ।

आत्मा शरीर और कर्मके भेदसे उपाधि तीन प्रकारकी है । अशुभ वृत्ति-खोटा प्रणिधान आत्माकी उपाधि है । आत्मा जब अशुभ क्रियाओंमें प्रवृत्ति करता है या अशुभ प्रणिधानवाला

કર્મબંધ હતું તે તેને નાશ થઈ ચુકેલ છે કર્મબંધસહિત જીવનો જ આ વ્યવહાર ઘટિત થાય છે. તેનાથી રહિત જીવનો નહિ.

‘उपाधि’ શબ્દનો અર્થ વિશેષણ છે. કર્મબંધસહિત જીવને જ નારકી, મનુષ્ય આદિ વિશેષણ સંગત બેસે છે, કારણ કે મનુષ્યગતિ-નામકર્મના ઉદયથી જીવ મનુષ્યવિશેષણવાળા થાય છે, નરકગતિ-નામકર્મના ઉદયથી જીવ ‘નારકી’ એવા વિશેષણવાળા થાય છે, ઇત્યાદિ. તાત્પર્ય એ કે-કર્મબંધસહિત જીવને તત્તત્કર્મોદયમાં તત્તદ્વ્યપદેશતા ઘટિત થાય છે. અથવા સંસારપરિભ્રમણનું નામ પણ ઉપાધિ છે આ સંસારપરિભ્રમણરૂપ ઉપાધિ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સંબંધથી જીવને પ્રાપ્ત થાય છે જીવને ન્યાં સુધી કર્મનો સંબંધ રહે છે ત્યાં સુધી જ ઉપાધિનો સદ્ભાવ રહે છે.

આત્મા, શરીર અને કર્મના ભેદથી ઉપાધિ ત્રણ પ્રકારની છે. અશુભવૃત્તિ-ખોટા પ્રણિધાન-વિચાર આત્માની ઉપાધિ છે. આત્મા ન્યારે અશુભ ક્રિયાઓમાં

યોઽશસ્ત્રસ્ય ચેદજ્ઞઃ, સ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્યાપિ ચેદજ્ઞઃ । સંયમતપઃચેદજ્ઞસ્યાસ્રવનિરો-
ધાદનાદિભવોપાર્જિતકર્મણાં ક્ષયો ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ચેદજ્ઞસ્ય મુનેઃ કર્મક્ષયાત્ કિં ફલં ભવતીત્યાહ—‘અકમ્મસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—અકમ્મસ્સ વ્યવહારો ન વિજ્ઞઈ, કમ્મુણા ઉવાહી
જાયઈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા—અકર્મણો વ્યવહારો ન વિદ્યતે । કર્મણા ઉપાધિર્જાયતે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—અકર્મણઃ=અષ્ટવિધકર્મરહિતસ્ય વ્યવહારઃ=નારકતિર્યગ્દેવમનુષ્યાદિ-
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ચ કર્મવન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશમાર્ગ ભવતી-

વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ચ કર્મવન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશમાર્ગ ભવતી-
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ચ કર્મવન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશમાર્ગ ભવતી-
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ચ કર્મવન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશમાર્ગ ભવતી-
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ચ કર્મવન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશમાર્ગ ભવતી-
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ચ કર્મવન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશમાર્ગ ભવતી-
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ચ કર્મવન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશમાર્ગ ભવતી-
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ચ કર્મવન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશમાર્ગ ભવતી-
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ચ કર્મવન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશમાર્ગ ભવતી-
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ચ કર્મવન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશમાર્ગ ભવતી-
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથ્ચ કર્મવન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશમાર્ગ ભવતી-

ચેદજ્ઞ મુનિકો કર્મોંકા ક્ષય હોનેસે વ્યા લાભ હોતા હૈ ? ઇસકા
ખુલાસા કરતે હૈ—‘અકમ્મસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

‘અકર્મણઃ વ્યવહારો ન વિદ્યતે’ જો આઠ પ્રકારકે કર્મોંસે રહિત
હો જાતા હૈ ઉસકે ચારોં પ્રકારકી ગતિયોંકે સર્વથા અભાવ હો જાનેસે
ઉસકે લિયે નારક, તિર્યંચ, મનુષ્ય ઓર દેવ, ઇત્યાદિ શબ્દોંકા વ્યવ-

હે તપ કર્મોંને બાળીને નાશ કરી નાંખે છે. આ શસ્ત્ર-તપનો જે ખેદજ્ઞ બાણકાર છે
તે મુનિ અશસ્ત્ર-સંયમનો પણ બાણકાર છે, જે અશસ્ત્ર-સંયમનો બાણકાર છે તે
શબ્દાદિપર્યાયજનિત આઠ પ્રકારના કર્મોંનો વિનાશ કરવાવાળા શસ્ત્ર-તપનો
પણ બાણકાર છે. એ બન્નેને બાણવાળા મુનિના આસ્રવનો નિરોધ હોવાથી
અનાદિ ભવોથી સંચિત કર્મોંનો ક્ષય થાય છે ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ખેદજ્ઞ મુનિને કર્મોંનો ક્ષય થવાથી શું લાભ થાય છે ? તેનો ખુલાસો કરે
છે—‘અકમ્મસ્સ’ ઇત્યાદિ.

‘અકર્મણઃ વ્યવહારો ન વિદ્યતે’ જે આઠ પ્રકારના કર્મોંથી રહિત થાય છે
તેને ચારે પ્રકારની ગતિઓનો સર્વથા અભાવ થઈ જવાથી નારક તિર્યંચ મનુષ્ય
અને દેવ, ઇત્યાદિ શબ્દોંનો વ્યવહાર થતો નથી. આ પ્રકારના વ્યવહારનું કારણ

યદ્યેવં ભવતિ, તર્હિ મુનિના કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘કમ્મં ચ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્=કમ્મં ચ પડિલેહાણ, કમ્મમૂલં ચ જં સ્વળં ॥૧૧॥

છાયા—કર્મ ચ પ્રતિલેખ્ય, કર્મમૂલં ચ યત્ ક્ષણમ્ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા—કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ, યદ્વા—પ્રકૃતિસ્થિત્યાદિવન્ધં, પ્રતિલેખ્ય=સંસારસ્ય કારણમિતિ પર્યાલોચ્ય કર્મમૂલં=પ્રાણિષુ સાવધવ્યાપારકરણં રાગદ્વેષમોહરૂપં વા કર્મણઃ કારણમિતિ ચ પર્યાલોચ્ય યત્ ક્ષણં=ક્ષણનં-હિંસનં-પ્રાણાતિપાતાદિ, તત્ પરિત્યજેદિત્યર્થઃ । ઉક્તञ—

યદિ એસા હૈ તો મુનિકો ક્યા કરના ચાહિયે ? સો કહતે હૈ—‘કમ્મં ચ’ ઇત્યાદિ ।

જવ યહ નિશ્ચિત્ત હો ચુકા કિ કર્મરૂપ ઉપાધિસે હી જીવોમૈં નારકાદિ વ્યવહાર હોતા હૈ તો મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંકો, અથવા ઉનકે પ્રકૃતિવન્ધ, સ્થિતિવન્ધ આદિ વન્ધોંકો સંસારકા કારણ જાનકર કર્મોંકે મૂલ કારણ સાવધ વ્યાપારકો, અથવા રાગ દ્વેષ મોહકો જાન કર પ્રાણાતિપાતાદિક જો કાર્ય હૈં ઉનકા સર્વથા પરિત્યાગ કરે ।

ભાવાર્થ—જીવોમૈં નારકાદિ વ્યવહાર કર્મકૃત હૈ, કર્મ સંસારકા કારણ હૈ । કર્મ જીવોંકી શુભાશુભરૂપ પ્રવૃત્તિસે ઉત્પન્ન હોતે હૈં । અશુભાદિ કર્મોં સે નારકાદિ વ્યવહાર હોતા હૈ । અશુભાદિ કર્મોંકા મૂલ કારણ હિંસાદિ પાપ યા રાગ દ્વેષ ઔર મોહ હૈં । ઇસ લિએ જ્ઞાની મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઉનકે મૂલ કારણોંકા સર્વથા ત્યાગ કરે । કહા ભી હૈ—

ને આમ જ હોય તો મુનિએ શુ કરવું બેઠએ ? તે કહે છે—‘કમ્મં ચ’ ઇત્યાદિ.

બ્યારે એ નિશ્ચય થયો કે કર્મરૂપ ઉપાધિથી જ જીવોમા નારકાદિ વ્યવહાર થાય છે તો મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંને અથવા તેના પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ આદિ બંધોંને સંસારનું કારણ બાણીને તે કર્મોંનું મૂલ કારણ સાવધ વ્યાપારને, અને રાગદ્વેષ મોહને બાણીને પ્રાણાતિપાતાદિક જે કાર્ય છે તેનો સર્વથા પરિત્યાગ કરે.

ભાવાર્થ—જીવોમાં નારકાદિ વ્યવહાર કર્મકૃત છે, કર્મ સંસારનું કારણ છે. કર્મ જીવોની શુભાશુભરૂપ પ્રવૃત્તિથી ઉત્પન્ન થાય છે. અશુભાદિ કર્મોંથી નારકાદિ વ્યવહાર થાય છે. અશુભાદિ કર્મોંનું મૂળ કારણ હિંસાદિ પાપ, અથવા રાગદ્વેષ અને મોહ છે. માટે જ્ઞાની મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે તેના મૂળ કારણનો સદા ત્યાગ કરે. કહ્યું છે—

પાધિના નારકાદિરિત્યુચ્યતે, યથા-જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણઃ સદ્ભાવાત્ સંસારિષુ ક-
શ્ચિન્મતિશ્રુતાવધિમનઃપર્યયવાન, કશ્ચિન્મન્દમતિઃ, કશ્ચિચ્છુદર્શની કશ્ચિદચ્છુદર્શની,
કશ્ચિત્ સુખી કશ્ચિદ્દુઃખી, કશ્ચિન્મિથ્યાદૃષ્ટિઃ કશ્ચિત્ સમ્યગ્દૃષ્ટિરિત્યાદિર્વ્યવહારો
ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

હોતા હૈ તબ હસકે કર્મરૂપ ઉપાધિ હોતી હૈ । હસસે હી જીવ શરીર
ઉપાધિવાલા હોતા હૈ । કર્મ-ઉપાધિસે હી જીવોંકો શરીર-ઉપાધિ
પ્રાપ્ત હોતી હૈ । અશરીરીકે કોઈ ઉપાધિ નહીં હોતી । નારક આદિ શરી-
રકી ઉપાધિસે જીવ નારક આદિ નામોંસે વ્યવહત હોતા હૈ । ઉસ-ઉસ
શરીરકી ઉપાધિસે જીવ ઉસ-ઉસ નામવાલા, યા ઉસ-ઉસ પર્યાયવાલા
હોતા હૈ । જૈસે-જબ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મકે સદ્ભાવસે સંસારી જીવોંમેં
કોઈ મતિશ્રુતજ્ઞાની, કોઈ મતિશ્રુતઅવધિજ્ઞાની, કોઈ મતિ, શ્રુત,
અવધિ, ઓર મનઃપર્યયજ્ઞાની હોતા હૈ, કોઈ મન્દબુદ્ધિ હોતા હૈ; કોઈ
ચક્ષુદર્શનવાલા, કોઈ અચક્ષુદર્શનવાલા, કોઈ સુખી, કોઈ દુઃખી, કોઈ
મિથ્યાદૃષ્ટિ ઓર કોઈ સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોતા હૈ તબ ઉનમેં ‘યહ મતિશ્રુતજ્ઞાની
હૈ, યહ મતિશ્રુતઅવધિજ્ઞાની હૈ, યહ મતિ-શ્રુત-અવધિ-મનઃપર્યયજ્ઞાની
હૈ, યહ ચક્ષુદર્શની હૈ, યહ અચક્ષુદર્શની હૈ, યહ સુખી હૈ, યહ દુઃખી હૈ,
યહ મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ ઓર યહ સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ’ ઇત્યાદિ વ્યવહાર
હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

પ્રવૃત્તિ કરે છે અગર અશુભ પ્રણિધાનવાળા થાય છે ત્યારે તેને કર્મરૂપ ઉપાધિ થાય
છે, તેનાથી જીવ શરીરઉપાધિવાળા થાય છે. કર્મઉપાધિથી જ જીવોને શરીર
ઉપાધિ પ્રાપ્ત થાય છે. અશરીરીને કોઈ ઉપાધિ હોતી નથી. નારક આદિ શરીરની
ઉપાધિથી જીવ નારક આદિ નામોથી વ્યવહત થાય છે. તે તે શરીરની ઉપાધિથી
જીવ તે તે નામવાળા અગર તે તે પર્યાયવાળા બને છે. જેવી રીતે જ્ઞાનાવરણીયાદિ
કર્મના સદ્ભાવથી સંસારી જીવોમાં જ્યારે કોઈ મતિ શ્રુત અને મનઃપર્યયજ્ઞાની
થાય છે. કોઈ મન્દબુદ્ધિ હોય છે. કોઈ ચક્ષુદર્શનવાળા કોઈ અચક્ષુદર્શનવાળા,
કોઈ સુખી કોઈ દુઃખી, કોઈ મિથ્યાદૃષ્ટિ અને કોઈ સમ્યગ્દૃષ્ટિ થાય છે ત્યારે
તેમાં ‘આ મતિશ્રુતજ્ઞાની છે, આ મતિ-શ્રુત-અવધિજ્ઞાની છે, આ મતિશ્રુત-અવધિ-
મનઃપર્યયજ્ઞાની છે, આ ચક્ષુદર્શની છે, આ અચક્ષુદર્શની છે, આ સુખી છે,
આ દુઃખી છે, આ મિથ્યાદૃષ્ટિ છે, અને આ સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે’ ઇત્યાદિ વ્યવહાર
થાય છે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

મૂલમ્—તં પરિજ્ઞાય મેઘાવી વિદિતા લોગં વંતા લોગસન્નં સે
મઇમં પરક્કમિજ્જાસિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

છાયા—તત્ પરિજ્ઞાય મેઘાવી વિદિતા લોકં વાન્ત્વા લોકસંજ્ઞાં સ મતિમાન્
પરાક્રમેત—ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ટીકા—તત્=કર્મણઃ કારણં રાગદ્વેષરૂપં પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા કર્મવન્ધહેતું
વિજ્ઞાય પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિત્યજ્ય લોકં વિષયકપાયવ્યામોહિતં સંસારિણં

उसे यह दृढ़ विश्वास हो जावेगा कि—आत्माके ज्ञानादिक गुणोंका घातक
यदि कोई हैं तो ये कर्म ही हैं, रागद्वेषको जो ज्ञानादिक गुणोंका घातक
सूत्रकारने प्रकट किया है वह कारणमें कार्यके उपचारसे किया है । क्योंकि
राग-द्वेषसे जीवोंके नवीन कर्मोंका बन्ध होता है, अतः राग द्वेष उनके
बन्धमें कारण हैं, और कर्मोंका बन्ध कार्य है । इन कर्मोंका अभाव जब
तक सर्वज्ञ प्रभुके उपदेशानुसार जीव अपनी प्रवृत्ति नहीं बनायेगा तब
तक नहीं कर सकता, अर्थात् संयमकी आराधना बिना इनका अभाव
नहीं हो सकता । यदि उसे वीतराग बनना है तो उसका कर्तव्य है कि
वह राग द्वेषका अन्त करनेके लिये उक्त विधिका पालन करे ॥सू० १२॥

इसी बातको सूत्रकार फिर पुष्ट करते हैं—‘तं परिज्ઞાય’ इत्यादि ।

साधु कर्मोंके बन्धमें मूल कारण राग द्वेषको ज्ञपરિજ્ઞાसे जान कर
और प्रत्याख्यानपरिज्ઞासे उनका त्याग करे । ‘समस्त संसारी जीव
विषय-कषायोंसे व्यामोहित हो रहे हैं इस लिये इन विषयोंकी वांछाको

જ્ઞાનાદિક ગુણોના ઘાતક જે કોઈ હોય તો તે કર્મ જ છે. રાગ દ્વેષને જે જ્ઞાનાદિક
ગુણોના ઘાતક સૂત્રકારે પ્રગટ કર્યા છે તે કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી કરેલ છે.
કારણ કે રાગ-દ્વેષથી જીવોને નવીન કર્મોનો બંધ થાય છે, માટે રાગ-દ્વેષ તેના
બંધમાં કારણ છે, અને કર્મોનો બંધ કાર્ય છે. તે કર્મોનો અભાવ જ્યાં સુધી
સર્વજ્ઞ પ્રભુના ઉપદેશાનુસાર જીવ પોતાની પ્રવૃત્તિ નહિ બનાવે ત્યાં સુધી કરી
શકતો નથી, અર્થાત્ સંયમની આરાધના વિના તેનો અભાવ થઈ શકતો નથી, કદાચ
તેને વીતરાગ બનવાનું છે તો તેનું કર્તવ્ય છે કે તે રાગ દ્વેષનો અંત કરવા માટે
કહેલી વિધિનું પાલન કરે. ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

આ વાતને સૂત્રકાર ફરીથી પુષ્ટ કરે છે—‘તં પરિજ્ઞાય’ ઇત્યાદિ.

સાધુ કર્મોના બંધમાં મૂલ કારણ રાગ દ્વેષને જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી જાણીને અને
પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે. ‘સમસ્ત સંસારી જીવ વિષય કષાયોથી
વ્યામોહિત થઈ રહેલ છે માટે તેવા વિષયોની વાંછાને સદા દૂર કરવી જોઈએ.’

“કર્મણો જાયતે કર્મ, તતઃ સંજાયતે ભવઃ ।

ભવાચ્છરીરદુઃખં ચ, તતશ્ચાન્યતરો ભવઃ” ॥૧॥ ઇતિ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

અપરં ચ મુનિકર્તવ્યમાહ—‘પડિલેહિય’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—પડિલેહિય સઘ્વં સમાયાય દોહિં અંતેહિં અદિ-
સ્સમાણે ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

છાયા—પ્રતિલેખ્ય સર્વ સમાદાય દ્વાભ્યામન્તાભ્યામદૃશ્યમાનઃ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ટીકા—પ્રતિલેખ્ય=કર્મસ્વરૂપં પર્યાલોચ્ય સર્વમ્=સર્વજ્ઞપ્રણીતમુપદેશં સંયમં
વા સમાદાય=ગૃહીત્વા અન્તાભ્યામ્=અન્તઃકૃદ્ધ્યાં-કારણે કાર્યોપચારાત્, આત્મનો
જ્ઞાનાદિગુણવિઘાતકાભ્યાં દ્વાભ્યાં=રાગદ્વેષાભ્યામ્ અદૃશ્યમાનઃ=અનુપલક્ષ્યમાણો
વીતરાગ શબ્દવ્યપદેશ્યો ભવતિ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

“કર્મણો જાયતે કર્મ, તતઃ સંજાયતે ભવઃ ।

ભવાચ્છરીરં દુઃખં ચ, તતશ્ચાન્યતરો ભવઃ ॥૧॥ ” ઇતિ ।

જીવોંકો કર્મસે હી કર્મકા બન્ધ હોતા હૈ । ઉસસે ભવ-સંસાર હોતા
હૈ । ભવસે શરીર, શરીરસે દુઃખ ઓર દુઃખોંસે ફિર અન્ય ભવ ઉન્હેં
મિલતા રહતા હૈ ॥ ૧ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ફિર ભી મુનિકે કર્તવ્ય કો કહતે હૈ—‘પડિલેહિય’ ઇત્યાદિ ।

કર્મ કે સ્વરૂપકી પર્યાયલોચના કરકે સર્વજ્ઞકથિત ઉપદેશકો અર્થાત્
સંયમકો ગ્રહણ કર આત્માકે જ્ઞાનાદિગુણોંકે વિઘાતક રાગ ઓર દ્વેષ સે
રહિત હોતા હુઆ મુનિ-આત્મા વીતરાગ શબ્દકા વાચ્ય હો જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—મુનિકે અન્ય કર્તવ્ય કો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રકાર કહતે
હૈં કિ-વહ કર્મકે સ્વરૂપકા વિચાર કરે । કર્મ કે સ્વરૂપકા વિચાર કરનેસે

“કર્મણો જાયતે કર્મ, તતઃ સંજાયતે ભવઃ ।

ભવાચ્છરીરં દુઃખં ચ, તતશ્ચાન્યતરો ભવઃ ॥૧॥ ” ઇતિ ।

જીવોને કર્મથી જ કર્મનો બંધ થાય છે. તેથી ભવ-સંસાર થાય છે. ભવથી
શરીર, શરીરથી દુઃખ અને દુઃખથી વળી અન્યભવ તેને મળતો રહે છે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

વળી પણ મુનિના કર્તવ્ય બાબત કહે છે—‘પડિલેહિય’ ઇત્યાદિ.

કર્મના સ્વરૂપની પર્યાલોચના કરીને સર્વજ્ઞકથિત ઉપદેશને અર્થાત્ સંય-
મને ગ્રહણ કરી આત્માના જ્ઞાનાદિ ગુણોના વિઘાતક રાગ અને દ્વેષથી રહિત
બનીને મુનિ-આત્મા વીતરાગ શબ્દનો વાચ્ય થઈ જાય છે.

ભાવાર્થ—મુનિના બીજા કર્તવ્યને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-
તે કર્મના સ્વરૂપનો વિચાર કરવાથી તેને તેવો દૃઢ વિશ્વાસ થઈ જશે કે આત્માના

તૃતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ ॥

તૃતીયાધ્યયનસ્ય પ્રથમોદ્દેશકે ભાવસુપ્તાઃ પ્રતિવોધિતાઃ, અથ તેષાં સ્વાપસ્ય ફલં દુઃખં ભવતીત્યાવેદયિતું દ્વિતીયોદ્દેશકં પ્રસ્તુવન્નાહ—‘જાઈં ચ વુડ્ઢિં ચ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જાઈં ચ વુડ્ઢિં ચ ઇહઽઽઽ પાસે, ભૂઈં જાણે પડિ-
લેહ સાયં । તમ્હાઽતિવિઽઽઽ પરમંતિ ણચ્ચા, સમ્મત્તદંસી ન
કરેઈ પાવં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—જાતિં ચ વૃદ્ધિં ચ ઇહ અઘ પશ્ય, ભૂતૈર્જાનીહિ પ્રતિલેખ્ય સાતમ્ ।
તસ્માત્ અતિવિઘ્નઃ પરમમ્ ઇતિ જ્ઞાત્વા, સમ્યક્ત્વદર્શી ન કરોતિ પાપમ્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—ઇહ=સંસારે અઘૈવ=અસ્મિન્નેવ દિવસે, અલં કાલક્ષણેનેતિ ભાવઃ;
જાતિમ્=ગર્ભોત્પત્તિં વૃદ્ધિં=વાલાદિવૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તં વર્ધનં પ્રાણિનાં, પશ્ય=ગર્ભોત્પત્તિ-

ત્રીસેરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ ॥

તૃતીય અધ્યયનકે પ્રથમ ઉદ્દેશમેં ભાવસુપ્ત પ્રાણિયોંકા નિરૂપણ
અચ્છી તરહસે કિયા જા ચુકા હૈ । ઇસ દ્વિતીય ઉદ્દેશમેં યહ સમજાયા
જાવેગા કિ ઉનકી ઇસ નિદ્રાકા ફલ ઉન્હેં દુઃખકે સિવાય કુછ નહીં
હોતા હૈ । ઇસી વિષયકો સ્પષ્ટ કરનેકે લિયે સૂત્રકાર ઇસ દ્વિતીય ઉદ્દેશ
કા પ્રારંભ કરતે હુએ પ્રથમ સૂત્ર કહતે હૈ—‘જાઈં ચ વુડ્ઢિં ચ ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્યકો સંવોધન કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ હે શિષ્ય ! આજ
હી તુમ ઇસ વાતકા જ્ઞાનદૃષ્ટિસે વિચાર કરો, કલ પરસોંકી વાત જાને
દો, સમય વીતાનેસે ક્યા ફાયદા ? સંસારમેં પ્રાણિયોંકી ગર્ભોત્પત્તિસે

ત્રીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ.

ત્રીજા અધ્યયનના પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવસુપ્ત પ્રાણીઓ વિષે સારી રીતે
સમજાવેલ છે. આ બીજા ઉદ્દેશમાં એ સમજાવવામાં આવશે કે તેની આ નિદ્રાનુ
શ્ણ તેને દુઃખ સિવાય બીજું કંઈ થતું નથી. આ વિષયને સ્પષ્ટ કરવા માટે
સૂત્રકાર આ બીજા ઉદ્દેશનો પ્રારંભ કરીને પ્રથમ સૂત્ર કહે છે—‘જાઈં ચ
વુડ્ઢિં ચ ’ ઇત્યાદિ.

શિષ્યને સંવોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે હે શિષ્ય ! આજ તમે
આ બાબતનો જ્ઞાનદૃષ્ટિથી વિચાર કરો, કાલ પરમદિવસની વાત જવા દો. સમય
વીતાવવામાં શું ફાયદો ? સંસારમાં પ્રાણીઓની ગર્ભોત્પત્તિથી લગાવી બાલાદિ-

વિદિત્વા, લોકસંજ્ઞાં=વિષયવાઙ્છારૂપાં વાન્ત્વા=દૂરીકૃત્ય સ મતિમાન્=સાધુ-
મર્યાદારક્ષણતત્પરઃ સન્ પરાક્રમેત=સંયમારાધને ઉદ્યુક્તો ભવેત્ । યદ્વા-અષ્ટ-
વિધં કર્મ ક્ષપયિતુમુત્સહેત । સંયમં ગૃહીત્વા ન પશ્ચાત્તાપમવલમ્બેત, સિંહત્વેન નિષ્ક્ર-
મ્ય શૃગાલત્વેન ન વિહરેત્ । અત્ર ચતુર્ભંજી વાચ્યા । ઇતિ બ્રવીમિ પૂર્વવત્ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

તૃતીયાધ્યયનસ્ય પ્રથમોદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૩-૧ ॥

સદા દૂર કરના चाहिये' ऐसा विचार कर उसका सदा परिहार करे, और मुनिपनेकी मर्यादाकी रक्षा करनेमें तत्पर वह मतिमान् मुनि संयम की आराधना करनेमें दत्तावधान रहे; क्योंकि संयमकी आराधनाके बिना कर्मोंका नाश नहीं हो सकता, इस लिये आठ कमका नाश करनेके अभिप्राय से संयमकी आराधना करे । संयमको ग्रहण कर फिर पश्चात्ताप न करे, अर्थात्-सिंहवृत्तिसे संयमकी आराधना करे किन्तु इसकी आराधनामें शृगालवृत्तिको स्थान न दे । यहां इस विषयमें चतुर्भंजी समझनी चाहिये, वह इस प्रकार—

(१) सिंहवृत्तिसे निकले सिंहवृत्तिसे पाले । (२) सिंहवृत्तिसे निकले शृगालवृत्तिसे पाले । (३) शृगालवृत्तिसे निकले सिंहवृत्तिसे पाले । (४) शृगालवृत्तिसे निकले शृगालवृत्तिसे पाले ।

इनमें पहला और तीसरा भंग श्रेष्ठ है ॥ 'इति ब्रवीमि' इसका अर्थ पहले कहा जा चुका है ॥ सू० १३ ॥

॥ तृतीय अध्ययनका प्रथम उद्देश समाप्त ॥ ३-१ ॥

એવો વિચાર કરી તેનો સદા પરિહાર કરે અને મુનિપણની મર્યાદાની રક્ષા કરવામાં તત્પર તે મતિમાન્ મુનિ સંયમની આરાધના કરવામાં સાવધાન રહે; કારણ કે સંયમની આરાધના વિના કર્મોનો નાશ થઈ શકતો નથી, માટે આઠ કર્મોનો નાશ કરવાના અભિપ્રાયથી સંયમની આરાધના કરે, સંયમને ગ્રહણ કરી પછી પશ્ચાત્તાપ ન કરે, અર્થાત્ સિંહવૃત્તિથી સંયમની આરાધના કરે પણ તેની આરાધનામાં શિયાળવૃત્તિને સ્થાન ન આપે. આ ઠેકાણે આ વિષયમાં ચતુર્ભંજી સમજવી જોઈએ, તે આ પ્રકારે—

(૧) સિંહવૃત્તિથી નિકળે, સિંહવૃત્તિથી પાળે. (૨) સિંહવૃત્તિથી નિકળે શૃગાલવૃત્તિથી પાળે. (૩) શૃગાલવૃત્તિથી નિકળે, સિંહવૃત્તિથી પાળે. (૪) શૃગાલવૃત્તિથી નિકળે, શૃગાલવૃત્તિથી પાળે.

તેમાં પહેલો અને ત્રીજો ભંગ ઉત્તમ છે. 'इति ब्रवीमि' એનો અર્થ પહેલાં કહેવામાં આવેલ છે. ૧૩

ત્રીજા અધ્યયનનો પ્રથમ ઉદ્દેશ સમાપ્ત ૩-૧.

તથા—“ હીણભિષ્ણસ્સરો દીણો, વિવરીઓ વિચિત્તઓ ।

દુબ્બલો દુઃખિઓ વસઈ, સંપત્તો ચરિમં દસં ” ॥૩॥ ઇત્યાદિ ।

છાયા—જાયમાનસ્ય યદ્દુઃખં મ્રિયમાણસ્ય જન્તોઃ ।

તેન દુઃખેન સંતપ્તો ન સ્મરતિ જાતિમાત્મનઃ ॥ ૧ ॥

વિરસરસિતં રસન્ તતઃ સ યોનિમુખાદ નિસ્સરતિ ।

માતુરાત્મનોઽપિ ચ વેદનામતુલાં જનયન્ ॥ ૨ ॥

હીનભિન્નસ્વરો દીનો વિપરીતો વિચિત્તકઃ ।

દુર્બલો દુઃખિતો વસતિ સંપ્રાપ્તઃ ચરમાં દશામ્ ॥ ૩ ॥

તથા—“ હીણભિષ્ણસ્સરો દીણો, વિવરીઓ વિચિત્તઓ ।

દુબ્બલો દુઃખિઓ વસઈ, સંપત્તો ચરિમં દસં । ॥૧॥ ” ઇતિ

ઉત્પન્ન હોનેવાલે એવં મરનેવાલે પ્રાણીકો જો દુઃખ હોતા હૈં ઉસ દુઃખસે સંતપ્ત બના હુઆ પ્રાણી અપની ઉત્પત્તિકા સ્મરણ તક નહીં કરતા ॥ ૧ ॥ જિસ સમય યહ જીવ યોનિમુખ-ગર્ભસ્થાનસે નિકલતા હૈં ઉસ સમય વહુત વુરી તરહસે રોતા હૈં, ક્યોં કિ ઉસ સમય વહ અપની માતા કે ઓર અપને લિયે અતુલ-વર્ણનાતીત-વેદનાકા કારણ બનતા હૈં ॥૨॥

તથા-ફિર વહ જવ વૃદ્ધાવસ્થામેં પહુંચતા હૈં તવ હીન બન જાતા હૈં । હસકા સ્વર અસ્પષ્ટ-ગરગર શબ્દવાળા હો જાતા હૈં, દશા હસકી દયનીય હો જાતી હૈં । તરુણાવસ્થામેં હસકી જો હાલત થી ઉસસે ભિન્ન હી હસકી હાલત હો જાતી હૈં । ચિત્ત ભી હસકા ઠિકાને નહીં રહતા । ઉસ સમય યહ દુર્બલ ઓર સદા દુઃખિત હી રહા કરતા હૈં ॥ ૩ ॥

તથા—“ હીણભિષ્ણસ્સરો હીણો, વિવરીઓ વિચિત્તઓ ।

દુબ્બલો દુઃખિઓ વસઈ, સંપત્તો ચરિમં દસં ” ॥ ૩ ॥ ઇતિ ।

ઉત્પન્ન થનાર અને મરનાર પ્રાણીને જે દુઃખ થાય છે તે દુઃખથી સંતપ્ત બનેલ પ્રાણી પોતાની ઉત્પત્તિનું સ્મરણ પણ કરતો નથી ॥૧॥ જે વખતે આ જીવ યોનિમુખ-ગર્ભસ્થાનથી નીકળે છે તે સમય ઘણી જ ખુરી રીતે રડે છે; કારણ કે તે વખત તે પોતાને માટે તેમ જ પોતાની માતા માટે અતુલ-વર્ણનાતીત-વેદનાનું કારણ બને છે ॥ ૨ ॥

તથા વળી તે જ્યારે વૃદ્ધાવસ્થામાં પહોંચે છે ત્યારે હીન બની જાય છે. તેનો સ્વર અસ્પષ્ટ-ગરગર શબ્દવાળો બની જાય છે. તેની દશા દયાજનક થઈ પડે છે તરુણ-અવસ્થામાં જે તેની હાલત હતી તે હાલતથી ખીલકુલ ભિન્ન તેની હાલત થઈ જાય છે. ચિત્ત પણ તેનું ઠેકાણું રહેતું નથી. આ વખતે તે દુર્બળ અને સદા દુઃખી જ રહ્યા કરે છે. ॥ ૩ ॥

વૃદ્ધિશ્ચ પ્રાણિનાં દુઃસ્વસહભાવિન્યેવ ભવતીતિ જ્ઞાનદૃષ્ટ્યાઽવલોકયેત્યર્થઃ । ઉક્તञ્ચ—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્ખં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્ખેણ સંતત્તો, ન સરહ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુહાઝ નિપ્પિહ્હ ૬ ।

માઝ્ઞ અપ્પણોઽવિ અ વેઅણમઝલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ”

લગાકર બાલાદિ-વૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તકી સબ અવસ્થાએ દુઃસ્વોંકે સાથ ૨ હી રહનેવાલી હૈં । સંસારી પ્રાણીકી એસી કોઈં ખી અવસ્થા નહીં હૈં જિસમેં દુઃસ્વોંકા સમ્બન્ધ ન હો । ગર્ભમેં આના ઓર વહાં રહના યહ એક મહા દુઃસ્વમય હૈં । યહ પ્રાણી યેન કેન પ્રકારેણ વહાં સે સુરક્ષિત દશા મેં ઉત્પન્ન હો જાતા હૈં ઓર બાલ-યુવા-વૃદ્ધાવસ્થા તક પહુંચ ખી જાતા હૈં તો ખી ઇન અવસ્થાઓમેં ઇસ જીવકો રંચમાત્ર ખી સાતા નહીં મિલતી હૈં । દુઃસ્વોંકે સિવાય યહાં સુસ્વોંકા નામ ખી નહીં હૈં । અતઃ ગર્ભોત્પત્તિ ઓર બાલાદિ વૃદ્ધાવસ્થા તક કી સમસ્ત દશાએ દુઃસ્વોંકે સાથ ૨ હી રહને વાલી હૈં । અન્યત્ર ખી યહીં બાત કહી હૈં—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્ખં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્ખેણ સંતત્તો, ન સરહ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણિમુહાઝ નિપ્પિહ્હ ૬ ।

માઝ્ઞ અપ્પણોઽવિ ય, વેયણમઝલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

વૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તની સઘણી અવસ્થાઓ દુઃખોની સાથે ને સાથે રહેવાવાળી છે. સંસારી પ્રાણીની એક પણ અવસ્થા એવી નથી કે જેમાં દુઃખોનો સંબંધ ન હોય. ગર્ભમાં આવવું અને ત્યાં રહેવું એ એક મહાન દુઃખ છે. તે પ્રાણી કેાઈ પકારે ત્યાંથી સુરક્ષિત દશામાં ઉત્પન્ન થઈ જાય છે અને બાળ-યુવા-વૃદ્ધાવસ્થા સુધી પહોંચી પણ જાય છે તો પણ આ અવસ્થાઓમાં આ જીવને ૨૪ માત્ર પણ સાતા મળતી નથી. દુઃખો સિવાય આંહી સુખોનું નામ પણ નથી. માટે ગર્ભોત્પત્તિ અને બાળાદિ વૃદ્ધાવસ્થા સુધીની સમસ્ત દશાઓ દુઃખોની સાથે જ રહેવાવાળી છે. અન્યત્ર પણ આ વાત કહેલ છે:—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્ખં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્ખેણ સંતત્તો, ન સરહ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુહાઝ નિપ્પિહ્હ ૬ ।

માઝ્ઞ અપ્પણોઽવિ ય, વેયણમઝલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ

મૂલન-ઉમ્મુંચ પાસં ઇહ મચ્ચિણ્હિં આરંભજીવી ઉભયાણુ-
પસ્સી । કામેસુ ગિદ્ધા નિચયં કરેંતિ, સંસિચ્ચમાણા પુણરેંતિ
ગઠ્ઠમં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ઉન્મુઞ્ચ પાશમ્ ઇહ મત્યૈઃ આરમ્ભજીવી ઉભયાનુદર્શી । કામેષુ ગૃદ્ધાઃ
નિચયં કુર્વન્તિ, સંસિચ્ચમાનાઃ પુનર્યન્તિ ગર્ભમ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—‘ઉમ્મુંચ’ ઇત્યાદિ । ઇહ=મનુષ્યલોકે, મત્યૈઃ=મનુષ્યૈઃ સાકં, પાશં=
વન્ધનહેતું કલત્રાદિસમ્બન્ધમ્, યદ્વા-પાશં દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દ્વિવિધં, દ્રવ્યતો રજ્જ્વા-
દિકં, ભાવતો વિષયકષાયાદિરૂપમ્, ઉન્મુઞ્ચ=ઉત્-ઉત્કર્ષતઃ-અતિશયેન નિરાકુરુ ।
પાશયુક્તો હિ કામભોગેચ્છયા પ્રાણિર્હિંસાદિકં કરોતીત્યાહ-‘આરમ્ભજીવી’ ઇત્યાદિ ।

‘ઉમ્મું ચ પાસં’ ઇત્યાદિ । ઇસ મનુષ્યલોકમેં મનુષ્યોંકે સાથ પાશ-
-વન્ધનકે હેતુ પુત્રકલત્રાદિ સમ્બન્ધ-કા હે શિષ્ય ! તુમ સર્વથા પરિહાર
કરો । અથવા દ્રવ્ય ઔર ભાવકે ભેદસે પાશ-વન્ધન દો પ્રકારકા હૈ । રસ્સી
આદિ પદાર્થ દ્રવ્યસે, વિષયકષાયાદિક ભાવસે વન્ધન હૈ, ઇન દોનોં પ્રકાર
કે વન્ધનોંકા સર્વથા ત્યાગ કરો ।

ભાવાર્થ—સંસારમેં જીવોંકે લિયે સવસે પ્રવલ વંધનકા કારણ પુત્ર-
કલત્રાદિકા સમ્બન્ધ હૈ । આત્માર્થી ઇસ વન્ધનકે હેતુકા જવતક ત્યાગ નહીં
કરતા તવ તક વહ આત્મકલ્યાણકે માર્ગપર આરુઢ નહીં હો સકતા, ઇસી-
લિયે ઉસકા સર્વથા ત્યાગ કરનેકા યદ્વાં ઉપદેશ દિયા ગયા હૈ । ઇસ પાશસે
યુક્ત પ્રાણી કામભોગકી ઇચ્છાસે પ્રાણિર્હિંસાદિરૂપ આરંભોંકો કરતા હૈ ।

‘ઉમ્મુંચ પાસં’ ઇત્યાદિ. આ મનુષ્યલોકમાં મનુષ્યોની સાથે પાશ-બંધનના
હેતુ પુત્રકલત્રાદિક સંબંધ-નો હે શિષ્ય ! તમે સર્વથા પરિત્યાગ કરો. અથવા દ્રવ્ય
અને ભાવના લેદથી પાશ-બંધન બે પ્રકારના છે. રસ્સી આદિ પદાર્થ દ્રવ્યથી, વિષય-
કષાયાદિક લાવથી બંધન છે. એ બન્ને પ્રકારના બંધનનો સર્વથા ત્યાગ કરો.

ભાવાર્થ—સંસારમાં જીવો માટે બંધાથી પ્રબળ બંધનનું કારણ પુત્રકલ-
ત્રાદિકનો સંબંધ છે. આત્માર્થી આ બંધનના હેતુનો ત્યાગ નથી
કરતો ત્યાં સુધી તે આત્મ-કલ્યાણના માર્ગ ઉપર આગળ વધી શકતો નથી.
માટે તેનો સર્વથા ત્યાગ કરવાનો આ ઠેકાણે ઉપદેશ આપેલ છે. આ પાશથી
યુક્ત પ્રાણી કામભોગની ઇચ્છાથી પ્રાણિર્હિંસાદિરૂપ આરભો કરે છે.

किञ्च—भूतैः=उच्चारादिचतुर्दशसु जीवोत्पत्तिस्थानेषु जातैर्भूतग्रामैः सह स्वात्मनः सातं=सुखं प्रतिलेख्य=पर्यालोच्य जानीहि । यथा तव सुखं प्रियमस्ति, तथाऽन्येषामपीति, यथा च तव दुःखे द्वेषः तथाऽन्येषामपीति ज्ञात्वा कस्यापि जीवस्य दुःखं नोत्पादनीयम्, एवं कृते दुःखं न प्राप्स्यसीति भावः ।

तस्मात्—प्राणिनां सुखदुःखपर्यालोचनात्, अतिविद्यः=अतीव विद्या यस्य सः अतिविद्यः=तत्त्वपरिच्छेदविद्याविभूषितः, परमं=परमश्रेयस्करं निर्वाणपदं तत्प्रापकं सम्यग्दर्शनादिकं वाऽस्ति, इति ज्ञात्वा सम्यक्त्वदर्शी=परमार्थदर्शी सन् पापं न करोति, सावद्यक्रियां न समाचरतीत्यर्थः ॥ सू० १ ॥

तथा हे शिष्य ! जीवोंकी उत्पत्तिके जो उच्चार (विष्टा) प्रस्रवण (सूत्र) आदि चौदह स्थान हैं उनमें उत्पन्न हुए जीवोंके साथ अपने सुख की पर्यालोचना करो, अर्थात् इस बातका सदा विचार करो कि जिस प्रकार सुख हमें प्रिय है उसी प्रकार अन्य जीवोंको भी वह प्रिय है, दुःख जिस प्रकार हमें अप्रिय-अनिष्ट है उसी प्रकार वह अन्य जीवोंको भी अनिष्ट है । ऐसा विचार कर या जानकर किसीको भी दुःख नहीं देना चाहिये । इस प्रकारसे विचार करने पर तुम स्वयं दुःख न पाओगे ।

इस प्रकार प्राणियों के सुख और दुःखकी पर्यालोचनासे वास्तविक तत्त्वका प्रकाशक ज्ञान जीवको प्राप्त होता है । उस ज्ञानसे युक्त वह मुक्तिपदको अथवा उसको प्राप्त करानेवाले सम्यग्दर्शनादिको परम-परमकल्याणकारी जानकर समदर्शी हो जाता है और सावद्य क्रियाओं को नहीं करता है ॥ सू० १ ॥

तथा हे शिष्य ! જીવોની ઉત્પત્તિના જે ઉચ્ચાર=વિષ્ટા પ્રસ્રવણ-મૂત્ર આદિ ચૌદ સ્થાન છે, તેમાં ઉત્પન્ન થયેલા જીવોની સાથે આપણા સુખની પર્યાલોચના કરો. અર્થાત્ એ વાતનો સદા વિચાર કરો કે જે પ્રકારે સુખ અમોને પ્રિય છે તે પ્રકારે અન્ય જીવોને પણ પ્રિય છે. દુઃખ જે પ્રકારે અમોને અપ્રિય-અનિષ્ટ છે તે પ્રકારે તે અન્ય જીવોને પણ અનિષ્ટ છે. એવો વિચાર કરી અગર બાણીને કોઈને પણ દુઃખ ન આપવું જોઈએ. આ પ્રકારનો વિચાર કરવાથી તમે સ્વયં દુઃખ પામશો નહિ.

આ પ્રકારે પ્રાણીઓના સુખ અને દુઃખોની પર્યાલોચનાથી વાસ્તવિક તત્વનું પ્રકાશક જ્ઞાન જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. તે જ્ઞાનથી યુક્ત તે મુક્તિપદને અથવા તેને પ્રાપ્ત કરાવનાર સમ્યગ્દર્શનાદિને પરમ-પરમકલ્યાણકારી બાણીને સમદર્શી થઈ બંધ છે અને સાવધ ક્રિયાઓ કરતા નથી ॥ સૂ० ૧ ॥

બ્રૂતે ચ મૃષાવાદં યથા-મૃગાદયથૈતે મૃગયાર્થ ધાત્રા સૃષ્ટાઃ, મૃગયા ચ ક્રીડાર્થં ભવતીતિ । યદિ મનોવિનોદાર્થમપિ પ્રાણિનો હત્વા મોદતે તર્હિ માંસાદ્યુપભોગાર્થં પ્રાણિનો નિહત્ય પ્રમુદિતો ભવતીત્યત્ર કિમાશ્ચર્યમ્ । એવમદત્તાદાનાદિદોષાનપિ સ ઉપાદત્તે । એવં ચેત્તર્હિ કિં કર્તવ્યં મુનિના ? इत्याह--‘अलम्’ इत्यादि । वालस्य=अज्ञस्य संगेन=हास्यादिसङ्गेन प्राणातिपातादिरूपेण वा अलं=व्यर्थम्, अज्ञस्य यः संगो हास्यादिरूपः प्राणातिपातादिरूपो वा स सर्वथा वर्जनीय इत्यर्थः । वालस्य सङ्गकरणे दोषं दर्शयति-‘वैरम्’ इत्यादि । वालस्य सङ्गः आत्मनो वैरं=द्वेषं वर्द्धयति, नूतनभवानुपङ्गिवैरानुबन्धिकर्मणा बध्यते इत्यर्थः ॥ सू० ३ ॥

और झूठ ही कहता है कि ये मृगादिक पशु शिकारके लिये ही विधाताने बनाये हैं । शिकार क्रीडा करनेके निमित्तसे ही की जाती है । शिकार करनेसे मनोविनोद होता है । यदि मनोविनोदके लिये भी प्राणियोंकी हिंसा कर जो आनन्द मानता है वह मांसादिक खानेके लिये यदि उनकी हिंसा कर हर्षित होता है तो इसमें कौनसी अचरजकी बात है ? । इसी प्रकार विषयोंमें लंपट बना हुआ प्राणी चोरी कुशील आदि पापोंको भी करता है । इसलिये मुनिजनका कर्तव्य है कि वह ऐसे बाल-अज्ञानी की संगतिसे, मनोविनोदके कारण हास्यादिकोंसे, अथवा हिंसादिक पापोंसे दूर रहे । बाल-अज्ञानियोंकी संगति, मनोविनोदके कारण हास्यादिक एवं प्राणातिपातादिक पाप, मुनिके लिये सर्वथा वर्जनीय इस लिये हैं कि इनका संग वैर-द्वेषका वर्धक होता है । इस वैरभावकी वृद्धिसे नूतनभवानुपङ्गा और वैरानुबन्धी कर्मका बन्ध होता है ॥ सू० ३ ॥

કે-આ મૃગાદિક પશુ શિકાર માટે જ વિધાતાએ બનાવેલ છે શિકાર ક્રીડા કરવાના નિમિત્તથી જ કરવામાં આવે છે શિકાર કરવાથી મનોવિનોદ થાય છે કદાચ મનોવિનોદ માટે પ્રાણીઓની હિંસા કરી જે આનંદ માને છે તે માંસાદિક ખાવા માટે પણ કદાચ હિંસા કરી હર્ષિત થાય તો તેમાં કંઈ અચરજ નથી. આ પ્રકારે વિષયોમાં લંપટ બનેલ પ્રાણી ચોરી કુશીલ આદિ પાપો પણ કરે છે તેથી મુનિજનનું કર્તવ્ય છે કે તે આવા બાલ-અજ્ઞાનીની સંગતિથી, મનોવિનોદના કારણ હાસ્યાદિકોથી, અથવા હિંસાદિ પાપોથી દૂર રહે. બાલ-અજ્ઞાનીઓની સંગતિ, મનોવિનોદના કારણ હાસ્યાદિક અને પ્રાણાતિપાતાદિક પાપ, મુનિ માટે સર્વથા વર્જનીય આ માટે છે કે તેનો સંગ વૈર-દ્વેષનો વર્ધક થાય છે આ વૈરભાવની વૃદ્ધિથી નૂતનભવાનુપદ્ગી અને વૈરાનુબન્ધી કર્મનો બંધ થાય છે. ॥ સૂ० ૩ ॥

યસ્તુ-આરંભજીવી=આરંભેણ જીવિતું શીલમસ્યેતિ સઃ, આરંભપ્રકલ્પિત-જીવિકઃ, સ ઉભયાનુદર્શી=એહિકપારત્રિકદુઃસ્વભોગી ભવતીત્યર્થઃ ।

કામેષુ=વિષયોપભોગેષુ, ગૃહ્ણાઃ=લોલુપાઃ, નિચયમ્=અષ્ટવિધકર્મસંચયં કુર્વન્તિ । સંસિચ્યમાનાઃ=કામભોગાદિજન્યકર્મરજસા શ્લિષ્યમાણાઃ પુનઃ=વારં વારં ગર્ભં યન્તિ=ઉપયાન્તિ, સંસારચક્રે ઘટીયન્ત્રવદ્ બ્રામ્યન્તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

મૂલમ્-અવિ સે હાસમાસજ્જ, હંતા નંદીતિ મન્નઇ ।

અલં બાલસ્સ સંગેણ, વેરં વડ્ઢઇ અપ્પણો ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા--અપિ સ હાસમાસાઘ, હત્વા નન્દીતિ મન્યતે ।

અલં બાલસ્ય સજ્જેન, વૈરં વર્ધયતિ આત્મનઃ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા--‘ અવિ સે ’ इत्यादि । सः=अज्ञः-विषयलोलुपो हासम्=मनोविनोदम् आसाद्य=स्वीकृत्य, हत्वाऽपि=प्राणिनो निहत्याऽपि नन्दी=‘ क्रीडा ’ इति मन्यते ।

આરંભસે જીનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ આરંભજીવી હૈ । મહાન આરંભોં દ્વારા જો અપની આજીવિકા કરતે હૈં વે ઇસ લોક ઔર પરલોક-દોનોં-કે દુઃસ્વોંકો ભોગતે હૈં । કારણ કિ વિષયભોગોંમેં ગૃહ્ણ-લોલુપી પ્રાણી અષ્ટવિધકર્મોંકા સંચય કરતે હૈં ઔર ઇન કામભોગોંસે ઉપાર્જિત કર્મરૂપી ધૂલિસે લિપ્ત હોકર વે બારંબાર અરહટકે ઘટમાલકી તરહ ઇસ સંસારરૂપી ચક્રમેં ઘૂમતે રહતે હૈં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

‘ અવિ સે ’ इत्यादि ।

વહ વિષયી પ્રાણી મનોવિનોદકો પાકર, અર્થાત્ મનોવિનોદ કરને કે અભિપ્રાયસે પ્રેરિત હોકર પ્રાણિયોંકી હિંસા કરકે બી આનન્દિત હોતા હૈ । ઉસ હિંસાકો યહ અપને મનોવિનોદકા સાધન માન ક્રીડા સમજ્ઞતા હૈ

આરંભથી જીવવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે આરંભજીવી છે. મહાન આરંભોદ્વારા જે પોતાની આજીવિકા કરે છે તે આ લોક અને પરલોક બન્નેના દુઃખો ભોગવે છે, કારણ કે વિષયભોગોમાં ગૃહ્ણ-લોલુપી પ્રાણી અષ્ટવિધ કર્મોનો સંચય કરે છે, અને આ કામભોગથી ઉપાર્જિત કર્મરૂપી ધૂળથી લિપ્ત બનીને તે વારંવાર રેંટના ઘટમાલની માફક આ સંસારરૂપી ચક્રમાં ઘૂમતો રહે છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥ ‘ અવિ સે ’ इत्यादि.

તે વિષયી પ્રાણી મનોવિનોદ માટે અર્થાત્ મનોવિનોદ કરવાના અભિપ્રાયથી પ્રેરિત બનીને પ્રાણીઓની હિંસા કરીને પણ આનન્દિત થાય છે. તેવી હિંસાને તે પોતાના મનોવિનોદનું સાધન માની ક્રીડા સમજે છે. જુદું જોલે છે, કહે છે

કિંચ-અગ્ર=ભવોપગ્રાહિકર્મચતુષ્ટયં કેવલિકર્મેત્યર્થઃ, મૂલં=ચતુર્વિધં ઘાતિકર્મ, યદ્વા મૂલં=મોહનીયં કર્મ, અગ્રં=તદવશિષ્ટસપ્તકર્માણિ, મોહનીયક્ષયેણ વિનાઽન્યેષાં કર્મણાં ક્ષયો ન ભવતિ, તસ્માન્મોહનીયસ્ય મૂલત્વં સિધ્યતિ । ઉક્તञ્ચ—

“નાયગમ્મિ હૃષ સંતે, જહા સેના વિણસ્સહ ।

એવં કમ્માણિ ણસ્સંતિ, મોહણિજ્જે સ્વયં ગણ ” ॥ ૧ ॥

છાયા—નાયકે હતે સતિ, યથા સેના વિનશ્યતિ ।

એવં કર્માણિ નશ્યન્તિ, મોહનીયે ક્ષયં ગતે ॥

પરીપદ્ય એવં ઉપસર્ગોં સે અવિચલિત હોકર વહ પૃથક્ પૃથક્ ભેદ પ્રભેદોં સહિત-વિસ્તારપૂર્વકે ઇસ વાતકી પર્યાલોચના કરતા હૈ કિ અગ્ર ઓર મૂલ તપસંયમકે વિના આત્માસે પૃથક્-અલગ નહીં હો સકતે હૈં । ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા ચાર કર્મ કિ જો કેવલિકર્મ કહે જાતે હૈં, વે ચાર પ્રકારકે ઘાતિયા કર્મ મૂલ હૈં । અથવા મોહનીય કર્મકા નામ મૂલ હૈ । ઇસસે અવશિષ્ટ સાત કર્મોંકા નામ અગ્ર હૈ । મોહનીયકે ક્ષય હુણ વિના અન્ય કર્મોંકા ક્ષય નહીં હોતા હૈ ઇસલિયે મોહનીયમેં મૂલતા સિદ્ધ હોતી હૈ । કહા ભી હૈ—

“નાયગમ્મિ હૃષ સંતે, જહા સેના વિણસ્સહ ।

એવં કમ્માણિ ણસ્સંતિ, મોહણિજ્જે સ્વયં ગણ ” ॥ ૧ ॥

જૈસે સેનાપતિકે મારે જાને પર સેના તિતર-વિતર હોકર ભાગ જાતી હૈ ડસી પ્રકાર મોહનીયકે ક્ષય હોને પર અન્ય કર્મ ભી નષ્ટ હો જાતે હૈં ॥ ૧ ॥

પરીપદ્ય અને ઉપસર્ગોંથી અવિચલિત બનીને તે પૃથક્ પૃથક્ ભેદપ્રભેદો સહિત-વિસ્તારપૂર્વક આ વાતની પર્યાલોચના કરે કે અગ્ર અને મૂલ તપ સંયમ વિના આત્માથી પૃથક્-અલગ થઈ શકતા નથી ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા ચાર કર્મોં કે જે કેવલિકર્મ કહેવાય છે તે ચાર પ્રકારના ઘાતિયા કર્મ મૂલ છે. અથવા મોહનીય કર્મનું નામ મૂલ છે. તેનાથી અવશિષ્ટ સાત કર્મોંનું નામ અગ્ર છે. મોહનીયનો ક્ષય થયા વિના અન્ય કર્મોંનો ક્ષય થતો નથી. માટે મોહનીયમાં મૂલતા સિદ્ધ થાય છે. કહ્યું છે—

“નાયગમ્મિ હૃષ સંતે, જહા સેના વિણસ્સહ ।

એવં કમ્માણિ ણસ્સંતિ, મોહણિજ્જે સ્વયં ગણ ” ॥ ૧ ॥

જેવી રીતે સેનાપતિના મરવાથી સેના છિન્નભિન્ન થઈ લાગી જાય છે તે પ્રકારે મોહનીયનો ક્ષય થવાથી અન્ય કર્મ પણ નષ્ટ થઈ જાય છે. ॥ ૧ ॥

યથેવં તર્હિ મુનિના કિં કર્તવ્યમિત્યાહ-‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-તમ્હાઽતિવિજ્જો પરમંતિ ણચ્ચા, આયંકદંસી ન કરેહ પાવં । અગ્ગં ચ મૂલં ચ વિગિંચ ધીરે, પલિચ્છિદિયા ણં નિક્કમ્મદંસી ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા--તસ્માત્ અતિવિદ્યઃ પરમમ્ ઇતિ જ્ઞાત્વા, આતઙ્કદર્શી ન કરોતિ પાપમ્ । અગ્રં ચ મૂલં ચ વિવિચ્ય ધીરઃ, પરિચ્છિદ્ય સ્વલુ નિષ્કર્મદર્શી ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા--‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ । તસ્માદ્=બાલસંગેન વૈરવર્ધનાદ્, અતિવિદ્યઃ=સમ્યગ્જ્ઞાનવાન્, પરમં=સર્વોત્કૃષ્ટં-સિદ્ધિગતિનામધેયં પદં, સર્વવિરતિલક્ષણં ચારિત્રં વા અસ્તીતિ જ્ઞાત્વા, આતઙ્કદર્શી=નરકનિગોદાદિનાનાદુઃખદર્શકઃ, પાપં=પાપાનુ-બન્ધિ કર્મ ન કરોતિ । અત્ર કરોતીત્યુપલક્ષણમ્, ન ચ પરેણ કારયતિ, નાપિ કુર્વન્ત-મન્યમનુમોદયતિ ।

યદિ એસા હૈ તો મુનિ કો ક્યા કરના ચાહિયે? સો કહતે હૈ—‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ ।

બાલ-અજ્ઞાનીકે સંગસે વૈરભાવકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । ઇસલિયે જો અતિવિદ્ય-સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હૈ વહ-‘સિદ્ધિગતિનામક પરમપદ અથવા ઉસકો પ્રાપ્ત કરાનેવાલા સર્વવિરતિલક્ષણ ચારિત્ર પરમ શ્રેયસ્કર હૈ’ એસા જાનકર નરકનિગોદાદિકેકે અનેક દુઃખોંકા જ્ઞાતા, અર્થાત્ ‘નરક નિગોદાદિકોંકે દુઃખ જીવોંકો તથ તક ભોગને પડતે હૈં કિ જબ તક સિદ્ધિપદકી પ્રાપ્તિ ઉન્હેં નહીં હોતી’ ઇસ પ્રકારકા દૃઢશ્રદ્ધાવાલા હોતા હુઆ પાપાનુબન્ધી કર્મ નહીં કરતા હૈ । “કરોતિ” યહ ક્રિયા અન્ય ક્રિયાઓંકી ઉપલક્ષક હૈ, ઇસસે યહ ઘટિત હોતા હૈ કિ વહ ન દૂસરોંસે પાપકર્મ કરાતા હૈ ઓર ન પાપકર્મ કરનેવાલોંકી અનુમોદના હી કરતા હૈ ।

જે આ પ્રમાણે છે તો મુનિએ શું કરવું જોઈએ? તે કહે છે-‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ.

બાલ-અજ્ઞાનીના સંગથી વૈરભાવની વૃદ્ધિ થાય છે, માટે જે અતિવિદ્ય-સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન છે તે ‘સિદ્ધિગતિનામક પરમપદ અથવા તેને પ્રાપ્ત કરાવનાર સર્વવિરતિલક્ષણ ચારિત્ર પરમ શ્રેયસ્કર છે’ એવું બાણીને નરકનિગોદાદિકના અનેક દુઃખોના જ્ઞાતા અર્થાત્ ‘નરકનિગોદાદિકોના દુઃખ જીવોને ત્યાં સુધી ભોગવવા પડે છે જ્યાં સુધી સિદ્ધિપદની પ્રાપ્તિ તેને થતી નથી’ આ પ્રકારના દૃઢ શ્રદ્ધાવાળા બનીને પાપાનુબન્ધી કર્મ કરતા નથી. “કરોતિ” આ ક્રિયા અન્ય ક્રિયાઓની ઉપલક્ષક છે, તેથી એ ઘટિત થાય છે કે તે બીજાઓથી પાપકર્મ કરાવતા નથી અને પાપકર્મ કરવાવાળાઓની અનુમોદના પણ કરતા નથી.

અન્યદપિ ફલં નિષ્કર્મદર્શિનો ભવતીત્યાહ—‘ એસ મરણા પમુચ્ચઈ’ ઇત્યાદિ।

મૂલમ્—એસ મરણા પમુચ્ચઈ, સે હુ દિદ્ધમણ મુણી, લોગંસિ પરમદંસી વિવિત્તજીવી ઉવસંતે સમિણ સહિણ સયા જણ કાલ-કંઘી પરિવ્વણ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—એપ મરણાત્ પ્રમુચ્યતે, સ એવ દૃષ્ટમયો મુનિઃ, લોકે પરમદર્શી વિવિત્ત-જીવી ઉપશાન્તઃ સમિતઃ સહિતઃ સદા યતઃ કાલાકાઙ્ક્ષી પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા——એપઃ=નિષ્કર્મદર્શી મરણાત્=આયુઃક્ષયાત્ પ્રમુચ્યતે, આયુષ્યકર્મબન્ધા-પગમાદિતિ ભાવઃ। ચદ્ધા—આવીચિમરણાત્ આવીચિ=અનુસમયં નિરન્તરં મરણં=મૃત્યુઃ સંસારો વા, તસ્માત્ પ્રમુચ્યતે। કેવલી ભૂત્વા અન્યાન્ વા મોચયતિ દેશનાદિના। સ

પર જીવ નિષ્કર્મદર્શી—અર્થાત્ કર્મરહિત અપની આત્માકો દેખનેકે સ્વ-ભાવવાલા હો જાતા હૈ। ઇસ પ્રકારકા સ્વભાવ જીવકે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે વિનાશસે ઉત્પન્ન હોતા હૈ। ઇસી અવસ્થામેં જીવ સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જો નિષ્કર્મદર્શી હૈ ઉસે ઓર ખી દૂસરા લાભ હોતા હૈ, ઇસ ઘાતકો પ્રકટ કરતે હૈ—‘ એસ મરણા પમુચ્ચઈ’ ઇત્યાદિ।

યહ નિષ્કર્મદર્શી આયુકર્મકે બન્ધકે અભાવ હોનેપર મરણસે રહિત હો જાતા હૈ। અથવા વહ આવીચિમરણસે છૂટ જાતા હૈ। અનુસમય અર્થાત્ નિરન્તર મરણકો આવીચિમરણ કહતે હૈ। અથવા મરણ નામ સંસારકા હૈ। કેવલી હો જાનેસે આત્મા સંસારબન્ધનસે રહિત હો જાતા હૈ। સિદ્ધસ્થાનમેં વિરાજનેકે નિશ્ચયસે ઉસી ભવમેં અઘાતિયા કર્મોંકા

છે. આત્માથી કર્મોંના અલગ થવાથી જીવનિષ્કર્મદર્શી—અર્થાત્ કર્મરહિત પોતાના આત્માને જોવાના સ્વભાવવાળો થઈ જાય છે. આ પ્રકારનો સ્વભાવ જીવને જ્ઞાનાવરણીય અને દર્શનાવરણીય કર્મના વિનાશથી ઉત્પન્ન થાય છે. આ અવસ્થામાં જીવ સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી થાય છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જે નિષ્કર્મદર્શી છે તેને ખીજો પણ લાભ થાય છે. તે વાતને પ્રગટ કરે છે— ‘ એસ મરણા પમુચ્ચઈ’ ઇત્યાદિ.

આ નિષ્કર્મદર્શી આયુકર્મના બંધનો અભાવ થવાથી મરણથી રહિત થાય છે અને તે આવીચિમરણથી છુટી જાય છે. અનુસમય અર્થાત્ નિરન્તર મરણને આવીચિમરણ કહે છે. અથવા મરણ નામ સંસારનું છે, કેવળી થઈ જવાથી આત્મા સંસારબંધનથી રહિત થાય છે, સિદ્ધસ્થાનમાં વિરાજવાના નિશ્ચયથી તેજ લવમાં

યદ્વા-મૂલં=મિથ્યાત્વમ્, અગ્રં તુ અષ્ટવિધકર્મપ્રકૃતિરૂપં તેષાં મિથ્યાત્વમૂલક-
ત્વાત્। ઉક્તશ્ચ—“... મિચ્છત્તેણં ઉદિણ્ણેણં એવં સ્વલુ જીવે અદ્દ-
કમ્મપગડીઓ બંધઈ ” ઇતિ । ધીરઃ=પરીષહોપસર્ગૈરક્ષોભ્યઃ સન્ વિવિચ્ય=
પૃથક્ પૃથક્ ભેદોપભેદૈઃ સવિસ્તરં પર્યાલોચ્ય, પરિચ્છિદ્ય=કર્માણિ તત્કારણીભૂત-
મિથ્યાત્વાદીનિ તપઃ-સંયમાભ્યાં સર્વથા છિત્વા=સ્વાત્મનઃ પૃથક્કૃત્ય, પૌદ્ગલિકસ્ય
જ્ઞાનાવરણીયાદેઃ કર્મણશ્ચેદનં દ્વૈધીકરણરૂપં ન સંભવતિ, કિંત્વાત્મનઃ પૃથક્કરણ-
મેવેતિ ભાવઃ । નિષ્કર્મદર્શી=સ્વાત્માનં નિષ્કર્માણં દ્રષ્ટું શીલમસ્યેતિ તથાવિધો
ભવતીત્યર્થઃ । જ્ઞાનાવરણીયદર્શનાવરણીયકર્માપગમાત્ સર્વદર્શી ભવતીતિ ભાવઃ ॥૪॥

અથવા-‘મૂલ’ નામ મિથ્યાત્વકા છે । ‘અગ્ર’ નામ આઠ પ્રકારકે
કર્મોંકા છે, ક્યોંં કિ આઠોંં કર્મોંકા મૂલકારણ મિથ્યાત્વ છે । ઇસી-
લિં મિથ્યાત્વકો મૂલ-શબ્દસે કહા છે । કહાંં મી છે—“ મિચ્છ-
ત્તેણં ઉદિણ્ણેણં એવં સ્વલુ જીવે અદ્દ કમ્મપગડીઓ બંધઈ । ” ઇતિ ।
મિથ્યાત્વકે ઉદયસે જીવ આઠ કર્મપ્રકૃતિયોંંકો બાંધતા છે ।

ઇસલિયે કર્મોંંકે કારણભૂત મિથ્યાત્વ આદિકો તપસંયમદ્વારા
સર્વથા અપની આત્માસે અલગ કર વહ નિષ્કર્મદર્શી હો જાતા છે ।

સૂત્રમેં “ પરિચ્છિદ્ય ” પદ આયા છે, જિસકા અર્થ-“ છેદન કરકે ”
એસા હોતા છે । પરન્તુ પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંકા તો છેદન હો
નહીંં સકતા; અતઃ-‘ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંકો અપની આત્માસે “ પરિ-
ચ્છિદ્ય ”-અલગ કરકે’ એસા અર્થ કરનાંં ચાહિયે, ક્યોંંં કિ કર્મોંકો
આત્માસે પૃથક્ કરનાંં હીંંં ઉનકા છેદન છે । આત્માસે કર્મોંકે અલગ હોને

અથવા ‘મૂલ’ નામ મિથ્યાત્વનું છે. ‘અગ્ર’ નામ આઠ પ્રકારના કર્મોંનું છે,
કારણ કે આઠ કર્મોંનું મૂલ કારણ મિથ્યાત્વ છે. માટે મિથ્યાત્વને મૂલ શબ્દથી કહેલ
છે. કહ્યું છે “...મિચ્છત્તેણં ઉદિણ્ણેણં એવં સ્વલુ જીવે અદ્દ કમ્મપગડીઓ બંધઈ । ”
ઇતિ । મિથ્યાત્વના ઉદયથી જીવ આઠ કર્મપ્રકૃતિઓ બાંધે છે. માટે કર્મોંના
કારણભૂત મિથ્યાત્વ આદિને તપસંયમદ્વારા સર્વથા પોતાના આત્માથી જુદા કરી
તે નિષ્કર્મદર્શી થઈ જાય છે.

સૂત્રમાં “ પરિચ્છિદ્ય ” પદ આવેલ છે. તેનો અર્થ “ છેદન કરીને ” એમ
થાય છે. પરંતુ પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંનું તો છેદન બની શકતું નથી
માટે જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંને પોતાના આત્માથી “ પરિચ્છિદ્ય ”-જુદા કરીને, એવો
અર્થ કરવો જોઈ એ, કારણ કે કર્મોંને આત્માથી પૃથક્ કરવા તે જ તેનું છેદન

કમિત્યાહ-કાલાકાઙ્ક્ષીતિ । કાલં=મૃત્યુકાલમાકાઙ્ક્ષિતું શીલમસ્યેતિ કાલાકાઙ્ક્ષી, તયાવિધ- સન્ પરિવ્રજેત્=યાવત્ પર્યાયાગતં પણ્ડિતમરણં તાવદાકાઙ્ક્ષમાણો વિવિ-ક્તજીવિત્વાદિગુણસમન્વિતઃ સંયમારાધને સમુદ્યુક્તો ભવેદિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

મૂલમ-વહું ચ खलु पापकर्मं पगडं । सच्चंमि धिइं कुवहा ।

एत्थोवरए मेहावी सव्वं पापकर्मं झोसइ ॥ सू० ६ ॥

છાયા-વહુ ચ खलु पापकर्म प्रकृतम् । सत्ये धृतिं कुरुष्व । अत्र उपरतो मेहावी सर्वे पापकर्म झोपयति ॥ सू० ६ ॥

ટીકા-‘વહું ચ’ इत्यादि । खलु=निश्चयेन पापकर्म बहु=बन्धस्थानापे-क्षया बहुविधं प्रकृतम्=प्रकथितं, प्रतिबोधितमित्यर्थः । यद्येवं तर्हि तद्वचपगमार्थं किमाचरणीयमित्यत आह-‘ सत्ये ’ इत्यादि । हे शिष्य ! सत्ये-सद्ब्रह्मो भव्ये-

की आवश्यकता तभी तक है जब तक कि उसे पण्डितमरण प्राप्त नहीं होना । यही बात सूत्रकार प्रकट करते हैं-‘ कालकंक्षी ’ इति, काल शब्द का अर्थ मृत्युकाल है, इसकी आकाङ्क्षा रखनेवालेको कालाकाङ्क्षी कहते हैं । जब तक पर्यायागत पण्डितमरण प्राप्त नहीं होता तब तक उसकी चाहना करता हुआ इन पूर्वोक्त गुणोंसे युक्त होकर वह निष्कर्म-दर्शी संयमकी आराधनामें प्रयत्नशाली या लवलीन रहे ॥ सू० ५ ॥

‘ वहुं च ’ इत्यादि ।

પાપકર્મ બન્ધસ્થાનની અપેક્ષાસે વહુત પ્રકારકા કહા ગયા હૈ । વીન-રાગ પ્રભુને વારહ પ્રકારની પરિષદ્-સભામાં અપની દિવ્ય દેશનાસે બન્ધ-સ્થાનોંકી અપેક્ષાસે કર્મોંકે અનેક ભેદ ભવ્ય જીવોંકો સમજાવે હૈ । સાથ મેં યહ બી પ્રકટ કિયા હૈ કિ इन कर्मोंको आत्मासे दूर करनेका उपाय

હે ન્યા સુધી તેને પડિતમરણ પ્રાપ્ત નહિ થાય. આ વાત સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે-‘ કાલકંક્ષી ’ ઇતિ કાલ શબ્દનો અર્થ મૃત્યુકાળ છે. તેની આકાંક્ષા રાખવા-વાળાને કાલાકાંક્ષી કહે છે. ન્યાં સુધી પર્યાયાગત પડિતમરણ પ્રાપ્ત નથી થતું ત્યાં સુધી તેની ચાહના કરીને પૂર્વોક્ત ગુણોથી યુક્ત થઈને તે નિષ્કર્મ-દર્શી સંયમની આરાધનામાં પ્રયત્નશાળી અગર લવલીન રહે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

“ वहुं च ” इत्यादि.

પાપકર્મ બંધસ્થાનની અપેક્ષાથી વહુ પ્રકારના કહેલ છે. વીતરાગ પ્રભુએ બાર પ્રકારની પરિષદ્-સભામાં પોતાની દિવ્યદેશનાથી બંધસ્થાનોની અપેક્ષાથી કર્મોના અનેક ભેદ ભવ્ય જીવોને સમજાવેલ છે. સાથે એ પણ પ્રગટ કરેલ છે કે આ કર્મોના આત્માથી દૂર કરવાનો ઉપાય છે-“ सच्चंमि धिइं कुवहा ” सत्ये

દૃષ્ટભય એવ, દૃષ્ટં ભયમ્ इहलोकादि सप्तविधं येन स एव मुनिर्भवति । किं च लोके=उच्चारदिचतुर्दशस्थानसमुत्पन्ने जीवसमूहात्मके परम=आत्मनः समुत्कर्षकारित्वात् संयमः, तं द्रष्टुं शीलमस्येति परमदर्शी, तथा-विविक्तं रागद्वेषरहितत्वादक्लिष्टं जीवितुं शीलमस्येति विविक्तजीवी, अत एव उपशान्तः=उपशमसमन्वितः, अत एव समितः मोक्षमार्गं सम्यग् इतः=प्राप्तः, तथा सहितः ज्ञानचारित्र्ययुक्तः, अत एव सदा यतः=अनवरतं प्रमादरहितः । उक्तगुणधारणं कियत्कालपर्यन्तमावश्य-

અભાવ કર સિદ્ધપદકા અધિકારી હો જાતા હૈ । કેવલી હોકર યહ અન્ય જીવોંકો ભી સદેશના દ્વારા સંસારપરિભ્રમણ સે છુડા દેતા હૈ । इहलोक-भय आदि सात प्रकारका भय जिसने देख लिया है वह दृष्टभय है । दृष्टभय ही मुनि होता है । तथा उच्चारदि चौदह स्थानोंमें समुत्पन्न जीवसमूहरूप लोकमें आत्माका उत्कर्षकारी होनेसे परम जो संयम उसको देखनेका जिसका स्वभाव है वह परमदर्शी है । तथा रागद्वेष-रहित होनेसे अक्लिष्ट जीनेका जिसका स्वभाव है वह विविक्तजीवी है । यह निष्कर्मदर्शी विविक्तजीवी होता है । इसीलिये वह 'उवसंते' 'उपशान्तः'—उपशमसे युक्त होता है । कषायोंके उद्रेकका अभाव उपशम है । जब कषायोंमें बिलकुल मन्दता आ जाती है तब वह 'समिए' समितः—मोक्षके मार्गको प्राप्त हुआ कहलाता है । तथा 'सहिए' सहितः ज्ञान और चारित्रसे युक्त होनेसे वह 'सयाजए' सदायतः—निरन्तर यतनावान् अर्थात् प्रमादरहित होता है । इन पूर्वोक्त गुणोंके धारण करने

અઘાતિયા કર્મોનો અભાવ કરી સિદ્ધપદનો અધિકારી થાય છે. કેવળી બની તે અન્ય જીવોને પણ સદેશનાદ્વારા સંસારપરિભ્રમણથી છોડાવે છે. ઇહલોક ભય આદિ સાત પ્રકારનો ભય જેણે જોઈ લીધેલ છે તે દૃષ્ટભય છે, દૃષ્ટભય જ મુનિ થાય છે. તથા ઉચ્ચારાદિ ચૌદ સ્થાનોમાં સમુત્પન્ન જીવસમૂહરૂપ લોકમાં આત્માના ઉત્કર્ષકારી થવાથી પરમ જે સંયમ તેને દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે પરમ-દર્શી છે. તથા રાગદ્વેષરહિત થવાથી અક્લિષ્ટ જીવવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે વિવિક્તજીવી છે. તે નિષ્કર્મદર્શી વિવિક્તજીવી થાય છે. તેથી તે 'ઉવસંતે' ઉપશાન્તઃ—ઉપશમથી યુક્ત થાય છે. કષાયોના ઉદ્રેકનો અભાવ ઉપશમ છે, જ્યારે કષાયોમાં બિલકુલ મંદતા આવી જાય છે ત્યારે તે 'સમિએ' સમિતઃ—મોક્ષના માર્ગને પ્રાપ્ત કરેલો કહેવાય છે. તથા 'સહિએ' સહિતઃ—જ્ઞાન અને ચારિત્રથી યુક્ત થવાથી તે 'સયાજએ' સદાયતઃ—નિરંતર યતનાવાન અર્થાત્ પ્રમાદ રહિત થાય છે. આ પૂર્વોક્ત ગુણોને ત્યાં સુધી ધારણ કરવાની આવશ્યકતા છે

મૂલમ્—અણેગચિત્તે સ્વલુ અયં પુરિસે, સે કેયણં અરિહણ પૂરિત્તણ, સે અણ્ણવહાણ અણ્ણપરિયાવાણ અણ્ણપરિગ્ગહાણ જણ-વયવહાણ જણવયપરિયાવાણ, જણવયપરિગ્ગહાણ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—અનેકચિત્તઃ સ્વલુ અયં પુરુષઃ, સ કેતનમ્ અર્હતિ પૂરયિતુમ્ । સોડન્ય-વધાય, અન્યપરિતાપાય, અન્યપરિગ્રહાય, જનપદવધાય, જનપદપરિતાપાય જન-પદપરિગ્રહાય ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—અયં પ્રત્યક્ષવિષયઃ સંસારી પુરુષઃ સ્વલુ=નિશ્ચયેન અનેકચિત્તઃ=કૃષિ-વાણિજ્યસેવાદ્યનેકકૃત્યાશ્રિતચિત્તો ભવતિ । સંસારસુખાભિલાષિણશ્ચિત્તમેકાગ્રં ન ભવતીતિ ભાવઃ । અનેકચિત્તઃ કિં કુર્યાદિત્યાહ—‘સ કેતનમ્’ इत्यादि । સોડનેકચિત્તઃ કેતનં=ભાવકેતનમ્ ઇચ્છાં પૂરયિતુમ્ અર્હતિ ? કાકુવચનમેતત્ ; નાર્હતીત્યર્થઃ । કેતનં દ્વિવિધં દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ । તત્ર દ્રવ્યકેતનં ચાલિની, સમુદ્રો

યહ સંસારી પુરુષ નિશ્ચયસે કૃષિ વાણિજ્ય સેવા આદિ અનેક કાર્યોં કે કરનેમેં વ્યગ્રચિત્તવાલા બના રહતા હૈ । વ્યોં કિ સંસારી જીવોંકી અભિલાષા સાંસારિક અનેક સુખોંકો પ્રાપ્ત કરનેકી ઓર સદા લગી રહતી હૈ, ઇસીલિયે વે કૃષિ વાણિજ્ય આદિ અનેક પ્રકારકે આજીવિકોપયોગી કાર્યોંકે સંપાદનમેં રાતદિન જુડે રહતે હૈં, અતઃ સાંસારિક સુખોંકે અભિલાષી પુરુષોંકા મન કિસી એક વિષયમેં એકાગ્ર નહીં હોતા હૈ । ઇસ પર સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ—‘સે કેયણં અરિહણ પૂરિત્તણ’ સ કેતનમર્હઃ પૂરયિતુમ્, અર્થાત્ ડસકી ઇસ પ્રકારકી યે ચેષ્ટાએ કયા ડસ કેતન-માન-સિક અભિલાષાકી પૂર્તિ કર સકતી હૈં ? કદાપિ નહીં । સૂત્રકારને યહાં કાકુવચનકા પ્રયોગ કિયા હૈ । કેતન ડો પ્રકારકા હૈ—(૧) દ્રવ્ય-કેતન

આ સ સારી પુરુષ નિશ્ચયથી કૃષિ, વાણિજ્ય, સેવા આદિ અનેક કાર્યોં કર-વામાં વ્યગ્રચિત્તવાળા બની રહે છે. કારણકે સ સારી જીવોની અભિલાષા સાંસારિક અનેક સુખો પ્રાપ્ત કરવાની તરફ સદા લાગી રહે છે તેથી તે ખેતી, વાણિજ્ય આદિ અનેક પ્રકારના આજીવિકાના ઉપયોગી કાર્યોના સંપાદનમાં રાત-દિવસ લાગ્યા રહે છે. માટે સાસારિકસુખોના અભિલાષી પુરુષોનું મન કેઈ એક વિષયમાં એકાગ્ર બનતું નથી. આ ઉપર સૂત્રકાર કહે છે—‘સે કેયણં અરિહણ પૂરિત્તણ’—સ કેતનમર્હઃ પૂરયિતુમ્, અર્થાત્ તેની આ પ્રકારની આ ચેષ્ટાઓ થું તેના કેતન=માનસિક અભિલાષા—ની પૂર્તિ કરી શકે છે ? કદાપિ નહિ. સૂત્રકારે આ ઠેકાણે કાકુવચનનો પ્રયોગ કરેલ છે. કેતન બે પ્રકારના છે.

भ्यो हितः सत्यः=संयमस्तस्मिन् धृतिं कुरुष्व । यद्वा-सत्यः=वीतरागप्रणीतागमः
यथावस्थिततत्त्वस्वरूपप्रतिबोधनात् , तत्र भगवदाज्ञारूपे प्रवचने धृतिं=चित्तस्थैर्यं
कुतर्कपरित्यागेन कुरुष्व । किंच-अत्र=अस्मिन् संयमे भगवत्प्रवचने वा, उपरतः=
उप=सामीप्येन रतः=व्यवस्थितः-परायणः, मेधावी=हेयोपादेयविवेकनिपुणः, सर्व-
निरवशेषं पापकर्म शोषयति=शोषयति-क्षययतीत्यर्थः ॥ सू० ६ ॥

कषायादिप्रमादयुक्तः किंणुणो भवतीत्याह-‘अणेगचित्ते ’ इत्यादि ।

है-“सच्चस्मि धिङ् कुव्वहा” सत्ये धृतिं कुरुष्व, सत्य-संयममें धैर्य धारण
करो, इसलिये शिष्यको सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि हे शिष्य !
तुम यदि इन कर्मों पर विजय करना चाहते हो तो-‘ सद्भ्यो हितः सत्यः-
-संयमः ’ सत्पुरुषोंके लिये हितकारी जो संयम है उसमें अटल रहो ।
उपसर्ग एवं परीषद्को आने पर भी इस मार्गसे कभी भी विचलितचित्त
न बनो । अथवा सत्य नाम वीतरागप्रणीत आगमका है, क्यों कि इस
से ही जीवादिक तत्त्वोंके यथार्थस्वरूपकी प्ररूपणा होती है । भगवानके
इस आज्ञास्वरूप प्रवचनमें कुतर्कोंका परिहार कर चित्तको स्थिर करो ।
कारण कि-इस संयममें अथवा वीतरागप्रणीत आगममें अच्छी तरहसे
लवलीन चित्तवाला मनुष्य हेय और उपादेयके विवेकसे निपुणमति बन
कर सम्पूर्ण पापकर्मोंको नष्ट कर देता है । सू० ६ ॥

कषायादिक प्रमादसे युक्त प्राणी किस २ गुणवाले होते हैं ? इसके
लिये कहते हैं-‘ अणेगचित्ते ’ इत्यादि ।

धृति कुरुष्व, सत्य-संयममां धैर्य धारण करो. ओ भाटे शिष्यने संबोधन करीने
कडे छे डे डे शिष्य ! तमे ओ आ कर्मो उपर विजय करवा मांगता डो तो-
‘सद्भ्यो हितः सत्यः-संयमः ’ सत्पुरुषोंने भाटे हितकारी ओ संयम छे तेमां
अटल रहो. उपसर्ग अने परीषडो आववा छतां पणु आ मार्गथी डोछवणत
पणु विचलित न भनो. अथवा सत्य नाम वीतरागप्रणीत आगमनुं छे, कारण
डे तेनाथी ओ लुवादिक तत्त्वोना यथार्थ स्वरूपनी प्ररूपणा थाय छे. भगवानना
आ आज्ञास्वरूप प्रवचनमां कुतर्कनो परिहार करी चित्तने स्थिर करो, कारण डे
आ संयममां अने वीतरागप्रणीत आगममां सारी रीते लवलीन चित्तवाणा
मनुष्य डेय अने उपादेयना विवेकथी निपुणमति भनीने संपूर्ण पापकर्मो नष्ट
करी नांछे छे. ॥ सू० ६ ॥

कषायादि प्रमादथी युक्त प्राणी क्या क्या गुणवाणा थाय छे ? तेने भाटे
कडे छे-‘ अणेगचित्ते ’ इत्यादि.

किं च—“ न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।

हविषा कृष्णवर्त्मव, भूय एवाभिवर्धते ” ॥ २ ॥ इति ।

इच्छाપૂરણાર્થ વ્યાકુલિતચિત્તઃ કિં કરોતીત્યાહ—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ, યદ્વા—‘ સે કે ય ણં અરિહણ પૂરિત્તણ ’ ઇત્યસ્ય ‘ સ કચ્ચ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ’ ઇતિચ્છાયા । સ એતાદૃશો જનઃ કો વર્તતે યઃ તમ્=અનેકચિત્તં પુરુષં પૂરયિતુમ્ અર્હઃ સમર્થો ભવેત્, કસ્તદિચ્છાં પૂરયેત્, ન કોડપીતિ ભાવઃ, યતઃ સોડનેકચિત્તઃ પુરુષઃ અન્યવધાઘર્થં પર્યુત્સુકો ભવતિ, તદેવાહ સૂત્રકારઃ—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ ।

“ ન જાતુ કામઃ કામાનામુપભોગેન શામ્યતિ ।

हविषा कृष्णवर्त्मव, भूय एवाभिवर्धते ॥ १ ॥ ” इति ।

કામવિકાર વિષયભોગોંકે સેવન કરનેસે શાન્ત નહીં હોતા હૈ । પ્રત્યુત જૈસે ઘૃતકે ડાલને સે અગ્નિકી જ્વાલા બઢતી હૈ ઉસી પ્રકાર વિષયોંકે સેવનસે વિષયવાસનાકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । અપની ઇચ્છાકી પૂર્તિકે લિયે જીવ કયા કરતા હૈ ? ઇસી વાતકો કહતે હૈ—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ ।

અથવા “ સે કે ય ણં અરિહણ પૂરિત્તણ ” ઇસ વાક્યકી છાયા “ સ કચ્ચ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ” એસી બી હોતી હૈ । જિસકા અર્થ ઇસ પ્રકાર હોતા હૈ—કૌન એસા વ્યક્તિ હો સકતા હૈ કિ જો અનેક ચિત્તવાલે મનુષ્યકી ઇચ્છાઓંકી પૂર્તિ કરનેમ્ સમર્થ હો સકે ? કારણ કિ વહ અનેકચિત્ત પુરુષ અન્યવધ—દૂસરેકો જારના આદિ અનેક સાવધ ક્રિયાઓંકે કરનેમ્ ઉત્સુક બના રહતા હૈ । ઇસી વાતકો સૂત્રકાર સ્વયં દિશ્વલાતે હૈ—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ ।

‘ ન જાતુ કામ કામાનામુપભોગેન શામ્યતિ ।

हविषा कृष्णवर्त्मव, भूय एवाभिवर्धते ” ॥ १ ॥ इति ॥

કામવિકાર વિષયભોગનુ સેવન કરવાથી શાન્ત થતો નથી, પણ જેમ ઘી નાંખવાથી અગ્નિની જ્વાળા વધે છે તે પ્રકારે વિષયોના સેવનથી વિષયવાસનાની વૃદ્ધિ થાય છે. પોતાની ઇચ્છાની પૂર્તિ માટે બધું કરે છે ? આ વાતને સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ.

અથવા “ સે કે ય ણં અરિહણ પૂરિત્તણ ” આ વાક્યની છાયા “ સ કચ્ચ તમ્ અર્હઃ પૂરયિતુમ્ ” એમ પણ થાય છે જેનો અર્થ આ પ્રકારે થાય છે—કોણ એવો પ્રાણી થઈ શકે છે કે જે અનેક ચિત્તવાળા મનુષ્યની ઇચ્છાઓની પૂર્તિ કરવામાં સમર્થ હોય ? કારણ કે તે અનેકચિત્ત પુરુષ અન્યવધ—બીજાને મારવું—આદિ અનેક સાવધ ક્રિયાઓ કરવામાં ઉત્સુક બની રહે છે. આ વાતને બતાવે છે—‘ સે અણ્ણવહાણ ’ ઇત્યાદિ.

વા । ભાવકેતનમ્ ઇચ્છા, લોભઃ । અત્ર ભાવકેતનાપેક્ષયા કેતનશબ્દઃ પ્રયુક્તઃ ।
ઉક્તં ચ ભગવતા—“ જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢઈ ” इत्यादि ।

અપરં ચ—“ ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્જાનો જયેત્ ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશામ્યતિ ” ॥ ૧ ॥

(૨) ભાવ-કેતન । દ્રવ્ય-કેતન ચાલિની અથવા સમુદ્ર હૈ, ઓર ઇચ્છા, લોભ, યે ભાવ-કેતન હૈ । યહાં ભાવ-કેતનકી અપેક્ષાસે ‘કેતન’ શબ્દકા પ્રયોગ હુઆ હૈ । ભગવાનને યહી બાત કહી હૈ—“ જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢઈ । ”

અર્થાત્—જૈસે જૈસે લાભ હોતા હૈ વૈસે વૈસે લોભ મી બઢતા હૈ । લાભસે લોભકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । જો અનેક કાર્યોમૈં વ્યગ્રચિત્ત બના રહતા હૈ વહ કયા ભાવ-કેતનરૂપ અપની ઇચ્છાઓંકી પૂર્તિ કર સકતા હૈ ? અર્થાત્ નહીં કર સકતા ? કહા મી હૈ—

“ ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્જાનો જયેત્ ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશામ્યતિ ॥ ૧ ॥ ” इति ।

જિસ પ્રકાર સોનેસે નિદ્રા નહીં જીતી જા સકતી હૈ, ઓર खानेસે મૂંઝ નહીં જીતી જા સકતી હૈ, ઁસી પ્રકાર કામ-ઇચ્છાઓંમૈં ફંસા હુવા મનુષ્ય ઇચ્છાકે અનુસાર ઇષ્ટ વસ્તુઓંકા લાભ હોને પર મી ઁનસે શાન્તિલાભ પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હૈ । ફિર મી કહા હૈ—

(૧) દ્રવ્યકેતન, (૨) લાવકેતન. દ્રવ્યકેતન ચાલિની અથવા સમુદ્ર છે, અને ઇચ્છા અને લોભ, એ લાવકેતન છે. આ ઠેકાણે લાવકેતનની અપેક્ષાથી ‘કેતન’ શબ્દનો પ્રયોગ થયેલ છે. ભગવાને એ જ વાત કહી છે—“ જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢઈ । ”

અર્થાત્ જેમ જેમ લાભ થાય છે તેમ તેમ લોભ વધે છે. લાભથી લોભની વૃદ્ધિ થાય છે. જે અનેક કાર્યોમાં વ્યગ્રચિત્ત બની રહે છે. તે શું લાવકેતનરૂપ પોતાની ઇચ્છાઓની પૂર્તિ કરી શકે છે ? અર્થાત્ કરી શકતા નથી. કહ્યું પણ છે—

“ ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્જાનો જયેત્ ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશામ્યતિ ” ॥ ૧ ॥ इति ।

જેવી રીતે સુઈ રહેવાથી નિદ્રા છૂતી શકાતી નથી અને ખાવાથી ભૂખ છૂતી શકાતી નથી તે પ્રકારે કામ-ઇચ્છાઓમાં ફસેલો પ્રાણી-મનુષ્ય ઇચ્છાનુસાર ઇષ્ટવસ્તુઓનો લાભ થતાં છતાં પણ તેનાથી શાંતિલાભ પ્રાપ્ત કરી શકાતો નથી. વળી પણ કહ્યું છે—

ક્લેશાય, યથાઽનુચિતકરગ્રહણદણ્ડાદિભિરધાર્મિકા ભૂપતયઃ । તથા-જનપદપરિ-
ગ્રહાય=મગધાદિજનપદાનાં પરિગ્રહાય ભવતિ-સ્વસ્વત્વોત્પાદનેન સ્વાયત્તીકરણાય,
યુદ્ધાદિકં કરોતીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

શૂલમ્-આસેવિત્તા એયમદ્વં ઇચ્છેવેગે સમુદ્વિયા, તમ્હા તં
વીયં નો સેવે, નિસ્સારં પાસિય નાળી ॥ સૂ. ૮ ॥

છાયા-આસેવ્ય એતમ્ અર્થમ્ इत्येव एके समुत्थिताः, तस्मात्तं द्वितीयं नो
सेवते निःसारं दृष्ट्वा ज्ञानी ॥ सू. ८ ॥

ટીકા-—‘ આસેવિત્તા ’ इत्यादि । इत्येव=इच्छापूर्णाथमेव एतम्=अर्थम्

સંગ્રહ કરનેકે નિમિત્ત અપની પ્રજાસે અનીતિદ્વારા ધનકા સંગ્રહ કરતે
હैं । किसीपर करकी वृद्धि करते हैं; किसीको अभियोगमें फंसा कर उस
पर अधिक से अधिक दण्ड भी कर दिया करते हैं । इस प्रकारके भूपति
अपनी प्रजाके लिये अपने अधिकृत देशके लिये क्लेशकारक या परि-
तापदायक हुआ करते हैं । जनपदपरिग्रह-अर्थात् दूसरे राजाओं पर
चढ़ाई कर वह उनके देशको अपने आधीन करनेका प्रयत्न-चेष्टा करते
रहते हैं । मौका पाकर जब वह चढ़ाई कर देते हैं तब उस समय व्यर्थमें
नरसंहार जैसा भयङ्कर काण्ड उपस्थित हो जाता है । उनकी इस प्रकारकी
प्रवृत्ति धार्मिक नीतिसे ठीक नहीं है । क्योंकि इनकी इस प्रवृत्तिसे
अन्य जीवोंको या जनपदको क्लेश तथा सन्ताप होता है ॥ सू. ७ ॥

‘ આસેવિત્તા ’ इत्यादि ।

इच्छाकी पूर्तिके लिये सातवें सूत्रमें प्रतिपादित दूसरे जीवोंका

દ્રાશ ધનનો સંગ્રહ કરે છે. કોઈ ઉપર કરબોજની વૃદ્ધિ કરે છે. કોઈને અભિ-
યોગમાં ફસાવી તેની ઉપર અધિકમાં અધિક દંડ પાણુ કરી નાંખે છે. આ પ્રકારનો
રાજા પોતાની પ્રજા માટે અગર પોતાના અધિકૃત દેશ માટે કલેશકારક અને પરિતા-
તાપદાયક થયા કરે છે જનપદ પરિગ્રહ અર્થાત્ બીજા રાજાઓ ઉપર ચઢાઈ કરી
તેના દેશને પોતાના અધિન કરવાના પ્રયત્નમાં રહે છે સમય મળતાં જ ત્યારે તે
ચઢાઈ કરે છે ત્યારે તે વખત વ્યર્થમાં નરસંહાર જેવું ભયંકર કાંડ ઉપસ્થિત થાય છે,
તેની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ધાર્મિક નીતિથી ઠીક નથી, કારણ કે તેની આ પ્રવૃત્તિથી
અન્ય જીવોને અને જનપદને કલેશ તથા સંતાપ ઉત્પન્ન થાય છે ॥ સૂ. ૭ ॥

‘ આસેવિત્તા ’ इत्यादि.

ઈચ્છાની પૂર્તિ માટે સાતમાં સૂત્રમાં પ્રતિપાદિત બીજા જીવોનો વધ પરિ-

સ ઇચ્છાપૂરણાર્થં પ્રવર્તમાનઃ અન્યવધાય=અન્યેષાં પ્રાણિનાં વધાય ભવતિ । યથા-
ચૌરઃ સાહસિકો વા ધનાપહરણાર્થં ધનિનં હન્તિ, इत्यादि । तथा-अन्यपरितापाय=
अन्येषां जीवानां परितापाय=शारीरमानसक्लेशाय भवति । तथा-अन्यपरिग्रहाय
=अन्येषां=दासदासीनां गोमहिष्यादीनां च परिग्रहाय=स्वायत्तीकरणाय भवति ।
तथा-जनपदवधाय-मगधादयो जनपदास्तेषां वधाय । यथा-म्लेच्छा भूपतयो
म्लेच्छधर्ममस्वीकुर्वन्तं जनपदं धनन्तीत्यादि । तथा-जनपदपरितापाय-जनपदानां

મનુષ્ય જબ અપની ઇચ્છાકી પૂર્ત્તિકે લિયે પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ તબ ઉસ
કી ઉસ પ્રવૃત્તિસે અન્ય પ્રાણિયોંકી હિંસા હોતી હૈ, અતઃ વહ ઉસકી
પ્રવૃત્તિ અન્ય જીવોંકી હિંસાકા કારણ બનતી હૈ । જૈસે ચોર અથવા સાહ-
સિક-ડાકૂ-મનુષ્ય ધનીકે ધનકો ચુરાનેકે લિયે ધનીકો માર ડાલતા હૈ ।
ઉસકી પ્રવૃત્તિસે અન્ય જીવોંકો શારીરિક તથા માનસિક પરિતાપ-ક્લેશ
ભોગના પડતા હૈ । ફિર વહ અપની અમિલાષાઓંકી પૂર્ત્તિકે લિયે દાસી
દાસ આદિકો તથા ગાય બૈસ આદિકો કહીંસે ચુરા લાકર ઉનકા સંગ્રહ
કરનેમૈં વ્યસ્ત રહા કરતા હૈ । જનપદ-મગધાદિ દેશોંકો વહ અપની પ્ર-
વૃત્તિસે ત્રસ્ત-દુઃખિત કર દિયા કરતા હૈ । જૈસે મ્લેચ્છ રાજા મ્લેચ્છ
ધર્મકો અસ્વીકાર કરનેવાલી પ્રજાકો માર ડાલતે હૈ । ઉસકી પ્રવૃત્તિ
લોકોંકે પરિતાપકે લિયે-પ્રાણિયોંકો માર્મિક કષ્ટ પહુંચાનેકે લિયે હોતી
હૈ । અનુચિત કર-દૈક્ષકા લેના, અનુચિત દણ્ડ દેના, इत्यादिका नाम
भी परिताप है । अधार्मिक भूपति अपनी इच्छाकी पूर्त्तिके लिये धन-

મનુષ્ય જ્યારે પોતાની ઇચ્છાની પૂર્ત્તિ માટે પ્રવૃત્તિ કરે છે ત્યારે તેની તે
પ્રવૃત્તિથી અન્ય પ્રાણીઓની હિંસા થાય છે, માટે તે તેની પ્રવૃત્તિ બીજા જીવોની
હિંસાનું કારણ બને છે; જેમ ચોર અથવા સાહસિક-ડાકૂ પૈસાવાળા માણસના ધન
ચોરી જવા માટે પૈસાવાળાને મારી નાંખે છે. તેની પ્રવૃત્તિથી અન્ય જીવોને શારી-
રિક તથા માનસિક પરિતાપ-ક્લેશ ભોગવવો પડે છે. તેમજ તે પોતાની અભિ-
લાષાઓની પૂર્ત્તિ માટે દાસી-દાસ આદિ તથા ગાય-બૈસ આદિ કચાંચથી ચોરી
લાવીને તેનો સંગ્રહ કરવામાં વ્યસ્ત રહ્યા કરે છે. જનપદ-મગધાદિ દેશોને તે
પોતાની પ્રવૃત્તિથી ત્રસ્ત-દુઃખિત કર્યા કરે છે. જેમ મ્લેચ્છ રાજા મ્લેચ્છધર્મને
અસ્વીકાર કરનારી પ્રજાને મારી નાંખે છે. તેની પ્રવૃત્તિ લોકોના પરિતાપ માટે-
પ્રાણીઓને માર્મિક કષ્ટ પહોંચાડવા માટે હોય છે. અનુચિત કરબોજ-દેક્ષ
લેવો, અનુચિત દંડ આપવો, इत्यादिનું नाम પણ પરિતાप છે, अधार्मिक રાજા
પોતાની ઇચ્છાની પૂર્ત્તિ માટે ધનસંગ્રહ કરવા નિમિત્ત પોતાની પ્રજાથી અનીતિ-

ટીકા—હે માહન ! = હે મુને ! ઉપપાતં = દેવજન્મ, ચ્યવનં = દેવમરણં ચ જ્ઞાત્વા
અનન્યં = અન્યો = મોક્ષમાર્ગાદિતરઃ અસંયમઃ, નાન્યોઽનન્યઃ અસંયમાદિન્નઃ શ્રુતચારિ-
ત્રાત્મકો ધર્મસ્તં ચર = સમાચર ॥ સૂ. ૮ ॥

હે મુનિ ! દેવોંકે ઉપપાત-જન્મ, ચ્યવન-મરણકો જાનકર તુમ
અનન્ય-જો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ હૈં ઉસકા સેવન કરો । ભાવાર્થ-દેવોંકી
આયુ સાગરોંકી હોતી હૈં । ઇતની બડી આયુ હોતે હુએ भी વિષયભોગોંસે
તૃપ્તિ નહીં હોતી । ઉન દેવોંકો વહ આયુ ક્ષણસદૃશ હી લગતી હૈં ઓર
વ્યતીત હો જાતી હૈં । વહાં કે વિષયભોગ भी સદા સ્થિર નહીં હૈં, વે भी
વિનશ્વર હૈં । જન્મ-મરણકા ચક્ર દેવગતિમેં દેવોંકો भी ભોગના પડતા
હૈં । અતઃ સંવોધન કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે મુનિ ! ‘મનુષ્ય-
લોકકે વિષયભોગ હી અસાર હૈં’ યહ વાત નહીં હૈં, કિન્તુ દેવલોકકે
भी વિષયભોગ ઇસી તરહ અસાર હૈં । ઇસ ગતિમેં સંયમકી આરાધના
નહીં હોતી હૈં, સંયમકી આરાધના મનુષ્યગતિકે સિવાય અન્ય કિસી
भी ગતિમેં નહીં હો સકતી હૈં, અતઃ ઇસ દુર્લભ મનુષ્યજન્મકો વિષય-
ભોગોંકી ચાહનામેં અથવા ઉનકે સેવન કરનેમેં નષ્ટ કર દેના યહ બુદ્ધિ-
માન કા કર્તવ્ય નહીં હૈં । યહ મત સમજો કિ—‘સંયમકી આરાધનાસે
હમ દેવપર્યાય પ્રાપ્ત કર વહાંકે વિષયભોગોંકો ભોગતે હુએ સુખી હો

હે મુનિ । દેવોના ઉપપાત-જન્મ, ચ્યવન-મરણને જાણીને તમે અનન્ય
જે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ છે તેનું સેવન કરો

ભાવાર્થ—દેવોનું આયુષ્ય સાગરોનું હોય છે. આટલું મોટું આયુષ્ય હોવા
છતા પણ વિષયભોગોથી તૃપ્તિ થતી નથી. તે દેવોને તે આયુ ક્ષણસદૃશ જ
લાગે છે અને વ્યતીત થઈ જાય છે. ત્યાંના વિષયભોગ પણ સદા સ્થિર નથી
તે પણ વિનશ્વર છે. જન્મ મરણનું ચક્ર દેવગતિમાં દેવોને પણ ભોગવવું પડે છે,
માટે શિષ્યને સંવોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે—

હે મુનિ ! મનુષ્યલોકના વિષયભોગ જ અસાર છે એ વાત નથી પણ
દેવલોકના પણ વિષયભોગ આ માફક અસાર છે. આ ગતિમાં સંયમની આરાધના
થતી નથી. સંયમની આરાધના મનુષ્યગતિ સિવાય અન્ય બીજી કોઈ પણ ગ-
તિમાં બની શકતી નથી. માટે આ દુર્લભ મનુષ્ય જન્મને વિષયભોગોની ચાહનામાં
અને તેનું સેવન કરવામાં નષ્ટ કરી નાખવો તે બુદ્ધિમાનનું કર્તવ્ય નથી. એમ
જ સમજીશો કે ‘સંયમની આરાધનાથી અમે દેવપર્યાય પ્રાપ્ત કરી ત્યાંના વિષય-

અન્યવધપરિતાપપરિગ્રહાદિકમ્ આસેવ્ય પશ્ચાત્ તૃપ્તિહેતુત્વાભાવાન્નિઃસારં વિજ્ઞાય, એકે=ભરતાદયઃ સમુત્થિતાઃ=સંયમારાધને પ્રવૃત્તાસ્તેનૈવ ભવેન સિદ્ધિં લબ્ધવન્તઃ । તસ્માદ્ યતો વાન્તવદ્ભોગં પરિત્યજ્ય પ્રતિજ્ઞા કૃતા ‘પુનર્ભોગાર્થં મયા ન પ્રવર્તિષ્યતે’ इति, તસ્માદ્ જ્ઞાની=સમ્યગ્જ્ઞાનવાન્ વિષયભોગં નિસ્સારં દૃષ્ટ્વા, વિષયભોગે કૃતેઽપિ તૃપ્ત્યભાવાદિતિ ભાવઃ; ભોગલિપ્સયા તં દ્વિતીયં=દ્વિતીયવારં નો સેવતે, ન પુનસ્ત્રાસક્તો ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ન મનુષ્યાણામેવ ભોગો નિઃસારઃ કિંતુ દેવાનામપીત્યાહ ‘ઉવવાયં’ इत्यादि।

મૂલમ્—ઉવવાયં ચવણં ચ ણચ્ચા અણણં ચર માહણે ॥સૂ૦ ૯॥

છાયા—ઉપપાતં ચ્યવનં ચ જ્ઞાત્વા અનન્યં ચર માહન ! ॥ સૂ૦ ૯ ॥

વધ પરિતાપ એવં પરિગ્રહાદિકા સેવન કરકે મી જબ ઇચ્છાકી તૃપ્તિ નહીં હોતી હૈ તબ કોઈ ભરતાદિક જૈસે મહાપુરુષ સંયમકે આરાધન કરનેમેં પ્રવૃત્ત હોતે હૈં ઓર ડસી અવમેં મુક્તિકા લાભ મી કર લિયા કરતે હૈં । ઇસ લિયે જો છર્દિત-વમન કિયે હુએ અન્નકે સમાન ભોગોંકા પરિત્યાગ કર “ફિર અબ મૈં ભોગોંકે સેવન કરનેમેં પ્રવૃત્તિ નહીં કરૂંગા” ઇસ પ્રકારકી પ્રતિજ્ઞા કર લિયા કરતે હૈં, સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન વે જ્ઞાની પુરુષ વિષયભોગોંમેં નિસ્સારતા જાન કર, અર્થાત્ “વિષયભોગોંકે સેવન કરને પર મી જીવોંકો તૃપ્તિ નહીં હોતી હૈ” ઇસ પ્રકાર સમજ્ઞ કર ફિર ભોગોંકે સેવન કરનેકી ઇચ્છાસે દૂસરે મૃષાવાદ રૂપ પાપકા અથવા અસંયમ કા સેવન નહીં કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

મનુષ્યોંકે વિષયભોગ હી નિસ્સાર નહીં હૈં, કિન્તુ દેવોંકે મી વિષયભોગ નિસ્સાર હૈં; ઇસી વાતકો સમજાતે હૈં—‘ઉવવાયં’ इत्यादि ।

તાપ તેમજ પરિગ્રહાદિનું સેવન કરીને પણ જ્યારે ઈચ્છાની તૃપ્તિ થતી નથી ત્યારે કોઈ ભરતાદિક જેવો મહાપુરુષ સંયમનું આરાધન કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે અને તેજ ભવમાં મુક્તિનો લાભ પણ કરી લે છે. માટે વમન કરેલા અન્ન સમાન ભોગોનો પરિત્યાગ કરી “હવે પછી હું ભોગનું સેવન કરવામાં પ્રવૃત્તિ નહિ કરું” આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરી લે છે. સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન તે જ્ઞાની પુરુષ વિષય-ભોગોમાં નિસ્સારતા બાળીને અર્થાત્ “વિષયભોગોનું સેવન કરવા છતાં જીવોને તૃપ્તિ થતી નથી” એવા પ્રકારે સમજીને પછી ભોગોનું સેવન કરવાની ઈચ્છાથી બીજા મૃષાવાદરૂપ પાપનું અને અસંયમનું સેવન કરતા નથી. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

મનુષ્યોના જ વિષયભોગ નિસ્સાર છે, એમ નહિ; કિન્તુ દેવોના પણ વિષય-ભોગ નિસ્સાર છે. આ વાતને સમજાવે છે—‘ઉવવાયં’ इत्यादि.

વમં, તદ્ દ્રષ્ટું ગીલમસ્યેતિ-અનવમદર્શી=સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનચારિત્રારાધનપરઃ, અત એવ
પાપેભ્યઃ=પાપકારણેભ્યઃ કર્મભ્યઃ=અણદગવિધમૈથુનેભ્યઃ નિષ્પજ્ઞાઃ=નિવૃત્તઃ સન્
નન્દી=વૈષયિકં સુખં નિર્વિન્દસ્વ=જુગુપ્સસ્વ । કામિનીકાયસ્યાતિનિન્દ્યત્વાત્તત્સજ્જન-
નિતસુખસ્ય હિંસાદિપાપહેતુત્વાચ્ચ ચતુર્યવ્રતારાધને સાવધાનો ભવેત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૧૧ ॥
કિં ચ—‘કોહાઈ’ ઇત્યાદિ ।

હોતી હૈં उनका नाम प्रजा-स्त्री है । तथा अवम नाम मिथ्यादर्शन आदिका
है । उससे भिन्न सन्यग्दर्शनादिक अनवम है । इस अनवमको देखनेका
जिसका स्वभाव हो वह अनवमदर्शी है । शिष्योंको ब्रह्मचर्यव्रतके पालन
करनेकी शिक्षा देते हुए सूत्रकार कहते हैं कि हे शिष्य ! तुम स्त्रियोंके
विषयमें आसक्तचित्त न बनो, स्वप्नमें भी उनका ध्यान न करो । तथा
जघन्य फलके उत्पादक होनेसे मिथ्यादर्शनादिक अवम है । उनसे वि-
परीत अनवम-सम्यग्दर्शन, सन्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र हैं ।

इन सम्यग्दर्शनादिककी आराधनासे तुम्हें भ्रष्ट बनानेवाले जो
पापके कारणभूत अठारह प्रकारके मैथुन हैं, उनसे निवृत्त हुए तुम नन्दी-
वैषयिक सुखोंकी ओर सदा घृणादृष्टि रखो ।

भावार्थ—स्त्रियोंका शरीर सदा अतिनिन्द्य होता है । उसके सेवन
से उत्पन्न हुआ वैषयिक सुख हिंसादिक पापोंका कारण होता है । ऐसी
दृढव्रद्धा कर तुम चतुर्य व्रतकी आराधनामें सावधान रहो ॥ सू. ११ ॥

फिर कहते हैं—‘कोहाइमाण’ इत्यादि ।

મિથ્યાદર્શન આદિનું છે તેનાથી ભિન્ન સન્યગ્દર્શનાદિક અનવમ છે. આ અનવમને
દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે અનવમદર્શી છે. શિષ્યોને બ્રહ્મચર્યવ્રતનું પાલન
કરવાની શિક્ષા દેતાં સૂત્રકાર કહે છે કે હે શિષ્ય ! તમે સ્ત્રીઓ તાટે આસક્ત-
ચિત્ત ન બનો. સ્વપ્નમાં પણ તેનું ધ્યાન ન કરો. તથા મિથ્યાદર્શનાદિક જઘન્ય ફલના
ઉત્પાદક હોવાથી અવમ છે. તેનાથી વિપરીત અનવમ સન્યગ્દર્શન, સન્યગ્જ્ઞાન
અને સમ્યક્ચારિત્ર છે તેની આરાધનાથી તમને ભ્રષ્ટ બનાવનાર પાપના કારણભૂત
અઠાર પ્રકારના મૈથુન છે. તેનાથી નિવૃત્ત બનીને તમે નન્દી-વૈષયિક સુખોની
તરફ સદા ઘૃણાદૃષ્ટિ રાખો.

ભાવાર્થ—સ્ત્રીઓનું શરીર સદા અતિનિન્દ્ય હોય છે. તેના સેવનથી ઉત્પન્ન
થયેલ વૈષયિક સુખ હિંસાદિક પાપોનું કારણ બને છે. એવી દૃઢ વ્રદ્ધા કરી
તમે એવા વ્રતની આરાધનામાં સાવધાન રહો ॥ સૂ. ૧૧ ॥

વળી કહે છે—‘કોહાઈમાણ’ ઇત્યાદિ.

કિં ચ--‘ સે ણ છણે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે ણ છણે ણ છણાવણ છણંતં ણાણુજાણણ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા-સ ન ક્ષણુયાત્, ન ક્ષાણયેત્, ક્ષણ્વન્તં નાનુજાનીયાત્ ॥ ૧૦ ॥

ટીકા-સઃ=શ્રુતચારિત્રધર્મારાધનપરો મુનિઃ, પ્રાણિનો ન ક્ષણુયાત્=ન હન્યાત્, ન ક્ષાણયેત્=ન ઘાતયેત્, ક્ષણ્વન્તં=ઘનન્તમન્યં નાનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેદિત્યર્થઃ ॥

અથ ચતુર્થવ્રતસિદ્ધચર્ચમુપદિશતિ-‘ નિર્વિવદ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-નિર્વિવદ નંદિં, અરણ પયાસુ, અણોમદંસી નિસણ્ણે પાવેહિં કમ્મેહિં ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા-નિર્વિવદસ્વ નન્દીમ્, અરક્તઃ પ્રજાસુ, અનવમદર્શી નિષણ્ણઃ પાપેભ્યઃ કર્મભ્યઃ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા-પ્રજાસુ=પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ=સ્ત્રિયસ્તાસુ, અરક્તઃ=અનાસક્તઃ, તથા-અવમં=નીચં નીચફલોત્પાદકત્વાદ્ મિથ્યાદર્શનાદિ, તદ્વિન્નમ્ અન-

જાયેંગે’ કારણ કિં વહાંકે વિષયભોગ મી અસાર હી હૈં, અતઃ નિદાન રહિત હો કર હી તુમ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરો ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ફિર મી કહતે હૈં-‘ સે ણ છણે ’ ઇત્યાદિ ।

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેમૈં તત્પર હુઆ મુનિ કમી મી સ્વયં પ્રાણિયોંકી હિંસા ન કરે, દૂસરોંસે હિંસા ન કરાવે ઓર હિંસા કરનેવાલોંકી અનુમોદના મી ન કરે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ઈસકે બાદ ચતુર્થવ્રત (બ્રહ્મચર્યવ્રત) કી સિદ્ધિકે લિયે ઉપદેશ કરતે હૈં-‘ નિર્વિવદ નંદિં ’ ઇત્યાદિ ।

‘ પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ ’ પુત્રાદિ સન્તાન જિનમૈં ઉત્પન્ન

ભોગોને ભોગવતાં સુખી થઈ જશું.’ કારણ કે ત્યાંના વિષયભોગ પણ અસાર જ છે. માટે નિદાનરહિત બનીને જ તમે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરો. ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ફરી પણ કહે છે-‘ સે ણ છણે ’ ઇત્યાદિ.

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવામાં તત્પર બનેલા મુનિ કદિ પણ સ્વયં પ્રાણીઓની હિંસા ન કરે, બીજા પાસે હિંસા ન કરાવે અને હિંસા કરવાવાળાની અનુમોદના પણ ન કરે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ત્યાર બાદ ચતુર્થવ્રત (બ્રહ્મચર્યવ્રત)ની સિદ્ધિ માટે ઉપદેશ કરે છે-‘ નિર્વિવદ નંદિં ’ ઇત્યાદિ.

‘ પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ ’—

પુત્રાદિ સન્તાન જેમાં ઉત્પન્ન થાય છે તેનું નામ પ્રજા-સ્ત્રી છે. તથા અવમનામ

યથેવં તતઃ કિં કર્તવ્યમિત્યાહ-‘તસ્માત્’ ઇત્યાદિ । લોભાવિષ્ટાઃ પ્રાણિ-
હિંસનાદૌ પ્રવૃત્ત્યા નરકં પ્રાપ્નુવન્તિ, તસ્માદ્ વીરઃ=કર્મવિદારણોત્સાહયુક્તો વધાત્=
પ્રાણિનાં હિંસનાદ્ વિરતઃ સર્વથા નિવૃત્તઃ સ્યાત્ । કિંચ—લઘુભૂતગામી=લઘુભૂત
આત્મા યેન સ લઘુભૂતો મોક્ષઃ, તં ગન્તું શીલમસ્યેતિ લઘુભૂતગામી, યદ્વા-‘લઘુ-
ભૂતકામી’ ઇતિચ્છાયા, તત્ર આત્માનં લઘુભૂતં કામયતે ઇતિ લઘુભૂતકામી=મોક્ષા-
મિલાપી, મોક્ષમાર્ગારૂઢઃ શોકં, ‘સ્રોત’ ઇતિચ્છાયાપક્ષે સ્રોતો=ભાવસ્રોતોવા કર્મ-
કારણં, છિન્દ્યાત્=વ્યપનયેત્ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

સર્વરીતિસે દૂર હી રહના चाहिये । हिंसादिक पापकर्मोंसे सदा तीन करण
तीन योगसे अर्थात् मन, वचन और काय, एवं कृत कारित और अनु-
मोदना से जो दूर रहता है वह कर्मबन्धके भारसे भारी नहीं होता है ।
ऐसे व्यक्तिकी आत्मामें स्वाभाविक रीतिसे लाघव गुणका आविर्भाव
होता है और उससे ऊर्ध्वगतिकी प्राप्ति होती है । ‘लघुभूत’ शब्दका
अर्थ मोक्ष है, क्योंकि मुक्तिका लाभ उसी आत्माको होता है कि जिस
से कर्मका भार उतर जाता है । कर्मका भार उतर जानेसे आत्मा स्वा-
भाविक रीतिसे लघु-हल्का हो जाता है । जो चीज वजनमें हल्की होती
है वह स्वभावसे ही ऊपरकी ओर उठती है । आत्मा भी जब कर्मब-
न्धनसे रहित हो जाती है तब इसका भी स्वभाव स्वतः ऊर्ध्वगमन करने
का हो जाता है । सकल कर्मोंका क्षय होना ही आत्माकी मुक्ति है । इस
मुक्तिको प्राप्त करनेका जिसका स्वभाव है वह लघुभूतगामी है । अथवा
‘लघुभूयगामी’ इस पदकी छाया ‘लघुभूतकामी’ ऐसी भी होती है ।

હિંસાદિક પાપકર્મોથી સદા ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી અર્થાત્ મન વચન કાયા
અને કૃત કારિત અને અનુમોદનાથી જે દૂર રહે છે તે કર્મબંધના ભારથી ભારી
થતા નથી, એવી વ્યક્તિના આત્મામા સ્વાભાવિક રીતથી લાઘવ ગુણનો આવિ-
ર્ભાવ થાય છે અને તેનાથી ઉર્ધ્વગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે ‘લઘુભૂત’ શબ્દનો અર્થ
મોક્ષ છે કારણ કે મુક્તિનો લાભ તે આત્માને થાય છે કે જેથી કર્મનો ભાર
ઉતરી જાય છે કર્મનો ભાર ઉતરી જવાથી આત્મા સ્વાભાવીક રીતથી લઘુ-
હલકો બને છે. જે ચીજ વજનમા હલકી થાય છે તે સ્વભાવથી જ ઉપરની
તરફ ઉઠે છે આત્મા પણ જ્યારે કર્મબંધનથી રહિત થઈ જાય છે ત્યારે તેનો
પણ સ્વભાવ સ્વતઃ ઉર્ધ્વગમન કરવાનો થઈ જાય છે સકલ કર્મોનો ક્ષય થવો
તે જ આત્માની મુક્તિ છે. તેવી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે
લઘુભૂતગામી છે. અને ‘લઘુભૂયગામી’ આ પદની છાયા ‘લઘુભૂતકામી’ એમ પણ

मूलम्—कोहाइमाणं हणिया य वीरे, लोभस्स पासे निरयं महंतं । तम्हा य वीरे विरण वहाओ, छिन्दिज्ज सोयं लहु-भूयगामी ॥ सू० १२ ॥

छाया—क्रोधादिमानं हन्यात् च वीरः लोभस्य पश्य निरयं महान्तम् । तस्माच्च वीरो विरतो वधात् छिन्धात् शोकं लघुभूतगामी ॥ सू० १२ ॥

टीका—वीरः=कर्मविदारणसमर्थः, क्रोधादिमानं=क्रोधादीनां मानम् अनन्तानुबन्ध्यादिविशेषं हन्यात्=निवारयेत् । यद्वा—क्रोध आदिर्यस्य स क्रोधादिः, स चासौ मानश्च क्रोधादिमानः—क्रोधहेतुको गर्वस्तं हन्यादित्यर्थः । लोभस्यानन्तानुबन्ध्यादेर्विपाकं महान्तं=दुस्तरं निरयं=नरकं पश्य । उक्तञ्च—‘मच्छा मणुआ य सत्तमिं पुढवि’ इति । अतिलोभाविष्टा मनुष्यास्तन्दुलमत्स्यादयश्च सप्तमपृथिवी भाजो भवन्तीति भावः ।

कर्मोंके विनाश करनेकी शक्तिसे संपन्न वीर क्रोधादिक कषायों के अभिमानको अर्थात् अनन्तानुबन्धी आदि क्रोध मान माया और लोभको दूर करे । अथवा—क्रोध है आदिमें जिसके वह क्रोधादि है । क्रोधादिरूप जो मान उसका नाम क्रोधादिमान है । जिस गर्वका हेतु क्रोध है उस क्रोधादिकारणक मानको वह नष्ट करे । अनन्तानुबन्धी आदि कषाय सम्बन्धी लोभके विपाकको सदा दुस्तर नरक ही समझना चाहिये । कहा भी है—“ मच्छा मणुआ य सत्तमिं पुढवि ” अति लोभसे युक्त मनुष्य और मत्स्य—तन्दुलमत्स्य आदि मरकर सातवें नरकमें जाते हैं । जब यह निश्चित सिद्धान्त है कि लोभसे युक्त प्राणी हिंसादिक पापकर्मों में प्रवृत्तियुक्त होनेसे मरकर नरक गतिमें जाते हैं तो जो कर्मोंको नाश करनेवाली शक्तिसे युक्त वीर हैं उन्हें प्राणियोंकी हिंसासे सदा

कर्मोंना विनाश करवानी शक्तिथी संपन्न वीर मुनि, क्रोधादिक कषायोंना अलि-मानने अर्थात् अनन्तानुबन्धी आदि क्रोध, मान, माया अने दोलने दूर करे. अथवा क्रोध छे आदिमां लेने ते क्रोधादि छे क्रोधादिरूप ले मान तेनुं नाम क्रोधादिमान छे. ले गर्वना हेतु क्रोध छे, ते क्रोधादिकारणक मानना ते नाश करे, अनन्तानुबन्धी आदि कषाय संबन्धी दोलना विपाकने सदा दुस्तर नरक न समजवुं लेधये, कहुं छे—“ मच्छा मणुआ य सत्तमिं पुढवि ” अति दोलथी युक्त मनुष्य अने मत्स्य—तन्दुलमत्स्य आदि मरीने सातमी नरकमां जय छे. ज्यारे ये निश्चित सिद्धांत छे के दोलथी युक्त प्राणी हिंसादिक पाप कर्मोंमां प्रवृत्ति-युक्त होवाथी मरीने नरक गतिमां जय छे तो ले कर्मोंना नाश करवावाणी शक्तिथी युक्त वीर छे तेने प्राणीयोनी हिंसाथी सदा सर्व रीतिथी दूर न रहवुं लेधये.

इह संसारहृदे मानुष्येषु=मनुष्यभवेषु, उन्मज्जनं=जन्मरूपं लब्ध्वा, मनुष्य-
भवादन्यत्र संपूर्णमोक्षमार्गप्राप्त्यसंभवादित्दं दुर्लभमिति भावः; प्राणिनां=जीवानां

इस संसारमें मनुष्यभवकी प्राप्ति दुर्लभ है। यदि कोई पुण्यानुबन्धी पुण्यके उदयसे इस मनुष्यभवकी प्राप्ति तुम्हें हुई है तो तुम इस अमूल्य जीवनको व्यर्थ हिंसादिक कार्यों में लगाकर नष्ट न करो। इसी बात को समझाते हुए सूत्रकार शिष्योंके प्रति कहते हैं—मनुष्यभवके सिवाय अन्य किसी भी भवमें संपूर्ण मोक्षमार्गकी प्राप्ति जीवको नहीं होती है इसीलिये ज्ञानियोंने इसकी प्राप्ति दुर्लभ बतलाई है। इसे प्राप्तकर जीवोंके दस द्रव्य प्राणों (५ इन्द्रिय, ३ बल, १ आयु और १ श्वासोच्छ्वास-१०) का वियोग करनेमें ही इसे व्यर्थ गंवा देना यह बुद्धिमान मनुष्यका काम नहीं है। इस मनुष्यभवकी प्राप्तिकी सफलता तो जब ही है कि इससे संयमका आराधन किया जाय और मुक्तिमार्गका पथिक बना जाय। इसलिये हे शिष्य ! तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम इस दुर्लभतम मनुष्यभवको पाकर व्यर्थ हिंसादिक कार्यों में न फंसकर मोक्षमार्गके पथिक बनो और अपने इस मनुष्यभवको सफल बनाओ, यही सूत्रका आशय है। अर्थात्—मनुष्यभवमें जन्म प्राप्त कर तुम प्राणियोंके प्राणोंका

આ સંસારમાં મનુષ્ય ભવની પ્રાપ્તિ મહા દુર્લભ છે. કદાચ કોઈ પુણ્યાનુબંધી પુણ્યના ઉદયથી આ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ તમોને મળી છે તો તમો આ અમૂલ્ય ભવને વ્યર્થ હિંસાદિક કાર્યોમાં લગાવી નષ્ટ ન કરો. આ વાતને સમજાવતાં સૂત્રકાર શિષ્યો પ્રતિ કહે છે—મનુષ્ય ભવ સિવાય બીજા કોઈ પણ ભવમાં સંપૂર્ણ મોક્ષમાર્ગની પ્રાપ્તિ ભવને થતી નથી. માટે જ્ઞાનીઓએ તેની પ્રાપ્તિ દુર્લભ બતાવી છે. તેને પ્રાપ્ત કરી ભવોના દશદ્રવ્ય પ્રાણો (૫ ઇન્દ્રિય, ૩ બળ, ૧ આયુ અને ૧ શ્વાસોચ્છ્વાસ-૧૦)નો વિયોગ કરવામાં જ તેને વ્યર્થ ગુમાવવો તે બુદ્ધિમાન મનુષ્યનું કામ નથી.

આ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિની સફળતા તો ત્યારે જ છે કે તેનાથી સંયમનું આરાધન કરવામાં આવે અને મુક્તિ માર્ગનો પથિક બની જાય, તેથી હે શિષ્ય ! તમારું કર્તવ્ય છે કે તમે આ દુર્લભ મનુષ્ય ભવ મેળવીને વ્યર્થ હિંસાદિક કાર્યોમાં ન ફસતાં મોક્ષમાર્ગના પથિક બનો, અને પોતાના આ મનુષ્યભવને સફળ બનાવો એ જ સૂત્રનો આશય છે. અર્થાત્ મનુષ્યભવમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરી તમે પ્રાણીઓના

કિંચ—‘ ગંથં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ગંથં પરિણાય ઇહઽઽજ્જ ધીરે, સોયં પરિણાય ચરિઽજ્જ દંતે । ઉમ્મઽજ્જ લદ્ધું ઇહ માણુસેહિં, નો પાણિણં પાણે સમારભિઽજ્જાસિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

છાયા—ગ્રન્થં પરિજ્ઞાય ઇહાઽઽ ધીરઃ, સ્ત્રોતઃ પરિજ્ઞાય ચરેદ્ દાન્તઃ । ઉન્મઽજ્જનં લઙ્ઘ્વા ઇહ માનુષ્યેષુ નો પ્રાણિનાં પ્રાણાન્ સમારભેથાઃ । ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ટીકા—ઇહ સંસારે મનુષ્યલોકે વા, અથૈવ=કાલાનતિક્રમેણ, ધીરઃ સન્ ગ્રન્થં =વાહ્યાભ્યન્તરભેદાદ્ દ્વિવિધં પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા બન્ધકારણત્વેન વિજ્ઞાય, પ્રત્યા-
ખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિવર્જયેત્ । કિં ચ સ્ત્રોતઃ=ભાવસ્ત્રોતો વિષયાસક્તિરૂપં સંસારં પરિજ્ઞાય=જ્ઞાત્વા દાન્તઃ=ઇન્દ્રિયનોઇન્દ્રિયદમનશીલઃ ચરેત્=સંયમમાચરેત્ ।

इसका अर्थ यह होता है कि मोक्षका जो अभिलाषी है वह लघुभूत-
कामी है । मोक्षाभिलाषी मोक्षमार्गपर आरुढ़ होता हुआ शोक को,
अथवा कर्मोंके आस्रवके कारणभूत भावस्त्रोतको अपनी आत्मासे सदा
दूर करे ॥ सू० १२ ॥

और भी कहते हैं—‘ गंथं परिणाय ’ इत्यादि ।

इस संसार अथवा मनुष्यलोकमें आत्मारथी को समय विताना
व्यर्थ है । जहां तक हो सके जल्दी से जल्दी धैर्यशाली बन कर बाह्य
और आभ्यन्तर परिग्रहको ज्ञपरिज्ञासे बन्धका कारण जानकर प्रत्या-
ख्यानपरिज्ञासे उसका त्याग करे । तथा विषयोंमें आसक्तिरूप संसार
को जान कर पांच इन्द्रिय एवं मनका दमन करना हुआ संयमकी आ-
राधनामें अपनेको लगावे ।

થાય છે. તેનો અર્થ એ થાય છે કે મોક્ષનો જે અભિલાષી છે તે લઘુભૂતકામી
છે. મોક્ષાભિલાષી મોક્ષ માર્ગ ઉપર આરુઢ થઈને શોકને અથવા કર્મોના આસ્ર-
વના કારણભૂત ભાવસ્ત્રોતને પોતાના આત્માથી સદા દૂર કરે. ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

इरी कहे छे—‘ गंथं परिणाय ’ धत्यादि.

આ સંસાર અને મનુષ્ય લોકમાં આત્માર્થી માટે સમય વિતાવવો વ્યર્થ
છે. જ્યાં સુધી બની શકે જલ્દીમાં જલ્દી ધૈર્યશાળી બનીને બાહ્ય અને આભ્યન્તર
પરિગ્રહને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બંધનું કારણ બાણી પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે.
તથા વિષયોમાં આસક્તિરૂપ સંસારને બાણીને પાંચ ઈન્દ્રિય અને મનનું દમન કરીને
સંયમની આરાધનામાં પોતાને લગાડે.

॥ अथ तृतीयाध्ययनस्य तृतीय उद्देशः ॥

इहानन्तरद्वितीयोद्देशके जात्या वृद्ध्या च दुःखं, तद्ध्याच्च शीतोष्णपरीषहसहनं च प्रतिबोधितम् । अथ तत्सहनमात्रेण पापकर्मानाचरणमात्रेण वा चारित्र्याचरणरहितः श्रमणो न भवतीति प्रतिबोधयितुं तृतीयोद्देशकं प्रस्तुवन् प्रथमं सूत्रमाह—
'संधिं लोगस्स' इत्यादि ।

मूलम्—संधिं लोगस्स जाणित्ता ॥ सू० १ ॥

छाया—सन्धिं लोकस्य ज्ञात्वा ॥ सू० १ ॥

। तीसरे अध्ययनका तीसरा उद्देश ।

इसके द्वितीय उद्देशमें प्राणियोंकी गर्भसे लगा कर बालादि वृद्धावस्था पर्यन्त सब ही अवस्थाएँ दुःखोंसे समन्वित हैं, उन दुःखोंसे भयभीत प्राणियोंको आत्मकल्याणके मार्गस्वरूप संयमकी आराधना करनी चाहिये, इस आराधनामें उन्हें शीत-उष्ण परीषहोंको सहन करना चाहिये, यह सब विषय बतलाया जा चुका है, अर्थात् मोक्षाभिलाषीके लिये यह सब समझाया जा चुका है । अब इस तीसरे उद्देशमें यह समझाया जायगा कि जो चारित्र्यके आचरणसे रहित है वह भले ही शीत उष्ण परीषहोंको सहे, पापकर्मोंको न भी करे तो भी वह श्रमण नहीं है । इसी अभिप्रायको लेकर सूत्रकार प्रथम सूत्रको कहते हैं—'संधिं' इत्यादि।

ત્રીજા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ

અગાઉના બીજા ઉદ્દેશમાં પ્રાણીઓની ગર્ભથી માંડી બાલાદિ વૃદ્ધાવસ્થા પર્યન્ત સઘળી અવસ્થાઓ દુઃખોથી ભરેલી છે, તે દુઃખોથી ભયભીત પ્રાણીઓને આત્મકલ્યાણના માર્ગસ્વરૂપ સંયમની આરાધના કરવી જોઈએ. આ આરાધનામાં તેણે શીત અને ઉષ્ણ પરીપહો સહન કરવા જોઈએ આ સઘળા વિષયો બતાવવામાં આવેલ છે. અર્થાત્ મોક્ષાભિલાષીએ માટે આ સઘળું સમન્વવવામાં આવેલ છે. હવે આ ત્રીજા ઉદ્દેશમાં એ સમન્વવવામાં આવશે કે જે ચારિત્રના આચરણથી રહિત છે તે ભલે શીત અને ઉષ્ણ પરીપહો સહન કરે, પાપકર્મો પણ ભલે ન કરે, તો પણ તે શ્રમણ નથી. આ અભિપ્રાયને લઈને સૂત્રકાર પ્રથમ સૂત્ર કહે છે—
'સંધિં લોગસ્સ' ઇત્યાદિ.

પ્રાણાન્=પશ્ચેન્દ્રિયવલત્રયોચ્છ્વાસનિઃશ્વાસાયુષ્કરૂપાન્ દશવિધાન્ નો સમારભેથાઃ
=નાતિપાતયેરિત્યર્થઃ । પ્રાણિનાં પ્રાણાતિપાતં મા કૃથા ઇતિ ભાવઃ । ઇતિ બ્રવીમિ-
ઇતિશબ્દઃ ઉદ્દેશપરિસમાપ્તિબોધકઃ, બ્રવીમિ=યથા ભગવન્મુશ્વાન્મયા શ્રુતં તથા
કથયામીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

॥ ઇતિ તૃતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ સમ્પૂર્ણઃ ॥ ૩-૨ ॥

વ્યપરોપણ મત કરો । ‘ ઇતિ ’ શબ્દ ઇસ ઉદ્દેશકી સમાપ્તિકા સૂચક છે ।
“બ્રવીમિ” યહ પદ બતલાતા છે કે જેસા મૈને ભગવાન્કે મુખસે સુના
છે વૈસાહી તુમસે કહા છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

॥ ત્રીસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૨ ॥

પ્રાણોનો ધાત ન કરો. “ ઇતિ ” શબ્દ આ ઉદ્દેશની સમાપ્તિનું સૂચક છે. “ બ્રવીમિ ”
આ પદ બતાવે છે કે જેવું મેં ભગવાનના મુખથી સાંભળ્યું છે તેવું જ તમોને
કહ્યું છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૨ ॥



યતઃ સર્વેષાં પ્રાણિનાં સુખેઽભિલાષો દુઃખે દ્વેષઃ, તસ્માત્ તેષાં ન હન્તાન પ્રાણાતિપાતકઃ સ્યાત્ । અન્યૈરપિ તાન્ ન વિઘાતયેત્, ધનન્તમન્યં નાનુમોદયેત્ । યદ્યપિ કુતીર્થિકા ઉદિશ્યભોજિનો દ્રવ્યલિઙ્ગિનો દણ્ડિનશ્ચ સ્વયં પાકાદિભિઃ સ્થૂલાન્ પ્રાણિનો ન ધનન્તિ, તથાપ્યન્યૈર્વાતયન્તિ ॥ સૂ. ૨ ॥

સંસારી જીવોંકો ભી યહ સુખ પ્રિય ઓર દુઃખ અપ્રિય હૈ । ઇસ લિયે ઉન જીવોંકે પ્રાણોંકો મૈં કિસી ભી રૂપમેં કષ્ટ ન પહુંચાઝ, દૂસરોંસે ભી ઉન્હેં મૈં કષ્ટ ન પહુંચવાઝ, કષ્ટ દેનેવાલે યા ઘાત કરનેવાલે અન્યકી મૈં અનુમોદના ભી ન કરૂં । યદ્યપિ કુતીર્થિક-અન્યમતાવલમ્બી સાધુ સન્યાસી, ઉદિષ્ટભોજી, દ્રવ્યલિઙ્ગી, તથા દણ્ડી આદિ સ્વયં રસોઈ આદિ પકાકર નહીં ખાતે પીતે હૈં, ઇસ પ્રકાર વે સ્વયં સ્થૂલ જીવોંકી હિંસા નહીં કરતે હૈં ફિર ભી દૂસરોંસે અપને લિયે જીવોંકી હિંસા કરાતે હી હૈં, ક્યોં કિ વે અપને નિમિત્ત પાકાદિ આરંભ દૂસરોંસે કરાતે હૈં, ઉસ આરંભ મેં જો હિંસા હોતી હૈં ઉસકા નિમિત્ત ઉન્હેં હોના પડતા હૈં ।

ભાવાર્થ--સચ્ચે મુનિ હોનેકે લિયે પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોંકા ત્યાગ મન વચન ઓર કાયસે, એવં કૃત કારિત ઓર અનુમોદનાસે કરના ચાહિયે તમી આત્મામેં સાધુતા આતી હૈં । ડપર-ડપરસે હિંસાદિ પાપ છોડનેસે અથવા હિંસાદિક પાપ સ્વયં ન કરને સે મુનિપના નહીં આતા હૈં । ઉસકી પ્રાપ્તિકે લિયે જિસ પ્રકાર જીવ સ્વયં હિંસાકા ત્યાગ કરતા હૈં, ઉસી પ્રકાર વહ દૂસરોંસે અપને નિમિત્ત હિંસાદિક નહીં કરા સકતા હૈં, ઓર

પણુ આ સુખ પ્રિય અને દુઃખ અપ્રિય છે માટે તે જીવોને હું કોઈ પણ પ્રકારે દુઃખ ન પહોંચાડું, બીજાથી પણ તેઓને દુઃખ ન પહોંચાડવું, કષ્ટ દેવાવાળા અને ઘાત કરવાવાળા બીજાઓની હું અનુમોદના પણ ન કરું કદાચ કુતીર્થિક-અન્યમતાવલમ્બી સાધુ સન્યાસી ઉદિષ્ટભોજી દ્રવ્યલિંગી તથા દંડી વિગેરે સ્વયં રસોઈ આદિ પકાવીને ખાતા પીતા નથી, તે પ્રકારે તેઓ સ્વયં સ્થૂલ જીવોની હિંસા કરતા નથી તો પણ બીજાથી પોતાને માટે જીવોની હિંસા કરાવે છે જ. કારણ કે તેઓ પોતાના નિમિત્ત પાકાદિ આરંભ બીજાઓથી કરાવે છે. તે આરંભમા જે હિંસા થાય છે તેનું નિમિત્ત તેને થવું પડે છે

ભાવાર્થ--સાચા મુનિ થવા માટે પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોનો ત્યાગ મન વચન અને કાયાથી તેમજ કૃત કારિત અને અનુમોદનાથી કરવો જોઈએ, ત્યારે જ આત્મામા સાધુતા આવે છે ઉપર-ઉપરથી હિંસાદિ પાપ છોડવાથી અને હિંસાદિક પાપ સ્વયં ન કરવાથી મુનિપણુ આવતું નથી. તેની પ્રાપ્તિ માટે જે પ્રકારે જીવ સ્વયં હિંસાને ત્યાગ કરે છે તે પ્રકારે તે બીજાઓથી પણ પોતાને નિમિત્ત હિંસાદિક

સંધાનં સન્ધિઃ=ત્રુચ્યતઃ પુનઃ સંમીલનં, સ દ્વિધા-દ્રવ્યસન્ધિર્ભાવસન્ધિશ્चेति ।
તત્ર દ્રવ્યસન્ધિઃ=કુહ્યવસ્ત્રાદેઃ સંધાનં, ભાવસન્ધિઃ=ચારિત્રમોહનીયક્ષયોપશમઃ, તં
જ્ઞાત્વા=વિદિત્વા જ્ઞાતવત્ इत्यर्थः, લોકસ્ય=ક્ષાયોપશમિકાદિભાવલોકસ્ય પ્રમાદઃ
શ્રેયસે ન ભવતિ । યદ્વા-સન્ધિઃ=શ્રુતચારિત્રલક્ષણો ધર્મારાધનાવસરઃ, તં જ્ઞાત્વા
લોકસ્ય=ષડ્જીવનિકાયરૂપસ્ય દુઃસ્વૌત્પાદનં ન કુર્યાત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સર્વત્રાત્મૌપમ્યેન સુખં દુઃખં વા જાનીયાદિત્યાહ-‘આયઓ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-આયઓ બહિયા પાસ, તમ્હા ન હંતા ન વિઘાયણ ॥૨॥

છાયા-આત્મતો વહિઃ પશ્ય । તસ્માન્ન હન્તા ન વિઘાતયેત્ ॥સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા-આત્મતઃ યથાऽऽત્મનઃ સુખં પ્રિયં, દુઃખમપ્રિયમ્, તથા-વહિઃ=
આત્મવ્યતિરિક્તાનાં પ્રાણિનામપિ પશ્ય=જાનીહિ । આત્મતુલ્યં સુખં દુઃખં સર્વપ્રા-
ણિનાં વિજ્ઞાય કિં કર્તવ્યમિત્યાહ-‘તસ્માદ્’ ઇત્યાદિ ।

ટૂટી વસ્તુકો જોડના ઇસકા નામ સંધિ હૈ । વહ દો પ્રકારકી હૈ—
(૧) દ્રવ્યસન્ધિ, (૨) ભાવસન્ધિ । મીંત ઓર વસ્ત્ર આદિકા જોડના-
યહ દ્રવ્યસન્ધિ, ઓર ચારિત્રમોહનીયકા ક્ષયોપશમ ભાવસન્ધિ હૈ । ઇસ
સન્ધિકે જ્ઞાતા મુનિકો ક્ષાયોપશમિકાદિ ભાવલોકકે વિષયમેં પ્રમાદ
કરના ઉચિત નહીં હૈ । અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકે આરાધનકા અવ-
સર મી સન્ધિ હૈ । ઇસકો જાનકર ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકો દુઃખ
ઉત્પન્ન ન કરે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

‘સમસ્ત સંસારી જીવોંકો સુખ તથા દુઃખ મેરે હી સમાન પ્રિય
ઔર અપ્રિય હૈ’ એસા જાનના ચાહિયે, ઇસે સ્પષ્ટ કરતે હૈ-‘આયઓ’ ઇ૦

સંયમી જીવ સદા ઇસ વાતકા પૂર્ણ ધ્યાન રખે કિ-જિસ પ્રકાર
મુજે સુખ પ્રિય ઔર દુઃખ અપ્રિય હૈ ઁસી પ્રકાર મુજસે ભિન્ન અન્ય સમસ્ત

ભાંગી ગયેલ વસ્તુને જોડવી તેનું નામ સંધિ છે. તે બે પ્રકારની છે.
(૧) દ્રવ્યસંધિ (૨) ભાવસંધિ. ભીંત અને વસ્ત્ર આદિનું જોડવું તે દ્રવ્યસંધિ અને
ચારિત્રમોહનીયનો ક્ષયોપશમ ભાવસંધિ છે. આ સંધિના જ્ઞાતા મુનિને ક્ષાયોપ-
શમિકાદિ ભાવલોકના વિષયમાં પ્રમાદ કરવો ઉચિત નથી. અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ
ધર્મનાં આરાધનનો અવસર પણ સંધિ છે. તેને જાણીને ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકને
દુઃખ ઉત્પન્ન ન કરે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સમસ્ત સંસારી જીવોને સુખ અને દુઃખ મારી જ માફક પ્રિય અને અ-
પ્રિય છે, એવું જાણવું જોઈએ, તેને સ્પષ્ટ કરે છે-‘આયઓ’ ઇત્યાદિ.

સંયમી જીવ સદા એ વાતનું પૂર્ણ ધ્યાન રાખે કે જે પ્રકારે મને સુખ
પ્રિય અને દુઃખ અપ્રિય છે તે પ્રકારે મારાથી ભિન્ન અન્ય સમસ્ત સંસારી જીવોને

પેક્ષ્ય=મનસિ વિચાર્ય ન કરોતિ । તત્ર=પાપકર્માનાચરણે તસ્ય કિં મુનિઃ=મુનિત્વં
 કારણં સ્યાત્ ? ન, યતસ્તત્ર પાપકર્માનાચરણે અન્યોન્યવિચિકિત્સૈવ કારણં, ન તુ
 મુનિત્વમ્ । યસ્તુ મુનિર્ભવતિ તસ્યૈવ મુનિત્વં પાપકર્માનાચરણે કારણં ભવતીતિ ।
 યદ્વા-‘કિમ્’-ઇતિ કાઁવા નિર્દેશઃ । ‘મુણી’ ઇતિ સપ્તમ્યન્તમ્, તતથ-‘મુનો’-
 ઇતિચ્છાયા । તત્ર=તસ્મિન્ મુનો=મુનિત્વે કિં પાપકર્માનાચરણમેવ કારણમ્ ? અપિ
 તુ ન, નહિ અન્યોન્યવિચિકિત્સયા પાપમનનુતિષ્ઠન્ મુનિર્ભવતીતિ । તર્હિ કથં મુનિર્ભ-
 વતિ ? ઇત્યાહ-‘સમયં તત્થુવ્વેહા’ ઇત્યાદિ । તત્ર સમયમ્=આગમમ્ ઉત્પેક્ષ્ય=
 પર્યાલોચ્ય આત્માનં વિપ્રસાદયેત્, જિનપ્રવચનરહસ્યપર્યાલોચનેનાત્માનમપ્રમાદ-
 શુભભાવનાદિભિર્વિવિધૈરુપાયૈઃ પ્રસન્નં કુર્યાદિત્યર્થઃ । શુભાધ્યવસાયપૂર્વકમાગમો-
 ક્તાનુસારેણ યદનુષ્ઠાનં તત્સર્વં મુનિત્વે કારણમિતિ ભાવઃ । इदं निश्चयनयाभिप्रायेण ।

પરસ્પરમેં આશઙ્કા, ભય અથવા લજ્જા હૈ, ન કિ મુનિત્વ । વહ તો ઇન્હીં
 સવ વાતોંકો મનમેં વિચાર કર પાપાનુબન્ધી કર્મ જો પચન પાચન એવં
 પરિગ્રહ આદિ હૈં ઉન્હેં નહીં કરતા હૈ ।

અથવા-પરસ્પરકી આશઙ્કા યા ભયાદિસે પાપકર્મોંકા નહીં કરના ક્યા
 યહી મુનિપનાકા કારણ હૈ ? ઇસ પ્રકારકી આશઙ્કાકા ઉત્તર દેતે હૈ-
 ‘સમયં તત્થુવ્વેહા’ ઇત્યાદિ । સમય શબ્દકા અર્થ ‘આગમ’ તથા
 ‘ઉત્પેક્ષ્ય’ શબ્દકા અર્થ ‘વિચાર કર’ હૈ, અર્થાત્-જિનપ્રતિપાદિત આ-
 ગમકે રહસ્યકા વિચાર કર ‘અપ્પાણં વિપ્પસાય’ આત્માનં વિપ્રસાદયેત્,
 મુનિ અપની આત્માકો અપ્રમાદ એવં શુભ ભાવનાદિક વિવિધ ઉપાયોંસે
 પ્રસન્ન કરે । શુભ અધ્યવસાયપૂર્વક આગમપ્રતિપાદિત વિધિકે અનુસાર જો
 અનુષ્ઠાન મુનિ-અવસ્થામેં કરનેયોગ્ય કહે ગયે હૈં વે સવ કરે, યે હી અનુ-
 ણાન મુનિપનામેં કારણ હૈ । यह कथन निश्चय नयके अभिप्रायसे किया है ।

અથવા લગ્ગ છે, ન કે મુનિત્વ. તેઓ (મુનિઓ) તો આ સઘળી વાતોનો મનમાં વિચાર
 કરી પાપાનુબન્ધી કર્મ જે પચન-પાચન અને પરિગ્રહ આદિ છે તેને કરતા નથી

અથવા-પરસ્પરની આશઙ્કા અથવા ભયાદિથી પાપકર્મોંનુ નહિ કરવું તે
 શું મુનિપણાનુ કારણ છે ? આ પ્રકારની આશઙ્કાનુ સ્પષ્ટીકરણ કરે છે-‘સમયં
 તત્થુવ્વેહા’ ઇત્યાદિ સમય શબ્દનો અર્થ ‘આગમ’ તથા ‘ઉત્પેક્ષ્ય’ શબ્દનો
 અર્થ ‘વિચાર કરી’ છે અર્થાત્ જિનપ્રતિપાદિત આગમના રહસ્યનો વિચાર કરી
 ‘અપ્પાણં વિપ્પસાય’ આત્માનં વિપ્રસાદયેત્-મુનિ પોતાના આત્માને અપ્રમાદ અને શુભ
 ભાવનાદિક વિવિધ ઉપાયોથી પ્રસન્ન કરે શુભ અધ્યવસાયપૂર્વક આગમપ્રતિપાદિત વિધિ-
 અનુસાર જે અનુષ્ઠાન મુનિ અવસ્થામાં કરવાયોગ્ય કહેવામાં આવેલ છે તે સઘળા કરે
 તે જ અનુષ્ઠાન મુનિપણાનું કારણ છે. આ કથન નિશ્ચયનયના અભિપ્રાયથી કરેલ છે.

પાપકર્માનાચરણમાત્રેણ શ્રમણો ન ભવતિ કિં તુ સમ્યગાસ્રવનિરોધેનેત્યાહ-
'જમિણં' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જમિણં અન્નમન્નવિતિગિચ્છાણ પહિલેહાણ ન કરેહ
પાવં કમ્મં, કિં તત્થ મુણી કારણં સિયા ?, સમયં તત્થુવ્વેહાણ
અપ્પાણં વિપ્પસાયણ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—યદિદમ્ અન્યોન્યવિચિકિત્સયા પ્રત્યુપેક્ષ્ય ન કરોતિ પાપં કર્મ ।
કિં તત્ર મુનિઃ કારણં સ્યાત્ ? સમયં તત્રોત્પ્રેક્ષ્ય આત્માનં વિપ્રસાદયેત્ ॥ મૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—યદિદં પાપં=પાપાનુવન્ધિ કર્મ=પચનપાચનપરિગ્રહાદિલક્ષણમ્ અન્યો-
ન્યવિચિકિત્સયા-વિચિકિત્સા=આશંકા ભયં લજ્જા વા, અન્યોન્યસ્ય=પરસ્પરસ્ય યા
વિચિકિત્સા=આશંકા, યદ્વા-અન્યોન્યસ્માત્=પરસ્પરતો ભયં લજ્જા વા, તયા પ્રત્યુ-

ન અપને લિયે હિંસા કરનેવાલોંકી અનુમોદના હી કર સકતા હૈ । યદિ
એસા કરતા હૈ તો વહ સાધુ નહીં કહલા સકતા । જો સાધુ હો કર
જીવહિંસાકે ભયસે સ્વયં પાકાદિક ક્રિયા તો નહીં કરતે હૈં પરન્તુ ઉદિષ્ટ
ભોજન લેતે હૈં, તથા અપને લિયે દૂસરોંસે ભોજન તૈયાર કરવાતે હૈં વે નવ
કોટિસે હિંસા કે ત્યાગી નહીં હૈં, અતઃ વે સાધુ ભી નહીં હૈં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

પાપ કર્મ નહીં કરને માત્રસે પ્રાણી મુનિ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ કર્મોં
કે આસ્રવકો ભલી પ્રકાર રોકનેસે હી વહ મુનિ હોતા હૈ, અવ હસી
વાતકો સ્પષ્ટ કરતે હૈં—'જમિણં' ઇત્યાદિ ।

જો મુનિ-અવસ્થામૈં પાપકર્મોં કે નહીં કરનેકે કારણ હૈં વે પ્રત્યક્ષ
હૈં । વે યે હૈં—આશંકા, ભય અથવા લજ્જા । અર્થાત્ મુનિ હો કર ભી જો
પાપ નહીં કરતા હૈં ઉસમૈં પ્રધાન કારણ પરસ્પરકી અથવા એક દૂસરેસે

કરાવતા નથી, અને પોતાને માટે હિંસા કરવાવાળાઓની અનુમોદના પણ કરતા
નથી. કહાય એવું કરે તો તેને સાધુ કહેવામાં આવતો નથી જે સાધુ બની
છપ હિંસાના ભયથી સ્વયં પાકાદિક ક્રિયા નથી કરતા પરંતુ ઉદિષ્ટ ભોજન લે છે.
તથા પોતાને માટે બીજાઓથી ભોજન તૈયાર કરાવે છે તેઓ નવ કોટિથી હિંસાના
ત્યાગી નથી તેમજ તેઓ સાચા સાધુ પણ નથી ॥ સૂ૦ ૨ ॥

પાપકર્મ નહિ કરવા માત્રથી મુનિ બનતા નથી પણ કર્મોના આસ્રવને ભલી
પ્રકાર રોકવાથી જ મુનિ થાય છે, તે વાતને સ્પષ્ટ કરે છે—'જમિણં' ઇત્યાદિ.

જે મુનિ અવસ્થામાં પાપકર્મો નહિ કરવાના કારણે છે તે પ્રત્યક્ષ છે. તે
આ છે—આશંકા ભય અથવા લજ્જા. અર્થાત્ મુનિ બનીને પણ જે પાપ કરતા નથી
તેમાં પ્રધાન કારણ પરસ્પરની અથવા એક બીજાઓથી પરસ્પરમાં આશંકા ભય

વ્યવહારનયે તુ યઃ પરસ્પરાશઙ્કયા ભયાદિના વા કેનચિત્ કારણેનાઽઽધા-
કર્માદિ પરિવર્જયતિ, પ્રતિલેખનાદિકં કરોતિ, માસક્ષપણાદિતપશ્ચાચરતિ, તસ્ય
મુનિત્વે તદનુષ્ઠાનં કારણં ભવત્યેવ, તાદૃશાનુષ્ઠાનસ્ય નિશ્ચયનયાશ્રિતમુનિત્વહેતુ-
શુભાધ્યવસાયજનકત્વાત્ । નિશ્ચયમુપલબ્ધું વ્યવહારઃ શરણીકરણીયો ભવતિ, યથા
નદ્યાદિતરણં કરચરણપ્રચાલનાદિવ્યવહારેણ વિના નોપપદ્યતે. યથા વા રજ્જુ-
સોપાનાદ્યાલમ્બનેન વિના પ્રસાદશિખરારોહણં ન સંજાયતે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આત્મનઃ પ્રસન્નતા સંયમારાધનતત્પરસ્ય ભવતિ, અતસ્તત્ર પ્રમાદો ન કાર્ય
ઇત્યાહ—‘ અણ્ણપરમં ’ ઇત્યાદિ ।

વ્યવહાર નયકી અપેક્ષાસે તો જો પરસ્પરકી આશઙ્કા અથવા ભયા-
દિક કિસી કારણકે વશસે આધાકર્માદિક દોષોંકા પરિહાર કરતા હૈ,
સમયાનુસાર પ્રતિલેખનાદિક ક્રિયાઓંકો, એવં માસક્ષપણાદિક તપકો
આચરતા હૈ, ઉસ વ્યક્તિકે મુનિપનેમં યે સબ વાતેં કારણ હોતી હૈં । વ્ય-
વહાર, નિશ્ચયકા હેતુ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકારકે વ્યાવહારિક અનુષ્ઠાન
નિશ્ચયનયકી અપેક્ષાસે મુનિપનેકે કારણભૂત શુભ અધ્યવસાયકે ઉત્પાદક
હોતે હૈં । નિશ્ચયકો પાનેકે લિયે વ્યવહારકા અવલમ્બન કરના હી પડતા
હૈ । જૈસે નદી આદિકા તૈરના હાથ પૈર આદિકે ચલાનેરૂપ વ્યવહાર ક્રિયા
કે વિના, અથવા રજ્જુ-રસસી યા સીઢી આદિકે અવલમ્બન વિના મકાન
કે ઉપર ચઢના નહીં હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આત્મામેં પ્રસન્નતા સંયમકે આરાધનમેં તત્પર મુનિકો હી હોતી હૈ ।
ઇસ લિયે સંયમકે આરાધનમેં મુનિકો પ્રમાદ નહીં કરના ચાહિયે, ઇસ
વાતકો પ્રગટ કરતે હૈં—‘ અણ્ણપરમં ’ ઇત્યાદિ ।

વ્યવહારનયની અપેક્ષાથી તો જે પરસ્પરની આશંકા અને ભયાદિક કોઈ
કારણના વશથી આધાકર્માદિક દોષોના પરિહાર કરે છે, સમયાનુસાર પ્રતિલેખ-
નાદિ ક્રિયાઓને તેમજ માસક્ષપણાદિક તપને આચરે છે, તે વ્યક્તિના મુનિપણામાં
એ સઘળી વાતો કારણ બને છે. વ્યવહાર, નિશ્ચયનો હેતુ થાય છે આ પ્રકારના
વ્યાવહારિક અનુષ્ઠાન નિશ્ચયનયની અપેક્ષાથી મુનિપણાના કારણભૂત શુભ અધ્ય-
વસાયના ઉત્પાદક બને છે નિશ્ચય મેળવવા માટે વ્યવહારનુ અવલંબન લેવું જ
પડે છે. જેમ નદી આદિનુ તરવું હાથપગ આદિના ચલાવવારૂપ વ્યવહાર કર્યા
બગર, અને રજ્જુ-રસસી અગર સીડી આદિના અવલંબન વિના મકાન ઉપર
ચઢવું બની શકતું નથી ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આત્મામાં પ્રસન્નતા સંયમ આરાધનમાં તત્પર મુનિને જ થાય છે, માટે
સંયમ આરાધનમાં મુનિએ પ્રમાદ નહિ કરવો જોઈએ, એ વાતને પ્રગટ કરે
છે—‘ અણ્ણપરમં ’ ઇત્યાદિ.

યદ્વા-પરસ્પરાશક્કયા ભયેન લજ્જયા વા યદાધાકર્માદીનિ પરિહરતિ, યથા-કાલં પ્રતિલેખનાદીનિ કરોતિ, માસક્ષપણાનિ, આતાપનાદિકં ચ સમાચરતિ, તદિદં સર્વં કિં મુનિત્વે કારણં સ્યાન્ન વા? इति शिष्याशङ्कानिराकरणाय कथयति-‘जमिणं’ इत्यादि । अत्रोच्यते-जिनशासने पदार्थतत्त्वाधिगमाय नयद्वयमुपादीयते । तत्र तावन्निश्चयनयमाश्रित्य अन्योपाध्यनावेशेन परिवर्जिताऽकल्पनीयव्यापारत्वमेव मुनित्वे कारणम् । मुनित्वं हि शुभान्तःकरणपरिणामेन प्रवचनोक्तविधिनाऽनुष्ठित-क्रियस्यैव भवति, नान्यस्य ।

અથવા-પરસ્પરકી આશઙ્કાસે ભયસે યા લજ્જાસે જો આધાકર્માદિક દોષોંકા પરિહાર કરતા હૈ, ઓર સમયાનુસાર પડિલેહનાદિક ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ, માસસ્વમ્મણ ઓર આતાપના આદિ યોગોંકા અનુષ્ઠાન કરતા હૈ, યે સવ ક્રિયાઈ કયા મુનિપનેમ્ કારણ હૈં યા નહીં? इस प्रकार की शिष्यकी आशङ्काका परिहार करनेके लिये सूत्रकारने “जमिणं” इत्यादि सूत्र कहा है । जिनशासनमें पदार्थके स्वरूपको जाननेके लिये दो नयोंका विधान है-(१) निश्चय नय और (२) व्यवहार नय । इनमें प्रथम निश्चयनयकी अपेक्षासे जो अन्य किसी सांसारिक उपाधिके संसर्गसे रहित हो कर अकल्पनीय व्यापारसे दूर हो चुका है, इस प्रकारका उसका रहन-सहन ही उसके मुनिपनेमें कारणभूत है, क्योंकि कि शुभ अन्तःकरणके परिणामसे शास्त्रोक्त विधिके अनुसार अपनी क्रियाओंको करनेवाले व्यक्तिके ही मुनिपना होता है, अन्यको नहीं ।

અથવા-પરસ્પરની આશંકાથી ભયથી, લજ્જાથી જે આધાકર્માદિક દોષોનો પરિહાર કરે છે, અને સમયાનુસાર પડિલેહનાદિક ક્રિયાઓ કરે છે, માસખમણ અને આતાપના આદિ યોગોનું અનુષ્ઠાન કરે છે, એ સઘળી ક્રિયાઓ શું મુનિપણનું કારણ છે યા નહિ? આ પ્રકારની શિષ્યની આશંકાનો પરિહાર કરવા માટે સૂત્રકાર “જમિણં” ઇત્યાદિ સૂત્ર કહેલ છે. જીનશાસનમાં પદાર્થના સ્વરૂપને જાણવા માટે બે નયોનું વિધાન છે. (૧) નિશ્ચયનય અને (૨) વ્યવહારનય. તેમાં પ્રથમ નિશ્ચયનયની અપેક્ષાથી જે અન્ય કોઈ સાંસારિક ઉપાધિના સંસર્ગથી રહિત થઈને અકલ્પનીય વ્યાપારથી દૂર થયેલ છે, આ પ્રકારનું તેનું રહન-સહન જ તેના મુનિપણનું કારણભૂત છે. કારણ કે શુભ અંતઃકરણના પરિણામથી શાસ્ત્રોક્ત વિધિ-અનુસાર પોતાની ક્રિયાઓને કરવાવાળી વ્યક્તિને જ મુનિપણ થાય છે. બીજાને નહિ.

ત્યર્થઃ, સદા=સર્વસ્મિન્ કાલે, વીરઃ=કર્મવિદારણોત્સાહવાન્, યાત્રામાત્રયા=યાત્રા-
સંયમયાત્રા તદર્થે યા માત્રા=જિનપ્રવચનોક્તમાહારાદિપ્રમાણં તયા, શરીરં યાપ-
યેત્=નિર્વહેત્-ગમયેદિત્યર્થઃ ।

પ્રમાણાધિકેનાહારેણ રાજપિણ્ડાદિના વા ઇન્દ્રિયનિગ્રહો ન ભવતિ, તસ્માદ્
ધર્મોપાર્જનસહાયભૂતસ્ય શરીરસ્ય ધારણાર્થં પ્રમાણોપેતમાહારમઙ્ગીકુર્યાત્ । એવં
કૃતે સતિ પ્રમાદો ન ભવતીતિ ભાવઃ । ઉક્તञ્ચ—

“ આહારાર્થં કર્મ કુર્યાદનિન્દ્યં, સ્યાદાહારઃ પ્રાણસંધારણાર્થમ્ ।

પ્રાણા ધાર્યાસ્તત્ત્વજિજ્ઞાસનાર્થં, તત્ત્વં જ્ઞેયં યેન દુઃસ્વાદ્ વિમુચ્ચેત્ ” ॥૧॥ઈતિ॥સૂં૦૪॥

ઇન્દ્રિયોંકો મી ઉત્તેજના મિલતી હૈ, ઇસસે ચતુર્થ વ્રતકી રક્ષામેં મી વાધા
ઉપસ્થિત હોતી હૈ । ઇસી વાતકા વિચારકર સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘જાયા-
માયાએ ’ યાત્રામાત્રયા, ઇતિ, અર્થાત્—સંયમયાત્રાકે નિર્વાહયોગ્ય આહા-
રાદિકકા ઉચિત પ્રમાણમેં લેના વતલાતે હૈ । મુનિ કી સદા યહી ભાવના
રહની ચાહિયે કિ—મેં જૈસે મી બને વૈસે નિર્દોષ ચારિત્રકી આરાધના
કરતા હુઆ કર્મોંકો નષ્ટ કરૂં । ઇસ તરહકે ઉત્સાહસે સંપન્ન વહ મુનિ
અપની સંયમરૂપી યાત્રાકી નિર્વિઘ્ન પરિસમાપ્તિકે લિયે જિનપ્રવચનમેં
પ્રતિપાદિત પ્રમાણકે અનુરૂપ આહારાદિ ગ્રહણ કરે । ઇસસે હી અપને
શરીરકા નિર્વાહ કરે । પ્રમાણસે અધિક આહારકે લેનેસે અથવા અક-
લ્પનીય રાજપિણ્ડાદિકસે ઇન્દ્રિયોંકા નિગ્રહ નહીં હોતા હૈ । ઇસલિયે
ધર્મકે ઉપાર્જનમેં સહાયક શરીરકી રક્ષાકે લિયે શાસ્ત્રમેં પ્રતિપાદિત
માત્રાનુસાર આહાર લેના ચાહિયે । કહા મી હૈ—

ઉત્તેજના મળે છે તેથી ચતુર્થ વ્રતની રક્ષામાં પણ વાધા ઉપસ્થિત થાય છે.
આ વાતનો વિચાર કરી સૂત્રકાર કહે છે—“ જાયામાયાએ ” યાત્રામાત્રયા, ઇતિ
અર્થાત્—સંયમયાત્રાના નિર્વાહયોગ્ય આહારાદિકનુ ઉચિત પ્રમાણમાં લેવું બતાવેલ છે.
સદા મુનિની એ ભાવના રહેલી જોઈએ કે હું જ્યાંસુધી બને ત્યાં સુધી નિર્દોષ
ચારિત્રની આરાધના કરીને કર્મોનો નાશ કરું, આવા પ્રકારના ઉત્સાહથી સંપન્ન તે મુનિ
પોતાની સંયમરૂપી યાત્રાની નિર્વિઘ્ન પરિસમાપ્તિ માટે જનપ્રવચનમાં પ્રતિપા-
દિત પ્રમાણને અનુરૂપ આહારાદિ ગ્રહણ કરે, તેનાથી જ પોતાના શરીરનો નિર્વાહ
કરે. પ્રમાણથી અધિક આહાર લેવાથી અને અકલ્પનીય રાજપિણ્ડાદિકથી ઇન્દ્રિ-
યોનો નિગ્રહ બનતો નથી માટે ધર્મના ઉપાર્જનમાં સહાયક શરીરની રક્ષા માટે
શાસ્ત્રમાં પ્રતિપાદિત માત્રાનુસાર આહાર લેવો જોઈએ, કહ્યું પણ છે—

મૂલમ્—અણણપરમં નાળી, નો પમાયણ કયાઈ વિ ।

આયગુત્તે સયા વીરે, જાયમાયાઈ જાવણ ॥સૂ૦ ૪॥

છાયા—અનન્યપરમં જ્ઞાની નો પ્રમાદયેત્ કદાચિદપિ ।

આત્મગુપ્તઃ સદા વીરઃ યાત્રામાત્રયા યાપયેત્ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—જ્ઞાની=સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ, અનન્યપરમં=નાન્યત્ પરમમ્ ઉત્કૃષ્ટં યસ્માત્-અનન્યપરમં=ચારિત્રં, તત્ કદાચિદપિ નો પ્રમાદયેત્=કસ્મિન્નપિ કાલે ચારિત્રે પ્રમાદં ન કુર્યાદિત્યર્થઃ । કેનોપાયેન પ્રમાદો વારણીયઃ? इत्यत आह—‘आत्मगुप्त’ इत्यादि । आत्मगुप्तः=आत्मना=इन्द्रियनोइन्द्रियेण गुप्तः, इन्द्रियनोइन्द्रियनिग्रही-

જ્ઞાની-સમ્યગ્દૃષ્ટિ મનુષ્ય ચારિત્રમેં કિસી મી સમય પ્રમાદ ન કરે । ‘અનન્યપરમ’ શબ્દકા અર્થ ચારિત્ર હૈ, ક્યોં કિ “અન્યત્ પરમં યસ્માત્ ન” જિસસે દૂસરી કોઈ વસ્તુ ઉત્કૃષ્ટ નહીં હૈ વહ અનન્યપરમ હૈ । શાસ્ત્રમેં સાક્ષાત્ મોક્ષકી પ્રાપ્તિ કરાનેવાલા ચારિત્ર હી બતલાયા ગયા હૈ અતઃ વહી સર્વોત્કૃષ્ટ હૈ । પ્રમાદ ચારિત્રકા વિઘાતક હોતા હૈ इसी लिये वह सम्यग्दृष्टिके लिये वर्जनीय कहा है । પ્રમાદકો દૂર કરનેકા ઉપાય બતલારનેકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘આયગુત્તે’ इत्यादि, अर्थात् मुनि को सदा आत्मगुप्त-इन्द्रिय और नोइन्द्रिय-मनका विजयी बनना चाहिये । इन पर जब तक विजयरूपी अङ्कुश वह प्राप्त नहीं कर लेता है तब तक इनके आधीन बना हुआ साधु प्रमादसे रहित नहीं हो सकता । जिह्वा-इन्द्रियकी लोलुपतासे वह मात्रासे भी अधिक आहार ले लेता है । इस से प्रमादकी वृद्धि होती है । तथा अधिक सरस-रसीला आहार लेनेसे

જ્ઞાની-સમ્યગ્દૃષ્ટિ મનુષ્ય ચારિત્રમાં કોઈ પણ સમય પ્રમાદ ન કરે.

‘અનન્યપરમ’ શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે કારણ કે “અન્યત્ પરમં યસ્માત્ ન” જેનાથી બીજી કોઈ વસ્તુ ઉત્કૃષ્ટ નથી તે અનન્યપરમ છે. શાસ્ત્રમાં સાક્ષાત્ મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરાવનાર ચારિત્ર જ બતાવવામાં આવેલ છે માટે તે જ સર્વોત્કૃષ્ટ છે. પ્રમાદ ચારિત્રનો વિઘાતક બને છે, માટે તે સમ્યગ્દૃષ્ટિ માટે વર્જનીય કહેલ છે. પ્રમાદને દૂર કરવાનો ઉપાય બતાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘આયગુત્તે’ इत्यादि. अर्थात् मुनिये सदा आत्मगुप्त-इन्द्रिय અને નોઈન્દ્રિય-મનના વિજયી બનવું જોઈએ. તેના ઉપર જ્યાંસુધી વિજયરૂપી અંકુશ તે પ્રાપ્ત નથી કરી લેતા ત્યાં સુધી તેના આધીન બનેલા સાધુ પ્રમાદથી રહિત બની શકતા નથી. જીભ ઇન્દ્રિયની લોલુપતાથી તે માત્રાથી પણ અધિક આહાર લઈ લે છે. તેનાથી પ્રમાદની વૃદ્ધિ થાય છે. તથા અધિક સરસ-રસીલા આહાર લેવાથી ઇન્દ્રિયોને પણ

ટીકા—રૂપેષુ=ચક્ષુર્વિષયીભૂતેષુ મનોજ્ઞેષુ રૂપેષુ વિરાગં ગચ્છેત્, રૂપં હિ શબ્દાદ્યપેક્ષયાસ્તીવાક્ષિપતિ ચિત્તં, તસ્માદિહ રૂપગ્રહણમ્ । રૂપેષુ વૈરાગ્યસદ્ભાવે સતિ શેષવિષયેષ્વપિ તસ્ય સુતરાં સંભવાદિતિ ભાવઃ । મહત્સુ=દિવ્યભાવેન યાન્યવસ્થિતાનિ રૂપાણિ તેષુ, સૂત્રે આર્ષત્વાદેકવચનમ્, ક્ષુદ્રકેષુ=ક્ષુદ્રેષુ રૂપેષુ યથા તિરશ્ચાં, મનુષ્યાણાં તુ મધ્યમાનિ રૂપાણિ, તેષ્વપિ વિરાગં ગચ્છેદિતિ સમ્બન્ધઃ । આદ્યન્તરૂપગ્રહણેન મધ્યમાનામપિ ગ્રહણમ્ । અત્ર સપ્તમ્યર્થે તૃતીયા પ્રાકૃતત્વાત્ । યદ્વા-एकैकं રૂપં ત્રિવિધં-દિવ્યમધ્યમક્ષુદ્રભેદાત્ । કુબ્જાદીનાં ક્ષુદ્રાણિ, અન્યેષાં મધ્યમાનિ, કેષાંચિત્ પૂર્વભવસુકૃતિનાં દિવ્યાનિ રૂપાણિ ભવન્તિ ॥ સૂ. ૫ ॥

સાધુકા કર્તવ્ય છે કે વહ ચક્ષુરિન્દ્રિયકે વિષયભૂત જવ જવ સુંદર રૂપ હોં તવ-તવ ઉનમેં અસારતા કી ભાવના ભા કર ઉન સે વિરક્ત હોવે । સૂત્રમેં ‘રૂપેસુ-રૂપેષુ’ જો યહ પદ દિયા છે ઉસસે સૂત્રકાર ઇસ વાતકો વતલાતે હેં કિ રૂપ હી શબ્દાદિક વિષયોંકી અપેક્ષા ચિત્તકો અપની ઓર અધિક આકૃષ્ટ કિયા કરતે હેં । મુનિકો જવ રૂપમેં વૈરાગ્યકી જાગૃતિ હો જાવેગી તવ અન્ય રસાદિક વિષયોંમેં તો સ્વતઃ હી ઉસકે ચિત્તમેં વૈરાગ્ય જાગૃત હો જાવેગા । ઇસ લિયે સૂત્રકાર કહતે હેં કિ જો વહુત હી જ્યાદા સુન્દર સ્વરૂપવાન્-દિવ્ય રૂપવાલા હૈ, જૈસે વિશિષ્ટ રૂપ દેવતાઓંમેં મધ્યમ રૂપ મનુષ્યોંમેં ઓર સામાન્ય રૂપ તિર્યશ્ચોંમેં હોતે હેં-ઉનમેં કમી મી ઇષ્ટ-અનિષ્ટકી કલ્પના સે અપને ચિત્તકો વાસિત ન કરે, સદા ઉનમેં વિરક્ત બુદ્ધિ હી રહે । દિવ્ય, મધ્યમ ઓર ક્ષુદ્રકે ભેદસે રૂપ ત્રીન પ્રકાર કે હેં । કુબ્જ આદિમેં ક્ષુદ્રરૂપ, ઇનસે અન્યમેં મધ્યમ રૂપ ઓર કિન્હીં પુણ્યાત્માઓંમેં દિવ્યરૂપ હોતે હેં ॥ સૂ. ૫ ॥

સાધુનુ કર્તવ્ય છે કે તે ચક્ષુરિન્દ્રિયના વિષયભૂત જ્યા જ્યાં સુંદર રૂપ હોય ત્યા ત્યા તેમાં અસારતાની ભાવના ભાવીને તેનાથી વિરક્ત બને. સૂત્રમાં ‘રૂપેસુ-રૂપેષુ’ ને આ પદ આપેલ છે તેનાથી સૂત્રકાર એ વાતને સમજાવે છે કે રૂપજ શબ્દાદિક વિષયોની અપેક્ષા ચિત્તને પોતાની તરફ અધિક આકૃષ્ટ કર્યા કરે છે, મુનિને જ્યારે રૂપમાં વૈરાગ્યની જાગૃતિ થઈ જશે ત્યારે અન્ય રસાદિક વિષયોમાં તો સ્વતઃ જ તેના ચિત્તમાં વૈરાગ્ય જાગૃત થઈ જશે માટે સૂત્રકાર કહે છે કે જે ઘણા જ સુંદર સ્વરૂપવાન દિવ્ય સ્વરૂપવાળા છે-જેવી રીતે વિશિષ્ટ રૂપ દેવતાઓમાં, મધ્યમરૂપ મનુષ્યોમાં, અને સામાન્ય રૂપ તિર્યચોમાં હોય છે તેમાં કોઈ વખત પણ ઇષ્ટ-અનિષ્ટની કલ્પનાથી પોતાના ચિત્તને વાસિત ન કરે, સદા તેમાં વિરક્ત બુદ્ધિ જ રાખે. દિવ્ય મધ્યમ અને ક્ષુદ્રના ભેદથી રૂપ ત્રણ પ્રકારના છે કુબ્જ આદિમાં ક્ષુદ્રરૂપ, તેનાથી અન્ય મધ્યમરૂપ અને કોઈ પુણ્યાત્માઓમાં દિવ્ય રૂપ હોય છે ॥ સૂ. ૫ ॥

આત્મગુપ્તઃ કથં સ્યાદિતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ-‘વિરાગં’ इत्यादि ।

મૂલમ્—વિરાગં રૂવેસુ ગચ્છિજ્ઞા મહયા खुडुएहिं वा ॥सू० ५॥

છાયા—વિરાગં રૂપેષુ ગચ્છેત્ મહત્સુ क्षुलकेषु वा ॥ सू० ५ ॥

“आहारार्थं कर्म कुर्यादनिन्द्यं, स्यादाहारः प्राणसंधारणार्थम् ।

प्राणा धार्यास्तत्त्वजिज्ञासनार्थं, तत्त्वं ज्ञेयं येन दुःखाद् विमुच्येत् ॥१॥”

આહારકે લિયે અનિન્દ્ય કર્મ કરે । આહારકા ગ્રહણ પ્રાણોંકી રક્ષા કે નિમિત્ત છે । પ્રાણોંકી રક્ષા તત્ત્વોંકી જિજ્ઞાસાકે લિયે છે, ઓર તત્ત્વ-જ્ઞાન અપનેકો (જીવકો) સાંસારિક દુઃખોંસે છુડાનેકે લિયે હોતા છે ॥

इसलिये साधुको आहारकी प्राप्तिके लिये अनिन्द्य कर्म (एषणा-समितियुक्त प्रवृत्ति) करना चाहिये निन्द्य कर्म नहीं । प्राणोंकी रक्षाके लिये ही आहार ग्रहण करना चाहिये, विषयादिकोंकी या प्रमादकी पुष्टि के लिये नहीं । तत्त्वोंकी विचारणा करनेके लिये ही प्राणोंकी रक्षा करनी चाहिये, दूसरे जीवोंकी हिंसादिके लिये नहीं । तत्त्वज्ञानका विचार भी सांसारिक दुःखोंसे छूटनेके लिये करना चाहिये, मान माया आदि कषायकी पुष्टिके लिये नहीं । इसलिये संयमयात्राका निर्वाहके लिये मात्रानुसार आहार लेना चाहिये जिससे प्रमाद नहीं हो ॥ सू० ४ ॥

मुनि-आत्मगुप्त-इन्द्रिय और मनका निग्रह करनेवाला कैसे बने ? ऐसी शिष्यकी जिज्ञासाका समाधान करते हैं-‘विरागं’ इत्यादि ।

“आहारार्थं कर्म कुर्यादनिन्द्यं, स्यादाहारः प्राणसंधारणार्थम् ।

प्राणा धार्यास्तत्त्वजिज्ञासनार्थं, तत्त्वं ज्ञेयं येन दुःखाद् विमुच्येत्” ॥१॥

આહાર માટે અનિન્દ્ય કર્મ કરે. આહારનું ગ્રહણ પ્રાણોની રક્ષા નિમિત્ત છે. પ્રાણોની રક્ષા તત્ત્વોની જિજ્ઞાસા માટે છે, અને તત્ત્વજ્ઞાન પોતાને (જીવને) સાંસારિક દુઃખોથી છોડાવવા માટે થાય છે.

માટે સાધુએ આહારની પ્રાપ્તિ માટે અનિન્દ્ય કર્મ (એષણાસમિતિયુક્ત પ્રવૃત્તિ) કરવું જોઈએ, નિન્દ્ય કર્મ નહિ. પ્રાણોની રક્ષા માટે જ આહાર ગ્રહણ કરવો જોઈએ, વિષયાદિકોની અને પ્રમાદની પુષ્ટિ માટે નહિ. તત્ત્વોની વિચારણા કરવા માટે જ પ્રાણોની રક્ષા કરવી જોઈએ – બીજા જીવોની હિંસાદિક માટે નહિ. તત્ત્વજ્ઞાનનો વિચાર પણ સાંસારિક દુઃખોથી છુટવા માટે કરવો જોઈએ – માન માયા આદિ કષાયની પુષ્ટિ માટે નહિ. માટે સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે માત્રા-નુસાર આહાર લેવો જોઈએ જેથી પ્રમાદ ન થાય. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

मुनि, आत्मगुप्त-इन्द्रिय અને मनનો નિગ્રહ કરનાર કેવી રીતે બને ? એવી શિષ્યની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરે છે-‘વિરાગં’ ઇત્યાદિ.

देवानां नारकिणां चागतिर्द्विविधैव, तेषां तिर्यग्मनुष्यगतिभ्यामेवाऽऽगमनात् । गतिरप्येवं भवति, केवलं मनुष्याणां गतिः पञ्चविधा प्रोक्ता, तेषां मोक्षगतिसंभवात् । तामागतिं गतिं च, परिज्ञाय=संसारचक्रे घटीयन्त्रवत् परिभ्रमणरूपामागतिं गतिं च बुद्ध्वा मनुष्याणां मोक्षगतिसंभवं चावगत्य स आगतिगतिस्वरूपाभिज्ञः, यद्वा-संसारदुःखभीतो मोक्षगतिसुखगवेषी, रूपादिषु विषयेषु अन्ताभ्याम्=स्वसत्तायां मुक्तेरन्तकारित्यादन्तौ=रागद्वेषौ ताभ्याम् द्वाभ्यामपि=रागद्वेषाभ्याम् अदृश्यमानः= अवर्तमानः, रागद्वेषरहित इत्यर्थः, न छिद्यते केनचित्=खड्गादिना, न भिद्यते कण्टकसूचीशूलादिना, न दह्यते दहनादिना, न हन्यते कशादिना नरकगत्यानुपूर्-

नरकगतिमें उत्पन्न नहीं होता । इसी प्रकार नारकी जीव भी नरकसे निकल कर दूसरे भवमें देवगति या नरकगतिमें उत्पन्न नहीं होता । मनुष्य एवं तिर्यञ्च तो मर कर दूसरे भवमें मनुष्य, तिर्यञ्च, देव और नरकगतिमें जन्म ले सकता है । मनुष्योंकी गति मुक्तिप्राप्तिकी अपेक्षासे पांच प्रकारकी भी कही गई है । इस प्रकार संसारचक्रमें घटी यन्त्रके समान परिभ्रमणरूप आगति और गति, एवं मनुष्योंमें मोक्ष-गतिकी संभवताको जानकर उनके स्वरूपका ज्ञाता, अथवा संसारके दुःखों से भयभीत हो कर मोक्षगतिके सुखका गवेषी वह साधु रूपादि विषयो में राग और द्वेषसे रहित हो कर सर्वलोकमें न किसीके द्वारा तलवार आदिसे हाथ पैर आदि में कभी छेदा जाता है, न कण्टकसूची शूलादिसे भेदा जाता है, न अग्नि आदिसे जलाया जाता है और न कोड़े आदिसे मारा जाता है और न उसके नरकगत्यानुपूर्वीं आदिका उदय

देवगतिमा અને નરકગતિમા ઉત્પન્ન થતા નથી. તે પ્રકારે નારકી જીવ પણ નરકથી નીકળી બીજા ભવમાં દેવ ગતિ અગર નરક ગતિમાં ઉત્પન્ન થતાં નથી. મનુષ્ય અને તિર્યચ્છ તો મરીને બીજા ભવમાં મનુષ્ય તિર્યચ્છ દેવ અને નરકગતિમા જન્મ લઈ શકે છે મનુષ્યોની ગતિ મુક્તિપ્રાપ્તિની અપેક્ષાથી પાંચ પ્રકારની પણ કહેવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારે સંસારચક્રમાં ઘટી-યન્ત્રની સમાન પરિભ્રમણરૂપ આગતિ અને ગતિ તેમજ મનુષ્યોમાં મોક્ષગતિની સંભવતાને જાણીને તેના સ્વરૂપના જ્ઞાતા અને સંસારના દુઃખોથી ભયભીત બનીને મોક્ષગતિના સુખના ગવેષી તે સાધુ, રૂપાદિ વિષયોમાં રાગ અને દ્વેષથી રહિત બનીને સર્વલોકમાં કોઈનાથી પણ તલવાર આદિથી હાથ પગ આદિમાં કંઈપણ છેદવામાં આવતા નથી. તેમજ કણ્ટક સૂચી શૂલાદિથી ભેદવામાં આવતા નથી. તેમજ નથી અગ્નિથી બાળવામાં આવતા, તેમજ નથી કોરડા આદિથી મારવામાં

કિંમલમ્બ્યૈતત્ કર્તવ્યમિત્યાહ—‘ આગઈ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—આગઈ ગઈ પરિણાય દોહિ વિ અંતેહિં અદિસ્સ-
માણે । સે ન છિજ્જઈ ન મિજ્જઈ ન ડજ્જઈ ન હમ્મઈ કંચણં
સવ્વલોણ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—આગતિં ગતિં પરિજ્ઞાય દ્વાભ્યામન્તાભ્યામદૃશ્યમાનઃ । સ ન છિદ્યતે
ન મિદ્યતે ન દહ્યતે ન હન્યતે કેનચિત્ સર્વલોકે ॥ મૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘ આગતિં ગતિ ’—મિતિ, આગતિઃ=આગમનં, ગતિર્ગમનં, તત્ર તિરશ્ચાં
મનુષ્યાણાં ચાગતિશ્ચતુર્વિધા ભવતિ, નરકાદિચતુર્વિધગતિતસ્તેષામાગમનસદ્ભાવાત્ ।

કયા વિચાર કર રૂપાદિકોં મેં વિરક્ત બુદ્ધિવાલા બને ? સો કહતે
હેં—‘ આગઈ ’ ઇત્યાદિ ।

દૂસરી ગતિસે આનેકા નામ આગતિ ઓર દૂસરી ગતિમેં જાનેકા
નામ ગતિ હૈ । મનુષ્ય ઓર તિર્યશ્ચોંકી આગતિ ચાર પ્રકારસે હોતી હૈ,
અર્થાત્ ચારોં ગતિયોંસે આકર જીવ મનુષ્ય ઓર તિર્યશ્ચ ગતિમેં જન્મ
લેતે હૈં । દેવ ઓર નારકિયોંકી આગતિ દો પ્રકારસે હોતી હૈ, અર્થાત્
તિર્યશ્ચ ઓર મનુષ્ય ગતિસે આ કર હી જીવ દેવગતિ ઓર નરકગતિમેં
ઉત્પન્ન હોતે હૈં । ગતિ ખી ઉન સવકી હસી તરહસે હોતી હૈ । મનુષ્ય
એવં તિર્યશ્ચ ગતિકે જીવ ચારોં ગતિયોં મેં ઉત્પન્ન હો સકતે હૈં પરન્તુ દેવ-
ગતિ એવં નરક ગતિકે જીવ મનુષ્ય ઓર તિર્યશ્ચ ગતિકે સિવાય અન્ય
ગતિયોંમેં જન્મ નહીં લેતે । દેવ ચ્યવકર દૂસરે ભવમેં દેવગતિમેં ઓર

શું વિચાર કરી રૂપાદિકોમાં વિરક્તબુદ્ધિવાળા બને ? તે કહે છે—‘ આગઈ ’
ઈત્યાદિ.

બીજી ગતિથી આવવાનું નામ આગતિ અને બીજી ગતિમાં જવાનું નામ
ગતિ છે. મનુષ્ય અને તિર્યચોની આગતિ ચાર પ્રકારની હોય છે. અર્થાત્ ચારે
ગતિયોથી આવીને જીવ મનુષ્ય અને તિર્યચ ગતિમાં જન્મ લે છે. દેવ અને
નારકીઓની આગતિ બે પ્રકારની હોય છે, અર્થાત્ તિર્યચ અને મનુષ્ય ગતિથી
આવીને જીવ દેવગતિ અને નરકગતિમાં ઉત્પન્ન થાય છે. ગતિ પણ તે સઘળા-
ઓની આ પ્રકારે જ હોય છે. મનુષ્ય અને તિર્યચ ગતિનો જીવ ચારે ગતિઓમાં
ઉત્પન્ન થઈ શકે છે પરંતુ દેવગતિ અને નરકગતિના જીવ મનુષ્ય અને તિર્યચ
ગતિના સિવાય અન્ય ગતિયોમાં જન્મ લેતા નથી. દેવ ચવીને બીજા ભવમાં

મિથ્યાદૃષ્ટીનામાગતિગતિજ્ઞાનાભાવ ઇત્યાહ—‘ અવરેણ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમૂ—અવરેણ પુઠ્ઠવે ન સરંતિ એગે કિમસ્સ તીયં ? કિં વાઽઽગમિમસ્સં ? ભાસંતિ એગે ઇહ માણવા ડ જમસ્સ તીયં તં આગમિમ્સં ॥ સૂં ૭ ॥

છાયા—અપરેણ પૂર્વ ન સ્મરંતિ એકે કિમસ્ય અતીતં ? કિં વા આગમિષ્યત્ ? ભાવંતે એકે ઇહ માનવાસ્તુ યદસ્ય અતીતં તદ્ આગમિષ્યત્ ॥ સૂં ૭ ॥

એકે=અન્યે મિથ્યાદૃષ્ટયઃ, અપરેણ=પશ્ચાત્કાલભાવિના સહ, પૂર્વ=પૂર્વકાલિકં ન સ્મરંતિ, યથા—અસ્ય જીવસ્ય કિમ્=અનેન જીવેન કીદૃશં દુઃખં સુખં વાઽનુભૂત-મિતિ ન સ્મરંતિ । તથા—કિં વા આગમિષ્યત્=ભવિષ્યત્કાલિકે નરકાદિભવે કીદૃશં દુઃખં સુખં વાઽસ્ય જીવસ્ય ભાવીતિ ન સ્મરંતિ । યદિ પુનરસ્ય જીવસ્યાતીતાના-ગતગતિચિન્તનં કુર્યાત્તર્હિ વૈરાગ્યં સુતરામુદ્ભવેત્ । ઉક્તશ્ચ—

મિથ્યાદૃષ્ટિયોંકો જીવોંકી ગતિ ઓર આગતિકા જ્ઞાન નહીં હોતા હૈ, ઇસ વાતકો કહતે હૈ—‘ અવરેણ ’ ઇત્યાદિ ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવોંકે ભવિષ્યત્ કાલમેં હોનેવાલી અવસ્થાઓંકે સાથ પૂર્વકાલિક અવસ્થાઓંકી તથા ભવિષ્યત્કાલમેં હોનેવાલી સુખદુઃખાદિકોં કે સાથ પૂર્વકાલિક સુખદુઃખાદિકોંકી સ્મૃતિ નહીં હોતી હૈ । જૈસે ઇસ જીવકા સમય પૂર્વ મેં કૈસેર સુખદુઃખાદિકોંસે વીતા હૈ ? અર્થાત્ નરક આદિ પર્યાયોંમેં ઇસ જીવને કિસર પ્રકારકે દુઃખ અથવા સુખ ભોગે હૈ ? એવં આગામી કાલમેં નરકાદિક પર્યાયોંમેં યહ જીવ કિસર પ્રકારકે દુઃખ અથવા સુખ ભોગેગા ? ઇસકા ઉન્હેં સ્મરણ તક નહીં હોતા । યદિ ઇસ જીવકી અતીત એવં અનાગત કાલ સમ્બન્ધી ગતિકા વાર-વાર વિચાર કિયા જાય તો જીવકો વૈરાગ્ય સ્વતઃ ઉત્પન્ન હો જાવે । કહા મી હૈ—

મિથ્યાદૃષ્ટિએને જીવોની ગતિ અને આગતિનું જ્ઞાન થતું નથી એ વાતને કહે છે—‘ અવરેણ ’ ઇત્યાદિ

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવોના ભવિષ્યકાળમાં બનવાવાળી અવસ્થાઓની સાથે પૂર્વ-કાલિક અવસ્થાઓની તથા ભવિષ્યકાળમાં થવાવાળા સુખદુઃખાદિકોની સાથે પૂર્વકાલિક સુખદુઃખાદિકોની સ્મૃતિ થતી નથી. આ જીવોના સમય પૂર્વમાં કેવા કેવા પ્રકારે સુખદુઃખોમાં વીત્યો છે ? અર્થાત્ નરક આદિ પર્યાયોમાં આ જીવે કયા કયા પ્રકારના દુઃખ અથવા સુખ ભોગવ્યા છે ? તેમજ આગામી કાળમાં નરકાદિ પર્યાયોમાં આ જીવ કેવા કેવા પ્રકારના દુઃખ અથવા સુખ ભોગવશે ? તેનું તેને સ્મરણ સુદ્ધાં હોતું નથી. કદાચ આ જીવની અતીત તેમજ અનાગત કાળ સંબન્ધી ગતિનો વાર વાર વિચાર કરવામાં આવે તો જીવને વૈરાગ્ય સ્વતઃ ઉત્પન્ન થઈ જાય કહ્યું છે —

વ્યાદિના વા । અર્થ ભાવ:-તિર્યગ્મનુષ્યાદીનામાગતિગતિપરિજ્ઞાનેન રાગદ્વેષ-
નિવૃત્તિઃ, તયોરભાવાચ્ચ છેદનાદિના સંસારદુઃખાનિ ન ભવન્તીતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

હોતા હૈ । ‘અન્ત’ શબ્દકા અર્થ રાગ દ્વેષ હૈ, ક્યોં કિ યે દોનોં “અન્ત-
કારિત્વાત્” અપની સત્તામેં જીવકી મુક્તિકા અન્ત-નિરોધ-કરનેવાલે
હોતે હૈં, ઇન દોનોંકે સદ્ભાવ મેં જીવકો સચ્ચે સ્વરૂપ-મોક્ષકી પ્રાપ્તિ નહીં
હોતી હૈ । ઇસકા ભાવાર્થ યહ હૈ—તિર્યગ્ અથવા મનુષ્યાદિકોંકી ગતિ
ઔર આગતિકે પરિજ્ઞાનસે સાધુકો અચ્છે ંવં ઘુરે રૂપાદિકોંમેં રાગ દ્વેષ
ન હો કર પ્રત્યુત ઁનમેં મધ્યસ્થતા હી ઁસે રહતી હૈ । રાગદ્વેષકી નિવૃત્તિ
સે, છેદનભેદનાદિદ્વારા સાંસારિક દુઃખોંકા જો ઁસે અનુભવ હોતા થા
વહ ફિર નહીં હોતા । ક્યોં કિ દુઃખોંકા અનુભવ કરાનેવાલી જો રાગ-
પરિણતિ થી વહ ઁસકી દૂર હો ચુકી હૈ । દૂસરા ઇસકા ભાવ યહ ભી
હો સકતા હૈ કિ જબ મુનિકી આત્માસે રાગ દ્વેષકા અભાવ હો જાતા હૈ
તો ઁસકી આત્મા અત્યન્ત નિર્મલ ંવં વિશિષ્ટ પ્રભાવશાલી હો જાતી
હૈ । ઇસ અવસ્થામેં કોઈ ભી ંસી શક્તિ નહીં હૈ જો ઁસે છેદન ભેદન
ંવં તાડનાદિજન્ય દુઃખ પહુંચા સકે । ‘ન હન્યતે નરકગત્યાનુપૂર્વ્યાદિના
વા’ ઇસ ટીકાકા ભાવ યહ હૈ કિ-સર્વસંયમીકે લિયે નરકગતિ ંવં
તિર્યગ્ ગતિકા બન્ધ નહીં હોતા હૈ ઇસ લિયે ઁસકી આનુપૂર્વિકા ભી ઁસે
ઉદય નહીં હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

આવતાં. અને નહિ તેને નરકગત્યાનુપૂર્વી આદિનો ઉદય થાય છે. ‘અન્ત’ શબ્દનો
અર્થ રાગ દ્વેષ છે. કારણ કે એ બંને “અન્તકારિત્વાત્” પોતાની સત્તામાં
જીવની મુક્તિનો અંત કરવાવાળા હોય છે. એ બંનેના સદ્ભાવમાં જીવને સચ્ચા
સ્વરૂપ-મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી. તેનો ભાવાર્થ એ છે કે તિર્યગ્ અથવા મનુ-
ષ્યાદિકોની ગતિ અને આગતિના પરિજ્ઞાનથી સાધુને સારા તેમજ ખરાબ રૂપા-
દિકોમાં રાગ દ્વેષ ન થઈને પ્રત્યુત તેમાં મધ્યસ્થતા જ તેને રહે છે. રાગદ્વેષની
નિવૃત્તિથી, છેદન-ભેદનાદિ દ્વારા સાંસારિક દુઃખોનો જે તેને અનુભવ થતો હતો
તે પછી થતો નથી. કારણ કે દુઃખોનો અનુભવ કરાવનારી જે રાગપરિણતિ
હતી તે તેની દૂર થઈ ચૂકેલ છે. બીજું તેનો ભાવ એ પણ થઈ શકે છે કે
જ્યારે મુનિના આત્માથી રાગ દ્વેષનો અભાવ થઈ જાય છે તો તેની આત્મા
અત્યન્ત નિર્મળ અને વિશિષ્ટ પ્રભાવશાળી બની જાય છે. આ અવસ્થામાં એવી
કોઈ પણ શક્તિ નથી કે જે તેને છેદન-ભેદન તેમજ માર મારવો આદિ દુઃખ
પહોંચાડી શકે. ‘ન હન્યતે નરકગત્યાનુપૂર્વ્યાદિના વા’ આ ટીકાનો ભાવ એ છે
કે સકલસંયમી માટે નરકગતિ અને તિર્યગ્ગતિનો બંધ થતો નથી તેથી તેને
તેની આનુપૂર્વીનો પણ ઉદય થતો નથી ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—નાતીતમર્થ ન ચ આગમિષ્યન્તમ્ અર્થ નિયચ્છન્તિ તથાગતાસ્તુ ।
વિધૂતકલ્પ એતદનુદર્શી નિર્જુષ્ય ક્ષપયેત્ મહર્ષિઃ ॥ મૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—તથાગતાઃ=યથા તીર્થઙ્કરેણ ભાષિતં તથૈવ ગતં-જ્ઞાનં યેષાં તે તથાગતા-
સ્તત્ત્વજ્ઞાનિનસ્તુ-અતીતમર્થ ન નિયચ્છન્તિ=વેતસિ નાનયન્તિ, આગમિષ્યન્તમર્થ-
મપિ ન નિયચ્છન્તિ । કિં તુ કર્મપરિણામવૈચિત્ર્યાત્ કર્માનુસારિ સુખં દુઃખં વા
પ્રાણિનાં ભવતીત્યેવં નિર્ણયન્તિ । તસ્માત્-એતદનુદર્શી=વર્તમાનાર્થાનુદર્શી વર્તમાન-
ભવસંપ્રાપ્તશ્રુતચારિત્રધર્મારાધનપર इत्यर्थः, અતીતાનાગતસ્વર્ગાદિસુખાનભિચિન્તક
इति यावत्, તથાચોક્તમ્-

જો સંસારસાગરસે પાર હો ચુકે હૈં વે જીવોંકી પૂર્વાપર-ગતિકે
જ્ઞાતા સર્વજ્ઞ ભગવાન્ એસા નહીં કહતે હૈં, ઇસલિયે કર્મોંકો નાશ કરને
કે લિયે સંયમકી આરાધના કરની चाहिये, ઇસ વાતકો કહતે હૈં—
' નાઈયમટ્ટં ' ઇત્યાદિ ।

જૈસા તીર્થઙ્કર પ્રભુને કહા હૈં ડસીકે અનુસાર જિનકા જ્ઞાન હૈં વે
તથાગત-તત્ત્વજ્ઞાની અતીત અર્થ-અવસ્થા-કો ચિત્તમેં નહીં લાતે હૈં ઓર
ન આગામી અર્થ કો હી ચિત્તમેં લાતે હૈં, કિંતુ ' પ્રાણિયોંકે સુખ અથવા
દુઃખ કર્મોંકે અનુસાર હોતે હૈં ' એસા હી વે નિર્ણય કરતે હૈં । ઇસલિયે
વર્તમાન ભવમેં પ્રાપ્ત શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધનામેં તત્પર-અર્થાત્
અતીત ઓર અનાગત કાલ સમ્બન્ધી સ્વર્ગ આદિકે સુખોંકા ચિંતવન નહીં
કરનેવાલા તથા વિશુદ્ધ આચારવાલા, અથવા અતીત એવં અનાગતકે સંક-
લ્પકો દૂર કરનેવાલા મહાસુનિ નિરતિચાર સંયમકા આરાધના કરકે
પૂર્વોપાર્જિત કર્મોં કા નાશ કરે । જ્ઞાની કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર કહા હૈં—

જે સંસારસાગરથી પાર થઈ ચુકેલ છે તે જીવોની પૂર્વાપર ગતિના જ્ઞાતા
સર્વજ્ઞ ભગવાન એવું કહેતા નથી. માટે કર્મોનો નાશ કરવા માટે સંયમની
આરાધના કરવી જોઈએ. એ વાતને કહે છે—' નાઈયમટ્ટં ' ઇત્યાદિ.

જેવું તીર્થઙ્કર પ્રભુએ કહ્યું છે તેના અનુસાર જેનું જ્ઞાન છે તે તથાગત-
તત્ત્વજ્ઞાની અતીત અર્થ-અવસ્થા-ને ચિત્તમાં લાવતા નથી. ન આગામી અર્થને
ચિત્તમાં લાવે છે. પણ ' પ્રાણિયોના સુખ અથવા દુઃખ કર્મોના અનુસાર બને
છે ' એવો જ તે નિર્ણય કરે છે. માટે વર્તમાન ભવમાં પ્રાપ્ત જે શ્રુત ચારિ-
ત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામા તત્પર અર્થાત્ અતીત અને અનાગત કાળ સંબન્ધી
સ્વર્ગ આદિના સુખોનું ચિંતવન નહિ કરવાવાળા, તથા વિશુદ્ધ આચારવાળા, અથવા
અતીત અને અનાગતના સંકલ્પને દૂર કરવાવાળા મહાસુનિ નિરતિચાર સંયમની
આરાધના કરીને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોનો નાશ કરે. જ્ઞાનીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે કહ્યું છે—

“ કેળ મમેત્થુપ્પત્તી ?, કહં ઇઓ તહ પુળોડવિ ગંતવ્વં ।

જો એત્તિયંપિ ચિંતઇ, ઇત્થં સો કો ન નિવ્વિણ્ણો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

ઇહ=અસ્મિન્ મનુષ્યલોકે, એકે પુનર્મહામિથ્યાદૃષ્ટ્યો માનવાઃ=મનુષ્યાઃ ભાષન્તે=કર્મવિપાકજ્ઞાનાભાવાદેવં વદન્તિ-અસ્ય જીવસ્ય યદ્ અતીતં=બ્રાહ્મણ-ક્ષત્રિય-વૈશ્ય-શૂદ્ર-ગવા-ડશ્વ-ભવાદિ, તત્સંસ્કારવશાત્તદેવ પુનરન્યસ્મિન્ ભવેડપિ આગમિષ્યત્=ભાવીતિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

યે તુ સંસારસિન્ધુમુત્તીર્ણાસ્તે પૂર્વાપરગતિવેદિનઃ સર્વજ્ઞા નૈવં વદન્તિ । તસ્માત્ કર્મક્ષપણાર્થં સંયમઃ સેવનીય ઇત્યાહ-‘નાર્હય’૦ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-નાર્હયમટ્ટં ન ય આગમિસ્સં, અટ્ટં નિયચ્છંતિ તહા-ગયા ઉ । વિહૂયકપ્પે ણ્યાણુપસ્સી, નિજ્ઞોસઇત્તા સ્વવણ મહેસી ॥ સૂ૦ ૮ ॥

“ કેળ મમેત્થુપ્પત્તી ? કહં ઇઓ તહ પુળોડવિ ગંતવ્વં ? ।

જો એત્તિયં પિ ચિંતઇ, ઇત્થં સો કો ણ નિવ્વિણ્ણો ॥૧॥ ” ઇતિ ।

અર્થાત્ કિસ કારણસે મેરી ઇસ પર્યાય મેં ઉત્પત્તિ હુઈ હૈ ? કયા મુજે યહાંસે ફિર અબ દૂસરી પર્યાયમેં જાના પડેગા ? । જો ઇતના મી વિચાર કરે તો કૌનસા એસા જીવ હૈ જિસે વૈરાગ્ય જાગ્રત ન હો જાય ॥

ઇસ સંસારમેં એસે મી મહામિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હૈં જો કર્મોંકે વિપાક કે જ્ઞાનસે શૂન્ય હો કર એસા કહતે હૈં કિ-ઇસ જીવકા જો ભવ, ચાહે વહ બ્રાહ્મણ સમ્બન્ધી હો, ચાહે ક્ષત્રિય સમ્બન્ધી હો, ચાહે વૈશ્ય, શૂદ્ર, ગો ઓર અશ્વ-ઘોડા-સમ્બન્ધી હો; વ્યતીત હો ચુકા હૈ, વહી ભવ ઊનર ભવોંકે સંસ્કારકે વશસે આગામી કાલમેં ફિરસે ઇસે પ્રાપ્ત હોગા ॥૭॥

“ કેળ મમેત્થુપ્પત્તી, કહં ઇઓ તહ પુળોડવિ ગંતવ્વં ? ।

જો એત્તિયંપિ ચિંતઇ, ઇત્થં સો કો ણ નિવ્વિણ્ણો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અર્થાત્ કયા કારણથી મારી આ પર્યાયમાં ઉત્પત્તિ થઈ છે ? શું મને અહીંયાથી ફરીથી હવે બીજી પર્યાયમાં જવું પડશે ? . જો એટલો પણ વિચાર કરે તો કયો એવો જીવ છે જેને વૈરાગ્ય જાગ્રત ન થાય ?

આ સંસારમાં એવા પણ મહામિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ છે જે કર્મના વિપાકના જ્ઞાનથી શૂન્ય બનીને એવું કહે છે કે-આ જીવનો જે ભવ મલે તે બ્રાહ્મણ સંબંધી હોય, ભલે ક્ષત્રિય સંબંધી હોય, ભલે વૈશ્ય, શૂદ્ર, ગાય અને અશ્વ-ઘોડા સંબંધી હોય-વ્યતીત થઈ ગયેલ છે તે જ ભવ તે તે ભવોના સંસ્કારના વશથી આગામી કાળમાં ફરીથી તેને પ્રાપ્ત થશે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

મૂલમ્—કા અરઈ ? કે આણંદે?, ઇત્થં પિ અગ્ગહે ચરે ।

સઠ્ઠં હાસં પરિચ્ચજ્જ, આલીણગુત્તો પરિવ્વણ ॥સૂ૦ ૧॥

છાયા—કા અરતિ: ? ક આનન્દ: ? અત્રાપિ અગ્રહશ્ચરેત્ ।

સર્વં હાસ્યં પરિત્યજ્ય આલીનગુપ્ત: પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—ઈપ્સિતસ્યાપ્રાપ્ત્યા વિનાશેન વા, તથા—અનિષ્ટપ્રાપ્ત્યા વા યન્મનોદુઃખં સા અરતિઃ, અભિલષિતાર્થસ્ય પ્રાપ્તૌ સત્યાં યો હર્ષઃ સુખં વા સ આનન્દઃ, એતદ્વયં ધર્મશુક્લધ્યાનલગ્નચિત્તસ્ય મહર્ષેર્ન ભવતિ, તત્કારણાભાવાત્ । ઇમમેવાર્થં કથયતિ—કા અરતિઃ ક આનન્દ ઇતિ । મહર્ષેઃ કા અરતિઃ? ક આનન્દઃ? । મિથ્યાદૃષ્ટેરિવા-તિરાનન્દશ્ચ મહર્ષેર્ધર્મશુક્લધ્યાનાવેશાન્ન સમુદ્ભવત ઇતિ ભાવઃ । અત્રાપિ=અરતાવાનન્દે ચ, અગ્રહઃ=અવિચલિતઃ સન્ ચરેત્=ધ્યાનમાર્ગે વિહરેત્ ।

ઇચ્છિત પદાર્થકી અપ્રાપ્તિ સે, અથવા ઉસકે વિનાશસે યા અનિષ્ટ પદાર્થકે સમાગમસે જો માનસિક દુઃખ હોતા હૈ ઉસકા નામ અરતિ હૈ । ઇષ્ટ પદાર્થકી પ્રાપ્તિ હોને પર જો હર્ષ યા સુખ હોતા હૈ ઉસકા નામ આનન્દ હૈ । યે દોનોં ધર્મધ્યાન યા શુક્લધ્યાનમેં લવલીન ચિત્તવાલે મહર્ષિકે નહીં હોતે હૈ, ક્યોં કિ અરતિ ઓર આનન્દકે કારણોંકા વહાં અભાવ હો ચુકા હૈ । મહર્ષિકે લિયે, ક્યા અરતિ? ક્યા આનન્દ?, દોનોં સમ હૈ । મિથ્યાદૃષ્ટિકો જિસ પ્રકાર અરતિ ઓર આનન્દ હોતે હૈં ઉસ પ્રકાર મહર્ષિકે વે દોનોં ધર્મધ્યાન ઓર શુક્લધ્યાનકે પ્રભાવસે નહીં હોતે હૈં । હસલિયે અરતિ ઓર આનન્દમેં ચચ્ચલચિત્ત ન વન કર મહર્ષિકો અપને ધ્યાનકે માર્ગમેં લવલીન રહના ચાહિયે ।

ઇચ્છિત પદાર્થની અપ્રાપ્તિથી અથવા તેના વિનાશથી અગર અનિષ્ટ પદાર્થના સમાગમથી જે માનસિક દુઃખ થાય છે તેનું નામ અરતિ છે. ઇષ્ટ પદાર્થની પ્રાપ્તિ થવાથી જે હર્ષ અથવા સુખ થાય છે તેનું નામ આનન્દ છે એ બન્ને ધર્મધ્યાન અગર શુક્લ ધ્યાનના લવલીન ચિત્તવાળા મહર્ષિને થતાં નથી. કારણ કે અરતિ અને આનન્દના કારણોનો ત્યાં અભાવ થઇ ચુકેલ છે મહર્ષિ માટે શું અરતિ કે શું આનન્દ ? બન્ને સરખાં છે મિથ્યાદૃષ્ટિને જેવી રીતે અરતિ અને આનન્દ થાય છે, તે પ્રકારે મહર્ષિને તે બન્ને ધર્મધ્યાન અને શુક્લધ્યાનના પ્રભાવથી થતા નથી માટે અરતિ અને આનન્દમાં ચચ્ચલચિત્ત ન બનીને મહર્ષિએ પોતાના ધ્યાનના માર્ગમાં લવલીન રહેવું જોઇએ.

“ ગતં શોચતિ યો નૈવ, ભવિષ્યન્નૈવ વાઙ્છતિ ।

વર્તતે વર્તમાને યઃ, સૈવ જ્ઞાની નિગદ્યતે ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

વિધૂતકલ્પઃ=વિધૂતો=વિશુદ્ધઃ કલ્પઃ=આચારો યસ્ય સઃ, યદ્વા-વિધૂતઃ=અપ-
નીતઃ કલ્પઃ=અતીતાનાગતસંકલ્પો યેન સઃ, મહર્ષિઃ=મહામુનિઃ, નિર્જુષ્ય=સંયમં
નિરતિચારં સમારાધ્ય, ક્ષપયેત્=પૂર્વોપાર્જિતકર્માણિ નાશયેત્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

કર્મક્ષપણાર્થ સમુદ્યતસ્ય મહર્ષેર્ધર્મધ્યાનતઃ શુક્લધ્યાનતો વા યત્ ફલં ભવતિ
તદાહ—‘કા અરઈ’ ઇત્યાદિ ।

“ ગતં શોચતિ યો નૈવ, ભવિષ્યન્નૈવ વાઙ્છતિ ।

વર્તતે વર્તમાને યઃ, સૈવ જ્ઞાની નિગદ્યતે ॥ ૧ ॥ ”

અર્થાત્—‘ગઈ બાત સોચે નહીં, આગમ ચિંતે નાંહિ ।

વર્તમાન વરતે સહી, સો જ્ઞાની ઘટમાંહિ ॥ ’

જો બીતી હુઈ બાતોં પર ધ્યાન નહીં દેતા, ભવિષ્યકી બાતોંકી ચાહના
નહીં કરતા, કિન્તુ વર્તમાન અવસ્થા પર હી સંભલ કર રહતા હૈ, વહી
જ્ઞાની કહલાતા હૈ ॥

ઇસ શ્લોકસે ટીકાકાર ઇસ બાતકી પુષ્ટિ કર રહે હૈં કિ તત્ત્વજ્ઞાની
ભૂત ભવિષ્યત્ કાલકે સાંસારિક સુખોંકી સ્મૃતિ એવં ઇચ્છા ન કર
વર્તમાન કાલમેં શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેરૂપ અપની અવ-
સ્થામેં હી તત્પર રહતા હૈ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

કર્મોંકો નાશ કરનેમેં કટિબદ્ધ મહર્ષિ કો ધર્મધ્યાન યા શુક્લધ્યાન
સે જો ફલ હોતા હૈ ઉસકો બતલાતે હૈં—‘કા અરઈ’ ઇત્યાદિ ।

“ ગતં શોચતિ યો નૈવ, ભવિષ્યન્નૈવ વાઙ્છતિ ।

વર્તતે વર્તમાને યઃ, સૈવ જ્ઞાની નિગદ્યતે ॥ ૧ ॥ ”

એટલે—‘ગઈ બાત સોચે નહી, આગમ ચિંતે નાંહિ ।

વર્તમાન વરતે સહી, સો જ્ઞાની ઘટમાંહિ ॥

જે વીતી ગએલી વાતો ઉપર ધ્યાન નથી દેતા, ભવિષ્યની વાતોની ચાહના
નથી કરતા, પણ વર્તમાન અવસ્થા ઉપર જ સંભાળીને રહે છે તે જ જ્ઞાની કહેવાય છે.

આ શ્લોકથી ટીકાકાર આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે કે તત્ત્વજ્ઞાની ભૂત ભવિષ્ય
કાળના સાંસારિક સુખોની સ્મૃતિ તેમ જ ઇચ્છા ન કરી વર્તમાનકાળમાં શ્રુતચા-
રિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવારૂપ પોતાની અવસ્થામાં જ તત્પર રહે છે. ॥સૂ૦ ૮॥

કર્મોનો નાશ કરવામાં કટિબદ્ધ મહર્ષિના ધર્મધ્યાન યા શુક્લધ્યાનથી જે
ફળ થાય છે તે કહે છે—‘કા અરઈ’ ઇત્યાદિ.

કિમનેન વિન્દુતુલ્યેન ઋદ્ધ્યાદિસુખેન? ઇતિ । ઉક્તञ્ચ—

“ ન તૃપ્તોઽસિ યદા કામૈઃ, સેવિતૈરપ્યનેકશઃ ।

સ નામ તેષુ વૃત્તોઽન્તો, યતો વૈરાગ્યમાપ્નુહિ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

તસ્માત્-અત્રાપિ=અસ્મિન્ અરત્યાનન્દકારણેઽપિ અગ્રહઃ=તદનપેક્ષમાણઃ-
માધ્યસ્થભાવપ્રગતઃ સન્ ચરેત્=સંયમમાર્ગે વિહરેત્ ।

તથા-સર્વ=સમસ્તં હાસ્યં=હાસં, તત્સ્થાનં વા પરિત્યજ્ય, આલીનગુપ્તઃ-તત્ર-
આલીનઃ-આહ્=મર્યાદયા-ઇન્દ્રિયનિરોધાદિરૂપયા લીનઃ, ગુપ્તઃ-મનોવાકાયકર્મભિઃ,
યદ્વા-ગુપ્તઃ=કૂર્મયત્સંવૃતગાત્રઃ, આલીનશ્વાસૌ ગુપ્તશ્ચેત્યાલીનગુપ્તઃ, એવંભૂતઃ સન્

કે તુલ્ય ઉસ સુખકે સામને વિન્દુતુલ્ય ઇસ ઋદ્ધિ રસ આદિકે સુખકી
કયા ગિનતી હૈ । કહા મી હૈ—

“ ન તૃપ્તોઽસિ યદા કામૈઃ, સેવિતૈરપ્યનેકશઃ ।

સ નામ તેષુ વૃત્તોઽન્તો, યતો વૈરાગ્યમાપ્નુહિ ॥ ૧ ॥ ”

હે આત્મન્ ! જવ તૂં અનન્તવાર સેવન કિયે ગયે ઇન કામોંસે તૃપ્ત નહીં
હુઆ; ઉલ્ટા ઇનકે ભાંગને સે તેરા હી અન્ત હુઆ તો ફિર ઇન કે ભોગને સે
તુજે કયા લાભ હૈ? અતઃ અવ ઇન સે વૈરાગ્ય હી લેના સર્વશ્રેયસ્કર હૈ ।

ઇસલિયે ઉસ સંયમી કો ચાહિયે કિ વહ અરતિ ઔર આનન્દ કે
કારણોંમેં મી અગ્રહ-અનપેક્ષાવાલા બન કર અર્થાત્ માધ્યસ્થભાવ
રખતા હુઆ સંયમમાર્ગમેં વિચરે ।

તથા—સમસ્ત હાસ્ય અથવા હાસ્યકે સ્થાનભૂત-જિનકી તીર્થઢ્ઢરા-
દિકોંને નિન્દા કી હૈ એસે-વિષયકષાયોંકા પરિત્યાગ કર ઇન્દ્રિયનિગ્રહી
એવં મન, વચન ઔર કાયસે સદા સાવચક્રિયાસે રહિત હોતે હુએ અથવા

અનંતવાર ભોગવેલ છે તો સમુદ્રના તુલ્ય તે સુખની સામે બિંદુ તુલ્ય આ ઋદ્ધિ
આદિના સુખની શું ગણના છે કહ્યું પણ છે:—

“ ન તૃપ્તોઽસિ યદા કામૈઃ, સેવિતૈરપ્યનેકશઃ ।

સ નામ તેષુ વૃત્તોઽન્તો, યતો વૈરાગ્યમાપ્નુહિ ॥ ૧ ॥ ”

હે આત્મા ! ન્યારે અનંત વાર સેવી ચુકેલા તે કામોથી ન્યારે તું તૃપ્ત
ન થયો, ઉલ્ટું તેના ભોગવવાથી તારોએ અત થયો, તો પછી તેના ભોગવવાથી
તને શું લાભ છે? માટે તે વસ્તુથી વૈરાગ્ય જ લેવો સર્વ શ્રેયસ્કર છે.

તેથી તે સયમીને જોઈ એ કે તે અરતિ અને આનંદના કારણોમાં પણ
અગ્રહ-અનપેક્ષાવાળા બની અર્થાત્ માધ્યસ્થ ભાવ રાખીને સંયમ માર્ગમાં વિચરે.

તથા-સમસ્ત હાસ્ય અથવા હાસ્યના સ્થાનભૂત કે જેની તીર્થકરોએ નિંદા
કરેલ છે, એવા વિષયકષાયોનો પરિત્યાગ કરી ઇન્દ્રિયનિગ્રહી તેમજ મન, વચન

યદ્વા-સંયમારાધનપરાયણસ્ય મહર્ષેઃ કા અરતિઃ ? ક આનન્દઃ ? । અયંભાવઃ-સંયમારાધનતત્પરસ્ય કુતશ્ચિત્ કારણાત્ પ્રતિકૂલપરીષહોપસર્ગોપસ્થિતૌ અરતિર્ન-ભવતિ । સ હિ તદાનીમેવં ચિન્તયતિ-અનેનાત્મના પૂર્વભવેષુ નરકનિગોદાદૌ ક્ષુત્પિ-પાસાદિજનિતં વધવન્ધનાદિજનિતં ચ યદ્ ધોરતરં દુઃસ્વમનન્તવારં પ્રાપ્તં તત્પુરતઃ કિમેભિરલ્પદુઃસ્વજનકૈઃ પરીષહોપસર્ગૈરિતિ । તથા-ઋદ્ધિ-રસ-શાતાદ્યુપસ્થિતૌ હર્ષઃ સુખં વા નોત્પદ્યતે ।

સ હિ તદાનીમેવં વિભાવયતિ-અનેનાત્મના પૂર્વ દેવભવેષુ નરલોકદુર્લભં નાનાવિધઋદ્ધ્યાદિસુસ્વમનન્તશોઽનુભૂતં, તસ્ય સમુદ્રસદૃશસ્ય દિવ્યસુસ્વસ્ય પુરતઃ

અથવા-સંયમકી આરાધના કરનેમેં દત્તાવધાન મહર્ષિકો અરતિ ઔર આનન્દસે કોઈ પ્રયોજન નહીં હૈ ।

તાત્પર્યં યહ હૈ-સંયમકી આરાધના કરનેમેં તત્પર મહર્ષિકે જબ કિસી કારણસે પ્રતિકૂલ પરીષહ ઔર ઉપસર્ગકી ઉપસ્થિતિ હોતી હૈ ઉસ સમય ઉસે ઉસસે અરતિ નહીં હોતી હૈ, કિન્તુ ઉસે ઉસ સમય યહી વિચાર આતા હૈ કિ હિસ આત્માને પૂર્વભવમેં નરકનિગોદાદિ ગતિયોમેં ક્ષુધા-તૃષ્ણા-આદિ-જનિત એવં વધ ઔર બન્ધન આદિસે ઉત્પન્ન હુએ જો ધોરતર દુઃસ્વ અનન્ત વાર પાચે હૈં ઉનકે આગે અલ્પદુઃસ્વજનક યે પરીષહ ઔર ઉપસર્ગ કયા ચીજ હૈં ? તથા ઋદ્ધિ, રસ, શાતા આદિકી ઉપસ્થિતિ હોને પર મી ઉસે હર્ષ યા સુખ નહીં હોતા હૈ, કયોં કિ ઉસ સમય મી વહ યહી વિચાર કરતા હૈ કિ હિસ આત્માને પૂર્વ-દેવભવોમેં, મનુષ્યલોકમેં દુર્લભ એસે અનેક પ્રકારકે ઋદ્ધિ-આદિજન્ય સુખોંકો અનન્ત વાર મોગા હૈ તો સમુદ્ર

અથવા સંયમની આરાધના કરવામાં દત્તાવધાન મહર્ષિને અરતિ અને આ-નન્દથી કોઈ પ્રયોજન ન્ નથી.

તાત્પર્યં એ છે કે-સંયમની આરાધના કરવામાં તત્પર મહર્ષિને જ્યારે કોઈ કારણથી પ્રતિકૂળ પરીષદ અને ઉપસર્ગની ઉપસ્થિતિ થાય છે તે વખત તેને તેનાથી અરતિ થતી નથી. પણ તેને તે વખત તેવો વિચાર આવે છે કે આ આત્માએ પૂર્વભવમાં નરક નિગોદાદિ ગતિયોમાં ક્ષુધા તૃષ્ણા આદિ જનિત તેમજ વધ અને બન્ધન આદિથી ઉત્પન્ન થયેલ જે ધોરતર દુઃખ અનન્ત વાર ભોગવેલ છે તેની અપેક્ષા અલ્પ દુઃખજનક આ પરિષદ અને ઉપસર્ગ કઈ ચીજ છે ? તથા ઋદ્ધિ રસ, શાતા આદિની ઉપસ્થિતિ હોવા છતાં પણ તેને હર્ષ અગર સુખ થતું નથી. કારણ કે તે સમય પણ તે એજ વિચાર કરે છે કે આ આત્માએ પૂર્વ દેવભવોમાં, મનુષ્યલોકમાં દુર્લભ એવા અનેક પ્રકારના ઋદ્ધિ આદિ જન્ય સુખોને

સ્વાત્મવ્યતિરિક્તસ્ય સંસારકાર્યે સાહાય્યકારિણઃ પુત્રકલત્રાદેઃ સંસારિણસ્તથા હિરણ્યસુવર્ણાદેશ્ચ જન્મમરણાદિવહુવિધાનન્તવ્યસનોપનિપાતસંસારસાગરાન્તઃપતન-કારિત્વાદમિત્રં મિત્રં મન્યમાનઃ કિં મોહાર્ણવે સ્વાત્માનં નિપાતયસિ ?, પરમાર્થતઃ શ્રુતચારિત્રધર્માનુષ્ઠાનાત્સ્વાત્મૈવ મિત્રં, તદ્વિરોધિસાવદ્યક્રિયાનુષ્ઠાનાદમિત્રં ચ સ્વાત્મૈવાસ્તીતિ ભાવઃ । ઉક્તञ્ચ—

“અપ્યેકં મરણં કુર્યાત્, સંક્રુદ્ધો વલ્લાનરિઃ ।

મારણાનિ લ્લનન્તાનિ, જન્માનિ ચ કરોત્યયમ્ ॥” ઇતિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

તથા આત્યન્તિક પરમ સુખકા જનક હોનેસે ઉત્કૃષ્ટ બન્ધુ હૈ । ઇસલિયે જવ આત્માકા આત્માસે અતિરિક્ત ઇસ અવસ્થામેં કોઈ વાસ્તવિક દૃષ્ટિ સે બન્ધુ-સહાયક હૈ હી નહીં; તો ફિર હે આત્મન્ ! અપને સે સદા ભિન્ન રહે હુઓંકો તુમ અપના સહાયક માનને કી ચાહના ક્યોં કરતે હો ? ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-આત્માસે સદા ભિન્ન રહે હુએ યે સાંસારિક સમસ્ત પદાર્થ, વે ચાહે સ્ત્રી, પુત્ર, મિત્ર આદિ હોં, ચાહે હિરણ્ય, સુવર્ણ આદિ હોં; તુજ્ઞે સાંસારિક કાર્યોંમેં હી સહાયક હોતે હૈં, પારમાર્થિક કાર્યોંમેં નહીં । આત્માકો ઇનકે મમત્વસે નિરન્તર હી જન્મ જરા ઓર મરણાદિક અનેક પ્રકારસે અનેક કષ્ટોંકા સામના કરના પડતા હૈ । ઇન કષ્ટોંકે સ્થાનભૂત ઇસ સંસારસમુદ્રમેં ઉસે વારંવાર ગોતે યાને પડતે હૈં । ઇસલિયે ઇન્હેં અપના સહાયક માનના શત્રુકો સહાયક માનને જૈસા હૈ । અતઃ હે શિષ્ય ! યહ નિશ્ચય વિશ્વાસ રચકર અપની સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ કરો ઓર

બને છે પ્રમાદથી રહિત આત્મા જ આત્માનો એકાંતિક તથા આત્યન્તિક પરમ સુખનો જનક હોવાથી ઉત્કૃષ્ટ બન્ધુ છે. માટે જ્યારે આત્માનો આત્માથી અતિ-રિક્ત આ અવસ્થામાં કેઈ વાસ્તવિક દૃષ્ટિથી બન્ધુ-સહાયક છે જ નહિ, તો પછી હે આત્મન્ ! પોતાનાથી સદા ભિન્ન રહેલાઓને તું પોતાના સહાયક માનવાની ચાહના શા માટે કરે છે ?

ભાવાર્થ—આત્માથી સદા ભિન્ન રહેલા એ સાંસારિક સમસ્ત પદાર્થ—ભલે સ્ત્રી પુત્ર મિત્ર આદિ હોય, યાહે હિરણ્ય સુવર્ણ આદિ હોય તેને સાંસારિક કાર્યોમાં જ સહાયક બને છે પરમાર્થિક કાર્યોમાં નહિ આત્માને તેના મમત્વથી નિરન્તર જ જન્મ, જરા અને મરણાદિક અનેક પ્રકારના અનંત કષ્ટોનો સામનો કરવો પડે છે તે કષ્ટોના સ્થાનભૂત આ સંસારસમુદ્રમાં તેને વારવાર ગોથા ખાવા પડે છે માટે તેના પોતાના સહાયક માનવા તે શત્રુને સહાયક માનવા બરાબર છે. માટે હે શિષ્ય ! એ નિશ્ચય વિશ્વાસ રાખીને પોતાની સંયમ યાત્રાનો નિર્વાહ

પરિવ્રજેત-પરિ=સમન્તાદ્ વ્રજેત્=વિહરેત્-સંયમાનુષ્ઠાનવિધાયી ભવેદિત્યર્થઃ॥સૂ૦૯॥

સ્વાત્મનો વીર્યગુણાવલમ્બનેનૈવ મોક્ષઃ પ્રાપ્યતે ન તુ પરસાહાય્યાશ્રયણેનેતિ દર્શયિતું કથયતિ-‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-પુરિસા ! તુમમેવ તુમં મિત્તં, કિં બહિયા મિત્ત-મિચ્છસિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા—પુરુષ ! ત્વમેવ તવ મિત્રં, કિં બહિર્મિત્રમિચ્છસિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—હે પુરુષ !=પુરુષાર્થસાધનસમર્થ ! શિષ્ય ! તવ મિત્રં ત્વમેવ=આત્મનઃ કલ્યાણાર્થ સમુદ્યતસ્ય-ગૃહીતસંયમભારસ્ય તવ સહાયસ્તવાત્મૈવાસ્તીત્યર્થઃ । શ્રુત-ચારિત્રધર્માચરણકરણેનૈકાન્તતોડત્યન્તતશ્ચ પરમસુખજનકત્વાત્પમાદરહિત આત્મૈ-વાત્મનો મિત્રમુપકારી પરમાર્થતો, ન ત્વન્ય ઇતિ ભાવઃ । બહિઃ=બાહ્યં સ્વાત્મનો વ્ય-તિરિક્તં, મિત્રં=હિતકારિણં સહાયં, કિમ્=કુતઃ, ઇચ્છસિ=અન્વેષયસિ ।

કમઠ-કચ્છપકે સમાન સંવૃતશરીર હોતે હુએ વે મહર્ષિ સંયમકી આરાધના કરનેમેં સાવધાન રહે ॥ સૂ૦ ૯ ॥

અપની આત્માકે વીર્યગુણકે અવલમ્બન સે હી મોક્ષ પ્રાપ્ત હોતા હૈ કિન્તુ દૂસરોંકી સહાયતાકે સહારે નહીં । ઇસ વાતકો દિલ્લોલને કે લિયે કહતે હૈ-‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

પુરુષાર્થ સાધન કરનેમેં સમર્થ હે પુરુષ=હે શિષ્ય ! તુમ હી સ્વયં અપને મિત્ર હો-અપની આત્માકે કલ્યાણ કરનેમેં ઉદ્યત હો કર જો તુમને યહ સંયમકા ભાર અંગીકાર કિયા હૈ ડસમેં તુમ્હારી આત્માસે અતિરિક્ત ઓર દૂસરા કોઈ સહાયક નહીં હૈ । શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કે આચરણ કરને સે આત્મા અપ્રમાદી બનતા હૈ । પ્રમાદ સે રહિત આત્મા હી આત્માકા એકાન્તિક

અને કાયાથી સદા સાવધ ક્રિયાઓથી રહિત થઈને, અથવા કમઠ-કચ્છપના સમાન સંવૃતશરીર થઈને તે મહર્ષિ સંયમની આરાધના કરવામાં સાવધાન રહે. ॥સૂ૦૯॥

પોતાના આત્માના વીર્યગુણના અવલંબનથી જ મોક્ષ પ્રાપ્ત થાય છે, પણ બીજાઓની સહાયતાના સહારાથી થતો નથી. આ વાતને બતલાવવા માટે કહે છે—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ.

પુરુષાર્થ સાધન કરવામાં સમર્થ હે પુરુષ=હે શિષ્ય ! તમે પોતે જ તમારી બાતના મિત્ર છો. પોતાના આત્માનું કલ્યાણ કરવામાં ઉદ્યોગી બની જે તમે સંયમનો ભાર અંગીકાર કરેલ છો, તેમાં તમારી આત્માથી અતિરિક્ત બીજા કોઈ સહાયક નથી. શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું આચરણ કરવાથી આત્મા અપ્રમાદી

મૂલમ્—જં જાણિજ્જા ઉચ્ચાલઇયં, તં જાણિજ્જા દૂરાલઇયં ।

જં જાણિજ્જા દૂરાલઇયં, તં જાણિજ્જા ઉચ્ચાલઇયં ॥સૂ૦ ૧૧॥

છાયા—યં જાનીયાત્ ઉચ્ચાલયિકં તં જાનીયાત્ દૂરાલયિકમ્ ।

યં જાનીયાત્ દૂરાલયિકં તં જાનીયાત્ ઉચ્ચાલયિકમ્ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા—યં પુરુષમ્ ઉચ્ચાલયિકમ્—ઉચ્ચઃ=કર્માપનયનભાવસંપન્નઃ, આલયઃ—
આ=સમન્તાત્ લીયન્તે વિચારા યસ્મિન્ સ આલયઃ=અન્તઃકરણમ્, ઉચ્ચઃ આલયઃ
ઉચ્ચાલયઃ, સોડસ્યાસ્તીતિ—ઉચ્ચાલયિકસ્તમ્ કર્મણામપનેતારં જાનીયાત્, તં
દૂરાલયિકં=કઠિનતરતપઃસંયમારાધનપ્રાપ્તનીયત્વેન દૂરે આલયઃ દૂરાલયઃ=મોક્ષ-
સ્થાનં, સોડસ્યાસ્તીતિ દૂરાલયિકસ્તં મોક્ષગામિનં જાનીયાત્ । પરસ્પરકાર્યકારણભા-
વપ્રદર્શનાયોક્તમર્થં ગત-પ્રત્યાગતરૂપેણ કથયતિ—‘યં જાનીયાત્દૂરાલયિકમ્’

જિસકા આત્મા હી મિત્ર હૈ એસે પુરુષકી પહિચાન કૈસે હોતી હૈ ?
ઇસપ્રકારકી શિષ્યકી જિજ્ઞાસા હોને પર સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘જં જાણિજ્જા ’ ઇત્યાદિ ।

કર્મોંકા જો અપનેતા હૈ ઉસકા નામ ઉચ્ચાલયિક, તથા મોક્ષગામી
કા નામ દૂરાલયિક હૈ । અર્થાત્—જો ઉચ્ચાલયિક=કર્મોંકા નાશ કરને-
વાલા હૈ વહ દૂરાલયિક=મોક્ષગામી હૈ, એસા સમજો । કઠિનતર તપ
ઔર સંયમકી આરાધના સે પ્રાપ્ત હોનેવાલા હોને કે કારણ દૂર જો આલય
—સ્થાન હૈ ઉસકા નામ દૂરાલય—મોક્ષ હૈ । યહ જિસકે હોતા હૈ વહ દૂ-
રાલયિક અર્થાત્ મોક્ષગામી હૈ । પરસ્પરમેં કાર્ય—કારણ ભાવકા પ્રદર્શન
કરાનેકે લિયે ઉક્ત અર્થકો સૂત્રકાર ગત-પ્રત્યાગત (હેર-ફેર) રૂપસે કહતે
હૈ—જો દૂરાલયિક=મોક્ષગામી—અર્થાત્ મુક્તિકે માર્ગપર આરૂઢ હૈ, ઉસકો

જેનો આત્મા જ મિત્ર છે એવા પુરુષની ઓળખાણ કેવી રીતે થાય ?
આ પ્રકારની શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી સૂત્રકાર કહે છે—‘જં જાણિજ્જા ’ ઇત્યાદિ.

કર્મોના જે અપનેતા છે તેનું નામ ઉચ્ચાલયિક તથા મોક્ષગામીનું નામ
દૂરાલયિક છે. અર્થાત્—જે ઉચ્ચાલયિક=કર્મોના નાશ કરવાવાળા છે તે દૂરાલયિક=
મોક્ષગામી છે, એમ સમજો કઠિનતર તપ અને સંયમની આરાધનાથી પ્રાપ્ત
થવાવાળા હોવાના કારણે દૂર જે આલય-સ્થાન છે. તેનું નામ દૂરાલય—મોક્ષ છે.
તે જેને થાય છે તે દૂરાલયિક અર્થાત્ મોક્ષગામી છે. પરસ્પરમાં કાર્યકારણ
ભાવનું પ્રદર્શન કરાવવા માટે ઉક્ત અર્થને સૂત્રકાર ગત-પ્રત્યાગત (હેર-ફેર)
રૂપથી કહે છે—જે દૂરાલયિક=મોક્ષગામી અર્થાત્ મુક્તિના માર્ગ ઉપર આરૂઢ છે

આત્મા યસ્ય મિત્રં સ કથં જ્ઞાતવ્યઃ ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘ जं जाणिज्जा ’ इत्यादि ।

સોચો કિ હસ યાત્રામેં મેરા સહાયક મેરી આત્મા હી હૈ, અન્ય-આત્મ-બાહ્ય-કોઈં મી પદાર્થ નહીં । જો હનકી સહાયતાકી અપેક્ષાવાલે બનોગે તો અપની આત્માકો મોહરૂપી સમુદ્રમેં ડુબોનેવાલે હોઓગે । હસલિયે હનકે મોહમેં ફંસ કર આત્માકો મોહરૂપી સમુદ્રમેં ડાલનેકી ચેષ્ટા ન કરો ઓર પરમાર્થસે યહ સમજાતે હુએ હસ યાત્રામેં આગે બઢતે રહો કિ શ્રુત-ચારિત્રરૂપ ધર્મકે અનુષ્ઠાનસે આત્માકા સહાયક આત્મા હી હૈ ઓર તદ્વિ-રોધી સાવચક્રિયાઓંકે કરનેસે આત્મા હી આત્માકા શત્રુ હૈ । કહા મી હૈ—

“अप्येकमरणं कुर्यात्, संक्रुद्धो बलवानरिः ।

मरणानि त्वनन्तानि, जन्मानि च करोत्ययम् ॥ ૧ ॥” इति ।

અર્થ-બલવાન સે બલવાન મી શત્રુ અગર ક્રુદ્ધ હો કર મારે તો એક હી જન્મમેં મારતા હૈ, પરંતુ સાવચ ક્રિયામેં પ્રવૃત્ત આત્મા સ્વયં શત્રુ બન કર અનન્તવાર અપને આપકો મારતા હૈ ઓર જન્મ લેતા હૈ । અર્થાત્ આત્મા હી અપના શત્રુ બન કર ચતુર્ગતિ સંસારમેં જન્મ મરણ કરતા રહતા હૈ, કિન્તુ કમી મી મોક્ષકો પ્રાપ્ત નહીં હોતા ॥ ૧ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કરો, અને વિચારો કે—આ યાત્રામાં મારો સહાયક મારો આત્મા જ છે. બીજું બાહ્ય કોઈ પણ પદાર્થ નહિ. જો તેની સહાયતાની અપેક્ષાવાળા બનશો તો પોતાના આત્માને મોહરૂપી સમુદ્રમાં ડુબાવનારા બનશો, માટે તેના મોહમાં ફસીને આત્માને મોહરૂપી સમુદ્રમાં નાંખવાની ચેષ્ટા ન કરો, અને પરમાર્થથી એ સમજીને આ યાત્રામાં આગળ વધતા રહો. શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મના અનુષ્ઠાનથી આત્માનો સહાયક આત્મા જ છે, અને તેના વિરોધી સાવચ ક્રિયાઓના કરવાથી આત્મા જ આત્માનો શત્રુ છે. કહ્યું છે—

“अप्येकमरणं कुर्यात्, संक्रुद्धो बलवानरिः ।

मरणानि त्वनन्तानि, जन्मानि च करोत्ययम्” ॥ ૧ ॥ इति ।

અર્થ:—બળવાનથી બળવાન પણ શત્રુ કોધી થઈને મારે તો એક જ જન્મમાં મારે છે, પરંતુ સાવચ ક્રિયામાં પ્રવૃત્ત આત્મા સ્વયં શત્રુ બનીને અનંત વાર પોતે પોતાને મારે છે, અને જન્મ લે છે. અર્થાત્ આત્મા જ પોતાનો શત્રુ બનીને ચતુર્ગતિ સંસારમાં જન્મ મરણ કરતો રહે છે, કિન્તુ કદી પણ મોક્ષ પ્રાપ્ત કરતો નથી ॥ ૧ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

મૂલમ્—પુરિસા! અત્તાળમેવ અભિણિગિજ્ઞ એવં દુઃખા
પમુચ્ચસિ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

છાયા—પુરુષ ! આત્માનમેવાભિનિગૃહ્ય એવં દુઃખાત્ પ્રમોક્ષ્યસે ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ટીકા—હે પુરુષ ! પરમપુરુષાર્થસાધનસમર્થ ! ભવ્ય ! આત્માનમેવ=સ્વસ્વ-
રૂપાવલોકનં શ્રુતચારિત્રધર્મારાધનં વા પરિત્યજ્યાઽનાદિમિથ્યાત્વાવિરત્યાદિ-
વાસનાવશાદ્ વિષયસંગાર્થં વહિર્ધાવમાનં સ્વાત્માનમેવ અભિનિગૃહ્ય=મોક્ષસાધકધ-
ર્માનુષ્ઠાનપ્રવલતરસંસ્કારેણ તતઃ પ્રતિનિવર્ત્ય, એવં=પુનઃપુનરનેન પ્રકારેણ સ્વાત્માનં
જ્ઞાનદર્શનચારિત્રાત્મનિષ્ઠં કુર્વન્, દુઃખાત્=દુઃસ્વકારણાત્ જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મવ-
ન્થાત્ પ્રમોક્ષ્યસે=મુક્તો ભવિષ્યસિ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

હે પુરુષ—અર્થાત્ પરમ પુરુષાર્થ—મોક્ષકે સાધનમેં સમર્થ હે ભવ્ય !
અપની આત્માકો વૈષયિક માર્ગ સે હટા કર આત્મનિષ્ઠ કરો, इसीसे
तुम्हारे दुःखोंका अन्त होगा ।

ભાવાર્થ—જો સંયમી અપની આત્માકો હી સંયમ-માર્ગકે સાધનમેં
સહાયી માનતા હૈ ઉસે મુક્તિકા લાભરૂપ ફલ પ્રાપ્ત હોતા હૈ । સંસાર-
દશામેં ફંસે હુએ વ્યક્તિયોંસે, અથવા સંયમકી આરાધનામેં સાંસારિક
પરપદાર્થ કી સહાયતાકી હી અપેક્ષા રખનેવાલે સંયમી સે સ્વરૂપકા અવ-
લોકન, અથવા શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મકા આરાધન નહીં હો સકતા હૈ । જવ
તક इस प्रकारकी प्रवृत्ति संयमी में उत्पन्न नहीं होती है तब तक वह
अपने कर्तव्य-मार्गसे अलग ही रहता है । उसकी आत्मा अनादिकालसे
સંસક્ત (લગા હુઆ) મિથ્યાત્વ અવિરતિ આદિકી ભાવનાકે વશસે

હે પુરુષ ! અર્થાત્ પરમપુરુષાર્થ—મોક્ષના સાધનમાં સમર્થ હે ભવ્ય !
પોતાના આત્માને વૈષયિક માર્ગથી હટાવી આત્મનિષ્ઠ કરો, તેનાથી તમારા
દુખોનો અંત આવશે

ભાવાર્થ.—જે સંયમી પોતાના આત્માને જ સંયમ માર્ગના સાધનમાં
સહાયક માને છે તેને મુક્તિના લાભરૂપ ફળ પ્રાપ્ત થાય છે. સંસારદશામાં
ફંસેલી વ્યક્તિયોથી, અથવા સંયમની આરાધનામાં સાંસારિક પરપદાર્થની સહા-
યતાની જ અપેક્ષા રાખવાવાળા સંયમીથી સ્વરૂપનું અવલોકન, અથવા શ્રુતચા-
રિતરૂપ ધર્મનું આરાધન ખની શકતું નથી. જ્યાં સુધી આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ
સંયમીમાં ઉત્પન્ન નથી થતી ત્યાં સુધી તે પોતાના કર્તવ્ય માર્ગથી અલગ જ
રહે છે. તેની આત્મા અનાદિ કાળથી સંસક્ત (લાગેલા) મિથ્યાત્વ અવિરતિ

इत्यादि । यं पुरुषं दूरालयिकं मोक्षगामिनं मोक्षमार्गारूढं जानीयात्, तमुच्चालयिकं=कर्मणां तदास्रवद्वाराणां चापनेतारं कर्माणि दूरीकर्तुं कृतनिश्चयं सोत्साहं बद्धपरिकरमिति यावत् जानीयात् ॥ सू० ११ ॥

स्वात्मैव येन मित्रतयाऽङ्गीकृतः स किं फलं प्राप्नोतीत्याह—‘पुरिसा’ इत्यादि।

उच्चालयिक = कर्म और उनके आस्रवोंके द्वारोंका नाश करनेवाला समझो । क्यों कि वह कर्मों को दूर करनेके लिये कृतनिश्चय एवं उत्साहसंपन्न होता है । कर्मों के नाश करनेमें वह किसी भी प्रकारसे पीछे पैर नहीं रखता है, अर्थात् कटिबद्ध होता है ।

भावार्थ—शिष्यने जो यह प्रश्न किया था कि आत्माको ही जो संयमयात्रामें सहायक मानता है उसकी पहिचान क्या है ? इसका समाधान सूत्रकारने इस सूत्रसे किया है । वे कहते हैं कि जो संयमी इस प्रकारकी प्रवृत्ति करता है वह कर्मोंके दूर करने में सदा कटिबद्ध रहता है । इसी रूपसे वह दृष्टिपथ होता है । उसकी प्रत्येक क्रियाएँ ऐसी होती हैं कि जिनसे कर्मोंका आस्रव रुकता है और संचित कर्मोंकी निर्जरा होती रहती है । ऐसा संयमी मुनि ही मोक्षमार्ग पर आरूढ माना जाता है ॥ सू० ११ ॥

अपनी आत्मा को ही जिसने मित्ररूपसे अंगीकार किया है वह संयमी किस फलको प्राप्त करता है ? इसकेलिये कहते हैं—‘पुरिसा’ इत्यादि ।

तेને ઉચ્ચાલયિક-કર્મ અને તેના આસ્રવદ્વારોનો નાશ કરવાવાળા સમજો. કારણ કે તે કર્મોને દૂર કરવા માટે કૃતનિશ્ચય તેમજ ઉત્સાહસંપન્ન બને છે. કર્મોનો નાશ કરવામાં તે કોઈ પણ પ્રકારે પાછળ પગલું ભરતાં નથી, અર્થાત્ કટિબદ્ધ થાય છે.

ભાવાર્થ—શિષ્યે જે આ પ્રશ્ન કરેલ હતો કે આત્માનેજ જે સંયમયાત્રામાં સહાયક માને છે તેની ઓળખાણ શું છે ? તેનું સમાધાન સૂત્રકારે આ સૂત્રથી કરેલ છે, તે કહે છે કે જે સંયમી આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ કરે છે તે કર્મોને દૂર કરવામાં સદા કટિબદ્ધ રહે છે. તેવા રૂપથી તે દૃષ્ટિપથ થાય છે. તેની દરેક ક્રિયાઓ એવી હોય છે કે જેનાથી કર્મોનો આસ્રવ રોકાય છે, અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા થતી રહે છે, એવા સંયમી મુનિ જ મોક્ષ માર્ગ પર આરૂઢ માનવામાં આવે છે. ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

પોતાના આત્માને જ જેણે મિત્રરૂપથી અંગીકાર કરેલ છે તે સંયમી કેવા ફળને પ્રાપ્ત કરે છે તેને માટે કહે છે—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ.

છાયા—પુરુષ ! સત્યમેવ સમભિજાનીહિ, સત્યસ્યાજ્ઞયા સ ઉપસ્થિતો મેધાવી મારં તરતિ । સહિતો ધર્મમાદાય શ્રેયઃ સમનુપશ્યતિ ॥ મૂ० ૧૩ ॥

ટીકા—હે પુરુષ ! સત્યમેવ સમભિજાનીહિ—ગુરુદેવં સાક્ષીકૃત્ય યા શ્રુતચારિત્ર-ધર્મસ્ય ગ્રહણી તથાઽઽસેવની ચ શિક્ષા પરિગૃહીતા, તામ્ અવિસ્મરન્ પરિપાલયે-ત્યર્થઃ । યદ્વા—સત્યઃ=આગમસ્તમેવ સમભિજાનીહિ=ચરણકરણરૂપમાગમોક્તમર્થ પ્ર-તિપાલયેત્યર્થઃ । એતત્ કિમર્થમિત્યાહ—‘સત્યસ્ય’ ઇત્યાદિ । સત્યસ્ય=ગુરુદેવં સા-ક્ષીકૃત્ય પરિગૃહીતાયાઃ શ્રુતચારિત્રધર્મસ્ય ગ્રહણ્યા આસેવન્યાશ્ચ શિક્ષાયાઃ જિનપ્ર-વચનસ્ય વા આજ્ઞયા=અનુસરણેન ઉપસ્થિતઃ સન્ મેધાવી=હેયોપાદેયવિવેકકુશલઃ, મારં=સંસારાર્ણવં તરતિ=સમુત્તીર્ણો ભવતિ । કિં ચ—સહિતઃ=હિતેન જ્ઞાનાદિના યુક્તઃ ધર્મમાદાય=શ્રુતચારિત્રલક્ષણં ધર્મં ગૃહીત્વા શ્રેયઃ=શુભં મોક્ષપદં સમનુપશ્યતિ, તીર્થઙ્ક-રાદિભિર્દૃષ્ટં સમ્યગવલોકયતીત્યર્થઃ ॥ મૂ० ૧૩ ॥

ફિર કહતે હૈ—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

હે પુરુષ=પરમપુરુષાર્થકે સાધન કરને મેં સમર્થ ભવ્ય ! ભગવાન્ તથા ગુરુકો સાક્ષી કરકે જો તુમને ગ્રહણી-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકો અંગીકાર કરનેવાળી એવં આસેવની=ઉસ ધર્મકો નિર્દોષ રીતિસે પાલન કરનેવાળી શિક્ષા ગ્રહણ કી હૈ, ઉસે તુમ સ્વપ્ન મેં બી મત ભૂલો । ઇસકા અન્તઃ-કરણસે પાલન કરો । અથવા ચરણકરણરૂપ આગમોક્ત અર્થ—(ચરણ-સત્તરી ઓર કરણસત્તરી) કા પાલન કરો । જિનપ્રવચનકી આજ્ઞા કે અનુસાર જો અપની પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ હેય ઓર ઉપાદેય કે વિવેકસે કુશલ હો જાતા હૈ । ઇસ કુશલતાકા યહ ફલ હૈ કિ—વહ સંસારસમુદ્ર સે પાર હો જાતા હૈ । તથા—આત્માકે હિતકારી હોનેસે હિતરૂપ

ફરીથી કહે છે—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ.

હે પુરુષ ! = પરમપુરુષાર્થનું સાધન કરવામાં સમર્થ ભવ્ય ! ભગવાન તથા ગુરુને સાક્ષી કરીને જે તમે ગ્રહણી-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને અંગીકાર કરવાવાળી, અને આસેવની—તેને નિર્દોષ રીતિથી પાળવાવાળી શિક્ષા ગ્રહણ કરી છે તેને તમે સ્વપ્નમાં પણ ભૂલો નહિ. તેનું અંતઃકરણથી પાલન કરો. અને ચરણકરણરૂપ આગમોક્ત અર્થ (ચરણસત્તરી અને કરણસત્તરી)નું સેવન કરો. જિનપ્રવચનની આજ્ઞાનુસાર જે પોતાની પ્રવૃત્તિ કરે છે તે હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી કુશળ બની જાય છે. તે કુશળતાનું એ ફળ છે કે તે સંસારસમુદ્રથી પાર થઈ જાય છે, તેમજ આત્માના હિતકારી હોવાથી હિતરૂપ જ્ઞાનાદિ ગુણોથી યુક્ત

અપિ ચ—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—પુરિસા ! સચ્ચમેવ સમભિજાણાહિ, સચ્ચસ્સ આ-
ણાણ સે ઉવટ્ઠિણ મેહાવી મારં તરહ્ । સહિઓ ધમ્મમાયાય સેયં
સમણપસ્સહ્ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

વિષયોંની ઓર ચક્કર કાઢા કરતા હૈ ઓર મોક્ષકે સાધક ધાર્મિક અનુ-
ષ્ઠાનકે સંસ્કારોં સે વચ્ચિત રહતા હૈ । ઇસ બાતકા ધ્યાલ કર સૂત્રકાર
શિષ્યજન કે શિક્ષાર્થ કહતે હૈં કિ—હે શિષ્ય ! યદિ તુમ પરમપુરુષાર્થ
મોક્ષકે સાધન કરને મેં અપનેકો શક્તિશાલી સમજતે હો તો તુમ
સ્વરૂપકા અવલોકનમેં, યા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામેં અપનેકો
વિસર્જિત કર દો । જો એસા નહીં કરતે, વે અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ
એવં અવિરતિ આદિકી લગી હુઈ વાસનાકે વશ સે વિષયોંકે સંગકે લિયે
બાહિરી પદાર્થોં મેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલી અપની આત્મા કો ઉસ ઓર સે હટા
નહીં સકતે । ઇસલિયે તુમ મોક્ષકે સાધક ધાર્મિક અનુષ્ઠાનકે સંસ્કાર
કો અપને આપમેં પ્રબલતર કરો, તાકિ વિષયમાર્ગની ઓર બઢતી હુઈ
યહ તુમ્હારી આત્મા ઉસ ઓર ન જા સકે—ઉસ તરફસે નિવૃત્ત હો જાવે ।
ઇસ પ્રકારકે વારં વારે કે અભ્યાસ સે આત્માકો અપને નિજરૂપ—સમ્યગ્દર્શન
સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર—મેં સ્થાપિત કરતે હુઈ તુમ દુઃખોં કે
કારણભૂત જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોં કે બન્ધન સે મુક્ત હો જાઓગે ॥૧૨॥

આદિ ભાવનાના વશથી વિષયોની તરફ જ લાગ્યો રહે છે, અને મોક્ષના
સાધક ધાર્મિક અનુષ્ઠાનના સંસ્કારથી વચ્ચિત રહે છે. આ વાતનો ધ્યાલ કરી
સૂત્રકાર શિષ્યજનના શિક્ષાર્થ કહે છે કે:—હે શિષ્ય ! જો તું પરમપુરુષાર્થ
મોક્ષનું સાધન કરવામાં પોતાને શક્તિશાળી સમજતો હોય તો તું સ્વરૂપના
અવલોકનમાં અગર શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામાં પોતાને વિસર્જિત કરી દે.
જો આમ નથી કરતા તો અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ અને અવિરતિ આદિની લાગેલી
વાસનાના વશથી વિષયોના સંગ માટે બહારના પદાર્થોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા
પોતાના આત્માને તે તરફથી હટાવી શકતા નથી, માટે તમે મોક્ષના સાધક ધાર્મિક
અનુષ્ઠાનના સંસ્કારને પોતે પોતામાં પ્રબલતર કરો, જેથી વિષયમાર્ગની તરફ
વધતો એ તમારો આત્મા એ તરફ જઈ શકે નહિ—તે તરફથી નિવૃત્ત થઈ જાય.
આ પ્રકારના વારંવારના અભ્યાસથી આત્માને—પોતાને નિજરૂપ—સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્-
જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્ર—માં સ્થાપિત કરીને તમે દુઃખોના કારણભૂત જ્ઞાનાવર-
ણીયાદિક કર્મોના બંધનથી મુક્ત થઈ જશો ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ચન રાગદ્વેષાભિભૂતાઃ અસંયમરતાઃ સ્વાર્થ પરાર્થ વા યસ્મિન્=પરિવન્દનાદૌ પ્રમાદ્યન્તિ= આર્તરોદ્રધ્યાનલગ્નેન ચેતસા પરિવન્દનાદિરૂપસાવધવ્યાપારેષુ પ્રવૃત્તિરૂપં પ્રમાદં કુર્વન્તિ । તે પ્રમાદકારિણઃ સ્વલુ નિજાત્મનો દુઃખં ન ક્ષપયન્તિ; કિન્તુ કર્મોપચયેન સ્વાત્માનં દુઃખાર્ણવે નિપાતયન્તીતિ ભાવઃ । યદ્વા-‘પમોયંતિ’ इति पाठपक्षे ‘प्रमो-दन्ते’ इति च्छाया । तस्यायमर्थः - ‘जंसि’ यस्मिन् परिवन्दनादौ ‘एगे’ एके= केचित् प्रमोदन्ते=हृष्यन्ति-हर्षं प्राप्नुवन्ति, न तत्तस्य हितायेति भावः ॥ सू० १४॥

एतत्प्रतिपक्षभूतस्त्वप्रमादो यत् फलं प्राप्नोति तदाह-‘सहिओ’ इत्यादि ।

इस प्रकारकी चाहनावाले जो कोई भी मुनि हैं वे राग और द्वेषसे युक्त हैं और असंयममें आसक्त हैं । ऐसे प्राणी स्वार्थ अथवा परमार्थका कुछ भी ख्याल न कर सिर्फ अपनी ख्यातिलाभ पूजादिककी चाहनाके आधीन हो आर्त और रौद्र ध्यानमें संलग्नचित्त रहा करते हैं और सावध व्यापारोंमें प्रवृत्ति करनेरूप प्रमादका सेवन करते रहते हैं । ये प्रमादकारी प्राणी निश्चित ही अपनी आत्माके दुःखोंको दूर न कर प्रत्युत कर्मोंके संचयसे स्वयं अपनी आत्माको दुःखरूपी समुद्रमें धकेलते हैं । अथवा सूत्रमें ‘पमायंति’ के स्थानमें कहीं ‘पमोयंति’ ऐसा भी पाठ है । उसका अर्थ इस प्रकार होता है-जिस परिचन्दन आदिमें कितनेक प्राणी हर्ष मनाते हैं किन्तु वह उसकी आत्मा के हितके लिये नहीं होता ॥ सू० १४॥

इससे भिन्न प्रवृत्ति करनेवाला अप्रमादी मुनि जिस फलको पाता है वह दिखलाते हैं—‘सहिओ’ इत्यादि ।

કરે છે. આ પ્રકારની ચાહનાવાળા જે કોઈ મુનિ છે તે રાગ અને દ્વેષથી યુક્ત છે. અને અસંયમમાં આસક્ત છે. એવા પ્રાણી સ્વાર્થ અથવા પરાર્થનો જરા પણ ખ્યાલ કરના નથી, ફક્ત પોતાની ખ્યાતિલાભ અને પૂજાદિકની ચાહનાને આધીન થઈ આર્ત અને રૌદ્ર ધ્યાનમાં સંલગ્નચિત્ત રહ્યા કરે છે, અને સાવધ વ્યાપારોમાં પ્રવૃત્તિ કરવારૂપ પ્રમાદનું સેવન કરતા રહે છે. એ પ્રમાદકારી પ્રાણી નિશ્ચિત જ પોતાના આત્માને દુઃખથી દૂર ન કરતાં પ્રત્યુત કર્મોના સંચયથી સ્વયં પોતાના આત્માને દુઃખરૂપી સમુદ્રમાં નાખે છે. અથવા સૂત્રમાં ‘પમાયંતિ’ ના સ્થાનમાં ક્યાંક ‘પમોયંતિ’ એવો પણ પાઠ છે, તેનો અર્થ આ પ્રકારે થાય છે-જે પરિવદન આદિમાં કેટલાક પ્રાણી હર્ષ મનાવે છે, પણ તે તેના આત્માના હિત માટે હોતું નથી ॥ સૂ० ૧૪ ॥

તેનાથી ભિન્ન પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અપ્રમાદી મુનિ જે ફળને પામે છે તે બતાવે છે—‘સહિઓ’ ઇત્યાદિ.

પ્રમાદરહિતસ્ય મહર્ષેર્ગુણા ઉક્તાઃ, અથ પ્રમાદવતો દોષાન્ દર્શયિતુમાહ-
'દુહઓ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ-દુહઓ જીવિયસ્સ પરિવંદનમાળણપૂયણાણ, જંસિ
એગે પમાયાંતિ ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

છાયા-દ્વિહતો જીવિતસ્ય પરિવંદનમાનનપૂજનાર્થ, યસ્મિન્ એકે પ્રમાદ્યન્તિ ॥

ટીકા-દ્વિહતઃ=દ્વાભ્યાં રાગદ્વેષાભ્યાં હતઃ રાગદ્વેષવશીભતઃ જીવિતસ્ય=ચપ-
લાવિલાસચશ્ચલસ્ય ક્ષણભંગુરસ્ય જીવનસ્ય, સુખાર્થ, તથા પરિવંદનમાનનપૂજ-
નાર્થ-પરિવંદનનં=સંસ્તવઃ, યથા-'શ્રીમાન્ આયુષ્માન્ ભવે'-ત્યાદિ, તદર્થ, તથા
માનનનં=જનસત્કારઃ, યથા-'અભ્યુત્થાનાસનદાનાદિભિર્જના માં માનયિષ્યન્તી'-તિ
તદર્થ, તથા પૂજનં, યથા-'સમુપાર્જિતગ્રામજનપદસ્ય મમ દાનમાનપ્રણામસેવાદિભિ-
ર્જનાઃ પૂજનં કરિષ્યન્તી'-તિ, તદર્થ પ્રાણાતિપાતાદિષુ પ્રવર્તતે । એવમ્-એકે=યે કે

જ્ઞાનાદિ ગુણોંસે યુક્ત વહ સંયમી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કર શુભ
એવં તીર્થઢૂરાદિદ્વારા દૃષ્ટ એસે મુક્તિસ્થાનકા દર્શક હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

પૂર્વ સૂત્રમેં પ્રમાદરહિત મહર્ષિકે ગુણોંકા કથન કિયા હૈ, અવ પ્રમા-
દસંપન્ન પ્રાણીકે દોષોંકો દિશ્વલાતે હૈ-'દુહઓ' ઇત્યાદિ ।

જો મનુષ્ય, રાગ એવં દ્વેષ, ઇન દોનોંસે યુક્ત હૈ વહ બિજલીકે ચમકારે કે
સમાન ક્ષણભંગુર ઇસ જીવનકો સુખી કરનેકે લિયે 'આપ લક્ષ્મીવાન્ હોં,
ચિરંજીવી હોં' ઇત્યાદિ રૂપસે અપની સ્તુતિ કરાનેકે લિયે, 'લોગ મુઝે દેશ્વ
કર સ્વહે હોંગે, આસનાદિકકે પ્રદાનસે મેરા સન્માન કરેંગે' ઇસ પ્રકાર
અન્ય જનોંસે સત્કાર પ્રાપ્તિકે લિયે, તથા 'મુઝે ગ્રામાધિપતિ યા નગરાધિ-
પતિ દાન, માન, પ્રણામ ઓર સેવા-શુશ્રૂષા આદિસે પ્રતિષ્ઠિત કરેંગે' ઇસ
પ્રકાર અપની પૂજાકે લિયે પ્રાણાતિપાતાદિક અકૃત્યોંમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ।

તે સંયમી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરી શુભ તેમજ તીર્થઢૂરાદિદ્વારા દૃષ્ટ
એવા મુક્તિસ્થાનના દર્શક બને છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

પૂર્વ સૂત્રમાં પ્રમાદરહિત મહર્ષિના ગુણોંનું કથન કરેલ છે, હવે પ્રમાદ-
સંપન્ન પ્રાણીના દોષો કહે છે-'દુહઓ' ઇત્યાદિ.

જે મનુષ્ય રાગ અને દ્વેષ, એ બન્નેથી યુક્ત છે તે વીજળીના ચમકારા સમાન
ક્ષણભંગુર આ જીવનને સુખી કરવા માટે 'તમે લક્ષ્મીવાન્ થાઓ ચિરંજીવી થાઓ'
ઇત્યાદિ રૂપથી પોતાની સ્તુતિ કરાવવા માટે, તથા 'લોક મને દેખીને ઉભા થશે, આસ-
નાદિકના પ્રદાનથી માંડે સન્માન કરશે' આ પ્રકારે અન્ય જનોથી સત્કાર પ્રાપ્તિ માટે, તથા
'મને ગ્રામાધિપતિ અગર નગરાધિપતિ દાન, માન, પ્રણામ અને સેવા-શુશ્રૂષા આદિથી
પ્રતિષ્ઠિત કરશે.' આ પ્રકારે પોતાની પૂજા માટે પ્રાણાતિપાતાદિક અકૃત્યોમાં પ્રવૃત્તિ

इत्यादि। द्रविकः=रागद्वेषविनिर्मुक्तः मुनिरित्यर्थः, लोकाऽऽलोकप्रपञ्चात् चतुर्दश-
रज्ज्वात्मकलोके आलोकात्=दृश्यमानात् प्रपञ्चात्=चतुर्गतिभ्रमणरूपाद् व्यवहाराद्
मुच्यते=मुक्तो भवतीत्यर्थः। ‘ इति ब्रवीमि ’ अस्य व्याख्यानं प्राग्वत् ॥सू० १५॥

॥ तृतीयाध्ययनस्य तृतीयोद्देशः संपूर्णः ॥ ३-३ ॥

भावार्थ—“ સંધિં લોગસ્સ ” ફસ સૂત્રસે લગાકર “ જો જ્ઞાણાણિ ”
યહાં તક મુનિકે સમ્બન્ધમેં જો કુછ સૂત્રકારને પ્રકટ કિયા હૈ ઉસ પર
વહ મુનિ યદિ હૃદયકી લગનસે પ્રવૃત્તિયુક્ત હોતા હૈ તો યહ નિશ્ચિત હૈ
કિ વહ અવશ્ય હી રાગ ઓર દ્વેષસે રહિત હોતા હુઆ ફસ ચૌદહ (૧૪)
રાજૂ પ્રમાણ લોકમેં ચારોં ગતિયોંકે ભ્રમણસે મુક્ત હો જાતા હૈ। ‘ તિવેમિ ’
ઈતિ બ્રવીમિ, ફસ પદકા વ્યાખ્યાન પહિલેકે સમાન હૈ ॥ સૂ૦ ૧૫ ॥

॥ તૃતીય અધ્યયનકા તૃતીય ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૩ ॥

ભાવાર્થ:—“ સંધિં લોગસ્સ ” એ સૂત્રથી લગાવી “ જો જ્ઞાણાણિ ” ત્યાં
સુધી મુનિના સંબંધમાં જે કંઈ સૂત્રકારે પ્રગટ કરેલ છે તે ઉપર તે મુનિ
જે હૃદયના ભાવથી પ્રવૃત્તિયુક્ત થાય છે તે એ નિશ્ચિત છે કે તે અવશ્ય જ
રાગ અને દ્વેષથી રહિત બનીને આ ચૌદ (૧૪) રાજૂ પ્રમાણલોકમાં ચાર ગતિ-
ઓના ભ્રમણથી મુક્ત થઈ જાય છે. ‘તિવેમિ’ ઇતિ બ્રવામિ—આ પદનું વ્યાખ્યાન
પહેલા સમાન છે. ॥ સૂ૦ ૧૫ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૩ ॥



मूलम्--सहिओ दुःखमच्चत्ताए पुट्ठो नो झंझाएति, पासिमं दविण लो गालोगपवंचाओ मुच्चइ-त्तिबेमि ॥ सू० १५ ॥

छाया—सहितो दुःखमात्रया स्पृष्टः न झञ्झायति, पश्येमं द्रविको लोकाऽऽलोक-प्रपञ्चान्मुच्यते—इति ब्रवीमि ॥ सू० १५॥

टीका—सहितः=ज्ञानचारित्र्ययुक्तः, दुःखमात्रया शीतोष्णपरीषहसमुत्पन्नया व्याध्युपसर्गजनितया वाऽल्पया महत्या वा स्पृष्टो सन् न झञ्झायति=न व्याकुलीभवति, कपायं न कुर्यादित्यर्थः । किंच—हे शिष्य ! इमं=वक्ष्यमाणमर्थं, यद्वा—इममुक्तमर्थं ‘संधिं लोगस्स जाणित्ता’ इत्यारभ्य ‘णो झंझाएति’ इत्यन्तेन प्रतिबोधितं, पश्य=हेयोपादेयविवेकेन सम्यग् जानीहि । तमेवार्थं दर्शयितुमाह—‘द्रविक’

ज्ञान एवं चारित्रसंपन्न संयमी मुनि शीत-उष्ण परीषहसे उत्पन्न अथवा कोई व्याधि या उपसर्गसे जनित दुःखकी थोड़ी या बहुत मात्रासे स्पृष्ट होता हुआ भी कभी भी आकुलितचित्त नहीं होता है । इस लिये हे शिष्य ! इस आगे कहे जानेवाले अर्थको अथवा “संधिं लोगस्स” यहां से लगाकर “णो झंझाएति” यहां तक जो कुछ अभी तक अर्थ प्रकट किया गया है उसको हेय और उपादेयके विवेकसे वासितअन्तःकरण हो तुम पूर्णरूपसे अपने ध्यानमें रखो । “संधिं लोगस्स” यहांसे प्रारंभकर “णो झंझाएति” यहां तक जो कुछ भी विषय कहा गया है उसका निचोड़ अर्थ यही है कि—रागद्वेषसे रहित मुनि चौदह (१४) राजुप्रमाण इस लोकमें प्रत्यक्षसे दिखते हुए चतुर्गति में भ्रमणरूप व्यवहारसे सदाके लिये मुक्त हो जाता है ।

ज्ञान अने चारित्र-संपन्न संयमी मुनि, शीत, उष्ण परीषदुत्थ उत्पन्न थयेले, अथवा केछ व्याधि अगर उपसर्गथी जनित थोड़ी अगर वधारे दुःखनी मात्राथी स्पृष्ट भनवा छतां पणु कटि पणु आकुलितचित्त नथी थतां. भाटे छे शिष्य ! आगण कडेवामां आवशे ते अर्थने अथवा “संधिं लोगस्स” अर्हीयाथी लईने ‘णो झंझाएति’ त्यां सुधी ने कंछ अत्यार सुधी अर्थ प्रगट करेले छे तेने छेय अने उपादेयना विवेकथी वासितअन्तःकरण भनी तमे पूर्ण रूपथी पोताना ध्यानमां राखे. “संधिं लोगस्स” त्यांथी प्रारंभ करी “णो झंझाएति” त्यां सुधी ने कंछ पणु विषय कडेवामां आवेले छे तेने निचोड अर्थ अे छे के-रागद्वेषथी रहित मुनि चौदह (१४) राजु प्रमाण आ लोकमां प्रत्यक्षथी देखातां चतुर्गतिमां भ्रमणरूप व्यवहारथी सदाने भाटे मुक्त थई जाय छे.

મૂલમ્—સે વંતા કોહં ચ માણં ચ માયં ચ લોભં ચ, એયં પાસગસ્સ દંસણં, ઉવરયસત્થસ્સ પલિયંતકરસ્સ, આયાણં સગહભિમ ॥સૂ.૦૧॥

છાયા—સ વમિતા ક્રોધં ચ માનં ચ માયાં ચ લોભં ચ । એતત્ પશ્યકસ્ય દર્શનં ઉપરતશ્ચસ્ય પર્યન્તકરસ્ય, આદાનં સ્વકૃતમિત્ ॥મૂ. ૧ ॥

ટીકા—સઃ=શુભાધ્યવસાયપૂર્વકસંયમારાધનપરાયણઃ શ્રમણઃ, ક્રોધં માનં માયાં લોભ ચ વમિતા=અપનેતા ભવતિ । અત્રૈકપદેન ક્રોધમાનમાયાલોભાનિતિ વક્તવ્યે પૃથક્ પૃથગુપાદાનમેકૈકસ્ય ક્રોધાદેરનન્તાનુબન્ધ્યાદિભેદેન ચતુર્વિધત્વં દર્શયતિ । તેષામુપશમો યુગપન્ન સંભવતિ, તસ્માદેકૈકસ્યોપશમાર્થં પૃથક્ પૃથક્ પ્રયત્નો

સે છૂટ જાતા હૈ । યે સવ વાતેં તીસરે ઉદ્દેશકકે અન્તિમ સૂત્રોંમેં પ્રકટ કર દી ગઈ હૈં । પરન્તુ વહ છૂટતા કૈસે હૈ ? સો કહતે હૈં—‘સે વંતા’ ઇત્યાદિ ।

શુભાધ્યવસાયપૂર્વક સંયમકી આરાધનામેં તત્પર શ્રમણ-મુનિ ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભકા વમિતા-અપનેતા-નાશક હોતા હૈ ।

સૂત્રમેં “ક્રોધં માનં માયાં લોભં” ઇસ પ્રકાર ઇન દ્વિતીયાન્ત પદોંકા અલગ અલગ સ્વતંત્ર પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ, ઉસકા કારણ ક્રોધાદિકોંમેં એકએકકે અનન્તાનુબન્ધી આદિકે ભેદસે ચાર-ચાર ભેદોં કો દિશ્વાના હૈ । અર્થાત્-સમાસ કરને પર-“ક્રોધમાનમાયાલોભાન્”-એસા એક પદ બન જાતા હૈ, ફિર ઓ ઇસ એક પદકા પ્રયોગ ન કર જો પ્રત્યેક પદ સૂત્રમેં સ્વતંત્ર વિભક્તિવાલે રખે હૈં ઉસકા કારણ ક્રોધ આદિ, અનન્તાનુબન્ધી, અપ્રત્યાખ્યાન, પ્રત્યાખ્યાનાવરણ એવં સંજ્વલનકે ભેદસે ચાર ૨ પ્રકારકે હૈં, યહ વતલના હૈ । તથા ઇનકા ઉપશમ એક સાથે એક હી જગહ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ

એ સઘળી વાતો ત્રીજા ઉદ્દેશના અંતિમ સૂત્રમાં તથા આ ઉદ્દેશના અન્ય સૂત્રોમાં પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. પરન્તુ તે છુટે છે કેવી રીતે ? તે કહે છે—સે વંતા ઇત્યાદિ.

શુભ અધ્યવસાયપૂર્વક સંયમની આરાધનામાં તત્પર શ્રમણ-મુનિ ક્રોધ, માન, માયા અને લોભના વમિતા-અપનેતા-નાશક બને છે

સૂત્રમાં “ક્રોધં, માનં, માયા, લોભં” આ પ્રકારે આ દ્વિતીયાન્ત પદોના અલગ અલગ સ્વતંત્ર પ્રયોગ કરેલ છે તેનું કારણ ક્રોધાદિકોમાં એક-એકના અનન્તાનુબન્ધી આદિના ભેદથી ચાર ચાર ભેદ બતાવવાના છે. અર્થાત્ સમાસ કરવાથી “ક્રોધમાનમાયાલોભાન્” એવું એક પદ બને છે તો પણ આ એક પદનો પ્રયોગ ન કરીને જે પ્રત્યેક પદ સૂત્રમાં સ્વતંત્ર વિભક્તિવાળા રાખેલ છે તેનું કારણ ક્રોધ આદિ-અનન્તાનુબન્ધી, અપ્રત્યાખ્યાન, પ્રત્યાખ્યાનાવરણ અને સંજ્વલનના ભેદથી ચાર ચાર પ્રકારે છે, તે બતાવવાનું છે. તથા તેનો ઉપશમ એક સાથે એક જ જગ્યા ઉપર

। તૃતીયાધ્યયનસ્ય ચતુર્થ ઉદ્દેશઃ ।

इहानन्तरतृतीयोद्देशके “न केवलं पापकर्मानाचरणेन मुनिर्भवति, किंतु-अप्रमादशुभभावनापूर्वकसंयमानुष्ठानादेवे”-ति प्रतिबोधितं, तत्र शुभभावना=शुभाध्यवसायः, स च कषायवमनाद् भवति । तस्माद् वान्तवत् कषायास्त्याज्या इति बोधयितुं चतुर्थमुद्देशकं कथयन्नाद्यं सूत्रमाह ‘से वंता’ इत्यादि ।

यद्वा-श्रुतचारित्रलक्षणधर्मे जागरूको वैरोपरतः सन् जातिं वृद्धिं च विदित्वा निष्कर्मदर्शी यो लोकालोकप्रपञ्चात् प्रमुच्यते, स पुनरेवं प्रमुच्यते इति बोधयितुमाह-‘से वंता’ इत्यादि ।

તૃતીય અધ્યયનકા ચતુર્થ ઉદ્દેશ ।

ત્રીસરે અધ્યયનકે ત્રીસરે ઉદ્દેશમેં “કેવલ પાપકર્મકે નહીં કરનેસે મુનિ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ અપ્રમાદ તથા શુભભાવનાપૂર્વક સંયમકે અનુષ્ઠાનસે હી મુનિ-અવસ્થા પ્રાપ્ત હોતી હૈ ” યહ વિષય સમજાયા ગયા હૈ । અવ-“શુભભાવના શુભઅધ્યવસાયરૂપ હૈ । ડસ શુભઅધ્યવસાયકી પ્રાપ્તિ કષાયોંકે ત્યાગસે હી હોતી હૈ । ઇસલિયે “વાન્ત-વમન કિયે હુઅ અન્નકી તરહ કષાય છોડને યોગ્ય હૈં” -ઇસ વિષય કો સમજાનેકે લિયે ઇસ ચતુર્થ ઉદ્દેશકકી પ્રરૂપણા કરતે હુઅ સૂત્રકાર કહતે હૈં-‘સે વંતા’ ઇત્યાદિ ।

અથવા—જો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમેં જાગરૂક સંયમી વૈરસે રહિત હોકર તથા જન્મ ઓર બાલ્યાદિ-અવસ્થાઓંકો દુઃખસહભાવિની જાન કર નિષ્કર્મદર્શી હોતા હૈ વહ લોગ મેં દૃશ્યમાન ચતુર્ગતિયોંમેં ભ્રમણરૂપ પ્રપંચ

ત્રીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ.

ત્રીજા અધ્યયનના ત્રીજા ઉદ્દેશમાં “કેવલ પાપ કર્મ નહિ કરવાથી મુનિ થતાં નથી. પણ અપ્રમાદ તથા શુભભાવનાપૂર્વક સંયમના અનુષ્ઠાનથી જ મુનિ અવસ્થા પ્રાપ્ત થાય છે.” આ વિષય સમજાવવામાં આવેલ છે. હવે શુભ ભાવના શુભ અધ્યવસાયરૂપ છે. તે શુભ અધ્યવસાયની પ્રાપ્તિ કષાયોના ત્યાગથી થાય છે. માટે વાન્ત-વમન કરેલા અન્નની માફક કષાય છોડવા યોગ્ય છે. આ વિષયને સમજાવવા માટે આ ચોથા ઉદ્દેશની પ્રરૂપણા કરતાં સૂત્રકાર કહે છે-‘સે વંતા’ ઇત્યાદિ.

અથવા—જો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમાં જાગરૂક સંયમી વૈરથી રહિત બનીને તથા જન્મ અને બાલ્યાદિ અવસ્થાઓને દુઃખસહભાવિની બાણીને નિષ્કર્મદર્શી થાય છે તે લોકમાં દૃશ્યમાન ચતુર્ગતિયોમાં ભ્રમણરૂપ પ્રપંચથી છુટી જાય છે.

પશ્યકસ્ય વિશેષણમાહ—‘ ઉપરતશસ્ત્રસ્ય ’ इत्यादि । उपरतशस्त्रस्य=उपरतम्-अपगतं द्रव्यशस्त्रं खड्गादि, भावशस्त्रं कषायरूपं च यस्मात् सकाशात् स उपरतशस्त्रस्तस्य, अयं भावः—क्रोधादिकषायवमनमन्तरेण तीर्थंकरस्यापि सर्वपदार्थावभासकं निरावरणज्ञानं न भवति, एवं तदुपदेशानुसारिणाऽन्येन मुमुक्षुणाऽपि क्रोधादिकषायवमनं करणीयमिति । अपरविशेषणमाह—‘ पर्यन्तकरस्य ’ इति । पर्यन्तं=सर्वथा विनाशं कर्मणां करोति तच्छीलश्चेति पर्यन्तकरस्तस्यैतद् दर्शनमिति सम्बन्धः ।

યુગપત્-एकसाथ-जानते हैं वे पश्य हैं, पश्यको ही पश्यक कहते हैं। ‘पश्यक’ शब्द तीर्थङ्कर वर्धमान स्वामीका वाचक है। केवलज्ञानरूपी आलोक (प्रकाश) से देखनेका नाम दर्शन है। भगवानने यह समस्त विषय अपने केवलज्ञानरूप प्रकाशसे प्रत्यक्ष देखा है। श्री सुधर्मास्वामी कहते हैं कि उन्हींके उपदेशसे इसको मैंने जाना है अतः इसमें अन्यथापनकी आशङ्का हो ही नहीं सकती है। भगवानका ज्ञान निरावरण कैसे हुआ ? इस बातको प्रकट करनेके लिये सूत्रकार ‘ उपरतशस्त्रस्य ’ इस विशेषण का प्रयोग करते हैं। शस्त्र दो प्रकारके हैं—(१) द्रव्यशस्त्र और (२) भावशस्त्र। तलवार आदि द्रव्यशस्त्र हैं। क्रोधादिक कषाय भावशस्त्र हैं। जब तक आत्मासे भावशस्त्रोंका अभाव-उच्छेद नहीं होता है तब तक ज्ञानमें निरावरणता नहीं आ सकती। भगवान् वर्धमान स्वामीने इनका अपनी आत्मासे सर्वथा विनाश कर दिया है, इसीलिये उनका ज्ञान निरावरण है। द्रव्यशस्त्र और भावशस्त्र जिससे सर्वथा दूर हो चुके

ત્રિકાળવર્તી પદાર્થોને યુગપત્-એક સાથે જાણે છે તે પશ્ય છે. પશ્યને જ પશ્યક કહેવામાં આવે છે. ‘ પશ્યક ’ શબ્દ તીર્થંકર વર્ધમાન સ્વામીનો વાચક છે. કેવળજ્ઞાનરૂપી આલોક (પ્રકાશ) થી દેખવાનું નામ દર્શન છે. ભગવાને આ સમસ્ત વિષય પોતાના કેવળજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશથી પ્રત્યક્ષ દેખેલ છે. શ્રી સુધર્મા સ્વામી કહે છે કે “ તેમના ઉપદેશથી તે જ્ઞાન મેં જાણેલ છે. માટે તેમાં અન્યથા-પણાની આશંકા બની શકતી જ નથી. ભગવાનનું જ્ઞાન નિરાવરણ કેવી રીતે થયું ? આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રકાર ‘ ઉપરતશસ્ત્રસ્ય ’ આ વિશેષણનો પ્રયોગ કરે છે શસ્ત્ર બે પ્રકારના છે. (૧) દ્રવ્યશસ્ત્ર અને (૨) ભાવશસ્ત્ર તલવાર આદિ દ્રવ્યશસ્ત્ર છે. ક્રોધાદિક કષાય ભાવશસ્ત્ર છે. જ્યાં સુધી આત્માથી ભાવશસ્ત્રોનો અભાવ-ઉચ્છેદ નથી થતો ત્યાં સુધી જ્ઞાનમાં નિરાવરણતા આવી શકતી નથી.

ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીએ પોતાના આત્માથી તેનો સર્વથા વિનાશ કરી નાખેલ છે, માટે તેમનું જ્ઞાન નિરાવરણ છે. દ્રવ્યશસ્ત્ર અને ભાવશસ્ત્ર બેનાથી

વિધેય इति भावः । किं च-परमार्थतो मुनित्वं क्रोधादिकषायवमनादेव संपद्यते, नान्यथेति स्वबुद्ध्या नाहं कथयामि । किंतु तीर्थंकरस्य श्रीवर्धमानस्वामिनो निरावरणज्ञानत्वाद् दृष्टिपथावतीर्णमिति बोधयितुमाह-‘एतत् पश्यकस्य दर्शनम्’ इत्यादि । एतत्=यदुक्तं क्रोधादिवमनकर्ता मुनिर्भवतीति, तदेतत् पश्यकस्य=पश्यति निरावरणज्ञानत्वाद् जानातीति पश्यः, स एव पश्यकस्तीर्थंकरः श्रीवर्धमानस्वामी, तस्य दर्शनम्=केवलालोकेनावलोकनम्, तदुपदेशान्मया ज्ञातमेतदिति भावः ।

भिन्न ૨ समयमें भिन्न ૨ गुणस्थानोंमें होता है । इस कारण इनके प्रत्येक का उपशम करनेके लिये पृथक्-पृथक्-रूपसे प्रयत्न करना पड़ता है । इस समस्त अभिप्रायको स्पष्ट करनेके लिये सूत्रमें क्रोधादिक पदोंको असमासरूपसे स्वतन्त्र विभक्तिमें रखा है ।

તથા-પરમાર્થ દૃષ્ટિસે મુનિપના ક્રોધાદિકષાયોંંકા નિગ્રહ કરનેસે હી પ્રાપ્ત હોતા હૈ, અન્ય રીતિસે નહીં । ઇસ બાતકો સુધર્મા સ્વામી કહતે હૈં-હે જમ્બૂ ! મૈં અપની નિજી કલ્પનાસે નહીં કહતા હૂં કિન્તુ તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામીને કિ જિનકા જ્ઞાન નિરાવરણ હૈ ઇસ બાતકા સાક્ષાત્કાર કિયા હૈ, અતઃ ઉન્હીંકે કથનાનુસાર કહતા હૂં । ઇસ અપને અભિપ્રાયકો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રમેં-“एयं पासगस्स दंसणं” પદ રખા હૈ । ક્રોધાદિક કષાયોંંકા વમન કરનેવાલા હી મુનિ હોતા હૈ, યહ સિદ્ધાન્ત ભગવાન્ વર્ધમાન સ્વામીકા હૈ । “पश्यति=निरावरणज्ञानत्वात् जानातीति पश्यः, स एव पश्यकः” નિરાવરણજ્ઞાનશાલી હોને સે જો સમસ્ત ત્રિકાલવર્તી પદાર્થોંંકો

થતો નથી. પણ ભિન્ન ભિન્ન સમયમાં ભિન્ન ભિન્ન ગુણસ્થાનોમાં થાય છે આથી પ્રત્યેકના ઉપશમ કરવા માટે પૃથક્-પૃથક્-રૂપથી પ્રયત્ન કરવો પડે છે. આ તેમાંના સમસ્ત અભિપ્રાયને સ્પષ્ટ કરવા માટે સૂત્રમાં ક્રોધાદિક પદોને અસમાસ-રૂપથી સ્વતંત્ર વિભક્તિમાં રાખેલ છે.

અને પરમાર્થ દૃષ્ટિથી મુનિપણું ક્રોધાદિકષાયોંંનો નિગ્રહ કરવાથી પ્રાપ્ત થાય છે. અન્ય રીતિથી નહિ. આ વાત માટે શ્રી સુધર્મા સ્વામી કહે છે-હે જમ્બૂ ! મેં મારી પોતાની કલ્પનાથી આ કહ્યું નથી પણ તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામી કે જેનું જ્ઞાન નિરાવરણ છે. તેમણે આ વાતનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે, માટે તેમના કથનાનુસાર કહું છું. આ પોતાના અભિપ્રાયને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રમાં-“एयं पासगस्स दंसणं” પદ રાખેલ છે. ક્રોધાદિક કષાયોંંનું વમન કરનારા જ મુનિ બને છે. એ સિદ્ધાંત ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીનો છે. “पश्यति=निरावरणज्ञानत्वात् जानातीति पश्यः, स एव पश्यकः” નિરાવરણજ્ઞાનશાળી હોવાથી જે સમસ્ત

નન્વસ્તુ હેયોપાદયોપદેશેન પરોપકારકરણાત્ તીર્થંકરત્વમ્, કથમેતાવતા સર્વજ્ઞતા તસ્યેતિ ચેન્ન, યતઃ સમ્યગ્જ્ઞાનરહિતો યથોચિતં હેયોપાદયોપદેશં કર્તુ ન પ્રભવતિ, યથાવસ્થિતૈકપદાર્થજ્ઞાનમપિ ન ભવતિ સર્વજ્ઞતામન્તરેણેતિ પ્રતિવોધયિતુ-માહ-‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ ।

યદ્વા-નનુ ‘ એતત્ પશ્યકસ્ય દર્શનમ્ ’ ઇતિ યદુક્તં તત્ર સ પશ્યકઃ કિમે-કમેવ પદાર્થ જાનાતિ, આહોસ્વિત્-અનેકમ્ ? ઇતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ-‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ ।

ન્ધસે કષાયોંકા વમન નિરાવરણ જ્ઞાનકા ઉત્પાદક માના જાતા હૈ । જો સકલ કર્મોંકા વિનાશ કરતા હૈ, અથવા કર્મોંકે વિનાશ કરનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ ઉસકા નામ-“ પર્યન્તકર ” હૈ, ઉસકા યહ સિદ્ધાન્ન હૈ । જૈસે તીર્થંકર કષાયશસ્ત્રકી નિવૃત્તિસે સકલ કર્મોંકે વિનાશક હુએ હૈં ઉસી તરહસે ઉનકે ઉપદેશાનુસાર અપની પ્રવૃત્તિ રચનેવાલા અન્ય ભવ્યજન ભી સકલ કર્મોંકા વિનાશક હોતા હૈ । ઇસી અભિપ્રાયકો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રમેં ‘ આદાનમ્ ’ પદ રચા હૈ । આત્માકે પ્રદેશોંકે સાથ અષ્ટવિધ કર્મ જિનસે દૂધ-પાનીકી તરહ એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ હોકર ઠહરતે હૈં ઉનકા નામ આદાન હૈ । વે અઠારહ પાપસ્થાન હૈં । અથવા કર્મોંમેં સ્થિતિબન્ધકા કારણ હોનેસે કષાયેં ભી આદાન હૈં, ઇનકા વમન કરનેવાલા ‘ સગડન્નિ ’ સ્વ-કૃતભિદ્-હોતા હૈ, અર્થાત્ જો ભવ્ય કર્મોંકે આદાનમૂત કષાયાદિકોંકા નિરાકરણ-વિનાશ કરતા હૈ વહ અપને કિયે હુએ કર્મોંકા વિનાશક હોતા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

વમન નિરાવરણ જ્ઞાનનું ઉત્પાદક માનવામાં આવે છે. જે સકળ કર્મોંના વિનાશ કરે છે અથવા કર્મોંના વિનાશ કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તેનું નામ “ પર્યન્તકર ” છે. તેનો એ સિદ્ધાંત છે જેમ તીર્થંકર કષાયશસ્ત્રની નિવૃત્તિથી સકળ કર્મોંના વિનાશક બને છે તે માફક તેના ઉપદેશાનુસાર પોતાની પ્રવૃત્તિ રાખવાવાળા અન્ય ભવ્યજન પણ સકળ કર્મોંના વિનાશક બને છે. આ અભિપ્રાયને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રમાં ‘ આદાનમ્ ’ પદ રાખેલ છે. આત્માના પ્રદેશોની સાથે અષ્ટવિધ કર્મોં જેનાથી દૂધ-પાણીની માફક એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ બનીને રહે છે તેનું નામ આદાન છે તે અઠાર પાપસ્થાનક છે. અથવા કર્મોંમાં સ્થિતિબંધનું કારણ હોવાથી કષાયો પણ આદાન છે. તેનું વમન કરવાવાળા ‘ સગડન્નિ ’-સ્વકૃતભિદ્ થાય છે. અર્થાત્ જે ભવ્ય કર્મોંના આદાનમૂત કષાયાદિઓનું નિરાકરણ-વિનાશ કરે છે તે પોતાના કરેલા કર્મોંના વિનાશક બને છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

યથા તીર્થંકરઃ કષાયશસ્ત્રવિનિવર્તનાત્ સકલકર્મણાં ક્ષપયિતા, એવમન્યોઽપિ તદુપદેશાનુસારી ભવ્યો ભવતીત્યાહ—‘આદાનમ્’ इत्यादि। आदानम्=आदीयते =गृह्यते-आत्मप्रदेशैः सह श्लिष्यतेऽष्टविधं कर्म येन तदादानमष्टादशपापस्थानम्, तत्स्थितिहेतुत्वात् कषाया वाऽऽदानं तद्वमिता स्वकृतभिद् भवति। यः खलु कर्मणामादानं कषायादि निराकरोति, स स्वकृतकर्मणां भेत्ता भवतीत्यर्थः ॥ सू० १ ॥

हैं उसका नाम उपरतशस्त्र है। जब तक आत्मासे कषायोंका वमन नहीं होगा तब तक, चाहे वे कोई भी क्यों न हों; निरावरणशाली नहीं हो सकते। ज्ञानमें जब तक निरावरणता नहीं आती है तब तक किसी भी पदार्थका साक्षात्कार नहीं हो सकता है। अतः समस्त पदार्थोंको हस्तामलकवत् प्रकट करनेवाला ज्ञान सर्वज्ञको कषायोंके वमनसे ही प्राप्त होता है। जब यह सिद्धांत निश्चित है तो उन्हींके उपदेशानुसार प्रवृत्ति करनेवालेअन्य मोक्षाभिलाषीजनको भी क्रोधादिक कषायोंका वमन करना आवश्यक है। क्रोधादिक कषायोंके वमन किये बिना ज्ञानमें निरावरणता नहीं आती है। इसकी पुष्टि—‘पलियंतकरस्स-पर्यन्तकरस्य’ इस पदसे करते हैं। यद्यपि यह पद षष्ठ्यन्त है और पश्यकके विशेषणरूपसे ही प्रयुक्त हुआ है, परन्तु यह इस बातकी घोषणा करता है कि तीर्थङ्कर कषायरूप भाव-शस्त्रोंके नाशसे ही सकल कर्मोंके नाशक हुए हैं। अतः क्रोधादिक कषायोंका नाश सकल कर्मोंके नाश होनेमें तथा घातियाके नाशमें एवं केवलज्ञानरूपी निरावरण ज्ञानकी प्राप्तिमें कारण है। इस प्रकार परम्परासम्ब-

सर्वथा हूर थઈ ચૂકેલ છે તેનું નામ ઉપરતશસ્ત્ર છે, જ્યાં સુધી આત્માથી કષાયોનું વમન નહિ થાય ત્યાં સુધી, ભલે તેઓ કોઈ પણ કેમ ન હોય, નિરાવરણજ્ઞાનશાળી બની શકતા નથી. જ્ઞાનમાં જ્યાં સુધી નિરાવરણતા નથી આવતી ત્યાં સુધી કોઈ પણ પદાર્થનો સાક્ષાત્કાર થતો નથી. માટે સમસ્ત પદાર્થોને હસ્તામલકવત્ પ્રગટ કરવાવાળું જ્ઞાન સર્વજ્ઞને કષાયોના વમનથી જ પ્રાપ્ત થાય છે. જ્યારે આ સિદ્ધાંત નિશ્ચિત છે તો તેના ઉપદેશાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અન્ય મોક્ષાભિલાષીજનને પણ ક્રોધાદિક કષાયોનું વમન કરવું આવશ્યક છે. ક્રોધાદિક કષાયોનું વમન કર્યા વગર જ્ઞાનમાં નિરાવરણતા આવતી નથી. તેની પુષ્ટિ ‘પલિયંતકરસ્સ-પર્યન્તકરસ્ય’ આ પદથી કરે છે, જો કે આ પદ ષષ્ઠ્યન્ત છે, અને પશ્યકના વિશેષણરૂપથી જ પ્રયુક્ત થયેલ છે. તો પણ આ એ વાતની ઘોષણા કરે છે કે તીર્થંકર કષાયરૂપ ભાવશસ્ત્રોના નાશથી જ સકળ કર્મોના નાશક બનેલ છે. માટે ક્રોધાદિક કષાયોનો નાશ સકળ કર્મોનો નાશમાં તથા ઘાતિયાના નાશમાં તેમજ કેવળજ્ઞાનરૂપી નિરાવરણ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિમાં કારણ છે. આ પ્રકારે પરંપરા-સંબંધથી કષાયોનું

ટીકા-યઃ એકં=જીવદ્રવ્યમ્ અજીવદ્રવ્યં વા દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવતઃ, અતીતાનાગ-
તવર્તમાનૈઃ સર્વપર્યાયૈશ્ચ જાનાતિ, સ સર્વં જાનાતિ । સકલપદાર્થસમ્યગ્જ્ઞાનમન્તરેણૈ-
કસ્ય કસ્યચિત્ પદાર્થસ્ય દ્રવ્યક્ષેત્રાદિનાઽતીતાનાગતવર્તમાનસર્વપર્યાયતથ્ચ જ્ઞાનં ન
સંભવતીતિ ભાવઃ । ઇમમેવાર્થં બોધયિતું કાર્યકારણભાવં પ્રદર્શયન્નાહ—‘ યઃ સર્વં
જાનાતિ ’ ઇત્યાદિ । યઃ સર્વં=લોકાન્તર્વર્તિ સકલં પદાર્થજાતં જાનાતિ, સ એકં
દ્રવ્યં ઘટાદિકં જાનાતિ । અતીતાનાગતવર્તમાનસર્વપર્યાયૈસ્તત્તત્સ્વભાવપ્રાપ્ત્યાઽજ્ઞા-

જો એક જીવ દ્રવ્યકો, અથવા અજીવ દ્રવ્યકો દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઔર
ભાવસે એવં અતીત અનાગત ઔર વર્તમાનકાલ-સમ્બન્ધી પર્યાયોંસે યુક્ત
જાનતા હૈ વહ સમસ્ત પદાર્થોં કો જાનતા હૈ । સમસ્ત પદાર્થોં કો સમ્ય-
ગ્જ્ઞાન હુએ વિના કોઈ એક વિવક્ષિત પદાર્થ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઔર ભાવસે
એવં અતીત અનાગત ઔર વર્તમાન સમસ્ત પર્યાયોં સે નહીં જાના જા સકતા
હૈ । ઈસી અભિપ્રાયકો સમજ્ઞાનેકો લિયે કાર્યકારણભાવ દિઁલ્લાતે હુએ
સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘ જે સર્વં જાણઈ ’ ‘ યઃ સર્વં જાનાતિ ’ ઈતિ । જો ઈસ
લોકકે ભીતરકે સમસ્ત પદાર્થોં કો જાનતા હૈ વહ એક ઘટાદિક દ્રવ્યકો
ભી જાનતા હૈ । ભૂત ભવિષ્યત્ ઔર વર્તમાનકાલ-સમ્બન્ધી જિતની ભી
ઉસ દ્રવ્યકી પર્યાયોં હૈ વે સમસ્ત ઉસ દ્રવ્યકે સ્વભાવ હૈ । ઇન પર્યાયોંસે
પરિણત દ્રવ્ય તત્તત્સ્વભાવવાલા હોતા રહતા હૈ । ઈસ પ્રકાર દ્રવ્યમેં ઉનર
પર્યાયોંસે તત્તત્સ્વભાવકી પ્રાપ્તિ હોનેસે વહ દ્રવ્ય અપને અનાદિ અનન્ત-
કાલપનેસે (ઈસ રૂપસે હુઆ, ઈસ રૂપસે હો રહા હૈ ઔર ઈસ રૂપસે

જે એક જીવદ્રવ્યને, અથવા અજીવદ્રવ્યને દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી
તેમજ અતીત અનાગત અને વર્તમાનકાળ-સંબંધી સમસ્ત પર્યાયોથી યુક્ત
જાણે છે તે સમસ્ત પદાર્થોને જાણે છે, સમસ્ત પદાર્થોનું સમ્યગ્જ્ઞાન તથા વિના
કોઈ એક વિવક્ષિત પદાર્થનું જ્ઞાન દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી અને અતીત
અનાગત અને વર્તમાન સમસ્ત પર્યાયોથી થઈ શકતું નથી, આ અભિપ્રાય સમ-
ભાવવા માટે કાર્ય-કારણ ભાવ દરસાવતાં સૂત્રકાર કહે છે—“ જે સર્વં જાણઈ-
યઃ સર્વં જાનાતિ ” ઈતિ જે આ લોકના ભીતરના સમસ્ત પદાર્થોને જાણે છે
તે એક ઘટાદિક દ્રવ્યને પણ જાણે છે. ભૂત ભવિષ્ય અને વર્તમાનકાળ સંબંધી
જેટલી પણ તે દ્રવ્યની પર્યાયો છે તે સમસ્ત, દ્રવ્યનો સ્વભાવ છે તે પર્યાયોથી
પરિણત દ્રવ્ય તત્તત્સ્વભાવવાળા બનતા રહે છે આ પ્રકારે દ્રવ્યમાં તે તે પર્યા-
યોથી તત્તત્સ્વભાવની પ્રાપ્તિ થવાથી તે દ્રવ્ય પોતાના અનાદિ અનન્તકાળપણથી
(આ રૂપથી બન્યા, આ રૂપથી બને છે અને હવે આ રૂપથી બનશે) તે તે

મૂલમ—જે એગં જાણડ સે સવ્વં જાણડ, જે સવ્વં જાણડ
સે એગં જાણડ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ઢાયા—ય એકં જાનાતિ સ સર્વં જાનાતિ, યઃ સર્વં જાનાતિ સ એકં જાનાતિ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

તીર્થઢ્કર ભગવાન્ જીવોંકો હેય ઓર ઉપાદેયકા ઉપદેશ દેતે હેં ।
એતાવતા પરકે ઉપકારકે કર્તૃત્વસે ડનમેં તીર્થઢ્કરપના ભલે હી આ જાવે
હસમેં હમેં કોઈ વિવાદ નહીં હે । પરન્તુ હસસે ડનમેં સર્વજ્ઞતા કૈસે સિદ્ધ
હો સકતી હે ? એસી શઢ્કા નહીં કરની ચાહિયે । કયોં કિ જવ તક આત્મા
મેં પદાર્થોંકા સમ્યગ-વાસ્તવિક જ્ઞાન નહીં હો જાતા હે તવ તક તીર્થઢ્કર
ભગવાન્ ઉપદેશ નહીં દેતે હેં । જીવોંકો ઉપદેશ દેના સમ્યગ્જ્ઞાન અર્થાત્
કેવલજ્ઞાનકે આધીન હે । કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોનેપર ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત
પદાર્થોંકા વાસ્તવિક સ્વરૂપ દર્પણમેં પ્રતિબિમ્બકી તરહ પ્રતિભાસિત હોને
લગતા હે । કેવલજ્ઞાનકી પ્રાપ્તિ હી સર્વજ્ઞતા હે । હસ સર્વજ્ઞતાકે વિના
એક પદાર્થકા ભી વાસ્તવિક સ્વરૂપ જ્ઞાત નહીં હો સકતા હે । હસ વાત
કો સમજ્ઞાનેકે લિયે કહતે હેં—‘જે એગં’ હત્યાદિ ।

અથવા—યહ જો અભી કહા હે કિ—‘એયં પાસગસ્સ દંસણં—એતત્
પશ્યકસ્ય દર્શનમ્’ સો શિષ્ય યહાં પર યહ પ્રશ્ન કરતા હે કિ—સર્વજ્ઞ
કયા એક હી પદાર્થ કો જાનતા હે યા અનેક પદાર્થોંકો ?’ હસ પ્રકારકે
શિષ્યકે પ્રશ્નકા ઉત્તર દેતે હેં—‘જે એગં’ હત્યાદિ ।

તીર્થઢ્કર ભગવાન્ જીવોંકો હેય ઓર ઉપાદેયકો ઉપદેશ આપે છે. એતાવતા
ખીજના ઉપકારના કર્તૃત્વથી તેમાં તીર્થઢ્કરપણું ભલે આવી જાય તેમાં અમને કોઈ
વિવાદ નથી, પરંતુ તેથી તેમાં સર્વજ્ઞતા કેવી રીતે સિદ્ધ થાય છે ? એવી શંકા
કરવી જોઈએ નહિ. કારણ કે જ્યાં સુધી આત્મામાં પદાર્થોંનું સમ્યગ્-વાસ્તવિક
જ્ઞાન થતું નથી ત્યાં સુધી તીર્થઢ્કર ભગવાન્ ઉપદેશ આપતા નથી. જીવોંકો ઉપ-
દેશ આપવો સમ્યગ્જ્ઞાન અર્થાત્ કેવળજ્ઞાનને આધીન છે. કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થવાથી
ત્રિકાળવર્તી સમસ્ત પદાર્થોંનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ દર્પણમાં પ્રતિબિમ્બની માફક પ્રતિ-
ભાસિત થવા માંડે છે. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ જ સર્વજ્ઞતા છે. આ સર્વજ્ઞતા વિના એક
પણ પદાર્થોંનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ જ્ઞાત થઈ શકતું નથી. આ વાતને સમજાવવા માટે
કહે છે—‘જે એગં’ હત્યાદિ.

અથવા એ જો હમણા કહું કે ‘એયં પાસગસ્સ દંસણં—એતત્ પશ્યકસ્ય દર્શનમ્’
જેથી શિષ્ય આ ઠેકાણે એ પ્રશ્ન કરે છે કે—સર્વજ્ઞ શું એક જ પદાર્થને જાણે છે કે
અનેક પદાર્થોંને ? આ પ્રકારના શિષ્યના પ્રશ્નનો ઉત્તર આપે છે ‘જે એગં’ હત્યાદિ.

તિ । સ ચ દ્રવ્યતઃ સર્વૈરાત્મપ્રદેશઃ કર્મ શૃણોતિ, ક્ષેત્રતઃ=ષટ્સુ દિશુ, કાલતોઽનુ-
સમયં, ભાવતોઽષ્ટાદશભિઃ સ્થાનૈઃ, પશ્ચવિધેન વા પ્રમાદેન, एवं कर्म सर्वतः प्रमादिनं
વધ્નાતીત્યર્થઃ । યદ્વા-‘સર્વતઃ’ इत्यस्य ‘सर्वत्र’ इत्यर्थः । यथा चौरस्य
करच्छेदन-शूलादिभेदन-कशादिताडन-कठिनतरराजकीययन्त्रणादिभयमस्मिन् लोके,
परलोकेऽपि नरकनिगोदादियातनाभयं भवति, तथा-प्रमत्तस्य सर्वत्र भय-
मित्यर्थः । प्रमादरहितस्य तु नास्ति भयमित्याह-‘सर्वतोऽप्रमत्तस्य’ इत्यादि ।
अप्रमत्तस्य=प्रमादरहितस्य आत्मकल्याणाय संयमाराधने जाग्रत इत्यर्थः, सर्वतः=
ऐहिकामुष्मिकदुःखकारणात् संसाराद् भयं नास्ति । प्रमादरहितस्य संसारो न
भवतीत्यर्थः ॥ सू० ૩ ॥

કે કર્મોંકા બન્ધક હોતા હૈ । વહ દ્રવ્યકી અપેક્ષા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોંસે
કર્મોંકા ગ્રહણ કરનેવાલા હોતા હૈ । ક્ષેત્રકી અપેક્ષા ષટ્-છહ-દિશાઓં
મેં, કાલકી અપેક્ષા પ્રત્યેક સમયમેં, ભાવકી અપેક્ષા અઠારહ (૧૮) પાપ
સ્થાનોંસે, અથવા પાંચ પ્રકારકે પ્રમાદસે કર્મોંકા બન્ધક હોતા હૈ । ઇસ
પ્રકાર ડસકે સબ તરફસે કર્મોંકા બન્ધ હોતા રહતા હૈ । અથવા ‘સર્વતઃ’
‘સર્વ પ્રકારસે’ ઇસકે સ્થાનમેં ‘સર્વત્ર’ એસા અર્થ કરને પર-પ્રમાદી કે
લિયે ‘સર્વત્ર’-સબ જગહ-ભય હોતા હૈ, એસા અર્થબોધ હોતા હૈ । યહાં
“ ભય ” શબ્દકા અર્થ ‘ડર’ હૈ જિસ પ્રકાર ચોરકે લિયે ઇસ લોકમેં
હાથોંકે કટને, શૂલાદિસે ભિદને, કશા-ચાલુક આદિસે તાડને આદિ રૂપસે
કઠિનતર રાજકીય યન્ત્રણાઓં-કષ્ટોં-કે ભોગને કા ભય હોતા હૈ, તથા
પરલોકમેં ભી નરક-નિગોદાદિકકે અનેક કષ્ટોંકે સહનેકા ભય હોતા
હૈ, ઇસીતરહસે પ્રમાદી પ્રાણીકો સર્વત્ર ભય હી ભય હૈ । આત્મકલ્યાણ

નિશ્ચયથી જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકારના કર્મોંના બંધક થાય છે. તે દ્રવ્યની
અપેક્ષા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોંથી કર્મોંના ગ્રહણ કરવાવાળા બને છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષા
ષટ્-છ દિશાઓંમાં, કાળની અપેક્ષા પ્રત્યેક સમયમાં, ભાવની અપેક્ષા અઠાર
પાપસ્થાનોંથી અથવા પાંચ પ્રકારના પ્રમાદથી કર્મોંના બંધક થાય છે, આ પ્રકારે
તેને સઘળી બાબતુથી કર્મોંના બંધ થતો રહે છે. અથવા ‘સર્વતઃ’=સર્વપ્રકારથી તેના
સ્થાનમાં ‘સર્વત્ર’ એવો અર્થ કરવાથી પ્રમાદી માટે ‘સર્વત્ર’ દરેક જગ્યાએથી
ભય થાય છે, એવો અર્થબોધ થાય છે. આ ઠેકાણે ભય શબ્દનો અર્થ ‘ડર’ છે
જે પ્રકારે ચોર માટે આ લોકમાં ખડ્ગાદિથી હાથોનું કાપવું, શૂલાદિથી ભેદાવું,
કશા-ચાલુક આદિથી માર આવો આદિ રૂપ કઠિનતર રાજકીય યન્ત્રણાઓં-કષ્ટોં-ને
ભોગવવાનો ભય હોય છે, તથા પરલોકમાં પણ નરકનિગોદાદિક અનેક કષ્ટોંને
સહનકરવાનો ભય હોય છે. તેવી રીતે પ્રમાદી પ્રાણીને સર્વત્ર ભય જ ભય છે.

ઘનન્તકાલતયા સમસ્તવસ્તુસ્વભાવપરિજ્ઞાનાદિત્યર્થઃ । એકસ્ય વસ્તુનઃ સમગ્રસ્વરૂપં સર્વજ્ઞ એવ જાનાતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

એવં જાનન્ સર્વજ્ઞ એવ સર્વજીવોપકારકમુપદેશં દદાતીત્યાહ—‘સવ્વઓ’ ઇત્યાદિ ।
યદ્વા—સર્વજ્ઞઃ શિષ્યેભ્યઃ પ્રમાદદોષાન્ અપ્રમાદગુણાંશ્ચ કથયતિ—‘સવ્વઓ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સવ્વઓ પમત્તસ્ય અત્થિ ભયં, સવ્વઓ અપ્પમત્તસ્ય નત્થિ ભયં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—સર્વતઃ પ્રમત્તસ્ય અસ્તિ ભયં, સર્વતોઽપ્રમત્તસ્ય નાસ્તિ ભયમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—પ્રમત્તસ્ય=મઘાદિપ્રમાદયુક્તસ્ય સર્વતઃ=દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવતઃ ભયં=ભયકારિત્વાત્ કર્મ અસ્તિ । પ્રમાદવાન્ સ્વલુ જ્ઞાનાવરણીયાદિકમષ્ટવિધં કર્મોપચિનો-
હોગા) उन उन स्वभावोंवाला जान लिया जाता है । अर्थात् एक वस्तुका समस्त स्वरूप सर्वज्ञ ही जानते हैं ॥ सू० २ ॥

इस प्रकार समस्त द्रव्योंको जाननेवाले सर्वज्ञ ही समस्त जीवोंके लिये हितकारी उपदेश देते हैं । इस बातको सूत्रकार दिखलाते हैं—
‘सव्वओ’ इत्यादि ।

अथवा—सर्वज्ञ स्वयं अपने शिष्योंके प्रति प्रमादके दोषोंको और अप्रमादके गुणोंको प्रदर्शित करते हैं—‘सव्वओ’ इत्यादि ।

મઘાદિપ્રમાદસેવી વ્યક્તિ, દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલઔર ભાવસે ભય-ભય-કારી હોનેસે કર્મ-કા બન્ધ કરતા હૈ । ‘ભય’ શબ્દકા અર્થ કર્મ હૈ, ક્યોં કિ કર્મ જીવોંકો સદા ભયકારી હોતે હૈં ઇસલિયે યહાં કાર્યમેં કારણ કા ઉપચાર કિયા ગયા હૈ । ભય, કર્મોં કા કાર્ય હૈ ઔર કર્મ, ભય કે કારણ હૈં । પ્રમાદવાલા વ્યક્તિ નિશ્ચયસે જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકાર

સ્વભાવોવાળા જાણી લેવામાં આવે છે. અર્થાત્ એક વસ્તુનું સમસ્ત સ્વરૂપ સર્વજ્ઞ જ જાણે છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

આ પ્રકારે સમસ્ત દ્રવ્યોને જાણવાવાળા સર્વજ્ઞ જ સમસ્ત જીવોને માટે હિતકારી ઉપદેશ દે છે. આ વાતને સૂત્રકાર બતાવે છે—‘સવ્વઓ’ ઇત્યાદિ.

અથવા સર્વજ્ઞ સ્વયં પોતાના શિષ્યો પ્રતિ પ્રમાદના દોષોને અને અપ્રમાદના ગુણોને પ્રદર્શિત કરે છે—‘સવ્વઓ’ ઇત્યાદિ.

મઘાદિપ્રમાદસેવી જીવ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી ભય-ભયકારી હોવાથી કર્મનો બંધ કરે છે. ‘ભય’ શબ્દનો અર્થ કર્મ છે. કારણ કે કર્મ જ જીવોને સદા ભયકારી હોય છે. માટે આ ઠેકાણે કાર્યમાં કારણનો ઉપચાર કરેલ છે. ભય, કર્મોનું કાર્ય છે અને કર્મ, ભયનું કારણ છે. પ્રમાદવાળો જીવ

મૂલમ્—જે એગં નામે સે બહું નામે, જે બહું નામે સે એગં નામે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—યઃ એકં નામયતિ સ વહૂન્ નામયતિ, યો વહૂન્ નામયતિ, સ એકં નામયતિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—યઃ એકમ્=અનન્તાનુવન્ધિનં ક્રોધં નામયતિ=ઉપશમયતિ સ વહૂન્=અપ્રત્યાખ્યાનાદીન્ તદ્ભેદાન્ માનાદીન્ વા નામયતિ ।

યદ્વા—યઃ એકં સપ્રકૃતિકં મોહનીયં નામયતિ=ઉપશમયતિ, સ વહૂનિ=તદવશિષ્ટાનિ સપ્રકૃતિકાનિ જ્ઞાનાવરણીયાદિકાનિ સર્વાણ્યપિ નામયતિ=ઉપશમયતિ । યો વહૂન્=સ્થિતિશેષાન્ નામયતિ=ઉપશમયતિ, સ એકમ્=અનન્તાનુવન્ધિનં ક્રોધં મોહનીયં વા નામયતિ=ઉપશમયતિ । અત્ર નામનમ્-ઉપશમઃ ક્ષપણં વા । તથા ચાયમપ્યર્થઃ—

પર એકકા અભાવ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર ગત-પ્રત્યાગત (હેર-ફેર) સે કાર્ય-કારણ ભાવકો દિશ્વાનેકે લિયે કહતે હૈ—‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ ।

જો અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કષાયોંકા એવં અનન્તાનુવન્ધી લોભાદિકોંકા ઉપશમ કરતા હૈ । યદ્વા—જો એક મોહનીય કર્મકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ ઉસસે અવશિષ્ટ જ્ઞાનાવરણીય આદિ સમસ્ત કર્મપ્રકૃતિયોંકા ભી ઉપશમ કરતા હૈ । જો સ્થિતિસે અવશિષ્ટ કર્મોંકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ એક અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધ અથવા મોહનીયકા ભી ઉપશમ કરતા હૈ । યહાં નામન શબ્દકા અર્થ ઉપશમન અથવા ક્ષપણ હૈ । ઉપશમનકી અપેક્ષાસે યહ વ્યાખ્યા કી હૈ । ક્ષપણકી અપેક્ષાસે વ્યાખ્યા ઇસ પ્રકાર હૈ—

આ પ્રકારે ગત-પ્રત્યાગત (હેર-ફેર) થી કાર્ય-કારણ ભાવને બતાવવા માટે કહે છે—‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ.

જે અનન્તાનુવન્ધી કષાયોનો અને અનન્તાનુવન્ધી લોભાદિનો ઉપશમ કરે છે, આ ઠેકાણે જે એક મોહનીય કર્મનો ઉપશમ કરે છે તે તેનાથી અવશિષ્ટ જ્ઞાનાવરણીય આદિ સમસ્ત કર્મપ્રકૃતિયોનો પણ ઉપશમ કરે છે. જે સ્થિતિથી અવશિષ્ટ કર્મોનો ઉપશમ કરે છે તે એક અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધ અથવા મોહનીયનો પણ ઉપશમ કરે છે. આ ઠેકાણે નામન શબ્દનો અર્થ ઉપશમ અથવા ક્ષપણ છે. ઉપશમની અપેક્ષાથી આ વ્યાખ્યા કરેલ છે. ક્ષપણની અપેક્ષાથી વ્યાખ્યા આ પ્રકારે છે—

इह कषायाधिकारो वर्तते, तद्वमनं द्विविधम्—उपशमनवमनं, क्षपणवमनं च । तत्रोपशमनवमनं नामनमिति पर्यायस्तदभिप्रायेणाह—‘ जे एगं नामे ’ इत्यादि ।

यद्वा—कषायाभावात् प्रमादाभावः, तदभावाच्च सकलमोहनीयाऽभावः, तस्मात् सकलकर्मक्षयः, तदेवमेकाभावे सति बहूनामभावः, बहूनामभावे सति एकाभावः; इत्येवं गतप्रत्यागतरूपेण कार्यकारणभावं दर्शयितुमाह—‘ जे एगं ’ इत्यादि ।

करनेके लिये जो संयमकी आराधनामें जागरूक हैं ऐसे अप्रमादी प्राणीको कहीं भी भय नहीं होता है । वे न इस लोकमें दुःखी होते हैं और न परलोकमें । अधिक क्या कहा जाय ? वे इस संसारके भयसे ही निर्मुक्त हो जाते हैं । इहलोकसम्बन्धी और परलोकसम्बन्धी दुःखका कारण यह संसार ही उन्हें फिरसे प्राप्त नहीं होता, अर्थात् वे सदा के लिये मुक्त हो जाते हैं ॥ सू० ३ ॥

यहां पर कषायका अधिकार है । कषायका वमन दो प्रकारका है—(१) उपशमनवमन, (२) क्षपणवमन । कषायोंका उपशम होना यह उपशमनवमन है, तथा कषायोंका क्षय होना यह क्षपणवमन है । उपशमन-वमनका पर्यायान्तर शब्द नामन है । इस अभिप्रायसे कहते हैं—‘ जे एगं ’ इत्यादि ।

अथवा—कषायोंके अभावसे प्रमादका अभाव, प्रमादके अभावसे समस्त मोहनीयका अभाव, उससे सकल कर्मोंका क्षय होता है । इस प्रकार एकका अभाव होने पर बहुतोंका अभाव, बहुतोंका अभाव होने

આત્મકલ્યાણ કરવા માટે જે સંયમની આરાધનામાં જાગરૂક છે એવા અપ્રમાદી પ્રાણીઓને કાંઈ પણ લય હોતો નથી. તેઓ નથી આ લોકમાં દુઃખી થતાં. નથી પરલોકમાં દુઃખી થતાં. અધિક શું કહેવું? તેઓ આ સંસારના લયથી જ નિર્મુક્ત થઈ જાય છે. આ-લોકસંબંધી અને પરલોકસંબંધી દુઃખનું કારણ આ સંસાર જ તેને ફરીથી પ્રાપ્ત થતો નથી, અર્થાત્ તે સદાને માટે મુક્ત થઈ જાય છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આ ઠેકાણે કષાયનો અધિકાર છે. કષાયોનું વમન બે પ્રકારે છે. (૧) ઉપશમવમન (૨) ક્ષપણવમન. કષાયોનું ઉપશમ થવું તે ઉપશમવમન છે. તથા કષાયોનું ક્ષય થવું તે ક્ષપણવમન છે. ઉપશમવમનનો પર્યાયાન્તર શબ્દ નામન છે. આ અભિપ્રાયથી કહે છે—‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ.

અથવા—કષાયોના અભાવથી પ્રમાદનો અભાવ, પ્રમાદના અભાવથી સમસ્ત મોહનીયનો અભાવ, તેનાથી સકળ કર્મોનો ક્ષય થાય છે. આ પ્રકારે એકનો અભાવ થવાથી બહુનો અભાવ, બહુનો અભાવ થવાથી એકનો અભાવ થાય છે.

ટીકા—લોકસ્ય=ષડ્જીવનિકાયસ્ય દુઃખં=દુઃખકારણં કર્માસ્તીતિ જ્ઞાત્વા લોકસ્ય=પુત્રકલત્રાદેસ્તથા હિરણ્યસુવર્ણાદેશ્ચ સંયોગં=મમત્વલક્ષણં સમ્બન્ધં પરિગ્રહં વાઽપ્ટવિધકર્મહેતું વાન્ત્વા=પરિત્યજ્ય ધીરાઃ=કર્મવિદારણસમર્થા મહાયાનં=યાન્ત્ય-નેન મોક્ષમિતિ યાનં ચારિત્રમ્, તત્ત્વ ભવકોટિદુર્લભતયા મહદસ્તીત્યાશયેન મહાયાનમિત્યુચ્યતે । યાન્તિ=ગચ્છન્તિ પ્રાપ્નુવન્તીત્યર્થઃ ।

નનુ પ્રાપ્તચારિત્રસ્ય કિમેકેનૈવ ભવેન મોક્ષઃ, ઉત પારંપર્યેણેતિ શિષ્યજિ-જ્ઞાસાયામુભયથાઽપિ મોક્ષો ભવતીતિ બોધયિતુમાહ—‘ પરેણ પરં યાન્તિ ’ ઇતિ ।

“ઇસ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકે દુઃખકાં કારણ કર્મ હૈ” એસા જાન કર કર્મોં કે નાશ કરનેમેં શક્તિશાલી ધીર મુનિ, પુત્ર સ્ત્રી આદિસે, તથા હિરણ્ય સુવર્ણ આદિસે ‘મમેદં’—મમત્વભાવરૂપ સંયોગકા અંથવા અપ્ટપ્રકારકે કર્મોંકે આસ્રવકે કારણરૂપ પરિગ્રહકા સર્વથા ત્યાગ કર ચારિત્ર કો અંગીકાર કરતે હૈં । “યાન” શબ્દકા અર્થ ચારિત્ર હૈ—“યાન્તિ અનેન મોક્ષમિતિ યાનમ્” અર્થાત્—જિસકે દ્વારા મોક્ષકો પ્રાપ્ત કરે ઉસ કા નામ “યાન” હૈ, ક્યોં કિ ઇસકો પ્રાપ્તિસે જીવોંકો મુક્તિકા લાભ હોતા હૈ । “યાન” કે સાથ જો “મહા” વિશેષણ લગા હુઆ હૈ વહ ઇસમેં મહત્તાકા યોતક હૈ । ચારિત્રમેં મહત્તા ઇસી લિયે હૈ કિ જીવોંકો ઇસકો પ્રાપ્તિ કરોડોં ભવોંમેં ભી દુર્લભ હૈ । ઇસી અભિપ્રાયસે ચારિત્રકો મહાયાન કહા હૈ ।

જિસકો ચારિત્ર પ્રાપ્ત હો ચુકા હૈ એસે મુનિકી મુક્તિ ઉસી ભવસે હો સકતી હૈ ? અથવા ભવપરમ્પરાસે ?, ઇસ પ્રકારકી શિષ્યકી આશઙ્કાકા

‘આ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકના દુઃખનું કારણ કર્મ છે.’ એવું જાણીને કર્મોંનો નાશ કરવામાં શક્તિશાળી ધીર મુનિ, પુત્ર સ્ત્રી આદિથી, તથા હિરણ્ય સુવર્ણ આદિથી ‘મમેદં’—મમત્વભાવરૂપ સંયોગનો, અથવા અપ્ટ પ્રકારના કર્મોંના આશ્રવના કારણરૂપ પરિગ્રહનો સર્વથા ત્યાગ કરી ચારિત્રને અંગીકાર કરે છે. “યાન” શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે. “યાન્તિ અનેન મોક્ષમિતિ યાનમ્” અર્થાત્ જેના દ્વારા મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે તેનું નામ “યાન” છે, કારણ કે તેની પ્રાપ્તિથી જીવોને મુક્તિનો લાભ થાય છે. “યાન”ની સાથે જો “મહા” વિશેષણ લાગેલ છે. તે તેની મહત્તાનો ઘોતક છે, ચારિત્રમાં મહત્તા એ માટે છે કે જીવોને તેની પ્રાપ્તિ કરોડો લવોમાં પણ દુર્લભ છે. તે અભિપ્રાયથી ચારિત્રને મહાયાન કહેલ છે.

જેને ચારિત્રપ્રાપ્ત થઈ ચુકેલ છે તેવા મુનિની મુક્તિ તે લવથી થઈ શકે છે? અથવા ભવપરંપરાથી ?, આ પ્રકારની શિષ્યની આશંકાનું સમાધાન કરતાં

યઃ એકમ્-નામયતિ=ક્ષપયતિ, સ બહૂનપિ નામયતિ=ક્ષપયતિ । એકસ્થાનન્તાનુ-
વન્ધિનઃ ક્રોધસ્ય ક્ષપકો બહૂનાં=તદ્ભેદાનામપ્રત્યાખ્યાનાદીનાં માનાદીનાં વા કષા-
યાણાં ક્ષપકો ભવતીતિ । યદ્વા-એકસ્ય મોહનીયસ્ય ક્ષપકઃ, બહૂનાં તદવશિષ્ટાનાં સર્વાસાં
પ્રકૃતીનાં ક્ષપકો ભવતીતિ । તથા-યો બહૂનાં ક્ષપકઃ, સ એકસ્ય ક્ષપક इति ॥ સૂ૦ ૪ ॥

બહુકર્મોપશમેનૈકકર્મોપશમેન વા વિના મોહનીયસ્યોપશમો ન ભવતિ, તથા બહુ-
કર્માભાવમન્તરેણ એકકર્માભાવમન્તરેણ વા મોહનીયકર્મણઃ ક્ષયો ન ભવતિ । ત-
સ્માદેવ કારણાજ્જન્તૂનાં બહુવિધદુઃસ્વસમુદ્ભવ इत्याह-‘ દુઃસ્વં ’ इत्यादि ।

મૂલમ્-દુઃસ્વં લોગસ્સ જાણિત્તા વંતા લોગસ્સ સંજોગં જંતિ
ધીરા મહાજાણં, પરેણ પરં જંતિ, નાવકંસ્વંતિ જીવિયં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા-દુઃસ્વં લોકસ્ય જ્ઞાત્વા વાન્ત્વા લોકસ્ય સંયોગં યાન્તિ ધીરા મહાયાનં,
પરેણ પરં યાન્તિ, નાવકાહ્સન્તિ જીવિતમ્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

જો એકકા ક્ષય કરતા હૈ વહ બહુતોંકા ક્ષય કરતા હૈ । એક અન-
ન્તાનુવન્ધી ક્રોધકા ક્ષપક અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કષાયોંકા અથવા અપને
ભેદસ્વરૂપ માનાદિ-કષાયોંકા ક્ષપક હોતા હૈ । અથવા-એક મોહનીય
કર્મકા ક્ષપક બહુત-તદવશિષ્ટ (મોહનીય કર્મસે બાંકી રહી) સબ કર્મ-
પ્રકૃતિયોંકા ક્ષપક હોતા હૈ । इसी प्रकार जो बहूतोंका क्ષपक होता है वह
एकका भी क्ષपक होता है ॥ સૂ૦ ૪ ॥

બહુત કર્મોંકે ઉપશમ વિના અથવા એક કર્મકે ઉપશમ વિના મોહ-
નીય કર્મકા ઉપશમ નહીં હોતા હૈ, તથા બહુત કર્મોંકે અભાવ-ક્ષય-હુએ
વિના મોહનીય કર્મકા ક્ષય નહીં હોતા હૈ । इसी कारणसे प्राणियोंको
अनेक प्रकारके दुःस्वोंकी उत्पत्ति होती है । इसी बातको सूत्रकार प्रकट
करते हैं—‘ दुःस्वं ’ इत्यादि ।

જે એકનો ક્ષય કરે છે તે બહુનો ક્ષય કરે છે. એક અનંતાનુબધી
ક્રોધનો ક્ષપક અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કષાયોનો અથવા ખોતાના ભેદસ્વરૂપ માનાદિ
કષાયોનો ક્ષપક થાય છે. અથવા એક મોહનીય કર્મના ક્ષપક બહુ-તદવશિષ્ટ
(મોહનીય કર્મથી બાકી રહી) સઘળી કર્મપ્રકૃતિયોનો ક્ષપક થાય છે. આ
પ્રકારે બહુનો ક્ષપક થાય છે તે એકનો પણ ક્ષપક થાય છે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

બહુ કર્મોના ઉપશમ વિના અથવા એક કર્મના ઉપશમ વિના મોહનીય
કર્મનો ઉપશમ થતો નથી. તથા બહુ કર્મોનો અભાવ-ક્ષય વિના, અથવા એક
કર્મનો અભાવ થયા વિના મોહનીય કર્મનો ક્ષય થતો નથી. તે કારણથી પ્રાણી-
યોને અનેક પ્રકારના દુઃખોની ઉત્પત્તિ થાય છે. આ વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે
છે—‘ દુઃસ્વં ’ इत्यादि.

યદ્વા-પરેણ=ચતુર્થગુણસ્થાનેન, પરં=ચતુર્દશગુણસ્થાનં યાવત્, યાન્તિ=અધિતિષ્ઠન્તિ ।

યદ્વા--પરેણ અનન્તાનુવન્ધિકષાયક્ષયેણ, પરં=મોહનીયક્ષયં ઘાતિ-ભવોપગ્રાહિ-કર્મણાં વા ક્ષયં યાન્તિ ।

એવંભૂતા ધીરાઃ, જીવિતં=આયુઃ, નાવકાઙ્ક્ષન્તિ=કિયદ્ વ્યતીતં, કિયદવ-શિષ્ટમિતિ ન વિભાવયન્તિ-દીર્ઘજીવિત્વમસંયમજીવિત્વં વા નેચ્છન્તીત્યર્થઃ ॥સૂ.૦૫॥

સંયમ આરાધનાકે યોગ્ય મહાવિદેહાદિ ક્ષેત્રોમેં જન્મ પ્રાપ્ત કર ફિર સમ્પૂર્ણ શ્રુતચારિત્રધર્મકી આરાધનાકે પ્રભાવસે સમસ્ત કર્મોંકા ક્ષયકર અપુનરાવૃત્તિસ્વરૂપ મોક્ષસ્થાન મેં જા વિરાજતે હૈં ।

ભાવાર્થ—‘ ચારિત્રપ્રાપ્ત મુનિ ઉસી ભવસે અથવા અન્યભવ-સે મી કયા મોક્ષ જાતે હૈં ? ’ એસી શિષ્યકી આશઙ્કાકા શાસ્ત્રકાર ઉત્તર દેતે હૈં કિ-જો સંયમકી આરાધના કરતે હૈં વે જીવ ઉસી ભવમેં, અથવા ઉસ ભવમેં મોક્ષ ન જા કર અન્ય ભવોંસે મી મુક્તિકા લાભ કર લેતે હૈં । જબ તક વે મુક્તિકા લાભ નહીં કર લેતે તબ તક વે ઉત્તમ મનુષ્ય-પર્યાય એવં દેવપર્યાયમેં ઉત્પન્ન હોતે રહતે હૈં । મુક્તિયોગ્ય ક્ષેત્ર ઓર કાલ કી પ્રાપ્તિ હોતે હી પૂર્ણ સંયમકી આરાધનાકે પ્રભાવસે ઘાતિયા ઓર અઘાતિયા કર્મોંકા સર્વથા વિનાશ કર પંચમગતિ-મુક્તિકા લાભ કર લેતે હૈં ।

અથવા—“ પરેણ પરં યાન્તિ ” ઇસકા યહ મી અર્થ હોતા હૈ કિ-જો કર્મોંકે નાશ કરનેકી શક્તિસે સમ્પન્ન વીર હૈં વે ‘ પરેણ ’ ચતુર્થ ગુણ-

ક્ષેત્રોમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરી ફરીથી શ્રુતચારિત્ર ધર્મની આરાધનાના કારણથી સમસ્ત કર્મોંનો ક્ષય કરી અપુનરાવૃત્તિસ્વરૂપ મોક્ષસ્થાનમાં જઈ બિરાજે છે.

ભાવાર્થ—‘ ચારિત્રપ્રાપ્ત મુનિ તે ભવથી અથવા અન્ય ભવથી પણ શું મોક્ષ જાય છે ? ’ એવી શિષ્યની આશંકાનો શાસ્ત્રકાર ઉત્તર દે છે કે જે સંયમની આરાધના કરે છે તે જીવ તેજ ભવમાં અથવા તે ભવથી મોક્ષ ન જતાં અન્ય ભવોથી પણ મુક્તિનો લાભ કરી લે છે જ્યાં સુધી તે મુક્તિનો લાભ નથી કરી લેતા ત્યાં સુધી તે ઉત્તમ મનુષ્યપર્યાય તેમજ દેવપર્યાયમાં ઉત્પન્ન થતા રહે છે, મુક્તિયોગ્ય ક્ષેત્ર અને કાળની પ્રાપ્તિ થતાં જ પૂર્ણ સંયમની આરાધનાના ભાવથી તે ઘાતિયા અને અઘાતિયા કર્મોંનો સર્વથા વિનાશ કરી પંચમગતિ-મુક્તિનો લાભ કરી લે છે.

અથવા—“ પરેણ પરં યાન્તિ ” તેનો એ પણ અર્થ થાય છે કે જે કર્મોંનો નાશ કરવાની શક્તિથી સંપન્ન વીર છે તે ‘ પરેણ ’ એવા ગુણસ્થાનથી લગાવી

તદ્યોગ્યક્ષેત્રકાલપ્રાપ્ત્યા લઘુકર્મણસ્તેનૈવ ભવેન મોક્ષઃ, અન્યસ્ય તુ પારમ્પર્યેણ ભવતિ, इह तदेवोच्यते—

यथा—यथाशक्तिसमाराधितसंयमा आयुषोऽन्ते सति कर्मावशेषेण सौधर्मादिदेवलोकं गच्छन्ति, ततः परं पुनः कर्मभूमावार्यक्षेत्रे सुकुले जन्म लब्ध्वा श्रद्धासंयमादिधर्मापराधनेन सौधर्मादिदेवलोकादपि विशिष्टतरं स्वर्गमनुत्तरोपपातिकं यावत् प्रयान्ति । ततः परं पुनरपि ततश्च्युतास्तत्समुचितमहाविदेहादिक्षेत्रं प्राप्य संपूर्णश्रुतचारित्रधर्मसमाराधनेन कृत्स्नकर्मक्षयादपुनरावृत्तिकं मोक्षमुपगच्छन्ति ।

સમાધાન કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘‘ઉસ મુનિકી મુક્તિ દોનોં પ્રકાર સે હોતી હૈ, ઇસી બાતકો સ્પષ્ટ કરતે હૈં—‘ પરેણ પરં જંતિ-પરેણ પરં યાન્તિ ’ મુક્તિપ્રાપ્તિકે યોગ્ય ક્ષેત્ર ઓર કાલકી પ્રાપ્તિસે લઘુકર્મીં જીવોં કી ડસી ભવસે, ઓર અન્ય જીવોંકી પરમ્પરાસે-અન્ય-અન્ય ભવોંસે મુક્તિ હોતી હૈ । ઇસી બાતકો ટીકાકાર સ્પષ્ટ કરતે હૈં—જૈસે કિતનેક જીવ અપની શક્તિકે અનુસાર સંયમકા આરાધન કરતે હૈં ઓર સંયમકા આરાધન કરતેર હી વે ડસ ભવ સમ્બન્ધી આયુ કા અન્ત હોને પર કાલ કર કર્માવશેષસે સૌધર્માદિ દેવલોકોંમેં ઉત્પન્ન હોતે હૈં । વહાંકી ઋદ્ધિકા ગૃદ્ધિરહિત હો ભોગ કરતેર ડસ ભવ સમ્બન્ધી આયુકા ભી અન્ત કરકે વે કર્મભૂમિ આર્યક્ષેત્ર ઓર સુકુલમેં જન્મ પા કર ફિરસે શ્રદ્ધા સંયમાદિક કી આરાધના કરનેમેં લવલીન હોને કે પ્રભાવસે આયુકે અવસાનમેં સૌધર્માદિક દેવલોકોંસે ભી આગે વિશિષ્ટતર અનુત્તરોપપાતિક વિમાનમેં દેવ હો જાતે હૈં । વહાં સે ચ્યવ કર

સૂત્રકાર કહે છે કે તે મુનિની મુક્તિ બંને પ્રકારથી થાય છે. આ વાતને સ્પષ્ટ કરે છે—‘ પરેણ પરં જંતિ ’-‘ પરેણ પરં યાન્તિ ’ મુક્તિ પ્રાપ્તિને યોગ્ય ક્ષેત્ર અને કાળની પ્રાપ્તિથી લઘુકર્મીં જીવોની તે ભવથી, અને અન્ય જીવોની પરંપરાથી-અન્ય ભવોથી મુક્તિ થાય છે, આ વાતને ટીકાકાર સ્પષ્ટ કરે છે—જેવી રીતે કેટલાક જીવો પોતાની શક્તિ-અનુસાર સંયમનું આરાધન કરે છે અને સંયમનું આરાધન કરતાં કરતાં જ તે ભવસંબંધી આયુનો અંત થવાથી તે મરીને કર્માવશેષથી સૌધર્માદિ દેવલોકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. ત્યાંની ઋદ્ધિનો ગૃદ્ધિરહિત થઈ ભોગ કરતાં કરતાં તે ભવસંબંધી આયુનો પણ અંત કરીને તે કર્મભૂમિ આર્યક્ષેત્ર અને સુકુલમાં જન્મ પામીને ફરીથી શ્રદ્ધાસંયમાદિકની આરાધના કરવામાં લવલીન થવાના પ્રભાવથી આયુના અવસાનમાં સૌધર્માદિક દેવલોકોથી પણ આગળ વિશિષ્ટતર અનુત્તરોપપાતિક વિમાનમાં દેવ બને છે. ત્યાંથી ચવીને સંયમ આરાધનાને યોગ્ય મહાવિદેહાદિ

છાયા—एकं विवेचयन् पृथक् वेवेक्ति, पृथग् विवेचयन् एकं वेवेक्ति ॥सू०६॥

ટોકા—एकम्=अनन्तानुबन्धिनं क्रोधं, विवेचयन्=क्षपयन् क्षपकश्रेणिसमारूढः संयतः, पृथक्=अन्यदपि अनन्तानुबन्धिवचतुष्टयं, मिथ्यात्व-मिश्र-सम्यक्त्व-मोहनी-यत्रयं चेति मिथ्यात्वसप्तकं, वेवेक्ति=नियमतः क्षपयति। यो बद्धायुष्कः, सोऽपि त्रीन् भवान् नातिक्रामति। तृतीये भवे नियमतो मोक्षं प्राप्नोति। अवद्धायुष्कस्तु-मोह-नीयस्य सप्तविंशतिं कर्मांशान् नियमतः क्षपयति, चत्वारि घातिकर्माणि वा, सिध्यन् वा चत्वारि केवलिकर्माणि क्षपयति।

અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધકા ક્ષય કરનેવાલા ક્ષપકશ્રેણિમેં આરૂઢ સંયત નિયમસે અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ટય એવં મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય ઔર સમ્યક્ત્વમોહનીય, ઇન સાત પ્રકૃતિયોંકા ક્ષય કરતા હૈ । જો બ-દ્ધાયુષ્ક (આયુકર્મકા પહેલે બંધ કર ચુકા હૈ) વહ મી ત્રીન ભવોં કો ઉલ્લંઘન નહીં કરતા, અર્થાત્ તૃતીય ભવમેં નિયમસે મુક્તિકા લાભ કર લેતા હૈ । અવદ્ધાયુષ્ક—(જિસને પહેલે આયુકર્મકા બન્ધ નહીં કિયા હૈ વહ) જીવ મોહનીય કર્મકી ૨૭ સત્તાઈસ પ્રકૃતિયોંકા નિયમસે નાશ કરતા હૈ । અથવા ચાર ઘાતિયા કર્મોંકા નાશ કર કે અવશિષ્ટ ચાર અઘાતિયા કર્મોંકા મી નાશ કર દેતા હૈ ।

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત સાત પ્રકૃતિયોંકે ક્ષયસે જિસને ક્ષાયિક-સમ્ય-ક્ત્વકા લાભ કિયા હૈ, ઔર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકો લે કર ક્ષપકશ્રેણિ પર ચઢા હૈ ઉસ જીવકી મુક્તિ નિયમતઃ ઉસી ભવસે હો જાતી હૈ । પરંતુ ઈસા જીવ યદિ વદ્ધાયુષ્ક હૈ તો વહ ઉસ ભવસે મુક્તિકા લાભ ન કર

અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધનો ક્ષય કરવાવાળા ક્ષપકશ્રેણિમાં આરૂઢ સંયત નિયમથી અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ટય અને મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વ-મોહનીય, એ સાત પ્રકૃતિઓનો ક્ષય કરે છે. જે બદ્ધાયુષ્ક (આયુકર્મનો જે પહેલાં બંધ કરી ચુકેલ છે) તે પણ ત્રણ ભવોનું ઉલ્લંઘન નથી કરતા, અર્થાત્ ત્રીજા ભવમાં નિયમથી મુક્તિનો લાભ કરી લે છે. અવદ્ધાયુષ્ક (જેણે પહેલાં આયુકર્મનો બંધ નથી કર્યો તે) જીવ મોહનીય કર્મની ૨૭ સતાવીસ પ્રકૃતિઓનો નિયમથી નાશ કરે, છે અથવા ચાર ઘાતિયા કર્મોનો નાશ કરીને અવશિષ્ટ ચાર અઘાતિયા કર્મોનો પણ નાશ કરી નાખે છે

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત સાત પ્રકૃતિઓના ક્ષયથી જેણે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ કરેલ છે, અને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વને લઈને ક્ષપકશ્રેણિ ચઢેલ છે તે જીવની મુક્તિ નિયમતઃ તે ભવથી થઈ જાય છે, પરંતુ તેવા જીવ કદાચ બદ્ધાયુષ્ક છે તો તે, તે

સ્થાનસે લગા કર ‘પરં’ ચૌદહવેં ગુણસ્થાનતક જાતે હૈં, અર્થાત્—
“ અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ ” इन पांच ह्रस्व अक्षरोंके उच्चारण करनेमें जितना
समय लगता है उतने समय प्रमाण उस चौदहवें गुणस्थानमें उनकी
स्थिति होती है, बादमें वे मुक्तिको प्राप्त करते हैं ।

अथवा-प्रथम ‘पर’ शब्दका अर्थ अनन्तानुबन्धी कषायका क्षय
भी है । द्वितीय ‘पर’ शब्दका अर्थ-मोहनीयका नाश, अथवा घाति
अघाति कर्मोंका विनाश है । इसका यह फलितार्थ होता है कि-अनन्ता-
नुबन्धी कषायके क्षयसे वे मोहनीय का क्षय, अथवा घाति और अघाति
कर्मोंका क्षय करते हैं ।

भावार्थ—वीरोंको चतुर्थ गुणस्थानसे लगा कर जो चौदहवें गुणस्थान
तककी प्राप्ति बतलाई गई है उसका यह तात्पर्य है कि समकितकी प्राप्ति
जीवोंको चौथे गुणस्थानमें हो जाती है । समकितका लाभ ही जीवोंको सा-
क्षात् (भावचरित्र की अपेक्षासे) या परम्परारूपसे मुक्तिका कारण होता है ।
जिस व्यक्तिको समकितका लाभ हो जाता है उस भव्यात्माका अर्द्धपुद्गल
परावर्त्तनमात्र काल संसारमें रहनेका रहता है, उससे अधिक नहीं । धीरे-
र वह अपनी उन्नति करता हुआ आगे २ के गुणस्थानों पर आरोहण कर
परिणामोंकी विशुद्धिके प्रभावसे घातिया और अघातिया कर्मोंके नाश-

‘परं’ ચૌદમા ગુણસ્થાનક સુધી જાય છે, અર્થાત્ “ અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ ” આ પાંચ
હ્રસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણ કરવામાં જેટલો સમય લાગે છે તેટલા સમય પ્રમાણ
તે ચૌદમાં ગુણસ્થાનમાં તેની સ્થિતિ થાય છે, બાદમાં તે મુક્તિને પ્રાપ્ત કરે છે.

અથવા પ્રથમ “ પર ” શબ્દનો અર્થ અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષય પણ
છે. બીજો ‘ પર ’ શબ્દનો અર્થ મોહનીયનો નાશ અથવા ઘાતિ અઘાતિ કર્મોનો
વિનાશ છે. તેનો એ ફલિતાર્થ થાય છે કે અનંતાનુબંધી કષાયના ક્ષયથી મોહ-
નીયનો ક્ષય, અથવા ઘાતિ અને અઘાતિ કર્મોનો ક્ષય તે કરે છે.

ભાવાર્થ:—વીરોને ચોથા ગુણસ્થાનથી લઈને જે ચૌદમાં ગુણસ્થાન સુધીની પ્રાપ્તિ
ખતાવવામાં આવી છે તેનો એ તાત્પર્ય છે કે સમકિતની પ્રાપ્તિ જીવોને ચોથા
ગુણસ્થાનમાં થઈ જાય છે. સમકિતનો લાભ જ જીવોને સાક્ષાત્ (ભાવચારિત્રની
અપેક્ષાથી) અગર પરંપરા-રૂપથી મુક્તિનું કારણ થાય છે. જે વ્યક્તિને સમકિતનો
લાભ થઈ જાય છે તે ભવ્યાત્માનો અર્દ્ધપુદ્ગલપરાવર્તનમાત્ર કાલ સંસારમાં
રહેવાનું રહે છે, તેનાથી અધિક નહિ. ધીરે ધીરે તે પોતાની ઉન્નતિ કરતાં કરતાં
આગળ આગળના ગુણસ્થાનો ઉપર આરોહણ કરી પરિણામોની વિશુદ્ધિનો પ્રભા-

કિંચ—‘લોગં ચ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—લોગં ચ આણાણ અભિસમિચ્ચ અકુતોભયં ॥સૂ૦ ૮॥

છાયા—લોકં ચાઽઽજ્ઞયા અભિસમેત્ય અકુતોભયમ્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—ચ-શબ્દઃ સમુચ્ચયાર્થઃ । લોકં=ષડ્જીવનિકાયરૂપમ્, આજ્ઞયા=જિન-પ્રવચનેન, અભિસમેત્ય=વિદિત્વા, અકુતોભયમ્=કુતશ્ચિત્ કારણાદુત્પદ્યમાનસ્ય ભય-સ્યાભાવો યથા ભવતિ ષડ્જીવનિકાયલોકસ્ય, તથારૂપં સંયમં કુર્યાદિત્યર્થઃ ॥સૂ૦ ૮॥

પાદિત આગમકે અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા અપ્રમત્ત સંયમી જીવ ક્ષપ-કશ્રેણિકે યોગ્ય હોતા હૈ, અન્ય નહીં ।

ભાવાર્થ—શ્રદ્ધાસમ્પન્ન વ્યક્તિ સંયમકી આરાધના કર જવ સપ્તમ-ગુણસ્થાનવર્ત્તી હો જાતા હૈ તમી વહ ક્ષપકશ્રેણિપર આરૂઢ હોનેકે યોગ્ય માના જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ઔર મી કહતે હૈ—“લોગં ચ ” इत्यादि ।

યહાં “ચ” શબ્દ સમુચ્ચય અર્થ મેં હૈ । મુનિ હસ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકો જિનપ્રવચન-આગમ-સે જાન કર ‘જિસ પ્રકાર ભવિષ્યમેં ડસ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકો અપનેદ્વારા ભયકા અભાવ હો’ હસ પ્રકાર સંયમ કી આરાધના કરતા રહે ।

ભાવાર્થ—સંયમકી આરાધના કરનેકી આવશ્યકતા હસી લિયે હૈ કિ જિસસે અન્ય જીવોંકી રક્ષા હોતી રહે । અસંયમ પ્રવૃત્તિસે જીવોંકા ઘાત હોતા હૈ । ંસે વ્યક્તિયોંકો હસ લોક ઔર પરલોકમેં સદા ભયકા

કરે છે. અરિહંતદ્વારા પ્રતિપાદિત આગમ-અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અપ્રમત્ત સંયમી જીવ ક્ષપકશ્રેણીને યોગ્ય થાય છે-અન્ય નહિ.

ભાવાર્થ—શ્રદ્ધાસપન્ન વ્યક્તિ સંયમની આરાધના કરી જ્યારે સાતમા ગુણસ્થાનવર્ત્તી થઈ જાય છે ત્યારે તે ક્ષપક શ્રેણી પર આરૂઢ હોવાના યોગ્ય માનવામાં આવે છે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

વળી બીજું પણ કહે છે— “લોગં ચ ” इत्यादि.

આ ઠેકાણે “ચ” શબ્દ સમુચ્ચય અર્થમાં છે. મુનિ આ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકને જીનપ્રવચન-આગમથી જાણીને જે પ્રકારે ભવિષ્યમાં તે ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકને પોતાના દ્વારા લયનો અભાવ હોય એ પ્રકારે સંયમની આરાધના કરતા રહે.

ભાવાર્થ—સંયમની આરાધના કરવાની આવશ્યકતા એટલા માટે છે કે જેનાથી અન્ય જીવોની રક્ષા થતી રહે, અસંયમ પ્રવૃત્તિથી જીવોનો ઘાત થાય છે. એવી

યદ્વા-પૃથક્=અન્યદપિ મિથ્યાત્વસપ્તકં વિવેચયન્=ક્ષપયન્, એકમ્=અનન્તા-
નુબન્ધિક્રોધં વેવેક્તિ=નિયમતઃ ક્ષપયતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કેન ગુણેન ક્ષપકશ્રેણિયોગ્યતાં પ્રાપ્નોતીતિ बोधयितुं कर्मक्षपणोद्यतस्य विशेष-
णान्याह-‘ સડ્ઢી ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સડ્ઢી આણાઐ મેઘાવી ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—શ્રદ્ધી આજ્ઞયા મેઘાવી ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—શ્રદ્ધી=મોક્ષાભિલાષરૂપા જિનમતાભિરુચિઃ શ્રદ્ધા, સાડસ્યાસ્તીતિ
તથાવિધઃ; સ હિ કેવલિનો ભાવિતાત્મનોડનગારસ્ય વા સમીપે ધર્મે શ્રુત્વા સંયમં
પ્રતિપદ્યતે । આજ્ઞયા=આર્હતાગમાનુસારેણ પ્રવર્તમાનઃ, મેઘાવી=અપ્રમત્તસંયમી ક્ષપ-
કશ્રેણિયોગ્યો ભવતિ, નાન્ય ઇત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

દૂસરે અથવા તીસરે ભવમેં તો નિયમસે મુક્તિકો પ્રાપ્ત કરનેવાલા હોતા
હૈ । યદિ અવદ્વાયુષ્ક હૈ તો વહ ઉસી ભવસે મુક્તિ પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ ।

इसी तरह—“ पुढो विगिंचमाणे एगं विगिंचइ ” अर्थात् मिथ्यात्व-
सप्तकका क्षय करनेमें प्रवृत्त संयत एक अर्थात् अनन्तानुबन्धी क्रोधका
नियमसे क्षय करता है ॥ सू० ६ ॥

કિસ ગુણસે મુનિ ક્ષપકશ્રેણિકી યોગ્યતાકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? હસ
વાતકો સમજાનેકે લિયે કર્મોંકે ક્ષય કરનેમેં ઉદ્યત મુનિકે વિશેષણોં
કો કહતે હૈ—‘ સડ્ઢી ’ ઇત્યાદિ ।

મોક્ષકી અભિલાષારૂપ જિનમતકી ઓર અભિરુચિકા નામ શ્રદ્ધા
હૈ । હસ પ્રકારકી શ્રદ્ધાસે સમ્પન્નકા નામ શ્રદ્ધી-શ્રદ્ધાવાન્ હૈ । શ્રદ્ધા-
વાન્ વ્યક્તિ કેવલી અથવા અન્ય કિસી ભાવિતાત્મા સાધુકે સમીપ
ધર્મકા શ્રવણ કર સંયમકો ગ્રહણ કરતા હૈ । અરિહન્તદેવદ્વારા પ્રતિ-

ભવમાં મુક્તિનો લાભ ન પામીને ખીજા અથવા ત્રીજા ભવમાં તો નિયમથી મુક્તિને પ્રાપ્ત
કરવાવાળા થાય છે. જો અવદ્વાયુષ્ક છે તો તે તેજ ભવથી મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લે છે.

આવી રીતે “ પુઢો વિગિંચમાણે એગં વિગિંચइ ” અર્થાત્ મિથ્યાત્વસપ્તકનો
ક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્ત સંયત એક અર્થાત્ અનંતાનુબંધી ક્રોધનો નિયમથી
ક્ષય કરે છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કયા ગુણથી મુનિ ક્ષપક શ્રેણીની યોગ્યતાને પ્રાપ્ત કરે છે ? આ વાતને સમ-
જાવવા માટે કર્મોના ક્ષય કરવામાં ઉદ્યત મુનિના વિશેષણોને કહે છે—‘સડ્ઢી’ ઇત્યાદિ.

મોક્ષની અભિલાષારૂપ જનમતની તરફ અભિરૂચિનું નામ શ્રદ્ધા છે, આ
પ્રકારની શ્રદ્ધાથી સંપન્નનું નામ શ્રદ્ધી-શ્રદ્ધાવાન છે. શ્રદ્ધાવાન વ્યક્તિ કેવળી
અથવા અન્ય કોઈ પણ ભાવિતાત્મા સાધુની સમીપે ધર્મનું શ્રવણ કરી સંયમને ગ્રહણ

કારકં તદેવ શસ્ત્રમિત્યુચ્યતે । એકસ્માત્ પીઢાજનકાદન્યત્ પીઢાજનકં પ્રાદુર્ભવતિ ।
યથા—સ્વઙ્ગાભિયાતેન શિરઃપીઢા, તતો જ્વરઃ, તતોઽપિ મૂર્ચ્છાદય ઇતિ ।
ભાવશસ્ત્રસ્ય પારમ્પર્યં ત્વૈવોદ્દેશકે ‘જે કોહદંસી’ ઇત્યાદિનાઽનુપદં વક્ષ્યતિ ।

યથા શસ્ત્રસ્ય પારમ્પર્યમસ્તિ, ન તથા પારમ્પર્યમશસ્ત્રસ્યાસ્તીત્યાહ—‘નાસ્તિ’
ઇત્યાદિ । અશસ્ત્રં સંયમઃ, તત્ પરેણ પરં નાસ્તિ—પ્રકર્ષપરમ્પરાયુક્તં ન ભવતીત્યર્થઃ ।
યથા પૃથિવ્યાદિજીવેષુ સ્વાત્મના સમભાવઃ કર્તવ્યઃ, તત્ર—‘એગે આયા’ ઇતિ
ભગવદ્વચનાદ્ મન્દતીવ્રભેદો નાસ્તિ, તસ્માત્ તત્ર સમત્વસદ્ભાવાત્ સામાયિકસ્ય ન
પ્રકર્ષપારમ્પર્યમ્ । યદ્વા—શૈલશ્યવસ્થાસંયમાત્પરઃ સંયમો નાસ્તિ, તદૂર્ધ્વં ગુણસ્થાના-
ભાવાદિતિ ભાવઃ ॥ મુ. ૯ ॥

હૈ । પીઢાકારક એક હી વસ્તુસે અન્ય અનેક વાતેં ઉત્પન્ન होती हैं, जैसे
तलवारद्वारा मारनेसे लगनेवालेके शिरमें पीडा, उससे ज्वर, उससे
भी उसे मूर्छा आदि दुःख होते हैं । ये सब बातें द्रव्यशस्त्रमें प्रकर्ष
परम्पराकी द्योतक हैं ।

ભાવશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરા इसी उद्देशमें इसीके आगे “जे को-
हदंसी ” इस सूत्रमें कहेंगे । जिस प्रकार शस्त्रमें प्रकर्षकी परम्परा है उस
प्रकार अशस्त्रमें प्रकर्षपरम्परा नहीं है, इस बातको “ नत्थि ” इस वाक्य
से सूत्रकार प्रकट करते हैं—अशस्त्र नाम संयमका है, वह “ परेण परं
नास्ति ” प्रकर्षपरम्परासे युक्त नहीं होता है । जैसे—पृथिवीकायिकादि
जीवोंमें संयमीको आत्मतुल्यताकी भावना रखनी चाहिये, क्यों कि यह
वचन है “ एगे आया ” आत्मा एक है । इस प्रकारकी भावनारूप संयम
में मन्द और तीव्र भेद नहीं है । इस कारण समस्त पृथिवीकायिकादि

અનેક વાતો ઉત્પન્ન થાય છે. જેમ—તલવાર દ્વારા મારવાથી લાગવાવાળાના માથામાં
પીડા, તેનાથી જ્વર, તેનાથી તેને મૂર્છા આદિ દુઃખ થાય છે એ સઘળી વાતો
દ્રવ્યશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષપરંપરાની દ્યોતક છે.

ભાવશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરા આ જ ઉદ્દેશમાં એનાથી આગળના “ જે
કોહદંસી ” એ સૂત્રમાં કહેવામાં આવશે. જે પ્રકારે શસ્ત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરા છે
તે પ્રકારે અશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષપરંપરા નથી. એ વાતને “ નત્થિ ” ઇત્યાદિ વાક્યથી
સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે. અશસ્ત્ર નામ સંયમનું છે, તે “ પરેણ પરં નાસ્તિ ” પ્રકર્ષ-
પરંપરાથી યુક્ત થતું નથી. જેમ—પૃથિવીકાયાદિ જીવોમાં સંયમીએ આત્મ
તુલ્યતાની ભાવના રાખવી જોઈએ, કારણ કે લગવાનનું એ વચન છે—‘એગે આયા’
આત્મા એક છે. આ પ્રકારની ભાવનારૂપ સંયમમાં મન્દ અને તીવ્ર ભેદ નથી.
એ કારણથી સમસ્ત પૃથિવીકાયાદિક જીવોમાં સમતાશાળી સંયમીના સામાયિક

તદપિ ભયં ષડ્જીવનિકાયલોકસ્ય શસ્ત્રાદેવ ભવતિ । તસ્ય શસ્ત્રસ્ય કિં પ્રકર્ષ-
પરમ્પરાઽસ્તિ ? નાસ્તિ વા ? इति शिष्यजिज्ञासायाम् ‘अस्ती’-ति बोधयितुमाह—
‘अत्थि’ इत्यादि ।

यद्वा-शस्त्रतो भयं भवति, अतस्तत् परिहर्तव्यमित्याशयेन-शस्त्रं कथयति-
‘अत्थि’ इत्यादि ।

मूलम्—अत्थि सत्थं परेण परं, नत्थि असत्थं परेण परं ॥सू० ९॥

छाया—अस्ति शस्त्रं परेण परम् , नास्ति अशस्त्रं परेण परम् ॥ सू० ९ ॥

टीका-શસ્ત્ર=દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દ્વિવિધં; તત્ર દ્રવ્યશસ્ત્રં સ્વડ્ગાદિકં, તત્ પરેણ પરમ
સ્તિ, લોહકર્તૃસંસ્કારાનુસારેણ દ્રવ્યશસ્ત્રં તીવ્રાત્ તીવ્રતરમસ્તીત્યર્થઃ । યદ્વા-યત્ પીડા-
સામના કરના પડતા હૈ । સંયમી જીવ હસ પ્રકારકે ભયસે સદા નિર્મુક્ત
રહતે હૈ ॥ સૂ० ૮ ॥

इस षड्जीवनिकायरूप लोकके लिये भय शस्त्रसे ही होता है । यह
बात जब निश्चित है तो क्या उस शस्त्रमें प्रकर्षकी परम्परा है या नहीं ? इस
प्रकार की शिष्यकी आशङ्काका उत्तर कहते हैं—‘अत्थि सत्थं’ इत्यादि ।

अथवा-शस्त्रसे भय होता है; अतः उसका परिहार करना चाहिये,
इस आशयसे शस्त्रको कहते हैं—‘अत्थि सत्थं’ इत्यादि ।

शस्त्र, द्रव्य और भावके भेदसे दो प्रकारका है । तलवार वगैरह द्रव्य
शस्त्र हैं । इनमें प्रकर्षकी परम्परा, शस्त्रको बनानेवाले लुहारके संस्कार
के अनुसार आती है । कोई तलवार अत्यन्त तीक्ष्ण होती है और कोई
उससे भी अधिक । अथवा जो जीवको पीडाकारक होता है वही शस्त्र

વ્યક્તિઓને આ-લોક અને પરલોકમાં સદા ભયનો સામનો કરવો પડે છે. સંયમી
જીવ આ પ્રકારના ભયથી સદા નિર્મુક્ત રહે છે. ॥ સૂ० ૮ ॥

આ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકના માટે ભય શસ્ત્રથી જ થાય છે. એ વાત જ્યારે
નિશ્ચિત છે તો શું તે શસ્ત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરા છે યા નહિ ? આ પ્રકારે શિષ્યની
આશંકાનું ઉત્તર કહે છે—‘અત્થિ સત્થં’ ઇત્યાદિ.

અથવા શસ્ત્રથી ભય થાય છે; માટે તેનો પરિહાર કરવો જોઈએ; એ આશ-
યથી શસ્ત્રને કહે છે—‘અત્થિ સત્થં’ ઇત્યાદિ.

શસ્ત્ર દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે પ્રકારે છે. તલવાર વિગેરે દ્રવ્ય-શસ્ત્ર
છે. તેમાં પ્રકર્ષની પરંપરા, શસ્ત્રના બનાવવાળા લુહારના સંસ્કાર અનુસાર આવે
છે, કોઈ તલવાર અત્યંત તીક્ષ્ણ હોય છે અને કોઈ તેનાથી પણ અધિક. અથવા
જે જીવોને પીડાકારક થાય છે તે શસ્ત્ર છે. પીડાકારક એક જ વસ્તુથી અન્ય

છાયા—યઃ ક્રોધદર્શી સ માનદર્શી, યઃ માનદર્શી સ માયાદર્શી, યો માયાદર્શી સ લોભદર્શી, યો લોભદર્શી સ પ્રેમદર્શી, યઃ પ્રેમદર્શી સ દ્વેષદર્શી, યો દ્વેષદર્શી સ મોહદર્શી, યો મોહદર્શી સ ગર્ભદર્શી, યો ગર્ભદર્શી સ જન્મદર્શી, યો જન્મદર્શી સ મારદર્શી, યો મારદર્શી સ નરકદર્શી, યો નરકદર્શી સ તિર્યગ્દર્શી, યસ્તિર્યગ્દર્શી સ દુઃખદર્શી ॥ મૂ. ૧૦ ॥

ટીકા—યઃ ક્રોધદર્શી ક્રોધં પશ્યતિ-ભાવયતિ ક્રુધ્યતીત્યર્થઃ, ક્રોધં દર્શયતીતિ યાવત્ । યથા ક્રુદ્ધસ્ય દૃષ્ટિસ્તીવ્રા, પ્રસન્નચિત્તસ્ય તુ સિતકમલવદ્ભવલા ભવતિ । સ માનદર્શી માનં પશ્યતિ-ભાવયતિ, ગર્વં દર્શયતીતિ યાવત્ । એવમગ્રેऽપિ યોજનીયં યાવત્-‘સ મોહદર્શી’તિ । યો મોહદર્શી-મોહાઽઽક્રાન્તઃ, સ ગર્ભદર્શી ગર્ભં પશ્યતિ-ગર્ભવાસોદ્ભૂતદુઃખાનુભવી ભવતીત્યર્થઃ । એવં-‘સ તિર્યગ્દર્શી’-તિ

જો ક્રોધદર્શી હૈ અર્થાત્ ક્રોધકો દેખતા હૈ-ક્રોધ કરનેકી ભાવના કરતા હૈ-ક્રુદ્ધ હોતા હૈ, દૂસરે વ્યક્તિ પર ક્રોધ દિખલાતા હૈ, જૈસે-‘ક્રુદ્ધ વ્યક્તિકી દૃષ્ટિ તીવ્ર હોતી હૈ, પ્રસન્નચિત્તવાલેકી સફેદ કમલ જૈસી ધવલ હોતી હૈ’ इस प्रकारसे जो दूसरोंके लिये दृष्टि वगैरह चिह्नोंसे अपनी क्रोधपरिणति दिखलाता हॆ-प्रकट करता हॆ वह मानदॆर्शी होता हॆ-मानको देखता हॆ-मान करनेकी भावना करता हॆ, मान करता हॆ-अन्यके लिये वह अपनी मानपरिणति प्रकट करता हॆ । इसी प्रकार जो मानदॆर्शी हॆ वह मायादॆर्शी होता हॆ । जो मायादॆर्शी हॆ वह लोभदॆर्शी हॆ । जो लोभदॆर्शी हॆ वह रागदॆर्शी हॆ । जो रागदॆर्शी हॆ वह द्वेषदॆर्शी हॆ । जो द्वेषदॆर्शी हॆ वह मोहदॆर्शी हॆ । जो मोहदॆर्शी होता हॆ वह गर्भदॆर्शी होता हॆ । इसका भाव यह हॆ कि-मोहदॆर्शी प्राणी गर्भा-

ને ક્રોધદર્શી છે અર્થાત્ ક્રોધને દેખે છે-ક્રોધ કરવાની ભાવના કરે છે-ક્રુદ્ધ થાય છે, બીજી વ્યક્તિના ઉપર ક્રોધ દેખાડે છે જેમ-‘ક્રુદ્ધ વ્યક્તિની દૃષ્ટિ તીવ્ર હોય છે. પ્રસન્ન ચિત્તવાળાની સફેદ કમળ જેવી ધવળ હોય છે’ એવા પ્રકારથી જે બીજાઓને માટે દૃષ્ટિ વિગેરે ચિન્હોથી પોતાની ક્રોધ-પરિણતિ દેખાડે છે-પ્રકટ કરે છે તે માનદર્શી થાય છે-માનને દેખે છે-માન કરવાની ભાવના રાખે છે, માન કરે છે-બીજાને માટે તે પોતાની માન-પરિણતિ પ્રગટ કરે છે. એ પ્રકારે માનદર્શી છે તે માયાદર્શી હોય છે. જે માયાદર્શી છે તે લોભદર્શી છે, જે લોભદર્શી છે તે રાગદર્શી છે. જે રાગદર્શી છે તે દ્વેષદર્શી છે, જે દ્વેષદર્શી છે તે મોહદર્શી છે જે મોહદર્શી છે તે ગર્ભદર્શી છે. તેનો ભાવ એ છે કે-મોહદર્શી પ્રાણી ગર્ભાવાસથી ઉત્પન્ન અનન્ત

ભાવશસ્ત્રં કથં પરેણ પરમસ્તીત્યાહ—‘ જે કોહદંસી ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જે કોહદંસી સે માણદંસી, જે માણદંસી સે માયા-
દંસી, જે માયાદંસી સે લોહદંસી, જે લોહદંસી સે પેજ્જદંસી,
જે પેજ્જદંસી સે દોસદંસી, જે દોસદંસી સે મોહદંસી, જે મોહદંસી
સે ગબ્બદંસી, જે ગબ્બદંસી સે જમ્મદંસી, જે જમ્મદંસી સે
મારદંસી, જે મારદંસી સે નરયદંસી, જે નરયદંસી સે તિરિયદંસી,
જે તિરિયદંસી સે દુક્ખદંસી ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જીવોંમેં સમતાશાલી સંયમીકે સામાયિકરૂપ ચારિત્રમેં તીવ્રમન્દરૂપ
પ્રકર્ષકી પરમ્પરા નહીં હૈ । અથવા—શૈલેશી અવસ્થાકે સંયમસે આગે ગુણ-
સ્થાનકા અભાવ હોનેસે ઔર કોઈ પર-ઉત્કૃષ્ટ-સંયમ નહીં હૈ ।

ભાવાર્થ—શૈલેશી અવસ્થા ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં હોતી હૈ, ક્યોં કિ
इसी गुणस्थानमें चारित्रकी पूर्णता होती है । यथाख्यात—चारित्रसे ઔર
કોઈ ચારિત્ર તો એસા ઉત્કૃષ્ટ હૈ નહીં જો ઇસસે મી અધિક ઉત્કૃષ્ટ હો,
इस लिये इस अवस्थाके चारित्रमें प्रकर्षकी परम्पराका निषेध है । ચારિત્ર
કે મેદોંમેં પરસ્પર પ્રકર્ષપ્રકર્ષવૃત્તિ મલે હી હો પરન્તુ કિસી મી ચારિત્ર
મેં નિજમેં પ્રકર્ષપ્રકર્ષવૃત્તિ નહીં હૈ । यथाख्यात—चारित्र स्वयं प्रकर्षकी
अवधिस्वरूप है ॥ સૂ૦ ૯ ॥

દ્રવ્યશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષપરમ્પરાકો સ્પષ્ટ કર અવ ‘ભાવશસ્ત્રમેં વહ પ્રકર્ષ-
પરમ્પરા કૈસે હૈ?’ ઇસે સ્પષ્ટ કરનેકે લિયે કહતે હૈ—‘જે કોહદંસી ’ ઇત્યાદિ ।

इय चारित्रमां तीव्रमंदइय प्रकर्षनी परंपरा नथी. अथवा शैलेशी अवस्थाना
संयमथी आगण गुणस्थाननो अभाव थवाथी भीन्ने कोछ उत्कृष्ट संयम नथी.

ભાવાર્થ—શૈલેશી અવસ્થા ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં થાય છે, કારણ કે તે
गुणस्थानमां चारित्रनी पूर्णता थाय છે. यथाख्यात—ચારિત્રથી બીન્ત કોઈ ચારિત્ર
તો એવું ઉત્કૃષ્ટ છે નહિ કે જે એનાથી પણ અધિક ઉત્કૃષ્ટ હોય. માટે આ અવસ્થાના
ચારિત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરાનો નિષેધ કરે છે. ચારિત્રના ભેદોમાં પરસ્પર પ્રકર્ષ-
પ્રકર્ષ વૃત્તિ ભલે હોય પરંતુ કોઈ પણ ચારિત્રમાં પોતામાં પ્રકર્ષપ્રકર્ષવૃત્તિ
નથી. यथाख्यात—चारित्र स्वयं प्रकर्षनी अवधिस्वरूप છે. ॥ સૂ૦ ૯ ॥

દ્રવ્યશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષપરંપરાને સ્પષ્ટ કરીને હવે ‘ભાવશસ્ત્રમાં તે પ્રકર્ષ
પરંપરા કેવી રીતે છે?’ તેને સ્પષ્ટ કરવા માટે કહે છે—‘જે કોહદંસી ’ ઇત્યાદિ.

યસ્તુ મુમુક્ષુઃ, સ ક્રોધાદિકં પરિહરેદિત્યાહ—‘સે મેહાવી’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે મેહાવી અભિણિવટ્ટિજ્ઞા કોહં ચ માણં ચ માયં ચ લોહં ચ પેજં ચ દોસં ચ મોહં ચ ગબ્મં ચ જમ્મં ચ મારં ચ નરયં ચ તિરિયં ચ દુક્ખં ચ । એયં પાસગસ્સ દંસણં ઉવરયસ-ત્થસ્સ પલિયંતકરસ્સ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા—સ મેધાવી અભિનિવર્તયેત્ ક્રોધં ચ માનં ચ માયાં ચ લોભં ચ પ્રેમ ચ દ્વેષં ચ મોહં ચ ગર્મં ચ જન્મ ચ મારં ચ નરકં ચ તિર્યશ્ચં ચ દુઃખં ચ । એતત્ પશ્ય-કસ્ય દર્શનમ્, ઉપરતશસ્ત્રસ્ય પર્યન્તકરસ્ય ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા—સ મેધાવી ક્રોધાદિમોહાન્તં ભાવશસ્ત્રં, તથા—ગર્ભાદિદુઃખાન્તં તત્પ્રયો-ગફલભૂતમ્, અભિનિવર્તયેત્=પરિહરેત્—અપનયેદિત્યર્થઃ । ક્રોધાદિમોહાન્તં ભાવશસ્ત્રં સર્વથા પરિવર્જયેત્, યેન ગર્ભદુઃખાદારમ્બ્ય નિગોદદુઃખં યાવત્ સર્વમપિ દુઃખં ન પ્રાપ્નુયાદિતિ ભાવઃ ।

ભાવાર્થ—યે ક્રોધાદિક પર-ભાવ હી ભાવશસ્ત્ર હૈં ઓર ક્રોધસે માન, માનસે માયા, માયાસે લોભ, ઇત્યાદિ રૂપસે ડનમેં પ્રકર્ષપરમ્પરા હૈ; યહ વાત પ્રકટ કી ગઈ હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જો મુમુક્ષુ-મોક્ષ જાનેકી ઇચ્છા રાખનેવાલા હો ડસકો ક્રોધાદિકકા પરિહાર કર દેના ડાહિયે, ઇસ વાતકો પ્રકટ કરતે હૈં—‘સે મેહાવી’ ઇત્યાદિ ।

વહ મેધાવી મુનિ ક્રોધસે લગાકર મોહ તક ભાવશસ્ત્રકા તથા ડન કે પ્રયોગસે ઉત્પન્ન ડનકે ફલસ્વરૂપ ગર્ભાવાસકે દુઃખોસે લેકર નિગોદકે દુઃખોં તકકા પરિહાર કરે, અર્થાત્—બુદ્ધિમાનકા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ ક્રોધા-દિક કષાયરૂપ ભાવશસ્ત્રકા પરિત્યાગ કરે । ક્યોંકિ ક્રોધાદિકષાયોંકે કરને સે કર્ત્તાકો ડનેક પ્રકારકે દુઃખોંકો ભોગના પડતા હૈં । ગર્ભાવાસકે દુઃખોં

લાવાર્થઃ—એ ક્રોધાદિક પર-ભાવ જ લાવશસ્ત્ર છે, ડને ક્રોધથી માન, માનથી માયા, માયાથી લોભ, ઇત્યાદિ રૂપથી તેમાં પ્રકર્ષપરપરા છે, એ વાત પ્રગટ કરી છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જે મુમુક્ષુ-મોક્ષ જવાની ઇચ્છા રાખનારા હોય તેને ક્રોધાદિકનો પરિહાર કરી દેવો જોઈએ, આ વાતને પ્રગટ કરે છે—‘સે મેહાવી’ ઇત્યાદિ

તે મેધાવી મુનિ ક્રોધથી લઈ મોહ સુધી લાવશસ્ત્રને તથા તેના પ્રયોગથી ઉત્પન્ન તેના ફળસ્વરૂપ ગર્ભાવાસના દુઃખોથી લઈને નિગોદના દુઃખો સુધીનો પરિહાર કરે; અર્થાત્ બુદ્ધિમાનનું કર્તવ્ય છે કે તે ક્રોધાદિકકષાયરૂપ લાવશસ્ત્રનો પરિત્યાગ કરે, કારણ કે ક્રોધાદિક કષાયોના કરવાથી કર્તાને તેનાથી ડનેક પ્રકારના દુઃખો ભોગવા

યાવદવગન્તવ્યમ્ । યસ્તિર્યગ્દર્શી=તિર્યગ્ભવનિગોદસમ્બન્ધિદુઃસ્વદર્શી, સ દુઃસ્વદર્શી-
-ઇહ દુઃસ્વશબ્દેન સર્વતઃ સમુત્કૃષ્ટતમં નિગોદભવસમ્બન્ધિ દુઃસ્વં પરિગૃહ્યતે, તત્
પશ્યતિ=અનુભવતીત્યર્થઃ । એતેન ગર્ભદર્શીત્યાદાવપિ દુઃસ્વદર્શિત્વેન તિર્યગ્દર્શિન
એવ દુઃસ્વદર્શિત્વકથનમયુક્તમિતિ શઙ્કાવસરો નાસ્તીતિ બોધ્યમ્ । અનેન-પારમ્પર્યા-
પન્નસ્ય સર્વસ્ય ભાવશસ્ત્રસ્ય નિદાનં ક્રોધઃ, તથા સર્વતઃ સમુત્કૃષ્ટદુઃસ્વં નિગોદભ-
વેઽસ્તીતિ ધ્વનિતમ્ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

વાસસે ઉત્પન્ન અનન્ત યાતનાઓંકો ભોગતા હૈ । ઇસી પ્રકાર જો ગર્ભ-
દર્શી હૈ વહ જન્મદર્શી હૈ । જો જન્મદર્શી હૈ વહ મરણદર્શી હૈ । જો મર-
ણદર્શી હૈ વહ નરકદર્શી હૈ । જો નરકદર્શી હૈ વહ તિર્યગ્દર્શી હૈ, જો
તિર્યગ્દર્શી હૈ અર્થાત્ તિર્યગ્ગતિસ્વરૂપ નિગોદકે દુઃસ્વોંકા અનુભવકર્તા
હૈ વહ વહાંકે સર્વોત્કૃષ્ટ દુઃસ્વોંકા અનુભવ કરતા હૈ । યહી ભાવ
“સ દુઃસ્વદર્શી ” ઇસ પદસે સૂત્રકારને પ્રકટ કિયા હૈ । યહાં દુઃસ્વ-
શબ્દસે સર્વોત્કૃષ્ટ નિગોદસમ્બન્ધી દુઃસ્વોંકા હી ગ્રહણ કિયા હૈ । ઇસ
લિયે “યો ગર્ભદર્શી ” ઇત્યાદિ પદ હૈં ઉનમેં બી દુઃસ્વદર્શિત્વ તો આતા
હી હૈ, ફિર બી જો તિર્યગ્દર્શી મેં હી દુઃસ્વદર્શિત્વ સ્વતન્ત્ર રૂપસે પ્રકટ
કિયા ગયા હૈ વહ અયુક્ત હૈ । ઇસ પ્રકારકી શઙ્કા કરનેકા યહાં અવસર
હી નહીં પ્રાપ્ત હોતા હૈ । ઇસ સમસ્ત કથનસે યહ ધ્વનિત હોતા હૈ કિ
ઇસ પ્રકર્ષપરમ્પરાપ્રાપ્ત ભાવશસ્ત્રકા નિદાન-મૂલ કારણ-ક્રોધ હૈ ઓર
સબસે ઉત્કૃષ્ટ દુઃસ્વ નિગોદભવમેં હૈ ।

યાતનાઓને ભોગવે છે. એ પ્રકારે જે ગર્ભદર્શી છે તે જન્મદર્શી છે. જે જન્મ-
દર્શી છે તે મરણદર્શી છે, જે મરણદર્શી છે તે નરકદર્શી છે. જે નરકદર્શી છે
તે તિર્યગ્દર્શી છે. જે તિર્યગ્દર્શી છે અર્થાત્ તિર્યગ્ગતિસ્વરૂપ નિગોદના દુઃખોનો
અનુભવકર્તા છે, તે ત્યાંના સર્વોત્કૃષ્ટ દુઃખોનો અનુભવ કરે છે. એ જ ભાવ.
“સ દુઃસ્વદર્શી ” એ પદથી સૂત્રકારે પ્રગટ કરેલ છે. અહીં દુઃખ-શબ્દથી
સર્વોત્કૃષ્ટ નિગોદસંબંધી દુઃખોનું જ ગ્રહણ કરેલ છે. માટે જે “ગર્ભદર્શી” ઇત્યાદિ
પદ છે તેમાં પણ દુઃખ-દર્શિત્વ તો આવે જ છે તો પણ જે તિર્યગ્દર્શીમાં જ
દુઃખ-દર્શિત્વ સ્વતંત્ર રૂપથી પ્રગટ કરેલ છે તે અયુક્ત છે. આ પ્રકારની શંકા
કરવાનો આ ઠેકાણે અવસર જ પ્રાપ્ત થતો નથી, આ સમસ્ત કથનથી એ ધ્વનિત
થાય છે કે આ પ્રકર્ષપરંપરાપ્રાપ્ત ભાવશસ્ત્રનું નિદાન-મૂલ કારણ-ક્રોધ છે. અને
બધાથી ઉત્કૃષ્ટ દુઃખ નિગોદભવમાં છે.

ટીકા— આદાનમિતિ—આદાનં કર્મોપાદાનં ક્રોધં, નિષેદ્ધા=અપનેતા સ્વકૃત-
મિત્ત=પૂર્વોપાર્જિતકર્મભયપિતા ભવતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

જમ્બૂસ્વામી પૃચ્છતિ—‘ કિમત્થિ ઉવાહી ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ ?, ન વિજ્ઞઇ નત્થિત્તિ
વેમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

છાયા—કિમસ્તિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય, ન વિદ્યતે નાસ્તીતિ વ્રવીમિ ॥ ૧૩ ॥

ટીકા—પશ્યકસ્ય=કેવલિનઃ, ઉપાધિઃ ઉપાધીયતે ઇત્યુપાધિઃ, તત્ર દ્રવ્યો-
પાધિર્હિરણ્યસુવર્ણાદિઃ, ભાવોપાધિર્જ્ઞાનાવરણીયાદિકં કર્મ, યદ્વા-ઉપાધીયતે વ્યપ-

આદાન=કર્મોંકે ઉપાદાન-ગ્રહણ કરનેમેં પ્રધાનકારણ એસે ક્રોધકા
જો પરિહાર કરતા હૈ વહ અપને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોંકા વિનાશક હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—અષ્ટવિધ કર્મોંકા મૂલ કારણ ક્રોધ હૈ, એસા સમજ્ઞકર
તીર્થંકર ભગવાનને ઇસકા સર્વથા પરિહાર કિયા હૈ । અતઃ ઇસકે પરિ-
હારસે વે નવીન કર્મોંકે વન્ધક નહીં હુણ, ઇતના હી નહીં; ઉનકી આત્મામેં
જો કુછ પૂર્વસંચિત કર્મ થે ઉનકો ભી સંવરકી પ્રાપ્તિસે ઉન તીર્થંકર પ્રભુને
નષ્ટ કર દિયે । ઇસલિયે મોક્ષાભિલાષી મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ વીતરાગ
તીર્થંકરપ્રભુકા આદર્શ સામને રચ્ચકર ઉસ માર્ગકા અનુસરણ કરે ॥સૂ૦ ૧૨॥

અવ ઉપાધિ કે વિષયમેં કહતે હૈ—‘ કિમત્થિ ’ ઇત્યાદિ ।

જમ્બૂસ્વામી શ્રી સુધર્માસ્વામીસે પૂછતે હૈ કિ—હે ભદ્રન્ત ! કેવલી
ભગવાનકે ઉપાધિ હૈ ક્યા ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈ કિ ઉનકે કિસી
ભી પ્રકારકી ઉપાધિ નહીં હૈ । હિરણ્યસુવર્ણાદિરૂપ દ્રવ્ય-ઉપાધિ ઔર

આદાન=કર્મોના ઉપાદાન-ગ્રહણ કરવામા પ્રધાન કારણ જે ક્રોધ છે તેનો જે
પરિહાર કરે છે તે પોતાના પૂર્વોપાર્જિત કર્મોના વિનાશક બને છે

ભાવાર્થ—અષ્ટવિધ કર્મોનું મૂલ કારણ ક્રોધ છે, એવું સમજીને તીર્થંકર ભગ-
વાને તેનો સર્વથા પરિહાર કરેલ છે, માટે તેના પરિહારથી તે નવીન કર્મોના બંધક
નથી થયાં, એટલું જ નહિ, જેટલા કંઈ તેની આત્મામાં પૂર્વ સંચિત કર્મ હતા
તે સંવરની પ્રાપ્તિથી તે તીર્થંકર પ્રભુએ નષ્ટ કરી નાખ્યા. માટે મોક્ષાભિલાષી
મુનીનું કર્તવ્ય છે કે તે વીતરાગ પ્રભુનો આદેશ સામે રાખીને તે માર્ગનું
અનુસરણ કરે ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

હવે ઉપાધિના વિષયમા કહે છે—‘ કિમત્થિ ’ ઇત્યાદિ

જમ્બૂ સ્વામી સુધર્મા સ્વામીને પૂછે છે કે હે ભદ્રન્ત ! કેવળી ભગવાનને
ઉપાધિ છે કે નહિ ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે તેને કોઈ પણ પ્રકારની ઉપાધિ
નથી, હિરણ્ય સુવર્ણાદિરૂપ દ્રવ્ય-ઉપાધિ અને જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મ ભાવ-ઉપાધિ આ

एतच्च मया न स्वबुद्धिकल्पनया कथ्यते, किंतु भगवतस्तीर्थंकरस्य समीपे तदुपदेशवचनं यथा मया श्रुतं तथा निगद्यते, इत्याशयेनाह—‘ एतत् पश्यकस्य दर्शनम् ’ इत्यादि । अत्रैवोद्देशे कृतव्याख्यानमेतत् ॥ सू० ११ ॥

असौ तीर्थंकरः कथंभूतः ? इत्यत आह—‘ आयाणं ’ इत्यादि ।

मूलम्—आयाणं निसिद्धा सगडभि ॥ सू० १२ ॥

छाया—आदानं निषेद्धा स्वकृतभित् ॥ सू० १२ ॥

સે મી અનન્તગુને કષ્ટ નિગોદમેં જીવ ઇનકે કરનેકે હી ફલસ્વરૂપ ભોગતા હૈ । અતઃ મુનિકે લિયે ક્રોધાદિ કષાયોંકા પરિહાર કરના હી સર્વશ્રેયસ્કર હૈ । ઇનકા પરિહાર કરનેસે ફિર ડસકો ગર્ભવાસાદિક તથા નિગોદકે અનન્ત કષ્ટોંકો નહીં સહના પડતા હૈ । ઇનકા ત્યાગ કરના હી ડન દુઃસ્વોંકે અભાવકા હેતુ હૈ । શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીસે કહતે હૈ—હે જમ્બૂ ! યહ જો કુછ મી મૈને યહાં તક પ્રતિપાદન કિયા હૈ વહ અપની બુદ્ધિસે કલ્પિત કર નહીં કિયા હૈ; કિન્તુ ભગવાન્ તીર્થંકર શ્રીવર્ધમાનસ્વામીકે સમીપ ડનકે ઉપદેશરૂપ વચન જૈસા મૈને સુના હૈ ડસી તરહસે કહા હૈ । ડસી આશયસે શ્રી સુધર્માસ્વામી “ એયં પાસગસ્સ દંસણં ” ઇત્યાદિ સૂત્ર કી સાક્ષી દેતે હૈ । ડસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન ડસી ઉદ્દેશકે પહેલે સૂત્રમેં કિયા જા ચુકા હૈ ॥ સૂ० ૧૧ ॥

જિનકા યહ દર્શન હૈ વે તીર્થંકર ભગવાન્ કૈસે હોતે હૈ ? સો કહતે હૈ—‘ આયાણં ’ ઇત્યાદિ ।

પડે છે. ગર્ભાવાસના દુઃખોથી અનંતગણા કષ્ટ નિગોદમાં જીવ તેના કરવાના ફળ સ્વરૂપ ભોગવે છે, અતઃ મુનિ માટે ક્રોધાદિ કષાયોનો પરિહાર કરવો જ સર્વશ્રેયસ્કર છે. તેનો પરિત્યાગ કરવાથી ફરીથી તેને ગર્ભાવાસાદિકના તથા નિગોદના અનંત દુઃખોને સહન કરવા પડતા નથી. તેનો ત્યાગ કરવું જ તે દુઃખોના અભાવનો હેતુ છે.

શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીથી કહે છે—હે જમ્બૂ ! આ જે કાંઈ પણ મેં અહીંયા સુધી પ્રતિપાદન કરેલ છે તે પોતાની બુદ્ધિથી કલ્પિત કરી કહેલ નથી, પણ ભગવાન તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામીના સમીપે તેના ઉપદેશરૂપ વચન જેવું મેં સાંભળેલ છે તે જ મેં કહેલ છે. તે આશયથી શ્રી સુધર્માસ્વામી “એયં પાસગસ્સ દંસણં” ઇત્યાદિ સૂત્રની સાક્ષી આપે છે. આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ ઉદ્દેશના પહેલા સૂત્રમાં કરવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ० ૧૧ ॥

જેવું આ દર્શન છે તે તીર્થંકર ભગવાન કેવા હોય છે ? તે કહે છે—‘આયાણં’ ઇત્યાદિ.

“ दग्धे बीजे यथाऽत्यन्तं, प्रादुर्भवति नाङ्कुरः ।

कर्मबीजे तथा दग्धे, न रोहति भवाङ्कुरः ” ॥ इति ॥

इति ब्रवीमि—इति=इदं, ब्रवीमि=यथा श्रुतं भगवन्मुखान् तथा कथयामीत्यर्थः । सू० १३ ।

॥ तृतीयाध्ययनस्य चतुर्थोद्देशः समाप्तः ॥ ३-४ ॥

“ तृतीयेऽध्ययने सुप्तजागरूकौ च वर्णितौ ।

सुप्तदुःखं मुनित्वे च, कारणं क्रोधवर्जनम् ” ॥ १ ॥ इति ॥

॥ इति श्री विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललित-

कलापाऽऽलापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-शाहू-

छत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त-“जैनशास्त्राचार्य”-पदभूषित-कोल्हापुर-

राजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्री-

घासीलाल-व्रतिविरचितायाम् आचाराङ्गमूत्रस्याचारचिन्ता-

मणिटीकायां शीतोष्णीयाख्यं तृतीयमध्ययनं संपूर्णम् ॥ ३ ॥

हैं । क्यों कि उनके कर्मरूपी बीज जल चुका है, कहा भी है—

“ दग्धे बीजे यथाऽत्यन्तं, प्रादुर्भवति नाङ्कुरः ।

कर्मबीजे तथा दग्धे, न रोहति भवाङ्कुरः ॥ १ ॥ ” इति ।

जिस प्रकार बीजके नष्ट होनेपर अङ्कुर उत्पन्न नहीं होता है उसी प्रकार कर्मरूपी बीजके विनाश होने पर संसाररूपी अङ्कुर उत्पन्न नहीं होता है । ‘ त्ति वे मि ’ ‘ इति ब्रवीमि ’ इस प्रकार मैं कहना हूँ, अर्थात्-भगवानके मुखसे मैंने जैसा सुना है वैसा ही तुमसे कहना हूँ ॥ सू० १३ ॥

तीसरे अध्ययन का चौथा उद्देश समाप्त ॥ ३-४ ॥

इस तृतीय अध्ययनके चार उद्देशोंमें यथाक्रमसे इस प्रकार विषय वर्णित हुए हैं ।

કારણ કે તેને કર્મરૂપી બીજ બળી ગયેલ છે, કહ્યું પણ છે—

“ દગ્ધે બીજે યથાઽત્યન્તં, પ્રાદુર્ભવતિ નાઙ્કુરઃ ।

કર્મબીજે તથા દગ્ધે, ન રોહતિ ભવાઙ્કુરઃ ” ॥ ૧ ॥

જેવી રીતે બીજનો નાશ થવાથી અકુર ઉત્પન્ન થતાં નથી તે પ્રકારે કર્મરૂપી બીજનો વિનાશ થવાથી સંસારરૂપી અકુર ઉત્પન્ન થતો નથી.

‘ ત્તિ વે મિ ’ ‘ ઇતિ બ્રવીમિ—આ પ્રકારે હું કહું છું. અર્થાત્ ભગવાનના મુખથી મેં જેવું સાંભળ્યું છે તેવું જ હું તમોને કહું છું. ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૪ ॥

આ ત્રીજા અધ્યયનના ચાર ઉદ્દેશોમાં યથાક્રમથી આ પ્રકારે વિષય વર્ણિત થયેલ છે.—

દિશ્યતે યેનેત્યુપાધિઃ-કર્મજનિતો નરકાદિભવઃ, અસ્તિ કિમ્ ? । શ્રીસુધર્માસ્વામી ઉત્તરયતિ-ન વિદ્યતે । ‘નાસ્તિ’ इति-ઉત્તરવાક્યાર્થસ્ય દાઢર્યવોધનાય, અધ્યયન-સમાપ્તિસૂચનાય વાડર્યતઃ પુનઃ કથનમ્ । યદ્વા-‘ન વિદ્યતે’ इत्यन्तं પ્રશ્નવાક્યમ્ । પશ્યકસ્યોપાધિઃ કિમસ્તિ, ઉત ન વિદ્યતે? અત્રોત્તરમાહ-નાસ્તીતિ । અષ્ટવિધં કર્મ, કર્મજનિતનરકાદિભવો વા કેવલિનો ન ભવતીત્યર્થઃ । તથા ચોક્તં--

જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મ ભાવ-ઉપાધિ, ઇસ પ્રકારસે ઉપાધિકે દો ભેદ હૈં; ઇનમેંસે કોઈ મી ઉપાધિ ડનકે નહીં હૈ । અથવા કર્મજનિત જો નરકાદિ પર્યાય હૈ વહ મી ઉપાધિ હૈ, યહ ઉપાધિ મી ડનમેં નહીં હૈ । પ્રશ્ન ઓર ઉત્તરકે રૂપમેં યહ સૂત્ર હૈ, જૈસે-“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ” કિમસ્તિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય ?, યહાં તક પ્રશ્નવાક્ય હૈ “ન વિજ્જઈ નત્થિ”-ન વિદ્યતે નાસ્તિ, યહ ઉત્તર વાક્ય હૈ । અર્થાત્ સર્વજ્ઞ-તીર્થઙ્કર ભગવાનકે ઉપાધિ હૈ કિ નહીં? નહીં હૈ । યહાં પર “ન વિદ્યતે” ઇસ ક્રિયાકી પર્યાયવાર્ચા ક્રિયા જો “નાસ્તિ” વતલાઈ હૈ, સો ઉત્તરવાક્યકે અર્થકી દઢતા સમજ્ઞાનેકે લિયે, ઓર અધ્યયનકી સમાપ્તિ સૂચન કરનેકે લિયે ।

અથવા-“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ ન વિજ્જઈ” યહાં તક પ્રશ્ન-વાક્ય હૈ, ઓર “નત્થિ” યહ ઉત્તરવાક્ય હૈ । અર્થાત્-સર્વજ્ઞ-તીર્થઙ્કરકો ઉપાધિ હૈ કિ નહીં? યહાં તક શિષ્યકા પ્રશ્ન હૈ । ગુરુકા ઉત્તર હૈ-‘નત્થિ’-નહીં હૈ ।

ભાવાર્થ-કેવલી તીર્થઙ્કર ભગવાનકે ન અષ્ટવિધ કર્મરૂપ ઉપાધિ હૈ ઓર ન કર્મજન્ય-નરકાદિપર્યાયરૂપ ઉપાધિ હી હૈ, વે ઉપાધિસે નિર્મુક્ત

પ્રકારે ઉપાધિના યે ભેદ છે. તેમાંથી કોઈ પણ ઉપાધિ તેને નથી. અથવા કર્મજનિત જે નરકાદિ પર્યાય છે તે પણ ઉપાધિ છે, તે ઉપાધિ પણ તેમનામાં નથી. પ્રશ્ન અને ઉત્તરના રૂપમાં એ સૂત્ર છે, જેમ-“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ”-કિમસ્તિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય ? આંહી સુધી પ્રશ્નવાક્ય છે. “ન વિજ્જઈ નત્થિ”-નવિદ્યતે નાસ્તિ એ ઉત્તર વાક્ય છે. અર્થાત્ સર્વજ્ઞ તીર્થઙ્કર ભગવાનને ઉપાધિ છે કે નહિ ?, નથી. આ ઠેકાણે “ન વિદ્યતે” આ ક્રિયાની પર્યાયવાર્ચા ક્રિયા જે “નાસ્તિ” બતાવી છે તે ઉત્તરવાક્યના અર્થની દઢતા સમજાવવા માટે, અને અધ્યયનની સમાપ્તિ સૂચન કરવા માટે. અથવા-“કિમત્થિ ઉવાહો પાસગસ્સ ન વિજ્જઈ” આંહી સુધી પ્રશ્નવાક્ય છે, અને ‘નત્થિ’ આ ઉત્તરવાક્ય છે અર્થાત્ સર્વજ્ઞ તીર્થઙ્કરને ઉપાધિ છે કે નહિ ? આંહી સુધી શિષ્યનો પ્રશ્ન છે. ગુરુનો ઉત્તર છે-‘નત્થિ’ નથી.

ભાવાર્થ-કેવળી તીર્થઙ્કર ભગવાનને અષ્ટવિધકર્મરૂપ ઉપાધિ નથી, અને કર્મજન્ય નરકાદિપર્યાયરૂપ ઉપાધિ પણ નથી. તે તો ઉપાધિથી નિર્મુક્ત છે.

। અથાચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય સમ્યક્ત્વનામકં ચતુર્થમધ્યયનમ્ ।

નિરુપાધિકં સંયમાનુષ્ઠાનં મુનિત્વસ્ય મોક્ષસ્ય ચ કારણમિતિ પ્રાગુક્તાધ્યયન-
ત્રયેણ પ્રતિપાદિતં, તદ્વિ સમ્યક્ત્વમન્તરેણ ન સંભવતીત્યતઃ સમ્યક્ત્વાભ્યં ચતુર્થ-
મધ્યયનં કથયતિ । સમ્યક્ત્વપ્રતિવોધકત્વાદિદમધ્યયનમપિ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।
યથા ચતુઃશાલમધ્યગતઃ પ્રદીપઃ શાલાચતુષ્ઠ્યં પ્રદ્યોતયતિ, તદ્વદિદં મધ્યગતમધ્યયનં
સર્વાધ્યયનસ્થમાચારમવભાસયતિ । પ્રસજ્જતસ્તાવત્ સમ્યક્ત્વં નિરૂપ્યતે—

સમન્વતિ જ્ઞાનાદિગુણં પ્રાપ્નોતીતિ સમ્યગ્=જીવસ્તસ્ય ભાવઃ સમ્યક્ત્વમ્ । તત્ત્વ
તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમ્, તત્ત્વાર્થેષુ સર્વજ્ઞવીતરાગોપદિષ્ટતયા પારમાર્થિકેષુ જીવાજીવાદિ-
પદાર્થેષુ શ્રદ્ધાનં=રુચિરભિપ્રીતિઃ । ઉક્તશ્ચ—

। આચારાઙ્ગસૂત્રકા સમ્યક્ત્વનામક ચતુર્થ અધ્યયન ।

ઉપાધિરહિત સંયમકા આરાધન, મુનિપનેકા ઔર મોક્ષકા કારણ
હોતા હૈ, યહ વાત યદ્યપિ પહિલે કહે ગયે ત્રીન અધ્યયનોં મેં અચ્છી
તરહ સે પ્રકટ કી જા ચુકી હૈ । પરન્તુ વહ સંયમારાધન સમ્યક્ત્વકે વિના
નહીં હો સકતા હૈ । ઇસલિયે સમ્યક્ત્વ નામકા ચૌથા અધ્યયન કહા
જાતા હૈ । જૈસે આમને-સામનેકે ચાર મકાનોં કે ચૌક મેં રહ્યા હુઆ
દીપક ઉન ચારોં હી મકાનોં કો પ્રકાશિત કરનેવાલા હોતા હૈ, ઠીક ઇસી
તરહસે સબ અધ્યયનોં કે મધ્ય મેં રહ્યા હુઆ યહ અધ્યયન મી સમસ્ત
અધ્યયનોં કે આચાર કા પ્રકાશક હૈ । ઇસલિયે પ્રકરણવશ ડસીકા
નિરૂપણ કિયા જાતા હૈ ।

જ્ઞાનાદિક ગુણોં કો જો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ડસકા નામ સમ્યક્ હૈ । ઇસ
અપેક્ષા સે વહ સમ્યક્ જીવસ્વરૂપ હૈ । ડસકા જો ભાવ ડસે સમ્યક્ત્વ

આચારાંગસૂત્રનું સમ્યક્ત્વનામનું ચોથું અધ્યયન.

ઉપાધિરહિત સયમનું આરાધન મુનિપણનું તથા મોક્ષનું કારણ થાય
છે, આ વિષય પહેલા ત્રણ અધ્યયનોમાં સ્પષ્ટ રીતે પ્રકાશિત કરવામાં આવેલ છે;
પણ આ સંયમારાધન સમ્યક્ત્વ વિના બની શકતું નથી માટે સમ્યક્ત્વ નામનું
ચોથું અધ્યયન કહેવામાં આવે છે. જેવી રીતે ચાર મકાનોના ચોકમાં રાખેલ
એક દીપક ચારે મકાનોને પ્રકાશિત કરે છે તેવી રીતે બધા અધ્યયનોના મધ્યમાં
સ્થિત આ અધ્યયન બધા અધ્યયનોના આચારનું પ્રકાશક છે આ માટે પ્રકરણ
વશ તેનું જ પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે.

જ્ઞાનાદિક ગુણને જે પ્રાપ્ત કરે છે તેનું નામ સમ્યક્ છે. તે અપેક્ષાએ
આ સમ્યક્ જીવસ્વરૂપ છે. એનો જે ભાવ તેને સમ્યક્ત્વ કહે છે. આ સમ્યક્ત્વ
તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ છે. સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુદ્વારા ભાષિત હોવાથી પારમાર્થિક સત્ય-

(१) प्रथम उद्देशमें भावसुप्त संयमियोंके दोष और संयममें जागरूक संयमियों के गुण प्रकट किये हैं ।

(२) द्वितीय उद्देशमें भावनिद्रावाले संयमियोंको अनेक दुःखोंका अनुभव करना पड़ता है, यह विषय वर्णित किया गया है ।

(३) तृतीय उद्देशमें संयमाचरणके विना केवल दुःखोंके सहनमात्र से कोई साधु नहीं कहला सकता, यह विषय प्रतिपादित किया है ।

(४) चतुर्थ उद्देशमें छर्दित-वान्त-अन्नके समान कषाय त्यागने योग्य हैं, पापकर्म परिहरणीय हैं, तथा पदार्थोंके स्वरूपको जाननेवाले संयमीके लिये संयम आराधनीय है, इत्यादि समस्त विषय प्रकट किया गया है ॥ ॥१॥

॥ यह आचाराङ्गसूत्रके शीतोष्णीयनामक तृतीय अध्ययनका हिन्दी-भाषानुवाद समाप्त ॥३॥

(१) प्रथम उद्देशમાં ભાવસુપ્ત સંયમિઓના દોષ અને જાગરૂક સંયમિઓના ગુણ પ્રકટ કરેલ છે.

(૨) બીજા ઉદ્દેશમાં ભાવનિદ્રાવાળા સંયમિઓને અનેક દુઃખોનો અનુભવ કરવો પડે છે. એ વિષય વર્ણિત કરેલ છે.

(૩) ત્રીજા ઉદ્દેશમાં સંયમાચરણ વિના કેવળ દુઃખોના સહન માત્રથી કોઈ સાધુ કહેવાતા નથી. એ વિષય પ્રતિપાદિત કરેલ છે.

(૪) ચોથા ઉદ્દેશમાં છર્દિત—વાન્ત અન્ન સમાન કષાય ત્યાગવાયોગ્ય છે. પાપકર્મ પરિહરણીય છે. તથા પદાર્થોના સ્વરૂપને જાણવાવાળા સંયમી માટે સંયમ આરાધનીય છે. ઇત્યાદિ સમસ્ત વિષય પ્રગટ કરેલ છે

આ આચારાંગસૂત્રના શીતોષ્ણીય નામના ત્રીજા અધ્યયનનો
ગુજરાતી-ભાષાનુવાદ સમાપ્ત ॥ ૩ ॥



નનુ યદુચ્યતે—“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યક્ત્વ” —મિતિ; તત્ત્વ શ્રદ્ધાનં તથેતિ પ્રત્યયઃ; તીર્થકરેણ યથા પ્રતિવોધિતં તથૈવ વસ્તુતો જીવાજીવાદિપદાર્થાનાં સ્વરૂપમિતિ નિશ્ચયપૂર્વિકા પ્રીતિરૂપા રુચિનામ્નો માનસી પરિણતિઃ । ઇયં સ્વત્વપર્યાપ્તકાઘવસ્થાયાં

રુચિ (પ્રીતિ) કે સાથ જો શુદ્ધ-નિર્દોષ વિશેષણ દિયા ગયા છે. ઉત્સકા ભાવ યહી છે કે વહ રુચિ (પ્રીતિ) અજ્ઞાન સંશય ઓર વિપર્યય, ઇન ત્રીન દોષોં સે રહિત હોની ચાહિયે, તવ હી વહ નિર્દોષ રુચિ છે. જિસમેં ઇન અજ્ઞાનાદિં કા સદ્ભાવ છે વહ સત્ય રુચિ નહીં, કિન્તુ સદોષ રુચિ છે ।

વિશેષાર્થઃ—પરસ્પર વિરુદ્ધ અનેક કોટિકે સ્પર્શ કરનેવાલે જ્ઞાન કો ‘સંશય’ કહતે હૈં । જૈસે—યહ સ્થાણુ છે કિ પુરુષ છે ? । વિપરીત એક કોટિકા નિશ્ચય કરનેવાલા જ્ઞાન ‘વિપર્યય’ કહલાતા છે—જૈસે સીપ કો ચાંદી સમજના । યહ કુછ હોગા, એસે પ્રતિભાસકો અજ્ઞાન યા અનધ્યવસાય કહતે હૈં, જૈસે જાગ ચલતે હુએ કો તૃણસ્પર્શ વગેરહ કા જ્ઞાન । યે ત્રીન—અજ્ઞાન, સંશય, વિપર્યય, રુચિકે દૂષણ હૈં । ઇનસે રહિત રુચિ હી સમ્યક્-યથાર્થ રુચિ કહલાની છે ।

શંકા—“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યગ્દર્શન છે” એસા જો સમ્યક્ત્વકા લક્ષણ કહા ગયા છે, વહાં “તથા” ઇસ પ્રકાર કે પ્રત્યય-વિશ્વાસ કા નામ હી શ્રદ્ધાન છે । અર્થાત્—‘તીર્થકર પ્રભુને જીવાદિક પદાર્થોં કા જિસ સ્વરૂપસે પ્રતિપાદન કિયા છે, ડન જીવાદિક પદાર્થોં કા વૈસા હી સ્વરૂપ છે’ ઇસ પ્રકાર

રૂચિ (પ્રીતિ) ની સાથે જે શુદ્ધ-નિર્દોષ વિશેષણ આપવામા આવ્યું છે તેનો ભાવ એ છે કે તે રૂચિ (પ્રીતિ) અજ્ઞાન, સંશય અને વિપર્યય, આ ત્રણ દોષોથી રહિત હોવી જોઈએ. ત્યારેજ તે નિર્દોષ રૂચિ છે. જેમાં આ અજ્ઞાનાદિનો સદ્ભાવ છે તે સત્ય રૂચિ નહીં; પણ સદોષ રૂચિ છે.

વિશેષાર્થઃ—પરસ્પર વિરુદ્ધ અનેક કોટિના (પ્રકારના) સ્પર્શ કરવાવાળા જ્ઞાનને સંશય કહે છે, જેમ—આ સ્થાણુ છે કે પુરુષ છે ? । વિપરીત એક કોટિના નિશ્ચય કરવાવાળા જ્ઞાનને વિપર્યય કહે છે, જેમ—છીપને ચાંદી જાણવી આ કાંઈક હશે, આવા પ્રતિભાસને અજ્ઞાન અગર અનધ્યવસાય કહે છે, જેમ—માર્ગ પર ચાલવાવાળાને તૃણસ્પર્શ વિગેરેનું જ્ઞાન, આ ત્રણ—અજ્ઞાન, સંશય, વિપર્યય—રૂચિનાં દૂષણો છે. એનાથી રહિત રૂચી જ સમ્યક્-યથાર્થ—રૂચી કહેવાય છે.

શંકા—“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યગ્દર્શન છે” એવું જે સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહેવામા આવે છે ત્યાં “તથા” આવા પ્રકારના પ્રત્યય-વિશ્વાસ-નું નામ જ શ્રદ્ધાન છે અર્થાત્ ‘તીર્થકર પ્રભુએ જીવાદિક પદાર્થોને જે સ્વરૂપે પ્રતિપાદન કર્યા છે. એ જીવાદિક પદાર્થોના તેવા જ સ્વરૂપ છે’ આવા પ્રકારની નિશ્ચયપૂર્વક જે

“ જિનોક્તતત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । ” ઇતિ ।

જિનોક્તતત્ત્વેષુ જીવાજીવાદિપદાર્થેષુ યા શુદ્ધા=અજ્ઞાનસંશયવિપર્યયનિરાકરણેન નિર્મલા રુચિઃ=શ્રદ્ધાનં સા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

કહતે હૈં । વહ સમ્યક્ત્વ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ હૈ । સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુકે દ્વારા કહે હુઅ હોનેસે પારમાર્થિક-સત્યસ્વરૂપ જીવ અજીવાદિક પદાર્થોં મેં જો શ્રદ્ધા-રુચિ-પ્રીતિ હૈ ઉસીકા નામ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન હૈ । કહા મી હૈ—

“ જિનોક્તતત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ” ઇતિ ।

અર્થાત્—જિનેન્દ્ર ભગવાન્ દ્વારા કહે ગયે તત્ત્વોં મેં જો નિર્દોષ રુચિ-પ્રીતિ હૈ, ઉસીકા નામ સમ્યક્ત્વ હૈ ।

વિશેષાર્થઃ—સર્વજ્ઞ, વીતરાગ ઓર હિતોપદેશી પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિ-પાદિત કિયે ગયે જો જીવ-અજીવ આદિ નૌ પદાર્થ હૈં, વે યહાં પર ‘તત્ત્વ’-શબ્દવાચ્ય હૈં । ‘તત્ત્વ’ શબ્દ કા અર્થ પારમાર્થિક-વાસ્તવિક હૈ । ‘શ્રદ્ધાન’ શબ્દકા અર્થ રુચિ-દૃઢ વિશ્વાસ-આસ્થા હૈ । જીવ અજીવાદિક પદાર્થ પ્રભુદ્વારા ઉપદિષ્ટ હોને સે સત્ય-વાસ્તવિક હૈં । ફલિતાર્થ હિસકા યહી હૈ—જીવાદિક પદાર્થ વીતરાગ પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિપાદિત કિયે ગયે હૈં, હિસી-લિયે વે યથાર્થ-સત્ય તત્ત્વ હૈં । ઉનમેં જો દૃઢ વિશ્વાસ હૈ ઉસી કા નામ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન હૈ । હિસીકા નામ સમ્યગ્દર્શન હૈ ।

સ્વરૂપ જીવ અજીવ આદિ પદાર્થોંમાં જે શ્રદ્ધાન-રૂચિ પ્રીતિ છે એનું નામ તત્ત્વાર્થ-શ્રદ્ધાન છે. કહ્યું છે—

“ જિનોક્ત તત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ” ઇતિ ।

અર્થાત્—જિનેન્દ્ર ભગવાન દ્વારા જે તત્ત્વો કહેવાયા છે એમાં જે નિર્દોષ રૂચિ-પ્રીતિ છે એનું નામ સમ્યક્ત્વ છે.

વિશેષાર્થઃ—સર્વજ્ઞ, વીતરાગ અને હિતોપદેશી પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત જે જીવ-અજીવ આદિ નવ પદાર્થ છે તે અહીંઆ તત્ત્વશબ્દવાચ્ય છે. તત્ત્વ-શબ્દનો અર્થ પારમાર્થિક-વાસ્તવિક છે. શ્રદ્ધાન-શબ્દનો અર્થ રૂચિ-દૃઢવિશ્વાસ-આસ્થા છે. જીવ અજીવ આદિ પદાર્થ પ્રભુદ્વારા ઉપદિષ્ટ હોવાથી સત્ય-વાસ્તવિક છે. એનો ફલિતાર્થ એ છે કે—જીવાદિક પદાર્થ વીતરાગ પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત કરેલ છે. જેથી તે યથાર્થ-સત્ય તત્ત્વ છે, એમાં જે દૃઢ વિશ્વાસ છે તેનું નામ તત્ત્વાર્થ શ્રદ્ધાન છે. એનું જ નામ સમ્યગ્દર્શન છે.

અત્રોચ્યતે—તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યક્ત્વસ્ય કાર્યમ્ । સમ્યક્ત્વં તુ સમ્યગ્દર્શનાપરનામ-
ધેયો મિથ્યાત્વલ્લયોપશમાદિજન્યઃ પ્રશમસંવેગાદિલક્ષણઃ શુભ આત્મપરિણામવિશેષઃ ।

અપર્યાપ્તાવસ્થા મેં મી ઉસ ૨ સમ્યક્ત્વ કા સદ્ભાવ માના ગયા હૈ; પરન્તુ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન વહાં નહીં માના ગયા હૈ । આપ તો સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન કહતે હૈં ।

તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન અપર્યાપ્તાવસ્થા કે જીવોં મેં નહીં હોતા; અતઃ વહાં સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ નહીં ઘટેગા । લક્ષ્ય મેં લક્ષણકા નહીં ઘટના હી તો અવ્યાસિ હૈ, સો ઇસ લક્ષણ મેં અવ્યાસિ દોષ અનિવાર્ય હૈ । યદિ આપ કહેંગે કિ હમ અપર્યાપ્તાવસ્થા કે જીવોં મેં સમ્યક્ત્વ નહીં માનતે તો આપકો આગમવિરોધરૂપ દોષ આયેગા । ક્યોંકિ આગમ મેં અપર્યાપ્તાવસ્થા કે જીવોં મેં મી સમ્યક્ત્વ માના ગયા હૈ ।

તથા—સમ્યક્ત્વ કા યહ લક્ષણ રાગાત્મકરુચિરૂપ હોને સે વીતરાગ અવસ્થા મેં ઘટિત નહીં હોતા । કારણ કિ ઉસ અવસ્થામેં રાગાત્મક રુચિ કા સર્વથા અભાવ હૈ । એસી પરિસ્થિતિમેં વહાં સમ્યક્ત્વ કી ઉત્પત્તિ કા નિર્વાહ મી કૈસે હો સકેગા ?

સમાધાન—તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન, યહ સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ નહીં હૈ; કિન્તુ ઉસકા કાર્ય હૈ । સમ્યક્ત્વ, જિસકા દૂસરા નામ સમ્યગ્દર્શન હૈ, એવં જો મિથ્યાત્વ કે ક્ષાયોપશમિકાદિક સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ, તથા જિસકે લક્ષણ પ્રશમ, સંવેગાદિક હૈં, વહ આત્મા કા શુભપરિણામવિશેષ હૈ ।

અપર્યાપ્તાવસ્થામા પણ તે તે સમ્યક્ત્વનો સદ્ભાવ માનેલ છે, પરન્તુ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન ત્યાં માનવામા નથી આવેલ આપ તો સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન કહો છો.

તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન અપર્યાપ્તાવસ્થાના જીવોમા હોતુ નથી, માટે ત્યાં સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ ઘટશે નહિ લક્ષ્યમા લક્ષણનો સમન્વય નહિ થવાથી જ અવ્યાસિ થાય છે. માટે આ લક્ષણમા અવ્યાસિ—દોષ અનિવાર્ય છે કદાચ આપ કહેશે કે અમે અપર્યાપ્તાવસ્થાના જીવોમા સમ્યક્ત્વ નથી માનતા તો આપને આગમવિરોધરૂપ દોષ લાગશે, કેમ કે આગમમા અપર્યાપ્તાવસ્થાના જીવોમાં પણ સમ્યક્ત્વ માનેલ છે.

તથા—સમ્યક્ત્વનું એ લક્ષણ રાગાત્મકરૂચિરૂપ હોવાથી વીતરાગ અવસ્થામાં ઘટિત નથી થતુ, કારણ કે આ અવસ્થામા રાગાત્મક-રૂચિનો સર્વથા અભાવ છે, આવી પરિસ્થિતિમાં ત્યા સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિનો નિર્વાહ પણ કેવી રીતે થઈ શકે ?

સમાધાન—તત્ત્વાર્થ—શ્રદ્ધાન એ સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ નથી, પણ તેનું કાર્ય છે, સમ્યક્ત્વ જેનું બીજું નામ સમ્યગ્દર્શન છે, અને જે મિથ્યાત્વના લ્લયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થાય છે તથા જેનું લક્ષણ પ્રશમ, સંવેગાદિક છે તે આત્માનું શુભ પરિણામવિશેષ છે.

नेष्यते, सम्यक्तत्वं तु तस्यामपीष्टं, षट्पष्टिसागरोपमरूपायाः साद्यपर्यवसितकालरूपायाश्च तस्योत्कृष्टस्थितेः प्रतिबोधनादिति कथं नागमविरोधः ? किंच-तत्त्वार्थ-श्रद्धानस्य रागात्मकरुचिरूपत्वेन वीतरागे तदभावात् तत्र सम्यक्तत्वं कथमुपपद्येत ?—

की निश्चयपूर्वक जो प्रीतिस्वरूप रुचि नाम की मानसिक परिणति है वही तत्त्वार्थ-श्रद्धान है । यह अपर्याप्तावस्था में घटित नहीं होती, परंतु सम्यक्त्व तो वहां पर भी माना गया है । कारण कि कुछ अधिक छासठ ६६ सागर एवं सादि अनन्त उस सम्यक्त्व की उत्कृष्ट स्थिति बतलाई गई है, तब तो आगम से विरोध ही आवेगा ।

अर्थात्—आप तत्त्वार्थश्रद्धान सम्यक्त्व का लक्षण करते हैं । लक्षण के दोष-अव्याप्ति, अतिव्याप्ति और असंभव है । जो लक्षण अपने संपूर्ण लक्ष्य में नहीं घटित होता; वहां अव्याप्ति दोष होता है । जो अपने लक्ष्य में रहते हुए अलक्ष्य में भी रहता है, वहां अतिव्याप्ति दोष होता है । तथा-जिस लक्षण का समन्वय लक्ष्य में नहीं होता, वहां असंभव दोष होता है । यहां प्रकृत में अव्याप्ति दोष होगा । क्योंकि शास्त्रकारों ने क्षायोपशमिक सम्यक्त्व की उत्कृष्ट स्थिति कुछ अधिक ६६ छासठ सागरोपम और क्षायिक सम्यक्त्व की स्थिति सादि और अनन्त मानी है । क्षायिक या क्षायोपशमिक सम्यक्त्व सहित मरण करनेवाले जीव के

प्रीतिस्वरूप इति नामनी मानसिक परिणति છે તે જ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન છે. એ અપર્યાપ્તાવસ્થામાં ઘટિત નથી થતી. પરંતુ સમ્યક્ત્વ તો ત્યાં પણ માનેલ છે. કારણ કે ૬૬ છાસઠ સાગર ઓઝેરી એવં સાદિ અનંત, એ સમ્યક્ત્વની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહેલી છે ત્યારે તો આગમથી વિરોધ આવશે.

અર્થાત્—આપ ‘તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન સમ્યક્ત્વ છે.’ એ પ્રકારે સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહો છો. લક્ષણના દોષ અવ્યાપ્તિ, અતિવ્યાપ્તિ અને અસંભવ છે. જે લક્ષણ પોતાના સમસ્ત લક્ષ્યમાં ઘટિત નથી હોતું, ત્યાં અવ્યાપ્તિ દોષ થાય છે. જે પોતાના લક્ષ્યમાં અને અલક્ષ્યમાં પણ ઘટિત થાય છે ત્યાં અતિવ્યાપ્તિ દોષ થાય છે. અને જે લક્ષણનો સમન્વય લક્ષ્યમાં હોતો જ નથી, ત્યાં અસંભવ દોષ થાય છે. અહીં આ પ્રકૃતમાં અવ્યાપ્તિ-દોષ આવશે, કેમ કે શાસ્ત્રકારોએ ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ૬૬ છાસઠ સાગરોપમ ઓઝેરી અને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ સાદી અને અનંત માનેલી છે. ક્ષાયિક અથવા ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ સહિત મરવાવાળા જીવને

મોહનીય કે ત્રીણ ભેદ હૈં—મિથ્યાત્વ (અશુદ્ધાંશ) ૧, મિશ્ર (અર્ધશુદ્ધાંશ) ૨, ઔર સમ્યક્ત્વ (શુદ્ધાંશ) ૩. ઇસ કર્મ કે ઉદય મેં આત્માકા ગુણ સમ્ય-ગ્દર્શન પ્રકટ નહીં હોતા. અર્થાત્ યહ કર્મ આત્માકે સમક્તિ ગુણકા ઘા-તક હૈ. ચારિત્રમોહનીયકે અનંતાનુબંધી—ક્રોધ, માન, માયા ઔર લોભ, અપ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, પ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, સંજ્વલન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ; ંવં નવ નોકષાય—હાસ્ય, રતિ, અરતિ, ભય, શોક, જુગુપ્સા, સ્ત્રીવેદ, પુંવેદ ઔર નપુંસકવેદ, ં ૨૫ પચીસ ભેદ હૈં. યહ કર્મ આત્મા કે ચારિત્રગુણ કા ઘાતક હોતા હૈ. ઇસકે ઉદય મેં ન તો સર્વસંયમ કા હી ઉદય હોતા હૈ ઔર ન દેશસંયમ કા હી. શક્કાર કા યહાં પર યહ કહના હૈ કિ સમ્યગ્દર્શન કી ઉત્પત્તિ મેં દર્શનમોહનીયત્રય કા હી ક્ષયોપશમાદિક કહના ચાહિયે; ક્યોં કિ વહ હી ઇસકા પ્રતિપક્ષી કર્મ હૈ. ચારિત્રમોહનીય કે ભેદ અનંતાનુબંધી-ચતુષ્ટય કા ક્ષયોપશમાદિક ઁસકે સાથ ૨ ક્યોં કહા. વહ તો સિર્ફ આત્માકે ચારિત્રગુણ કા હી ઘાતક હૈ? ઇસકા યહ સમાધાન હૈ કિ-દર્શનમોહનીય કે ક્ષયોપશમાદિક કે પહિલે હી ઁનકા (કષાયોં કા) ક્ષયોપશમાદિ અવશ્ય હો જાતા હૈ, ઇસકે વિના ઁસકા ક્ષયોપશમ આદિ

એમાં દર્શન-મોહનીયના ત્રણ ભેદ છે—મિથ્યાત્વ (અશુદ્ધાંશ) ૧, મિશ્ર (અર્ધશુદ્ધાંશ) ૨, અને સમ્યક્ત્વ (શુદ્ધાંશ) ૩

આ કર્મના ઉદયમાં આત્માનો ગુણ-સમ્યગ્દર્શન-પ્રગટ નથી થતું. અર્થાત્ આ કર્મ આત્માના સમક્તિ ગુણનું ઘાતક છે. ચારિત્રમોહનીયના અનંતાનુબંધી—ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ, અપ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ; પ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, સંજ્વલન—ક્રોધ-માન-માયા-લોભ અને નવ નોકષાય—હાસ્ય, રતિ, અરતિ, ભય, શોક, જુગુપ્સા, સ્ત્રીવેદ, પુંવેદ અને નપુંસકવેદ, એ પચીસ ૨૫ ભેદ છે. આ કર્મ આત્માના ચારિત્રગુણનું ઘાતક છે આના ઉદયમાં નથી સર્વસંયમનો ઉદય થતો કે નથી દેશસંયમનો શક્કારનું અહીંયા એ કહેવાનું છે કે સમ્યગ્દર્શનની ઉત્પત્તિમાં દર્શનમોહનીયત્રયનું ક્ષયોપશમાદિક કહેવું જોઈએ. કારણ કે તે જ એનું પ્રતિપક્ષી કર્મ છે. ચારિત્રમોહનીયના ભેદ અનંતાનુબંધિચતુષ્ટયના આની સાથેર ક્ષયોપશમાદિક કેમ કહ્યા? એ તો દ્રક્ષા આત્માના ચારિત્રગુણના ઘાતક છે? એનું એ સમાધાન છે કે-દર્શન મોહનીયના ક્ષયોપશમાદિકના પહેલા જ એનું (કષાયોનું) ક્ષયોપશમાદિ અવશ્ય થઈ જાય છે. આના વિના એનું (મોહનીયનું) ક્ષયોપશમ

अत्र मिथ्यात्वशब्देन मिथ्यात्वसप्तकं गृह्यते, तच्चानन्तानुबन्धिकषायचतुष्टयं मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वमोहनीयत्रयं चेति । इह दर्शनमोहनीयभेदसप्तकं मिथ्यात्वमुच्यते । यद्यपि—अनन्तानुबन्धिकषायचतुष्टयं चारित्रमोहनीयस्य भेदस्तथापि मिथ्यात्वक्षयोपशमाद्यवसरे तत्पूर्वं तस्य क्षय उपशमो वाऽवश्यं भवतीति कृत्वा तदपि मिथ्यात्वशब्देन व्यपदिश्यते । एतच्चाग्रे सम्यक्त्वफलप्रकरणे स्फुटीभविष्यति ।

यहां मिथ्यात्व-शब्द से मिथ्यात्वसप्तक का ग्रहण किया गया है । वे ये हैं—अनन्तानुबन्धी कषाय ४ और मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय, एवं सम्यक्त्वमोहनीय ये तीन ३ । ये सात दर्शनमोहनीय के भेद मिथ्यात्व कहे जाते हैं । यद्यपि अनन्तानुबन्धी ४ कषाय चारित्रमोहनीय के भेद हैं, तो भी मिथ्यात्वके क्षायोपशमादिक के अवसर में उसके पहिले उनका क्षय अथवा उपशम अवश्य ही हो जाता है, इसलिये मिथ्यात्व-शब्दसे उन चारों का भी व्यपदेश होता है ।

विशेषार्थः—मिथ्यात्व यह उपलक्षण शब्द है । उपलक्षण का लक्षण है—“स्वबोधकत्वे सति स्वेतरबोधकत्वम्” अर्थात्—जो स्वबोधक होते हुए अपने से इतर का भी बोधक होता है वह उपलक्षण है । इससे सात प्रकृतियों का ग्रहण होता है । वे ७ प्रकृतियां ये हैंः—अनन्तानुबन्धी क्रोध, अनन्तानुबन्धी मान, अनन्तानुबन्धी माया और अनन्तानुबन्धी लोभ, तथा मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय एवं सम्यक्त्वमोहनीय । मोहनीय कर्म के मूल भेद दो हैं—एक दर्शनमोहनीय, दूसरा चारित्रमोहनीय । इनमें दर्शन-

आ ठेकाणु मिथ्यात्व शब्दथी मिथ्यात्वसप्तकनुं अहुणु करेद छे. ते ये छे—अनंतानुबन्धी कषाय यार ४, अने मिथ्यात्व-मोहनीय, मिश्र-मोहनीय, अने सम्यक्त्व-मोहनीय, ये त्रणु ३, ये सात दर्शन-मोहनीयना लेदो मिथ्यात्व कहेवाय छे. कदाय अनंतानुबन्धी यार ४ कषाय, चारित्र-मोहनीयना लेदो छे तो पणु मिथ्यात्वना क्षयोपशमादिकना अवसरमां येना पड़ेलां येनो क्षय अथवा उपशम अवश्य थई जाय छे, तेथी मिथ्यात्व-शब्दथी आ यारनुं व्यपदेश थाय छे.

विशेषार्थः—मिथ्यात्व ये उपलक्षण शब्द छे. उपलक्षणनुं लक्षण छे—स्वबोधकत्वे सति स्वेतरबोधकत्वम्, अर्थात्—स्वबोधक होवा छतां ने पोताथी भीजन पणु बोधक थाय छे ते उपलक्षण छे. येथी सात प्रकृतियोनुं अहुणु थाय छे. ये सात प्रकृतियो आ छेः—अनंतानुबन्धी क्रोध, अनंतानुबन्धी मान, अनंतानुबन्धी माया अने अनंतानुबन्धी लोभ, तथा मिथ्यात्व-मोहनीय, मिश्र-मोहनीय अने सम्यक्त्व-मोहनीय. मोहनीय कर्मना मूल भेद ये छे. येक दर्शन-मोहनीय, भीजे चारित्र-मोहनीय.

અસ્ય ચ લક્ષણસ્ય મનોરહિતેષુ સિદ્ધાદિષ્વપિ સમન્વયો ભવતિ ।

યદ્વા-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમિતિ લક્ષણં સરાગસમ્યક્ત્વસ્યૈવ, અત એવ સ્થાનાણ્ગસૂત્રે પ્રોક્તમ્-

“દસવિહે સરાગસમ્મત્તદંસણે પળ્ણત્તે, તં જહા—

નિસગ્ગુવણ્ણસરૂઈ, આણારૂઈ સુત્તવીયરૂઈમેવ ।

અભિગમવિત્થારૂઈ, કિરિયા-સંખેવ-ધમ્મરૂઈ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

એવં ચાપર્યાપ્તકાદૌ વીતરાગે ચ રુચ્યભાવેઽપિ ન ક્ષતિઃ ।

“જીવાહનવપયત્થે, જે જાણઈ તસ્સ હોઈ સમ્મત્તં ।

ભાવેણ સદ્દંતે, અયાણમાણે વિ સમ્મત્તં ॥ ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્-જીવાદિક નવ પદાર્થોંનો જો જાનતા હૈં ઉસકો સમ્યક્ત્વ હોતા હૈં । તથા નહીં જાનને પર મીં ઉનકા ભાવ સે શ્રદ્ધાન કરનેવાલે કે મીં સમ્યક્ત્વ કહા ગયા હૈં । ઇસ કથન સે ઇસ લક્ષણકા સમન્વય મનરહિત સિદ્ધાદિકોં મેં મીં હો જાતા હૈં ।

અથવા-“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન” યહ લક્ષણ સરાગ સમ્યક્ત્વકા હીં સમજ્ઞનાં ચાહિયે, ઇસલિયે સ્થાનાણ્ગસૂત્રમેં “દસવિહે” ઇત્યાદિ દસ પ્રકાર કા સરાગ સમ્યગ્દર્શન કહા ગયા હૈં । જૈસે—

“દસવિહે સરાગસમ્મત્તદંસણે પળ્ણત્તે, તં જહા—

નિસગ્ગુવણ્ણસરૂઈ, આણારૂઈ સુત્તવીયરૂઈમેવ ।

અભિગમવિત્થારૂઈ, કિરિયા-સંખેવ-ધમ્મરૂઈ ” ॥ ૧ ॥

સરાગસમ્યગ્દર્શનકે દસ પ્રકાર યે હૈં—(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપ-

“જીવાહનવપયત્થે, જે જાણઈ તસ્સ હોઈ સમ્મત્તં ।

ભાવેણ સદ્દંતે, અયાણમાણે વિ સમ્મત્તં ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—જીવાદિક નવ પદાર્થોંને જે જાણે છે તેને સમ્યક્ત્વ થાય છે. અને ન જાણવા છતાં પણ ભાવથી તેનું શ્રદ્ધાન કરવાવાળાને પણ સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવેલ છે. આ વાક્યથી આ લક્ષણનો સમન્વય મનરહિત સિદ્ધાદિકોંમાં પણ થાય છે.

અથવા—“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન” એ લક્ષણ સમ્યક્ત્વનું જે સમજવું જોઈએ; માટે સ્થાનાંગસૂત્રમાં “દસવિહે” ઇત્યાદિ દસ પ્રકારના સરાગ સમ્યગ્દર્શન કહ્યા છે. જેમ—

“દસવિહે સરાગસમ્મત્તદંસણે પળ્ણત્તે, તં જહા—

નિસગ્ગુવણ્ણસરૂઈ, આણારૂઈ સુત્ત-વીય-રૂઈમેવ ।

અભિગમ-વિત્થારૂઈ, કિરિયા-સંખેવ-ધમ્મરૂઈ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

સરાગ સમ્યગ્દર્શનના દસ પ્રકાર આ છે—(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપ-

ઉક્તશ્ચ ચાવશ્યકસૂત્રે—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોપસમક્ખયસમુત્થે પસમ-
સંવેગાઈલિંગે સુહે આયપરિણામે પણ્ણત્તે ” ઇતિ ।

છાયા—તત્ત્વ સમ્યક્ત્વં પ્રશસ્તસમ્યક્ત્વમોહનીયકર્માનુવેદનોપશમક્ષયસમુત્થઃ
પ્રશમસંવેગાદિલિજ્જઃ શુભઃ આત્મપરિણામઃ પ્રજ્ઞપ્ત ઇતિ ।

કાર્યે કારણોપચારાત્ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમપિ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । તથા ચોક્તં—

“ જીવાઈનવપયત્થે, જો જાણઈ તસ્સ હોઈ સમ્મત્તં ।

ભાવેણ સદ્દંતે, અયાણમાણે ધિ સમ્મત્તં ” ॥ ઇતિ ।

હો હી નહીં સકતા । ઇસકા છુલાસા આગે સમ્યક્ત્વ કે ફલકે પ્રકરણમેં
અચ્છી તરહ સે હો જાયગા ।

આવશ્યક સૂત્રમેં યહી વાત કહી હૈ—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોપસમક્ખય-
સમુત્થે પસમસંવેગાઈલિંગે સુહે આયપરિણામે પણ્ણત્તે ” ઇતિ । અર્થાત્—
વહ સમ્યગ્દર્શન પ્રશસ્ત સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે અનુવેદન કે ઉપશમ
ઔર ક્ષય સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ, તથા પ્રશમસંવેગાદિક લિજ્જોં સે જાના
જાતા હૈ, એવં યહ આત્મા કા શુભ પરિણામ કહા ગયા હૈ । તત્ત્વા-
ર્થશ્રદ્ધાન સમ્યક્ત્વકા કાર્ય હૈ, યહ ઉપર કહા જા ચુકા હૈ ઔર સમ્ય-
ક્ત્વ ઉસકા કારણ હૈ । અતઃ કાર્યમેં કારણ કે ઉપચાર-આરોપ સે
કાર્ય-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન બી સમ્યક્ત્વરૂપ સે કહ દિયા જાતા હૈ । અન્યત્ર
બી એસા હી કહા હૈ—

આદિ થઈ જ શકતું નથી. એનો ખુલાસો આગળ સમ્યક્ત્વના ફળના પ્રકરણમાં
ઘણી જ સરલ રીતે થઈ જશે.

આવશ્યકસૂત્રમાં આ વાત કહી છે—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોપસમક્ખયસમુત્થે પસમ-
સંવેગાઈલિંગે સુહે આયપરિણામે પણ્ણત્તે ” ઇતિ ।

અર્થાત્—આ સમ્યગ્દર્શન પ્રશસ્ત સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના અનુવેદનના
ઉપશમ અને ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે; તથા પ્રશમસંવેગાદિક લિંગોથી બાણુવામાં
આવે છે; અને તે આત્માના શુભ પરિણામ કહેવામાં આવે છે. તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન
સમ્યક્ત્વનું કાર્ય છે, એ ઉપર કહેવામાં આવેલ છે અને સમ્યક્ત્વ એનું કારણ
છે, એથી કાર્યમાં કારણના ઉપચાર-આરોપથી કાર્ય-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન પણ સમ્યક્ત્વ
રૂપથી કહેવામાં આવે છે. બીજી જગ્યાએ એમ કહેવામાં આવેલ છે—

“નાણં ચ દંસણં ચેવ, ચરિત્તં ચ તવો તહા ।

વીરિયં ઉવઓગો ય, એયં જીવસ્સ લક્ખણં ” ॥૧॥ ઇતિ ।

અત્ર જ્ઞાનાદિકં જીવસ્વરૂપવ્યञ્જકરૂપં જીવલક્ષણમુક્તં, તેન જ્ઞાનાદીનામન-
ભિવ્યક્તાવપિ પૃથિવ્યાદિષુ જીવસદ્ભાવઃ । શુદ્ધાત્મપરિણામરૂપં સમ્યક્ત્વં નાન્યપ્ર-
માણવિષયસ્તસ્માત્ સ્વાનુભવગમ્યમેવેતિ નિર્ણયતે ।

एतच्चात्रापि पञ्चमाध्ययने शुद्धात्मस्वरूपं प्रतिबोधतया भगवता वक्ष्यते—

“નાણં ચ દંસણં ચેવ, ચરિત્તં ચ તવો તહા ।

વીરિયં ઉવઓગો ય. એયં જીવસ્સ લક્ખણં ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર, તપ તથા વીર્યે એવં ઉપયોગ, એ જીવકે
લક્ષણ હૈં ।

इस गाथा में ज्ञानादिकों को जीवस्वरूपादिव्यञ्जक जीवलक्षण
कहा है, इससे पृथिव्यादिक एकेन्द्रिय जीवों में ज्ञानादिककी स्पष्टतः
अभिव्यक्ति-प्रकटता नहीं प्रतीत होने पर भी वहाँ पर जीवत्वका सद्भाव
सिद्ध होना है । सम्यक्त्व जो शुद्ध आत्मपरिणामस्वरूप है और जिसे
अनाख्येय-वचनअगोचर-कहा गया है उसका कारण यही है कि वह
अन्य किसी भी प्रमाणका विषय नहीं होता है । इसीलिये तो वह
स्वानुभवगम्य कहा जाता है । यही बात आगे इसी शास्त्रके पञ्चमाध्ययन
में शुद्ध आत्मस्वरूपका कथन करते समय भगवान स्वयं कहेंगे । जैसे—

“નાણં ચ દંસણં ચેવ, ચરિત્તં ચ તવો તહા ।

વીરિયં ઉવઓગો ય, એયં જીવસ્સ લક્ખણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર, તપ તથા વીર્ય અને ઉપયોગ એ જીવના લક્ષણ છે.

આ ગાથામાં જ્ઞાનાદિને જીવસ્વરૂપાલિવ્યજક જીવલક્ષણ કહે છે. એથી
પૃથિવી આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં જ્ઞાનાદિકની સ્પષ્ટતા અભિવ્યક્તિ પ્રગટ જોવામાં
આવતી નથી તો પણ આ કહેણે જીવને સદ્ભાવ સિદ્ધ થાય છે. સમ્યક્ત્વ જે
શુદ્ધ આત્મપરિણામસ્વરૂપ છે અને જેને અનાખ્યેય-વચનઅગોચર કહ્યું છે,
એનું કારણ એ છે કે તે બીજા કોઈ પ્રમાણનો વિષય બનતો નથી, તેથી તો
તે સ્વાનુભવગમ્ય કહેવાય છે આ વાત આગળ આ શાસ્ત્રના પાંચમા અધ્યયનમાં
શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપનું કથન કરતી વખત ભગવાન સ્વયં કહેશે. જેમ—

वस्तुतस्तु-इदं सम्यक्त्वलक्षणं न तत्स्वरूपं, किंतु तल्लिङ्गं तद्व्यञ्जकमिति यावत्।
व्यञ्ज्यभूतं सम्यक्त्वं हि मिथ्यात्वक्षयोपशमादिजन्यं शुद्धात्मपरिणामरूपं परमार्थ-
तोऽनाख्येयं स्वानुभवगम्यमेव ।

यथा वह्निव्यञ्जकस्य धूमस्यासद्भावेऽपि संतप्तायोगोलके वह्निरस्ति, तथा तत्त्वार्थ-
भिर्व्यञ्ज्यभावेऽपि आत्मपरिणामरूपसम्यक्त्वमस्त्येव । अत एवोत्तराध्ययनसूत्रे
प्रोक्तम् ।

देशरुचि, (३) आज्ञारुचि, (४) सूत्ररुचि, (५) बीजरुचि, (६) अभिगम
रुचि, (७) विस्ताररुचि, (८) क्रियारुचि, (९) संक्षेपरुचि, १० धर्मरुचि ॥

इस अपेक्षासे अपर्याप्त अवस्था एवं वीतरागदशा में रागात्मक रुचिका
अभाव होने पर भी उसके सद्भाव में किसी भी प्रकारकी क्षति नहीं आती ।

यथार्थ में तो यह सम्यक्त्व का लक्षण-सम्यक्त्व का स्वरूप-नहीं है;
किन्तु उसका व्यञ्जक एक लिङ्ग है । जो लिङ्ग होता है वह अपने लिङ्गी
का बोधक या व्यञ्जक हुआ करता है । मिथ्यात्वके क्षयोपशमादिक से
उत्पन्न होनेवाला, तथा शुद्ध आत्मपरिणामस्वरूप वह सम्यक्त्व तो
वास्तवमें अनाख्येय-वचनके अगोचर ही है । जैसे-अग्निका अभिव्यञ्जक
धूम हुआ करता है, परन्तु तप्त अयोगोलक (लोहे के पिण्ड) में उसके
अभाव में भी अग्निका सद्भाव रहता है । उसी तरह से तत्त्वार्थश्रद्धान
के अभाव में भी आत्मपरिणामस्वरूप सम्यक्त्वका सद्भाव सिद्धादिकों
में रहता ही है । इसलिये उत्तराध्ययन सूत्र (अध्य० २८) में कहा है-

देशरुचि, (३) आज्ञारुचि, (४) सूत्ररुचि, (५) बीजरुचि, (६) अभिगमरुचि,
(७) विस्ताररुचि, (८) क्रियारुचि, (९) संक्षेपरुचि, (१०) धर्मरुचि.

आ अपेक्षार्थी अपर्याप्त अवस्था तेभ्यो वीतराग दशाभां रागात्मक रुचिना
अभावो जायते पण तेना सद्भावमां कोष्ठं पण प्रकारे क्षति आवती नथी.

यथार्थभां तो आ सम्यक्त्वतुं लक्षण-सम्यक्त्वतुं स्वरूप-नथी, पण तेनुं
व्यञ्जक ओक लिङ्ग छे. जे लिङ्ग थाय छे ते पोताना लिङ्गीना ओधक अगर
व्यञ्जक थया करे छे. मिथ्यात्वना क्षयोपशमादिकथी उत्पन्न थयावाला, तथा शुद्ध
आत्मपरिणामस्वरूप ओ सम्यक्त्व तो वास्तवभां अनाख्येय-वचनतुं अगोचर
छे, जेभ अग्निनो अभिव्यञ्जक धूम थया करे छे, परंतु तप्त अयोगोलक
(लोहना पिंड)भां ओना अभावमां पण अग्निनो सद्भाव रहे छे. ओवी
रीते तत्त्वार्थश्रद्धानना अभावमां पण आत्मपरिणामस्वरूप सम्यक्त्वनो सद्भाव
सिद्धादिकेभां पण रहे छे. तेथी उत्तराध्ययन सूत्र अध्य० २८ भां कहुं छे-

સમ્યક્ત્વભેદઃ—સમ્યક્ત્વં દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દ્વિવિધમ્ । તત્ર દ્રવ્યતઃ સમ્યક્ત્વં વિશોધિતા મિથ્યાત્વપુદ્ગલા એવ । વિશોધિતા હિ મિથ્યાત્વપુદ્ગલા અતિસ્વચ્છ-સૂક્ષ્મવસ્ત્રમિવ દૃષ્ટેરધ્યવસાયાત્મકસ્ય સમ્યક્ત્વસ્યાઽઽવરકા ન ભવન્તિ, તસ્માત્ તત્ર સમ્યક્ત્વોપચારઃ । ભાવતસ્તુ-મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યઃ શુભ આત્મપરિણામવિશેષઃ ।

સમ્યક્ત્વકે ભેદ—

સમ્યક્ત્વ દો પ્રકાર કા હૈ—(૧) દ્રવ્ય-સમ્યક્ત્વ, (૨) ભાવ-સમ્યક્ત્વ મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિ કે જો વિશુદ્ધ પુદ્ગલ હૈં વે દ્રવ્યસમ્યક્ત્વ હૈ । યે વિશુદ્ધ મિથ્યાત્વ કે પુદ્ગલ, જિસ તરહ સૂક્ષ્મ વસ્ત્ર દૃષ્ટિકા રોધક નહીં હોતા ઉસી તરહ અધ્યવસાયસ્વરૂપ સમ્યક્ત્વ કે પ્રતિબન્ધક નહીં હોતે । અર્થાત્ જૈસે સૂક્ષ્મવસ્ત્ર દૃષ્ટિકા પ્રતિબન્ધક નહીં હોતા, ઠીક ઇસી પ્રકાર સે વહ મિથ્યાત્વ કા શુદ્ધ પુંજ સમ્યક્દર્શનરૂપ દૃષ્ટિકા રોધક નહીં હોતા । ઇસ કારણ ઉસે ઉપચાર સે સમ્યક્ત્વ કહા ગયા હૈ । મિથ્યાત્વ કર્મ કે ક્ષયોપશમાદિક ઉત્પન્ન હુઆ આત્માકા શુભ પરિણામ ભાવ-સમ્યક્ત્વ હૈ । અન્ય પ્રકાર સે બી સમ્યક્ત્વ દો પ્રકાર કા હૈ—(૧) નૈશ્વર્યિક-સમ્યક્ત્વ, (૨) વ્યાવહારિક-સમ્યક્ત્વ । એક પૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ, દૂસરા અપૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ । એક નૈસર્ગિક ઓર દૂસરા આધિગમિક સમ્યક્ત્વ ।

સમ્યક્ત્વના ભેદ—

સમ્યક્ત્વ બે પ્રકારનુ છે. (૧) દ્રવ્ય-સમ્યક્ત્વ (૨) ભાવ-સમ્યક્ત્વ, મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિના જે વિશુદ્ધ પુદ્ગલ છે તે દ્રવ્ય-સમ્યક્ત્વ છે. જેવી રીતે સૂક્ષ્મ વસ્ત્ર દૃષ્ટિનુ રોધક નથી થતું તેવી રીતે એ વિશુદ્ધ મિથ્યાત્વના પુદ્ગલ અધ્યવસાય-સ્વરૂપ સમ્યક્ત્વના પ્રતિબન્ધક નથી થતા અર્થાત્-જેવી રીતે સૂક્ષ્મ વસ્ત્ર દૃષ્ટિનું પ્રતિબન્ધક નથી થતું, ઠીક આ પ્રકારથી તે મિથ્યાત્વના વિશુદ્ધ પુદ્ગલ પુંજ સમ્યક્દર્શનરૂપ દૃષ્ટિના રોધક નથી થતા. આ કારણે તેને ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવે છે મિથ્યાત્વ કર્મના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થયેલા આત્માના શુભ પરિણામ ભાવ-સમ્યક્ત્વ છે. બીજા પ્રકારે પણ સમ્યક્ત્વ બે પ્રકારના છે (૧) નૈશ્વર્યિક-સમ્યક્ત્વ (૨) વ્યાવહારિક-સમ્યક્ત્વ, એક પૌદ્ગલિક સમ્યક્ત્વ, બીજુ અપૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ, એક નિર્સર્ગ અને બીજુ અધિગમ-સમ્યક્ત્વ.

“सर्वे सरा णियदंति तक्का जत्थ ण विज्जइ, मई तत्थ ण गाहिआ” इत्यादि ।
छाया—“सर्वे स्वरा निवर्त्तन्ते, तर्का यत्र न विद्यते, मतिस्तत्र न ग्राहिता” इत्यादि ।
स्वानुभवविषयत्वेऽपि सम्यक्त्वस्येक्षुक्षीरादिरसमाधुर्यविशेषाणामिव वाग्विषय-
त्वाऽभावादनारूप्यत्वम् । तथा चोक्तम्—

“इक्षुक्षीरगुडादीनां माधुर्यस्यान्तरं महत् ।

तथापि न तदाख्यातुं सरस्वत्यापि पार्यते” ॥ २ ॥

“सर्वे सरा णियदंति तक्का जत्थ ण विज्जइ, मई तत्थ ण गाहिआ” इत्यादि ।
समस्त स्वरोंकी वहां पर निवृत्ति होती है, तर्क भी वहां प्रवेश
नहीं कर सकता है, एवं बुद्धि के भी वह अगम्य है । इत्यादि ।

शुद्ध सम्यक्त्व को जो वचनातीत एवं स्वानुभवगम्य कहा है वह
इस प्रकार से—जैसे—इक्षु—(गन्ना) और दुग्धादिककी मधुरता उप-
भोक्ता के ही अनुभवगम्य होती है । उससे यदि कोई यह पूछे कि
गन्ना कैसा मीठा है ? दूध की मधुरता कैसी है ? , तो वह इस बातको
वचन से नहीं कह सकता, वह तो उनकी मधुरता अपने निजी अनुभव
से ही जानता है । यही बात अन्यत्र भी कही है ।

“इक्षु-क्षीर-गुडादीनां, माधुर्यस्यान्तरं महत् ।

तथापि न तदाख्यातुं, सरस्वत्यापि पार्यते” ॥ १ ॥

यद्यपि गन्ना, दूध और गुड आदि मिष्ट पदार्थों की मधुरता में
बहुत ही अन्तर है, तो भी उनके उस अन्तर को सरस्वती भी नहीं
कह सकती ॥ १ ॥

“सर्वे सरा णियदंति तक्का जत्थ ण विज्जइ, मई तत्थ ण गाहिआ” इत्यादि.

समस्त स्वरोंनी ज्यां निवृत्ति थछ नय छे, त्यां तर्क पणु प्रवेश करी
शक्तो नथी तेम न बुद्धिथी पणु ते अगम्य छे. इत्यादि. शुद्ध सम्यक्त्वने
ने वचनातीत अने स्वानुभवगम्य कहेल छे ते आ प्रकारे के नेवी रीते इक्षु
(शेरडी) अने दुग्धादिकनी मधुरता उपलोकताथी अनुभवगम्य होय छे. कहय
होय तेने पूछे के शेरडी केवी मीठी छे ? दूधनी मधुरता केवी छे ? , तो ते आ बातने
वचनथी कही शकशे नछि. ते तो तेनी मधुरताने पोताना निज अनुभवथी न नणु
छे. आ बात भीण नय्योये पणु कहेवाभां आवी छे—

“इक्षु-क्षीर-गुडादीनां, माधुर्यस्यान्तरं महत् ।

तथापि न तदाख्यातुं, सरस्वत्यापि पार्यते ॥ १ ॥” इति ।

ने के—शेरडी, दूध अने गोण आदि मिष्ट पदार्थोंनी मधुरताभां धणो न
लेह छे तो पणु ओ लेहने सरस्वती पणु कही शक्ती नथी.

પ્રકારાન્તરેણ સમ્યક્ત્વં દશઘા, તદ્યથા-(૧) ઔપશમિક-(૨) ક્ષાયિક-(૩) ક્ષાયોપશમિક-(૪) સાસ્વાદન-(૫) વેદકભેદાત્ પંચવિધમ્ । તત્ર પ્રત્યેકં નૈસર્ગિકાધિગમિકભેદાદ્ દ્વૈવિધ્યે દશવિધત્વં ભવતિ ।

(૧) અનન્તાનુવન્ધિકપાયચતુષ્ટયોપશમાનન્તરં મિથ્યાત્વ-મિશ્ર-સમ્યક્ત્વ-મોહનીયકર્મણાં સર્વથોપશમાજ્ઞાતો જીવસ્ય તત્ત્વરુચિરૂપઃ શુભપરિણામઃ ઔપશમિકં સમ્યક્ત્વમ્ । એતદ્વોપશમશ્રેણિપ્રતિપન્નસ્ય જીવસ્ય ભવતિ ।

(૨) તેષાં સર્વથા ક્ષયેણ નિર્વૃત્તં જીવસ્ય શુભપરિણામરૂપં ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વમ્ ।

(૩) ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વં પ્રોચ્યતે—અનન્તાનુવન્ધિકપાયચતુષ્ટય-

અન્ય પ્રકાર સે સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકાર કા મી કહા ગયા હૈ, જૈસે-(૧) ઔપશમિક, (૨) ક્ષાયિક, (૩) ક્ષાયોપશમિક, (૪) સાસ્વાદન, ઔર (૫) વેદક । યે પાંચો હી નિસર્ગ ઔર અધિગમ કે ભેદ સે દો દો પ્રકારકે હોતે હૈ, ઇસ પ્રકાર સમ્યક્ત્વ કે દશ ભેદ હો જાતે હૈ ।

(૧) અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધ, માન, માયા ઔર લોભ, ઇન ચાર કષાયોં કે ઉપશમ (સત્તા મેં સ્થિત રહને)કે વાદ મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્ર-મોહનીય ંવં સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે સર્વથા ઉપશમ સે ઉત્પન્ન હુઆ જો તત્ત્વરુચિરૂપ જીવકા શુભ પરિણામવિશેષ હૈ વહ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ ઉપશમ શ્રેણિવાલે જીવ કે હોતા હૈ ? ।

(૨) અનન્તાનુવન્ધી આદિ (૭) સાત પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય સે જો જીવ કો શુભ પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ હૈ ૨ ।

(૩) ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ ઇસ પ્રકાર હૈ--

ખીજા પ્રકારે સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકારના પણ કહેવામાં આવે છે. જેમ-(૧) ઔપશમિક, (૨) ક્ષાયિક, (૩) ક્ષાયોપશમિક, (૪) સાસ્વાદન, અને (૫) વેદક. એ પાંચે નિસર્ગ અને અધિગમના લેદથી બે બે પ્રકારના છે. એ રીતે સમ્યક્ત્વના દશ લેદ થઈ ગય છે.

(૧) અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધ માન માયા અને લોભ, એ ચાર કષાયોના ઉપશમ (સત્તામાં સ્થિત રહેવું) પછી મિથ્યાત્વ મોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વ મોહનીય કર્મોના સર્વથા ઉપશમથી ઉત્પન્ન થયેલાં જે તત્ત્વરુચિરૂપ જીવના શુભ પરિણામવિશેષ છે તે ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે. આ સમ્યક્ત્વ ઉપશમ શ્રેણીવાળા જીવને થાય છે (૧).

(૨) અનન્તાનુવન્ધી આદિ ૭ સાત પ્રકૃતિયોના સર્વથા ક્ષયથી જે જીવને શુભ પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ છે (૨).

(૩) ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વના લક્ષણ આ પ્રકારે છે:—

પ્રકારાન્તરૈરપિ સમ્યક્ત્વં દ્વિવિધમ્, યથા-નૈશ્વયિક-વ્યાવહારિકભેદાદ્ દ્વિ-
વિધમ્, પૌદ્ગલિકાપૌદ્ગલિકભેદાદ્ દ્વિવિધમ્, નૈસર્ગિકાધિગમિકભેદાદ્ દ્વિવિધમિતિ ।

તત્ર મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યં શુદ્ધાત્મપરિણામવિશેષરૂપં નૈશ્વયિકં સમ્યક્ત્વમ્ ।
વ્યાવહારિકં તુ કુદેવકુગુરુકુધર્મપરિત્યાગપૂર્વકં નિશ્ચિતરૂપેણ સુદેવસુગુરુસુધર્મસ્વીકરણં
રુચિરૂપં તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનાદિકમપિ ।

તથા—અપનીતમિથ્યાત્વસ્વભાવસમ્યક્ત્વપુન્નગતપુદ્ગલવેદનસમુત્થં ક્ષાયોપશ-
મિકં વેદકં ચ પૌદ્ગલિકં સમ્યક્ત્વમ્ । અપૌદ્ગલિકં તુ પુદ્ગલવેદનવર્જિતં કેવલજીવ-
પરિણામરૂપં ક્ષાયિકઔપશમિકં ચ । નૈસર્ગિકમાધિગમિકં ચ સમ્યક્ત્વં પ્રથમાધ્યયને
તૃતીયોદેશે પ્રાગેવ વર્ણિતમ્ ।

આવ-સમ્યક્ત્વ કા જો લક્ષણ કહા હૈ વહી નૈશ્વયિક-સમ્યક્ત્વ કા
સ્વરૂપ હૈ । અર્થાત્ મિથ્યાત્વકર્મ કે ક્ષયોપશમાદિક સે ઉત્પન્ન હુઆ
આત્મા કા શુભ અધ્યવસાયવિશેષ હી નૈશ્વયિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । કુદેવ,
કુગુરુ ઔર કુધર્મ કા પરિહાર-ત્યાગ-પૂર્વક નિશ્ચિતરૂપ સે સુદેવ, સુગુરુ
ઔર સુધર્મ કા સ્વીકાર કરના, તથા રુચિરૂપ સે તત્ત્વાર્થ કા શ્રદ્ધાન
કરના આદિ વ્યવહાર-સમ્યક્ત્વ હૈ । ઇસી પ્રકાર મિથ્યાત્વ સ્વભાવ જિસ
સે દૂર હો ચુકા હૈ એસા જો સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કા પુંજ હૈ ઉસકે ખીતર રહે
હુઅ પુદ્ગલોં કે વેદનસે ઉત્પન્ન હુઆ જો ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ ઁવં વેદક-
સમ્યક્ત્વ હૈ વહ પૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । ઉસ પુદ્ગલ કે વેદન સે રહિત
કેવલ જીવ કે પરિણામસ્વરૂપ જો ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ ઔર ઔપશમિક
સમ્યક્ત્વ હૈ, વહ અપૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । નૈસર્ગિક ઔર આધિગમિક
સમ્યક્ત્વકા વર્ણન પ્રથમ અધ્યયન કે તીસરે ઉદેશ મેં કિયા જા ચુકા હૈ ।

ભાવ-સમ્યક્ત્વનુ જે લક્ષણ કહું છે તે નૈશ્વયિક-સમ્યક્ત્વનું સ્વરૂપ છે.
અર્થાત્ મિથ્યાત્વ કર્મના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થયેલ આત્માનું શુભ અધ્ય-
વસાયવિશેષ જે નૈશ્વયિક-સમ્યક્ત્વ છે. કુદેવ, કુગુરુ અને કુધર્મના પરિહાર-
ત્યાગ-પૂર્વક નિશ્ચિતરૂપથી સુદેવ, સુગુરુ અને સુધર્મનો સ્વીકાર કરવો, તથા રૂચિ-
રૂપથી તત્ત્વાર્થનું શ્રદ્ધાન કરવું આદિ વ્યવહાર-સમ્યક્ત્વ છે. આ પ્રકારે મિથ્યાત્વ
સ્વભાવ જેનાથી દૂર થઈ ગયેલ છે એવા જે સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિના પુંજ છે એની અંદર
રહેલા પુદ્ગલોના વેદનથી ઉત્પન્ન થયેલા જે ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ તેમજ વેદક-
સમ્યક્ત્વ છે તે પૌદ્ગલિક સમ્યક્ત્વ છે. એ પુદ્ગલના વેદનથી રહિત કેવલ જીવના
પરિણામસ્વરૂપ જે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ અને ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે આ અપૌદ્ગલિક
સમ્યક્ત્વ છે. નિર્સર્ગ અને અધિગમ સમ્યક્ત્વનું વર્ણન પ્રથમ અધ્યયનના ત્રીજા
ઉદેશમાં કરવામાં આવેલ છે.

આત્મપરિણામરૂપસ્ય સમ્યક્ત્વસ્યાનાવરકત્વાદયં વિશોધિતપુદ્ગલપુઞ્જોડપ્યુપ-
ચારતઃ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । સમ્યક્ત્વપુદ્ગલવેદનસમુદ્ભૂતત્વાદિદં સમ્યક્ત્વં પૌદ્ગલિકમ્ ।

ઉદય મેં નહીં આયા છે-સિર્ફ સત્તા મેં હી વૈઠા હુઆ છે, વસ इसीका नाम सदवस्थारूप उपशम है, इसीको अनुदित=अनुदय अवस्था भी कहते हैं ।
यहां पर जो मिथ्यात्व की अनुदयावस्था कही गई है वह मिथ्यात्वके कुछ
भाग की तथा मिश्रपुंजकी अपेक्षा को लेकर ही कही गई है, क्योंकि इनका
यहां पर उदय नहीं है तथा सम्यक्त्वप्रकृतिका ही कितनेक अंश से उदय
है । इसप्रकार उदित मिथ्यात्व के क्षय से और अनुदित उसी मिथ्यात्व के
उपशम से और कितनेक सम्यक्त्व-कर्मके पुद्गलों के वेदन होनेसे यह
क्षायोपशमिक सम्यक्त्व उत्पन्न होता है । इस प्रकार से क्षायोपशमिक
सम्यक्त्व का लक्षण सुघटित हो जाता है ।

यह सम्यक्त्व आत्मपरिणामरूप सम्यक्त्व का अनावारक-आवरण
करनेवाला नहीं-होने से उपचार से सम्यक्त्व कहा गया है, क्योंकि
इस सम्यक्त्वमें विशोधितपुद्गलपुंज का-सम्यक्त्व-प्रकृतिका उदय
है और उसीके उदयरूप वेदन से यह सम्यक्त्व हुआ है, इसलिये
पुद्गलजनित होनेसे यह पौद्गलिक है । इस पौद्गलिक कार्य का जो
सम्यक्त्व कहा गया है वह इसी हेतु से कि वह आत्मपरिणामरूप जो
सम्यक्त्व है उसका आवरण नहीं करता है ।

જે હજી સુધી ઉદયમા આવેલ નથી ફક્ત સત્તામાંજ બેઠેલ છે, બસ એનું
નામ સદવસ્થારૂપ ઉપશમ છે, એને અનુદિત-અનુદયઅવસ્થા પણ કહે છે અહીંયા
જે મિથ્યાત્વની અનુદયાવસ્થા કહેવાઈ છે તે મિથ્યાત્વના કોઈ ભાગની અને મિશ્ર-
પુંજની અપેક્ષાએ કહેવાઈ છે કારણ કે એનો આ જગ્યાએ ઉદય નથી, તથા
સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિનો થોડા ભાગે ઉદય છે. આ પ્રકારે ઉદિત મિથ્યાત્વના ક્ષયથી, અને
અનુદિત એજ મિથ્યાત્વના ઉપશમથી અને કેટલાક સમ્યક્ત્વકર્મના પુદ્ગલોના
વેદન હોવાથી આ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે. આ પ્રકારથી ક્ષાયોપશમિક
સમ્યક્ત્વના લક્ષણ સુઘટિત થઈ જાય છે.

આ સમ્યક્ત્વ આત્મ-પરિણામરૂપ સમ્યક્ત્વના અનાવારક-આવરણ કરવાં
વાળાં નહિ-હોવાથી ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવેલ છે, કારણ કે આ
સમ્યક્ત્વમા વિશોધિતપુદ્ગલપુંજનો-સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિનો ઉદય છે અને એના
ઉદયરૂપ વેદનથી એ સમ્યક્ત્વ થયેલ છે, માટે પુદ્ગલજન્ય હોવાથી આ પૌદ્ગલિક
છે, અને આ પૌદ્ગલિક કાર્યને જે સમ્યક્ત્વ કહેલ છે તે આ હેતુથી કે તે
આત્મપરિણામરૂપ જે સમ્યક્ત્વ છે એનું આવરણ નથી કરતું.

क्षयान्तरं मिथ्यात्वमोहनीयकर्मणां क्षयोपशमात् सम्यक्त्वमोहनीयकर्मणामुदयाच्च संजात आत्मपरिणामः क्षायोपशमिकसम्यक्त्वम् । तत्रेदमवगन्तव्यम्—यदुदीर्णमुदय-मागतं मिथ्यात्वमोहनीयं कर्म, तद्धि विपाकोदयेन वेदितत्वात् क्षयं प्राप्तम्, यच्च शेषसत्तायामनुदितं वर्तते, तदुपशान्तम् । उपशान्तं नाम—अनुदयावस्थापन्नम् । तत्र—मिथ्यात्वमिश्रपुञ्जावाश्रित्यानुदयावस्थापन्नं सम्यक्त्वपुञ्जमाश्रित्य तु अधिकांश-तया उदीर्णावस्थापन्नम् । तदेवमुदितस्य मिथ्यात्वस्य क्षयेणानुदितस्य चोपशमेन सम्य-क्त्वकर्मपुद्गलानां कियताश्विद्वेदनेन च निर्वृत्तं=निष्पन्नं क्षायोपशमिकं सम्यक्त्वमुच्यते ।

अनन्तानुबन्धी चार कषायों के क्षय के अनन्तर, मिथ्यात्वमोहनीय कर्म के क्षयोपशम से, एवं सम्यक्त्वमोहनीय कर्म के उदय से जो आत्मा का परिणाम उत्पन्न होता है वही क्षायोपशमिक सम्यक्त्व है, अर्थात् इस सम्यक्त्वमें मिथ्यात्व के कुछ भागका क्षय हो जाता है और कुछ भागका उपशम रहता है, वह इस प्रकार से कि—मिथ्यात्वके जो सर्वघातिस्पर्द्धक हैं उनका तो उदयभावी क्षय (उदय में आये हुए सर्वघातिस्पर्द्धकों का विना फल दिये ही खिर जाना) हो जाता है, एवं उन्हीं के आगामी कालमें उदय आनेवाले निषेकों (कर्म पुद्गलोंके रचनाविशेषों) का सदवस्थारूप उपशम रहता है, और सम्यक्त्व प्रकृति जो देशघाती है उसका यहां पर उदय रहता है, अतः यहां पर मिथ्यात्वमोहनीय कर्म का जितना भी अंश उदय में आया है, वह तो विपाकरूप उदय से वेद लिया गया है, इसलिये उतने भाग का तो क्षय हो चुका है, एवं जो अवशिष्ट अवेदित भाग है कि जो अभी तक

अनन्तानुबन्धी चार कषायोना क्षयना अनन्तर मिथ्यात्व—मोहनीय कर्मना क्षयोपशमथी अने सम्यक्त्व—मोहनीय कर्मना उदयथी जे आत्मानो परिणाम—लाव—उत्पन्न थाय छे ते क्षायोपशमिक—सम्यक्त्व छे. अर्थात् आ सम्यक्त्वमां मिथ्यात्वना कोर्ध लागनो क्षय थर्ध जाय छे अने कोर्ध लागनो उपशम रहे छे. ते ओ प्रकारथी के मिथ्यात्वना जे सर्वघाती स्पर्द्धक छे तेनो तो उदय—लावी क्षय (उदयागत सर्वघाति स्पर्द्धकोनुं इण आध्या विना तुटी जवुं) थर्ध जाय छे अने अनेना आगामी कालमां उदय आववावाणा निषेको (कर्म पुद्गलोना रचना विशेषो) नो सदवस्थाइय उपशम रहे छे अने सम्यक्त्वप्रकृति जे देशघाती छे अनेना आंही उदय रहे छे, ओटले आंहीया मिथ्यात्वमोहनीय कर्मनो जेटलो पणु अंश उदयमां आव्यो ते तो विपाकइय उदयथी वेदवामां आवेल छे जेथी ओटला लागनो तो क्षय थर्ध गयेल छे. अने जे अवशिष्ट अवेदित भाग छे

સતિ મિથ્યાત્વાભિમુખતયાઽનન્તાનુવન્ધિકષાયોદયાદૌપશમિકસમ્યક્ત્વોપરિ વ્ય-
લીકચિત્તસ્ય તત્સમ્યક્ત્વમુદ્ગમતસ્તદ્રસાસ્વાદનં જવન્યતઃ સમયમાત્રે, ઉત્કર્ષતથ્થ પડા-
વલિકાયાં ભવતિ. તસ્માદિદં સમ્યક્ત્વં સાસ્વાદનમુચ્યતે । અસ્મિન્ સમ્યક્ત્વેઽનન્તા-
નુવન્ધિકષાયોદયસત્ત્વેનાત્મપરિણામનૈર્મલ્યાભાવાદવ્યક્તા તત્ત્વાર્થાનભિરુચિસ્તિષ્ઠતિ,
મિથ્યાત્વે તુ વ્યક્તા, इत्येव तयोर्भेदः ।

વદ્વા-इदं सासादननाम्नाऽपि निगद्यते । तत्र-आयम्=औपशमिकसम्य-
क्त्वज्ञानं सादयति=अपनयतीत्यासादनम्=अनन्तानुवन्धिकषायवेदनम् । तस्मिन्
उसी प्रकार मिथ्यात्वके उदय होनेसे मिथ्यात्वप्राप्तिके सम्मुख हुआ
जीव भी अनन्तानुवन्धी कषाय के उदय से जब औपशमिक सम्यक्त्वके
ऊपर अरुचि-चित्तवाला होकर उसका वमन-त्याग कर देता है, अर्थात्
-जब वह सम्यक्त्व उससे छूट जाता है, तब उसका आस्वादन भी उसे
कमसे कम एक समय तक, और ज्यादा से ज्यादा छह आवलिकाल तक
वना ही रहता है । इस कारण इस सम्यक्त्व को सास्वादनसम्यक्त्व
कहा गया है । इस सम्यक्त्व में अनन्तानुवन्धी कषाय के उदय का सद्भाव
होने से (क्रोधादिकों में से किसी एक के उदयका सद्भाव होने से) आत्मा के
परिणामों में यथावत् निर्मलता-विशुद्धि-का अभाव हो जाता है । इससे
यहां तत्त्वार्थ के प्रति यद्यपि व्यक्त-प्रगट-रूप में अप्रीति-अरुचि नहीं है;
फिर भी अव्यक्त रूपसे वह यहां है ही । इसीलिये तो मिथ्यात्व और
सास्वादनमें इसी अप्रीति की व्यक्ताव्यक्तता से भेद माना गया है ।

તપ્રપ્તિના સન્નિબધ ધ્યેય છવ પશુ અનંતાનુબંધી કષાયના ઉદયથી ત્યારે
ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વના ઉપર અરુચિચિત્તવાળા થઈને એને વમન-ત્યાગ કરે
છે. અર્થાત્ ત્યારે તે સમ્યક્ત્વ છુટી જાય છે ત્યારે એનું આસ્વાદન પણ એને
એકામાં એકા એક સમય સુધી અને વધારેમાં વધારે છ-આવલિકાળ સુધી
રહે છે આ કરણે આ સમ્યક્ત્વને સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવેલ છે.

આ સમ્યક્ત્વમાં અનંતાનુબંધી કષાયના ઉદયને સદ્ભાવ હોવાથી (ક્રોધા-
દિકેનાથી કોઈ એકના ઉદયને સદ્ભાવ હોવાથી) આત્માના પરિણામોમાં યથાવત્
નિર્મલતા-વિશુદ્ધિ-નો અભાવ થઈ જાય છે, તેથી અહીંયા તત્ત્વાર્થના પ્રતિ
યદ્યપિ વ્યક્ત-પ્રગટ-રૂપને. અપ્રીતિ-અરુચી નથી; તે પશુ અવ્યક્તરૂપથી તે
અહીંયા છે જ. તેથી તે મિથ્યાત્વ અને સાસ્વાદમાં એ જ અપ્રીતિની વ્યક્તા-
અવ્યક્તાથી ભેદ માનવામાં આવે છે.

નનુ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વરયોપશમિકસમ્યક્ત્વાત્કો ભેદઃ ? इति चेदुच्यते—
ક્ષાયોપશમિકે મિથ્યાત્વદલિકવેદનં વિપાકતો નાસ્તિ, પ્રદેશતસ્તુ વિદ્યતે । ઔપશ-
મિકે તું પ્રદેશતોઽપિ નાસ્તીતિ વિશેષ ઇતિ ।

(૪) અથ સાસ્વાદનં સમ્યક્ત્વમુચ્યતે—આસ્વાદનેન=સમ્યક્ત્વરસાસ્વાદ-
નેન સહ વર્તત ઇતિ સાસ્વાદનમ્ । યથા—ક્ષીરાન્નં ભુક્ત્વા તદ્વિષયે ખિન્નચિકારેણ યદિ
કશ્ચિત્ તદ્વમતિ, તદાઽસૌ વમનકાલે ક્ષીરાન્નરસમાસ્વાદયતિ, તથા મિથ્યાત્વોદયે

શંકા—ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં ઔર ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં
કયા ભેદ હૈ? શંકાકારકા અભિપ્રાય યહાં પર હતના હી હૈ કિ જૈસે
ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વકા ઉદય નહીં હૈ, ઉસી પ્રકાર સે
ઉપશમસમ્યક્ત્વ મેં મી નહીં હૈ; ફિર इन दोनों में अन्तर क्या है ? ।

ઉત્તર—इन दोनों में अन्तर है और वह इस प्रकार से है कि
ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વકે દલિયોં કા વેદન યદ્યપિ વિપાક-
રુપ સે નહીં હૈ પરન્તુ પ્રદેશોદય સે ઉનકા વેદન વહાં પર હૈ હી । ઔપ-
શમિક સમ્યક્ત્વ મેં તો દોનોં રુપ સે હી ઉનકા વેદન નહીં હૈ ૩ ।

(૪) अब सास्वादनसम्यक्त्व का स्वरूप कहते हैं—

‘સહ-આસ્વાદનેન વર્તતે ઇતિ સાસ્વાદનમ્’—અર્થાત્ જો સમ્યક્ત્વ-
રુપ રસકે આસ્વાદન સે સહિત હો ઉસકા નામ સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વ હૈ ।
જૈસે કોઈ વ્યક્તિ સ્ત્રી સ્વાકર પશ્ચાત્ ચિત્ત મેં તદ્વિષયક વિકાર હોનેપર
વમન કરતા હૈ ઉસ સમય મેં મી વહ ઉસકે રસાસ્વાદકા અનુભવ કરતા હૈ,

શંકા—ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં અને ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં શો ભેદ
છે ? શંકાકારનો અભિપ્રાય આ ઠેકાણે એ છે કે જેવી રીતે ક્ષાયોપશમિક-સ-
મ્યક્ત્વમાં મિથ્યાત્વનો ઉદય નથી તેવી જ રીતે ઉપશમ-સમ્યક્ત્વમાં પણ નથી
તો પછી એ બન્નેમાં ભેદ શો છે ?

ઉત્તર—એ બન્નેમાં ભેદ છે અને તે આ પ્રકારે છે—ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં
મિથ્યાત્વના દલિયોનું વેદન છે, જો કે વિપાકરૂપથી નથી પરન્તુ પ્રદેશોદયથી એનું વેદન
ત્યાં છે જ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં તો બન્ને રૂપથી તેનું વેદન છે જ નહિ. (૩)

(૪) હવે સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વનું સ્વરૂપ કહે છે:—

‘સહ આસ્વાદનેન વર્તતે ઇતિ સાસ્વાદનમ્’—અર્થાત્ જે સમ્યક્ત્વરૂપ રસના
આસ્વાદનથી સહિત છે એનું નામ સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ છે, જેમકે કોઈ વ્યક્તિ
દૂધપાક જમ્યા પછી ચિત્તમાં તદ્વિષયક વિકાર થવાથી વમન કરે છે એ સમયમાં
પણ તે એના રસાસ્વાદનો અનુભવ કરે છે. આ પ્રકારે મિથ્યાત્વના ઉદયથી મિથ્યા-

(૫) વેદકસમ્યક્ત્વપુચ્યતે-વેદયતિ-અનુભવતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાનિતિ વેદ-કોઽનુભવિતા, તદર્થાન્તર્ભૂતત્વાત્ સમ્યક્ત્વમપિ વેદકમ્ । સમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુઞ્જસ્ય વહુ-તરક્ષપિતસ્ય ચાસપુદ્ગલાનાં ગ્રાસસમયે વેદકસમ્યક્ત્વં ભવતિ । તથાહિ-ક્ષપકશ્રેણિ-પ્રાસોઽન્તાનુવંધિકપાયચતુષ્ટયમપિ ક્ષપયિત્વા મિથ્યાત્વમિશ્રપુદ્ગલપુજ્ઞાન્ ક્ષપયતિ, શપ્તિકસમ્યક્ત્વસે પતિત હોકર મિથ્યાત્વકે સમ્મુખ હોતા હૈ—(અમી મિથ્યાત્વમેં પ્રાપ્ત નહીં હુઆ હૈ કિન્તુ ઉસકે સમ્મુખ હી હુઆ હૈ); સો જવ તક ચહ જીવ મિથ્યાત્વરૂપી ભૂમિ કો પ્રાપ્ત નહીં હુઆ હૈ, અર્થાત્-જવ તક સમ્યક્ત્વરૂપી પર્વત સે ગિર કર વીચમેં હી હૈ, તવ તક ઉસ જીવકા જો સમ્યક્ત્વ હૈ ઉસકા નામ સાસાદન હૈ ૪ ।

(૬) વેદકસમ્યક્ત્વ કા સ્વરૂપ—

વેદયતિ=અનુભવતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાન્-ઇતિ વેદકઃ=અનુભવિતા, તદર્થાન્તર્ભૂતત્વાત્ સમ્યક્ત્વમપિ વેદકમ્ ।

અર્થાત્-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલોં કા જો અનુભવ કરનેવાલા હૈ, ઉસે વેદક-અનુભવિતા કહતે હૈં । ઉસસે અભિન્ન હોનેસે સમ્યક્ત્વ મી વેદક કદ્રલાતા હૈ । સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે જિતને મી પુદ્ગલપુંજ હૈં, ઉનમેં સે અધિકતર પુદ્ગલપુંજોં કા ક્ષય હો ચુકને પર વાકી જો ચરમપુદ્ગલપુંજ રહતે હૈં ઉનકે ગ્રાસકે સમીપ (નષ્ટ કરને કે સમય)મેં વહ વેદકસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । ક્ષપકશ્રેણીકો ગ્રાસ હુઆ જીવ અનંતાનુવંધિચતુષ્ટય

ત્યારે એ જીવ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વથી પતિત થઈ મિથ્યાત્વની સમ્મુખ થાય છે (હજી મિથ્યાત્વમા પ્રાપ્ત નથી થયોપણ એની સમ્મુખ થયો છે) માટે જ્યાં સુધી એ જીવ મિથ્યાત્વરૂપી ભૂમિને પ્રાપ્ત નથી થયો, અર્થાત્-જ્યાં સુધી સમ્યક્ત્વરૂપી પર્વતથી પડીને વચમા જ છે તે સમય તે જીવનું જે સમ્યક્ત્વ છે તેનું નામ સાસાદન છે (૪)

(૫) વેદક-સમ્યક્ત્વનું સ્વરૂપ કહે છે—‘વેદયતિ=અનુભવતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાન્ ઇતિ વેદકઃ=અનુભવિતા, તદર્થાન્તર્ભૂતત્વાત્ સમ્યક્ત્વમપિ વેદકમ્’

અર્થાત્—સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલોનો જે અનુભવ કરવાવાળો છે, એને વેદક-અનુભવિતા કહે છે. એનાથી અભિન્ન હોવાથી સમ્યક્ત્વ પણ વેદક કહેવાય છે સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના જેટલા પણ પુદ્ગલપુંજ છે, એમાંથી અધિકતર પુદ્ગલપુંજનો નાશ થયા પછી બાકી જે ચરમ પુદ્ગલ રહે છે એના ગ્રાસની સમીપ (નાશ કરવાના સમય)મા તે વેદક-સમ્યક્ત્વ થાય છે. ક્ષપકશ્રેણીને પ્રાપ્ત થયેલા જીવ અનંતાનુવંધિ-ચતુષ્ટયનું પણ ક્ષપણ કરીને મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ

સતિ હિ-અનન્તસુખદો નિઃશ્રેયસતરૂબીજભૂત ઔપશમિકસમ્યક્ત્વલાભો જઘન્યતઃ સમયમાત્રેણ ઉત્કર્ષતઃ ષડ્ભિરાવલિકાભિરપગચ્છતિ । આસાદનમિત્યત્ર પૃષોદરાદિત્વાદ્ યકારલોપઃ, 'કૃદ્બહુલ'-મિતિ કર્તર્યનટ્ । આસાદનેન સહ વર્તત-ઇતિ સાસાદનમ્ । અનન્તાનુવન્ધિકષાયોદયે સતિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વાત્ પ્રપતન્ મિથ્યાત્વસંક્રમણા-ભિમુખઃ સન્ યાવત્ મિથ્યાત્વભૂમિં ન પ્રાપ્નોતિ તદન્તરાલે વર્તમાનસ્ય યત્ સમ્યક્ત્વં તત્ સાસાદનં ભવતિ ।

અથવા—યહ સમ્યક્ત્વ સાસાદન કે નામ સે મી કહા જાતા હૈ, અર્થાત્-ઇસકા દૂસરા નામ સાસાદનસમ્યક્ત્વ મી હૈ । 'આયં સાદયતિ-અપનયતીત્યાસાદનમ્ ; આસાદનેન સહ વર્તતે-ઇતિ સાસાદનમ્' અર્થાત્- 'આય' નામ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વકે લાભકા હૈ । ઉસ લાભકો જો હટાતા હૈ, ઉસે આસાદન કહતે હૈ । ઉસકે સહિત હોને સે વહ સાસાદન કહા જાતા હૈ । ઇસ સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિરૂપ લાભકો હટાનેવાલા અનંતાનુબંધી કષાય કે ઉદયકા વેદન હી હૈ । ક્યોં કિ ઇસકે હોને પર અનન્ત સુખદાતા ઔર નિશ્રેયસ-મોક્ષરૂપ વૃક્ષકા વીજરૂપ જો ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ હૈ ઉસકા લાભ-સદ્ભાવ કમ સે કમ એક સમય તક ઔર અધિક સે અધિક છહ આવલિકાલ તક હી રહ કર ફિર દૂર હો જાતા હૈ । ઇસકા ફલિતાર્થ યહી હૈ કિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વમેં જો અનંતાનુબંધી કષાય કા ઉપશમ હૈ વહ અપને કાલ-અન્તર્મુહૂર્ત-તક હી રહતા હૈ । ઇસકે બાદ જબ ઉસ કષાય કા ઉદય હો જાતા હૈ તબ યહ જીવ ઔપ-

અથવા—આ સમ્યક્ત્વ સાસાદનના નામથી પણ કહેવામાં આવે છે. અર્થાત્ એતું ખીજું નામ સાસાદન-સમ્યક્ત્વ પણ છે. 'આયં સાદયતિ-અપનયતીત્યાસાદનમ્, આસાદનેન સહ વર્તતે ઇતિ સાસાદનમ્' અર્થાત્ 'આય' નામ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વના લાભનું છે. એ લાભને જે હઠાવે છે એને આસાદન કહે છે. એના સહિત હોવાથી તે સાસાદન કહેવાય છે.

આ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિરૂપ લાભને હઠાવવાવાળા અનંતાનુબંધી કષાયના ઉદયનું વેદન જ છે, કારણ કે આના હોવાથી અનન્ત સુખ દેવાવાળા અને નિશ્રેયસ-મોક્ષ-રૂપ વૃક્ષના ખીજસ્વરૂપ જે ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે એનો લાભ-સદ્ભાવ ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને વધારેમાં વધારે છ આવલી કાળ સુધી રહીને પછી દૂર થઈ જાય છે. એનો ફલિતાર્થ એ છે કે ઔપશમિક સમ્યક્ત્વમાં જે અનંતાનુબંધી કષાયનો ઉપશમ છે તે પોતાના કાલ-અન્તર્મુહૂર્ત સુધી રહે છે. ત્યારબાદ જ્યારે એ કષાયનો ઉદય થઈ જાય છે

નન્વેવં સતિ વેદકસ્ય ક્ષાયોપશમિકાત્ કો ભેદ , સમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુજ્જવેદનસ્યો-
ભયત્રાપિ તુલ્યત્વાત્ ? અત્રોચ્યતે-વેદકે સ્વલુ સર્વોદિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુજ્જચરમગ્રાસ-
વેદનમ્ , ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ ચરમગ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિ-
ષ્ઠન્તિ, તેન તદ્વર્જિતપુદ્ગલાનાં વેદનં ભવતિ, ઇતિ વિશેષોઽવધારણીય ઇતિ । ઉક્તશ્ચ-

શંકા--યદિ યહી વાત હૈ કિ ઇન દોનોં સમ્યક્ત્વોં મેં સમ્યક્ત્વ
પ્રકૃતિ કે પુંજોં કા વેદન હોતા હૈ તો ફિર વેદકસમ્યક્ત્વકા ક્ષાયોપ-
શમિકસમ્યક્ત્વસે ભેદ હી ક્યા રહા ?

સમાધાન--વેદકસમ્યક્ત્વ મેં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે ચરમપુદ્ગલોં કા
વેદન હોતા હૈ, ઓર ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ મેં ઇનસે અવશિષ્ટોંકા ।
વસ, યહી ઇન દોનોં મેં ભેદ હૈ । ઇસી વાત કો “વેદકે સ્વલુ સર્વો-
દિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુજ્જચરમગ્રાસવેદનમ્ , ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ
ચરમગ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિષ્ઠન્તિ ” । ઇન પંક્તિયોં મેં
ટીકાકારને સ્પષ્ટ કિયા હૈ । અર્થાત્-વેદકસમ્યક્ત્વ મેં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિકે
ઉદિત હુઅ સમસ્ત પુદ્ગલપુંજોંમેંસે સિર્ફ ચરમગ્રાસવર્તી પુદ્ગલોં કા વેદન
હોતા હૈ । ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ કે સમય મેં તો ઉસ ચરમગ્રાસવર્તી
પુદ્ગલપુંજ સે અવશિષ્ટ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોં કા વેદન હોતા હૈ ।
કલ્પના કીજિયે-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે સમસ્ત પુદ્ગલપુંજોંકી સંખ્યા ૧૦૦ હૈ ।

શંકા--જો એ વાત છે કે બ્યારે એ બન્ને સમ્યક્ત્વોમા સમ્યક્ત્વપ્રકૃ-
તિના પુજેતું વેદન થાય છે તો પછી વેદક-સમ્યક્ત્વના ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વથી
ભેદ જ શો રહ્યો ?

સમાધાન--વેદક-સમ્યક્ત્વમાં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના ચરમ પુદ્ગલોના વેદન થાય
છે, અને ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં એનાથી અવશિષ્ટોના વેદન થાય છે. બસ
આજ આ બંનેમાં ભેદ છે.

આજ વાતને “વેદકે સ્વલુ સર્વોદિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુજ્જચરમગ્રાસવેદનમ્ ક્ષાયોપ-
શમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ ચરમગ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિષ્ઠન્તિ ”

આ પંક્તિઓમાં ટીકાકારે સ્પષ્ટ કરી છે. અર્થાત્ વેદક-સમ્યક્ત્વમાં સમ્ય-
ક્ત્વપ્રકૃતિના ઉદિત થયેલ બધા પુદ્ગલપુંજેમાંથી ફક્ત ચરમગ્રાસવર્તી પુદ્ગ-
લોનું જ વેદન થાય છે

ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વના સમયમાં તો આ ચરમગ્રાસવર્તી પુદ્ગલપુંજથી
અવશિષ્ટ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના અવ્યવહિત પૂર્વવર્તી પુદ્ગલપુંજેનું વેદન થાય છે.
કલ્પના કરિયે કે સમ્યક્ત્વ-પ્રકૃતિના સમસ્ત પુદ્ગલપુંજેની સંખ્યા ૧૦૦ છે.

ततः परं सम्यक्त्वपुञ्जमपि उदीर्योदीर्यानुभवेन निर्जरयति, तेनोदीरणीयसम्यक्त्व-पुञ्जाभावो जायते, तदेवं चरमग्रासेऽवतिष्ठमानेऽद्यापि सम्यक्त्वपुद्गलानां कियता-मपि वेद्यमानत्वात् वेदकं सम्यक्त्वमुपजायते । इदमपि सम्यक्त्वं पौद्गलिकं विज्ञेयम् ।

क्षायोपशमिकसम्यक्त्वी जीवः सम्यक्त्वमोहनीयपुञ्जस्याधिकांशं क्षपयित्वा यदा सम्यक्त्वमोहनीयस्यान्तिमपुद्गलानां वेदनं करोति तदानीं जायमान आत्मप-रिणामो वेदकसम्यक्त्वमिति निष्कर्षः । वेदकसम्यक्त्वप्राप्त्यनन्तरं क्षायिकसम्यक्त्वं लभ्यत एव ।

का भी क्षापण करके मिथ्यात्वप्रकृति और मिश्रप्रकृति के पुद्गलपुंजोंका जब क्षय कर देता है तब उसके बाद सम्यक्त्वप्रकृति के पुंजोंकी अपने अनुभव से उदीरणा करके निर्जरा करता है । ऐसा करने से उदीरणीय-उदीरणा करने योग्य-सम्यक्त्वप्रकृति के पुंजों का अभाव हो जाता है । इस प्रकार अन्तिम ग्रास के रहने पर उस समय भी कितनेक अंतिम अंशवर्ती सम्यक्त्वप्रकृति के पुद्गलपुंजों का अनुभव होता है । इसका अनुभव करना ही वेदक-सम्यक्त्व है । यह सम्यक्त्व भी पौद्गलिक जा-नना चाहिये ।

इसका फलितार्थ यही है-कि क्षायोपशमिक-सम्यक्त्ववाला जीव सम्यक्त्वमोहनीय कर्म के पुद्गलपुंजके अधिकांश भागका क्षय करके जब उसी सम्यक्त्वमोहनीय कर्म के अंतिम पुद्गलों का वेदन करता है उस समय में उत्पन्न होनेवाला आत्मपरिणाम वेदक-सम्यक्त्व है । वेदकसम्य-क्त्व की प्राप्ति के बाद जीव क्षायिकसम्यक्त्व को प्राप्त कर ही लेता है ।

अने मिश्रप्रकृतिना पुद्गलपुंजेनो न्यारे क्षय करी नाये छे त्यारे पछी सम्यक्त्वप्रकृतिना पुंजनी पोताना अनुभवथी उदीरणा करीने निर्जरा करे छे, अेम करवाथी-उदीरणीय-उदीरणा करवा योग्य सम्यक्त्व प्रकृतिना पुंजने अभाव थछ नय छे, आ प्रकारे अन्तिम ग्रासना रहेवाथी ते समय पणु केटलाक अंतिम अंशवर्ती सम्यक्त्वप्रकृतिना पुद्गलपुंजेनो अनुभव थाय छे, अेनो अनुभव करवो ते वेदक-सम्यक्त्व छे, आ सम्यक्त्व पणु पौद्ग-लिक नानुवुं नैछअे,

आनो इदितार्थ अे छे के क्षायोपशमिक सम्यक्त्ववाणा अेव सम्यक्त्व-मोहनीय कर्मना पुद्गलपुंजना अधिकांश लागनो क्षय करीने न्यारे अे सम्यक्त्व-मोहनीय कर्मना अंतिम पुद्गलानुं वेदन करे छे ते समयमां उत्पन्न थवावाणा आत्मपरिणाम वेदक-सम्यक्त्व छे, वेदक-सम्यक्त्वनी प्राप्ति पछी क्षायिक-सम्यक्त्वने अेव प्राप्त करी न ले छे,

છાયા—ક્ષીણે દર્શનમોહે, ત્રિવિધેઽપિ ક્ષાયિકં ભવતિ સમ્યક્ (સમ્યક્ત્વમ્) ।
 વેદકમિહ સર્વોદિત-ચરમકપુદ્ગલગ્રાસમ્ ॥ ૧ ॥
 ઉપશમશ્રેણિગતસ્ય તુ, ભવતિ હુ ઔપશમિકં તુ સમ્યક્ત્વમ્ ।
 યો વા અકૃતત્રિપુઞ્જ, અક્ષપિતમિથ્યાત્વો લભતે સમ્યક્ (સમ્યક્ત્વમ્) ॥૨॥
 ઉપશમસમ્યક્ત્વાત્ ચ્યુત્વા મિથ્યાત્વમપ્રાપ્નુવતઃ ।
 સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વં, તદન્તરાલે પઢાવલિકમ્ ॥ ૩ ॥
 મિથ્યાત્વં યદુદીર્ણ, તત્ક્ષીણમનુદિતં ચોપશાન્તમ્ ।
 મિશ્રીભાવપરિણતં, વેદમાનં ક્ષાયોપશમમ્ (ક્ષાયોપશમિકમ્) ॥૪॥ ઇતિ ।

મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય ઔર સમ્યક્ત્વમોહનીયરૂપ દર્શન-મોહનીય કર્મ કે સર્વથા ક્ષય હોને પર હી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, સવ ડાદિત પુદ્ગલોં મેં ચરમ-અન્તિમ-અંશવર્તી પુદ્ગલોંકા વેદન હોના વેદકસમ્યક્ત્વ હૈ ॥ ૧ ॥ ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવોંકો ઉપશમસમ્યક્ત્વ કા લાભ હોતા હૈ । અથવા જિસને મિથ્યાત્વકર્મ કે ત્રીન પુંજ નહીં કિયે હૈં એસે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ કે, તથા જિસને મિથ્યાત્વકા ક્ષય મી નહીં કિયા હૈ કિંતુ ડસકા ઉપશમ કિયા હૈ ડસ જીવ કે ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવકે ૭ પ્રકૃતિયોં (અનન્તાનુબન્ધી ૪, મિથ્યાત્વમોહનીય ૫, મિશ્રમોહનીય ૬, સમ્યક્ત્વમોહનીય ૭) કે ઉપશમસે ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ; એસા સિદ્ધાન્તકારોંને કહા હૈ । ૮વેં ૯વેં ૧૦વેં ઔર ૧૧ વેં ગુણસ્થાનમેં ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, ક્યોં કિ યે ઉપશમશ્રેણિ કે સ્થાન હૈં । તથા અનાદિ-મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ

“ મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વમોહનીયરૂપ દર્શનમોહનીય કર્મનો ક્ષય થયા પછી જ ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થાય છે, બધા ઉદિત પુદ્ગલોમા ચરમ-અન્તિમ-અશવર્તી પુદ્ગલોનું વેદન થવું વેદક-સમ્યક્ત્વ છે (૧)

ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવોને ઉપશમ-સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે. અથવા જો જો મિથ્યાત્વકર્મના ત્રણ પુંજ નથી કર્યા, એવા મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવને તથા મિથ્યાત્વનો ક્ષય કર્યો નથી પણ તેનો ઉપશમ કર્યો છે, એ જીવને ઉપશમ-સમ્યક્ત્વ થાય છે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવની સાત ૭ પ્રકૃતિયો (અનન્તાનુબન્ધી ૪, મિથ્યાત્વમોહનીય ૫, મિશ્રમોહનીય ૬, સમ્યક્ત્વમોહનીય ૭)ના ઉપશમથી ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે, એવું સિદ્ધાન્તકારોએ કહ્યું છે. ૮ માં, ૯ માં, ૧૦ માં અને ૧૧ માં ગુણસ્થાનમાં ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે, કારણ કે એ ઉપશમશ્રેણીનું સ્થાન છે. તથા અનાદિ

“खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।
 वेयगमिह सव्वोइय, -चरमिल्लयपुग्गलग्गासं ॥ १ ॥
 उवसमसेढिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।
 सासायणसम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ” ॥ ४ ॥ इति ।

इनमें से ९९ वें तकके पुद्गलपुंजोंका वेदन क्षायोपशमिकसंभ्येकत्वमें होगा, अन्तिम १०० वें का वेदन वेदकसंभ्येकत्व में । इस अन्तिम १०० वें का वेदन क्षायोपशमिक-संभ्येकत्वमें नहीं होगा ५ । औपशमिकसंभ्येकत्वादिकों का स्वरूप इन गाथाओंमें भी संक्षेपरूप से इस प्रकार कहा है—

गाथा—खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।
 वेयगमिह सव्वोइय, -चरमिल्लयपुग्गलग्गासं ॥ १ ॥
 उवसमसेढिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।
 सासायणसम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ॥ ४ ॥ ” इति ।

आभांथी ८८ सुधीना पुद्गलपुंजेनुं वेदन क्षायोपशमिक-संभ्येकत्वमां थशे.
 अन्तिम १०० भानुं वेदन वेदक-संभ्येकत्वमां थशे (५).

औपशमिक-संभ्येकत्वादिकेनुं स्वइय आ गाथाओमां पणु संक्षेपइयथी
 आ प्रकारे उल्लुं छे:—

“खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।
 वेयगमिह सव्वोइय, -चरमिल्लयपुग्गलग्गासं ॥ १ ॥
 उवसमसेढिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।
 सासायण-सम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ” ॥ ४ ॥ इति ॥

પ્રકારાન્તરેણાપિ સમ્યક્ત્વસ્ય દશવિધત્વં સ્થાનાઙ્ગાદૌ પ્રતિવોધિતમ્, યથા-
(૧) નિસર્ગરુચિઃ, (૨) ઉપદેશરુચિઃ, (૩) આજ્ઞારુચિઃ, (૪) સૂત્રરુચિઃ, (૫) વીજ-
રુચિઃ, (૬) અધિગમરુચિઃ, (૭) વિસ્તારરુચિઃ, (૮) ક્રિયારુચિઃ, (૯) સંક્ષેપરુચિઃ
(૧૦) ધર્મરુચિરિતિ ।

તત્ર-નિસર્ગઃ સ્વભાવસ્તેન રુચિર્જિનોક્તતત્ત્વાભિલાપરૂપા યસ્ય સ નિસર્ગ-
રુચિઃ ૧ । ઉપદેશો ગુર્વાદિર્ભિર્વસ્તુતત્ત્વકથનં, તેન રુચિર્યસ્ય સ ઉપદેશરુચિઃ ૨ ।

જો ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ કહા હૈ, વહ બી સુઘટિત હો જાતા
હૈ; કારણ કિ યહાં પર મિથ્યાત્વમોહનીય મિશ્રમોહનીય ઓર સમ્ય-
ક્ત્વમોહનીય પ્રકૃતિયોં કો અલુદીર્ણ પુંજ ઉપશમ-અવસ્થા મેં રહતે હૈં
એવં ઉદીર્ણ મિથ્યાત્વ કા ક્ષય હૈ, ઓર સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિ કો દલોંકા વર્ત-
માન મેં ઉદય હો રહા હૈ ।

પ્રકારાન્તર સે બી સમ્યક્ત્વ દસ પ્રકાર કા હૈ, વહ સ્થાનાઙ્ગ આદિ
સૂત્રોં મેં વર્ણિત હૈ, જૈસે-(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપદેશરુચિ, (૩) આજ્ઞા-
રુચિ, (૪) સૂત્રરુચિ, (૫) વીજરુચિ, (૬) અધિગમરુચિ, (૭) વિસ્તારરુચિ,
(૮) ક્રિયારુચિ, (૯) સંક્ષેપરુચિ, (૧૦) ધર્મરુચિ ।

નિસર્ગ નામ સ્વભાવ કા હૈ; સ્વભાવ સે હી જિસ જીવ કો
જિનોક્ત તત્ત્વોં મેં રુચિ-અભિલાષા હોતી હૈ ઉસકે યહ સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ ।
અર્થાત્-સ્વભાવ સે હી જીવ કી રુચિ જિસકે દ્વારા જિનકથિત તત્ત્વોં મેં
હુઆ કરતી હૈ વહ નિસર્ગરુચિ હૈ (૧) । ગુર્વાદિક કો ઉપદેશ સે તત્ત્વોં મેં જો

પણ સુઘટિત થઈ જાય છે, કારણ કે આ ઠેકાણે મિથ્યાત્વમોહનીય મિશ્રમોહનીય
અને સમ્યક્ત્વમોહનીય પ્રકૃતિયોના અનુદીર્ણ પુંજ ઉપશમ અવસ્થામાં રહે છે,
એવં ઉદીર્ણ મિથ્યાત્વનો ક્ષય છે અને સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના દ્વિજિઓનો વર્તમાનમાં
ઉદય થાય છે.

પ્રકારાન્તરથી પણ સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકારના છે, તે સ્થાનાંગ આદિ સૂત્રોમાં
વર્ણિત છે જેમ-(૧) નિસર્ગરૂચિ, (૨) ઉપદેશરૂચિ, (૩) આજ્ઞારૂચિ, (૪) સૂત્ર
રૂચિ, (૫) વીજરૂચિ, (૬) અધિગમરૂચિ, (૭) વિસ્તારરૂચિ, (૮) ક્રિયારૂચિ,
(૯) સંક્ષેપરૂચિ, (૧૦) ધર્મરૂચિ.

નિસર્ગ નામ સ્વભાવનું છે; સ્વભાવથી જ જે જીવને જિનોક્ત તત્ત્વોમાં
રૂચિ-અભિલાષા થાય છે તેને આ સમ્યક્ત્વ થાય છે અર્થાત્-સ્વભાવથી જ જીવની
રૂચિ જેના દ્વારા જિનકથિત તત્ત્વોમાં થયા કરે છે, તે નિસર્ગરૂચિ છે (૧).
ગુર્વાદિકના ઉપદેશથી તત્ત્વોમાં જે રૂચિ જીવને માટે પેદા કરવામાં આવે

યન્મિથ્યાત્વમુદીર્ણં તત્ ક્ષીણમ્ । યત્ અનુદિતમ્ અનુદીર્ણં તન્મિથ્યાત્વં, મિ-
શ્રીભાવપરિણતં=મિશ્રમોહનીયં, ચ શબ્દાત્ સમ્યક્ત્વદલિકં યદનુદીર્ણમનુદિતં તદપિ,
ઉપશાન્તમ્, અનુદીર્ણાનુદિતમિથ્યાત્વમિશ્રસમ્યક્ત્વદલિકેતિત્રયમુપશમાવસ્થમિ-
ત્યર્થઃ । વેદ્યમાનમ્=ઉદયાવસ્થાં સમાપન્નં સમ્યક્ત્વદલિકં યત્ર તત્ ક્ષાયોપશમિકં
સમ્યક્ત્વમુચ્યતે, इत्यर्थः ॥ ૪ ॥

કે સર્વપ્રથમ ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । યહ જીવ મિથ્યાત્વ કર્મ કે
ત્રીન પુંજ નહીં કરતા હૈ ઓર ન મિથ્યાત્વકા ક્ષય હી કરતા હૈ ॥ ૨ ॥
ઉપશમસમ્યક્ત્વ સે ચ્યુત હોકર મિથ્યાત્વ કો નહીં પ્રાપ્ત હુએ જીવ
કે હી અન્તરાલ સમય મેં કમ સે કમ ૧ સમય ઓર અધિક સે અધિક
૬ આવલીકાલ તક સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ રહતા હૈ ॥ ૩ ॥ ઉદય પ્રાપ્ત
મિથ્યાત્વકા નાશ ઓર અનુદિત મિથ્યાત્વકા ઉપશમ, ઇન દો અવસ્થાઓં
સે મિશ્રિત ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ હૈ ॥ ૪ ॥

इस सम्यक्त्व में उदयप्राप्त मिथ्यात्वका विनाश-क्षय होता है
और अनुदीर्ण मिथ्यात्व का क्षय नहीं है; किन्तु उसका परिणामन मिश्र
प्रकृति के रूपमें है, और इसका यहां पर उपशम है । इसी प्रकार सम्य-
क्त्वप्रकृति का पुंज भी जो अनुदीर्ण है वह भी उपशम अवस्था में है ।
यह बात भी श्लोकमें आये हुए ‘च’ शब्द से प्रकट है । अतः ‘जो क्षय
और उपशम से उत्पन्न होता है, वह क्षायोपशमिक-सम्यक्त्व है’ इस प्रकार

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવને સર્વ પ્રથમ ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે. આ જીવ મિથ્યાત્વ
કર્મના ૩ ત્રણ પુંજ નથી કરતો, તેમજ મિથ્યાત્વનો ક્ષય પણ નહિ. (૨)
ઉપશમસમ્યક્ત્વથી જુદા પડી મિથ્યાત્વને નહિ પ્રાપ્ત થયેલ જીવને અંતરાળ
સમયમાં ઓછામાં ઓછું ૧ એક સમય અને વધારેમાં વધારે ૬ છ આવલીકાળ
સુધી સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ રહે છે. (૩)

ઉદયપ્રાપ્ત મિથ્યાત્વનો નાશ અને અનુદિત મિથ્યાત્વનો ઉપશમ, એ બે
અવસ્થાઓથી મિશ્રિત ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ છે. (૪)

આ સમ્યક્ત્વમાં ઉદયપ્રાપ્ત મિથ્યાત્વનો વિનાશ-ક્ષય થાય છે, અને અનુ-
દીર્ણ મિથ્યાત્વનો ક્ષય નથી; પણ એનું પરિણામન મિશ્રપ્રકૃતિના રૂપમાં છે, અને
તેનો અહીંયા ઉપશમ છે. આ પ્રકારે સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુંજ પણ જે અનુ-
દીર્ણ છે તે પણ ઉપશમ અવસ્થામાં છે. આ વાત પણ શ્લોકમાં આવેલ “ચ”
શબ્દથી પ્રગટ છે, માટે ‘જે ક્ષય અને ઉપશમથી ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્ષયો-
પશમ-સમ્યક્ત્વ છે’ એવી રીતે જે ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહ્યું છે, તે

વિહિત વિધિકે અનુસાર સંયમકા અનુષ્ઠાન કરના ક્રિયા છે, इसमें जिस जीवकी रुचि होती है वह क्रियारुचि नामका सम्यक्त्व है (८)। संक्षेप नाम संग्रहका है, उसमें जो रुचि हो वह संक्षेपरुचि है। अर्थात्-जिस जीवको विस्तृतरूपसे पदार्थपरिज्ञान नहीं है उसको संक्षेपमें रुचि हुआ करती है। इसी अपेक्षा से इस सम्यक्त्व का नाम संक्षेपरुचि है। इस सम्यक्त्ववाला जीव जीवादिक पदार्थों में विस्ताररूप से रुचि-संपन्न नहीं होता; किन्तु संक्षेपरूप से ही उन्हें समझ कर उनमें दृढ़ आस्थावाला हो जाता है (९)। धर्मास्तिकायादिक जो अमूर्तिक पदार्थ हैं, उनमें अथवा श्रुत एवं धर्मादिकमें जीवको जिसके द्वारा रुचि होती है वह धर्मरुचि है (१०)। यद्यपि सम्यक्त्व आत्माका निजी गुण है, परन्तु इस दस प्रकार के सम्यक्त्व कथन में जो उसका जीव से भिन्न रूपमें जो कथन किया है वह इस बातकी पुष्टि करता है कि गुण और गुणीमें कथंचित् भिन्नता और कथंचित् अभिन्नता है। द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा से गुण और गुणी अभिन्न हैं। पर्यायार्थिक नयकी विवक्षा से ये दोनों लक्षण, संख्या आदिकी अपेक्षा से भिन्न २ हैं। यह दशप्रकार के सम्यक्त्व का वर्णन हुआ (१०)।

છે (૭) શાસ્ત્રવિહિત વિધિના અનુસાર સંયમનું જે અનુષ્ઠાન કરવું તે ક્રિયા છે, તેમાં જે જીવની રુચિ થાય તે ક્રિયારુચિ નામનું સમ્યક્ત્વ છે (૮). સંક્ષેપ નામ સંગ્રહનું છે એમાં જેની રુચિ હોય તે સંક્ષેપરુચિ છે. અર્થાત્-જે જીવને વિસ્તૃતરૂપથી પદાર્થપરિજ્ઞાન નથી તેને સંક્ષેપમાં રુચિ થયા કરે છે, એ અપેક્ષાથી એ સમ્યક્ત્વનું નામ સંક્ષેપરુચિ છે. આ સમ્યક્ત્વવાળા જીવ જીવાદિક પદાર્થોમાં વિસ્તારરૂપથી રુચિસંપન્ન નથી થતા; પણ સંક્ષેપરૂપથી જ તેને સમજીને એમાં દૃઢ આસ્થાવાળા બની રહે છે (૯). ધર્માસ્તિકાયાદિક જે અમૂર્તિક પદાર્થ છે એમાં, અથવા શ્રુત એમજ ધર્માદિકમાં જીવની જેના દ્વારા રુચિ થાય છે તે ધર્મરુચિ છે (૧૦). યદ્યપિ સમ્યક્ત્વ આત્માનો નિજગુણ છે; પરંતુ આ દશ પ્રકારના સમ્યક્ત્વ કથનમાં તેનું જીવથી ભિન્નરૂપમાં જે કથન કર્યું છે તે એ વાતની પુષ્ટિ કરે છે કે ગુણ અને ગુણીમાં કથયિત્ ભિન્નતા અને કથયિત્ અભિન્નતા છે. દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાથી ગુણ અને ગુણી અભિન્ન છે, પર્યાયાર્થિક નયની વિવક્ષાથી એ બન્ને વચ્ચે સંખ્યા આદિની અપેક્ષાથી ભિન્નભિન્ન છે. આ દશ પ્રકારના સમ્યક્ત્વનું વર્ણન થયું ૧૦

આજ્ઞા=સર્વજ્ઞવીતરાગવચનાત્મિકા, તત્ત્વ રુચિરભિલાષો यस્ય સ આજ્ઞારુચિઃ ૩ । સૂત્રમ્-આચારાજ્ઞાદિકમ્, આવશ્યક-દશવૈકાલિકાદિકં ચ, તેન રુચિર્યસ્ય સ સૂત્રરુચિઃ ૪ । વીજમિવ વીજં યદેકમપ્યનેકાર્થવોદયજનકં વચઃ, તેન રુચિર્યસ્ય સ વીજરુચિઃ ૫ । અધિગમેન=વિશિષ્ટપરિજ્ઞાનેન રુચિર્યસ્ય સઃ અધિગમરુચિઃ ૬ । વિસ્તારઃ=સકલદ્વાદશાંગસ્ય નયૈઃ પર્યાલોચનમ્, તેન પરિવર્ધિતા રુચિર્યસ્ય સ વિસ્તારરુચિઃ ૭ । ક્રિયા=યથાવિધિ સંયમાનુષ્ઠાનં તસ્યાં રુચિર્યસ્ય સ ક્રિયારુચિઃ ૮ । સંક્ષેપઃ=સંગ્રહઃ, તત્ત્વ રુચિર્યસ્ય સ સંક્ષેપરુચિઃ । વિસ્તારાર્થપરિજ્ઞાનાભાવેન સંક્ષેપે રુચિર્ભવતિ ૯ । ધર્માસ્તિકાયે શ્રુતધર્માદૌ વા રુચિર્યસ્ય સ ધર્મરુચિઃ ૧૦ । इह सम्यक्त्वस्य जीवभेदेन कथनं गुणगुणिनोः कथंचिद्भेदोऽस्तीति बोधनार्थम् ।

રુચિ જીવ કે લિયે પૈદા કરાવી જાતી હૈ ઉસકા નામ્ ઉપદેશરુચિ હૈ (૨) સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુકે વચનોં મેં જો રુચિ જીવ કો હોતી હૈ ઉસે આજ્ઞારુચિ કહતે હૈં (૩) । આચારાજ્ઞ આદિ અજ્ઞપ્રવિષ્ટ એવં આવશ્યક, દશ વૈકાલિક આદિ અજ્ઞવાહ્યોં કે દ્વારા તત્ત્વોં મેં જીવ કી જો પ્રીતિ-શ્રદ્ધા કરાઈ જાતી હૈ વહ સૂત્રરુચિ નામકા સમ્યક્ત્વ હૈ (૪) । જિસ પ્રકાર એક હી વીજસે અનેક ફલોંકી ઉત્પત્તિ હુઆ કરતી હૈ ઉસી પ્રકાર જિસ એક વચન સે અનેક પદાર્થોં કી પ્રતીતિ હો ઉસકા નામ વીજ હૈ, ઉસસે જિસ જીવકો તત્ત્વોં મેં રુચિ જાગૃત્ત હોતી હૈ ઉસકા નામ વીજરુચિ હૈ (૫) । વિશિષ્ટ જ્ઞાનકો અધિગમ કહતે હૈં, ઇસકે દ્વારા જિસ જીવકો તત્ત્વોં મેં રુચિ હોતી હૈ ઉસે અધિગમરુચિ કહતે હૈં (૬) । સમ્પૂર્ણ નયોંકે દ્વારા સકલ દ્વાદશાંગ કા પર્યાલોચન કરના, ઇસકા નામ વિસ્તારરુચિ હૈ । ઇસ કે દ્વારા જીવ કી રુચિ તત્ત્વોં મેં પરિવર્ધિત કરાઈ જાતી હૈ (૭) । शास्त्र-

છે તેનું નામ ઉપદેશરૂચિ છે (૨). સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુના વચનોમાં જે રૂચિ જીવની થાય છે તેને આજ્ઞારૂચિ કહે છે (૩). આચારાંગ આદિ અંગપ્રવિષ્ટ એમજ આવશ્યક, દશવૈકાલિક, આદિ અંગબાહ્યો દ્વારા તત્ત્વોમાં જીવની જે પ્રીતિ-શ્રદ્ધા કરાવામાં આવે છે તે સૂત્રરૂચિ નામનું સમ્યક્ત્વ છે (૪). જેવી રીતે એકજ બીજથી અનેક ફલોની ઉત્પત્તિ થાય છે એ પ્રકારે એકજ વચનથી અનેક પદાર્થોની જે પ્રતીતિ થાય તેનું નામ બીજ છે, તેનાથીજે જીવને તત્ત્વોમાં રૂચિ જાગૃત્ત થાય છે તેનું નામ બીજરૂચિ છે (૫). વિશિષ્ટ જ્ઞાનને અધિગમ કહે છે. એના દ્વારાજે જીવને તત્ત્વોમાં રૂચિ થાય છે એને અધિગમરૂચિ કહે છે. (૬) સમ્પૂર્ણ નયોના દ્વારા સકલ દ્વાદશાંગનું પર્યાલોચન કરવું તેનું નામ વિસ્તારરૂચિ છે, એના દ્વારા જીવની રૂચિ તત્ત્વોમાં પરિવર્ધિત કરવામાં આવે

શાયોપશમિકં જઘન્યતઃ સકૃત્, ઉત્કૃષ્ટતસ્ત્વસંખ્યાતવારમ્ । ક્ષાયિકં તુ પ્રાદુર્ભૂતં
સન્ પુનર્ન પ્રતિનિવર્તતે । પ્રાદુર્ભાવાનન્તરમવિચ્છેદેન સર્વદા તિષ્ઠતિ ।

(૩) સમ્યક્ત્વસ્યાઽન્તરકાલઃ ।

ઔપશમિક-સાસ્વાદન-શાયોપશમિકસમ્યક્ત્વાનાં પ્રત્યેકમન્તરકાલો જઘ-
ન્યતોઽન્તર્મુહૂર્તમ્, ઉત્કૃષ્ટતસ્તુ દેશોનાર્દ્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાલઃ । વેદકસ્યાઽન્તરં ન
ભવતિ, તદનન્તરં નિયમતઃ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વોત્પત્તેઃ સંભવાત્ । ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં
સાધનન્તં ચ, તસ્ય પુનર્નિવૃત્ત્યભાવાદન્તરં ન ભવતિ ।

શાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ જઘન્યસે એક વાર ઔર ઉત્કૃષ્ટસે અસંખ્યાત
વાર ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોનેકે વાડ ફિર નિવૃત્ત
નહીં હોતા । વહ તો ઉત્પન્ન હોનેકે વાડ અવિચ્છિન્નરૂપસે સર્વદા રહના હૈ ।

(૩) સમ્યક્ત્વકા અન્તરકાલ

ઔપશમિક, સાસ્વાદન, ઔર ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વમેં સે પ્રત્યેક
કા વિરહકાલ જઘન્ય અંતર્મુહૂર્ત ઔર ઉત્કૃષ્ટ કુછ કમ અર્ધપુદ્ગલપરા-
વર્તનકાલ પ્રમાણ હૈ । વેદક-સમ્યક્ત્વમેં વિરહકાલ સંભવિત નહીં હૈ,
ક્યોં કિ ઇસ સમ્યક્ત્વ કે અનંતર નિયમ સે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકા લાભ
જીવકો હો જાતા હૈ । ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ મેં અંતરકાલ નહીં હૈ, કારણ કિ
ઇસકા સદ્ભાવ હોને પર જીવ કો મુક્તિકા લાભ હો જાતા હૈ, ઇસી લિયે
યહ સમ્યક્ત્વ સાદિ ઔર અનન્ત હૈ । એક વાર સમકિત હો કર ફિર
છૂટ જાને પર ફિર સે ઊસકી પ્રાપ્તિ હોને મેં જિતના સમય લગતા હૈ
ઊસકા નામ વિરહ-કાલ હૈ । વેદક-સમ્યક્ત્વમેં વિરહ-કાલકા અભાવ

ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થયા પછી ફરી નિવૃત્ત થતું નથી તે તો ઉત્પન્ન થયા
પછી અવિચ્છિન્નરૂપથી સર્વદા રહે છે.

(૩) સમ્યક્ત્વનો અંતરકાલ

ઔપશમિક, સાસ્વાદન અને ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ, એ પ્રત્યેકના વિરહ-
કાલ જઘન્ય અંતર્મુહૂર્ત અને ઉત્કૃષ્ટ કાંઈ ઓછું અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાળ
પ્રમાણ છે વેદક સમ્યક્ત્વમા વિરહકાળ સંભવિત નથી, કારણ કે આ સમ્યક્ત્વની
પછી નિયમથી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ હોવને થઈ જાય છે ક્ષાયિક સમ્ય-
ક્ત્વમા અંતરકાલ નથી, કારણ કે એનો સદ્ભાવ થવાથી હોવને મુક્તિનો લાભ
વઈ જાય છે, તેથી આ સમ્યક્ત્વ સાદિ અને અનન્ત છે એક વાર સમ્યક્ત્વ
વડને પછી જ્યારે તે છૂટી જાય છે ત્યારે ફરીથી તેની પ્રાપ્તિ થવામાં બેટલો
સમય લાગે છે તેનું નામ વિરહકાળ છે. વેદક-સમ્યક્ત્વમા વિરહકાળનો અભાવ

(૧) સમ્યક્ત્વસ્થિતિઃ ।

સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિરેકસમયમાત્રં જઘન્યતઃ, ઉત્કર્ષતસ્તુ પડાવલિકાઃ, ઔપશમિકસમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિર્જઘન્યોત્કૃષ્ટા ચાન્તર્મુહૂર્તમ્ । વેદકસમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિર્જઘન્યોત્કૃષ્ટા ચૈકસમયમાત્રમ્ । ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વસ્ય જઘન્યા સ્થિતિરેકસમયમાત્રમ્, ઉત્કૃષ્ટા તુ કિંચિદધિકપટ્પટ્ટિસાગરોપમા, ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિઃ સાદ્યપર્યવસિતકાલરૂપા ।

(૨) સમ્યક્ત્વસ્ય પ્રાદુર્ભાવવ્યવસ્થા ॥

એકભવમાશ્રિત્યૌપશમિકસાસ્વાદનસમ્યક્ત્વે જઘન્યતઃ સકૃદેવ પ્રાદુર્ભવતઃ । ઉત્કૃષ્ટતસ્તુ પશ્ચવારમ્ । વેદકસમ્યક્ત્વં જઘન્યત ઉત્કૃષ્ટતથૈકવારં પ્રાદુર્ભવતિ ।

(૧) સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ ।

સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ જઘન્ય એક સમય માત્ર ઓર ઉત્કૃષ્ટ છઠ્ઠ ૬ આવલિકા પ્રમાણ હૈ, ઔપશમિક ઓર વેદક સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ જઘન્ય ઓર ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહૂર્ત કી હૈ । ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકી જઘન્ય એકસમયમાત્ર ઉત્કૃષ્ટ કુછ અધિક ૬૬ છાસઠ સાગર પ્રમાણ હૈ, ઓર ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ સાદિ અનંત હૈ ।

(૨) સમ્યક્ત્વકી ઉત્પત્તિકી વ્યવસ્થા—

એક ભવકી અપેક્ષા ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ ઓર સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વ જઘન્યસે એક વાર હી ઉત્પન્ન હોતે હૈ ઓર ઉત્કૃષ્ટસે પાંચ વાર । વેદક સમ્યક્ત્વ ઉત્કૃષ્ટસે ઓર જઘન્ય સે એક હી વાર ઉત્પન્ન હોતા હૈ ।

(૧) સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ

સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ જઘન્ય એક સમય માત્ર અને ઉત્કૃષ્ટ છ આવલિકાપ્રમાણ છે. ઔપશમિક અને વેદક સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહૂર્તની છે. ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વની જઘન્ય એકસમયમાત્ર, ઉત્કૃષ્ટ કાંઈ અધિક ૬૬ છાસઠ સાગર પ્રમાણ છે, અને ક્ષાયિક—સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ સાદિ અનંત છે.

(૨) સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિની વ્યવસ્થા

એક ભવની અપેક્ષાએ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ અને સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વ જઘન્યથી એક વાર જ ઉત્પન્ન થાય છે. અને ઉત્કૃષ્ટથી પાંચ વાર. વેદક સમ્યક્ત્વ ઉત્કૃષ્ટથી અને જઘન્યથી એક જ વાર ઉત્પન્ન થાય છે. ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ જઘન્યથી એક વાર અને ઉત્કૃષ્ટથી અસંખ્યાતવાર ઉત્પન્ન થાય છે.

મિથ્યાત્વ હૈ । સમ્યક્ત્વી જીવકે ઇસ્કા અભાવ હૈ ।

સમ્યક્ત્વકે હોને પર શ્રુતશ્રવણ કી અભિલાષા, શ્રુતધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ ઓર ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ, એવં ચતુર્વિધ સંઘ કી વૈયાવૃત્તિ કરનેકા નિયમ જીવકે જાગૃત હોના હૈ । इनमें आगे २ के प्रति पूर्व २ को कारणता है, अर्थात् श्रुतधर्मका अनुराग जीवके तब ही जागृत हो सकेगा जब उसके अन्तरंगमें श्रुतश्रवणकी इच्छा होगी, श्रुतश्रवणेच्छा के बिना श्रुतमें अनुराग नहीं हो सकता, जब सद्गुणोंमें अनुराग है तो यह श्रुतभक्तिरूप कार्य श्रुतश्रवणके बिना नहीं हो सकता, श्रुतश्रवण भी बिना इच्छा के संभवित नहीं । श्रुतधर्मके अनुरागके प्रति श्रुतश्रवण की बाछ्छा कारण है । चारित्रधर्मके प्रति अनुराग भी जीवको तब ही होगा जब उसके अन्तरंगमें श्रुतधर्मका अनुराग होगा । श्रुतानुरागका अभिप्राय यही है कि शास्त्रप्रतिपादित मार्ग पर दृढ़ आस्था । इस मार्ग पर दृढ़ आस्थावाला जीव ही चारित्रधर्मका स्वयं आराधन करनेवाला, अथवा उसके धारक मुनियोंके प्रति अनुरागी बनता है, अनास्थावाला नहीं, अतः चारित्रधर्मके अनुरागका कारण श्रुतानुराग ही है । चारित्र धर्ममें जब तक अनुराग नहीं होगा तब तक यह जीव किसी प्रकार भी चतुर्विध संघ की सेवा करने का नियमकर्ता नहीं हो सकता; अतः उन

અરહ મિથ્યાત્વ છે. સમ્યક્ત્વી એવને એના અભાવ છે

સમ્યક્ત્વના હોવાથી શ્રુતશ્રવણની અભિલાષા, શ્રુતધર્મ પ્રતિઅનુરાગ અને ચારિત્રધર્મ પ્રતિ અનુરાગ એમજ ચતુર્વિધ સંઘની વૈયાવૃત્તિ કરવાનો નિયમ એવને જાગૃત થાય છે. એમાં આગળ ૨ ના પ્રતિ પૂર્વ ૨ નાં કારણતા છે. અર્થાત્ શ્રુતધર્મનો અનુરાગ એવને ત્યારે જ જાગૃત થાય છે, ત્યારે એના અંતરંગમાં શ્રુતશ્રવણની ઇચ્છા થાય છે. શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિના શ્રુતનાં અનુરાગ થઈ જ શકતો નથી. ત્યારે સદ્ગુણોમાં અનુરાગ છે તો એ શ્રુતલક્ષિતરૂપ કાર્ય શ્રુતશ્રવણ વિના નથી થતું. શ્રુતશ્રવણ પણ વગર જ્ઞાએ સંલપિત નથી. શ્રુતધર્મના અનુરાગની પ્રતિ શ્રુતશ્રવણની ઇચ્છા અરહ છે. ચારિત્રધર્મના પ્રતિઅનુરાગ પણ એવને ત્યારે જ થશે ત્યારે એના અંતરંગના શ્રુતધર્મનો અનુરાગ હોય. શ્રુતાનુરાગનો અભિપ્રાય એ છે કે શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ પર દૃઢ અસ્થાવાળા એવ જ ચારિત્રધર્મનું સ્વયં આરાધન કરવાવાળા, અથવા એના ધારક મુનિયોનો પ્રતિ અનુરાગી બને છે, અનાસ્થાવાળા નહિ. માટે ચારિત્ર ધર્મના અનુરાગનું કારણ શ્રુતાનુરાગ જ છે. ચારિત્રધર્મનાં ત્યાં સુધી અનુરાગ નહિ થાય ત્યાં સુધી એ એવ કેઈ પ્રકારે પણ ચતુર્વિધ સંઘની સેવા કરવાનો નિય-

(૪) સમ્યક્ત્વસ્ય ફલમ્—

સમ્યક્ત્વે સતિ-અસદ્ગ્રહઃ=આપ્તવચનવાધિતાર્થેષુ પક્ષપાતો ન ભવતિ । અસદ્ગ્રહં પ્રતિ મિથ્યાત્વોદયસ્ય કારણત્વાત્ સમ્યક્ત્વસ્ય મિથ્યાત્વક્ષયોપશમજન્યત્વેન સમ્યક્ત્વસદ્ભાવકાલે મિથ્યાત્વોદયાભાવાત્ ।

સમ્યક્ત્વે સતિ શ્રુતશ્રવણવાઙ્મણા, શ્રુતચારિત્રધર્મરાગઃ, ચતુર્વિધતીર્થવૈયાવૃત્ત્ય-નિયમશ્ચ ભવતિ । એપામુત્તરોત્તરં પ્રતિ પૂર્વપૂર્વસ્ય હેતુત્વં વોદ્યમ્ ।

હૈ, ક્યોં કિ વેદક-સમ્યક્ત્વ હોને પર ઉસકે બાદ ફિર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, વેદક-સમ્યક્ત્વ નહીં । વેદક-સમ્યક્ત્વકે છૂટને પર યદિ વેદક-સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ ફિર સે હોતી તો વિરહકાલ વહાં સંભવિત હોતા । ઇસ પ્રકાર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકે હોને પર જીવ અપની સ્થિતિ કો પૂર્ણ કર સુક્તિ સ્થાનકા હી સ્વામી બન જાતા હૈ, અતઃ એક વાર ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકે હોને પર ફિર ઉસી જીવકો ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ નહીં કરની પડતી । અતઃ યહાં પર બી વિરહકાલ સંભવિત નહીં ।

(૪) સમ્યક્ત્વકા ફલ—

સમ્યક્ત્વકે હોતે હી જીવ કદાગ્રહસંપન્ન નહીં હોતા હૈ । ઉસકી દષ્ટિ-શ્રદ્ધા આપ્તવચન સે અવાધિત પદાર્થોં મેં અનુરાગવાલી હોતી હૈ, ઇનસે ભિન્ન પદાર્થોં મેં નહીં । ક્યોંકિ કદાગ્રહ કા કારણ મિથ્યાત્વ કા ઉદય બતલાયા હૈ ઓર મિથ્યાત્વ ક્રે ક્ષયોપશમાદિસે સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । સમ્યક્ત્વકે હોને પર મિથ્યાત્વકા અભાવ હો જાતા હૈ । કારણ કે અભાવમેં કાર્ય કા અભાવ સુતરાં સિદ્ધ હી હૈ । કદાગ્રહ કા કારણ

છે; કારણ કે વેદક-સમ્યક્ત્વ થયાં પછી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થાય છે, વેદક-સમ્યક્ત્વ નહિ. વેદક-સમ્યક્ત્વના છુટ્યા પછી જો વેદક-સમ્યક્ત્વની ફરીથી પ્રાપ્તિ થતી હોત તો વિરહકાળ ત્યાં સંભવિત થાત. એ પ્રકારે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ થયા પછી જીવ પોતાની સ્થિતિને પૂર્ણ કરીને સુક્તિસ્થાનનો સ્વામી બની જાય છે. તેથી એક વાર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થતાં તે જ જીવને પછીથી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કરવી પડતી નથી, માટે આ ઠેકાણે પણ વિરહકાળ સંભવિત નથી.

(૬) સમ્યક્ત્વનું ફલ

સમ્યક્ત્વ થવાથી જીવ કદાગ્રહસંપન્ન થતો નથી, એની દષ્ટિ-શ્રદ્ધા આપ્ત વચનથી અવાધિત પદાર્થોમાં જ અનુરાગવાળી થાય છે, એથી ભિન્ન પદાર્થોમાં નહિ. કેમ કે કદાગ્રહનું કારણ મિથ્યાત્વનો ઉદય બતાવ્યો છે, અને મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિથી સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે. સમ્યક્ત્વના હોવાથી મિથ્યાત્વનો અભાવ થઈ જાય છે. કારણના અભાવમા કાર્યનો અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ છે. કદાગ્રહનું

અત્રોચ્યતે—મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાવસરે જ્ઞાનાવરણીયાનન્તાનુબંધિકષાયરૂપ-
 ચારિત્રમોહનીયાદિકર્મણામપિ ક્ષયોપશમો ભવતીતિ કૃત્વા સમ્યક્ત્વે સતિ શ્રુતશ્રવ-
 ણેચ્છાદયો ભવન્તીત્યુચ્યતે । યથા કેવલજ્ઞાનાવરણક્ષયજન્યમપિ કેવલજ્ઞાનં ચારિ-
 ત્રમોહનીયાંશકષાયક્ષયે સત્યેવ ભવતીતિ । યથા વા મિથ્યાત્વક્ષયોપશમલભ્યમપિ
 સમ્યક્ત્વમનન્તાનુબંધિકષાયરૂપચારિત્રમોહનીયોદયે સતિ ન લભ્યતે । ઉક્તશ્ચ—
 ઉપયુક્ત પ્રતીતિ હોતા હૈ । નિષ્કર્ષ યહી હૈ કિ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકો
 સમ્યજ્ઞાન ઔર સમ્યક્ચારિત્રકા હી ફલ માનના ચાહિયે, સમ્ય-
 ક્ત્વ કા નહીં ।

સમાધાન—શઙ્કાકારકી શઙ્કા ઠીક નહીં । કારણ કિ જિસ સમય
 મિથ્યાત્વકા ક્ષયોપશમ હોતા હૈ ઉસ સમય જ્ઞાનાવરણીય ઔર અનન્તા-
 નુબંધિકષાયરૂપ ચારિત્રમોહનીયાદિક કર્મોં કા બી ક્ષયોપશમ હોતા
 હૈ । ઈસી ધ્યેય કો લેકર—‘સમ્યક્ત્વ કે હોને પર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક હોતે
 હૈં’ એસા કહા ગયા હૈ । જૈસે—કેવલજ્ઞાન, કેવલજ્ઞાનાવરણકે ક્ષય સે
 ઉત્પન્ન હોતા હૈ, પરન્તુ જવ તક ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે અંશ—ભેદ-
 સ્વરૂપ કષાયોંકા ક્ષય નહીં હોતા તવ તક કેવલજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિ નહીં
 હોતી, અતઃ કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ ઇન્કે ક્ષય હોને પર હી હોતી હૈ ।
 ઈસી પ્રકાર સમ્યક્ત્વ બી યદ્યપિ મિથ્યાત્વકે ક્ષયોપશમ સે હી હોતા હૈ,
 પરન્તુ જવ તક અનંતાનુબંધિકષાયરૂપ ચારિત્રમોહનીયકા ઉદય વના
 રહતા હૈ તવ તક યહ પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા હૈ ।

માનવુ ઉપયુક્ત પ્રતીતિ થાય છે. નિષ્કર્ષ એ છે કે શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોને સમ્ય-
 જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રનુ જ ઈણ માનવુ જોઈએ, સમ્યક્ત્વનુ નહિ

સમાધાન—શઙ્કાકારની શંકા ઠીક નહિ, કારણ કે જે વખતે મિથ્યાત્વનો
 ક્ષયોપશમ થાય છે તે વખતે જ્ઞાનાવરણીય અને અનંતાનુબંધિકષાયરૂપ ચારિત્ર
 મોહનીયાદિક કર્મોનો પણ ક્ષય થાય છે

એ ધ્યેયને લઈને જ—‘સમ્યક્ત્વના થવાથી શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક થાય છે’—
 એવુ કહેવામા આવ્યુ છે જેવી રીતે કેવળજ્ઞાન કેવળ જ્ઞાનાવરણના ક્ષયથી ઉત્પન્ન
 થાય છે, પરન્તુ ત્યાં સુધી ચારિત્રમોહનીય કર્મના અંશ—ભેદ—સ્વરૂપ કષાયોનો ક્ષય
 નથી થતો ત્યાં સુધી કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ નથી થતી, માટે કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ
 એનો ક્ષય થવાથી જ થાય છે એવી જ રીતે સમ્યક્ત્વ પણ યદ્યપિ મિથ્યાત્વના
 ક્ષયોપશમથી જ થાય છે, પરન્તુ ત્યાં સુધી અનંતાનુબંધિકષાયરૂપ ચારિત્ર
 મોહનીયનો ઉદય જન્યો રહે છે ત્યાં સુધી તે પ્રાપ્ત થતું નથી

નન્વસદ્ગ્રહસ્ય મિથ્યાત્વોદયજન્યત્વેન સમ્યક્ત્વે સતિ તત્ક્ષયોપશમાદસ્તુ તદભાવઃ, કિંતુ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદીનાં જ્ઞાનચારિત્રાંશરૂપત્વેન જ્ઞાનાવરણીયચારિત્રમોહનીયવીર્યાન્તરાયકર્મક્ષયોપશમજન્યત્વાત્ કથં સમ્યક્ત્વફલરૂપત્વં તેષામ્ ? इति चेत्,

કી સેવા આદિ કરનેરૂપ નિયમ કે પ્રતિ ચારિત્રધર્મકા અનુરાગ હી કારણ હોતા હૈ ।

શંકા—માના કિ અસદ્ગ્રહ કે મિથ્યાત્વોદયજન્ય હોને સે મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમ સે ઉસ અસદ્ગ્રહકા અભાવ હો જાતા હૈ, પરન્તુ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વગૈરહ જો જ્ઞાન ઓર ચારિત્રકે અંશરૂપ હૈં, इन्हें સમ્યક્ત્વ કા ફલ કૈસે માના જા સકતા હૈ ? કારણ કિ ઇન્કે રોધક જ્ઞાનાવરણીય, ચારિત્રમોહનીય ઓર વીર્યાન્તર કર્મ હૈં, ઇન્કે ક્ષયોપશમ સે ઉન્કા પ્રાદુર્ભાવ હોતા હૈ, અતઃ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વગૈરહ કો સમ્યક્ત્વકા ફલ ન માનકર જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોંકે ક્ષયોપશમકા હી ફલ માનના ચાહિયો ।

વિશેષાર્થ—શંકાકારકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ શ્રુતશ્રવણેચ્છા મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમાદિસે નહીં હોતી હૈ; કિન્તુ વહ શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમસે હી જીવ કો હોતી હૈ । શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા એક ભેદ હૈ । ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ જીવકા અનુરાગ મી ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમાધીન હૈ, અતઃ ઇસે મી સમ્યક્ત્વ કા ફલ ન માન કર ચારિત્રમોહનીય કે ક્ષયોપશમ કા હી ફલ માનના

મકર્તા નથી થતો. માટે એની સેવા કરવારૂપ નિયમની પ્રતિ ચારિત્રધર્મનો અનુરાગ જ કારણ રૂપ થાય છે.

શંકા—માન્યું કે અસદ્ગ્રહ મિથ્યાત્વોદયજન્ય હોવાથી મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમથી એ અસદ્ગ્રહનો અભાવ થઈ જાય છે. પરંતુ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિગેરે જે જ્ઞાન અને ચારિત્રના અંશરૂપ છે એને સમ્યક્ત્વનું ફળ કેવી રીતે માનવામાં આવે ? કારણ કે એના રોધક જ્ઞાનાવરણીય ચારિત્રમોહનીય અને વીર્યાન્તરાય કર્મ છે. એના ક્ષયોપશમથી એનો પ્રાદુર્ભાવ થાય છે. માટે શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિગેરેને સમ્યક્ત્વનું ફળ ન માનીને જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના ક્ષયોપશમનું જ ફળ માનવું જોઈએ.

વિશેષાર્થ—શંકાકારનો એ અભિપ્રાય છે કે:—શ્રુતશ્રવણેચ્છા મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિથી નથી થતી કિન્તુ તે શ્રુત જીવને જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી જ થાય છે. શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો એક ભેદ છે. ચારિત્રધર્મની પ્રતિ જીવનો અનુરાગ પણ ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમાધીન છે. માટે એને સમ્યક્ત્વનું ફળ ન માનીને ચારિત્રમોહનીયના ક્ષયોપશમનું જ ફળ

“ પદમિલ્લુયાણ ઉદયે નિયમા, સંજોયણા કસાયાણં ।

સમ્મદંસણલંભં, ભવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥

હાયા — “ પ્રાથમિકાનામુદયે નિયમાત્ સંયોજના કષાયાણામ્ ।

સમ્યગ્દર્શનલાભં, ભવસિદ્ધિકા અપિ ન લભન્તે ॥ ૧ ॥

નતુ વૈયાવૃત્ત્યનિયમસ્ય તપઃપ્રભેદત્વેન ચારિત્રાંશરૂપતાત્ સમ્યક્ત્વે સતિ
ચાવશ્યંભાવાદવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિગુણસ્થાનં વિલુપ્યેત ? ૨ ૩ ૪ ૫ ૬ ૭ ૮ ૯ ૧૦ ૧૧ ૧૨ ૧૩ ૧૪ ૧૫ ૧૬ ૧૭ ૧૮ ૧૯ ૨૦ ૨૧ ૨૨ ૨૩ ૨૪ ૨૫ ૨૬ ૨૭ ૨૮ ૨૯ ૩૦ ૩૧ ૩૨ ૩૩ ૩૪ ૩૫ ૩૬ ૩૭ ૩૮ ૩૯ ૪૦ ૪૧ ૪૨ ૪૩ ૪૪ ૪૫ ૪૬ ૪૭ ૪૮ ૪૯ ૫૦ ૫૧ ૫૨ ૫૩ ૫૪ ૫૫ ૫૬ ૫૭ ૫૮ ૫૯ ૬૦ ૬૧ ૬૨ ૬૩ ૬૪ ૬૫ ૬૬ ૬૭ ૬૮ ૬૯ ૭૦ ૭૧ ૭૨ ૭૩ ૭૪ ૭૫ ૭૬ ૭૭ ૭૮ ૭૯ ૮૦ ૮૧ ૮૨ ૮૩ ૮૪ ૮૫ ૮૬ ૮૭ ૮૮ ૮૯ ૯૦ ૯૧ ૯૨ ૯૩ ૯૪ ૯૫ ૯૬ ૯૭ ૯૮ ૯૯ ૧૦૦

કા ક્ષયોપશમ નહીં હોતા, તય તક મિથ્યાત્વકા ક્ષયોપશમ નહીં હો
સકતા । इसी लिये मिथ्यात्वके क्षयोपशमके अवसर में अनंतानुबंधी
कषायका क्षयोपशम अपेक्षणीय होता है । निष्कर्ष-श्रुतश्रवणेच्छादिकों
का अव्यवहित-मुख्य-कारण सम्यग्दर्शन ही है, अतः ये उसके ही फल
स्वरूप से यहां प्रकट किये गये हैं । कहा भी है—

“ પદમિલ્લુયાણ ઉદયે, નિયમા સંજોયણા કસાયાણં ।

સમ્મદંસણલંભં, ભવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥ ૧ ॥ ૨ ॥ ૩ ॥ ૪ ॥ ૫ ॥ ૬ ॥ ૭ ॥ ૮ ॥ ૯ ॥ ૧૦ ॥ ૧૧ ॥ ૧૨ ॥ ૧૩ ॥ ૧૪ ॥ ૧૫ ॥ ૧૬ ॥ ૧૭ ॥ ૧૮ ॥ ૧૯ ॥ ૨૦ ॥ ૨૧ ॥ ૨૨ ॥ ૨૩ ॥ ૨૪ ॥ ૨૫ ॥ ૨૬ ॥ ૨૭ ॥ ૨૮ ॥ ૨૯ ॥ ૩૦ ॥ ૩૧ ॥ ૩૨ ॥ ૩૩ ॥ ૩૪ ॥ ૩૫ ॥ ૩૬ ॥ ૩૭ ॥ ૩૮ ॥ ૩૯ ॥ ૪૦ ॥ ૪૧ ॥ ૪૨ ॥ ૪૩ ॥ ૪૪ ॥ ૪૫ ॥ ૪૬ ॥ ૪૭ ॥ ૪૮ ॥ ૪૯ ॥ ૫૦ ॥ ૫૧ ॥ ૫૨ ॥ ૫૩ ॥ ૫૪ ॥ ૫૫ ॥ ૫૬ ॥ ૫૭ ॥ ૫૮ ॥ ૫૯ ॥ ૬૦ ॥ ૬૧ ॥ ૬૨ ॥ ૬૩ ॥ ૬૪ ॥ ૬૫ ॥ ૬૬ ॥ ૬૭ ॥ ૬૮ ॥ ૬૯ ॥ ૭૦ ॥ ૭૧ ॥ ૭૨ ॥ ૭૩ ॥ ૭૪ ॥ ૭૫ ॥ ૭૬ ॥ ૭૭ ॥ ૭૮ ॥ ૭૯ ॥ ૮૦ ॥ ૮૧ ॥ ૮૨ ॥ ૮૩ ॥ ૮૪ ॥ ૮૫ ॥ ૮૬ ॥ ૮૭ ॥ ૮૮ ॥ ૮૯ ॥ ૯૦ ॥ ૯૧ ॥ ૯૨ ॥ ૯૩ ॥ ૯૪ ॥ ૯૫ ॥ ૯૬ ॥ ૯૭ ॥ ૯૮ ॥ ૯૯ ॥ ૧૦૦

શકા—वैयावृत्यनियम को आपने सम्यक्त्व का फल कैसे कह
दिया ? कारण कि वह तो अंतरंग चारित्रिका एक भेद है । यदि इस
वैयावृत्यनियमों का सम्यक्त्व के होने पर अवश्यंभाव माना जावे तो
फिर अद्विरतसम्यग्दृष्टि नामका चतुर्थ गुणस्थान ही नहीं बन सकता,
कारण कि इस अवस्था में भी आंशिक रूपसे चारित्रिका सद्भाव इस
मान्यता से सिद्ध हो जाता है।

એથી મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમના અવસરમાં અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષયો-
પશમ અપેક્ષણીય થાય છે નિષ્કર્ષ-શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનું અવ્યવહિત-મુખ્ય-કારણ
સમ્યગ્દર્શન જ છે, માટે એ એના જ ફલસ્વરૂપથી અહીંયા પ્રગટ કરવામાં
આવેલ છે કહ્યું પણ છે—

“ પદમિલ્લુયાણ ઉદયે, નિયમા સંજોયણા કસાયાણં ।

સમ્મદંસણલંભં, ભવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥ ૧ ॥ ૨ ॥ ૩ ॥ ૪ ॥ ૫ ॥ ૬ ॥ ૭ ॥ ૮ ॥ ૯ ॥ ૧૦ ॥ ૧૧ ॥ ૧૨ ॥ ૧૩ ॥ ૧૪ ॥ ૧૫ ॥ ૧૬ ॥ ૧૭ ॥ ૧૮ ॥ ૧૯ ॥ ૨૦ ॥ ૨૧ ॥ ૨૨ ॥ ૨૩ ॥ ૨૪ ॥ ૨૫ ॥ ૨૬ ॥ ૨૭ ॥ ૨૮ ॥ ૨૯ ॥ ૩૦ ॥ ૩૧ ॥ ૩૨ ॥ ૩૩ ॥ ૩૪ ॥ ૩૫ ॥ ૩૬ ॥ ૩૭ ॥ ૩૮ ॥ ૩૯ ॥ ૪૦ ॥ ૪૧ ॥ ૪૨ ॥ ૪૩ ॥ ૪૪ ॥ ૪૫ ॥ ૪૬ ॥ ૪૭ ॥ ૪૮ ॥ ૪૯ ॥ ૫૦ ॥ ૫૧ ॥ ૫૨ ॥ ૫૩ ॥ ૫૪ ॥ ૫૫ ॥ ૫૬ ॥ ૫૭ ॥ ૫૮ ॥ ૫૯ ॥ ૬૦ ॥ ૬૧ ॥ ૬૨ ॥ ૬૩ ॥ ૬૪ ॥ ૬૫ ॥ ૬૬ ॥ ૬૭ ॥ ૬૮ ॥ ૬૯ ॥ ૭૦ ॥ ૭૧ ॥ ૭૨ ॥ ૭૩ ॥ ૭૪ ॥ ૭૫ ॥ ૭૬ ॥ ૭૭ ॥ ૭૮ ॥ ૭૯ ॥ ૮૦ ॥ ૮૧ ॥ ૮૨ ॥ ૮૩ ॥ ૮૪ ॥ ૮૫ ॥ ૮૬ ॥ ૮૭ ॥ ૮૮ ॥ ૮૯ ॥ ૯૦ ॥ ૯૧ ॥ ૯૨ ॥ ૯૩ ॥ ૯૪ ॥ ૯૫ ॥ ૯૬ ॥ ૯૭ ॥ ૯૮ ॥ ૯૯ ॥ ૧૦૦

શકા—वैयावृत्य नियमने आपने सम्यक्त्वનું ફળ કેવી રીતે કહ્યું, કારણ
કે તે તો અંતરંગ ચારિત્રનો એક ભેદ છે. યદિ સમ્યક્ત્વ થવાથી એનો અવ-
શ્યંભાવ માનવામાં આવે તો પછી અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ નામનું ચતુર્થ ગુણસ્થાન
બની શકતું નથી, કારણ કે આ અવસ્થામાં પણ આશિકરૂપથી ચારિત્રનો સદ્ભાવ
આ માન્યતાથી સિદ્ધ થાય છે.

વિશેષાર્થ—કારણ દો પ્રકારકે હુઆ કરતે હૈ—એક સંનિકટ-કારણ દૂસરા વ્યવહિત-કારણ, સંનિકટ-કારણ કો મુખ્ય કારણ ઔર વ્યવહિત કારણ કો ગૌણ કારણ મી કહતે હૈ । પ્રકૃતમેં શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા મુખ્ય કારણ સમ્યગ્દર્શન હી હૈ, ક્યોં કિ વિના સમ્યગ્દર્શન કે इनका सद्भाव नहीं हो सकता, सम्यग्दर्शन के होने पर ही ये होते हैं, इसी लिये ये सम्यग्दर्शन के फलरूप से कहे गये हैं । “ एक कार्य के अनेक कारण भी होते हैं, परन्तु जो मुख्य होता है, वही प्रधान माना जाता है । ” इस नीतिके अनुसार भले ही श्रुतश्रवणेच्छादिकों का कारण ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का क्षयोपशम भी हो, परन्तु ये सब व्यवहित कारण हैं । दृष्टान्त के लिये—केवलज्ञानकी प्राप्ति का मुख्य कारण केवल ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय ही है, परन्तु जब तक मोहनीय कर्म का क्षय नहीं होता, तब तक केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय नहीं हो सकता ।

“ खीणमोहस्सणं अरहओ तओ कम्मसा जुगवं खिज्जंति, तं जहा-नाणावरणिज्जं, दंसणावरणिज्जं, अंतराइयं ” (स्था. स्था. ૩ ૩ ૪)

यही बात इस सूत्रमें प्रगट की गई है । इसी तरह सમ્યગ્દર્શન भी मिथ्यात्व के क्षयोपशम से होता है, परन्तु जब तक अनंतानुबंधी कषाय

વિશેષાર્થ—કારણ બે પ્રકારે થયા કરે છે—એક સંનિકટ-કારણ, બીજું વ્યવહિત-કારણ. સંનિકટ-કારણને મુખ્ય કારણ અને વ્યવહિત કારણને ગૌણ કારણ પણ કહે છે. પ્રકૃતમાં શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનું મુખ્ય કારણ સમ્યગ્દર્શન છે, કારણ કે સમ્યગ્દર્શન વિના તેનો સદ્ભાવ નથી થતો. સમ્યગ્દર્શનના થવાથી તે થાય છે, તેથી તે સમ્યગ્દર્શનના ફળરૂપથી કહેવામાં આવે છે. “ એક કાર્યના અનેક કારણો પણ થાય છે પરંતુ જે મુખ્ય થાય છે તે જ પ્રધાન માનવામાં આવે છે ” આ નીતિ-અનુસાર ભલે શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનું કારણ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોનો ક્ષયોપશમ પણ હોય, પરંતુ એ બધા વ્યવહિત કારણ છે. દૃષ્ટાન્તને માટે—કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિનું મુખ્ય કારણ કેવળજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષય જ છે, પરંતુ જ્યાં સુધી મોહનીયકર્મનો ક્ષય નથી થતો ત્યાં સુધી કેવળજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષય નથી થતો.

“ खीणमोहस्स-णं अरहओ तओ कम्मसा जुगवं खिज्जंति, तं जहा-नाणा-वरणिज्जं, दंसणावरणिज्ज अंतराइयं (स्था. स्था. ૩ ૩ ૪)

આ વાત આ સૂત્રથી પ્રગટ કરી છે. એ પ્રકારે સમ્યગ્દર્શન પણ મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમથી થાય છે, પરંતુ જ્યાંસુધી અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષયોપશમ નથી થતો ત્યાં સુધી મિથ્યાત્વનો ક્ષયોપશમ નથી થતો.

નનૂપશાન્તમોહાદીનાં સમ્યક્ત્વે સત્યપિ કૃતકૃત્યતયા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદયો ન ભવન્તિ, તથા ચ કાર્યકારણભાવનિયામકાન્વયવ્યતિરેકવિરહાત્ તેષાં સમ્યક્ત્વ-સમ્યગ્દષ્ટિ કહલાતા હૈ । અલ્પતમ ચારિત્રકે સદ્ભાવસે યહ ચારિત્રરૂપસે વિવક્ષિત નહીં હો સકતા હૈ । જૈસે-સંમૂર્ચ્છજન્મસે ઉત્પન્ન હુએ જીવ અત્યન્ત સામાન્ય સંજ્ઞાકા સદ્ભાવ રહને પર મી વિશિષ્ટ સંજ્ઞાકે અભાવ હોને સે અસંજી હી કહે જાતે હૈં । હાં, મહાવ્રતાદિકરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર યદિ કોઈ હોતા તો યહ વ્રતી કહલાતા । ક્યોં કિ-સમસ્ત મહાવ્રતરૂપી ચારિત્રકે સદ્ભાવ મેં હી વ્રતિત્વ સ્વીકાર કિયા જાતા હૈ । ઇસી વસ્તુ કો ટીકાકાર કહતે હૈં--

“વિરતત્વં હિ મહાવ્રતાદિરૂપાનલ્પચારિત્રસદ્ભાવ એવ સ્વીક્રિયતે” ઇતિ ।

ટીક હૈ; જૈસે-માત્ર એક રૂપયા કે રહને પર કોઈ ધની નહીં માના જાતા હૈ ?, જૈસે એક હી ગાય કે અસ્તિત્વમેં કોઈ ગોપાલ નહીં કહા જાના હૈ, ઓર જૈસે એક ગાંઠ સોંઠકે રાખને સે કોઈ પંસારી નહીં હોતા હૈ, ડસી પ્રકાર ઇસ અલ્પતમ આંશિક ચારિત્ર કે અસ્તિત્વ સે મી સમ્યગ્દષ્ટિ (અવિરતદશાસંપન્ન સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ) ચારિત્રી નહીં બન સકતા ।

શઙ્કા—ઉપશાન્તમોહવાલે જીવોં કે સમ્યક્ત્વકે હોને પર મી શ્રુત-શ્રવણેચ્છાદિક નહીં હોતે હૈં, કારણ કિ વે કૃતકૃત્ય હો ચુકે હૈં । ઇસ

તેથી આ અવિરતસમ્યગ્દષ્ટિ કહેવાય છે અલ્પતમ ચારિત્રના સદ્ભાવથી એ ચારિત્રરૂપથી વિવક્ષિત નથી થઈ શકતું. જેમ સંમૂર્ચ્છજન્મથી ઉત્પન્ન થયેલ એવ અત્યન્ત સામાન્ય સંજ્ઞાનો સદ્ભાવ હોવા છતાં પણ વિશિષ્ટ સંજ્ઞાનો અભાવ હોવાથી અસંજી કહેવાય છે. હાં, મહાવ્રતાદિકરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર યદિ કોઈ હોત તો તે વ્રતી કહેવાત ? કારણ કે-સમસ્ત મહાવ્રતરૂપી ચારિત્રના સદ્ભાવમાં જ વ્રતિત્વ સ્વીકાર કરવામાં આવે છે, એ જ વસ્તુને ટીકાકાર કહે છે --

“વિરતત્વં હિ મહાવ્રતાદિરૂપાનલ્પચારિત્રસદ્ભાવ એવ સ્વીક્રિયતે” ઇતિ

ટીક પણ છે, જેમ શકત એક રૂપિયાના રહેવાથી કોઈ ધનવાન નથી કહેવાતો, જેમ એક ગાય રહેવાથી કોઈ ગોપાલ નથી કહેવાતો, અને જેમ સુઠની એક ગાંઠ રાખવાથી કોઈ ગાંધી નથી થતો, તે પ્રકારે આ અલ્પતમ આંશિક ચારિત્રના અસ્તિત્વથી પણ સમ્યગ્દષ્ટિ (અવિરતદશાસંપન્ન સમ્યગ્દષ્ટિ એવ) ચારિત્રી બની શકતો નથી.

શઙ્કા—ઉપશાન્તમોહવાળા એવાને સમ્યક્ત્વ હોવા છતાં પણ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક નથી થતા, કારણ કે તે કૃતકૃત્ય થયેલ છે, તેથી કાર્યકારણભાવનુ નિયામક

वैयावृत्यनियमरूपचारित्रस्याल्पतमत्वेन चारित्रतया तद्विवक्षाया अभावात् । यथा-संमूर्च्छनजानां संज्ञासामान्यसत्त्वेऽपि विशिष्टसंज्ञाया अभावादसंज्ञित्वमङ्गीकृतम् । विरतत्वं हि महाव्रतादिरूपानल्पचारित्रसद्भाव एव स्वीक्रियते । यथा-एकरूप्यकमात्रधनेन धनवानयमिति न व्यपदिश्यते, यथा वा नाप्येकया गवा गोमान् ; यथा वा एकेनैव शुण्ठीग्रन्थिना 'पंसारी' ति-भाषापदव्यपदेश्यो वणिग् न भवतीति ।

शङ्काकार की शङ्का का खुलासा इस प्रकार है-चतुर्थगुणस्थानवर्ती जीवके चारित्रका सद्भाव नहीं माना गया है, कारण कि वह अविरत-दशासंपन्न है । उसके केवल एक सम्यग्दर्शनरूपी ज्योतिका प्रादुर्भाव है, चारित्र का नहीं । चारित्रका सद्भाव पंचमगुणस्थान से प्रारंभ होता है । अब यदि वैयावृत्यनियम को सम्यग्दर्शन का फल माना जावेगा तो सम्यग्दर्शन के होने पर इसका सद्भाव अवश्य मानना ही पड़ेगा । ऐसी दशा में चतुर्थगुणस्थानवर्ती जीवके भी आंशिकरूप से चारित्र का सद्भाव सिद्ध हो जाता है, तब वह अविरत न रह कर विरत ही सिद्ध हुआ ।

समाधान—वैयावृत्यनियम चारित्र का एक भेद है, परन्तु वह पूर्ण चारित्र नहीं है, आंशिक चारित्र ही है, और यह यहां पर बहुत ही अल्प दशामें है, इस लिये उसकी चारित्ररूप से यहां विवक्षा नहीं है । महाव्रतादिरूप विशिष्ट चारित्र ही चारित्ररूपसे विवक्षित होते हैं, वे यहां पर नहीं हैं; अतः सम्यग्दर्शनका अस्तित्व होने पर भी इस दशामें इस प्रकारका कोई भी चारित्र यहां पर नहीं है । इसी लिये यह अविरत

शङ्काकारनी शङ्कानो खुलासा आ प्रकारे छे:—चतुर्थगुणस्थानवर्ती ज्वने चारित्रनो सद्भाव मानवामां नथी आव्यो, कारण के ते अविरतदशासंपन्न छे. तेने इक्षत ओक सम्यग्दर्शनरूपी ज्योतिनो प्रादुर्भाव छे, चारित्रनो नहि. चारित्रनो सद्भाव पंचमगुणस्थानथी प्रारंभ थाय छे. हुवे जे वैयावृत्यनियमने सम्यग्दर्शननुं इण मानवामां आवे तो सम्यग्दर्शनना थवाथी जेनो सद्भाव अवश्य मानवो पडे. आवी दशामां चतुर्थगुणस्थानवर्ती ज्वने पणु आंशिकरूपथी चारित्रनो सद्भाव सिद्ध थाय छे, त्यारे जे अविरति न रहीने विरत न सिद्ध थाय छे.

समाधान—वैयावृत्यनियम चारित्रनो ओक भेद छे, परन्तु ते पूर्ण चारित्र नथी, आंशिक चारित्र छे, अने ते अर्द्धीया धणो न अल्प दशामां छे, जेथी जेना चारित्ररूपथी आ ठेकाणु विवक्षा नथी. महाव्रतादिरूप विशिष्ट चारित्र न चारित्ररूपथी विवक्षित थाय छे, ते आ ठेकाणु नथी, भाटे सम्यग्दर्शननुं अस्तित्व डोवा छतां पणु आ दशामां आ प्रकारनुं केछ पणु चारित्र आ ठेकाणु नथी,

ભાવતો વ્રતાઙ્ગીકરણમપિ સમ્યક્ત્વસ્ય ફલં ભવતિ, પરન્તુ સમ્યક્ત્વે સતિ કદાચિત્ તદ્ ભવતિ, કદાચિન્ન । યદ્યપિ ગ્રન્થિભેદાદેવ સમ્યક્ત્વમુદ્ભવતિ સમ્યક્ત્વ-વાંશ્ચ વ્રતાઙ્ગીકરણમેવોપાદેયતરં વિજાનાતિ; તથાપિ યાવત્યાં કર્મસ્થિતૌ સત્યાં સમ્યક્ત્વલાભો ભવતિ તાવત્યામેવ વ્રતાઙ્ગીકરણં ન સંભવતિ । વ્રતાઙ્ગીકરણં પ્રતિ ચારિત્રમોહનીયકર્મક્ષયોપશમસ્ય સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિકરણકર્મક્ષયોપશમાપેક્ષયાઽધિકત-રસ્ય કારણત્વાત્ ।

और श्रुतश्रवणेच्छादिकों में परस्पर कार्यकारण संबंध सुघटित हो जाता है । अथवा—सम्यग्दर्शन और श्रुतश्रवणेच्छादिकों में जो कार्यकारण भाव संबंध कहा गया है वह श्रावक-अवस्था में होनेवाले सम्यग्दर्शनकी अपेक्षा से समझ लेना चाहिये । श्रावक-अवस्था में विद्यमान सम्यक्त्व श्रुतश्रवणेच्छादिकों का जनक वहां पर होता है ।

સદ્ભાવનાપૂર્વક વ્રતાદિકોં કા અંગીકાર કરના મી સમ્યક્ત્વ કા ફલ હૈ । યહાં ટીકા મેં જો “અપિ” શબ્દ દિયા ગયા હૈ ઉસકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ સમ્યક્ત્વ કે હોને પર વ્રતાદિકોં કા આચરણ કમી હોતા મી હૈ ઓર કમી નહીં મી હોતા । યહ નિયમ નહીં કિ સમ્યક્ત્વ કે હોને પર વ્રતાદિક અનુષ્ઠાનોં કા સદ્ભાવ જીવોં કે હોવે હી । યદ્યપિ રાગદ્વેષકી પ્રબલ ગ્રન્થિ કે ભેદ સે હી સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઓર સમ્યક્ત્વી જીવ વ્રતા-દિક અનુષ્ઠાનોં કા અંગીકાર કરના શ્રેયસ્કર માનતા હૈ, પરન્તુ જિતની કર્મ કી સ્થિતિ રહને પર સમ્યક્ત્વકા લાભ હોતા હૈ ઉતની સ્થિતિમેં વ્રત

સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોમાં પરસ્પર કાર્યકારણ સંબંધ સુઘટિત થઈ જાય છે અથવા—સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોમાં જે કાર્યકારણભાવ સંબંધ કહેવામાં આવ્યો છે તે શ્રાવક-અવસ્થામાં જનવાવાળા સમ્યગ્દર્શનની અપેક્ષાથી સમજી લેવું જોઈએ શ્રાવક-અવસ્થામાં વિદ્યમાન સમ્યક્ત્વ શ્રુતશ્રવ-ણેચ્છાદિકોનો ઉત્પાદક ત્યાં અવશ્ય થાય છે

સદ્ભાવનાપૂર્વક વ્રતાદિકોનું અંગીકાર કરવું તે પણ સમ્યક્ત્વનું ફળ છે. અહીંઆ ટીકામાં જે “અપિ” શબ્દ આવ્યો છે એનો અભિપ્રાય એ છે કે સમ્યક્ત્વના થવાથી વ્રતાદિકોનું આચરણ કોઈ વખત થાય પણ છે અને કોઈ વખત નથી પણ થતું. એ નિયમ નથી કે સમ્યક્ત્વના થવાથી વ્રતાદિક અનુષ્ઠાનોનો સદ્ભાવ જીવોને થાય જ કદાચ રાગદ્વેષની પ્રબલ ગ્રન્થિના ભેદથી જ સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે, અને સમ્યક્ત્વી જીવ વ્રતાદિક અનુષ્ઠાનોનું અંગીકાર કરવું શ્રેયસ્કર માને છે, પરન્તુ જેટલી કર્મની સ્થિતિ રહેવાથી સમ્યક્ત્વનો

ફલત્વ ન સંભવતીતિ ચેત્, મૈવમ્, શ્રુતશ્રવણેચ્છાદીનાં મોહોપશાન્તિફલકત્વેન ફલરૂપેણ તેષ્વપિ શ્રુતશ્રવણવાઙ્છાદિસદ્ભાવાત્, યદ્વા-શ્રાવકાવસ્થાયાં યત્ સમ્યક્ત્વં તદાશ્રિત્ય શ્રુતશ્રવણેચ્છાદયો ભવન્તીતિ વિવક્ષયા તેષાં સમ્યક્ત્વફલત્વં સંભવત્યેવેતિ ।

લિયે કાર્યકારણભાવકે નિયામક અન્વય ઔર વ્યતિરેકકા વિઘટન હોનેસે સમ્યક્ત્વ ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં પરસ્પરમેં કાર્યકારણભાવ નહીં બન સકતા ।

સમાધાન—શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા મોહોપશાંતિ ફલવાલે હોનેસે ફલરૂપસે વહાં પર સદ્ભાવ હૈ ।

વિશેષાર્થ—અમી પ્રતિવાદીને જો સમ્યગ્દર્શન ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા યહાં પર કાર્યકારણભાવ, અન્વય વ્યતિરેક કે ન ઘટનેસે નહીં સ્વીકાર કિયા થા ઉસકા સમાધાન કરતે હુએ આચાર્ય મહારાજ કહતે હૈં કિ—હે શિષ્ય ! ઉપશાન્ત મોહવાલે જીવોંમેં મી શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા સદ્ભાવ હૈ । યદિ ઇનકા યહાં પર સદ્ભાવ ન માના જાવે તો ઇન જીવોંકી ઉપશાન્તતા હુઈ હૈ વહ ઘટિત નહીં હો સકતી । મોહકી ઉપશાન્તતા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા ફલ હૈ, ઔર શ્રુતશ્રવણાદિક સમ્યગ્દર્શનકે ફલ સ્વરૂપ હૈં, ઇતાવતા વે નિષ્ફલ હોં યહ વાત નહીં; કારણ કિ ફલ મી તો સ્વયં ફલવાન હુઆ કરતે હૈં, અતઃ ઉપશાન્ત મોહવાલે જીવોંમેં વિદ્યમાન સમ્યગ્દર્શન સફલ હૈ; નિષ્ફલ નહીં, ઇસ લિયે સમ્યગ્દર્શન

અન્વય અને વ્યતિરેકનું વિઘટન હોવાથી સમ્યક્ત્વ અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોમાં પરસ્પરમાં કાર્યકારણભાવ બની શકતો નથી.

સમાધાન—શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનો મોહોપશાંતિ ફળવાળા હોવાથી ફળરૂપથી ત્યાં પણ સદ્ભાવ છે.

વિશેષાર્થ:—અત્યારે પ્રતિવાદીએ જે સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોના આ ઠેકાણે કાર્યકારણ-ભાવ અન્વયવ્યતિરેકના નહિ ઘટવાથી સ્વીકાર કરેલ નથી, એનું સમાધાન કરતાં આચાર્ય મહારાજ કહે છે કે-ભાઈ ! ઉપશાન્તમોહવાળા જીવોમાં પણ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનો સદ્ભાવ છે. જે તેનો ત્યાં સદ્ભાવ ન માનવામાં આવે તો આ જીવોના મોહની જે ઉપશાન્તતા થઈ છે તે ઘટિત થતી નથી. મોહની ઉપશાન્તતા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનું ફળ છે, અને શ્રુતશ્રવણાદિક સમ્યગ્દર્શનનું ફળસ્વરૂપ છે, તેથી તે સમ્યગ્દર્શન નિષ્ફળ થાય એવી કોઈ વાત નહિ, કારણ કે ફળ પણ સ્વયં ફળવાન થયા કરે છે, તેથી ઉપશાન્ત-મોહવાળા જીવોમાં વિદ્યમાન સમ્યગ્દર્શન સફળ થાય છે; નિષ્ફળ નહિ. આ માટે

ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ હૈં વહ જવ અન્તઃકોટાકોટીસાગર પ્રમાણ રહ જાની હૈં તવ હીં જીવ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિ કરને કે યોગ્ય હોતા હૈં । જૈસે મોહનીય કર્મ કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ (૭૦) સત્તર કોડાકોડી સાગર પ્રમાણ હૈં । ઇસ સ્થિતિકો યથાપ્રવૃત્તિકરણ પરિણામ સે જીવ ક્ષય કરતા હુઆ જવ પલ્લવકે અસંખ્યાતવે ભાગ ન્યૂન-કમ એક કોડાકોડી સાગર કી કર લેતા હૈં તવ રાગ-દ્વેષરૂપી પ્રવલ ગ્રન્થિ કે ભેદસે સમ્યક્ત્વકો પ્રાપ્ત કરતા હૈં । આયુકર્મકો છોડ કર ઇસી પ્રકાર શેષ કર્મોં કી સ્થિતિ ભી અન્તઃકોટાકોટીસાગરપ્રમાણ રહ જાની ચાહિયે । કર્મોં કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ મેં ઔર જઘન્ય સ્થિતિમેં જીવ કે સમ્યક્ત્વ કી ઉત્પત્તિ નહીં હોતી, યહ નિયમ હૈં । સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ આયુકર્મ કો છોડ કર શેષ મોહનીયાદિ (૭) સાત કર્મોં કી અન્તઃ કોડાકોડ સાગરકી સ્થિતિ રહ જાને પર હીં હોની હૈં । ઇસકે વાદ અવશિષ્ટ કર્મસ્થિતિ જવ પલ્લવોપમપૃથક્ત્વ પ્રમાણ ક્ષીણ હો જાતી હૈં ઉસ સમય જીવ ભાવકી અપેક્ષા અણુવ્રતરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ કરતા હૈં । ઇસ કર્મસ્થિતિમેં ઇતના જવ પરિવર્તન હો જાતા હૈં તવ હીં ભાવસે વ્રતપ્રાપ્તિ હુઆ કરતી હૈં । ઇસસે યહ સાબિત હોતા હૈં કે ‘સમ્યગ્દર્શનકે હોને પર જીવ ભાવસે વ્રત-ચારિત્ર પ્રાપ્ત કર હીં લેતા હૈં’ યહ નિયમ નહીં હૈં । દીર્ઘતર-ઉત્કૃષ્ટ કર્મસ્થિતિમેં દ્રવ્ય સે હીં (ભાવશૂન્ય)

મોહનીયાદિ કર્મોંની જેટલી જેટલી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ છે તે જ્યારે અન્ત કોટાકોટી સાગર પ્રમાણ રહી જાય છે ત્યારે જ જીવ સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કરવાને યોગ્ય થાય છે. જેમ મોહનીય કર્મની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ (૭૦) સિત્તર કોડાકોડી સાગર પ્રમાણ છે. આ સ્થિતિનો યથાપ્રવૃત્તિકરણ પરિણામથી જીવ ક્ષય કરીને જ્યારે પલ્લવના અસંખ્યાતમા ભાગ ન્યૂન કોડાકોડી સાગરની કરે છે ત્યારે રાગદ્વેષરૂપી પ્રવલ ગ્રન્થિના ભેદથી સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે, આયુકર્મને છોડીને આ જ પ્રકારે શેષ કર્મોંની સ્થિતિ પણ અન્ત-કોટાકોટીસાગરપ્રમાણ રહેવી જોઈએ. કર્મોંની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમા અને જઘન્ય સ્થિતિમા સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિ જીવને નથી થતી, એ નિયમ છે. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ આયુકર્મને છોડીને શેષ મોહનીયાદિ (૭) સાત કર્મોંની એક કોડાકોડ સાગરની સ્થિતિ રહેવાથી જ થાય છે. ત્યાર બાદ અવશિષ્ટ કર્મસ્થિતિ જ્યારે પલ્લવોપમપૃથક્ત્વપ્રમાણ ક્ષીણ થઈ જાય છે તે વખતે જીવ, ભાવની અપેક્ષા અણુવ્રતરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ કરે છે. આ પ્રકારે કર્મસ્થિતિમા એટલું જ્યારે પરિવર્તન થાય છે ત્યારે ભાવથી વ્રતપ્રાપ્તિ થાય છે એથી એ સાબિત થાય છે કે ‘સમ્યગ્દર્શનના થવાથી જીવ, ભાવથી વ્રત-ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરી જ લે છે’ એ નિયમ નથી, દીર્ઘતર-ઉત્કૃષ્ટ કર્મસ્થિતિમાં દ્રવ્ય-

અત્રેદમવગન્તવ્યમ્-જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મસ્થિતેર્હિ દ્વિપ્રમૃતિનવપર્યન્તસંખ્યારૂપે પલ્યોપમપૃથક્ત્વે વેદનાદપગતે સતિ ભાવતો વ્રતાઙ્ગીકરણં ભવતિ । તત્રૈવં ક્રમઃ—

મોહનીયાદિકર્મણામુત્કૃષ્ટા સ્થિતિઃ સાગરોપમકોટીકોટીસપ્ત્યાદિકા, તન્મ-
ધ્યાત્ તાવતીં સ્થિતિં યથાપ્રવૃત્તિકરણેનાદૌ ક્ષપયતિ, યેન પલ્યોપમાનામસંખ્યેય-
માગન્યૂના એકસાગરોપમકોટીકોટી શેષા સ્થિતિર્ભવતિ । તતો ગ્રન્થિભેદેન સમ્યક્ત્વં
પ્રાપ્નોતિ । તદનન્તરં શેષકર્મસ્થિતેઃ પલ્યોપમપૃથક્ત્વે ક્ષપિતે સત્યણુવ્રતં લભતે,
એવમેવ ભાવતો વ્રતપ્રાપ્તિર્ભવતિ, પરન્તુ દીર્ઘતરકર્મસ્થિતૌ સત્યામપિ દ્રવ્યતોડણુવ્રતં
મહાવ્રતં ચ ભવતિ । તથા ચોક્તમ્—

કા અંગીકાર કરના સંભવિત નહીં હોતા । સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ હોના એક
વાત હૈ ઓર ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોના ઇસ સે ભિન્ન વાત હૈ । સમ્યક્ત્વ કી
ઉત્પત્તિકા કારણ મિથ્યાત્વ (દર્શનમોહનીયાદિક)કા ક્ષયોપશમાદિક હૈ
ઓર ચારિત્ર કી ઉત્પત્તિકા કારણ ચારિત્રમોહનીય કર્મકા ક્ષયોપશમ હૈ ।
યહ ક્ષયોપશમ, સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ કે કારણ કી અપેક્ષા વ્રત અંગીકાર
કરનેમેં અધિકતર રૂપસે કારણ માના ગયા હૈ । સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ હોને
પર મી યદિ ચારિત્રમોહનીય કર્મકા ક્ષયોપશમ નહીં હુઆ હૈ તો ચારિત્ર
કી પ્રાપ્તિ જીવકો નહીં હોતી હૈ । સમ્યક્ત્વકે હોતે હી ચારિત્રમોહનીય
કર્મકા ક્ષયોપશમ નહીં હોતા હૈ, કિન્તુ સમ્યક્ત્વકે હોને પર જબ જ્ઞાના-
વરણીયાદિક કર્મેં કી સ્થિતિ અપનીર સ્થિતિમેંસે દો સે લગા કર નૌ
પલ્ય તક ઓર ઘટ જાતી હૈ તબ હી જીવ ભાવકી અપેક્ષા વ્રતોંકો અંગી-
કાર કરતા હૈ । ઇસકા ક્રમ ઇસ પ્રકાર હૈ—મોહનીયાદિ કર્મોંકી જિતનીર

લાભ થાય છે તેટલી સ્થિતિમાં વ્રતનું અંગીકાર કરવું સંભવિત નથી. સમ્ય-
ક્ત્વની પ્રાપ્તિ થવી એક વાત છે અને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થવી એનાથી ભિન્ન
વાત છે. સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિનું કારણ મિથ્યાત્વના (દર્શનમોહનીયાદિના) ક્ષયો-
પશમાદિક છે. ચારિત્રની ઉત્પત્તિનું કારણ ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ
છે. આ ક્ષયોપશમ, સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિના કારણની અપેક્ષાએ વ્રત અંગીકાર
કરવામાં અધિકતર રૂપથી કારણ માનવામાં આવે છે. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થાય
તો પણ જો ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ નહિ થયો હોય તો ચારિત્રની
પ્રાપ્તિ જીવને નથી થતી. સમ્યક્ત્વના થવાથી જ ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષયો-
પશમ નથી થતો; પણ સમ્યક્ત્વના થવાથી જ્યારે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોની
સ્થિતિ પોતપોતાની સ્થિતિમાંથી બેથી માંડીને નવ પદ્ય સુધી ઘટી જાય છે
ત્યારે જીવ, ભાવની અપેક્ષા વ્રતોને અંગીકાર કરે છે. એનો ક્રમ આ પ્રકારે છે—

देशविरतिनाप्यनन्तरं संख्यानेषु सागरोपमेषु क्षपिनेषु सर्वविरतिचारित्रं कल्पते । तदनन्तरमपि संख्यानेषु सागरोपमेषु क्षपिनेषुपञ्चमश्रेणिं प्रतिपद्यते । ततोऽपि संख्यानेषु सागरोपमेषु क्षपिनेषु क्षपकश्रेणिर्भवति । ततस्त्वस्तिन्नेव भवे मोक्ष इति । एवं यस्य सन्यक्तत्वनप्रतिपत्तिं तस्यैव देवमनुष्यभवेषु संसरणं कुर्वतो देशविरत्यादि-
यानो भवति । सन्यक्तत्वं हि अनन्तानन्द-रूपानुपम मोक्षसुखस्य कारणम् । उक्तञ्च—

“ ज्ञात्यन्धस्य यथा पुंसश्चक्षुशोभे शुभोदये ।

सद्दर्शनं तथैवान्य, सन्यक्त्वे सति जायते ॥ १ ॥

आनन्दो जायतेऽत्यन्तं, सात्त्विकोऽस्य महात्मनः ।

सङ्गोऽप्युपगमे यद्वद्, व्याधितस्य सद्गोपधम् ॥ २ ॥ इति ।

वीर्योल्लास से क्षपित हो जावे तब देशविरतिका लाभ होना है । देश-
विरति-आवृत्तचारित्र-पञ्चम गुणस्थान की प्राप्तिके अनन्तर संख्यात
सागरप्रमाण स्थितिके क्षय होने पर सर्वविरति-मुक्तिव्रत-षष्ठगुण-
स्थानकी प्राप्ति होती है । इसके बाद संख्यातसागरप्रमाण स्थितिके
व्यतीत हो जानेपर उपशमश्रेणि और फिर संख्यातसागरप्रमाणस्थिति
के क्षय होने पर क्षपकश्रेणिका लाभ होना है । फिर उसी भवसे उसको
मुक्तिकी प्राप्ति हो जाती है । देशविरति आदि चारित्रका लाभ उसी
जीवके होता है कि जिसने अपने सन्यक्तत्व की विराधना देव मनुष्यभवोंमें
रहते हुए नहीं की है । अर्थात् देवपर्यायमें या मनुष्यपर्यायमें जिसके
सन्यक्तत्वकी विराधना हो गई है उस जीवके देशविरति आदि चारित्र
का लाभ नहीं होता । यह सन्यक्तत्व अनन्तआनन्दरूप अनुपम मोक्ष-
सुखका कारण है । जैसे कहा है—

एतद् देशविरतिने लाभ ध्येयं । देशविरति-आवृत्तचारित्र पञ्चम गुणस्थानकी
प्राप्तिनी पटी संख्यातसागरप्रमाण स्थितिने क्षय ध्येयार्थी सर्वविरति-
मुक्तिव्रत-उद्गः सुखस्थानकी प्राप्ति ध्येयं । एतद् जाड संख्यातसागरप्रमाण
स्थितिने व्यतीत पटं नवधौ उपशमश्रेणि, कल्पे पटी संख्यातसागरप्रमाण
स्थितिने ध्येय प्रत्यर्थं क्षपकश्रेणि, लाभ ध्येयं । वनी येन कल्पे तेने
मुक्तिनी प्राप्ति पटं नवधेयं । देशविरति आदि चारित्रिने लाभ तेन उपरने
ध्येयं । तेने देवमनुष्यभवेन विराधना देव मनुष्यभवेन रहने नवधौ
उद्गः अर्थात्-देवमनुष्यभवेन सागर मनुष्यपर्यायमें तेने सन्यक्तत्वकी विराधना
पटं गडं तेने उपरने देशविरति आदि चारित्रिने लाभ नवधौ ध्येयं तेने सन्यक्तत्व
अनन्त आनन्दरूप अनुपम मोक्षसुखं कारणं ध्येयं । जेन उक्तं ध्येयं—

“ સવ્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

ભણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ ભણિયં ॥૧॥

જે દંસણવાવણ્ણા, લિંગગ્ગહણં કરિંતિ સામન્ને ।

તેસિં પિ ય ઉવવાઓ, ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

છાયા—સર્વજીવાનાં યસ્માત્સૂત્રે ગ્રૈવેયકેષૂપપાતઃ ।

ભણિતો જિનૈઃ સ ન ચ લિઙ્ગં મુક્ત્વા યતો ભણિતમ્ ॥ ૧ ॥

યે દર્શનવ્યાપન્ના, લિઙ્ગગ્રહણં કુર્વન્તિ શ્રામણ્યે ।

તેષામપિ ચોપપાત, ઉત્કર્ષો યાવદ્ ગ્રૈવેયકાન્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

અયમત્ર સારાંશઃ—યાવત્યાં કર્મસ્થિતૌ સત્યાં સમ્યક્ત્વં પ્રાપ્તં, તન્મધ્યાત્ પલ્યોપમપૃથક્ત્વરૂપે સ્થિતિભાગેઽનુક્રમેણ વીર્યોલ્લાસાત્ ક્ષપિતે સતિ દેશવિરતો ભવતિ।

અણુવ્રત-મહાવ્રતરૂપ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરતા હૈ, जिसका फल कर्मक्षय नहीं है । द्रव्यचारित्रका अभिप्राय भावशून्य चारित्र है । यह चारित्र सम्यग्दर्शनमूलक नहीं होता । भावचारित्र ही सम्यग्दर्शनमूलक होता है । कहा भी है—

“ સવ્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

ભણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ ભણિયં ॥૧॥

જે દંસણવાવણ્ણા, લિંગગ્ગહણં કરિંતિ સામન્ને ।

તેસિં પિ ય ઉવવાઓ, ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

इन सब पूर्वोक्त कथनका सारांश यही है कि-जितनी कर्मस्थितिके रह जाने पर सम्यक्त्वका लाभ हुआ है, उस स्थितिमें से कम से कम पल्योपमपृथक्त्व (दो से लगाकर ९ पल्य तक) प्रमाण स्थिति

થી જ (ભાવશૂન્ય) આણુવ્રત મહાવ્રતરૂપ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરે છે, જેનું ફળ કર્મ-ક્ષય નથી. દ્રવ્યચારિત્રનો અભિપ્રાય ભાવશૂન્ય ચારિત્ર છે. આ ચારિત્ર સમ્યગ્દર્શન-મૂલક નથી થતું. ભાવચારિત્ર જ સમ્યગ્દર્શનમૂલક થાય છે. કહ્યું પણ છે:—

“ સવ્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

ભણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ ભણિયં ॥ ૧ ॥

જે દંસણવાવણ્ણા લિંગગ્ગહણં કરિંતિ સામન્ને ।

તેસિંપિ ય ઉવવાઓ ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

આ બધા પૂર્વોક્ત કથનનો સાર એ છે કે જેટલી કર્મસ્થિતિના રહેવાથી સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે, આ સ્થિતિમાંથી ઓછામાં ઓછું પલ્યોપમ પૃથક્ત્વ (જે થી માંડી ૯ પલ્ય સુધી) પ્રમાણ સ્થિતિ વીર્યોલ્લાસથી ક્ષપિત થઈ બચ

નનુ યદુક્તં સમ્યક્ત્વે સતિ કદાચિદ્ વ્રતાઙ્ગીકરણં નાપિ ભવતીતિ, તત્ કથં સંભવતિ ? ઉચ્યતે—

યદા સમ્યક્ત્વલાભાનન્તરં નવપલ્યોપમાધિકસ્થિતિકો દેવેષૂત્પદ્યતે તદા તસ્યાગ્ર-
વસ્થાયાં યાવતીં સ્થિતિં ક્ષપયતિ તાવતીમન્યાં વધ્નાતિ, તતો દેશોનસાગરોપમકોટી-
કોટીરૂપાયા અધિકૃતકર્મસ્થિતેઃ પલ્યોપમપૃથક્ત્વસ્યાપગમો ન ભવતીતિ—અતો દેવભ-
વે દેશવિરતિલાભો ન સંભવતિ, તસ્માત્ સમ્યક્ત્વે સત્યપિ વ્રતાનઙ્ગીકરણં સિદ્ધમ્ ।

और भी—यह सम्यक्त्व बारह प्रकारके श्रावक धर्मका द्वार है १, मूल है २, प्रतिष्ठान (आलम्बन) है ३, आधार है ४, भाजन-पात्र है ५, और निधिरूप है ६ ॥ ३ ॥

फिर भी—जिस प्रकार ऊपर क्षेत्रमें बोये हुए बीज नहीं उगते हैं उसी प्रकार मिथ्यात्ववासित जीवमें व्रतोंका उदय नहीं होता ॥४॥

शङ्का—सम्यक्त्व के होने पर कदाचिद् व्रतका लाभ नहीं भी होता है, यह बात कैसे संभव होती है ? ।

समाधान—सम्यक्त्वके होने पर भी व्रतका लाभ नहीं होता, यह बात एक तो ऊपर कथित प्रकारसे प्रकट की गई है, और दूसरा प्रकार यह भी है—जिस जीवको सम्यक्त्वका लाभ हुआ है वह अपनी आयुके अन्तमें नौ पल्यसे अधिक स्थितिका बंध कर देवपर्याय में उत्पन्न हुआ उस समय वह उस पर्याय में से जितनी भी स्थितिका क्षय करता है उतनी और दूसरी स्थितिका बंध भी करता रहता है । सम्यक्त्वके उत्पादनके

કરી—આ સમ્યક્ત્વ બાર પ્રકારના શ્રાવક ધર્મનુ દ્વાર છે ૧, મૂલ છે ૨, પ્રતિ-
ષ્ઠાન (આલબન) છે ૩, આધાર છે ૪, ભાજન-પાત્ર છે ૫ અને નિધિ છે ૬. (૩)

વળી—જે પ્રકારે ઉપર ક્ષેત્રમાં બોવેલા બીજ ઉગતા નથી તે પ્રકારે મિથ્યા-
ત્વવાસિત જીવમાં વ્રતનો ઉદય થતો નથી (૪)

શંકા—સમ્યક્ત્વના થવાથી વ્રતનો લાભ કોઈ વખત નહીં પણ થાય, આ વાત કેમ સંભવે છે ?

સમાધાન—સમ્યક્ત્વના થવાથી પણ વ્રતનો લાભ નથી થતો, એ વાત એક તો ઉપર કથિત પ્રકારથી પ્રગટ કરી છે, અને બીજો પ્રકાર એ પણ છે—જે જીવને સમ્યક્ત્વનો લાભ થયો છે તે પોતાની આયુના અંતમાં નવ પલ્યથી અધિક સ્થિતિનો બંધ કરીને દેવપર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયો, તે વખત તે પર્યાયમાં જેટલી સ્થિતિનો ક્ષય કરે છે તેટલી બીજી સ્થિતિનો તે બંધ પણ કરે છે. એ પ્રકારે સમ્યક્ત્વના ઉત્પાદનના સમયની

અન્યચ--“દ્વારં મૂલં પ્રતિષ્ઠાનમાધારો ભાજનં નિધિઃ ।

દ્વિષટ્કસ્યાસ્ય ધર્મસ્ય, સમ્યક્ત્વં પરિકીર્તિતમ્” ॥ ૩ ॥

અપરં ચ--“સસ્યાનીવોષરક્ષેત્રે, નિશ્ક્ષિપ્તાનિ કદાચન ।

ન વ્રતાનિ પ્રરોહન્તિ, જીવે મિથ્યાત્વવાસિતે” ॥ ૪ ॥

“જાત્યન્ધસ્ય યથા પુંસશ્ચક્ષુર્લાભે શુભોદયે ।

સદ્દર્શનં તથૈવાસ્ય, સમ્યક્ત્વે સતિ જાયતે ॥ ૧ ॥

આનન્દો જાયતેઽત્યન્તં, સાત્ત્વિકોઽસ્ય મહાત્મનઃ ।

સદ્બોધ્યુપગમે યદ્વદ્, -વ્યાધિતસ્ય સદૌષધમ્” ॥ ૨ ॥

અન્યચ--“દ્વારં ૧ મૂલં ૨ પ્રતિષ્ઠાન ૩ માધારો ૪ ભાજનં ૫ નિધિઃ ૬ ।

દ્વિષટ્કસ્યાસ્ય ધર્મસ્ય, સમ્યક્ત્વં પરિકીર્તિતમ્” ॥ ૩ ॥

અપરશ્ચ--“સસ્યાનીવોષરક્ષેત્રે, નિશ્ક્ષિપ્તાનિ કદાચન ।

ન વ્રતાનિ પ્રરોહન્તિ જીવે મિથ્યાત્વવાસિતે” ॥ ૪ ॥

અર્થાત્—જન્માન્ધ પુરુષકો શુભ કર્મોંકે ઉદયસે નેત્રોંકે खुल जाने પર जिस प्रकार सद्दर्शन (समस्त वस्तुओंका दीखना) होता है उसी प्रकार इस जीवको सम्यक्त्वका लाभ होने पर यथार्थ ज्ञान होता है । १।

जिस प्रकार रोगीको श्रेष्ठ औषधसे आरोग्यप्राप्ति होने पर आनन्द होता है उसी प्रकार सद्बोधि (सम्यक्त्व) के प्राप्त होने पर उस महा-त्मा पुरुषको सात्त्विक अत्यानन्द होता है ॥ २ ॥

“જાત્યન્ધસ્ય યથા પુંસશ્ચક્ષુર્લાભે શુભોદયે ।

સદ્દર્શનં તથૈવાસ્ય, સમ્યક્ત્વે સતિ જાયતે ॥ ૧ ॥

આનન્દો જાયતેઽત્યન્તં, સાત્ત્વિકોઽસ્ય મહાત્મનઃ ।

સદ્બોધ્યુપગમે યદ્વદ્, વ્યાધિતસ્ય સદૌષધમ્” ॥ ૨ ॥

અન્યચ્ચ--“દ્વારં ૧ મૂલં ૨ પ્રતિષ્ઠાન ૩, -માધારો ૪ ભાજનં ૫ નિધિઃ ૬

દ્વિષટ્કસ્યાસ્ય ધર્મસ્ય, સમ્યક્ત્વં પરીકીર્તિતમ્” ॥ ૩ ॥

અપરં ચ--“સસ્યાનીવોષરક્ષેત્રે, નિશ્ક્ષિપ્તાનિ કદાચન ।

ન વ્રતાનિ પ્રરોહન્તિ, જીવે મિથ્યાત્વવાસિતે” ॥ ૪ ॥

અર્થાત્—જન્માન્ધ પુરુષને શુભ કર્મના ઉદયથી નેત્રોના ખુલવાથી જે પ્રકારે સદ્દર્શન (દરેક વસ્તુઓનું દેખવું) થાય છે, તે પ્રકારે આ જીવને સમ્યક્ત્વનો લાભ થવાથી યથાર્થ જ્ઞાન થાય છે. (૧)

જે પ્રકારે રોગીને શ્રેષ્ઠ ઔષધિથી આરોગ્યપ્રાપ્તિ થવાથી આનંદ થાય છે તે પ્રકારે સદ્બોધિ (સમ્યક્ત્વ) ની પ્રાપ્તિ થવાથી તે મહાત્મા પુરુષને સાત્ત્વિક અત્યાનન્દ થાય છે. (૨)

નન્વાત્મપરિણામરૂપં સમ્યક્ત્વં કથં વિજ્ઞેયં ભવેદિતિ ચેત્, ઉચ્યતે—સમ્યક્ત્વ-
કાર્યરૂપૈઃ શમસંવેગનિર્વેદાનુકમ્પાસ્તિક્ષયૈઃ સાધુસામાચારીપ્રવૃત્ત્યાદિરૂપૈઃ સામાયિક-
પોષધપ્રતિક્રમણત્યાગપ્રત્યાખ્યાનાદિશ્રાવકાચારરૂપૈશ્ચ વાહ્યપ્રશસ્તવ્યાપારૈરેતદવગતું
શક્યતે । તત્ર—

ક્ત્વપ્રાપ્તિકે વિના કર્મક્ષય હોતા હી નહીં હૈ । સમ્યક્ત્વકે વિના જ્ઞાન
ઔર ચારિત્ર નિષ્ફલ હૈ । इनकी सफलता का मूल कारण यदि कोई है
तो वह एक सम्यक्त्व ही है । सम्यक्त्वी जीव के ही ज्ञान तप चारित्र
सफल होते हैं, अणुव्रत, गुणव्रत एवं शिक्षाव्रत—रूप श्रावकका देश
चारित्र भी सम्यक्त्व के सद्भावमें ही सफल माना गया है, इस लिये
सम्यक्त्व ही मोक्षका कारण है ।

શક્ષા—સમ્યક્ત્વ તો આત્માકા એક પરિણામ હૈ, ઉસકા અસ્તિત્વ
કૈસે જાના સકતા હૈ ?

શક્ષાકારકા અભિપ્રાય યહાં ઇસ પ્રકારકા હૈ કિ જવ સમ્યક્ત્વ
આત્માકા એક પરિણામ હૈ તો વહ બી અમૂર્ત્ત હી હોગા । અર્થાત્—જિસ
પ્રકાર આત્મા અમૂર્ત્ત હૈ ઉસી પ્રકાર વહ સમ્યક્ત્વ બી અમૂર્ત્ત હોગા, ફિર
ઉસકે અસ્તિત્વકા વોધ કૈસે હોતા હૈ ?

ઇસ શક્ષાકા સમાધાન કરતે હુએ આચાર્ય મહારાજ કહતે હૈં કિ—
વાત ઠીક હૈ; પરન્તુ ઉસકે કાર્યોં સે ઉસકે અસ્તિત્વ કા ભાન હોતા હૈ ।
શમ, સંવેગ, નિર્વેદ, અનુકમ્પા, આસ્તિક્ય, સાધુઓંકી સમાચારીરૂપ
પ્રવૃત્તિ આદિ, એવં સામાયિક, પોષધ, પ્રતિક્રમણ, ત્યાગ, પ્રત્યાખ્યાન

થતા નથી, સમ્યક્ત્વ વિના જ્ઞાન અને ચારિત્ર નિષ્ફળ છે, એની સફળતાનું મૂળ
કારણ જે કોઈ હોય તો તે એક સમ્યક્ત્વ જ છે સમ્યક્ત્વી જીવને જ જ્ઞાન તપ
ચારિત્ર સફળ થાય છે અણુવ્રત, ગુણુવ્રત અને શિક્ષાવ્રતરૂપ શ્રાવકનું દેશચારિત્ર
પણ સમ્યક્ત્વના સદ્ભાવમાં જ સફળ મનાય છે, તેથી સમ્યક્ત્વ જ મોક્ષનું કારણ છે

શક્ષા—સમ્યક્ત્વ તો આત્માનું એક પરિણામ છે, તેનું અસ્તિત્વ કેવી
રીતે જાણી શકાય ? શક્ષાકારનો અભિપ્રાય આ ઠેકાણે આ પ્રકારનો છે કે ન્યારે
સમ્યક્ત્વ આત્માનું એક પરિણામ છે તો તે પણ અમૂર્ત્ત થશે અર્થાત્—જે પ્રકારે
આત્મા અમૂર્ત્ત છે તે પ્રકારે તે સમ્યક્ત્વ પણ અમૂર્ત્ત થશે, પછી તેના અસ્તિત્વનો
બોધ કેવી રીતે થાય ? આ શક્ષાનું સમાધાન કરતા આચાર્ય મહારાજ કહે છે
કે—વાત ઠીક છે, પરંતુ તેના કાર્યોંથી તેના અસ્તિત્વનું ભાન થાય છે શમ, સંવેગ
નિર્વેદ, અનુકમ્પા, આસ્તિક્ય, સાધુઓંની સમાચારીરૂપ પ્રવૃત્તિ આદિ, અને આ-

यस्य सम्यक्त्वान्नो व्रतप्राप्तिर्न भवति, स तु अव्रती सम्यग्दृष्टिः श्रावको निगद्यते ।

किंच—सम्यक्त्वाभावे सति मोक्षो न लभ्यते । मिथ्यादृष्टिर्हि कुशास्त्रप्रति-
बोधितां संयमनियमादिरूपां निवृत्तिमाचरन्नपि, स्वजनधनभोगान् परित्यजन्नपि,
शीतोष्णक्षुत्पिपासादिभिर्दुःखस्य परां काष्ठाद्युपगच्छन्नपि सम्यक्त्वरहितत्वेन
मोक्षसिद्धये न प्रभवति । सम्यक्त्वाभावे सति कर्मक्षयो न भवति । सम्यक्त्ववतामेव
ज्ञानतपश्चारित्राण्यपि सफलीभवन्ति । सम्यक्त्वे सत्येव चाणुव्रतगुणव्रतशिक्षाव्रतानि
भवितुमर्हन्ति, तस्मात् सम्यक्त्वं मोक्षस्य बीजमिति बोध्यम् ।

समय की कुछ कम कोटाकोटीसागरोपम स्थितिमेंसे पत्योपम-
पृथक्त्वरूप स्थितिका अपगम-अभाव नहीं होनेसे देवपर्यायमें देशविरति
का लाभ संभवित नहीं होता ।

जिस सम्यक्त्वीको व्रतप्राप्ति नहीं होती है वह सम्यग्दृष्टि श्रावक
कहलाता है । इसको कभी न कभी (अर्धपुद्गलपरावर्तनकालके बाद)
मुक्तिका लाभ अवश्य हो जाता है, परन्तु जिसके मूलमें सम्यक्त्व ही
नहीं है उसको मुक्तिपद की प्राप्ति हो नहीं सकती । मिथ्यादृष्टि जीव
(द्रव्यलिङ्गी मुनि जैसा) खोटे २ शास्त्रों के द्वारा प्रतिपादित संयम
नियमादिरूप चारित्रका पालन करनेपर भी स्वजन धन एवं पांच इन्द्रियों
के विषयों का परित्यागी होने पर भी, और अनेक प्रकारसे शीत उष्ण,
भूख और प्यास आदि परीषहजन्य कष्टों का कठोर से कठोर सामना
करते हुए भी सम्यक्त्व से रहित होनेके कारण ही मोक्षरूपी सिद्धि
का भागी नहीं माना गया है । यह तो अटल सिद्धान्त है कि-सम्य-

कांछ ओछी कोटाकोटीसागरोपम स्थितिमांथी पत्योपमपृथक्त्वरूप स्थितिने
अपगम-अभाव नहिं थवाथी देवपर्यायमां देशविरतिने लाभ संभवित थतो नथी.

जे सम्यक्त्वाने व्रतप्राप्ति नथी थती ते अविरतसम्यग्दृष्टि श्रावक
कहेवाय छे. जेने कोछ वणत (अर्धपुद्गलपरावर्तन कालनी पछी) मुक्तिने
लाभ अवश्य थाय छे. पणु जेना भूणमां सम्यक्त्व नथी तेने मुक्तिपदनी प्राप्ति
थती नथी. मिथ्यादृष्टि जीव (द्रव्यलिङ्गी मुनि जेवा) थोटा थोटा शास्त्रोद्वारा
प्रतिपादित संयमनियमादिरूप चारित्रनुं पालन करवाथी स्वजन धन जेने पंचे-
न्द्रियोना विषयोना परित्यागी होवा छतां पणु, जेने अनेक प्रकारथी शीत,
उष्ण, भूण जेने प्यास आदि परिषहजन्य कष्टोना कठोरमां कठोर सामना करवा
छतां पणु सम्यक्त्वथी रहित होवाना कारणे मोक्षरूपी सिद्धिने लागी मानवामां
आवतो नथी. जे तो अटल सिद्धान्त छे के:—सम्यक्त्वप्राप्ति विना कर्म क्षय

(૩) નિવેદાણ્યેન સમ્યક્ત્વપરિણામેન જીવો મન્યતે—‘નારકતિર્યક્મનુષ્યદેવ-ભવેષુ સર્વેષ્વેવ દુઃખમસ્તિ, અતઃ સર્વમેવ જગન્નિઃસાર’-મિતિ । અપિ ચ મમત્વવિ-વેગરહિતો ભવતિ ।

(૪) પ્રાણિવર્ગ સમન્તાદવલોક્યાનુકમ્પાણ્યેન સમ્યક્ત્વપરિણામેન—‘ઇમે સંસારચક્રપરિભ્રાન્તાઃ ગારીરૈર્માનસૈશ્વ વિવિધદુઃખૈઃ પરાભૂતાઃ સન્તી’-તિ મત્વા સ્વા-ત્મોપમ્યેન તેષાં દુઃખાન્યનુભૂય સ્વકીયપરકીયભાવાઽભાવપૂર્વકમભયદાનેન, પ્રાણિનાં રીતિ સ્વભાવવાલા હૈ’ ઇસકા તાત્પર્ય યદી હૈ કિ વહ કર્મ કે ઉદય કે આધીન નહીં હૈ, અપિતુ આત્મા કા નિજસ્વભાવ હૈ । એક વાર જિસ જીવ કો ઇસકી પ્રાપ્તિ હો જાની હૈ ઇસકો ફિર ઇસ સંસારમેં પરિભ્રમણ નહીં કરના પડના, એવં જીવ કો વહાં પર નિરનિશય અનંત આનન્દ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ ઇસલિયે વહ મોક્ષ સ્વયં અપૂર્વ અનંત આનન્દ કા એક ધામ હૈ । સંવેગ પરિણામવાલા જીવ ઇસ પ્રકારકે મોક્ષસુખકી હી અભિલાષા કરના હૈ ।

(૩) નિવેદ—નિવેદગુણવાલા જીવ—‘નરક, તિર્યચ દેવ ઓર મનુ-ષ્યભવમેં સર્વત્ર હી દુઃખકા સામ્રાજ્ય છાયા હુઆ હૈ ઇસ લિયે યહ સમસ્ત જગત દુઃખકા એક ભાજન હૈ’ એસા સમજ કર ઇસકો નિઃસાર—સારરહિત હી જાનના હૈ । મમતારૂપ જહર સે વહ દૂર હી રહના હૈ ।

(૪) અનુકંપા—દુઃખી જીવોં પર દયાભાવ હોના હી અનુકંપા હૈ । ઇસ ગુણવાલા જીવ સંસારસ્થ સમસ્ત પ્રાણિવર્ગ કો શારીરિક માનસિક

વિપરીત સ્વભાવવાળો છે’ એનો તાત્પર્ય એ છે કે તે કર્મના ઉદયને આધીન નથી પણ આત્માને નિજસ્વભાવ છે. એક વાર જે જીવને મોક્ષની પ્રાપ્તિ થઈ ગઈ તો પછી એને આ સામ્રાજ્ય પરિભ્રમણ કરવું પડતું નથી. અને જીવને ત્યાં નિરનિ-શય અનંત આનંદની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી તે મોક્ષ પોતે અપૂર્વ અનંત આનંદનો ધામ છે. સંવેગપરિણામવાળો જીવ આવા પ્રકારના મોક્ષ—સુખનીજ અભિલાષા કરે છે.

(૩) નિવેદ—નિવેદગુણવાળો જીવ—‘નરક, તિર્યચ, દેવ અને મનુષ્ય ભવમાં સર્વત્ર દુઃખનું સામ્રાજ્ય જ પથરાયેલું છે. એથી સમસ્ત આ જગત દુઃખનું એક ભાજન છે’ એવું સમજીને તેને નિઃસાર—સારરહિત માને છે. મમતારૂપી ઝેરથી તે દૂર જ રહે છે.

(૪) અનુકંપા—દુઃખી જીવો ઉપર દયા કરવી તેનું નામ અનુકંપા છે. આ ગુણવાળા જીવ સંસારના સમસ્ત પ્રાણિવર્ગને અનેક શારીરિક માનસિક કષ્ટોથી

(૧) શમરૂપેણ સમ્યક્ત્વપરિણામેન સર્વસ્મિન્નપિ કાલે પ્રતિકૂલકારિણેઽપિ ન ક્રુધ્યતિ ।

(૨) સંવેગાશ્ચયેન તેન 'સકલમહીમણ્ડલેશ્વરસ્ય દેવેન્દ્રસ્ય ચ સુખં પરમાર્થતો દુઃખમેવ, કર્મજન્યત્વાત્ સાવસાનત્વાદસ્વાભાવિકત્વાચ્चेति मन्यमानो मोक्षादन्यत् किञ्चिन्न वाञ्छति, मोक्षो हि स्वाभाविकात्मपरिणामरूपः कर्माजन्यः पर्यवसानरहितो निरतिशयानन्दरूपश्चास्ति ।

આદિ જો બાહર કે પ્રશસ્ત વ્યાપાર હૈં યે હી ઉસકે કાર્ય હૈં । इनसे ही उसके अस्मित्वका बोध होता है ।

(૧) શમ—શમરૂપ સમ્યક્ત્વકે પરિણામવાલા જીવ કિસી મી સમય અપને સે પ્રતિકૂલ આચરણ કરનેવાલોં પર મી ક્રોધ નહીં કરતા હૈ, અર્થાત્—કષાયોં કા શમનરૂપ યહ પરિણામ હૈ, અથવા કષાયોં કા શમન હી શમ હૈ ।

(૨) સંવેગ—સંસારાદ્ભીરુતા સંવેગઃ—સંસારસે ભયભીત હોના હી સંવેગ હૈ । इस परिणामवाला जीव चक्रवर्ती और इन्द्र के भी वैषयिक सुखों को अपनी दृष्टिसे दुःखरूप ही मानता है । कारण कि वह उनका सुख, कर्म—(सातावेदनीय) के उदयाधीन होने से सान्त-नाशवान् है, एवं यह आत्मिक स्वभाव से प्रतिकूल है, और मोक्ष तो इससे विपरीत स्वभाववाला है, अतः उसके अतिरिक्त और कोई भी सांसारिक पदार्थ इसकी दृष्टि का मोहक नहीं बन सकता, इसलिए मोक्ष के अतिरिक्त और किसी भी पदार्थ की प्राप्तिकी वांछा इसके नहीं रहती । 'मोक्ष इससे विप-

માયિક પોષધ, પ્રતિક્રમણ, ત્યાગ, પ્રત્યાખ્યાન આદિ જે બાહ્ય પ્રશસ્ત વ્યાપાર છે તે જ તેના કાર્યો છે, તેનાથી જ તેના અસ્તિત્વનો બોધ થાય છે.

(૧) શમ—શમરૂપ સમ્યક્ત્વના પરિણામવાળો જીવ કોઈ વખત પોતાથી પ્રતિકૂળ આચરણ કરવાવાળા ઉપર પણ ક્રોધ કરતો નથી. અર્થાત્ કષાયોના શમનરૂપ આ પરિણામ છે, અથવા કષાયોનો શમન જ શમ છે.

(૨) સંવેગ—'સંસારાદ્ભીરુતા સંવેગઃ' સંસારથી ભયભીત થવું તે સંવેગ છે. આ પરિણામવાળા જીવ ચક્રવર્તી અને ઇન્દ્રોના વૈષયિક સુખોને પણ પોતાની દૃષ્ટિથી દુઃખરૂપ જ માને છે કારણ કે તે એના સુખ, કર્મ (સાતાવેદનીય) ના ઉદયાધીન હોવાથી સાંત-નાશવાન છે, એ આત્મિકસ્વભાવથી જ પ્રતિકૂળ છે, અને મોક્ષ તો એનાથી વિપરીત સ્વભાવવાળો છે. એથી એનાથી અતિરિક્ત બીજો કોઈ પણ સાંસારિક પદાર્થ એની દૃષ્ટિનો મોહક નથી બની શકતો, તેથી મોક્ષના અતિરિક્ત કોઈ પણ પદાર્થની પ્રાપ્તિની વાંછના એને રહેતી નથી. 'મોક્ષ એથી

तपःसमाराधनैः, तथाहि-पर्याप्तापर्याप्तकादिभेदवृत्तां पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्प-
दीन्द्रियादिविविधव्रत्तानां च त्रिकरणत्रियोगैरुपमर्दनपरिहारपूर्वकरक्षणरूपम-
व्रतं, तथा स्वस्वभेदैर्वहुविधमृषावादादत्तादानमैथुनपरिग्रहपरिहाररूपाणि
नि, शीतोष्णादिकठिनतरपरिषहसहनपूर्वकसप्तदशविधसंयमसमाराधनम्, अनश-
नप्रतरद्वादशविधतपश्चरणजनितशरीरादिशोपणेन धन्यमुनिवद् घोरतरकष्टसहनं
। तथा-किं पुनर्महाविस्तरदुरधिगमसामायिकादिद्वादशाङ्गरूपश्रुतज्ञानैरपि ?
चेन्न,

ईसादि महाव्रत संयम और तप आदिके पालन एवं आराधन करने
आवश्यकता क्या है ? अर्थात्-एक सम्यग्दर्शन से ही जीवको मुक्ति
लाभ हो जावे तो पर्याप्त और अपर्याप्त-भेदविशिष्ट एकेन्द्रिय-
वीकाय, अपकाय, तेजस्काय, वायुकाय, और वनस्पतिकायके जीवों
एवं द्वीन्द्रियादिक अनेक प्रकारके व्रत जीवों की कृत कारित अनु-
ना और मन वचन कायसे विराधना का त्याग करना, एवं उनका
ण करना जो अहिंसा-महाव्रत है उसका पालन १, तथा अनेक प्रका-
मृषावाद २, अनेक प्रकारके अदत्तादान-चोरी ३, मैथुन ४, एवं परि-
५ का त्यागरूप पांच महाव्रतों का आराधन, एवं कठिनतर परिषहों
सहनपूर्वक (१७) सतरह प्रकारके संयम का सेवन करना, तथा धन्य
की तरह अनशनादिक (१२) वारह प्रकारके तपके आचरणसे उत्पन्न
रादिक शोपण से घोरतर कष्टों का सहन करना; ये सभी विल्कुल
व्यर्थ हैं ? तथा सामायिकादिद्वादशाङ्गरूप श्रुतज्ञान, कि जो महा-

व्रत संयम अने तप विगैरेनु पालन अने आराधन करवानी आवश्यकता
छे ? अर्थात्-એક સમ્યગ્દર્શનથી જ એવને મુક્તિનો લાભ થઈ જાય તો
પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત ભેદ-વિશિષ્ટ એકેન્દ્રિય-પૃથ્વીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય,
વાયુકાય, અને વનસ્પતિકાય-ના એવાની, અને એઈન્દ્રિયાદિક અનેક પ્રકારના
મ એવાની કૃત કારિત અનુમોદના અને મનવચન કાયાથી વિરાધનાનો ત્યાગ કરવો,
ને તેનું રક્ષણ કરવું જે અહિંસામહાવ્રત છે તેનું પાલન ૧, તથા અનેક પ્રકારના
મૃષાવાદર, અનેક પ્રકારના અદત્તાદાન-ચોરી ૩, મૈથુન ૪, અને પરિગ્રહ ૫ ના ત્યાગરૂપ
સંયમકાવ્રતોનું આરાધન, અને કઠિનતર પરિષદોનું સહનપૂર્વક સતર પ્રકારે સંયમનું
વન કરવું, તથા ધન્યમુનિની પેઠે અનશનાદિક બાર પ્રકારના તપના આચરણથી
વ્રત શરીરાદિક શોપણથી ઘોરતર કષ્ટોનું સહન કરવું, એ બધા બિલકુલ જ

રક્ષણેન, માર્યમાણાનાં સંકટાન્મોચનેન, ધર્મોપદેશેન મોક્ષમાર્ગે યોજનયા ચ યથા-
સામર્થ્યમનુગ્રહં કુરુતે ।

(૫) આસ્તિક્યપરિણામેન ચ ‘યદિહ તીર્થકરૈઃ પ્રતિવોધિતં તત્ સર્વમેવ સત્યં,
તથૈવ સર્વે જીવાજીવાદયોઽર્થાઃ સન્તિ નિશ્શંકમ્’ ઇતિ મન્યતે । સ ચ કાઙ્ગાદિ-
વિસ્ત્રોતસિકારહિતો ભવતિ ।

एवंभूतैः शमादिपरिणामैः सम्यक्त्वं विज्ञेयं भवितुर्महति । लब्धसम्यक्त्वश्च
सम्यग्दृष्टिरित्युच्यते । स चान्तर्मुहूर्तकालमपि सम्यक्त्वेन स्पृष्टश्चेदुत्कृष्टतो देशो-

अनेक कष्टों से व्यथित ही अनुभव किया करता है, और अपने
समान ही उन्हें मान कर उनके उन दुःखों का स्वयं अनुभव करके निष्पक्ष
दृष्टि से युक्त हो कर उनके उन दुःखों को दूर करने की यथाशक्ति कोशिश
में रहता है । अपनी शक्तिके अनुसार उनकी रक्षा करता है । मरते हुए
तथा घातकद्वारा मारे जाते हुए जीवों को यथाशक्ति बचाता है और
मोक्षमार्गसे विपरीत जनों को सद्धर्मके उपदेश से भावित कर उन्हें
मोक्षमार्गमें लगाने की अपनी शक्तिके अनुसार चेष्टा भी करता है ।

(૫) આસ્તિક્ય—“જો જિનેન્દ્રદેવને કહ્યા છે વહ સર્વ હી સત્ય છે”
इस प्रकार दृढ़ आस्थावाली मति ही आस्तिक्य भाव है । इस आस्तिक्य
भाववाला जीव जिनप्रतिपादित तत्त्वों में निश्शंक होकर दृढ़ आस्था-
सम्पन्न होता है । वह जीव जिनवचनों में शंकाकाङ्क्षादिरहित होना है ।

इन पूर्वोक्त शमादिभावरूप चिह्नोंसे सम्यक्त्व का अस्तित्व जाना
जाता है । जीव यदि सम्यग्दर्शनका एक अंतर्मुहूर्त भी स्पर्श कर लेता

વ્યથિત જ અનુભવ કર્યા કરે છે. અને પોતાના સમાન જ તેઓને માનીને તેઓના
તે દુઃખોનો અનુભવ સ્વયં કરીને નિષ્પક્ષદૃષ્ટિયુક્ત થઈ તેઓના તે દુઃખોને દૂર
કરવાની યથાશક્તિ કોશિશમાં રહે છે, પોતાની શક્તિના પ્રમાણમાં તેની રક્ષા કરે છે.
મરતા જીવોને તથા ઘાતકીદ્વારા મરાતા જીવોને યથાશક્તિ બચાવે છે, અને
મોક્ષમાર્ગથી વિપરીત જનોને સદ્ધર્મના ઉપદેશથી ભાવિત કરી તેને
મોક્ષમાર્ગમાં લગાડવામાં પોતાની શક્તિ-અનુસાર ચેષ્ટા કરે છે.

(૫) આસ્તિક્ય—“જે જિનેન્દ્ર દેવે કહ્યાં છે તે સર્વે સત્ય છે.” આ પ્રકા-
રની દૃઢ આસ્થાવાળી મતિ જ આસ્તિક્ય ભાવ છે. આ આસ્તિક્યભાવવાળાં જીવ
જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોમાં નિશંક થઈને દૃઢ આસ્થાવાળા થઈ જાય છે. તે જીવ જિન
વચનોમાં શંકાકાંક્ષાદિરહિત હોય છે.

આ પૂર્વોક્ત શમાદિભાવરૂપ ચિહ્નોથી સમ્યક્ત્વનું અસ્તિત્વ જાણવામાં આવે
છે. જીવ જે સમ્યગ્દર્શનનો એક અંતર્મુહૂર્ત પણ સ્પર્શ કરી લે તો તે નિયમથી

‘સે હુ મુણી પરિણાયકમ્મે’ ઇતિ પુનઃ પુનર્વદતા સમ્યક્ચારિત્રમેવ મોક્ષપ્રાપ્તિ-
કારણમિતિ પ્રતિવોધિતમ્ । ઉત્તરાધ્યયનેઽપિ—

“નાદંસણિસ્સ નાણં, નાણેણ વિણા ન હંતિ ચરણગુણા ।

અગુણિસ્સ નત્થિ મોક્ખો, નત્થિ અમોક્ખસ્સ નિવ્વાણં” ॥ ૧ ॥ (અ૦ ૨૮)

સમ્યગ્જ્ઞાન ‘મી સમ્યક્ચારિત્ર’ કો ઉત્પન્ન કરતા હુઆ મોક્ષકા કારણ
માના ગયા છે । જ્ઞાનકી સત્તા ‘મલે હી આત્મા મેં હો પરન્તુ જય તક વહ
આત્મામેં ચારિત્રપરિણામ કો ઉત્પન્ન નહીં કર દેતા, તવ તક મોક્ષ કા
જનક નહીં હો સકતા । ઇસી અભિપ્રાય કો લે કર ભગવાને ઇસી પ્રથમ
અધ્યયનમેં “સે હુ મુણી પરિણાયકમ્મા” અર્થાત્—જો છ કાય કે
આરંભ કો જપરિજ્ઞા સે જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ત્યાગતા છે વહી
મુનિ ચારિત્રવાન્ ગિના જાના છે । ઇસ કથન દ્વારા મી સમ્યક્ચારિત્ર કો
હી મોક્ષપ્રાપ્તિકા કારણ પ્રકટ કિયા છે । ઉત્તરાધ્યયનકે ૨૮ વે અધ્ય-
યનમેં મી ઇસકી પુષ્ટિ કી ગઈ છે । જૈસે—

“નાદંસણિસ્સ નાણં, નાણેણ વિણા ન હંતિ ચરણગુણા ।

અગુણિસ્સ નત્થિ મોક્ખો, નત્થિ અમોક્ખસ્સ નિવ્વાણં” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—સમ્યગ્દર્શનરહિત આત્મામેં સમ્યગ્જ્ઞાન નહીં હોતા । સ-
મ્યગ્જ્ઞાન સે રહિત આત્મા કો ચારિત્રગુણકી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી । ચારિત્ર
ગુણ કી પ્રાપ્તિ કિયે વિના મોક્ષ નહીં હોતા, એવં અમુક્તકા નિર્વાણ નહીં
હોતા ॥ ૧ ॥ ઉત્ત૦ અ૦ ૨૮ ॥

સમ્યગ્જ્ઞાન પણ સમ્યક્-ચારિત્રને ઉત્પન્ન કરતા મોક્ષનુ કારણ માનવામા
આવે છે જ્ઞાનની સત્તા ભલે જ આત્મામા છે, પરંતુ જ્યાં સુધી તે આત્મામાં
ચારિત્રપરિણામને ઉત્પન્ન નથી કરતું ત્યાં સુધી મોક્ષનુ ઉત્પાદક નથી થતું આ
અભિપ્રાયને લઈ ને લગવાને આ પ્રથમ અધ્યયનમા “સે હુ મુણી પરિણાયકમ્મા”
અર્થાત્—જે છ કાયના આરંભને જપરિજ્ઞાથી બાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી ત્યાગે
છે તે જ મુનિ ચારિત્રવાન માનવામા આવે છે આ કથન દ્વારા પણ સમ્યક્-
ચારિત્રને જ મોક્ષપ્રાપ્તિનુ કારણ પ્રગટ કર્યું છે. ઉત્તરાધ્યયન અધ્યયન ૨૮મા
પણ એની પુષ્ટિ કરી છે જેમ—

“નાદંસણિસ્સ નાણં, નાણેણ વિણા ન હંતિ ચરણગુણા ।

અગુણિસ્સ નત્થિ મોક્ખો, નત્થિ અમોક્ખસ્સ નિવ્વાણં” ॥ ૧ ॥ ઉત્ત૦ અ૦ ૨૮ ॥

અર્થાત્—સમ્યગ્દર્શનરહિત આત્મામા સમ્યગ્જ્ઞાન નથી થતું સમ્યગ્જ્ઞાનથી
રહિત આત્માને ચારિત્ર ગુણની પ્રાપ્તિ થતી નથી ચારિત્રગુણની પ્રાપ્તિ કર્યા વિના
મોક્ષ થતું નથી, અને અમુક્તનુ (કર્મથી મુક્ત નહિ તેનું) નિર્વાણ થતું નથી. ૧

જ્ઞાનચારિત્રસમુત્પાદનદ્વારા સમ્યક્ત્વસ્ય મોક્ષં પ્રતિ કારણત્વાત્, તથાહિ—ન કેવલં સમ્યક્ત્વમાત્રેણ સિદ્ધિપદં લબ્ધું શક્યતે, કિન્તુ સમ્યક્ત્વકાર્યસ્ય તદભિ-
વ્યજ્ઞકસ્ય ચારિત્રસ્યૈવ મોક્ષં પ્રતિ સાક્ષાત્કારણતયા તેનૈવ તત્પ્રાપ્તિર્ભવિતુમર્હતિ,
સમ્યગ્જ્ઞાનમપિ ચારિત્રોત્પાદનદ્વારેણૈવ મોક્ષજનકમ્ । યતશ્ચારિત્રપરિણામેનૈવ જ્ઞાન-
મપિ મોક્ષાય પ્રભવતિ, ન કેવલં સ્વસત્તામાત્રેણ । અત એવ ભગવતાઽત્રૈવ પ્રથમાધ્યયને
વિસ્તારસમ્પન્ન એવં દુરધિગમ હૈ, ઉસકા શ્રવણ, મનન આદિ કરના ખી
નિસ્સાર હી હૈ ? ।

સમાધાન—શઙ્કાકારકી યહ શઙ્કા ઠીક નહીં હૈ; ક્યોં કિ સ્વતન્ત્ર
સમ્યગ્દર્શન મોક્ષકા કારણ નહીં માના ગયા હૈ । જવ તક જીવ કો સમ્ય-
ક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ તવ તક ઉસકે જ્ઞાન ઓર ચારિત્ર મિથ્યા-
રૂપ મેં રહતે હૈ । જ્ઞાન ઓર ચારિત્રમેં સમ્યક્ષપના હસી સમ્યક્ત્વ કે દ્વારા
આના હૈ, અતઃ સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર કી ઉત્પત્તિ દ્વારા હી
સમ્યક્ત્વ મોક્ષકા હેતુ હોતા હૈ । હસી અભિપ્રાયકો લે કર સમ્યક્ત્વ,
મોક્ષકા કારણ કહા ગયા હૈ । જવ તક સમ્યક્ત્વ પૂર્ણ જ્ઞાન ઓર પૂર્ણ
ચારિત્ર કો ઉત્પન્ન નહીં કર દેતા તવ તક વહ મોક્ષકા કારણ નહીં હોતા ।
મુક્તિ સમ્યક્ચારિત્ર સે હી પ્રાપ્ત હોતી હૈ, હસ કારણ સે સમ્યક્
ચારિત્ર હી મુક્તિકા સાક્ષાત્ કારણ હૈ । યહ ચારિત્ર સમ્યક્ત્વ કા કાર્ય
ઓર ઉસકા અભિવ્યંજક-પ્રકાશક હોતા હૈ ।

વ્યર્થ છે ? તથા સામાયિકદ્વિદ્વાદશાંગરૂપ શ્રુતજ્ઞાન, કે જે મહાવિસ્તારસંપન્ન અને
દુરધિગમ છે; તેનું શ્રવણ મનન આદિ કરવું પણ નિસ્સાર જ છે ?

સમાધાન—શંકાકારની શંકા ઠીક નથી, કારણ કે સમ્યગ્દર્શન મોક્ષનું સ્વ-
તન્ત્ર કારણ માનવામાં આવ્યું નથી. જ્યાં સુધી જીવને સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ નથી
થતી ત્યાં સુધી તેનું જ્ઞાન અને ચારિત્ર મિથ્યારૂપમાં રહે છે. જ્ઞાન અને ચારિ-
ત્રમાં સમ્યક્ષપણું આ સમ્યક્ત્વદ્વારા આવે છે, એથી સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્-
ચારિત્રની ઉત્પત્તિ દ્વારા જ સમ્યક્ત્વ મોક્ષનો હેતુ થાય છે. આ અભિપ્રાયને
લઈને જ સમ્યક્ત્વને મોક્ષનું કારણ કહેવામાં આવ્યું છે. જ્યાં સુધી સમ્યક્ત્વ
પૂર્ણ જ્ઞાન અને પૂર્ણ ચારિત્રને ઉત્પન્ન નથી કરતું ત્યાં સુધી તે મોક્ષનું કારણ
નથી થતું. મુક્તિ સમ્યક્-ચારિત્રથી જ પ્રાપ્ત થાય છે, આ કારણથી સમ્યક્
ચારિત્ર જ મુક્તિનું સાક્ષાત્ કારણ છે. આ ચારિત્ર સમ્યક્ત્વનું કાર્ય અને તેનું
અભિવ્યંજક (પગલ કરવાવાળું) થાય છે

“ શાસ્ત્રાણ્યધીત્યાપિ ભવન્તિ મૂર્ખા, યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।
સુચિન્તિતં ચૌપધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્યરોગમ્ ” ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વસદ્ભાવે શમસંવેગાદયો ગુણાઃ પ્રસન્નમુદયન્તે, તદાનીં કથમપિ તદુ-
દયં પ્રતિરોધું ન કથન સમર્થો ભવતિ । ઉક્તઞ્ચ—

“ અસમસુખનિધાનં ધામ સંવિગ્નતાયાઃ, ભવસુખવિમુક્ત્વોદીપને સદ્વિવેકઃ ।

નરનરકપશુત્વોચ્છેદહેતુર્નરાણાં, શિવસુગ્ધતરુવીજં શુદ્ધસમ્યક્ત્વલાભઃ ” ॥ ૧ ॥

વિષયક અભ્યાસ, एवं પરિપક્વ જ્ઞાન કયા કમી ઔષધિસેવનકે વિધિ
કી અનભિજ્ઞતા મેં નીરોગતા કા કારણ હો સકતા હૈ ? નહીં હો સકતા ।
યદિ હો સકતા તો ફિર ઉસકા નામ રડનેવાલે રોગી પુરુષોં કી વાત હી
કયા કહની ? ઉન્હેં બી ઉસસે ફાયદા હો જાના ચાહિયે । કહા બી હૈ—

“ શાસ્ત્રાણ્યધીત્યાપિ ભવન્તિ મૂર્ખા, યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।
સુચિન્તિતં ચૌપધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્યરોગમ્ ” ॥ ૧ ॥

શાસ્ત્રોકો પઢકર બી મનુષ્ય મૂર્ખ રહ જાતે હૈં । જો ક્રિયાવાન્ હૈ
વહી વિદ્વાન્ હૈ । વીમાર વ્યક્તિકો સુચિન્તિત બી ઔષધિ નામમાત્ર
લેને સે આરોગ્યદાયક નહીં હોતી ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વકે સદ્ભાવમેં શમસંવેગાદિક ગુણોંકી ઉત્પત્તિ અવશ્ય
હોતી હૈ, ઉનકો રોકને કે લિયે કોઈ બી સમર્થ નહીં હો સકતા, ક્યોં
કિ વહ સર્વગુણસમ્પન્ન હૈ । કહા બી હૈ—

“ અસમસુખનિધાનં ધામ સંવિગ્નતાયાઃ,
ભવસુખવિમુક્ત્વોદીપને સદ્વિવેકઃ ।

નરનરકપશુત્વોચ્છેદહેતુર્નરાણાં,

શિવસુગ્ધતરુવીજં શુદ્ધસમ્યક્ત્વલાભઃ ” ॥ ૧ ॥

અનભિજ્ઞતામા નીરોગતાનુ કારણ કેઈ વળત બની શકે છે ?—નથી બની શકતું.
જો બની શકે તો પછી તેનુ નામ લેવાવાળા રોગી પુરુષોની વાત જ શુ કહેવી ?
તેને પણ તેનાથી કાયદો થવા જોઈએ કહ્યુ પણ છે.—

“ શાસ્ત્રાણ્યધીત્યાપિ ભવન્તિ મૂર્ખા, યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।

સુચિન્તિતં ચૌપધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્યરોગમ્ ” ॥ ૧ ॥

શાસ્ત્રને અભ્યાસ કરીને પણ મનુષ્ય મૂર્ખ રહી જાય છે. જો ક્રિયાવાન્
છે તે વિદ્વાન્ છે બીમાર મનુષ્યને સુચિન્તિત પણ ઔષધિ નામમાત્ર લેવાથી
આરોગ્યદાયક નથી થતી ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વના સદ્ભાવમા શમસંવેગાદિક ગુણોની ઉત્પત્તિ અવશ્ય થાય છે, એને
રોકવાને માટે કેઈ સમર્થ થતું નથી કારણ કે તે સર્વગુણસમ્પન્ન છે. કહ્યુ પણ છે—

सूत्रकृताङ्गे च—“ एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ॥१॥ ” (अ० ११)

ज्ञानं हि क्रियापरिणामाऽनापन्नं सत् कमप्यर्थं साधयितुं न शक्नोति । यथा शास्त्राभ्यसनकुशलोऽपि तदर्थविज्ञाननिपुणोऽपि तदुक्तधर्मानाचरणेन तदभ्यसनादिकं सर्वं निष्फलीकुर्वन्नहि विद्वत्पदं लभते । यथा वा—औषधस्वरूपगुणप्रज्ञावतामपि वैद्यानां तत्सविधिसेवनक्रियामन्तरेण तत्प्रज्ञा नैरुज्यं न जनयति, यद्यौषधज्ञानवतामियमवस्था, तर्हि का वार्त्ता केवलं तन्नामरटनशीलानां जनानाम् । तथा चोक्तम्—

सूत्रकृताङ्ग में भी यही लिखा है—

“ एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ” ॥ १ ॥ (सू० अ० ११)

ज्ञान जब तक क्रियात्मक (चारित्ररूप) नहीं होता तब तक वह किसी भी इष्ट अर्थ की पुष्टि नहीं कर सकता । जैसे—शास्त्रके अभ्यास करनेमें कुशलमति व्यक्ति उसके अर्थका विशिष्ट ज्ञाता होकर भी जब तक शास्त्रविहित मार्ग को जीवनमें क्रियात्मकरूप नहीं देता तब तक वह उसके अभ्यास या ज्ञान से अपने किसी भी इच्छित कार्य की सिद्धि नहीं कर सकता है, और न वह यथार्थ विद्वत्ता के पदसे ही विभूषित हो सकता है । अतः उसको क्रियात्मक रूप देने के बिना जैसे उसका वह अभ्यास एवं ज्ञान निष्फल है, उसी प्रकार सम्यग्दर्शन भी ज्ञान-क्रियाके अभाव में मोक्षका साधक नहीं होता है । वैद्यका औषधि-

सूत्रकृताङ्गमां पणु अे न् लण्यु छे—

“ एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ” ॥ १ ॥ सूत्र० अ० ११ ।

ज्ञान न्यां सुधी क्रियात्मक (चारित्ररूप) नहीं थतुं त्यां सुधी ते डोछ पणु छण्ट अर्थनी पुष्टि नहीं करी शकतुं. जेम शास्त्रनो अभ्यास करवामां कुशलमति मनुष्य अेना अर्थनो विशिष्ट ज्ञाता होवा छतां पणु न्यां सुधी शास्त्रविहित मार्गने जवनमां क्रियात्मकइपथी नहीं उतारतो त्यां सुधी ते तेना अभ्यासना ज्ञानथी पोताना डोछ पणु छण्टित कार्यनी सिद्धि प्राप्त करी शकतो नहीं, अने यथार्थ विद्वत्ताना पहथी पणु ते विभूषित थछ शकतो नहीं. अेथी तेने क्रियात्मक इप आप्या विना जेम तेनो आ अभ्यास तेमज् ज्ञान निष्पण छे ते प्रडारे सम्यग्दर्शन पणु ज्ञान-क्रियाना अभावमां मोक्षनुं साधक थतु नहीं. वैद्यनो औषधविषयक अभ्यास अने परिपक्व ज्ञान औषधिसेवनना विधिनी

યથાપ્રવૃત્તિકરણમ્, અપૂર્વકરણમ્, અનિવૃત્તિકરણં ચેતિ । યથા=અનાદિસંસિદ્ધપ્રકારેણ પ્રવૃત્તિઃ=પ્રવર્તમાનં-યથાપ્રવૃત્તિ, ક્રિયતે કર્મક્ષયમનેનેતિ કરણં-જીવપરિણામરૂપમ્ । યથાપ્રવૃત્તિ ચ તત્ કરણં ચેતિ યથાપ્રવૃત્તિકરણમ્ ।

એવમુત્તરત્રાપિ કરણશબ્દેન કર્મધારયો बोध्यः । एवं चानादिकालात् કર્મક્ષયપ્રવૃત્તોઽધ્યવસાયવિશેષો યથાપ્રવૃત્તિકરણમિતિ ફલિતમ્ । એતાનિ ત્રીણ્યપિ કરણાનિ ભવ્યાનાં ભવન્તિ । અભવ્યાનાં તુ પ્રથમમેવ યથાપ્રવૃત્તિકરણં ભવતિ નેતરદ્વયમ્ ।

અનાદિ પરંપરા સે જો પ્રવર્તમાન હૈ વહ યથાપ્રવૃત્તિ હૈ, તથા કર્મ ક્ષય જિસકે દ્વારા કિયા જાતા હૈ વહ કરણ હૈ, યહ કરણ જીવકા પરિણામસ્વરૂપ હી હૈ । યથાપ્રવૃત્તિરૂપ જો કરણ હૈ ઉસકા નામ યથાપ્રવૃત્તિકરણ હૈ । યહ ઇસકા નિરુક્ત-અર્થ હૈ । ઇસી પ્રકાર આગે મી કરણ શબ્દ કે સાથ કર્મધારય સમાસ કા સંબંધ કર લેના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર અનાદિ કાલસે કર્મક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્ત જીવકા પરિણામવિશેષ હી યથાપ્રવૃત્તિકરણ હૈ, યહી ઇસકા ફલિતાર્થ હૈ । યે ત્રીન કરણ ભવ્યોં કે હોતે હૈં । અભવ્યોં કે સિર્ફ પ્રથમ હી કરણ હોતા હૈ, અન્તકે દો નહીં હોતે ।

યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ પરિણામ જીવકે હોતા હી રહતા હૈ । ઇસકે દ્વારા જીવ ઉદયમેં આવે હુઐ જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોંકી પ્રકૃતિયોં કા ક્ષય કરતા રહતા હૈ । ઇસ લિયે ઇસ પરિણામકે કર્મક્ષય કા કારણ હોને સે જીવ ઇસકે બલ પર યથાસંભવ કર્મસ્થિતિકા ક્ષય કરતા હુઐ બન-કઠિનતર રાગદ્વેષરૂપી ગ્રન્થિકે સમીપ તક પહુંચ જાતા હૈ । યહ ગ્રન્થિ

અનાદિ પરંપરાથી જે પ્રવર્તમાન છે તે યથાપ્રવૃત્તિ છે, અને કર્મક્ષય જેના દ્વારા કરવામાં આવે છે તે કરણ છે. આ કરણ જીવના પરિણામસ્વરૂપ છે યથાપ્રવૃત્તિરૂપ જે કરણ છે તેનું નામ યથાપ્રવૃત્તિકરણ છે. તે એનો નિરુક્ત-અર્થ છે. આ પ્રકારે આગળ પણ કરણ-શબ્દની સાથે કર્મધારયસમાસનો સંબંધ કરી લેવો જોઈએ આ પ્રકારે અનાદિકાળથી કર્મક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્ત જીવનું પરિણામ વિશેષ જ યથાપ્રવૃત્તિકરણ છે, તે તેનું ફલિતાર્થ છે એ ત્રણ કરણ ભવ્યોને થાય છે અભવ્યોને ફક્ત પ્રથમ જ કરણ થાય છે, બાકીના બે નથી થતા

યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ પરિણામ જીવને થતા જ રહે છે એના દ્વારા જીવ ઉદયમાં આવેલા જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોંની પ્રકૃતિયોંનો ક્ષય કરતો રહે છે તેથી આ પરિણામ કર્મક્ષયનું કારણ હોવાથી આ જીવ તેના બલ ઉપર યથાસંભવ કર્મસ્થિતિનો ક્ષય કરતા બન-કઠિનતર રાગદ્વેષરૂપી ગ્રન્થિની સમીપ મુઘી પહોંચી જાય છે. આ ગ્રન્થિ એટલી ગાઢ-ગ્રંથાત્મક છે કે જેનું આ

किंच—“सम्यक्त्वरत्नान्न परं हि रत्नं, सम्यक्त्वबन्धोर्न परोऽस्ति बन्धुः ।
सम्यक्त्वमित्रान्न परं हि मित्रं, सम्यक्त्वलाभान्न परोऽस्ति लाभः” ॥ २ ॥
तदेवं सम्यक्त्वमिह मोक्षस्य बीजमिति सिद्धम् ।

सम्यक्त्वप्राप्तिक्रमः ।

अनादिमिथ्यादृष्टेर्जीवस्य सम्यक्त्वप्राप्तौ यथाक्रमं त्रीणि करणानि भवन्ति ।

यह सम्यक्त्व अनुपम सुखका निधान है, वैराग्यकी उत्पत्ति का कारण है, वैराग्यको प्रकट करने में शुद्ध विवेक है, चार गतिके दुःखोंका उच्छेद करने में कारण है और मोक्षसुखरूप वृक्षका यह बीज है ॥ १ ॥

और भी कहा है—

“सम्यक्त्वरत्नान्न परं हि रत्नं, सम्यक्त्वबन्धोर्न परोऽस्ति बन्धुः ।
सम्यक्त्वमित्रान्न परं हि मित्रं, सम्यक्त्वलाभान्न परोऽस्ति लाभः” ॥ २ ॥

सम्यक्त्व—रत्नसे कोई उत्कृष्ट रत्न नहीं है, इससे बढ़कर कोई बन्धु नहीं है । यह सम्यक्त्व परम मित्र है, और इसका लाभ ही परमलाभ है ॥
इससे यह सिद्ध हुआ कि सम्यक्त्व मोक्षका मूल कारण है ।

सम्यक्त्वकी प्राप्ति का क्रम—

अनादिमिथ्यादृष्टि जीव जब सम्यक्त्वप्राप्तिके संमुख होता है उस समय उसके यथाक्रमसे तीन करण होते हैं—(१) यथाप्रवृत्तिकरण, (२) अपूर्वकरण, (३) अनिवृत्तिकरण ।

“असमसुखनिधान धाम संविग्नतायाः, भवसुखविमुखत्वोद्दीपने सद्विवेकः ।

नरनरकपशुत्वोच्छेदहेतुर्नराणां, शिवसुखतरुबीजं शुद्धसम्यक्त्वलाभः” ॥ १ ॥

आ सम्यक्त्व अनुपम सुखनुं निधान छे. वैराग्यनी प्राप्तिनुं कारण छे. वैराग्यने प्रगट करवामां शुद्ध विवेक छे. चार गतिना दुःखना उच्छेद करवामां कारण छे अने मोक्षसुखरूप वृक्षनुं ओ बीज छे. ॥ १ ॥ वणी पणु कहुं छे—

“सम्यक्त्वरत्नान्न परं हि रत्नं, सम्यक्त्वबन्धोर्न परोऽस्ति बन्धुः ।

सम्यक्त्वमित्रान्न परं हि मित्रं, सम्यक्त्वलाभान्न परोऽस्ति लाभः” ॥ २ ॥

सम्यक्त्वरत्नथी कोछ उत्कृष्ट रत्न नथी. अनाथी वधीने कोछ बंधु नथी. आ सम्यक्त्व परम मित्र छे, अने अनेो लाभ न परम लाभ छे ॥ १ ॥

अथी ओ सिद्ध थयुं के सम्यक्त्व मोक्षनुं मूल कारण छे.

सम्यक्त्वनी प्राप्तिनो क्रम

अनादिमिथ्यादृष्टि जीव ज्यारे सम्यक्त्वप्राप्तिने सम्मुख थाय छे ते वधते तेने यथाक्रमथी त्रण करणु थाय छे—(१) यथाप्रवृत्तिकरण (२) अपूर्वकरण, (३) अनिवृत्तिकरण.

ગ્વાતે, તથા અનંત દુઃખોંની પરંપરાકો સહતે હુણે ઇસ જીવકે સ્વાભાવિક રીતિ સે-ચિના કિસી પ્રયત્ન કે-વિશુદ્ધ યથાપ્રવૃત્તિકરણ નામકા પરિણામ પ્રગટ હોતા હૈ, જિસકે દ્વારા યહ જીવ દીર્ઘતર કર્મસ્થિતિ કો ખી ઇતની સ્વપા દેતા હૈ કિ જિસસે આયુકર્મ કો છોડ કર શેષ જ્ઞાનાવરણીયાદિક સમસ્ત સાત કર્મોંની સ્થિતિ પત્ય કે અસંખ્યાતવેં ભાગ કમ એક કોટાકોટીસાગરપ્રમાણ અવશિષ્ટ રહ જાતી હૈ ।

વિશેષાર્થ—જૈસે પર્વતપ્રદેશમેં વહનેવાલી નદીકા પથર ઉસકી પ્રબલ ધારાસે આહત હો ઇધર-ઉધર ટકરા કર સ્વાભાવિક રીતિસે ગોલમોલ હો જાયા કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર અનાદિકાલસે કર્મકે વશીભૂત હોકર સંસારરૂપી સમુદ્રમેં પડા હુઆ યહ જીવરૂપી પાષાણખણ્ડ ખી ચતુર્ગતિયોં કે દુઃખરૂપી પ્રબલતમ પ્રવાહોં સે રાત-દિન ટકરા કર ગોલમોલસ્વરૂપ યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ-અવસ્થાસંપન્ન હો જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર નદીકા પાષાણ વિના કિસી પ્રયત્ન એવં અનાભોગરૂપસે (સ્વાભાવિકરૂપસે) ગોલ હો જાયા કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર યહ કરણ ખી વિના કિસી પ્રયત્ન સે-સ્વાભાવિકરૂપ સે હી જીવ કો પ્રાપ્ત હો જાયા કરતા હૈ । યહ જીવ કા વિશુદ્ધ પરિણામ હૈ । ઇસકે પ્રભાવસે ઉસકે આયુકર્મ કો છોડ કર અવશિષ્ટ (શેષ) સાત કર્મોંની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ વટ કર પત્યકે અસં-

પ્રયત્ને વિશુદ્ધ યથાપ્રવૃત્તિકરણ નામનુ પરિણામ પ્રાપ્ત (પ્રગટ) થાય છે જેના દ્વારા આ જીવ દીર્ઘતર કર્મસ્થિતિને પણ એટલી ખપાવી દે છે કે જેથી આયુકર્મને છોડીને શેષ જ્ઞાનાવરણીયાદિક સમસ્ત સાત કર્મોંની સ્થિતિ પત્યના અસંખ્યાતમા ભાગ હીન એકકોટાકોટીસાગરપ્રમાણ અવશિષ્ટ રહી જાય છે.

વિશેષાર્થ—જેમ પર્વતપ્રદેશમાં વહેવાવાળી નદીનો પથર એની પ્રબલ ધારાથી અહીં-તહીં અથડાઈ કુટાઈને સ્થાલાવિક રીતિથી ગોળમોળ થઈ જાય છે, તે પ્રકારે અનાદિ કાળથી કર્મના વશીભૂત થઈને સંસારરૂપી સમુદ્રમાં પડી રહેલા આ જીવરૂપી પાષાણખંડ પણ ચતુર્ગતિના દુઃખરૂપ પ્રબલ પ્રવાહથી રાતદિન અથડાઈને ગોળમોલસ્વરૂપ યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ-અવસ્થાસંપન્ન થઈ જાય છે જેમ નદીના પાષાણ, કોઈ પ્રયત્ન વિના અને અનાભોગરૂપથી (સ્થાલાવિક રૂપથી) ગોળ થયા કરે છે તે પ્રકારે આ કરણ પણ કોઈ પ્રયત્ન વિના સ્થાલાવિક રૂપમાં જ જીવને પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. આ જીવનો વિશુદ્ધ પરિણામ છે. આના પ્રભાવથી એ જીવના આયુકર્મને છોડીને અવશિષ્ટ (શેષ) સાત કર્મોંની

અધ્યવસાયસ્ય સર્વદૈવ ભાવાદુદયપ્રાપ્તાનાં જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટકર્મપ્રકૃતીનાં ક્ષપણેન કર્મક્ષયકારણતયા યથાપ્રવૃત્તિકરણેન યથાસંભવં કર્મસ્થિતિં ક્ષપયતો જીવસ્ય ઘનરાગ-
દ્વેષપરિણામરૂપો ગ્રન્થિરવતિષ્ઠતે, યથાપ્રવૃત્તિકરણસ્ય મન્દવિશુદ્ધિપરિણામરૂપત્વેન ગ્રન્થિભેદનસામર્થ્યાભાવાત્ ।

નતુ તર્હિં યથાપ્રવૃત્તિકરણેન કિયતી કર્મસ્થિતિઃ ક્ષપિતા ભવતિ? ઉચ્યતે—
યથા ગિરિનદ્યાં પાપાણસ્વખંડાનિ તદ્વેગતો વર્ષણાદિના વર્તુલાકારાણિ જાયન્તે, એવમનાદિકાલતઃ પૂર્વપૂર્વકર્મવગાચ્ચતુર્ગતિકસંસારસાગરં પ્રાપ્તસ્યાનન્તદુઃખાનિ સહ-
માનસ્ય જીવસ્ય પરિણામસ્વભાવતયાઽનાભોગનિર્વર્તિતેન યથાપ્રવૃત્તિકરણાખ્યેન વિશુદ્ધિપરિણામેન દીર્ઘતરાઽપિ કર્મસ્થિતિસ્તથા ક્ષપિતા ભવતિ યથાઽઽયુર્વર્જાનાં જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણાં સર્વેષાં સ્થિતિઃ પલ્યોપમાસંખ્યાતભાગન્યૂનૈકકોટીકોટી-
સાગરોપમપ્રમાણાઽવશેષા તિષ્ઠતિ ।

ઇતની ગાઢ-પ્રબલતમ હોતી હૈ કિ જિસકા ઇસ પરિણામકે દ્વારા ભેદન કરના સર્વથા અશક્ય કાર્ય હૈ । જીવકો ઇસ ગ્રન્થિકે દેશ તક પહુંચાના હી ઇસ પરિણામ કા કામ હૈ । ગ્રન્થિકા ભેદન ઇસકે દ્વારા ઇસ લિયે નહીં હોતા હૈ કિ યહ પરિણામ મન્દવિશુદ્ધિવાલા હૈ ।

શંકા—આપકા કથન ઠીક હૈ; પરન્તુ અમી તક યહ માલૂમ નહીં હો રહા હૈ કિ ઇસ પરિણામકે દ્વારા કિતની કર્મસ્થિતિકા ક્ષય હોતા હૈ ।

ઉત્તર—જેસે પર્વતીય નદી મેં પાષાણસ્વખંડ નદીકે પ્રબલ પ્રવાહ કે વેગસે લુઢકતે હુએ ઓર ઇધર ઓધર સે ટકરાતે હુએ સ્વાભાવિક રીતિસે ગોલમોલ હો જાતા હૈ, ડસી પ્રકાર અનાદિકાલસે કર્મકી અનવચ્છિન્ન સંતતિ (અટૂટ પરંપરા) કે વશીભૂત રહ કર ચતુર્ગતિસ્વરૂપ ઇસ સંસાર મહાસાગરમેં ગોતે

પરિણામદ્વારા ભેદન કરવું સર્વથા અશક્ય કાર્ય છે. જીવને આ ગ્રન્થિના દેશ સુધી પહોંચ્યાડવું જ આ પરિણામનું કામ છે ગ્રન્થિનું ભેદન એના દ્વારા તે માટે નથી થતું કે આ પરિણામ મન્દવિશુદ્ધિવાળું છે.

શંકા—આપનું કથન ઠીક છે, પરંતુ હજી સુધી એ માલૂમ નથી કે આ પરિણામદ્વારા કેટલી કર્મસ્થિતિનો ક્ષય થાય છે.

ઉત્તર—જેમ પર્વતીય નદીમાં પાષાણખંડ એના પ્રબલ પ્રવાહના વેગથી આમ-તેમ અથડાઈને ઘસાતો ઘસાતો સ્વાભાવિક રીતિથી ગોળમોલ થઈ જાય છે, તે જ પ્રકારે અનાદિ કાળથી કર્મની અનવચ્છિન્નસંતતિ-અટૂટપરંપરાને વશીભૂત રહીને ચતુર્ગતિસ્વરૂપ આ સંસારમહાસાગરમાં ગોથા ખાતાં અને અનંત દુઃખોની પરંપરાને સહન કરતાં એ જીવને સ્વાભાવિક રીતિથી-વિના કોઈ

भवति । एतदनन्तरं कश्चिदेव महात्मा भव्यजीवस्तु यथाप्रवृत्तिकरणाख्यपरिणामा-
दप्यधिकविशुद्धिपरिणामं प्राप्तुमर्हति, स एवापूर्वकरणाख्यः परिणामः । तं प्राप्यासौ
निशितकुठारधारयेव परमविशुद्ध्या घनरागद्वेषातिद्वन्द्वसंस्काररूपं ग्रन्थि सर्वथा
छिनत्ति भिनत्ति च ।

यत् पूर्व न जातं तदपूर्वम्, अपूर्वं च तत् करणं चेत्यपूर्वकरणम् । अयं परि-
णामः सकृदेव भवति, न तु पुनः पुनरिति । यथाप्रवृत्तिकरणं त्वभव्यानामप्यनन्तशः
प्रादुर्भवति । तस्मादभव्या अपि यथाप्रवृत्तिकरणेन कर्म क्षपयित्वा ग्रन्थि यावदन-
न्तशः समागच्छन्ति ।

अपूर्वकरणपरिणामेन ग्रन्थेः सर्वथा भेदने कृते सति तदपेक्षयाऽप्यधिकविशुद्धि-
परिणामो भवति, स त्वनिवृत्तिकरणपरिणामः । तदव्यवहितोत्तरकाले जीवः सम्य-
क्त्वं नियमतः प्राप्नोति, न चासौ सम्यक्त्वमनवाप्य निवर्तते, तस्मादनिवृत्ति-
ग्रन्थिको सर्व प्रकार से छिन्न-भिन्न कर डालता है । यह परिणाम जीव
को पहिले कभी भी प्राप्त नहीं हुआ इसी लिये इसकी अपूर्वकरण संज्ञा
है । जो पहिले न हुआ हो वह अपूर्व है । अपूर्व जो करण वह अपूर्वकरण
है । वह परिणाम जीवके लिये एकवार ही होता है, बारंबार नहीं । यथा-
प्रवृत्तिकरण तो अभव्यों के अनन्तवार भी हो जाता है, इस लिये वे
इस के द्वारा कर्मों का क्षपण कर ग्रन्थिदेश तक अनन्तवार आ जाते हैं ।

अपूर्वकरण-परिणाम से ग्रन्थिका सर्वथा भेद होने पर इसके
अनन्तर इस से भी अधिक विशुद्ध परिणाम उत्पन्न होता है, जिस
का नाम अनिवृत्तिकरण है । इसके द्वारा व्यवधानरहित इसीके उत्तर-
कालमें (इसी समय) जीव नियमसे सम्यक्त्वकी प्राप्ति कर लेता है ।

નામે છે અને ભેદી નામે છે આ પરિણામ જીવને પહેલા કોઈ વખત પણ
પ્રાપ્ત નથી થયું તેથી એની અપૂર્વકરણ સંજ્ઞા છે જે પહેલા નથી થયું તે
અપૂર્વ છે અપૂર્વ જે કરણ તે અપૂર્વ કરણ છે આ પરિણામ જીવને માટે એક
વાર જ થાય છે, વારંવાર નહિ. યથાપ્રવૃત્તિકરણ તો અભવ્યોને અનંત વાર પણ
થાય છે આથી તે એના દ્વારા કર્મોનું ક્ષપણ કરીને ગ્રન્થિદેશ સુધી અનંતી-
વાર આવે છે

અપૂર્વકરણ-પરિણામથી ગ્રન્થિનો સર્વથા ભેદ થવાથી એના પછી
આનાવી પણ અધિક વિશુદ્ધ પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે, જેનું નામ અનિવૃત્તિ-
કરણ છે એના દ્વારા વ્યવધાનરહિત એના ઉત્તરકાળમાં (એ જ વખતે) જીવ
નિયમથી સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કરી લે છે આ પરિણામ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિ કરાવ્યા

અત્રાન્તરે ચ જીવસ્ય કર્મજનિતો ઘનરાગદ્વેષપરિણામરૂપઃ કર્કશનિવિડચિરપ્રહ-
ઠગૂઢવક્રગ્રન્થિવદ્ દુર્ભેદ્યઃ કર્મસ્થિતિવિશેષો ગ્રન્થિર્ભવતિ ।

અભવ્યોઽપિ જીવઃ શ્વલુ યથાપ્રવૃત્તિકરણેન પ્રાગુક્તકર્મણાં દીર્ઘતરસ્થિતિં
હાસયન્નેકકોટીકોટીસાગરોપમપ્રમાણાં કર્તુમર્હતિ, પરન્તુ ગ્રન્થિભેદનાય ન સમર્થો
સ્થિતવૈ ભાગ કમ એકકોટીકોટીસાગરપ્રમાણ (અન્તઃકોટીકોટી
સાગરપ્રમાણ) રહ જાતી હૈ ।

इसके बाद जीवके कर्मजनित-कर्मों से उत्पन्न की गई-और सघन
कठिनतर रागद्वेष परिणामवाली कर्मों की विशेषस्थितिरूप एक ग्रन्थि
होती है, जो अत्यन्त कठोर, सघन और पुरानी गूढ़ गांठके समान
दुर्भेद्य होती है । जैसे-बहुत पुरानी कठोर गांठका-कि जो चिकनाई
आदिके संबंधसे अत्यन्त चिपट गई है और जिसका फंदा भी नजर
नहीं आ रहा है, एवं जो टेढ़ी मेढ़ी लगी हुई है; उसका खोलना दुःशक्य
है, उसी प्रकार की यह कर्मस्थिति भी एक दुर्भेद्य गांठ है ।

અભવ્ય જીવ મી ઇસી યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા આયુકર્મ સિવાય અન્ય
સાત કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કો ખપા કર એક કોટીકોટી સાગરપ્રમાણ
કર દેતા હૈ; પરન્તુ ગ્રન્થિભેદન નહીં કર સકતા । ઇસકે પશ્ચાત્ કોઈ હી
મહાત્મા ભવ્ય જીવ યથાપ્રવૃત્તિકરણ સે મી અધિક વિશુદ્ધિસંપન્ન અપૂર્વ
કરણ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । ઇસકે દ્વારા વહ ઘન રાગદ્વેષરૂપ અતિદૃઢ

ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ઘટીને પદ્યના અસંખ્યાતમાં ભાગ હીન એક કોટીકોટીસાગર
પ્રમાણ (અન્તઃકોટીકોટીસાગરપ્રમાણ) રહી જાય છે.

ત્યાર બાદ જીવની કર્મજનિત-કર્મોની ઉત્પન્ન થયેલી-અને સઘન કઠિનતર
રાગદ્વેષપરિણામવાળી કર્મોની વિશેષ સ્થિતિરૂપ એક ગ્રન્થિ હોય છે, જે
અત્યન્ત કઠોર, સઘન અને જુની ગૂઢ-ગાંઠની સમાન હોઈ હોય છે. જેમ
ઘણી જુની કઠણ ગાંઠનું, કે જે ચિકણાપણા વિગેરેના સંબંધથી અત્યન્ત ચોટી
ગયેલ છે, અને જેનો સાંધો પણ નજર નથી આવતો, અને જે વાંકીચુકી લાગેલી
છે; એનું તોડવું જેમ અશક્ય હોય છે. તે જ પ્રકારની આ કર્મસ્થિતિ પણ
એક હોઈ ગાંઠ છે.

અભવ્ય જીવ પણ આ યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા આયુકર્મ સિવાય અન્ય
સાત કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિને ખપાવીને એકકોટીકોટીસાગરપ્રમાણ કરી દે
છે, પરંતુ ગ્રન્થિભેદન કરી શકતા નથી. એના પશ્ચાત્ કોઈ પણ મહાત્મા ભવ્ય
જીવ યથાપ્રવૃત્તિકરણથી પણ અધિકવિશુદ્ધિસંપન્ન અપૂર્વ-કરણને પ્રાપ્ત
કરે છે. એના દ્વારા તે ઘન-રાગદ્વેષરૂપ અતિદૃઢ ગ્રન્થિને સર્વ પ્રકારથી છેદી

રાન્તર્મુહૂર્તકાલે ઉદેપ્યમાણં મિથ્યાત્વદલિકં દ્વિધા વિધાય તત્રૈકં દલિકમનિવૃત્તિ-
 કરણાન્તિમસમયપર્યન્તે ઉદયમાનમિથ્યાત્વદલિકેષુ નિશ્ચિપતિ, દ્વિતીયં દલિકં
 ત્વનિવૃત્તિકરણાવ્યવહિતોત્તરકાલિકાન્તર્મુહૂર્તસમાપ્ત્યનન્તરકાલે ઉદેપ્યમાણૈર્મિથ્યા-
 ત્વદલિકૈઃ સહ સંયોજયતિ । તથા ચાનિવૃત્તિકરણકાલાવ્યવહિતોત્તરકાલે પ્રથમો-
 ઽન્તર્મુહૂર્તકાલ એકસ્તાદશઃ સંજાયતે યત્ર મિથ્યાત્વકર્મણાં કિંચિદપિ દલિકં નૈવ
 તિષ્ઠતિ । તથાચાનેનાન્તરકરણેન ભવ્યસ્તસ્મિન્નન્તર્મુહૂર્તે ઉદયયોગ્યમિથ્યાત્વદલિક-
 હૈ વહ કહતે હૈ—જિસકે અપૂર્વકરણ ઓર અનિવૃત્તિકરણ, ઇન દો
 વિશુદ્ધ પરિણામોં સે વિશિષ્ટ શક્તિકા વિકાસ હુઆ હૈ એસા ભવ્ય જીવ
 વ્યવધાનરહિત અનિવૃત્તિકરણ કે ઉત્તર અન્તર્મુહૂર્ત-સમય મેં આગામી
 કાલમેં ઉદય આને યોગ્ય મિથ્યાત્વ દલિયોં કે દો ટુકડે-ભાગ કરતા હૈ।
 ઉસમેં એક ટુકડે કો અનિવૃત્તિકરણકે અન્તિમસમયપર્યન્ત ઉદયાગત
 મિથ્યાત્વકે દલિયોં મેં પ્રક્ષિપ્ત કરતા હૈ, ઓર દૂસરે ભાગકો અનિવૃત્તિ-
 કરણ કે અવ્યવહિન ઉત્તરકાલીન અન્તર્મુહૂર્ત કી સમાપ્તિકે અનન્તર
 (અન્તરરહિત) કાલમેં ઉદય આને યોગ્ય મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કે સાથ
 સંયુક્ત કરતા હૈ । ઇસ તરહ અનિવૃત્તિકરણ કાલકે વ્યવધાનરહિત
 ઉત્તર કાલમેં પ્રથમ અન્તર્મુહૂર્તકાલ એક એસા કાલ હોતા હૈ કિ જિસમેં
 મિથ્યાત્વ કર્મકા એક ભી દલિયા શેપ નહીં રહતા । ઇસ અન્તરકરણ
 પરિણામ કે દ્વારા ભવ્ય જીવ ઉસ અન્તર્મુહૂર્તકાલ મેં ઉદય યોગ્ય મિથ્યાત્વ
 કે દલિયોં કે પ્રથમ સ્થિતિરૂપ એક ભાગકો ઉસકે પૂર્વકાલવર્ત્તી જો અ-

કરણુ ડાર્ય છે, આ ડાર્ય એના દ્વારા જીવ ને પ્રકારથી કરે છે તે કહે છે—જેને
 અપૂર્વકરણ અને અનિવૃત્તિકરણ, આ બે વિશુદ્ધ પરિણામોંથી વિશિષ્ટ શક્તિનો
 વિકાસ થયો છે આવા ભવ્ય જીવ વ્યવધાનરહિત અનિવૃત્તિકરણની પછી અન્તર્મુહૂર્ત
 સમયમા આગામી કાળમા ઉદય આવવા યોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોના બે ટુકડા-ભાગ
 કરે છે એના એક ટુકડાને અનિવૃત્તિકરણના અન્તિમ સમયના અન્તમા ઉદયાગત
 મિથ્યાત્વના દલિયોમા પ્રક્ષિપ્ત કરે છે અને બીજા ભાગને અનિવૃત્તિકરણના અવ્ય-
 વહિન ઉત્તરકાલીન અન્તર્મુહૂર્તની સમાપ્તિના અનન્તર (અન્તરરહિત) કાળમા ઉદય
 આવવા યોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોની સાથે સંયુક્ત કરે છે આ રીતે અનિવૃત્તિ-
 કરણકાળના વ્યવધાનરહિત ઉત્તર કાળમા પ્રથમ અન્તર્મુહૂર્તકાળ એક એવો કાળ
 થાય છે કે જેમા મિથ્યાત્વ કર્મનો એક પણ દલિયુ શેપ નથી રહેતું. આ અન્તર-
 કાળ-પરિણામદ્વારા ભવ્ય જીવ આ અન્તર્મુહૂર્તકાળમા ઉદયયોગ્ય મિથ્યાત્વના
 દલિયોના પ્રથમ સ્થિતિરૂપ એક ભાગને એનો પૂર્વકાળવર્ત્તી જે અનિવૃત્તિકરણનો

करणमित्युच्यते । तस्य स्थितिकालोऽन्तर्मुहूर्तप्रमाणः, तदानीं जीवस्य वीर्यसमुल्ला-
सोऽपूर्वकरणापेक्षया परिवर्धते । तस्यान्तर्मुहूर्तप्रमाणायां स्थितौ संख्येयेषु भागेषु
गतेषु सत्स्वेकस्मिंश्च संख्येयतमे भागे शेषे तिष्ठति सति मिथ्यात्वप्रदेशवेद्यदलिका-
भावकरणरूपम् अन्तरकरणं प्रवर्तते । अन्तरकरणाख्यस्य जीवपरिणामरयापि स्थि-
तिकालोऽन्तर्मुहूर्तप्रमाणः, परन्तुन्तर्मुहूर्तस्यासंख्यातभेदसद्भावेनानिवृत्तिकरणकाल-
स्वरूपान्तर्मुहूर्तापेक्षया तदन्तिमभागवर्ती न्यूनोऽयमन्तरकरणकालोऽन्तर्मुहूर्तमिति ।

अनिवृत्तिकरणस्यान्तिमे भागेऽन्तरकरणस्य कार्यं प्रारम्भ्यते, तद्यथा-अपूर्वक-
रणानिवृत्तिकरणलक्षणविशुद्धिपरिणामजनितसामर्थ्यसमन्वितो भव्यस्तदव्यवहितोत्त-

यह परिणाम सम्यक्त्व प्राप्त कराये बिना छूटता ही नहीं है, इसी लिये
इसका नाम “ अनिवृत्तिकरण ” पड़ा है । इसकी स्थिति अन्तर्मुहूर्त की
है, जीवके अपूर्वकरणकी अपेक्षा इस समय अधिक मात्रामें वीर्योत्सास
बढ़ता है । अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थिति में से संख्यात भाग घटते २ जब
उसका अन्तिम संख्यातवां भाग अवशिष्ट रह जाता है उस समय
अन्तरकरण होता है । यह मिथ्यात्व के प्रदेशोंके वेदन करने योग्य द-
लियों के अभाव (क्षय) का कारण होता है । इसकी भी स्थिति अन्त-
र्मुहूर्त की है । यह अन्तर्मुहूर्त जघन्य अन्तर्मुहूर्त है । अनिवृत्तिकरण
के कालका अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है । अन्तर्मुहूर्तके भी असं-
ख्यात भेद हैं ।

अनिवृत्तिकरण के अन्तिम भागमें अन्तःकरणका कार्य प्रारम्भ होता
है । मिथ्यात्वके प्रदेशोंके वेदन करने योग्य दलियों का अभाव करना ही
अन्तरकरणका कार्य है । वह कार्य इसके द्वारा जीव जिस प्रकार से करता

वगर छूटता न थी, तेथी तेनु नाम “ अनिवृत्तिकरण ” पद्युं छे, ओनी
स्थिति अंतर्मुहूर्तनी छे जवने अपूर्वकरणनी अपेक्षा आसमये अधिक मात्रामां
वीर्योत्सास वधे छे. अन्तर्मुहूर्तप्रमाण स्थितिमांथी संख्यात लाग घटतां घटतां
न्यारे तेनो अन्तिम संख्यातमो लाग अवशिष्ट रही जाय छे ते वणते अन्त-
रकरण थाय छे आ मिथ्यात्वना प्रदेशोना वेदन करवा योग्य दलियोना अभाव
(क्षय) नुं कारण थाय छे. ओनी पणु स्थिति अन्तर्मुहूर्तनी छे. आ अन्त-
र्मुहूर्त जघन्य अन्तर्मुहूर्त छे. अनिवृत्तिकरणना कारणे अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट
अंतर्मुहूर्त छे अंतर्मुहूर्तना पणु असंख्यात भेद छे.

अनिवृत्तिकरणना अन्तिम भागमां अन्तरकरणनु कार्य प्रारंभ थाय छे
मिथ्यात्वना प्रदेशोना वेदन करवा योग्य दलियोना अभाव करवो, ओ न अन्त-

અનિવૃત્તિકરણાન્તિમસમયે વ્યતીતે સતિ યાવદન્તર્ધુર્હતં કથમપિ મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયો ન ભવતિ તદાનીં યેષાં મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયસંભવસ્તેષુ કેષાંચિદ્ દલિકાનાં તત્પૂર્વકાલે, કેષાંચિત્ તત્પશ્ચાત્કાલેઽન્તરકરણેનોદયાર્હતા સંપાદ્યતે । અનિવૃત્તિકરણસ્ય ચરમસમયપર્યન્તં મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયસદ્ભાવેન તાવત્કાઠપર્યન્તં જીવો મિથ્યાત્વી વર્તતે, પરં ત્વનિવૃત્તિકરણકાલે વ્યતીતે સતિ સપદિ જીવેનોપશમિકસમ્યક્ત્વં પ્રાપ્યતે, તદાનીં મિથ્યાત્વમોહનીયકર્મણો વિપાકતઃ પ્રદેગતશ્ચ સર્વથોદયાભાવાન્, અત એવ જીવસ્ય સ્વાભાવિકઃ સમ્યક્ત્વપરિણામઃ પ્રકટીભવતિ । ઇદં ચ સમ્યક્ત્વમૌપશમિકમિત્યુચ્યતે । ઉક્તશ્ચ—

“ જા ગંઠી તા પદમં, ગંઠિ સમઙ્છઓ ભવે વીયં ।

અણિયટ્ટીકરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલ્હે જીવે ” ॥ ૧ ॥

છાયા—યાવદ્ગ્રન્થિસ્તાવત્પ્રથમં (કરણં) ગ્રન્થિ સમતિક્રામતો (મિન્દાનસ્ય) ભવેદ્ દ્વિતીયમ્ । અનિવૃત્તિકરણં પુનઃ સમ્યક્ત્વપુરસ્કૃતે જીવે (ભવતિ) ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

પીછે ઉદયમેં આનેકી યોગ્યતા આતી હૈ । અનિવૃત્તિકરણ કે ચરમ સમય પર્યન્ત મિથ્યાત્વ કે દલિયોંંકા ઉદય હોનેસે ઉતને સમય તક જીવ મિથ્યાત્વી રહતા હૈ, પરન્તુ જ્યોંંહી અનિવૃત્તિકરણ કા કાલ સમાપ્ત હો જાના હૈ ત્યોંં હી જીવ જ્ઞાતિ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ । ઇસ સમય મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કા ન તો વિપાકોદય હી રહતા હૈ ઔર ન પ્રદેશોદય હી । સર્વપ્રકાર સે ઉસકે ઉદય કા ઇસ સમય અભાવ રહતા હૈ । ઇસી લિયે જીવ કા નૈસર્ગિક ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ-રૂપ પરિણામ ઉદ્ભૂત (પ્રગટ) હો જાતા હૈ । કહા ખી હૈ—

“ જા ગંઠી તા પદમં, ગંઠિ સમઙ્છઓ ભવે વીયં ।

અણિયટ્ટી કરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલ્હે જીવે ” ॥ ૧ ॥

ગ્રન્થિદેશ તક જીવકો પહુંચા દેના યહ યથાપ્રવૃત્તિકરણ (પ્રથમ

ઉદયકાળની પછી ઉદયમાં આવવાની યોગ્યતા આવે છે. અનિવૃત્તિકરણના ચરમ સમયના અંતિમલાગમાં મિથ્યાત્વના દલિયોને ઉદય હોવાથી એટલા સમય સુધી જીવ મિથ્યાત્વી રહે છે, પરંતુ જ્યારે અનિવૃત્તિકરણનો કાળ સમાપ્ત થઈ જાય છે ત્યારે જ જીવ જ્ઞાતિ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરી લે છે. આ સમયે મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મના નથી વિપાકોદય જ રહેતા અગર નથી પ્રદેશોદય જ. મર્થ પ્રકારથી તેના ઉદયનો આ વખત અભાવ રહે છે તેથી જીવનું નૈસર્ગિક ઔપશમિકસમ્યક્ત્વરૂપ પરિણામ પ્રગટ થઈ જાય છે કહ્યું છે—

“ જા ગંઠી તા પદમં, ગંઠિ સમઙ્છઓ ભવે વીયં ।

અણિયટ્ટીકરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલ્હે જીવે ” ॥ ૧ ॥

સ્યૈકભાગં પ્રથમસ્થિતિરૂપં તત્પૂર્વકાલવર્ત્યનિવૃત્તિકરણસ્ય ચરમભાગે ઉદયમાનમિથ્યાત્વદલિકૈઃ સહ સંયોજ્ય સ્વોદયકાળાત્ પ્રાગેવોદયં પ્રાપયતિ, તેન તસ્ય મિથ્યાત્વદલિકસ્ય સ્વોદયકાલે ઉદયં પ્રતિરુણદ્ધિ । દ્વિતીયભાગસ્યાપિ દ્વિતીયસ્થિતિનામ્નસ્તસ્માદન્તર્મુહૂર્તાદવ્યવહિતોત્તરકાલે ઉદેપ્યમાણતયા સ્વોદયકાલે ઉદયં પ્રતિરોધયતિ; તદેવમનિવૃત્તિકરણાનન્તરોદયયોગ્યદલિકાનાં વ્યવધાનકરણાદન્તરકરણમિત્યુચ્યતે ।

નિવૃત્તિકરણ કા અન્તિમ ભાગ હૈ ઉસમેં ઉદયમાન મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કે સાથ સંયુક્ત કરકે ઉસે અપને નિજ ઉદયકાલસે પહિલે હી ઉદય મેં લે આતા હૈ, ઇસ સે વહ ભવ્ય જીવ ઉસ મિથ્યાત્વ કે દલિયે કે ઉદય કો ઉસકે અપને ઉદયકાલમેં રોક દેના હૈ । તથા દૂસરી સ્થિતિરૂપ મિથ્યાત્વકા જો દ્વિતીય ભાગ હૈ, જો ઉસ અન્તર્મુહૂર્ત સે વ્યવધાનરહિત ઉત્તર કાલમેં ઉદય મેં આને યોગ્ય હૈ; ઉસકે ઉદય કો ઉસકે અપને ઉદયકાલ મેં રોક દેના હૈ । ઇમ પ્રકાર અનિવૃત્તિકરણ કે અનન્તર ઉદયયોગ્ય મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કે ઉદય મેં વ્યવધાન કરનેવાલા હોને સે યહ ‘અન્તરકરણ’ કહલાતા હૈ । યહ કરણ મિથ્યાત્વકે દલિયોં કો અગલે ઔર પિછલે ભાગમેં મિલા દેના હૈ । અનિવૃત્તિકરણ કા અંતિમ સમય પૂર્ણ હોને પર અન્તર્મુહૂર્ત તક મિથ્યાત્વકે દલિયોંકા કિસી મી તરહ સે ઉદય નહીં હો સકતા । ઉસ સમય જિન મિથ્યાત્વકે દલિયોંકા ઉદય સંભવ થા, ઉનમેંસે કિનનેક દલિયોંમેં અપને ઉદયકાલ સે પહિલે હી ઉદયમેં આને કી યોગ્યતા આતી હૈ, ઔર કિતનેક દલિયોંમેં અપને ઉદયકાલસે

અંતિમ ભાગ છે તેમાં ઉદયમાન મિથ્યાત્વના દલિયોની સાથે સંયુક્ત કરીને તેને પોતાના નિજ ઉદયકાળથી પહેલા જ ઉદયમાં લઈ આવે છે, આ કારણે તે ભવ્ય જીવ તે મિથ્યાત્વના દલિયાના ઉદયને તેના પોતાના ઉદયકાળમાં રોકી દે છે, અને બીજી સ્થિતિરૂપ મિથ્યાત્વનો જે બીજો ભાગ છે જે તે અન્તર્મુહૂર્તથી વ્યવધાનરહિત ઉત્તર કાળમાં ઉદયમાં આવવા યોગ્ય છે તેના ઉદયને તેના પોતાના ઉદયકાળમાં રોકી દે છે. આ પ્રકારે અનિવૃત્તિકરણના અનન્તર ઉદયયોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોના ઉદયમાં વ્યવધાન કરવાવાળા હોવાથી આ ‘અન્તરકરણ’ કહેવાય છે.

આ કારણ મિથ્યાત્વના દલિયોને આગળ અને પાછળના ભાગમાં બેઠી આવે છે, અને અનિવૃત્તિકરણનો અંતિમ સમય પૂર્ણ થતાં તેની પછી અંતર્મુહૂર્ત સુધી મિથ્યાત્વના દલિયોનો કોઈ પણ પ્રકારથી ઉદય થતો નથી. તે જે મિથ્યાત્વના દલિયોનો ઉદય સંભવ હતો, તેમાંથી કેટલાક દલિયોમાં પોતાના ઉદયકાળના પહેલાં જ ઉદયમાં આવવાની યોગ્યતા આવે છે, અને કેટલાક દલિયોમાં પોતાના

ન્તરકરણં કૃત્વાऽનુપદોક્તરીત્યા પ્રથમમૌપશમિકસમ્યક્ત્વં લભતે । અયમૌપશમિકસમ્યક્ત્વમન્તર્મુદ્ધર્તમનુભૂય તદનન્તરમવશ્યં સર્વપ્રતિપાતેન પુનર્મિથ્યાત્વી ભવતિ ।

(૨) યસ્તીત્રવિશુદ્ધિપરિણામી ભવતિ, સ સ્વલ્પપૂર્વકરણમારુદ્ધો મિથ્યાત્વં ત્રિપુઙ્ગીકૃત્ય તદનન્તરમનિવૃત્તિકરણે પ્રવિષ્ટઃ સમ્યક્ત્વપુઙ્ગોદયાત્ પ્રથમતયા ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમવાપ્નોતિ, પરન્તુ કૃતત્રિપુઙ્ગોઽયં પ્રથમતયૌપશમિકસમ્યક્ત્વં ન લભતે ।

ઔપશમિકસમ્યક્ત્વં દ્વિવિધમ્—ગ્રન્થિભેદજન્યમ્, ઉપશમશ્રેણિભાવિ ચેતિ । તત્ર પ્રથમં ગ્રન્થિભેદજન્યં મન્દવિશુદ્ધિપરિણામિનો જીવસ્ય ભવતિ, દ્વિતીયં તુપશમ-

અભાવ હોનેસે મિથ્યાત્વકે ત્રીન પુંજ કરનેકી શક્તિ સે શૂન્ય રહતા હૈ, હસલિયે યહ અનિવૃત્તિકરણ કો પ્રાપ્ત હો કર અન્તરકરણ કરકે ઉપર્યુક્ત રીતિસે સર્વ પ્રથમ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરના હૈ । ઔપશમિક સમ્યક્ત્વકી અન્તર્મુદ્ધર્તપરિમિત સ્થિતિકા અનુભવ કર પશ્ચાત્ ઉસકે પૂર્ણ હોતે હી અવશ્ય સર્વપ્રતિપાત સે વહ પુનઃ મિથ્યાત્વી હો જાતા હૈ ।

(૨) જો ત્રીવિશુદ્ધિપરિણામી હોતા હૈ વહ અપૂર્વકરણ મેં રહ કર મિથ્યાત્વ કે ત્રીન પુંજ કરકે પશ્ચાત્ અનિવૃત્તિકરણ મેં પ્રવિષ્ટ હોકર સમ્યક્ત્વમોહનીયપુંજકે ઉદયસે સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકા લાભ કરના હૈ, ઉપશમ સમ્યક્ત્વકા નહીં ।

ઔપશમિક સમ્યક્ત્વકે દો ભેદ હૈં । (૧) ગ્રન્થિભેદજન્ય ઔર દૂસરા (૨) ઉપશમશ્રેણિભાવિ । इनमें ग्रंथिभेदजन्य उपशमसम्यक्त्व, मन्द-विशुद्धिपरिणामवाले जीव के होना है । दूसरा उपशमश्रेणिप्राप्त जीव

મિથ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કરવાની શક્તિથી શૂન્ય રહે છે તેથી આ અનિવૃત્તિકરણને પ્રાપ્ત કરીને અને અન્તરકરણ કરીને ઉપર બતાવેલી રીતિથી સર્વ પ્રથમ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે. અન્તર્મુદ્ધર્તની ઔપશમિક સમ્યક્ત્વની સ્થિતિનો અનુલવ કરીને પછી તેના પૂર્ણ થતા જ અવશ્ય સર્વપ્રતિપાતથી તે પુનઃ મિથ્યાત્વી થઈ જાય છે.

જે (૨) ત્રીવિશુદ્ધિપરિણામી હોય છે તે અપૂર્વકરણમાં રહીને મિથ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કરીને પછી અનિવૃત્તિકરણમાં પ્રવિષ્ટ થઈને સમ્યક્ત્વમોહનીય પુંજના ઉદયથી સર્વ પ્રથમ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વનો લાભ કરે છે, ઉપશમ-સમ્યક્ત્વનો નહિ.

ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વના બે ભેદ છે (૧) એક ગ્રન્થિભેદજન્ય અને બીજો (૨) ઉપશમશ્રેણિલાવી. આમાં ગ્રન્થિભેદજન્ય ઉપશમસમ્યક્ત્વ મન્દવિશુદ્ધિ-

અન્યચ્ચ—

“ કાઝળ ગંઠિભેયં, સહસંમદ્યાણ પાણિણો કોઢ્ઠ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વાધિકારી જીવો દ્વિવિધઃ—(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામી, (૨) તીવ્ર-વિશુદ્ધિપરિણામી ચેતિ । તત્ર—

(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામી ભવ્યોઽપૂર્વકરણમારૂઢો ગ્રન્થિભેદં વિધાયાઽપિ તીવ્રાધ્યવસાયાભાવાન્ન મિથ્યાત્વં ત્રિપુજ્જીકર્તું શક્નોતિ । તતોઽનિવૃત્તિકરણં પ્રાપ્યા-

કરણ) કા, ઓર उसका भेदन करना-अपूर्वकरण (द्वितीय करण)का, और सम्यक्त्वके सन्मुख जीवको कर देना यह अनिवृत्तिकरण (तृतीय करण) का कार्य है ॥ १ ॥

फिर भी—

“ कौजल गंठिभेयं, सहसंमदयाण पाणिणो केड्ठ ।

परवागरणा अन्ने, लहंति सम्मत्तवररयणं ” ॥ २ ॥

ગ્રન્થિભેદ કરકે કિતનેક પ્રાણી નિસર્ગ-સ્વભાવ-જાતિસ્મરણ આદિ સે સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં ઓર કિતનેક પરકે ઉપદેશસે પાતે હૈં । ૨।

સમ્યગ્દષ્ટિ (સમ્યગ્દર્શનસહિત જીવ) દો પ્રકાર કે હોતે હૈં—
(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાલે ઓર (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાલે ।

इनमें से—(१) मन्दविशुद्धिपरिणामवाला भव्य जीव अपूर्वकरण परिणाम के अवलम्बन से ग्रन्थि का भेदन करके भी तीव्र अध्यवसाय के

ગ્રન્થિદેશ સુધી! જીવને પહોંચાડવો એ યથાપ્રવૃત્તિકરણ (પ્રથમ કરણ)નું અને એનું ભેદન કરવું અપૂર્વકરણ (બીજા કરણ) નું, અને સમ્યક્ત્વની સન્મુખ જીવને કરવો, એ અનિવૃત્તિકરણ (ત્રીજા કરણ)નું કાર્ય છે ॥ ૧ ॥ વળી:—

“કાઝળ ગંઠિભેયં, સહસંમદ્યાણ પાણિણો કેડ્ઠ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

ગ્રન્થિભેદ કરીને કેટલાંક પ્રાણી નિસર્ગ-સ્વભાવ-જાતિસ્મરણ આદિથી સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે, અને કેટલાંક બીજાના ઉપદેશથી મેળવે છે ॥ ૨ ।

સમ્યગ્દષ્ટિ (સમ્યગ્દર્શનસહિત જીવ) બે પ્રકારના હોય છે. (૧) મન્દ વિશુદ્ધિપરિણામવાળાં અને (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાળાં.

આમાંથી (૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાળાં ભવ્ય જીવ અપૂર્વકરણ પરિણામના અવલંબનથી ગ્રન્થિનું ભેદન કરીને પણ તીવ્ર અધ્યવસાયનો અભાવ હોવાથી

પ્રાપ્તિશ્વતુર્યપશ્ચમષ્ઠસપ્તમેષુ કસ્મિંશ્ચિદ્ ગુણસ્થાને ભવિતુમર્હતિ, પરં તુ અષ્ટમગુણ-સ્થાને તત્પ્રાપ્તિરવશ્યમેવ ભવતિ ।

મિથ્યાત્વં ત્રિપુજ્ઞીકૃત્ય સમ્યક્ત્વપુજ્ઞોદયાત્ ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમવાપ્નોતિ-
ઈતિ યદુક્તં, તત્રાયં ક્રમઃ—કેવલિપ્રભૃતીનાં વચઃ શ્રુત્વા, જાતિસ્મરણાદિના વા
સમ્યક્ત્વસ્વરૂપં જાત્વાઽપૂર્વકરણે વર્ધમાનપરિણામો દર્શનમોહનીયાપરનાનકમિથ્યા-
ત્વપુદ્ગલાન્ યુગપત્ ત્રિધા કરોતિ, સમ્યક્ત્વમોહનીય—મિશ્રમોહનીય—મિથ્યાત્વમોહ-
નીયભેદાત્ । તત્ર તાવત્ સમ્યક્ત્વમોહનીયમુચ્યતે—

મોશમસમ્યક્ત્વ મી હૈ । ઉપશમશ્રેણિગત જીવોંકો જો સમકિત હોતા
હૈ વહ ઉપશમશ્રેણિમાવિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ ચૌથે,
પાંચવેં, છઠવેં ઔર સાતવેં ગુણસ્થાનોં મેં સે કિસીં એક ગુણસ્થાનમેં હો
સકતા હૈ, પરન્તુ આઠવેં ગુણસ્થાનમેં તો ડસકી પ્રાપ્તિ જીવકો અવશ્ય
હી હો જાની હૈ ।

મિથ્યાત્વકે ત્રીન પુંજ કરને કે વાદ જીવ ડન ત્રીન પુંજોં મેં સે એક
સમ્યક્ત્વમોહનીયપુંજકે ડદયસે ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ કિયા
કરના હૈ । યહ જો વાત ડપર કહી ગઈ હૈ વહાં પર ડસ પ્રકારકા ક્રમ સમ-
જ્ઞના ચાહિયે । કેવલી વગૈરહ કે વચન સુન કર અથવા જાતિસ્મરણાદિક સે
સમ્યક્ત્વકે સ્વરૂપકો જાન કર અપૂર્વકરણમેં જિસકા પરિણામ વૃદ્ધિગત હો
રહા હૈ, એસા જીવ દર્શનમોહનીય કર્મ કો—જિસકા દુસરા નામ મિથ્યાત્વ
પુદ્ગલ હૈ ડસકો—એક સાથ ત્રીન ભેદોં મેં, અર્થાત્—મિથ્યાત્વમોહનીય,
મિશ્રમોહનીય ઔર સમ્યક્ત્વમોહનીયકે રૂપમેં પરિણમાતા હૈ ।

પણ છે. ઉપશમશ્રેણિગત હવોને જે સમ્યક્ત્વ ધાય છે તે ઉપશમશ્રેણિલાવી
ઔપશમિક—સમ્યક્ત્વ છે. આ સમ્યક્ત્વ ચોથા, પાંચમા. છઠ્ઠા અને સાતમા ગુણ
સ્થાનોમાથી કોઈ એક ગુણસ્થાનમાં થઈ શકે છે. પરંતુ આઠમા ગુણસ્થાનમાં તો
તેની પ્રાપ્તિ હવને અવશ્ય જ થઈ જાય છે

મિથ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કર્યા બાદ હવ આ ત્રણ પુંજેમાંથી એક સમ્યક્ત્વ-
મોહનીયપુંજના ઉદયથી ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કર્યા કરે છે. આ જે વાત
ઉપર કહેવાઈ ગઈ છે ત્યાં આ પ્રકારનો ક્રમ સમજવો જોઈએ—કેવળી વિગેરેનું
વચન સુણીને અથવા જાતિસ્મરણાદિથી સમ્યક્ત્વના સ્વરૂપને જાણીને અપૂર્વકરણમાં
જેનો પરિણામ વૃદ્ધિગત થઈ રહ્યો છે; એવો હવ દર્શનમોહનીય કર્મને, જેનું
બીજું નામ મિથ્યાત્વપુદ્ગલ છે તેને એકનાથ ત્રણ ભેદોના, અર્થાત્ મિથ્યાત્વ-
મોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વમોહનીયના રૂપમાં પરિણમાવે છે.

શ્રેણિગતસ્ય । તત્રોપશમશ્રેણિગતઃ સમ્યક્ત્વી દેશપ્રતિપાતેન સર્વપ્રતિપાતેન વા પ્રતિ-
પતતિ-મિથ્યાત્વમવાપ્નોતિ । અસ્મિન્ સમ્યક્ત્વે પ્રાપ્તે સતિ જીવસ્ય પદાર્થાનાં
સ્ફુટતયા નિશ્શઙ્કં પ્રતીતિર્જન્માન્ધસ્ય નેત્રલાભે સતીવ જાયતે । સદૌષધસેવનેન
રોગે પ્રતિનિવૃત્તે વ્યાધિતેનેવ મિથ્યાત્વમહારોગેऽપગતે સત્યપૂર્વ આનન્દોऽનુભૂયતે
જીવેન ।

ગ્રંથિભેદજન્યમૌષશમિકસમ્યક્ત્વમનાદિમિથ્યાત્વિભવ્યાનાં ભવતિ । इदं च
प्रथमोपशमसम्यक्त्वमित्यपि कथ्यते । उपशमश्रेणिभाविन औपशमिकसम्यक्त्वस्य
को होता है । उपशमश्रेणिप्राप्त जीव नियमसे वहां से सर्वदेशके प्रतिपात
से अथवा एकदेशके प्रतिपात से नीचे के गुणस्थानको प्राप्त हो जाता है ।

जैसे--जन्मान्धको नेत्रके लाभ होने पर पदार्थों की प्रतीति विना
किसी सन्देह के स्फुटरूपसे होने लगती है उसी प्रकार इस सम्यक्त्व
के प्राप्त होने पर जीवादि पदार्थोंकी प्रतीति भी विना किसी सन्देह के
स्फुटरूप से जीवको होती है । तथा जिस प्रकार निर्दोष औषध के
सेवन से रोगके चले जाने पर रोगी पुरुष अपूर्व आनन्दका अनुभव
करता है, उसी प्रकार मिथ्यात्व महारोगके नष्ट होने पर इस समकित
वाला जीव भी अपूर्व आनन्दका अनुभव करता है ।

ग्रंथिभेदसे उत्पन्न सम્યક્ત્વ (औપશમિક સમ્યક્ત્વ) અનાદિ-
મિથ્યાદૃષ્ટિભવ્યજીવોં કે હોતા હૈ । इस सम्यक्त्वका दूसरा नाम प्रथ-

પરિણામવાળા હોવને થાય છે. બીજું ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત હોવને થાય છે. ઉપશમ-
શ્રેણિપ્રાપ્ત હોવ નિયમથી ત્યાંથી સર્વ દેશના પ્રતિપાતથી અથવા એક દેશના
પ્રતિપાતથી નીચેના ગુણસ્થાનોમાં આવીને આખરે મિથ્યાત્વગુણસ્થાનને પ્રાપ્ત
થઈ જાય છે.

જેવી રીતે જન્માંધને નેત્રનો લાભ થતાં જ પદાર્થોની પ્રતીતિ કોઈ જાતના
સંદેહ વિના સ્ફુટરૂપથી થવા માંડે છે, તે પ્રકારે આ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થતાં
જ હવાદિ પદાર્થોની પ્રતીતિ પણ કોઈ જાતના સંદેહ વગર સ્ફુટરૂપથી હોવને
થાય છે. તથા જે પ્રકારે નિર્દોષ ઔષધના સેવનથી રોગનો નાશ થતાં જ રોગી
પુરૂષ અપૂર્વ આનંદનો અનુભવ કરે છે તેવી રીતે મિથ્યાત્વ-મહારોગનો નાશ
થતાં જ આ સમ્યક્ત્વવાળા હોવ પણ અપૂર્વ આનંદનો અનુભવ કરે છે.

ग्रंथि-लेह्यी उत्पन्न सम्यक्त्व (औपशमिक-सम्यक्त्व) अनादिमिथ्या-
दृष्टि लब्ध होवने थाय છે. આ સમ્યક્ત્વનું બીજું નામ પ્રથમોપશમ-સમ્યક્ત્વ

યથા—સતુષકોદ્રવા મધ્ધણેન માદકા ભવન્તિ, ત એવ યદ્યપનીતતુષાસ્તક્રાદિના શોધિતાસ્તર્હિ મદં ન જનયન્તિ, તથા મિથ્યાત્વમોહનીયપુદ્ગલાઃ જીવં હિતાહિત-જ્ઞાનરહિતં કુર્વન્તિ । તત્ર દ્વિસ્થાનકાદિશ્વતુઃસ્થાનકાન્તઃ સર્વઘાતી રસસ્તિષ્ઠતિ । યદિ સ્વકીયવિશુદ્ધપરિણામવલાત્તેષાં સર્વઘાતિરૂપં રસં ક્ષપયતિ, તદા સ્વાભાવિકસ્યૈકસ્થાનકરસસ્ય સદ્ભાવે મિથ્યાત્વમોહનીયપુદ્ગલા એવ સમ્યક્ત્વમોહનીયા ઉચ્ચન્તે । વિશોધિતત્વાદિદં કર્મ તત્ત્વરુચિરૂપસમ્યક્ત્વં ન પ્રતિરોધયતિ, પરં ત્વે-તત્કર્મોદ્યાદાત્મસ્વભાવરૂપમૌપશમિકસમ્યક્ત્વં ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં ચ ન પ્રાદુર્ભવતિ, સૂક્ષ્મતત્ત્વસમાલોચનાયાં ગદ્ગ્લાશ્ચોત્તિષ્ઠન્તિ, યતઃ સમ્યક્ત્વે માલિન્યમુપજાયતે । અસ્માદેવ દોષાદેતત્ કર્મ સમ્યક્ત્વમોહનીયં વ્યપદિશ્યતે ।

હૈ । યહી શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુજ્જ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ જીવકે પરિણામ કા અનાવારક હોને કી વજહ સે કારણ મેં કાર્યકે ઉપચાર સે સમ્યક્ત્વ કહા ગયા હૈ ।

જૈસે—સતુષ (તુષયુક્ત) કોદ્રવ (અન્નવિશેષ) ખાને પર માદકતા ઉત્પન્ન કરતે હૈં; પરન્તુ જવ વે હી કોદ્રવ નિસ્તુષ કર દિયે જાતે હૈં ઔર તક્ર (છાશ) વગૈરહ કે દ્વારા ડનકા માદક અંશ દૂર કર દિયા જાતા હૈ તવ ડનમેં સે માદકશક્તિકા અભાવ હો જાતા હૈ ઔર ખાને પર ફિર વે માદકતા પૈદા નહીં કરતે । ઠીક ઇસી તરહ સે યહ મિથ્યાત્વમોહનીય જવ તક અશોધિત અવસ્થા મેં રહતા હૈ તમી તક જીવ કો હિતાહિત-વિવેકસે શૂન્ય કરતા રહતા હૈ; ક્યોં કિ ઇસમેં દ્વિસ્થાન સે લેકર ચતુઃ-સ્થાન તક વાલા સર્વઘાતી રસ રહતા હૈ । પરન્તુ ડ્યોં હી ઇસમેં સે સર્વ-ઘાતી રસ કા ક્ષય હો જાતા હૈ ત્યોં હી યહ શુદ્ધ અવસ્થાવાલા પુજ્જ કહ-

છે. આ જ શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુંજ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ જીવના પરિણામનો અનાવારક હોવાથી કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવાય છે.

જેમ સતુષ (તુષયુક્ત) કોદ્રવ (અન્નવિશેષ) ખાવાથી માદકતા ઉત્પન્ન કરે છે; પરન્તુ જ્યારે તે જ કોદ્રવ નિસ્તુષ કરી દેવામાં આવે છે અને તક્ર (છાશ) વિગેરે દ્વારા તેનો માદક અંશ દૂર કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમાંથી માદક શક્તિનો અભાવ થઈ જાય છે, અને ખાવાથી ફરી તે માદકતા પેદા કરતું નથી. ઠીક આ પ્રકારે આ મિથ્યાત્વમોહનીય જીવની અશોધિત અવસ્થામાં રહે છે ત્યાં જીવને હિતાહિતવિવેકથી શૂન્ય કરતું રહે છે, કારણ કે આમાં દ્વિસ્થાનથી લઈને ચારસ્થાનવાળા સર્વઘાતી રસ રહે છે, પરંતુ જ્યારે જ તેમાંથી સર્વઘાતી રસનો ક્ષય થઈ જાય છે. ત્યારે જ શુદ્ધ અવસ્થાવાળા પુંજ

સમ્યક્ત્વમોહનીયસ્ય સ્વરૂપમ્—

યસ્ય કર્મણઃ પ્રભાવાત્ જીવાજીવાદિનવતત્ત્વેષુ શ્રદ્ધા સમુત્પદ્યતે તત્ સમ્યક્ત્વ-મોહનીયમ્ । યથા—ઉપનેત્રં નેત્રાવરકં સદપિ દૃષ્ટિં ન પ્રતિરુણદ્ધિ, તથૈવ સમ્ય-ક્ત્વમોહનીયમાવરણસ્વરૂપમપિ સદ્ વિશુદ્ધત્વાત્ તત્ત્વાત્ શ્રદ્ધાનં નહિ વિઘાતયતિ, તસ્માત્ સમ્યક્ત્વમોહનીયકર્મત એવ નવતત્ત્વેષુ શ્રદ્ધા ભવતીતિ સિદ્ધમ્ ।

અપૂર્વકરણાધ્યવસાયેન યસ્ય મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુન્જસ્ય મિથ્યાત્વસ્વભાવોઽપનીતઃ સ શોધિતમિથ્યાત્વપુદ્ગલપુન્જઃ, સ એવ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપસ્ય જીવપરિણામસ્યાના-વરકત્વાદુપચારતઃ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

સમ્યક્ત્વમોહનીયકા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર હૈ—જિસ કર્મકે પ્રભાવ સે જીવાદિક નૌ તત્ત્વોં મેં જીવકો શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન હોતી હૈ ઉસકા નામ સમ્ય-ક્ત્વમોહનીય હૈ । જિસ પ્રકાર ચક્ષુમા નેત્રોંકા પ્રતિબન્ધક હોતા હુઆ ભી પદાર્થોં કે દેખને મેં દૃષ્ટિકા વિઘાત નહીં કરતા, ઉસી પ્રકાર યહ સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મ યદ્યપિ મિથ્યાત્વકા અંશ હોને સે આવરણ સ્વરૂપ હૈ તો ભી ઉસકા શોધિત અંશ હોને કી વજહ સે વિશુદ્ધ હૈ, ઇસલિયે વહ તત્ત્વ-શ્રદ્ધાન કા વિઘાતક નહીં હોતા હૈ । જીવ કો નવ તત્ત્વોં મેં શ્રદ્ધા ઇસી સમ્યક્ત્વમોહનીય કે દ્વારા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । યદ્યપિ યહ મિથ્યાત્વ કા હી અંશ હૈ તો ભી શ્રદ્ધા કા વિઘાતક નહીં હૈ, કારણ કિ અપૂર્વકરણરૂપ પરિણામ ઇસમેં સે શ્રદ્ધાવિઘાતક અંશ કો, કિ જિસકા દૂસરા નામ મિથ્યાત્વ સ્વભાવ હૈ; દૂર કર દેતા હૈ । યહ શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુંજ

સમ્યક્ત્વ મોહનીયનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે છે—

સમ્યક્ત્વમોહનીયનું સ્વરૂપ—જે કર્મના પ્રભાવથી જીવાદિક નવ તત્ત્વોમાં જીવને શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થાય છે તેનું નામ સમ્યક્ત્વમોહનીય છે. જેવી રીતે ચક્ષુમા નેત્રોના પ્રતિબંધક હોવા છતાં પણ પદાર્થોના દેખવામાં દૃષ્ટિનો વિઘાત નથી કરતાં તેમ આ સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ જે કે મિથ્યાત્વનો અંશ હોવાથી આવ-રણસ્વરૂપ છે તો પણ તેના શોધિત અંશ હોવાથી વિશુદ્ધ છે, તેથી તે તત્ત્વ-શ્રદ્ધાનનો વિઘાતક નથી થતું. જીવને નવતત્ત્વોમાં શ્રદ્ધા આ સમ્યક્ત્વ—મોહનીય દ્વારા ઉત્પન્ન થાય છે, જે કે આ મિથ્યાત્વનો જ અંશ છે તો પણ શ્રદ્ધાનો વિઘાતક નથી. કારણ કે અપૂર્વકરણરૂપ પરિણામ આમાંથી શ્રદ્ધાવિઘાતક અશોને જેનું બીજું નામ મિથ્યાત્વ—ત્વભાવ છે તેને દૂર કરે છે. આ શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુંજ

॥ મિશ્રમોહનીયમ્ ॥

येषां केचिदंशाः सतुषाः केचिद् विशुद्धास्तैः कोद्रवैः साम्यं मिश्रमोहनीय-
पुद्गलानाम् । एतत्कर्मोदयात्तत्त्वचरुचिर्नोत्पद्यते, न चातत्त्वचरुचिरपि । मिश्रमोहनीय-
कर्मपुद्गलेषु द्विस्थानको रसः सर्वधाती विद्यते ।

॥ मिथ्यात्वमोहनीयम् ॥

सतुषकोद्रवसमा मिथ्यात्वमोहनीयपुद्गलाः, तस्मादेतत्कर्मोदयाज्जीवो हितम-
हितरूपेण जानाति, हितरूपेण चाहितमपि । मिथ्यात्वमोहनीयकर्मपुद्गलेषु चतुः-
स्थानकस्त्रिस्थानको द्विस्थानकश्च रसो भवति ।

મિશ્રમોહનીય—

જિન કોદ્રવોં કા કુઢેક અંશ સતુષ હૈં ઔર કુઢેક અંશ નિસ્તુષ હૈં, ઁન કોદ્રવોં કૈ સાથ મિશ્રમોહનીય કૈ પુદ્ગલોં કી સમાનતા જાનના ચા-
હિયૈ । ઇસ કર્મ કૈ ઉદયસૈ ન તો તત્ત્વરુચિરૂપ સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઔર ન અતત્ત્વરુચિ મિથ્યાત્વ હી । ઇસ કર્મ કૈ પુદ્ગલોં મૈં સર્વધાતિરસ કા ઢિતીય (તીવ્રતર) અંશ હૈ ।

મિથ્યાત્વમોહનીય—

સતુષ કોદ્રવોં કૈ સ્થાનાપન્ન મિથ્યાત્વમોહનીય કૈ પુદ્ગલ હૈં । ઇસ કર્મ કૈ ઉદય સૈ જીવ અહિતકારી પદાર્થોં કો હિતકારી ઔર હિતકારી પદાર્થોં કો અહિતકારી માનતા રહતા હૈ । ઇસ કર્મ કૈ પુદ્ગલોં મૈં ચતુઃ સ્થાનક, ત્રિસ્થાનક ઔર દ્વિસ્થાનક રસ રહતા હૈ ।

મિશ્રમોહનીય —

જે કોદ્રવોના કોઈ કોઈ અશ સતુષ છે અને કોઈ કોઈ અશ નિસ્તુષ છે, એ કોદ્રવોની સાથે મિશ્રમોહનીયના પુદ્ગલોની સમાનતા સમજવી જોઈએ. આ કર્મના ઉદયથી નથી તત્ત્વરૂચિરૂપ સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થતું અને નથી અતત્ત્વરૂચિરૂપ મિથ્યાત્વજ. આ કર્મના પુદ્ગલોમા સર્વધાતિ રસનો બીજો (તીવ્રતર) અશ છે.

મિથ્યાત્વમોહનીય —

સતુષ કોદ્રવોના સ્થાનાપન્ન મિથ્યાત્વમોહનીયના પુદ્ગલો છે આ કર્મના ઉદયથી જીવ અહિતકારી પદાર્થોને હિતકારી, અને હિતકારી પદાર્થોને અહિતકારી માનતો રહે છે. આ કર્મના પુદ્ગલોમા ચતુ સ્થાનક, ત્રિસ્થાનક, અને દ્વિ-સ્થાનક રસ રહે છે.

लाने लगता है। मिथ्यात्वप्रकृति यह सर्वधातिप्रकृति है। इसमें बहुत भाग सर्वधातिरस है और शेष एक भाग देशधातिरस है। कर्मा में मन्द, तीव्र, तीव्रतर और तीव्रतम इस प्रकारकी चार शक्तिरूप रस रहता है। इनमेंसे इस मिथ्यात्व कर्ममें तीव्र, तीव्रतर और तीव्रतम ये तीन शक्तियाँ-जिन्हें सर्वधातिरस कहा गया है-हैं। यदि कोई भव्य जीव अपने विशुद्ध परिणामके बलसे इसमें से इन तीन शक्तिरूप सर्वधातिरसका क्षय कर देता है तो उसमें स्वभावतः एक स्थानक रसका ही सद्भाव रहता है। इस परिस्थिति में मिथ्यात्वमोहनीय का नामान्तर ही सम्यक्त्वमोहनीय हो जाता है। शुद्ध होनेसे यह कर्म यद्यपि तत्त्व-रुचिरूप सम्यक्त्व का प्रतिरोधक नहीं होता है तो भी इसके सद्भाव में एक तो आत्मस्वभावरूप औपशमिकसम्यक्त्व, एवं क्षायिकसम्यक्त्व का प्रादुर्भाव नहीं होता, दूसरे इसके अस्तित्व में सूक्ष्म तत्त्व की गवेषणा करते समय शङ्काओंका भी उत्थान हो जाया करता है; जिससे समकित में मलिनता आ जाती है। इसी दोषकी वजहसे इस कर्मकी “सम्यक्त्वमोहनीय” यह संज्ञा पड़ी है।

કહેવાવામાં આવે છે. મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ એ સર્વધાતિ પ્રકૃતિ છે. એમાં ઘણો ભાગ સર્વધાતિ રસ છે અને શેષ એક ભાગ દેશધાતિ રસ છે. કર્મોમાં મંદ, તીવ્ર, તીવ્ર-તર અને તીવ્રતમ, આ પ્રકારની ચાર શક્તિરૂપ રસ રહે છે. એનાંથી આ મિથ્યાત્વ કર્મમાં તીવ્ર, તીવ્રતર અને તીવ્રતમ, એ ત્રણ શક્તિઓ-જેને સર્વ-ધાતિ રસ કહેવામાં આવે છે-રહે છે. જો કોઈ ભવ્ય જીવ પોતાના વિશુદ્ધ પરિણામના બળથી એમાંથી આ ત્રણ શક્તિરૂપ સર્વધાતિ રસનો ક્ષય કરી દે છે તો તેમાં સ્વભાવતઃ એક સ્થાનક રસનો જ સદ્ભાવ રહે છે. આ પરિસ્થિતિમાં મિથ્યાત્વમોહનીયનું નામાન્તર જ સમ્યક્ત્વમોહનીય થઈ જાય છે. શુદ્ધ હોવાથી તે કર્મ જો કે તત્ત્વરૂચિરૂપ સમ્યક્ત્વનું પ્રતિરોધક નથી થતું તો પણ એના સદ્ભાવમાં એક તો આત્મસ્વભાવરૂપ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ અને ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વનો પ્રાદુર્ભાવ નથી થતો, બીજું એના અસ્તિત્વમાં સૂક્ષ્મ તત્ત્વોની ગવેષણા કરતી સમય શંકાઓની પણ ઉત્પત્તિ થઈ જાય છે; જેથી સમ્યક્ત્વમાં મલિનતા આવી જાય છે. આ દોષના કારણથી આ કર્મની “સમ્યક્ત્વમોહનીય” એ સંજ્ઞા પડી છે.

મિથ્યાત્વે ચ । તત્ર પ્રવર્ધમાનપરિણામઃ સમ્યગ્દષ્ટિર્મિશ્રપુદ્ગલાન્ સમ્યક્ત્વે સંક્રમયતિ, મિથ્યાદષ્ટિસ્તુ તાન્ મિથ્યાત્વે । સ ચ સમ્યક્ત્વદલિકાત્ પુદ્ગલાન્ આકૃષ્ય મિથ્યાત્વ એવ સંક્રમયતિ, ન તુ મિશ્રે । તસ્ય સમ્યક્ત્વાંશાભાવાત્ ।

સમ્યગ્દર્શનપ્રાપ્તૌ સત્યાં હીયમાનપરિણામસ્તુ મિશ્રપુદ્ગલાન્ મિથ્યાત્વપુદ્ગલાંશ્વ ન સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાન્ કરોતિ, ન ચ તસ્ય કેચિદન્યે શોધિતપુદ્ગલાઃ સન્તિ, યાન્ સંપ્રતિ પ્રસ્તુતસમ્યક્ત્વપુજ્જનિષ્ઠાકાલે વેદયેત્ । તતઃ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાનામન્તિમગ્રાસં વેદયિત્વા પૂર્વ લબ્ધસમ્યક્ત્વોઽપિ પશ્ચાન્મિથ્યાત્વમેવ સંક્રામતિ ।

મિશ્રપ્રકૃતિ સે મિશ્રપુદ્ગલપુજ્જ કો ર્શીંચ કર સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિકે રૂપમેં, ઔર મિથ્યાદષ્ટિ જીવ ંહીં પુદ્ગલોં કો મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિ કે રૂપમેં પરિણમાતા હૈ । તથા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે દલિયે સે પુદ્ગલોં કો લેલે કર વહી મિથ્યાદષ્ટિ જીવ મિથ્યાત્વ મેં હી ંનકા સંક્રમણ કિયા કરતા હૈ, મિશ્રમેં નહીં; કારણ કિ ંસકે સમ્યક્ત્વકા અંશ હી નહીં હૈ ।

સમ્યગ્દર્શન કી પ્રાપ્તિ હોને પર હી જિસકા પરિણામ હીયમાન હૈ એસા સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ મિશ્રપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોં કા, એવ મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોંકા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોંમેં સંક્રમણ નહીં કરતા; કારણ કિ ંસકે નિકટ ંસરે કોઈ શોધિત પુદ્ગલ નહીં હૈં કિ જિન્હેં વહ વર્તમાન મેં પ્રાપ્ત સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલોંકે સમાપ્તિ કાલ મેં વેદન કર સકે । ંસલિયે વહ જીવ ંચપિ લબ્ધસમ્યક્ત્વ હૈ તો હી હીયમાનપરિણામવાલા હોને સે સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે અન્તિમ ગ્રાસ કા વેદન કર પીછે સે મિથ્યાત્વ મેં હી સંક્રમણ કરતા હૈ ।

પરિણામવાળા સમ્યગ્દષ્ટિ એવ મિશ્રપ્રકૃતિથી મિશ્ર પુદ્ગલપુંજને એંચીને સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિના રૂપમાં, અને મિથ્યાદષ્ટિ એવ તે જ પુદ્ગલોને મિથ્યાત્વપ્રકૃતિના રૂપમાં પરિણામવે છે. તથા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના દલિયાથી પુદ્ગલોને લઈ-લઈને તે મિથ્યાદષ્ટિ એવ મિથ્યાત્વમાં જ તેનું સંક્રમણ કર્યા કરે છે, મિશ્રમાં નહિ; કારણ કે તેને સમ્યક્ત્વનો અંશ પણ નથી.

સમ્યગ્દર્શનની પ્રાપ્તિ થતાં પણ જેના પરિણામ હીયમાન છે એવો સમ્યગ્દષ્ટિ એવ મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજેનું અને મિથ્યાત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજેનું સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજેમાં સંક્રમણ નથી કરતો. કારણ કે એની નજીક ખીજા કોઈ શોધિત પુદ્ગલ નથી કે જેને તે વર્તમાનમાં પ્રાપ્ત સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલોની સમાપ્તિ કાળમાં વેદન કરી શકે. તેથી તે એવ જે કે લબ્ધસમ્યક્ત્વ છે તો પણ હીયમાન પરિણામવાળા હોવાથી સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના અન્તિમ પ્રાપ્તિનો વેદન કરી પછીથી મિથ્યાત્વમાં જ સંક્રમણ કરે છે,

एकस्य चतुर्थांशश्चतुःस्थानकः, तृतीयांशस्त्रिस्थानकः, द्वितीयांशो द्विस्थानक उच्यते । यश्च रसः स्वाभाविकः स एकस्थानक इति बोध्यम् । शुभाशुभफलप्रदा कर्मणां तीव्रतमा शक्तिश्चतुःस्थानकरसः, तथा तीव्रतरा शक्तिस्त्रिस्थानकरसः, तीव्रा शक्तिर्द्विस्थानकरसोऽवगन्तव्यः । मन्दशक्तिस्त्वेकस्थानको रस इत्यन्यत्र विस्तरः ।

अथैतेषां त्रिविधानां पुद्गलानां किं परस्परं संक्रमो भवति, किं वा न ? उच्यते- भवतीति । प्रवर्धमानपरिणामः सम्यग्दृष्टिः मिथ्यात्वदलिकात् पुद्गलानाकृष्य मिश्रे सम्यक्त्वे च संक्रमयति । मिश्रपुद्गलानां संक्रमो द्वयोर्भवति-सम्यक्त्वे

एक रस का चतुर्थांश चतुःस्थानक, तृतीय अंश त्रिस्थानक, और द्वितीय अंश द्विस्थानक होता है । अर्थात् शुभ और अशुभरूप अपने-२ फल देनेवाले प्रत्येक कर्मों के तीव्रतम अंश की चतुःस्थानक, तीव्रतर अंश की त्रिस्थानक और द्वितीय तीव्र अंश की द्विस्थानक एवं प्रथम मन्द अंश की एक स्थानक संज्ञा है । प्रथम अंश स्वाभाविक है । इसीलिये उसे एक स्थानक कहा है । इस विषयका खुलासा अन्य शास्त्रों में विस्तार से किया गया है ।

प्रश्न—इन तीन प्रकार के पुद्गलों का परस्पर में संक्रमण होता है या नहीं ?

उत्तर—हां, होता है । जिसका अध्यवसाय अहर्निश वृद्धिगत हो रहा है ऐसा सम्यक्त्वी जीव मिथ्यात्वके दलिये से पुद्गलपुञ्जको खींच कर मिश्र और सम्यक्त्व प्रकृति के पुद्गलपुञ्जोंमें उन्हें संक्रमित करता है । मिश्रप्रकृति के पुद्गलोंका संक्रमण मिथ्यात्व और सम्यक्त्व, इन दोनों प्रकृतियों में होता है । प्रवर्धमानपरिणामवाला सम्यग्दृष्टि जीव

એક રસનો ચતુર્થાંશ ચતુઃસ્થાનક, તૃતીય અંશ ત્રિસ્થાનક, અને દ્વિતીય અંશ દ્વિસ્થાનક હોય છે. અર્થાત્ શુભ અને અશુભ-૩૫ પોતપોતાનાં ફળ દેવાવાળાં પ્રત્યેક કર્મોની તીવ્રતમ અંશની ચતુઃસ્થાનક, તીવ્રતર અંશની ત્રિસ્થાનક અને દ્વિતીય તીવ્ર અંશની દ્વિસ્થાનક અને પ્રથમ મંદ અંશની એકસ્થાનક સંજ્ઞા છે. પ્રથમ અંશ સ્વાભાવિક છે, તેથી તેને એક સ્થાનક કહે છે. આ વિષયનો ખુલાસો બીજા શાસ્ત્રોમાં વિસ્તારથી આપ્યો છે.

પ્રશ્ન—આ ત્રણ પ્રકારના પુદ્ગલોના પરસ્પરમાં સંક્રમણ થાય છે કે નહિ ?

ઉત્તર—હાં, થાય છે. જેનો અધ્યવસાય અહર્નિશ વૃદ્ધિગત થતો રહે છે એવો સમ્યક્ત્વી જીવ મિથ્યાત્વના દલિયાથી પુદ્ગલપુંજને ખેંચીને મિશ્ર અને સમ્યક્ત્વ-પ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજોમાં એને સંક્રમિત કરે છે. મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલોના સંક્રમણ મિથ્યાત્વ અને સમ્યક્ત્વ, એ બંને પ્રકૃતિઓમાં થાય છે. પ્રવર્ધમાન

(૨) અનિવૃત્તિકરણં સમ્યક્ત્વપુરસ્કૃતે જીવે ભવતિ । કથં તત્ સમ્યક્ત્વં ભવતિ ? ઉચ્યતે—ઉપદેશતઃ સ્વયં વા । તત્ર પથિદૃષ્ટાન્તઃ—યથા કથિન્નષ્ટપથઃ પુરુષોઽન્યં દૃષ્ટ્વા તદુપદેશતો માર્ગમારોહતિ, કથિત્ સ્વયમેવોદ્ધાપોહં કૃત્વા, તથા કથિદાચાર્યાદીનામુપદેશતઃ સમ્યક્ત્વં લભતે, કથિત્ સ્વયમેવ જાતિસ્મરણાદિના ।

(૩) જ્વરદૃષ્ટાન્તોઽપ્યત્રૈવ, યથા—જ્વરિતઃ કથિદૌષધાદારોગ્યં લભતે, કથિતુ તદ્ વિનૈવ લઙ્ઘનાદિનાઃ તથાઽત્રાપિ કસ્યચિન્મિથ્યાત્વં ગુર્વાદ્યુપદેશતો નશ્યતિ, કસ્ય-ચિતુ સ્વયમેવ તત્ત્વપર્યાલોચનતઃ ।

યહ જીવ ગ્રન્થિદેશ તક પહુંચ જાતા હૈ । અર્થાત્—ઇસ કરણ કે પ્રભાવ સે ઉત્કૃષ્ટ મ્હી કર્મસ્થિતિ ક્ષય હોતે ૨ ગ્રંથિ રૂપમેં અવશિષ્ટ રહ જાતી હૈ ।

(૨) સમ્યક્ત્વ કે સંમુખ હુએ જીવ કે અનિવૃત્તિકરણ હોતા હૈ । સમ-કિત કી પ્રાપ્તિ કે દો ઉપાય હૈ—(૧) ગુર્વાદિકકા ઉપદેશ, (૨) નિર્તર્ગ । યહાં પર માર્ગ કા દૃષ્ટાન્ત હૈ । જૈસે—કોઈ ૨ માર્ગ ભૂલા પથિક ડસી માર્ગ પર ચલતે હુએ દૂસરે કો દેખ કર યા ડસસે પૂછ કર તથા કોઈ ૨ સ્વયં તર્ક-વિતર્ક કરકે અપને માર્ગ કી પ્રાપ્તિ કર લિયા કરતે હૈ, ડસી તરહ કોઈ ૨ પ્રાણી આચાર્યાદિક ગુરુઓં કે ઉપદેશ સે, ઓર કોઈ ૨ સ્વયં અપને આપ જાતિસ્મરણાદિક સાધનોં સે સમકિત કા લાભ કર લેતે હૈ ।

(૩) જ્વર કા દૃષ્ટાન્ત મ્હી યહીં પર ઘટિન હોના હૈ । જૈસે—કિસી રોગી કા જ્વર ઓષધિ કે સેવન સે ઓર કિસી ૨ કા વિના ઓષધિ કે કેવલ લંઘનાદિક કરને સે શાન્ત હો જાતા હૈ, ડસી પ્રકાર કિસી ૨ જીવ

ઢર્નસ્થિતિ ઘટતી ઘટતી એટલી એહી રહી નય છે કે જેના કારણથી એ હવે ગ્રન્થિદેશ સુધી પહોંચી નય છે, અર્થાત્ આ કારણના પ્રભાવથી ઉત્કૃષ્ટી ઢર્નસ્થિતિ ક્ષય થતાં થતાં ગ્રન્થિરૂપમાં અવશિષ્ટ રહી નય છે.

(૨) સમ્યક્ત્વના સંમુખ થયેલ હવેને અનિવૃત્તિકરણ થાય છે. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિના બે ઉપાય છે—(૧) ગુર્વાદિકનો ઉપદેશ, (૨) નિર્તર્ગ. આ કેકાણે માર્ગને દૃષ્ટાન્ત છે, જેમ કેકાં કેકાં માર્ગભૂત્યા મુક્તશ્ચિર તે માર્ગ પર આવતા બીજાને કેબીને અગર તેને પૂછીને, તથા કેકાં કેકાં સ્વયં તર્ક ત્રિતર્ક કરીને પોતાના માર્ગની પ્રાપ્તિ કરી લે છે. તેવી રીતે કેકાં કેકાં પ્રણુ આચાર્યાદિક ગુરુઓના ઉપદેશથી અને કેકાં સ્વયં પેતે પોતાના જાતિસ્મરણાદિક સાધનોથી સમ્યક્ત્વનો લાભ કરી લે છે.

(૩) જ્વરનો કાબજો પણ આ કેકાણે ઘટિત થાય છે. જેમ કેકાં કેકાં રોગીને જ્વર એ રહીના સેવનથી, અને કેકાં કેકાંને એવપિ વિના લંઘનાદિક કરવાથી

મિથ્યાત્વપુણ્ણસ્ય ક્ષયાભાવે યઃ સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ સ ત્રિપુણ્ણી, ક્ષીણે તુ મિથ્યાત્વ-પુણ્ણે દ્વિપુણ્ણી, મિથ્યાત્વપુણ્ણસ્ય મિશ્રપુણ્ણસ્ય ચ ક્ષયે ત્વેકપુણ્ણી, સમ્યક્ત્વપુણ્ણસ્યાંપ ક્ષયે તુ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી ભવતીતિ ।

કારણવશાત્ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તાવષ્ઠૌ દૃષ્ટાન્તાઃ સન્તિ । યથા-(૧) ગિરિનદીપ્રસ્તરઃ (૨) પન્થાઃ, (૩) જ્વરઃ, (૪) વસ્ત્રમ્, (૫) જલમ્, (૬) પિપીલિકા, (૭) પુરુષઃ (૮) કોદ્રવશ્ચેતિ ।

(૧) યથાપ્રવૃત્તારુચ્યે કરણે ગિરિનદીપ્રસ્તરદૃષ્ટાન્તાઃ, યથા ગિરિનદ્યાં પ્રસ્તર-સ્વખંડાસ્તદ્વેગતો ઘર્ષણાદિના વર્તુલા જાયન્તે, એવં યથાપ્રવૃત્તકરણપ્રભાવાદ્ દીર્ઘત-રાયા અપિ કર્મસ્થિતેસ્તાવત્ ક્ષપણં ભવતિ યાવતા ગ્રન્થિરુપઃ શેષોઽવતિષ્ઠતે ।

મિથ્યાત્વપુંજ કા જિસને ક્ષય નહીં કિયા હૈ એસા જીવ સમ-કિત કી પ્રાપ્તિ હોને પર ત્રિપુંજી, મિથ્યાત્વ કે ક્ષય હોને પર દ્વિપુંજી, ઔર મિથ્યાત્વપુંજ એવં મિશ્રપુંજકે ક્ષય હોનેપર એકપુંજી (સમ્યક્ત્વપુંજવાલા) હોતા હૈ, તથા એક પુંજ-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે ક્ષય હોને પર ક્ષાયિકસમ્ય-ક્ત્વી હો જાતા હૈ ।

સમકિતપ્રાપ્તિ મેં આઠ દૃષ્ટાન્ત હૈ—(૧) ગિરિનદીપ્રસ્તર, (૨) માર્ગ, (૩) જ્વર, (૪) વસ્ત્ર, (૫) જલ, (૬) કીડી, (૭) પુરુષ, ઔર ૮વાં કોદ્રવ । ઇનકા ખુલાસા અર્થ ઇસ પ્રકાર હૈ—

(૧) પહિલા દૃષ્ટાન્ત યથાપ્રવૃત્તિનામક કરણમેં હૈ । જૈસે-પર્વત ડપરસે બહનેવાલી નદીમેં પથરોં કે ટુકડે ડસકે પ્રવાહ કે વેગસે ઇધર-ડધર ઘિસે જાકર ગોલ હો જાતે હૈ, ઇસીપ્રકાર યથાપ્રવૃત્તિકરણ કે પ્રભાવ સે ડ-ત્કૃષ્ટ બી કર્મસ્થિતિ ઘટતે ૨ ઇતની કમ રહ જાતી હૈ જિસકી વજહ સે

મિથ્યાત્વપુણ્ણનો જેણે ક્ષય નથી કર્યો એવો જીવ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થતાં ત્રિપુણ્ણ, મિથ્યાત્વનો ક્ષય થતાં દ્વિપુણ્ણ, મિથ્યાત્વપુણ્ણ અને મિશ્રપુણ્ણનો ક્ષય થતાં એકપુણ્ણ (સમ્યક્ત્વપુણ્ણવાળો) થાય છે, તથા એક પુણ્ણ-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિનો ક્ષય થતાં જ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી થઈ જાય છે.

સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિમાં આઠ દૃષ્ટાન્તો છે. (૧) ગિરિનદીપ્રસ્તર, (૨) માર્ગ, (૩) જ્વર, (૪) વસ્ત્ર, (૫) જળ, (૬) કીડી, (૭) પુરુષ, અને (૮) કોદ્રવ. એનો સ્પષ્ટ અર્થ આ પ્રકારે થાય છે—

(૧) પહેલો દૃષ્ટાન્ત યથાપ્રવૃત્તિનામવાળા કરણમાં છે. જેમ પર્વતથી વહેવાવાળી નદીમાં પથરોનો ટુકડો તેના પ્રવાહના વેગથી અહીં-તહીં ઘસડાઈ જેમ ગોળ થઈ જાય છે, તે પ્રકારે યથાપ્રવૃત્તિકરણના પ્રભાવથી ઉત્કૃષ્ટી

(૬) નન્વભવ્યાઃ કથં તસ્મિન્ યથાપ્રવૃત્તિકરણેઽવતિષ્ઠન્તે, કથં વા તતઃ પ્રતિ-
પતન્તિ, ?, ભવ્યા વા ગ્રન્થિ મિત્વા કથં તતઃ પરતો ગચ્છન્તિ ?; અત્રોચ્યતે—
પિપીલિકાદૃષ્ટાન્તાત્ । તથાહિ—કાશ્વિત્ પિપીલિકા અનાભોગતો વિલા-
ન્નિસ્સૃત્ય ઇતસ્તતો ગન્તું પ્રવૃત્તાઃ, કાશ્વિદપૂર્વકરણેન વૃક્ષાદાવારુઢાઃ, તાસામપિ
મધ્યે પક્ષરહિતાસ્તત્રૈવ તિષ્ઠન્તિ, તતઃ પ્રત્યવરોહન્તિ ચ । કાશ્વિત્ પક્ષોદ્ભવેન તત
ઉડ્ડીયન્તે । ઇહ યથા પિપીલિકાનામિતસ્તતો ગમનં યથાપ્રવૃત્તિકરણેન, વૃક્ષાદાવા-
રોહણમપૂર્વકરણેન, ઉડ્ડયનમનિવૃત્તિકરણેન, તથાઽત્રાપિ ગ્રન્થિદેશગમનં યથાપ્રવૃત્તિ-

(૬) અભવ્ય જીવ કૈસે યથાપ્રવૃત્તિકરણમેં સ્થિત હોતે હૈં ? ઓર કૈસે
ફિર વહાં સે ચ્યુત હો જાતે હૈં ? તથા ભવ્ય જીવ ગ્રન્થિ કા ભેદન કર
કૈસે ડસસે આગે વઢ જાતે હૈં ? , એસી શંકા કો દૂર કરને કે લિએ પિપી-
લિકા-દૃષ્ટાન્ત કી સાર્થકતા હૈ ।

જૈસે કિતનેક પિપીલિકાઈ (કીડિયાં) યૉં હી અપને વિલસે બાહર
નિકલ કર ઇધર-ઉધર ઘૂમને લગતી હૈં, ઓર ઇનમેંસે કિતનીક પિપી-
લિકાઈ અપૂર્વકરણ સે વૃક્ષાદિક કે ઝપર ચઢ જાતી હૈં । અનન્તર ડનમેં
પાંચરહિત કિતનીક વહીં પર રહ જાતી હૈં, ઓર કિતનીક વહાં સે ડતર
આતી હૈં, ઓર કિતનીક પિપીલિકાઈ કે જિનકે પર હોતે હૈં વે વહાંસે
ડઢ જાતી હૈં । જૈસે પિપીલિકાઑં કા ઇધર-ઉધર ઇન્નણ યથાપ્રવૃત્તિ-
કરણસે હોના હૈ, વૃક્ષાદિક પર ડનકા ચઢના અપૂર્વકરણ સે હોતા હૈ,
એવં વહાં સે ડનકા ડઢ જાના અનિવૃત્તિકરણસે હોના હૈ, ડસી પ્રકાર
જીવકા ગ્રન્થિદેશ તક જાના-યથાપ્રવૃત્તિકરણકે દ્વારા હોતા હૈ, ગ્રન્થિકા

(૬) અભવ્ય જીવ કેવી રીતે યથાપ્રવૃત્તિકરણ કરે છે ? અને કેવી રીતે
પછી ત્યાંથી પતિત થઈ જાય છે ? તથા ભવ્ય જીવ ગ્રન્થિનું ભેદન કરીને કેવી
રીતે એનાંથી આગળ વધી જાય છે ? આવી શંકાને દૂર કરવાને માટે પિપીલિકા
ઓ (કીડીઓ)ના દૃષ્ટાન્તની સાર્થકતા છે. જેમ કેટલીક પિપીલિકાઓ (કીડીઓ)
એમજ પોતાના દરથી બાહર નિકળીને અહીંતહીં ફરવા લાગે છે, અને તેઓમાંથી
કેટલીક કીડીઓ વૃક્ષાદિકની ઉપર ચઢી જાય છે. બાદમાં તેઓમાંથી પાખરહિત
કેટલીક કીડીઓ ત્યાં જ રહી જાય છે, અને કેટલીક કીડીઓ ત્યાંથી ઉતરી આવે
છે, તથા કેટલીક કીડીઓ—કે જેઓ પાખરહિત હોય છે તેઓ ત્યાંથી ઉડી જાય
છે. જેમ કીડીઓનું અહીંતહીં ફરવું યથાપ્રવૃત્તિકરણથી થાય છે, વૃક્ષાદિકની ઉપર
તેઓનું ચઢવું અપૂર્વકરણથી થાય છે, અને ત્યાંથી તેઓનું ઉડવું અનિવૃત્તિકરણથી
થાય છે; તે જ પ્રમાણે જીવનું ગ્રન્થિદેશ સુધી જવું તે યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા થાય

(૪-૫) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામિજીવસ્ય પ્રથમતયા ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વં ભવતિ, તત્ સ્વલ્પપૂર્વકરણવશાત્ । તત્રાપૂર્વકરણેન જીવો મિથ્યાત્વદલિકં ત્રિધા કરોતિ, તદ્યથા—(૧) મિથ્યાત્વં, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વં, (૩) સમ્યક્ત્વં ચેતિ । તત્ર (૪) વસ્ત્રં, (૫) જલં ચેતિ દૃષ્ટાન્તદ્વયમ્ । યથા કિંચિદ્ વસ્ત્રં જલં વા મલિનં ભવતિ, કિંચિદીપદ્ વિશુદ્ધં, કિંચિત્ શુદ્ધમ્, તથા મિથ્યાત્વદલિકમપ્યપૂર્વકરણવશાત્ કિંચિન્મિથ્યાત્વરૂપં મલિનં ભવતિ, કિંચિત્ સમ્યગ્મિથ્યાત્વરૂપમીપદ્ વિશુદ્ધં, કિંચિત્ સમ્યક્ત્વરૂપં શુદ્ધમ્ ।

કા મિથ્યાત્વ ગુર્વાદિક કે ઉપદેશ સે, ઔર કિસી ૨ કા અપને આપ તત્ત્વોં કી પર્યાલોચના સે નષ્ટ હો જાતા હૈ ।

(૪-૫) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાલે જીવ કે અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે હી જીવ મિથ્યાત્વ કે (૩) ત્રીન ભાગ કરતા હૈ—(૧) મિથ્યાત્વ, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, (૩) સમ્યક્ત્વ । યહાં પર વસ્ત્ર ઔર જલ યે દો દૃષ્ટાન્ત ઘટિત હોતે હૈ । જૈસે—કોઈ વસ્ત્ર અથવા જલ અત્યન્ત મલિન હોતા હૈ, ઔર કોઈ ઉસસે કુછ કમ મલિન, ઔર કોઈ ૨ વિલ્કુલ સાફ—નિર્મલ હોતા હૈ, ઉસી તરહ સે જીવ અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે મિથ્યાત્વ કે ત્રીન ટુકડે કર દેતા હૈ, ઉનમેં કોઈ ટુકડા વિલ્કુલ મલિન, ઔર કોઈ ટુકડા કુછ કમ મલિન, ંવં કોઈ ટુકડા વિલ્કુલ સાફ—શુદ્ધ હોતા હૈ । વિલ્કુલ મલિન ટુકડે કા નામ મિથ્યાત્વ, કુછ કમ મલિન ટુકડે કા નામ સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, ઔર સર્વથા શુદ્ધ ટુકડે કા નામ સમ્યક્ત્વ હૈ ।

શાંત થઈ જાય છે, તે પ્રમાણે કોઈ કોઈ જીવનો મિથ્યાત્વ ગુર્વાદિકના ઉપદેશથી, અને કોઈ કોઈનો પોતાની મેળે તત્ત્વોની પર્યાલોચનાથી નષ્ટ થઈ જાય છે.

(૪-૫) તીવ્ર વિશુદ્ધ પરિણામવાળા જીવને અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી સર્વ-પ્રથમ ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વ થાય છે. અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી જ જીવ મિથ્યાત્વના ત્રણ ભાગ કરે છે—(૧) મિથ્યાત્વ, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, (૩) સમ્યક્ત્વ. આ ઠેકાણે વસ્ત્ર અને જળ, આ જો દૃષ્ટાન્ત ઘટિત થાય છે. જેમ કોઈ વસ્ત્ર અથવા જળ અત્યન્ત મલિન છે, અને કોઈ એનાથી ઓછું મલિન, અને કોઈ કોઈ બિલ્કુલ સાફ—નિર્મળ હોય છે, તેમજ જીવ અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી મિથ્યાત્વના ત્રણ ભાગ કરી નાંખે છે. તેમાં કોઈ ભાગ બિલ્કુલ મલિન અને કોઈ ભાગ થોડો મલિન, કોઈ ભાગ તદ્દન સાફ—શુદ્ધ હોય છે. તદ્દન મલિન ભાગનું નામ મિથ્યાત્વ, થોડા ઓછા મલિન ભાગનું નામ સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, અને સર્વથા શુદ્ધ ભાગનું નામ સમ્યક્ત્વ છે.

સમાયાનમ્ ” ઇતિ । તત્રૈકઃ પુરુષસ્તૌ સમાપતન્તૌ વિલોક્ય પ્રથમતઃ એવ નિવૃત્તઃ, દ્વિતીયસ્તદ્વાક્યશ્રવણેન સ્વડ્ગદર્શનેન ચ સંજાતભયસ્તત્રૈવ સ્થિતઃ, તૃતીયસ્તુ પરમસાહસિકઃ પ્રકટીકૃતકૃપાણસ્તૌ દ્વાવપિ ચૌરૌ પશ્ચાત્કૃત્ય તત્ સ્થાનમતિક્રાન્તઃ ।

इह त्रयाणामपि या प्रथमतः क्रमेण गतिः सा यथाप्रवृत्तिकरणम्, यत्तु तद्व्ययं तदपूर्वकरणम्, यच्च तौ पराजित्य तत्परतो गमनं तत् तृतीयमनिवृत्तिकरणं द्रष्टव्यम् । यच्च ततः पलायनं तत् पतनम् ।

(૮) અપૂર્વકરણેન મિથ્યાત્વં ત્રિધા કરોતીતિ યદુક્તં તત્ર કોદ્રવદ્દષ્ટાન્તઃ । સ તુ પ્રાગેવ નિરૂપિતઃ ।

है' यह सुनते ही उनमें से एक पुरुष तो पहिले से ही कहीं भाग गया । दूसरा उनकी बात सुन कर और तलवार देख कर वहीं पर चुपचाप खड़ा रह गया । तीसरेने जो परमसाहसी था अपनी तलवार निकाल कर उनका सामना किया और उन्हें परास्त कर आगे बढ़ गया ।

यहां तीनों का गमन करना यह यथाप्रवृत्तिकरण के, तथा उनमें से दूसरे का भयान्वित हो कर वहीं पर खड़े रहना यह अपूर्वकरणके और तीसरे का चोरोंको परास्त कर आगे बढ़ना यह अनिवृत्तिकरणके स्थानापन्न समझना चाहिए । तथा भागना यह पतन का स्थानापन्न है ।

(૮) અપૂર્વકરણ-પરિણામ કે દ્વારા યહ જીવ જો મિથ્યાત્વકે ત્રીન સ્વપ્ન કરના હૈં વહાં પર કોદ્રવ કા દૃષ્ટાન્ત લાગૂ પડતા હૈં । ઇસ દૃષ્ટાન્ત કા સમન્વય પહિલે કિયા જા ચુકા હૈં ।

તે અમોને આપી ઘો, નહિ તો તમારો મોત આ વખતે નહીં છે' આ સાંભળતાં જ તેમાંથી એક પુરુષ તો પહેલેથી જ ક્યાંક લાગી ગયો, બીજો તેમની વાત સાંભળી અને તલવાર દેખીને ચુપચાપ ઉભો રહ્યો, ત્રીજો જે ઘણો સાહસિક હતો તેણે પોતાની તલવાર કાઢીને સામે ધધ ગયો અને તેમને લગાડીને આગળ વધી ગયો.

આ ઠેકાણે ત્રણેનું જુલુ તે યથાપ્રવૃત્તિકરણનું, તથા આમાંથી બીજાનું લયલીત થઈ ત્યાં રોકાઈ જવું તે અપૂર્વકરણનું, અને ત્રીજાનું ચોરોને હરાવીને આગળ વધવું તે અનિવૃત્તિકરણનું સ્થાનાપન સમજવું જોઈએ જે લાગણું તે પતનનું સ્થાનાપન છે.

(૮) અપૂર્વકરણ પરિણામ દ્વારા આ જીવ જે મિથ્યાત્વના ત્રણ ખંડ કરે છે ત્યાં કોદ્રવનો દૃષ્ટાન્ત લાગૂ પડે છે. આ દૃષ્ટાન્તનો સમન્વય પહેલાં જ કરવામાં આવ્યો છે.

करणेन, ग्रन्थिभेदनमपूर्वकरणेन, सम्यक्त्वमनिवृत्तिकरणेन । पक्षरहितास्तु यथा वृक्षादौ स्थितास्ततः प्रत्यवरोहन्ति, तथाऽध्यवसायस्य मान्द्यात् कोऽपि तीव्रविशोधि-रहितोऽपूर्वकरणेन ग्रन्थिभेदं कर्तुमुद्यतोऽपि तीव्ररागद्वेषपरिणामोदयात् तत्रैव तिष्ठति, पश्चात् तत एव परावर्तते ।

(૭) અત્રૈવ પુરુષદૃષ્ટાન્તોઽપિ—યથા ત્રયો મનુષ્યાઃ મયઢ્કરં પન્થાનં મયેન ગચ્છન્તઃ સાયંકાલે સમાગતે ત્વરમાણા વ્રજન્તિ । અત્રાન્તરે સ્વદ્ગહસ્તૌ દ્વૌ ચૌરૌ પાર્શ્વદ્વયતઃ સંપ્રાપ્તૌતૌચૈવમાક્ષિપતઃ—“કવ ગચ્છથ યૂયં? યુષ્માકમિદાનીં મરણં ભેદન કરના યહ અપૂર્વકરણ કે દ્વારા હોતા હૈ, ઔર સમકિત કી પ્રાપ્તિ કરના યહ અનિવૃત્તિકરણ કે દ્વારા હોતા હૈ । પક્ષરહિત પિપીલિકાઐ જૈસે વૃક્ષાદિક પર ચઢ કર વહાં સે ફિર ઉતરતી હૈં ઉસી પ્રકાર અધ્યવ-સાય કી મન્દતાસે જીવ ભી તીવ્રવિશુદ્ધિસમ્પન્ન પરિણામ કે વિના અપૂર્વકરણ કે દ્વારા ગ્રન્થિભેદ કરનેમૈં ઉદ્યત હોતા હુઆ ભી તીવ્ર રાગ-દ્વેષ પરિણામકે ઉદયસે વહીં પર ઠહર જાતા હૈ ઔર પીછે વહાં સે લૌટ આતા હૈ; આગે નહીં વઢ સકતા ।

(૭) યહીં પર પુરુષકા દૃષ્ટાન્ત ભી લાગૂ પડતા હૈ । જૈસે ત્રીન મનુષ્ય મય સે સંત્રસ્ત હો વિકટ માર્ગ સે જાતે હુઅ સાયંકાલ કે સમય અપને સ્થાનકી ઓર વહુત હી શીઘ્રતાસે આગે વઢ રહે થે, ઇનમૈં સે ઇકકે પાસ હી તલવાર થી । ઇસી સમય તલવાર લિયે હુઅ દો ચોર ભી જો ઇનકે પીછે લગે હુઅ થે, વે ડનકે સામને આ કર બોલે—‘તુમ લોગ કહાં જાતે હો ? જો કુછ હો હમૈં દે દો, નહીં તો તુમહારી ઇસ સમય મૃત્યુ નિકટ

છે. ગ્રન્થિનું ભેદન કરવું, તે અપૂર્વકરણદ્વારા થાય છે, અને સમકિતની પ્રાપ્તિ કરવી તે અનિવૃત્તિકરણ દ્વારા થાય છે. પાંખરહિત કીડિઓ જેમ વૃક્ષાદિની ઉપર ચઢીને ઉતરે છે. તે પ્રમાણે અધ્યવસાયની મંદતાથી જીવ પણ તીવ્ર વિશુદ્ધ-સંપન્ન પરિણામના અભાવે અપૂર્વકરણદ્વારા ગ્રન્થિભેદ કરવામાં તૈયાર હોવા છતાં પણ તીવ્રરાગદ્વેષપરિણામના ઉદયથી ત્યાં જ રોકાઈ જાય છે અને પછી ત્યાંથી ફરી આવે છે અને આગળ વધી શકતાં નથી.

(૭) એ જ ઠેકાણે પુરુષનો દૃષ્ટાન્ત પણ લાગુ પડે છે જેમ—સાયંકાળની વખત વિકટ માર્ગથી જતાં ત્રણ મનુષ્ય ભયથી ડુઃખી હતા, અને પોતાના સ્થાનની તરફ ઘણી જ શીઘ્રતાથી આગળ વધી રહ્યા હતા. તેમાં એકની પાસે તલવાર હતી. આ વખતે તલવારવાળા જે ચોર જે તેમની પછવાડે પડ્યાં હતાં તે એમની સામે આવી ખોડ્યાં ‘—તમે લોક ક્યાં જાઓ છો ? તમારી પાસે જે હોય

અતીતાઃ=અતીતકાલિકા અનન્તાઃ, યે ચ પ્રત્યુત્પન્નાઃ=વર્તમાનકાલિકાઃ-પશ્ચ-
ભરતેષુ પશ્ચૈરવતેષુ પશ્ચમહાવિદેહેષુ વર્તમાનાઃ, યે ચ આગમિષ્યન્તઃ=ભવિષ્યત્કાલે
આગામિનોઽનન્તાઃ, તે સર્વે=અર્હન્તો ભગવન્તઃ એવં=વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ, આખ્યાન્તિ=
પરપ્રશ્નાવસરે કથયન્તિ ।

અત્ર વર્તમાનગ્રહણમુપલક્ષણં, તેનાતીતાનાગતયોરપિ ગ્રહણમ્ । તથા ચ-એવમાચ-
ખ્યુઃ, એવમાખ્યાસ્યન્તીત્યપિ યોજનીયમ્ । એવં સર્વત્ર ક્રિયાસુ યોજનીયમ્ । તથા-
એવં ભાષન્તે=સુરનરપરિપદિ સર્વજીવાનાં સ્વસ્વભાષાપરિણામિન્યાઽર્ધમાગધ્યા
ભાષયા બ્રુવન્તિ । તથા-એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ=હેતુદૃષ્ટાન્તાદિના પ્રકર્ષેણ બોધયન્તિ । તથા
-એવં પ્રરૂપયન્તિ=તત્તદ્ભેદં પ્રદર્શ્ય પ્રકર્ષેણ નિર્ણયન્તિ ।

અતીતકાલ મેં જિતને મી અનન્ત તીર્થઢ્ઢર હુએ હૈં, તથા પાંચ ભરત,
પાંચ ઁરવત ઔર પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્ર મેં જિતને વિદ્યમાન હૈં, ઔર
ભવિષ્યત્કાલમેં જિતને મી તીર્થઢ્ઢર હોંગે ઁન સર્વોને દૂસરોં કે પ્રશ્નાવસરમેં
હસી પ્રકાર સે કહા હૈ, કહતે હૈં ઔર કહેંગે । યહાં પર “આખ્યાન્તિ”
યહ વર્તમાનકાલિક ક્રિયા હૈ, હસસે ભૂત ઔર ભવિષ્યત્-કાલીન ક્રિયા
મી સમજ્ઞ લેના ઁાહિએ । આગે મી જહાં પર વર્તમાન ક્રિયાપદકા પ્રયોગ
હો, વહાં પર ભૂત ઔર ભવિષ્યત્-કાલીન ક્રિયાપદકા ઉપલક્ષણ સે અધ્યા-
હાર કર લેના ઁાહિએ ।

“એવં ભાષન્તે” ઁન સમસ્ત તીર્થઢ્ઢર મહાપ્રભુઓંને દેવ, મનુષ્યોં
કી સભામેં અપની અર્ધમાગધી ભાષાકે દ્વારા, જો ભાષા સમસ્ત જીવોંકી
ભાષામેં પરિણત હો જાતી હૈ; હસ પ્રકાર સ્પષ્ટ કહા હૈ ।

અતીતકાળમા જેટલા પણ અન ત તીર્થકર થયાં છે, તથા પાંચ ભરત પાંચ ઐર-
વત અને પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રમા જેટલાં વિદ્યમાન છે, અને ભવિષ્યકાળમાં જેટલાં
પણ તીર્થકર થશે તે બધા બીજાના પ્રશ્નાવસરમાં આ પ્રકારથી કહ્યું છે, કહે છે
અને કહેશે. આ ઢેકાણે “આખ્યાન્તિ” તે વર્તમાનકાલિક ક્રિયા છે, એથી ભૂત
અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયા પણ સમજી લેવી જોઈએ આગળ પણ જે ઢેકાણે
વર્તમાનકાલિક ક્રિયાપદનો પ્રયોગ છે, ત્યાં પણ ભૂત અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયા-
પદનો ઉપલક્ષણથી અધ્યાહાર કરી લેવો જોઈએ.

“એવં ભાષન્તે” આ સમસ્ત તીર્થકર મહાપ્રભુઓંને દેવ મનુષ્યોની સભામાં
પોતાની અર્ધમાગધીભાષાદ્વારા-જે ભાષા સમસ્ત જીવોની ભાષામાં પરિણત થઈ
જાય છે-આ પ્રકારે સ્પષ્ટ કહ્યું છે.

अर्हतधर्म एव श्रद्धेय इति बोधयितुं श्रीसुधर्मास्वामी कथयति—‘से वेमि’ इत्यादि ।

मूलम्—से वेमि, जे अईया जे य पडुप्पन्ना जे य आगमि-
स्सा अरहंता भगवंतो ते सव्वेवि एवमाइक्खंति एवं भासंति
एवं पण्णवित्ति एवं परूवित्ति—सव्वे पाणा सव्वे भूया सव्वे
जीवा सव्वे सत्ता न हंतव्वा, न अज्जावेयव्वा, न परिघेत्तव्वा,
न परियावेयव्वा, न उद्देव्यव्वा ॥ सू० १ ॥

छाया—तद् ब्रवीमि, ये अतीता ये च प्रत्युपन्नाः ये चागमिष्यन्तः अर्हन्तो
भगवन्तस्ते सर्वेऽपि एवमाख्यान्ति, एवं भापन्ते, एवं प्रज्ञापयन्ति, एवं प्ररूपयन्ति—
सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः सर्वे जीवाः सर्वे सत्त्वाः न हन्तव्याः, न आज्ञापयितव्याः,
न परिग्रहीतव्याः, न परितापयितव्याः, नापद्रावयितव्याः ॥ सू० ॥ १ ॥

तीर्थकरैर्गणधरैश्च स्वस्वशिष्येभ्यो यत् सम्यक्त्वमुक्तं तदहं ब्रवीमि=कथयामि ।
यद्वा—‘से’ इत्यस्य स इतिच्छाया । येन मया भगवतः श्रीवर्धमानस्वामिन-
स्तीर्थकरस्य सकाशे तद्वचनेन तत्त्वज्ञानं लब्धं, सोऽहं ब्रवीमि । भगवदुक्तमेवार्थं
कथयामि, तस्मान्मम वाक्यं श्रद्धेयमिति भावः ।

अर्हन्त प्रभुके द्वारा प्रतिपादित धर्म ही श्रद्धा करनेके योग्य है । इस
वातका प्रतिबोध करानेके लिये श्रीसुधर्मास्वामी जम्बूस्वामी से कहते हैं—
—‘से वेमि’ इत्यादि ।

हे जम्बू ! तीर्थङ्करों ने एवं गणधरादिकों ने अपने २ शिष्योंके लिये
जिस सम्यक्त्वका उपदेश दिया है उसी सम्यक्त्वका मैं व्याख्यान करता
हूँ । अथवा भगवान् श्रीवर्धमान तीर्थङ्कर के निकट जो उनके वचनोंद्वारा
सुना है, वही मैं कहता हूँ, किन्तु अपनी तर्फसे कुछ भी नहीं कहता हूँ ।

‘अर्हत प्रभुद्वारा प्रतिपादित धर्म न श्रद्धा करवायेज्य छे’ आ वातने
प्रतिबोध करवाने भाटे श्री सुधर्मास्वामी कहे छे—‘से वेमि’ इत्यादि.

हे जम्बू ! तीर्थकरोये तेम न गणधरादिकोये पोतपोताना शिष्योने भाटे
जे सम्यक्त्वने उपदेश आय्यो छे ते सम्यक्त्वनुं हुं पण व्याख्यान कइं छुं.
अथवा भगवान् श्री वर्धमान तीर्थकर पास तेमना वचनोधी जे सांलज्युं छे ते
हुं कहुं छुं पण भारी तरइथी कंछ पण कहेतो नथी.

વિષ શસ્ત્રાદિક સે પ્રાણવિયોગ ન કરેં । પ્રાણી, ભૂત, જીવ ઓર સત્ત્વ, યે યદ્યપિ જીવ કે હી પર્યાયવાચી શબ્દ હૈં, ફિર મી ભિન્નરૂપસે જો ઇનકા યહાં પર નિર્દેશ કિયા હૈ વહ પર્યાયભેદ માન કર હી કિયા હૈ, ઓર પર્યાયભેદ સે અર્થભેદ હોતા હૈ ઇસલિયે યહાં પુનરુક્તિ દોષકી સંભાવના નહીં હૈ । જો ઇન્દ્રિયાદિક દશ પ્રાણોંકો યથાસંભવ ધારણ કરતે હૈં વે પ્રાણી કહલાતે હૈં । વે ત્રસ ઓર સ્થાવરકે ભેદ સે દો પ્રકારકે હોતે હૈં । દ્વીન્દ્રિય સે લેકર પંચેન્દ્રિયપર્યન્ત જીવ ત્રસ, ઓર એકેન્દ્રિય-પૃથિવીકાયાદિક જીવ સ્થાવર હૈં । યે સવ હૈં, હોંગે એવં હુએ હૈં, ઇસલિયે ભૂત કહલાતે હૈં । યે ચૌદહ પ્રકારકે હૈં । યે સવ જીતે હૈં, આગે મી જીયેંગે ઓર ભૂતકાલ મેં જીયે, ઇસલિયે ઇનકી 'જીવ' સંજ્ઞા સાર્થક હૈ । નારકી, તિર્યચ્ચ, મનુષ્ય ઓર દેવકે ભેદસે યે ચાર ગતિવાલે હૈં । તથા યે સમસ્ત હી અપનેર કર્મોદયજન્ય સુખ દુઃખોંકી સત્તાવાલે હોતે રહતે હૈં; ઇસલિયે સત્ત્વ હૈં ।

તીર્થંકર પ્રભુ તત્ત્વોં કી વિવેચના, ભેદ ઓર પર્યાયોં કે દ્વારા કિયા કરતે હૈં, ઇસ કારણસે પર્યાય-શબ્દોંકા નિર્દેશ કિયા ગયા હૈ । અથવા 'સર્વ જીવોં કે ઉપર અત્યન્ત દયા રચની ચાહિયે' ઇસ વાત કો વાર વાર સમજાને કે અભિપ્રાય સે મી ઇન પર્યાય શબ્દોંકા કથન હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

પહોંચાડે. 'ન હ્રદયેવવા' વિષ શસ્ત્રાદિકથી તેના પ્રાણોના વિયોગ ન કરે પ્રાણી, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ, આ બધા શબ્દો જે કે જીવના જ પર્યાય શબ્દો છે તે પણ ભિન્ન ભિન્ન રૂપથી જોઓનો આ ઠેકાણે નિર્દેશ કર્યો છે તે પર્યાયભેદ માનીને જ કર્યો છે, અને પર્યાયભેદથી અર્થભેદ થાય છે, માટે આ ઠેકાણે પુનરુક્તિ દોષની સંભાવના નથી જે ઇન્દ્રિયાદિક દશ પ્રાણોને યથાસંભવ ધારણ કરે છે તે પ્રાણી કહેવાય છે તે ત્રસ અને સ્થાવરના ભેદથી જે પ્રકારે હોય છે એકેન્દ્રિયથી લઈને પંચેન્દ્રિયપર્યન્ત જીવ ત્રસ, અને એકેન્દ્રિય-પૃથ્વીકાયાદિક જીવ સ્થાવર છે. આ બધા-એ, થશે તેમજ થએલ છે, તેથી ભૂત કહેવાય છે. તે ચૌદ પ્રકારના છે. એ બધા જીવે છે આગળ પણ જીવશે અને ભૂતકાળમાં જીવ્યા તેથી તેની 'જીવ' સંજ્ઞા સાર્થક છે. નારકી, તિર્યચ્ચ, મનુષ્ય અને દેવના ભેદથી એ ચાર ગતિવાળા છે. તથા એ સમસ્ત પોતપોતાના કર્મોદયજન્ય સુખ દુઃખોની સત્તાવાળા હોય છે તેથી સત્ત્વ છે.

તીર્થંકર પ્રભુ તત્ત્વોની વિવેચના, ભેદ અને પર્યાયો દ્વારા કરે છે. આ બધાથી પણ પર્યાય-શબ્દોનો નિર્દેશ કરવામાં આવ્યો છે. અથવા 'સર્વ જીવોની ઉપર અત્યંત દયા રાખવી જોઈએ' આ વાતને વાર વાર સમજાવવાના અભિપ્રાયથી આ પર્યાય-શબ્દોનું કથન છે ॥ સૂ. ૧ ॥

સર્વેઽર્હન્તો ભગવન્ત એવં કિમાખ્યાન્તીતિ જિજ્ઞાસાયમાહ-‘સર્વે પાણા’
 इत्यादि । सर्वे=निरवशेषाः प्राणाः=प्राणिनः पृथिव्यादयः स्थावराः, द्वीन्द्रियादि-
 पञ्चेन्द्रियपर्यन्ताः त्रसाश्चेत्यर्थः, इन्द्रियादिप्राणानां यथासंभवं धारणात् तेषु प्रा-
 णित्वमस्तीति भावः । तथा सर्वे भूताः=भवन्ति भविष्यन्त्यभूवन्निति च भूताः चतुर्दश-
 भूतग्रामरूपाः, तथा-सर्वे जीवाः=जीवन्ति जीविष्यन्त्यजीविषुरिति जीवाः नार-
 कतिर्यङ्मनुष्यदेवरूपाश्चतुर्गतिकाः, तथा सर्वे सत्त्वाः=स्वकृतकर्मजन्यसुखदुःख-
 सत्तावन्तः । तत्त्वानां भेदपर्यायैः प्रतिबोधनमर्हन्तो भगवन्तः कुर्वन्तीति कृत्वा पर्यायश-
 ब्दनिर्देशः । यद्वा-सर्वप्राणिषु पुनः पुनर्दयाभावसमुत्पादनाय पर्यायशब्दनिर्देशः । न
 हन्तव्याः=दण्डादिभिर्न ताडयितव्या इत्यर्थः । नाज्ञापयितव्याः=अनभिमतकार्येषु न
 प्रवर्तयितव्याः, न परिग्रहीतव्याः=इमे भृत्यादयो ममेति कृत्वा परिग्रहरूपेण स्वाधीन-
 तया न स्वीकर्तव्याः, न परितापयितव्याः=न अन्नपानाद्यवरोधनेन ग्रीष्मातपादौ
 स्थापनेन च पीडनीयाः, नापद्रावयितव्याः=न विषशस्त्रादिना मारयितव्याः ॥सू० १॥

‘एवं પ્રજ્ઞાપયન્તિ’ હેતુ દૃષ્ટાન્તાદિક કે દ્વારા અચ્છી તરહ સે સમજાયા હૈ,
 और ‘एवं प्ररूपयन्ति’ भेदप्रभेदपूर्वक स्पष्ट रीति से निर्णय किया है ।

સમસ્ત તીર્થકરોં ને કયા કહા ? હસ પ્રકાર કી જિજ્ઞાસા હોને પર
 भगवान् कहते हैं—‘सर्वे पाणा’ इत्यादि ।

સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ ઓર સમસ્ત સત્ત્વોં કો
 अर्थात् किसी को भी ‘न हंतव्वा’ डंडे आदि से न हने । ‘न अज्जावे-
 यव्वा’ न इनको मारनेके लिये आज्ञा दे । ‘न परिघेतव्वा’ ‘ये भृत्यादिक
 मेरे अधीन हैं’ ऐसा समझ कर उन्हें दास नहीं बनावें । ‘न परियावेयव्वा’
 अन्नपानी आदि बंध करके तथा धूप आदिमें रख कर न पीड़ा पहुंचावे
 ‘न किलामेयव्वा’ बन्धनादि से न खेद पहुंचावे ‘न उद्वेयव्वा’ इनका

‘एवं પ્રજ્ઞાપયન્તિ’ હેતુદૃષ્ટાન્તાદિકથી સારી રીતે સમજાવ્યું છે અને
 “ एवं प्ररूपयन्ति ” ભેદપ્રભેદપૂર્વક સ્પષ્ટ રીતિથી નિર્ણય કર્યો છે.

સમસ્ત તીર્થકરોએ શું કહ્યું ? આ પ્રકારની જાણવાની ઈચ્છા થવાથી ભગ-
 વાન કહે છે—‘સર્વે પાણા’ ઇત્યાદિ.

સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સત્ત્વોને અર્થાત્ કોઈને
 પણ ‘ન હંતવ્વા’ લાકડી આદિથી ન મારે. ‘ન અજ્જાવેયવ્વા’ ન મારવાને માટે આજ્ઞા
 આપે, ‘ન પરિઘેતવ્વા’ ‘આ નોકરાદિ મારી આજ્ઞામાં છે’ એવું સમજીને
 તેઓને દાસ ન બનાવે. ‘ન પરિયાવેયવ્વા’ અન્ન પાણી આદિ બંધ કરીને તથા
 તડકા આદિમાં રાખીને ન પીડા પહોંચાડે. ‘ન કિલામેયવ્વા’ બંધનાદિથી ખેદ ન

અત એવૈષ નિત્યઃ=અવિનાશી, સર્વદા પશ્ચસુ મહાવિદેહેષુ સદ્ભાવાત્ । તથા શાશ્વતઃ શાશ્વતગતિકારણત્વાત્, યદ્વા-યતો નિત્યસ્તસ્માચ્છાશ્વતઃ । અયમેવ ધર્મઃ શ્રદ્ધેયો ગ્રાહ્યથેત્યત્ર હેતું પ્રદર્શયન્ વિશેષણાન્તરમાહ-‘ સમેત્ય ’ इत्यादि । लोकं= પડ્જીવનિકાયં દુઃસ્વદાવાનલાન્તઃપતિતં, સમેત્ય=કેવલજ્ઞાનેન પ્રત્યક્ષતયા વિજ્ઞાય, સ્વેદજ્ઞૈઃ=સર્વપ્રાણિદુઃસ્વાભિજ્ઞૈસ્તીર્થકરૈઃ, પ્રવેદિતઃ=પ્રતિબોધિતઃ । ધર્મોઽયં મયા ન સ્વમનીપાકલ્પિત ઇતિ ચ સુધર્મસ્વામિના શિષ્યમુદ્દિશ્ય સૂચિતમ્ ।

તીર્થકરાણામુપદેશો યથા ભવતિ, તં પ્રકારમાહ—તદ્ યથેત્યાદિ । યથા=યેન પ્રકારેણ તત્ પ્રતિબોધિતં તત્ પ્રદર્શયામીત્યર્થઃ । ઉત્થિતેષુ વા-ઉત્થિતાઃ=ધર્માચરણાર્થમુદ્યતાઃ, તેષુ વા, તથા-અનુત્થિતેષુ=અનુત્થિતાઃ-તદ્વિપરીતાસ્તેષુ વા । ઉત્થિતાઽનુત્થિતસાધારણસ્તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

યોગ્ય હૈ । યદ્ અન્ય વિશેષણોં કે દ્વારા સ્ખુલાસા કરતે હુએ શ્રીસુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ-સમસ્ત જીવોં કે નાના પ્રકારકે કલેશોંકે જ્ઞાતા શ્રી તીર્થદ્ધર પ્રભુને દુઃસ્વરૂપી દાવાનલસે જલતે હુએ ઇસ પડ્જીવનિકાયસ્વરૂપ લોક કો અપને કેવલજ્ઞાનસે પ્રત્યક્ષ કર ઇસી ધર્મકા ઉપદેશ દિયા હૈ, અતઃ ધર્મકે આદિ પ્રવર્તક શ્રી તીર્થદ્ધર પ્રભુ હી હૈં । ઇસ પ્રકાર શ્રીસુધર્માસ્વામી અપને શિષ્ય જમ્બૂસ્વામીસે સૂચિત કિયા હૈ કિ મૈને અપની કલ્પના સે કુછ ભી નહીં કહા હૈ ।

उन तीर्थद्वारोंका उपदेश-प्रवाह जिस एकरूपसे जहां २ बहा उसी को प्रकट करते हुए श्रीसुधर्मास्वामी कहते हैं कि-उनका उपदेश सिर्फ उन्हीं जीवोंके लिये नहीं हुआ जो धर्माचरण करनेमें उत्थित-उद्यत थे, किन्तु जो अनुत्थित-अनुद्यत थे उन्हें भी प्रभुने धर्म समझाया, अर्थात्

ધર્મ, શ્રદ્ધા કરવા યોગ્ય અને ગ્રહણ કરવાયોગ્ય છે, આ વાતનો અન્ય વિશેષણોદ્વારા ખુલાસો કરતાં શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે-સમસ્ત જીવોના નાના પ્રકારના કલેશોના જ્ઞાતા શ્રી તીર્થદ્ધરપ્રભુએ દુઃખરૂપી દાવાનળથી બળતાં આ પડ્જીવનિકાયસ્વરૂપ લોકને પોતાના કેવલજ્ઞાનથી પ્રત્યક્ષ કરીને આ જ ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો છે. એથી આ ધર્મના આદિપ્રવર્તક શ્રી તીર્થદ્ધરપ્રભુ જ છે, આ પ્રકારે શ્રીસુધર્માસ્વામી પોતાના શિષ્ય જમ્બૂસ્વામીને સૂચિત કરે છે કે-મેં મારી પોતાની કલ્પનાથી કાઈ પણ નથી કહ્યું

આ તીર્થદ્ધરોનો ઉપદેશ-પ્રવાહ જે એકરૂપથી જ્યાં જ્યાં થયો તેને જ પ્રકાશિત કરતા શ્રીસુધર્માસ્વામી કહે છે કે-એમનો ઉપદેશ કેવલ તેવા જીવો માટે નથી થયો કે જે ધર્માચરણ કરવામાં ઉદ્યત હતા, કિન્તુ જે જીવો ધર્માચરણ કરવામાં અનુદ્યત હતા તેમને પણ પ્રભુએ ધર્મ સમજાવ્યો. અર્થાત્ એમનો ઉપ-

સમ્યક્ત્વમુદ્ઘાવયિતુમ્ આર્હતધર્મસ્ય મહિમાનમાહ—‘એસ ધમ્મે’ ઇત્યાદિ।

મૂલમ્—એસ ધમ્મે સુદ્ધે નિદ્દેસાસણ સમિચ્છ લોયં સ્વેય-
ણોહિં પવેદ્દેસ, તં જહા—ઉદ્દેસુ વા અણુદ્દેસુ વા, ઉવદ્દેસુ
વા અણુવદ્દેસુ વા, ઉવરયદંડેસુ વા અણુવરયદંડેસુ વા, સોવહિ-
એસુ વા અણોવહિએસુ વા, સંજોગરએસુ વા અસંજોગરએસુ વા।સૂ.૦૨।

છાયા—એવ ધર્મઃ શુદ્ધઃ નિત્યઃ શાશ્વતઃ સમેત્ય લોકં સ્વેદજ્ઞઃ પ્રવેદિતઃ । તદ્
યથા—ઉત્થિતેષુ વા અનુત્થિતેષુ વા, ઉપસ્થિતેષુ વા અનુપસ્થિતેષુ વા, ઉપરતદણ્ડેષુ
વા અનુપરતદણ્ડેષુ વા, સોપધિકેષુ વા અનુપધિકેષુ વા, સંયોગરતેષુ વા
અસંયોગરતેષુ વા ॥ મૂ.૦૨ ॥

ટીકા—એવઃ=અનન્તરોક્તઃ સર્વાર્હદ્ભગવત્પરુપિતઃ, ધર્મઃ=સર્વપ્રાણિપ્રાણાતિપા-
તવિરમ્ણાદિરુપઃ, શુદ્ધઃ=નિર્મલઃ—પાપાનુબન્ધરહિત ઇત્યર્થઃ । આર્હતધર્માદન્યસ્તુ
ધર્મત્વેન યઃ શાક્યાદેરભિમતઃ સ સ્વલ્પસર્વજ્ઞસરાગોપદિષ્ટત્વેન હિંસાદિદોષાનુબ-
ન્ધસદ્ભાવેન ચ ન શુદ્ધ ઇતિ ભાવઃ ।

સમ્યક્ત્વકા ઉદ્ઘાવન કરનેકે લિયે જિનેન્દ્રપ્રતિપાદિત ધર્મકી મહિમા
કહતે હૈ—‘એસ ધમ્મે’ ઇત્યાદિ ।

સમસ્ત જીવોં કે ઘાત કરનેકા નિષેધરૂપ યહી ધર્મ—જિસે સમસ્ત
તીર્થંકરોંને પ્રતિપાદિત કિયા હૈ—પાપાનુબંધ સે રહિત હોનેસે નિર્મલ હૈ,
ઈસકે અતિરિક્ત બૌદ્ધાદિકોંકા અભિમત જો સિદ્ધાન્ત હૈ વહ હિંસાદિ-
દોષવિશિષ્ટ હોનેસે નિર્મલ નહીં હૈ; યહ બાત ‘નિર્મલ’ ઇસ પદ સે પ્રકટ
હોતી હૈ । પશ્ચમહાવિદેહોં મેં સદા વર્તમાન હોને કે કારણ યહ અવિનાશી-
ધ્રૌવ્યસ્થિતિવાળા હૈ, શાશ્વતગતિ—મોક્ષકા કારણ હોનેસે, અથવા નિત્ય
હોનેસે યહ શાશ્વત હૈ, અતઃ યહી ધર્મ શ્રદ્ધા કરને યોગ્ય એવં ગ્રહણ કરને

સમ્યક્ત્વ પ્રગટ કરવા માટે જિનેન્દ્ર પ્રતિપાદિત ધર્મનો મહિમા કહે છે—
‘એસ ધમ્મે’ ઇત્યાદિ.

સમસ્ત જીવોના ઘાત કરવાના નિષેધરૂપ આ જ ધર્મ છે જેને સમસ્ત
તીર્થંકરોએ પ્રતિપાદિત કર્યો છે, પાપાનુબંધથી રહિત હોવાથી નિર્મળ છે. એનાથી
અતિરિક્ત બૌદ્ધાદિકોનો અભિમત જે સિદ્ધાન્ત છે તે હિંસાદિદોષવિશિષ્ટ
હોવાથી નિર્મળ નથી, આ વાત “નિર્મલ” આ પદથી પ્રગટ થાય છે. પશ્ચ-
મહાવિદેહોમાં સદા વર્તમાન હોવાથી આ અવિનાશી—ધ્રુવ સ્થિતિવાળો છે. શાશ્વત-
ગતિ—મોક્ષનું કારણ હોવાથી, અથવા નિત્ય હોવાથી તે શાશ્વત છે. તેથી આ જ

તથા-ઉપરતદણ્ડેષુ વા-એકેન્દ્રિયાદીન્ પ્રાણિનો દણ્ડયતીતિ દણ્ડો મનોવા-કાયરૂપઃ, ઉપરતો દણ્ડો યેષાં તે ઉપરતદણ્ડાઃ-મુનયઃ, તેષુ વા, તદ્વિપરીતા અનુપરતદણ્ડાઃ-ગૃહસ્થાઃ, તેષુ વા । એતદુભયસાધારણોઽપ્યુપદેશસ્તેષામિત્યર્થઃ ।

તથા-સોપધિકેષુ વા ઇતિ । ઉપધીયતે=ગૃહ્યતે ઇત્યુપધિઃ દ્રવ્યતો હિરણ્યસુવર્ણાદિઃ, ભાવતો રાગદ્વેષાદિઃ, સહોપધિના વર્તન્ત ઇતિ સોપધિકા-ભરતાદયસ્તેષુ વા । અનુપધિકેષુ વા=ન વિદ્યતે ઉપધિર્યેષાં તેઽનુપધિકાઃ-કાષ્ટહારાદયસ્તેષુ વા । એતદ્વયેઽપિ તીર્થકરોપદેશઃ સમાન એવ ભવતીત્યર્થઃ ।

પ્રકટ કરતા હૈ । ઇસ વિષયમેં રોહતક ચોરકા દૃષ્ટાન્ત શાસ્ત્રોં મેં પ્રસિદ્ધ હી હૈ । ઇસી પ્રકાર ઉપસ્થિતોં ઔર અનુપસ્થિતોં મેં, ઉપરતદંડવાલોં મેં ઔર અનુપરતદંડવાલોં મેં, સોપધિકોં મેં ઔર નિરુપધિકોં મેં, તથા સંયોગરતોં મેં ઔર અસંયોગરતોં મેં મી પ્રભુકા ધાર્મિક ઉપદેશ એક હી સરીખા હુઆ હૈ । જો પ્રભુ કા ધાર્મિક ઉપદેશ સુનનેકી અભિલાષાસે સમવસરણ મેં આતે હૈં વે ‘ઉપસ્થિત’ કહલાતે હૈં, ઔર ઇસસે વિપરીત ‘અનુપસ્થિત’ । એકેન્દ્રિયાદિક સ્થાવર ઔર દ્વીન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોં કી હિંસાકે કારણભૂત માનસિક, વાચિક એવં કાયિક વ્યાપારોં સે જો નિવૃત્ત હો ચુકે હૈં વે ‘ઉપરતદણ્ડ’ કહે જાતે હૈં, જૈસે મુનિરાજ । ઇસસે ઉલ્ટે ‘અનુપરતદણ્ડ’ હૈં જૈસે ગૃહસ્થ । જો ગ્રહણ કી જાવે ઉસે ‘ઉપધિ’ કહતે હૈં । યહ દો પ્રકાર કી હૈ-એક ‘દ્રવ્ય-ઉપધિ’ દૂસરી ‘ભાવ-ઉપધિ’ । ‘દ્રવ્ય-ઉપધિ’-હિરણ્યસુવર્ણાદિ, ઔર ‘ભાવ-ઉપધિ’ રાગદ્વેષાદિ હૈં । ઇસ ઉપધિસે યુક્ત જો હોતે હૈં વે ‘સોપધિક’ જૈસે ભરતાદિક, ઔર ઇસ ઉપધિસે રહિત જો હૈં

આ વિષયમાં રોહતક ચોરનો દૃષ્ટાન્ત શાસ્ત્રમાં પ્રસિદ્ધ છે. આ પ્રકારે ઉપસ્થિતો અને અનુપસ્થિતોમાં, ઉપરતદંડવાળામાં અને અનુપરતદંડવાળામાં, સોપધિકોમાં અને નિરુપધિકોમાં, તથા સંયોગરતોમાં અને અસંયોગરતોમાં પણ પ્રભુનો ધાર્મિક ઉપદેશ એક જ સરખો છે. જે પ્રભુનો ધાર્મિક ઉપદેશ સાલણવાની ભાવનાથી સમવસરણમાં આવે છે તેઓ ‘ઉપસ્થિત’ કહેવાય છે. અને તેનાથી વિપરીત ‘અનુપસ્થિત.’ એકેન્દ્રિયાદિક સ્થાવર અને બેન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોની હિંસાના કારણભૂત માનસિક વાચિક અને કાયિક વ્યાપારોથી જે નિવૃત્ત થઈ ચુકેલાં તે ‘ઉપરતદણ્ડ’ કહેવાય છે, જેમ મુનિઓ. એનાથી ઉલટાં “અનુપરતદણ્ડ” છે, જેમ ગૃહસ્થો. જે ગ્રહણ કરવામાં આવે તેને ‘ઉપધિ’ કહે છે. આ બે પ્રકારની છે. એક દ્રવ્ય-ઉપધિ અને બીજી ભાવ-ઉપધિ દ્રવ્ય-ઉપધિ હિરણ્યસુવર્ણાદિ અને ભાવ-ઉપધિ રાગદ્વેષાદિ છે. આ ઉપધિસહિત જે હોય છે તે ‘સોપધિક’ જેમ

યદ્વા—દ્રવ્યતઃ યે ઉત્થિતાઃ, અનુત્થિતાઃ, તેષુ તેષુ વા । યથા—ઉત્થિતેષ્વે-
કાદશસુ ગણધરેષુ શ્રીવર્ધમાનસ્વામિના ભગવતા ધર્મ ઉપદિષ્ટઃ । અનુત્થિતેષુ યથા
ચણ્ડકૌશિકાદિષુ । તથા—ઉપસ્થિતેષુ વા =ધર્મે શ્રોતું ગ્રહીતું વા યે વાઙ્મનિ
તે ઉપસ્થિતાસ્તેષુ વા, યથા ચિલાતિપુત્રાદિષુ । અનુપસ્થિતેષુ વા=તદ્વિપરીતા
અનુપસ્થિતાઃ તેષુ વા, યથા—ઇન્દ્રનાગાદિષુ, અનિચ્છયાઽપિ શ્રવણેન કર્મપરિણામ-
વૈચિત્ર્યાત્ તેષાં ક્ષયોપશમસંભવાત્, યથા રોહકચોરસ્ય ક્ષયોપશમઃ સંજાતઃ ।
ઉપસ્થિતાનુપસ્થિતેષ્વપિ સમાનસ્તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

उनके उपदेशका प्रवाह उभयसाधारण (दोनोंके लिये समान) था । अथवा
जो जीव धर्माचरण से उस समय बाह्य भी थे, किंतु भगवानके दिव्य उप-
देशका पान कर जो सुमार्ग में आनेकी योग्यता रखते थे; उन्हें भी प्रभुने
धर्मका उपदेश दिया । जैसे—ग्यारह (११) गणधर जो द्रव्यतः उत्थित थे
उन्हें श्रीवर्धमानप्रभुने सद्धर्मका स्वरूप समझा कर सन्मार्गगामी किया ।
अनुत्थितों में भी इसी प्रकार से प्रभुके उपदेशका प्रवाह बहा है,
जैसे चण्डकौशिकादिकों में । धर्मको सुननेकी अभिलाषा रखनेवाला
चिलातिपुत्रादिकोंको, और अनुपस्थित—इससे बहिर्भूत इन्द्रनागा-
दिकों को भी प्रभुने अपने धर्मके उपदेशका पान कराया है । धर्मके
जाननेकी अभिलाषा से रहित प्राणी को भी जो धर्म सुनाया जाता
है उसका कारण यही है कि जिस प्रकार अनिच्छा से पिया हुआ
भी अमृत अपने गुणको प्रकट करता है उसी प्रकार श्रुतधर्म भी कर्म के
परिणामनकी विचित्रता से क्षयोपशम का कारण होता हुआ अपना प्रभाव

દેશપ્રવાહ બન્નેને માટે સાધારણ—બરાબર છે. અથવા જે જીવો ધર્માચરણથી
તે વખત બહાર પણ હતા, કિન્તુ ભગવાનના દિવ્ય ઉપદેશનું પાન કરીને જે
સુમાર્ગમાં આવવાની યોગ્યતા રાખતા હતા, તેને પણ ભગવાને ઉપદેશ આપ્યો
જેમ ગ્યારહ (૧૧) ગણધરે જે દ્રવ્યથી ઉત્થિત હતા તેઓને શ્રીવર્ધમાન પ્રભુએ
સદ્ધર્મનું સ્વરૂપ સમજાવીને સન્માર્ગ તરફ વાળ્યા. અનુત્થિતોમાં પણ આ પ્રકારે
પ્રભુને ઉપદેશપ્રવાહ આપ્યો છે, જેમ ચંડકૌશિકાદિકોમાં. ઉપસ્થિત—ધર્મને
સાંભળવાની અભિલાષા રાખવાવાળા ચિલાતિપુત્રાદિકોને, અને અનુપસ્થિત—
એનાથી બહિર્ભૂત ઇન્દ્રનાગાદિકોને પણ પ્રભુએ પોતાના ધર્મના ઉપદેશનું પાન
કરાવ્યું છે ધર્મ સાંભળવાની અભિલાષાથી રહિત પ્રાણીને પણ જે ધર્મ સાંભળા-
વવામાં આવે છે તેનું કારણ એ જ છે કે જે પ્રકારે અનિચ્છાથી પિવાયેલું પણ
અમૃત પોતાના ગુણને પ્રગટ કરે છે, તે જ પ્રકારે શ્રુતધર્મ પણ કર્મના
પરિણામનની વિચિત્રતાથી ક્ષયોપશમનું કારણ થતાં પોતાનો પ્રભાવ પ્રગટ કરે છે.

इदं=तद्वाक्यार्थरूपं वस्तु, तथा च=तथैव-तीर्थकरभगवद्भिर्नित्या प्ररूपितं तथैव वस्तुसद्भावोऽपीत्यर्थः । एकेन्द्रियादिष्वेन्द्रियान्ताः स्थावरत्रसरूपाः सर्वे प्राणिनो न हन्तव्याः, एष धर्मः शुद्धो नित्यः शाश्वत इत्यादि यथा प्ररूपितं तद्वाक्यार्थोऽपि तथैव विद्यते, तस्मात् सत्यमेवेदं वचनमिति भावः । अनेन श्रद्धानलक्षणं सम्यक्त्वं प्ररूपितम् । अस्मिन्नेदं प्रोच्यते इति-इदं=श्रद्धानलक्षणं सम्यक्त्वम्, अस्मिन्=आर्हतप्रवचनविषय एव प्रोच्यते=विधेयतया प्रकर्षेणोपदिश्यते । केवलमार्हत-प्रवचनविषये पुनः पुनरतिशयेन वा श्रद्धानलक्षणं सम्यक्त्वमास्थेयमित्युपदिश्यते तीर्थकरैरित्यर्थः ॥ सू० ३ ॥

દાર્થોંકા જિસ સ્વરૂપ કા ભગવાનને અપની દિવ્યવાણીદ્વારા પ્રતિપાદન કિયા હૈં ઉન પદાર્થોંકા સ્વરૂપ ઔર ઉનકા અસ્તિત્વ ડસી પ્રકાર સે હૈં; અન્યથા નહીં । ઇસ પ્રકારકા તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વ સિર્ફ અર્હન્ત પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિપાદિત વચનોંમેં હી વિશ્વાસ રાખને સે જીવોંકો પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।

ઇસ સૂત્રમેં ત્રીન વાર “ચ” શબ્દકા પ્રયોગ કિયા હૈં વહ નિયમ કા દ્યોતક હૈં । ઇસસે યહ સમજનાં ચાહિયે કિ ભગવાનને જો ત્રસ સ્થાવર જીવોંકો નહીં મારનેરૂપ શુદ્ધ, નિત્ય, શાશ્વત ધર્મ કે ઉપદેશરૂપ વચન કહે હૈં વે સત્ય હૈં । કારણ કિ જિન પદાર્થોંકા પ્રતિપાદન પ્રભુને અપની વાણી દ્વારા કિયા હૈં ઉન પદાર્થોંકા સ્વરૂપ ઠીક વૈસા હી હૈં, અર્થાત્—ભગવાન્ કે વચન ઇસલિયે પ્રમાણ હૈં કિ ઉન વચનોંકે પ્રતિપાદ્ય અર્થમેં કિસી ભી પ્રકાર સે વિસંવાદાદિક નહીં દેખા જાતા । અર્થ

સ્વરૂપમાં ભગવાને પોતાની દિવ્ય વાણીદ્વારા પ્રતિપાદન કર્યું છે તે પદાર્થોનું સ્વરૂપ અને તેનું અસ્તિત્વ તે પ્રકારનું જ છે; અન્યથા નહિ આ પ્રકારનું તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વ ફક્ત અર્હન્તપ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત વચનોમાં જ વિશ્વાસ રાખવાથી જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે.

આ સૂત્રમાં જે ત્રણ વાર “ચ” શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તે નિયમનો દ્યોતક છે. તેથી એ સમજવાનું છે કે ભગવાને જે ત્રસ સ્થાવર જીવને નહિ મારવારૂપ શુદ્ધ, નિત્ય, શાશ્વત ધર્મના ઉપદેશરૂપ વચન કહ્યું છે તે સત્ય જ છે, કારણ કે જે પદાર્થોનું પ્રતિપાદન પ્રભુએ પોતાની વાણીદ્વારા કર્યું છે તે પદાર્થોનું સ્વરૂપ તેવું જ છે. અર્થાત્ ભગવાનનું વચન એટલા માટે પ્રમાણ છે કે તે વચનોના પ્રતિપાદ્ય અર્થના કોઈ પણ પ્રકારથી વિસંવાદાદિક નથી દેખાતું.

તથા-સંયોગરતેષુ વા-સંયોગઃ પુત્રકલત્રાદિસમ્બન્ધસ્તસ્મિન્ રતા=આસક્તાઃ
સંયોગરતાઃ=ગૃહસ્થા દેશવિરતિશ્રાવકાસ્તેષુ વા । અસંયોગરતેષુ-અસંયોગઃ=સંયમ-
સ્તત્ર રતા અસંયોગરતાઃ=ઉપશમશ્રેણ્યાદિસમ્પન્નાસ્તેષુ વા । એતદુભયવિધેષ્વપિ
સમાન એવ તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

અયં ભાવઃ—તીર્થકરાણામુપદેશઃ સૂર્યોદય ઇવ પ્રબોધ્યવિશેષમનપેક્ષ્ય પ્રવ-
ર્તે, તસ્માત્ તત્ર નાસ્તિ રાગદ્વેષપક્ષપાતાદિદોષલેશાવસર ઇતિ ॥ સૂ. ૨ ॥
સમ્યક્ત્વસ્ય સ્વરૂપમાહ—‘તત્ત્વં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તત્ત્વં ચેયં તદ્વા ચેયં અસ્મિંસ ચેયં પવુચ્ચઙ્ ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા—તથ્યં ચેદં તથા ચેદં અસ્મિંશ્ચેદં પ્રોચ્યતે ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકા—ઇદં=ભગવદ્વચનં તથ્યં ચ=સત્યમેવ । અત્ર મૂત્રે ચકારો નિયમાર્થઃ ।

વે ‘નિરુપધિક’ હૈં, જૈસે કઠિયારાદિક । પુત્રકલત્રાદિક કે મોહમેં જો
ફંસે હુએ હૈં એસે ગૃહસ્થ ‘સંયોગરત’ જૈસે દેશવિરતિ શ્રાવક, ઓર इनके
त्यागी संयमी साधु ‘असंयોगरत’ कहलाते हैं जैसे उपशमश्रेण्यादिसंपन्न ।
इसका फलितार्थ यही है कि जिस प्रकार सूर्यका उदय ऊंचनीच के पक्षपात
से रहित हो कर समस्त जगतको प्रकाश देता है ठीक उसी तरह प्रभुका
दिव्य धार्मिक उपदेश भी उत्थित और अनुत्थितादिकों के पक्षपात बिना
समस्त जीवोंके हितके लिये एक ही जैसा होता है, कारण कि पक्षपाता-
दिदोषों का कारण रागद्वेष ही है, और प्रभु वीतरागी हैं, इसलिये वे
पक्षपातादि दोषों से रहित हैं ॥ सू. २ ॥

સમ્યક્ત્વ કે સ્વરૂપ કો પ્રકટ કરતે હુએ શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં—
‘તત્ત્વં ચેયં’ ઇત્યાદિ ।

ભગવાન્ તીર્થકર પ્રભુકે વે વચન સત્ય હી હૈં, કારણ કિ જિન પ-

ભરતાદિક અને આ ઉપધિરહિત જે છે તે ‘નિરુપધિક’ છે, જેમ કઠિયારાદિક.
પુત્રકલત્રાદિના મોહમાં જે ફસેલા છે એવા ગૃહસ્થી ‘સંયોગરત’ જેમ દેશવિરતિ
શ્રાવક, અને તેના ત્યાગી સંયમી સાધુ ‘અસંયોગરત’ કહેવાય છે, જેમ ઉપશમ-
શ્રેણ્યાદિસંપન્ન. એનો ભાવ એ છે કે જેમ સૂર્યનો ઉદય ઉંચનીચના પક્ષપાતથી
રહિત થઈને સમસ્ત જગતને પ્રકાશ આપે છે તે જ માફક પ્રભુનો દિવ્ય ધાર્મિક
ઉપદેશ પણ ઉત્થિત અને અનુત્થિતાદિકોના પક્ષપાતથી રહિત થઈને સમસ્ત
જીવના હિતને માટે એક જ સરખો હોય છે, કેમ કે પક્ષપાતાદિ દોષોનું
કારણ રાગ-દ્વેષ જ છે અને પ્રભુ વીતરાગી છે; તેથી તે પક્ષપાતાદિદોષથી
રહિત છે ॥ સૂ. ૨ ॥

સમ્યક્ત્વના સ્વરૂપને પ્રકટ કરીને શ્રીસુધર્માસ્વામી કહે છે—‘તત્ત્વં ચેયં’ ઇત્યાદિ.
ભગવાન તીર્થકર પ્રભુના તે વચનો સત્ય જ છે, કારણ કે જે પદાર્થોનું જે

ભાવઃ । ન નિશ્ચિપેદિતિ તત્ સમ્યક્ત્વં ન ત્યજેત્ । યદિ સંસર્ગાદિના મિથ્યાદૃષ્ટ્યો મિથ્યાત્વં સ્થાપયેયુઃ, તદા સ્વાત્મનઃ સામર્થ્યગુણં પ્રકાશયેદિત્યર્થઃ । યદ્વા-ન નિશ્ચિપેદિતિ—નિશ્ચેપણં=છર્દનં વમનમિત્યર્થઃ, યથા કશ્ચિદ્ આચાર્ય સમીપે વ્રતાનિ ગૃહીત્વા પશ્ચાત્ કાલાન્તરે તત્પરતો નિશ્ચિપ્યોત્પ્રવ્રજતિ, પુનરાગત્ય ગૃહ્ણતિ, તથા ન સમ્યક્ત્વં કદાપિ પરિત્યજેત્, કિંતુ યાવજ્જીવમનુપાલયેદિત્યર્થઃ । યદ્વા-ધર્મ= યથાસ્વસ્થિતં ધર્મં શ્રુતચારિત્રરૂપં, તથા તેનૈવ પ્રકારેણ જ્ઞાત્વા તં શ્રુતધર્મં ચારિત્ર-ધર્મં ચ ન નિશ્ચિપેત્=ન ત્યજેત્ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

અનુકમ્પા આદિ જો સમકિત કે કાર્ય હૈં વે પ્રાપ્ત હો જાતે હૈં, ઉનસે હી સમકિતકા અસ્તિત્વ જાના જાતા હૈ, અતઃ ઇન કાર્યોં કો કરને સે સમ-કિત કા પ્રકાશ હોતા હૈ, નહીં કરને પર ઉસકા આચ્છાદન હોતા હૈ । યદિ કદાચિત્ મિથ્યાદૃષ્ટિયોં કી સંગતિ ભી હો જાવે ઓર વે મિથ્યાત્વ કી ઓર લે જાને કા પ્રયત્ન ભી કરે તો ભી ઉસ સમય અપની શક્તિ કા પ્રકાશન કર સમકિત કા પરિત્યાગ નહીં કરના ચાહિયે । અથવા જૈસે કોઈ જીવ આચાર્ય કે સમીપ વ્રતોં કો ધારણ કર પશ્ચાત્ કાલાન્તર મેં ઉનકે નિકટ ઉનકા વમન-ત્યાગ કર ચલા જાતા હૈ, ઓર ફિર આકર ઉન્હેં ધારણ કર લેતા હૈ, ઉસ પ્રકાર ઇસ સમ્યક્ત્વકા વમન નહીં કરના ચાહિયે, કિંતુ પ્રાપ્ત હોને પર ઇસકો પ્રયત્નપૂર્વક યાવજ્જીવન પાલતે રહના ચાહિયે । અથવા-સમકિત કે કાર્યરૂપ શ્રુતચારિત્રધર્મ કી જિસ પ્રકાર સે અવસ્થિતિ હૈ ઉસી રૂપસે ઉન્હેં જાન કર ફિર નહીં છોડના ચાહિયે ॥૪॥

અને અનુકમ્પા આદિ જે સમકિતના કાર્ય છે તે પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. તેનાથી જ સમકિતનું અસ્તિત્વ જાણવામા આવે છે માટે તે કાર્યોને કરવાથી સમકિતનો પ્રકાશ થાય છે, અને નહિ કરવાથી તે ઢંકાઈ જાય છે, અને કદાચ મિથ્યાદૃષ્ટિ-ઓની સંગત પણ થઈ જાય અને તેને મિથ્યાત્વની તરફ લઈ જવાનો પ્રયાસ પણ કરે તો પણ તે વખત પોતાની શક્તિનો પ્રકાશ કરી સમકિતનો ત્યાગ નહિ કરવો જોઈએ અથવા જેમ કોઈ જીવ આચાર્યની સમીપ વ્રતોને ધારણ કરીને પછી કાલાન્તરમા તેની નજીક તેનો વમન-ત્યાગ કરી આલેયો જાય છે અને ફરી આવીને જેમ તેને ધારણ કરી લે છે તે પ્રકારે આ સમ્યક્ત્વનો વમન-ત્યાગ કરવો નહિ જોઈએ, પણ પ્રાપ્ત થયા પછી તેને પ્રયત્નપૂર્વક જાવજીવન-પર્યન્ત પાળતા રહેવું જોઈએ અથવા સમકિતના અર્થરૂપ શ્રુતચારિત્ર ધર્મની જે પ્રકારે અવસ્થિતિ છે તે રૂપમા તેને જાણીને છોડવું ન જોઈએ ॥સૂ૦ ૪॥

उक्तरीत्या सम्यक्त्वरूपं प्रदर्श्य, तत्प्राप्त्यनन्तरं तत्र स्थिरीकरणाय सम्यग्दृष्टेः कर्तव्यं प्रतिबोधयति—‘ तं आइत्तु ’ इत्यादि ।

मूलम्—तं आइत्तु न निहे न निक्खिक्खे जाणित्तु, धम्मं जहा—तहा ॥ सू० ४ ॥

छाया—तत् आदाय न निह्वीत, न निक्षिपेत्, ज्ञात्वा धर्मं यथा—तथा ॥४॥

टीका—तत्=सम्यग्दर्शनापरनामकं सम्यक्त्वम्, आदाय=गृहीत्वा प्राप्येति यावत्, धर्म=श्रुतचारित्र्यरूपं, यथा—तथा=येन केनापि प्रकारेण गुरूपदेशादिना ज्ञात्वा, यद्वा—धर्मं वस्तुस्वभावं ज्ञात्वा न निह्वीत, सम्यक्त्वं तत्कार्याऽकरणेन नाऽऽच्छादयेदित्यर्थः । प्रशमसंवेगनिर्वेदानुकम्पादिभिः सम्यक्त्वं प्रकाशयेदिति

की प्रमाणतासे ही वचनमें प्रमाणता आती है । जब प्रतिपाद्य अर्थरूप धार्मिक उपदेश विसंवाद आदि से रहित है तो फिर क्यों नहीं उसके प्रतिपादक वचनों में सत्यता आवेगी ? अवश्य ही आवेगी । इस प्रकारकी दृढ़ आस्था ही तत्त्वार्थश्रद्धानरूप सम्यक्त्व है ॥ सू० ३ ॥

पूर्वोक्त रीतिसे सम्यक्त्वका स्वरूप प्रकट कर उसकी प्राप्ति के बाद उसमें सुस्थिर करनेके लिये सम्यग्दृष्टि जीव का कर्तव्य प्रकट करते हुए श्री सुधर्मास्वामी कहते हैं—‘ तं आइत्तु न निहे ’ इत्यादि ।

जीव उस समकित को प्राप्त कर गुरूपदेशादिकरूप जिस किसी भी प्रकारसे श्रुतचारित्र्यरूप धर्म को अथवा वस्तुस्वभावको जान कर उस समकित को आच्छादित नहीं करे और न उसको छोड़े । समकित को प्राप्त कर लेने पर समकित जीव को प्रशम, संवेग, निर्वेद और

अर्थानी प्रमाणतायी न वचनमां प्रमाणता आवे छे. न्यारे प्रतिपाद्य—अर्थरूप धार्मिक उपदेश विसंवाद आदिथी रहित छे तो पछी तेना प्रतिपादक वचनोमां केम सत्यता न आवे ? अवश्य न आवे. आ प्रकारनी दृढ आस्था न तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप सम्यक्त्व छे ॥ सू० ३ ॥

पूर्वोक्त रीतिथी सम्यक्त्वनुं स्वल्प प्रगट करीने तेनी प्राप्ति पछी तेमां सुस्थिर करवाने भाटे सम्यग्दृष्टि ज्वनुं कर्तव्य प्रगट करतां श्रीसुधर्मास्वामी कहे छे—‘ तं आइत्तु न निहे ’ इत्यादि.

ज्व ते समकितने प्राप्त करी गुर्-उपदेश आदि केछ पण प्रकारे श्रुत चारित्र्य धर्मने अथवा वस्तुस्वभावने जाणीने ते समकितने ढांके नाछे, अने तेने छोडे पण नछे. समकित भेजव्या पछी समकिती ज्वने शम, संवेग निर्वेद

કિંચ—“ નો લોગસ્સે. ” ત્યાદિ ।

મૂલમ્—નો લોગસ્સેસણં ચરે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—નો લોકસ્યૈષણં ચરેત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—લોકસ્ય પ્રાણિવર્ગસ્ય, ઇષણામ્—ઇષણા=અનુકૂલેષુ શબ્દાદિવિષયેષૂપા-

નહીં હૈ । ઇસી પ્રકાર સ્વર્ગાદિક સુખોંકી વાઙ્છા કરના મી સમકિતીકે લિયે યોગ્ય નહીં । અનુકૂલ શબ્દોં કે સુનને સે હર્ષિત હોના, એવં પ્રતિકૂલ શબ્દોં કે સુનને સે દુઃખિત હોના, સ્વાદિષ્ટ રસાદિકોં કે મિલનેસે આનન્દ માનના, ઓર પ્રતિકૂલ રસાદિકોંકી પ્રાપ્તિમેં આકુલિત હો જાના, સુગન્ધિત પદાર્થોં કે સૂંઘને મેં પ્રેમ પ્રદર્શિત કરના, ઓર દુર્ગન્ધિત વસ્તુઓં પર અરુચિ રખના, કોમલાદિ સ્પર્શોં મેં પ્રમુદિતમન હોના, એવં કઠિનાદિ સ્પર્શોં કે હોને પર મ્લાનવદન હોના; યહ સમકિતી કે લિયે સર્વથા અયોગ્ય હી હૈ । સમકિતી તો સમદષ્ટિ હોતા હૈ । ઇસ તરહ કી રાગદ્વેષ-મયી વિષમદષ્ટિ ડસમેં નહીં હોની ચાહિયે । પ્રતિકૂલ ઓર અનુકૂલ શબ્દાદિકોં કી પ્રાપ્તિ મેં ડસે યહી ભાવના કરની ચાહિયે કિ યે સવ પુદ્ગલ કી પર્યાયેં સદા વદલતી રહતી હૈં—પર્યાયેં સ્થિરરૂપ નહીં હૈં, અતઃ ઇન અસ્થિર પર્યાયોં મેં રાગ કરનેસે ઓર દ્વેષ રખને સે મુઝે કોનસા લાભ હો સકતા હૈ ? ॥ સૂ૦ ૫ ॥

તથા—‘ નો લોગસ્સ ’ ઇત્યાદિ ।

સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ લોકૈષણા ન કરે, જિસ પ્રકાર લોક, અનુકૂલ

ઇચ્છા પણ સમકિતીને માટે યોગ્ય નથી અનુકૂળ શબ્દ સાંભળીને હર્ષિત થવું, અને પ્રતિકૂળ શબ્દ સાંભળીને દુઃખી થવું, સ્વાદિષ્ટ રસાદિકે મળવાથી આનંદ માનવો, અને પ્રતિકૂળ રસાદિકથી વ્યાકુળ થવું, સુગન્ધિત પદાર્થોના સૂંઘવામાં પ્રેમ દેખાડવો અને દુર્ગન્ધિત વસ્તુઓ ઉપર અરુચિ રાખવી, કોમલાદિ સ્પર્શમાં આનંદિત થવું અને કઠણ આદિ સ્પર્શોમાં મોઢું બગાડવું; આ બધું સમકિતીને માટે સર્વથા અયોગ્ય જ છે, સમકિતી તો સમદષ્ટિ હોય છે. આવા પ્રકારની રાગદ્વેષવાળી વિષમદષ્ટિ તેને હોવી જોઈએ નહિ પ્રતિકૂળ અને અનુકૂળ શબ્દ વિગેરેમાં તેણે લાવના રાખવી જોઈએ કે આ બધા પર્યાયો છે પર્યાય સદા બદલાતી જ રહે છે, પર્યાય સ્થિરરૂપ નથી, માટે આ અસ્થિર પર્યાયોમાં રાગ કરવાથી અને દ્વેષ રાખવાથી મને શું લાભ થવાનો છે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

તથા—‘ નો લોગસ્સ ’ ઇત્યાદિ

સમ્યગ્દષ્ટિ હવે લોકૈષણા કરે નહિ, અર્થાત્—જે પ્રકારે લોક, અનુકૂળ શબ્દો

અપરં ચ સમ્યગ્દષ્ટિકતવ્યમાહ—‘દિદ્દેહિં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—દિદ્દેહિં નિર્વેયં ગચ્છિજ્જા ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—દૃષ્ટેષુ નિર્વેદં ગચ્છેત્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—દૃષ્ટેષુ=દૃષ્ટિપથસમાગતેષુ એહિકેષ્ટાનિષ્ટશબ્દાદિવિષયેષુ, અસ્યો-પલક્ષણાર્થત્વાત્ સ્વર્ગાદિસમ્બન્ધિષ્વપિ, નિર્વેદં=વૈરાગ્યં, ગચ્છેત્=કુર્યાદિત્યર્થઃ । યદા યદા—શબ્દાઃ શ્રવણગોચરાઃ, રસા આસ્વાદિતાઃ, ગન્ધા આગ્રાતાઃ, સ્પર્શા વા સ્પૃષ્ટા ભવન્તિ, તદા તદા ભાવયેત્—શબ્દાદયઃ સ્વલુ પુદ્ગલાસ્ત એવ કદાચિત્ પ્રિય-શબ્દાદિરુપેણ કદાચિદપ્રિયશબ્દાદિરુપેણ પરિણમન્તે, અતઃ તેષુ પુદ્ગલપરિણા-ણામરુપેષુ કો રાગઃ કશ્ચ વા દ્વેષ ઇતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

और भी सम्यग्दृष्टिका कर्तव्य कहते हैं—‘दिद्वेहिं’ इत्यादि ।

દૃષ્ટ પદાર્થોં મેં નિર્વેદ-ઇષ્ટાનિષ્ટ શબ્દાદિ વિષયોંમેં વિરક્તભાવ હો, સંસાર કે જિતને મનોજ્ઞ ઔર અમનોજ્ઞ પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયભૂત શ-બ્દાદિ પદાર્થ હેં ઉનમેં સમ્યગ્દષ્ટિ જીવકો વિરક્ત ભાવ રાખના ચાહિયે, કારણ કિ યે શબ્દાદિ સબ પૌદ્ગલિક હેં । જો કમી મનોજ્ઞ પ્રતીત હોતે હેં વે હી કાલાન્તર મેં અમનોજ્ઞ રૂપસે મી પરિણમિત હોતે હુએ દેસે જાતે હેં । અથવા જો એક કી અપેક્ષા મનોજ્ઞ હેં વે હી દૂસરે કી અપેક્ષા અમનોજ્ઞ હો જાતે હેં । નિમ્બ હમારી અપેક્ષા અમનોજ્ઞ હૈ પરન્તુ જુંટકી અપેક્ષા મનોજ્ઞ હૈ । ફલિતાર્થ યહી હૈ કિ સંસાર કા કોઈ મી પદાર્થ સર્વથા ન મનોજ્ઞ હૈ ન અમોજ્ઞ હૈ, મનકી કલ્પનાશક્તિ હી ઉસકો મનોજ્ઞ ઔર અમનોજ્ઞ રૂપસે માન કરાતી હૈ, અતઃ ઉનમેં રાગ દ્વેષ કરના સમકિતી જીવકા કર્તવ્ય

બીજું પણ સમ્યગ્દષ્ટિનું કર્તવ્ય કહે છે—“દિદ્દેહિં” . ઇત્યાદિ.

દેખીત પદાર્થોંમાં નિર્વેદ-ઇષ્ટ અને અનિષ્ટ શબ્દાદિ નિષયોંમાં વિરક્તભાવ હોય, સંસારના જેટલા પણ મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ પંચેન્દ્રિયોના વિષયભૂત શબ્દ આદિ પદાર્થ છે તેમાં સમ્યગ્દષ્ટિ જીવને વિરક્તભાવ રાખવો જોઈએ, કારણ કે એ બધા પૌદ્ગલિક છે. જે કોઈ વખત મનોજ્ઞ પ્રતીત થાય છે તે જ કાલાન્તરમાં અમ-નોજ્ઞરૂપથી પણ પરિણમિત થતાં દેખવામાં આવે છે. અથવા જે એકની અપેક્ષા મનોજ્ઞ છે, તે બીજાની અપેક્ષા અમનોજ્ઞ થઈ જાય છે. લીંબડો આપણી અપેક્ષાએ મનોજ્ઞ છે, પરંતુ જાંટની અપેક્ષાએ મનોજ્ઞ છે. ફલિતાર્થ એ છે કે સંસારનો કોઈ પણ પદાર્થ સર્વથા મનોજ્ઞ પણ નથી તેમજ અમનોજ્ઞ પણ નથી. મનની કલ્પના-શક્તિ જ તેને મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ પ્રતિજ્ઞિત કરાવે છે, માટે તેમાં રાગદ્વેષ કરવો તે સમકિતી જીવનું કર્તવ્ય નથી. એ જ પ્રકારે સ્વર્ગાદિક સુખોની

યદ્વા-ઇયમ્=ઉપક્રાન્તા, જ્ઞાતિઃ=સમ્યક્ત્વરૂપા પરિણતિઃ, યસ્ય નાસ્તિ, તસ્યા-
ન્યા=વિવેકિની પરિણતિઃ સાવધાનુષ્ઠાનપરિહારકારિણી કુતઃ સ્યાદિત્યર્થઃ ॥સૂ૦૭॥

સમ્યક્ત્વે શિષ્યમતિસ્થિરીકરણાર્થં પુનરાહ-‘દિટ્ઠં સુયં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-દિટ્ઠં સુયં મયં વિણ્ણાયં જં ઇયં પરિકહિજ્જહ ॥સૂ૦૮॥

છાયા—દૃષ્ટં શ્રુતં મતં વિજ્ઞાતં યદેતત્ પરિકથ્યતે ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—યદેતત્ સમ્યક્ત્વં મયા પરિકથ્યતે, તત્ દૃષ્ટં=તીર્થકરૈઃ કેવલાર્થ-
કેનાવલોકિતમ્, તતઃ શ્રુતં=ગણધરાદિભિઃ શ્રવણવિષયીકૃતં, મતં=લઘુકર્મણાં
મનોવૃત્તિ કો દૂષિત કરનેવાલી હોને સે હી સમકિતી કે લિયે હેય
વતલાઈ ગઈ હૈ ।

અથવા—‘સમ્યક્ત્વ કી અપ્રાપ્તિ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન નહીં હોતા હૈ ’
ઇસ વાત કો ભી ઈસી સૂત્ર મેં કહતે હૈ—‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

જિસ જીવકે પાસ સમ્યક્ત્વપરિણતિ નહીં હૈ ઉસકો સાવધ વ્યા-
પારોસે હટાનેવાલી વિવેકપરિણતિ ભી કૈસે હો સકતી હૈ ? અર્થાત્ નહીં
હો સકતી હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

સમ્યક્ત્વમેં શિષ્યકી બુદ્ધિકો દૃઢ કરને કે લિયે સુધર્માસ્વામી ફિરસે
કહતે હૈ—‘દિટ્ઠં સુયં’ ઇત્યાદિ ।

જિસ સમકિતકા મૈને વર્ણન કિયા હૈ વહ દૃષ્ટ, શ્રુત, અનુમત ઓર
વિજ્ઞાત હૈ । યહાં પર સુધર્માસ્વામી સમકિતકે વિષયમેં ખુલાસા કરતે
હુએ કહતે હૈ કિ-હે જમ્મૂ ! જિસ સમકિતકા યહાં વર્ણન કિયા ગયા હૈ
વહ મૈને અપની બુદ્ધિ સે નહીં કહા હૈ; કિંતુ ‘દૃષ્ટ’-તીર્થકરોં ને ઉસકા

મનોવૃત્તિને દૂષિત કરવાવાળી હોવાથી જ સમકિતીને માટે હેય છે, એમ કહ્યું છે.

અથવા સમ્યક્ત્વની અપ્રાપ્તિમાં સમ્યગ્જ્ઞાન થતું નથી. આ વાતને પણ આ
સૂત્રમાં કહે છે-‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ.

જે જીવની પાસે સમ્યક્ત્વપરિણતિ નથી તેને સાવધ વ્યાપારોથી દૂર
કરવાવાળી વિવેકપરિણતિ પણ કેવી રીતે થઈ શકે ? અર્થાત્ થઈ શકતી નથી ॥સૂ૦૭॥

સમ્યક્ત્વમાં શિષ્યની બુદ્ધિને દૃઢ કરવાને માટે સુધર્માસ્વામી ફરીથી કહે
છે—‘દિટ્ઠં સુયં’ ઇત્યાદિ.

જે સમકિતનું મેં વર્ણન કર્યું છે તે દૃષ્ટ, શ્રુત, અનુમત અને વિજ્ઞાત છે
આ કેટલા સુધર્માસ્વામી સમકિતવિષયમાં ખુલાસો કરીને કહે છે કે-હે જમ્મૂ !
જે સમકિતનું આ કેટલા વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે મેં પોતાની બુદ્ધિથી
નથી કર્યું; પણ ‘દૃષ્ટ’ તીર્થકરોએ તેના પોતાના કેવળજ્ઞાનરૂપી પ્રકાશથી સાક્ષા-

દેયબુદ્ધિઃ, પ્રતિકૂલેષુ હેયબુદ્ધિસ્તાં ન ચરેત્=ન કુર્યાત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

લોકૈષણાચરણસ્ય ફલમાહ—“જસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ । યદ્વા-સમ્યક્ત્વા-લાભે સમ્યગ્જ્ઞાનં ન ભવતીત્યાહ—‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જસ્સ નત્થિ ઇમા જાઈ અણ્ણા તસ્સ કઓ સિયા ॥ ૭ ॥

છાયા—યસ્ય નાસ્તિ ઇયં જાતિઃ અન્યા તસ્ય કુતઃ સ્યાત્ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—યસ્ય સાધોઃ ઇયં જાતિઃ=લોકૈષણાબુદ્ધિઃ નાસ્તિ, તસ્ય અન્યા=અન્ય-વિધા સાવધવ્યાપારપ્રવૃત્તિઃ કુતઃ સ્યાત્ । ભોગેચ્છા હિ લોકૈષણા, તત્પરિત્યાગેન સાવધક્રિયાસુ પ્રવૃત્તિર્નોપજાયતે, ઇતિ ભાવઃ ।

શબ્દાદિકોં મેં ઉપાદેય-બુદ્ધિ એવં પ્રતિકૂલ વિષકણ્ડકાદિકોં મેં હેય-બુદ્ધિ રખતે હૈં’ ઉસ પ્રકાર સમકિતી જીવકો અનુકૂલ પદાર્થોં મેં ઉપાદેય-બુદ્ધિ ઔર પ્રતિકૂલ પદાર્થોં મેં હેયબુદ્ધિ નહીં રખની ચાહિયે, અપિ તુ મધ્યસ્થ-ભાવ રખના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

લોકૈષણા કા ફલ કહતે હૈં—‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

હસ પ્રકાર લોકૈષણા કી બુદ્ધિ રખનેવાલે જીવકે સાવધ વ્યાપારોં સે નિવૃત્તિ નહીં હો સકતી હૈ । ભોગેચ્છારૂપ હી લોકૈષણા હૈ । જિસ સાધુ કો હસ પ્રકારકી લોકૈષણા નહીં હૈ’ ઉસકી પ્રવૃત્તિ શબ્દાદિ વિષયોં મેં નહીં હોતી હૈ । અનુકૂલ પ્રતિકૂલ પદાર્થોં મેં હેયોપાદેયબુદ્ધિ રખનેવાલા વ્યક્તિ નિયમતઃ હસ પ્રકાર કે કાર્યોં મેં પ્રવૃત્તિ કર અપની મનોવૃત્તિકો દૂષિત કિયા કરતા હૈ, જવકિ સમકિતી નિરન્તર અપની પ્રવૃત્તિ કો નિર્મલ બનાને કી હી કોશિશ મેં રહતા હૈ, અતઃ હસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિ

આદિમાં ઉપાદેય બુદ્ધિ અને પ્રતિકૂળ વિષકાંટા વિગેરેમાં હેયબુદ્ધિ રાખે છે તે પ્રમાણે આ સમકિતી જીવને અનુકૂળ પદાર્થોમાં ઉપાદેયબુદ્ધિ અને પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં હેયબુદ્ધિ રાખવી જોઈ એ નહિ, બલકે મધ્યસ્થ ભાવ રાખવો જોઈ એ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

લોકૈષણાનું ઇળ કહે છે—‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ.

આ પ્રકારની લોકૈષણાની બુદ્ધિ રાખવાવાળા જીવને વ્યાપારોમાંથી નિવૃત્તિ થતી નથી. ભોગેચ્છારૂપ જ લોકૈષણા છે. જે સાધુને આ પ્રકારની લોકૈષણા નથી થતી તેની પ્રવૃત્તિ શબ્દ આદિ વિષયોમાં થતી નથી. અનુકૂળ પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં હેય-ઉપાદેય-બુદ્ધિ રાખવાવાળા જીવ નિયમથી આ પ્રકારના કાર્યોમાં પ્રવૃત્તિ કરીને પોતાની મનોવૃત્તિને દૂષિત કર્યા કરે છે, જ્યારે સમકિતી હમેશા પોતાની પ્રવૃત્તિને નિર્મળ બનાવવાની મહેનત કર્યા કરે છે, માટે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ

યથેવં તતઃ કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—“ અહો ય રાઓ ય ” ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—અહો અ રાઓ ય જયમાણે ધીરે સયા આગયપણાણે પમત્તે વહિયા પાસ અપ્પમત્તે સયા પરિક્કમિજ્જાસિ—ત્તિવેમિ । સૂ ૧૦ ।

॥ પદમો ઉદ્દેસો સમત્તો ॥ ૪-૧ ॥

છાયા—અથ રાત્રિ ચ યતમાનો ધીરઃ સદા આગતપ્રજ્ઞાનઃ પ્રમત્તાન્ વહિઃ પઞ્ચ, અપ્રમત્તઃ સદા પરાક્રમેયાઃ, ઇતિ વ્રવીમિ ॥ મૂ ૧૦ ॥

॥ પ્રથમ ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥

ટીકા—અથ રાત્રિ ચ=અર્હર્નિશં, યતમાનઃ=મોક્ષપ્રાપ્તયે સમુદ્યુક્તઃ, ધીરઃ=મિથ્યાદૃષ્ટિભિઃ સંસર્ગાદિના સ્થાપિતેઽપિ મિથ્યાત્વે વિશુદ્ધિપરિણામધારામનવરુ-

જો પ્રાણી આ સમકિત કે લાભસે વંચિત રહતા હૈ વહ અનન્ત કાલ તક અનન્ત વાર માતા-પિતાકે સાથ 'યે મેરે માતા-પિતા હૈ, મૈં આનકા પુત્ર હૂં' આ પ્રકારકા સંવંધ કરતા હૈ, ઓર અન્નમેં મૃત્યુકા ગ્રાસ બનકર એકેન્દ્રિયાદિક કુચોનિયોં મેં ભ્રમણ કરતા હૈ ।

અથવા શબ્દાદિવિષયોં મેં આસક્તિ ધારણ કર અનન્તવાર એકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોં મેં ઉત્પન્ન હોતા રહતા હૈ, તથા વહાંકે અનન્ત કષ્ટોંકો સહન કરતા રહતા હૈ । અર્થાત્-અસમ્યક્ત્વી જીવ સંસાર કે દુઃખસે કમીં ખી છુટકારા કહીં પાતા ॥ સૂ ૦ ૧ ॥

અગર આસા હો તો કયા કરના ચાહિયે? સો કહતે હૈ—‘અહો ય રાઓ ય’ ઇત્યાદિ ।

હે જન્મૂ! તુમ અર્હર્નિશ મોક્ષપ્રાપ્તિકે લિયે પ્રયત્નશીલ બનો, ઓર ધીર ધીર બન કર સદા ઉત્તરોત્તર હેયોપાદેયકે વિવેક સે વિશિષ્ટ

જે પ્રાણી આ સમકિતના લાભથી વચિત રહે છે તે અનંતકાળસુધી અનંતી વાર માતા-પિતાની સાથે ‘આ મારા માતા-પિતા છે, હું એમનો પુત્ર છું’ આ પ્રકારના સબંધ કરે છે, અને છેવટના મરીને એકેન્દ્રિયાદિક કુચોનિઓના ભ્રમણ કરે છે અથવા શબ્દ આદિ વિષયોમાં આસક્તિ ધારણ કરી અનંતીવાર એકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોના ઉત્પન્ન થાય છે, તથા ત્યાના અનંત દુઃખોને સહન કરતો રહે છે. અર્થાત્-અસમ્યક્ત્વી જીવ સંસારના દુઃખોથી ક્યારે પણ છુટતો નથી. ॥ સૂ ૦ ૧ ॥

જે આ પ્રમાણે છે તો શું કરવું જોઈએ? તે કહે છે—‘અહો ય રાઓ ય’ ઇત્યાદિ

હે જન્મૂ! તમે અર્હર્નિશ મોક્ષપ્રાપ્તિને માટે પ્રયત્નશીલ બનો, અને ધીર ધીર બનીને ક્રમેશાં ઉત્તરોત્તર હેયોપાદેયના વિવેકથી વિશિષ્ટ બનીને અસમ્યક્

ભવ્યાનાં મતં, વિજ્ઞાતં=જ્ઞાનાવરણીયક્ષયોપશમાત્, અતઃ સમ્યક્ત્વલાભે તદ્રક્ષણે ચ પ્રયતિતવ્યમિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

યે તુ સમ્યક્ત્વમુપેક્ષન્તે તેષામનન્તદુઃસ્વમયી સંસારગતિર્નૈવ વિરમતીત્યાહ-
'સમેમાણા પલેમાણા' इत्यादि ।

મૂલમ્—સમેમાણા પલેમાણા પુણો પુણો જાઈં પકપ્પંતિ ॥સૂ૦ ૯॥

છાયા—સમાયન્તઃ પ્રલીયમાનાઃ પુનઃ પુનર્જાતિં પ્રકલ્પયન્તિ ॥સૂ૦ ૯॥

ટીકા—સમાયન્તઃ—સમાગચ્છન્તઃ=આર્હતાગમવિષયે શ્રદ્ધાનલક્ષણસમ્યક્ત્વા-
કરણેન માતાપિત્રાદિભિઃ સહ સંસારસમ્બન્ધં કુર્વન્તઃ, પ્રલીયમાનાઃ=મૃત્યુવશાદ્
માતાપિત્રાદિભ્યો વિયુજ્યમાનાઃ, યદ્વા-પ્રલીયમાનાઃ=શબ્દાદિવિષયેષુ સમાસર્ત્તિં
કુર્વાણાઃ પુનઃ પુનઃ=અનન્તશઃ જાતિમ્=એકેન્દ્રિયાદિરૂપાં પ્રકલ્પયન્તિ । સમ્યક્ત્વ-
મનવાપ્તાઃ સંસારદુઃસ્વતો ન મુચ્યન્તે इति भावः ॥ સૂ૦ ૯ ॥

અપને કેવલજ્ઞાનરૂપી પ્રકાશ સે સાક્ષાત્કાર ક્રિયા હૈ, 'શ્રુતં'—ગણધરા-
દિકોને ઉનસે સુના હૈ, 'મતં'—હલુકર્મી ભવ્યોને ઉસે માના હૈ, ઓર
'વિજ્ઞાતમ્'—અપને જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમાનુસાર ઉન્હોને હસે
જાના હૈ, અતઃ સમ્યક્ત્વકા લાભ હોને પર ઉસ કી રક્ષા કરને મેં સદા
સાવધાન રહના ચાહિયે ॥સૂ૦ ૮॥

જો વ્યક્તિ હસ સુન્દર સમકિતકે પ્રતિ ઉપેક્ષા ભાવ રખતા હૈ ઉસકે
હસ અનન્ત દુઃસ્વરૂપ સંસારકા અન્ત નહીં આતા, યહી વાત કહતે હૈ—
'સમેમાણા' इत्यादि ।

જો પ્રાણી પ્રભુપ્રતિપાદિત આગમકી શ્રદ્ધારૂપ હસ સમકિતસે શૂન્ય
રહતા હૈ વહ સંયોગ વિયોગ કો પાતા હુઆ જન્મ મરણ કર વારંવાર એકે-
ન્દ્રિયાદિક ભવોં મેં ભટકતા ફિરતા હૈ ।

તકાર કર્યો છે. 'શ્રુતં' ગણધરાદિકોએ તેમનાથી સાંભળ્યું છે. 'મતં' હળુકર્મી
ભવ્યોએ તે માન્યું છે, અને 'વિજ્ઞાતમ્' પોતાના જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપ-
શમ અનુસાર તેઓને તેમણે બાંધ્યાં છે, તેથી સમ્યક્ત્વનો લાભ થઈ ગયા પછી
તેની રક્ષા કરવામાં હમેશાં સાવધાન રહેવું જોઈએ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

જે જીવ આ સુંદર સમકિત પ્રત્યે ઉપેક્ષાભાવ રાખે છે તેનો આ અનંત
દુઃખરૂપ સંસારનો અંત આવતો નથી. આ વાત કહે છે—'સમેમાણા' इत्यादि.

જે પ્રાણી પ્રભુપ્રતિપાદિત આગમની શ્રદ્ધારૂપ આ સમકિતથી શૂન્ય રહે
છે તે સંયોગ-વિયોગને મેળવતો જન્મ મરણ કરીને વારંવાર એકેન્દ્રિયાદિક
ભવોમાં ભટકતો ફરે છે.

विशुद्धिपरिणामप्रकर्षे सोत्साहं प्रयतमानो भव । यद्वा-पराक्रमेथाः=अष्टविधकर्मश-
त्रून् विजेतुं विशुद्धिपरिणामप्रकर्षेण वीर्यगुणसामर्थ्यमुद्भावयेत्यर्थः । इति=अधि-
कारपरिसमाप्तौ, ब्रवीमि=भगवन्मुखाद्यथा श्रुतं तथा कथयामीत्यर्थः ॥ सू० १० ॥

॥ इति चतुर्थाध्ययने प्रथम उद्देशः सम्पूर्णः ॥ ४-१ ॥

रहे । इससे हेयोपादेयका विवेक जागृत होगा और इस विवेकबुद्धिसे वह यह समझ सकेगा कि 'जो समकितसे शून्य हैं वे इस धर्मसे बहिर्भूत हैं अतः मैं भी पांच प्रकारके प्रमादोंका त्याग कर मोक्षतरु का बीज-स्वरूप समकितकी प्राप्ति करनेमें, और प्राप्त समकित की रक्षा करनेमें कारणभूत विशुद्ध परिणाम धाराके बढ़ानेमें सदा यत्न करता रहूँ।' अथवा 'इस अनन्त संसारमें अनन्तकष्टप्रदाता कर्मरूप शत्रु ही हैं; अतः इन्हें परास्त करनेके लिये भी मैं अपने भीतर विशुद्ध परिणामोंकी धारा बहा कर वीर्यगुणस्वरूप अपनी शक्तिका विकास करूँ तो अवश्य ही सफलता प्राप्त कर लूँगा' इस प्रकार सदा उस भव्य जीव को उत्साहित रहना चाहिये ॥ सू० १० ॥

॥ चतुर्थ अध्ययन का प्रथम उद्देशक संपूर्ण ॥ ४-१ ॥

અને આ વિવેકબુદ્ધિથી તે એ સમજી શકશે કે 'જે સમકિતથી શૂન્ય છે તે આ ધર્મથી બહિર્ભૂત છે, તેથી હું પણ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદોને ત્યાગીને મોક્ષવૃક્ષના બીજસ્વરૂપ સમકિતની પ્રાપ્તિ કરવામાં, અને મેળવેલાં સમકિતની રક્ષા કરવામાં કારણભૂત વિશુદ્ધ પરિણામધારાને વધારવામાં હમેશાં યત્ન કરતો રહૂં.' અથવા- 'આ અનન્ત સંસારમાં અનન્ત હુ બ આપવાવાળા કર્મરૂપ શત્રુ જ છે, તેનો પરાજય કરવાને માટે પણ મારા અંતરની વિશુદ્ધ પરિણામોની ધારા વહાવીને વીર્યગુણ-સ્વરૂપ મારી શક્તિનો વિકાસ કરું તો અવશ્ય સફળતા પ્રાપ્ત થશે' એવા પ્રકારે હમેશાં ભવ્ય જીવે ઉત્સાહી રહેવું જોઈએ. ॥ સૂ० ૧૦॥

એવા અધ્યયનનો પ્રથમ ઉદ્દેશ સંપૂર્ણ ॥ ૪-૧ ॥



न्यानः, अत एव सदा=सर्वस्मिन् काले, आगतप्रज्ञानः=उत्तरोत्तरप्रवर्धमानहेयो-
पादेयविवेकपरिणामः सन्, प्रमत्तान्=असंयतान्, वहिः=आर्हतधर्माद्वहिरवस्थि-
तान् अलब्धसम्यक्त्वान् इति यावत्, पश्य। दृष्ट्वा च अप्रमत्तः=पञ्चविधप्रमादरहितः
सन् सदा=अविच्छेदेन पराक्रमेयाः=मोक्षतरुबीजस्य सम्यक्त्वस्य लाभार्थं रक्षणार्थं च
हो कर असंयमी जीवों के संसर्ग से सदा दूर रहो। एवं स्वकर्तव्य में
अप्रमत्त हो सम्यग्दर्शन की प्राप्ति और उसका रक्षण करने के लिए, अथवा
कर्म शत्रुओं पर विजय पानेके लिये कटिबद्ध रहो। हे जम्बू ! मैंने जैसा
भगवान से सुना है वैसा ही तुम्हें कहता हूँ।

इस सूत्रमें जम्बूस्वामीको संबोधन करते हुए श्रीसुधर्मास्वामी
कहते हैं कि-हे जम्बू ! जब प्रत्येक प्राणीका लक्ष्य मोक्षकी प्राप्ति करनेका
है तो उसका यह प्रधान कर्तव्य है कि वह सर्वप्रथम सम्यग्दर्शन की
प्राप्ति करनेके लिये अहर्निश-सदा कटिबद्ध रहे, कारण कि—एक तो
इसके अभाव में मुक्तिकी प्राप्ति नहीं हो सकती, दूसरे सांसारिक
अनन्त कष्टों का अन्त भी नहीं आ सकता। यद्यपि यह बात निश्चित
है कि मिथ्यादृष्टि जीव अपने संसर्ग से मिथ्यात्वकी स्थापना करनेमें
कसर नहीं रखते हैं तो भी भव्य जीवका कर्तव्य है कि वह ऐसे समयमें
अपनी विशुद्ध परिणामधाराको न रोके; किन्तु परिणामों में विशुद्धता
जिस प्रकारसे बड़े उस प्रकार से उसको बढ़ाने का उत्तरोत्तर प्रयत्न करता

जोयाना संसर्गधी सदा दूर रहो, अने स्वकर्तव्यमां अप्रमत्त थाव, सम्यग्दर्शननी
प्राप्ति अने तेना रक्षणने भाटे, अथवा कर्मशत्रुओ उपर विजय भेगववाने
भाटे कटिबद्ध रहो. हे जम्बू ! में जेम भगवान पासेधी सांलज्युं छे तेम
तमने कहुं छुं.

आ सूत्रमां जम्बूस्वामीने संबोधन करीने श्रीसुधर्मास्वामी कहे छे डे-
हे जम्बू ! न्यारे दरेक प्राणीनुं लक्ष मोक्षनी प्राप्ति करवानुं छे तो तेनुं ओ
मुख्य कर्तव्य छे डे पड़ेलां सम्यग्दर्शननी प्राप्ति करवाने भाटे उभेशां तैयार
रहे, कारण डे ओक तो तेना अभावमां मुक्तिनी प्राप्ति थती नथी, तेमज भीज्युं
सांसारिक अनन्त दुःखोना अन्त पज्य नथी आवतो. जे डे आ बात निश्चित छे
डे मिथ्यादृष्टि एव जोताना संसर्गधी मिथ्यात्वनी स्थापना करवामा कसर राखतो
नथी, तो पज्य भव्य एवनुं कर्तव्य छे डे ते आवा समयमां जोतानी विशुद्ध
परिणामधाराने न रोधी राणे, पज्य परिणामोमा विशुद्धता जे प्रकटे वधे ते प्रकटे,
तेने वधारवामा उत्तरोत्तर प्रयत्न करता रहे. जोनाथी डेयोपादेयनो विवेक नगरो

ટીકા—યે આસ્રવાઃ=અષ્ટવિધં કર્માસ્રવતિયૈસ્તે આસ્રવાઃ=કર્મવન્ધહેતવો વિષયા., તે પરિસ્રવાઃ=પરિ=સમન્તાત્ સ્રવતિ=અપગચ્છતિ અષ્ટપ્રકારં કર્મયૈસ્તે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાહેતવઃ, વિષયસુખાઽઽસક્તાનાં સ્વચ્ચન્દનવનિતાદયો વિષયાઃ કર્મવન્ધજનકત્વાદાસ્રવા ભવન્તિ, ત એવ સેવનચિન્તનાદિભિઃ સંસારાનન્તદુઃસ્વકરણતયા પ્રતીયમાના હેયોપાદેયવિવેકવતાં તત્ત્વજ્ઞાનિનાં વૈરાગ્યજનકત્વાત્ પરિસ્રવા ભવન્તિ । યથા ભરતસ્ય આસ્રવાઃ પરિસ્રવરૂપેણ પરિણતા વભૂવુઃ, યથા વા—સમુદ્રપાલસ્ય, યથા વા નમિરાજર્ષેઃ । તથા ચોક્તમ્—

‘યે આસ્રવાઃ’ જો કિસી અપેક્ષાસે કર્મવન્ધકે હેતુ હૈં ‘તે પરિસ્રવાઃ’ વે હી કિસી દૂસરી અપેક્ષાસે કર્મોંકી નિર્જરાકે મી હેતુ હૈં । ‘યે પરિસ્રવાઃ’ જો નિર્જરાકે હેતુ હૈં ‘તે આસ્રવાઃ’ વે આસ્રવકે મી હેતુ હૈં । ‘યે અનાસ્રવાઃ’ જો આસ્રવસે ભિન્ન હૈં ‘તે અપરિસ્રવાઃ’ વે કર્મવન્ધકે મી કારણ હૈં । ‘યે અપરિસ્રવાઃ’ જો કર્મવન્ધકે કારણ હૈં ‘તે અનાસ્રવા’ વે કર્મવન્ધકે કારણ નહીં મી હૈં ।

(૧) ‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારકે કર્મ જિનકે ઢારા આતે હૈં એસે કર્મવન્ધકે કારણરૂપ જો વિષયકષાયાદિક હૈં ઉન્હેં આસ્રવ કહતે હૈં । તથા જિનકે ઢારા અષ્ટ પ્રકારકે કર્મ સર્વથા નિર્જરિત હોતે હૈં, એસે નિર્જરાકે કારણ જો તપસંયજાદિક હૈં ઉન્હેં પરિસ્રવ કહતે હૈં । વિષયસુખોંમેં આસક્ત મનવાલેકે લિયે માલા ચન્દન એવં વનિતાદિક જો પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષય હૈં વે કર્મવન્ધકે કારણ હોનેસે આસ્રવ હોતે હૈં, કારણ કિ વહ ઉનકે સેવનસે અપને કો પરમસુખી માનતા હૈં, એવં ઉન્હેં

‘યે આસ્રવા’ જે કોઈ અપેક્ષાથી કર્મબંધના હેતુ છે ‘તે પરિસ્રવાઃ’ તે જ કોઈ બીજી અપેક્ષાએ કર્મોની નિર્જરાના હેતુ છે ‘યે પરિસ્રવા’ જે નિર્જરાના હેતુ છે ‘તે આસ્રવાઃ’ તે આસ્રવના પણ હેતુ છે. ‘યે અનાસ્રવાઃ’ જે આસ્રવથી ભિન્ન છે ‘તે અપરિસ્રવા’ તે કર્મબંધના પણ કારણ છે ‘યે અપરિસ્રવાઃ’ જે કર્મબંધના કારણ છે ‘તે અનાસ્રવા’ તે કર્મબંધના કારણ હોતા પણ નથી.

(૧) ‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારના કર્મ જે દ્વારા આવે છે એવા કર્મબંધના કારણરૂપ જે વિષયકષાયાદિક છે તેને આસ્રવ કહે છે તથા જે દ્વારા આઠ પ્રકારના કર્મ સર્વથા નિર્જરિત થાય છે, એવા નિર્જરાના જે કારણ છે તેને પરિસ્રવ કહે છે વિષયસુખોમા આસક્તમનવાળાને માળા, ચંદન અને સ્રી આદિક જે પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય છે તે કર્મબંધના કારણ હોવાથી આસ્રવ થાય છે, કારણ કે તે તેના સેવનથી પોતાને થણા સુખી માને છે, અને તેને

॥ अथ चतुर्थाध्ययनस्य द्वितीय उद्देशः ॥

इहानन्तरप्रथमोद्देशके सम्यग्दर्शनं प्रतिबोधितम् । तच्च नवतत्त्वश्रद्धानात्मकम् । तत्र—किं तत्त्वं संसारकारणं ? किं च मोक्षकारणम् ? इत्युभयोर्निर्णयमन्तरेण मुमुक्षोः सम्यग्दर्शनं न संभवतीत्यतः सम्यक्त्वप्रतिबोधनप्रसङ्गागते आस्रवनिर्जरे संसार-मोक्षहेतुभूते प्रतिबोधयितुमाह—‘जे आसवा’ इत्यादि ।

मूलम्—जे आसवा ते परिस्सवा, जे परिस्सवा ते आसवा ।

जे अणासवा ते अपरिस्सवा, जे अपरिस्सवा ते अणासवा ॥सू०१॥

छाया—ये आस्रवास्ते परिस्सवाः, ये परिस्सवास्ते आस्रवा ।

ये अनास्रवास्ते अपरिस्सवाः, ये अपरिस्सवास्ते अनास्रवाः ॥ सू० १ ॥

॥ चौथे अध्ययन का दूसरा उद्देश ॥

सम्यक्त्व नामक चतुर्थ अध्ययनके प्रथम उद्देशकमें सम्यग्दर्शन का स्वरूप समझा दिया गया है । वहाँ यह कहा गया है कि—वह सम्यग्दर्शन नव तत्त्वों की श्रद्धास्वरूप है । वे नवतत्त्व ये हैं—१ जीव, २ अजीव, ३ पुण्य, ४ पाप, ५ आस्रव, ६ संवर, ७ निर्जरा, ८ बन्ध और ९ मोक्ष । मोक्षाभिलाषी को जब तक यह निश्चय नहीं हो जाता कि इनमें से कौनसा तत्त्व संसारका कारण है और कौनसा मोक्षका, तब तक उसके समकित की प्राप्ति नहीं हो सकती, अतः उसके लिये इस सम्यक्त्वबोधन के प्रकरणमें आये हुए तत्त्वोंमेंसे ‘आस्रव संसार का और निर्जरा मोक्षका कारण है’ इस बातको स्पष्ट करने के लिए कहते हैं—‘जे आसवा’ इत्यादि ।

ચોથા અવ્યાયનો બીજો ઉદ્દેશ

સમ્યક્ત્વ નામના ચોથા અધ્યયનના પહેલા ઉદ્દેશમાં સમ્યગ્દર્શનનું સ્વરૂપ સમજાવવામાં આવ્યું છે. ત્યાં બતાવવામાં આવ્યું છે કે—તે સમ્યગ્દર્શન નવ તત્ત્વોની શ્રદ્ધાસ્વરૂપ છે. આ નવ તત્ત્વ નીચે પ્રમાણે છે:—

જીવ ૧, અજીવ ૨, પુણ્ય ૩, પાપ ૪, આસ્રવ ૫, સંવર ૬, નિર્જરા ૭, બંધ ૮, અને મોક્ષ ૯. ત્યાં મુખી મોક્ષાભિલાષીને એ નિશ્ચય નથી થતો કે આમાંથી કયું તત્ત્વ સંસારનું કારણ છે ? અને કયું મોક્ષનું ? , ત્યાં મુખી તેને સમકિતની પ્રાપ્તિ થતી નથી, એથી તેને માટે આ સમ્યક્ત્વબોધનના પ્રકરણમાં આવેલા તત્ત્વોમાંથી આસ્રવ સંસારનું અને નિર્જરા મોક્ષનું કારણ છે, આ વાતને સ્પષ્ટ કરવાને માટે કહે છે— ‘જે આસવા’ ઇત્યાદિ.

રાગદ્વેષમલિનમનસો વૈષયિકસુખોન્મુલ્યસ્ય સર્વં સંસારકારણં ભવતિ, યથા નિમ્બરસાક્રાન્તરસનસ્ય ક્ષીરશર્કરાદિકં સર્વં મધુરં કટુતયા પરિણમતે । સમ્યગ્દૃષ્ટે-સ્તુ વિષયવિતૃષ્ણસ્ય સર્વં સ્વકૂચન્દનવનિતાઽઽદિકમશુચિ દુઃસ્વકારણં ચેતિ ભાવયતઃ પ્રાદુર્ભૂતસંવેગસ્ય તદેવ મોક્ષજનકં ભવતિ ।

ઉક્તાર્થમેવ દ્રઢયિતું પરાવૃત્ય કથયતિ—“ જે પરિસ્ત્રવા ” ઇત્યાદિ । ય એવ પરિસ્ત્રવાઃ=નિર્જરાહેતવસ્તપઃસંયમાદયસ્ત એવ કર્મોદયપ્રતિરુદ્ધશુભપરિણામસ્ય માવદ્યક્રિયાપ્રવૃત્તસ્ય જન્તોર્કદ્ધિરસસાતગૌરવપ્રાપ્તિમનસઃ આસ્ત્રવા ભવન્તિ । કર્મ-નિર્જરાર્થં યાવન્તિ સંયમસ્થાનાનિ તાવન્ત્યેવ કર્મબન્ધનાયાસંયમસ્થાનાનિ । યથા નાગેશ્વરીબ્રાહ્મણ્યાઃ પરિસ્ત્રવા આસ્ત્રવરૂપેણ પરિણતા વભૂવુઃ ॥

રાગ દ્વેષસે આકુલ એવં વૈષયિક સુખમેં લવલીન જીવકે લિયે પંચેન્દ્રિયોંકે સમી વિષય સંસારકે કારણ હોતે હૈં । જૈસે-નીમ કે રસપાન કરનેસે જિસકી જીભકા સ્વાદ કટુ (કડુઆ) હો ચુકા હૈં એસે વ્યક્તિ કે લિયે મીઠા પદાર્થ મી કડુઆ પ્રતીત હોતા હૈં । સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવકે લિયે, કિ જિસકા ચિત્ત વિષયાદિકોંસે વિતૃષ્ણ-તૃષ્ણારહિત હો ચુકા હૈં, વે હી માલા ચન્દન આદિ સમસ્ત વિષય અપવિત્ર ઓર દુઃસ્વકે હી કારણરૂપ પ્રતીત હોતે હૈં, અતઃ ઇનસે ઊનકા ચિત્ત સદા વિરક્ત રહા કરતા હૈં, ઇસલિયે ઊનકે પ્રતિ સંવેગભાવ કી જાગૃતિ હોનેસે વે હી વસ્તુએં ઊસકે લિયે નિર્જરાકા કામ કરની હૈં ।

નિર્જરા હી મોક્ષકા કારણ હૈં, ઇસી વાતકો દૃઢ કરનેકે લિયે ઊપર કહે હુએ અર્થકો હી ઘુમાકર કહતે હૈં-(૨) “ વે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવાઃ ” ઇત્યાદિ । જો તપસંયમાદિક ભાવ જ્ઞાની કે ‘ પરિસ્ત્રવાઃ ’ નિર્જરા કે કારણ હોતે હૈં, વે હી અજ્ઞાની કે કિ-જિસ કી અપને કર્મકે

રાગદ્વેષથી વ્યાકુળ તેમજ વૈષયિક સુખમા રાચેલાં જીવોને માટે પાંચ ઈન્દ્રિયોના બધા વિષયો સંસારના કારણ થાય છે, જેમ લીંબડાનો રસ પીવાથી જેની જીભનો સ્વાદ કડવો બનેલ છે તેવી વ્યક્તિને માટે મીઠો પદાર્થ પણ કડવો લાગે છે સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ કે જેનું ચિત્ત વિષયાદિકની તૃષ્ણાથી રહિત છે તે માળા, ચદન આદિ સમસ્ત વિષયોને અપવિત્ર અને દુષ્ણું કારણ માને છે, તેથી તે વિષયોથી તેનું ચિત્ત હમેશા વિરક્ત રહ્યા કરે છે. આ માટે તેના પ્રતિ સંવેગભાવની જાગૃતિ થવાથી તેજ વસ્તુઓ તેને માટે નિર્જરાનું કામ કરે છે.

નિર્જરાજ મોક્ષનું કારણ છે. આ વાતને દૃઢ કરવાને માટે ઉપર કહેલા અર્થને જરૂરથી કહે છે-(૨) ‘ વે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવાઃ ’ ઇત્યાદિ. જે તપ, સંયમ આદિ લાવે જ્ઞાની માટે ‘ પરિસ્ત્રવાઃ ’ નિર્જરાના કારણ થાય છે, તે અજ્ઞાની માટે-

“ यथाप्रकारा यावन्तः संसारावेशहेतवः ।

तावन्तरतद्विपर्यासाः, -निर्वाणसुखहेतवः ” ॥ १ इति ॥

शाश्वत-नित्य समझता है, ‘ये मेरे हैं और मैं इनका हूँ’ इस प्रकारकी उसकी सदा मान्यता होनी है, उनके विगाड़में अपना विगाड़, और उनके सुधारमें अपना सुधार मानता है, तब जानी कि जिसके हृदयमें हेयोपादेयका विवेक जागृत हो रहा है और जो कर्म के उदयसे इनका सेवन भी करता है फिर भी इनसे अपनेको जलमें कमल की तरह सर्वथा भिन्न ही देखता है, ये ही पांच इन्द्रियोंके विषय उसको सांसारिक अनन्त कष्टोंके कारणरूप प्रतीत होनेसे वैराग्य के जनक, परित्यक्त-होते हैं, इस कारण उसके लिये ये आश्रय कर्मकी निर्जराके ही कारण हैं । जैसे छह गवण्डों का राज्य करनेवाले भरतचक्रवर्ती के लिये एवं समुद्रपाल तथा नमि राजर्षिके लिये वे ही पदार्थ जो अज्ञानीके लिये आश्रय के कारण थे, निर्जरा के ही कारण हुए । जैसे कहा है—

“ यथाप्रकारा यावन्तः, संसारावेशहेतवः ।

तावन्तस्तद्विपर्यासाः, निर्वाणसुखहेतवः ” ॥ १ ॥ इति ।

अर्थात्—जिस प्रकारके जितने संसारपरिभ्रमण के कारण होते हैं, उनसे विपरीत प्रकारके उतने ही मोक्षसुखके कारण होते हैं ॥ १ ॥

शाश्वत-नित्य समझे थे. ‘आ भारा थे અને હું તેમનો છું’ આ પ્રકારની તેની સદા માન્યતા રહે છે. તેના બગડવામાં પોતાનું બગડાણ થયેલ, અને તેના સુધારામાં પોતાનો સુધારો માન્યા કરે છે. ત્યારે જાની કે જેના હૃદયમાં હેયોપાદેયનાં વિવેક જાગૃત થયેલ છે અને કર્મના ઉદયથી તેનું સેવન પણ કરે છે તો પણ તેનાથી પોતાને જગમાં કમળની માફક સર્વથા ભિન્નપણે દેખે છે. આ પાંચ ઈન્દ્રિયાના વિષયો તેને સાંસારિક અનન્ત દુઃખોનું કારણરૂપ પ્રતીત થવાથી તેના માટે તેવૈરાગ્યના કર્તા બને છે, આ કારણ તેના માટે તે કર્મની નિર્જરાના જ કારણ છે. જેમ છ પાંડવો રાજ્ય કરવાવાળા ભરત ચક્રવર્તીને માટે અને સમુદ્રપાલ તથા નમિરાજર્ષિને માટે તે જ પદાર્થો, જે અજ્ઞાનીને માટે આશ્રયના કારણ હતા, નિર્જરાના જ કારણ થયા. જેમ કહ્યું છે—

“ यथाप्रकारा यावन्तः, संसारावेशहेतवः ।

तावन्तस्तद्विपर्यासाः, निर्वाणसुखहेतवः ” ॥ १ ॥ इति ।

અર્થાત્—જે પ્રકારના જેટલા સંસારપરિભ્રમણના કારણ થાય છે, તેનાથી વિપરીત પ્રકારના તેટલા જ મોક્ષસુખના કારણ થાય છે. (૧)

(૧) યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ, (૨) યે આસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ,

(૩) યે અનાસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ, (૪) યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ,

(૧) યે આસ્રવાઃ—આસ્રવન્તિ=કર્મ સંચિન્વન્તીત્યાસ્રવાઃ=કર્મવન્ધકર્તારો જીવાઃ, ત એવ પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્તારઃ । અસ્મિન્ પ્રથમ ભક્તે સર્વે સંસારિણો જીવાઃ પ્રવિષ્ટાઃ, તે હિ પ્રતિક્ષણમિથ્યાત્વાદિભિરાગન્તુકાનાં કર્મણાં વન્ધં, પૂર્વાર્જિતાનાં ચ નિર્જરાં કુર્વન્તિ ।

તથા—(૨) યે આસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ, इति द्वितीयभङ्गवर्त्तिनो जीवाः

(૪) ‘ યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ ’ જો કર્મકે વન્ધ કરાને મેં કારણ હોતે હેં વે હી પ્રવચનકે ઉપકારકે અભિપ્રાયસે ક્રિયે હુણ હોને સે કર્મ-વન્ધકે કારણ નહીં હોતે, જૈસે બાલગ્લાનાદિકે લિયે નિત્યપિણ્ડાદિ કા ગ્રહણ કરના । ઇસ નૃત્રમેં આદિ અંત કે દો હી ભંગ બનલાયે ગયે હેં, મધ્ય કે નહીં, ઉનકા ગ્રહણ કરને પર ઇસ સૂત્રમેં ચતુર્ભંગી ઇસ પ્રકાર સે વનતી હૈ—

(૧) યે આસ્રવાઃ—તે પરિસ્રવાઃ, (૨) યે આસ્રવાઃ—તે અપરિસ્રવાઃ

(૩) યે અનાસ્રવાઃ—તે પરિસ્રવાઃ, (૪) યે અનાસ્રવાઃ—તે અપરિસ્રવાઃ

૧—યહાં પર પ્રથમ ભક્ત મેં સમસ્ત સંસારી જીવોં કા સમાવેશ હો જાના હૈ, કારણ કિ વે હી જીવ પ્રતિક્ષણ મિથ્યાત્વાદિક જો કર્મવન્ધકે કારણ હૈ ઉનસે કર્મોંકા વન્ધ કરતે રહતે હૈ, ઓર પૂર્વોપાર્જિત સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા ભા ક્રિયા કરતે હેં ।

૨—દ્વિતીય ભક્ત શૂન્ય હૈ; કારણ—એસે કોઈ ભી જીવ નહીં હેં જો

(૪) ‘ યે અપરિસ્રવાઃ તે અનાસ્રવાઃ ’ જે કર્મબંધ કરાવવામાં કારણ બને છે, પ્રવચનના ઉપકાર કરવાના અભિપ્રાયથી કરવામાં આવેલ તે જ કર્મબંધના કારણ થતા નથી, જેમ બાળ-ગ્લાનાદિ માટે નિત્યપિણ્ડાદિનું ગ્રહણ કરવું. આ સૂત્રમાં આદિઅતના બે ભાગ બતાવેલ છે, મધ્યના નહિ. આના ગ્રહણ કરવાથી આ મુત્રમાં ચતુર્ભંગી આ પ્રકારે બને છે—

(૧) યે આસ્રવાઃ — તે પરિસ્રવાઃ, (૨) યે આસ્રવાઃ — તે અપરિસ્રવાઃ,

(૩) યે અનાસ્રવાઃ — તે પરિસ્રવાઃ, (૪) યે અનાસ્રવાઃ — તે અપરિસ્રવાઃ ।

(૧) અહીં પ્રથમ ભાગમાં સમસ્ત સંસારી જીવોનો સમાવેશ થઈ બાકી છે, કારણ કે તે જ જીવ પ્રતિક્ષણ મિથ્યાત્વાદિક જે કર્મબંધના કારણ છે તે-આથી કર્મનો બંધ કરે છે, અને પૂર્વોપાર્જિત સંચિત કર્મોની નિર્જરા કરે છે

(૨) બીજો ભાગ શૂન્ય છે, કારણ કે એવો કોઈ પણ જીવ નથી જે આસ્રવકર્તા

ये अनास्रवाः=आस्रवेतराः-व्रतविशेषाः, तेऽपि कर्मोदयवशादशुभाध्यवसायवतो जन्तोरपरिस्रवाः=कर्मबन्धकारणानि भवन्ति, यथा वान्तसम्यक्त्वस्य मुनेः । तथा-ये अपरिस्रवाः=कर्मबन्धहेतवः ते प्रवचनोपकारादिना क्रियमाणाः अनास्रवाः भवन्ति, कर्मबन्धजनका न भवन्तीत्यर्थः, यथा बालग्नानाद्यर्थं नित्यपिण्डादिग्राहकस्य ।

यद्वा—अत्र सूत्रे चतुर्भङ्गी प्रोच्यते, तथाहि—

उदयसे शुભ પરિણામધારા રુકી દુર્ઘ હૈ, સાવધ ક્રિયાઓં કે કરનેમેં હી जिसकी प्रवृत्ति चालू रहती है, और जो ऋद्धि, रस, सात गौरवकी प्राप्ति करनेके अभिप्राय से ही तप संयमादिकोंका आराधन करता है उसके आस्रव-नवीन २ कर्मों के आने के द्वार होते हैं । समकितके बिना की गई समस्त ही क्रियाएं कर्मबन्धका कारण होती हैं । अज्ञानियों के तपसंयमादिक, समकित के अभावमें मिथ्यारूप-असंयमरूप होते हैं, अतः वे उसके निर्जराके हेतु न हो कर उल्टे आस्रवके ही कारण बनते हैं । समकितके कर्मनिर्जराके लिये जितने भी संयमस्थान हैं उतने ही अज्ञानियों के कर्मबन्धके लिये असंयमस्थान भी हैं । इस विषयमें नागेश्वरी ब्राह्मणीका दृष्टान्त प्रसिद्ध है, उसके लिए परिस्रव आस्रवरूपसे परिणत हुए हैं ।

(૩) 'ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः'—जिनसे कर्मबन्ध नहीं होता ऐसे जो व्रतविशेष हैं वे भी, कर्मोदयके वशसे जिसके अध्यवसाय अशुभ हो रहे हैं ऐसे अज्ञानी जीवके लिये कर्मबन्धके ही कारण होते हैं ।

જેની પોતાના કર્મના ઉદયથી શુભપરિણામધારા બંધ છે, સાવધ-ક્રિયાઓ કરવામાં જ જેની પ્રવૃત્તિ ચાલુ છે, અને જે ઋદ્ધિ, રસ, સાત ગૌરવની પ્રાપ્તિ કરવામાં જ તપસંયમાદિનું આરાધન કરે છે તેને માટે આસ્રવના-નવા નવા કર્મોના આવવાના-દ્વાર થાય છે. સમકિત વગર કરવામાં આવેલી બધી ક્રિયાઓ કર્મ-બંધના કારણ થાય છે. અજ્ઞાનિઓના તપ સંયમાદિ સમકિતના અભાવમાં મિ-થ્યારૂપ-અસંયમરૂપ થાય છે, તેથી તે નિર્જરાના હેતુ ન થઈને આસ્રવના જ કારણ બને છે. સમકિતીના કર્મનિર્જરાને માટે જેટલા પણ સંયમ-સ્થાનો છે તેટલા જ અજ્ઞાનિઓના કર્મબંધના માટે અસંયમ-સ્થાનો પણ છે. આ વિષયમાં નાગેશ્વરી બ્રાહ્મણીનું દૃષ્ટાંત પ્રસિદ્ધ છે. તેને માટે પરિસ્રવ, આસ્રવરૂપથી પરિણત થયેલ છે.

(૩) 'ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः' જેનાથી કર્મબંધ નથી થતા એવા જે વ્રત-વિશેષ છે તે પણ કર્મોદયના વશથી જેના અધ્યવસાય અશુભ જ રહેલા છે, એવા અજ્ઞાની જીવને માટે કર્મબંધના જ કારણ બને છે.

નન્વેવં ' યે પરિસ્થવાસ્તે આસ્થવા: ' ઇતિ સ્વીકારે ત્રયોદશે સયોગિકેવલિ-
ગુણસ્થાને ઐર્યાપથિકક્રિયયા સમાગતં કર્મ નિર્જરયતો મુનેઃ પુનર્નવીનકર્મવન્ધાપત્તૌ
સત્યાં કર્મવન્ધપરમ્પરોચ્છેદઃ કદાપિ ન સ્યાત્, તથા ચ-આગમોક્તમોક્ષવાદસ્ય
વૈયથ્યં પ્રસજ્યેત ? ઇતિ ચેત્, ઉચ્યતે—

ત્રયોદશગુણસ્થાનસમાગતકર્મણો નિર્જરા યદિ જીવેન પ્રયત્નવિશેષેણ ક્રિયેત
તર્હિ યથોક્તરીત્યા તન્નિર્જરાકર્તુમુનેઃ પુનરપિ નવીનકર્મવન્ધકર્તૃત્વમાપદ્યેત, પરન્તુ
નૈવં ભવતિ, યતઃ—તસ્ય કર્મણો નિર્જરા સ્વભાવાદેવ જાયતે ।

શંકા—“જો નિર્જરા કરનેવાલે હૈ વે નવીન કર્મકા બન્ધ કરનેવાલે
હૈ ” ઇસ પ્રકારકે પૂર્વોક્ત ભક્ષ્મી સ્વીકૃતિમેં સયોગિ-કેવલિનામક
તેરહવેં ગુણસ્થાનવર્ત્તી જીવોં કે ભી નવીન કર્મવન્ધકા સદ્ભાવ માનના
પડેગા; કારણ કિ વહાં પર નિર્જરા ભી હોતી હૈ ઓર ઈર્યાપથ ક્રિયાસે
નવીન કર્મોંકા બન્ધ ભી હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા કે અનુસાર
તો વહાં કમી ભી કર્મવન્ધ કી પરમ્પરા કા ઉચ્છેદ હી નહીં હો સકેગા;
ફિર આગમમેં જિસ મુક્તિવાદ કા સમર્થન કિયા હુઆ મિલતા હૈ વહ
સર્વથા અસંગત હી ઠહેરેગા ?

ઉત્તર—યહ આપકા કહના તબ ઠીક હો સકતા, જબ કિ ત્રયોદશ
ગુણસ્થાનવર્ત્તી જીવકે આગત કર્મોં કી નિર્જરા કિસી પ્રયત્ન વિશેષસે
સાધ્ય હોતી માની જાતી, પરંતુ એસી માન્યતા તો હૈ હી નહીં, ક્યોં કિ
વહાં પર આગત કર્મોં કી નિર્જરા સ્વતઃ—સ્વભાવ સે હી હોતી હૈ ।

શંકા—‘ યે પરિસ્થવાસ્તે આસ્થવા ’ અર્થાત્—“ જે નિર્જરા કરવાવાળા છે તે
નવીન કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે. ” આ પ્રકારે જે માનવામાં આવે તો
સયોગિકેવળિનામના તેરમાં ગુણસ્થાનવર્ત્તી જીવોને પણ નવા કર્મના બંધનો
સદ્ભાવ માનવો પડશે, કારણ કે ત્યાં નિર્જરા પણ થાય છે અને ઈર્યાપથક્રિયાથી
નવા કર્મનો બંધ પણ થાય છે આવા પ્રકારની માન્યતાના અનુસારે તો ત્યાં કોઈ
વળત પણ કર્મબંધની પરપરાનો ઉચ્છેદ થઈ શકે નહિ, તો પછી આગમમાં જે
મુક્તિવાદનું સમર્થન કરેલું છે તે સર્વથા અસંગત જ થઈ જશે.

ઉત્તર—આ આપનું કહેવું ત્યારે સંગત થાય, ત્યારે ત્રયોદશગુણસ્થાન-
વર્ત્તી જીવના આગત-કર્મોની નિર્જરા કોઈ પ્રયત્નવિશેષાધીન માનવામાં આવે,
પરંતુ એવી માન્યતા તો છે જ નહિ, કેમ કે તે ઠેકાણે આગત (આવેલા)
કર્મોની નિર્જરા સ્વભાવથી જ થાય છે.

કેડપિ નોપલ્ભ્યન્તે, કુતઃ ? એ-આસ્રવાઃ-કર્મવન્ધકર્તારસ્તેડવશ્યમેવ કર્મ-નિર્જરાકર્તારો ભવન્તિ, તસ્માત્તે-અપરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાયાઃ અકર્તારો ન ભવન્તિ ।

તથા-(૩) એ અનાસ્રવાઃ=કર્મવન્ધસ્યાડકર્તારસ્તે પરિસ્રવાઃ=પૂર્વકર્મનિર્જરા-કર્તારઃ, ઇત્યેતસ્મિન્ તૃતીયભક્તે ચાયોગિકેવલિનશ્ચતુર્દશગુણસ્થાનવર્તિનઃ સન્તિ ।

તથા-(૪) એ અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ, ઇતિ ચતુર્થભક્તે સિદ્ધાઃ સન્તિ, તેપા-મનાસ્રવત્વાદપરિસ્રવત્વાચ્ચ । અચાદ્યન્તભક્તૌ સૂત્રે ગૃહીતૌ । આદ્યન્તભક્તગ્રહણેન મધ્યમ-ભક્તદ્વયં સુતરાં ગૃહ્યતે ॥

યદ્વા-એ આસ્રવાઃ=કર્મવન્ધકર્તારો જીવાસ્તે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્તારો ભવન્તિ । તથા-એ પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્તારસ્તે આસ્રવાઃ=પુનર્નવીનકર્મવન્ધ-કર્તારો ભવન્તિ ।

આસ્રવકર્તા હોતે હુણ્ મી નિર્જરા કે કર્તા નહીં, જો કર્મવન્ધકે કર્તા હોતે હૈં વે અવદ્ય હી કર્મકી નિર્જરા કે મી કર્તા હોતે હૈં ।

૩-તૃતીય ભક્તમેં અયોગિકેવલિનામક ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં રહ-નેવાલે જીવોંકા ગ્રહણ હૈં, કારણ કિ અનેકે નવીન કર્મોંકે વન્ધકા અભાવ હૈં, ઓર પૂર્વોપાર્જિત કર્મોં કી નિર્જરા કા સદ્ભાવ હૈં ।

૪-ચતુર્થ ભક્ત મેં સિદ્ધ જીવોંકા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈં, વહાં પર ન કર્મોં કા આસ્રવ હૈં ઓર ન અનેકી નિર્જરા હી હૈં ।

અથવા-જો જીવ આસ્રવ-કર્મવન્ધકે કરનેવાલે હૈં વે પરિસ્રવ-કર્મ-નિર્જરાકે કરનેવાલે હૈં, તથા-જો પરિસ્રવ-કર્મનિર્જરા કે કરનેવાલે હૈં વે આસ્રવ-ફિરસે નવીન કર્મોં કે વન્ધ કરનેવાલે હૈં ।

હોવા છતા નિર્જરાનો કર્તા ન હોય ? જે કર્મવન્ધનો કર્તા હોય છે તે અવશ્ય જ કર્મની નિર્જરાનો પણ કર્તા હોય છે.

(૩) ત્રીજા ભાગમાં અયોગિકેવળી નામના ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં રહેવાવાળા જીવોનું ગ્રહણ છે, કારણ કે તેને નવા કર્મના બંધનો અભાવ છે, અને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોની નિર્જરાનો સદ્ભાવ છે.

(૪) ચોથા ભાગમાં સિદ્ધ જીવોનું ગ્રહણ કરેલું છે. ત્યાં નથી કર્મોનું આસ્રવ અને નથી તેઓની નિર્જરા.

અથવા-જે જીવો આસ્રવ-કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે તે પરિસ્રવ-કર્મ નિર્જરાના કરવાવાળા છે, તથા જે પરિસ્રવ-કર્મનિર્જરાના કરવાવાળા છે તે આસ્રવ-કર્મો નવીન કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે.

एवञ्च—‘ये आस्रवास्ते परिस्रवाः, ये परिस्रवास्ते आस्रवाः’ इति पूर्वार्द्धवाक्यं चतुर्गतिभ्रमणाधिकारिजीवाभिप्रायेण कथितम् । ‘ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः, ये अपरिस्रवास्ते अनास्रवाः’ इत्युत्तरार्द्धवाक्यं तु सिद्धापेक्षया; ते हि—नवीनकर्मबन्धकर्तृत्वाऽभावादनस्रवाः, सकलपूर्वकर्मक्षयेण नवीनकर्मबन्धाभावेन च निर्जराणीयकर्माभावात्कर्मनिर्जराया अकर्तारस्तस्मादपरिस्रवाः ।

तथा—सकलपूर्वकर्मक्षयेण नवीनकर्मानागमनेन च निर्जराणीयकर्माभावात्कर्म-निर्जराया अकर्तृत्वाद् अपरिस्रवाः, नवीनकर्मबन्धकर्तृत्वाभावाच्च अनास्रवाः, इति ।

निर्जरा नियમસે હોતી હૈ, ઇસે રોકનેવાલી કોઈ મી શક્તિ નહીં હૈ, ઇસલિયે ચૌદહવેં ગુણસ્થાનવર્તી જીવકે પ્રતિ મી યહ આક્ષેપ નહીં હોતા ।

इस प्रकार “ये आस्रवास्ते परिस्रवाः, ये परिस्रवास्ते आस्रवाः” यह पूर्वार्ध वाक्य चतुर्गतियों में भ्रमण करनेके अधिकारी जीवों की अपेक्षा से ही कहा गया है । तथा—“ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः, ये अपरिस्रवास्ते अनास्रवाः” यह उत्तरार्ध वाक्य सिद्धों की अपेक्षासे कहा गया है, कारण कि एक तो वे नवीन कर्मबन्धके कर्ता नहीं हैं इससे वे अनास्रव हैं । दूसरे उनमें पूर्वके सकल कर्मोंका क्षय और आगामी नवीन कर्मबन्धका अभाव भी हो चुका है, इसलिये निर्जराके भी कर्ता नहीं माने गये हैं । इसलिये वे अपरिस्रव हैं । तथा—उनमें पूर्वसंचित सकल कर्म के क्षय से और नवीन कर्मों के नहीं आने के कारण निर्जरा करने योग्य कर्मोंके अभाव से कर्मोंकी निर्जराके कर्ता नहीं होने के कारण वे अपरिस्रव हैं, और नवीन कर्मोंके बन्ध नहीं करने के कारण वे अनास्रव हैं ।

નિર્જરા નિયમથી થઈ જાય છે, તેને રોકવાવાળી કોઈ પણ શક્તિ નથી, માટે ચૌદમા ગુણસ્થાનવર્તી જીવના પ્રતિ પણ આ આક્ષેપ થઈ શકતો નથી

આ પ્રકારે “યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ, યે પરિસ્રવાસ્તે આસ્રવાઃ” આ પૂર્વાર્ધ વાક્ય ચતુર્ગતિયોમા ભ્રમણ કરવાવાળા જીવોની અપેક્ષાથી જ કહેલ છે તથા—“યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ, યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ” આ ઉત્તરાર્ધ વાક્ય સિદ્ધાંતની અપેક્ષાએ કહેલ છે. કારણ કે એક તો તે નવા કર્મબંધના કર્તા નથી તેથી તે અનાસ્રવ છે બીજી તેમા પૂર્વના સકળ કર્મનો ક્ષય અને આગામી નવા કર્મબંધનો અભાવ પણ થઈ ચુકેલ છે, માટે નિર્જરા કરવાયોગ્ય કર્મોનો અભાવ થવાથી તે નિર્જરાના પણ કર્તા માનવામા આવેલ નથી, માટે તે અપરિસ્રવ છે તથા—તેમા પૂર્વસંચિત સકળ કર્મના ક્ષયથી, અને નવીન કર્મોનાં નહિ આવવાથી, નિર્જરા કરવાયોગ્ય કર્મોનો અભાવ થવાથી કર્મોની નિર્જરાના કર્તા નહીં હોવાને લીધે તે અપરિસ્રવ છે. અને નવીન કર્મો તો બંધ નાહી કરવાથી તે અનાસ્રવ છે

અત્ર પરિસ્ત્રવપદાર્થે જીવપ્રયત્નકૃતા નિર્જરા પરિગૃહ્યતે, एवं च नोक्तदोषप्रसङ्गः । त्रयोदशगुणस्थाने उक्तकर्मैव जीवो निर्जरयति, प्रथमसमये ऐर्यापथिककर्मणो बन्धः, द्वितीये तद्वेदनं, तृतीये च तन्निर्जरेत्येवं क्रमेण बन्धो निर्जरा चेति द्वयं स-योगिकेवल्लिगुणस्थानं यावत् प्रवर्तते । तत्रत्या निर्जरा न जीवप्रयत्नजनिता किंतु स्वभावादेवेति पुनः पुनः स्मृतिपथमानेतव्यम् ।

तथा—चतुर्दशगुणस्थानवर्तिजीवोऽपि नैतद्वाक्यविषयः । तस्याघातिकर्मचतुष्टय-निर्जराकर्तृत्वं प्रयत्नविशेषमनपेक्ष्य भवति, केवलज्ञानोत्पत्तौ सत्यां तत्सामर्थ्या-दवशिष्टकर्मचतुष्टयनिर्जराया अवश्यम्भावनिरूप्यते ।

“પરિસ્ત્રવ” इस शब्द में जीवके प्रयत्न से होनेवाली निर्जरा का ही ग्रहण किया गया है, अतः उस गुणस्थानवर्त्ती जीव के नवीन कर्मबंध के प्रति कर्तापन किसी प्रकार भी संभवित नहीं हो सकता है । वहां प्रथम समय में ईर्यापथ क्रियासे आगत कर्मका बंध होता है, द्वितीय समयमें उसका वेदन और तृतीय समयमें उसकी निर्जरा । इस प्रकारका क्रम उस जीव के तब तक चालू रहता है जब तक उस जीव के उस गुणस्थानवर्त्तीपना रहता है, अतः यह मानना कि—उसके आगत कर्मों की निर्जरा किसी प्रयत्नविशेषाधीन होती है, यह एक भ्रम ही है, क्यों कि उन कर्मों की निर्जरा तो स्वाभाविक ही है ।

तथा चौદહવેં ગુણસ્થાનવર્તી જીવમેં અવશિષ્ટ અઘાતિયા કર્મોંની નિર્જરા કે પ્રતિ કર્તૃત્વ પ્રયત્નવિશેષકે વિના સ્વતઃ હી હૈ, કારણ કિ કેવલજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ હોને પર ઉસકે પ્રભાવસે ઉન અઘાતિયા કર્મોંની

“પરિસ્ત્રવ” આ શબ્દમાં જીવના પ્રયત્નથી થવાવાળી નિર્જરાનું જ ગ્રહણ કરેલ છે, તેથી આ ગુણસ્થાનવર્તી જીવનું નવીન કર્મબંધ કરવામાં કર્તાપણું કોઈ પણ પ્રકારે સંભવિત થઈ શકતું નથી. ત્યાં પ્રથમ સમયમાં ઈર્યાપથક્રિયાથી આગત (આવતા) કર્મનો બંધ થાય છે, બીજા સમયમાં તેનું વેદન અને ત્રીજા સમયમાં તેની નિર્જરા આ પ્રકારનો ક્રમ તે જીવને ત્યાં સુધી ચાલુ રહે છે જ્યાં સુધી તે જીવને તે ગુણસ્થાનવર્તીપણું રહે છે. આથી એમ માનવું કે ‘તેના આગત કર્મની નિર્જરા કોઈ પ્રયત્નવિશેષાધીન હોય છે.’ એ એક ભ્રમ જ છે, કારણ કે તે કર્મોની નિર્જરા તો સ્વાભાવિક જ થાય છે.

તથા—ચૌદમ્મા ગુણસ્થાનવર્તી જીવમા અવશિષ્ટ (બાકી રહેલા) અઘાતિયા કર્મોની નિર્જરા પ્રતિ કર્તાપણું કોઈ એક પ્રયત્ન વગર સ્વતઃ જ છે. તેનું કારણ એ છે કે કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ થતાં જ તેના પ્રભાવથી તે અઘાતિયા કર્મોની

बन्ध्यमानं, तपःसंयमसमाराधनेन च मुच्यमानम्, आज्ञया=आर्हतागमानुसारेण, अभिसमेत्य=सम्यग् विज्ञाय, पृथक्=अन्यान्यप्रकारेण प्रवेदितं च=अतीतानागतवर्तमानैः सर्वतीर्थकरैः प्रबोधितं बन्धकारणं निर्जराकारणं च, अभिसमेत्य=ज्ञात्वा, को नाम धर्माचरणे प्रवृत्तो न भवेत्? अपि तु भवे देवे दित्यर्थः ॥ सू० २ ॥

आर्हतप्रवचनानुसारी चतुर्दशपूर्वधरादिरपि जीवानां हिताय प्रवेदयतीत्याह-
'आघाइ नाणी' इत्यादि ।

मूलम्—आघाइ नाणी इह माणवाणं संसारपडिवण्णाणं संवुज्झमाणाणं विन्नाणपत्ताणं अट्टावि संता अदुवा पमत्ता अहा-
सच्चमिणं—तिवेमि ॥ सू० ३ ॥

छाया—आख्याति ज्ञानी इह मानवेभ्यः संसारप्रतिपन्नेभ्यः संवुध्यमानेभ्यः विज्ञानप्राप्तेभ्यः, आर्ता अपि सन्तः अथवा प्रमत्ताः यथासत्यमिदम् इति ब्रवीमि ॥३॥

टीका—ज्ञानी=प्रवचनज्ञानसंपन्नः, इह=प्रवचने प्रोक्तं धर्म मानवेभ्यः, आ-
ख्याति=इत्यन्वयः, मनुष्याणां सर्वसंवरचारित्रसंभवात्तेभ्य उपदिशतीत्यर्थः ।

आराधनसे रहित इस षड्जीवनिकायरूप लोकको तथा अतीत, अना-
गत और वर्तमान समस्त तीर्थङ्करो द्वारा भिन्न २ प्रकारसे उपदिष्ट बंधके
कारणों एवं निर्जरा के कारणों को जिनागमसे जान कर धर्माचरण करने
में प्रवृत्त नहीं होगा ? अपितु अवश्य ही होगा ॥ सू० २ ॥

अर्हत प्रभुके प्रवचनानुसार प्रवृत्ति करनेवाले चतुर्दशपूर्व के पाठी
गणधरादिक भी जीवों के हिनके लिये ही उपदेश करते हैं; यही बात
प्रकट की जाती है—'आघाइ नाणी' इत्यादि ।

जिनेन्द्रोपदिष्ट प्रवचनके ज्ञानसे संपन्न ज्ञानी गणधरादिक शास्त्र-
विहित धर्मका प्रतिपादन, हेयोपादेय-विवेकशील संसारी मनुष्यों के

षड्जीवनिकाय ३५ बोधने, तथा अतीत अनागत अने वर्तमान समस्त तीर्थङ्करो
द्वारा जुदा जुदा प्रकारची उपदिष्ट बंधना कारणोंने अने निर्जराता कारणोंने अना-
गतची जगहोंने धर्माचरण करनामां प्रवृत्त न थाय ? परन्तु अवश्य न थाय ॥ सू० २ ॥

अर्हन्त प्रभुना प्रवचन अनुसार प्रवृत्ति करनार चतुर्दश—चौद पूर्वना
पाठी गणधरादिक पण्डितना छितने भाटे न उपदेश करे छे आ बात प्रकट
करनामां आवे छे—'आघाइ नाणी' इत्यादि ।

जिनेन्द्र भगवाने उहेसां प्रवचनना ज्ञानची संपन्न ज्ञानी गणधरादिक शास्त्रविहित
धर्मनुं प्रतिपादन छेयोपादेयविवेकशील संसारी मनुष्याने भाटे करे छे. आ सूत्रमा

યદ્વા-અનાસ્રવાપરિસ્ત્રવયોઃ ક્રમં દર્શયતિ-‘યેઽનાસ્રવાસ્તેઽપરિસ્ત્રવાઃ’ ઇતિ । યે પ્રથમે સમયેઽનાસ્રવા ભવન્તિ-કર્મવન્ધકા ન ભવન્તિ, તે તત્પશ્ચાત્ સમયે અપરિસ્ત્રવા ભવન્તિ-કર્મનિર્જરકા ન ભવન્તિ, વદ્વસ્યૈવ કર્મણો નિર્જરણીયત્વાત્ । એવં યેઽપરિસ્ત્રવાસ્તેઽનાસ્રવા ઇતિ બોધ્યમ્ । એતદપિ વ્યાખ્યાનં સિદ્ધાપેક્ષયા ॥ મૃ૦ ૧ ॥

યન્નેવં તતઃ કિમ્ ? ઇત્યાહ-‘एण पण’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-एण पण संबुज्झमाणे लोयं च आणाए अभिसमिच्चा पुढो पवेइयं ॥ सू० २ ॥

છાયા-एतानि पदानि संबुध्यमानः लोकं चाज्ञयाऽभिसमेत्य पृथक् प्रवेदितम् । २।

ટીકા-एतानि=અનન્તરોક્તાનિ, પદાનિ=‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્ત્રવાઃ’ ઇત્યાદીનિ સંબુદ્ધ્યમાનઃ=સમ્યગ્ જાનન્, તથા લોકં=પદ્ધત્તીવનિકાયમ્ આસ્રવાગતકર્મણા

અથવા-અનાસ્રવ ઔર અપરિસ્ત્રવ કે ક્રમકો દિશાતે હૈ-“યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્ત્રવાઃ” જો પ્રથમ સમયમેં અનાસ્રવ હૈ-કર્મવન્ધ કે કર્તા નહીં હૈ, વે ઉસકે બાદ કે સમયમેં અપરિસ્ત્રવ હૈ-કર્મ કી નિર્જરા કરનેવાલે નહીં હૈ, કારણ કિ જો કર્મોસે બંધા હુઆ હોતા હૈ વહી ઉનકી નિર્જરા કરનેવાલા ભી હોતા હૈ । જો કર્મોસે બંધા હુઆ હી નહીં હૈ વહ નિર્જરા ભી કિસકી કરેગા । ઇસી પ્રકાર “યે અપરિસ્ત્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ” યહ વાક્ય ભી સમજ્ઞ લેના ચાહિયે । યહ વિવરણ ભી નિદ્વોંકી અપેક્ષા સે હી કિયા ગયા હૈ એસા સમજ્ઞના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

यदि ऐसा है तो इससे क्या? इसका उत्तर कहते हैं —‘एण पण संबुज्झमाणे’ इत्यादि ।

इन पूर्वोक्त पदों को अच्छी तरहसे जाननेवाला कौनसा ऐसा प्राणी होगा जो आस्रवसे आवे हुए कर्मों से बंधे हुए, और तप एवं संयम के

અથવા-અનાસ્રવ અને અપરિસ્ત્રવના ક્રમને બતાવે છે-

“યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્ત્રવાઃ” જે પ્રથમ સમયમાં અનાસ્રવ છે-કર્મબંધના કર્તા નથી તે ત્યારબાદના સમયમાં અપરિસ્ત્રવ છે-કર્મની નિર્જરા કરવાવાળા નથી, કારણ કે જે કર્મોથી બંધાયેલા રહે છે તે તેની નિર્જરા કરવાવાળા પણ હોય છે. જે કર્મોથી બંધાયેલા નથી તે નિર્જરા પણ કેવી રીતે ? આ જ પ્રકારે “યે અપરિસ્ત્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ” આ વાક્ય પણ સમજી લેવું જોઈએ. આ વિવેચન પણ નિદ્વોની અપેક્ષાથી જ કરેલ છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

જો એમ છે તો તેનાથી શું ? આનુ ઉત્તર કહે છે-‘एण पण संबुज्झमाणे’ ઇત્યાદિ । તે પૂર્વોક્ત પદોને ધારી સારી રીતે બાલુનાર કાણુ તેવો પ્રાણી હશે જે આસ્રવથી આવેલા કર્મોથી બંધાયેલા અને તપ સંયમના આશયથી રહિત અ.

જ્ઞાનીના દિવા દિવા ધાર્મિક ઉપદેશ હવે પદ્ધતિ ના હોતા હૈ જો પૂર્વોક્ત-વિશેષણવિશિષ્ટ માનવોં મેં અપને કર્તવ્ય માર્ગની અવશ્ય ૨ જાગૃતિ કરતા હુઆ ઉન્હેં ધર્મની ભાવનાસે ભાવિત કર દેતા હૈ । યદિ કોઈ કિસી કારણ સે આતુર-પીડિત યા પ્રમત્ત-પ્રમાદદશાવાલા મી હો તો મી વહ ઉસ ઉપદેશદ્વારા પ્રતિબોધિત હો જાતા હૈ । યહી “અદ્યાવિ સંતા અદુવા પમત્તા ” હવે પદ સે સ્પષ્ટ કિયા ગયા હૈ । કિસી કારણવશ જો આર્તધ્યાનમેં લવલીન હૈ, અથવા રાગદ્વેષ આદિ કારણોં સે યા વૈષયિક કિસી મી સંબંધ સે જો પ્રમત્ત હો રહે હૈ; એસે માનવ મી જ્ઞાની કે દિવ્ય ઉપદેશ સે ધાર્મિક લાભસે સંપન્ન હુએ હૈ । જૈસે-આર્ત ચિલાતિપુત્ર વગેરેહ ઓર પ્રમત્ત શાલિભદ્રાદિકોને ધર્મના લાભ જ્ઞાનીકે ઉપદેશસે લિયા હૈ ।

હવે સૂત્રમેં “ મનુષ્યોં કે લિયે જ્ઞાની ધર્મના ઉપદેશ દેતે હૈ ” યહ જો પ્રકટ કિયા ગયા હૈ. ઉસના કારણ યહ હૈ કિ-ઉનમેં સર્વસંવર ઓર સર્વવિરનિરૂપ ચારિત્રારાધન કરનેની અધિકારિતા હૈ । યદ્યપિ પ્રભુના ધાર્મિક આધ્યાન-સ્રોત મેઘધારાની તરહ એકસી ધારામેં સર્વત્ર પક્ષપાત રહિત વહતા હૈ । ઉનની પર્યદા-સમવસરણ-મેં જો (૧૨) વારહ પ્રકારની પરિપદ હોતી હૈ ઉસમેં સબકે લિયે પ્રભુની દિવ્યવાણી એકરૂપમેં વિના કિસી ભેદભાવકે ઉન ૨ જીવોંની ભાષામેં પરિણત હોતી હૈ ।

જ્ઞાનીએ આપેલ ધાર્મિક ઉપદેશ પણ આ પદ્ધતિનો હોય છે જે પૂર્વોક્ત વિશે-પણ-વિશિષ્ટ મનુષ્યોમાં પોતાના કર્તવ્ય માર્ગની અવશ્ય અવશ્ય જાગૃતિ કરતાં કરતા તેમાં ધર્મની લાવના લરી દે છે. કહાય કોઈ કોઈ કારણથી પીડિત અગર પ્રમાદદશાવાળા પણ હોય તો પણ તે આ ઉપદેશદ્વારા પ્રતિબોધિત થઈ જાય છે, માટે “અદ્યા વિ સંતા અદુવા પમત્તા ” આ પદોથી સ્પષ્ટ કરેલ છે. કોઈ કારણ વશ જે આર્તધ્યાનમાં તત્પર છે, અથવા રાગદ્વેષ આદિ કારણોથી યા વૈષયિક કોઈ પણ સંબંધથી જે પ્રમત્ત થઈ રહ્યા છે; એવા મનુષ્ય પણ જ્ઞાનીના દિવ્ય ઉપદેશથી ધાર્મિક લાભ પ્રાપ્ત કરે છે, જેમ આર્ત-ચિલાતિપુત્ર વિગેરે, અને પ્રમત્ત-શાલિભદ્રાદિકોએ ધર્મનો લાભ જ્ઞાનીના ઉપદેશથી લીધો છે.

આ મૂત્રમાં “ મનુષ્યોને માટે જ્ઞાની ધર્મનો ઉપદેશ આપે છે ” આ જે પ્રગટ કરેલ છે તેનું કારણ એ છે કે-તેમાં સર્વ-સંવર અને સર્વ-વિરતિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરવાની યોગ્યતા છે પ્રભુનું ધાર્મિક આધ્યાનસ્રોત વરસાદધારાની માદ્દ એક ધારાથી સર્વત્ર પક્ષપાતરહિત વહે છે તેમની પર્યદા-સમવસરણ-માં જે બાર પ્રકારની પરિપદ લરાય છે તેમાં બધાને માટે પ્રભુની દિવ્ય વાણી કોઈ પણ ભેદભાવ વિના-એક રૂપમાં તે તે જીવોની લાખમાં પરિણત થાય છે,

કથંભૂતેભ્યો માનવેભ્યઃ ? સંસારપ્રતિપન્નેભ્યઃ=ચતુર્ગતિષુ વર્તમાનેભ્યઃ, કેવલિપ્રમુ-
તીનામુપદેશશ્રવણપ્રયોજનં નાસ્તીતિ ભાવઃ । સંસારિષ્વપિ ધર્મગ્રહણયોગ્યા એવ ઉપ-
દેશાર્હાં इत्यत आह-संबुध्यमानेभ्य इति, यथोपदिष्टं धर्मज्ञातृभ्य इत्यर्थः ।
અસંજ્ઞિનો નોપદેશાર્હાં, इत्यतस्तान् व्यावर्तयितुं विशेषणान्तरमाह-विज्ञानप्राप्तेभ्य
इति हेयोपादेयज्ञानवद्भ्यः-सर्वथापर्याप्तकेभ्यः संज्ञिभ्य इत्यर्थः ।

લિયે કરતે હૈં । इस सूत्रमें जिनेन्द्रप्रतिपादित सद्धर्मका उपदेश संसारी
मानवों के लिये जो प्रकट किया गया है उसका कारण यही है कि उनमें
ही सर्वसंवर और सर्वविरतिरूप चारित्र के आराधन करने की योग्यता
रही हुई है । उनमें भी जो धर्मग्रहण करनेकी योग्यता से सम्पन्न होते
हैं उन्हें ही धर्मका उपदेश दिया जाता है, और वहीं पर वह असरका-
रक होता है । जो अपर्याप्तावस्थामें रहे हुए हैं वे धार्मिक उपदेशके पात्र
नहीं हैं । यही बात 'संबुध्यमान' और 'विज्ञानप्राप्त' इन दो विशे-
षणों से प्रकट की गई है । जो धार्मिक उपदेशको यथावत् नहीं समझ
सकते वे उस उपदेश से लाभ भी कुछ नहीं प्राप्त कर सकते ।
एवं जो अपर्याप्त हैं, असंज्ञी हैं, उन पर भी उपदेश अपना कुछ भी
प्रभाव नहीं दिखा सकता । मनके बिना विचारशक्तिका अभाव
होनेसे वे उस लाभसे सर्वथा वंचित ही रहते हैं, अतः जो संज्ञी हैं,
जिनमें 'यह हेय है यह उपादेय है' इस प्रकारका ज्ञान जागृत हो रहा
है, वहीं पर दिया गया धार्मिक उपदेश अपना प्रभाव प्रकट करता है ।

जिनेन्द्रप्रतिपादित सद्धर्मનો ઉપદેશ સંસારી જીવોને માટે જે પ્રગટ કરવામાં
આવેલ છે તેનું કારણ એ જ છે કે તેમાં સર્વ-સંવર અને સર્વ-વિરતિરૂપ
ચારિત્રનું આરાધન કરવાની યોગ્યતા રહેલી છે. તેમાં પણ જે ધર્મ ગ્રહણ કરવાની
યોગ્યતાથી સંપન્ન હોય છે તેને જ ધર્મનો ઉપદેશ આપવામાં આવે છે, અને
ત્યાં જ તે અસરકારક પણ થાય છે. જે અપર્યાપ્તાવસ્થામાં રહેલાં છે તે ધાર્મિક
ઉપદેશને પાત્ર નથી, આ વાત 'સંબુદ્ધમાન' અને 'વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત' આ બે વિશે-
ષણોથી પ્રગટ કરેલ છે. જે ધાર્મિક ઉપદેશને યથાવત્ નથી સમજી શકતા તે
એ ઉપદેશથી કંઈ પણ લાભ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેમજ જે અપર્યાપ્ત છે-
અસંજ્ઞી છે તેની ઉપર પણ ઉપદેશ પોતાનો કંઈ પણ પ્રભાવ પાડી શકતો નથી.
મન વગર વિચાર-શક્તિનો અભાવ હોવાથી તે એ લાભથી સર્વથા દૂર જ રહે
છે, પણ જે સંજ્ઞી છે તેમાં 'આ હેય છે, આ ઉપાદેય છે' આવા પ્રકારના
જ્ઞાનની જાગૃતિ છે તેવાઓને ધર્મનો ઉપદેશ પોતાનો પ્રભાવ બતાવી શકે છે.

સ્મિન્ વિષયે સમ્યક્ત્વં કુર્યાદિતિ ભાવઃ । इति=इदं ब्रवीमि=यथा मया भगवद्वाक्यं श्रुतं तथा कथयामीत्यर्थः । दुर्लभं सમ્યક્ત્વં ચારિત્રં વા પ્રાપ્ય પ્રમાદો ન કર્તવ્ય इति भावः ॥ सू० ३ ॥

પ્રમાદવતાં સંસારિણાં પુનઃ પુનર્મરણં જન્મ ચ નિરવસાનં ભવતીતિ બોધયિતુમાહ — ‘નાણાગમો’ ઇત્યાદિ ।

અવશ્યંભાવી છે । ये समूर्च्छिम मनुष्य होते हैं । इसी बातको प्रकट करने के लिये सूत्रमें ‘संबुध्यमान’ और ‘विज्ञानप्राप्त’ ये दो विशेषण दिये गये हैं ।

કૈસી ૨ દશાસંપન્ન જીવોં ને પ્રભુકી ધર્મદેશના સે ધર્મલાભ લિયા છે, यह बात चिलातिपुत्र और शालिभद्र आदिके दृष्टान्तसे स्पष्ट की गई है । इनका कथानक शास्त्रों में वर्णित है ।

हे जम्बू ! इस विषयमें जो मैंने कहा है, अथवा आगे भी जो कहा जायगा वह सब सर्वथा सत्य ही है । मुमुक्षुका कर्तव्य है कि वह इस विषयमें पूर्ण श्रद्धालु हो, कारण कि प्रभुके मुख से जैसा सुना है वैसा ही मैं तुझे कहता हूं, अतः हे जम्बू ! दुर्लभ सम्यक्त्व और चारित्रको प्राप्त कर प्रमादका सेवन न करो, यही बारवार कहना है ॥सू० ३॥

પ્રમાદી સંસારી જીવોંકા પુનઃ પુનઃ મરણ ઔર જન્મ નિરંતર હોતા રહતા છે, यही प्रकट किया जाता है—‘नाणागमो’ इत्यादि ।

મનુષ્ય હોય છે, આ જ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રમાં ‘સંબુદ્ધ્યમાન’ અને ‘વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત’ એ બે વિશેષણો આપેલા છે.

કેવી કેવી દશાવાળા હોવાને પ્રભુની ધર્મદેશનાથી ધર્મનો લાભ થયેલ છે તે વાત ચિલાતિપુત્ર અને શાલિભદ્ર આદિના દૃષ્ટાન્તથી સ્પષ્ટ છે (આની કથા શાસ્ત્રોમાં વર્ણવેલી છે)

હે જમ્બૂ ! આ વિષયમાં જે મેં કહ્યું છે અને આગળ પણ જે કહેવામાં આવશે તે બધું સાચુ જ છે મોક્ષાભિલાષીનુ કર્તવ્ય છે કે તે આ વિષયમાં પૂર્ણ શ્રદ્ધાળુ રહે, કારણ કે પ્રભુના મુખથી જેવું સાંભળ્યુ છે તેવું જ હું તમોને કહું છું, માટે હે જમ્બૂ ! દુર્લભ સમ્યક્ત્વ અને ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરીને પ્રમાદનું સેવન ન કરો, એ જ વારંવાર કહેવાનુ છે. ॥ સૂ૦ ૩ ॥

પ્રમાદી સંસારી હોવાના વારંવાર મરણ અને જન્મ નિરંતર થયા કરે છે, તેને પ્રગટ કરવામાં આવે છે—‘નાણાગમો’ ઇત્યાદિ.

જ્ઞાની યથા ધર્મમાખ્યાતિ તથા દર્શયતિ-‘ આર્તાંઅપિ ’ ઇત્યાદિ । આર્તાંઅપિ =કુતશ્ચિત્ કારણાત્ આતુરા અપિ, અથવા રાગદ્વેષોદયાત્ અન્યસ્માદ્ વા વિપય-સંગવશાત્ પ્રમત્તા અપિ સન્તઃ પ્રતિબુદ્ધ્યન્તે, યથા-આર્તાંશ્ચિલાતિપુત્રાદયઃ, પ્રમત્તાઃ શાલિમદ્રાદયો ધર્મં વિદન્તિ સ્મ, તથા જ્ઞાની પુરુષો ધર્મમુપદિશતીત્યર્થઃ । એતસ્મિન્ વિપયે શ્રદ્ધાનં વિધેયમિતિ દર્શયિતુમાહ—‘ યથાસત્યમિદમ્ ’ ઇતિ । મયા યત્ કથિતં કથ્યમાનં ચ તદિદં યથાસત્યં સત્યમનતિક્રમ્ય વર્તતે-ઇત્યર્થઃ, મુમુક્ષુ-ફિર શ્રી જો યહાં પર મનુષ્યોં કે લિયે જ્ઞાની પુરુષ ધર્મકા ઉપદેશ દેતે હૈં ઉસકા કારણ ઉનમેં સર્વસંવર ઓર સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રારાધન કરને કી યોગ્યતા હી હૈ । ઓર ઉસી યોગ્યતા કો લક્ષમેં રખ કર યહ કહા ગયા હૈ ।

મનુષ્યોં કે સિવાય અન્યગતિયોં કે જીવોં મેં યહ યોગ્યતા નહીં હૈ । તિર્યચ્ચગતિકે જીવ (૫) પાંચ ગુણસ્થાનોં સે આગે નહીં વઢ સકતે હૈં । દેવગતિ કે જીવોં મેં (૪) ચાર ગુણસ્થાન હી પાયે જાતે હૈં, અન્ય ગુણસ્થાન નહીં । મનુષ્યોં મેં હી (૧૪) ચૌદહ ગુણસ્થાનોંકે આરાધન કરનેકી યોગ્યતા હૈ । ઇતના હોને પર મી જો પર્યાસ નહીં હૈં કિન્તુ અપર્યાસદશાવર્તી હૈં, વે ઉપદેશકે પાત્ર હી નહીં હૈ ।

‘ નિર્વૃત્ત્યપર્યાસક ’ વે હૈં—જિનકી અમી પર્યાસિયાં પૂર્ણ નહીં હુઈ હૈં, એક અન્તર્મુહૂર્ત મેં નિયમ સે પૂર્ણ હો જાવેંગી । ‘ લઘ્વપર્યાસક ’ વે હૈં—જો પર્યાસિયોં કી પૂર્ણતાસે રહિત હૈં, ઓર અન્તર્મુહૂર્ત મેં જિનકા મરણ

તો પણ જે આ ઠેકાણે ‘ મનુષ્યોને માટે જ્ઞાની પુરુષ ધર્મનો ઉપદેશ આપે છે ’ આવું જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ તેમાં સર્વ-સંવર અને સર્વ-વિરતિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરવાની યોગ્યતા જ છે. અને તે યોગ્યતાને ધ્યાનમાં રાખીને આ કહેવામાં આવેલ છે.

મનુષ્ય સિવાય બીજી ગતિઓના જીવોમાં આ યોગ્યતા નથી. તિર્યચ્ચ ગતિના જીવો પાંચ ગુણસ્થાનથી આગળ વધી શકતા નથી. દેવગતિમાં જીવોને ચાર ગુણસ્થાન જ દેખાય છે, બીજા ગુણસ્થાનો નથી. મનુષ્યોમાં જ ચૌદ ગુણસ્થાન આરાધન કરવાની યોગ્યતા છે. આટલું હોવા છતાં જે પર્યાસ નથી પણ અપર્યાસદશાવર્તી છે તે ઉપદેશને પાત્ર નથી

‘ નિર્વૃત્ત્યપર્યાસક ’ તે છે, જેની હજી પર્યાસિઓ પુરી થઈ નથી, એક અન્તર્મુહૂર્તમાં નિયમથી પૂર્ણ થશે. ‘ લઘ્વપર્યાસક ’ તે છે જે પર્યાસિઓની પૂર્ણતાથી રહિત છે, અને અન્તર્મુહૂર્તમાં જેનું મરણ અવશ્યભાવી છે, તે સંભૂતિન

येतु रागान्धतया प्रमत्ता धर्मं नाभिजानन्ति ते किंभूता भवन्तीत्याह—‘इच्छा’ इत्यादि । इच्छया=विषयसुखवाञ्छया, प्रणीताः=विषयाभिमुखं प्रकर्षणं नीताः, इच्छापरतन्त्रा इत्यर्थः । यद्वा—इहेन्द्रियाद्यनुकूला प्रवृत्तिरिच्छा, तया संसाराभिमुखं मन्त्रसाधना करे; तो भी वह कराल कालके तीखे दांतों से चीरा ही जाता है, अर्थात् किसी प्रकार भी प्राणी मृत्यु से नहीं बच सकता ॥१॥

उपक्रम—मृत्युका निमित्त कारण । जैसे—दण्ड, चाबुक, शस्त्र, रस्सी, विष आदि । निरुपक्रम—निमित्त रहित—आयुके पूर्ण होने पर अपने-आप मृत्युको प्राप्त होना ।

इस सूत्र में यह प्रकट किया जा रहा है कि जो राग और द्वेषसे अन्धे होकर प्रमादी हुए हैं और धर्म को नहीं जान रहे हैं वे विषय-सुख की वाञ्छा से ही विषयों में आसक्त होते हैं । अपनी उस अभिलाषा की पूर्त्तिकरनामात्र ही वे अपना परम कर्तव्य समझते हैं । इस समय उन्हें न्याय अन्याय का कुछ भी ध्यान नहीं रहता है । इच्छा की पूर्त्तिकरनामात्र ही एक लक्ष्य होता है । इन्द्रियों के अनुकूल प्रवृत्तिका नाम ही इच्छा है । जो इन्द्रियोंके इन्हें अनुकूल जचा उसमें ही अन्धे होकर ये गिर पड़ते हैं, ‘इसका भविष्यमें क्या परिणाम होगा?’ यह विचार इन्हें नहीं रहता । इच्छाओंके आधीन बने हुए मनुष्य संसारकी ओर ही दौड़ लगा रहे हैं । निवृत्तिमार्गसे वे दूर हैं । निवृत्तिमार्गकी प्राप्ति

સાધના કરે તો પણ તે કરાળકાળના તીખા દાંતથી ચિરાઈ જ બચે છે, અર્થાત્ પ્રાણી મૃત્યુથી કોઈ પ્રકારે પણ બચી શકતો નથી. ॥ ૧ ॥

उपक्रम—मृत्युनु निमित्तकारण, જેમ—દંડ, ચાબુક, શસ્ત્ર, રસ્સી, વિષ આદિ.

નિરુપક્રમ—નિમિત્તરહિત—આયુધ્ય પુરૂ થવાથી આપમેળે મૃત્યુને વશ થવું.

આ સૂત્રમાં એમ કહેવામાં આવેલ છે કે જેઓ રાગ અને દ્વેષથી અંધ બનીને પ્રમાદી બને છે અને ધર્મને બાણતા નથી તેઓ વિષયસુખની ઇચ્છાથી વિષયોમાં આસક્ત બને છે. પોતાની આ ઇચ્છાને પૂર્ણ કરવામાં જ પોતાનું પરમ કર્તવ્ય સમજે છે આ વખતે ન્યાય અન્યાયનો કોઈ ખ્યાલ રાખતો નથી ઇચ્છાને પૂર્ણ કરવાનો જ માત્ર એક ખ્યાલ રાખે છે ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ પ્રવૃત્તિનું નામ જ ઇચ્છા છે જે ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ ગમ્યુ તેમાં જ અંધ બનીને તેઓ પડે છે. એવું ભવિષ્યમાં શું પરિણામ આવશે?’ આ વિચાર એને નથી આવતો ઇચ્છાઓને આધીન બનેલો મનુષ્ય સંસારની તરફ જ દોટ લગાવે છે. નિવૃત્તિ માર્ગથી તે દૂર છે નિવૃત્તિ માર્ગની પ્રાપ્તિ વિના ઇચ્છાઓ પર અકુશ થતો

मूलम्—नाणागमो मच्चुमुहस्स अत्थि, इच्छा पणीया वंकानि-
केया कालग्गहीया निचये निविट्ठा पुढो पुढो जाइं पक्कप्पयांति । सू० ४।

छाया—नाऽनागमो मृत्युमुखस्यास्ति, इच्छा प्रणीता वङ्कानिकेताः, काल-
गृहीता निचये निविष्टाः पृथक् पृथक् जातिं प्रकल्पयन्ति ॥ सू० ४ ॥

टीका—मृत्युमुखस्यानागमः संसारिणां नास्तीत्यन्वयः । एवंभूतः कश्चिदपि
संसारी नास्ति, य उपक्रमेण निरुपक्रमेण वा मृत्युमुखे नाऽऽपततीत्यर्थः । उपक्रमो
=निमित्तं-दण्डकशास्त्ररज्जुविषादयः, निरुपक्रमो=निमित्ताभावः । तथा चोक्तम्—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनं क्रियां,
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ” ॥ १ ॥ इति,

ऐसा कोई संसारी जीव नहीं है जो कि उपक्रम-निमित्तसे अथवा
अनुपक्रम-विना निमित्त से मृत्युके मुखमें नहीं पड़ता हो । कहा भी है—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनक्रियां,
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ॥ १ ॥ ” इति ।

अर्थात्—कायर पुरुष मृत्युके भयसे चाहे कहीं भग जाय, या मृत्यु
की लाचारी करे, कहीं चला जाय, कोई प्रपञ्च करे, अथवा अमर होनेके
लिये रसायन क्रिया (कायाकल्प) करे, तथा बड़े २ व्रत करे, पहाड़ों की
गुफाओं में छिप जावे, अनेक प्रकारके तप तपे, परिमिन खोराक खावे,

येथो डोई संसारी जीव नहीं है निमित्तही अथवा वगर निमित्तही
मृत्युका मुखमें न पड़ता होय इत्यु धे—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनक्रियां,
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ” ॥ १ ॥ इति ।

अर्थात्—कायर पुरुष मृत्युका लयही लदे डोई नश्याये लागी जाय,
अथवा मृत्युकी लाचारी करे, डोई नश्याये खादी जाय, डोई प्रपञ्च करे, अथवा
अमर धवाने भाटे रसायन क्रिया (कायाकल्प) करे, तथा मोटा व्रत करे, पहाड़ोनी
गुफाओमां छुपाई जाय, अनेक प्रकारका तप करे, परिमिन खोराक जाय, मन्त्र-

=જનયન્તિ । રાગદ્વેષવશાત્પ્રમાદિનઃ સંસારિણો ધર્મમનવબુદ્ધ્ય ઇન્દ્રિયાનુકૂલવિષયે મોહં પ્રાપ્ય પુનઃ પુનઃ કર્મોપચયં કુર્વન્તસ્તદ્વન્ધ્યાત્ પ્રચ્યુતા ન ભવન્તીતિ ભાવઃ ॥૪॥

પ્રમાદવતાં પુનઃ પુનર્જાતિપ્રકલ્પને કા હાનિર્ભવતીતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ—
'ઇહમેગેસિં તત્થ તત્થ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઇહમેગેસિં તત્થ તત્થ સંસ્તવો ભવઈ । અહોવવાઈણ
ફાસે પહિસંવેયાંતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—ઇહૈકેપાં તત્ર તત્ર સંસ્તવો ભવતિ । અધઔપપાતિકાન્ સ્પર્શાન્ પ્રતિ
સંવેદયન્તિ ॥ મૂ૦ ૫ ॥

ટીકા=અસ્મિન્ લોકે, એકેપાં=મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકષાયવતાં, તત્ર-તત્ર=નરકાદિયાતનાસ્થાનેષુ, સંસ્તવઃ=પ્રકર્ષેણ પરિચયો ભવતિ, તત્ર પુનઃ-પુનર્ગમનવશા-
કષ્ટોં કો સહન કરતા રહતા હૈ । સારાંશ યહ હૈ કિ-રાગદ્વેષકે વશ સે સંસારી જીવ ધર્મ કો નહીં સમજ્ઞ કર ઇન્દ્રિયાં ઔર મન કે અનુકૂલ વિષયોં મેં મુગ્ધ હોકર વારંવાર કર્મપરંપરા કી વૃદ્ધિ કરતા હુઆ કર્મોં સે રહિત નહીં હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

પ્રમાદશાલી જીવોં કી એકેન્દ્રિયાદિક યોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કરને પર ક્યા હાનિ હોતી હૈ ? એસી શિષ્યકી જિજ્ઞાસા હોને પર ઉત્તર દેતે હૈ—'ઇહમેગેસિં' ઇત્યાદિ ।

હસ સંસાર મેં મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ ઔર કષાયવાલે જીવોં કા છેદન, ભેદન, વન્ધન આદિ કષ્ટોં કે સ્થાનભૂત નરકાદિમેં વારંવાર ઉત્પન્ન હોને સે उन नरकादिकोंके साथ अधिक परिचय हो जाता है, इससे वे वहां के दुःखोंको भोगते रहते हैं ।

અનત દુઃખોને સહન કરતા રહે છે આ કથનનો સાર એ છે કે—રાગ દ્વેષના કારણથી સંસારી જીવ ધર્મને નહિ સમજીને ઇન્દ્રિયો અને મનના અનુકૂળ વિષયોમા મુગ્ધ થઈને વારંવાર કર્મપરંપરાની વૃદ્ધિ કરે છે, અને કર્મોથી રહિત થતા નથી ॥સૂ૦ ૪॥

પ્રમાદશાળી જીવોની એકેન્દ્રિયાદિક યોનિયોમાં જન્મ ધારણ કરવાથી શું નુક-
માન થાય છે ? એવી શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી ઉત્તર આપે છે—'ઇહમેગેસિં' ઇત્યાદિ.

આ મંસારમા મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ અને કષાયવાળા જીવોને છેદન
છેદન, બન્ધન આદિ દુઃખોના સ્થાનભૂત નરકાદિમાં વારંવાર ઉત્પન્ન થવાથી તે
નરકાદિકોની સાથે અધિક પરિચય થઈ જાય છે, તે ત્યાના દુઃખોને ભોગવતા રહે છે.

प्रणीता इत्यर्थः । अत एव-वृद्धानिकेताः वृद्धः असंयमस्तस्य आ-समन्तात् निकेताः
 आश्रयाः, अत एव-कालगृहीताः=कालेन-मृत्युना गृहीताः-पुनःपुनर्मरणदुःखभागिनः,
 यद्वा-कालगृहीताः-गृहीतः कालो यैस्ते कालगृहीताः, आर्पत्वान्निष्ठान्तस्य परनि-
 पातः, धर्माचरणाय कालाभिसन्धायिनः-‘वृद्धावस्थायां परुद् वा परारि वा तनय-
 दृष्टितृपरिणयानन्तरं वा धर्मं करिष्यामः’ इत्येवं संकल्पकारिण इत्यर्थः । अत एव
 निचये निविष्टाः=द्रव्यतो हिरण्याद्युपचये, भावतः कर्मोपचये निविष्टाः=संलग्नाः
 सन्तः, पृथक् पृथक् अन्यामन्याम् जातिम्=एकेन्द्रियादिकाम् अनन्तवारं प्रकल्पयन्ति
 विना, इच्छाओं पर अंकुश नहीं हो सकता है, यह निर्विवाद सिद्ध है ।
 जहाँ तक प्रवृत्तिमार्ग है वहीं तक संसार है । निवृत्तिमार्गकी प्राप्ति ही
 संसारका साक्षात् या परम्परारूपसे अन्त है । इच्छाओं पर विजय पाना
 यही तो संयमभाव है । इसके विपरीत असंयमभाव है । असंयमी
 जीव धर्मकी प्राप्ति करने में काल-समयका बहाना किया करते हैं—
 “अभी तो जवानीका समय है सांसारिक आनन्द भोग लूं, वृद्धावस्था
 आने पर धर्म धारण कर लूंगा । अथवा आगामी वर्ष में या उसके बाद
 के वर्ष में अथवा पुत्र-पुत्रियों का विवाह करके फिर धर्म करूंगा ।” इस
 प्रकार का विचार करते २ ही वे काल के ग्रास बन जाते हैं और धर्मके
 लाभ से वंचित रह जाते हैं । विषयेच्छा के आधीन बना हुआ संसारी
 मनुष्य जिस किसी प्रकारसे हिरण्य-सुवर्णादिक परिग्रहके संचय करने
 में ही अपने जीवन के अधिकांश भाग को नष्ट कर देता है, और उपा-
 जित कर्मानुसार एकेन्द्रियादिक योनियोंमें अनन्तवार जन्ममरण के अनन्त

नहीं, ते निर्विवाद सिद्ध हैं, न्या मुधी प्रवृत्तिमार्ग है त्या मुधी संसार है,
 निवृत्तिमार्गकी प्राप्ति संसारको साक्षात् अगर परंपराधी अंत है, इच्छाओं
 पर विजय नैवयवो ते न संयम-भाव है, तर्था विपरीत असंयमभाव है,
 संयमी छव परमी प्राप्ति करवाना संयमनुं पडानुं पताये है—‘इच्छा तो
 मुवाणीको ननय है, सांसारिक आनन्द भोगवी लडि, वृद्धावस्था आव्या पछी धर्म
 धारण करी करिष्यामः, अथवा-आगामी वर्षमा, अगर तेना आगामी वर्षमा, अथवा
 पुत्र-पुत्रिणीका विवाह कर पछी बन करीना,’ अथवा प्रश्रयाना विचार करी करीने
 ते करीने ननय ननय है, अनं धर्मेना उपायों व जित नहीं पाव है विष-
 येच्छा-आधीन भोगवी संसारी मनुष्य के बहुत प्रकारसे हिरण्य-सुवर्णादि
 परिग्रहमें संचय करवाना न संयम न संयम है, अनं धर्मेना उपायों व जित नहीं पाव है विष-
 येच्छा-आधीन भोगवी संसारी मनुष्य के बहुत प्रकारसे हिरण्य-सुवर्णादि
 परिग्रहमें संचय करवाना न संयम न संयम है, अनं धर्मेना उपायों व जित नहीं पाव है विष-
 येच्छा-आधीन भोगवी संसारी मनुष्य के बहुत प्रकारसे हिरण्य-सुवर्णादि

ટીકા—ક્રૂરેષુ=વોરતરપરિણામેષુ વધવન્ધાદિષુ, કર્મસુ=ક્રિયાસુ, તિષ્ઠન્=પ્રવૃત્તિઃ, ભૃગ્મ્=અત્યર્થ—ચિરં નરકે પરિતિષ્ઠતિ—તત્ર વૈતરણીતરણાઽસિપત્રપાતાઽઽદિ-જનિતં વોરતરં દુઃસ્વમનુભવન્ દીર્ઘકાલમવસ્થિતો ભવતીત્યર્થઃ । ક્રૂરેષુ કર્મસુ અતિ-ષ્ઠન્=અપ્રવૃત્તસ્તુ ભૃગ્મ્=સર્વથા નરકે નો પરિતિષ્ઠતિ=ઉપસ્થિતો ન ભવતિ, ન તત્રોત્પ-દ્યતે इत्यર્થઃ ।

યદ્વા—ભૃગ્મ્ ક્રૂરૈઃ=અતિકુટિલૈઃ પ્રાણાતિપાતાદિભિઃ કર્મભિઃ=વ્યાપારૈઃ, ભૃગ્મ્ =અત્યર્થ—ચિરં નરકે પરિતિષ્ઠતિ । એવમ્ અભૃગ્મ્ ક્રૂરૈઃ=મન્દક્રૂરૈઃ કર્મભિઃ નરકે ભૃગ્મ્=અત્યર્થ—ચિરં નો પરિતિષ્ઠતિ, શ્રેણિકવત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જિનકા પરિણામ ઘોરતર હૈ, એસે વધ-બંધનાદિક જો ક્રૂર કર્મ હૈં ઉનમૈં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા પ્રાણી મરકર નરકોં મૈં ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઓર ચિરકાલ તક અનેક સાગરપર્યન્ન વહાં કે દુઃસ્વ ભાગના, વૈતરણી નદી મૈં તૈરના, શાલ્મલી-સેમર જાનકે વૃક્ષોંકે તલવાર કી ધાર કે સદૃશ પત્તોં કે ગિરને સે દેહ કા ચીરે જાના આદિ જો ભયંકર દુઃસ્વ હૈં ઉન્હેં ભોગતા હુઆ વહીં પર અપની મુજ્યમાન આયુકો વ્યતીત કરતા હૈ । જો ઇન ક્રૂર કર્મોં કે સેવન મૈં પ્રવૃત્તિ નહીં કરતા હૈ વહ નરક-નિગોદ મૈં ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ ।

અથવા—અતિકુટિલ જો પ્રાણાતિપાત આદિ કર્મ હૈં ઉનકે દ્વારા યહ પ્રાણી ચિરકાલ તક નરક મૈં નિવાસ કરતા હૈ ઓર મન્દ ક્રૂર કર્મોં કે દ્વારા વહાં ચિરકાલ તક નહીં, કિન્તુ કુછ કાલ તક હી શ્રેણિકરાજા કી તરહ રહતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જેના પરિણામ ઘોરતર છે એવા વધ બંધનાદિક જે જે ક્રૂર કર્મ છે તેમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા પ્રાણી મરીને નરકમાં ઉત્પન્ન થાય છે, અને ચિરકાળ સુધી અનેક સાગર પર્યન્ત ત્યાંના દુઃખને ભોગવવું. વૈતરણી નદીમાં તરવું, શાલ્મલી-સેમર વનના વૃક્ષોના તલવારની ધાર જેવા પાદડાઓના પડવાથી દેહનું ચીરાઈ જવું આદિ જે ભયંકર દુઃખો છે તેઓને ભોગવતાં ભોગવતાં ત્યાં જ પોતાના ભુજ્યમાન આયુષ્યને વ્યતીત કરે છે. જે આવા ક્રૂર કર્મોનું સેવન કરવામાં પ્રવૃત્તિ કરતા નથી તે નરક-નિગોદમાં ઉત્પન્ન થતા નથી

અથવા—અતિકુટિલ જે પ્રાણાતિપાત આદિ કર્મોં છે તેઓ દ્વારા આવા પ્રાણી ચિરકાળ સુધી નરકમાં નિવાસ કરે છે, અને મન્દ ક્રૂર કર્મોં દ્વારા ત્યાં ચિરકાળ સુધી નહિ પણ કાંઈક એછા સમય સુધી કેલિક રાત્રીની માફક રહે છે. ॥સૂ૦ ૬॥

દિતિ ભાવઃ । તત્પરિચયે સતિ કિં ભવતીત્યાહ—‘ અધઔપપાતિકાન્ ’ इत्यादि। भोगेच्छापरतन्त्रतयेन्द्रियानुकूलाऽऽचरणेन नरकादिस्थानं संप्राप्ताः, अधऔपपा-
तिकान्=नरकादिसम्बन्धिनः, स्पर्शान्=दुःखानि प्रतिसंवेदयन्ति=अनुभवन्ति ॥५॥

નનુ ભોગેચ્છાવિવશાઃ સર્વેઽપિ અધઔપપાતિકાન્ સ્પર્શાન્ પ્રતિસંવેદયન્તિ,
કિં વા તેષુ કશ્ચિદેવેતિ જિજ્ઞાસાયામાહ—‘ ચિદ્ઠં કૂરેહિં ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—ચિદ્ઠં કૂરેહિં કમ્મેહિં ચિદ્ઠં પારિચિદ્ઠઈ । અચિદ્ઠં કૂરેહિં
કમ્મેહિં નો ચિદ્ઠં પારિચિદ્ઠઈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—તિષ્ઠન્ ક્રૂરેષુ કર્મસુ ભૃશં પરિતિષ્ઠતિ । અતિષ્ઠન્ ક્રૂરેષુ કર્મસુ નો
ભૃશં પરિતિષ્ઠતિ ।

યદ્વા—ભૃશં ક્રૂરૈઃ કર્મભિઃ ભૃશં પરિતિષ્ઠતિ । અભૃશં ક્રૂરૈઃ કર્મભિઃ નો ભૃશં
પરિતિષ્ઠતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જો કર્મબન્ધ કે કારણ મિથ્યાત્વ, અચિરતિ, પ્રમાદ ઔર કષાય કે
સેવન કરનેમેં હી રાતદિન સંલગ્ન રહતે હેં, એવં વિષયભોગોં કી इच्छा
के आधीन होने से धार्मिक आचारविचार से शून्य हें, इन्द्रियों के अ-
नुकूल आचरण करनेमें ही जो लगे हें वे मृत्यु के ग्रास बनकर नरकादि-
योनियों में—कि जहां पर छेदन, भेदन, बन्धनादि अपार कष्ट हैं—बार बार
उत्पन्न होते हैं और वहां के उन अनन्त कष्टों को भोगते रहते हैं ॥मू०५॥

કયા વિષયભોગોંકી इच्छा के पराधीन बने हुए समस्त ही प्राणी
नरकादियोनियों के कष्टों को भोगते हैं या उनमें से कोई २ ? इस
प्रकार के प्रश्नका उत्तर कहते हैं—‘ चिट्ठं कूरेहिं ’ इत्यादि ।

જે મનુષ્ય કર્મબંધના કારણ મિથ્યાત્વ અચિરતિ પ્રમાદ અને કષાયના
સેવન કરવામાં રાત-દિન રચ્યો-પચ્યો રહે છે, અને વિષયભોગોની ઇચ્છાને અધીન
હોવાથી ધાર્મિક આચાર વિચારથી શૂન્ય છે, ઇન્દ્રિયોના અનુકૂળ આચરણ કર-
વામાં જ જે લાગેલ છે, તે મૃત્યુનો ગ્રાસ બનીને નરકાદિ યોનિયોમાં કે જે
ઠેકાણે છેદન-ભેદન બંધનાદિ અપાર દુઃખો છે, ત્યાં વારંવાર ઉત્પન્ન થાય છે અને
ત્યાના તે અનન્ત દુઃખોને ભોગવતો રહે છે. ॥સૂ૦ ૫॥

શું વિષયભોગોની ઇચ્છાને પરાધીન બનેલા સમસ્ત પ્રાણી નરકાદિ યોનિયોમાં
દુઃખોને ભોગવે છે કે તેમાંથી કોઈ કોઈ ભોગવે છે? આ પ્રકારના પ્રશ્નના જવાબમાં
કહે છે—‘ ચિદ્ઠં કૂરેહિં ’ इत्यादि.

શ્રુતકેવલિનોડપિ તદેવ વદન્તિ । દિવ્યજ્ઞાનવન્તઃ કેવલિનઃ, ચતુર્દશપૂર્વધરાઃ શ્રુત-
કેવલિનશ્ચેત્યુત્તરે યથાર્થવાદિત્વાદેકમેવાર્થં વદન્તિ, ન તુ વિરુદ્ધમિતિ ભાવઃ ॥૭॥
एवं वक्ष्यमाणेऽप्यर्थे तेषामेकवाक्यताऽस्तीत्याह—‘आवंती’ इत्यादि ।

મૂલમ્—આવંતી કેયાવંતી લોચંસિ સમણા ય માહણા ય
પુઢો વિવાયં વચંતિ—“સે દિઢ્ઢં ચ ણે, સુચં ચ ણે, મચં ચ ણે, વિણ્ણાયં
ચ ણે, ઉઢ્ઢં અહં તિરિયં દિસાસુ સઠ્ઠવો સુપહિલેહિયં ચ ણે—
સઠ્ઠવે પાણા સઠ્ઠવે ભૂથા સઠ્ઠવે જીવા સઠ્ઠવે સત્તા હંતઠ્ઠવા
અજ્ઞાવેચઘ્વા પરિઘેતઘ્વા પરિયાવેચઘ્વા ઉદ્ઘવેચઘ્વા, ઇત્થવિ જાણહ,
નત્થિત્થ દોષો, ”—અણારિયવચ્છણમેયં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—યાવન્તઃ કિયન્તો લોકે શ્રમણાશ્ચ બ્રાહ્મણાશ્ચ પૃથક્ વિવાદં વદન્તિ—
“તત્ દૃષ્ટં ચ નઃ, શ્રુતં ચ નઃ, નતં ચ નઃ, ત્રિજ્ઞાતં ચ નઃ, ઊર્ધ્વમધસ્તિર્યગ્ દિશામુ
સર્વત્ર સુમતિલેખિતં ચ નઃ—સર્વે પ્રાણાઃ, સર્વે ભૂતાઃ સર્વે જીવાઃ સર્વે સત્ત્વાઃ હન્ત-
વ્યાઃ આજ્ઞાપયિતવ્યાઃ પરિગ્રહીતવ્યાઃ પરિતાપયિતવ્યાઃ અપદ્રાવયિતવ્યાઃ, અત્રાપિ
જાનીત, નાસ્ત્યત્ર દોષઃ ” અનાયંવચનમેતત્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—લોકે=મનુષ્યલોકે યાવન્તઃ કિયન્તઃ=વહવ્વેત્યર્થઃ શ્રમણાઃ=દણ્ડિ-
શાક્યાદયઃ, બ્રાહ્મણાઃ=ઔદેશિકમોજિનઃ પૃથક્=અન્યપ્રકારેણ વિવાદં=ધર્મવિરુદ્ધ-
વચનં વદન્તિ । તદ્વિવાદસ્વરૂપં દર્શયિતુમાહ—‘નદ્ દૃષ્ટસ્’ इत्यारभ्य यावत्
स्वरूप के प्रतिपादन करने में जरा भी भिन्नता नहीं है । केवली और
श્રુતકેवली यथार्थवक्ता होनेसे एक ही अर्थका प्रतिपादन करते हैं, विरुद्ध
अर्थका नहीं ॥ सू० ७ ॥

इसी प्रकार आगे कहे जानेवाले अर्थ में भी एकवाक्यता होती है;
वह दिखलाते हैं—“आवंती केयावंती” इत्यादि ।

इस लोकमें जिनमें भी श्रमण और ब्राह्मण हैं वे सब धर्मके विरुद्ध
पृथक् २ रूपसे प्ररूपणा करते हैं और कहते हैं कि—“जो कुछ भी हमारी

તેને જાણવામા બનેના જ્ઞાનના બરા પણ ભિન્નતા નથી કેવળી અને શ્રુતકેવળી
યથાર્થવક્તા હોવાથી એક જ અર્થનો પ્રતિપાદન કરે છે, વિરુદ્ધ અર્થનો નહિ. ॥સૂ૦૭॥

આ જ પ્રકારે આગળ કહેવામા આવનારા અર્થનાં પણ એકવાક્યતા થાય
છે, તે બતાવે છે—‘આવંતી કેયાવંતી’ इत्यादि

આ લોકમા જેટલા પણ શ્રમણ એટલે દહી શાક્યાદિક અને બ્રાહ્મણ એટલે
ઔદેશિક આહાર લેવાવાળા છે તે બધા, ધર્મની વિરુદ્ધ જુદા જુદા રૂપે પ્રરૂપણા

એવં કો વદતિ, યસ્ય વચનેઽસ્માકં શ્રદ્ધા સમુત્પદેત ? ઇતિ જિજ્ઞાસાયામાહ—
'એગે વયંતિ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એગે વયંતિ અદુવાવિ નાણી, નાણી વયંતિ અદુવાવિ
એગે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—એકે વદન્તિ અથવાઽપિ જ્ઞાનિનઃ । જ્ઞાનિનો વદન્તિ અથવાઽપિ એકે ॥૭॥

ટીકા—એકે=ચતુર્દશપૂર્વધરાઃ શ્રુતકેવલિનો યદ્ વદન્તિ, અથવા જ્ઞાનિનઃ નિરા-
વરણજ્ઞાનવન્તઃ સર્વજ્ઞા અપિ તદેવ વદન્તિ । ઉક્તાર્થમેવ પરાવર્ત્ય કથયતિ—'જ્ઞાનિનઃ'
ઇત્યાદિ । જ્ઞાનિનઃ=નિરાવરણજ્ઞાનવન્તઃ કેવલિનો યદ્ વદન્તિ, અથવા—એકેઽપિ=

શ્રી જમ્બૂસ્વામી શ્રીસુધર્માસ્વામી સે પૂછતે હૈં કિ—હે ભદન્ત ! એસી
પ્રરૂપણા કૌન કરતે હૈં કિ જિનકે વચનોં મેં હમ શ્રદ્ધા કરેં ? શ્રી સુધર્મા
સ્વામી કહતે હૈં—'એગે વયંતિ' ઇત્યાદિ ।

ઇસ પ્રકારકા પ્રતિપાદન ચતુર્દશ પૂર્વ કે પાઠી શ્રુતકેવલી શ્રીગણ-
ધરાદિક દેવ કરતે હૈં, ઔર યહી વાત નિરાવરણજ્ઞાનશાલી શ્રી સર્વજ્ઞ
ભગવાન ભી કહતે હૈં । દોનોં કા ઇસ વિષયમેં એક મત હૈ । ઇસ વિષય
કી આચાર્ય મહારાજ ફિર પુષ્ટિ કરતે હૈં કિ—જિસ અર્થકા પ્રતિપાદન
કેવલી કરતે હૈં ડસીકા પ્રતિપાદન શ્રુતકેવલી મહારાજ કરતે હૈં । કારણ
કિ કેવલી ઔર શ્રુતકેવલી કે કથનમેં રંચમાત્ર ભી ફરક નહીં હોતા હૈ ।
કેવલી ભગવાન કેવલજ્ઞાનવિશિષ્ટ હોતે હૈં, ઔર શ્રુતકેવલી ચૌદહ પૂર્વ
કે પાઠી હોતે હૈં; અતઃ યે દોનોં યથાર્થવક્તા હૈં । યદ્યપિ કેવલી ઔર
શ્રુતકેવલી કે જ્ઞાનમેં પ્રત્યક્ષ ઔર પરોક્ષ કે રૂપસે ભિન્નતા હૈ; પરન્તુ વસ્તુ-

શ્રી જમ્બૂસ્વામી શ્રી સુધર્માસ્વામીને પૂછે છે કે—હે ભદન્ત ! આવી પ્રરૂપણા
કેાણ કરે છે જે તેનાં વચનોમાં અમે શ્રદ્ધા કરીએ ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે—
—'એગે વયંતિ' ઇત્યાદિ.

આ પ્રકારનો પ્રતિપાદન ચતુર્દશ પૂર્વના પાઠી, શ્રુતકેવળી, શ્રીગણધરાદિક
દેવ કરે છે, અને આ વાત નિરાવરણજ્ઞાનશાળી શ્રી સર્વજ્ઞ ભગવાન પણ કહે છે.
આ વિષયમાં બંનેના એક મત છે. આ વિષયની આચાર્ય મહારાજ ફરીથી પુષ્ટિ
કરે છે કે જે અર્થનું પ્રતિપાદન કેવળી કરે છે તેજ અર્થનું પ્રતિપાદન શ્રુતકેવળી
મહારાજ કરે છે, કારણ કે કેવળી અને શ્રુતકેવળીના વચનોમાં જરા પણ ફરક પડતો
નથી. કેવળી ભગવાન કેવળજ્ઞાન-વિશિષ્ટ છે અને શ્રુતકેવળી ચૌદ પૂર્વના પાઠી
છે, માટે આ બંને યથાર્થવક્તા છે જે કે કેવળી અને શ્રુતકેવળીના જ્ઞાનમાં પ્રત્યક્ષ
અને પરોક્ષ રૂપથી ભિન્નતા છે પરન્તુ વસ્તુસ્વરૂપના પ્રતિપાદન કરવામાં અગર

જો કુછ મી પ્રતિપાદન ક્રિયા હૈ વહ નિર્દોષ એવં પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થતા સે રહિત હૈ । અલ્પજ્ઞોં કે વચનોં મેં યહ વાત નહીં પાઈ જાતી, ઉનકે વચન સદોષ ઔર પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક હુઆ કરતે હૈ । યહી વાત ઇસ સૂત્ર મેં ભાવ્યરૂપસે પ્રકટ કા ગઈ હૈ ।

દુનિયા મેં જિતને મી બ્રાહ્મણ યા શ્રમણ, ઢણ્ડી, બુદ્ધમતાનુયાયી આદિ હૈ વે સવ ધર્મતત્ત્વ કે યથાર્થ સ્વરૂપસે અનભિજ્ઞ હૈં । ઉનકી માન્યતા પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક હૈ । હિંસાદિક પાપોં કે સેવન કરનેમેં ઇનકી માન્યતાનુસાર કોઈ દોષ નહીં હૈ ।

વે એસે હી ઇન અકૃત્યોં કી પુષ્ટિ કરતે હુએ કહતે હૈં કિ—જો કુછ હમારે યહાં કહા ગયા હૈ વહ કપોલકલ્પિત—અસત્ય નહીં હૈ; કિંતુ હમને અપને દિવ્યજ્ઞાનસે ઇસકા સાક્ષાત્કાર ક્રિયા હૈ । અથવા—હમારે આચાર્યોં ને અપને દિવ્યજ્ઞાનસે ઇસકા સાક્ષાત્કાર ક્રિયા હૈ । હમને યહ અપને આચાર્યોંદિકોં સે સુના હૈ । યુક્તિયુક્ત હોનેસે હમેં યા હમારે આચાર્યોંકે લિયે યહ માન્ય હૈ । પદાર્થોં કા ભેદ પર્યાયોં દ્વારા વિશ્લેષણ કરને સે હમને ઔર હમારે આચાર્યોં ને યહ ભેદ અચ્છી તરહ જાન મી લિયા હૈ । પ્રત્યેક દિશામેં હમને તથા હમારે આચાર્યોં ને પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોં સે ઇસકા ભલી-પ્રકાર શાન્તચિત્ત હોકર નિર્ણય મી કર લિયા હૈ કિ—સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત

છે તે નિર્દોષ અને પરસ્પર વિરુદ્ધતાથી રહિત છે અલ્પજ્ઞોના વચનોમાં આ વાત દેખવામાં આવતી નથી તેના વચન સદોષ અને પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક થયા કરે છે. આ વાત આ સૂત્રમાં ભાવ્યરૂપથી પ્રગટ કરેલ છે

સ સારમાં બેટલા શ્રમણ, ઢાંડી બુદ્ધમતાનુયાયી આદિ છે અને બ્રાહ્મણ—ઔદેશિક આહરના લેવાવાળા છે ધર્મતત્ત્વના યથાર્થ સ્વરૂપથી અનભિજ્ઞ છે, તેમની માન્યતા પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક છે, હિંસાદિક પાપોનું સેવન કરવામાં તેમની માન્યતા મુજબ કોઈ દોષ નથી તે આવા કૃત્યોની પુષ્ટિ કરતા કહે છે કે—જે કઈ અમોને કહેવામાં આવ્યું છે તે કપોળકલ્પિત—અસત્ય નથી, પણ અમે પોતાના દિવ્યજ્ઞાનથી એનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે. અથવા—અમારા આચાર્યોએ પોતાના દિવ્ય જ્ઞાનથી એનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે. અમોએ આ અમારા આચાર્યોદિકોથી સાંભળ્યું છે. યુક્તિયુક્ત હોવાથી અમોને તેમજ અમારા આચાર્યોને માટે માન્ય છે, પદાર્થોના ભેદ પર્યાયોદ્વારા પૃથક્કરણ કરવાથી અમો અને અમારા આચાર્યોએ આ ભેદો સારી રીતે જાણી લીધેલ છે પ્રત્યેક દિશામાં અમે તથા અમારા આચાર્યોએ પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોથી તેનો સારી રીતે શાન્તચિત્તે નિર્ણય પણ કર્યો છે કે—સમસ્ત પ્રાણી,

‘નાસ્ત્યત્ર દોષઃ’ इति । ‘तद् दृष्टं च नः’ इति, यद्वयं वक्ष्यामरतदस्माकं दृष्टम्—दिव्य-
ज्ञानेन प्रत्यक्षीकृतम् । ‘नः’ इति कर्तुः सम्बन्धसामान्यविवक्षायां षष्ठी । यद्वा
—अस्माकमाचार्यैर्दृष्टम् । श्रुतं च नः=अस्माकं श्रुतं च आचार्यादिभ्यः । मतं च
नः=युक्तियुक्तत्वादस्माकम् अस्मदाचार्याणां वा अभिमतम् । विज्ञातं च नः=पदार्थानां
भेदपर्यायैरस्माकम्, अस्मदाचार्याणां वा विज्ञातम् । एतच्च—ऊर्ध्वम्, अधः, तिर्यक्षु
दिशासु—दशसु दिक्षु इत्यर्थः; सर्वतः=प्रत्यक्षादिभिः सर्वैः प्रमाणैः सर्वप्रकारेण वा
सुप्रतिलेखितं च नः=मनःप्रणिधानादिनाऽस्माकमस्मदाचार्याणां वा सुष्ठु पर्या-
लोचितं च । यद् दृष्टं श्रुतं मतं विज्ञातं सुप्रतिलेखितं, तत्स्वरूपं प्रदर्शयति—“सर्वे
प्राणाः” इत्यादि । सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः सर्वे जीवाः सर्वे सत्त्वा हन्तव्याः, आज्ञाप-
यितव्याः, परिग्रहीतव्याः, परितापयितव्याः, अपद्रावयितव्याः, एतद् वाक्यं प्राग्-

मान्यता है वह हमारी देखी हुई है, हमारी सुनी हुई है, हमारी मानी
हुई है और हमारी जानी हुई है, तथा ऊर्ध्व (उंची) अधः (नीची) और
तिर्यग् (तिरछी), इन समस्त दिशाओं में हमने अथवा हमारे आचा-
र्यों ने अच्छी तरह से इसका पर्यालोचन भी किया है कि—समस्त प्राणी,
समस्त भूत, समस्त जीव, और समस्त सत्त्व मारने योग्य हैं, मारनेके
लिए आज्ञा देने के योग्य हैं, मारनेके लिए ग्रहण करनेके योग्य हैं, परि-
तापित करनेके योग्य हैं और विष-शस्त्रादिक के द्वारा वध करने योग्य
हैं । यह हमारा अभिमत निर्दोष है । ” ये सब अनार्यों के वचन हैं,
आर्यों के नहीं ।

स्पष्टार्थ—परस्परવિરુદ્ધાર્થ કા કથન અલ્પજ્ઞતા કે હોને પર હી હોતા
હૈ । કેવલી ઓર શ્રુતકેવલી પદાર્થો કે જાનકાર હોતે હૈ; અતઃ ડન્હોને

કરે છે અને કહે છે—“જે કાંઈ અમારી માન્યતા છે તે અમારી દેખેલી છે,
અમારી સાંભળેલી છે, અમારી માનેલી છે અને અમારી જાણેલી છે
તથા ઉર્ધ્વ—(ઉંચી) અધઃ (નીચી) અને તિર્યગ્ (તિરછી) આ સમસ્ત
દિશાઓમાં અમે તથા અમારા આચાર્યોએ ઘણી સારી રીતે તેનું પર્યાલોચન
કર્યું છે કે સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સત્ત્વ મારવા
યોગ્ય છે, મારવા માટે આજ્ઞા આપવા યોગ્ય છે, મારવા માટે ગ્રહણ કરવા યોગ્ય
છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય છે, અને વિષ શસ્ત્રાદિક દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે, આ
અમારો અભિપ્રાય નિર્દોષ છે.” આ બધા અનાર્યોના વચન છે, આર્યોના નથી.

સ્પષ્ટાર્થ—પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થનું કથન અલ્પજ્ઞતા હોવાથી થાય છે, કેવળી
અને શ્રુતકેવળી પદાર્થોના જાણકાર છે, માટે તેમણે જે કાંઈ પ્રતિપાદન કર્યું

યે તુ આર્યાસ્તે કિં વદન્તીતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ—‘તત્થ જે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તત્થ જે આરિયા તે એવં વયાસી—“સે દુદ્દિટ્ઠં ચ મે, દુસ્સુયં ચ મે, દુમ્મયં ચ મે, દુવિણ્ણાયં ચ મે, ઉડ્ઢં અહં તિરિયં દિસાસુ સવ્વઓ દુપ્પડિલોહિયં ચ મે; જંઞં તુબ્બે એવં આઙ્ગલ્લહ, એવં ભાસહ, એવં પરુવેહ; એવં પપ્પણવેહ—સવ્વે પાણા ૪, હંતવા ૫, ઇત્થ વિ જાણહ નત્થિત્થ દોસો” અણારિયવચ્છેદનમેયં ॥ સૂ. ૧ ॥

છાયા—તત્ર યે આર્યાસ્ત એવમવાદિપુઃ—તદ્ દુર્દૃષ્ટં ચ વઃ, દુઃશ્રુતં ચ વઃ, દુર્મતં ચ વઃ, દુર્વિજ્ઞાતં ચ વઃ, ઋર્ધ્વમ્ અધઃ તિર્યગ્ દિશાસુ સર્વતઃ દુષ્પતિલેખિતં ચ વઃ, યત્ સ્વલુ યુયમેવમ્ આખ્યાય, એવં ભાષધ્વે, એવં પ્રરૂપયથ, એવં પ્રજ્ઞાપયથ—સર્વે પ્રાણાઃ ૪ હન્તવ્યાઃ ૫ । અત્રાપિ જાનીત, નાસ્ત્યત્ર દોષઃ । ” અનાર્ય-વચ્છેદનમેતન્ ॥ મુ. ૧ ॥

ટીકા—યે દેશતો ભાષાતશ્ચારિત્રતશ્ચાર્યાસ્તે, તત્ર=ઉક્તવિષયે, એવં વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ અવાદિપુઃ=ઉક્તવન્તઃ—‘તદ્ દુર્દૃષ્ટં ચ વઃ’ ઇત્યાદિ । યુષ્માભિર્ય-દુક્તં—‘તદ્ દૃષ્ટં ચ નઃ’ ઇતિ, તદ્ વઃ=યુષ્માકં યુષ્મદાચાર્યાણાં વા દૃષ્ટં દુર્દૃષ્ટમ્=

રીત કી અનાર્યસંજ્ઞા હૈ । યે ક્રૂરકર્મી હોતે હૈં । યહ પ્રાણિયોં કૈ પીડા-કારક સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન ઇન્હોં અનાર્યોં કા પ્રતિપાદિત કિયા હુઆ હૈ । ૮ ।

યદિ યહ પૂર્વોક્ત સમસ્ત ધર્મવિરુદ્ધ કથન અનાર્યોં કા હૈ તો ફિર આર્યોં કી માન્યતા કૈસી હૈ ? ઇસ પ્રકાર શિષ્યકી જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કિયા જાતા હૈ—‘તત્થ જે આરિયા’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ પૂર્વોક્ત કથનમેં આર્યોં કી ઇસ પ્રકાર કી પ્રત્યુત્તરરૂપ માન્યતા હૈ, અર્થાત્—દેશ સે, ભાષા સે ઓર ચારિત્ર સે જો આર્ય હૈં ઉનકા ઇસ પ્રકાર કા કથન હૈ કિ—આપને વ આપકે આચાર્યોંને જો દેખા હૈ, જો

અનાર્ય સંજ્ઞા છે. તે ક્રૂરકર્મી હોય છે. પ્રાણીઓને માટે પીડાકારક આ સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન આ અનાર્યોના જે પ્રતિપાદિત કરેલા છે ॥ સૂ. ૮ ॥

આ પૂર્વોક્ત સમસ્ત ધર્મવિરુદ્ધ કથન અનાર્યોના છે તો પછી આર્યોની માન્યતા કેવી છે ? આ પ્રકારની શિષ્યની શકાનું સમાધાન કરે છે—‘તત્થ જે આરિયા’ ઇત્યાદિ.

આ પૂર્વોક્ત કથનમાં આર્યોની આ પ્રકારની પ્રત્યુત્તરરૂપ માન્યતા છે, અર્થાત્—દેશથી લાપાથી અને ચારિત્રથી જે આર્ય છે તેનું આ પ્રકારનું કથન છે કે—તમેએ તમારા આચાર્યોએ જે દેખ્યું છે, સાલ્યું છે, માન્યું છે અને જે

વ્યાખ્યાતમ્ । અત્ર ધર્મવિષયે-મન્દિરનિર્માણપ્રતિમાપ્રતિષ્ઠાદૌ, અપિશબ્દાદૌદેશિકે, તથા-વિહારાદૌ શ્રાવકં સાર્થીકૃત્ય સ્વસેવાદ્યર્થમનુજ્ઞાપ્ય તત્કૃતાઽઽહારાદિગ્રહણે ચ જાનીત, અત્ર=અસ્મિન્નુક્તવિષયે નાસ્તિ દોષઃ=નાસ્તિ પાપાનુબંધ इति । અનાર્ય-વચનમેતદિતિ । આરાદ્ યાતાઃ=સર્વસાવધવ્યાપારેભ્યો દૂરં ગતા इति-આર્યાઃ, તદ્વિ-પરીતા અનાર્યાઃ-ક્રૂરકર્માણઃ, તેષાં પ્રાણ્યુપમર્દકં વચનમેતત્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ભૂત, સમસ્ત જીવ ઓર સમસ્ત સત્ત્વ મારને યોગ્ય હૈં, મારનેકી આજ્ઞા દેને યોગ્ય હૈં, મારને કે લિયે ગ્રહણ કરને યોગ્ય હૈં, પરિતાપિત કરને યોગ્ય હૈં ઓર વિષશસ્ત્રાદિકોં કે દ્વારા વધ કરને યોગ્ય હૈં । પ્રાણી સત્ત્વ આદિ શબ્દોં કા વ્યુત્પત્તિસિદ્ધ અર્થ પહિલે પ્રકટ કિયા જા ચુકા હૈ ।

इसी प्रकार जिनप्रतिपादित धर्म में भी मंदिरादिक के निर्माण करने की एवं जिनप्रतिमा बनवा कर उसकी प्रतिष्ठा करने की जो प्रथा चालू है वह पद्धति भी सदोष है, उपादेय नहीं है । तथा साधुओं में औद्देशिक आहार ग्रहण करने की एवं विहारादिक करते समय अपनी सेवा करवाने के बहाने से श्रावकों को साथ लेकर उनके द्वारा तैयार किये आहारदिक लेनेकी एक प्रकार की जो प्रथा सी चल पड़ी है, और उसमें जो दोष-पापानुबंध नहीं मानते हैं, प्रत्युत इसका किसी दूसरे रूपसे समर्थन करते हैं; यह सब पूर्वोक्त कथन अनार्यों का ही समझना चाहिये ।

સાવધ વ્યાપાર સે જો દૂર રહતે હૈં ડનકી આર્યસંજ્ઞા ઓર વિપ-

સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સત્ત્વ મારવા યોગ્ય છે, મારવાની આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, મારવા માટે ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય છે, અને વિષશસ્ત્રાદિક દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે. પ્રાણી સત્ત્વ આદિ શબ્દોના વ્યુત્પત્તિસિદ્ધ અર્થ પહેલાં જ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે.

આ પ્રકારે જનપ્રતિપાદિત ધર્મમાં પણ મંદિરાદિક નિર્માણ કરવાનું, તેમજ જનપ્રતિમા બનાવી તેની પ્રતિષ્ઠા કરવાની જે પ્રથા ચાલુ છે તે પદ્ધતિ પણ સદોષ છે, ઉપાદેય નથી. તથા સાધુઓમાં ઔદેશિક આહાર લેવાની તેમજ વિહારાદિક કરતી વખતે પોતાની સેવા કરવાના બહાને શ્રાવકોને સાથે લઈને તેના દ્વારા તૈયાર કરેલા આહાર પ્રાણી લેવાની એક પ્રકારની જે પ્રથા ચાલુ થઈ છે, અને તેમાં જે દોષ-પાપાનુબંધ નથી માનતા, અને દરેક તે બાબતને બીજા રૂપથી સમર્થન કરે છે તે બધા પૂર્વોક્ત કથન અનાર્યોના જ સમજવા જેઠાં.

સાવધ વ્યાપારથી જે દૂર રહે છે તેની આર્ય સંજ્ઞા, અને તેનાથી વિપરીતની

एवं केवलिनो दण्डिशाक्यादीनां वादे हिंसादिदोषसद्भावाद्धर्मविरोधं प्रदर्श्य स्वमतं प्रतिबोधयितुं वदन्ति—‘वयं पुण ’ इत्यादि ।

मूलम्—वयं पुण एवमाइक्खामो, एवं भासामो, एवं पन्न-
वेमो, एवं परूवेमो—सवे पाणा, सवे भूया, सवे जीवा, सवे सत्ता
ण हंतवा, ण अज्जावेयवा, ण परिघेतवा, ण परियावेयवा, ण उद्दे-
यवा । एत्थवि जाणह, णत्थित्थ दोसो । आरियवयणमेयं ॥ सू० १० ॥

स्त्रादिकों के द्वारा वध करने योग्य हैं, इसमें कोई दोष नहीं है । ’ यह जो आपका कथन है, आपका भाषण है, आपकी प्रज्ञापना है, आपकी प्ररूपणा है, तथा इसे जो आपने निर्दोष प्रकट किया है; वे सब अनार्यों के ही वचन हैं और सदोष हैं, कारण कि आपके व आपके आचार्यों के इन वचनों में प्रवृत्ति करनेवाला प्राणी केवल पापका ही उपा-
र्जन करनेवाला होता है, धर्मका नहीं, अतः अनार्यवचन होने से ये त्याज्य ही हैं । इस पूर्वोक्त कथन का तात्पर्य यही है कि यह सब कथन धर्मविरुद्ध होनेसे जीवोंमें असदाचार की प्रवृत्ति का कारण होने से सदोष एवं पापानुबन्ध का हेतु है, अतः अनार्य वचन होने से यह सर्वथा निन्दनीय एवं गर्हणीय है ॥ सू० ९ ॥

केवली भगवान इस प्रकार दृण्डी शाक्यादिकों के कथनमें हिंसा-
दिक दोषों का सद्भाव होनेसे धर्मविरुद्धता प्रदर्शित कर अपना सिद्धान्त प्रकट करनेके लिये कहते हैं—‘ वयं पुण ’ इत्यादि ।

આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, મારવાને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય છે, અને વિપશ્ચાદિકો દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે, આમા કાઈ પણ દોષ નથી ’ આ પ્રકારે જે તમારું કથન છે, તમારું ભાષણ છે, તમારી પ્રજ્ઞાપના છે, તમારી પ્રરૂપણા છે, તથા એને જે તમારે નિર્દોષ પ્રગટ કરેલ છે તે બધા અનાર્યોના જ વચનો છે અને સદોષ છે, કારણ કે તમારા તેમજ તમારા આચાર્યોના આ વચનોમા પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા પ્રાણી કેવળ પાપના જ ઉપાર્જન કરવાવાળા બને છે, ધર્મના નહીં, માટે અનાર્યવચન હોવાથી તે તજવા યોગ્ય છે. આ પૂર્વોક્ત કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે આ બધા કથન ધર્મ—વિરુદ્ધ હોવાથી જીવોને અમદાચારની પ્રવૃત્તિનું કારણ હોવાથી મદોષ અને પાપાનુબંધનો હેતુ છે, માટે અનાર્યવચન હોવાથી તે સર્વથા નિન્દનીય તેમજ ગર્હણીય છે ॥ સૂ. ૯ ॥

કેવળી ભગવાન આ પ્રકારે દંડી શાક્યાદિકોના કથનમા હિંસાદિક દોષોનો સદ્ભાવ હોવાથી ધર્મ—વિરુદ્ધતા પ્રદર્શિત કરી પોતાનો સિદ્ધાન્ત પ્રગટ કરવાને માટે કહે છે—‘ વયં પુણ ’ ઇત્યાદિ.

=દુષ્ટં દૃષ્ટં ન તુ સમ્યગ્ દૃષ્ટમિત્યર્થઃ । એવં યાવત્ “ દુષ્પ્રનિલેખિતં ચ વઃ ”
 इति स्वयमूहनीयम् । पुनरपि त एवार्याः प्रागुक्तश्रमणादिवचनं हिंसादिप्रवर्तक-
 तया सदोषमिति बोधयितुं यदवादिषुस्तदाह—‘ यत् खलु यूयमेवम् ’ इत्यादि ।
 एवं=વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ યૂયં યદ્વચનમાખ્યાથ, એવં યદ્ ભાષધ્વે, એવં
 यत् प्रज्ञापयथ, एवं यत् प्ररूपयथ—सर्वे प्राणाः ४ हन्तव्याः ५ इत्यादि, यावत्-
 नास्त्यत्र दोष इति, तदेतत् सर्वमनार्यवचनं=हिंसादिप्रवर्तकतया पापानुबन्धि
 वचनं युष्मदाचार्याणां वेत्यर्थः ॥ सू० ९ ॥

સુના હૈ, જો માના હૈ, ઓર જો જાના હૈ એવં પ્રત્યેક દિશામેં જિસકી
 प्रत्यक्षादि प्रमाणों के द्वारा अच्छीतरह से छान-बीन की है; वह सर्वथा
 सदोष है—वह आपका व आपके आचार्यों का देखना, सुनना, मानना,
 एवं जानना और पर्यालोचना करना दोषोंसे रिक्त नहीं है, अतः आपने
 व आपके आचार्यों ने जो देखा है वह सुन्दर निर्दोष नहीं देखा, जो
 सुना है वह निर्दोष नहीं सुना, जो माना है वह निर्दोष नहीं माना,
 जो जाना है वह निर्दोष नहीं जाना, एवं जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों द्वारा
 प्रत्येक दिशामें पर्यालोचना की है वह भी निर्दोष नहीं की । यह सब
 उनका व आपका नाममात्रका ही देखना सुनना वगैरह हुआ है, कारण
 कि यह आपका पूर्वोक्त कथन जीवों की हिंसादिक पापों में प्रवृत्ति की
 जागृति करानेवाला है, अतः ‘ समस्त प्राणी, समस्त जीव, समस्त भूत
 और समस्त सत्त्व मारने योग्य हैं, मारने की आज्ञा देनेयोग्य हैं, मारने
 के लिए ग्रहण करने योग्य हैं, परितापित करनेयोग्य हैं ’ और विष-श-

બાણ્યુ છે તેમજ પ્રત્યેક દિશામાં જેની પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોદ્ધારા સારી રીતે શોધ
 કરી છે તે સર્વથા સદોષ છે. તે તમારું તેમજ તમારા આચાર્યોનું દેખવું,
 સાંભળવું, માનવું, તેમજ બાણ્યુ અને પર્યાલોચના કરવી તે દોષોથી મુક્ત નથી,
 માટે તમોએ તેમજ તમારા આચાર્યોએ જે દેખ્યું છે તે સુદર-નિર્દોષ નથી દેખ્યું,
 જે સાંભળ્યું છે નિર્દોષ નથી સાંભળ્યું, જે માન્યું તે નિર્દોષ નથી માન્યું, તેમજ
 જે બાણ્યુ છે તે નિર્દોષ નથી બાણ્યું, અને જે પ્રત્યક્ષાદિપ્રમાણોદ્ધારા પ્રત્યેક
 દિશામાં પર્યાલોચના કરી છે તે પણ નિર્દોષ નથી કરી, આ બધું તેઓનું તેમજ
 તમારું નામમાત્રનું દેખવું સાંભળવું વિગેરે થયું છે, કારણ કે તમારું પૂર્વોક્ત
 કથન જીવોની હિંસાદિક પાપોમાં પ્રવૃત્તિ જાગૃત કરવાવાળું છે, માટે ‘ સમસ્ત
 પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સત્ત્વ મારવા યોગ્ય છે, મારવાની

દોષો નાસ્તિ; હિસાદિપ્રવર્તકત્વાભાવાદિતિ ભાવઃ । એતચ્ચ આર્યવચનમ્=દેશતો
ભાષાતથ્ચારિત્રતથ્ચ યે આર્યાસ્તેષાં વાક્યં, તસ્માન્નાસ્ત્યત્ર દોષ इत्यर्थः ॥ મૂ० ૧૦ ॥

દણ્ડિશાક્યાદીનાં પાપણ્ડિનાં ધર્મવિરુદ્ધવાદપ્રશમનાય કેવલિનો યદ્ વદન્તિ
તદાહ—‘ પુર્વં નિકાય ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—પુર્વં નિકાય સમયં પત્તેયં પત્તેયં પુચ્છિસ્સામો, હં ભો
પવાડયા ! કિં મે સાયં દુઃખં અસાયં? સમિયા પઢિવણ્ણે યાવિ
એવં વૂયા—સવ્વેસિં પાણાણં સવ્વેસિં ભૂયાણં સવ્વેસિં જીવાણં સવ્વેસિં
સત્તાણં અસાયં અપરિનિવાણં મહવ્વમયં દુઃખં-તિવેમિ ॥ સૂ० ૧૧ ॥

છાયા—પૂર્વં નિકાય સમયં પ્રત્યેકં પ્રત્યેકં પ્રક્ષ્યામઃ, હં ભોઃ પ્રાવાદુકાઃ !
કિં યુષ્માકં સાતં દુઃખમ્ અસાતમ્? સમ્યક્પ્રતિપન્નાંશ્ચ અપ્યેવં વૂયાત્—સર્વેષાં
પ્રાણાનાં સર્વેષાં ભૂતાનાં સર્વેષાં જીવાનાં સર્વેષાં સત્ત્વાનાં અસાતમ્ અપરિનિર્વાણં
મહામયં દુઃખમ્—इति ब्रवीमि ॥ મૂ० ૧૧ ॥

ટીકા—ભોઃ પ્રાવાદુકાઃ ! વયં પૂર્વમ્=આદૌ, સમયમ્=આગમમ્ આગમોક્ત-
મર્થ, નિકાય=વ્યવસ્થાપ્ય, યુષ્માન્ પ્રત્યેકં પ્રત્યેકં પ્રક્ષ્યામઃ, દુઃખં યુષ્માકં કિં
સાતં=મનોડનુકૂલં, કિં વા અસાતમ્=મનઃપ્રતિકૂલમ્ ?

દેશસે, ભાષાસે ઓર ચારિત્રસે જો આર્ય હૈં ડનકા કથન હૈ, હસી કારણ
યહ નિર્દોષ હૈ । આર્ય દેશમેં જો ઉત્પન્ન હુગ હૈ વે દેશસે આર્ય, આર્યોંકી
ભાષા જો વોલતે હૈં વે ભાષાસે આર્ય ઓર ચારિત્ર કા જો આરાધન કરતે
હૈં વે ચારિત્રસે આર્ય કહલાતે હૈં ॥ મૂ० ૧૦ ॥

દણ્ડીશાક્યાદિક પાપણ્ડિયોં કે ધર્મવિરુદ્ધ કથનકો શાન્ત કરને કે
લિયે કેવલિયોં કા જો કથન હૈ વહ કહા જાતા હૈ—‘ પુર્વં નિકાય ’ इत्यादि ।

હે વાદિયોં ! હમ સવસે પ્રથમ આગમોક્ત-અર્થતત્ત્વકી વ્યવસ્થા કર
કે આપ લોગોં મેં સે પ્રત્યેક કો યહ પૂછતે હૈં કિ આપ દુઃખ કિસે માનતે

હ્યાં. દેશથી, ભાષાથી અને ચારિત્રથી જે આર્ય છે તેનું આ જ કથન છે, આ
માટે જ આ નિર્દોષ છે આર્ય દેશમાં જે ઉત્પન્ન થયા છે તે દેશથી આર્ય, આર્યોની
ભાષા થોલે છે માટે ભાષાથી આર્ય અને ચારિત્રનું જે આરાધન કરે છે તે
ચારિત્રથી આર્ય કહેવાય છે. ॥ સૂ० ૧૦ ॥

દંડીશાક્યાદિક પાપણ્ડિયોના ધર્મવિરુદ્ધ કથનને શાન્ત કરવા માટે કેવ-
ળીયોનું જે કથન છે તે કહે છે—‘ પુર્વં નિકાય ’ इत्यादि

હે વાદયિવાદ કરવાવાળા ! અમે સૌથી પ્રથમ આગમોક્ત અર્થ-તત્ત્વ-ની વ્યવસ્થા
કરીને તમારે લોકોમાંથી દરેકને પૂછીએ છીએ કે તમે હું-જ કોને માને છે ? જે

छाया—वयं पुनरेवमाख्यामः, एवं भाषामहे, एवं प्रज्ञापयामः, एवं प्ररूपयामः-सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः, सर्वे जीवाः, सर्वे सत्त्वाः, न हन्तव्याः १, न आज्ञापयितव्याः २, न परिग्रहीतव्याः ३, न परितापयितव्याः ४, न अपद्रावयितव्याः ५ । अत्रापि जानीत, नास्त्यत्र दोषः । आर्यवचनमेतत् ॥ सू० १० ॥

टीका—वयं पुनरित्यादि । अत्र पुनः—शब्द उक्तश्रमणादिवैलक्षण्यद्योतनाय । यथा धर्मविरुद्धवादो न भवति, तथा वयम् एवं=वक्ष्यमाणरीत्या आख्यामः, एवं भाषामहे, एवं प्रज्ञापयामः, एवं प्ररूपयामः—सर्वे प्राणाः ४ न हन्तव्याः ५ । एतानि पदानि प्राग् व्याख्यातानि । अत्रापि—अत्रैव=अस्मिन् उक्तविषये—सर्वे प्राणाः ४ न हन्तव्याः ५, इत्यत्रैव जानीत=यूयमवबुध्यध्वम्, अत्र=अस्मिन्—अस्मद्वाक्ये

इस सूत्रमें “ पुनः ” यह शब्द पूर्वोक्त श्रमणादिकों की मान्यतासे केवलियों की मान्यतामें भिन्नप्रकारता का द्योतन करनेवाला है, अर्थात् केवलियों का कथन इस प्रकारका नहीं है, किन्तु ऐसा है कि जिससे उसमें किसी भी प्रकार धर्मसे विरोध नहीं आ सकता है । उनका कहना है कि हम तो इस प्रकार का कथन करते हैं, भाषण करते हैं, प्रज्ञापना करते हैं, प्ररूपणा करते हैं कि—समस्त प्राणी, समस्त जीव, समस्त भूत और समस्त सत्त्व न मारने योग्य हैं, न मारनेकी आज्ञा देने योग्य हैं, न मारनेके लिए ग्रहण करने योग्य हैं, न परितापित करने योग्य हैं और न विषशस्त्रादिकों के द्वारा वध करने योग्य ही हैं । (इन समस्त पदों का विवरण पहिले लिखा जा चुका है) यह हमारा कथन हिंसादिक पापों में जीवों की प्रवृत्ति करानेवाला नहीं होनेसे प्रमाणरूप निर्दोष है । यह आप अच्छी तरहसे समझ लें । यही

आ सूत्रमां ‘ पुनः ’ आ शब्द पूर्वोक्त श्रमणादिकोनी मान्यताथी केवणी-योनी मान्यतामां भिन्न-प्रकारता प्रकाशित करे छे. अर्थात्—केवणीओनुं कथन आ प्रकारनुं नथी पणु आम छे जेनाथी केछ पणु प्रकारे धर्मथी विरोध आवी शकतो नथी. ओमनुं कहेवुं छे के—अमे तो आ प्रकारनुं कथन करीओ छीओ, भाषणु करीओ छीओ, प्रज्ञापना करीओ छीओ अने प्ररूपणा करीओ छीओ के समस्त प्राणी, समस्त भूत, समस्त जिव अने समस्त सत्त्व मारवा योग्य नथी, मारवानी आज्ञा देवा योग्य नथी, मारवाने माटे ग्रहणु करवा योग्य नथी, परितापित करवा योग्य नथी, तेमज विष अने शस्त्रादिकोथी वध करवाने योग्य नथी. (आ समस्त पदार्थोनुं विवेचन पढेलां करवामां आव्युं छे) आ अमाइं कथन हिसादिक पापोमां जेवानी प्रवृत्ति करवावाणुं नहि होवथी प्रमाणरूप निर्दोष छे. ओ तमो सारी रीते समज

યોરમિત્યર્થઃ । તથા-મહાભયમ્=નિશ્ચિલપ્રાણિપ્રાણોદ્વેજકત્વાન્મહાભયરૂપમ્ । इत्येवं
 ब्रूयात्=‘प्रत्येकं प्रत्येकं गणयित्वा, सर्वे प्राणिनो न हन्तव्या नाज्ञापयितव्या न परि-
 ग्रहीतव्या न परितापयितव्याः, नापद्रावयितव्याः, यतो हिंसादिकरणे दोषः
 प्रसज्येत’ इत्येवं वचनं वदेदित्यर्थः । यस्तु हिंसादिकरणे दोषो नास्तीति वदति,
 तदनार्यवचनम्-इति प्रत्यक्षानुमानोपमादिप्रमाणैः सिद्धमिति भावः । इति ब्रवीमीति
 पूर्ववद् व्याख्याऽवगन्तव्या ॥ सू० ११ ॥

॥ चतुर्थाध्ययनस्य द्वितीय उद्देशः समाप्तः ॥ ४-२ ॥

પહુંચાનેવાલી હોનેસે મહાભયરૂપ પ્રતીત હોતી હૈ, અતઃ સમસ્ત પ્રાણી,
 સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ ઔર સમસ્ત સત્ત્વ ન મારને યોગ્ય હૈ, ન મારને
 કી આજ્ઞા દેને યોગ્ય હૈ, ન મારનેકે લિષ્ઠ ગ્રહણ કરનેયોગ્ય હૈ ન પરિ-
 તાપિત કરને યોગ્ય હૈ ઔર ન વધ કરને યોગ્ય હૈ । અજ્ઞાતા દેનેસે
 હિંસાદિક દોષોં કા ભાગી હોના પડતા હૈ । જો હિંસાદિક પાપોં કે કરને મેં
 દોષ નહીં માનતે હૈં વે અનાર્ય હૈં ઔર “ હિંસાદિક પાપોં કે કરને મેં
 દોષ નહીં હૈ ” ઁનકે યે વચન અનાર્યવચન હી હૈં । શ્રી સુધર્માસ્વામી
 કહતે હૈ—હે જમ્બૂ ! જૈસા મૈને ભગવાન કે સમીપ સુના હૈ વૈસા હી
 કહતા હૂં ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ चौथे अध्ययनका दूसरा उद्देश समाप्त ॥ ४-२ ॥

તેમના પ્રાણુને દુઃખ પહોચાડવાવાળી હોવાથી મહાભયરૂપ પ્રતીત થાય છે, માટે
 સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સત્ત્વ નહિ મારવાયોગ્ય
 છે, નહિ મારવાની આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, નહિ મારવાને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે,
 નહિ પરિતાપિત કરવાને યોગ્ય છે, નહિ વધ કરવા યોગ્ય છે અજ્ઞાતા દેવાથી
 હિંસાદિક દોષોનું ભાગી બનવું પડે છે. જે હિંસાદિક પાપો કરવામાં દોષ નથી
 માનતા તે અનાર્ય છે, અને “ હિંસાદિક પાપો કરવામાં દોષ નથી ” એમ જે
 તેનું વચન છે આ અનાર્યવચન છે સુધર્માસ્વામી કહે છે—હે જમ્બૂ ! જેવું મે
 ભગવાન સમીપે સાંભળ્યું છે તેવું કહું છું ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

येथा अध्ययननो भीजे उद्देश समाप्त ॥ ४-२ ॥

एवं पृष्ठाः सन्तो यदि ते 'दुःखं सातम्' इति ब्रूयुस्तदा तेषां प्रत्यक्ष-
मलोकविरोध आपद्येत, यदि तु दुःखमसातम्' इति वदेयुस्तदा सम्यक्-
प्रतिपन्नान्=यथार्थमर्थं ज्ञातवतः प्रावादुकान् स्वतः स्तम्भितवाक्प्रचारान्, अप्येवम्-
अपिशब्दः संभावनार्थद्योतकः; एवं संभाव्यते-दुःखं भवतामेव नासातरूपं, किंतु
सर्वेषामपि प्राणिनां सर्वेषामपि भूतानां सर्वेषामपि जीवानां सर्वेषामपि सत्त्वानां
दुःखम्-असातं=मनःप्रतिकूलम्-अप्रियमित्यर्थः । तथा-अपरिनिर्वाणम्=अशान्तं
है ? जो शाता-मनके अनुकूल है वह दुःख है ? या जो अशाता-मनके
प्रतिकूल है वह दुःख है ?

मनके अनुकूल शाताको यदि दुःख माना जावे तो इसमें प्रत्यक्ष
तथा आगम प्रमाणसे और लोकसे भी विरोध आता है, कारण कि
मन अपने अनुकूल पदार्थके सेवनमें सुख मानता है, यह प्रत्यक्षसिद्ध
बात है । आगममें भी 'मनोऽनुकूलं सुखं' यह लिखा हुआ है, अर्थात्
मनोऽनुकूल पदार्थों की प्राप्ति शातावेदनीय कर्मके उदयसे ही जीवोंको
प्राप्त होती है, ऐसा शास्त्रका वचन है । लोक भी मनोऽनुकूल पदार्थके
सेवनमें सुख है-ऐसा ही कहते और मानते हैं ।

मनके प्रतिकूल अशाता को यदि दुःख माना जावे तो जो यथार्थवक्ता-
समझदार प्रवादी हैं और जो इस विषय में केवल मौन हैं उनसे हम
यही कहेंगे कि जिस प्रकार अशाता तुम्हें दुःखरूप प्रतीत होती है उसी
तरहसे समस्त प्राणियों को, समस्त भूतों को, समस्त जीवों को और
समस्त सत्त्वों को यह अशाता महाघोर और उनके प्राणों को कष्ट

शाता-મનને અનુકૂળ છે તે દુઃખ છે ? અગર જે અશાતા-મનને પ્રતિકૂળ છે તે
દુઃખ છે ?

મનને અનુકૂળ-શાતાને કદાચ દુઃખ માનવામાં આવે તો તેમાં પ્રત્યક્ષ તથા
આગમપ્રમાણથી અને લોકથી પણ વિરોધ આવે છે, કારણ કે મન પોતાના અનુ-
કૂળ પદાર્થના સેવનમાં સુખ માને છે એ પ્રત્યક્ષ-સિદ્ધ વાત છે. આગમમાં પણ
'મનોઽનુકૂલં સુખં' એમ લખેલ છે, અર્થાત્-મનના અનુકૂળ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ
જીવોને શાતાવેદનીય કર્મના ઉદયથી જ થાય છે, એવું શાસ્ત્રનું વચન છે, લોક પણ
'મનને અનુકૂલ પદાર્થના સેવનમાં સુખ છે' એવું જ કહે છે તેમ જ માને છે. મનને
પ્રતિકૂળ અશાતાને કદાચ દુઃખ માનવામાં આવે તો જે યથાર્થવક્તા-સમજદાર
પ્રવાદી છે અને જે આ વિષયમાં કેવળ મૌન છે તેને પણ અમે એ જ કહીશું કે
—જે પ્રકારે અશાતા તમોને દુઃખરૂપ પ્રતીત થાય છે તે માફક સમસ્ત પ્રાણિયો
સમસ્ત ભૂતો; સમસ્ત જીવો અને સમસ્ત સત્ત્વોને આ અશાતા મહાઘોર અને

કસ્ય ગુણમાહ—‘સ સર્વલોકે’ ઇત્યાદિ । યોડનાર્ય મત્વા ધર્મવહિષ્ક્રાન્તલોકં નાનુસરતિ, સ સર્વલોકે=સમસ્તે મનુષ્યલોકે, યે કેચિદ્ વિદ્વાંસસ્તતોડપ્યધિકો વિજ્ઞઃ=વિદ્વાનિત્યર્થઃ ॥ મુ૦ ૧ ॥

નહીં જાનતે હૈ એવં હિંસાદિક પાપ કાર્યોં મેં જીવોં કો પ્રવર્તિત કરાને કે લિયે મિથ્યા ઉપદેશ કરતે હૈ, ડનકા અનુસરણ નહીં કરના ચાહિયે । જિસ પ્રકાર ઘાસકે તૃણ કે ડપર સમજ્ઞદાર જીવકે હૃદયમેં ન રાગ હોતા હૈ ઓર ન દ્વેષ હી હોતા હૈઃ કિન્તુ સદા માધ્યસ્થભાવ રહતા હૈ । ઇસી પ્રકાર જો આર્હત ધર્મ કે વિપરીત ચલનેવાલે હૈ ઓર ડસસે અપની વૃત્તિ કો વિન્દ્ર બનાયે હુએ હૈ ડનકે પ્રતિ ભી ભગવાન્ કા યહી આદેશ હૈ કિ હે મહાનુભાવોં ! તુમ ભી રાગ દ્વેષ ન કરકે ડનકે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ હી રક્ષો; કારણ કિ ઇસ ઉપેક્ષાભાવસે આત્મામેં શાંતિ કી માત્રા અધિક રૂપમેં જાગૃત હોતી રહતી હૈ । નવીન કર્મોં કા બંધ, જો ડસકે પ્રતિ રાગદ્વેષ કરને સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ રુક જાતા હૈ, અતઃ ધર્મવહિર્ભૂત મનુષ્યોં કો અનાર્ય સમજ્ઞ કર જો ડનકા અનુસરણ નહીં કરતા હૈ વહ મનુષ્ય ઇસ લોકમેં જિનને ભી વિદ્વાન્ હૈ ડન સવસે અધિક વિજ્ઞ-વિદ્વાન્ હૈ । યહાં પર જો ડસ વ્યક્તિ કો સમસ્ત વિદ્વાનોં સે અધિક વિદ્વાન્ બનલાયા ગયા હૈ, વહ તત્ત્વોં કા સમ્યક્ પ્રકારસે જાનનેવાલે હોનેસે હી સમજ્ઞના ચાહિયે, કારણ કિ વહ સમકિતી જીવ અપને પ્રયોજનભૂત તત્ત્વોં સે હી મતલબ

હિંસાદિક પાપ કાર્યોંમા ડવોની પ્રવૃત્તિ કરાવવામા મિથ્યા ઉપદેશ આપે છે તેનુ અનુસરણ નહિ કરવુ બેઠ્ઠે છે. જેમ ઘાસના તણખલા ઉપર સમજ્ઞદાર ડવના હૃદયમા રાગ તેમજ દ્વેષ હોતો નથી પણ હમેશા મધ્યસ્થ ભાવ રહે છે, તે પ્રકારે જે આર્હત ધર્મથી વિપરીત ચાલવાવાળા છે, અને તેનાથી જેની વૃત્તિ વિરૂદ્ધ બનેલી છે તેના પ્રત્યે પણ ભગવાનનો એ જ આદેશ છે કે-હે દેવાનુપ્રિય ! તમે રાગ દ્વેષ ન કરતા તે પ્રત્યે ઉપેક્ષા ભાવજ રાખો, કારણ કે આ ઉપેક્ષાભાવથી આત્મામા શાંતિની માત્રા અધિક રૂપમા બંધત થાય છે. નવીન કર્મોંના બંધ, જે તે પ્રત્યે રાગ દ્વેષ કરવાથી ઉત્પન્ન થાય છે તે રોકાઈ જાય છે, તેથી ધર્મવિમુખ મનુષ્યોને અનાર્ય સમજીને જે તેનું અનુસરણ નથી કરતા તે મનુષ્ય આ લોકમા જેટલા વિદ્વાનો છે તે બધા કરતા પણ અધિક વિદ્વાન્ છે, પણ આ ઠેકાણે તે વ્યક્તિ જેને બધા વિદ્વાનો કરતા વધારે જાણવાવાળો બતાવેલ છે તે તત્ત્વોના સમ્યક્ પ્રકારથી જાણવાવાળા હોવાથી જ નમજ્ઞવું બેઠ્ઠે, કારણ કે તે સમકિતી ડવ પાતાના પ્રયોજન-ભૂત તત્ત્વોથી જ મતલબ રાખે છે એનાથી વિમુખ તત્ત્વોમા

અથ ચતુર્થાધ્યયનસ્ય તૃતીય ઉદ્દેશઃ ।

इहानन्तरद्वितीयोद्देशके दण्डिशाक्यादिपापण्डिमतनिराकरणेन सम्यक्तत्वं स्थिरीकृतम् । सत्यपि सम्यक्तत्वे निरवद्यतपश्चरणमन्तरेण कर्मक्षयो न भवतीत्यतः स्तत्र प्रवर्तयितुं तृतीयोद्देशकं कथयति । तत्र प्रथमं धर्मबहिष्क्रान्तस्यानार्यतया तदुपेक्षा करणीयेति बोधयितुमाह—‘उवेहि णं’ इत्यादि ।

मूलम्—उवेहि णं बहिया य लोगं, से सबलोगंमि जे केइ विण्णू ॥ सू० १ ॥

छाया—उपेक्षस्व खलु बहिश्च लोकम्, स सर्वलोके ये केचिद् विज्ञः ॥ सू० १ ॥

टीका—बहिः=धर्माद् बहिष्क्रान्तं लोकं खलु=निश्चयेन उपेक्षस्व=मा अनुसर । दण्डिशाक्यादिपापण्डिमतं मा अनुमन्यस्वेत्यर्थः । धर्मबहिष्क्रान्तलोकोपेक्ष-

ચૌથે અધ્યયનકા ત્રીસરા ઉદ્દેશ

इस पीछेके द्वितीय उद्देश में दण्डी शाक्यादिक पाण्डिण्डियोंकी मान्यताका निराकरण करके सम्यक्तत्त्वको सुस्थिर किया; परन्तु इनने मात्र से कर्मक्षय नहीं हो सकता, कर्मक्षय तो निरतिचार तपश्चरण से ही होता है, इसलिये उस तपमें जीवोंकी प्रवृत्ति कराने के लिये इस तृतीय उद्देशका कथन प्रारंभ किया जाता है । इसमें सर्वप्रथम धर्मसे बहिर्भूत जो व्यक्ति हैं वे अनार्य हैं और उनके साथ रागद्वेष न करते हुए उपेक्षाभाव ही रखना चाहिये, इस बातका परिज्ञान कराने के लिये कहते हैं—‘उवेहि णं’ इत्यादि ।

धर्मसे बहिर्भूत व्यक्तियों की सदा उपेक्षा ही करनी चाहिए । अर्थात्—दण्डी शाक्यादिक जो धर्मसे बहिर्भूत हैं, धर्मका यथार्थ स्वरूप

ચોથા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ.

પાછળનાં બીજા ઉદ્દેશમાં દંડી-શાક્યાદિક પાંખડીઓની માન્યતાનું નિરાકરણ કરીને સમ્યક્ત્વને સુસ્થિર કર્યું, પણ આટલાથી જ કર્મક્ષય થઈ શકે નહિ. કર્મક્ષય તો નિરતિચાર તપશ્ચરણથી જ થાય છે, માટે તે તપમાં જીવોની પ્રવૃત્તિ કરવાને માટે આ ત્રીજા ઉદ્દેશના કથનનો પ્રારંભ કરવામાં આવે છે. આમાં સર્વપ્રથમ ધર્મથી બહિર્ભૂત જે વ્યક્તિ છે તે અનાર્ય છે અને તેની સાથે રાગ દ્વેષ ન કરતાં ઉપેક્ષા ભાવ જ રાખવો જોઈએ, આ વાતનું પરિજ્ઞાન કરવાને માટે કહે છે—‘ઉવેહિ ણં’ ઇત્યાદિ.

ધર્મથી બહિર્ભૂત વ્યક્તિઓની સદા ઉપેક્ષા જ રાખવી જોઈએ. અર્થાત્—દંડી શાક્યાદિક જે ધર્મથી બહિર્ભૂત છે, ધર્મનું યથાર્થ સ્વરૂપ નથી જાણતા તેમજ

પલિતસાદૃશ્યાત્પલિતમિત્યુચ્યતે; ત્યજન્તિ, આત્મનો માલિન્યકરણાદ્રજોરૂપમપ્ટવિધં કર્માપનયન્તિ તે વિદ્વાંસ इति भावः । ये निक्षिप्तदण्डाः सन्तोऽष्टविधं कर्म क्षपयन्ति, एवंभूताः के जीवविशेषाः सन्तीति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘नरा’इत्यादि।

નત્તન અષ્ટવિધ કર્મોં કો, જો વસ્ત્રાદિકોં કો ધૂલકે સમાન આત્મા કો મલિન કર રહે હેં; અપનેસે દૂર કર દેતા હે, ઓર વહી વિદ્વાન્ મી હે। શિષ્યને જો યહ પ્રશ્ન કિયા થા કિ ‘જિનધર્મસે બહિર્ભૂત વ્યક્તિયોં મેં ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરનેવાલા વ્યક્તિ ઉત્તમ વિદ્વાન્ કયોં બન જાતા હે?’ ઉસકા હી યહ સમાધાન હે—‘વેત્તીતિ વિદ્વાન્’—અર્થાત્ જિસકે મીતર સ્વપર કા વિવેક જાગૃત હો રહા હે વહી વિદ્વાન્ હે। ઇસ પ્રકારકી વિદ્વત્તા પ્રાપ્ત કરનેકે લિયે સર્વપ્રથમ ઇસ વાતકા જ્ઞાનદૃષ્ટિસે અવશ્ય વિચાર કરના ચાહિયે કિ યે કર્મ જો અનાદિ કાલસે મેરી આત્મા કે સાથ ક્ષીર-નીરકી તરહ સંબંધિત હો રહે હે, ઇસકા કારણ ક્યા હે?, સૂક્ષ્મ વિચાર કરને પર જ્ઞાત હોગા કિ ઇન્કે સાથ અમી તક સંબંધ હોનેકા કારણ મન, વચન ઓર કાયાકી સાવચ પ્રવૃત્તિ હી હે, અતઃ જૈસે ૨ યહ પ્રવૃત્તિ રુકેગી વૈસે ૨ નવીન કર્મોં કા આસ્રવ રુકેગા ઓર સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા હોગી। મન ઓર કાયાકી સાવચ પ્રવૃત્તિ કો રોકનેકે લિયે તપ સંયમ કે આરાધન કરનેકી પૂર્ણ આવશ્યકતા શાસ્ત્રકારોં ને બતલાઈ હે। તપ સંયમ કે આરાધન કરનેસે સાવચ વ્યાપારોં કા જિતને ૨ અંશ મેં અભાવ હોગા ઉતને ૨

કર્મોને-ધૂળ જેમ વસ્ત્રાદિકોને મલિન કરે છે તેમ આત્માને જેઓ મલિન કરી રહ્યા છે તેઓને-પોતાથી દૂર કરી નાખે છે, અને તે જ વિદ્વાન પણ છે શિષ્યે જે પ્રશ્ન કરેલો હતો કે ‘જનધર્મથી વિમુખ વ્યક્તિઓમાં ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરવાવાળી વ્યક્તિને ઉત્તમ વિદ્વાન કેમ માનવામાં આવે છે?’ તેનું આ સમાધાન છે—‘વેત્તીતિ વિદ્વાન્’—અર્થાત્ જેની અદર સ્વ-પરનો વિવેક જાગૃત છે તે જ વિદ્વાન છે આ પ્રકારની વિદ્વત્તા પ્રાપ્ત કરવા માટે સર્વ પ્રથમ આ વાતનું જ્ઞાનદૃષ્ટિથી વિચાર અવશ્ય કરવો જોઈએ કે આ કર્મો જે અનાદિ કાળથી મારા આત્માની સાથે દ્વધ-પાણીની માફક એક થઈ રહ્યા છે તેનું કારણ શું છે? સૂક્ષ્મ વિચાર કરવાથી જ્ઞાત થશે કે એની સાથે હજી સુધી સંબંધ રહેવાનું કારણ મન, વચન અને કાયાની માવચ પ્રવૃત્તિ જ છે, માટે જેમ જેમ આ પ્રવૃત્તિ રોકાશે તેમ તેમ નવા કર્મોનો આસ્રવ અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા થશે. મન, વચન અને કાયાની સાવચ પ્રવૃત્તિ રોકવાને માટે તપ સંયમ આરાધન કરવાની આવશ્યકતા શાસ્ત્રકારોએ બતાવી છે તપ સંયમની આરાધના કરવાથી સાવચ વ્યાપારોનો જેટલા જેટલા અંશે અભાવ થશે, તેટલા તેટલા અંશે આત્મામાં

નનુ તે વિદ્વાંસ. કથં વિજ્ઞેયાઃ ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘अणुवीइ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—અણુવીઈ પાસ, નિશ્ચિત્તદંડા જે કેઈ સત્તા પલિયં ચયંતિ, નરા મુચચ્ચા ધમ્મવિઉ-ત્તિ અંજૂ, આરંભજં દુઃખમિણં-તિ ણચ્ચા, એવમાહુ સંમત્તદંસિણો ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—અનુવિચિન્ત્ય પશ્ય, નિશ્ચિત્તદંડાઃ યે કેડપિ સત્ત્વાઃ પલિતં ત્યજન્તિ, નરા મૃતાર્ચા ધર્મવિદઃ ઋજવઃ આરમ્ભજં દુઃખમ્ ઇદમિતિ જ્ઞાત્વા એવમાહુઃ સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—અનુવિચિન્ત્ય=પુનઃ પુનઃ પર્યાલોચ્ય, પશ્ય=જ્ઞાનદૃષ્ટ્યા વિલોક્ય, યે કેડપિ સત્ત્વાઃ=જીવાઃ, નિશ્ચિત્તદંડાઃ=પરિત્યક્તમનોવાકાયમયસાવધવ્યાપારરૂપ-દંડાઃ સન્તઃ, પલિતં=પુરાતનં કર્મેત્યર્થઃ, અનાદિકાલવસ્થાયિત્વેન ચિરન્તનં કર્માપિ રચતા હૈ, इनसे बहिर्भूत तत्त्वोंमें उसकी सदा उपेक्षा ही बनी रहती है । जहां अपने में स्वपरका विवेक जागृत हो रहा है वही दुनियां में विद्वानों से भी अधिक विद्वान् है । अनेक शास्त्रों का अध्येता हो कर भी जो इस ज्ञानसे शून्य है वह विद्वान् होकर भी सिद्धान्तज्ञों की दृष्टि में मूर्ख ही है ॥ सू० १ ॥

જિનધર્મ સે બહિર્ભૂત વ્યક્તિયોં કે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરને-વાલા મનુષ્ય વિદ્વાન્ ક્યોં ચતલાયા ગયા હૈ? इस प्रकार शिष्य की जिज्ञासा होने पर कहते हैं—‘अणुवीइ’ इत्यादि ।

જો મનુષ્ય બારંબાર વિચાર કરકે તથા જ્ઞાનદૃષ્ટિ સે દેખકર મન, વચન ઔર કાયકે સાવધવ્યાપારરૂપ દંડોં સે રહિત હો જાતા હૈ વહી અનાદિકાલસે આત્માકે સાથ એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ હોને સે આવદ્દ ચિર-

તેની સદા ઉપેક્ષા જ રહે છે. જે જીવમાં સ્વ-પરનો વિવેક જાગ્રત રહે છે તે જ સંસારમાં સૌ વિદ્વાનો કરતાં પણ અધિક વિદ્વાન છે. અનેક શાસ્ત્રોનો જાણકાર હોવા છતાં પણ જે જ્ઞાનથી શૂન્ય છે તે વિદ્વાન હોવા છતાં પણ સિદ્ધાંતોની દૃષ્ટિમાં મૂર્ખ જ છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

જિનધર્મથી વિમુખ વ્યક્તિયોં પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરવાવાળા મનુષ્યને વિદ્વાન કેમ માનવામાં આવેલ છે? આ પ્રકારની શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી કહે છે—‘અણુવીઈ’ ઇત્યાદિ.

જે મનુષ્ય વારંવાર વિચાર કરીને તથા જ્ઞાનદૃષ્ટિથી જોઈ મન, વચન અને કાયના સાવધવ્યાપારરૂપ દંડોથી રહિત થઈ જાય છે તે જ અનાદિ કાળથી એક જ ક્ષેત્રમાં રહેવાવાળા હોવાથી આત્માની સાથે બંધાયેલા પુરાતન અષ્ટવિધ

સંસ્કારરાહિત્યાદ્ મૃતેવ મૃતા-અર્ચા શરીરં યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ, શુશ્રૂષાવિભૂષાદિવર્જિતશરીરા इत्यर्थः । यद्वा-अर्चा अर्चिः, तत्सादृश्यात् क्रोधोऽप्यर्चा, स च कषायमात्रोपलक्षणम् । तथा च-मृता नष्टा अर्चा कषायरूपा येषां ते मृतार्चाः, कषायरहिता इत्यर्थः । किंच-धर्मविदः=श्रुतचारित्रधर्मज्ञानवन्तः,

“મૃતેવ મૃતા અર્ચા-શરીરં યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ” અર્થાત્-શારીરિક-શુશ્રૂષાવિભૂષારૂપસંસ્કારરહિત હોનેસે મૃતકે સમાન હૈ શરીર જિનકા એસે અપને શરીરમેં નિસ્પૃહવૃત્તિ રાખનેવાલે મનુષ્યશિરોમણિ હી ઇન કર્મો પર વિજય લાભ કરતે હૈં । અથવા “અર્ચા-અર્ચિઃ” અર્થ હૈ જ્વાલા । જિસ પ્રકાર અગ્નિકી જ્વાલા લાલ હોતી હૈં ઉસી પ્રકાર ક્રોધ બી લાલ હોતા હૈં; અતઃ જ્વાલાકે સાદૃશ્ય સે ક્રોધ કો બી અર્ચા કહા હૈં । ક્રોધ યદ્ અન્ય કષાયોંકા ઉપલક્ષણ હૈં, ઇસસે માન, માયા ઓર લોભ કા બી ગ્રહણ હો જાતા હૈં । જિનકી આત્માસે કષાયરૂપ અર્ચા નષ્ટ હો ચુકી હૈં, અર્થાત્ જો કષાયરહિત હો ચુકે હૈં વે મનુષ્ય હી અષ્ટવિધ કર્મોં કે નષ્ટ કરનેમેં વિશિષ્ટશક્તિશાલી હોતે હૈં । સંસારમેં વહુત સે એસે બી વહુત સે મનુષ્ય હોતે હૈં કિં જિન્હેં શારીરિક શૃંગાર કરને કા જીવન મેં અવસર તક હી પ્રાપ્ત નહીં હોતા હૈં, ભીલ આદિ એસે હી મનુષ્યોં મેં હૈં; અતઃ ઇનકી બી યદ્ અવસ્થા કર્મક્ષપણ કે યોગ્ય માની જાની ચાહિયે ? ઇસ પ્રકારકી આશંકાકો દૂર કરનેકે લિયે હી “મૃતાર્ચા”

“મૃતેવ મૃતા અર્ચા=શરીરં યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ” અર્થાત્ શારીરિક શુશ્રૂષા વિભૂષારૂપ સંસ્કાર રહિત હોવાથી મૃતકસદૃશ જેનું શરીર છે, આવા પોતાના શરીરમાં નિસ્પૃહ વૃત્તિ રાખવાવાળા મનુષ્યશિરોમણિ જ આ કર્મો ઉપર વિન્ય લાલ કરે છે, અથવા “અર્ચા-અર્ચિઃ”નો અર્થ જ્વાળા છે જે પ્રકારે અગ્નિની જ્વાળા લાલ હોય છે તે પ્રકારે ક્રોધ પણ લાલ છે, માટે જ્વાળાની સદૃશતાથી ક્રોધને પણ અર્ચા કહે છે, ક્રોધ-શબ્દ બીજા કષાયોનું ઉપલક્ષણ છે આમા માન, માયા અને લોભનો પણ સમાવેશ થાય છે. જેના આત્માથી કષાયરૂપી અર્ચાનો નાશ થયેલ છે, અર્થાત્-જે કષાયરહિત છે તે જ મનુષ્ય આઠ પ્રકારના કર્મોનો ક્ષય કરવામા વિશિષ્ટશક્તિશાળી છે. સંસારમાં એવા પણ ઘણા માણસો છે કે જેને શારીરિક શૃંગાર કરવાનો અવસર ઉપનના કોઈ વખત પણ પ્રાપ્ત થતો નથી, ભીલ આદિ એવા મનુષ્યો છે, માટે તેની પણ આ અવસ્થા કર્મક્ષપણુયોગ્ય માનવી લેઈએ ? આ પ્રકારની શંકાને દૂર કરવાને માટે જ “મૃતાર્ચા” શબ્દનો અર્થ “કષાયરહિત”

नराः=मनुष्याः, तेषामेव निरवशेषकर्मक्षपणसामर्थ्यमस्तीति भावः । तत्रापि साधारणतया न सर्वे मनुष्या अशेषकर्मक्षपणसामर्थ्यवन्तः—इति बोधयितुं तद्विशेषणमाह—‘मृतार्चा’ इति ।

अंशमें आत्मा में निर्मलता जागृत होगी । इस निर्मलता के आते ही स्वतः शब्दादि विषयों में जीवको उपेक्षाभावकी जागृति हो जाती है । मनुष्य को तप संयम ही उत्तम विद्वत्ता के स्थान पर लाकर रखने-वाला होता है, इसीलिये सिद्धान्तकारों ने ऐसे मनुष्यको विद्वानों में श्रेष्ठ माना है ।

यहां पर ‘पलित’ शब्द का अर्थ ‘पुरातनकर्म’ है । अनादिकालिक होने के कारण पुरातन कर्म भी पलित=श्वेतकेश सदृश हैं, अतः उन्हें यहां पलित कहा गया है । इसका अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार मनुष्य पलित-सफेद केश को शीघ्र उखाड़ डालता है उसी प्रकार मन, वचन और कायकी सावध प्रवृत्ति को त्याग करनेवाला मनुष्य भी उन पुरातन कर्मों को शीघ्र नष्ट कर देता है । यह काम सामान्य जीवों से नहीं हो सकता इसलिये इस कार्य के करनेवाले विशेष जीव ही होते हैं, इसी बातको प्रकट करने के लिये सूत्रकार इस सूत्रमें “नराः” इस पदका विन्यास करते हैं; क्यों कि समस्त कर्मों के विनष्ट करने की साक्षात् शक्ति मनुष्य में ही रही हुई है । इनमें भी सभी मनुष्य समस्त कर्मों के क्षपण करने में समर्थ नहीं होते हैं; यही बात “मृतार्चा” इस पदसे प्रकट की गई है ।

निर्मलता जागृत થશે. આ નિર્મળતા આવવાથી શબ્દાદિવિષયોમાં જીવને ઉપેક્ષા ભાવની જાગૃતિ થાય છે. મનુષ્યને તપ સંયમ જ વિદ્વત્તાના સ્થાન પર લાવીને રાખવાવાળાં છે, માટે સિદ્ધાંતકારોએ આવા મનુષ્યને વિદ્વાનોમાં ઉત્તમ માનેલ છે.

આ ઠેકાણે ‘પલિત’ શબ્દનો અર્થ ‘પુરાતનકર્મ’ છે. અનાદિકાલિક હોવાના કારણે પુરાતન કર્મો પણ પલિત-શ્વેતકેશસદૃશ છે, માટે તેઓને અહીં પલિત કહ્યા છે. આનો અભિપ્રાય આ છે કે—જે પ્રકારે મનુષ્ય પલિત-સફેદ વાળને શીઘ્ર ઉખાડી નાખે છે તે પ્રકારે મન વચન કાયાની સાવધ પ્રવૃત્તિનો ત્યાગ કરવાવાળા મનુષ્ય પણ આ પુરાણા કર્મોને શીઘ્ર નષ્ટ કરી દે છે. આ કામ સામાન્ય જીવથી થઈ શકતું નથી; માટે આ કાર્યને કરવાવાળા કોઈક જ જીવ હોય છે. આ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં “નરાઃ” આ પદ રાખ્યું છે; કેમ કે બધા કર્મોનો નાશ કરવાની સાક્ષાત્ શક્તિ મનુષ્યમાં જ રહેલી છે. આમાં પણ બધા મનુષ્યો સકળ કર્મોનો ક્ષય કરવામાં સમર્થ થતા નથી. આ વાત ‘મૃતાર્ચા’ આ શબ્દથી પ્રગટ કરવામાં આવી છે.

આરમ્ભજમ્=કૃષિવાણિજ્યાદિસકલસાવચ્ચવ્યાપાર આરમ્ભઃ, તસ્માજ્જાતમ્, ઇતિ જ્ઞાત્વા=‘આરમ્ભે કૃતે સતિ પ્રાણિનાં દુઃખમુત્પદ્યતે’ ઇતિ વિદિત્વા તતો નિવૃત્તા નરાઃ સર્વં કર્મ ક્ષપયન્તીત્યર્થઃ । અસ્મિન્ વિષયે શ્રદ્ધાનં વિધેયમિતિ વોધયિતુમાહ—એવમાહુઃ સમ્યક્ત્વદર્શિન ઇતિ । સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ=સમ્યક્ત્વં પ્રાપ્તાઃ કેવલિ-પ્રમૃતયઃ, અથવા સમત્વદર્શિનઃ=રાગદ્વેષાભાવેન એકેન્દ્રિયાદિસર્વજીવે તુલ્યભાવેના-વલોકિનઃ એવમ્=ઉક્તરીત્યા આહુઃ=વદન્તિ । તસ્માદત્ર શ્રદ્ધાનં વિધેયમિતિભાવઃ । ૨ ।

કુતઃ સમ્યક્ત્વદર્શિનો વદન્તીતિ જિજ્ઞાસાયમાહ—‘તે સઽવ્વે’ ઇત્યાદિ ।

કૃષિ-ચેતી, વાણિજ્ય-વ્યાપાર આદિ સાવચ્ચ કાર્યોંકા નામ આરંભ હૈ । ઇસ આરમ્ભ સે હી સમસ્ત જીવોં કો દુઃખ ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર ઇસ દુઃખકા સમસ્ત હી જીવ અપને ૨ સ્વાનુભવરૂપ પ્રત્યક્ષ સે સાક્ષાત્ અનુભવ કરતે હૈ, એસા સમજ્ઞ કર જો મનુષ્ય ડસ સાવચ્ચ વ્યાપારસે નિવૃત્ત હો જાતે હૈ વે હી સમસ્ત કર્મોં કા ક્ષય કરતે હૈ । ઇસ પ્રકાર કે ઇસ કથનમેં મન્ય પ્રાણિયોં કો શ્રદ્ધા કરના ચાહિયે । ઇસ પ્રકારકી સૂચના કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ-ઇસ પ્રકાર કા યહ કથન સમકિત કો પ્રાપ્ત હુએ કેવલી આદિ મહાપુરુષોંને, અથવા જો સમદર્શી હૈ, સમસ્ત જીવોંકો રાગ દ્વેષ કે અભાવ હોનેસે અપને તુલ્ય સમજ્ઞતે હૈ-ડન્હોંને કિયા હૈ । ઇસ વિષયમેં નિશ્ચય્ઙ્ક હોકર દૃઢ શ્રદ્ધા હી કરની ચાહિયે ॥ સૂ. ૨ ॥

સમ્યક્ત્વદર્શી કેવલી આદિ એસા ક્યોં કહતે હૈ ? ઇસ પ્રકારકી શિ-ષ્યકી જિજ્ઞાસા શાંત કરનેકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘તે સઽવ્વે’ ઇત્યાદિ ।

ચેતી, વ્યાપાર આદિ સાવચ્ચ કાર્યોંનુ નામ આરભ છે આ આરભથી જ સર્વં જીવોંને દુઃખ ઉત્પન્ન થાય છે, અને આ દુઃખને સર્વં જીવ પોતપોતાના સ્વાનુભવરૂપ પ્રત્યક્ષથી સાક્ષાત્ અનુભવ કરે છે એવું સમજીને જે મનુષ્ય આવા સાવચ્ચ વ્યાપારથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે તે જ સર્વં કર્મોંનો ક્ષય કરે છે આવા પ્રકારના આ કથનમાં ભવ્ય પ્રાણિઓએ શ્રદ્ધા રાખવી જોઈએ આ પ્રકારની સૂચના કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે—આવા પ્રકારનું આ કથન સમકિતને પ્રાપ્ત થયેલા કેવળી આદિ મહાપુરુષોંએ, અથવા સમદર્શી છે, રાગદ્વેષ રહિત હોવાથી સર્વં જીવોંને પોતાના તુલ્ય માને છે, તેઓએ કયું છે, આ વિષયમાં નિશ્ચય થઈને દૃઢ શ્રદ્ધા જ રાખવી જોઈએ ॥ સૂ. ૨ ॥

સમ્યક્ત્વદર્શી કેવળી આદિ આ પ્રકારે કેમ કહે છે ? આ પ્રકારની શિષ્યની જિજ્ઞાસાને શાંત કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘તે સઽવ્વે’ ઇત્યાદિ.

અત એવ ઋજવઃ=સરલહૃદયાઃ, અમાયિન इत्यर्थः । મનુષ્યાઃ કિં કૃત્વા એવં ભવન્તી-
તી જિજ્ઞાસાયામાહ—‘ આરમ્ભજમ્ ’ इत्यादि । इदं सर्वप्राणिप्रत्यक्षं दुःखम्

શબ્દકા અર્થ “ કષાયરહિત ” કિયા હૈ । યદ્યપિ અસાતા-અશુભ કર્મ કે
તીવ્ર ઉદય હોને સે વે ઉસ પ્રકારકી સામગ્રી સે રહિત હૈં ફિર મી વે ઉસ
જાતકી કષાય સે રહિત નહીં હૈં, અતઃ શારીરિક સંસ્કાર સે રહિત હોકર
મી જો કષાયોંસે રહિત હોતે હૈં વે હી કર્મક્ષપણ કરનેમૈં શક્તિ-સમ્પન્ન
હોતે હૈં । સચ્ચે શારીરિક સંસ્કાર સે વિહીન વે હોંગે જો ઇસ શરીર કો
અપવિત્ર એવં મલ, રુધિર, રાધ (પીવ) કી થૈલી માન કર નિસ્સાર સમ-
જોંગે । શારીરિક સંસ્કાર કરના યહ એક જાતકી કષાય હૈ । ઇસ પ્રકાર
કે મનોભાવ કી જાગૃતિ આત્મામૈં વિના શ્રુતચારિત્ર ધર્મ કે જ્ઞાન હુએ
નહીં હો સકતી, અતઃ ‘ ધર્મવિદઃ ’ યહ વિશેષણ ઇસી વાતકી પુષ્ટિ
કરતા હૈ । ધર્મકે યથાર્થ સ્વરૂપ કો જાન કર ઉસ પર શ્રદ્ધા રાખનેવાલા
મનુષ્ય હી ધાર્મિક નિયમોં કો અપની આત્મામૈં ઉતારનેકી ચેષ્ટા યા
ઉત્સાહ સે સમ્પન્ન હોતા હૈ । ધાર્મિક જ્ઞાન મી ઇસીકી આત્મામૈં અપના
પ્રભાવ પ્રકટ કરતા હૈ ઓર વહી ‘ અમાયાવી ’ સરલ હૃદયવાલા હોતા
હૈ । માયાવી-દુરંગી ચાલ ચલને વાલે-મનુષ્ય ધર્મકા સેવન કરતે હુએ મી
ઉસસે જૈસા ફલ પ્રાપ્ત ઉન્હેં હોના યાહિયે વૈસે ફલસે સદા વંચિત હી
રહતે હૈં । યહી વાત સૂત્રકારને “ ઋજવઃ ” ઇસ પદસે સ્પષ્ટ કી હૈ ।

કયોં છે. જો કે અસાતા-અશુભ કર્મ-નો તીવ્ર ઉદય હોવાથી તે તેવા પ્રકારની
સામગ્રીથી રહિત છે તો પણ તે તેવા પ્રકારના કષાયથી રહિત નથી, માટે શારી-
રિક સંસ્કારથી રહિત થઈને પણ જે કષાયોથી રહિત થાય છે તે જ કર્મક્ષપણ
કરવામાં શક્તિસંપન્ન થાય છે. સાચા શારીરિક સંસ્કારથી દૂર તેજ થશે જે આ
શરીરને અપવિત્ર અને મળ, લોહી, રક્તની થેલી માનીને નિસ્સાર સમજશે.
શારીરિક સંસ્કાર કરવો તે પણ એક જાતનો કષાય છે. આ પ્રકારના મનોભાવની
જાગૃતિ આત્મામાં શ્રુતચારિત્ર ધર્મનું જ્ઞાન થયા વગર થતી નથી માટે ‘ ધર્મ-
વિદઃ ’ આ વિશેષણ આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે. ધર્મના યથાર્થ સ્વરૂપને જાણીને
તેના ઉપર શ્રદ્ધા રાખવાવાળા મનુષ્ય જ ધાર્મિક નિયમોને પોતાના આત્મામાં
ઉતારવાની ચેષ્ટા અને ઉત્સાહ રાખે છે. ધાર્મિક જ્ઞાન પણ તેના જ આત્મામાં
પોતાનો પ્રભાવ પાડે છે, અને તે જ ‘ અમાયાવી ’ સરળ હૃદયવાળો હોય છે.
માયાવી-માયા-કપટથી ચાલવાવાળો-મનુષ્ય ભલે તે ધર્મનું સેવન કરતો હોય
તો પણ જેવું જ તેને મળવું જોઈએ તેના જીવનથી તે સદા વંચિત જ રહે છે.
આ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ સૂત્રકારે “ ઋજવઃ ” આ પદથી કર્યું છે.

જપ્રત્યાખ્યાનભેદાદ્ દ્વિવિધામ્, ઉદાહરન્તિ=કથયન્તિ । જપરિજ્ઞયા અષ્ટવિધં કર્મ સર્વથા પરિજ્ઞાય, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા તત્ સર્વં પરિહરેદિતિ વદન્તીત્યર્થઃ ॥૩॥

યદિ સર્વજ્ઞાઃ કર્મપરિજ્ઞામુદાહરન્તિ, તસ્માત્ કિં કર્તવ્યમ્ ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘ इह आणाकंखी ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—इह आणाकंखी पंडिए अणिहे, एगमप्पाणं संपेहाए धुणे सरीरं ॥ सू० ४ ॥

છાયા—इह आणाकाङ्क्षी पण्डितः अस्मिन्, एकमात्मानं संपेक्ष्य धुनीयात् शरीरम् ॥ सू० ४ ॥

પ્રકૃતિયાં ૮ હૈં ઔર ઉત્તરપ્રકૃતિયાં ૧૪૮ હૈં । સૂત્રમેં ‘ દુઃસ્વ ’ શબ્દ સે ઉસકે કારણભૂત કર્મોંકા કારણ મેં કાર્ય કે ઉપચાર સે ગ્રહણ કિયા હૈં । કેવલી ભગવાન્ વે હૈં જો સમસ્ત જીવોં કો ધાર્મિક મર્યાદા કે અનુસાર હી હિતકા ઉપદેશ દેતે હૈં ઔર સ્વયં જો અષ્ટ કર્મોં મેં સે ચાર ઘાતિયા કર્મોં કો નષ્ટ કર ચુકે હૈં, અવશિષ્ટ ચાર અઘાતિયા કર્મોંકા નાશ કરને મેં જો લગેહુણ હૈં, શારીરિક ઔર માનસિક આધિ વ્યાધિ જિનમેં નહીં હૈં, ઔર જો યહી પ્રવચન કરતે હૈં કિ જો દુઃસ્વસે છૂટને કી અભિલાષા રાખતે હૈં, ઉનકા કર્તવ્ય હૈં કિ વે પહિલે દુઃસ્વકે કારણભૂત કર્મોં કે જ્ઞાના વન ઔર ફિર જ્ઞાનપૂર્વક ચારિત્રકે આરાધન સે ઉનકા સમૂલ વિચ્છેદ કરે ॥ સૂ० ૩ ॥

यदि सर्वज्ञ भगवान् कर्मपरिज्ञा का कथन करते हैं तो इससे भव्य जीवों का क्या कर्तव्य है ? ऐसी शिष्य की जिज्ञासा होने पर कहते हैं—‘ इह आणाकंखी ’ इत्यादि ।

પ્રકૃતિઓ ૧૪૮ છે, સૂત્રમા ‘ દુઃસ્વ ’ શબ્દથી તેના કારણભૂત કર્મોંનુ કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી ગ્રહણ કરેલ છે કેવળી ભગવાન તે છેને સર્વ જીવોંને ધાર્મિક મર્યાદા અનુસાર જ હિતનો ઉપદેશ આપે છે, અને પોતે આઠ કર્મમાંથી ચાર ઘાતિયા કર્મોંનો નાશ કરી ચૂક્યા છે, અવશિષ્ટ રહેલા ચાર અઘાતિયા કર્મોંનો નાશ કરવામા જે લાગેલ છે, શારીરિક અને માનસિક આધિ-વ્યાધિ જેઓમા નથી, અને જેઓનુ પ્રવચન આ પ્રકારનુ છે કે-જે દુઃખથી છૂટવાની અભિલાષા રાખે છે તેમનુ કર્તવ્ય એ છે કે-પહેલા દુઃખના કારણભૂત કર્મોંને જાણે અને પછી જ્ઞાનપૂર્વક ચારિત્રનું આરાધન કરવાથી તેનો સમૂળો નાશ કરે ॥ સૂ० ૩ ॥

यदि सर्वज्ञ भगवान् कर्म परिज्ञानु कथन करे छे तो तेथी भव्य जिवोनु शु कर्तव्य छे ? ओवी शिष्यनी जिज्ञासा थवाथी कडे छे—‘ इह आणाकंखी ’ इत्यादि.

मूलम्—ते सवे पावाइया दुखस्स कुसला परिणमुदाहरन्ति
इय कम्म परिणाय सवसो ॥ सू० ३ ॥

छाया—ते सर्वे प्रावादिकाः दुःखस्य कुशलाः परिज्ञामुदाहरन्ति इति कर्म
परिज्ञाय सर्वशः ॥ सू० ३ ॥

टीका—यतस्ते सर्वे सर्वविदः, प्रावादिकाः=प्र=प्रकर्षेण आ=धर्ममर्यादापुर-
स्सरं वदितुं शीलं येषां ते प्रावादिनस्त एव प्रावादिकाः—यथावस्थितार्थं प्रतिबो-
धयितुं वाग्मिन इत्यर्थः । दुःखस्य=शारीरमानसदुःखकारणस्य, कारणे कार्योपचा-
रात् अष्टविधकर्मण इति यावत्, अपनोदने कुशलाः=प्रवीणाः सन्तः, सर्वशः=
सर्वप्रकारैः मूलोत्तरप्रकृतिप्रकारैरित्यर्थः, कर्म परिज्ञाय इति=अनया रीत्या परिज्ञां

वे समस्त सर्वज्ञ केवली भगवान् कि जिनका स्वभाव धार्मिक-
मर्यादा के अनुसार ही बोलने-उपदेश देनेका है, अर्थात्—जो वाग्मी-
यथावस्थित पदार्थका प्रतिबोधन करनेमें पटु हैं और जो शारीरिक और
मानसिक दुःखके कारणभूत अष्टविध कर्म को नष्ट करने में कुशल हैं,
मूल और उत्तर प्रकृति के भेदसे विविधरूप (८ और १४८) कर्म को
जान कर ज्ञपरिज्ञा और प्रत्याख्यानपरिज्ञाके भेदसे दो प्रकार की परिज्ञाका
प्रतिपादन करते हैं, अर्थात्—‘ज्ञ’ परिज्ञा से अष्ट प्रकार के कर्म को जान कर
‘प्रत्याख्यान’ परिज्ञा से उस समस्त कर्मका परिहार करे, ऐसा कहते हैं ।

परिज्ञा दो प्रकारकी है (१) ज्ञपरिज्ञा, (२) प्रत्याख्यानपरिज्ञा । ज्ञाता
ज्ञपरिज्ञासे कर्मों के स्वरूपादिक को जानकर प्रत्याख्यानपरिज्ञासे—ज्ञान-
पूर्वक त्यागसे उनके नाश करने में उद्यमशील होता है । कर्मों की मूल

ते બધા સર્વજ્ઞ કેવળી ભગવાન, જેઓનો સ્વભાવ ધાર્મિક મર્યાદા અનુસાર જ
બોલવાનો—ઉપદેશ દેવાનો—છે, અર્થાત્ જે વાગ્મી યથાવસ્થિત પદાર્થનું પ્રતિ-
બોધન કરવામાં કુશળ છે, અને જે શારીરિક અને માનસિક દુઃખના કારણભૂત
આઠ પ્રકારના કર્મોનો નાશ કરવામાં કુશળ છે, મૂળ અને ઉત્તર પ્રકૃતિના ભેદથી
વિવિધરૂપ (આઠ કર્મ અને એકસો અડતાલીસ પ્રકૃતિરૂપ કર્મ) કર્મને જાણીને જ-
પરિજ્ઞા અને પ્રત્યાખ્યાન—પરિજ્ઞાના ભેદથી બે પ્રકારની પરિજ્ઞાનું પ્રતિપાદન કરે છે.
અર્થાત્—‘જ્ઞ’ પરિજ્ઞાથી આઠપ્રકારના કર્મને જાણીને ‘પ્રત્યાખ્યાન’ પરિજ્ઞાથી તે
સમસ્ત કર્મનો નાશ કરે, એમ કહે છે.

પરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે. (૧) જ્ઞ-પરિજ્ઞા, (૨) પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા, જ્ઞાતા
જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી કર્મોના સ્વરૂપાદિક જાણીને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી જ્ઞાનપૂર્વક ત્યાગથી
તેનો નાશ કરવામાં ઉદ્યમશીલ રહે છે. કર્મોની મૂળ પ્રકૃતિઓ ૮ છે, અને ઉત્તર

ઉપાદેય કયા છે ઓર હેય કયા છે ? ઇસ પ્રકાર કા પરિપક્વ-પુષ્ટ વિવેક જવ આત્મામેં સ્થિરતા ધારણ કર લેગા તવ બાહ્ય પદાર્થોં મેં જો રાગ ઓર દ્વેષકી ભાવના જાગૃત હો જાયા કરતી છે વહ રુક જાયગી, યહાં તક કિ જો શરીર, આત્માકા અત્યન્ત નિકટ સમ્બન્ધી છે ડસકે પ્રતિ ભી 'મમેદં' ભાવકા સર્વથા હાસ હો જાવેગા ઓર 'તપ-સંયમ હી ઉપાદેય વસ્તુ છે' ઇસકા ભાન અચ્છી તરહ સે હોને લેગેગા ।

તાત્પર્ય ઇસકા યહી છે કિ કર્મ કે સ્વરૂપકો જાન કર મનુષ્ય સાંસારિક પદાર્થોં કી ઓર સે ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરે । ઇસસે મોહ કી ન્યૂનતા હોતે ૨ સમકિત કી ઉત્પત્તિ ઓર પુષ્ટિ હોગી । ઇસકી પુષ્ટિ હોને પર આર્હત પ્રવચનકે આરાધન કી ઓર હી ધ્યાન આકૃષ્ટ હોગા । ઇસસે હેયોપાદેય કા વિવેક જાગૃત હોકર આત્માકો પરપદાર્થોં કી ઓર રાગદ્વેષ કી પરિણતિ સે રહિત કરેગા; તવ જ્ઞાત હોગા કિ યહ આત્મા સ્વજન-સ્ત્રી-પુત્ર-મિત્રાદિકોં સે ઓર શરીર સે સર્વથા ભિન્ન-જુદા છે, ડનકે સાથ ઇસકા કિસીભી પ્રકાર કા સમ્બન્ધ નહીં છે । ડનકે સુધાર-વિગાડ મેં ઇસકા યત્કિંચિત્ ભી સુધાર-વિગાડ નહીં છે । ઇસ પ્રકાર કી ધારણા પરિપુષ્ટ હોને પર જ્ઞાની આત્મા જૈસે કચ્ચુક (કાંચલી) કો સર્પ નિર્મમત્વભાવસે છોડ દેતા છે ડસી પ્રકાર ઇસ શરીર મેં 'મમત્વ' ભાવ

અને તેથી તમે સનજી શકશે કે અમારૂં ઉપાદેય શું છે અને હેય શું છે ? આ પ્રકારનો પરિપક્વ-પુષ્ટ વિવેક જ્યારે આત્મામાં સ્થિર થશે ત્યારે જ બહારના પદાર્થોમાં જે રાગ દ્વેષની ભાવના જાગૃત થાય છે તે રોકાઈ જશે, ત્યાં સુધી કે શરીર આત્માનું અત્યંત નિકટ સંબંધી છે તેના પ્રતિ પણ 'મમેદં' ભાવનો- 'આ મારું છે' એવા ભાવનો સર્વથા નાશ થઈ જશે, અને 'તપ સયમ જ ઉપાદેય વસ્તુ છે' તેનું ભાન સારી રીતે થઈ જશે

આનો અભિપ્રાય એ છે-મનુષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે સાંસારિક પદાર્થો પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરે આથી મોહની અવ્યથા થતા થતા સમકિતની ઉત્પત્તિ અને પુષ્ટિ થશે. સમકિતની પુષ્ટિ થતા જ આર્હત પ્રવચનનું આરાધન કરવાની તરફ ધ્યાન દોરશે, અને તેથી હેયોપાદેયનો વિવેક જાગૃત થઈ આત્માને પરપદાર્થોની તરફ રાગદ્વેષપરિણુતિરહિત કરશે, ત્યારે ભાન થશે કે આ આત્મા સ્વજન સ્ત્રી પુત્ર મિત્રાદિકોથી અને શરીરથી સર્વથા જુદો છે, તેની સાથે આત્માનો કોઈ પ્રકારનો સંબંધ નથી તેમના સુધરવા બગડવામાં તેનો એટલે આત્માનો જરા પણ સુધારો-બગારો નથી આ પ્રકારની ધારણા પાકી થવાથી સાથ જોમ કાચળીને મમતા વગર છોડી દે છે તે રીતે જ તે જ્ઞાની

टीका—इह=अस्मिन् मनुष्यलोके, आज्ञां=सर्वज्ञनिदेशं काङ्क्षितं शीलमस्येति आज्ञाकाङ्क्षी सम्यक्त्वस्य दृढीकरणेन पुनः पुनरार्हतागमश्रवणमननसमाराधनशीलः, अत एव पण्डितः=हेयोपादेयविवेकनिपुणः, अत एव अस्निहः=स्निह्यतीति स्निहः रागवान्, न स्निह इत्यस्निहः, स्निह इत्युपलक्षणं, तेन रागद्वेषरहित इत्यर्थः, आत्मानम् एकं=स्वजनधनशरीरादिभ्यः पृथग्भूतं संप्रेक्ष्य=विविच्य-पर्यालोच्य शरीरं=स्वदेहं धुनीयात्=निर्ममत्वभावेन निराद्रियेत, कञ्चुके सर्प इव शरीरे ममत्वं परित्यजेदित्यर्थः। अयं भावः—स्वजनधनशरीरादिषु क्षणभङ्गगुणत्वादिदोषदर्शनेन रागापगमो भवति। तदनन्तरमयमात्मा—एक एवास्तीति पर्यालोचयति। यथा—

इस मनुष्यलोकमें सर्वज्ञ भगवानकी एकमात्र आज्ञाके समाराधन करनेके स्वभाववाला हेयोपादेय के विवेक करनेमें निपुणमतिवाला और रागद्वेषसे विरक्तबुद्धिवाला भव्य जीव अपनी आत्माकी पर्यालोचना करके शरीर को निर्ममत्व-भावसे रखे।

‘शरीर में जितना अधिक ममत्व होगा उतना ही अधिक इस संसार के चक्रमें फँसेगा। ‘ममेदं’ भावसे शरीरकी सेवा ही आत्मकल्याण से विमुख होनेकी निशानी है, अतः सूत्रकार यहां पर इसी बातका उल्लेख करते हुए उपदेश देते हैं कि—हे भव्य ! तुम सर्वप्रथम समकित को दृढ करो। इसकी दृढता होने पर तुम्हें अपने कल्याण का मार्ग अपने आप ज्ञात होने लगेगा। उस समय तुम्हारा आत्मस्वभाव शब्दादि विषयों की ओर न झुक कर प्रभुप्रतिपादित आगमके श्रवण, मनन और उसके समाराधन की ओर ही झुकेगा। उससे तुम समझ सकोगे कि हमारा

आ मनुष्यलोकमां सर्वज्ञ भगवाननी ओक मात्र आज्ञानुं आराधन करवानां स्वभाववाणा, हेयोपादेयना विवेक करवानां निपुण मतिवाणा अने राग द्वेषथी विरक्त बुद्धिवाणा भव्य जीव पोताना आत्मानी पर्यालोचयना करीने शरीरने निर्ममत्व भावथी राखे.

शरीरमां जेटलो अधिक ममत्व हुशे तेटलो न अधिक आ संसारना चक्रमां इसाशे. ‘ममेदं’ भावथी—‘आ भाईं छे’—ओवा भावथी शरीरनी सेवा न आत्म-कल्याणथी विमुख थवानी निशानी छे, भाटे सूत्रकार आ ठेकाण्ण आ वातने उल्लेख करीने उपदेश आपे छे के—हे भव्य ! तमो पडेलो समकितने दृढ करे समकितनी दृढता होवाथी तमने तमारा कल्याणनो मार्ग आपमेणे जाणुवैमां आवशे. ओवे वण्णते तमारो आत्मस्वभाव शब्दादि विषयेनी तरङ्ग विधारे प्रभुप्रतिपादित आगमनुं श्रवण मनन अने तेना आराधननी तरङ्ग विधारे;

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥

अपरं च—“ एकः प्रकुरुते कर्म, भुनक्त्येकश्च तत्फलम् ।

जायते म्रियते चैक,-एको याति भवान्तरम् ” ॥ ४ ॥

अन्यच्च —“ सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भावीति यो मम ” ॥ ५ ॥

किंच — “ न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिषुमवशं रुजन्ति वश्याः

तदतरुमाप इवाऽऽपगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

तस्मात् स्वजनधनशरीरादिषु ममत्वं परिवर्जयेदिति ॥ सू० ४ ॥

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥ इति ।

तथा “ एकः प्रकुरुते कर्म, भुनक्त्येकश्च तत्फलम् ।

जायते म्रियते चैक,-एको याति भवान्तरम् ॥ ४ ॥

सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याऽहं, नासौ भावीति यो मम ॥ ५ ॥

न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिषुमवशं रुजन्ति वश्याः,

तदतरुमाप इवापगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे” ॥ ३ ॥ इति ।

तथा—“ एकः प्रकुरुते कर्म, भुनक्त्येकश्च तत्फलम् ।

जायते म्रियते चैक,-एको याति भवान्तरम् ॥ ४ ॥

सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भावीति यो मम ॥ ५ ॥

न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिषुमवशं रुजन्ति वश्याः,

तदतरुमाप इवाऽऽपगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

“ કાયઃ સંનિહિતાપાયઃ, સંપદઃ પદમાપદામ્ ।
સમાગમાઃ સાપગમાઃ, સર્વમુત્પાદિ મંડુરમ્ ॥ ૧ ॥
નાયમત્યન્તસંવાસઃ, કસ્યચિત્ કેનચિત્ સહ ।
અપિ સ્વેન શરીરેણ, કિમુતાન્યૈઃ પૃથગ્જનૈઃ ॥ ૨ ॥

કા પરિત્યાગ કરતા હૈ । વહ જાનતા હૈ કિ ઇન સ્વજન ધન ઓર શરી-
રાદિકોં કે સાથ જો ઇસ જ્ઞાતા દ્રષ્ટા આત્મા કા સમ્બન્ધ હુઆ હૈ વહ
કેવલ સંયોગમાત્ર હૈ । સંયોગસમ્બન્ધવાલોં કા વિયોગ અવશ્યંભાવી
હૈ । જ્ઞાન ઓર આત્મા કા જિસ પ્રકાર તાદાત્મ્યસમ્બન્ધ હૈ ઉસ પ્રકાર
કા સમ્બન્ધ ઇસકે સાથ ઇનકા નહીં હૈ, અતઃ ઇનકા યહ સંયોગ ક્ષણમં-
ગુર હૈ, ઓર આત્માકા સ્વભાવ શાશ્વત હૈ, ફિર ક્ષણિક પદાર્થોંકે સાથ
રાગ કરનેસે લાભ હી કયા હૈ ? । ઇસ પ્રકારકે વિવેકપૂર્ણ સદ્વિચારોં સે
જબ ઉનકે પ્રતિ ઉસકી દૃષ્ટિ રાગરહિત હોતી હૈ ઓર આત્મસ્વભાવકી
ઓર વિશેષ ઉન્મુખ હોતી હૈ તબ વહ વિચારતા હૈ કિ-મૈં એકાકી હૂં,
સંસારમેં મેરા કોઈ નહીં હૈ ઓર મૈં ભી કિસીકા નહીં હૂં । કહા ભી હૈ-

“ કાયઃ સંનિહિતાપાયઃ, સંપદઃ પદમાપદામ્ ।
સમાગમાઃ સાપગમાઃ, સર્વમુત્પાદિ મંડુરમ્ ॥ ૧ ॥
નાયમત્યન્તસંવાસઃ, કસ્યચિત્ કેનચિત્સહ ।
અપિ સ્વેન શરીરેણ, કિમુતાન્યૈઃ પૃથગ્જનૈઃ ॥ ૨ ॥

આત્મા આ શરીરના મમત્વભાવનો ત્યાગ કરે છે. તે જાની જાણે છે કે-આ
સ્વજન ધન અને શરીરાદિકોની સાથે જે આ જ્ઞાતા દ્રષ્ટા આત્માનો સંબંધ
થયેલ છે તે કેવળ સંયોગમાત્ર છે. સંયોગ-સંબંધવાળાઓનો વિયોગ અવશ્ય-
ભાવી છે. જ્ઞાન અને આત્માનો જે પ્રકારે તાદાત્મ્ય સંબંધ છે તે પ્રકારનો સંબંધ
તેની સાથે તેનો નથી, માટે આ તેનો સંયોગ ક્ષણભંગુર છે, અને આત્માનો
સ્વભાવ શાશ્વત છે, પછી ક્ષણિક પદાર્થોની સાથે રાગ કરવાથી લાભ જ શું છે ?,
આવા પ્રકારના વિવેકપૂર્ણ સદ્વિચારોથી જ્યારે તેના પ્રતિ તેની દૃષ્ટિ રાગ-રહિત
થાય છે, અને આત્મસ્વભાવની તરફ વિશેષ ઉન્મુખ થાય છે ત્યારે આ રીતે
વિચારે છે કે-હું એકલો જ છું, સંસારમાં માફક કોઈ નથી, અને હું પણ કોઈનો
નથી. કહું પણ છે—

“ કાયઃ સંનિહિતાપાયઃ, સંપદઃ પદમાપદામ્ ।
સમાગમાઃ સાપગમાઃ, સર્વમુત્પાદિ મંડુરમ્ ॥ ૧ ॥
નાયમત્યન્તસંવાસઃ, કસ્યચિત્કેનચિત્સહ ।
અપિ સ્વેન શરીરેણ, કિમુતાન્યૈઃ પૃથગ્જનૈઃ ॥ ૨ ॥

કિંચ—કસેહિ અપ્પાણં ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કસેહિ અપ્પાણં જરેહિ અપ્પાણં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—કૃશં કુરુ આત્માનં જારય આત્માનમ્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—આત્માનં=શરીરમ્, ઇહ આત્મશબ્દઃ શરીરવાચી ગૃહ્યતે; કૃશં કુરુ=તપશ્ચરણાદિના શરીરશોષણે પ્રવૃત્તો ભવેદિત્યર્થઃ । તથા—આત્માનં=શરીરં જારય=જીર્ણં કુરુ, તપશ્ચરણેન તથા કુરુ યથા જરાજીર્ણમિવ ભવેદિત્યર્થઃ । શુશ્રૂષાવિભૂષાપરિહારેણ શરીરસ્ય નિઃસારતામાપાદય, સ્વદેહં નિર્વલં રૂક્ષં ચ કુરુષ્વેતિ ભાવઃ ॥સૂ૦ ૫॥

નહીં; જો અમી સાથમેં રહ રહે હૈં વે મી સદા સાથ રહનેકે નહીં । જિસ પ્રકાર નદિયોં કે તટ પર खडे हुए વૃક્ષોંકો उनका जल उखाड़ कर फेक देता है उसी प्रकार मेरे ये स्वजनादिक मुझे हर तरह से आत्मस्वरूप से उखाड़ देनेकी कोशिश में लगे हुए हैं ॥ ६ ॥

इसलिये मनुष्यको चाहिये कि इन संयोगी पदार्थों से ममत्वरहित होकर आत्मकल्याणके मार्गका पथिक बने ॥ सू० ४ ॥

भगवान् अपनी दिव्यदेशनामें भव्य जीवोंको समझाते हुए कहते हैं—
' कसेहि अप्पाणं ' इत्यादि ।

हे भव्य ! तू इस शरीरका तपस्या आदि शुभ साधनों के द्वारा शोषण कर, तथा तपस्या भी ऐसी कर कि जिससे यह शरीर जरा-वृद्धावस्था से जीर्ण हुए के समान हो जावे ।

शरीरके प्रति ममता रख कर उसकी सेवा शुश्रूषा और विभूषा आदि न कर; किन्तु तपश्चर्या के द्वारा इसे निर्वल और रूक्ष बना ॥ सू० ५॥

સાથે રહે છે તે પણ હુમેશાં માથે રહેનાર નથી જેવી રીતે નદીના કિનારા ઉપરના વૃક્ષોને તેનુ પાણી ઉઘાડીને ફેંકી દે છે તેવી જ રીતે મારા આ સ્વજનાદિક મને કેઈ પ્રકારે આત્મસ્વરૂપથી ઉઘાડી દેવાની કેશિશમા લાગેલાં છે (૬)

માટે મનુષ્યોને સમજવું જોઈએ કે—આ મયોગી પદાર્થોથી મમત્વ—રહિત થઈને આત્મકલ્યાણના માર્ગમા આગળ વધે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ભગવાન પોતાની દિવ્યદેશનામા ભવ્ય જીવોને સમજાવતા કહે છે—
' કસેહિ અપ્પાણં ' ઇત્યાદિ.

હે ભવ્ય ! તું આ શરીરનું તપ આદિ શુભસાધનદ્વારા શોષણ કર, અને તપ પણ એવી રીતે કર કે જેથી તારૂં આ શરીર જરા-વૃદ્ધાવસ્થાથી છુટું જેવું થઈ જાય. શરીર પ્રતિ મમતા ગળીને તેની એવા શુશ્રૂષા અને વિભૂષા આદિ ન કર, કિન્તુ તપશ્ચર્યાદ્વારા તેને નિર્વાળ અને રૂક્ષ બનાવ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

यह शरीर जो मुझे प्राप्त हुआ है उसका पतन अवश्यंभावी है । संपत्ति अनेक विपत्तियों की जननी है । इष्टमित्रादिकों का समागम ध्रुव नहीं है । सब पदार्थ उत्पत्ति और विनाश स्वभाववाले हैं ॥ १ ॥ यहां पर किसी का किसी के साथ निवास स्थिर नहीं है । दूसरों की तो बात ही क्या करनी ? अरे ! इस शरीर के साथ भी तो आत्माका सम्बन्ध स्थिर नहीं है ॥ २ ॥ इस अनन्त संसारमें जो मेरे हजारों माता-पिता हो गये वे दूसरे ही थे; अभी जो हैं वे दूसरे ही हैं; आगे जो होंगे वे भी दूसरे ही होंगे ॥ ३ ॥ फिर भी कहा है—

यहां पर जीव अकेला ही शुभाशुभ कर्मोंका कर्त्ता है और अकेला ही शुभाशुभ फलोंका भोक्ता है । यह अकेला ही मरता है और अकेला ही भवान्तरमें जाता है ॥ ४ ॥

मैं सदा अकेला हूँ, न मेरा कोई है और न मैं किसीका हूँ । मैं जिनका हूँ ऐसे अपने पिता-पितामहादिकों को आज नहीं देख रहा हूँ, क्यों कि वे कालकवलित हो गये । और ऐसा भी कोई नहीं होगा जिसका मैं होऊँ । अर्थात्—मेरे कालकवलित हो जाने पर मैं भी अपने पुत्रादिकों का नहीं रहूँगा ॥ ५ ॥ जो इस संसारसे परलोकवासी हो गये हैं वे अब मिलनेके

આ શરીર જે મને પ્રાપ્ત થયેલ છે, તેનો નાશ જરૂર છે. સંપત્તિ અનેક વિપત્તિઓની માતા છે. ઇષ્ટ મિત્રોનો સમાગમ પણ ધ્રુવ નથી. જે ઉત્પત્તિશીલ પદાર્થો છે તે બધા ક્ષણભંગુર છે. (૧) અહીંઆ કોઈનો કોઈની સાથે નિવાસ સ્થિર નથી. બીજાની તો વાત જ શી કરવી ? અરે ! આ શરીરની સાથે આત્માનો સંબંધ પણ સ્થિર નથી. (૨) આ અનંત સંસારમાં જે મારા હજારો માતા પિતા અને સેંકડો પુત્રો અને સ્ત્રિઓ થઈ ગયા તે બીજા જ હતા; અને જે અત્યારે છે તે પણ બીજા જ છે; અને જે આગળ થશે તે પણ બીજા જ થશે. ॥૩॥ વળી પણ કહ્યું છે—

અહીં જીવ એકલો જ શુભાશુભ કર્મોનો કર્તા છે, અને એકલો જ શુભાશુભ ફળોનો ભોક્તા છે. તે એકલો જ મરે છે અને એકલો જ ભવાન્તરમાં જાય છે. (૪)

હમેશાં હું એકલો છું, મારો કોઈ નથી, તેમ જ હું પણ કોઈનો નથી. જેનો હું છું એવા પોતાના બાપ દાદાઓને આજે હું જોતો નથી; કેમ કે—તે બધા કાળકવળિત થઈ ગયા, અને એવો પણ કોઈ નહિ થશે જેનો હું થાઉં, અર્થાત્—મારું શરીર છુટ્યા પછી હું પણ પોતાના પુત્રાદિકોનો રહીશ નહિ (૫) જે આ સંસારથી પરલોકવાસી થયા છે તે હવે મળવાનાં નથી, જે હાલ

ઉક્તરીત્યા રાગનિવૃત્તિં પ્રદર્શ્ય દ્વેષનિવૃત્તિમાહ-‘ વિગિંચ કોહં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમૂ-વિગિંચ કોહં અવિકંપમાણેઽમં નિરુદ્ધાઉયં સંપેહાણ્ ॥૭॥

છાયા-વેવિક્ષ્વ ક્રોધમ્ અવિકમ્પમાનઃ ઇમં નિરુદ્ધાયુષ્કં સંપ્રેક્ષ્ય ॥ મૂ० ૭ ॥

ટીકા--ઇમં=મનુષ્યલોકં, નિરુદ્ધાયુષ્કમ્=અવર્ધિતાયુષ્કં સંપ્રેક્ષ્ય=પર્યાલોચ્ય, અવિકમ્પમાનઃ ક્રોધજનિતકમ્પરહિતઃ પ્રશમગુણસમન્વિતઃ સન્નિત્યર્થઃ, ક્રોધમ્-પ્રજ્વલનરૂપાતિક્રૂરાધ્યવસાયઃ ક્રોધસ્તં વેવિક્ષ્વ=પરિત્યજ, ક્રોધમિતિપદં સકલક-પાયોપલક્ષણમ્ ॥ મૂ० ૭ ॥

પૂર્વોક્ત રીતિસે રાગકી નિવૃત્તિ પ્રકટ કર અવ દ્વેષકી નિવૃત્તિ કહતે હૈં । ‘ વિગિંચ કોહં ’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ મનુષ્યલોકકો અવર્ધિત-નિયમિત આયુવાલા જાન ક્રોધસે ઉત્પન્ન હુણ વિકાર-પરિણામસે રહિત હોકર અર્થાત્ પ્રશમગુણસમ્પન્ન હોકર આત્માકો જલારવાલે ક્રૂર અધ્યવસાયસ્વરૂપ ઇસ ક્રોધકા, ઉપલક્ષણસે-માન, માયા ઓર લોભકા મી ત્યાગ કર ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર રાગભાવ ત્યાજ્ય હૈ ડસી પ્રકાર દ્વેષભાવ મી ત્યાજ્ય હૈ, અતઃ જવ કિસી મી સચેતન, અચેતન વસ્તુ પર દ્વેષ હોતા હૈ તવ આત્મામેં ક્રોધ પૈદા હોતા હૈ; ક્રોધસે શરીરમેં કંપ કી જાગૃતિ હોતી હૈ; શારીરિક કંપ સે આત્માકે પ્રદેશોમેં મી ઇક પ્રકાર કી પરિસ્પંદરૂપ ક્રિયા હોતી હૈ જિસસે ડસ હાલતમેં અધિક શ્વાસ-ઉચ્છ્વાસ ચલને લગતે હૈં, અધિક શ્વાસોચ્છ્વાસોં કે ચલને સે આયુકર્મ કે અવિભાગી પ્રતિછેદોં-વિભાગોં-કા હાસ હોતા હૈ, ઓર ઇસ તરહસે અકાલમેં હી આયુ-

પૂર્વોક્ત રીતિથી રાગની નિવૃત્તિ પ્રગટ કરી, હવે દ્વેષની નિવૃત્તિ કહે છે- ‘ વિગિંચ કોહં ’ ઇત્યાદિ

આ મનુષ્યલોકને અવર્ધિત-નિયમિત આયુવાળો જાણીને ક્રોધથી ઉત્પન્ન થયેલ વિકારપરિણામથી રહિત થઈ અર્થાત્ પ્રશમગુણસંપન્ન થઈ આત્માને જાળવાવાળા ક્રૂરઅધ્યવસાયસ્વરૂપ આ ક્રોધનો, ઉપલક્ષણથી માન માયા અને લોભનો ત્યાગ કર તાત્પર્ય એ છે કે-જે પ્રકારે રાગભાવ ત્યાજ્ય છે તે પ્રકારે દ્વેષભાવ પણ ત્યાજ્ય છે, માટે જ્યારે કોઈ પણ સચેત-અચેત વસ્તુ ઉપર દ્વેષ થાય છે ત્યારે આત્મામા ક્રોધ પેદા થાય છે ક્રોધથી શરીર ધ્રુજવા માટે છે. શરીરના ધ્રુજવાથી આત્માના પ્રદેશોમાં પણ એક પ્રકારની પરિસ્પંદરૂપ ક્રિયા થાય છે જેથી તેવી હાલતમાં અધિક શ્વાસ-ઉચ્છ્વાસ ચાલવા લાગે છે, અધિક શ્વાસોચ્છ્વાસોના ચાલવાથી આયુકર્મના અવિભાજ્ય પ્રતિછેદો-વિભાગો-નો હાસ

કિમર્થમ્ इत्येतदिति जिज्ञासायामाह--‘जहा जुन्नाइं’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જહા જુન્નાઈં કઢાઈં હવવાહો પમત્થઈ, એવં અત્તસ-
માહિણ અણિહે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા--યથા જીર્ણાનિ કાષ્ઠાનિ હવ્યવાટ્ પ્રમથનાતિ, એવમ્ આત્મસમાહિતઃ
અસ્નિહઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—યથા હવ્યવાટ્=અગ્નિઃ, જીર્ણાનિ=અસારાણિ શુષ્કાણિ, કાષ્ઠાનિ પ્રમ-
થનાતિ=ત્વરિતં ભસ્મસાત્ કરોતિ, એવમ્=અનેન પ્રકારેણ અસ્નિહઃ=શબ્દાદિવિષ-
યેષુ રાગરહિતઃ સન્, શરીરાદૌ નિર્મમો ભૂત્વા, इति ફલિતાર્થઃ; આત્મસમાહિતઃ=
આત્મનિ=આત્મનઃ શુભપરિણામે સમ્યગ્દર્શનાદૌ સમાહિતઃ=સાવધાનઃ આત્મનિષ્ઠ
इत्यર્થઃ, અતએવ-અસ્નિહઃ શબ્દાદિવિષયેષુ રાગરહિતઃ સન્ જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટવિધ-
કર્મકાષ્ઠાનિ પ્રમથનાતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

इस प्रकार शरीरको निर्वल और रुक्ष करनेकी आवश्यकता क्यों
है ? इसको कहते हैं—‘ जहा जुन्नाइं ’ इत्यादि ।

जिस प्रकार शुष्क काष्ठको अग्नि शीघ्र भस्म कर देती है उसी
प्रकार शब्दादि विषयों में निर्मम होकर केवल आत्माके शुभपरिणाम-
रूप समकित आदिमें सावधान-आत्मनिष्ठ हुआ मनुष्य ज्ञानावरणी-
यादिक अष्ट प्रकारके कर्मरूप काष्ठको जला देता है-नष्ट कर देता है ।

शरीरमें जब तक ममत्वभाव रहता है तब तक यथावत् तपश्चर्यादिक
साधनों का अनुष्ठान नहीं हो सकता है, अतः यथावत् तपश्चर्यादिक
अनुष्ठानों को करने के लिये शरीरमें निर्ममत्व आवकी जागृति अवश्य
आवश्यकीय है । ऐसा होने पर यथावत् अनुष्ठित तपश्चर्यादिक साधनों
से कर्मों का नाश अवश्यंभावी है ॥ सू० ६ ॥

આ પ્રકારે શરીરને નિર્બળ અને રૂક્ષ બનાવવાની આવશ્યકતા શા માટે ?
તો કહે છે—‘ જહા જુન્નાઈં ’ ઇત્યાદિ.

જેમ સુકા લાકડાને અગ્નિ જલ્દી બાળી નાંખે છે તેમ શબ્દાદિ વિષયોમાં
મમતા વગર થઈ ને રૂક્ત આત્માના શુભપરિણામરૂપ સમકિત આદિમાં સાવ-
ધાન-આત્મનિષ્ઠ થયેલો મનુષ્ય જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકારના કર્મરૂપ કાષ્ઠોને
બાળી નાંખે છે-નાશ કરે છે.

શરીરમાં જ્યાં સુધી મમતાભાવ રહે છે ત્યાં સુધી બરોબર રીતે તપશ્ચર્યા-
દિક સાધનોનું અનુષ્ઠાન બનતું નથી, માટે બરોબર રીતે તપશ્ચર્યાદિક અનુષ્ઠાનોને
કરવા શરીરમાં નિર્મમત્વ ભાવની જાગૃતિની ખાસ જરૂર છે. આમ થવાથી સરખી
રીતે અનુષ્ઠિત તપશ્ચર્યાદિક સાધનોદ્વારા કર્મોનો અવશ્ય નાશ થાય છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

પ્રાણિનાં દુઃખં જાનીહિ, યદ્વા-ક્રોધાદિના પ્રજ્વલિતાત્મનો યન્માનસં દુઃખમુપજાયતે તજ્જાનીહિ । અથ-આગમિ=ક્રોધજનિતકર્મવિષાકોદયાજ્જાયમાનમનાગતકાલિકં દુઃખં ચ જાનીહિ । આગમિનો દુઃખસ્ય પ્રાપ્તિસ્થાનમાહ-‘પૃથક્’ ઇત્યાદિ । પૃથક્=અન્યત્ર નરકનિગોદાદૌ સ્પર્શાન્=દુઃખાનિ ચ ક્રોધી સ્પૃશેત્=અનુભવેત્ । અત્ર ચકારઃ સમુચ્ચયાર્થઃ, ક્રોધપ્રજ્વલિતાત્મનો ન કેવલં વર્તમાનકાલિક એવ મનસ્તાપઃ કિંતુ ભવિષ્યત્કાલેઽપિ નરકાદૌ ક્રોધજનિતકર્મફલભૂતં દુઃખં ભવતીત્યર્થઃ । મોક્ષ-

કરના કરાના ઓર અનુમોદના, ઇન ત્રીન કરણોં સે, એવં મન, વચન તથા કાય સે દૂસરે જીવોં કી હિંસાદિક કરને મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ તબ ડન પ્રાણિયોં કો દુઃખ અવશ્ય ઉત્પન્ન હોતા હૈ । અથવા-ક્રોધાદિ કષાય સે આત્મા જબ સંતપ્ત હો જાતા હૈ તબ ડસકે લિયે અવશ્ય માનસિક કષ્ટ હોતા હૈ । તથા ક્રોધ કષાય કરતે સમય જીવ જિન કર્મોં કા બંધ કરતા હૈ ઓર જબ વે તીવ્ર અનુભાગરૂપસે ઉદયમેં આતે હૈં તબ ડનકા ફલ દુઃખરૂપ હી હોતા હૈ । ઇસ ફલકી પ્રાપ્તિ જીવકો નરકનિગોદાદિ ગતિયોં મેં વહાં કે અનંત કષ્ટોં કો ભોગને કે રૂપમેં હોતી હૈ ।

યહાં પર ‘ચકાર’ સમુચ્ચય અર્થ કો પ્રકટ કરતા હૈ, અર્થાત્-ક્રોધસે સંતપ્ત આત્મા કેવલ વર્તમાનકાલમેં (ડસી ભવમેં) હી મનસ્તાપરૂપ દુઃખકો નહીં ભોગતા હૈ; કિન્તુ આગામી કાલમેં (પરભવમેં) મી નરકાદિ ગતિયોં મેં ડસ ક્રોધસે જનિત કર્મકે ફલરૂપ દુઃખકા અનુભવ કરતા હૈ, ઇસલિયે ક્રોધાદિક કષાયોં કો છોડ કર મોક્ષ માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ

કરાવવુ, અને અનુમોદવુ, આ ત્રણ કારણોથી, અને મન, વચન, કાયથી બીજા જીવોની હિંસા આદિ કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે આ પ્રાણીયોને દુઃખ અવશ્ય થાય છે અથવા-ક્રોધાદિ કષાયથી આત્મા જ્યારે સંતપ્ત થઈ જાય છે ત્યારે તેને માટે માનસિક કષ્ટ અવશ્ય થાય છે તથા ક્રોધકષાય કરતી વખતે જીવ જે કર્મોને બંધ કરે છે, અને જ્યારે તે તીવ્ર અનુભાગરૂપથી ઉદયમાં આવે છે ત્યારે તેનું જીવ દુઃખરૂપ જ થાય છે આ જીવની પ્રાપ્તિ જીવને નરકનિગોદાદિ ગતિઓમાં ત્યાના અનંત કષ્ટોના ભોગવવારૂપે થાય છે

આ ઠેકાણે ‘ચકાર’ સમુચ્ચય અર્થને પ્રગટ કરે છે, અર્થાત્-ક્રોધથી સંતપ્ત આત્મા કેવળ વર્તમાનકાળમાં (આ ભવમાં જ) મનતાપરૂપી દુઃખને ભોગવતો નથી, પરંતુ આગામી કાળમાં (પરભવમાં) પણ નરકાદિ ગતિઓમાં તે ક્રોધથી ઉત્પન્ન થયેલા કર્મના ફળરૂપ દુઃખનો અનુભવ કરે છે, માટે ક્રોધાદિકષાયોને

કિંચ--‘ દુઃખં ચ જાણ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—દુઃખં ચ જાણ અદુ આગમેસ્સં, પુઢો ફાસાઈં ચ ફાસે, લોયં ચ પાસ વિફંદમાણં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—દુઃખં ચ જાનીહિ અથ આગમિ, પૃથક્ સ્પર્શાન્ ચ સ્પૃશેત્, લોકં ચ પશ્ય વિસ્પન્દમાનમ્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા--ક્રોધાદિવશાત્ ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ પ્રાણાતિપાતાદિકરણે સમુત્પદ્યમાનં કર્મ કી સ્થિતિ પૂર્ણ હો જાતી હૈ, અતઃ ભગવાન્ કા કથન હૈ કિ કષાય-રૂપ ક્રોધ કરતે સમય ઇસ બાતકા પ્રત્યેક આત્મહિતૈષી જીવકો વિચાર કરના ચાહિયે કિ જિસ પ્રકાર ઘડી કી ચાવી ઉસકે નીચે ચલતે હુએ ગોલે કો અધિક-બારંબાર ઘુમાનેસે અસમયમેં खालી હો જાતી હૈ ઉસી પ્રકાર કષાયાદિ કરને સે આયુકર્મ કી સ્થિતિ ખી અસમયમેં खિર જાતી હૈ । આયુકર્મ કી નિર્જરા તો હોતી હૈ પરન્તુ બદ્ધ આયુ મેં ઉત્કર્ષણ (અધિકતા) નહીં હોતા । જિસ પ્રકાર જીવ સાત કર્મોં કો પ્રત્યેક સમય બાંધતા ઓર નિર્જોર્ણ કરતા હૈ ઉસ પ્રકાર આયુકર્મ કો નહીં બાંધતા । જિતની કુછ આયુકર્મ કી સ્થિતિ બંધ ચુકી વહ ઉતની હી રહેગી, ઉસમેં ફિર વૃદ્ધિ નહીં હો સકતી । હાં ! બાહ્ય નિમિત્તોં કો લેકર ઉસમેં અપ-કર્ષણ (હાસ) જરૂર હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ફિર ભગવાન કહતે હૈ—‘ દુઃખં ચ જાણ ’ ઇત્યાદિ ।

યહ નિશ્ચિત હૈ કિ-ક્રોધાદિક કષાયકે આધીન હોકર જબ જીવ

થાય છે, અને આવી રીતે અકાળે આયુકર્મની સ્થિતિ પૂર્ણ થઈ જાય છે, માટે ભગ-વાનનું કથન છે કે-કષાયરૂપ ક્રોધ કરતી વખતે પ્રત્યેક આત્મહિતૈષી જીવને વિચાર કરવો જોઈએ કે જેમ ઘડીયાળની ચાવી તેની નીચે ચાલતા લોકને વારંવાર અધિક ઘુમાવવાથી અસમયમાં ખાલી થઈ જાય છે, તેમ કષાયાદિ કરવાથી આયુ-કર્મની સ્થિતિ પણ અસમયમાં ખલાસ થઈ જાય છે. આયુ કર્મની નિર્જરા તો થાય છે પણ બદ્ધ-બાંધેલા આયુમાં ઉત્કર્ષણ (અધિકપણ) નથી હોતું. જેવી રીતે જીવ સાત કર્મોને પ્રત્યેક સમય બાંધે છે, અને તેની નિર્જરા કરે છે, તેવી રીતે આયુકર્મને નથી બાંધતો. જેટલી પણ આયુકર્મની સ્થિતિ બાંધાયેલી છે તે તેટલી જ રહેશે. તેમાં વધારો થઈ શકતો નથી. હાં, બાહ્ય નિમિત્તો લઈને તેમાં અપકર્ષણ (હાસ) અવશ્ય થાય છે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

વળી ભગવાન કહે છે—‘ દુઃખં ચ જાણ ’ ઇત્યાદિ.

એ નિશ્ચિત છે કે-ક્રોધાદિક કષાયને આધીન થઈ જ્યારે જીવ કરવું,

જવે તેના અપને અવાધાકાલ કો છોડી કર ઉદય આવેગા તવે વહુ મી નીત્રતમ રૂપસે હી અપના ફલ દેગા, અતઃ જીવ યા તો ઇસી ભવમેં તજ્જન્ય દુઃખાદિકોં કા પૂર્ણ મોક્તા હોગા, ઓર યદિ અવશિષ્ટ વચેંગે તો તેના ફલ ઉસે નરકનિગોદાદિ મેં જાકર મોગના પડેગા। યહી વાત ઇસ સૂત્રમેં પ્રકટ કી ગઈ હૈ। ‘ચકાર’ શબ્દ જો સૂત્રમેં પડા હૈ વહુ યહુ મી પ્રકટ કરતા હૈ કિ—ક્રોધકપાયકે વશ હોકર પ્રાણાતિપાતાદિક મેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા જીવ તજ્જન્ય દુઃખ કો ઇસ ભવમેં ઓર પરભવમેં (નરકનિગોદાદિકોં મેં) મી મોગતા હૈ।

ક્રોધકપાયસે જિસ સમય આત્મા સંતપ્ત હો જાતા હૈ ઉસ સમય ઉસ આત્મા કા મન સંતપ્ત હોતા હૈ, મનકા સંતપ્ત હોના હી ભાવહિંસા હૈ। મનકે સંતાપસે અશુભ કર્મોં કા આન્ત્રવ હોના હૈ।

અન્તમેં સૂત્રકાર ઉપસંહાર કરતે હુણ કહતે હૈં કિ જવે ક્રોધાદિક કપાયોંકે કરનેસે જીવોં કો દુઃખ મોગના પડતા હૈ ઓર સંસારમેં કોઈ મી પ્રાણી દુઃખ કો નહીં ચાહતા, સવે સુખકે હી અમિલાપી હૈં, તો ભવ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહુ ઇસ દુઃખકે અભાવરૂપ મોક્ષ માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ કરે। સંસાર મેં થોડા સા મી સુખ નહીં હૈ। જિસે જીવને સુખ માન રખા હૈ વહુ કાલ્પનિક હૈ। આકુલતા કા જવે તક સર્વથા અન્ત નહીં હો

થશે એવી સ્થિતિમાં ત્યારે પોતાના અભાધાકાળને છોડીને તેનો ઉદય થશે ત્યારે તે પણ તીવ્રતમરૂપથી જ પોતાનું ક્ષણ આપશે, માટે જીવ કા તો આ લવમા જ તજ્જન્ય હુ ખાદિકોને પૂર્ણરૂપે ભોગવશે, અને જો અવશિષ્ટ અથશે તો તેનું ક્ષણ તેણે નરક નિગોદાદિમાં જઈને ભોગવવું પડશે આ જ વાત આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરવામાં આવી છે ‘ચકાર’ શબ્દ જે સૂત્રમાં છે, તે એમ પ્રગટ કરે છે કે—ક્રોધ-કપાયને વશ થઈ પ્રાણાતિપાતાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળાં જીવ તજ્જન્ય દુઃખને આ લવમા અને પરલવમાં (નરકનિગોદાદિકોમાં) પણ ભોગવે છે.

ક્રોધ-કપાયથી જે વખતે આત્મા સંતપ્ત થઈ જાય છે, તે વખતે તે આત્માનું મન સંતપ્ત થાય છે. મનનું સંતપ્ત થવું એ જ લાવહિસા છે

મનના સંતાપથી અશુભ કર્મોના આન્ત્રવ થાય છે અતમા સૂત્રકાર ઉપસંહાર કરતાં કહે છે કે—ત્યારે ક્રોધાદિક કપાયો કરવાથી જીવોને દુઃખ ભોગવવું પડે છે અને સંસારના કોઈ પણ પ્રાણી દુઃખને નથી ચાહતો, બધા સુખના જ અભિલાષી છે, ત્યારે ભવ્ય પ્રાણીનું કર્તવ્ય છે કે આ દુઃખના અભાવરૂપ મોક્ષમાર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરે. સંસારમાં થોડું પણ સુખ નથી, જીવે જેને સુખ માન્યું છે તે કાલ્પનિક છે આકુળતાનો ત્યા સુધી સર્વથા અન્ત નથી થતો ત્યાં

માર્ગે પ્રવર્તયિતુમાહ—‘લોકં ચ’ ઇત્યાદિ । વિસ્પન્દમાનં=દુઃસ્વાગમભયાત્ કમ્પ-
માનં લોકં=જીવનિકાયં પश्य, પ્રશમસમન્વિતઃ સન્ દુઃસ્વભયાત્કમ્પમાનં જીવલોકં
દયાદૃષ્ટ્યાઽવલોકયેત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

કારાને કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે ભવ્ય ! દુઃસ્વકી પ્રાપ્તિ કે ભયસે
કંપાયમાન ઇસ ષડ્જીવનિકાય કો તું દેસ્વ, અર્થાત્ પ્રશમભાવ સે યુક્ત
હોકર દુઃસ્વકે ભયસે ત્રસ્ત જીવલોક કો સદા તું દયાદૃષ્ટિસે દેસ્વ ।

બન્ધ ચાર પ્રકારકા હૈ—પ્રકૃતિબન્ધ, સ્થિતિબન્ધ, અનુભાગબન્ધ
ઔર પ્રદેશબન્ધ । ઇનમૈં યોગસે પ્રકૃતિબન્ધ ઔર પ્રદેશબન્ધ હોતે હૈં ।
કષાયસે સ્થિતિબન્ધ ઔર અનુભાગબન્ધ હોતે હૈં । રંગકા કામ કપડેકો
રંગને કા હૈ પરન્તુ હરાં ઔર ફિટકરી કે સમાગમસે જિસ પ્રકાર વહ
રંગ કપડે પર ગહરા હો જાતા હૈ ડસી પ્રકાર કષાય કી અલ્પતા ઔર
અધિકતા કર્મેંકે સ્થિતિબન્ધ ઔર અનુભાગબન્ધકી અલ્પતા ઔર અધિ-
કતા મૈં કારણ હોતી હૈ, અત ંવ કષાય યદિ તીવ્ર હોગી, તો કર્મેં કા
તીવ્ર સ્થિતિબન્ધ ઔર અનુભાગબન્ધ હોગા । કષાય મધ્યમાંશવાલી હોગી
તો ડનકા મધ્યમાંશ બંધ હોગા । બુદ્ધિપૂર્વક પ્રાણાતિપાતાદિ સાવધ
વ્યાપાર કરતે સમય જીવકો અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધકષાય કા તીવ્રતમ
અંશ હોતા હૈ, ંસી હાલતમૈં જીવકો જો કર્મેં કા બંધ હોગા વહ
તીવ્રતમ સ્થિતિ ઔર અનુભાગબંધ કો હી લેકર હોગા । ંસી હાલતમૈં

છોડીને મોક્ષમાર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરાવવા સૂત્રકાર કહે છે કે-હે ભવ્ય ! દુઃખના
ભયથી કંપાયમાન આ ષડ્જીવનિકાયને તું દેખ, અર્થાત્-પ્રશમભાવથી યુક્ત
થઈ દુઃખના ભયથી ત્રાસેલા જીવલોકને સદા તું દયાદૃષ્ટિથી દેખ.

બંધ ચાર પ્રકારના છે-પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ, અનુભાગબંધ અને પ્રદે-
શબંધ. આમાં યોગથી પ્રકૃતિબંધ અને પ્રદેશબંધ થાય છે. કષાયથી સ્થિતિબંધ
અને અનુભાગબંધ થાય છે. રંગનું કામ કપડાને રંગવાનું છે પરંતુ હરડાં
અને ફટકડીથી જે પ્રકારે તે રંગ વધારે ગાઢો થાય છે તે પ્રકારે કષાયની અલ્પતા
અને અધિકતા કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધની અલ્પતા અને અધિકતામાં
કારણ થાય છે, માટે કષાય જે તીવ્ર હશે તો કર્મોનો સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ
તીવ્ર થશે. કષાય મધ્યમાંશવાળો હશે તો કર્મોનો સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ
મધ્યમ થશે. બુદ્ધિપૂર્વક પ્રાણાતિપાતાદિ સાવધ વ્યાપાર કરતી વખતે જીવને અ-
નંતાનુબંધી ક્રોધકષાયનો તીવ્રતમ અંશ થાય છે, તેવી હાલતમાં જીવને જે તે
સમયે કર્મોનો બંધ થશે તે તીવ્રતમ સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધને જ લઈને

સે સર્વદા શાંત હો ચુકે હૈં, ઓર ઇસીલિયે પાપકર્મોં મેં જો નિદાનબન્ધ સે રહિત હૈં વે પરમ સુખ કે સ્થાનરૂપ સે કહે ગયે હૈં ।

ટીકાકારને જો ક્રોધાદિક કષાયોં કે લિયે અગ્નિ કી ઉપમા લી હૈ વહ સાર્થક હૈ, કારણ કિ જિસ પ્રકાર અગ્નિ સે અત્યન્ત તપ્ત લોહે કા ગોલા પાની મેં ડાલને પર અપને ચારોં ઓર કે પાની કો સ્વીંચતા હૈ ઁસી પ્રકાર યહ આત્મામી જબ કષાયોં સે અત્યન્ત સંતપ્ત હો જાતા હૈ તબ અપની ચારોં ઓર મરી હુઈ કાર્મણવર્ગણાઓં કો મન, વચન, કાયરૂપ નાલિયોં સે સ્વીંચતા હૈ । સ્વાયા હુઆ અન્ન જિસ પ્રકાર રસ-રુધિર-આદિ રૂપમેં પરિણત હોતા હૈ ઁસી પ્રકાર ગૃહીત વે કાર્મણવર્ગણાં મી જ્ઞાનાવરણાદિક-કર્મરૂપસે ઁકઠી સાથ પરિણત હો જાતી હૈં । કર્મરૂપ સે વંધી હુઈ ઇન કાર્મણવર્ગણાઓં કી ચાર પ્રકાર કી અવસ્થાં હોતી હૈં, પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિ-વંધ અનુભાગવંધ ઓર પ્રદેશવંધ । યહ નિશ્ચિત હૈ કિ જબ કોઈ ઁક પદાર્થ કિસી દૂસરે પદાર્થ કો આવૃત કરતા હૈ યા ઁસકી શક્તિ કા ઘાત કરતા હૈ તબ આવરણ કરનેવાલે પદાર્થમેં-‘આવરણ કરને કા સ્વભાવ, આવરણ કરને કા કાલ, આવરણકી શક્તિ કી હીનાધિકતા ઓર આવરણ કરને-વાલે પદાર્થ કા પરિમાણ, ઁ ચાર અવસ્થાં ઁક સાથ પ્રકટ હોતી હૈં । યહી વાત ઇન વંધ કે ભેદોં મેં મી સમજના ચાહિયે । આત્મા આત્રિયમાણ હૈ

તે સર્વથા શાંત થયેલ છે આત્મા જે પાપકર્મોંમા નિદાનબન્ધથી રહિત છે તેને પરમ સુખના સ્થાનરૂપ કહેવામા આવેલ છે. ટીકાકારે ક્રોધાદિક કષાયોંને માટે જે અગ્નિની ઉપમા આપી છે તે ણરોણર છે, કારણ કે જે પ્રકારે અગ્નિથી અત્યન્ત તપાવેલો લોખંડનો ગોળો પાણીમા નાંખવાથી પોતાના ચારે બાજુના પાણીને ખેંચે છે તે પ્રકારે ન્યારે આત્મા પણ કષાયોથી અત્યન્ત સતપ્ત થાય છે ત્યારે પોતાની ચારે બાજુ લરેલી કાર્મણવર્ગણાઓંને મન-વચન-કાયરૂપ નાળિયોથી ખેંચે છે જેવી રીતે બાધેલુ અનાજ રસ રુધિર આદિ રૂપમા પરિણત થાય છે તે પ્રકારે ગૃહીત આ કાર્મણ-વર્ગણાઓં પણ જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મરૂપથી એક જ સાથે પરિણત થઈ જાય છે. કર્મ-રૂપથી બાધેલી આ કાર્મણવર્ગણાઓંની ચાર પ્રકારની અવસ્થાઓં થાય છે-પ્રકૃતિબંધ સ્થિતિબંધ, અનુભાગબંધ અને પ્રદેશબંધ, એ નિશ્ચિત છે કે ન્યારે કોઈ એક પદાર્થ કોઈ બીજા પદાર્થને આવૃત કરે છે અગર તેની શક્તિનો ઘાત કરે છે ત્યારે આવરણ કરનાર પદાર્થોંમા-આવરણ કરવાનો સ્વભાવ ૧, આવરણ કરવાનો કાળ ૨, આવરણની શક્તિની હીનાધિકતા ૩, અને આવરણ કરનાર પદાર્થનું પરિમાણ ૪ આ ચાર અવસ્થાઓં એક સાથે પ્રકટ થાય છે, આ વાત બધના ભેદોંમા પણ અમજવી

ઉક્તાર્થમુપસંહરન્નાહ--‘ તમ્હા ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-તમ્હા અતિવિજ્ઞો નો પડિસંજલિજ્ઞાસિ-ત્તિ બેમિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા--તસ્માત્ અતિવિદ્વાન્ ન પ્રતિસંજ્વલે:-ઇતિ વ્રવીમિ ॥ મૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા--હે શિષ્ય ! તસ્માત્=યતઃ ક્રોધાદિકપાયવાન્ અનન્તદુઃખં પ્રાપ્નોતિ તસ્માત્, ત્વમ્-અતિવિદ્વાન્-અર્હતાગમપરિશીલનજનિતસમ્યગ્જ્ઞાનવાન્ સન્ ન પ્રતિસંજ્વલે:=ક્રોધવહ્નિનાઽઽત્માનં ન પ્રતાપયેરિત્યર્થઃ । કપાયેષુ ક્રોધસ્ય પ્રાધા-
વહ સર્વઘાતિ દ્રવ્ય કા અનન્તવાં ભાગ હોતા હૈ, ઓર જો દેશઘાતિ દ્રવ્ય હૈ વહ દેશઘાતિ દ્રવ્ય કા અનન્તવહુભાગ હોતા હૈ । ઇસમેં ખી દેશઘાતિ દ્રવ્ય કા વટવારા દેશઘાતી પ્રકૃતિયોં મેં હી હોતા હૈ, સર્વઘાતિ દ્રવ્ય કા વટવારા સર્વઘાતી દેશઘાતી દોનોં પ્રકારકી પ્રકૃતિયોં મેં હોતા હૈ, ઓર નૌ નોકપાયોં કો દેશઘાતી દ્રવ્ય હી પ્રાપ્ત હોના હૈ, સર્વઘાતી નહીં ॥ મૂ૦ ૧ ॥

ઉક્ત અર્થકા ઉપસંહાર કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ--‘ તમ્હા અતિ-વિજ્ઞો ’ ઇત્યાદિ ।

જવ વહ નિર્વિવાદ સિદ્ધ હૈ કિ ક્રોધાદિક કપાયવાલે જીવ અનન્ત યાતનાઓં કો ઇસ લોક ઓર પરલોક મેં ભોગતે હૈ તો હે શિષ્ય ! અર્હત-પ્રતિપાદિત આગમ કે પરિશીલન સે સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હોતે હુણ તુમ ક્રોધ-રૂપ અગ્નિ સે અપની આત્મા કો કખી ખી પ્રજ્વલિત નહીં કરના । યહાં

અનતમે ભાગ હોય છે, અને જે દેશઘાતિક દ્રવ્ય છે તે દેશઘાતિક દ્રવ્યનો અનત બહુભાગ હોય છે. આમા પણ દેશઘાતી દ્રવ્યની વહેંચણી દેશઘાતિ પ્રકૃતિયોમાં જ થાય છે, સર્વઘાતિ દ્રવ્યની વહેંચણી સર્વઘાતિ દેશઘાતિ બંને પ્રકારની પ્રકૃતિયોમા થાય છે, અને નવનોકપાયોને દેશઘાતિ દ્રવ્ય જ પ્રાપ્ત થાય છે, સર્વઘાતિ નહિ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ઉક્ત અર્થનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે--‘ તમ્હા અતિવિજ્ઞો ’ ઇત્યાદિ.

ત્યારે આ નિર્વિવાદ સિદ્ધ છે કે ક્રોધાદિક કપાયવાળા જીવ અનંત યાતનાઓને આ લોકમા અને પરલોકમાં ભોગવે છે ત્યારે હે શિષ્ય ! અતિવિદ્વાન્-અર્હત પ્રતિપાદિત આગમનના પરિશીલનથી સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન થતાં તમે ક્રોધરૂપ અગ્નિથી યોનાના આત્માને કોઈ વખતે પણ સ્પર્શાવશો નહિ. આ જગ્યાએ ક્રોધની પ્રધા-

और कर्म आवरण हैं, अतः कर्म की भी बंध के समय में चार अवस्थाएँ प्रगट होती हैं। ये चारों अवस्थाएँ कर्मबंध के प्रथम समय में ही सुनिश्चित हो जाती हैं। उदाहरणार्थ—जिस समय हम लालटेन को वस्त्र से ढांकते हैं उसी समय उस आवरण करनेवाले वस्त्र में चार अवस्थाएँ स्पष्टतः प्रतिभासित होती हैं—

(१) वस्त्र का स्वभाव लालटेन के प्रकाश को आवृत करना (२) निश्चित काल तक लालटेन के प्रकाश को आवृत किये रहना (३) लालटेन के प्रकाश आवृत करने की शक्ति का वस्त्र में हीनाधिक रूपसे पाया जाना और (४) आवृत करने वाले वस्त्र का परिमाण।

उन गृहीत कर्मणवर्गणाओं का प्रत्येक कर्म में बटवारा इस प्रकार से होता है। यदि आयुर्कर्म का भी बंध हो रहा है तो आयुर्कर्म को सब से थोड़ा द्रव्य मिलता है। नामगोत्र में प्रत्येक को इससे अधिक द्रव्य मिलता है तो भी इन दोनों कर्मों का द्रव्य समान रहता है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय में प्रत्येक को इससे अधिक द्रव्य मिलता है तो भी इनका द्रव्य परस्पर समान होता है। इससे मोहनीय कर्म को अधिक द्रव्य मिलता है और इससे वेदनीय कर्म को अधिक द्रव्य मिलता है। धातिया कर्मों को जो द्रव्य मिलता है इसमें जो सर्वधाति द्रव्य है

જોઈએ. આત્મા આવિયમાણ છે અને કર્મ આવરણ છે, માટે બંધ સમયમાં કર્મની પણ ચાર અવસ્થાઓ પ્રગટ થાય છે. આ ચારે અવસ્થાઓ કર્મ-બંધના પ્રથમ સમયમાં જ સુનિશ્ચિત થઈ જાય છે. દાખલા તરીકે જ્યારે બત્તીને વસ્ત્રથી ઢાંકીએ ત્યારે આવરણ કરવાવાળા તે વસ્ત્રમાં ચાર અવસ્થાઓ સ્પષ્ટ પ્રતિભાસિત થાય છે— (૧) વસ્ત્રનો સ્વભાવ બત્તીના પ્રકાશને રોકવું. (૨) નિશ્ચિત સમય સુધી બત્તીના પ્રકાશને રોકી રાખવો. (૩) બત્તીનો પ્રકાશ આવૃત કરવાની શક્તિનો વસ્ત્રમાં હીનાધિકરૂપથી સદ્ભાવ. (૪) આવૃત કરનાર વસ્ત્રનું પરિમાણ. ગ્રહણ કરવામાં આવેલી તે કાર્મણવર્શાણાઓની વહેંચણી પ્રત્યેક કર્મમાં આ પ્રકારે થાય છે—જો આયુ કર્મનો બંધ થઈ રહ્યો છે તો આયુ કર્મને બધાથી થોડું દ્રવ્ય મળે છે, નામ-ગોત્રમાં પ્રત્યેકને તેથી અધિક દ્રવ્ય મળે તો પણ આ બન્ને કર્મોના દ્રવ્ય સમાન રહે છે. જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ અને અંતરાયમાં પ્રત્યેકને તેથી અધિક દ્રવ્ય મળે છે તો પણ તેઓનું દ્રવ્ય પરસ્પર સમાન હોય છે. એનાથી મોહનીય કર્મને અધિક દ્રવ્ય મળે છે અને વેદનીય કર્મને એનાથી પણ અધિક દ્રવ્ય મળે છે. ધાતિયા કર્મોને જે દ્રવ્ય મળે છે તેમાં જે સર્વધાતિક દ્રવ્ય છે તે સર્વધાતિક દ્રવ્યનો

। अथ चतुर्थाध्ययनस्य चतुर्थ उद्देशः ।

इहानन्तरतृतीयोद्देशकेऽनवद्यतपो वर्णितम् । तच्च संयमव्यवस्थितस्यैव संपूर्णतया भवति, तस्मात् संयमं प्रतिबोधयितुं चतुर्थोद्देशकं कथयन्नादौ गृहीतप्रव्रज्यस्य कर्तव्यमाह—‘ आचीलए ’ इत्यादि ।

मूलम्—आचीलए पचीलए निष्पीलए जहिच्चा पुव्वसंजोगं
हिच्चा उवसमं ॥ सू० १ ॥

छाया—आपीडयेत् प्रपीडयेत् निष्पीडयेत् त्यक्त्वा पूर्वसंयोगं हित्वा उपशमम् ॥

टीका—पूर्वसंयोगं=पूर्वकालिकं मातापित्रादिसम्बन्धं, उपलक्षणात्पश्चात्सं-
योगं श्वशुरादिसम्बन्धमपि त्यक्त्वा, यद्वा—पूर्वः=अनादिभ्रमसमायातत्वेन प्राक्तनोऽ-
संयमः, तेन सह संयोगः पूर्वसंयोगस्तं त्यक्त्वा, तथा—उपशमं=कर्मोपशमकार-

॥ चौथे अध्ययनका चौथा उद्देश ॥

इसके पहिले तृतीय उद्देशक में निरवद्य-निर्दोष तप का वर्णन किया जा चुका है, परन्तु निर्दोष तप की आराधना संपूर्ण रीति से जब तक जीव संयम में स्थित नहीं हो सकता तब तक उससे नहीं हो सकती; अतः संयम को प्रतिबोधित करने के लिये इस चतुर्थ उद्देशक का प्रारम्भ किया जाता है । उसमें भी जिसने दीक्षा धारण की है, उसका सर्व प्रथम क्या कर्तव्य है ? इसका निरूपण सूत्रकार करते हैं—‘ आचीलए ’ इत्यादि ।

पूर्वकालिक—पूर्वकाल से सम्बन्ध रखनेवाले मातापिता आदि के तथा पश्चात्कालिक-श्वशुरादि के सम्बन्ध को, अथवा अनादि जन्मपरम्परा से संबंधित होने के कारण प्राक्तन असंयम भाव के अभी तक के

ચોથા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ.

આ પહેલાં ત્રીજા ઉદ્દેશમાં નિરવધ-નિર્દોષ તપનું વર્ણન કરેલ છે, પરન્તુ નિર્દોષ તપની આરાધના સંપૂર્ણ રીતિથી જ્યાં સુધી જીવ સંયમમાં સ્થિત નથી થતો ત્યાં સુધી થઈ શકતી નથી, માટે સંયમને પ્રતિબોધિત કરવાને માટે આ ચોથા ઉદ્દેશનો પ્રારંભ થાય છે. તેમાં પણ જોણે દીક્ષા ધારણ કરેલી છે. તેનું સર્વ પ્રથમ શું કર્તવ્ય છે તેનું નિરૂપણ સૂત્રકાર કરે છે—‘ આચીલણ ’ ઇત્યાદિ.

પૂર્વકાળથી સંબંધ રાખનાર માતા પિતા આદિના, તથા પછીના કાળમાં સંબંધ રાખવાવાળા શ્વશુરઆદિના સંબંધને, અથવા અનાદિ જન્મપરંપરાથી સંબંધિત હોવાને કારણે પૂર્વકાલિક જે અસંયમભાવ છે તેના આજ સુધીના સંબંધને છોડી

न्यात् क्रोधप्रतिषेधेनाऽन्येषामपि कषायाणां प्रतिषेधः कर्तव्य इति बोधितम् ।
इति=अयमुद्देशकः समाप्यते । ब्रवीमि=भगवतः समीपे यथाश्रुतं तथा कथ-
यामीत्यर्थः ॥ सू० १० ॥

॥ चतुर्थाध्ययनस्य तृतीय उद्देशः समाप्तः ॥ ४-३ ॥

पर क्रोध की प्रधानता बतलाई है, इससे अन्य कषायों का भी परित्याग
समझ लेना चाहिये । हे जम्बू ! मैंने भगवान् के समीप जैसा सुना है
वैसा ही तुझे कहता हूँ ।

॥ चौथे अध्ययनका तीसरा उद्देश समाप्त ॥ ४-३ ॥

नता षतावी छे तेथी भील कषायोनो पाणु परित्याग समञ्ज देवो जेधञ्जे.
हे जम्बू ! भगवाननी पासो जेवुं मे' सांलज्युं छे तेवुं न तने उडुं छुं.
योथा अध्ययननो त्रीजे उद्देश समाप्त ॥ ४-३ ॥



उपशमाश्रयणस्य फलं प्रदर्शयन् गृहीतप्रव्रज्यस्य मुमुक्षोः कर्तव्यमाह—
'तम्हा अविमणे' इत्यादि ।

मूलम्—तम्हा अविमणे वीरे सारए समिए सहिए सया
जए ॥ सू० २ ॥

छाया—तस्मात् अविमना वीरः स्वारतः समितः सदा यतेत ॥ सू० २ ॥

टीका—तस्मात्=उपशमाश्रयणात्, वीरः=कर्मविदारणसमर्थः अविमनाः=संय-
माराधने खेदरहितः, अत एव स्वारतः=सुष्ठु आरतः=यावज्जीवनमर्यादया संय-
माऽऽचरणे तत्पर, समितः=समितिसमन्वितः, सहितः—हितेन सह सहितः—सम्यग्-
ज्ञानादिगुणयुक्तः, सदा=सर्वकालं यतेत=संयमाराधनभारोद्धहनप्रतिज्ञामङ्गीकृत्य
तत्परिपालनार्थं प्रयतमानो भवेदित्यर्थः ॥ सू० २ ॥

पुनः पुनः संयमानुष्ठानोपदेशे हेतुं प्रदर्शयन्नाह—'दुरणुचरो' इत्यादि ।

उपशमसंयम के आश्रय करने के फलको दिखाते हुए सूत्रकार
जिसने दीक्षा अंगीकार कर ली है ऐसे मोक्षाभिलाषी मुनि का कर्तव्य
बतलाते हैं—'तम्हा अविमणे' इत्यादि ।

उपशमसंयम के आश्रय करनेसे कर्म को नष्ट करने की शक्ति से
संपन्न जीव संयम के आराधन करने में खेदरहित होकर यावज्जीवन
संयम के आराधना में तत्पर होता हुआ समिति से और सम्यग्दर्शन-
ज्ञानादि गुणों से युक्त होकर सर्वदा संयम के आराधनरूपी भार को
वहन करने की प्रतिज्ञा को अंगीकार कर उसके पालन करने में प्रयत्न
शील बने ॥ सू० २ ॥

पुनः पुनः संयम के अनुष्ठान करने के उपदेश में कारण प्रकट करते
हुए सूत्रकार कहते हैं—'दुरणुचरो' इत्यादि ।

उपशम—संयमना आश्रय करवाना इष्टाने देखाउता सूत्रकार नेछे दीक्षा अंगी-
कार करेदी छे ओवा मोक्षाभिलाषी मुनिनु कर्तव्य कहे छे—'तम्हा अविमणे' इत्यादि.

उपशम—संयमनो आश्रय करवाथी कर्मने नष्ट करवानी शक्तिवाणा एव
नयमनु आराधन करवाना खेदरहित यथने यावज्जीवन संयमना आराधनभां
तत्पर यणीने समितिथी अने सम्यग्दर्शनज्ञानादि गुणोथी युक्त यथने उभेशां
संयमना आराधनरूपी भारने वहन करवाना नियमने अंगीकार करीने तेनु
पालन करवाना प्रयत्नशील बने. ॥ सू० २ ॥

बारबार संयमनु अनुष्ठान करवाना उपदेशमा कारण प्रकट करीने सूत्र-
कार कहे छे—'दुरणुचरो' इत्यादि

णत्वात्संयमं हित्वा=गत्वा प्राप्येति यावत्, आपीडयेत् प्रथमप्रव्रज्याकालेऽविकृष्टेन तपसा शरीरमीपत्पीडयेदित्यर्थः । प्रपीडयेत्-तदनन्तरं प्रकर्षेण विकृष्टतपसा शरीरं पीडयेत् । ततः निष्पीडयेत्=पण्डितमरणेन शरीरं त्यक्तुमना मासार्धमासक्षपणादिरूपघोरतरतपोभिः शरीरं निश्चयेन पीडयेदित्यर्थः । यद्वा-आपीडयेत्=सम्यग्दृष्ट्यादिषु गुणस्थानेषु ज्ञानावरणीयादिकं कर्म ईपत् पीडयेत्, ततः प्रपीडयेत्=अपूर्वकरणानिवृत्तिवादरयोः, ततः-निष्पीडयेत्-सूक्ष्मसंपरायावस्थायाम्, यद्वा-अष्टविधं कर्म उपशमश्रेण्यामापीडयेत्, क्षपकश्रेण्यां प्रपीडयेत्, शैलेश्यवस्थायां निष्पीडयेदित्यर्थः ॥ सू० १ ॥

सम्बन्ध को छोड़ कर कर्मों के उपशम का कारण होने से उपशम-संयम को प्राप्त कर प्रथम दीक्षा के अवसर पर साधारण तप के द्वारा शरीर को किञ्चित् कृश करे । पश्चात् उत्कृष्ट तप से शरीर को पूर्ण रीति से कृश करे । तदन्तर पण्डितमरण से शरीर का नियमपूर्वक परित्याग करे ।

अथवा—सम्यग्दृष्ट्यादिक-चतुर्थादिक गुणस्थानों में ज्ञानावरणीयादिक कर्मों की स्थितिका हास करे, पश्चात् अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण में उनकी स्थिति का पहिलेकी अपेक्षा और अधिक हास करे । इस के अनन्तर सूक्ष्मसंपराय नामके दशवें गुणस्थान में और अधिक हास करे ।

अथवा—उपशमश्रेणी में ज्ञानावरणादिक कर्मों का हास करे, क्षपकश्रेणी में और अधिक हास करे तथा शैलेशी अवस्थामें उनका समूल नाश करे ॥ सू० १ ॥

कर्मोना उपशमनुं कारणं होवाथी उपशमसंयमने प्राप्त करी प्रथम दीक्षाना अवसरे साधारण तप द्वारा शरीरने आपीडित-किञ्चित् दुग्धं करे. पछी उत्कृष्ट तपथी शरीरने पूर्ण रूपथी दुग्धं करे. त्यार पछी पण्डितमरणथी शरीरने नियमपूर्वक परित्याग करे.

अथवा—सम्यग्दृष्ट्यादिक-योथा आदि-गुणस्थानोभां ज्ञानावरणीयादिक कर्मोनी स्थितिने घटाडे. पछी अपूर्वकरण अने अनिवृत्ति करणभां तेनी स्थितिने पछे-लांनी अपेक्षा वधारे घटाडे करे, त्यार भाद सूक्ष्मसांपराय नामना दशमा गुण स्थानभां ओथी वधारे घटाडे करे.

अथवा—उपशम-श्रेणीभां ज्ञानावरणादिक कर्मोना घटाडे करे, क्षपकश्रेणीभां ओथी अधिक घटाडे करे, तथा शैलेशी अवस्थाभां तेना समूहो नाश करे. ॥सू० १॥

શનાદિતપસા વા શરીરં શોષયેત્યર્થઃ । શરીરશોષણસ્ય ફલમાહ—‘ એપ ’ इत्यादि ।
 एप =स्वशरीरशोषकः पुरुषः—मोक्षार्थी जनो द्रविकः=द्रवः=संयमः स विद्यते यस्या-
 सौ, संयमीत्यर्थः, तथा—वीरः=कर्मविदारणसमर्थः, तथा—आदानीयः=भव्यानां ग्राह्यः
 श्रद्धेयवचन इत्यर्थः, व्याख्यातः=तीर्थकरैः कथितः । यश्च ब्रह्मचर्ये=ब्रह्मचर्याख्य-
 महाव्रते संयमे वा उपित्वा=स्थित्वा—तत्परो भूत्वेति यावत्, समुच्छ्रयं=कर्मोपचयं
 धुनाति=हासयति—अपयतीत्यर्थः, सोऽपि—आदानीयो व्याख्यात इति सम्बन्धः । ४।

પ્રમાદરહિતાનાં ગુણાન્ પ્રદર્શ્ય પ્રમાદવતાં દોષાનાહ—‘ નિત્તેહિં ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—નિત્તેહિં પલિચ્છન્નેહિં આયાણસોયગઢિષ્ બાલે
 અવ્વોચ્છિન્નવંધને અણભિક્કંતસંજોષ્ તમંસિ અવિયાણઓ
 આણાણ લંભો નત્થિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—નેત્રૈઃ પ્રતિચ્છન્નૈઃ આદાનસ્રોતોગૃહ્ણો વાલઃ અવ્યુચ્છિન્નવન્ધનઃ અન-
 ભિક્રાન્તસંયોગઃ તમસિ અવિજાનત આજ્ઞાયા લાભો નારિત—इति ब्रवीमि ॥ सू० ५ ॥

ટીકા—નેત્રૈઃ=ચક્ષુરાદિભિરિન્દ્રિયૈઃ, પ્રતિચ્છન્નૈઃ=સ્વસ્વવિષયતોડપવારિતૈઃ—

આહારાદિક સે અથવા અનશનાદિક તપ કે દ્વારા શરીર કા શોષણ કરે ।

હસ ક્રિયા કા આચરણ કરનેવાલા વહ મોક્ષાભિલાષી સંયમી જીવ
 કર્મોંકો નષ્ટ કરને કી શક્તિ સે સમન્વિત હોતા હુઆ ભવ્ય પુરુષોં કે
 લિયે ઉપાદેયવચનવાલા હોતા હૈ, એસા તીર્થઢ્ઢરોં ને કહા હૈ । તથા જો
 વ્રહ્મચર્ય મેં અથવા સંયમ મેં તત્પર હોકર કર્મોંકો નષ્ટ કરતા હૈ વહ
 મી ભવ્યોં કે લિયે માનનીયવચનવાલા હોતા હૈ ॥ મૂ૦ ૪ ॥

પ્રમાદસહિત વ્યક્તિયોં મેં કયા કયા દોષ ઉત્પન્ન હોતે હેં ? યહ વાત
 સૂત્રકાર કહતે હેં—‘ નિત્તેહિં ’ इत्यादि ।

અપનેર વિષયોં સે અપવારિત—પ્રતિરૂદ્ધ ચક્ષુરાદિક ઇન્દ્રિયોં સે યુક્ત

શદ્ધિકથી અથવા અનશનાદિક તપ દ્વારા શરીરનું શોષણ કરે.

આ ક્રિયાનુ આચરણ કરવાવાળો તે મોક્ષાભિલાષી સંયમી જીવ કર્મોંને
 નષ્ટ કરવાની શક્તિથી સંપન્ન થઈ ભવ્ય પુરુષો માટે ઉપાદેય વચનવાળો થઈ જાય
 છે, એમ તીર્થ કરોએ કહ્યું છે તથા જે બ્રહ્મચર્યમા અને સંયમમા તત્પર થઈ
 કર્મોંનો નાશ કરે છે તે પણ ભવ્યોને માટે માનનીય—વચનવાળો થાય છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

પ્રમાદસહિત વ્યક્તિઓમા શુ શુ દોષ ઉત્પન્ન થાય છે ? આ વાત સૂત્ર-
 કાર કહે છે—‘ નિત્તેહિં ’ इत्यादि.

ચાતપોનાના વિષયોંથી નિવારિત ચક્ષુ—આદિ ઇન્દ્રિયોથી યુક્ત થઈને, બ્રહ્મ-

મૂલમ્—દુરણુચરો મગ્ગો વીરાણં અનિયટ્ટગામીણં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—દુરનુચરો માર્ગો વીરાણામનિવૃત્તગામિનામ્ ॥ મૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—માર્ગઃ=સંયમરૂપઃ પન્થાઃ અનિવૃત્તગામિનાં=ન નિવર્તતે યસ્માત્ સઃ—અનિવૃત્તો=મોક્ષઃ, તત્ર ગન્તું શીલં યેપાં તે—અનિવૃત્તગામિનસ્તેપાં, વીરાણાં=કર્મ-વિદારણસમર્થાનાં પ્રમાદરહિતાનાં દુરનુચરઃ—દુઃસ્થેન સહ અનુ=પૂર્વપૂર્વતીર્થકરેભ્યઃ પથાત્ ચર્યતે=ગમ્યતે इति દુરનુચરઃ=દુઃસ્થાનુગમ્યઃ—સદુઃસ્થમનુસેવ્યોઽસ્તિ, તસ્માત્ પુનઃ પુનઃ સંયમાનુષ્ઠાનોપદેશઃ ક્રિયત इति ભાવઃ ॥ મૂ૦ ૩ ॥

તન્માર્ગાનુચરણં પ્રમાદપરિત્યાગાદ્ ભવતીત્યાહ—‘વિગિંચ’ इत्याદિ ।

મૂલમ્—વિગિંચ મંસસોણિયં, એસ પુરિસે દવિણ વીરે આયા-
ણિજ્જે વિયાહિણ્ણે ધુણાઙ્ગ સમુસ્સયં વસિત્તા વંમચેરાંસિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—વેવિક્ષ્ય માંસશોણિતમ્, એપ પુરુષો દ્રવિકો વીર આદાનીયો વ્યા-
ख्यातो यो धुनाति समुच्छ्रयम् उपित्वा ब्रह्मचर्ये ॥ મૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—માંસશોણિતં સ્વશરીરસ્થં વેવિક્ષ્ય=અપનય—અન્તપ્રાન્તાદ્વારાદિના અન-

યહ સંયમરૂપ માર્ગ, મુક્તિ કો પ્રાપ્ત કરને કી ઇચ્છાવાલે પુરુષ જો કિ વીર—કર્મો કે નષ્ટ કરને મેં શક્તિશાલી એવં અપ્રમાદી હેં અનેકે લિયે મી દુરનુચર—અર્થાત્ અતિકષ્ટસાધ્ય હૈ, ક્યોં કિ પૂર્વ—પૂર્વ તીર્થદ્ધરોં ને ઇસ કે આચરણ કરને કી જો વિધિ પ્રદર્શિત કી હૈ ઉસી કે અનુસાર યહ આચરિત ક્રિયા જાના હૈ, અતઃ ઇસકે અનુષ્ઠાન કરનેકા ચારંચાર ઉપદેશ દિયા જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ઉસ સંયમરૂપ માર્ગકા આચરણ પ્રમાદ કે ત્યાગસે હોના હૈ, ઇસી વાત કી પુષ્ટિ કરતે હેં—‘વિગિંચ મંસસોણિયં’ इत्याદિ ।

સંયમી અપને શરીર કે માંસશોણિન કો સુઝાવે, અર્થાત્ અન્નપ્રાન્ત

આ સંયમરૂપ માર્ગ, મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવા ઇચ્છનાર પુરુષ ને વીર એટલે કે કર્મને ક્ષય કરવામાં શક્તિશાળી અને અપ્રમાદી છે તેના નટે પણ દુરનુ-ચર અર્થાત્ અતિકષ્ટસાધ્ય છે, કારણ કે પહેલાના તીર્થકરેએ તેનું આચરણ કરવાની જે વિધિ બતાવી છે તેનુસારે જ એનું આચરણ કરવામા આવે છે, નાટે એનું અનુષ્ઠાન કરવાનો ઉપદેશ ચારંચાર કરવામા આવેલ છે. ॥ ૪૦ ૩ ॥

આ સંયમરૂપ માર્ગનું આચરણ પ્રમાદના ત્યાગથી થાય છે આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે—‘વિગિંચ મંસસોણિયં’ इत्याદિ.

સંયમી પોતાના શરીરના માંસ લોહીને સુઝાવે, અર્થાત્ અન્ન—પ્રાન્ન આહાર

તસ્ય ચાલસ્ય તમસિ=મોહરૂપે ભાવાન્ધકારે વર્તમાનસ્ય, અત એવ-અવિજાનતઃ= આત્મહિતમનવવૃદ્ધ્યમાનસ્ય આજ્ઞાયાઃ=ભગવત્તીર્થકરોપદેશરૂપસ્ય પ્રવચનસ્ય લાભો નાસ્તિ । અનાદિમિથ્યાત્વપ્રતિચ્છન્નવિવેકજ્ઞાનસ્ય મહામોહવશાદાઽઽર્હતપ્રવચન-શ્રવણે પ્રવૃત્ત્યભાવાદ્ હેયોપાદેયવિવેકાનર્હત્વાચ્ચ સમ્યક્ત્વલાભાસંભવ ઇતિ ભાવઃ । યદ્વા-આજ્ઞા=વૌધિઃ-સમ્યક્ત્વમ્, તસ્યા લાભો નાસ્તીત્યર્થઃ । ઇતિ=એતદ્ બ્રવીમિ યથા ભગવદ્વચનં શ્રુતં તથા કથયામીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૫ ॥

તો શાસ્ત્રકારોંની દૃષ્ટિમાં વહ વ્યક્તિ અસંયમી હી હૈ । વહ ઉનર પદાર્થોં કા સેવન નહીં કર રહા હૈ, બ્રહ્મચર્ય જૈસે મહાવ્રત મેં વહ સ્થિત હો, અન્ય ભવ્ય પ્રાણી મી ઉસકે ઉપદેશ કો શ્રદ્ધાકી દૃષ્ટિ સે દેખતે ઔર જ્ઞાનતે હોં; તો મી ઉસકે સંસાર કે કારણભૂત કર્મોં કા બન્ધ કમી મી નષ્ટ નહીં હો સકતા । એસા વ્યક્તિ એક પ્રકાર કા ‘વકવૃત્તિ’ હી હૈ । વહ ઉપર સે શુભ્ર-નિર્દોષ પ્રતીત હોતે હુએ મી મીતર સે અશુભ્ર-મલિન હી હૈ । દિશ્વાને કે લિયે હી ઉસને વાહ્યરૂપમેં માતા-પિતાદિક અથવા અસંયમ-ભાવોં સે સંબંધ છોડ રક્ષા હૈ, મીતર સે નહીં, અતઃ એસે વ્યક્તિયોં કો-કિ જિન્હેં વાસ્તવિક રીતિ સે હેયોપાદેય કા વિવેક નહીં હૈ, જો વહ મી નહીં સમજતે હૈં કિ મેરા સ્વયંકા હિત કિસ મેં હૈ ? ઇતને ગહરે અંધ-કાર મેં પડે હુએ હૈં ઉન્હેં વીતરાગ પ્રભુ કી વાણીકા રસાસ્વાદ કમી મી નહીં આ સકતા ।

‘આદીયતે યત્-તત્ આદાનમ્’ અર્થાત્-સાવચ ક્રિયા મેં પ્રવૃત્તિ રચ-

અચયમી જ છે, ભલે તે પદાર્થોંનુ સેવન તે ન કરતો હોય, બ્રહ્મચર્ય જેવા મહા વ્રતમા ભલે તે સ્થિત હોય, બીજા ભવ્ય પ્રાણી પણ તેના ઉપદેશને શ્રદ્ધાની દૃષ્ટિથી દેખતા અને માનતા હોય, તો પણ તેના સંસારના કારણભૂત કર્મોંનો બંધ કોઈ વળત પણ નષ્ટ થતો નથી એવી વ્યક્તિ એક પ્રકારના ‘વકવૃત્તિ’ જ છે. તે ઉપરથી શુભ્ર-નિર્દોષ દેખાતા છતા પણ અંતરથી અશુભ્ર-મલિન જ છે દેખાડવાને જ માટે તેણે બાહ્યરૂપમા માતા-પિતાદિક, અથવા અસંયમ ભાવોથી સંબંધ છોડી દીધેલ હોય છે, પણ અંતરથી નહિ, માટે આવી વ્યક્તિ-ઓને-કે જેઓને વાસ્તવિક રીતિથી હેયોપાદેયનો વિવેક હોતો નથી, અને જેઓ એટલા ગાઢ અંધકારમા પડેલા હોય છે કે મારું સ્વયંનુ-પોતાનું હિત શેમા છે ? એની પણ જેઓને સમજ હોતી નથી, તેઓને વીતરાગ પ્રભુની વાણીનો રસાસ્વાદ ક્યારે પણ આવી શકતો નથી.

આદીયતે યત્ તત્ આદાનમ્—અર્થાત્-સાવચ ક્રિયામાં પ્રવૃત્તિ રાખનાર પ્રાણી ઠાગ જે પ્રકણ કરવાના આવે છે તે આદાન-કર્મ છે, અને તે સંસારના બીજરૂપ

प्रतिरुद्धैर्युक्तोऽपि, ब्रह्मचर्ये स्थितोऽपि, आदानीयो भूत्वाऽपि, यदि-आदानस्रोतो-
गृद्धः=आदीयते=गृह्यते सावद्यक्रियाप्रवृत्तेन यत्-तदादानं=संसारबीजरूपं कर्म, तस्य
स्रोतांसि=शब्दादिविषयभोगाः, तत्र गृद्धः=आसक्तो भवति, तर्हि स बालः=मोहोद-
दयान्मूढः सन् अव्युच्छिन्नबन्धनः=अव्युच्छिन्नं बन्धनं यस्य स तथोक्तः-अत्रुटित-
कर्मबन्धः स्यादित्यर्थः । किं च—स बालः अनभिक्रान्तसंयोगः स्यादित्यन्वयः ।
अनभिक्रान्तः=अनतिलङ्घितः संयोगः=मातापित्रादिसम्बन्धः, अथवा-असंयमसंय-
न्धो येन सः-अनभिक्रान्तसंयोगः स्यादित्यर्थः । यः पूर्वं गृहीतप्रव्रज्यः पश्चाद्
विषयभोगासक्तो भवति चेत्तर्हि स मूढः कदापि=शतसहस्रभवान्तेऽपि कर्मबन्धोच्छेदं
नाप्नोति, नापि मातापित्रादिसांसारिकसम्बन्धावसानं पश्यतीति वर्तुलार्थः ।

होकर भी, ब्रह्मचर्य में स्थित रह कर भी, तथा आदानीय-लोकमान्य हो
कर भी जो आदानस्रोतोगृद्ध, अर्थात् शब्दादि विषयभोगों में आसक्त
हो जाता है उस बाल-अज्ञानी का कर्मबन्ध कभी भी नष्ट नहीं होता,
और न वह माता-पिता आदि के सम्बन्ध को, अथवा असंयम के भाव
को ही अपने से दूर कर सकता है ।

तथा-अज्ञानरूप अंधकार में रहने वाला वह बाल अज्ञानी, कि जो
अपने हितको ही नहीं समझता है, भगवान् तीर्थङ्कर के उपदेशरूप प्रव-
चनका लाभ नहीं ले सकता ।

विशेषार्थः—संयम का लक्षण सिद्धान्तकारों ने ' इन्द्रियवृत्तिनिरोधः
संयमः ' इन्द्रियों की वृत्ति का निरोध करना ही बतलाया है । इन्द्रियों की
वृत्ति का निरोध कर लेने पर भी यदि संयमी व्यक्ति के हृदय में उनके
विषयभूत पदार्थों के सेवन के प्रति लालसा याने रागभाव बना हुआ है

चर्यमां स्थित रहने अने आदानीय-लोकमान्य પણ થઈને જે આદાનસ્રોતો-
ગૃદ્ધ-અર્થાત્ શબ્દાદિ વિષયભોગોમાં આસક્ત બની બંધ છે તે બાળ-અજ્ઞાનીનો
કર્મબન્ધ ક્યારે પણ છૂટતો નથી અને તે માતા-પિતા-આદિના સંબંધને અથવા
અસંયમભાવને ધોતાથી દૂર કરી શકતો નથી. તથા અજ્ઞાનરૂપ અંધકારમાં રહે-
નાર તે બાળ અજ્ઞાની જે ધોતાના હિતને પણ સમજતો નથી તેને ભગવાન
તીર્થંકરના ઉપદેશરૂપ પ્રવચનનો લાભ પણ મળી શકતો નથી.

વિશેષાર્થઃ—સંયમનું લક્ષણ સિદ્ધાન્તકારોએ 'ઇન્દ્રિયવૃત્તિનિરોધઃ સંયમઃ'
ઇન્દ્રિયોની વૃત્તિનો નિરોધ કરવો, તેમ બતાવેલ છે. ઇન્દ્રિયોની વૃત્તિનો નિરોધ
કરી લેવા છતાં પણ જો સંયમી વ્યક્તિના હૃદયમાં તેના વિષયભૂત પદાર્થોના
સેવન કરવાની લાલસા એટલે રાગભવ થાય તો શાસ્ત્રકારની દૃષ્ટિમાં તે વ્યક્તિ

“યઃ પૂર્વ ગૃહીતપ્રવ્રજ્યઃ પશ્ચાદ્ વિષયભોગાસક્તો ભવતિ ચેત્તર્હિ સ મૂઢઃ કદાપિ=શતસહસ્રભવાન્તેऽપિ કર્મવન્ધોચ્છેદં નાપ્નોતિ, નાપિ માતાપિત્રાદિસાંસારિકસંવન્ધાવસાનં પश्यतीति ।”

જો પહિલે દીક્ષા અંગીકાર કર કે ખી ફિર પીછે મોહ કે પ્રવલ ઉદય સે પાંચ ઇન્દ્રિયોં કે વિષયભોગોં મેં આસક્ત હો જાના હૈ વહ મૂઢ હૈ—વાલ હૈ । ઉસકે કર્મ કે વન્ધ કા ઉચ્છેદ—અવસાન લાઘોં ભવોં મેં ખી નહીં હો સકના, ઔર ન વહ માતાપિતાદિકરૂપ સાંસારિક સંવંધ કા અંત હી કર સકના હૈ । ‘તમસિ’ યહ પદ ગાઢ અન્ધકાર કા વાચક સસમી વિભક્તિ કા ઇક વચન હૈ । જિસ પ્રકાર અન્ધકાર મેં વર્તમાન વ્યક્તિ અપને હાથ પર ખી રખી હુઈ વસ્તુ કા અવલોકન નહીં કર સકના હૈ, ઠીક ઇસી પ્રકાર મોહરૂપ ભવાન્ધકાર મેં રહા હુઆ વ્યક્તિ ખી અપની આત્મા મેં હી સમાયે હુએ અપને હિનરૂપ કર્તવ્ય કો નહીં જાન સકના હૈ । એસે જીવ કે લિયે ભગવાન્ તીર્થંકર પ્રભુ કી ઉપદેશરૂપ વાણી કા ખી લાભ નહીં હો સકના હૈ, કારણ કિ અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ સે ઉસકા વિવેકજ્ઞાન લુપ્ત હો રહા હૈ, ઔર પ્રવલ મોહ કે ઉદય સે અર્હન્તપ્રભુ કી વાણી કા લાભ લેને મેં અસમર્થ બન રહા હૈ, અનઃ ઉસ કી ઉનકી વાણી કે શ્રવણ કરને મેં અન્તરંગ

“યઃ પૂર્વ ગૃહીતપ્રવ્રજ્યઃ પશ્ચાદ્ વિષયભોગાસક્તો ભવતિ ચેત્તર્હિ સ મૂઢઃ કદાપિ=શતસહસ્રભવાન્તેऽપિ કર્મવન્ધોચ્છેદં નાપ્નોતિ, નાપિ માતાપિત્રાદિસાંસારિક-સંવન્ધાવસાનં પश्यतीति ”

જે પહેલાં દીક્ષા અંગીકાર કરીને પછી મોહના પ્રબળ ઉદયથી પાંચ ઇન્દ્રિયોના નિયંત્રણોનાં આરૂઢા ધર્ષ જાય છે તે મૂઢ છે—ખાળ છે, તેના કર્મના પ્રધનો ઉચ્છેદ લાખે! લેવાના પણ નથી થતો. તેમ જ તે માતાપિતાદિરૂપ સંબંધનો પણ અંત લાવી શકતો નથી.

“તમસિ” આ પદ ગાઢ અંધકારનું વાચક સતતની વિલકિતનું એકવચન છે. જે પ્રકારે અંધકારમાં કોઈ માણસ પોતાના હાથ ઉપર પણ રાખેલી વસ્તુને કેળી શકતો નથી તે પ્રકારે મોહરૂપ લાવ-અંધકારમાં રહેલો જીવ પણ આત્મામાં રહેલા પોતાના હિતરૂપ કર્તવ્યને જાણી શકતો નથી, એવા જીવને ભગવાન તીર્થંકર પ્રભુની ઉપદેશ વાણીને પણ લાલ ધર્ષ શકતો નથી, કારણ કે અનાદિ જાણના મિથ્યાત્વથી તેનું વિવેકજ્ઞાન લુપ્ત થયેલું છે, અને પ્રબળ મોહના ઉદયથી તે અર્હન્તપ્રભુની વાણીનાં લાલ લેવાના અસમર્થ બનેલ છે, તેથી તેને તેમની વાણીનું શ્રવણ કરવામાં અતરંગથી પ્રવૃત્તિ પણ થતી નથી. અથવા હેયો-

नेवाले प्राणी के द्वारा जो ग्रहण किया जाता है वह आदान-कर्म है, और वह संसार का बीजरूप है। बीज से ही वृक्ष तैयार होता है, विना बीज के नहीं; यह संसाररूप महावृक्ष भी इस कर्मरूप बीज का ही फल है। इस से यह फलितार्थ निकलता है कि बीज की किसी निमित्त से अंकुरोत्पादन शक्ति विनष्ट हो जाती है तब वह जिस प्रकार अपने कार्य को नहीं कर सकता है उसी प्रकार राग-द्वेषादिक कषायों के अभाव में गृहीत कर्म-णवर्गणाओं की भी जीवको परतन्त्रादिरूप करने की, अथवा जीव के ज्ञानादिक गुणों का घात आदि करने की शक्ति नष्ट हो जाती है। इस आदान का स्रोत शब्दादिक इन्द्रियों के विषय-भोग ही हैं, उनमें जो गृद्ध-आसक्त है वह आदानस्रोतोगृद्ध है। जो मोह के उदय से पर-पदार्थों में तल्लीन है एवं हेयोपादेय के ज्ञान से विकल है वही यहां पर बाल है। जो मोहाधीन-आत्मज्ञान से रहित है—चाहे वह व्याकरणादिक एवं न्यायशास्त्रादि ग्रन्थों का अध्येता भी क्यों न हो वह बाल-मूर्ख ही है। संयम को ग्रहण कर पश्चात् प्रबल मोह के उदय से असंयम-भाव को प्राप्त करनेवाले बड़े से बड़े विद्वान् भी शास्त्रों में 'बाल' नामसे वर्णित किये गये हैं। यही बात टीकाकार इस प्रकार से प्रकट करते हैं—

छे. भीज्थी न वृक्ष तैयार थाय छे, भीज् विना नहि. आ संसाररूप महा-वृक्ष पणु आ कर्मरूप भीज्नु न इण छे. आथी अे सारांश निकणे छे डे—
न्यारे डेअ पणु निमित्तथी भीज्नी अंकुरोत्पादनशक्ति नष्ट थछ नय छे
त्यारे ते ने प्रकारे पोताना कार्यने नथी करी शक्तुं ते प्रमाणे रागद्वेषादिक
कषायोना अभावमां गृहीत कर्मणवर्गणाओनी पणु जवने परतन्त्रादिरूप
करवानी, अथवा जवना ज्ञानादिक गुणोना घात आदि करवानी शक्तिनो नाश
थाय छे. आ 'आदान'नुं स्रोत (मार्ग) शब्दादिक इन्द्रियोना विषयभोग न
छे, आमां ने गृद्ध-आसक्त छे ते आदानस्रोतोगृद्ध छे, अेटले कर्म आववाना
कारणोमां गृद्ध रहे छे. ने मोहना उदयथी परपदार्थोमां आसक्त छे तेमन
हेयोपादेयना ज्ञानथी विकल छे ते न आ डेकाणु जाण छे. ने मोहाधीन-आत्म-
ज्ञानथी रहित छे, लदे ते व्याकरणादिक अने न्याय शास्त्रोना ग्रंथोना अभ्यासी
डेभ न डोय तो पणु ते जाण-मूर्ख न छे. मोटांमां मोटो विद्वान पणु संय-
मने ग्रहण करी पाछणथी प्रणण मोहना उदयथी असंयमलावने प्राप्त करवा-
वाणो मोटांमां मोटो विद्वान पणु शास्त्रोमां 'जाण' आ नामथी डेहेवांमां
आव्यो छे. अे न वातने टीकाकार आ सारांशथी प्रकट करे छे—

યદ્વા-યસ્ત્વતીતં સુખં ન સ્મરતિ, નાપિ ભવિષ્યત્કાલિકં વાઙ્મતિ, તસ્ય વર્ત-
માનમુખેઽપિ રાગો નૈવ સ્યાદિત્યાહ-‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ । યસ્ય ભોગવિપાકં
જાનતઃ, પુરા=પૂર્વ-પૂર્વમુક્તસુખાનુસ્મરણં નાસ્તિ, પશ્ચાત્=પશ્ચાદ્ભાવી-આગામિ-
ભોગાભિલાષો નાસ્તિ, તસ્ય મધ્યે=વર્તમાનકાલે કુતઃ ભોગેચ્છા સ્યાત્ । મોહનીય-
કર્મોપશમાત્તસ્ય ભોગેચ્છા નૈવ ભવેદિતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

પ્રશ્ન—જિન્હોં ને પૂર્વ મેં સમકિત પ્રાપ્ત નહીં કિયા હૈ ઓર
ભવિષ્ય મેં જો નહીં પ્રાપ્ત કરેંગે, એસે હી જીવ તો વર્તમાન મેં સમ-
કિત કી પ્રાપ્તિ કિયા કરતે હૈં । યદિ “ આદાવન્તેઽપિ યન્નાસ્તિ વર્તમા-
નેઽપિ તત્તથા ” યહ અટલ નિયમ માન લિયા જાવેગા તો ફિર કિસી મી
જીવકો સમકિત કા લાભ નહીં હો સકેગા ?

ઉત્તર—યહ કથન અવ્યવહાર રાશિમેં રહેનેવાલે જીવોં કી અપેક્ષા
સે હી સમજના ચાહિયે । વ્યવહાર રાશિમેં રહે હુએ જીવોંકી અપેક્ષાસે નહીં ।

અથવા ઇસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન ઇસ પ્રકારસે મી હોતા હૈ—

ભોગોં કે વિપાક કો મહા કષ્ટપ્રદ જાન કર જો પૂર્વમેં ભોગે હુએ પાંચ
ઇન્દ્રિયોંકે વિષયસુખ કા સ્મરણ તક નહીં કરતા હૈ ઓર ડસ સુખ કી
ભવિષ્યત્કાલિક પ્રાપ્તિ કી વાઙ્મતિ સે સર્વથા દૂર હૈ, એસે વ્યક્તિ કો વર્ત-
માનકાલ મેં પ્રાપ્ત વહ સુખ ભોગેચ્છારૂપ રાગ કા કારણ કૈસે હો સકતા
હૈ ? અર્થાત્ નહીં હો સકતા ।

પ્રશ્ન—જેઓએ પૂર્વમા સમકિત પ્રાપ્ત નથી કર્યું અને આવતા કાળમાં પણ
જેઓ સમકિત પ્રાપ્ત કરશે નહિ, આ પ્રકારના જ હવે વર્તમાનમાં સમકિતની પ્રાપ્તિ
કરે છે જે “ આદાવન્તેઽપિ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેઽપિ તત્તથા ” આ અટલ નિયમ માન-
વામા આવે તો પછી કોઈ પણ હવેને સમકિતનો લાભ થઈ શકે નહિ ?

ઉત્તર—આ કથન અવ્યવહાર-રાશિમાં રહેનાર હવેની અપેક્ષાથી જ
નમજવું જોઈએ, વ્યવહાર-રાશિમાં રહેલાં હવેની અપેક્ષાએ નહિ

અથવા આ સૂત્રનુ વ્યાખ્યાન આ પ્રકારે પણ થાય છે—ભોગોના વિપાકને મહા
કષ્ટપ્રદ જાણીને જે પૂર્વમા ભોગવેલાં પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયસુખનું સ્મરણ સુદ્ધાત
કરતો નથી, અને તે મુખની ભવિષ્યમા પણ પ્રાપ્તિની વાછાથી સર્વથા દૂર છે,
એવા હવેને વર્તમાનકાળમા પ્રાપ્ત તે મુખ ભોગેચ્છારૂપ રાગનું કારણ કેવી રીતે
હોઈ શકે ? અર્થાત્ નથી થતું

ભાવતમસિ વર્તમાનસ્ય બાલસ્ય કથં સમ્યક્ત્વલાભાસમ્ભવઃ ? इति जिज्ञासा-
यामाह—‘जस्स नत्थि’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જસ્સ નત્થિ પુરા પચ્છા મજ્ઞે તસ્સ કુઓસિયા ?।૬।

છાયા—યસ્ય નાસ્તિ પુરા પશ્ચાત્ મધ્યે તસ્ય કુતઃ સ્યાત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—યસ્ય=મોહતમસિ વર્તમાનસ્ય જીવસ્ય પુરા=પૂર્વસ્મિન્ કાલે પશ્ચાત્=મવિષ્યત્કાલે નાસ્તિ=પૂર્વ સમ્યક્ત્વં નાભૂત્, અગ્રેऽપિ ન તદ્ મવિષ્યતિ, તસ્ય મધ્યે=મધ્યભવે-વર્તમાનજન્મનિ, કુતઃ સ્યાત્=કથં ભવેત્-ન ભવેદિત્યર્થ । “આદા-વન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેऽપિ તત્તથા” इति लोकन्यायस्य सर्वानुभवसिद्धत्वादिति भावः । अव्यवहारराश्यपेक्षयैतत् ।

સે પ્રવૃત્તિ હી નહીં હોતી । અથવા હેયોપાદેય કે વિવેક કે અયોગ્ય હોને સે એસે મનુષ્ય કો સમ્યક્ત્વ કા લાભ અસમ્ભવ હૈ, યહ બી “આજ્ઞાયાઃ લાભો નાસ્તિ” इस वाक्य का अर्थ होता है, क्योंकि—‘आज्ञा’ का द्वितीय अर्थ बोधि-समकित है उसका लाभ ऐसे मनुष्य को होता नहीं ॥ सू० ५ ॥

ભાવાન્ધકાર મેં રહા હુઆ બાલ જીવ સમ્યક્ત્વ કે લાભ સે વંચિન રહતા હૈ । इसीकी पुष्टि सूत्रकार करते हैं—‘जस्स नत्थि पुरा’ इत्यादि ।

મોહરૂપી અન્ધકાર મેં રહેનેવાલા અજ્ઞાની જીવ પૂર્વ જન્મમેં ઓર આગામી જન્મમેં સમકિત કે લાભ સે વંચિત રહતા હૈ તો મધ્ય અર્થાત્ વર્તમાન જન્મ મેં વહ સમકિત કા લાભ કર લેગા યહ કૈસે સમ્ભવ હો સકતા હૈ ? અર્થાત્ નહીં હો સકતા । “આદાવન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમા-નેऽપિ તત્તથા” जिसकी सत्ता आदि और अन्त में नहीं है उसकी सत्ता वर्तमान में भी नहीं होती है । यह एक सामान्य सा नियम है ।

પાદેયના વિવેકને અયોગ્ય હોવાથી આવા મનુષ્યને સમ્યક્ત્વનો લાભ અસંભવ છે આ પણ “આજ્ઞાયાઃ લાભો નાસ્તિ” આ વાક્યનો અર્થ થાય છે, કેમ કે ‘આજ્ઞા’નો બીજો અર્થ બોધિ એટલે સમકિત છે, તેનો લાભ આવા મનુષ્યને થતો નથી. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

લાવ-અંધકારમાં રહેલાં બાળ જીવ સમ્યક્ત્વના લાભથી વંચિત રહે છે. આની પુષ્ટિ સૂત્રકાર કરે છે—‘જસ્સ નત્થિ પુરા’ ઇત્યાદિ.

મોહરૂપી અંધકારમાં રહેનાર અજ્ઞાની જીવ પૂર્વ જન્મમાં અને આવતા જન્મમાં સમકિતના લાભથી વંચિત રહે છે, તો પછી મધ્ય અર્થાત્ વર્તમાન જન્મમાં તે સમકિતનો લાભ કરી લેશે, તેનો સંભવ કેવી રીતે હોય ? અર્થાત્ સંભવ હોતો નથી. “આદાવન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેऽપિ તત્તથા”—જેની સત્તા આદિ અને અંતમાં નથી તેની સત્તા વર્તમાનમાં પણ નથી હોતી, એ એક સામાન્ય નિયમ છે.

રમણમપિ સમ્યક્ત્વશબ્દવ્યપદેશ્યમિતિ ભાવઃ । इति=एवं पश्यत=यूयं जानीत । यतः—
येन=आरम्भोपरमणरूपेण कारणेन घोरं=घोरदुःखजनकं कर्मबन्धं, बधं, दारुणं=
दुःसहं परितापं=शारीरं मानसं च दुःखं नाप्नोतीत्यर्थः, तस्मात् सकलसावद्यव्यापा-
रेभ्यो निवर्तितव्यमिति भावः । यद्वा—येन=आरम्भेण सावद्यानुष्ठानेन घोरं बन्धं बधं
दारुणं परितापं च प्राप्नोति तस्मादारम्भादुपरतो भवेदित्यर्थः ॥ सू० ७ ॥

કિ સમકિત કે હોને પર હી આરમ્મનિવૃત્તિ હોતી હૈ, તો ખી કારણ મેં
કાર્ય કે ઉપચાર સે હી આરમ્મનિવૃત્તિ કો સમકિત કહા ગયા હૈ, એસા
સમજના ચાહિયે ।

જીવ ઇસ સાવધ વ્યાપાર કે પરિત્યાગ સે હી કર્મબન્ધ, વધ ઓર
ઓર દુઃસહ શારીરિક એવં માનસિક કષ્ટોં સે સદા વચતા હૈ, ઇસ લિયે
આત્મહિતૈષી કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઇસ સાવધવ્યાપારરૂપ ક્રિયા સે
સદા દૂર રહે ।

વિશેષાર્થ—યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ સાવધ વ્યાપાર સે જીવોં
કે પરિણામોં મેં દુર્વૃત્તિ સદા જાગૃત રહતી હૈ । ઉસસે જીવ તરહ-તરહ
કે સાધનોં કે જુટાને મેં હી અપને જીવન કો વિતા દેતા હૈ । એસા કયોં
હોતા હૈ ? જવ હમ ઇસકા મૂક્ષમ નિરીક્ષણ કરતે હૈ તો હમેં ઇસ કી તહ
કા પતા અચ્છી તરહ સે લગ જાતા હૈ કિ વહ યહ વિપયભોગેચ્છા હી હૈ ।

ઇસકે ફદમેં ફસા હુઆ જીવ જ્ઞાતા એવં તત્ત્વજ્ઞ બનને કા ઢોંગ હી
કરતા હૈ । ઉસકે પાસ મેં નિજ કે હિત કે લિયે કુછ ખી નહીં હોતા ।

નિવૃત્તિ સમકિતનુ કાર્ય છે, કારણ કે સમકિતના થવાથી જ આરંભનિવૃત્તિ થાય
છે, તો પણ કારણમા કાર્યના ઉપચારથી આરંભનિવૃત્તિને જ સમકિત કહેવામા
આવેલ છે, એમ સમજવું જોઈએ

જીવ આ માવધ-વ્યાપારના પરિત્યાગથી કર્મબંધ, વધ અને દુઃસહ શારી-
રિક માનસિક કષ્ટોથી મક્કા બને છે, માટે આત્મહિતૈષીનું કર્તવ્ય છે કે તે સદા
આ માવધ-વ્યાપારથી દૂર રહે.

વિશેષાર્થ—એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે સાવધ વ્યાપારથી જીવોના પરિ-
ણામોમા સદા દુર્વૃત્તિ બળગત રહે છે, તે થકી જીવ તરહ-તરહના સાધનોને
એકત્રિત કરવામા જ પોતાના જીવનને વ્યર્જીત કરી દે છે એમ કેમ બને છે ?
ત્યારે એમો તેનું સૂક્ષ્મ નિરીક્ષણ કરીએ છીએ ત્યારે એમોને એકસપણે તેનું
નનાધાન મળી બાય છે કે તે આ વિપય ભોગોજ છે

એની પકડમા ફસેલા જીવ જ્ઞાતા અને તત્ત્વજ્ઞ બનવાના ઢોંગ જ કરે છે
તેની પાસે પોતાના હિતને માટે કાંઈ પણ હોતું નથી, પોતાના વિપય કપાયની

यस्य कालत्रयेऽपि भोगेच्छा नास्ति, स किंभूतः स्यादित्याह—‘से हु’ इत्यादि ।

मूलम्—से हु पन्नाणमन्ते बुद्धे आरंभोवरण । सम्ममेयन्ति पासह । जेण बंधं वहं घोरं परियावं च दारुणं ॥ सू० ७ ॥

छाया—स हु प्रज्ञानवान् बुद्धः आरम्भोपरतः । सम्यगेतदिति पश्यत । येन बन्धं वधं घोरं परितापं च दारुणम् ॥ सू० ७ ॥

टीका—हु=यतः—भोगाभिलाषरहितः, तस्मात् स प्रज्ञानवान्=जीवाजीवादि-पदार्थानां सम्यग्ज्ञाता, अत एव बुद्धः=तत्त्वज्ञः, आरम्भोपरतः=आरम्भः=सावद्य-व्यापारस्तस्मादुपरतो=निवृत्तः । एतद्=आरम्भोपरमणं, सम्यक्=सम्यक्त्वमस्ति । सम्यक्त्वे सति हि आरम्भनिवृत्तिरुपजायते, तस्मात् सम्यक्त्वकार्यतयाऽऽरम्भोप-

बात भी ठीक है; जिसके मोहनीय कर्म का उपशम हो चुका है उस व्यक्ति के लिये भोगेच्छा-विषयसुखों को भोगने की लालसा-हो ही कैसे सकती है? भोगेच्छा यह मोहनीय कर्म का ही एक कार्य है, अतः जब मोहनीय कर्म ही उपशम अवस्थामें है तब भोगेच्छारूप कार्य का आविर्भाव हो भी कैसे सकता है ॥ सू० ६ ॥

जिसके त्रिकाल में भी भोगेच्छा नहीं है उसकी प्रशंसा करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘से हु’ इत्यादि ।

भोगोंको भोगने की अभिलाषा से रिक्त होने के कारण वह संयमी जीवाजीवादिक नव तत्त्वों के वास्तविक स्वरूप का ज्ञाता बन कर तत्त्वज्ञ होता हुआ आरम्भ-सावद्यव्यापाररूप प्रवृत्ति-से परे हो जाता है, यही सम्यक्त्व है । यद्यपि आरम्भनिवृत्ति, समकित का कार्य है; क्यों

वात પણ ઠીક છે, જેને મોહનીય કર્મનો ઉપશમ થયેલ છે તે વ્યક્તિને માટે ભોગેચ્છા-વિષયસુખોને ભોગવવાની લાલસા જ કેવી રીતે થઈ શકે ?, ભોગેચ્છા તે મોહનીય કર્મનું જ એક કાર્ય છે, માટે જ્યારે મોહનીય કર્મ જ ઉપશમ અવ-સ્થામાં છે ત્યારે ભોગેચ્છારૂપ કાર્યનો આવિર્ભાવ કેવી રીતે થઈ શકે ? અર્થાત્-થઈ શકતો નથી. ॥ સૂ० ૬ ॥

જેને ત્રણ કાળમાં પણ ભોગેચ્છા નથી તેની પ્રશંસા કરતાં સૂત્રકાર કહે કે—‘સે હુ’ ઇત્યાદિ.

ભોગોને ભોગવવાની અભિલાષાર્થી રિક્ત હોવાના કારણે જીવાજીવાદિક નવ તત્ત્વોના વાસ્તવિક સ્વરૂપના જ્ઞાતા તે સંયમી તત્ત્વજ્ઞ બનીને આરંભ-સાવધ વ્યાપારરૂપ પ્રવૃત્તિથી દૂર થઈ જાય છે, એ જ સમ્યક્ત્વ છે, જે કે આરંભની

કિં કૃત્વા સાવધવ્યાપારં પરિત્યજેદિતિ જિજ્ઞાસાયમાહ-‘પલિચ્છિદિય’ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—પલિચ્છિદિય વાહિરંગં ચ સોયં, નિકમ્મદંસીં હ મચ્ચિણ્હિં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—પ્રતિચ્છિદ્ય વાહ્યકં ચ સ્ત્રોતઃ નિષ્કર્મદર્શીંં હ મર્ત્યેષુ ॥ મૃ૦ ૮ ॥

ટીકા—વાહ્યકં=વર્ધિભવં હિરણ્યરજતમાતાપિત્રાદિસમ્બન્ધરૂપં, યદ્વા—પ્રાણા-
તિપાતાદિકં સ્ત્રોતઃ=આસ્રવં કર્મવન્ધકારણં, ચ-શબ્દાદ્ રાગદ્વેષાત્મકં વિષયાભિલાષ-
રૂપં વા આન્તરં સ્ત્રોતો વા પ્રતિચ્છિદ્ય=પ્રતિરુદ્ધ્ય, હ=અસ્મિન્ લોકે, મર્ત્યેષુ=મનુષ્યેષુ
મધ્યે નિષ્કર્મદર્શીં=કર્મણો નિષ્કાન્તઃ નિષ્કર્મા=મોક્ષઃ, તં દ્રષ્ટું શીલમસ્યેતિ નિ-
ષ્કર્મદર્શીં=મોક્ષાભિલાષી સન્ સાવધવ્યાપારં પરિત્યજેદિત્યર્થઃ । યદ્વા—હ=અસ્મિન્
લોકે મર્ત્યેષુ=મનુષ્યેષુ વાહ્યકં સ્ત્રોતઃ પ્રતિચ્છિદ્ય નિષ્કર્મદર્શીં ભવતિ, મોક્ષ
પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ ॥ મૃ૦ ૮ ॥

પ્રકાર કે ઘોર વધ, વંધન ઔર દારુણ પરિતાપ કા કારણ સમજ કર ઉનસે
સર્વથા વિરક્ત હી રહતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

હસી વિષયકી પુષ્ટિ કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘પલિચ્છિદિય’ઇત્યાદિ

માના-પિતા આદિક સચિત્ત, સુવર્ણ-રજતાદિક અચિત્ત પરિગ્રહરૂપ
અથવા હિંસાદિક પાપરૂપ વહિરજ્ઞ સ્ત્રોતકા એવં રાગદ્વેષ અથવા વિષયા-
ભિલાષરૂપ અન્તરંગ સ્ત્રોત કા નિરોધ કર હસ લોક કે અન્દર મનુષ્યોમ્મે
વસનેવાલા નિષ્કર્મદર્શી--મોક્ષાભિલાષી જીવ સાવધ વ્યાપાર કા
પરિત્યાગ કરે ।

શાસ્ત્રકારોંને પરિગ્રહ દો પ્રકાર કા બનલાયા હૈ । (૧) વાહ્ય પરિગ્રહ
ઔર (૨) અન્તરજ્ઞ પરિગ્રહ । ધનધાન્યાદિક ઔર માતાપિતાદિક વાહ્ય પરિ-
ગ્રહ હૈ, વિષયાભિલાષાદિક તથા દ્વેષાદિક અન્તરજ્ઞ પરિગ્રહ હૈ । ‘પરિગ્રહ’

ધર્મ બધ છે, અને આવધ વ્યાપારોને અનેક પ્રકારના ઘોર બધ, બધન અને
દારુણ-પરિતાપનું કારણ સમજને તેનાથી સર્વથા વિરક્ત રહે છે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

આ વિષયની પુષ્ટિ કરતા સૂત્રકાર કહે છે—‘પલિચ્છિદિય’ ઇત્યાદિ.

માતા-પિતા-આદિક સચિત્ત, સુવર્ણ રજતાદિક અચિત્ત પરિગ્રહરૂપ અથવા
હિંસાદિક-પાપરૂપ બહિરંગ સ્ત્રોત (માર્ગ) નો તેમજ રાગ દ્વેષ અથવા
વિષયાભિલાષરૂપ અતરંગ સ્ત્રોતનો નિરોધ કરી આ લોકની અંદર મનુષ્યોમા
વસવાવાળો નિષ્કર્મદર્શી-મોક્ષાભિલાષી જીવ આવધ વ્યાપારનો પરિત્યાગ કરે.

શાસ્ત્રકારોએ પરિગ્રહ બે પ્રકારનો બતાવેલ છે (૧) વાહ્ય પરિગ્રહ અને
(૨) અંતરંગ પરિગ્રહ ધન-ધાન્યાદિક અને માતા-પિતાદિક વાહ્ય પરિગ્રહ છે, અને
વિષયાભિલાષાદિક, તથા રાગ-દ્વેષાદિક અતરંગ પરિગ્રહ છે. પરિગ્રહ શબ્દનો

अपने विषयकषाय की पुष्टि जैसे भी हो, उसके लिये वह विहित अ-विहित सब तरह के उपायों को काम में लाता है। ऊपर से ही वह साधु-वेपधारी है, भीतर से वह अपने सच्चे हितके साधनों का नाश करता है। संसार में धर्मका पतन भी इसी की ओट लेकर हुए हैं और हो रहे हैं तथा आगे भी होंगे।

यह बड़ी बलवती व्याधि है। इसकी चिकित्सा सद्गुरु ही कर सकते हैं, अतः उनका कथन है कि सर्व प्रथम आत्महितैषी जीव इसकी चिकित्सा कराने के लिये अपने में योग्यता लावे। यह योग्यता एक ही भवमें जीव को प्राप्त नहीं हो सकती। जो भी वर्तमान भवमें योग्य हुए हैं वे सब पूर्वके आराधक जीव थे, अतः इस व्याधि की चिकित्सा कराने की योग्यता प्राप्त करने की जीवमें कटिबद्धता होनी चाहिये। यह कटिबद्धता ही समझिनी है, चाहे यह स्वभाव से हो या परके उपदेश से।

यह तो निश्चित है कि इस प्रकार की योग्यता से संपन्न आत्मा भोगों में लालसावाला नहीं होता। उसकी प्रवृत्ति वहां पर तपे हुए लोहे पर पांव रखने जैसी ही होती है, अतः धीरे २ अपनी उन्नति करता हुआ विषय-भोगेच्छा से सदा के लिये दूर हो जाता है और सावद्य व्यापारों को अनेक

पुष्टि भाटे ते विहित अविहित णधा प्रकारना उपायो करे छे. उपरथी न ते साधुवेपधारी छे पणु अतरथी ते पोताना साव्या हितना साधनेना नाश न करे छे. संसारमां धर्मनुं पतन पणु आवा लुबेना निमित्ते थयुं छे, थर्म रडेवुं छे अने आगण पणु थशे.

आ मोटी णणवान व्याधि छे. अनी चिकित्सा सद्गुरु न करी शके छे. भाटे तेमनुं कथन छे—सर्व प्रथम आत्महितैषी लुव तेनी चिकित्सा कराववा भाटे पोतानामां योग्यता लावे. योग्यता ओक न लवमां लुवने प्राप्त थती नथी. ने वर्तमान लवमां योग्य थयेल छे ते णधा पूर्वना आराधक लुव डता, भाटे आ व्याधिनी चिकित्सा कराववानी योग्यता प्राप्त करवा भाटे लुवमां कटिबद्धता डोवी नेधअ. आ कटिबद्धता न समझित छे, लडे ते स्वभावथी डोय अगर पारडाना उपदेशथी डोय.

आ निश्चित छे के आवी योग्यताथी संपन्न आत्मा लोभोमां लालसा राणनार नथी थता. तेनी प्रवृत्ति त्यां तपेला लोडा उपर पण राणवा नेवी थाय छे, भाटे ते धीरे धीरे पोतानी युक्ति-प्रयुक्तिथी विषय लोभेच्छाथी नदाने भाटे इर

નનુ કર્મોપાદાનરૂપં સ્રોતઃ કિં કૃત્વા પ્રતિચ્છેદ્યમિતિ જિજ્ઞાસાયમાહ---
'કમ્મુણા' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કમ્મુણો સફલત્તં દટ્ઠૂણં તઓ નિજ્જાઈ વેયવી ॥ સૂ. ૦ ૧ ॥

છાયા—કર્મણઃ સફલત્ત્વં દટ્ઠ્વા તતો નિર્યાતિ વેદવિત્ ॥ મૂ. ૦ ૧ ॥

ટીકા—મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકષાયયોગૈઃ ક્રિયતે ઇતિ કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ-
કમ્, તસ્ય, સફલત્ત્વં=જ્ઞાનાવરણાદિસ્વસ્વફલજનનાવશ્યમ્ભાવં, દટ્ઠ્વા વેદવિત્—વેદ્યતે
તત્ત્વાન્યનેનેતિ વેદઃ=આર્હતાગમઃ, તં વેત્તીતિ વેદવિત્—સર્વજ્ઞોપદેશજન્યસમ્યગ્જ્ઞાન-
વાનિત્યર્થઃ, તત્=કર્મણ. કર્મવન્ધકરણાત્ નિર્યાતિ=દૂરીભવતિ, કર્મવન્ધનનિવન્ધન-
સકલસાવચ્ચવ્યાપારં પરિવર્જયતીત્યર્થઃ ॥ મૂ. ૦ ૧ ॥

વ્યાપારોં સે સદા વિરક્ત રહે । જિસસે જીવોં કો થોડે સે મી કષ્ટાદિક
કા અનુભવ હો એસી કોઈ મી ક્રિયા વહ ન કરે । સાવચક્રિયા કરને-
વાલે મનુષ્યોં કે સમ્પર્કમેં રહતે હુએ મી અપને કો ઉસ વ્યાપાર સે બચા
કર રખના યહી તો સંયમી મુનિકી વિશેષતા હૈ ।

નિષ્કર્મદર્શી—ઇસ શબ્દ કા અર્થ મોક્ષાભિલાષી હૈ, કયોં કિ કર્મોં
કે સમ્બન્ધ સે રહિત જો સ્થાન હૈ વહ નિષ્કર્મ હૈ, ઉસ સ્થાન કો દેખને
કા જિસ કા સ્વભાવ હૈ એસા જીવ નિષ્કર્મદર્શી કહલાતા હૈ । સૂત્રમેં
“ચ” શબ્દ અન્તરજ્ઞ પરિગ્રહ કા વોધક હૈ ॥ સૂ. ૦ ૮ ॥

સંયમી મુનિ કયા સમજ્ઞ કર કર્મોં કે આને મેં કારણરૂપ ઇસ સ્રોત
કો વન્દ કરે ? ઇસ પ્રકાર કી જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કરતે હુએ સૂત્રકાર
કહતે હે—'કમ્મુણો' ઇત્યાદિ ।

કર્મોં કો અપને ૨ ફલ કા દેનેવાલા જાનકર વહ જ્ઞાની-સંયમી મુનિ
ઉન કર્મોં સે ઓર ઉનકે કારણોં સે દૂર હી રહતા હૈ ।

વ્યાપારોં સદા વિરક્ત રહે બેનાથી છુવોને થોડો પણ કષ્ટાદિકનો અનુભવ થાય
તેણુ કોઈ કાર્ય તેઓ ન કરે સાવચ-વ્યાપાર કરવાવાળા મનુષ્યોના સંપર્કમા રહેવા છતાં
પણ પોતાની જાતને તેવા વ્યાપારથી દૂર રાખણુ, એ જ સંયમી મુનિની વિશેષતા છે

‘નિષ્કર્મદર્શી’ આ શબ્દનો અર્થ મોક્ષાભિલાષી છે, કારણ કે કર્મોના સંબંધથી
રહિત બે સ્થાન છે તે નિષ્કર્મ છે, તે સ્થાનને દેખવાનો બેનો સ્વભાવ છે તેવો જીવ
નિષ્કર્મદર્શી કહેવાય છે સૂત્રમા “ચ” શબ્દ અન્તરજ્ઞ પરિગ્રહનો બોધક છે ॥ સૂ. ૦ ૮ ॥

શું સમજીને સંયમી મુનિ કર્મોને આવવાના કારણરૂપ આ સ્રોતને બંધ કરે ?
આ પ્રકારની જિજ્ઞાસાનુ સમાધાન કરતા સૂત્રકાર કહે છે — ‘કમ્મુણો’ ઇત્યાદિ.

કર્મોને પોતપોતાના ફળને દેવાવાળા બાણીને તે સંયમી મુનિ તે કર્મોથી
અને તેના કારણોથી દૂર જ રહે છે.

શબ્દ કા અર્થ યહી હૈ કિ જિસસે જીવ કર્મોં કા ગ્રહણ કરે । અર્થાત્ મમત્વભાવસે ગ્રહણ કરને કો પરિગ્રહ કહતે હૈ । મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય ઓર યોગ, યે સબ અન્તરજ્ઞ-પરિગ્રહ હૈ । ઇન્હોંસે જીવ નવીન ૨ કર્મોં કા બન્ધ કિયા કરતા હૈ ।

જિસ પ્રકાર નૌકામેં પાની આને કા કારણ છિદ્ર હોતા હૈ, ઊસી પ્રકાર આત્મામેં નવીન ૨ કર્મોં કે આનેકે લિયે પરિગ્રહ છિદ્ર કે સ્થાનાપન્ન માના ગયા હૈ । જૈસે-મિથ્યાદર્શનજન્ય કર્મોં કા બંધ (૧) પ્રથમ ગુણસ્થાન તક; અવિરતિજન્ય કર્મોં કા બન્ધ (૪) ચતુર્થ ગુણસ્થાન તક, પ્રમાદજન્ય કર્મોં કા બન્ધ (૬) ષષ્ઠ ગુણસ્થાન તક, કષાયજન્ય કર્મોં કા બન્ધ (૧૦) દશવેં ગુણસ્થાન તક, ઓર યોગજન્ય કર્મોં કા બન્ધ સયોગકેવલીનામક (૧૩) તેરહવેં ગુણસ્થાન તક જીવોંકે હોતા હૈ । સ્રોત શબ્દ કા અર્થ પ્રવાહ બી હૈ । જિસ પ્રકાર જલાશયોં મેં પ્રવાહ કે દ્વારા પાની આતા હૈ ઊસી પ્રકાર અંતરજ્ઞ ઓર બહિરજ્ઞ પરિગ્રહરૂપ પ્રવાહદ્વારા આત્મામેં નવીન ૨ કર્મોં કા બંધ હુઆ કરતા હૈ, અતઃ સંયમી જીવ બાહ્ય પરિગ્રહ સે સર્વથા વિરક્ત હો જાતા હૈ । અન્તરજ્ઞ પરિગ્રહ સે બી વહ અપને પદકે અનુસાર વિરક્ત હી રહતા હૈ । ઇસીલિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ જિસ સંયમી મુનિકા લક્ષ એક મોક્ષ પ્રાપ્તિ કરને કા હી હૈ વહ મનુષ્યલોકમેં રહતા હુઆ બી સાવધ

અર્થ એ જ છે કે જેનાથી જીવ કર્મોંને ગ્રહણ કરે, અર્થાત્ મમત્વ-ભાવથી ગ્રહણ કરવું તેને પરિગ્રહ કહે છે. મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને યોગ, એ બધા અંતરંગ-પરિગ્રહ છે, એનાથી જ જીવ નવા નવા કર્મોંનો બંધ કરે છે.

જેમ નૌકામાં પાણી આવવાનું કારણ છિદ્ર છે તેમ આત્મામાં નવા નવા કર્મોંને આવવાને માટે પરિગ્રહ છિદ્ર છે. મિથ્યાદર્શનજન્ય કર્મોંનો બંધ, પ્રથમ ગુણસ્થાન સુધી, અવિરતિજન્ય કર્મોંનો બંધ ચોથા ગુણસ્થાન સુધી, પ્રમાદજન્ય કર્મોંનો બંધ છઠ્ઠા ગુણસ્થાન સુધી, કષાયજન્ય કર્મોંનો બંધ દશમા ગુણસ્થાન સુધી અને યોગજન્ય કર્મોંનો બંધ સયોગકેવળીનામક તેરમા ગુણસ્થાન સુધી જીવોંને થાય છે. સ્રોત શબ્દનો અર્થ પ્રવાહ પણ છે, જેમ જળાશયોંમાં પ્રવાહ-દ્વારા પાણી આવે છે તેમ આ અંતરંગ અને બહિરંગ પરિગ્રહરૂપ પ્રવાહદ્વારા આત્મામાં નવા નવા કર્મોંનો બંધ થયા કરે છે, માટે સંયમી જીવ બાહ્ય-પરિગ્રહથી સર્વથા વિરક્ત થઈ જાય છે. અંતરંગ પરિગ્રહથી પણ તે પોતાના પદના અનુસાર વિરક્ત જ છે. આ માટે જ સૂત્રકારનું કથન છે કે જે સંયમી મુનિનું લક્ષ્ય એક મોક્ષપ્રાપ્તિ કરવાનું જ છે તે મનુષ્ય લોકમાં રહેવા છતાં પણ સાવધ

टीका—‘भो’ इति शिष्यामन्त्रणार्थः । स वक्ष्यमाणविषये शिष्यस्य पुनः पुनरवधानार्थमामन्त्रणं द्योतयति । भोः शिष्य ! ये केचन वीराः=कर्मविदारणार्थमुत्साहवन्तः, समिताः=समितियुक्ताः, सहिताः=स्वहितार्थमुद्युक्ताः सम्यग्ज्ञानादियुक्ता वा, सदायताः=सर्वदा संयमाराधनसावधानाः, संघटदर्शिनः=हेयोपादेयस्य निरन्तरदर्शिनः, यद्वा-अव्यावाधानन्दस्वरूपमोक्षाभिलाषिणः, आत्मोपरताः-

पांच समितियों में लवलीन, आत्महित की प्राप्ति में उद्यमी अथवा सम्मग्ज्ञानादिक गुणों से युक्त, सर्वदा संयम की आराधना करनेमें सावधान, हेयोपादेय के विवेक से युक्त अथवा अव्यावाध-आनन्द-स्वरूप मोक्षके अभिलाषी, कषायविशिष्टआत्मासे सदा परे रहनेवाले और यथावस्थितकर्मलोक की अथवा शब्दादिविषयों की सदा उपेक्षा करने वाले, कर्मों को विदारण करने में उत्साहशाली जो कोई भव्य वीर पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण दिशा में हुये हैं वे सब सत्य-मोक्षस्थानमें स्थित हो चुके हैं ।

सूत्रकार इस सूत्र में निर्दोष तप-चारित्र की आराधना का फल प्रकट करते हुए शिष्यों से कह रहे हैं कि जिन भव्यवीरों ने पांच समितियों का निर्दोष रीतिसे पालन किया है, आत्महित की प्राप्ति में जिन्होंने कुछ भी नहीं बाकी रखा, निर्दोष संयम की आराधना करने में ही जिन्होंने अपने जीवन को बिताया, हेयोपादेय के सुन्दर विवेक से जिन्होंने मोह-ममत्व पर विजय प्राप्त की, जिन्होंने कषाय के उदय को

पांच समितिओमा राखवावाणां, आत्महितनी प्राप्तिमां उद्यमी, अथवा सम्मग्ज्ञानादिक गुणोथी युक्त, सर्वदा संयमनी आराधना करवामा सावधान, हेयोपादेयना विवेकथी युक्त, अथवा अव्यावाध-आनन्दस्वरूप मोक्षना अभिलाषी, कषायविशिष्ट आत्माथी सदा दूर रहवावाणां, अने यथावस्थित कर्मलोकनी अथवा शब्दादिविषयोनी सदा उपेक्षा करवावाणां कर्मोंनुं विदारण करवामा उत्साहशाली ने लव्य वीरो, पूर्व, पश्चिम, उत्तर अने दक्षिण दिशाओमां यथा छे ते जधा सत्य-मोक्षस्थानमा स्थित थछ चूकेल छे.

सूत्रकार आ सूत्रमां निर्दोष तप-चारित्रनी आराधनानुं इण प्रगट करीने शिष्योने इहे छे के ने लव्य वीरोओ पांच समितिओनु निर्दोष रीतिथी पालन कर्युं छे, आत्महितनी प्राप्तिमां नेमण्णे काछ पण्ण जाडी न राख्युं, निर्दोष संयमनी आराधना करवामा ने नेमण्णे पोताना जवनने बीताव्या, हेयोपादेयना सुन्दर विवेकथी नेओओ मोह ममत्व उपर विजय प्राप्त कर्यो, नेओओ कषायना

ममैव नायमाशयः किन्तु सर्वेषामर्हतामिति दर्शयितुं भगवान् प्राह—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

यद्वा—सम्यक्त्वमुक्तं, निरवद्यं तपश्चारित्रमपि, इदानीं तत्फलमाह—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

मूलम्—जे खलु भो ! वीरा समिया सहिया सयाजया संघ-
डदंसिणो आओवरया अहातहा लोयं उवेहमाणा पाईणं पडीणं
दाहिणं उईणं इय सच्चंसि परिविचिठ्ठिसु ॥ सू० १० ॥

छाया-ये खलु भो ! वीराः समिताः सहिताः सदायताः संघटदर्शिनः, आत्मोपरता-
यथातथा लोकमुपेक्षमाणाः प्राचीनं प्रतीचीनं दक्षिणम्, इति सत्ये परिव्यस्थुः ॥ १० ॥

मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योगों के द्वारा जो किये जाते हैं वे कर्म हैं । ये ज्ञानावरणीयादिक के भेद से आठ प्रकारके हैं । आत्मा के साथ इनका सम्बन्ध अनादिकाल से हो रहा है । कोई भी कर्म जब तक अपना फल नहीं देता तब तक वह आत्मा से नष्ट नहीं होता; यह नियम है, अतः वह वेदवित्=सम्यग्ज्ञानी पुरुष कर्मों से और उन कर्मों के कारण मिथ्यादर्शनादिकों से, तथा मिथ्यादर्शनादिके कारण कषायों से सदा दूर ही रहता है । अर्थात् कर्मबन्ध के कारणभूत समस्त सावध्य व्यापार का वह त्याग कर देता है ॥ सू० ९ ॥

इस कथन में सब तीर्थङ्करों की सम्मति प्रदर्शित करते हैं—‘जे खलु भो’ इत्यादि । अथवा समकित को कहा और निर्दोष तप चारित्र को भी कहा; अब उसका फल कहते हैं—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय અને યોગદ્વારા જે કરવામાં આવે છે તે કર્મ છે. તે જ્ઞાનાવરણીયાદિકના ભેદથી આઠ પ્રકારના છે. આત્માની સાથે તેનો સંબંધ અનાદિ કાળથી થઈ રહ્યો છે. કોઈ પણ કર્મ જ્યાં સુધી પોતાનું ફળ નથી આપતું ત્યાં સુધી તે આત્માથી નષ્ટ થતું નથી; એ નિયમ છે. તેથી તે વેદ-વિત્=સમ્યગ્જ્ઞાની પુરુષ કર્મોથી અને તે કર્મોના કારણ મિથ્યા-દર્શનાદિકો અને મિથ્યાદર્શનાદિકોના કારણ કષાયોથી સદા દૂરજ રહે છે. અર્થાત્ કર્મબંધના કારણભૂત સમસ્ત સાવધ વ્યાપારનો તે સદા ત્યાગ કરી દે છે. ॥ સૂ० ૯ ॥

આ કથનમાં બધા તીર્થંકરોની સંમતિ પ્રદર્શિત કરે છે—‘જે ખલુ ભો’ ઇત્યાદિ. અથવા સમકિત કહ્યું, નિર્દોષ તપ ચારિત્ર પણ કહ્યું; હવે તેનું ફળ કહે છે—‘જે ખલુ ભો’ ઇત્યાદિ.

भी भूल न आने देना, कषायों से सदा सावधान रहना और शब्दादिक विषयों में सदा उपेक्षाभाव रखना, ये सब बातें—क्रियाएँ कर्मशत्रुओं पर विजय पाने में सैन्य का काम देती हैं। मोक्षाभिलाषी आत्मा सेनापति है, कर्मों की मूल-उत्तर-प्रकृतिरूप सेना शत्रुसैन्य है, उस पर विजय प्राप्त करने में इस योद्धा की ये पूर्वोक्त क्रियाएँ एक अक्षौहिणी सेना जैसी हैं, अतः यह आत्मा नियमसे कर्मसेना का पराभव कर अपने स्वभाव से ही मोक्ष का पूर्ण भोक्ता बन जाता है। इसमें जरा भी सन्देह नहीं।

सूत्र में “भो” शब्द शिष्यों के संबोधन के लिये आया है। वह भगवान् के कहे गये वचनों में शिष्यों का पुनः पुनः ध्यान आकर्षित करने के लिये कहा गया है। मूल में ‘परिविचिट्सु’ यह भूतकालिक क्रियापद है। यह वर्तमान और भविष्यत्कालिक क्रियापद का भी उपलक्षण है। इसका अभिप्राय यह है कि भूतकाल में जितने भी वीर हुए हैं उन खवने तो मोक्ष का मार्ग प्राप्त कर ही लिया है, वर्तमान में भी जो पांच भरतक्षेत्र, पांच ऐरवत क्षेत्र और पांच महाविदेह क्षेत्र में संख्यात वीर हैं वे और अनागत कालमें जो अनंत वीर होंगे वे सब मोक्षके भोक्ता बनेंगे।

कर्मों के विदारण करने में उत्साहसम्पन्न को ‘वीर,’ पांच समितियों

વિવેકમા જરા પણ ભૂલ ન આવવા દેવી, કષાયોથી સદા સાવધાન રહેવું, આ બધી વાતો—ક્રિયાઓ—કર્મશત્રુઓ ઉપર વિજય મેળવવામાં સૈન્યનું કામ કરે છે. મોક્ષાભિલાષી આત્મા સેનાપતિ છે. કર્મોની મૂળ-ઉત્તરપ્રકૃતિરૂપ સેના શત્રુસૈન્ય છે, તેના ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવામાં આ યોદ્ધાની તે પૂર્વોક્ત ક્રિયાઓ એક અક્ષૌહિણી સેના જેવી છે, માટે તે આત્મા નિયમથી કર્મસેનાનો પરાભવ કરીને પોતાના સ્વભાવથી જ મોક્ષનો પૂર્ણ ભોક્તા બની જાય છે, તેમાં જરા પણ સંદેહ નથી.

સૂત્રમાં “ભો” શબ્દ શિષ્યોના સંબોધનને માટે આવેલ છે, તે ભગવાને કહેલા વચનોમાં શિષ્યોનું વારંવાર ધ્યાન આકર્ષિત કરવાને માટે કહેવામાં આવેલ છે. મૂળમાં ‘પરિવિચિટ્સિ’ આ ભૂતકાલિક ક્રિયાપદ છે આ વર્તમાન અને ભવિષ્ય-કાલિક ક્રિયાપદનું પણ ઉપલક્ષણ છે, આનો અભિપ્રાય એ છે કે—ભૂતકાળમાં જેટલા વીરો થયેલા છે તે બધાએ મોક્ષનો માર્ગ પ્રાપ્ત કરી જ લીધેલ છે વર્તમાનમાં પણ જે પાંચ ભરતક્ષેત્ર, પાંચ ઐરવત ક્ષેત્ર અને પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં સંખ્યાત વીરો છે, તેઓ અને આવતા કાળમાં જે અનંત વીરો થશે તેઓ બધા મોક્ષના ભોક્તા બનશે.

કર્મોનું વિદારણ કરવામાં ઉત્સાહસમ્પન્નને ‘વીર,’ પાંચ સમિતિઓનું પાલન

आत्मनः=कपायात्मन उपरताः=निवृत्ताः यथातथा=यथावस्थितं, लोकं=कर्मलोकं, शब्दादिविषयलोकं वा, उपेक्षमाणाः=दृष्ट्याऽपश्यन्त आसन्, ते प्राच्यादिदिक्ष्ववस्थिताः, सत्ये=सत्यसुखजनकत्वात् सत्यो=मोक्षमार्गः, तत्र, परिव्यस्थुः=स्थितवन्तः, इदमुपलक्षणम्—तेनानागतवर्तमानयोरपि क्रियापदे संयोजनीये, यथा— ये वीराः सन्ति ते वर्तमानकाले पञ्चदशकर्मभूमिषु संख्येयास्तिष्ठन्ति, ये च भविष्यन्ति, ते चानागतकालेऽनन्ताः स्थास्यन्तीति ॥ सू० १० ॥

निष्फल किया और इस कर्ममय लोक की अथवा शब्दादिक पांचइन्द्रियों के विषयों की तरफ थोड़ा सा भी ध्यान नहीं दिया, उन भव्यवीरों ने चाहे वे किसी भी दिशा में क्यों न रहें हों—नियम से मोक्ष को अपने हाथ में कर लिया है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र्य की एकता के बिना मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती, यह जैनसिद्धान्त का अटल नियम है। पांचसमिति वगैरह के पालन में अपने को विसर्जित कर देना यह बात सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र्य की आराधना से ही आत्माको उपलब्ध होती है। सूत्र में “वीर” शब्द इसी बात की पुष्टि करता है। बाह्य जगत में शत्रुओं पर विजय प्राप्त करनेवाले लाखों क्या करोड़ों भी मनुष्य मिल सकते हैं, परन्तु जो अपने आत्मशत्रुओं—कर्मों पर विजय प्राप्त करने की कोशिश में हैं वे लाखों में क्या करोड़ों में भी एक दो मिलेंगे। पांच समितियों में लवलीन रहना, आत्महित की प्राप्ति में सदा उद्यम करते रहना, सर्वदा संयम की आराधना में जरा भी प्रमादशील न बनना, हेयोपादेय के विवेक में थोड़ी सी

ઉદ્યમે નિષ્ફળ બનાવ્યો અને આ કર્મમય લોકની અથવા શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોની તરફ થોડું પણ ધ્યાન નથી આપ્યું તેવા ભવ્ય વીરોએ ભલે તેઓ કોઈ પણ દિશામાં હોય તો પણ નિયમથી મોક્ષને પ્રાપ્ત કરેલ છે. સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની એકતા વિના મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી, એ જૈન-સિદ્ધાંતનો અટલ નિયમ છે. પાંચ સમિતિ વિગેરેના પાલનમાં પોતાને વિસર્જીત કરી દેવું, એ વાત સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની આરાધનાથી જ આત્માને ઉપલબ્ધ થાય છે. સૂત્રમાં જે “વીર” શબ્દ છે તે આ વાતની જ પુષ્ટિ કરે છે. બાહ્ય જગતમાં શત્રુઓ પર વિજય કરનારાઓ લાખો તો શું પણ કરોડો મનુષ્યો મળી રહેશે, પરંતુ પોતાના આત્મશત્રુઓ—કર્મ પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની કોશિશમાં હોય તેવા લાખો બદકે કરોડોમાં પણ એક-બે મળશે. પાંચ સમિતિઓમાં રચ્યા રહેવું, આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં સદા ઉદ્યમ કરતા રહેવું, સર્વદા સંયમની આરાધનામાં જરા પણ પ્રમાદશીલ ન બનવું, હેયોપાદેયના

યિવ્યામઃ । વીરાદિવિશેષણશબ્દા અનન્તરપૂર્વમૂત્રે વ્યાખ્યાતાઃ । શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-
 કિમન્તિ ઉપાધિરિતિ । કિં તેષાં મહાપુરુષાણામુપાધિરસ્તિ ?, ઉત્તરવાક્યમાહ-
 ‘પશ્યકસ્ય’ इत्यादि । पश्यकस्य=सम्यग्दर्शनादिकं मोक्षमार्गं पश्यतीति पश्यः,
 स एव पश्यकः, तस्य कर्मजनितोपाधिर्न विद्यते नास्ति, इति ब्रवीमि=मया यथा
 भगवद्वाक्यं श्रुतं तथा कथयामीत्यर्थः ॥ सू० ११ ॥

चतुर्थाध्ययनस्य चतुर्थोद्देशः समाप्तः ॥ ४-४ ॥

ભાવાર્થ—જવ તક જીવ અપને શુદ્ધસ્વરૂપ-નિર્વિકાર આનન્દ-સ્વરૂપ
 મુક્તિકો પ્રાપ્ત નહીં કર લેતા હૈ તવ તક વહ કર્મોં સે નિર્લિપ્ત નહીં હો
 સકતા હૈ । ऐसी अवस्था में जब तक सांसारिक दशा है अथवा संसार
 में रहना है तब तक कर्मों के चक्कर में प्रत्येक प्राणी फँसा हुआ ही है ।
 जो कर्मों का कर्ता है वह उसके फल का भी भोक्ता माना जाता है ।
 यद्यपि यह नियम अटल है परन्तु ज्ञानी जीव उसके अपवादस्वरूप हैं,
 क्योंकि चारित्र्यमोहनीय के उदयसे जब तक चारित्र्य का अभाव उनकी
 आत्मा में नहीं हुआ है तब तक दर्शनमोहनीय कर्म के उदय से उत्पन्न
 होनेवाला कर्मबन्ध उनको नहीं होता है । जितने अंश में परपदार्थો से
 निवृत्ति है उतने अंशों में आत्मा में शुद्धि का सङ्भाव भी है, अर्थात्
 दर्शनमोहनीय कर्म के उपशम, क्षय और क्षयोपशम से जितनी भी
 आत्मा से अतत्त्वश्रद्धानपरिणति का अंत होगा उतनी ही आत्मजागृति-
 रूप शुद्धपरिणति का विकास वहां पर होगा ।

ભાવાર્થ—જ્યા સુધી જીવ પોતાના શુદ્ધસ્વરૂપ-નિર્વિકાર આનન્દ-સ્વરૂપ
 મુક્તિને પ્રાપ્ત નથી કરી લેતો, ત્યાં સુધી તે કર્મોંથી નિર્લિપ્ત થતો નથી. આવી
 અવસ્થામાં જ્યાં સુધી સાંસારિક દશા છે, અથવા સંસારમાં રહેવાનું છે ત્યાં
 સુધી કર્મોંના ચક્કરમાં પ્રત્યેક પ્રાણી ફસાયેલાં જ છે જે કર્મોંનો કર્તા છે તે
 તેના ફળનો પણ ભોક્તા મનાય છે. જે કે આ નિયમ અટલ છે છતાં પણ જ્ઞાની જીવ
 તેના અપવાદસ્વરૂપ છે, કેમ કે ચારિત્ર્યમોહનીયના ઉદયથી જ્યાં સુધી ચારિત્ર્યનો
 અભાવ તેના આત્મામાં નથી થયો ત્યાં સુધી દર્શન-મોહનીય કર્મના ઉદયથી
 ઉત્પન્ન થનાર કર્મબંધ તેને થતું નથી. જેટલા અંશમાં પરપદાર્થોની નિવૃત્તિ છે
 તેટલા અંશોમાં આત્મામાં શુદ્ધિનો સંભાવ પણ છે, અર્થાત્ દર્શન-મોહનીય
 કર્મના ઉપશમ, ક્ષય, અને ક્ષયોપશમથી આત્મામાં જેટલી પણ અતત્ત્વશ્રદ્ધાના
 પરિણતિનો અંત થયો તેટલી જ આત્મજાગૃતિરૂપ શુદ્ધ પરિણતિનો વિકાસ ત્યાં થશે.

तेषां सत्यावस्थायिनां ज्ञानमाह—‘साहिस्सामो’ इत्यादि ।

मूलम्—साहिस्सामो नाणं वीराणं समियाणं सहियाणं सया-
जयाणं संघटदंसीणं आओवरयाणं अहातहा लोयमुवेहमाणानं,
किमत्थि उवाही? पासगस्सन विज्जइ, नत्थि-त्ति वेमि ॥ सू० ११ ॥

छाया—साधयिष्यामो ज्ञानं वीराणां समितानां सहितानां सदायतानां संघ-
टदर्शिनाम् आत्मोपरतानां यथातथा लोकमुपेक्षमाणानां, किमस्ति उपाधिः पश्य-
कस्य? न विद्यते नास्ति, इति ब्रवीमि ॥ सू० ११ ॥

टीका—तेषां वीराणां समितानां सहितानां सदायतानां संघटदर्शिनाम् आ-
त्मोपरतानां यथातथा लोकमुपेक्षमाणानां ज्ञानम्=अभिप्रायं, साधयिष्यामः=कथ-
के पालन करनेवाले को ‘समित,’ आत्मकल्याण में उद्यमशाली अथवा
ज्ञानादिक गुणों से युक्त को ‘सहित,’ सर्वदा संयम की आराधना में
सावधान को ‘सदायत,’ हेयोपादेय के विवेक से युक्त अथवा अव्याबाध
आनन्दस्वरूप मोक्ष की अभिलाषावाले को ‘संघटदर्शी’ और कषायों
से उपरत-निवृत्त जीवों को ‘आत्मोपरत’ कहते हैं ॥ सू० १० ॥

मोक्षमार्ग में रहनेवाले उन वीर-आत्माओं के ज्ञान के विषय में
सूत्रकार कहते हैं:—‘साहिस्सामो नाणं’ इत्यादि ।

हम वीर, समित, सहित, सदायत, संघटदर्शी, आत्मोपरत, यथा-
वस्थित लोक की उपेक्षा करनेवाले उन मोक्षमार्ग के पथिकों के ज्ञान के
विषय में आगे कथन करेंगे । अभी तो इतना ही कहते हैं कि उन
वीरादिविशेषणविशिष्ट आत्माओं के कर्मजनित कोई भी उपाधिनहीं है ।

करवावाणाने ‘समित,’ आत्मकल्याणमां उद्यमशाली अथवा ज्ञानादिक गुणोत्थी
युक्तने ‘सहित,’ सर्वदा संयमनी आराधनामां सावधानने ‘सदायत,’ हेयोपादेयना
विवेकथी युक्त अथवा अव्याबाधआनन्दस्वरूप मोक्षनी अभिलाषावाणाने ‘संघ-
टदर्शी’ अने कषायोत्थी उपरत-निवृत्त जीवोने ‘आत्मोपरत’ उहे छे. ॥ सू० १० ॥

मोक्षमार्गमां रहेवावाणा ते वीर-आत्माओना ज्ञानना विषयमां सूत्रकार
उहे छे—“साहिस्सामो नाणं” इत्यादि.

अमे वीर, समित, सहित, सदायत, संघटदर्शी, आत्मोपरत अने यथा-
वस्थित लोकनी उपेक्षा करवावाणां ते मोक्षना पथिकोना ज्ञानना विषयमां आगण
उहीशुं. हमणां तो आट्ठु उहीओ छीओ के ते वीरादिविशेषणविशिष्ट आत्मा-
ओने कर्मजनित (कर्मथी थनारी) कोपिणु उपाधि नथी.

सम्यक्त्व को पुष्ट करनेवाली युक्ति से सम्यक्त्वका वर्णन तथा अनार्यों के वचनों का निराकरण करके सम्यक्त्वका फल इस चौथे अध्ययन में कहा गया है ॥ १ ॥

यह आचाराङ्गसूत्रके सम्यक्त्व नामके चौथे अध्ययनकी आचार-
चिन्तामणि-टीकाका हिन्दीभाषानुवाद सम्पूर्ण ॥ ४ ॥

सम्यक्त्वने पुष्ट करवावाणी युक्तिथी सम्यक्त्वनु वर्णन, तथा अनार्योंना
वचनोनु निराकरण करीने सम्यक्त्वनुं इण आ योथा अध्ययनमां कछु छे, ॥ १ ॥

आ आचाराङ्गसूत्रना सम्यक्त्वनामना योथा अध्ययननी आचार-
चिन्तामणि-टीकाने गुजराती अनुवाद संपूर्ण ॥ ४ ॥



સમ્યક્ત્વકરયા, ચુક્ત્યા, સમ્યક્ત્વં તત્ફલાનિ ચ ।

વિદૂષ્યાનાયવચનં, ચતુર્થેઽધ્યયનેઽવ્રવીત્ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

॥ ઇતિશ્રી-વિશ્વવિખ્યાત-જગદ્ગુહ-પ્રસિદ્ધવાચક-પશ્ચદશભાષાકલિતલલિત-
કલાપાલાપક-પ્રવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માપક-વાદિમાનમર્દક-શાહુ-
છત્રપતિ-કોલ્હાપુરરાજપદ્મ-“ જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય ”-પદભૂષિત-
કોલ્હાપુરરાજગુરુ-બાલબ્રહ્મચારિ-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર-
પૂજ્ય-શ્રીવાસીલાલ-વ્રતિવિરચિતાયામ્ આચારાઙ્ગમૂર્ત-
સ્યાઽઽચારચિન્તામણિટીકાયાં સમ્યક્ત્વાર્થ્ય ચતુર્થ-
મધ્યયનં સમ્પૂર્ણમ્ ॥ ૪ ॥

સમકિત કે પ્રાપ્ત હોતે હી આત્મા સે આત્મસ્વરૂપ કા ખાન હોને સે આંશિક રૂપ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સ્વાનુભવ મેં રમણરૂપ આંશિક ચારિત્ર મી સમકિતી કો ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ, અતઃ યહાં પર સૂત્રકાર મોક્ષમાર્ગ કે પથિકોં કો કર્મજન્ય ઉપાધિકા અભાવ બતલાતે હૈ, ક્યોં કિ અજ્ઞાની જીવોં કો હી કર્મજન્ય ઉપાધિ હુઆ કરતી હૈ, જ્ઞાની જીવોં કે નહોં ।

ઇસ પ્રકરણ કી સમાપ્તિ કરતે હુએ શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ હે જમ્બુ ! જિસ પ્રકાર સે મૈને યહ અગવાન કે સમીપ સુના હૈ ઉસી પ્રકાર મૈં કહતા હૂં ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ચૌથે અધ્યયનકા ચૌથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૪ ॥

ચૌથે અધ્યયન મેં જો વિષય કહે ગયે હૈં ડનકા સંક્ષિપ્ત વર્ણન શ્લોક દ્વારા કરતે હૈં—‘ સમ્યક્ત્વકરયા ’ ઇત્યાદિ ।

સમકિત પ્રાપ્ત થતાં જ આત્મામાં આત્મસ્વરૂપનું જ્ઞાન થવાથી આંશિક રૂપમાં સમ્યગ્જ્ઞાન અને સ્વાનુભવમાં રમણરૂપ આંશિક ચારિત્ર પણ સમકિતીને ઉત્પન્ન થાય છે, માટે આ ઠેકાણે સૂત્રકાર મોક્ષમાર્ગના પથિકોને કર્મજન્ય ઉપાધિનો અભાવ બતાવે છે, કેમકે અજ્ઞાની જીવોને જ કર્મજન્ય ઉપાધિ થાય છે, જ્ઞાની જીવોને નહિ.

આ પ્રકરણની સમાપ્તિ કરતાં શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે હે જમ્બુ ! જે પ્રકારે મેં લગવાનની સમીપ આ સાંભળ્યું છે તે પ્રકારે હું કહું છું. ॥સૂ. ૧૧॥

ચૌથા અધ્યયનનો ચૌથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૪ ॥

ચૌથા અધ્યયનમાં જે વિષય કહેવાયા છે તેનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન શ્લોકદ્વારા કરે છે—‘ સમ્યક્ત્વકરયા ’ ઇત્યાદિ.

આદ્ય મુરખખીશ્રી-૪

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

૧૦૦૦૦	શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ, પ્રમુખ સાહેબ	અમદાવાદ
૬૦૦૦	શેઠ હરખચંદ કાલીદાસભાઈ	ભાણુવડ
	(હા. શેઠ લાલચંદભાઈ, જેયદભાઈ, નગીનદાસભાઈ, વૃજલાલભાઈ તથા વલ્લભદાસભાઈ)	
૫૨૫૧	કોઠારી જેયંદભાઈ અજરામર હા. હરગોવિંદભાઈ જેયંદ	રાજકોટ
૫૦૦૧	શેઠ ધારશીભાઈ જીવનભાઈ	સોલાપુર

મુરખખીશ્રીઓ-૨૦

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

૩૬૦૫	વકીલ જીવરાજ વર્ધમાન હા. કોઠારી કહાનદાસભાઈ તથા વેણીલાલભાઈ	જેતપુર
૩૬૦૪	દોશી પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	રાજકોટ
૩૨૮૬૧૧૧૧	મહેતા શુભાખચંદ પાનાચંદ	"
૩૧૦૧	સંઘવી પીતામ્બરદાસ શુભાખચંદ	જામનગર
૨૫૦૦	શેઠ શામજીભાઈ વેલજી વીરાણી	રાજકોટ
૨૦૦૦	નામદાર ઠાકેર સાહેબ લખધીરસીહજી બહાદુર	મોરબી
૨૦૦૦	શેઠ લહેરચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદભાઈ લહેરચંદ	સીધપુર
૨૦૦૦	શાહુ છગનલાલ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઈ	મુંબઈ
૧૬૬૩	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સઘ	મોરબી
૧૦૦૧	શેઠ આત્મારામ માણેકલાલ	અમદાવાદ
૧૦૦૧	શેઠ માણેકલાલ ભાણુજીભાઈ	પોરબંદર
૧૦૦૦	શેઠ મોમચંદ તુલસીદાસ	રતલામ
૧૦૦૦	કોઠારી છબીલદાસ હરખચંદ	મુંબઈ
૧૦૦૦	કોઠારી રંગીલદાસ હરખચંદ	શીહોર
૧૦૦૨	બગડીઆ જગજીવનદાસ રતનશી	દામનગર
૧૦૦૧	શ્રીમાન ચંદ્રસિંહજી મહેતા (રેલ્વે મેનેજર સાહેબ) કલકત્તા	
૧૦૦૧	મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	જામનગર
૧૦૦૧	મહેતા સોમચંદ નેણશીભાઈ (કરાંચીવાળા)	મોરબી
૧૦૦૧	શાહુ હરીલાલ અનુપચંદ	ખંભાત
૧૦૦૨	દોશી ડુપ્પરચંદ અમરશી હા. દલપતરામ કપુરચંદ દોશી	જામ નેધપુર

[૧]

શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી

જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

ગરેડીઆ કુવા રોડ - ગ્રીન લોજ પાસે

રાજકોટ



સમિતિની શરૂઆત તા. ૧૮-૧૦-૪૪ થી
તા. ૩૧-૧-૫૭ સુધીમાં દાનવીર મહાશયો
તરફથી મળેલી રકમોની નામાવલી.



(રૂા. ૨૫૦ થી ઓછી રકમો આ યાદીમાં સામેલ કરેલ નથી.)



૭૫૧	શાહ રંગજીભાઈ મોહનલાલ	અમદાવાદ
૫૦૧	કામદાર રતીલાલ ફર્લખજી જેતપુરવાળા	સુંબઈ

પ્રથમ વર્ગના મેમ્બરો-૧૮૫

(ઓછામા ઓછી રકમ રૂ. ૨૫૦ આપનાર)

૪૦૨	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ધાક્ષી
૪૦૦	ધી વાડીલાલ ડાઇંગ એન્ડ પ્રિન્ટીંગ વર્ક્સ	રાજકોટ
૩૫૩	શેઠ રતનશી હીરજીભાઈ હા. ગોરધનદાસભાઈ	જામનગર
૩૦૧	શેઠ જેયંદભાઈ માણેકચંદ	ભાણુવડ
૨૫૧	સઘવી માણેકચંદ માધવજી	ભાણુવડ
૨૫૧	શેઠ લાલજીભાઈ માણેકચંદ (લાલપુરવાળા)	ભાણુવડ
૨૫૧	શેઠ રામજી ઝીણાભાઈ	ભાણુવડ
૨૫૧	પંચમીયા ભવાનભાઈ કાળાભાઈ	વડીઆ
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	વાંકાનેર
૨૫૧	શેઠ રતીલાલ ન્યાલચંદ	રાજકોટ
૨૫૦	બાપુ પરશુરામ છગનલાલ શેઠ (ઉદેપુરવાળા)	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ મગનલાલ છગનલાલ વિશ્રામ (ધાક્ષાવાળા)	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ જેઠાલાલ ગોરધનદાસ	ઉપલેટા
૨૫૧	સ્વ. બહેન સંતોક કચરા હા. ઓતમચંદભાઈ, છોટાલાલભાઈ તથા અમૃતલાલભાઈ વાલજી (કલ્યાણવાળા)	ઉપલેટા
૨૫૧	શેઠ ખુશાલચંદભાઈ કાનજીભાઈ હા. શેઠ પ્રતાપભાઈ	ઉપલેટા
૪૭૭	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ખાખીજાળીયા
૨૫૧	શેઠ છોટાલાલ કેશવજી	જામનગર
૨૫૧	શાહ લક્ષ્મીચંદ કપુરચંદ	જેતલસર જંકશન
૨૫૧	શાહ ચતુરદાસ ઠાકરશીભાઈ	જામનગર
૨૫૧	ખંઢેરીયા કાન્તીલાલ ત્રંબકલાલ (સ્ટેશન માસ્તર)	સુરેન્દ્રનગર
૨૫૧	શાહ કેશવલાલ જેયંદ	વેરાવલ
૨૫૧	શાહ ખીમચંદ સોભાગચંદ વસનજી	વેરાવલ
૨૫૧	સ્વ. બાબડા વચ્છરાજ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્ની કમળાબાઈ તરફથી હા. માણેકચંદભાઈ તથા કપુરચંદભાઈ	ગોંડલ
૨૫૧	શેઠ છગનલાલ નાગજીભાઈ	સુંબઈ
૨૫૧	ઘેલાણી ત્રીકમજી લાધાભાઈ	જુનારદેવ

સહાયક મેમ્બરો-૨૧

(ઓછામાં ઓછી રૂા. ૫૦૦ ની રકમ આપનાર)

૭૫૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ઝુંઝાભાઈ વેલસીભાઈ	વઢવાણ શહેર
૭૫૦	મોદી કેશવલાલ હરચંદ	સાબરમતી
૭૦૦	શેઠ નરોત્તમદાસ ઓઘડભાઈ	જોરાવરનગર
૫૦૧	શેઠ શીવલાલ ડમરભાઈ	લીંબડી
૫૦૦	કામદાર તારાચંદ પોપટલાલ ધોરાજીવાળા	રાજકોટ
૫૦૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ધાનગઢ
૫૦૦	શેઠ તારાચંદજી પુખરાજજી	ઔરંગાબાદ
૫૦૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ઔરંગાબાદ
	૧૫૦ શેઠ શેખમલજી જીવરાજજી	
	૧૨૫ „ અનરાજજી લાલચંદજી	
	૧૨૫ „ ધુકડચંદજી રૂપચંદજી	
	૧૦૦ „ દગડુમલજી ચાંદમલજી	
	૫૦૦	
૫૦૦	મહેતા મોહનલાલ કપુરચંદ	રાજકોટ
૫૦૦	શેઠ ગોવીંદજી પોપટભાઈ	રાજકોટ
૫૦૦	મહેતા મુળચંદ રાઘવજી હા. મગનલાલભાઈ તથા હર્ષભજીભાઈ ધ્રાશ	
૫૦૦	શેઠ હરખચંદ પરસોત્તમ હા. લાઈ ઈન્દુકુમાર	ચોરવાડ
૫૦૧	શેઠ ખીમજી ખાવાભાઈ હા. તેમના પુત્રો કૃલચંદભાઈ નાગરદાસભાઈ, શુલાખચંદભાઈ તથા જમનાદાસભાઈ	મુંબઈ
૫૦૧	શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. શેઠ મુલજીભાઈ મણીલાલ મુંમઈ	
૫૦૧	શેઠ ઈશ્વરલાલ પુરૂષોત્તમદાસ	અમદાવાદ
૫૦૧	શેઠ ચંદુલાલ છગનલાલ	અમદાવાદ
૫૦૧	સ્વ કાંતીલાલજીના સ્મરણાર્થે હ. શેઠ બાલચંદ સાકરચંદ	મુંબઈ
૫૦૦	અ. સૌ. બેન મણીગોરી મગનલાલ તે મહેતા સોગચંદ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્નિ	રતલાન
૫૦૧	સ્વ ખીતાબી નંદાજીના સ્મરણાર્થે હ. વેણીચંદ ચાંતીલાલ (જયુઆનાળા)	મેઘનગર

૨૫૧	અ. સૌ. બહેન બચીબહેન બાબુભાઈ	ધોરાજી
૨૫૧	શેઠ નેમચંદ સવજીભાઈ મોદી	લાલપુર
૨૫૦	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પ્રમુખ શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાનલાલ	નંદુરબાર
૨૫૧	શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ જસાપરવાળા હા. નરભેરામભાઈ જેતપુર	જેતપુર
૨૫૧	દોશી છોટાલાલ વનેચંદ	જેતપુર
૨૫૧	કામદાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની	
	બાઈ ઝબકબહેન તરફથી હા. ભાઈ શાંતિલાલ	જેતલસર
૨૮૭	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	જામજોધપુર
૨૫૧	સ્વ. બહેન વિજયાગૌરી રાયચંદ હા. શેઠ રાયચંદ પાનાચંદ	ધોરાજી
૨૫૦	ગાધી પોપટલાલ જેચંદભાઈ	ધોરાજી
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	
	હા. પ્રમુખ રાયચંદ વૃજલાલ અજમેરા	વીંછીયા
૨૫૧	શેઠ મુળચંદ પોપટલાલ હા. મણીલાલભાઈ	
	તથા જેસીગલાલભાઈ	લાલપુર
૨૫૧	શેઠ મણીલાલ મીઠાભાઈ હા. હરિલાલભાઈ	
	હાટીના માળીયાવાળા	જુનાગઢ
૨૫૧	સ્વ. વસાણી હરગોવીંદલાસ છગનલાલના સ્મરણાર્થે	
	તેમનાં ધર્મપત્ની બાઈ છબલબેન તરફથી	ખોટાદ
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ચુડા (ઝાલાવાડ)
૨૫૧	શેઠ મગનલાલજી બાગરેચા	ઉદેપુર
૨૫૧	શેઠ ચાંપશીભાઈ સુખલાલ	સુરેન્દ્રનગર
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ખોટાદ
૨૫૧	સ્વ. પૂજ્ય માતુશ્રી સમરતભાઈના સ્મરણાર્થે	
	હા. ડોકટર સાહેબ નરોત્તમદાસ ચુનીલાલ કાપડીયા	રાણપુર
૨૫૧	સ્વ. તુરખીયા લહેરચંદ માણેકચંદ સુદામકાવાળાના સ્મરણાર્થે	
	તેમના ધર્મપત્ની જીવતીબાઈ તરફથી હા. જયંતીલાલ લહેરચંદ ડભાસ	
૨૫૧	શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ	ધ્રાંગધ્રા
૨૫૧	શાહુ દીલીપકુંવર સવાઈલાલ	
	હા. શેઠ સવાઈલાલ ત્રબકલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	શેઠ છોટુભાઈ હરગોવીંદલાસ કટોરીવાળા	મુંબઈ
૨૫૧	રા. રા. નાયાલાલ ડી મહેતા	મોંમ્બાસા
૨૫૧	સંઘવી પ્રાણુલાલ લવજીભાઈ	જામખંભાળીયા

૨૫૧	શેઠ ગીરધરલાલ કરમચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ છોટાલાલ વખતચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	ગોસલિયા હરિલાલ લાલચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ પ્રેમચંદ માણેકચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ માણેકલાલ ભગવાનદાસ	ખંભાત
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ મોહનલાલ ઈશ્વરરામ	ખંભાત
૨૫૧	શેઠ રમણીકલાલ એ. કપાસી	આણંદ
૨૫૧	ખડેન સુરીખડેન (લક્ષ્મીબેન)	
	હા. મહેતા હરીલાલ પીતામ્બરદાસ	પાલણપુર
૨૫૦	શેઠ વાડીલાલ નેમચંદ વકીલ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ વીઠલદાસ મોદી માસ્તર	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ નાગરદાસ માણેકચંદ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ મણીલાલ જીવણલાલ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ નાગરદાસ વાધજીભાઈ	અમલનેર
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	અમલનેર
૨૫૧	શેઠ મનુભાઈ મુળચંદ (ઈન્જીનીયર સાહેબ)	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ શાંતિલાલ પ્રેમચંદ	
	[તેમનાં ધર્મપત્નીના વરસીતપ પ્રસંગે ખુશાલીના]	રાજકોટ
૨૫૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. ચંપાલાલજી મારવે	ડોંડાઈચા
૨૫૧	શેઠ મોતીલાલજી રણજીતલાલજી હીંગડ	ઉદેપુર
૨૫૦	શેઠ બાદરમલજી સુરજમલજી બેન્કર્સ	યાદગીરી
૨૫૦	શેઠ ગોપાલજી મીઠાભાઈ	હાટીના માળીયા
૨૫૧	ઉદાણી ન્યાલચંદ હાકેમચંદ [વકીલ]	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ પ્રભુરામ વીઠલજી	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ મેઘરાજજી દેવીચંદજી મહેતા	મદ્રાસ
૨૫૧	પટેલ ગોવીંદલાલ ભગવાનજી	કોલકી
૩૦૨	પટેલ ખીમજી જોઠાભાઈ વાઘાણી	કોલકી
૨૫૧	શેઠ હકીમચંદ દીપચંદ ગોંડલવાળા [સ્ટેશન માસ્તર ભક્તિનગર]	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ વસનજી નારણજી	જામખંભાળીયા
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	જામખંભાળીયા
૨૫૧	શેઠ કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ	ખીચન (પાલી)
૨૫૧	શેઠ પદમસી ભીમજી ફેફરીયા	ભાણુવડ

- ૨૫૧ શાહ જાદવજી ઓઘડભાઈ સદાહવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. ભાઈ શાંતીલાલ જાદવજી લખતર
- ૨૫૧ બાવસાર ચુનીલાલ પ્રેમચંદભાઈ સુરેન્દ્રનગર
- ૨૫૧ શ્રી વર્ધમાન શ્વેતામ્બર સ્થા. શ્રાવક સંઘ
હા. શેઠ કેસરીમલજી અનોપચંદજી ગુગળીયા મલાડ (મુંબઈ)
- ૨૫૧ દોશી ઠાકરશી ગુલાબચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં
ધર્મપત્ની સમરતબેન વૃજલાલ તરફથી
હા. ભાઈ જયંતિલાલ ઠાકરશી લખતર
- ૩૦૦ શાહ અમુલખ ઉર્ફે બચુભાઈ નાગરદાસનાં ધર્મપત્ની
અ. સૌ. બેન લીલાવંતીના વરસી તપનાં પારણાની
ખુશાલીમાં હા. ભાઈ કાંતીલાલ નાગરદાસ વીરમગામ
- ૨૫૧ કામદાર કેશવલાલ હીમતરામ પ્રોફેસરસાહેબ (ગોંડલવાળા) વડોદરા
- ૨૫૧ શેઠ ડુંગરશી હંસરાજ વીસરીયા મુંબઈ
- ૨૫૧ શેઠ ધનરાજ મુળચંદ મુથા લોનાવાલા (પુના)
- ૨૫૧ મહેતા નાનાલાલ છગનલાલનાં ધર્મપત્ની
સ્વ. ચંચળબેન તથા પુરીબેનના સ્મરણાર્થે
હા. ભાઈ મનહરલાલ નાનાલાલ મુ. વણી (વીરમગામ)
- ૨૫૧ દોશી ચુનીલાલ કુલચંદ મોરળીવાળા મુ. શાલબની (બંગાળ)
- ૩૦૧ શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હા. શાહ ચીમનલાલ હીરાચંદ સાણંદ
- ૨૫૧ શેઠ મોહનલાલ જેઠાભાઈના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ આત્મારામ મોહનલાલ કલોલ
- ૨૫૧ શાહ રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૈ. કાંતાબેન
રમણીકલાલ (ધ્રાંગધ્રાવાળા) મુંબઈ
- ૨૫૧ ડોકટર મયાચંદ મગનલાલ હા. ડો. રતનચંદ મયાચંદ કલોલ
- ૨૫૧ સ્વ. શાહ નાથાલાલ ઉમેદચંદના સ્મરણાર્થે
હા. શાહ રતીલાલ નાથાલાલ કલોલ
- ૨૫૧ શ્રી સ્થા. દરીયાપુરી જૈન સંઘ હ. બાવસાર
દામોદરદાસ ઈશ્વરભાઈ કડી
- ૨૫૧ શાહ મણીલાલ તલકચંદના સ્મરણાર્થે
હા. મારફતીયા ચંદુલાલ મણીલાલ કલોલ
- ૨૫૧ અ. સૈ. ચંપાબેન હ. શેઠ છવરાજ લાલચંદ દોશી સાણંદ
- ૨૫૧ પટેલ મહાસુખલાલ ડોસાભાઈ સાણંદ

૨૫૧	ખાવીશી મણીલાલ ચત્રભુજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની બાઈ મણીબેન તરફથી હા. બાઈ રસીકલાલ, અનીલકાંત તથા વિનોદરાય	આસનસોલ
૨૫૦	શેઠ માણેકલાલ અમુલખરાય મહેતા	ઘાટકોપર
૨૫૧	ભાવસાર ખોડીદાસ ગણેશભાઈ	ધંધુકા
૨૫૧	શાહ પોપટલાલ ધનજીભાઈ	ધંધુકા
૨૫૧	સ્વ. ગુલાબચંદલાઈના સ્મરણાર્થે હા. વોરા પોપટલાલ નાનચંદ	ધંધુકા
૨૫૧	શેઠ ચત્રભુજ વાઘજીભાઈ વસાણી	ધંધુકા
૨૫૧	સ્વ. મોહનલાલ નરસીદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની સુરજબેન મોરારજી તરફથી	ખરવાળા
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	પાણુશણા (લીંબડી)
૨૫૧	સદાણી મુળશંકર હરજીવનભાઈના સ્મરણાર્થે હા. તેમના પુત્રો જયંતિલાલભાઈ તથા રમણીકલાલભાઈ	ઉપલેટા
૨૫૧	શાહ મગનલાલ ગોકળદાસ હા. રતીલાલ મગનલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	સંઘવી મુળચંદ બેચરભાઈ હા. જીવનલાલ ગફલદાસ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	ખડેન સુર્યખાળા નૌતમલાલ જસાણી [વરસીતપનાં પારણાંની ખુશાલીમાં]	રાજકોટ
૨૫૧	શાહ રાયચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હા. બાઈ શાંતીલાલ રાયચંદ	લખતર
૨૫૧	ભાવસાર હરજીવનદાસ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. બાઈ ત્રીભોવનદાસ હરજીવનદાસ	લખતર
૨૫૧	શાહ તલકશી હીરાચંદના સ્મરણાર્થે હા. બાઈ અમૃતલાલ તલકશી	લખતર
૨૫૧	શાહ ચુનીલાલ માણેકચંદ	લખતર
૨૫૧	શેઠ વૃજલાલ સુખલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	શેઠ કાંતિલાલ નાગરદાસ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	સંઘવી શીવલાલ હીમજીભાઈ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	શાહ દેવશીભાઈ દેવકરજી	વઢવાણ શહેર

- ૨૫૧ વોરા ધનજીભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હા.
વોરા પાનાચંદ ગોખરદાસ વઢવાણ શહેર
- ૨૫૧ સ્વ. અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. કહાનજીભાઈ અમઢાવાઢ
અમૃતલાલ દોશી
- ૨૫૧ શ્રી વીરમગામ સ્થા. જૈન શ્રાવિકા સઘ વીરમગામ
- ૨૫૧ સ્વ. ત્રિલોવનદાસ દેવચંદ તથા સ્વ. અ. સૌ. ચંચળ.
બેનના સ્મરણાર્થે હા. ડોકટર હિંમતલાલ સુખલાલ ,,
- ૨૫૧ શાહ મુલચંદ કાનજીભાઈ તરફથી હા. શાહ નાગરદાસ
ઔઘડભાઈ ,,
- ૨૫૧ શેઠ મોહનલાલ પીતાંબરદાસ હા. ભાઈ કેશવલાલ તથા
મનસુખલાલભાઈ ,,
- ૨૫૧ / શાહ રતનશી મોણશીની કું. સુખર્ધ
- ૨૫૧ ભાવસાર લોગીલાલ જમનાદાસ અમઢાવાઢ
- ૨૫૧ શાહ શીવજી માણેકભાઈ બેરાઝા કચ્છ
- ૨૫૧ શાહ લુણજી ગુલાબચંદ (સંજેલી) પંચમહાલ
- ૨૫૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ પ્રેમચંદ દલીચંદ (સંજેલી) ,,
- ૨૫૧ શાહ કુવરજી ગુલાબચંદ (લીમડી) ,,
- ૨૫૧ શાહ પાનાચંદ સંઘજીભાઈ હા. ત્રખકલાલ રતીલાલ સુખર્ધ
- ૩૦૧ શાહ અમુલખભાઈ મુળજી હા. પ્રકાશચંદ અમુલખ હારીજ
- ૩૦૧ સ્વ બેન ચદ્રકાતાના સ્મરણાર્થે હા. અમુલખ મુળજીભાઈ ,,
- ૨૫૧ સ્વ. પદમશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હા. શીવલાલ પદમશી મેસાણા
- ૨૫૧ શાહ ગોકળદાસ શામજી ઉદાણી એડન કેમ્પ
- ૨૫૧ ખાટવીયા ગીરધરલાલ પ્રભાણંદ હા. અમીચંદ
ગીરધરલાલ ખાખીનળીયા
- ૨૫૧ શ્રીમતિ અ. સૌ. બેન ચદ્રાવતી તે શ્રીમાન ખહોતલાલજી
નાહરનાં ધર્મપત્નિ હા. શેઠ રણજીત લાલજી હીંગડ ઉદેપુર
- ૨૫૧ સ્વ. શેઠ વીરચંદભાઈ જેસીંગ લખતરવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. કેશવલાલ વીરચંદ શેઠ સુખર્ધ
- ૨૫૧= ઇજેડ ઘાસીરામ ગુલાબચંદ (લીમડી) પંચમહાલ
- ૨૫૧ મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ ધોરાજી
- ૩૦૧ શ્રીમતી હીરાબેન નથુભાઈના વરસીતપ નીમીતે
હા. નથુભાઈ નાનચંદ શાહ વીરમગામ
- ૨૫૧ સ્વ. મહિયાર પરસોતમ સુંદરજીના સ્મરણાર્થે
હા. સાકરચંદ પરસોતમ ,,

૨૫૧	શાહ શાકરચંદ કાનગુજારી	નાધુંદ
૨૫૧	શાહ હીમતલાલ હરજીવનદાસ	મુંબઈ
૨૫૧	શાહ જીતેન્દ્રકુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ	
	(રાજ સીતાપુરવાળા)	સાબરમતી
૨૫૧	અ. સૌ. નમરતબેન પ્રેમચંદ	
	૫૫ પ્રેમચંદ માણેકચંદ (રાજ સીતાપુરવાળા)	સાબરમતી
૨૫૧	શા. કાંતીલાલ ત્રીલોચનદાસ	અમદાવાદ
૨૫૧	સ્વ. શેઠ ઉજ્જમશી નાનચંદના સ્મરણાર્થે	
	તેમના પુત્રો તરફથી હા. શેઠ મુનીલાલ નાનચંદ	વીરમગામ
૨૫૧	સ્વ. શાહ મણીલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્મરણાર્થે	
	તેમના પુત્રો તરફથી હા. ખીમચંદભાઈ	વીરમગામ
૨૫૧	સ્વ. શેઠ હરીલાલ પ્રજુદાસના સ્મરણાર્થે	
	હા. શેઠ અનુભાઈ હરીલાલ	વીરમગામ
૨૫૧	સંઘવી જ્યેષ્ઠભાઈ નારાયણદાસ	વીરમગામ
૨૫૧	સ્વ. શાહ વેલશીભાઈ સાકરચંદના સ્મરણાર્થે	
	હા. ચીમનલાલ વેલશી કત્રાજનાળા	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ પોચાલાલ પીતામ્બરદાસ	અમદાવાદ
૨૫૧	પારેખ મણીલાલ ટોકરશી લાતીવાળા	
	તરફથી મોટીબેનના સ્મરણાર્થે	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ નારાયણદાસ નાનગુજારીનાં મુપુત્ર વાડીભાઈનાં ધર્મપત્ની	
	અ. સૌ. નારંગીબેનના પરમ્પ્રીતપ નિર્મીત હા. શાગીભાઈ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ	અમદાવાદ
૨૫૦	શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ	અમદાવાદ
૩૫૧	ગા.લા. પુરણચંદ જીવ (સેન્ડલબેંકવાળા)	દીલ્લી
૨૫૧	સ્વ. હખીવદાસ બેકગડ.સના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મ	
	પત્નિ કમળાબેન તરફથી હા. નચુડા કુમારી	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ રતીલાલ વાડીલાલ	અમદાવાદ
૨૫૧	ચે. લાલભાઈ નંગદાસ	"
૨૫૧	અ. સૌ. કમળાબેન તે કામદાર મેરઘનદાન મંગલલાલનાં	
	ધર્મપત્નિ (વચ્ચાનુવચ્ચ)	રંજુન
૨૫૧	પે.ચ. ટે.સ.ભાઈ કાકચંદ સ્વા. જીવ લાલ હા.	
	વે.સા. વાળમંદે રામલાલ	૧૮૫૭ સંવત

પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં
બનાવેલાં સૂત્રો.

કાશ્મીર.....થી.....કન્યાકુમારી

તેમજ

કરાંચી.....થી..... કલકત્તા

સુધી

દરેક સ્થળે હોંશથી વંચાય છે.

કારણ કે

।।વી રીતે શાસ્ત્રો તૈયાર કરવાનું અનાખું કાર્ય
હજી સુધી કોઇ કરી શક્યું નથી.

*

*

*

શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સમાજ

ઉપરાંત

શ્રી દેરાવાસી સંપ્રદાયના મહાન આચાર્યશ્રી રામવિજયસૂરીજી
તથા અન્ય મુનિવરોએ

તેમજ

તેરાપંથી મહ્યાસલા કલકત્તાવાળાએ આ સૂત્રો અપનાવ્યાં છે.

*

*

*

દેશ-પરદેશના મેઘબરો સૂત્રો વાંચી જૈન ધર્મના શ્રુતજ્ઞાનનો અણુમોલો
લાભ લઈ રહ્યા છે.

હસણાંજ લંડનની ધન્ડીઆ ચોફીસ લાયબ્રેરીએ આ સૂત્રો મંગાવ્યા છે.

*

*

*

આપરૂપીઆ ૨૫૧-૦-૦ મોકલી મેઘબર તરીકે નામ નોંધાવી હપ્તે હપ્તે
લગભગ રૂપીઆ પાંચસો સુધીની કિંમતનાં શાસ્ત્રો વિના મૂલ્યે મેળવી શકે છે.

વધુ વિગત માટે લખો :

કે. શ્રીન લોજ પાસે,
ગરેડીઆકુવા રોડ
રાજકોટ.

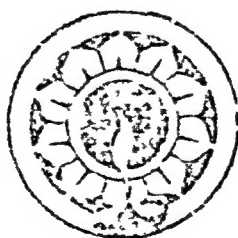
મંત્રિ
શ્રી અખિલ ભારત શ્રવે. સ્થા. જૈન
શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ.

૨૫૧	શેઠ મણીલાલ શીવલાલ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ ત્રીભોવનદાસ ભગવાનજી પાનેલીવાળા	જામજોધપુર
૨૫૧	શાહ નટવરલાલ ચંદુલાલ	અમદાવાદ
૩૦૧	શાહ ત્રીભોવનદાસ છગનલાલ	ગોધરા
૨૫૧	શાહ નરસીદાસ ત્રીભોવનદાસ	અમદાવાદ
૩૦૧	ખીપીનચંદ્ર તથા ઉમાકાંત ચુનીલાલ ગોપાણી	રાણપુર
	હા. ગોપાણી ચુનીલાલ માણેકચંદ	
૨૫૧	શ્રી શાહપુર દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા.	
	વહીવટ કરનાર શેઠ ઈશ્વરદાસ પુરષોત્તમદાસ	અમદાવાદ
૨૫૧	શ્રી છીયાપોળ દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન સંઘ	
	હ. શેઠ ચંદુલાલ અમૃતલાલ	"
૨૭૭	શ્રી. સ્થાનકવાસી છકોટી જૈન સંઘ	
	હ મહેતા ચુનીલાલ વેલજી	માંડવી (કચ્છ)
૨૫૧	વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ મહેતા	વડોદરા
૨૫૧	વોરા મણીલાલ પોપટલાલ	અમદાવાદ
૨૫૧	શાહ ચીનુભાઈ બાલાભાઈ C/o શાહ બાલાભાઈ મહાસુખરામ	"
૨૫૧	શા. ભાઈલાલ ઊજમશી	અમદાવાદ
૨૫૧	સ્વ. કેશવલાલ મુળજીભાઈનાં ધર્મપત્ની, સ્વ. અમૃતભાઈના	
	સ્મરણાર્થે હ ભાઈલાલ કેશવલાલ થાનગઢવાળા	શુરેન્દ્રનગર
૨૫૧	પુરીબેન ચીમનલાલ કલ્યાણજી સંઘવી લીમડીવાળાના	
	સ્મરણાર્થે હ. વાડીલાલ મોહનલાલ કોઠારી	સાણંદ
૨૫૧	પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ મુળીવાળાના સ્મરણાર્થે	
	હ. ભીખાલાલ નેમચંદ	સાણંદ
૨૫૧	સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે	
	હ જયંતીલાલ નારણદાસ	સાણંદ
૨૫૧	શા. પ્રવિણચંદ્ર નરસીદાસ સાણંદવાળા	ખોડેલી (ગુજરાત)
૨૫૧	મહેતા અમૃતલાલ જેઠાલાલ સીવીલ ઈન્જીનીયર સાહેબ	લાખેરી
		(રાજસ્થાન)
૨૫૧	ડો. કુ. સરસ્વતી ખડેન શેઠ	અમદાવાદ
૨૫૧	શ્રી સૌરાષ્ટ્ર સ્થા. જૈન સંઘ	અમદાવાદ

પુજ્ય મહાત્મા તથા મહાસતિજીને

નમ્ર પ્રાર્થના

॥ચાર્યશ્રી ધાસીલાલજી મહારાજશ્રી રાત દીવસના અથાગ પરીશ્રમ સાથે એક કંતાનના કકડા પર બેસીને સમાજના ભવિષ્યના વારસદાર માટે આગમ સંશોધન કરી અણુમોલો વારસો તૈયાર કરી રહ્યા છે, તે કાર્યમાં અનેક મહાત્માઓ પ્રશંસા બતાવીને સકીય સહકાર આપી રહ્યા છે. આપને અમારી નમ્ર વિનંતી છે કે આવા મહદ કાર્યમાં ઉપદેશ દ્વારા મદદમાર થઈ શકે તેટલી સમાજને આપની જરૂર છે માટે વગર વીલંબે સારા જૈન સમાજના ઉત્કર્ષ કાર્યમાં આપનો ફાળો નોંધાવો.



આપ આ સમિતિના કાર્યમાં કઈ રીતે

મદદગાર થઈ શકે ?

રૂા. ૫૦૦૦] ઓછામાં ઓછા આપીને સંસ્થાનાં આઘ મુરખીશ્રી તરીકે મુખારક નામ લખાવી શકે છે, આપનો ફોટો તથા આપનું જીવનચરિત્ર શાસ્ત્રમાં છાપવામાં આવે છે.

રૂા. ૩૦૦૦] ઓછામાં ઓછા આપીને આપના વડીલના સ્મરણાર્થે એક શાસ્ત્ર આપના નામથી છપાવી શકે છે સમિતિને એક શાસ્ત્ર છપાવવામાં લગભગ રૂા. ૬૦૦૦) થી રૂા. ૮૦૦૦) ખર્ચ થાય છે. તે છતાં ત્રણ હજારમાં આપને નામે શાસ્ત્ર બહાર પાડવામાં આવશે.

રૂા. ૨૫૫] ઓછામાં ઓછા આપીને લાઈફ મેમ્બર તરીકે આપનું નામ ઢાખલ કરાવી શકે છે. આપને ૩૨ સૂત્રો તથા તેના તમામ ભાગો મફત મળી શકે છે. (રૂા. ૫૦૦ ની કીંમતનાં શાસ્ત્રો હફતે હફતે આપને મળી શકે છે.)

સ્થાનકવાસી સમાજમાં આ એક જ સંસ્થા શાસ્ત્રો ચાર ભાષામાં પ્રગટ કરીને સર્વ ઉપયોગી વાંચન રજુ કરે છે આપને જ્યારે કોઈ શાસ્ત્રની જરૂર હોય ત્યારે તેમજ કોઈ સાધુ મુનીરાજને વહોરાવવાની ઈચ્છા હોય ત્યારે શાસ્ત્ર બીજેથી નહિ મંગાવતાં આ સમિતિ પાસેથી મંગાવી લેવા વિનંતી છે.

એક અપીલ

દીક્ષા પ્રસંગે

વરસીતપ અને બીજી તપશ્ચર્યાઓનાં પારણા પ્રસંગે

મહાવીર જયંતી, પર્યુષણ, તથા દીવાળી જેવા તહેવાર પ્રસંગે

લગ્નપ્રસંગ તથા પુત્ર જન્મની ખુશાલીમાં.

વડીલોના સ્મરણાર્થે તેમની તીથી પ્રસંગે તેમજ બીજા સર અવસરે બનતી

મદદ આ સંસ્થાને મોકલવા ખાસ નોંધ રાખશો.

